श्री संघदासगणि विरचित

व्यवहार भाष्य

VYAVAHĀR BHĀSYA

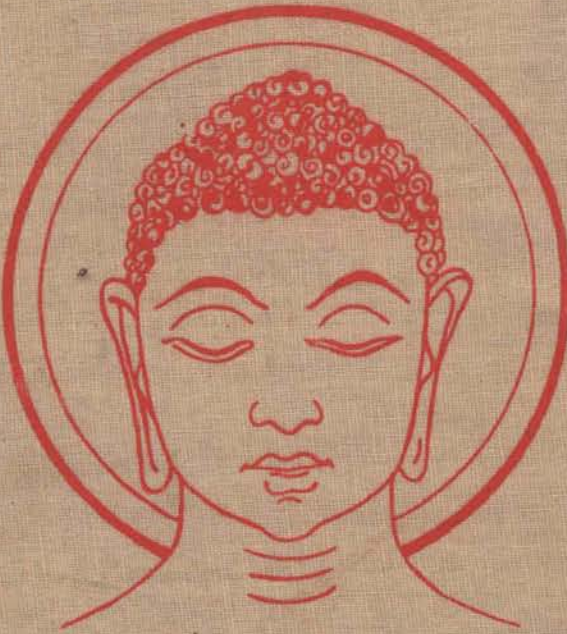

वाचना प्रमुख

गणाधिपति तुलसी

प्रधान संपादक

आचार्य महाप्रज्ञ

संपादिका

समणी कुसुमप्रज्ञा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निग्गंथं पावयणं

व्यवहार भाष्य

[मूलपाठ, पाठान्तर, पाठान्तर-विमर्श, निर्युक्ति, विस्तृत भूमिका तथा
विविध परिशिष्टों से समलंकृत]

वाचना प्रमुख
गणाधिपति श्री तुलसी

प्रधान संपादक
आचार्य महाप्रज्ञ

संपादिका
समणी कुसुमप्रज्ञा

जैन विश्व भारती संस्थान, लाडनूं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशक :
जैन विश्व भारती संस्थान
लाडनूं-३४१ ३०६ (राजस्थान)

© जैन विश्व भारती, लाडनूं

प्रथम संस्करण
विक्रम संवत् २०५३
सन् १९९६

पृष्ठांक सं. ८७०

मूल्य : ७००/-

कम्प्यूटर सेटिंग : सुदर्शन कम्प्यूटर्स, जोधपुर

मुद्रक : पवन ऑफसैट प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा
दिल्ली-११००३२ फोन : २२७३६४५, २२९६४२७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

VYĀVĀHĀR BHĀSYĀ

[Original text, varaint readings, critical notes, niryukti, preface and various appendixes]

Vachanapramukha
Ganadhipati Sri Tulsi

Chief Editor
Acharya Mahaprajna

Editor
Samani Kusumprajna

JAIN VISHVA BHARATI INSTITUTE, LADNUN

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Publisher :
Jain Vishva Bharati Institute
Ladnun–341306 (Rajasthan)

© Jain Vishva Bharati, Ladnun

First Edition
Vikram Samvat 2053
August 1996

Price : Rs. 700/-

Computer Setting by : Sudarshan Computers, Jodhpur
Printerts : Pawan Offset Printers, Naveen Shahdara
Delhi-110032, ☎ 2273645, 2299427

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समर्पण

पुट्ठो वि पण्णापुरिसो सुदक्खो,
आणापहाणो जणि जस्स निच्चं।
सच्चप्पओगे पवरासयस्स,
भिक्खुस्स तस्स प्पणिहाणपुव्वं ॥

जिसका प्रज्ञापुरुष पुष्ट पटु,
होकर भी आगमप्रधान था।
सत्ययोग में प्रवर चित्त था,
उसी भिक्षु को विमल भाव से ॥

विलोडियं आगमदुद्धमेव,
लद्धं सुलद्धं णवणीयमच्छं।
सज्झाय-सज्झाणरयस्स निच्चं,
जयस्स तस्स प्पणिहाणपुव्वं ॥

जिसने आगम दोहन कर-कर,
पाया प्रवर प्रचुर नवनीत।
श्रुत सद्ध्यान लीन चिर चिन्तन,
जयाचार्य को विमल भाव से ॥

पवाहिया जेण सुयस्स धारा,
गणे समत्थे मम माणसे वि।
जो हेउभूओ स्स पवायणस्स,
कालुस्स तस्स प्पणिहाणपुव्वं ॥

जिसने श्रुत की धार बहाई,
सकल संघ में, मेरे मन में।
हेतुभूत श्रुत-सम्पादन में,
कालुगणी को विमल भाव से ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंतस्तोष

अंतस्तोष अनिर्वचनीय होता है उस माली का, जो अपने हाथों से उप्त और सिंचित द्रुमनिकुंज को पल्लवित-पुष्पित और फलित हुआ देखता है, उस कलाकार का, जो अपनी तूलिका से निराकार को साकार हुआ देखता है और उस कल्पनाकार का, जो अपनी कल्पना को अपने प्रयत्नों से प्राणवान् बना देखता है। चिरकाल से मेरा मन इस कल्पना से भरा था कि जैन आगमों का शोधपूर्ण सम्पादन हो और मेरे जीवन के बहुश्रमी क्षण उसमें लगें। संकल्प फलवान् बना और वैसा ही हुआ। मुझे केन्द्र मान मेरा धर्मपरिवार उस कार्य में संलग्न हो गया। अतः मेरे इस अंतस्तोष में मैं उन सबको समभागी बनाना चाहता हूँ, जो इस प्रवृत्ति में संविभागी रहे हैं। संक्षेप में यह संविभाग इस प्रकार है—

प्रधान संपादक	**आचार्य महाप्रज्ञ**
संपादिका	**समणी कुसुमप्रज्ञा**
निर्युक्ति पृथक्करण	**मुनि दुलहराज**
ग्रंथ समायोजन	**मुनि हीरालाल**
	मुनि दुलहराज

संविभाग हमारा धर्म है। जिन-जिन ने इस गुरुतर प्रवृत्ति में उन्मुक्त भाव से अपना संविभाग समर्पित किया है, उन सबको मैं आशीर्वाद देता हूँ और कामना करता हूँ कि उनका भविष्य इस महान् कार्य का भविष्य बने।

गणाधिपति तुलसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आशीर्वचन

जैन आगम ज्ञान के अक्षय कोष हैं। आगम साहित्य का प्रत्येक ग्रन्थ अपने आप में महत्त्वपूर्ण है। ढाई हजार वर्षों के इस लम्बे अन्तराल में आगम ग्रन्थों पर काफी काम हुआ है। आगमों में निहित ज्ञानराशि को विस्तार देने के लिए इन पर व्याख्या ग्रन्थ लिखे गए। कुछ व्याख्याएं संक्षिप्त हैं, कुछ विस्तृत हैं। भाष्यकार आचार्यों ने अपने कार्य को बहुत विस्तार देने का प्रयास किया। निशीथ, व्यवहार, बृहत्कल्प आदि छोटे-छोटे आगमों पर बृहद् भाष्य लिखकर उन्होंने जैन शासन की अनेक मूल्यवान् परम्पराओं को सुरक्षित रख लिया। उक्त तीनों आगम छेदसूत्रों में आते हैं। छेदसूत्रों पर विदेशी विद्वानों ने भी अच्छा काम किया है।

हमने अपने धर्मसंघ में आगम-सम्पादन का कार्य शुरू किया, उसी समय हमारा संकल्प था कि हमें मूल आगमों के साथ व्याख्या ग्रंथों पर भी काम करना है। बत्तीसी के रूप में विश्रुत आगम-सम्पादन का हमारा काम चल ही रहा है। आचार्य महाप्रज्ञ उसमें प्रारम्भ से ही संलग्न हैं। उनके निर्देशन में अनेक साधु-साध्वियां काम कर रही हैं। व्याख्या-साहित्य के सम्पादन में सबसे पहले व्यवहार सूत्र के भाष्य का काम हाथ में लिया गया।

'व्यवहार भाष्य' आकार में निशीथ और बृहत्कल्प से थोड़ा छोटा हो सकता है, पर इसका संपादन बहुत ही जटिल प्रतीत हो रहा था। इसका एक कारण था भाष्य और निर्युक्ति का सम्मिश्रण। कोई भी काम कितना ही जटिल क्यों न हो, संकल्प और पुरुषार्थ का प्रबल योग हो तो उसे सहजता से सम्पादित किया जा सकता है। हमने इस कार्य में **'समणी कुसुमप्रज्ञा'** को नियोजित किया। कोई भी अकेला व्यक्ति इतना बड़ा काम नहीं कर सकता। उसे भी मार्गदर्शन और सहयोग की अपेक्षा थी। संघीय जीवन में यह सुविधा सरलता से मिल सकती है। उपयुक्त मार्गदर्शक और अपेक्षित सहयोगियों के अभाव में काम लम्बा हो जाता है। अनेक व्यक्तियों की निष्ठा और लगन से व्यवहार भाष्य के संपादन का कार्य संपन्न हुआ। इस कार्य में जितना श्रम और समय लगा, उसका अनुभव कार्य करने वालों को ही नहीं, देखने वालों को भी हुआ।

प्रसन्नता की बात यह है कि यह काम हमारे धर्मसंघ की समणी कुसुमप्रज्ञा ने किया है। महिलाओं द्वारा किए गए ऐसे गुरुतर कार्य को उपलब्धि माना जा सकता है। शताब्दियों में यह प्रथम अवसर होगा, जब साध्वियां और समणियां इस रूप में आगम कार्य में अपना योगदान कर रही हैं। मैं इस कार्य को श्रुत की उपासना और संघ की सेवा के रूप में स्वीकार करता हूं। भाष्य-सम्पादन के साथ-साथ निर्युक्ति का पृथक्करण, इसके परिशिष्ट और भूमिका अपने आपमें एक शोध कार्य है। विद्वद् जगत् में इस कार्य का पूरा मूल्यांकन और उपयोग होगा, ऐसा विश्वास है।

गणाधिपति तुलसी

३१ मई १९९६
जैन विश्व भारती, लाडनूं
भिक्षु विहार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मंगलवचन

आगम के वट-वृक्ष का विस्तार व्याख्या ग्रंथ रूपी शाखाओं से हुआ है। निर्युक्ति से लेकर टब्बा और जोड़ तक व्याख्या ग्रंथों की अनेक विधाएं हैं और अनेक रचना शैलियां हैं। इन व्याख्या ग्रंथों में निर्युक्ति साहित्य के बाद भाष्य ग्रंथों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। बृहत्कल्प, व्यवहार और निशीथ—इन तीनों छेद सूत्रों पर विशाल भाष्य लिखे गए हैं। इनमें व्यवहार भाष्य का प्रकाशन अत्यंत अगम्य शैली में हुआ। उसे सामग्री की सुलभता से अधिक और कुछ नहीं कहा जा सकता। निर्युक्ति और भाष्य का मिश्रण, क्रमांक की अव्यवस्था, पाठ की अशुद्धि आदि अनेक समस्याएं रही हैं।

पूज्य गुरुदेव श्री तुलसी के वाचना प्रमुखत्व में चार दशक से आगम-संपादन का कार्य अनवरत चल रहा है। इस कालावधि में अनेक आगमों, व्याख्याग्रंथों तथा कोश ग्रंथों का प्रणयन और संपादन हुआ है। उनमें से एक महत्त्वपूर्ण व्याख्या ग्रंथ है व्यवहार भाष्य। इसका संपादन **समणी कुसुमप्रज्ञा** ने अत्यधिक श्रम और जागरूकता के साथ किया है। संपादन की पृष्ठभूमि में **मुनि दुलहराजजी** का श्रम अत्यंत प्रखर है। वे व्यक्त की अपेक्षा अव्यक्त को अधिक पसंद करते हैं। हमारी आगम-संपादन की गति मंथर हो सकती है, शोध पूर्ण कार्य की गति बहुत त्वरित हो नहीं सकती, किन्तु उसकी पहुंच मंथर नहीं है, यह आनंदानुभूति का विषय है। इस आनंदानुभूति में पूज्य गुरुदेव का आशीर्वाद और कार्य में संलग्न साधु-साध्वियों, समणियों का प्रमोदभाव निरन्तर विकसित होता रहे।

२२ मई १९९६ **आचार्य महाप्रज्ञ**

जैन विश्व भारती,
लाडनूं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्रंथानुक्रम

१. प्रकाशकीय	१३
२. संपादकीय	१५
३. व्यवहार भाष्यः एक अनुशीलन	२६
४. The Glimpses of Vyavahar Bhasya	६३
५. संकेत-निर्देशिका	१११
६. विषयानुक्रमणिका	११३
७. मूलपाठ	१-४४७
—पीठिका	१
प्रथम उद्देशक	१८
द्वितीय उद्देशक	६७
तृतीय उद्देशक	१३४
चतुर्थ उद्देशक	१६८
पंचम उद्देशक	२२०
षष्ठ उद्देशक	२३३
सप्तम उद्देशक	२६८
अष्टम उद्देशक	३२०
नवम उद्देशक	३४६
दशम उद्देशक	३६२
८. परिशिष्ट	
व्यवहार भाष्य-गाथानुक्रम	१
निर्युक्ति-गाथानुक्रम	६१
सूत्र से संबंधित भाष्य-गाथाओं का क्रम	७०
टीका एवं भाष्य की गाथाओं का समीकरण	७२
एकार्थक	१०५
निरुक्त	१०८
देशीशब्द	११३
कथाएं	१२४
परिभाषाएं	१६४
उपमा	१७७
निक्षिप्त शब्द	१८०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

	सूक्त-सुभाषित	१८१
	अन्य ग्रंथों से तुलना	१६२
	आयुर्वेद और आरोग्य	२१३
	कायोत्सर्ग एवं ध्यान के विकीर्ण तथ्य	२१६
	दृष्टिवाद के विकीर्ण तथ्य	२२५
	विशिष्ट विद्याएं	२३०
	टीका में उद्धृत गाथाएं	२३३
	विशेषनामानुक्रम	२३६
	वर्गीकृत विशेषनामानुक्रम	२४५
	टीका में संकेतित निर्युक्तिस्थल	२५३
	टीका में उद्धृत चूर्णि के संकेत	२५४
	वर्गीकृत विषयानुक्रम	२५५
६.	प्रयुक्त ग्रंथ सूची	२५८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशकीय

वि. सं. २०१२ का चातुर्मास उज्जैन में हुआ। उससे पूर्व जब गणाधिपति श्री तुलसी यात्रा पर थे तब आगम-संपादन का स्वप्न संजोया। स्वप्न साकार हुआ। आज आगम-संपादन के कार्य को ४० वर्ष हो गए। इस अवधि में बत्तीस आगमों (११ अंग, १२ उपांग, ४ मूल, ४ छेद और एक आवश्यक) का मूल पाठ संपादित होकर प्रकाश में आया। इनका शब्द-इन्डेक्स भी प्रकाशित हो गया तथा अन्यान्य अनेक आगमों का सटिप्पण हिन्दी अनुवाद भी संपन्न हुआ।

अभी-अभी भगवती भाष्य तथा आचारांग भाष्य का भी प्रकाशन हुआ और उनका अंग्रेजी रूपान्तरण प्रकाशनाधीन है।

इसी बीच चार कोश—(१) एकार्थककोश, (२) निरुक्तकोश, (३) दशीशब्दकोश, (४) जैन आगम वनस्पतिकोश भी प्रकाशित हुए। सांप्रतं श्रीभिक्षु आगम विषय कोश का प्रकाशन संपन्नता पर है।

व्यवहार भाष्य के संपादन की वात गुरुदेव ने सोची और इस कार्य का दायित्व समणी कुसुमप्रज्ञाजी को दिया गया। पूर्व प्रकाशित सटीक व्यवहार भाष्य अस्त-व्यस्त तथा त्रुटिपूर्ण लगा। तब समणीजी ने अनेक हस्तप्रतियों से पाठ का अनुसंधान कर, सही पाठ का निर्धारण और तदनुरूप उसकी विमर्शयुक्त स्वीकृति को अंकित किया। हस्तप्रतियों से पाठ का निर्धारण सहज-सरल नहीं था। जितने आदर्श उतने ही पाठ-भेद। ऐसी स्थिति में पौर्वापर्य तथा अन्य छेद ग्रन्थों के आधार पर पाठ का निर्धारण कर व्यवहार भाष्य को अंतिम रूप दिया।

भाष्यगाथाएं और निर्युक्तिगाथाएं एक साथ होने के कारण उनका पृथक्करण करना बहुत जटिल था। फिर भी उन्होंने अपनी कुछेक कसौटियां बना कर निर्युक्ति गाथाओं को अलग कर दिया। यह एक दुरूह कार्य था, परन्तु गुरुकृपा से उन्होंने कार्य इस कार्य को सफलतापूर्वक संपादित कर ही दिया।

इस ग्रन्थ में पाठ-संपादन तथा पाठ-विमर्श की विशेषता तो है ही, साथ ही साथ इस ग्रन्थ में संदृब्ध २३ परिशिष्ट इस ग्रन्थ की महत्ता को बताते हुए समणीजी के परिश्रम को उजागर करते हैं। इसकी बृहद्काय भूमिका—'व्यवहार एक अनुशीलन'—भी एक महत्वपूर्ण दस्तावेज है और पूरे व्यवहार भाष्य का प्रतिबिम्ब प्रस्तुत कर देता है। समणीजी ने अपनी सूक्ष्म संधित्सा के आलोक में ग्रन्थगत अनेक सूक्ष्मताओं को अनावृत किया है। हमें लगा कि अनेक अपेक्षित-अनपेक्षित कारणों से श्रम और समय की दीर्घता ने निराशा के भाव उत्पन्न किए, परंतु समणीजी की अपनी धीरता और कार्यनिष्ठा ने निराशा को क्रियान्वित नहीं होने दिया। शोधकार्य धैर्य-सापेक्ष है। वह तभी निष्ठा तक पहुंचता है जब शोधार्थी चंचल न हो, अधीर न हो। समणीजी में ये दोनों गुण हैं। ग्रन्थ की संपूर्ण समायोजना से उनके कर्तृत्व की यथार्थ झांकी प्राप्त हो जाती है।

नारी जाति द्वारा निष्पन्न यह कृति अवश्य ही एक महान् अवदान माना जाएगा। गुरुदेव श्री तुलसी और आचार्य महाप्रज्ञ ने नारी जाति को विद्या के क्षेत्र में अहमहमिकया बढ़ने का जो साहस और बुद्धि-वैभव दिया है वह युगयुगान्त तक याद किया जाता रहेगा।

ग्रन्थ की संपूर्ण समायोजना में मुनि श्री दुलहराजजी का अविकल योग रहा है। उनके सतत दिशा-निर्देशन एवं परामर्श के अभाव में इस महान् ग्रन्थ की यह प्रस्तुति कदापि संभव नहीं हो पाती।

जैन विश्व भारती के उपमंत्री श्रीयुत् कुशलराजजी समदड़िया की कार्यनिष्ठा और श्रमशीलता इस ग्रन्थ की संपूर्ति में पूर्ण सहायक रही है। तदर्थ उनको साधुवाद।

जैन विश्व भारती, लाडनूं
विकास महोत्सव
सितम्बर १९९६

ताराचन्द रामपुरिया
मंत्री
जैन विश्व भारती

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संपादकीय

युग-परिवर्तन के साथ परिवेश भी बदलता है। युगीन समस्याएं, सामाजिक स्थितियां, प्रचलित मान्यताएं एवं तत्कालीन अवधारणाएं मानव जीवन को ही प्रभावित नहीं करतीं, तत्कालीन साहित्य की अनेक विधाओं में भी वे अभिव्यंजित होती रहती हैं। जिस साहित्य में सत्यं-शिवं-सुन्दरं का दर्शन होता है, उसमें त्रैकालिकता एवं सामयिकता—दोनों का पुट होता है। प्राचीन आगम एवं उनके व्याख्या साहित्य को इसी कोटि के साहित्य में रखा जा सकता है। हजारों वर्षों का अंतराल होने पर भी इनकी महत्ता और प्राणवत्ता में कोई अन्तर नहीं आया है।

समय के बदलते पहरुए के साथ भाषा और शैली में परिवर्तन होता है। कुछ शब्द अर्थयात्रा करते हैं, अतः कालान्तर में उनका अर्थबोध करना कठिन हो जाता है। ऐसी स्थिति में उनकी वाचना और पाठ-शुद्धि का कार्य सरल नहीं होता। युगप्रधान गणाधिपति तुलसी ने आगम के समुद्र-मंथन का दुरूह कार्य जो चालीस वर्ष पूर्व प्रारम्भ किया, वह आचार्य महाप्रज्ञजी के निर्देशन में आज तक निर्बाध गति से चल रहा है। पूज्य गुरुदेव एवं आचार्यश्री के मन में उदग्र आकांक्षा है कि पुराने साहित्य को नए संदर्भों में प्रस्तुति दी जाए। उनका चिन्तन रहा कि यदि अनुसंधानपूर्वक तटस्थ दृष्टि से परिश्रमपूर्वक आगमों का कार्य किया जाएगा तो इसके आलोक में नए तथ्य प्रकट होंगे और जिनवाणी की गरिमा बढ़ेगी।

आगम साहित्य में छेदसूत्रों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। मुनि की समग्र चर्या के अवबोधक होने के कारण आचारशास्त्र की दृष्टि से इन ग्रन्थों का अपना विशेष महत्त्व है। आचार में स्खलना होने पर ये ग्रन्थ नीति का निर्धारण करते हैं अतः नीतिशास्त्र की दृष्टि से भी इनका विशेष स्थान है। गीतार्थ और कृतयोगी—ये जैन मुनि की विशेष अवस्थाएं या उपाधियां हैं। इन दोनों अवस्थाओं को प्राप्त करने के लिए छेदसूत्रों का अध्ययन आवश्यक है। बिना छेदसूत्रों का अध्ययन किये मुनि आचार्य पद पर प्रतिष्ठित नहीं हो सकता तथा स्वतन्त्र होकर भिक्षा आदि भी नहीं कर सकता। छेदसूत्रों को सीखकर भूलने वाला भी प्रायश्चित्त का भागी होता है। ये सब तथ्य छेदसूत्रों की महत्ता को प्रकट करने वाले हैं।

छेदसूत्रों में व्यवहार सूत्र का महत्त्वपूर्ण स्थान है। पदविभाग सामाचारी का जितना व्यवस्थित वर्णन व्यवहार सूत्र में है, वैसा अन्य छेदसूत्रों में नहीं मिलता।

ग्रंथ परिचय

व्यवहार भाष्य एक आकर ग्रंथ है। इसमें कुल ४६६४ गाथाएं हैं। प्रारम्भ में भाष्यकार ने पीठिका लिखी है, जिसे आज की भाषा में भूमिका कह सकते हैं। इसमें कुल १८३ गाथाएं हैं। मूल ग्रंथ १० उद्देशकों में विभक्त है। किस उद्देशक पर कितनी गाथाएं लिखी गयीं इसका संकेत हमने परिशिष्ट नं. ३ में कर दिया है। कुछ अतिरिक्त गाथाएं, जिनको हमने मूल में नहीं स्वीकारा है, उनको पादटिप्पण में दे दिया है। मूल ग्रंथ में भी कुछ अतिरिक्त गाथाओं को लिया है पर उनको मूल क्रमांक में नहीं जोड़ा है। प्रस्तुत ग्रंथ में अनेक विषयों का प्रतिपादन है। हमने कुछ विषयों का संकलन परिशिष्टों में किया है। प्रस्तुत ग्रंथ के साथ २३ परिशिष्ट संलग्न हैं, जो इसके महत्त्वपूर्ण तथ्यों की ओर संकेत करने वाले हैं। इन परिशिष्टों के माध्यम से शोधार्थी अनेक महत्त्वपूर्ण जानकारियां हासिल कर सकते हैं। परिशिष्टों का क्रम इस प्रकार है—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१
व्यवहारभाष्य गाथानुक्रम
२. निर्युक्ति-गाथानुक्रम
३. सूत्र से सम्बन्धित भाष्य गाथाओं का क्रम
४. टीका एवं भाष्य की गाथाओं का समीकरण
५. एकार्थक
६. निरुक्त
७. देशीशब्द
८. कथाएं
९. परिभाषाएं
१०. उपमा
११. निक्षिप्तशब्द
१२. सूक्त-सुभाषित
१३. अन्य ग्रंथों से तुलना
१४. आयुर्वेद और आरोग्य
१५. कायोत्सर्ग एवं ध्यान के विकीर्ण तथ्य
१६. दृष्टिवाद के विकीर्ण तथ्य
१७. विशिष्ट विद्याएं
१८. टीका में उद्धृत गाथाएं
१९. विशेष नामानुक्रम
२०. वर्गीकृत विशेष नामानुक्रम
२१. टीका में संकेतित निर्युक्तिस्थल
२२. टीका में उद्धृत चूर्णि के संकेत
२३. वर्गीकृत विषयानुक्रम

इन परिशिष्टों के साथ एक परिशिष्ट की कमी अखर रही है। यदि हम मूल ग्रंथ की अविकल शब्दसूची प्रस्तुत कर सकते तो शोध-विद्यार्थियों के लिए बहुत उपयोगी होती। इसकी आंशिक संपूर्ति परिशिष्ट नं. १९ एवं २० से हो सकेगी।

भाषा शैली

आगमों की मूल भाषा अर्धमागधी है।[1] निर्युक्तियां प्राकृत भाषा में निबद्ध हैं। इनमें अर्धमागधी एवं महाराष्ट्री का प्रभाव भी परिलक्षित होता है। प्रस्तुत ग्रंथ में भाषागत अनेक वैशिष्ट्य देखे जा सकते हैं।

प्राकृत भाषा में निबद्ध होने पर भी भाष्यकार ने अनेक स्थलों पर संस्कृत से प्रभावित भाषा के प्रयोग भी किये हैं। व्याकरण की दृष्टि से निम्न उद्धरण महत्त्वपूर्ण हैं—

१. **जद्द वि** (४०५४)	३. **पाहु** (३७९७)
२. **अगुरोरवि** (४६०१)	४. **कासवसि**[2] (५३८)

ऐसे प्रयोग प्रायः सामान्य प्राकृत में नहीं मिलते। इनके स्थान पर **'जइ वि' 'अगुरु वि'** तथा **'आह'** पाठ मिलते हैं। ये प्रयोग संस्कृत के अधिक निकट हैं। ऐसे और भी अनेक प्रयोग भाष्य में यत्र-तत्र देखने को मिलते हैं।

---

१. सम ३४/२२ : भगवं च णं अद्धमागहीए भासाए धम्ममाइक्खइ।
२. कस्य त्वं असि—इन तीन शब्दों से कासवसि रूप बना है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भाष्यकार ने एक ही शब्द के लिए अनेक पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग किया है। जैसे—सूर्य के लिए दिणकर, आइच्च, सूर तथा गधे के लिए खर, गद्दभ, रासह आदि शब्दों का प्रयोग किया है। लेकिन कहीं-कहीं विशेष प्रयोजन से एक ही शब्द या चरण की पुनरुक्ति भी भाष्यकार ने की है—

सइं जंपंति रायाणो, सइं जंपंति धम्मिया।
सइं जंपंति देवावि, तं पि ताव सइं वदे ॥ (३३२६)

इसी प्रकार १६८२ से १६८५ तक की चार गाथाओं का उत्तरार्ध एक जैसा है—**जे सच्चकरणजोगा, ते संसारा विमोयंति।**

स्थान-स्थान पर अनेक एकार्थकों का प्रयोग भाष्य में मिलता है। अनेक ऐसे एकार्थक हैं, जिन्हें अन्य कोशों में नहीं देखा जा सकता। जैसे—

लोट्टण लुटण पलोट्टण, ओहाणं चेव एगट्ठा। (६०७)
बहुजणमाइण्णं पुण, जीयं उचियं ति एगट्ठं। (६)

भाष्यकार ने प्रसंगवश अनेक निरुक्तों का भी उल्लेख किया है जो भाषा की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। जैसे—व्यवहार शब्द का निरुक्त—**विविहं वा विहिणा वा,ववणं हरणं च ववहारो** (गा. ३)।

आप्त शब्द का निरुक्त—**णाणमादीणि अत्ताणि तेण अत्ता उ सो भवे** (४०६३)

अनेक स्थलों पर शब्द का संक्षिप्त अर्थ भी गाथाओं में दिया है जैसे—

रहिते णाम असंते (४५१०)

वत्तो णामं एक्कसि (४५२२)

अणुवत्तो जो पुणो बितियवारं (४५२२)

तइयवारं पवत्तो (४५२२)

पया उ चुल्ली समक्खाता (३७१६)

संस्कृत ग्रन्थों में ऐसे प्रयोग क्रम देखने को मिलते हैं। व्याकरण एवं भाषा की दृष्टि से ये महत्त्वपूर्ण प्रयोग हैं। प्रस्तुत भाष्य में कहीं-कहीं भाषा सम्बन्धी नए प्रयोग भी मिलते हैं। जैसे निरुत्तर करने के अर्थ में **'अमुहं'** शब्द का प्रयोग भाषा एवं साहित्य की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। (२५६६)

सैद्धान्तिक या तात्त्विक वर्णन करते समय भाष्यकार ने अनेक पारिभाषिक शब्दों की परिभाषा भी स्पष्ट कर दी है। परिशिष्ट नं. ६ में हमने उन परिभाषाओं का संकलन किया है।

प्रस्तुत ग्रन्थ के भाषागत वैशिष्ट्य का एक कारण है—अनेक सूक्त एवं सुभाषितों का प्रयोग। सूक्तियों के प्रयोग से ग्रन्थ की भाषा सरस, मार्मिक, वेधक एवं प्रभावोत्पादक बन गई है। कहीं-कहीं तो जीवनगत मूल्यों के गंभीरतम तथ्य बहुत सरल एवं सहज भाषा में प्रकट हुए हैं—

न उ सच्छंदया सेया। (८६)
तणाण लहुतरो होहं इति वज्जेति पावगं। (२७५५)

अनेक उपमाओं के प्रयोग से ग्रन्थ की भाषा में विचित्रता एवं सरसता उत्पन्न हो गई है। भाष्यकार ने अनेक नवीन उपमाओं का प्रयोग किया है। जैसे—**निहाणसम ओमराइणिए** (गा. २३३७)। मन की चंचलता को व्यक्त करने वाली उपमाएं भाष्यकार के मस्तिष्क की नयी उपज है (गा. २७५७-६४)। किसी भी विषय को स्पष्ट करने के लिए दृष्टान्तों का प्रयोग तो बहुत अधिक मात्रा में किया गया है। ये दृष्टान्त लौकिक दृष्टि से ही नहीं, मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।

भाष्यकार ने गहन विषयों को सरसता से समझाने के लिए अनेक कथाओं का संकेत दिया है। कुछ कथाओं को छोड़कर लगभग सभी कथाएं इतनी संक्षिप्त हैं कि बिना टीका के उन्हें समझ पाना कठिन है। परिशिष्ट नं. ८ में हमने भाष्य में आई

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सभी कथाओं का टीका के आधार पर अनुवाद प्रस्तुत किया है। हमने कथाओं का विषयानुगत वर्गीकरण न कर भाष्यगाथाओं के क्रम से ही उनको प्रस्तुत किया है।

टीका में कुछ कथाएं संस्कृत में तथा कुछ प्राकृत में हैं। प्राकृत की कथाएं टीकाकार ने निशीथ चूर्णि, दशवैकालिक चूर्णि, आवश्यक चूर्णि आदि चूर्णि-ग्रन्थों से ली हैं, ऐसा प्रतीत होता है। निशीथ चूर्णि के चौथे भाग में आई अनेक कथाएं व्यभा के प्रथम उद्देशक में वर्णित कथाओं से शब्दशः मिलती हैं। कथा नं. ६६ से ७२ तक की कथाएं पंचतंत्र से प्रभावित हैं। कथा परिशिष्ट में कुछ अत्यन्त संक्षिप्त कथाएं भी हैं। कहीं-कहीं भाष्यकार ने कथा का संकेत दिया है लेकिन टीकाकार ने उस कथा की कोई व्याख्या नहीं की है। उनका अनुवाद हमने प्रस्तुत नहीं किया है। जैसे ५६१ वीं गाथा में अनुशिष्टि के अन्तर्गत सुभद्रा एवं उपालम्भ में मृगावती की कथा, १०७६ वीं गाथा में भय से क्षिप्तचित्त बने सोमिल ब्राह्मण की कथा तथा ४४२० वीं गाथा में चाणक्य और सुबंधु की कथा आदि। लेकिन ऐसे प्रसंग बहुत कम हैं जहां टीकाकार ने कथा का विस्तार या स्पष्टीकरण न किया हो।

भाष्यकार ने धर्म, इतिहास, एवं समाज से सम्बन्धित कथाओं का उल्लेख किया है किंतु इनमें राजनीति से सम्बंधित कथाएं अधिक हैं। इन कथाओं के माध्यम से उस समय की राज्य व्यवस्था, युद्ध, राजा की दूरदर्शिता आदि का ज्ञान किया जा सकता है।

भाष्यकार ने अनेक स्थलों पर प्रसंगवश व्याकरण सम्बन्धी विमर्श भी प्रस्तुत किया है। एक ही अव्यय अनेक अर्थों में प्रयुक्त होता है इसका संकेत करते हुए भाष्यकार लिखते हैं—

अपरीमाणे पिहब्भावे, एगत्ते अवधारणे।
एवं सद्दो उ एतेसुं, एगत्ते तु इहं भवे ॥ (१६८४)

'एवं'—यह अव्यय चार अर्थों में प्रयुक्त होता है—अपरीमाण, पृथक्भाव, एकत्व और अवधारण। इसी प्रकार 'सिया' (स्यात्) अव्यय आशंका एवं अवधृत अर्थ में प्रसिद्ध है—**आसंकमवहितम्मि सिया** 'नो' अव्यय देशतः प्रतिषेध अर्थ में प्रयुक्त होता है—**नोकारो खलु देसं पडिसेहती** (१३६०)।

व्याकरण एवं भाषाशास्त्र की दृष्टि से निर्देशवाची शब्दों के प्रयोग भी द्रष्टव्य हैं—**जे त्ति व से त्ति य के ति व निद्देसा होंति एवमादीया (१८७)।**

प्राकृत भाषा में प्रायः अलाक्षणिक 'मकार' का प्रयोग मिलता है। परन्तु प्रस्तुत भाष्य में अलाक्षणिक 'हकार' का भी प्रयोग हुआ है। जैसे 'सीसाहा'[1]। भाष्यकार ने उच्चारण की अशुद्धि से होने वाले अनर्थ की ओर भी संकेत किया है। (गा. २०६५-६७)

भाष्यकार ने समास और व्यास दोनों शैलियों को अपनाया है। अनेक स्थलों पर एक ही विषय या शब्द की विस्तृत व्याख्या की है; जैसे—'साधर्मिक' शब्द की व्याख्या तथा आचार्य को गोचरी नहीं करनी चाहिए आदि अनेक विषयों का वर्णन विस्तार से हुआ है। संक्षिप्त शैली के भी अनेक उदाहरण इस ग्रंथ में देखने को मिलेंगे। जैसे—अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचार एवं अनाचार[2] की व्याख्या एक ही गाथा में बहुत कुशलता से कर दी है।

कहीं-कहीं तो इतनी संक्षिप्त शैली में वर्णन है कि बिना टीका के भाष्य को समझा ही नहीं जा सकता। जैसे— ७१वीं गाथा में **'काइ'** शब्द में कायिक, वाचिक एवं मानसिक तीनों चेष्टाओं का समाहार है। तथा उसी गाथा में 'थद्ध'—शारीरिक जड़ता, 'फरुसत्त'—वाचिक कठोरता एवं 'नियडी'—मानसिक कपट का प्रतीक है।

'जाव' का प्रयोग प्रायः गद्य आगमों में मिलता है, लेकिन भाष्यकार ने इस ग्रंथ में इसका प्रयोग किया है। **'पियधम्मो जाव सुयं,** (गाथा २६) में 'जाव' शब्द १४वीं गाथा का संक्षेपीकरण है। यहां 'जाव' शब्द से पियधम्म से लेकर बहुस्सुय तक के सभी विशेषण गृहीत हो जाते हैं। १४वीं गाथा निर्युक्तिकार की है। इन विशेषणों का संकेत भाष्यकार ने २६वीं गाथा में किया है।

भाष्यकार ने अनेक विषयों को चतुर्भंगी के माध्यम से समझाया है। अनेक महत्त्वपूर्ण चतुर्भंगिया इस भाष्य में मिलती हैं।[3]

१. व्यभा १३२४ टी. प. ७७, हकारोऽलाक्षणिकः।

२. व्यभा ४३ : आधाकम्मनिमंतण, पडिसुणमाणे अतिक्कमो होति।
पदभेदादि वतिक्कम, गहिते ततिएतरो गिलिए ॥

३. व्यभा ९९३।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनेक लौकिक एवं सैद्धान्तिक न्यायों का प्रयोग भी भाष्य में यत्र-तत्र देखने को मिलता है—

लोगम्मि सयमवज्झं, होइ अदंडं सहस्स मा एवं (१६३६)।

न हि अग्गिनाणतोऽग्गीणाणं (२०६)।

कुछ न्यायों का भाष्यकार ने संकेत मात्र किया है लेकिन टीकाकार ने उनकी विस्तृत व्याख्या दी है. जैसे—'वणिग्न्याय'[1]।

अलंकार

यद्यपि प्राकृत के आचार-प्रधान ग्रंथों में अलंकारों पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है, परंतु इस भाष्य में अनुप्रास, उपमा, रूपक, दृष्टान्त, अर्थान्तरन्यास आदि अलंकारों का प्रयोग भी यत्र-तत्र मिलता है।

रूपक अलंकार के उदाहरण

वयणघरवासिणी वि हु, न मुंडिया ते कहं जीहा? (२५८५)।

पव्वयहिययं पि संपकप्पंति (२४६४)।

तव-नियम-नाणरुक्खं (४४४७)।

उपमा अलंकार के उदाहरण

कोमुदीजोगजुत्तं वा, तारापरिवुडं ससिं (२०००)।

सेविज्जंतं विहंगेहिं, सरं व कमलोज्जलं (२००१)।

छंद विमर्श

भाष्य पद्यबद्ध रचना है। यह अनेक छंदों में निबद्ध है। भाष्यकार ने मुख्यतः मात्रा छंद के अन्तर्गत आर्याछंद का प्रयोग किया है। इसके अतिरिक्त बीच-बीच में अनुष्टुप्, इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा आदि छंदों का प्रयोग भी हुआ है। आर्या छंद की अनेक उपजातियां हैं। प्रस्तुत भाष्य में भी आर्या की कुछ उपजातियों का प्रयोग मिलता है।

छंद में मात्रा का बहुत महत्त्व होता है। इस दृष्टि से कभी-कभी ग्रंथकार को उत्क्रम भी करना होता है। भाष्यकार स्वयं इस सत्य को स्वीकार करते हैं—**बंधाणुलोमयाए, उक्कमकरणं तु होति सुत्तरस** (७१६)।

छंद की दृष्टि से भाष्यकार ने कहीं-कहीं शब्दों का संक्षेपीकरण भी किया है। जैसे—

जीवा—जीविता
साग—श्रावक
जीए—जीवित
आत—आयात आदि।

प्रस्तुत ग्रंथ में अनेक स्थलों पर एक ही गाथा में अनुष्टुप् एवं आर्या—दोनों छंदों का प्रयोग हुआ है। जैसे—तीन चरण आर्या के तथा एक अनुष्टुप् का अथवा तीन चरण अनुष्टुप् के तथा एक आर्या का। जहां भी छंदों का मिश्रण हुआ है, हमने पादटिप्पण में उसका उल्लेख कर दिया है।

कहीं-कहीं शब्द का विस्तार एवं मात्रा का दीर्घीकरण भी किया है—

निमित्ताग-निमित्त
आयरीओ-आयरिओ
एवमागम-एवागम

छंद की दृष्टि से अनेक स्थलों पर भाष्यकार ने निर्विभक्तिक प्रयोग भी किए हैं। तथा जे, इ, मो, च आदि पादपूर्ति रूप अव्ययों का प्रयोग भी किया है।

१. व्यभा १२०० टी. प. ५१।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छंद के आधार पर भी हमने पाठ-निर्धारण करने का प्रयत्न किया है। अनेक स्थलों पर छंद के आधार पर ही पाठ की अशुद्धियां पकड़ी गयी हैं। मुद्रित टीका एवं हस्तप्रतियों में अनेक स्थलों पर पूर्वार्द्ध के शब्द उत्तरार्ध में तथा उत्तरार्ध के पूर्वार्द्ध के साथ संलग्न हैं। बिना छंद की दृष्टि से ऐसी अशुद्धियों को पकड़ना कठिन होता है। पश्चिमी विद्वान डॉ. ल्यूमेन ने दशवैकालिक तथा एल्फ्सडोर्फ ने उत्तराध्ययन का छंद की दृष्टि से अनेक स्थलों पर पाठ-संशोधन एवं विमर्श किया है।

छंद की दृष्टि से कहीं-कहीं हमने द्वित्व पाठ भी स्वीकृत किया है जैसे 'अगीत' के स्थान पर 'अग्गीत', 'सचित्त' के स्थान पर 'सच्चित्त', 'अफासु' के स्थान पर 'अप्फासु' आदि।

जहां कहीं हमें छंद की दृष्टि से पाठ संगत नहीं लगा वहां हमने उसका वैकल्पिक पाठ क्या होना चाहिए उसका निर्देश पादटिप्पण में कर दिया है। लेकिन जहां भिन्न पाठ स्वीकृत किया है, उसका उल्लेख भी प्रामाणिकता की दृष्टि से नीचे पादटिप्पण में कर दिया है—जैसे १५६वीं गाथा में प्रतियों में 'पढमो इंदो-इंदो त्ति' पाठ मिलता है पर हमने 'पढमो त्ति इंद इंदो' पाठ स्वीकृत किया है। इसी प्रकार प्रतियों में इस गाथा का चौथा चरण 'रस्सिणो त्ति चरमो घड पडो त्ति' पाठ मिलता है पर हमने 'रस्सी चरमो घड पडोत्ति' पाठ स्वीकृत किया है।

छंद की दृष्टि से मात्रा को ह्रस्व करने के लिए ˘ चिह्न का प्रयोग किया है। कम्प्यूटर में प्रकाशित होने के कारण चिह्न मात्रा के साथ मिलकर ऊर्ध्व 'र' की भ्रान्ति उत्पन्न करता है, जैसे—करेँ पगतेँ बितिओँ आदि।

अनेक स्थलों पर सप्तमी के लिए प्रयुक्त एकार विभक्ति के स्थान पर इकार विभक्ति का पाठ स्वीकृत किया है। जैसे गाथा २० में 'अवंके' और 'अवंकि' दोनों पाठ मिलते हैं, पर हमने 'अवंकि' पाठ स्वीकृत किया है।

हमने एक प्रयत्न प्रारम्भ किया था कि सम्पूर्ण ग्रंथ में कौन-सी गाथा में कौनसा छंद प्रयुक्त हुआ है, इसका एक चार्ट प्रस्तुत किया जाए लेकिन समयाभाव के कारण यह कार्य सम्पन्न नहीं हो सका।

पाठ-संपादन

भारतीय परम्परा में मौखिक ज्ञान की परम्परा या गुरुमुख से प्राप्त ज्ञान का अधिक महत्त्व रहा है। यही कारण है कि यहां हजारों वर्षों तक कंठस्थ ज्ञान की परम्परा चलती रही। ज्ञान की इस विधि में किसी बाह्य उपकरण की अपेक्षा नहीं रहती थी। गुरुमुख से साक्षात् ज्ञान होने के कारण विद्यार्थी की उच्चारण-शुद्धि एवं बोलने में शब्दों के उतार-चढ़ाव का ज्ञान भी सहज हो जाता था। मौखिक परम्परा का महत्त्व संस्कृत के निम्न सुभाषित से समझा जा सकता है—

पुस्तकप्रत्ययाधीतं, नाधीतं गुरुसन्निधौ।
भ्राजते न सभामध्ये, जारगर्भ इव स्त्रियः॥

वीर निर्वाण के बाद लगभग १००० वर्ष तक आगम मौखिक परम्परा से सुरक्षित रहे। भाष्य एवं निर्युक्ति-साहित्य भी सैकड़ों वर्षों तक मौखिक परम्परा से संक्रान्त होते रहे। अतः लेखक द्वारा स्वतः लिखी हुई या उसके द्वारा संशोधित या प्रमाणीकृत भाष्य आदि की कोई प्रति आज नहीं मिलती।

वैदिकों ने मौखिक परम्परा से ही वेदों की सुरक्षा अत्यन्त जागरूकता से की। ब्राह्मण वर्ग ने स्वर के आरोह-अवरोह आदि अनेक उच्चारणों से वेदपाठ की सुरक्षा की। आज भी वेदों का अस्खलित पाठ करने वाले अनेक वेदपाठी ब्राह्मण मिलते हैं। किंतु जैन आगमों का बहुत बड़ा भाग काल के अंतराल में विस्मृत एवं लुप्त हो गया। आचारांग का प्रमाण नंदी में १८ हजार श्लोक प्रमाण मिलता है लेकिन आज उसका अधिकांश भाग लुप्त हो गया है। वेदों में पाठान्तर न आने का एक कारण संभवतः यह रहा कि वेदों को अपौरुषेय मानकर उन्हें अलौकिक ग्रंथ की कोटि में रखा गया। अतः किसी भी विद्वान ने उसमें भाषा या विषय सम्बन्धी परिवर्तन की हिम्मत नहीं की लेकिन जैन आगमों के विषय में यह बात नहीं रही। वाचनाकाल में जैन आगमों का परिवर्धन एवं परिवर्तन भी हुआ है। स्थानांग में अनेक ऐसे स्थल हैं, जो बाद में प्रक्षिप्त हैं।

जैन आगमों के पाठ सुरक्षित न रहने का एक मुख्य कारण यह भी रहा है कि आचार्यों ने आगम-वाचना को केवल साधु-समुदाय तक सीमित रखा, गृहस्थों को वाचना देने का अधिकारी नहीं समझा गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लेखन की परम्परा कब प्रारम्भ हुई इसका प्रामाणिक विवरण नहीं मिलता। पर ऐतिहासिक श्रुति के अनुसार प्राग् ऐतिहासिक काल में ऋषभ ने अपनी पुत्री ब्राह्मी को लिपिकला का ज्ञान कराया, जिसके आधार पर उस लिपि का नाम ब्राह्मीलिपि पड़ा। ७२ कलाओं में भी लेखनकला को एक स्थान प्राप्त है।

आगमों को लिपिबद्ध करने का महत्त्वपूर्ण कार्य देवर्धिगणि ने प्रारम्भ किया।[1] संभव है प्रारम्भ में साधु-साध्वी समुदाय ही लिपिक का कार्य करते थे किन्तु कालान्तर में वैतनिक लिपिकों का उपयोग अधिक किया जाने लगा। यतिवर्ग ने भी आगमों की प्रतिलिपि करने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। सेठ लोग प्रतिलिपि करवाकर साधुओं को दान में देते थे तथा इसे पुण्य का कार्य मानते थे। पद्मपुराण के उत्तरखंड में वर्णन आता है कि पुस्तक को दान में देने से देवत्व की प्राप्ति होती है।[2] वैदिक परम्परा में भी प्रति-लेखन को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया। गरुड़ पुराण का निम्न श्लोक इसी बात की पुष्टि करता है—

इतिहासपुराणाणि, लिखित्वा यः प्रयच्छति।
ब्रह्मदानसमं पुण्यं, प्राप्नोति द्विगुणीकृतम्॥[3]

प्राचीन काल में ग्रंथ के प्रचार-प्रसार का यही साधन था। आज कल्पसूत्र की हजारों प्रतियां भंडारों में मिलती हैं। उनमें अनेक स्वर्णाक्षरों में लिखी हुई हैं।

हस्तप्रतियों से प्राचीन ग्रंथों का पाठ-संपादन श्रमसाध्य एवं कष्ट-साध्य कार्य है। बिना धैर्य एवं स्थिरता के यह कार्य होना कठिन है। पाठ-निर्धारण में पौर्वापर्य का अनुसंधान करना अत्यन्त अपेक्षित रहता है। उसके लिए अनुसंधाता को एक-एक शब्द पर चिन्तन केन्द्रित करना पड़ता है।

पाठ संपादन की प्रक्रिया

आधुनिक विद्वानों ने पाठानुसंधान के विषय में पर्याप्त प्रकाश डाला है। पाश्चात्य विद्वान् इस कार्य को चार भागों में विभक्त करते हैं—१. सामग्री संकलन, २. पाठचयन, ३. पाठसुधार, ४. उच्चतर आलोचना। प्रस्तुत भाष्य के संपादन में हमने चारों बातों का ध्यान रखने का प्रयत्न किया है।

पाठ संशोधन के लिए तीन आधार हमारे सामने रहे हैं—१. व्यवहार भाष्य की हस्तलिखित प्रतियां २. मलयगिरि की प्रकाशित टीका ३. व्यवहार भाष्य की सैकड़ों गाथाएं, जो बृहत्कल्प, निशीथ एवं जीतकल्प आदि के भाष्यों में मिलती हैं।

बृहत्काय ग्रंथ होने के कारण व्यवहार भाष्य की ताड़पत्रीय प्रतियां कम लिखी गयीं। अतः पन्द्रहवीं-सोलहवीं शती में कागज पर लिखी प्रतियों का ही हमने उपयोग किया है। पाठ संशोधन में चार प्रतियां मुख्य रही हैं। पाठ चयन में हमने प्रतियों के पाठ को प्रमुखता दी है किन्तु किसी एक प्रति को ही पाठ-चयन का आधार नहीं बनाया है और न ही बहुमत के आधार पर पाठ का निर्णय किया है। अर्थ-मीमांसा, टीका की व्याख्या, पौर्वापर्य के आधार पर जो पाठ संगत लगा उसे मूल पाठ के अन्तर्गत रखा है।

पाठ-संपादन एवं निर्धारण में मलयगिरि की टीका का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा। अनेक पाठ हस्तप्रतियों में स्पष्ट नहीं थे लेकिन टीका की व्याख्या से उनकी स्पष्टता हो गई। जैसे २६६वीं गाथा में सभी प्रतियों में 'च इमो' पाठ है लेकिन टीका में 'व्रजामः' के आधार पर यह स्पष्ट हुआ कि 'वइमो' पाठ होना चाहिए। हस्तप्रतियों में 'च' और 'व' का अंतर करना अत्यन्त कठिन है। इसी प्रकार गाथा १६६८ में प्रतियों में 'गीयत्थोहोइण्णा' एवं—'गीयत्थेहाइण्णा' दोनों पाठ मिले पर टीका के 'गीतार्थैराचीर्णा' के आधार पर 'गीयत्थेहाइण्णा' (गीयत्थेहि + आइण्णा) पाठ स्पष्ट हो गया।

कहीं-कहीं सभी प्रतियों में एक ही पाठ मिलने पर भी यदि पूर्वापर के आधार पर टीका का पाठ उचित लगा तो उसे हमने मूलपाठ में रखा है तथा प्रतियों के पाठ को पाठान्तर में दिया है। गा. ३६६० में प्रतियों में 'अण्णयरा' पाठ मिलता है किंतु यहां

१. वलहिपुरम्मि नयरे, देवड्ढिपमुहेण समणसंघेण।
पुत्थइ आगमु लिहिओ, नवसयअसीयाओ वीराओ॥
२. पद्मपुराण, उत्तरखंड अ. ११७।
३. गरुड़पुराण अ. २१५।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका की व्याख्या एवं पौर्वापर्य के अनुसार 'अणंतरा' पाठ अधिक संगत लगता है।

अनेक स्थलों पर जहां प्रतियों एवं टीका में एक ही अर्थ के दो पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग मिलता है, वहां हमने टीका की व्याख्या में मिलने वाले पाठ को प्राथमिकता दी है। जैसे ४३वीं गाथा में सभी प्रतियों में **'आहाकम्मामंतण'** पाठ मिलता है। हमने टीका की व्याख्या के आधार पर **'आहाकम्मनिमंतण'** पाठ स्वीकृत किया है। इसी प्रकार सभी प्रतियों में 'निग्गमप्पवेसे' पाठ मिलता है पर हमने टीका का 'निक्खमप्पवेसे' पाठ स्वीकृत किया है।

आवश्यक निर्युक्ति, निशीथ एवं बृहत्कल्प आदि के भाष्यों की सैकड़ों गाथाएं व्यवहार भाष्य में संक्रान्त हुई हैं। अतः अनेक स्थलों पर अन्य ग्रंथों के पाठ के आधार पर भी पाठ का निर्धारण किया है। अनेक गाथाएं जो न अन्य ग्रंथों में हैं और न टीका में व्याख्यात हैं वहां केवल प्रतियों तथा प्रसंग की समीचीनता के आधार पर ही पाठ संशोधन किया है।

कहीं-कहीं किसी प्रति में कोई शब्द, चरण या गाथा नहीं है उसका निर्देश हमने पादटिप्पण में x चिह्न द्वारा किया है। जहां पाठान्तर एक से अधिक शब्दों पर या एक चरण पर है उसे ' ' चिह्न द्वारा दर्शाया है, जिससे पाठक को सुविधा हो सके।

प्रस्तुत भाष्य में जहां भी समान गाथाएं पुनरुक्त हुई हैं उनमें जहां जैसा पाठ मिला उसको वैसे ही रखा है। अपनी ओर से पाठ को संवादी या समान बनाने का प्रयत्न नहीं किया, जैसे--व्यभा १६१ तथा ६०६।

जहां कहीं हमें प्रति में प्राचीन रूप मिले वहां मूलपाठ में उन्हीं को प्रधानता दी है, लेकिन जहां प्रतियों में पाठ नहीं मिले वहां उन पाठों को तद्वत् रखा है। प्राचीनता के व्यामोह में व्यञ्जनों को बदलने की कोशिश नहीं की है। प्रामाणिकता की दृष्टि से ऐसा करना आवश्यक था अतः इसी ग्रंथ में पाठकों को जध-जह, एते-एए, जीतं-जीयं, तित्थगर-तित्थयर, होति-होइ आदि दोनों प्रकार के पाठ मिलेंगे।

प्राचीनता की दृष्टि से जहां कहीं हमें मूल व्यञ्जनयुक्त पाठ मिला हमने उसे मूल में स्वीकार किया है लेकिन पाठ न मिलने पर यकारश्रुति वाले पाठ को स्वीकृत किया है, तकारश्रुति वाले पाठ जैसे—बितितो, कणतो, आयरितो, विणतो आदि को नहीं।

प्राकृत व्याकरण के अनुसार संयुक्त व्यंजन से पूर्व का स्वर ह्रस्व हो जाता है। हमें दोनों रूप मिले पर प्राचीनता की दृष्टि से हमने दीर्घ रूप को ही स्वीकार किया है और न मिलने पर यत्र-तत्र ह्रस्व रूप भी।

हेमचन्द्र की व्याकरण से प्रभावित व्यञ्जनविशेष एवं स्वरविशेष से जुड़े पाठान्तरों का हमने प्रायः उल्लेख नहीं किया है। जैसे—

आदेस—आएस	**तधा—तहा**
होति—होइ	**बोधव्वा—बोद्धव्वा**
कुक्कुडग—कुक्कुडय	**पण्णा—पन्ना**
असंखेज्ज—असंखिज्ज	**तेणोत्ति—तेणुत्ति**
पभू—पहू	**सोधी—सोही**
परिसडिंति—परिसडेंति	**साहइ—साहई**
कधिति—कधेति आदि।	

सप्तमी आदि विभक्ति के लिए 'य' का प्रयोग प्राचीन है। अतः जहां भी हमें 'य' विभक्ति वाले पाठ मिले वहां हमने उनको प्राथमिकता दी है। जैसे—वीसाय, वीसुंभिताय आदि। इसी प्रकार सप्तमी विभक्ति के अर्थ में जहाँ अंसि और म्मि दोनों विभक्ति वाले रूप मिले वहां हमने अंसि विभक्ति वाले रूप को प्राचीन मानकर स्वीकृत किया है। जैसे पुव्वंसि, चित्तंसि आदि।

अनेक स्थलों पर स्पष्ट प्रतीत होता था कि हस्तप्रतियों में लिपिकर्ता द्वारा लिपि सम्बंधी भूल से पाठभेद हुआ है, उन पाठान्तरों का उल्लेख प्रायः नहीं किया है। पर कहीं-कहीं उसके दूसरे रूप बनने की संभावना थी, वहां ऐतिहासिकता की दृष्टि से भी हमने उन पाठान्तरों का उल्लेख किया है, जैसे—ठवित्तु—वावित्तु।

नीचे टिप्पणों में दी गई अतिरिक्त गाथाओं के पाठान्तरों का हमने उल्लेख नहीं किया है पर उनके पाठशोधन का लक्ष्य अवश्य रखा है।

सम्पादन की असावधानी के कारण टीकायुक्त प्रकाशित व्यवहार भाष्य में अनेक स्थलों पर अशुद्धियां रह गयी हैं। उसमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शब्दों की जोड़-तोड़ संबंधी अनेक अशुद्धियां हैं, जैसे—तु दडिव (तुद डेव) व्यभा ६५ आदि। अनेक स्थलों पर शब्द भी छूट गये हैं जैसे—गा. ५८ में 'अन्नं च छाउमत्थो' के स्थान पर 'छाउमत्थो' से गाथा प्रारम्भ होती है।

कहीं-कहीं श्लोक के पूर्वार्द्ध के शब्द उत्तरार्ध तथा उत्तरार्ध के शब्द पूर्वार्द्ध में छप गये हैं। अनेक स्थलों पर तो संस्कृत के शब्द भी छप गये हैं। जैसे—३०८५वीं गाथा में **'पूर्वं तु किटी असतीए'** आदि। अनेक अशुद्धियों के कारण मुद्रित व्यवहार भाष्य के केवल महत्त्वपूर्ण पाठान्तरों का ही हमने उल्लेख किया है।

अन्य ग्रन्थों में प्रकाशित व्यभा के संवादी गाथा के पाठान्तर देने का उद्देश्य था कि विद्वानों को एक ही स्थान पर पाठभेद देखने में सुविधा हो सके।

टीकाकार की विशेष टिप्पणी का भी हमने टिप्पण में उल्लेख किया है। जहां कहीं टीकाकार ने किसी विशेष शब्द का संक्षिप्त अर्थ किया है उसका टिप्पण में उल्लेख कर दिया गया है जैसे—**एकाहं नाम अभक्तार्थः** आदि। इसी प्रकार देशी शब्दों के लिए जहां कहीं **'देशीत्वात्' 'देशीवचनमेतत्'** आदि का उल्लेख हुआ है उनका भी टिप्पणों में उल्लेख कर दिया गया है। जैसे—**मूइंग इति देशीपदं मत्कोटवाचकम्** आदि।

यत्र-तत्र टीकाकार ने अलाक्षणिक मकार, पादपूर्ति रूप जे, इ, र आदि का उल्लेख किया है, उसका भी हमने पादटिप्पण में उल्लेख किया है। तथा अन्य व्याकरण सम्बन्धी विशिष्ट निर्देश का उल्लेख भी पादटिप्पण में किया है। जैसे—**सूत्रे विभक्तिलोप आर्षत्वात्।**

हस्तप्रतियों में अनेक गाथाओं के आगे 'दारं' का उल्लेख है पर उन सबको द्वारगाथा नहीं माना जा सकता। फिर भी यदि एक भी प्रति में 'दारं' का उल्लेख है तो हमने उस गाथा के आगे 'दारं' का संकेत कर दिया है।

व्यवहार भाष्य में कहीं-कहीं गाथाओं का क्रमव्यत्यय मिलता है। इसका संभवतः एक कारण यह रहा होगा कि प्रति लिखते समय लिपिकार द्वारा बीच में एक गाथा छूट गयी। बाद में ध्यान आने पर वह गाथा दो या तीन गाथा के बाद लिख दी गयी। प्रति की सुंदरता को ध्यान में रखते हुए इस बात का संकेत नहीं दिया गया कि गाथा में क्रमव्यत्यय हुआ है। इस बात की पुष्टि टीका की व्याख्या के आधार पर तथा पौर्वापर्य के आधार पर हो जाती है। ऐसे स्थलों का हमने पादटिप्पण में उल्लेख कर दिया है, जैसे—व्यभा. गा. ३२७।

कहीं-कहीं प्रतियों में लिपिकार की अनवधानता से पूर्ववर्ती गाथा का पूर्वार्द्ध तथा बाद में आने वाली गाथा का उत्तरार्ध लिख दिया गया है। बीच की दो लाइनें छूट गयीं। ऐसे प्रसंगों का हमने पादटिप्पण में उल्लेख कर दिया है।

आदर्शों का लेखन मुनि एवं यतिवर्ग करते थे। वे व्याख्यान की सामग्री के लिए प्रसंगवश कुछ संवादी गाथाओं को हासिए में लिख देते थे। कालान्तर में अन्य लिपिकों द्वारा जब उस आदर्श की प्रतिलिपि की जाती तब 'हासिए' में लिखी गाथाएं मूल में लिख दी जातीं। व्यवहार भाष्य में भी अनेक गाथाएं प्रसंगवश प्रक्षिप्त हुई हैं। उदाहरण के लिए निम्न उद्धरण प्रस्तुत किया जा सकता है—

अमिलायमल्ल (गा. १२७८) गाथा का मूल भाष्य के साथ कोई संबंध नहीं है। टीका में रोहिणेय की कथा दी गयी है। उसमें यह गाथा रोहिणेय के मुख से कहलवाई है। लेकिन कालान्तर में यह गाथा मूल भाष्य के साथ जुड़ गयी। यह गाथा सभी हस्तप्रतियों में मिलती है। अतः हमने भाष्य के क्रमांक में इसे जोड़ा है। कुछ गाथाएं अन्य आचार्यों की थीं। वे भी कालान्तर में भाष्य के साथ जुड़ गयीं, जैसे—२२४७ वीं गाथा के बारे में टीकाकार स्पष्ट उल्लेख करते हैं कि **अयमेव वृत्तबद्धोऽर्थोऽन्येनाचार्येण श्लोकेन बद्धस्तमेवाह।"** यह गाथा २२४६ की ही संवादी है तथा अन्यकर्तृकी है पर यह कालान्तर में भाष्य के साथ जुड़ गयी। सभी हस्तप्रतियों में भी यह भाष्यगाथा के क्रम में है। जहां भी हमें गाथाएं प्रक्षिप्त लगीं उनके बारे में हमने पादटिप्पण में संक्षिप्त टिप्पणी प्रस्तुत कर दी है।

प्राचीनकाल में पूर्ववर्ती आचार्यों की रचना को उत्तरवर्ती आचार्य आंशिक रूप से अपनी रचना के साथ बिना किसी नामोल्लेख के जोड़ लेते थे। अथवा कुछ पाठभेद के साथ उसे अपनी रचना का अंग बना लेते थे। जैसे आवश्यक निर्युक्ति की अस्वाध्याय संबंधी गाथाएं ओघनिर्युक्ति, निशीथभाष्य तथा व्यवहारभाष्य में मिलती हैं। इस पूरे प्रकरण को भाष्यकार ने अपने ग्रंथ का अंग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बना लिया है पर साथ ही गाथाओं में परिवर्तन एवं परिवर्धन भी किया है। कहीं-कहीं चरण एवं श्लोक का पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्ध भी परिवर्तित एवं आगे-पीछे मिलता है, जैसे—निशीथभाष्य की १२५३वीं गाथा का पूर्वार्द्ध व्यभा ३४२४ के पूर्वार्द्ध के समान है तथा उसका उत्तरार्ध व्यभा ३४२६ के पूर्वार्द्ध का संवादी है। हमने पादटिप्पण में भी सभी ग्रंथों के पाठभेद एवं संवादी प्रमाण दे दिये हैं जिससे शोध विद्यार्थी को यह परिवर्तन देखने में सुविधा हो सके। एक ही प्रकरण में इतने पाठभेद एवं परिवर्तन वाचनाभेद, स्मृतिभ्रंश तथा लिपिकों की असावधानी आदि अनेक कारणों से हो सकते हैं।

विद्वानों ने पाठभेद के अनेक कारणों की मीमांसा की है। उन कारणों का प्रभाव भाष्य की प्रतियों पर भी पड़ा है अतः कोई भी प्रति ऐसी नहीं मिली जिसके सभी पाठ दूसरी प्रति से मिलते हों। प्रयुक्त प्रतियों में वर्णसाम्य की त्रुटियां भी मिलती हैं। कुछ व्यञ्जन समान लिखे जाने के कारण उनका भेद करना कठिन होता है जैसे—च और व, ठ और व, द और ब। कहीं-कहीं वर्णसाम्य होने के कारण लिपिकारों द्वारा बीच का एक वर्ण छूट भी गया है जैसे—अववाय के स्थान पर अवाय, उववाय के स्थान पर उवाय आदि।

वर्ण विपर्यय से होने वाली अशुद्धियां भी इन प्रतियों में अनेक स्थलों पर मिलती हैं। जैसे—वेदयंतो—देवयंतो, बितियो-तिबियो गहणं-हगणं, मूलदेवो-देवमूलो आदि।

व्यञ्जन ही नहीं स्वर संबंधी विपर्यय के भी अनेक उदाहरण प्रयुक्त प्रतियों में देखने को मिलते हैं, जैसे—३६६१वीं गाथा में क प्रति में छम्मीसं के स्थान पर छम्मासं पाठ मिलता है।

प्रस्तुत ग्रंथ की हस्तप्रतियों में पाठभेद ही नहीं, गाथाओं में भी अनेक स्थलों पर विभेद मिलता है। किसी प्रति में एक गाथा मिलती है तो किसी में उसके स्थान पर उसी की संवादी अनेक गाथाएं भी प्राप्त होती हैं। औचित्य के अनुसार गाथाओं को मूल भाष्य में तथा पाठभेद की गाथाओं को टिप्पण में दे दिया है। उदाहरण के लिए देखें गा. ८५८, ८५६ एवं ८६८ की गाथाओं के टिप्पण।

अ प्रति में लिपिकार की लिखावट की भिन्नता अथवा उच्चारण भेद के प्रभाव से प्रायः ल के स्थान पर ण, भ के स्थान पर त तथा ध के स्थान पर व का प्रयोग मिलता है—

वल्लिदुगं—वण्णिदुगं
भिण्णपिंडं तिण्णपिंडं
धमएण वमएण आदि।

हमने कहीं-कहीं ही ऐसे पाठान्तरों का उल्लेख किया है।

प्रति परिचय

अ : यह प्रति देला के उपाश्रय अहमदाबाद से प्राप्त है। इसका क्रमांक ६४६६ है। इसमें १०६ पत्र हैं। प्रत्येक पत्र में करीबन १५ पंक्तियां हैं। प्रति साफ-सुथरी एवं स्पष्ट है। लिपिकार ने प्रशस्ति में २४ संस्कृत गाथाएं लिखी हैं तथा अंत में **इति प्रशस्तिकाव्यानि पत्तनवास्तव्य सं. षीमसिंह. सहसाभ्यां। पु. समधर देवदत्त नोताइसर सुत हेमराज सोनपाल धरणा-अमोपाल-पूनपाल-आसपालप्रमुख कुटुंबयुताभ्यां लिखितमिदं पुस्तकं॥ आचंद्रार्क नंदतात्॥ सं. १५३८ वर्षे ॥छ॥**

ब : यह प्रति लालभाई दलपतभाई विद्या मंदिर अहमदाबाद से प्राप्त है। इसका क्रमांक १२ है। इसमें ७४ पत्र हैं। इसके अक्षर स्पष्ट एवं साफ हैं। अंतिम पत्र का पिछला पन्ना खाली है। प्रत्येक पत्र में लगभग १७ पंक्तियां हैं। इसके अंत में प्रशस्ति रूप में निम्न गाथा मिलती है—

जयति जिणो वीरवरो, सक्खह तवणिज्जपुंजपिंजरदेहो।
सव्वसुरासुरनरवर, मउडतडावली पावीढंताडो॥

गाथा ४६२६ ॥छ॥श्री॥ व्यवहारभाष्यं समाप्तं ॥श्री॥ अनुमानतः इसका समय १६वीं शती होना चाहिए।

क : यह प्रति देला का उपाश्रय अहमदाबाद से प्राप्त है। इसका क्रमांक १०५१५ है। इसमें १२ पत्र हैं। वर्तमान में इसमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केवल दसवें उद्देशक की गाथाएं हैं। प्रत्येक पत्र में करीबन १८ पंक्तियां हैं। इसमें प्रशस्तिरूप में ब प्रति वाली गाथा ही लिखी हुई है। गाथा ४६२६ व्यवहार भाष्य समाप्त ।।छ।। प्रस्तुत प्रति ब प्रति से मिलती है। यह प्रति लगभग १६वीं शती की होनी चाहिए। यह प्रति किसी समय सम्पूर्ण थी लेकिन कालान्तर में इसके प्रारम्भिक पन्नों का लोप हो गया ऐसा प्रतीत होता है क्योंकि पुष्पिका के अंत में ग्रंथाग्र ४६२६ लिखा हुआ है।

स : यह प्रति भंडारकर इंस्टीट्यूट पूना से प्राप्त है। इसमें कुल १२७ पत्र हैं। प्रत्येक पत्र में लगभग १३ पंक्तियां हैं। यह प्रति साफ-सुथरी है। अंत में प्रशस्ति रूप में जयति''ब प्रति वाली गाथा लिखी हुई है। प्रस्तुत गाथा के बाद **"णमो सुतदेवयाए भगवतीए।। इति व्यवहारभाष्यं समाप्तं। शुभं भवतु।"** का उल्लेख है। तथा इसके पश्चात् लिपिकर्त्ता की ओर से निम्न गाथा लिखी हुई है—

यादृशं पुस्तकं दृष्ट्वा, तादृशं लक्षितं मया।
यथो (अतो) शुद्धमशुद्धं वा, मम दोषो न दीयति (दीयते)।।

।।कल्याणमस्तु।। साह श्री वच्छासुत साहसहस्रकिरणेन पुस्तकमिदं गृहीतं सुतवर्द्धमानं शांतिदासपरिपालनार्थं नवूलखा व्य उ जो उ लेखक जो ० भूपति ।। ग्रं० ५२०० माहाजतइ।।

पुस्तक का अंतिम अवतरण पुष्पिका कहलाता है। उसमें दी गयी सूचनाएं ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण होती हैं। पर प्राचीन प्रतियों में लिपिकर्त्ता विशेष जानकारी प्रस्तुत नहीं करते थे अतः व्यभा की हस्तप्रतियों में भी विशेष जानकारी उपलब्ध नहीं हुई है। चारों प्रतियों में भाष्यकार और रचनाकाल आदि के बारे में कोई उल्लेख नहीं मिलता।

आगमसाहित्य का सम्पादन

आज से चालीस वर्ष पूर्व मंचर (महाराष्ट्र) में पूज्य गुरुदेव के मन में आगम-सम्पादन की तीव्र इच्छा जागृत हुई। मुनि नथमल जी (वर्तमान आचार्य महाप्रज्ञ) ने गुरुदेव की इच्छा को संकल्प का रूप दिया और आगम-सम्पादन के कार्य में जुट गए। अनेक साधु-साध्वियों की इस कार्य में नियुक्ति हुई और देखते-देखते यह कार्य गुरुदेव की प्रमुख प्रवृत्ति बन गया।

तब से लेकर अब तक आगम-सम्पादन का कार्य अबाध गति से चल रहा है। गुरुदेव तुलसी आगम कार्य के प्रति अपनी अनुभूति इन शब्दों में व्यक्त करते हैं—**"विहार चाहे कितना ही लम्बा क्यों न हो, आगम कार्य में कोई अवरोध नहीं होना चाहिए। आगम-कार्य करते समय मेरा मानसिक तोष इतना बढ़ जाता है कि समस्त शारीरिक क्लांति मिट जाती है। आगम-कार्य हमारे लिए खुराक है। मेरा अनुमान है कि इस कार्य के परिपार्श्व में अनेक-अनेक साहित्यिक प्रवृत्तियां प्रारंभ होंगी, जिनसे हमारे शासन की बहुत प्रभावना होगी।"**

गुरुदेव तुलसी के वाचना प्रमुखत्व एवं आचार्य श्री के सम्पादकीय कौशल से विशाल आगम-साहित्य प्रकाश में आ चुका है। बत्तीस आगम का मूलपाठ शब्द इन्डेक्स सहित प्रकाशित हो चुके हैं। अनेक आगमों के अनूदित संस्करण भी प्रकाश में आए हैं। परिपार्श्व में आगम-साहित्य संबंधी अन्यान्य कार्य भी सम्पादित हुए हैं। एकार्थककोश, निरुक्तकोश, देशीशब्दकोश, आगम वनस्पति कोश आदि। इन प्रकाशित आगम ग्रंथों को विद्वानों ने विशेष रूप से सराहा है तथा इस कार्य को अनुपम माना है। इस कार्य की उत्तमता और प्रामाणिकता में पूज्य गुरुदेव का असाम्प्रदायिक, उदार एवं विनम्र दृष्टिकोण प्रमुख रहा है। आगमकार्य प्रारम्भ करने से पूर्व पूज्य गुरुदेव ने आगम कार्य में संलग्न साधुओं को प्रतिबोध देते हुए कहा—**"यह कार्य बहुत दायित्वपूर्ण है। इस गंभीर दायित्व का हमें अनुभव करना है। आगम का जो सही अर्थ है उसे पूरी सच्चाई के साथ प्रस्तुत करना है। हमारी साम्प्रदायिक परम्परा से भिन्न अर्थ फलित होता हो तो भले हो। हमें आगम के मौलिक अर्थ की प्रस्तुति करनी है। साम्प्रदायिक परम्परा भेद को पादटिप्पण में उल्लिखित किया जा सकता है किन्तु मूल में परिवर्तन या परिवर्धन नहीं करना है।"** गुरुदेव के इस असाम्प्रदायिक एवं उदार दृष्टिकोण ने इस कार्य की गुरुता एवं महत्ता को शतगुणित कर दिया। आज तक सम्पादित एवं अनूदित प्रकाशित आगम-साहित्य की सूची इस प्रकार है—

१. अंगसुत्ताणि भाग १, २, ३,—मूलपाठ, समीक्षात्मक पाठान्तर आदि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२. आगम शब्दकोश—अंगसुत्ताणि के तीनों भागों की समग्र शब्द-सूची।
३. नवसुत्ताणि—चार मूल, चार छेद तथा आवश्यक।
४. उवंगसुत्ताणि (खंड-१)—प्रथम तीन उपांग।
५. उवंगसुत्ताणि (खंड-२)—शेष नौ उपांग।
निम्न आगम मूलपाठ, संस्कृत छाया, हिन्दी अनुवाद तथा विश्लेषणात्मक टिप्पणों से युक्त प्रकाशित हुए हैं—
६. दसवेआलियं
७. आयारो
८. ठाणं
९. समवाओ
१०. सूयगडो भाग-१
११. सूयगडो भाग-२
१२. उत्तरज्झयणाणि भाग-१
१३. उत्तरज्झयणाणि भाग-२
१४. आचारांगभाष्यम्
१५. भगवतीभाष्यम् (दो शतक)
१६. गाथा

कोश साहित्य

१. एकार्थककोश
२. निरुक्तकोश
३. देशीशब्दकोश
४. आगम वनस्पति कोश

प्रस्तुत ग्रंथ सम्पादन का इतिहास

आज से १७ साल पूर्व महावीर जयंती के अवसर पर पूज्य गुरुदेव एवं युवाचार्य महाप्रज्ञजी (वर्तमान आचार्य महाप्रज्ञ) की सन्निधि में पारमार्थिक शिक्षण संस्था की मुमुक्षु बहिनों की एक गोष्ठी आहूत की गयी। गोष्ठी के दौरान कुछ मुमुक्षु बहिनों को साध्वियों के निर्देशन में आगम कोश का कार्य करने का निर्देश मिला। लगभग १½ साल के पश्चात् कार्य में नियुक्त कुछ बहिनों की विलक्षण दीक्षा घोषित हो गयी।[1] दीक्षित होने के बाद भी आगम कोश का कार्य तीव्रगति से चला। हजारों कार्ड बनाए पर वह कार्य कुछ कारणों से सफल नहीं हो सका। कार्य स्थगित हो गया पर इससे हमारा अनुभव वृद्धिंगत हुआ और उसके आलोक में अन्य कोशों की समायोजना की गई। उसमें मुख्य थे—एकार्थककोश, निरुक्तकोश एवं देशीशब्दकोश।

विक्रम संवत् २०४०। नाथद्वारा मर्यादा महोत्सव के बाद मुनि श्री दुलहराजजी को आगम कार्य के लिए लाडनूं भेजा गया। उनके लाडनूं आगमन से साध्वियों एवं समणियों के कार्य में गति आ गई। उनके निर्देशन में उपर्युक्त तीन कोश प्रकाश में आ गए। एकार्थक कोश की सम्पन्नता पर आचार्यवर ने मुझे निर्युक्तियों के संपादन कार्य का निर्देश दिया। निर्युक्तियों का कार्य लगभग सम्पन्नता पर था। उस समय पूना में कलघटगे जी से मिलना हुआ। उनकी ओर से एक सुझाव आया कि प्रकाशित व्यवहारभाष्य बहुत अशुद्ध है यदि उसका सम्पादन हो जाये तो कोशनिर्माण एवं अन्यान्य शोधकार्य में बहुत सहयोग मिल सकता है। उनके इस सुझाव की ओर पूज्य गुरुदेव एवं आचार्यश्री ने ध्यान दिया और मुझे व्यवहार भाष्य के सम्पादन का निर्देश मिला।

---

१. मुमुक्षु सरिता (समणी स्थितप्रज्ञा), मु. कुसुम (समणी कुसुमप्रज्ञा) मु. सविता (समणी स्मितप्रज्ञा, वर्तमान साध्वी विश्रुतविभा)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सन् १९८७ की अक्षय तृतीया को यह कार्य प्रारम्भ हुआ। लगभग ६ महीने में पांडुलिपि से सम्पादन का कार्य सम्पन्न हो गया। इसी बीच देशी शब्दकोश के कार्य में जुड़ने का भी मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ। भाष्य का कार्य सम्पन्न होने पर भी प्रकाशन की ओर ध्यान नहीं दिया गया। सन् १९९४ दिल्ली चातुर्मास में इसके प्रकाशन का कार्य प्रारम्भ हुआ। परिशिष्टों के निर्माण एवं प्रूफ रीडिंग में दो साल का समय लग गया। यद्यपि कार्य की सम्पन्नता में बहुत अनपेक्षित समय लगा है पर इसके भी कुछ कारण रहे हैं। गुरुदेव के निर्देशानुसार पूना से प्राप्त एक प्रति के पाठान्तर प्रूफ आने के बाद जोड़े गए हैं। इस कार्य में श्रम बहुत हुआ है पर संतोष है कि कार्य यथेष्ट रूप में सम्पन्न हो गया।

पूज्य गुरुदेव ने नारी को विकास के अनेक नए क्षितिज दिए हैं। साहित्य के क्षेत्र में तेरापंथ के साध्वी समाज ने नए कीर्तिमान् स्थापित किए हैं। पूज्य गुरुदेव एवं आचार्यश्री की प्रेरणा से अनेक साध्वियां आगम-सम्पादन के कार्य में संलग्न हैं। भगवती-जोड़ के सम्पादन का गुरुतर कार्य, जिसके विषय में कल्पना करना भी साहसिक बात थी पर महाश्रमणी साध्वी प्रमुखाजी के कुशल सम्पादकत्व में इसके छह खंड प्रकाश में आ गए हैं, सातवें खंड का कार्य चालू है।

पूज्य गुरुदेव ने अपने जीवन में नारी विकास के अनेक स्वप्न देखे हैं। और वे फलित भी हुए हैं। एक स्वप्न की चर्चा करते हुए बीदासर में (१२/२/६७) गुरुदेव ने कहा—**'मैं तो उस दिन का स्वप्न देखता हूं, जब साध्वियों द्वारा लिखी गयी टीकाएं या भाष्य सामने आएं। जिस दिन वे इस रूप में सामने आएंगी मैं अपने कार्य का एक अंग पूर्ण समझूंगा।'** गुरुदेव का यह स्वप्न पूर्ण रूप से सार्थक नहीं हुआ है पर इस दिशा में प्रस्थान हो चुका है। फिर भी हमें अत्यंत जागरूक रहकर उसे पूर्ण सार्थक करने का प्रयत्न करना है।

कृतज्ञता ज्ञापन

गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी का नाम मेरे लिए मंगलमंत्र है। हर कार्य के प्रारम्भ में आदि मंगल के रूप में उनके नाम का स्मरण मेरे जीवन की दिनचर्या का स्वाभाविक क्रम बन गया है। इसलिए मेरी हर सफलता का श्रेय गुरु-चरणों को जाता है। मुझे हर पल यह अहसास होता रहा है कि उनके शक्ति-संप्रेषण एवं आशीर्वाद से ही यह कार्य सम्पन्न हो सका है। समय-समय पर मिलने वाली उनकी प्रेरणा एवं प्रोत्साहन ने भी अद्भुत गति एवं स्फूर्ति का संचार किया है।

आचार्य महाप्रज्ञजी श्रुत की उपासना में वर्षों से अहर्निश लगे हुए हैं। वे मूर्तिमान श्रुतपुरुष हैं। समय-समय पर उनके मार्गदर्शन ने मेरे कार्य को सुगम, सुगमतर, सुगमतम बनाया है। भविष्य में उनकी ज्ञानरश्मियों का आलोक मुझे मिलता रहे, यह अभीप्सा है।

प्रस्तुत कार्य की निर्विघ्न संपूर्ति में महाश्रमणी साध्वी प्रमुखाजी के आशीर्वाद एवं निश्छल वात्सल्य का बहुत बड़ा योग रहा है। जब-जब निराशा या श्लथता का अनुभव हुआ, उनकी प्रेरणा ने नयी आशा एवं सक्रियता का संचार कर दिया। प्रतिदिन कार्य की अवगति लेने एवं समणियों को इस कार्य में नियुक्त करने से ही यह कार्य सम्पन्न हो पाया है। मैं उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करके उऋण नहीं होना चाहती। आकांक्षा है कि भविष्य में भी मेरी साहित्यिक यात्रा में उनका पथदर्शन और प्रोत्साहन निरन्तर मिलता रहे। इस कार्य में महाश्रमणजी की मूक प्रेरणाएं भी मेरे लिए मूल्यवान् रही हैं।

आगम कार्य में मुनि श्री दुलहराजजी का निर्देशन मुझे पिछले कई सालों से मिल रहा है। जिस निःस्वार्थ एवं निस्पृह भाव से उनका दिशादर्शन मिला है, वह केवल उल्लेखनीय ही नहीं, अनुकरणीय भी है। पाठ-सम्पादन में अनेक स्थलों का विमर्श, विषयानुक्रमणिका एवं अनेक परिशिष्ट उनकी ज्ञान-चेतना के आलोक में ही सम्पन्न हो सके हैं।

अनेक परिशिष्टों की अनुक्रमणिका एवं प्रूफ देखने में मुनि श्री हीरालालजी का सहयोग भी मेरे स्मृति पटल पर अंकित है। अत्यन्त सूक्ष्मता एवं लगन से अपना कार्य समझकर उन्होंने इस कार्य की सम्पूर्ति में अपना सहकार दिया है।

नियोजिका समणी मंगलप्रज्ञाजी ने व्यवस्थागत सहयोग से इस कार्य को हल्का बनाया है। लिपीकरण एवं प्रूफ-संशोधन में समणी ऋजुप्रज्ञाजी, कमला बैद एवं बहिन निर्मला चोरड़िया का सहयोग विशेष स्मरणीय है। इसके अतिरिक्त अल्पकालिक समय के लिए प्रूफ रीडिंग एवं लिपीकरण में समणी ज्योतिप्रज्ञा, मननप्रज्ञा, संघप्रज्ञा, कंचनप्रज्ञा एवं चैतन्यप्रज्ञा का नाम भी उल्लेखनीय है। प्रो. रानाडे ने बड़ी तत्परता एवं निष्ठा के साथ ग्रंथ की भूमिका के कुछ अंशों का अंग्रेजी अनुवाद किया है। समणी चारित्रप्रज्ञा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ने इसकी प्रतिलिपि में अपना समय लगाया है। प्रकाशन व्यवस्था में कुशलराजजी समदड़ियाजी की कार्यशीलता एवं कार्यप्रतिबद्धता भी इस कार्य को निष्ठा तक पंहुचाने में उपयोगी रही है।

ज्ञात-अज्ञात, प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से जिन-जिनका सहयोग इस कार्य की सम्पूर्ति में मिला है, उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना मात्र उपचार होगा। हम सब एक डोर में बंधे हैं अतः संविभाग हमारा आत्मधर्म है। सबके सहयोग की स्मृति करते हुए मुझे अत्यन्त आत्मिक आह्लाद की अनुभूति हो रही है। मैं उन सबके प्रति अपनी मंगल भावना प्रस्तुत कर सबके आत्मोत्थान की कामना करती हूं।

समणी कुसुमप्रज्ञा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्यवहार भाष्य : एक अनुशीलन

विषयानुक्रम

१. आगमों का वर्गीकरण
२. छेदसूत्रों का महत्त्व
३. छेदसूत्रों का कर्तृत्व
४. छेदसूत्रों का नामकरण
५. छेदसूत्रों की संख्या
६. छेदसूत्र किस अनुयोग में?
७. साध्वियों को छेदसूत्र की वाचना
८. बृहत्कल्प और व्यवहार में भेद-अभेद
९. निर्युक्तिकार
१०. निर्युक्ति एवं भाष्य का पृथक्करण
११. भाष्य
१२. भाष्यकार
१३. भाष्य का रचनाकाल
१४. अन्य ग्रंथों पर प्रभाव
१५. टीकाकार मलयगिरि
१६. व्यवहार
१७. आभवद् व्यवहार
- क्षेत्र आभवद् व्यवहार
- श्रुत आभवद् व्यवहार
- सुख-दुःख आभवद् व्यवहार
- मार्गोपसंपद् आभवद् व्यवहार
- विनयोपसंपद् आभवद् व्यवहार

१८. प्रायश्चित्त व्यवहार
- सचित्त प्रायश्चित्त
- अचित्त प्रायश्चित्त
- क्षेत्र एवं काल विषयक प्रायश्चित्त
- भाव विषयक प्रायश्चित्त

१९. आगम व्यवहार
२०. श्रुत व्यवहार
२१. आज्ञा व्यवहार
२२. धारणा व्यवहार
२३. जीत व्यवहार
- व्यवहार पंचक का प्रयोग
- अन्य धर्मों से तुलना

२४. व्यवहारी
- व्यवहारी की योग्यता

२५. आगम व्यवहारी
२६. श्रुत व्यवहारी
२७. व्यवहर्त्तव्य
२८. प्रायश्चित्त
- प्रायश्चित्तार्ह
- प्रायश्चित्तवाहक
- प्रायश्चित्तदान में अनेकान्त

२९. आलोचना
- आलोचना के लाभ
- आलोचनार्ह
- आलोचक के गुण
- आलोचना का क्रम
- आलोचना करने की विधि
- आलोचना के दोष
- आलोचना का काल
- आलोचना का स्थान एवं दिशा

३०. चित्त की अवस्थाएं
- क्षिप्तचित्त
- क्षिप्तचित्तता : निवारण के उपाय
- दृप्तचित्त
- उन्मत्तचित्त

३१. मनोरचना में क्षेत्र का प्रभाव
३२. भावधारा और आराधना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३. प्रतिमाएं
- मोकप्रतिमा
- यवमध्यचंद्रप्रतिमा
- वज्रमध्यचंद्रप्रतिमा
- प्रतिमाप्रतिपन्न की योग्यता

३४. ऐतिहासिक तथ्य

३५. राज्यव्यवस्था के घटक तत्त्व
- राजा
- वैद्य
- धनवान्
- नैयतिक
- रूपयक्ष

३६. राज्य का उत्तराधिकारी

३७. अंतःपुर

३८. गुप्तचर

३९. राज्यकर

४०. अर्थव्यवस्था

४१. सांस्कृतिक एवं सामाजिक तथ्य
- नारी
- वास्तुविद्या
- दासप्रथा

४२. पर्यवलोकन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्यवहार भाष्य : एक अनुशीलन

आगमों का वर्गीकरण

आगमों का प्राचीनतम वर्गीकरण अंग एवं पूर्व इन दो भागों में मिलता है। आर्यरक्षित ने आगम साहित्य को चार अनुयोगों में विभक्त किया। वे विभाग ये हैं—१. चरणकरणानुयोग २. धर्मकथानुयोग ३. गणितानुयोग ४. द्रव्यानुयोग।[1] आगम संकलन के समय आगमों को दो वर्गों में विभक्त किया गया—अंगप्रविष्ट एवं अंगबाह्य। नंदी में आगमों का विभाग काल की दृष्टि से भी किया गया है। प्रथम एवं अंतिम प्रहर में पढ़े जाने वाले आगम 'कालिक' तथा सभी प्रहरों में पढ़े जाने वाले आगम 'उत्कालिक' कहलाते हैं।[2] सबसे उत्तरवर्ती वर्गीकरण में आगम के चार विभाग मिलते हैं—अंग, उपांग, मूल एवं छेद। वर्तमान में आगमों का यही वर्गीकरण अधिक प्रसिद्ध है।

छेदसूत्रों का महत्त्व

जैन धर्म ने आचार-शुद्धि पर बहुत बल दिया। आचार-पालन में उन्होंने इतना सूक्ष्म निरूपण किया कि स्वप्न में भी यदि हिंसा या असत्यभाषण हो जाए तो उसका भी प्रायश्चित्त करना चाहिए। आगमों में प्रकीर्ण रूप से साध्वाचार का वर्णन मिलता है। समय के अंतराल में साध्वाचार के विधि-निषेध परक ग्रंथों की स्वतंत्र अपेक्षा महसूस की जाने लगी। द्रव्य, क्षेत्र, काल आदि के अनुसार आचार संबंधी नियमों में भी परिवर्तन आने लगा। परिस्थिति के अनुसार कुछ वैकल्पिक नियम भी बनाए गए, जिन्हें अपवाद मार्ग कहा गया।

छेदसूत्रों में साधु की विविध आचार-संहिताएं तथा प्रसंगवश अपवाद मार्ग आदि का विधान है। ये सूत्र साधु-जीवन का संविधान ही प्रस्तुत नहीं करते किन्तु प्रमादवश स्खलना होने पर दंड का विधान भी करते हैं। इन्हें लौकिक भाषा में दंड-संहिता तथा अध्यात्म की भाषा में प्रायश्चित्त सूत्र कहा जा सकता है।

छेदसूत्रों में प्रयुक्त 'कप्पइ' शब्द से मुनि के लिए करणीय आचार तथा 'नो कप्पइ' से अकरणीय या निषिद्ध आचार का ज्ञान होता है। बौद्ध परम्परा में आचार, अनुशासन एवं प्रायश्चित्त संबंधी विकीर्ण वर्णन विनय पिटक में तथा वैदिक परम्परा में श्रोत्रसूत्र एवं स्मृतिग्रंथों में मिलता है।

छेदसूत्रों में निशीथ अधिक प्रतिष्ठित हुआ है। व्यवहार भाष्य के पांचवें-छठे उद्देशक में निशीथ की महत्ता में अनेक तथ्य प्रतिपादित हैं।

व्यवहार भाष्य में आगमों के सूत्र और अर्थ की बलवत्ता के विमर्श में सूत्र के अर्थ को बलवान् माना है। उसी प्रसंग में अन्यान्य आगमों के अर्थ के संदर्भ में छेदसूत्रों के अर्थ को बलवत्तर माना है। इसका कारण बताते हुए भाष्यकार कहते हैं कि चारित्र में स्खलना होने पर या दोष लगने पर छेदसूत्रों के आधार पर विशुद्धि होती है अतः पूर्वगत को छोड़कर अर्थ की दृष्टि से अन्य आगमों की अपेक्षा छेदसूत्र बलवत्तर हैं।[3]

---

१. दशअचू. पृ. २।

२. नंदी सू. ७७, ७८।

३. व्यभा- १८२९ : जम्हा तु होति सोधी, छेदसुयत्थेण खलितचरणस्स।
तम्हा छेदसुयत्थो, बलवं मोत्तूण पुव्वगतं॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निशीथ भाष्य में छेद-सूत्रों को उत्तमश्रुत कहा है। निशीथ चूर्णिकार कहते हैं कि इनमें प्रायश्चित्त विधि का वर्णन है, इनसे चारित्र की विशोधि होती है इसलिए छेदसूत्र उत्तमश्रुत हैं।[१]

छेदसूत्रों के ज्ञाता श्रुतव्यवहारी कहलाते हैं।[२] उनको आलोचना देने का अधिकार है। छेदसूत्रों के व्याख्याग्रंथों का भी महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। जो बृहत्कल्प एवं व्यवहार की निर्युक्ति को अर्थतः जानता है, वह श्रुतव्यवहारी है।[३]

छेदसूत्र रहस्य सूत्र हैं। योनिप्राभृत आदि ग्रंथों की भांति इनकी गोपनीयता का निर्देश है। इनकी वाचना हर एक को नहीं दी जाती थी। निशीथ भाष्य एवं चूर्णि में स्पष्ट उल्लेख मिलता है कि जहां मृग (बाल, अज्ञानी एवं अगीतार्थ) साधु बैठे हों वहां इनकी वाचना नहीं देनी चाहिए।[४] लेकिन सूत्र का विच्छेद न हो इस दृष्टि से द्रव्य, क्षेत्र, काल आदि के आधार पर अपात्र को भी वाचना दी जा सकती है, ऐसा उल्लेख भी मिलता है।[५]

पंचकल्प भाष्य के अनुसार छेदसूत्रों की वाचना केवल परिणामक शिष्य को दी जाती थी, अतिपरिणामक एवं अपरिणामक को नहीं।[६] अपरिणामक आदि शिष्यों को छेदसूत्रों की वाचना देने से वे उसी प्रकार विनष्ट हो जाते हैं जैसे मिट्टी के कच्चे घड़े या अम्लरसयुक्त घड़े में दूध नष्ट हो जाता है।[७] अगीतार्थ बहुल संघ में छेदसूत्र की वाचना एकान्त में अभिशय्या या नैषेधिकी में दी जाती थी क्योंकि अगीतार्थ साधु उसे सुनकर कहीं विपरिणत होकर गच्छ से निकल न जाएं।[८]

छेदसूत्रों का कर्तृत्व

छेदसूत्र पूर्वों से निर्यूढ हुए अतः इनका आगम साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान है। दशाश्रुतस्कंध, बृहत्कल्प, व्यवहार एवं निशीथ—इन चारों छेदसूत्रों का निर्यूहण प्रत्याख्यान पूर्व की तृतीय आचारवस्तु से हुआ, ऐसा उल्लेख निर्युक्ति एवं भाष्य साहित्य में मिलता है।[९] दशाश्रुत, कल्प एवं व्यवहार का निर्यूहण भद्रबाहु ने किया यह भी अनेक स्थानों पर निर्दिष्ट है।[१०] किंतु निशीथ के कर्तृत्व के बारे में विद्वानों में मतैक्य नहीं है। कुछ विद्वान् निशीथ को भी भद्रबाहु द्वारा निर्यूढ मानते हैं लेकिन यह बात तर्क-संगत नहीं लगती। निशीथ चतुर्दशपूर्वधर भद्रबाहु द्वारा निर्यूढ कृति नहीं है, इस मत की पुष्टि में कुछ हेतु प्रस्तुत किए जा सकते हैं—

दशाश्रुतस्कंध की निर्युक्ति एवं पंचकल्प भाष्य में भद्रबाहु को दशा, कल्प एवं व्यवहार—इन तीनों सूत्रों के कर्त्ता के रूप में वंदना की है, वहां आचारप्रकल्प—निशीथ का उल्लेख नहीं है।[११]

---

१. निभा. ६१८४ चू. पृ. २५३।
२. निभा. ६३६५; व्यभा ३२०।
३. व्यभा. ४४३२-३५।
४. निभा. ५६४७ चू. पृ. १६०, व्यभा ६४६ टी. प. ५८।
५. निभा. ६२२७ चू. पृ. २६१।
६. पंकभा. १२२३; णाऊणं छेदसुतं, परिणामगे होंति दायव्वं।
७. व्यभा. ४१००,४१०१।
८. व्यभा. १७३६।
९. क व्यभा. ४१७४;
सव्वं पि य पच्छित्तं, पच्चक्खाणस्स ततियवत्थुम्मि।
तत्तो च्चिय निज्जूढं, पकप्पकप्पो य ववहारो॥
ख. पंकभा. २३ : आयारदसाकप्पो, ववहारो नवमपुव्वणीसंदो।
ग. आचारांगनिर्युक्ति २९१ :
आयारपकप्पो पुण, पच्चक्खाणस्स ततियवत्थूओ।
आयारनामधेज्जा, वीसइमा पाहुडच्छेदा।
१०. क. दशाश्रुतस्कंधनिर्युक्ति :
वंदामि भद्दबाहुं, पाईणं चरिमसगलसुयनाणीं।
सुत्तस्स कारगमिसिं, दसासु कप्पे य ववहारे॥
ख. पंकभा. १२ : तो सुत्तकारओ खलु, स भवति दसकप्पववहारे।
११. दश्रुनि. १; पंकभा. १।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

• व्यवहार सूत्र में जहां आगम-अध्ययन की काल-सीमा के निर्धारण का प्रसंग है, वहां भी दशाश्रुत, व्यवहार एवं कल्प का नाम एक साथ आता है।[१] आवश्यक सूत्र में भी इन तीन ग्रंथों के उद्देशकों का ही एक साथ उल्लेख मिलता है।[२] निशीथ को इनके साथ न जोड़कर पृथक् उल्लेख किया गया है।[३]

• श्रुतव्यवहारी के प्रसंग में भाष्यकार ने कल्प और व्यवहार इन दो ग्रंथों तथा इनकी निर्युक्तियों के ज्ञाता को श्रुतव्यवहारी के रूप में स्वीकृत किया है। वहां निशीथ/आचारप्रकल्प का उल्लेख नहीं है।[४] निशीथ की महत्ता सूचक अनेक गाथाएं व्यभा में हैं, पर वे आचार्यों ने बाद में जोड़ी हैं, ऐसा प्रतीत होता है क्योंकि उत्तरकाल में निशीथ बहुत प्रतिष्ठित हुआ है। अन्यथा कल्प और व्यवहार के साथ भाष्यकार अवश्य निशीथ का नाम जोड़ते।

• निशीथ का निर्यूहण भद्रबाहु ने किया, यह उल्लेख केवल पंचकल्पचूर्णि में मिलता है।[५] इसका कारण संभवतः यह रहा होगा कि अन्य छेदग्रंथों की भांति निशीथ का निर्यूहण भी प्रत्याख्यान पूर्व से हुआ इसीलिए कालान्तर में निर्यूहण कर्त्ता के रूप में भद्रबाहु का नाम निशीथ के साथ भी जुड़ गया।

• विंटरनित्स ने निशीथ को अर्वाचीन माना है तथा इसे संकलित रचना के रूप में स्वीकृत किया है।[६]

• विद्वानों के द्वारा कल्पना की गयी है कि निशीथ का निर्यूहण विशाखगणि द्वारा किया गया, जो भद्रबाहु के समकालीन थे।

दशाश्रुतस्कंध के निर्यूहण के बारे में भी एक प्रश्नचिह्न उपस्थित होता है कि इसमें महावीर का जीवन एवं स्थविराबलि है अतः यह पूर्वों से उद्धृत कैसे माना जा सकता है? इस प्रश्न के समाधान में संभावना की जा सकती है कि इसमें कुछ अंश बाद में जोड़ दिया गया हो।

छेदसूत्रों का निर्यूहण क्यों किया गया, इस विषय में भाष्य साहित्य में विस्तृत चर्चा मिलती है। भाष्यकार के अनुसार नौवां पूर्व सागर की भांति विशाल है। उसकी सतत स्मृति में बार-बार परावर्तन की अपेक्षा रहती है, अन्यथा वह विस्मृत हो जाता है।[७] जब भद्रबाहु ने धृति, संहनन, वीर्य, शारीरिक बल, सत्त्व, श्रद्धा, उत्साह एवं पराक्रम की क्षीणता देखी तब चारित्र की विशुद्धि एवं रक्षा के लिए दशाश्रुतस्कंध, कल्प एवं व्यवहार का निर्यूहण किया।[८] इसका दूसरा हेतु बताते हुए भाष्यकार कहते हैं कि चरणकरणानुयोग के व्यवच्छेद होने से चारित्र का अभाव हो जाएगा अतः चरणकरणानुयोग की अव्यवच्छित्ति एवं चारित्र की रक्षा के लिए भद्रबाहु ने इन ग्रंथों का निर्यूहण किया।[९]

चूर्णिकार स्पष्ट उल्लेख करते हैं कि भद्रबाहु ने आयुबल, धारणाबल आदि की क्षीणता देखकर दशा, कल्प एवं व्यवहार का निर्यूहण किया किन्तु आहार, उपधि, कीर्ति या प्रशंसा आदि के लिए नहीं।[१०]

निर्यूहण के प्रसंग को दृष्टान्त द्वारा समझाते हुए भाष्यकार कहते हैं—जैसे सुगंधित फूलों से युक्त कल्पवृक्ष पर चढ़कर फूल इकट्ठे करने में कुछ व्यक्ति असमर्थ होते हैं। उन व्यक्तियों पर अनुकम्पा करके कोई शक्तिशाली व्यक्ति उस पर चढ़ता है और फूलों को चुनकर अक्षम लोगों को दे देता है। उसी प्रकार चतुर्दशपूर्व रूप कल्पवृक्ष पर भद्रबाहु ने आरोहण किया और अनुकंपावश छेद ग्रंथों का संग्रथन किया।[११] इस प्रसंग में भाष्यकार ने केशवभेरी एवं वैद्य के दृष्टान्त का भी उल्लेख किया है।[१२]

---

१. व्यसू. १०/२७:पंचवासपरियायस्स समणस्स निग्गंथस्स कप्पइ दसाकप्पववहारे उद्दिसित्तए।
२. आवसू. ८:छव्वीसाए दसाकप्पववहाराणं उद्देसणकालेहिं।
३. व्यसू. १०/२५ : तिवासपरियायस्स समणस्स निग्गंथस्स कप्पइ आयारपकप्पं नामं अज्झयणं उद्दिसित्तए।
४. व्यभा. ४४३२-४४३६।
५. पंचकल्पचूर्णि (अप्रकाशित)।
६. A History of ....p. 446.
७. व्यभा. १७३७।
८. पंकभा. २६-२९।
९. पंकभा. ४२।
१०. दशुचू. पृ. ३।
११. पंकभा. ४३-४६।
१२. पंकभा. ४७, ४८।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छेदसूत्रों का नामकरण

नंदी में व्यवहार, बृहत्कल्प आदि ग्रंथों को कालिकश्रुत के अन्तर्गत रखा है। गोम्मटसार[1] धवला[2] एवं तत्त्वार्थसूत्र[3] में व्यवहार आदि ग्रंथों को अंगबाह्य में समाविष्ट किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि जब भद्रबाहु ने निर्यूहण किया तब तक संभवतः छेदग्रंथ जैसा विभाग इन ग्रंथों के लिए नहीं हुआ था। बाद में इन ग्रंथों को विशेष महत्त्व देने हेतु इनको एक नवीन वर्गीकरण के अन्तर्गत समाविष्ट कर दिया गया। फिर भी 'छेदसूत्र' नाम कैसे प्रचलित हुआ इसका कोई पुष्ट प्रमाण प्राचीन साहित्य में नहीं मिलता। छेदसूत्र का सबसे प्राचीन उल्लेख आवश्यकनिर्युक्ति में मिलता है।[4]

विद्वानों ने अनुमान के आधार पर इसके नामकरण की यौक्तिकता पर अनेक हेतु प्रस्तुत किए हैं। छेदसूत्रों के नामकरण के बारे में निम्न विकल्पों को प्रस्तुत किया जा सकता है—

• शूब्रिंग के अनुसार प्रायश्चित्त के दस भेदों में 'छेद' और 'मूल' के आधार पर आगमों का वर्गीकरण 'छेद' और 'मूल' के रूप में प्रसिद्ध हो गया।[5] इस अनुमान की कसौटी में छेदसूत्र तो विषय-वस्तु की दृष्टि से खरे उतरते हैं। लेकिन वर्तमान में उपलब्ध मूलसूत्रों की 'मूल' प्रायश्चित्त से कोई संगति नहीं बैठती।

• सामायिक चारित्र स्वल्पकालिक है अतः प्रायश्चित्त का संबंध छेदोपस्थापनीय चारित्र से अधिक है। छेदसूत्र तत् चारित्र सम्बन्धी प्रायश्चित्त का विधान करते हैं, संभवतः इसीलिए इनका नाम 'छेदसूत्र' पड़ा होगा।

• दिगंबर ग्रंथ 'छेदपिंड' में प्रायश्चित्त के आठ पर्यायवाची नाम हैं। उनमें एक नाम 'छेद' है। श्वेताम्बर परम्परा में प्रायश्चित्त के दस भेदों में सातवां प्रायश्चित्त 'छेद' है। अंतिम तीन प्रायश्चित्त साधुवेश से मुक्त होकर वहन किये जाते हैं। लेकिन श्रमण पर्याय में होने वाला अंतिम प्रायश्चित्त 'छेद' है। स्खलना होने पर जो चारित्र के छेद—काटने का विधान करते हैं, वे ग्रंथ छेदसूत्र हैं।

• आवश्यक की मलयगिरि टीका में सामाचारी के प्रकरण में छेदसूत्रों के लिए पदविभाग सामाचारी शब्द का प्रयोग मिलता है।[6] पदविभाग और छेद ये दोनों शब्द एक ही अर्थ के द्योतक हैं।

• छेदसूत्र में सभी सूत्र स्वतंत्र हैं। एक सूत्र का दूसरे सूत्र के साथ विशेष संबंध नहीं है तथा व्याख्या भी छेद या विभाग दृष्टि से की गई है। इसलिए भी इनको छेदसूत्र कहा जा सकता है।

नामकरण के बारे में आचार्य तुलसी (वर्तमान गणाधिपति तुलसी) ने एक नई कल्पना प्रस्तुत की है— "छेदसूत्र को उत्तमश्रुत माना है। 'उत्तम श्रुत' शब्द पर विचार करते समय एक कल्पना होती है कि जिसे हम 'छेयसुत्त' मानते हैं वह कहीं 'छेकश्रुत तो नहीं है? छेकश्रुत अर्थात् कल्याण श्रुत या उत्तम श्रुत। दशाश्रुतस्कन्ध को छेदसूत्र का मुख्य ग्रंथ माना गया है।[7] इससे 'छेयसुत्त' का 'छेकसूत्र' होना अस्वाभाविक नहीं लगता। दशवैकालिक (४/११) में **'जं छेयं तं समायरे'** पद प्राप्त है। इससे 'छेय' शब्द के 'छेक' होने की पुष्टि होती है।"[8]

• जिससे नियमों में बाधा न आती हो तथा निर्मलता की वृद्धि होती हो, उसे छेद कहते हैं।[9] पंचवस्तु की टीका में हरिभद्र द्वारा किए गए इस अर्थ के आधार पर यह अनुमान किया जा सकता है कि जो ग्रंथ निर्मलता एवं पवित्रता के वाहक हैं, वे छेदसूत्र हैं। अतः इन ग्रंथों का छेद नामकरण सार्थक लगता है।

---

१. गोजी-गा. ३६७, ३६८।
२. धवला पु. १ पृ. ६६।
३. त. २/२०।
४. आवनि- ७७७।
५. कल्पसूत्र भू. पृ. ८।
६. आवनि- ६६५ मटी-पृ. ३४१ : पदविभागसामाचारीछेदसूत्राणि।
७. दश्रुचू. पृ. २; इमं पुण छेयसुत्तपमुहभूतं।
८. निसी. भूमिका पृ. ३, ४।
९. जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश भा. २ पृ. ३०६; बज्झाणुट्ठाणेणं, जेण ण बाहिज्जए तयं णियमा।
संभवइ य परिसुद्धं, सो पुण धम्मम्मि छेउ त्ति॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्तमान में उपलब्ध चार छेदसूत्रों का नामकरण भी सार्थक हुआ है। आयारदशा में साधु जीवन के आचार की विविध अवस्थाओं का वर्णन है। यह दस अध्ययनों में निबद्ध है अतः इसका नाम 'दशाश्रुतस्कंध' भी है। कल्प का अर्थ है—आचार। जिसमें विस्तृत रूप में साधु के विधि-निषेध सूचक आचार का वर्णन है, वह 'बृहत्कल्प' है। बृहत्कल्प नाम की सार्थकता का विस्तृत विवेचन मलयगिरि ने बृहत्कल्प भाष्य की पीठिका में किया है।[१]

व्यवहार प्रायश्चित्त सूत्र है। इसमें पांच व्यवहारों का मुख्य वर्णन होने के कारण इसका नाम 'व्यवहार' रखा गया।

आचारप्रकल्प में आचार के विविध विकल्पों का वर्णन है। इसका दूसरा नाम निशीथ भी है। निशीथ का अर्थ है—अर्धरात्रि या अंधकार। निशीथ भाष्य के अनुसार 'निशीथ' की वाचना अर्धरात्रि या अप्रकाश में दी जाती थी इसलिए इसका नाम निशीथ प्रसिद्ध हो गया।[२] इसका संक्षिप्त नाम 'प्रकल्प' भी है।

छेदसूत्रों की संख्या

छेदसूत्रों की संख्या के बारे में विद्वानों में मतभेद है। जीतकल्प चूर्णि में छेदसूत्रों के रूप में निम्न ग्रंथों का उल्लेख हुआ है—कल्प, व्यवहार, कल्पिकाकल्पिक, क्षुल्लकल्प, महाकल्प, निशीथ आदि।[3] आदि शब्द से यहां संभवतः दशाश्रुतस्कंध ग्रंथ का संकेत होना चाहिए। कल्पिकाकल्पिक, महाकल्प एवं क्षुल्लकल्प आदि ग्रंथ आज अनुपलब्ध हैं। पर इतना निःसंदेह कहा जा सकता है कि ये प्रायश्चित्त सूत्र थे और इनकी गणना छेदसूत्रों में होती थी।

आवश्यकनिर्युक्ति में छेदसूत्रों के साथ महाकल्प का उल्लेख मिलता है।[४] संभव है तब तक इस ग्रंथ का अस्तित्व था। सामाचारी शतक में छेदसूत्रों के रूप में छह ग्रंथों के नामों का उल्लेख मिलता है। दशाश्रुत, बृहत्कल्प, व्यवहार, निशीथ, जीतकल्प, महानिशीथ।[५] पं. कैलाशचंद्र शास्त्री ने जीतकल्प के स्थान पर पंचकल्प को छेदसूत्रों के अन्तर्गत माना है।[६]

हीरालाल कापड़िया के अनुसार पंचकल्प का लोप होने के बाद जीतकल्प की परिगणना छेदसूत्रों में होने लगी।[७] कुछ मुनियों का कहना है कि पंचकल्प कभी बृहत्कल्पभाष्य का ही एक अंश था पर बाद में इसको अलग कर दिया गया जैसे ओघनिर्युक्ति और पिण्डनिर्युक्ति को।[८]

वर्तमान में पंचकल्प अनुपलब्ध है। जैन ग्रंथावली के अनुसार १७ वीं शती के पूर्वार्द्ध तक इसका अस्तित्त्व था।[९] किन्तु निश्चय रूप से नहीं कहा जा सकता कि इसका लोप कब हुआ? पंचकल्प भाष्य की विषयवस्तु देखकर ऐसा लगता है कि किसी समय में पंचकल्प की गणना छेदसूत्रों में रही होगी।

विंटरनित्स के अनुसार छेदसूत्रों के प्रणयन का क्रम इस प्रकार है—कल्प, व्यवहार, निशीथ, पिंडनिर्युक्ति, ओघनिर्युक्ति, महानिशीथ।[१०] विंटरनित्स ने छेदसूत्रों में जीतकल्प का समावेश नहीं किया। जीतकल्प की रचना नंदी के बाद हुई अतः उसमें जीतकल्प का उल्लेख नहीं मिलता। पिंडनिर्युक्ति तथा ओघनिर्युक्ति साधु के नियमों का वर्णन करती है इसीलिए संभवतः विंटरनित्स ने इन दोनों का छेदसूत्रों के अन्तर्गत समावेश किया है।

दिगम्बर साहित्य में कल्प, व्यवहार और निशीथ—इन तीन ग्रन्थों का ही उल्लेख मिलता है, जिनका समावेश अंगबाह्य में किया गया है। जीतकल्प, पंचकल्प और महानिशीथ का उल्लेख दिगम्बर साहित्य में नहीं मिलता।

---

१. बृपी. पृ. ४।
२. निभा. ६६।
३. जीचू. पृ. १. कप्प-ववहार कप्पियाकप्पिय—चुल्लकप्प—महाकप्पसुय,
   निसीहाइएसु छेदसुत्तेसु अइवित्थरेण पच्छित्तं भणियं।
४. आवनि. ७७७, विभा २२९५।
५. सामाचारी शतक, आगमाधिकार।
६. जैनधर्म पृ. २५६।
७. A History of the canonical Literature of the Jains, Page, 37
८. A History of the canonical Literature of Jains, Page 36
९. A History of the canonical Literature of the Jains. Page 36
१०. A History... Page 464

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समवाओ में दशाश्रुत को छेदसूत्र में प्रथम स्थान दिया है।[1] चूर्णिकार ने छेदसूत्रों में दशाश्रुतस्कन्ध को प्रमुख रूप से स्वीकार किया है।[2] इसको प्रमुखता देने का संभवतः यही कारण रहा होगा कि इसमें मुनि के लिए आचरणीय एवं अनाचरणीय तथ्यों का क्रमबद्ध वर्णन है। शेष तीन छेदसूत्र इसी के उपजीवी हैं।

विंटरनित्स के अनुसार व्यवहार बृहत्कल्प का पूरक है। बृहत्कल्प में प्रायश्चित्त-योग्य कार्यों का निर्देश है तथा व्यवहार उसकी प्रयोग भूमि है। अर्थात् उसमें प्रायश्चित्त निर्दिष्ट हैं। उनके अनुसार निशीथ की रचना अर्वाचीन है। निशीथ में बहुत बड़ा भाग व्यवहार से तथा कुछ भाग प्रथम और द्वितीय चूला से लिया गया है।[3]

कुछ आचार्य दशाश्रुत, बृहत्कल्प एवं व्यवहार—इन तीनों को एक श्रुतस्कंध ही मानते हैं तथा कुछ आचार्य दशाश्रुत को एक तथा कल्प और व्यवहार को दूसरे श्रुतस्कंध के रूप में स्वीकृत करते हैं।[4]

छेदसूत्र किस अनुयोग में?

अनुयोग विशिष्ट व्याख्या पद्धति है। उसके मुख्य चार भेद हैं—१. चरणकरण, २. धर्मकथा, ३. गणित, ४. द्रव्य। आर्यरक्षित से पूर्व अपृथक्त्वानुयोग प्रचलित था। उसमें प्रत्येक आगम के सूत्रों की व्याख्या चरणकरण, धर्म, गणित तथा द्रव्य की दृष्टि से की जाती थी। वह प्रत्येक के लिए सुगम नहीं होती थी। आर्यरक्षित ने इस जटिलता और स्मृतिबल की क्षीणता को देखकर पृथक्त्वानुयोग का प्रवर्त्तन कर दिया। उन्होंने विषयगत वर्गीकरण के आधार पर आगमों को चार अनुयोगों में बांटा—१. चरणकरणानुयोग, २. धर्मकथानुयोग, ३. गणितानुयोग, ४. द्रव्यानुयोग।

आचार प्रधान होने के कारण छेदसूत्रों का समावेश चरणकरणानुयोग में किया गया। इस संदर्भ में निशीथ चूर्णि में शिष्य आचार्य से प्रश्न पूछता है कि निशीथ आचारांग की पंचमचूला होने के कारण उसका समावेश अंग में है तथा वह चरणकरणानुयोग के अन्तर्गत है, लेकिन छेद सूत्र अंगबाह्य हैं वे किस अनुयोग के अन्तर्गत होंगे? निशीथ भाष्यकार ने छेदसूत्रों का समावेश चरणकरणानुयोग के अन्तर्गत रखा है।[5]

साध्वियों को छेदसूत्र की वाचना

आर्यरक्षित अन्तिम आगमव्यवहारी थे। आगमव्यवहारी अपने ज्ञानबल से जान लेते थे कि इस संयती को छेदसूत्र की वाचना देने में दोषापत्ति नहीं है तो वे उसे छेदसूत्रों की वाचना देते थे। आर्यरक्षित के बाद आगमव्यवहारी नहीं रहे। साध्वियों की मनःस्थिति को स्पष्ट रूप से जानने का कोई अतिशायी ज्ञान नहीं रहा। तब स्थविरों ने सोचा कि छेदसूत्र के अध्ययन से साध्वियां संयम से च्युत न हो जाएं, इस दृष्टि से उनको वाचना देना बंद कर दिया।[6]

प्रश्न उपस्थित हुआ कि फिर साध्वियां शोधि कैसे कर पाएंगी? इसके उत्तर में ग्रंथकार कहते हैं— आचार्य आर्यरक्षित के समय तक साध्वियां साध्वियों से प्रायश्चित्त ग्रहण करती थीं और प्रायश्चित्तदात्री साध्वियों के अभाव में श्रमणों के पास भी आलोचना कर प्रायश्चित्त ग्रहण करती थीं। इसी प्रकार श्रमण भी स्वपक्ष अर्थात् श्रमणों से अथवा परपक्ष अर्थात् श्रमणियों के पास आलोचना कर प्रायश्चित्त ग्रहण करते थे। आर्यरक्षित के पश्चात् श्रमणियां श्रमणों के पास ही आलोचना करने लगीं। आर्यरक्षित के समय में भी यह परम्परा थी कि यदि साध्वियों को मूलगुण संबंधी दोषों की आलोचना करनी होती तो वे स्वयं साध्वियों के पास ही उनकी आलोचना करतीं। योग्य साध्वी के अभाव में छेदग्रंथधर स्थविर के पास आलोचना करतीं।[7]

---

१. सम॰ २६/१।
२. दश्रुचू॰ पृ॰ २ : इमं पुण छेदसुत्तपमुहसुत्तं।
३. A His. of P. 446
४. पंकभा॰ २५;।
५. निभा॰ ६१६० :
जं च महाकप्पसुयं, जाणिय सेसाइं छेदसुत्ताइं।
चरणकरणाणुओगो, कालियछेदोवगयाइ य॥
६. व्यभा॰ २३६५।
७. व्यभा. २३६६-६८।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यदि कोई साध्वी सीखे हुए आचारप्रकल्प को प्रमाद से भूल जाती तो उसे जीवनभर प्रवर्तिनी पद नहीं दिया जाता।[1]

छेदसूत्र जैसे रहस्यमय सूत्र की विस्मृति के कुछ कारण भाष्यकार ने बताए हैं। मलयवती, मगधसेना एवं तरंगवती आदि रोचक कथा साहित्य पढ़ने से आचारप्रकल्प आदि ग्रंथों के परावर्तन का समय नहीं मिलता। इसके अतिरिक्त ज्योतिषज्ञान, निमित्त-विद्या, विशिष्टविद्या, मंत्र आदि की साधना तथा निमित्तशास्त्र के अध्ययन में समय अधिक लगाना पड़ता इसलिए आचारप्रकल्प आदि की विस्मृति हो जाती।[2] इस प्रसंग में भाष्यकार ने प्रमादी अजापालक, वैद्य, योद्धा आदि के दृष्टान्त प्रस्तुत किए हैं, जो प्रमाद के कारण अपने व्यवसाय और कला को भूल गए। उस विस्मृति से उन्होंने अपनी आजीविका को खो दिया।[3]

जो साध्वी ग्लान होने पर, ग्लान की सेवा में नियुक्त रहने के कारण, दुर्भिक्ष होने पर, निरंतर भिक्षा में संलग्न रहने के कारण आचारप्रकल्प की विस्मृति कर देती है तो भी उसे गणभार के योग्य मान लिया जाता था क्योंकि यह दर्प या प्रमाद से होने वाली विस्मृति नहीं है। ऐसी साध्वी को गण का भार दिया जा सकता है।[4]

बृहत्कल्प और व्यवहार में भेद-अभेद

कुछ पाश्चात्य विद्वान् व्यवहार को बृहत्कल्प का पूरक मानते हैं। भाष्यकार ने एक प्रश्न उपस्थित किया है कि बृहत्कल्प एवं व्यवहार दोनों में प्रायश्चित्त का वर्णन है फिर इनमें भिन्नता या विशेषता क्या है? दोनों में अभेद स्थापित करते हुए भाष्यकार कहते हैं--जो अवितथव्यवहारी होता है, वह निश्चित रूप से आचार में स्थित रहता है तथा जो कल्प—आचार में स्थित है, वह नियम से अवितथव्यवहारी होता है अतः दोनों में अविनाभावी संबंध है तथा कल्प और व्यवहार दोनों शब्द एकार्थक हैं।[5]

दोनों में भेद बताते हुए भाष्यकार कहते हैं कि कल्पाध्ययन में मूलगुण एवं उत्तरगुण से सम्बन्धित अतिचारों का वर्णन है तथा व्यवहार में प्रायश्चित्त दान की विधि का वर्णन है। अर्थात् इसमें आभवद् एवं प्रायश्चित्त व्यवहार का वर्णन है।

दूसरा भेद इन दोनों में यह है कि बृहत्कल्प में अविशेष अर्थात्--सामान्य रूप से प्रायश्चित्त का वर्णन है तथा व्यवहार में विशेष रूप से अर्थात्—प्रतिसेवना, संयोजना, आरोपणा एवं प्रतिकुंचना आदि के भेद से विस्तृत रूप से प्रायश्चित्त का वर्णन है।[6]

शब्द भेद होते हुए भी कल्प और व्यवहार अर्थ की दृष्टि से अभिन्न हैं। इन दोनों में अर्थसाम्य को घटित करने के लिए भाष्यकार ने भाषा संबंधी चतुर्भंगी प्रस्तुत की है--

शब्द अभेद	अर्थ अभेद	जैसे—इंद्र इंद्र।
शब्द भेद	अर्थ अभेद	जैसे—इंद्र, शक्र आदि
शब्द अभेद	अर्थ भेद	जैसे--गो।[7]
शब्द भेद	अर्थ भेद	जैसे—घट, पट आदि।

अभिधान का नानात्व होने पर भी अभिधेय एक हो सकता है और अभिधान एक होने पर भी अभिधेय में नानात्व हो सकता है। कल्प और व्यवहार दोनों में व्यञ्जन का नानात्व है पर अर्थ में भेद नहीं है क्योंकि दोनों में प्रायश्चित्त का वर्णन है। प्रायश्चित्त के भेदों तथा प्रायश्चित्तार्ह पुरुषों का जो उल्लेख कल्प में नहीं है, वह व्यवहार में है इसलिए यह विशेष है।[8]

निर्युक्तिकार

जैन आगमों के व्याख्या ग्रन्थों में निर्युक्ति सबसे प्राचीन पद्यबद्ध रचना है। सूत्र के साथ अर्थ का निर्णय जिसके द्वारा होता है, वह निर्युक्ति है।[9] निर्युक्तिकार के रूप में आचार्य भद्रबाहु का नाम प्रसिद्ध है। उन्होंने १० ग्रंथों पर

---

१. व्यभा. २३१४-२२।
२. व्यभा. २३२०-२१।
३. व्यभा. २३२३-२८।
४. व्यभा. २३२७, २३२८।
५. व्यभा. १५२।
६. व्यभा. १५३।
७. 'गो' शब्द भूप, पशु, रश्मि आदि अनेक अर्थों में प्रयुक्त होता है।
८. व्यभा. १५५-५७।
९. आवनि. ८८।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निर्युक्तियां लिखीं।[1] इसके अतिरिक्त गोविंद आचार्यकृत गोविंदनिर्युक्ति का उल्लेख भी मिलता है।[2] निर्युक्तिकार के विषय में विद्वानों में पर्याप्त मतभेद है। विंटरनित्स, हीरालाल कापड़िया आदि विद्वानों ने चतुर्दशपूर्वधर भद्रबाहु को ही निर्युक्तिकार के रूप में स्वीकृत किया है। उनके मत से द्वितीय भद्रबाहु को निर्युक्तिकार मानना असंगत है।[3] मुनि पुण्यविजयजी ने अनेक प्रमाणों के आधार पर द्वितीय भद्रबाहु को निर्युक्तिकार के रूप में सिद्ध किया है।[4] हमने भद्रबाहु प्रथम को ही निर्युक्तिकार के रूप में स्वीकार किया है। किंतु भद्रबाहु द्वितीय ने निर्युक्तियों में परिवर्धन किया, यह भी स्वीकृत किया है क्योंकि दशवैकालिक एवं आवश्यक आदि की निर्युक्तियों में चूर्णि एवं टीका की गाथा संख्या में काफी अंतर है। भद्रबाहु प्रथम निर्युक्तिकार थे इसकी सिद्धि में अनेक हेतु प्रस्तुत किए जा सकते हैं। निर्युक्ति एवं निर्युक्तिकार के बारे में विस्तृत विवेचन हम निर्युक्तियों के प्रकाश्यमान खंड में करेंगे।

निर्युक्ति एवं भाष्य का पृथक्करण

आचार्य भद्रबाहु ने १० निर्युक्तियां लिखने की प्रतिज्ञा की।[5] उनमें ऋषिभाषित एवं सूर्यप्रज्ञप्ति पर लिखी गई निर्युक्ति आज अनुपलब्ध है। बाकी की आठ निर्युक्तियों में आवश्यक, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, सूत्रकृतांग एवं दशाश्रुतस्कंध की निर्युक्तियां तो स्वतंत्र ग्रंथ के रूप में मिलती हैं किन्तु बृहत्कल्प, व्यवहार एवं निशीथ इन तीनों छेदसूत्रों पर लिखी गई निर्युक्तियां वर्तमान में भाष्यों के साथ प्राप्त होती हैं। भाष्यकार ने निर्युक्ति को अपने ग्रंथ का अंग बना लिया है अतः भाष्य और निर्युक्ति को पृथक् करना अत्यन्त कठिन है। चूर्णिकार एवं टीकाकार ने अनेक स्थलों पर निर्युक्ति गाथा का संकेत किया है, इससे यह तो स्पष्ट है कि भाष्य के बाद भी निर्युक्ति का स्वतंत्र अस्तित्त्व था। साथ ही चिन्तन का विषय यह भी है कि सभी स्थानों पर व्याख्याकारों ने निर्युक्ति का संकेत क्यों नहीं किया? एक प्रश्न यह भी उपस्थित होता है कि जब आगम ग्रंथ लिपिबद्ध हुए तब तक इन भाष्यमिश्रित निर्युक्तियों का स्वतंत्र अस्तित्त्व था या नहीं? आवश्यक निर्युक्ति पर भी भाष्य (विशेषावश्यक भाष्य) लिखा गया लेकिन आवश्यक निर्युक्ति का आज स्वतंत्र अस्तित्त्व मिलता है। आगमों पर सर्वप्रथम व्याख्या निर्युक्ति है। अतः यह तो निश्चित है कि किसी समय इन तीनों छेदग्रंथों की निर्युक्तियां अपना स्वतंत्र अस्तित्त्व रखती होंगी। भाष्य के साथ सम्मिश्रण होने के बाद उनके पृथक् अस्तित्त्व को जानना कठिन हो गया क्योंकि दोनों की भाषा एवं प्रतिपादन शैली में बहुत समानता है।

टीकाकार के समय तक इन तीनों ग्रंथों की निर्युक्तियों की स्वतंत्र सत्ता नहीं रही इसका प्रबल साक्ष्य है—बृहत्कल्प की मलयगिरि टीका। बृहत्कल्प की पीठिका में आचार्य मलयगिरि ने स्पष्ट रूप से कहा है कि सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्ति एवं भाष्य दोनों मिलकर एक ग्रंथ हो गए हैं।[6]

चूर्णिकार ने सभी स्थलों पर निर्युक्ति गाथा का संकेत नहीं दिया है अतः उनके समक्ष निर्युक्तियों का स्वतंत्र अस्तित्त्व था या नहीं, यह खोज का विषय है। फिर भी अनेक स्थलों पर निशीथ चूर्णि में **'एत्थ निज्जुत्तीगाहा' 'एसा भद्दबाहुसामिकता गाहा'** आदि का उल्लेख मिलता है। ऐसा अधिक संभव लगता है कि चूर्णिकार के समक्ष कुछ ऐसे कंठस्थपाठी श्रमणों की परम्परा थी, जिनको इन छेदग्रंथों की निर्युक्तियां स्वतंत्र रूप से याद थीं। उसी आधार पर उन्होंने अनेक स्थलों पर निर्युक्तिगाथा का संकेत किया है।

एक ही भाषा और शैली में लिखे हुए सम्मिश्रित दो ग्रंथों को अलग-अलग करना अत्यन्त कठिन एवं श्रमसाध्य कार्य है पर हमने निर्युक्तिगाथाओं को पृथक् करने का प्रारम्भिक प्रयास किया है। यह दावा नहीं किया जा सकता कि सभी निर्युक्ति गाथाओं का पृथक्करण ठीक ही हुआ है। पृथक्करण के इस क्रम में कुछ निर्युक्तिगाथाएं छूट सकती हैं तथा कुछ भाष्य की गाथाएं निर्युक्ति में शामिल भी हो सकती हैं। पृथक्करण का यह प्रयास भविष्य में अनुसंधित्सुओं के लिए मार्गदीप अवश्य बनेगा।

---

१. आवनि-८४-८६।
२. बृभा-५४७३, निभा-५५७३।
३. A History of canonical literature of the Jains. Page. 172
४. मुनि श्री हजारीमल स्मृतिग्रंथ पृ. ७१८-७१९
५. आवनि. ८४-८६।
६. बृभापी. पृ. २ ; सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्तिर्भाष्यं चैको ग्रन्थो जातः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रस्तुत ग्रन्थ में भाष्य और निर्युक्ति गाथाएं साथ-साथ प्रकाशित हैं। निर्युक्ति गाथा की पहचान के लिए हमने उनका क्रमांक भाष्य गाथा के अन्त में (नि.) लिखकर किया है। दोनों को सर्वथा पृथक् करना उचित नहीं लगा क्योंकि भाष्यकार मुख्यतः निर्युक्ति की ही व्याख्या करते हैं तथा उन्होंने निर्युक्ति को अपने ग्रंथ का अंग बना लिया है दोनों को सर्वथा अलग करने से संधित्सु को विषय की असंबद्धता पग-पग पर खलती रहती।

भाष्य से निर्युक्ति गाथाओं के पृथक्करण के लिए हमने कुछ कसौटियां निर्धारित की हैं। वे इस प्रकार हैं—

१. जहां कहीं भी **'एसा भद्दबाहुसामिकता गाहा'** ऐसा उल्लेख है, उसे निर्युक्ति गाथा माना है क्योंकि निर्युक्तिकार भद्रबाहु स्वामी थे।

२. जहां कहीं भी व्याख्याकार ने **'इदाणिं निज्जुत्ती' 'इमा सुत्तफासिया'** अथवा **'अधुना निर्युक्तिविस्तरः'** ऐसा उल्लेख किया है, उनको स्पष्ट रूप से निर्युक्ति के रूप में स्वीकार किया है। इस विषय में बृहत्कल्प की टीका में अनेक स्थलों पर विरोधाभास भी मिलता है। वहां एक ही गाथा किसी प्रति में निर्युक्ति, किसी में द्वारगाथा, किसी में संग्रहगाथा तथा किसी में भाष्यगाथा के रूप में हैं। मुनि पुण्यविजयजी ने छठे भाग में इन विभेदों का एक चार्ट प्रस्तुत किया है। यह खोज का विषय है कि बृहत्कल्प एवं व्यवहार की टीका में ही यह विभेद क्यों मिलता है, निशीथ में क्यों नहीं? इस प्रश्न के समाधान में यह अनुमान किया जा सकता है कि प्राचीनता की दृष्टि से चूर्णि अधिक प्राचीन है अतः संभव है चूर्णि के समय तक इतना भेद न हुआ हो। ऐसी विवादास्पद गाथाओं को भी निर्युक्तिगाथा में सम्मिलित किया गया है।

३. निशीथ चूर्णि एवं बृहत्कल्प भाष्य की टीका में अनेक स्थलों पर **'एसा चिरंतणा' 'एसा पुरातणी गाहा'** का उल्लेख मिलता है। लेकिन इनके बारे में स्पष्ट रूप से नहीं कहा जा सकता कि ये निर्युक्ति गाथाएं ही हैं क्योंकि ये गाथाएं भद्रबाहु से भी प्राचीन हो सकती हैं, जिनका उपयोग स्वयं भद्रबाहु ने अपनी निर्युक्ति में किया हो। अनेक स्थलों पर निशीथ चूर्णिकार ने जिस गाथा को भद्रबाहुस्वामीकृत कहा है उसी गाथा को बृहत्कल्प की टीका में मलयगिरि ने पुरातनगाथा कहा है। जैसे निभा ७६२ की गाथा में निशीथ चूर्णि में **'भद्रबाहुकृत'** का उल्लेख है। उसी गाथा को बृहत्कल्प (३६६४) में टीकाकार ने **'पुरातन गाथा'** के रूप में स्वीकार किया है। ऐसे उद्धरणों से स्पष्ट है कि पुरातनी गाथा भद्रबाहुकृत है अतः हमने इन गाथाओं को निर्युक्ति गाथा के रूप में स्वीकार किया है।

४. चिरंतण गाथा भद्रबाहु द्वितीय से पूर्व की प्रतीत होती है, क्योंकि निशीथ चूर्णिकार ने एक स्थल पर स्पष्ट उल्लेख किया है कि **'एसा चिरंतणा गाहा, एयाए चिरंतणगाहाए इमा भद्दबाहुसामिकता वक्खाणगाहा'** इस उद्धरण से स्पष्ट है कि चिरंतनगाथा भद्रबाहु से प्राचीन है जैसा कि इसके नाम से स्पष्ट है। लेकिन भद्रबाहु ने ऐसी गाथाओं को अपनी निर्युक्ति का अंग बना लिया। इन गाथाओं के निर्युक्तिगत होने का एक प्रमाण यह है निभा ३८२ की गाथा चिरंतन गाथा है। ३८३ की गाथा के प्रारम्भ में चूर्णिकार लिखते हैं कि **'इणमेवार्थ भाष्यकारो व्याख्यानयति'** इस उद्धरण से स्पष्ट है कि यह चिरंतन गाथा निर्युक्ति की होनी चाहिए।

५. आवश्यक, दशवैकालिक आदि निर्युक्तियों की सैकड़ों गाथाएं इन तीनों ग्रंथों के भाष्यों में मिलती हैं। इसमें कहीं-कहीं तो स्वयं निर्युक्तिकार ने प्रसंगवश अन्य निर्युक्तियों की प्रसिद्ध गाथाओं को व्यवहार आदि की निर्युक्तियों में प्रयोग किया है। लेकिन अनेक स्थानों पर निर्युक्ति की गाथाओं का भाष्यकार ने भी अपने भाष्य को समृद्ध बनाने में उपयोग किया है। निशीथ भाष्य में पिण्डनिर्युक्ति और ओघनिर्युक्ति की अनेक गाथाएं अक्षरशः उद्धृत हैं। ये गाथाएं भाष्यकार द्वारा उद्धृत की गयी प्रतीत होती हैं। इसी प्रकार व्यवहार भाष्य में टीकाकार स्पष्ट कहते हैं—**'अथ भाष्यविस्तरः'** लेकिन गाथाएं सारी आवश्यकनिर्युक्ति के अस्वाध्याय प्रकरण की हैं। ये गाथाएं निशीथभाष्य एवं व्यवहारभाष्य दोनों में उद्धृत हैं लेकिन इन गाथाओं में पाठभेद बहुत है।

यह खोज का विषय है कि इतना पाठान्तर लिपिकर्त्ताओं द्वारा हुआ अथवा वाचनाभेद से हुआ? कंठस्थ परम्परा के कारण हुआ या स्वयं निर्युक्तिकार, भाष्यकार द्वारा प्रसंगानुसार किया गया? अनेक स्थलों पर यह स्पष्ट नहीं है कि स्वयं निर्युक्तिकार ने इन निर्युक्तियों का उपयोग किया है अथवा भाष्यकार ने उन्हें उद्धृत किया है। किन्तु जहां भी अन्य निर्युक्तियों की गाथाएं हैं, उनका हमने पादटिप्पण में उल्लेख कर दिया है।

६. द्वारगाथाओं तथा संग्रहगाथाओं के बारे में भी स्पष्ट नहीं कहा जा सकता कि ये निर्युक्ति की गाथाएं हैं। क्योंकि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भाष्यकार भी विषय को स्पष्ट करने के लिए द्वारगाथा लिखकर उसकी व्याख्या करते हैं। लेकिन अधिकांश द्वारगाथाएं एवं संग्रहगाथाएं निर्युक्ति की हैं, ऐसा व्याख्याकारों की व्याख्या से प्रतीत होता है। पं. दलसुखभाई मालवणिया ने द्वारगाथाओं को निर्युक्ति गाथा माना है।[1] इसके अतिरिक्त बृहत्कल्प के छठे भाग में उल्लिखित चार्ट से स्पष्ट है कि निर्युक्ति गाथा के लिए ही किसी प्रति में संग्रहगाथा तथा किसी में द्वारगाथा का संकेत है। द्वारगाथा एवं संग्रहगाथा को निर्युक्ति मानने का एक कारण यह भी है कि बृहत्कल्प की टीका में जिस गाथा के लिए संग्रहगाथा का उल्लेख है वही गाथा व्यवहार की टीका में निर्युक्ति के रूप में संकेतित है। कहीं-कहीं संग्रहगाथा के बारे में भाष्यकार द्वारा व्याख्या का उल्लेख भी मिलता है, जैसे बृभा १६११।

७. निर्युक्तियों की यह विशेषता है कि सभी निर्युक्तियां एक ही शैली में रचित नहीं हैं। किन्तु एक ही ग्रंथ की निर्युक्ति की भाषा, शैली एवं वर्णन पद्धति में बहुत समानता है। जैसे उत्तराध्ययन निर्युक्ति में हर अध्ययन के प्रारम्भ में तीन गाथाएं सभी अध्ययनों में लगभग समान हैं। वैसे ही निशीथ निर्युक्ति में अधिकांशतः हर सूत्र में प्रायश्चित्त स्वरूप **'सो आणाअणवत्थं, मिच्छत्तविराधणं पावे'**, **'सो पावति आणमादीणि'** आदि एक जैसी गाथाएं आई हैं। इन गाथाओं को अनेक स्थलों पर चूर्णिकार ने निर्युक्ति रूप में संकेतित किया है। चूर्णिकार के उल्लेख एवं एक ही रचना शैली के आधार पर ऐसी गाथाओं को निर्युक्ति में सम्मिलित किया गया है। पूर्वापर सम्बन्ध से भी **'आणमादीणि'**, **'आणाअणवत्थं'** उल्लेख वाली गाथाएं निर्युक्ति की प्रतीत होती हैं। बृहत्कल्प एवं व्यवहार की टीका में भी अनेक स्थलों पर ऐसी गाथाएं निर्युक्ति के संकेत पूर्वक मिलती हैं—जैसे व्यभा १०५४ की गाथा में **'निर्युक्तिविस्तरः'** का उल्लेख है। ऐसी गाथाओं को निर्युक्ति गाथा मानने का एक कारण यह भी है कि निर्युक्ति के समय तक केवल आज्ञा का भंग, मिथ्यात्व आदि का भय ही साधक के लिए सबसे बड़ा प्रायश्चित्त था। अन्य प्रायश्चित्तों का बाद में प्रचलन हुआ है, ऐसा संभव लगता है।

८. निर्युक्तिकार की विशेषता है कि वे किसी भी विषय को स्पष्ट करने के लिए संक्षेप में कथा या दृष्टान्त का उल्लेख करते हैं। जहां भी संक्षेप में कथा का संकेत आया है और बाद में उसी गाथा का विस्तार भाष्यकार करते हैं तो उस संक्षिप्त कथा का संकेत देने वाली गाथा को हमने निर्युक्तिगत माना है। ऐसी गाथाओं को निर्युक्तिगत मानने का एक कारण यह है कि अनेक स्थलों पर संक्षिप्त कथा-संकेत वाली गाथा के लिए टीकाकार ने **'अथ एनामेव गाथां भाष्यकारः विवृणोति'** का उल्लेख किया है। इससे स्पष्ट है कि पूर्व की गाथा निर्युक्ति की है। अनेक स्थलों पर टीकाकार ने निर्युक्ति आदि का कुछ संकेत नहीं दिया है तो भी ऐसी गाथाओं को हमने निर्युक्तिगत ही माना है।

९. अनेक स्थलों पर बृहत्कल्प में जिस गाथा को टीकाकार ने निर्युक्तिगत माना है, वही गाथा निशीथ भाष्य में है पर वहां निर्युक्ति का संकेत नहीं है। पर उस गाथा की अगली गाथा के पूर्व चूर्णिकार कहते हैं—**'इमा वक्खाण गाहा'**। इससे स्पष्ट है कि **'वक्खाण गाहा'** से पूर्व वाली गाथा निर्युक्ति की गाथा है। क्योंकि भाष्यकार निर्युक्ति की ही व्याख्या करते हैं। यह चिन्तनीय है कि प्रत्येक व्याख्यान गाथा से पूर्व की गाथा को निर्युक्ति की माना जाए या नहीं? क्योंकि ऐसे प्रसंग अनेक स्थलों पर मिलते हैं। इसी प्रकार **'इमा विभासा'** **'इमा वक्खा'** तथा **'इदानीं एनामेव गाथां व्याख्यानयति'** आदि संकेत से पूर्व वाली गाथाएं निर्युक्ति की होनी चाहिए। निशीथभाष्य में **'इमा भद्दबाहुसामिकता गाहा, एतीए इमा दो वक्खाणगाहातो'** (४४०५) उल्लेख से स्पष्ट है कि निर्युक्ति पर भाष्यकार व्याख्यान गाथा लिखते हैं।

१०. कहीं-कहीं व्याख्याकार ने **'भाष्यविस्तरः'**, **'अथ भाष्यम्'** आदि का उल्लेख किया है। वे गाथाएं यदि स्पष्ट रूप से निर्युक्ति की प्रतीत होती हैं तो पादटिप्पण पूर्वक हमने उन गाथाओं को निर्युक्ति के क्रमांक में जोड़ दिया है। जैसे व्यभा **बहि अंतो** (२५२२) गाथा के प्रारम्भ में टीकाकार ने **'भाष्यविस्तरः'** का उल्लेख किया है पर यह निगा की होनी चाहिए। इसका एक सशक्त प्रमाण यह है कि २५२४वीं गाथा में २५२२वीं गाथा का प्रथम चरण पुनरुक्त हुआ है। कोई भी लेखक स्वयं अपनी रचना में इतनी पुनरुक्ति नहीं करता पर व्याख्याकार अपने से पूर्ववर्ती आचार्य की रचना की व्याख्या करें तो वे पुनरावृत्ति कर सकते हैं।

११. स्वतंत्र रूप से मिलने वाली निर्युक्तियों की भाषा-शैली से स्पष्ट है कि निक्षेपपरक गाथाएं लिखना निर्युक्तिकार का अपना वैशिष्ट्य है। मूल सूत्र में आए शब्द का निर्युक्तिकार निक्षेप के द्वारा अर्थ-निर्धारण करते हैं। यद्यपि भाष्यकार भी निक्षेपपरक

१. निपीभू. पृ. ४१, ४२।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गाथाएं लिखते हैं लेकिन अधिकांश निक्षेपपरक गाथाएं निर्युक्ति की हैं अतः **निर्युक्तिविस्तरः**, **निर्युक्तिकृद्** आदि का उल्लेख न होने पर भी निक्षेपपरक गाथाओं को हमने प्रायः निर्युक्ति की माना है। विशेषावश्यक भाष्य में स्पष्ट लिखा है कि निर्युक्ति का विषय नाम आदि का निक्षेप करना है, शेष अर्थ का विचार करना नहीं।[1]

ग्रंथकर्त्ता द्वारा मूल निक्षेप का उल्लेख करने के बाद द्रव्य, क्षेत्र, काल आदि की व्याख्या निर्युक्तिकार एवं भाष्यकार दोनों की हो सकती है। अनेक स्थलों पर स्वयं निर्युक्तिकार भी द्रव्य, क्षेत्र आदि की व्याख्या करते हैं, जैसे—दशवैकालिक निर्युक्ति में द्रव्यमंगल, भावमंगल आदि।

भाष्य निर्युक्ति की व्याख्या है, अतः संभव है कि कहीं-कहीं द्रव्य, क्षेत्र आदि की विस्तृत व्याख्या भाष्यकार ने भी की हो। जैसे व्यवहारभाष्य में टीकाकार कहते हैं—**'व्यासार्थं तु भाष्यकृद् विवक्षुः इच्छानिक्षेपमाह'**—इस उल्लेख से स्पष्ट है कि यहां भाष्यकार ने निक्षेप योजना की है।

१२. मूल सूत्र में आए शब्द के एकार्थक लिखना निर्युक्तिकार की भाषागत विशेषता है। यदि प्रारम्भिक गाथाओं में सूत्रगत शब्द के एकार्थक हैं तथा विषय की क्रमबद्धता है तो हमने उस गाथा को निगा के क्रम में रखा है, जैसे व्यभा ६ **(नि ३)**।

१३. एक सूत्र की दूसरे सूत्र के साथ तथा एक उद्देशक की दूसरे उद्देशक के साथ सम्बन्ध द्योतित करने वाली गाथाएं निर्युक्तिकार की हैं? भाष्यकार की हैं? व्याख्याकारों की हैं? अथवा अन्य आचार्य की? इसका निर्णय करना अत्यन्त जटिल है क्योंकि इस सम्बन्ध में अनेक विप्रतिपत्तियां हैं—

- व्यभा में प्रथम उद्देशक के सूत्रों में सम्बन्ध गाथाएं नहीं हैं इससे स्पष्ट है कि ये बाद में जोड़ी गयी हैं।
- निभा १८६५वीं गाथा की उत्थानिका में भद्रबाहु सूत्र-सम्बन्ध की गाथा लिखते हैं, ऐसा उल्लेख मिलता है।[2]
- व्यभा १२६८वीं गाथा के पूर्व **'व्यासार्थं तु भाष्यकृद् विवक्षुः प्रथमतः पूर्वसूत्रेण सह सम्बन्धमाह'** का उल्लेख मिलता है। ये

तीनों उल्लेख विमर्शनीय हैं।

अधिकांश स्थलों पर सूत्र-सम्बन्ध की गाथा के बारे में व्याख्याकारों ने कोई जानकारी न देकर तुरंत बाद **'अथ भाष्यम्'** **'अथ निर्युक्तिविस्तरः'** या **'इमा निज्जुत्ती'** का उल्लेख किया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि सूत्र सम्बन्ध की गाथाएं संभवतः व्याख्याकारों ने बनाई हैं। इसका एक सशक्त प्रमाण यह भी है कि निशीथ, बृहत्कल्प एवं व्यवहार की सैकड़ों गाथाएं आपस में संवादी हैं। पर सूत्र-सम्बन्ध की गाथाएं आपस में नहीं मिलतीं। केवल बृहत्कल्प एवं व्यवहार में कुछ गाथाएं समान हैं क्योंकि इन दोनों भाष्यों के कर्त्ता एक ही हैं। ऐसा संभव लगता है कि भाष्यकार अथवा व्याख्याकार ने एक सूत्र से दूसरे सूत्र के साथ सम्बन्ध जोड़ने का प्रयत्न किया है। भाषा-शैली की दृष्टि से भी ये गाथाएं निर्युक्ति की प्रतीत नहीं होतीं क्योंकि निर्युक्ति की शैली अत्यन्त संक्षिप्त है। वे किसी भी विषय का इतना विस्तृत वर्णन नहीं करते। यदि सम्बन्ध-सूत्र की गाथाओं को छेदसूत्रों की निर्युक्तियों के साथ जोड़ दिया जाए तो इनका कलेवर बहुत बड़ा हो जाएगा क्योंकि कहीं-कहीं सम्बन्ध-सूत्र के रूप में दो या तीन गाथाएं भी एक साथ मिलती हैं।

१४. व्यवहार टीका में अनेक स्थलों पर मलयगिरि **'अधुना निर्युक्तिभाष्यविस्तरः'** अथवा **'अधुना भाष्यनिर्युक्तिविस्तरः'** का उल्लेख करते हैं। लेकिन वहां यह निर्णय करना कठिन हो जाता है कि पहले निगा है या भागा है। क्योंकि अनेक स्थलों पर विषमपदों की व्याख्या पहले भाष्यकार भी करते हैं, जैसे—व्यभा (१४७८,१४७९)। जहां **'निर्युक्तिभाष्यविस्तरः'** का उल्लेख है, वहां हमने पहले निर्युक्ति की गाथा का चयन किया है और कहां तक निर्युक्ति गाथाएं हैं इसका निर्णय अनुमान प्रमाण, व्याख्या के पूर्वापरत्व तथा विषय की क्रमबद्धता के आधार पर किया है। जैसे—व्यभा ६१६, १२३६ आदि। जहां **भाष्यनिर्युक्तिविस्तरः** का उल्लेख है वहां हमने पहले भाष्य और फिर निर्युक्ति गाथा को स्वीकार किया है। जैसे व्यभा में २०३२वीं गाथा के प्रारम्भ में **'भाष्यनिर्युक्तिविस्तरः** का उल्लेख है लेकिन निर्युक्ति की गाथा २०३८ से है।

१५. निर्युक्तिगाथाएं प्रायः अध्ययन एवं उद्देशक के तत्काल बाद आती हैं, जैसे—आचारांग, सूत्रकृतांग आदि की निर्युक्तिगाथाएं। पर भाष्यमिश्रित इन निर्युक्तियों में प्रायः ऐसा क्रम नहीं मिलता। इस बारे में ऐसा अधिक संभव लगता है कि विषय की संबद्धता

---

१. विभास्वोटी. ६६१।

२. निभा-१८६५ चू.पृ. ३०८ : इदानीं उद्देसकस्स उद्देसकेन सह संबंधं वक्तुकामो आचार्यः भद्रबाहुस्वामी निर्युक्तिगाथामाह।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की दृष्टि से स्वयं भाष्यकार ने गाथाओं को आगे-पीछे कर दिया है। अनेक स्थलों पर भाष्यकार ने निर्युक्तिगाथा पर अपनी टिप्पणी भी दी है तथा निर्युक्ति से भाष्यगाथा की क्रमबद्धता को जोड़ने का प्रयत्न भी किया है। जैसे—'सुत्ते अत्थे...यह व्यभा की सातवीं गाथा निर्युक्ति की है। इसमें भावव्यवहार के एकार्थक दिए गए हैं। पर इनमें जीत व्यवहार के एकार्थकों की प्रमुखता है। आठवीं गाथा भाष्य की है। इसमें भाष्यकार ने सातवीं गाथा से सम्बन्ध जोड़ने का प्रयत्न किया है। यदि सातवीं गाथा को निर्युक्ति की नहीं मानें तो नौवीं गाथा में पुनः जीत व्यवहार के एकार्थक दिए गए हैं। एक ही ग्रंथकर्त्ता ऐसी पुनरुक्ति नहीं करते।

इसी प्रकार गा. ५२ में भी भाष्यकार ने सम्बन्ध जोड़ने का प्रयत्न किया है। गा. ५२ में **'पच्छित्तं वा इमं दसहा'** का उल्लेख है तथा ५३वीं गाथा निर्युक्ति की है जिसमें १० प्रकार के प्रायश्चित्तों का उल्लेख है। व्यभा २०९६ में भाष्यकार स्पष्ट कहते हैं—**'निज्जुत्ती सुत्तफासेसा।'** इन कथनों से स्पष्ट है कि क्रमबद्धता को जोड़ने का प्रयत्न भी भाष्यकार करते हैं।

१६. भाष्य से निर्युक्ति को पृथक् करने में सबसे बड़े मार्गदर्शक रहे हैं निशीथ चूर्णिकार और टीकाकार मलयगिरि। टीकाकार ने गाथा की व्याख्या के क्रम को जोड़ने का बहुत सुंदर प्रयत्न किया है। इससे यह ज्ञात हो जाता है कि किस गाथा के किस अंश की कितनी गाथाओं में व्याख्या की गयी है। टीकाकार की व्याख्या के बिना निर्युक्ति को भाष्य से पृथक् करना अत्यन्त दुरूह कार्य था। अनेक स्थलों पर सैकड़ों गाथाओं के बाद भी पूर्ववर्ती द्वारगाथा की व्याख्या चल रही है उसका भी टीकाकार ने संकेत कर दिया है। जैसे व्यभा ३५१।

हमने भाष्य और निर्युक्ति का पृथक्करण जिन बिंदुओं के आधार पर किया है उसकी संक्षिप्त रूपरेखा यहां प्रस्तुत की है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि अन्यान्य स्वतंत्र निर्युक्तियों का गहन अध्ययन तथा गाथा के पौर्वापर्य का समीचीन ज्ञान कर हमने निर्युक्ति गाथाओं का पृथक्करण किया है। यह दावा नहीं किया जा सकता कि यह वर्गीकरण बिलकुल सही ही हुआ है। यह प्रथम प्रयास है, अंतिम प्रयत्न नहीं है। इस प्रयास में कुछ भाष्य की गाथाएं निर्युक्ति में संकलित हो सकती हैं तथा कुछ निर्युक्तिगाथाएं छूट भी सकती हैं लेकिन हमने अपनी विधा के अनुसार एक सुप्रयत्न किया है। इस दिशा में अनुसंधित्सु वर्ग विशेष प्रयत्नशील होकर और अधिक प्रकाश डाल सकेगा।

भाष्य

आगमों के व्याख्या ग्रन्थों में 'भाष्य' का दूसरा स्थान है। व्यवहार भाष्य गाथा ४६९३ में भाष्यकार ने अपनी व्याख्या को भाष्य नाम से संबोधित किया है। निर्युक्ति की रचना अत्यन्त संक्षिप्त शैली में है। उसमें केवल पारिभाषिक शब्दों पर ही विवेचन या चर्चा मिलती है। किन्तु भाष्य में मूल आगम तथा निर्युक्ति दोनों की विस्तृत व्याख्या की गयी है।

वैदिक परम्परा में भाष्य लगभग गद्य में लिखा गया लेकिन जैन परम्परा में भाष्य प्रायः पद्यबद्ध मिलते हैं। जिस प्रकार निर्युक्ति के रूप में मुख्यतः १० निर्युक्तियों के नाम मिलते हैं वैसे ही भाष्य भी १० ग्रंथों पर लिखे गए, ऐसा उल्लेख मिलता है। वे ग्रन्थ ये हैं—

१. आवश्यक[1], २. दशवैकालिक, ३. उत्तराध्ययन, ४. बृहत्कल्प[2], ५.पंचकल्प, ६. व्यवहार, ७. निशीथ, ८. जीतकल्प, ९. ओघनिर्युक्ति १०. पिंडनिर्युक्ति।

मुनि पुण्यविजयजी के अनुसार व्यवहार और निशीथ पर भी बृहद्भाष्य लिखा गया पर आज वह अनुपलब्ध है। इनमें बृहत्कल्प, व्यवहार एवं निशीथ—इन तीन ग्रंथों के भाष्य गाथा-परिमाण में बृहद् हैं। जीतकल्प, विशेषावश्यक एवं पंचकल्प परिमाण में मध्यम, पिंडनिर्युक्ति, ओघनिर्युक्ति पर लिखे गए भाष्य ग्रंथाग्र में अल्प तथा दशवैकालिक एवं उत्तराध्ययन इन दो ग्रंथों के भाष्य ग्रंथाग्र में अल्पतम हैं।

यह भी अनुसंधान का विषय है कि तीन छेदसूत्रों पर बृहद्भाष्य लिखे गए फिर दशाश्रुतस्कंध पर क्यों नहीं लिखा गया जबकि निर्युक्ति चारों छेदसूत्रों पर मिलती है? संभव है इस ग्रंथ पर भी भाष्य लिखा गया हो पर वह आज प्राप्त नहीं है।

उपर्युक्त दस भाष्यों में निशीथ, जीतकल्प एवं पंचकल्प को संकलन प्रधान भाष्य कहा जा सकता है। क्योंकि इनमें अन्य

---

१. आवश्यक पर तीन भाष्यों का उल्लेख मिलता है—मूलभाष्य, भाष्य एवं विशेषावश्यक भाष्य।

२. बृहत्कल्प पर भी बृहद् एवं लघु भाष्य लिखा गया। बृहद्भाष्य तीसरे उद्देशक तक मिलता है, वह भी अपूर्ण है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भाष्यों एवं निर्युक्तियों की गाथाएं ही अधिक संक्रान्त हुई हैं। जीतकल्प भाष्य में तो जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण स्पष्ट लिखते हैं—'कल्प, व्यवहार और निशीथ उदधि के समान विशाल हैं अतः उन श्रुतरत्नों के बिंदुरूप या नवनीत रूप सार यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।[1] इस उद्धरण से स्पष्ट है कि जिनभद्रगणि के समक्ष तीनों छेदसूत्रों के भाष्य थे। **'उदधि सदृश'** विशेषण मूल सूत्रों के लिए प्रयुक्त नहीं हो सकता क्योंकि वे आकार में इतने बड़े नहीं हैं।

जिन ग्रंथों पर निर्युक्तियां नहीं हैं वे भाष्य मूल सूत्र की व्याख्या ही करते हैं, जैसे—जीतकल्प भाष्य आदि। कुछ भाष्य निर्युक्ति पर भी लिखे गए हैं जैसे—पिंडनिर्युक्ति एवं ओघनिर्युक्ति आदि।

छेदसूत्रों के भाष्यों में व्यवहारभाष्य का महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रायश्चित्त निर्धारक ग्रंथ होने पर भी इसमें प्रसंगवश समाज, अर्थशास्त्र, राजनीति, मनोविज्ञान आदि अनेक विषयों का विवेचन मिलता है। भाष्यकार ने व्यवहार के प्रत्येक सूत्र की विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत की है। बिना भाष्य के केवल व्यवहार सूत्र को पढ़कर उसके अर्थ को हृदयंगम नहीं किया जा सकता।

भाष्यकार

भाष्यकार के रूप में मुख्यतः दो नाम प्रसिद्ध हैं—१. जिनभद्रगणिक्षमाश्रमण, २. संघदासगणि। मुनिश्री पुण्यविजयजी ने चार भाष्यकारों की कल्पना की है—१. जिनभद्रगणिक्षमाश्रमण, २. संघदासगणि, ३. व्यवहारभाष्य के कर्त्ता तथा ४. कल्पबृहद्भाष्य आदि के कर्त्ता।

विशेषावश्यक भाष्य के कर्त्ता के रूप में जिनभद्रगणि का नाम सर्वसम्मत है लेकिन बृहत्कल्प, व्यवहार आदि भाष्यों के कर्त्ता के बारे में सभी का मतैक्य नहीं है। प्राचीन काल में लेखक बिना नामोल्लेख के कृतियां लिख देते थे। कालान्तर में यह निर्णय करना कठिन हो जाता था कि वास्तव में मूल लेखक कौन थे? कहीं-कहीं नाम साम्य के कारण भी मूल लेखक का निर्णय करना कठिन होता है।

बृहत्कल्प की पीठिका में मलयगिरि ने भाष्यकार का नामोल्लेख न कर केवल **'सुखग्रहणधारणाय भाष्यकारो भाष्यं कृतवान्'** इतना-सा उल्लेख मात्र किया है।[2] निशीथ चूर्णि एवं व्यवहार की टीका में भी भाष्यकार के नाम के बारे में कोई संकेत नहीं मिलता।

पंडित दलसुखभाई मालवणिया ने निशीथ पीठिका की भूमिका में अनेक हेतुओं से यह सिद्ध किया है कि निशीथ भाष्य के कर्त्ता सिद्धसेन होने चाहिए।[3] उन्होंने यह भी संभावना व्यक्त की है कि बृहत्कल्प भाष्य के कर्त्ता भी सिद्धसेन हैं। अपने मत की पुष्टि के लिए वे कहते हैं कि अनेक स्थलों पर निशीथ चूर्णि में जिस गाथा के लिए **'सिद्धसेणायरियो वक्खाणं करेति'** का उल्लेख है वही गाथा बृहत्कल्प भाष्य में **'भाष्यकारो व्याख्यानयति** के संकेतपूर्वक है। अतः निशीथ, बृहत्कल्प एवं व्यवहार तीनों के भाष्यकर्त्ता सिद्धसेन हैं, यह स्पष्ट है। इसके साथ-साथ उन्होंने और भी हेतु प्रस्तुत किए हैं।

मुनि पुण्यविजयजी बृहत्कल्प के भाष्यकार के रूप में संघदासगणि को स्वीकार करते हैं। उनके अभिमत से संघदासगणि नाम के दो आचार्य हुए हैं। प्रथम संघदासगणि जो 'वाचकपद' से विभूषित थे, उन्होंने वसुदेवहिंडी के प्रथम खण्ड की रचना की। द्वितीय संघदासगणि उनके बाद हुए, जिन्होंने बृहत्कल्प-लघुभाष्य की रचना की। वे क्षमाश्रमण पद से अलंकृत थे।[4] आचार्य संघदासगणि भाष्य के कर्त्ता हैं इसकी पुष्टि में सबसे बड़ा प्रमाण आचार्य क्षेमकीर्ति का निम्न उद्धरण है। उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा है—

"कल्पेऽनल्पमनर्घं प्रतिपदमर्पयति योऽर्थनिकुरम्बम्।
श्रीसंघदासगणये, चिन्तामणये नमस्तस्मै॥

---

१. जीभा-२६०५ : कप्पव्ववहाराणं, उदधिसरिच्छाण तह णिसीहस्स।
सुतरयणबिन्दुणवणीतभूतसारेस णातव्वो॥
२. बृपी.टी. पृ. २।
३. निपीभू. पृ. ४०-४६।
४. बृभा-भाग ६, भूमिका पृ. २०।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"अस्य च स्वल्पग्रन्थमहार्थतया दुःखबोधतया च सकल-त्रिलोकीसुभगङ्करणक्षमाश्रमणनामधेयाभिधेयैः श्री संघदासगणिपूज्यैः प्रतिपदप्रकटितसर्वज्ञाज्ञाविराधनासमुद्भूतप्रभूतप्रत्यपायजालं निपुणचरणकरणपरिपालनोपायगोचरविचारवाचालं सर्वथा दूषणकरणेनाप्यदूष्यं भाष्यं विरचयांचक्रे।"

इस उल्लेख के सन्दर्भ में मुनि पुण्यविजयजी का मत संगत लगता है कि बृहत्कल्प के भाष्यकार आचार्य संघदासगणि होने चाहिए। यहां यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि बृहत्कल्प भाष्य एवं व्यवहार भाष्य के कर्त्ता एक ही हैं क्योंकि बृहत्कल्प भाष्य की प्रथम गाथा में स्पष्ट निर्देश है कि **'कप्पव्ववहाराणं वक्खाणविहिं पवक्खामि।'**

टीकाकार ने इस गाथा के लिए **'सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्तिभणितमिदम्'** का उल्लेख किया है। चूर्णिकार ने इस गाथा के लिए **'आयरिओ भासं काउकामो आदावेव गाथासूत्रमाह'** का उल्लेख किया है। यहां प्राचीनता की दृष्टि से चूर्णिकार का मत सम्यक् लगता है। चूर्णिकार के मत की प्रासंगिकता का एक हेतु यह भी है कि व्यवहारभाष्य के अंत में भी **'कप्पव्ववहाराणं भासं...'** का उल्लेख मिलता है। अतः यह गाथा भाष्यकार की होनी चाहिए, जिसमें उन्होंने प्रतिज्ञा की है कि मैं कल्प और व्यवहार की व्याख्यान-विधि प्रस्तुत करूंगा। वक्खाणविधि शब्द भी भाष्य की ओर ही संकेत करता है क्योंकि निर्युक्ति अत्यन्त संक्षिप्त शैली में लिखी गयी रचना है। उसके लिए **'वक्खाणविहि'** शब्द का प्रयोग नहीं होना चाहिए अतः यह निर्युक्ति की गाथा नहीं, भाष्य की गाथा होनी चाहिए। **कप्पव्ववहाराणं,** भाष्यकार के इस उल्लेख से यह स्पष्ट ध्वनित हो रहा है कि उन्होंने केवल बृहत्कल्प एवं व्यवहार पर ही भाष्य लिखा, निशीथ पर नहीं।

पंडित दलसुख भाई मालवणिया निशीथ भाष्य के कर्त्ता सिद्धसेनगणि को स्वीकारते हैं क्योंकि निशीथ चूर्णिकार ने अनेक स्थलों पर **'अस्य सिद्धसेनाचार्यो व्याख्यां करोति'** का उल्लेख किया है। पर इस तर्क के आधार पर सिद्धसेन को भाष्यकर्त्ता मानना संगत नहीं लगता क्योंकि चूर्णिकार ने ग्रंथ के प्रारम्भ और अंतिम प्रशस्ति में कहीं भी सिद्धसेन का उल्लेख नहीं किया है। यदि सिद्धसेन भाष्यकर्त्ता होते तो अवश्य ही चूर्णिकार प्रारम्भ में या ग्रंथ के अंत में उनका नामोल्लेख अवश्य करते। इस संबंध में हमारे विचार से निशीथ संकलित रचना होनी चाहिए, जिसकी संकलना आचार्य सिद्धसेन ने की। अनेक स्थलों पर निशीथ निर्युक्ति की गाथाओं को स्पष्ट करने के लिए उन्होंने व्याख्यान गाथाएं भी लिखीं। अतः निशीथ मौलिक रचना न होकर संकलित रचना ही प्रतीत होती है। यदि इसमें से अन्य ग्रंथों की गाथाओं को निकाल दिया जाए तो मूल गाथाओं की संख्या बहुत कम रहेगी। दस प्रतिशत भाग भी मौलिक ग्रन्थ के रूप में अवशिष्ट नहीं रहेगा। पंडित दलसुखभाई मालवणिया भी इस तथ्य को स्वीकार करते हुए कहते हैं—'निशीथ भाष्य के विषय में कहा जा सकता है कि इन समग्र गाथाओं की रचना किसी एक आचार्य ने नहीं की। परम्परा से प्राप्त गाथाओं का भी यथास्थान भाष्यकार ने उपयोग किया है और अपनी ओर से नवीन गाथाएं बनाकर जोड़ी हैं।' (निपीभू पृ. ३०, ३१)

भाष्यकार ने इस ग्रंथ की रचना कौशल देश में अथवा उसके पास के किसी क्षेत्र में की है, ऐसा अधिक संभव लगता है। भारत के १६ जनपदों में कौशल देश का महत्त्वपूर्ण स्थान था।[1] प्रस्तुत भाष्य में कौशल देश से सम्बन्धित दो-तीन घटनाओं का वर्णन है, इसके अतिरिक्त सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि ग्रंथकार जहां क्षेत्र के आधार पर मनोरचना का वर्णन कर रहे हैं, वहां कहते हैं **'कोसलएसु अपावं सतेसु एक्कं न पेच्छामो'**[2] अर्थात् कौशल देश में सैकड़ों में एक व्यक्ति भी पापरहित नहीं देखते हैं। यहां **'पेच्छामो'** क्रिया ग्रंथकार द्वारा स्वयं देखे जाने की ओर इंगित करती है।

भाष्य का रचनाकाल

भाष्यकार संघदासगणि का समय भी विवादास्पद है। अभी तक इस दिशा में विद्वानों ने विशेष ऊहापोह नहीं किया है। संघदासगणि आचार्य जिनभद्र से पूर्ववर्ती हैं— इस मत की पुष्टि में अनेक हेतु प्रस्तुत किये जा सकते हैं—

जिनभद्रगणि के विशेषणवती ग्रंथ में निम्न गाथा मिलती है—

---

१. अंगुत्तरनिकाय १/२१३।
२. व्यभा. २६५६।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सीहो चेव सुदाढो, जं रायगिहम्मि कविलबडुओ त्ति।
सीसइ ववहारे गोयमोवसमिओ स णिक्खंतो॥[१]

व्यवहार भाष्य में इसकी संवादी गाथा इस प्रकार मिलती है—

सीहो तिविट्ठ निहतो, भमिउं रायगिह कविलबडुग त्ति।
जिणवीरकहणमणुवसम गोतमोवसम दिक्खा य॥[२]

विशेषणवती में प्रयुक्त 'ववहारे' शब्द निश्चित रूप से व्यवहारभाष्य के लिए हुआ है क्योंकि मूलसूत्र में इस कथा का कोई उल्लेख नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि आचार्य जिनभद्रगणि के समक्ष व्यवहारभाष्य था।

विशेषावश्यकभाष्य की रचना व्यवहारभाष्य के पश्चात् हुई इसका एक प्रबल हेतु यह है कि बृहत्कल्प एवं व्यवहारभाष्य कर्त्ता के समक्ष यदि विशेषावश्यकभाष्य होता तो वे अवश्य विशेषावश्यकभाष्य की गाथाओं को अपने ग्रंथ में सम्मिलित करते क्योंकि वह एक आकर ग्रन्थ है, जिसमें अनेक विषयों का सांगोपांग वर्णन प्राप्त है। जबकि व्यभा एवं बृभा में अन्य भाष्य पंचकल्प, निशीथ आदि की सैकड़ों गाथाएं संवादी हैं। व्यवहारभाष्य की **'मणपरमोधिपुलाए'** गाथा विभा में मिलती है। वह व्यवहारभाष्य की गाथा है और विशेषावश्यकभाष्य के कर्त्ता ने उसे उद्धृत की है, ऐसा प्रसंग से स्पष्ट प्रतीत होता है। अतः व्यवहारभाष्य विशेषावश्यकभाष्य से पूर्व की रचना है, ऐसा मानने में कोई आपत्ति नहीं लगती।

व्यवहारभाष्य के कर्त्ता जिनभद्र से पूर्व हुए इसका एक प्रबल हेतु यह है कि जीतकल्प चूर्णि में स्पष्ट उल्लेख है कि कल्प, व्यवहार, निशीथ आदि में प्रायश्चित्त का इतने विस्तार से निरूपण है कि पढ़ने वाले के मति-विपर्यास हो जाता है। शिष्यों की प्रार्थना पर जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण ने संक्षेप में प्रायश्चित्तों का वर्णन करने हेतु जीतकल्प की रचना की।[३] यहां कल्प, व्यवहार शब्द से मूलसूत्र से तात्पर्य न होकर उसके भाष्य की ओर संकेत होना चाहिए क्योंकि मूल ग्रंथ परिमाण में इतने बृहद् नहीं हैं। दूसरी बात व्यवहारभाष्य की प्रायश्चित्त संबंधी अनेक गाथाएं जीतकल्प में अक्षरशः उद्धृत हैं। जैसे—

जीतकल्प	व्यभा	जीतकल्प	व्यभा
१८	११०	२२	११४
१६	१११	३१,३२	तु. १०,११

निशीथभाष्य जिनभद्रगणि से पूर्व संकलित हो चुका था इसका एक प्रमाण यह है कि निभा में प्रमाद-प्रतिसेवना के संदर्भ में निद्रा का विस्तृत वर्णन मिलता है। स्त्यानर्द्धि निद्रा के उदाहरण के रूप में निभा (१३५) में **'पोग्गल मोयग दंते'** गाथा मिलती है। यह गाथा विशेषावश्यकभाष्य (२३५) में भी है। लेकिन वहां स्पष्ट प्रतीत हो रहा है कि व्यञ्जनावग्रह के प्रसंग में विशेषावश्यक भाष्यकार ने यह गाथा निभा से उद्धृत की है। विभा में यह गाथा प्रक्षिप्त-सी लगती है। कुछ अंतर के साथ यह गाथा बृभा (५०१७) में भी मिलती है।

पंडित दलसुख भाई मालवणिया ने जिनभद्र का समय छठीं-सातवीं शताब्दी सिद्ध किया है अतः भाष्यकार संघदासगणि का समय पांचवीं, छठी शताब्दी होना चाहिए।[४]

भाष्य ग्रंथों का रचनाकाल चौथी से छठी शताब्दी तक ही होना चाहिए। यदि भाष्य का रचनाकाल सातवीं शताब्दी माना जाए तो आगे के व्याख्या ग्रंथों के काल-निर्धारण में अनेक विसंगतियां उत्पन्न होती हैं। प्राचीन काल में आज की भांति मुद्रण की व्यवस्था नहीं थी अतः हस्तलिखित किसी भी ग्रंथ को प्रसिद्ध होने में कम से कम एक शताब्दी का समय तो लग ही जाता था। सातवीं शताब्दी में भाष्य लिखे गए और आठवीं में हरिभद्र ने टीकाएं लिखीं फिर चूर्णि के समय में अन्तराल बहुत कम रहता है।

---

१. विशेषणवती गा. ३३।
२. व्यभा. २६३८।
३. जीचू.पृ. १,२।
४. गणधरवाद पृ.३२-३५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निर्युक्तिकार के रूप में हमने चतुर्दशपूर्वी प्रथम भद्रबाहु को स्वीकार किया है, जिनका समय वीर-निर्वाण की दूसरी शताब्दी है।[1] भाष्य का समय विक्रम की चौथीं-पांचवी, चूर्णि का सातवीं तथा टीका का आठवीं से तेरहवीं शताब्दी का समय तर्क-सम्मत एवं संगत लगता है।

निशीथ, बृहत्कल्प एवं व्यवहार—इन तीन छेदसूत्रों के भाष्य के रचनाक्रम के बारे में पंडित दलसुख भाई मालवणिया का अभिमत है कि सबसे पहले बृहत्कल्प भाष्य रचा गया, उसके बाद निशीथ भाष्य तथा अंत में व्यवहार भाष्य की रचना हुई। लेकिन हमारे अभिमत से निशीथ भाष्य की रचना या संकलना सबसे बाद में हुई है। उसके कारणों की चर्चा हम पहले कर चुके हैं। भाष्यकार ने व्यवहार से पूर्व बृहत्कल्प की रचना की, यह बात उनकी प्रतिज्ञा से स्पष्ट है—**कप्पव्ववहाराणं वक्खाणविहिं पवक्खामि**। इसके अतिरिक्त व्यवहार भाष्य में अनेक स्थलों पर **'पुव्वुत्तो'**, **'वुत्तो' 'जह कप्पे'**, **'वण्णिया कप्पे'** आदि का उल्लेख मिलता है। व्यवहार भाष्य की निम्न गाथाओं में बृहत्कल्प की ओर संकेत है। इनमें कुछ उद्धरण बृहत्कल्प एवं कुछ उद्धरण बृहत्कल्प भाष्य की ओर संकेत करते हैं—

११७२, १२२६, १३३६, १७३७, १७४८, १८३३, १६३३, २१७१, २१७३, २२७६, २२६६, २५०६, २५२३, २६६२, २८०५, २८०६, २८१७, २६२७, २६८३, ३०६२, ३२४७, ३३१३, ३३५०, ३८६६, ४२३१, ४३१४ आदि।

यह निश्चित है कि आगमों पर लिखे गए व्याख्या ग्रंथों का क्रम इस प्रकार रहा है—निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि एवं टीका। लेकिन अलग-अलग ग्रंथों के व्याख्या ग्रंथों को लिखने में इस क्रम में व्यत्यय भी हुआ है। उदाहरण के लिए पंचकल्प भाष्य की निम्न गाथा को प्रस्तुत किया जा सकता है—

परिजुण्णेसा भणिता, सुविणा देवीए पुप्फचूलाए।
नरगाण दंसणेणं, पव्वज्जाऽऽवस्सए वुत्ता॥[2]

पुष्पचूला की कथा विशेषावश्यक भाष्य में नहीं है किन्तु आवश्यक चूर्णि में है। इससे सिद्ध होता है कि पंचकल्प के भाष्यकार के समक्ष आवश्यक चूर्णि थी।

इसी प्रकार जीतकल्प की चूर्णि के बाद उसका भाष्य रचा गया क्योंकि चूर्णि केवल जीतकल्प की गाथाओं की ही व्याख्या करती है। उसमें भाष्य का उल्लेख नहीं है। यदि चूर्णिकार के समक्ष भाष्यगाथाएं होतीं तो वे अवश्य उनकी व्याख्या करते। चूर्णिकार ने व्यवहार भाष्य की अनेक गाथाओं को उद्धृत किया है।

प्रसंगवश में निभा ५४५ की उत्थानिका का उल्लेख भी विद्वानों को इस दिशा में सोचने के लिए प्रेरित करता है। वहां स्पष्ट उल्लेख है कि **"सिद्धसेणायरिएण जा जयणा भणिया तं चेव संखेवओ भद्दबाहू भण्णति"** इस उद्धरण से स्पष्ट है कि यहां द्वितीय भद्रबाहु की ओर संकेत है। प्रथम भद्रबाहु तो सिद्धसेन की रचना की व्याख्या नहीं कर सकते क्योंकि वे उनसे बहुत प्राचीन हैं। बृहत्कल्प भाष्य (२६११) में भी इस गाथा के पूर्व टीकाकार उल्लेख करते हैं कि **"या भाष्यकृता सविस्तरं यतना प्रोक्ता तामेव निर्युक्तिकृदेकगाथया संगृह्णाह।"** यह उद्धरण विद्वानों के चिन्तन या ऊहापोह के लिए है। इसके आधार पर यह संभावना की जा सकती है कि सिद्धसेन द्वितीय भद्रबाहु से पूर्व पांचवीं शती के उत्तरार्ध में हो गए थे। द्वितीय भद्रबाहु के समक्ष निर्युक्तियां तथा उन पर लिखे गए कुछ भाष्य भी थे।

मुनि पुण्यविजयजी ने दशवैकालिक की अगस्त्यसिंह चूर्णि को दशवैकालिक भाष्य से पूर्व की रचना माना है तथा उसके कुछ हेतु भी प्रस्तुत किये हैं।[3]

भाषा की दृष्टि से भी भाष्य रचना की प्राचीनता सिद्ध होती है। अपभ्रंश की प्रवृत्ति लगभग छठी शताब्दी से प्रारम्भ होती है लेकिन भाष्य में अपभ्रंश के प्रयोग ढूंढने पर भी नहीं मिलते। इसके अतिरिक्त महाराष्ट्री का प्रभाव भी कम परिलक्षित होता है।

---

१. द्वितीय भद्रबाहु ने निर्युक्तियों में परिवर्तन एवं परिवर्धन भी किया है, जिनका समय विक्रम की पांचवीं-छठी शताब्दी है।
२. पंकभा ६०६।
३. दशअचू भूमिका पृ. १५-१७।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भाष्य में वर्णित विषयवस्तु, मुद्राएं, घटना प्रसंग एवं सांस्कृतिक तथ्य भी इसके रचनाकाल को चौथी-पांचवीं शताब्दी से पूर्व या आगे का सिद्ध नहीं करते। अतः भाष्यकार का समय विक्रम की चौथी-पांचवीं शताब्दी होना चाहिए।

अन्य ग्रंथों पर प्रभाव

व्यवहार एवं उसके भाष्य में वर्णित विषय अन्य ग्रन्थों में भी संक्रान्त हुए हैं। व्यवहार के भेद, पुरुषों के प्रकार एवं आलोचना से सम्बन्धित अनेक प्रकरण ठाणं एवं भगवती में प्राप्त होते हैं। ये सभी प्रकरण आगम-संकलन काल में व्यवहार से संगृहीत किए गए हैं, ऐसा प्रतीत होता है।

व्यवहारभाष्य की अनेक गाथाएं दिगम्बर ग्रंथों में भी संक्रान्त हुई हैं। भगवती आराधना एवं मूलाचार में व्यवहार भाष्य की अनेक गाथाएं शब्दशः मिलती हैं। विद्वानों ने भगवती आराधना एवं मूलाचार को संकलित रचना के रूप में स्वीकार किया है। इसमें निर्युक्तिसाहित्य एवं भाष्यसाहित्य की अनेक गाथाएं संक्रान्त हैं। आलोचना एवं प्रायश्चित्त की अनेक गाथाएं स्पष्टतः व्यवहारभाष्य से इन ग्रंथों में संकलित की गई हैं। मात्र उन गाथाओं में भाषा की दृष्टि से शौरसेनी का प्रभाव दृष्टिगत होता है। ठाणं, भगवती एवं भगवती आराधना के कुछ तुलनात्मक उद्धरण प्रस्तुत किए जा सकते हैं—

व्यभा	ठाणं	भग०	भआ
१६८	५/२११, २१२		
२२६			४७१
३०८			५५७
५२०	८/१८	२५/५५४	४१६
५२१, ५२२	८/१८, १०/७१	२५/५५३	
५२३	१०/७०	२५/५५२	५६४
५६६			४८३
५६६	५/१४६		
१७२४, ४२५२			४३१
४०६५			६१६, ६२०
४१८०-८३	१०/७३, ८/२०		
४१८४	५/१८४	२५/२७८	
४२६६			५३०
४२६८			५२७
४२६६			५४६
४३०१			४११
४३१२			६३२
४३१३			६३३
४५६८-७०	४/४१४		
४५७१, ४५७२	४/४१५,४१६		
४५७३, ४५७४	४/४१७		
४५७५	४/४१८		

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्यभा	ठाणं	भग.	भआ
४५७८	४/४१६		
४५८१-८५	४/४२०		
४५६०	४/४२२		
४५६३-६५	४/४२४, ४२५		
४५६४	४/४२३		
४५६७	३/१८७		
४६०४	३/१८६		

टीकाकार मलयगिरि

व्यवहार भाष्य के टीकाकार आचार्य मलयगिरि हैं। उनके जीवनवृत्त के बारे में इतिहास में विशेष सामग्री नहीं मिलती। न ही उनकी गुरु-परम्परा का कोई उल्लेख मिलता है। ये हेमचन्द्र के समवर्ती थे। उनके साथ उन्होंने विशिष्ट साधना से विद्यादेवी की आराधना की थी। देवी से उन्होंने जैन आगमों की टीका करने का वरदान मांगा था। इनका समय विद्वानों ने बारहवीं शताब्दी के आसपास माना है।

आचार्य मलयगिरि की प्रसिद्धि टीकाकार के रूप में अधिक हुई है। लेकिन उन्होंने एक शब्दानुशासन भी लिखा है। शब्दानुशासन के प्रारम्भ में वे **'आचार्यो मलयगिरिः शब्दानुशासनमारभते'** का उल्लेख करते हैं।

आगम-ग्रंथों पर लिखी सहस्रों पद्य परिमाण टीकाएं ही उनकी सूक्ष्ममेधा का निदर्शन है। मलयगिरि की टीकाएं मूलस्पर्शी अधिक हैं। अपनी टीका में उन्होंने लगभग सभी शब्दों की सटीक एवं संक्षिप्त व्याख्या प्रस्तुत की है। टीका के बिना मूल ग्रंथों के हार्द को समझना अत्यन्त कठिन है।

व्यवहार पर लिखी गयी उनकी टीका व्यवहार सूत्र एवं भाष्य के अनेक रहस्यों को प्रकट करनेवाली है।

व्याख्या के प्रसंग में अनेक पारिभाषिक शब्दों की परिभाषाएं उनकी टीका में मिलती हैं, जैसे—

- अत्र गुरुशब्देनोपाध्याय उच्यते (१६७ टी. प. ५५)।
- चारित्रस्य प्रवर्त्तकः प्रज्ञापक उच्यते (४१७४ टी. प. ४७)।
- धर्मे विषीदतां प्रोत्साहकः स्थविरः (२१७ टी. प. १३)।

कहीं-कहीं दो समान शब्दों का अर्थभेद भी उन्होंने बहुत निपुणता से प्रस्तुत किया है। इसी प्रकार कहीं-कहीं कोई अव्यय या धातु यदि नए अर्थ में प्रयुक्त हुई है तो उसका अर्थ-संकेत भी मलयगिरि ने अपनी टीका में किया है। जैसे—

- पकुव्वी त्ति कुर्व इत्यागमप्रसिद्धो धातुरस्ति यस्य विकुर्वणेति प्रयोगः। (५२० टी. प. १८)।
- नापि पश्चाच्छब्दः पश्चादानुपूर्वीवाचकः किन्तु प्रसिद्धार्थप्रतिपादको ज्ञेयः (५७८ टी. प. ३८)।

व्याख्या के प्रसंग में कुछ विशिष्ट न्यायों एवं लोकोक्तियों का उल्लेख भी वृत्तिकार ने किया है—

- कोऽयमर्धजरतीयो न्यायः (५०२ टी. प. ११)।
- यत् पूर्वोक्तं तद्यथोक्तं न्यायम् (१५२४ टी. प. ३६)।
- काक्यपि हि किलैकवारं प्रसूते इति प्रसिद्धिः (१४५८ टी. प. २३)।

पाठ-संपादन में टीका का अविरल योग रहा है। प्राकृत में णं अव्यय वाक्यालंकार के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है। प्राचीन लिपि में कहीं भी शब्दों या अक्षरों का अलग-अलग सिरा नहीं होता था इसलिए णं अव्यय वाक्यालंकार में प्रयुक्त हुआ है या षष्ठी विभक्ति के अर्थ में यह भेद स्पष्ट रूप से टीका के आधार पर ही ज्ञात होता है।

व्याख्या के साथ-साथ उन्होंने उस समय की परम्पराएं एवं सांस्कृतिक तत्त्वों का समावेश भी अपनी टीका में किया है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भाष्यकार ने संक्षिप्त में कथा का संकेत किया है किन्तु उन्होंने पूरी कथा का विस्तार दिया है। बिना टीका के उन कथाओं को समझना आज अत्यन्त कठिन होता। टीका में उन्होंने किसी विषय की पुष्टि में अन्य ग्रंथों के उद्धरण भी दिए हैं, जो उनकी बहुश्रुतता के द्योतक हैं।

आचार्य मलयगिरि द्वारा विरचित नंदी, राजप्रश्नीय आदि २५ टीका ग्रंथों का उल्लेख मिलता है।[1] कर्म प्रकृति, सूर्यप्रज्ञप्ति, ज्योतिष्करण्डक आदि की टीका के अध्ययन से ज्ञात होता है कि वे केवल आगमों के ही नहीं वरन् गणितशास्त्र, दर्शनशास्त्र एवं कर्मसिद्धान्त के भी गहरे विद्वान् थे। कहा जा सकता है कि टीकाकारों में इनका स्थान प्रथम है।

व्यवहार

व्यवहार शब्द अनेक अर्थों में प्रचलित है।[2] संस्कृत कोशों में व्यवहार शब्द विवाद अर्थ में प्रयुक्त है।[3] लौकिक दृष्टि से व्यवहार शब्द आचरण के अर्थ में अधिक प्रयुक्त होता है। व्यवहार शब्द व्यापार के लिए भी प्रयुक्त होता है।[4] मनुस्मृति में व्यवहार शब्द मुकदमे के अर्थ में प्रयुक्त है।[5] विशेषावश्यक भाष्य में नय के प्रसंग में व्यवहार शब्द के निम्न अर्थों का उल्लेख है—१. प्रवृत्ति २. प्रवृत्तिकर्ता ३. जिससे सामान्य का निराकरण किया जाए ४. सामान्य लोगों द्वारा आचरित ५. सब द्रव्यों के अर्थ का विनिश्चय।[6] आचार्य मलयगिरि ने व्यवहार के तीन एकार्थकों का उल्लेख किया है, जिससे व्यवहार शब्द का अर्थ आचार फलित होता है।[7]

व्यवहार शब्द भिन्न-भिन्न प्रसंगों में भिन्न-भिन्न अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। दशवैकालिक निर्युक्ति[8] में आक्षेपणी कथा के चार भेदों में दूसरी कथा का नाम व्यवहार आक्षेपणी है।[9] सत्य के दस भेदों में एक नाम व्यवहार सत्य है।[10] राशि के दो प्रकारों में एक नाम व्यवहार राशि है। गणित के दस भेदों में एक भेद व्यवहार है, जिसे पाटी गणित भी कहते हैं।[11] समयसार में नय की प्ररूपणा में व्यवहार शब्द का अर्थ अभूतार्थ—अयथार्थ किया है।[12]

कात्यायन ने व्यवहार शब्द के तीन घटकों का अर्थ इस प्रकार किया है—वि+ अव + हार अर्थात् जो नाना प्रकार से संदेहों का हरण करता है, वह व्यवहार है।[13] प्राकृत में वव+ हार इन दो शब्दों से व्यवहार की निष्पत्ति मानी गयी है। ग्रंथकार ने अनेक रूपों में व्यवहार शब्द को व्याख्यायित किया है—

• दो व्यक्तियों में विवाद होने पर जो वस्तु जिसकी नहीं है, उससे वह वस्तु लेकर जिसकी वह वस्तु है, उसे देना व्यवहार है।[14] मनुस्मृति की मिताक्षरा टीका में भी व्यवहार शब्द इसी अर्थ में प्रयुक्त है।[15]

• **'विविहं वा विहिणा वा, ववणं हरणं च ववहारो'** अर्थात् विविध प्रकार से विधिपूर्वक अतिचारहरण हेतु तप, अनुष्ठान आदि का वपन/दान करना व्यवहार है।[16]

---

१. जैन साहित्य का बृहद् इतिहास भा. ३ पृ. ३८७।
२. बृहद् हिंदी कोश पृ. १०६८, शब्दकल्पद्रुम भाग ४ पृ. ५३४-४३।
३. अमरकोश·१/६, अभिधान·२/१७६।
४. सूत्रकृतांग १/३/२५ : हिरण्णं ववहाराइ, तं पि दाहामु ते वयं। मनुस्मृति ७/१३७।
५. मनुस्मृति ८/१।
६. विभा·२२१२ महेटी·पृ. ४५३।
७. व्यभा·१५२ टी. प. ५१ : कल्पो व्यवहार आचार इत्यनर्थान्तरम्।
८. दशनि. १६७।
९. अभयदेवसूरि के अनुसार जिसमें व्यवहार प्रायश्चित्त का निरूपण हो, वह व्यवहार आक्षेपणी है। (देखें ठाणं ४/२४७ स्याटी प. २००), कुछ आचार्यों ने व्यवहार शब्द को ग्रंथ विशेष का द्योतक भी माना है (स्याटी·प. २००)।
१०. ठाणं १०/८९।
११. ठाणं १०/१००।
१२. समयसार गा. १३।
१३. कात्यायन; वि नानार्थेऽव संदेहे, हरणं हार उच्यते।
नानासंदेहहरणाद्, व्यवहार इति स्थितिः॥
१४. व्यभा·५, बृभापी. पृ. ४; यस्य नाभवति तस्य हापयति, यस्याभवति तस्मै ददाति इति व्यवहारः।
१५. मनुस्मृति मिताक्षरा। परस्परं मनुष्याणां, स्वार्थविप्रतिपत्तिषु। वाक्यान्न्यायाद्यवस्थानं, व्यवहार उदाहृतः।।
१६. व्यभा ३, उशांटी प ६४: व्यवहारः प्रमादात् स्खलितादौ प्रायश्चित्तदानरूपआचरणम्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

● **'जेण य ववहरइ मुणी जं पि य ववहरइ सो वि ववहारो।'**[1] अर्थात् जिसके द्वारा मुनि आगम आदि व्यवहार का प्रयोग करता है, वह व्यवहार है अथवा जिस व्यवहर्त्तव्य का मुनि प्रयोग करता है, वह भी व्यवहार है।

● **'विविधो वा अवहारः व्यवहारः'** अर्थात् विविध प्रकार से निश्चय करना व्यवहार है।[2]

भाष्य में व्यवहार के चार एकार्थक प्राप्त हैं—१. व्यवहार २. आलोचना ३. प्रायश्चित्त ४. शोधि।[3] यद्यपि इनको एकार्थक नहीं माना जा सकता किन्तु व्यवहार विशोधि का कारण है और ये चारों शब्द विशोधि की क्रमिक अवस्थाओं के द्योतक हैं। प्रस्तुत ग्रंथ में व्यवहार शब्द आलोचना, शोधि एवं प्रायश्चित्त—इन तीनों अर्थों में प्रयुक्त है।

ग्रंथकार ने भाव व्यवहार के ९ एकार्थकों का उल्लेख किया है—१. सूत्र २. अर्थ ३. जीत ४. कल्प ५. मार्ग ६. न्याय ७. ईप्सितव्य ८. आचरित ९. व्यवहार।

भाष्यकार ने स्वयं यहां एक प्रश्न उपस्थित किया है कि ये एकार्थक जीतव्यवहार के सूचक हैं फिर इसके लिए भाव व्यवहार के एकार्थकों का उल्लेख क्यों किया? प्रश्न का समाधान करते हुए भाष्यकार कहते हैं कि सूत्र शब्द से आगम और श्रुत व्यवहार गृहीत हैं। अर्थ शब्द से आज्ञा और धारणा व्यवहार का ग्रहण है।[4] तथा शेष शब्द जीतव्यवहार के द्योतक हैं।

भाष्यकार ने संक्षेप में निक्षेप पद्धति द्वारा व्यवहार की व्याख्या की है किंतु टीकाकार ने आगमतः-नोआगमतः द्रव्य एवं भाव व्यवहार की विस्तृत चर्चा की है।

द्रव्य लौकिक व्यवहार में टीकाकार ने आनंदपुर का उदाहरण दिया है। आनंदपुर में खड्ग के द्वारा व्यक्ति को उदीर्ण करने पर अस्सी हजार रूप्यक का तथा मारने पर भी इतने ही रूप्यकों का दंड होता था। प्रहार करने पर यदि व्यक्ति नहीं मरता तो केवल पांच रूपये का दंड तथा उत्कृष्ट रूप से कलह में प्रवृत्त होने पर अर्धत्रयोदश रुपयों का दंड दिया जाता था।[5]

लोकोत्तर द्रव्य व्यवहार में पीत वस्त्रधारी पार्श्वस्थ साधुओं का उल्लेख है जो जिनेश्वर की आज्ञा का पालन न करके स्वच्छंद विहार करते थे तथा परस्पर अशन-पान आदि के आदान-प्रदान रूप व्यवहार भी करते थे।[6] भाव व्यवहार में आगम, श्रुत आदि पांच व्यवहारों का समावेश है।

व्यवहार दो प्रकार का होता है—१. विधि व्यवहार २. अविधि व्यवहार। व्यवहार सूत्र आध्यात्मिक ग्रंथ होने से यहां विधि व्यवहार का प्रकरण है। अविधि व्यवहार मोक्षमार्ग का विरोधी है।[7]

निर्ग्रन्थों एवं संयतों के लिए दो प्रकार के व्यवहारों का उल्लेख है—आभवद् व्यवहार एवं प्रायश्चित्त व्यवहार। सचित्तादि वस्तु को लेकर जो व्यवहार होता है, वह आभवद् व्यवहार है तथा प्रतिसेवना का आचरण करने पर अपराधी के प्रति जो व्यवहार होता है, वह प्रायश्चित्त व्यवहार है।

आभवद् व्यवहार

आभवद् व्यवहार के पांच प्रकार हैं—१. क्षेत्र २. श्रुत ३. सुख-दुःख ४. मार्ग ५. विनय। पंचकल्पभाष्य में आभवद् व्यवहार के भेद इस प्रकार मिलते हैं—१. सचित्त २. अचित्त ३. मिश्र ४. क्षेत्र-निष्पन्न ५. काल-निष्पन्न।[8]

प्रायश्चित्त व्यवहार के भी पांच प्रकार हैं—सचित्त, अचित्त, क्षेत्र, काल और भाव।

क्षेत्र आभवद् व्यवहार

आठ ऋतुमास तथा चार वर्षावास के लिए क्षेत्र की मार्गणा करना क्षेत्र आभवद् व्यवहार है। क्षेत्र की मार्गणा करने के लिए

---

१. व्यभा. ३८८८।
२. बृचू. अप्रकाशित।
३. व्यभा. १०६४।
४. व्यभापी. टी. प ७ द्वावप्यर्थात्मकत्वादर्थग्रहणेन सूचितौ।
५. व्यभा. ६ टी. प ६, तुलना बृभा. ५१०४, जीभा. २३७३।
६. व्यभा. ६ टी. प ६।
७. व्यभा. ५।
८. पंकभा. २३६३।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गए हुए मुनि क्षेत्र की प्रत्युप्रेक्षणा कर आचार्य के पास आकर क्षेत्र के गुण-दोष बताते हैं। उस गच्छ में अन्य गच्छ से आये हुए मुनि क्षेत्र की प्रत्युप्रेक्षणा सुनकर अपने आचार्य के पास जाकर क्षेत्र विषयक सारी बात बताते हैं तथा आचार्य को उस क्षेत्र में ले जाते हैं तो वे प्रायश्चित्तभाक् होते हैं। उनको स्वयं क्षेत्र की प्रत्युप्रेक्षणा करके आना चाहिए।[1]

क्षेत्र-प्रत्युप्रेक्षक क्षेत्र की जानकारी विधिपूर्वक करते हैं। क्षेत्र के तीन प्रकार हैं—

जघन्य क्षेत्र— (१) भिक्षा-परिभ्रमण भूमि विशाल हो।
(२) उत्सर्ग की सुविधा हो।
(३) भिक्षा सुलभ हो।
(४) वसति सुलभ हो।

उत्कृष्ट क्षेत्र—तेरह गुणों से अन्वित क्षेत्र उत्कृष्ट क्षेत्र कहलाता है—
(१) पंक-बहुल न हो।
(२) सम्मूर्च्छिम जीवों का उपद्रव न हो।
(३) स्थंडिल भूमि एकान्त में हो।
(४) चारों दिशाओं में महास्थंडिल भूमि हो।
(५) गोरस की प्रचुरता हो।
(६) जहां की जनता प्रायः भद्रक हो।
(७) औषध सुलभ हो।
(८) अन्नभण्डार प्रचुर हों।
(९) जहां का राजा भद्र पुरुष हो।
(१०) जहां वैद्य भद्रक हों।
(११) जहां अन्यतीर्थिक अकलहकारी हों।
(१२) भिक्षा सुलभ हो। तीसरे प्रहर में पर्याप्त भिक्षा मिलती हो। अन्य पौरुषियों में भी वह प्राप्त हो।
(१३) वसति में या अन्यत्र भी स्वाध्याय की सुलभता हो।

मध्यम क्षेत्र—जघन्य और उत्कृष्ट क्षेत्र से मध्यम गुणों वाला क्षेत्र मध्यम क्षेत्र कहलाता है।[2]

क्षेत्र प्रत्युप्रेक्षणा के लिए अनेक गच्छों से अनेक मुनि गए हों और सभी एक ही स्थान की अभिलाषा रखते हों ऐसी स्थिति में अनेक विधियों का विवरण भाष्य तथा वृत्ति में प्राप्त है। वहां कौन रहे, कौन न रहे, कैसे रहे आदि की विधियां सुनिश्चित हैं। उदाहरण स्वरूप दो वर्ग हैं—एक वृषभ का और एक आचार्य का। यदि वह क्षेत्र दोनों वर्गों के लिए पर्याप्त है तो दोनों वर्ग वहां रहें। यदि ऐसा न हो तो वृषभ का वर्ग वहां से विहार कर दे, आचार्य का वर्ग रहे। यदि दोनों वर्ग तुल्य हों—दोनों गणी हों या दोनों आचार्य हों तो यह पद्धति विहित है—एक का शिष्य परिवार निष्पन्न है और एक का निष्पन्न नहीं है तो निष्पन्न शिष्य परिवार वाला वहां से विहार कर दे और अनिष्पन्न वाला वहां रहे। यदि दोनों का निष्पन्न परिवार हो तो तरुण शिष्य परिवार वाला चला जाए, वृद्ध वाला वहां रहे। दोनों तरुण या वृद्ध परिवार वाले हों तो शैक्ष परिवार वाला रहे, चिरप्रव्रजित परिवार वाला चला जाए। यदि दोनों समान हों तो जुंगित परिवार वाला रहे, अजुंगित परिवार वाला चला जाए। दोनों जुंगित परिवार वाले हों तो जो पादजुंगित हैं वे ठहरें, दूसरे चले जाएं।[3]

इसी प्रकार साध्वी वर्ग की भी मार्गणा होती है। भाष्यकार ने क्षेत्र विषयक और भी अनेक बातों का वर्णन किया है।[4]

---

१. व्यभा. ३८९१-९४।
२. वही ३८९७-९९।
३. वही ३९१६-१८।
४. व्यभा. ३९१९-५७।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रुत आभवद् व्यवहार

श्रुतसंपद् के दो प्रकार हैं —अभिधारण और पठन। इन दोनों के दो-दो प्रकार हैं— अनंतर और परंपर। दो के मध्य जो श्रुतोपसंपद् होती है, वह अनंतर है और तीन आदि के मध्य होने वाली श्रुतोपसंपद् परंपर कहलाती है। इसी संदर्भ में भाष्यकार ने सान्तरा और अनन्तरा वल्ली के विषय में जानकारी दी है। उनके अनुसार अनन्तरा वल्ली में ये छह व्यक्ति उल्लिखित हैं—माता, पिता, भ्राता, भगिनी, पुत्री और दुहिता। सान्तरा वल्ली—नानी, नाना, मातुल, मौसी, दादा, दादी, चाचा, बुआ तथा भाई की सन्तान—भतीजा, भतीजी, बहिन की सन्तान—भानजी, भानजा, पुत्र की सन्तान—पौत्र, पौत्री आदि।

इस विषय में भाष्यकार ने विस्तृत चर्चा प्रस्तुत की है।[१]

सुख-दुःख आभवद् व्यवहार

इसके दो प्रकार हैं—अभिधार और उपसम्पन्न।[२]

मार्गोपसंपद् आभवद् व्यवहार

कोई मार्गज्ञ मुनि अन्य देश के लिए प्रस्थित है। दूसरा मुनि भी उसी देश में जाने का इच्छुक है। वह मार्गज्ञ साधु के पास उपसंपदा ग्रहण करता है। यह मार्गोपसंपद् है। इसमें मुख्यता मार्गज्ञ मुनि की होती है।[३]

विनयोपसंपद् आभवद् व्यवहार

वास्तव्य तथा आगंतुक मुनियों के विनय व्यवहार का निर्देशक तत्त्व है—विनयोपसम्पद्। आगंतुक मुनियों द्वारा वर्षा-प्रायोग्य क्षेत्र पूछे जाने पर यदि वास्तव्य मुनि मौन रहते हैं तो प्रायश्चित्त के भागी होते हैं तथा आगन्तुक व्यक्ति यदि इस विषय की पृच्छा नहीं करते तो वे स्वयं प्रायश्चित्त के भागी होते हैं। इसी प्रकार भाष्यकार ने रात्निक तथा अवमरात्निक के पारस्परिक वंदना, आलोचना आदि के विषय में भी पर्याप्त विमर्श किया है।[४]

प्रायश्चित्त व्यवहार

प्रायश्चित्त व्यवहार के चार प्रकार हैं—द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव। द्रव्य के दो भेद हैं—सचित्त एवं अचित्त।

सचित्त-प्रायश्चित्त

सचित्त-प्रायश्चित्त दो प्रकार का है। प्रथम तो जीवों की विराधना होने पर तथा दूसरा सूत्र में निषिद्ध व्यक्तियों को दीक्षा देने पर। सजीव की विराधना होने पर मिलने वाले प्रायश्चित्त के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

एकेन्द्रिय जीवों का अपद्रावण होने पर उपवास।

द्वीन्द्रिय जीवों का अपद्रावण होने पर बेला।

त्रीन्द्रिय जीवों के अपद्रावण होने पर तेला।

चतुरिन्द्रिय जीवों के अपद्रावण होने पर चोला।

पंचेन्द्रिय जीवों के अपद्रावण होने पर पंचोला।

अथवा जिसके जितनी इंद्रियां हैं उतनी विराधना होने पर उतने ही कल्याणक का प्रायश्चित्त आता है।

एकेन्द्रिय की परितापना होने पर एक कल्याणक।

---

१. व्यभा. २१५७-६१, ३६५९-८०।
२. व्यभा. ३६८१-९२।
३. व्यभा. ३६९३-९६।
४. व्यभा. ४०००-४००८।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

द्वीन्द्रिय की परितापना होने पर दो कल्याणक अर्थात् पुरिमार्ध (दो प्रहर)।

त्रीन्द्रिय की परितापना होने पर तीन कल्याणक अर्थात् एकाशन।

चतुरिन्द्रिय की परितापना होने पर चार कल्याणक अर्थात् आचाम्ल।

पंचेन्द्रिय की परितापना होने पर पांच कल्याणक अर्थात् उपवास।[1]

पुरुषों में अठारह, स्त्रियों में बीस तथा नपुंसक में दस प्रकार के व्यक्ति दीक्षा के अयोग्य माने गए हैं। इनको प्रव्रजित करने वाला सचित्त विषयक प्रायश्चित्त का भागी होता है।[2] इसका विस्तृत वर्णन बृहत्कल्पभाष्य एवं पंचकल्पभाष्य में मिलता है।

अचित्त प्रायश्चित्त

पिंड एवं उपधि ग्रहण करते समय होने वाली स्खलना से प्राप्त प्रायश्चित्त। एषणा एवं उत्पादन के दोषों से युक्त भोजन ग्रहण करने पर तथा अविधि से उपधि आदि ग्रहण करने पर प्राप्त प्रायश्चित्त।[3]

क्षेत्र एवं काल विषयक प्रायश्चित्त

जनपद, मार्ग, सेना का अवरोध, मार्गातीत (क्षेत्रातिक्रान्त आहार करना)—इनमें अविधि से होने वाले दोष का प्रायश्चित्त क्षेत्रविषयक प्रायश्चित्त है । दुर्भिक्ष, सुभिक्ष, दिन में या रात में होने वाली अविधि के कारण प्राप्त प्रायश्चित्त काल विषयक प्रायश्चित्त है।

भाव विषयक प्रायश्चित्त

इसका अर्थ है—योगत्रिक एवं करणत्रिक की अशुभ प्रवृत्ति, निष्कारण दर्प की प्रतिसेवना, पांच प्रकार के प्रमाद से सम्बन्धित प्रायश्चित्त। भाव विषयक प्रायश्चित्त में पुरुषों के आधार पर भी प्रायश्चित्त दिया जाता है।

पुरुषों के तीन प्रकार हैं—परिणामक, अतिपरिणामक, अपरिणामक। इन तीनों के तुल्य अपराध में भी प्रायश्चित्त में नानात्व रहता है। इसके अतिरिक्त ऋद्धिमन्निष्क्रान्त, अऋद्धिमन्निष्क्रान्त, असह, ससह, पुरुष, स्त्री, नपुंसक, बाल, तरुण, स्थिर, अस्थिर, कृतयोगी, अकृतयोगी, सप्रतिपक्ष, अप्रतिपक्ष—इन सबके तुल्य अपराध होने पर भी पुरुष भेद से प्रायश्चित्त में भिन्नता रहती है। इसी प्रकार स्वभाव की दृष्टि से दारुण एवं भद्रक इन दोनों के समान अपराध में भी प्रायश्चित्तदान में भेद रहता है।[4]

व्यवहार का एक अर्थ है—प्रायश्चित्त। प्रायश्चित्त के आधार पर व्यवहार के मुख्यतः तीन भेद किए गए हैं—गुरुक, लघुक और लघुस्वक। इन तीनों के तीन-तीन प्रकार हैं—

गुरुक, गुरुतरक, यथागुरुस्वक।

लघु, लघुतरक, यथालघुस्वक।

लघुस्व, लघुस्वतरक, यथालघुस्वक।

गुरुक व्यवहार अर्थात् एक मास का प्रायश्चित्त। यह तेले की तपस्या से पूरा हो जाता है।

गुरुतरक व्यवहार अर्थात् चार मास का प्रायश्चित्त। यह चोले की तपस्या से पूरा हो जाता है।

यथागुरुस्वक व्यवहार अर्थात् छह मास का प्रायश्चित्त। यह पंचोले की तपस्या से पूरा हो जाता है।

लघुक व्यवहार अर्थात् तीस दिन का प्रायश्चित्त। यह बेले की तपस्या से पूरा हो जाता है।

लघुतरक व्यवहार अर्थात् पच्चीस दिन का प्रायश्चित्त। यह उपवास की तपस्या से पूरा हो जाता है।

यथालघुस्वक व्यवहार अर्थात् बीस दिन का प्रायश्चित्त। यह आचाम्ल की तपस्या से पूरा हो जाता है।

लघुस्वक व्यवहार अर्थात् पन्द्रह दिन का प्रायश्चित्त। यह एकलठाणा की तपस्या से पूरा हो जाता है।

---

१. व्यभा. ४०११, ४०१२।

२. व्यभा. ४०१३।

३. व्यभा. ४०१०।

४. व्यभा. ४०१७-२६।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लघुतरस्वक व्यवहार अर्थात् दस दिन का प्रायश्चित्त। यह पूर्वार्द्ध की तपस्या से पूरा हो जाता है।

यथालघुस्वक व्यवहार अर्थात् पांच दिन का प्रायश्चित्त। यह विगयवर्जन (निर्विकृतिक) की तपस्या से पूरा हो जाता है।[१]

गुरुक, लघुक तथा लघुस्वक आदि प्रायश्चित्तों के विधान का प्रयोजन बताते हुए भाष्यकार कहते हैं कि अतिपरिणामक में जागरूकता पैदा करने तथा अपरिणामक में यह विश्वास पैदा करने के लिए कि प्रायश्चित्त के द्वारा यहां विशुद्धि कराई जाती है तथा शेष मुनियों में प्रतिसेवना के प्रति भय पैदा करने के लिए गुरु, गुरुतर आदि प्रायश्चित्तों का विधान किया गया है।[२]

भाष्यकार ने इस बात का निर्देश किया है कि व्यवहार शब्द में व्यवहारी एवं व्यहर्त्तव्य भी अन्तर्गर्भित हैं।[३] इसे उदाहरणों द्वारा स्पष्ट करते हुए वे कहते हैं--जैसे कुंभ नाम का उच्चारण करने से कुंभकार (कर्त्ता) एवं मिट्टी, चक्र (करण) आदि का स्वतः ग्रहण हो जाता है, जैसे ज्ञान शब्द के उच्चारण से ज्ञानी और ज्ञान क्रिया (ज्ञेय) दोनों का अधिग्रहण हो जाता है वैसे ही व्यवहार शब्द में व्यवहारी एवं व्यवहर्त्तव्य—दोनों का समावेश हो जाता है।[४] यहां पहले पांच व्यवहारों का वर्णन किया जा रहा है। उसके बाद व्यवहारी एवं व्यवहर्त्तव्य का वर्णन किया जाएगा।

पांच व्यवहार

ग्रंथकार ने आगम आदि पांचों व्यवहारों को द्वादशांग का नवनीत कहा है, जिसका निर्यूहण चतुर्दशपूर्वधर भद्रबाहु ने द्वादशांगी से किया।[५] भाष्यकार ने व्यवहार का महत्त्व यहां तक बता दिया कि जिसके मुख में एक लाख जिह्वा हो वह भी व्यवहार के बारे में सम्पूर्ण जानकारी प्रस्तुत नहीं कर सकता।[६] किन्तु चतुर्दशपूर्वी भद्रबाहु ने द्वादशांगी के नवनीत रूप में इसका सुंदर उपदेश हमारे सामने प्रस्तुत कर दिया है।[७]

व्यवहार का मूल अर्थ है—करण।[८] करण अर्थात् न्याय के साधन। वे पांच हैं—आगम, श्रुत, आज्ञा, धारणा और जीत।[९] कौटिल्य के अर्थशास्त्र में व्यवहार शब्द न्याय अर्थ में प्रयुक्त है। पांच व्यवहारों का उल्लेख ठाणं एवं भगवती में भी मिलता है।[१०] पर व्यवहार सूत्र से ही यह पाठ ठाणं एवं भगवती में संक्रान्त हुआ है, ऐसा अधिक संभव लगता है।

आगम व्यवहार

जिसके द्वारा अतीन्द्रिय पदार्थ जाने जाते हैं, वह आगम है।[११] ज्ञान पर आधारित होने के कारण प्रथम व्यवहार का नाम आगम व्यवहार है। ज्ञान और आगम दोनों एकार्थक हैं।[१२] कारण में कार्य का उपचार करने से जिन ग्रंथों में ज्ञान निबद्ध है अथवा जो ज्ञान के साधन हैं, वे भी आगम कहलाते हैं। आगम व्यवहार के भेद-प्रभेदों को निम्न चार्ट से दर्शाया जा सकता है—

---

१. व्यभा. १०६४-७० टी. प. २४, २५, बृभा. ६०३६-४४।

२. बृभा. ६०३८ : तेसिं पच्चयहेउं जे पेसविया सुयं व तं जेहिं।
भयहेउसेसगाणं इमा उ आरोवणारयणा॥

३. व्यभा. २ टी प ४।

४. व्यभा. २, ३।

५. व्यभा. ४४३१, जीभा. ५६०।

६. यहां यह उल्लेख कर देना आवश्यक है कि भाष्यगत 'व्यवहार' शब्द का अर्थ टीकाकार ने व्यवहारसूत्र किया है। यहां व्यवहार शब्द पांच व्यवहार का वाचक होना चाहिए।

७. व्यभा. ४५५१, ४५५२।

८. व्यभा. २ : ववहारो होति करणभूतो उ।

९. व्यसू १०/६।

१०. भ. ८/३०१, ठाणं ५/१२४।

११. भटी. प. ३८४ : आगम्यन्ते परिच्छिद्यन्ते अतीन्द्रिया अर्था अनेनेत्यागम उच्यते।

१२. व्यभा. ४०३६; णातं आगमियं ति य एगट्ठं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आगम व्यवहार[1]

प्रत्यक्ष — परोक्ष

प्रत्यक्ष: इन्द्रिय — नोइन्द्रिय

इन्द्रिय: पांच इन्द्रियों से होनेवाला रूपादि का ज्ञान

नोइन्द्रिय: अवधि, मनःपर्यव, केवल

जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण ने अक्ष का अर्थ आत्मा किया है। अर्थात् जो ज्ञान सीधा आत्मा से होता है, वह प्रत्यक्ष है। अक्ष का अर्थ इन्द्रिय भी है। जो ज्ञान आत्मा के अतिरिक्त इन्द्रिय आदि से होता है, वह परोक्ष है।[2]

प्रश्न उपस्थित होता है कि आगम व्यवहार में इन्द्रिय प्रत्यक्ष का ग्रहण क्यों किया गया? इसका समाधान जीतकल्पभाष्य में प्राप्त होता है। भाष्यकार जिनभद्रगणि लिखते हैं कि प्रत्यक्ष आगम व्यवहारी भी श्रोत्रेन्द्रिय से दूसरे की प्रतिसेवना सुनकर, चक्षु से दूसरे को अनाचार का सेवन करते देखकर, घ्राण द्वारा धूप आदि की गन्ध से चींटी आदि की विराधना जानकर, कंदादि को खाते देखकर, अंधकार में स्पर्श से अभ्यंग आदि को जानकर इन्द्रिय प्रत्यक्ष से आगम व्यवहारी (चतुर्दशपूर्वी आदि) व्यवहार का प्रयोग करते हैं।[3]

नोइन्द्रिय प्रत्यक्ष का विस्तृत वर्णन जीतकल्पभाष्य में मिलता है।[4]

श्रुत व्यवहार

जो आचार्य या मुनि कल्प और व्यवहार के सूत्रों को बहुत पढ़ चुका है और उसके अर्थ को सूक्ष्मता से जानता है तथा दोनों ग्रंथों की निर्युक्ति को अर्थतः जानता है, वह श्रुतव्यवहारी है।[5]

टीकाकार के अनुसार कुल, गण आदि में करणीय-अकरणीय का प्रसंग उपस्थित होने पर पूर्वों से कल्प और व्यवहार का निर्यूहण किया गया। इन दोनों सूत्रों का निमज्जन कर, व्यवहार विधि के सूत्र का स्पष्ट उच्चारण कर, उसके अर्थ का अवगाहन कर जो प्रायश्चित्त का विधान किया जाता है, वह श्रुतव्यवहार है।[6]

जीतकल्प चूर्णि के अनुसार पूर्वधर[7] (९ से ८ पूर्व), ११ अंग के धारक, कल्प, व्यवहार तथा अवशिष्ट श्रुत के अर्थ के धारक मुनि श्रुतव्यवहार का प्रयोग करते हैं।[8]

आज्ञा व्यवहार

भक्त-प्रत्याख्यान में संलग्न, विशोधि एवं शल्योद्धरण का इच्छुक आचार्य या मुनि दूरस्थित छत्तीस गुण सम्पन्न आचार्य से आलोचना करना चाहता है। ऐसी अवस्था में आज्ञा व्यवहार की प्रयोजनीयता होती है। आज्ञा व्यवहार भी श्रुत व्यवहार के समान ही होता है।[9]

आज्ञा व्यवहार को व्याख्यायित करते हुए भाष्यकार कहते हैं कि विशोधि का इच्छुक आचार्य या मुनि जब शोधिकारक

---

१. व्यभा. ४०२६, ४०३०।
२. जीभा. ११ जीवो अक्खो तं पति, जं वट्टइ तं तु होइ पच्चक्खं।
परओ पुण अक्खस्सा, वट्टंतं होइ पारोक्खं॥
३. जीभा. २०-२२।
४. जीभा. २३-१०७।
५. व्यभा. ४४३२-३५।
६. व्यभा. ४४३६ टी. प. ८१।
७. नवपूर्वी तक आगमव्यवहारी होते हैं।
८. जीचू.पृ. २ सुयव्ववहारो पुण अवसेसपुव्वी एक्कारसंगिणो आकप्पववहारा अवसेससुए य अहिगय-सुत्तत्था सुयववहारिणो त्ति।
९. जीचू.पृ. ४ : आणाववहारो वि सुयववहाराणुसरिसो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आचार्य के समीप जाने में असमर्थ हो तथा शोधिकारक आचार्य भी जब शोधिकर्त्ता के पास जाने में असमर्थ हो उस स्थिति में शोधि का इच्छुक आचार्य अपने शिष्य को दूरस्थित शोधिकारक आचार्य के पास भेजकर शोधि की प्रार्थना करता है। तब आचार्य अपने आज्ञापरिणामक तथा धारणाकुशल शिष्य को उनके पास भेजते हैं। आज्ञापरिणामक शिष्य भगवद् आज्ञा के प्रति वितर्कणा नहीं करता किंतु गुरु-आज्ञा के अनुरूप अपना कर्त्तव्य निभाता है।[1] गुरु-आज्ञा की रहस्यमयता का अवबोध कराने के लिए भाष्यकार ने अपरिणामक[2], परिणामक एवं अतिपरिणामक[3] को दो उदाहरणों द्वारा समझाया है—

गुरु ने शिष्य से कहा—जाओ, उस ताड़वृक्ष पर चढ़कर नीचे कूद पड़ो। शिष्य अपरिणामक था। वह गुरु से अनेक तर्क-वितर्क करते हुए क्रोधित होकर बोला—क्या साधु को सचित्त वृक्ष पर चढ़ना कल्पता है? क्या आप मुझे मारना चाहते हैं? अतिपरिणामक शिष्य बोला—मेरी भी यही इच्छा थी। मैं अभी वृक्ष से गिरता हूं। गुरु उन दोनों को समझाते हैं कि मेरे कथन का तात्पर्य यह था कि तप, नियम, ज्ञानमय वृक्ष पर आरोहण कर भवसागर से पार हो जाओ। परिणामक शिष्य सोचता है कि मेरे गुरु स्थावरजीवों की हिंसा की भी इच्छा नहीं करते फिर पंचेन्द्रिय की हिंसा का तो प्रश्न ही नहीं उठता। जरूर इस आदेश में कोई रहस्य होगा—ऐसा सोचकर वह वृक्षारोहण के लिए तत्पर हुआ उस समय गुरु ने उसका हाथ पकड़कर रोक लिया।

दूसरा बीज का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए भाष्यकार कहते हैं—गुरु के द्वारा बीज लाने का आदेश देने पर अपरिणामक शिष्य तत्काल उत्तर देता है—साधु के लिए बीज लाना कल्पनीय नहीं है। अतिपरिणामक यह आदेश सुनते ही पोटली में बीज बांधकर ले आता है। आदेश प्राप्त कर परिणामक शिष्य गुरु से पूछता है—कैसे बीज लाऊं? उगने योग्य लाऊं या उगने में असमर्थ बीजों को लाऊं? गुरु उसके विवेक को जान लेते हैं। इस प्रकार परीक्षा करके गुरु आज्ञा परिणामक एवं धारणाकुशल शिष्य को शुद्धिकर्त्ता आचार्य के पास भेजते हैं। वह शिष्य ज्ञान, दर्शन एवं चारित्र संबंधी अतिचारों को सम्यक्तया सुनता है। दर्पविषयक[4] एवं कल्पविषयक[5] प्रतिसेवना को अच्छी तरह से धारण करता है।

आचार्य द्वारा प्रेषित वह धारणा कुशल शिष्य आलोचक की प्रतिसेवना को क्रमशः सुनता है, उसकी अवधारणा करता है तथा आलोचक की अर्हता, संयम एवं गृहस्थ पर्याय का कालमान, शारीरिक एवं मानसिक बल तथा क्षेत्र विषयक बातें आलोचक आचार्य से ज्ञात कर स्वयं उसका परीक्षण कर वह अपने देश में लौट आता है। वह अपने गुरु के पास जाकर उसी क्रम से सब बातें गुरु को निवेदन करता है, जिस क्रम से उसने तथ्यों का अवधारण किया था। तब व्यवहार-विधिज्ञ आलोचनाचार्य कल्प और व्यवहार दोनों छेदसूत्रों के आलोक में पौर्वापर्य का आलोचन कर सूत्रगत नियमों के तात्पर्य की सही अवगति करते हैं। पुनः उसी शिष्य को आदेश देते हैं—'तुम जाओ और उस विशोधिकर्त्ता मुनि या आचार्य को यह प्रायश्चित्त निवेदित कर आ जाओ।' इस प्रकार आचार्य के वचनानुसार प्रायश्चित्त देना आज्ञा व्यवहार है।[6]

आज्ञा व्यवहार की एक दूसरी व्याख्या भी मिलती है—दो गीतार्थ आचार्य गमन करने में असमर्थ हैं। दोनों दूर प्रदेशों में स्थित हैं। कारणवश वे एक दूसरे के पास जाने में असमर्थ हैं, ऐसी स्थिति में यदि उन्हें प्रायश्चित्त विषयक परामर्श लेना हो तो गीतार्थ शिष्य न होने पर अगीतार्थ शिष्य को जो धारणा में कुशल हैं, उसे गूढ़ पदों में अपने अतिचारों को निगूहित कर दूरदेशस्थित आचार्य के पास भेजते हैं। वे गीतार्थ आचार्य भी शिष्य के साथ गूढ़ पदों में उत्तर भेजते हैं, यह आज्ञा व्यवहार है।[7] गूढ़ पदों में निहित प्रश्न एवं उत्तर को भाष्यकार ने विस्तार से प्रस्तुत किया है। उदाहरण स्वरूप यहां एक-दो गाथाएं प्रस्तुत की जा रही हैं—

---

१. जीचू पृ. २३ : जहाभणिया सद्दहंता आयरंता य परिणामगा भन्नति।
२. जो उत्सर्ग में ही श्रद्धा करता है और उसका ही आचरण करता है, वह अपरिणामक है। (अपरिणामगा पुण जे उस्सग्गमेव सद्दहंति आयरंति य, जीचू. पृ. २३)
३. जो अपवाद का ही आचरण करता है और उसी में आसक्त होता है, वह अतिपरिणामक है। (अइपरिणामगा जो अववायमेवायरंति तम्मि चेव सज्जंति न उस्सग्गे, जीचू. पृ. २३।)
४. जो अकारण प्रतिसेवना की जाती है, वह दर्प प्रतिसेवना है। उसके दस प्रकार हैं। देखें व्यभा. ४४६१-६२।
५. कारण उपस्थित होने पर जो प्रतिसेवना की जाती है, वह कल्प प्रतिसेवना है। उसके २४ प्रकार हैं। देखें, व्यभा. ४४६३-६६।
६. व्यभा. ४४३८-४५०२।
७. व्यभा. ६ टी. प. ६, जीचू. पृ. २, स्थाटी. प. ३०२।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पढमस्स य कज्जस्सा, पढमेण पदेण सेवितं होज्जा।
पढमे छक्के अब्भिंतरं तु, पढमं भवे ठाणं॥[1]

बितियस्स य कज्जस्सा, पढमेण पदेण सेवियं होज्जा।
पढमे छक्के अब्भिंतरं तु पढमं भवे ठाणं॥[2]

यहां प्रथमपद से प्राणातिपात तथा षट्क से पृथ्वीकाय आदि का ग्रहण है।

धारणा व्यवहार

व्यवहार का चौथा प्रकार है—धारणा। मतिज्ञान का चौथा भेद भी धारणा है। संभवतः उसी आधार पर व्यवहार का एक भेद धारणा रखा गया है। धारणा व्यवहार भी श्रुत व्यवहार के सदृश है। चूर्णिकार के अनुसार श्रुत व्यवहार और धारणा व्यवहार में इतना ही अंतर है कि श्रुत व्यवहार के एक अंश का प्रयोग करना धारणा व्यवहार है।[3] भाष्यकार ने धारणा के चार एकार्थकों का उल्लेख किया है। ये सभी धारणा की क्रमिक अवस्थाओं के द्योतक हैं—

१. **उद्धारणा**—छेदसूत्रों में उद्धृत अर्थपदों को धारण करना।

२. **विधारणा**—छेदसूत्रों में उद्धृत विशिष्ट अर्थपदों को विविध रूप से स्मृति में धारण करना।

३. **संधारणा**—धारण किए हुए अर्थपदों को आत्मसात् करना।

४. **संप्रधारणा**—सम्यक् रूप से अर्थपदों को धारण कर प्रायश्चित्त का विधान करना।[4]

ग्रंथकार ने धारणा व्यवहार को विविध रूपों में परिभाषित किया है। ये परिभाषाएं धारणा व्यवहार के बारे में प्रचलित उस समय की विविध अवधारणाओं एवं अवस्थाओं को प्रकट करने वाली हैं—

• किसी गीतार्थ संविग्न आचार्य ने द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, पुरुष और प्रतिसेवना के आधार पर दिये जाने वाले प्रायश्चित्त को देखा अथवा किसी को आलोचना-शुद्धि करते देखा उसको उसी प्रकार धारण कर वैसी परिस्थिति में वैसा ही प्रायश्चित्त देना धारणा व्यवहार है।[5]

वैयावृत्त्यकर, गच्छोपग्राही, स्पर्धकस्वामी, देशदर्शन में सहयोगी तथा संविग्न द्वारा दिए गए उचित प्रायश्चित्त की अवधारणा धारणा व्यवहार है।[6]

जो शिष्य सेवा आदि कार्यों में संलग्न रहने के कारण छेदसूत्रों के परिपूर्ण अर्थ को धारण करने में असमर्थ है उस पर आचार्य अनुग्रह करके छेदसूत्रों के कुछ अर्थपद उसे सिखाते हैं। छेदसूत्रों का वह अंशतः धारक मुनि जो प्रायश्चित्त देता है, वह धारणा व्यवहार है।[7]

धारणा व्यवहार का प्रयोग कैसे मुनि पर किया जाता है, इसकी निम्न कसौटियां बताई गयी हैं[8]—

प्रवचनयशस्वी—जो प्रवचन एवं श्रमण संघ का यश चाहता है।

अनुग्रहविशारद—जो दीयमान प्रायश्चित्त या व्यवहार को अनुग्रह मानता है।

तपस्वी—जो विविध तप में संलग्न है।

श्रुतबहुश्रुत—जिसको आचारांग श्रुत विस्मृत नहीं होता अथवा जो बहुश्रुत होने पर भी श्रुत के उपदेश के अनुसार चलता है।

विशिष्टवाक्सिद्धियुक्त—विनय एवं औचित्य से युक्त वाक्शुद्धि वाला।

---

१. व्यभा. ४४६८।
२. व्यभा. ४४७५।
३. जीचू. पृ. ४ धारणाववहारो वि सुयववहाराणुसरिसो। सुयववहारेगदेसो धारणाववहारो।
४. व्यभा. ४५०३।
५. व्यभा. ४५१५-१७, जीचू. पृ. ४।
६. व्यभा. ६ टी प. ७।
७. व्यभा. ४५१८, ४५१९।
८. व्यभा. ४५०८, ४५०९।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपर्युक्त गुणों से युक्त व्यक्ति की प्रमादवश मूलगुण अथवा उत्तरगुण विषयक स्खलना होने पर प्रथम तीन व्यवहारों के अभाव में कल्प, निशीथ तथा व्यवहार—तीनों के कुछ अर्थपदों की अवधारणा कर यथायोग्य प्रायश्चित्त देना धारणा व्यवहार है।

धारणा व्यवहार का प्रयोक्ता मुनि भी द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से छेदसूत्रों के अर्थ का सम्यग् पर्यालोचन करने वाला, धीर, दान्त एवं क्रोधादि से रहित होता है। ऐसी विशेषताओं से युक्त मुनि द्वारा कथित तथ्यों के आधार पर जो प्रायश्चित्त दिया जाता है, वह धारणा व्यवहार है।[1]

जीतव्यवहार

यह पाचवां व्यवहार है। इसका महत्त्व सार्वकालिक है।[2] द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के अनुसार जीतव्यवहार में प्रायश्चित्त दान में भी भिन्नता आती रहती है। व्यवहार भाष्यकार ने इसके तीन एकार्थकों का उल्लेख किया है।—१. बहुजनआचीर्ण, २. जीत, ३. उचित।[3] चूर्णिकार सिद्धसेनगणि के अनुसार भी इसके तीन एकार्थक हैं—जीत, करणीय एवं आचरणीय तथा नंदी टीका में इसके पांच एकार्थक प्राप्त हैं—जीत, मर्यादा, व्यवस्था, स्थिति एवं कल्प।[4]

चूर्णिकार के अनुसार ब्राह्मण परम्परा में भी जीवघात होने पर प्रायश्चित्त का विधान है किंतु उनकी परंपरा में एकेन्द्रिय प्राणी से त्रस प्राणी आदि के संघट्टन, परितापन या अपद्रवण आदि होने पर प्रायश्चित्त का विधान नहीं है। किंतु निर्ग्रन्थ शासन में जीतव्यवहार विशोधि में विशेष रूप से निमित्त भूत बनता है। जिस प्रकार पलाश, क्षार एवं पानी आदि के द्वारा वस्त्र के मल को दूर किया जाता है वैसे ही कर्ममल से मलिन जीव की अतिचार विशुद्धि में जीतव्यवहार द्वारा निर्दिष्ट प्रायश्चित्त का विशेष महत्त्व है। प्रायश्चित्त दान का यह भेद अन्यत्र कहीं भी उल्लिखित नहीं है।[5]

जीत व्यवहार की अनेक परिभाषाएं मिलती हैं। यहां कुछ परिभाषाओं को प्रस्तुत किया जा रहा है—

• जो व्यवहार एक बार, दो बार या अनेक बार किसी आचार्य द्वारा प्रवर्त्तित होता है तथा महान् आचार्य जिसका अनुवर्तन करते हैं, वह जीतव्यवहार है।[6]

• जो प्रायश्चित्त जिस आचार्य के गण की परम्परा से अविरुद्ध है, जो पूर्व आचार्य की मर्यादा का अतिक्रमण नहीं करता, वह जीतव्यवहार है।[7]

• अमुक आचार्य ने, अमुक कारण उत्पन्न होने पर, अमुक पुरुष को अमुक प्रकार से प्रायश्चित्त दिया, उसका वैसी ही स्थिति में वैसा ही प्रयोग करना जीतव्यवहार है।[8] इसी बात को जीतकल्प चूर्णि में इस भाषा में कहा है कि गच्छ में किसी कारण से जो सूत्रातिरिक्त प्रायश्चित्त का प्रवर्त्तन हुआ, बहुतों के द्वारा अनेक बार उसका अनुवर्तन हुआ, वह जीतव्यवहार है।[9]

• जो व्यवहार बहुश्रुत के द्वारा अनेक बार प्रवर्तित होता है तथा किसी श्रुतधारक के द्वारा उसका प्रतिषेध नहीं किया जाता, वह वृत्तानुवृत्त व्यवहार जीतव्यवहार है।[10]

• पूर्वाचार्यों ने जिन अपराधों की शोधि अत्यधिक तपस्या के आधार पर की, उन्हीं अपराधों की विशोधि द्रव्य, क्षेत्र, काल

---

१. व्यभा. ४५११-१४।
२. उशांटी. प. ६३ : त्रिकालविषयत्वात् जीतव्यवहारस्य।
३. व्यभा. ९ : बहुजणमाइण्णं पुण जीतं उचियं ति एगट्ठं।
४. जीचू. पृ. ४ : जीयं ति वा करणिज्जं ति वा आयरणिज्जं ति वा एगट्ठं।
नंदीटी. पृ. ११ : जीतं मर्यादा व्यवस्था स्थितिः कल्प इति पर्यायाः।
५. जीचू.पृ. २ : अन्ने वि मरुयादीया पायच्छित्तं देंति थूलबुद्धिणो जीव-घायम्मि कत्थइ सामन्नेण; ण पुण संघट्टण-परितावणोद्दवण-भेयण सव्वेसिमेगिन्दियाईणं तस्स पज्जवसाणाणं दाउं जाणन्ति। उवएसो वा तेसिं समए एरिसो नत्थि। इह पुण सासणे सव्वमत्थि त्ति काउं विसेसेण सोहणं भण्णइ। जहा य पलास-खारोदगाइ वत्थमलस्स सोहणं तहा कम्ममलमइलियस्स जीवस्स जीय-ववहार-निद्दिट्ठं पायच्छित्तं। परमं पहाणयं पगिट्ठमिति वा। न अण्णत्थ एरिसं ति जं भणियं होइ।
६. व्यभा. ४५२१।
७. व्यभा. १२।
८. व्यभा. ४५३४।
९. जीचू.पृ. ४।
१०. व्यभा. ४५४२।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और भाव के आधार पर चिन्तन कर तथा संहनन आदि की हानि को लक्ष्य में रखकर गीतार्थ मुनियों द्वारा प्रवर्तित समुचित तप रूप प्रायश्चित्त जीत व्यवहार है।[1]

जो आचार्य आगम, श्रुत, आज्ञा, धारणा आदि से रहित है, वह परम्परा से प्राप्त जीत व्यवहार का प्रयोग करता है।[2] अतः उसके आधार पर आगम से कम, समान या अतिरिक्त प्रायश्चित्त भी दिया जा सकता है।[3] जीत व्यवहार के मूल में आगम आदि कोई व्यवहार नहीं, अपितु समय की सूझ एवं परम्परा होती है।

भाष्यकार के समय में जीतकल्प के प्रवर्त्तन विषयक दो परम्पराएं प्रचलित थीं। एक परम्परा के अनुसार आचार्य जंबू के सिद्ध होने पर अंतिम तीन चारित्रों का विच्छेद हो गया, उस समय जीत व्यवहार का प्रवर्तन हुआ।[4] दूसरे मत के अनुसार चतुर्दशपूर्वी के व्यवच्छिन्न होने पर प्रथम संहनन, प्रथम संस्थान, अन्तमुहूर्त्त में १४ पूर्वों का परावर्तन तथा आगम, श्रुत, आज्ञा, धारणा आदि चारों व्यवहारों का विच्छेद हो गया।[5] उस समय जीत व्यवहार का प्रवर्तन ही शेष रहा।इन मान्यताओं का निराकरण करते हुए भाष्यकार कहते हैं कि जो चतुर्दशपूर्वधर के विच्छेद होने पर व्यवहार चतुष्क के विच्छेद की घोषणा करते हैं, वे मिथ्यावादी होने के कारण प्रायश्चित्त के भागी हैं।[6]

चतुर्दशपूर्वी के विच्छेद होने पर मनःपर्यव, परमावधि, पुलाकलब्धि, आहारकलब्धि, क्षपक श्रेणी, उपशम श्रेणी, जिनकल्प संयमत्रिक (अंतिम तीन संयम) केवली, सिद्धि—ये बारह अवस्थाएं विच्छिन्न हुईं, किन्तु व्यवहार चतुष्क का लोप नहीं हुआ।[7]

जीतकल्प चूर्णि के अनुसार जीतकल्प का अस्तित्व त्रैकालिक है।[8] द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, पुरुष, प्रतिसेवना, शरीर-संहनन, धृतिबल आदि के आधार पर जीत व्यवहार प्रायश्चित्त का प्रवर्तन किया गया।[9]

जीतव्यवहार के भेद

प्रायश्चित्त के आधार पर जीत व्यवहार के दो भेद हैं—सावद्य और निरवद्य। व्यवहार का सम्बन्ध सावद्य जीत से नहीं, निरवद्य जीत से है। अपराध की विशुद्धि के लिए शरीर पर राख का लेप करना, कारागृह में बंदी करना, गधे पर बिठाकर सारे नगर में घुमाना, उदर से रेंगने का दण्ड देना—ये सब सावद्य जीत हैं। आलोचना आदि दस प्रकार का प्रायश्चित्त देना निरवद्य जीत है। कभी-कभी लोकोत्तर क्षेत्र में अनवस्था प्रसंग (दोषों की पुनरावृत्ति) के निवारण हेतु सावद्य जीत का प्रयोग भी किया जाता था।[10] सावद्य जीत का प्रयोग उस व्यक्ति पर किया जाता था जो बार-बार दोषसेवी, सर्वथा निर्दयी तथा प्रवचन से निरपेक्ष होता था। जो संविग्न, प्रियधर्मा, अप्रमत्त, पापभीरु होते थे उनके द्वारा यदि प्रमादवश स्खलना हो जाती तो उनके प्रति निरवद्य जीतव्यवहार का प्रयोग विहित था।[11]

प्रकारान्तर से भी जीतकल्प के दो भेद किए गए हैं—१. शोधिकरजीत, २. अशोधिकरजीत।

जो व्यवहार संवेगपरायण एवं दान्त आचार्य द्वारा आचीर्ण होता है, वह शोधिकर जीत है, फिर चाहे वह एक ही व्यक्ति द्वारा आचीर्ण क्यों न हो। जो पार्श्वस्थ और प्रमत्तसंयत द्वारा आचीर्ण व्यवहार होता है, वह अशोधिकर जीत है, फिर चाहे वह अनेक व्यक्तियों द्वारा ही आचीर्ण क्यों न हो।[12]

---

१. जीटी॰ पृ॰ ३८ जीतव्यवहारस्तु येष्वपराधेषु पूर्वमहर्षयो बहुना तपःप्रकारेण शुद्धिं कृतवन्तस्तेष्वपराधेषु साम्प्रतं द्रव्यक्षेत्रकालभावान् विचिन्त्य संहननादीनां च हानिमासाद्य समुचितेन केनचित्तपःप्रकारेण यां गीतार्थाः शुद्धिं निर्दिशन्ति तत्समयपरिभाषया जीतमित्युच्यते।

२. व्यभा॰ ४५३३।

३. जीचू॰ पृ॰ ४।

४. व्यभा॰ ४५२३।

५. व्यभा॰ ४५२४।

६. व्यभा॰ ४५२५।

७. व्यभा॰ ४५२६, ४५२७।

८. जीचू॰ पृ॰ ४ जीवेइ वा तिविहे काले तेणं जीयं।

९. जीचू॰ पृ॰ ११।

१०. व्यभा॰ ४५४४, ४५४५।

११. व्यभा॰ ४५४६।

१२. व्यभा॰ ४५४७-४६।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीतकल्प के आधार पर प्रायश्चित्त में भिन्नता

गच्छभेद से सामान्य जीत व्यवहार भी भिन्न-भिन्न होता था। इसे समझाने के लिए भाष्यकार ने कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए हैं—

कुछ आचार्यों के गण में नवकारसी या पोरसी न करने पर आचाम्ल का प्रायश्चित्त विहित था। आवश्यकगत एक कायोत्सर्ग न करने पर दो प्रहर, दो कायोत्सर्ग न करने पर एकाशन आदि का विधान था।[1]

कुछ गण में आवश्यक गत एक कायोत्सर्ग न करने पर निर्विगय, दो कायोत्सर्ग न करने पर दो प्रहर, तीन कायोत्सर्ग न करने पर आयम्बिल तथा पूरा आवश्यक न करने पर उपवास का प्रायश्चित्त विहित था।[2]

इस प्रकार उपधान तप विषयक भिन्न-भिन्न गच्छों की भिन्न-भिन्न मान्यताएं थीं। वे सभी अपनी-अपनी आचार्य-परम्परा से प्राप्त होने के कारण अविरुद्ध थीं।

नागिलकुलवर्ती साधुओं के आचारांग से अनुत्तरौपपातिक तक की आगम-वाचना में उपधानतप के रूप में आचाम्ल नहीं केवल निर्विगय तप का विधान था तथा आचार्य की आज्ञा से विधिपूर्वक कायोत्सर्ग कर उन आगमों को पढ़ते हुए भी विगय का उपयोग कर सकते थे।[3]

कुछ परम्पराओं में कल्प, व्यवहार तथा चन्द्रप्रज्ञप्ति और सूर्यप्रज्ञप्ति को आगाढयोग के अन्तर्गत तथा कुछ परम्पराओं में अनागाढयोग के अन्तर्गत माना जाता था।

इसी प्रकार एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय तथा पंचेन्द्रिय के घट्टन, परितापन, अपद्रावण आदि के विषय में भिन्न-भिन्न आचार्यों के भिन्न-भिन्न प्रायश्चित्त निर्धारित थे।[4]

पृथ्वी, पानी आदि एकेन्द्रिय जीवों के संघट्टन होने पर निर्विकृतिक, अनागाढ़ परितापन देने पर पुरिमार्ध, आगाढ़ परिताप देने पर एकाशन तथा प्राणव्यपरोपण होने पर आचाम्ल का प्रायश्चित्त विहित था।

विकलेन्द्रिय जीवों का घट्टन होने पर निर्विकृतिक, अनागाढ़ परिताप होने पर एकाशन, आगाढ़ परिताप होने पर आचाम्ल तथा प्राणव्यपरोपण होने पर उपवास का प्रायश्चित्त विहित था।

पंचेन्द्रिय के घट्टन होने पर एकाशन, अनागाढ़ परितापन होने पर आचाम्ल, आगाढ़ परितापन होने पर उपवास तथा प्राण व्यपरोपण होने पर पंचकल्याणक[5] का प्रायश्चित्त विहित था।[6]

गच्छभेद से जिस प्रकार जीत व्यवहार में भिन्नता होती है वैसे ही द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, पुरुष, प्रतिसेवना आदि के आधार पर भी जीत व्यवहार के अनुसार प्रायश्चित्त दान में तरतमता रहती है[7]। द्रव्य के आधार पर जिस क्षेत्र में आहार आदि द्रव्य उत्तम सुलभ मिलते हैं वहां जीत के आधार पर अधिक तपरूप प्रायश्चित्त दिया जा सकता है तथा जहां चना, मोठ, कांजी आदि रूक्ष आहार भी बहुत गवेषणा करने पर मिलता हो, वहां जीतव्यवहार के आधार पर कम तपरूप प्रायश्चित्त भी दिया जाता है।[8]

क्षेत्र तीन प्रकार के होते हैं—१. रूक्ष—वायु एवं पित्त को कुपित करने वाले। २. शीत—जलबहुल तथा स्निग्ध, ३. स्निग्धरूक्ष—साधारण। क्षेत्र की दृष्टि से स्निग्ध क्षेत्र में अधिक, साधारण क्षेत्र में सामान्य या मध्यम तथा रूक्ष क्षेत्र में कम प्रायश्चित्त दिया जाता है।[9]

---

१. व्यभा १२ टी प. ८।
२. व्यभा ११ टी प. ८।
३. व्यभा १२ टी प. ८।
४. व्यभा ४५३७-४१।
५. यहाँ पंचकल्याणक का तात्पर्य निर्विगय, पुरिमार्द्ध, एकाशन, आयम्बिल, उपवास—तपस्या के इन पांच भेदों से है।
६. व्यभा ४५३७।
७. जी. ६४ दव्वं खेत्तं कालं, भावं पुरिस-पडिसेवणाओ य।
नाउमियं चिय देज्जा, तम्मत्तं हीणमहियं वा॥
८. जी. ६५ चू. पृ. २१ आहाराई दव्वं, बलियं सुलहं च नाउमहियं पि।
देज्जाहि दुब्बलं दुल्लहं च नाऊण हीणं पि॥
९. जी. ६६ लुक्खं सीयल-साहारणं च खेत्तमहियं पि सीयम्मि।
लुक्खम्मि हीणतरयं, एवं काले वि तिविहम्मि॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऋतु के आधार पर काल के तीन प्रकार हैं—१. ग्रीष्म—रूक्ष, २. हेमन्त—साधारण ३. वर्षावास—स्निग्ध।

ग्रीष्म ऋतु में तीन प्रकार के प्रायश्चित्तों में जघन्य एक उपवास, मध्यम बेला तथा उत्कृष्ट तेले का प्रायश्चित्त दिया जाता है। हेमन्त में जघन्य बेला, मध्यम तेला तथा उत्कृष्ट चोला दिया जाता है। वर्षावास में जघन्य तेला, मध्यम चोला तथा उत्कृष्ट पंचोला दिया जाता है।[1]

भाव के आधार पर नीरोग या हृष्ट-पुष्ट प्रतिसेवी पुरुष को सम या अधिक प्रायश्चित्त दिया जा सकता है। किन्तु ग्लान को प्रायश्चित्त देने के निम्न विकल्प हैं—

- रोगी को अल्प प्रायश्चित या अशक्तता होने पर प्रायश्चित्त नहीं भी दिया जाए।
- जितनी वह तपस्या कर सके उतना ही प्रायश्चित्त दिया जाए।
- अथवा जब वह नीरोग या हृष्ट हो जाए तब उससे प्रायश्चित्तस्वरूप तप कराया जाए।

पुरुष की अपेक्षा से भी प्रायश्चित्त कम या ज्यादा दिया जाता है। पुरुष अनेक प्रकार के होते हैं—गीतार्थ-अगीतार्थ, सहिष्णु-असहिष्णु, मायावी-ऋजु, परिणामक-अपरिणामक आदि। जो धृति-संहनन सम्पन्न, परिणत, कृतयोगी एवं आत्मपरतर[2] (तपस्या एवं सेवा आदि में निपुण) हैं, उन्हें जीत व्यवहार के आधार पर अधिक प्रायश्चित्त भी दिया जा सकता है। जो धृति, संहनन आदि से हीन हैं, उन्हें कम प्रायश्चित्त दिया जाता है। जो धृति, संहनन आदि से सर्वथा हीन हैं, उन्हें प्रायश्चित्त से मुक्त भी किया जा सकता है।[3]

व्यवहार पंचक का प्रयोग

व्यवहार के प्रयोग के विषय में आगम में स्पष्ट उल्लेख है कि जहां आगम व्यवहार हो वहां आगम से व्यवहार की प्रस्थापना करे, जहाँ आगम न हो वहां श्रुत से, जहां श्रुत न हो वहां आज्ञा से, जहां आज्ञा न हो वहां धारणा से तथा जहां धारणा न हो, वहां जीत से व्यवहार की प्रस्थापना करे। अर्थात् जिस समय जिस व्यवहार की प्रधानता हो उस समय उस व्यवहार का प्रयोग राग-द्वेष से मुक्त होकर तटस्थ भाव से करना चाहिए।[4] व्यभा में स्पष्ट उल्लेख है कि अनुक्रम से व्यवहार पंचक का प्रयोग विहित है। पश्चानुपूर्वी क्रम से या विपरीत क्रम से व्यवहार का प्रयोग करने वाला प्रायश्चित्त का भागी होता है।[5]

इस क्रम में भी क्षेत्र और काल के अनुसार जहां जो व्यवहार संभव हो उसी का प्रयोग करना चाहिए। अथवा जिस क्षेत्र में युगप्रधान आचार्यों द्वारा जो व्यवस्था दी गई है, उसी का व्यवहार करना चाहिए।[6]

संघ में व्यवहार के प्रयोग में और भी अनेक बातों का ध्यान रखा जाता है। ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप और वैयावृत्त्य—इन पांच प्रकार की उपसंपदाओं तथा क्षेत्र, काल और प्रव्रज्या का अवबोध कर संघ में व्यवहार करना चाहिए।[7]

जैन आचार्यों ने द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के अनुसार नियम एवं प्रायश्चित्तों का विधान किया। इसीलिए नियमों एवं प्रायश्चित्त-दान में कहीं रूढता का वहन नहीं हुआ। मनोविज्ञान की पृष्ठभूमि पर ही उन्होंने पांच व्यवहारों की प्रस्थापना की, ऐसा कहा जा सकता है। एक ही प्रकार के अपराध में अवस्था, ज्ञान, धृति एवं सामर्थ्य के अनुसार दंड में अंतर आ जाता है। इसी प्रकार एक व्यक्ति ने प्रथम बार गलती की, दूसरा व्यक्ति बार-बार गलती को दोहराता है तो उस स्थिति में भी प्रायश्चित्त-दान में बहुत बड़ा अंतर आ जाता है।

---

१. जी॰ ६७ चू. पृ. २१।

२. जीचू. पृ. २३ : आयतरगो नाम जो उपवासेहि दढो। परतरगो नाम जो वेयावच्चकरो गच्छोवग्गहकरो वत्ति।

३. जीचू. पृ. २४।

४. व्यभा. १०/६, भग. ८/१८, ठाणं ५/१२४।

५. व्यभा॰ ३८८३।

६. (अ) भटी॰ पृ. ३८५ : यदा यस्मिन् अवसरे यत्र प्रयोजने वा क्षेत्रे वा यो य उचितस्तं तदा काले तस्मिन् प्रयोजनादौ।
(ब) व्यभा॰ ३३८५ टी प. १० : .....तत्रापि व्यवहारः क्षेत्रं कालं च प्राप्य यो यथा संभवति तेन तथा व्यवहरणीयम्। यत्र क्षेत्रे युगप्रधानैराचार्यैः या व्यवस्था व्यवस्थापिता तथा अनिश्रोपश्रितं व्यवहर्त्तव्यम्।

७. व्यभा. १६६२।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्य परंपराओं में

बौद्ध परम्परा में व्यवहार शब्द का प्रयोग नहीं मिलता किंतु दीघनिकाय के 'महापरिनिब्बान सुत्त' में चार महापदेशों का उल्लेख मिलता है–

१. बुद्ध द्वारा प्रवर्तित।
२. संघ द्वारा प्रवर्तित
३. महान् भिक्षुओं द्वारा प्रवर्तित।
४. किसी विहार के महान् आचार्य द्वारा प्रवर्तित।

ब्राह्मण परम्परा में भी पांच व्यवहार के संवादी निम्न तत्त्व मिलते हैं–

१. संपूर्ण वैदिक शास्त्र के आधार पर।
२. ऋषियों द्वारा प्रणीत स्मृति ग्रन्थों के आधार पर।
३. श्रुति और स्मृति के धारक व्यक्तियों द्वारा प्रवर्तित शील।
४. सदाचार–अन्यान्य स्थितियों, क्षेत्रों, व्यक्तियों में प्रचलित वे धारणाएं, जो श्रुतियों और स्मृतियों के विपरीत न हों।
५. स्वसमाधान–आत्मा की आवाज।[१]

व्यवहारी

व्यवहारी शब्द हिंदी शब्दकोशों में मुकदमा लड़ने वाला तथा वादी आदि अर्थों में प्रयुक्त है। सूत्रकृतांग में 'व्यवहारी' शब्द का प्रयोग व्यापारी के लिए हुआ है।[२] कौटिल्य ने व्यवहारी शब्द न्यायकर्त्ता के लिए प्रयुक्त किया है। जो आगम आदि व्यवहार को सम्यक् रूप से जानकर प्रायश्चित्तदान में उसका सम्यक् प्रयोग करता है, वह व्यवहारी है।[३] शब्दकल्पद्रुम में १६ वर्ष के बाद व्यवहारज्ञ बनता है, ऐसा उल्लेख मिलता है।[४]

जो रिश्वत लेकर व्यवहार/न्याय करते हैं, वे लौकिक द्रव्यव्यवहारी हैं तथा जो राग-द्वेष से रहित मध्यस्थ भाव से न्याय करते हैं, वे लौकिक भाव व्यवहारी हैं।[५]

भाष्यकार ने लोकोत्तर भाव व्यवहारी की निम्न विशेषताओं का उल्लेख किया है–[६]

प्रियधर्मा– कर्त्तव्यपरायण।

दृढ़धर्मा–अपने निश्चय में अटल।

संविग्न–संसारभीरु।

वद्यभीरु–पापभीरु।

सूत्रार्थ-तदुभयविद्–शास्त्रवित्।

अनिश्रितव्यवहारकारी–राग-द्वेष रहित व्यवहार करने वाला।

व्यवहारी में इन विशेषताओं का होना इसलिए आवश्यक है कि जिसको न्याय या प्रायश्चित्त दिया जा रहा है, उसका उस पर विश्वास हो सके कि यह सही न्याय/व्यवहार कर रहा है। भाष्यकार का अभिमत है कि बहुश्रुत होते हुए भी जो मुनि न्याय नहीं करता, उसका व्यवहार प्रमाण नहीं हो सकता। न्याय से व्यवहार करना व्यवहारी की योग्यता का सबसे बड़ा प्रमाण है।[७]

दिगम्बर ग्रंथों के अनुसार पांच प्रकार के व्यवहारों को विस्तार से जानने वाले, अन्य आचार्यों को प्रायश्चित्त देते देखने वाले

---

१. Aspects of Jain Monasticism P. 3.
२. सू. १/३/७८ समुद्दं व ववहारिणो।
३. व्यभा. ५२० टी प. १८।
४. शब्दकल्पद्रुम भाग ४, पृ. ५४३।
५. व्यभा. १३ टी. प. ८।
६. व्यभा. १५ टी. प. ६।
७. व्यभा. १७०४।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तथा स्वयं भी प्रायश्चित्त का प्रयोग करने वाले आचार्य को व्यवहारवान् आचार्य कहते हैं।[1]

जिनप्रणीत आगम में कुशल, धृति सम्पन्न, व्यवहार का प्रयोग करने में कुशल तथा राग-द्वेष रहित मुनि प्रायश्चित्त देने के अधिकारी होते हैं।[2]

केवलज्ञानी, मनःपर्यवज्ञानी, अवधिज्ञानी, चतुर्दशपूर्वी, दशपूर्वी, नवपूर्वी, कल्पधर, प्रकल्पधर, कल्प एवं व्यवहार की पीठिका के ज्ञाता तथा आज्ञा, धारणा एवं जीत व्यवहार में कुशल आचार्य या मुनि व्यवहारी अर्थात् प्रायश्चित्त देने में प्रामाणिक माने जाते हैं।[3]

व्यवहारी के संदर्भ में शिष्य ने एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न उपस्थित किया है कि वर्तमान में आगम व्यवहारी का विच्छेद हो चुका है अतः यथार्थ शुद्धिदायक के अभाव में चारित्र शुद्धि का भी अभाव हो गया है। आजकल कोई मासिक एवं पाक्षिक प्रायश्चित्त भी नहीं देता है अतः तीर्थ ज्ञानमय एवं दर्शनमय है, चारित्रमय नहीं। दूसरी बात, प्रत्यक्ष आगम व्यवहारी अपराध एवं प्रतिसेवी की क्षमता के अनुसार प्रायश्चित्त देते हैं, न्यून या अधिक प्रायश्चित्त नहीं देते। किंतु कल्पधर, व्यवहारधर आदि आगम व्यवहार के अभाव में मनचाहा प्रायश्चित्त दे सकते हैं अतः आजकल निर्यापकों का भी अभाव हो गया है।[4]

इस प्रश्न का समाधान करते हुए भाष्यकार कहते हैं कि सारे प्रायश्चित्तों का विधान नौवें पूर्व प्रत्याख्यान प्रवाद की तृतीय आचार वस्तु में है। वहीं से निशीथ, बृहत्कल्प एवं व्यवहार का निर्यूहण हुआ है। वे ग्रंथ एवं उनके ज्ञाता आज भी विद्यमान हैं। अतः वर्तमान में भी चारित्र के प्रज्ञापक हैं तथा प्रायश्चित्तों का वहन करने वाले भी हैं।[5] चतुर्दशपूर्वी के काल तक दसों प्रायश्चित्तों का अस्तित्त्व रहता है। उसके पश्चात् प्रथम आठ प्रायश्चित्तों का अस्तित्त्व तब तक रहेगा जब तक तीर्थ चलेगा। यदि प्रायश्चित्त नहीं होगा तो चरित्र भी नहीं रहेगा तथा चरित्र न रहने पर तीर्थ का अस्तित्त्व भी समाप्त हो जाएगा। निर्ग्रन्थ के बिना तीर्थ का अस्तित्त्व तथा तीर्थ के बिना निर्ग्रन्थों का अस्तित्त्व नहीं रहता। अतः जब तक षट्कायसंयम है तब तक सामायिक और छेदोपस्थापनीय—ये दो चारित्र रहेंगे तथा चारित्र की विद्यमानता में प्रायश्चित्त का अस्तित्त्व भी अनिवार्य है।[6]

इसी बात को दृष्टान्त द्वारा समझाते हुए भाष्यकार कहते हैं कि जैसे चक्रवर्ती का प्रासाद वर्धकि रत्न द्वारा निर्मापित होता है, अतः उसकी शोभा अनुपम होती है। उसे देखकर अन्यान्य राजा भी अपने वर्धकियों से प्रासाद का निर्माण करवाते हैं वैसे ही परोक्षज्ञानी भी प्रत्यक्ष आगम व्यवहारी की भांति ही व्यवहार करते हैं।[7]

एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है कि व्यवहारी की प्रामाणिकता को केवल बहुश्रुत ही समझ सकते हैं दूसरे उसे प्रमाण कैसे मानेंगे? भाष्यकार कहते हैं—व्यवहारछेदक दो प्रकार के होते हैं—प्रशंसनीय और अप्रशंसनीय।[8] प्रशंसनीय वे होते हैं, जो यथार्थ व्यवहारी होते हैं और अप्रशंसनीय वे होते हैं, जो व्यवहार योग्य नहीं होते। इस प्रसंग में भाष्यकार ने तगरा नगरी के एक आचार्य के सोलह शिष्यों का उल्लेख किया है, जिनमें आठ शिष्य व्यवहारी तथा आठ अव्यवहारी थे।

भाष्यकार ने आचार्य के आठ अव्यवहारी शिष्यों का नामोल्लेख न करते हुए केवल उनके दोषों को प्रतीक एवं रूपक के माध्यम से समझाया है। लेकिन व्यवहारी शिष्यों के नामों का उल्लेख किया है। उनकी विशेषताओं का उल्लेख नहीं किया। प्रश्न होता है कि अव्यवहारी शिष्यों के नामों का उल्लेख क्यों नहीं किया? इस प्रश्न के समाधान में ऐसी संभावना की जा सकती है कि अव्यवहारी शिष्य आठ से अधिक हो सकते हैं इसलिए उनको प्रतीक के माध्यम से समझाया है। दूसरी बात है कि गलती के रूप में किसी के नाम का उल्लेख अव्यवहारिक प्रतीत होता है इसलिए भी संभवतः भाष्यकार ने शिष्यों के नामों का उल्लेख नहीं किया हो।

---

१. भआ. ४५०।
२. भआ. ४५३।
३. व्यभा. ४०३,४०४।
४. व्यभा. ४१६३-७१।
५. व्यभा. ४१७२-७४
६. व्यभा. ४२१५-१७।
७. व्यभा. ४१७५-७९
८. व्यभा. १६६३।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अव्यवहारी शिष्यों के आठ दोष इस प्रकार हैं[1]–

१. कांकटुक : जैसे कोरडू धान्य अग्नि पर पकाने पर भी नहीं पकता वैसे ही कोरडूधान्य तुल्य व्यक्ति का व्यवहार दुर्च्छेद्य होता है, सिद्ध नहीं होता।

२. कुणप : जैसे शव का मांस धोने पर भी पवित्र नहीं होता वैसे ही कुणप तुल्य व्यक्ति का व्यवहार निर्मल नहीं होता।

३. पक्व : पक्व फल नीचे गिर जाता है। पक्व फल जैसे व्यक्ति का व्यवहार स्थिर नहीं रहता, गिर जाता है। जैसे चाणक्य के संन्यास लेने पर चन्द्रगुप्त की लक्ष्मी स्थिर नहीं रही, गिर गई। पक्व का दूसरा अर्थ करते हुए भाष्यकार कहते हैं कि वह इस प्रकार संभाषण करता है कि दूसरे सद्वादी भी मौन हो जाते हैं। पंचकल्पचूर्णि में पक्व का अर्थ इस प्रकार किया है–भैंस पानी पीने के लिए तालाब में उतरती है, वह सारे पानी को गुदला देती है। उसी प्रकार पक्व भी व्यवहार को जटिल बना देता है।[2]

४. उत्तर : छलपूर्वक उत्तर देने वाला। वह प्रतिसेवी के साथ दुर्व्यवहार करता है और गीतार्थ मुनि द्वारा उपालम्भ देने पर उन्हें छलपूर्वक उत्तर देता है। जैसे एक व्यक्ति ने दूसरे पर लात से प्रहार किया। पूछने पर कहता है–मैंने पैरों से प्रहार नहीं किया जूते पहने पैर ने प्रहार किया था।

५. चार्वाक : जो व्यर्थ ही निष्फल प्रयत्न करता है और बार-बार उसी का चर्वण करता है, उसका व्यवहार चार्वाक तुल्य होता है।

६. बधिर : बधिर की भांति कहता रहता है कि मैंने प्रतिसेवना सुनी नहीं।

७. गुंठ : माया से व्यवहार की समाप्ति करने वाला (देखें–परिशिष्ट ८ कथा सं ८६)

८. अम्ल : तीखे वचन बोलने वाला। उसके वचनों से व्यवहार का निबटारा नहीं होता। पंचकल्पचूर्णि में इसका अर्थ अंधा व्यवहार किया है।[3]

ये आठों प्रकार के शिष्य अव्यवहारी थे। अव्यवहारी व्यक्तियों की इहलोक में अपकीर्ति तथा परलोक में दुर्गति होती है। इसलिए बहुश्रुत होने पर भी जो अन्याय करता है, न्यायोचित व्यवहार नहीं करता, वह प्रमाण नहीं होता।[4]

तगरा नगरी के आचार्य के जो आठ व्यवहारी शिष्य थे, उनके नाम इस प्रकार हैं–१.पुष्यमित्र, २. वीर, ३. शिवकोष्ठक, ४. आर्यास, ५. अर्हन्नक, ६. धर्मान्वग, ७. स्कंदिल, ८. गोपेन्द्रदत्त। ये अपने युग में प्रधान व्यवहारच्छेदक माने जाते थे। अन्यान्य राज्यों में भी उनके व्यवहार की छाप थी। कोई उनको चुनौती नहीं दे सकता था। ऐसे सुव्यवहारी मुनियों की इहलोक में कीर्ति और परलोक में सुगति होती है।[5]

व्यवहारी की योग्यता

व्यवहार करने का अधिकार उसे प्राप्त होता है, जो मुनि युगप्रधान आचार्य के पास तीन परिपाटियों से व्यवहार आदि ग्रंथों का सम्पूर्ण रूप से सम्यक् अवबोध प्राप्त कर लेता है। वे तीन परिपाटियां ये हैं–

१. सूत्रार्थ का परिच्छेद पूर्वक उच्चारण।

२. पदविभाग पूर्वक पारायण।

३. निरवशेष पारायण।

आचार्य उसकी ग्रहणशीलता–तीनों परिपाटियों का सम्यक् ग्रहण किया है या नहीं, की परीक्षा करते हैं। दूसरी बार पुनः परीक्षा कर जब वे जान जाते हैं कि यह व्यवहारी हो गया है, तब उसे व्यवहार योग्य मानते हैं। जब शिष्य तीनों परिपाटियों से भावतः सम्पूर्ण सूत्रार्थ का पारगामी हो जाता है, तब वह व्यवहार करने योग्य होता है। इसकी परीक्षा करने के लिए आचार्य उस ग्राहक-शिष्य को विषम स्थलों के विषय में पूछते हैं और जब वह उन विषयों के हार्द को सम्यक् रूप से व्यक्त करने में सक्षम

---

१. व्यभा. १६६४-१७०१।

२. पंकचू. अप्रकाशित; पक्को जहा महिसो पाणीए ओइण्णो एवं सो वि महिसो विव आडुयालं करेइ।

३. वही ६ पृ. ६२८ : अंबिलसमाणो नाम अंधं ववहारं करेइ।

४. व्यभा. १७०३, १७०४।

५. व्यभा. १७०६, १७०७।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हो जाता है तब उसे व्यवहारकरण योग्य मान लेते हैं। जब ग्राहक-शिष्य तीनों परिपाटियों से व्यवहार आदि छेद ग्रंथों का सम्यक् ग्रहण कर लेता है, बार-बार उनका अभ्यास कर अवधारित कर लेता है, उनके तात्पर्यार्थ जानकर जिसका हृदय निःशंक हो जाता है, वह व्यवहारकरण योग्य होता है।

जो तीनों परिपाटियों से अवबुद्ध होकर संविग्न आचार्य या मुनियों के पास रहकर स्थिर परिपाटी वाला हो जाता है और जब आचार्य से अनुज्ञा प्राप्त कर विहरण करता है, तब वह व्यवहारी होता है।

जो स्व-पर के लिए प्रतिकूल है, मंदधर्मा है और जो आचार्य की अनुज्ञा के बिना अपने प्रयोजन से विहरण करने लगता है, वह अप्रमाण होता है और देशान्तर गमन के अयोग्य होता है। अतः आचार्य के कथन से अवधारणा को पुष्ट कर, सम्प्रदायगत मान्यता के अभिमुख रहकर बार-बार परिपाटियों का अभ्यास करता हुआ, उनकी विस्मृति न करता हुआ, भूतार्थ से व्यवहार करने वाला व्यवहारी होता है।

जो सचित्त व्यवहार, क्षेत्र व्यवहार तथा मिश्र व्यवहार—इन तीनों के विषय में आचार्य की अवधारणा को जाने बिना, अपनी स्वच्छंदबुद्धि से व्यवहार करता है, वह अयोग्य है, अधन्य है। वह उन्मार्ग के उपदेश से तीर्थंकरों की आशातना करता है तथा स्वयं को भवभ्रमण के आवर्त्त में फंसा देता है।

व्यवहारी को संघ में गौरव रहित होकर व्यवहार करना चाहिए। गौरव के आठ प्रकार हैं—

१. परिवार गौरव, २. ऋद्धि गौरव, ३. धर्मकथी होने का गौरव, ४. वादी होने का गौरव, ५. तपस्वी होने का गौरव, ६. नैमित्तिक होने का गौरव, ७. विद्या का गौरव, ८. रत्नाधिक होने का गौरव। जो इन आठ गौरवों से अपने आपका प्रभुत्व स्थापित करते हैं, वे अगीतार्थ हैं; वे संघ में व्यवहार करने योग्य नहीं होते। संघ में वे ही व्यवहर्त्तव्य होते हैं, जो जिनेश्वर देव के आराधक हैं, गीतार्थ हैं। अगीतार्थ मुनि गौरव से व्यवहार करता हुआ संसार में सारभूत चातुरंग—मनुष्यत्व, श्रुति, श्रद्धा और संयम में पराक्रम को खो बैठता है और अपार संसार में भटक जाता है।[1]

संक्षेप में भाष्यकार ने संघ में व्यवहार करने के निम्न गुणों का निर्देश किया है—

- जिसके सूत्र और अर्थ की परिपाटी स्थिर है।
- जो संविग्न है।
- जो राग-द्वेष से विप्रमुक्त है।
- जो गंधहस्ती आचार्यों के समान अनुयोगधर है।[2]

जो इन गुणों से शून्य होता है, वह वीतराग वचनों की महती आशातना ही नहीं करता, व्रतों का लोप भी कर देता है। **'एकव्रतलोपे सर्वव्रतलोपः'** इस कथन के अनुसार उत्सूत्र की प्ररूपणा रूप मृषावाद के कारण एक व्रत का लोप करते हुए वह पांचों व्रतों का लोप कर देता है। वह मायावी होता है, क्योंकि वह सूत्रों का उल्लंघन कर छलपूर्वक उत्तर देता है। वह पापजीवी होता है, क्योंकि मिथ्या व्यवहार के द्वारा दूसरों को प्रभावित कर उनसे मिलने वाले आहार आदि के उपभोग से जीवित रहता है। वह मृषावाद आदि दोषों से युक्त होने के कारण अशुचि में पड़े कनकदंड के समान अस्पृश्य होता है। वह यावज्जीवन आचार्य आदि पद के अयोग्य होता है।[3]

आगम व्यवहारी

अठारह वर्जनीय स्थानों के ज्ञाता,[4] ३६ गुणों में कुशल,[5] आचारवान् आदि गुणों से युक्त,[6] आलोचना आदि दस प्रकार के

---

१. व्यभा. १७०८-२४।
२. व्यभा. १७२५।
३. व्यभा. १७२६, १७२७।
४. व्रतषट्क, कायषट्क, अकल्प समाचरण, गृहिभाजन का प्रयोग, पर्यंक, भिक्षा के समय गृहस्थ के घर बैठना, स्नान, विभूषा—ये अठारह वर्जनीय स्थान हैं। (देखें व्यभा-४०७०-७५)।
५. आचार्य की आचार, श्रुत आदि आठ सम्पदाओं के चार-चार गुण होते हैं। उनके ३२ प्रकार हैं तथा आचारविनय, श्रुतविनय, विक्षेपणाविनय, दोषनिर्घातनविनय आदि चार विनय-प्रतिपत्तियां होती हैं। ये आचार्य के छत्तीस गुण कहलाते हैं। (देखें व्यभा.–४०७६-४१५६)।
६. आचारवान् आधारवान् व्यवहारवान् आदि आलोचनार्ह के ८ गुण हैं। (देखें व्यभा-५१९, ५२०, ठाणं ८/१८)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रायश्चित्तों के ज्ञाता,[1] आलोचना के दस दोषों के ज्ञाता,[2] व्रत षट्क, कायषट्क आदि के ज्ञाता तथा जाति सम्पन्न, कुल सम्पन्न आदि १० गुणों से युक्त,[3] षट्स्थान पतित स्थानों को साक्षात् रूप से जानने वाले तथा राग-द्वेष रहित मुनि/आचार्य आगम व्यवहारी होते हैं।[4] आगम व्यवहारी जिनेन्द्र की आज्ञा से व्यवहार का प्रयोग करते हैं।[5] जैसे सूर्य के प्रकाश के समक्ष दीपक का प्रकाश नगण्य है वैसे ही आगम व्यवहारी आगम व्यवहार का ही प्रयोग करते हैं, श्रुत आदि व्यवहार का नहीं।[6]

आगम व्यवहारी अतिशय ज्ञानी होते हैं अतः वे प्रायश्चित्ताकांक्षी व्यक्ति के संक्लिष्ट, विशुद्ध एवं अवस्थित परिणामों को साक्षात् जान लेते हैं। इसलिए वे उतना ही प्रायश्चित्त देते हैं, जितने से आलोचक की विशुद्धि हो सके।[7]

आगम व्यवहारी छह हैं—केवलज्ञानी, मनःपर्यवज्ञानी, अवधिज्ञानी, चतुर्दशपूर्वी, दशपूर्वी एवं नौ पूर्वी।[8] केवलज्ञानी, मनःपर्यवज्ञानी एवं अवधिज्ञानी आगमतः प्रत्यक्ष व्यवहारी हैं। चतुर्दशपूर्वी, दशपूर्वी, नवपूर्वी एवं गंधहस्ती आचार्य आगमतः परोक्ष व्यवहार का प्रयोग करते हैं।[9]

यहां एक प्रश्न उपस्थित होता है कि चतुर्दशपूर्वी आदि श्रुत से व्यवहार करते हैं तो फिर उन्हें आगम व्यवहारी क्यों कहा गया? रूपक के माध्यम से इसका समाधान करते हुए भाष्यकार कहते हैं—चतुर्दशपूर्वी आदि प्रत्यक्ष आगम के सदृश हैं इसलिए इन्हें आगम व्यवहार के अन्तर्गत गिना है। जैसे चन्द्र के समान मुख वाली कन्या को चन्द्रमुखी कहा जाता है वैसे ही आगम सदृश होने के कारण पूर्वों के ज्ञाता भी आगम व्यवहार के अन्तर्गत समाविष्ट हो जाते हैं।[10] इसका दूसरा हेतु यह है कि पूर्वों का ज्ञान अतीन्द्रिय पदार्थों का विशिष्ट अवबोधक होता है, अतिशायी ज्ञान होने के कारण इसे आगम व्यवहार के अन्तर्गत लिया गया है।[11] दूसरा हेतु यह है—जैसे केवली सब द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव से पदार्थों को जानते हैं वैसे श्रुतज्ञानी भी इनको श्रुत के बल से जान लेते हैं अतः चतुर्दशपूर्वी आदि को आगम व्यवहारी के अन्तर्गत रखा है।[12]

जिस प्रकार प्रत्यक्ष आगमज्ञानी प्रतिसेवक की राग-द्वेष विषयक हानि-वृद्धि के आधार पर कम या ज्यादा प्रायश्चित्त देते हैं। उपवास जितने प्रायश्चित्त की प्रतिसेवना करने पर पांच दिन का प्रायश्चित्त दे सकते हैं तथा पांच दिन जितनी प्रतिसेवना करने वाले को उपवास का प्रायश्चित्त दे सकते हैं। वैसे ही चतुर्दशपूर्वी आदि भी आलोचक की राग-द्वेष की वृद्धि एवं हानि के आधार पर प्रायश्चित्त प्रदान करते हैं।[13]

प्रत्यक्ष ज्ञानी न्यून या अधिक प्रायश्चित्त क्यों देते हैं? इसके स्पष्टीकरण में भाष्यकार ने रत्नवणिक् का दृष्टान्त प्रस्तुत किया है। जैसे— निपुण रत्नवणिक् आकार में बड़ा होने पर भी काचमणि का काकिणी जितना ही मूल्य देता है तथा वज्र आदि छोटे रत्न का भी एक लाख मुद्रा मूल्य दे देता है।[14]

एक प्रश्न यह भी उपस्थित होता है कि प्रत्यक्ष आगमज्ञानी तो प्रतिसेवक के भावों को साक्षात् जानते हैं लेकिन चतुर्दशपूर्वी आदि परोक्ष आगम व्यवहारी दूसरों के भावों को कैसे जानकर व्यवहार करते हैं? इस प्रश्न के समाधान में भाष्यकार ने नालीधमक का उदाहरण प्रस्तुत किया है। जैसे नालिका से पानी गिरने पर समय की अवगति होती है। नालिका द्वारा समय जानकर धमक

---

१. व्यभा. ४१८०; ठाणं १०/७३।
२. व्यभा. ५२३; ठाणं १०/७०।
३. व्यभा. ५२१, ५२२; ठाणं १०/७१।
४. व्यभा. ४०७०-४१६१।
५. व्यभा. ४१६२।
६. व्यभा. ३८८४ : आगमववहारी आगमेण ववहरति सो न अन्नेणं।
न हि सूरस्स पगासं, दीवपगासो विसेसेति॥
७. जीचू. पृ. ४ आगमववहारी अइसइणो संकिलिस्समाणं विसुज्झमाणं अवट्ठियपरिणामं वा पच्चक्खमुवलभन्ति, तावइयं च से दिन्ति जावइएण विसुज्झइ।
८. व्यभा. ३१८, जीचू. पृ. २।
९. व्यभा. ४०३७।
१०. व्यभा. ४०३५ टी. प. ३१।
११. भटी. प. ३८४; श्रुतं शेषमाचारप्रकल्पादिनवादिपूर्वाणां च श्रुतत्वेऽप्यतीन्द्रियार्थेषु विशिष्टज्ञानहेतुत्वेन सातिशयत्वादागमव्यपदेशः केवलवदिति।
१२. व्यभा. ४०३६।
१३. व्यभा. ४०४०, ४०४१।
१४. व्यभा. ४०४३-४५।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शंख बजाकर दूसरो को भी समय की सूचना देता रहता है। वैसे ही परोक्षागम व्यवहारी भी दूसरों की शोधि और आलोचना को सुनकर आलोचक के यथावस्थित भावों को जान लेते हैं।[१] वे आलोचक को पश्चात्ताप की उत्कटता-अनुत्कटता के आधार पर प्रायश्चित्त देते हैं।

जैसे परोक्ष आगम व्यवहारी श्रुतबल से जीव, अजीव आदि की पर्यायों को सब नयों से जानते हैं वैसे ही दूसरों के भावों को भी श्रुतबल से जानकर उसकी शोधि के लिए प्रायश्चित्त देते हैं।[२]

आगम व्यवहारी दूसरों के द्वारा आलोचना करने पर तथा उसे सुनकर ही व्यवहार या प्रायश्चित्त का प्रयोग करते हैं। यदि शोधिकर्त्ता मुनि कषाय के वशीभूत होकर प्रतिसेवना के अतिचारों की सम्यक् रूप से आलोचना नहीं करता, जानबूझकर दोषों को छिपाता है तो आगमव्यवहारी उसे अन्यत्र आलोचना करने की बात कहते हैं। आलोचक यदि द्रव्य, क्षेत्र, काल एवं भाव से विशुद्ध रूप से आलोचना करता है तो आगम व्यवहारी उसके प्रति व्यवहार का प्रयोग करते हैं, अन्यथा नहीं।[३]

यदि आलोचक प्रतिसेवना के अतिचारों की यथाक्रम आलोचना नहीं करता तो भी आगम व्यवहारी उसे प्रायश्चित्त नहीं देते।[४] यदि कोई व्यक्ति सहजता से अपने अपराध को भूल गया है, उसमें माया नहीं है तो आगम व्यवहारी उसे अपराध की स्मृति दिला देते हैं। स्मृति दिलाने पर यदि वह उस अपराध को सम्यक् रूप से स्वीकृत कर लेता है तो प्रायश्चित्त देते हैं अन्यथा अन्यत्र शोधि करने की बात कहते हैं। कहने का तात्पर्य यही है कि यदि आगम एवं आलोचना में विषमता या भेद देखते हैं तो आगम व्यवहारी उसे प्रायश्चित्त नहीं देते।[५]

श्रुतव्यवहारी

श्रुतव्यवहारी श्रुत का अनुवर्तन करते हैं।[६] दशाश्रुत, कल्प, व्यवहार आदि छेदसूत्रों के ज्ञाता तथा कल्प और व्यवहार की निर्युक्ति को जानने वाले श्रुतव्यवहारी कहलाते हैं।[७]

परोक्षज्ञानी आलोचक से तीन बार उसकी प्रतिसेवना सुनते हैं, जिससे वे उसकी माया या ऋजुता को जान सकें। प्रथम बार में नींद का अभिनय करते हुए सुनते हैं, दूसरी बार आलोचना करने पर कहते हैं—मैंने अनुपयुक्त होकर सुना। अतः तुम्हारी आलोचना को धारण नहीं किया, पुनः आलोचना करो। यदि तीनों बार में आलोचक सदृश आलोचना करता है तो श्रुतव्यवहारी जान लेते हैं कि यह ऋजुता से आलोचना कर रहा है और यदि तीनों बार आलोचना करने पर भिन्नता रहती है तो वे उसकी माया या कुटिलता को जान लेते हैं। अतः वे माया और ऋजुता के अनुसार श्रुत के आधार पर व्यवहार करते हैं।[८]

लौकिक न्याय करते समय भी न्यायकर्ता अपराधी से तीन बार वस्तुस्थिति का ज्ञान करते थे। यदि अपराधी विसदृश बोलता है तो उसे राजकुल में मृषा बोलने एवं माया करने का अधिक दंड मिलता था।[९]

परोक्षज्ञानी प्रतिसेवी का इंगित, आकार अर्थात् शरीरगत भाव-विशेष देखता है। जो विशुद्ध रूप से आलोचना करता है उसके शरीर के सारे आकार-प्रकार वैराग्य भाव के द्योतक होते हैं। स्वर से भी परोक्षज्ञानी प्रतिसेवक की भावशुद्धि को जान लेते हैं। विशुद्ध भाव से आलोचना करने वाले का स्वर अक्षुब्ध, अव्याकुल एवं स्पष्ट होता है। परोक्षज्ञानी वाणी से भी प्रतिसेवक की परीक्षा करते हैं। विशुद्ध भाव से आलोचना करने वाले की वाणी पूर्वापर विसंवादी नहीं होती। आलोचक का आकार, स्वर और वाणी—तीनों संतुलित होते हैं तो परोक्ष ज्ञानी जान जाता है कि यह माया से नहीं अपितु विशुद्ध भाव से आलोचना कर रहा है।[१०] जिस प्रकार चिकित्सक रोग के अनुसार औषध देता है, अधिक या कम नहीं, वैसे ही आगम व्यवहारी एवं श्रुतव्यवहारी भी

१. व्यभा. ४०४६, व्यभा. ५१३-१६।
२. व्यभा. ४०४८, जीभा १२३।
३. व्यभा. ४०५५,
४. व्यभा. ४०६५ भआ ६२०।
५. व्यभा. ४०६६-६६।
६. जीचू.पृ. ४ : जे पुण सुयववहारी ते सुयमणुवत्तमाणा।
७. व्यभा. ३२०, ४४३२-३५।
८. व्यभा. ३२०, ३२१ टी. प. ४३।
९. व्यभा. ३२२ टी. प. ४४।
१०. व्यभा. ३२३।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जितने प्रायश्चित्त से व्यक्ति की शुद्धि होती है, उतना ही प्रायश्चित्त देते हैं।[1] अंतिम तीन व्यवहारी श्रुत का ही अनुवर्तन करते हैं।[2]

व्यवहर्त्तव्य

पांच व्यवहारों द्वारा कर्त्ता (व्यवहारी) जो निष्पादित करना चाहता है, वह व्यवहर्त्तव्य है। व्यवहर्त्तव्य कार्य के योग से पुरुष भी व्यवहर्त्तव्य कहलाते हैं।[3] अर्थात् जिसके प्रति व्यवहार द्वारा प्रायश्चित्त का प्रयोग किया जाता है, वह व्यवहर्त्तव्य है। यह द्रव्य और भाव के भेद से दो प्रकार का है।

द्रव्य-व्यवहर्त्तव्य के अन्तर्गत चोर, पारदारिक, हिंसक आदि का ग्रहण किया जा सकता है। इसी प्रकार जात सूतक और मृतक सूतक तथा शूद्र आदि के घरों पर भोजन करने से ब्राह्मणों द्वारा जो बहिष्कृत कर दिए जाते हैं अर्थात् जिनसे बोल-चाल बंद कर दी जाती हो, वे ब्रह्महत्या या माता-पिता की हत्या करने वाले के समान पापी माने जाते हैं। वे यदि अपने दोष को स्वीकार नहीं करते अथवा स्वीकार करते हुए सम्यग् आलोचना नहीं करते अथवा बहाना बनाकर बात को अन्य रूप से प्रस्तुत करते हैं, वे भी द्रव्य-व्यवहर्त्तव्य कहलाते हैं। जैसे–किसी ब्राह्मण ने अपनी पुत्रवधू या चंडालिन के साथ अकृत्य कर लिया फिर प्रायश्चित्त के समय चतुर्वेदी ब्राह्मण के पास उपस्थित होकर कहता है कि मैंने स्वप्न में पुत्रवधू या चंडालिन के साथ अगम्य व्यवहार कर लिया है। यह लौकिक द्रव्य-व्यवहर्त्तव्य है। सुरा आदि का सेवन कर प्रायश्चित्त करते समय वह कहता है–मैंने स्वप्न में सुरापान किया था। यह भी लौकिक व्यवहर्त्तव्य है।[4] इन दोनों उदाहरणों से स्पष्ट है कि प्रायश्चित्त करने वाले के मन में विशुद्धि नहीं है, माया है। यह द्रव्य-व्यवहर्त्तव्य है।

मानसिक अवस्थाओं के आधार पर लोकोत्तर द्रव्य एवं भाव व्यवहर्त्तव्य को विभिन्न रूपों में व्याख्यायित किया गया है। लोकोत्तर द्रव्य व्यवहर्त्तव्य वह है, जो परप्रत्यय से अपनी विशोधि करता है। वह सोचता है मुझे दोष-सेवन करते हुए आचार्य, उपाध्याय अथवा किसी मुनि ने देख लिया है, इसलिए मुझे आलोचना करनी चाहिए। यह सोचकर वह बड़े दोष का सेवन कर लघु दोष की आलोचना करता है तथा स्वकृत दोष को परकृत दोष बताता है।[5] इसके अतिरिक्त अकारण अतिचारों का प्रतिसेवी, अनुताप रहित अथवा अपने दोषों को देशतः-सर्वतः छिपाने वाला भी द्रव्य-व्यवहर्त्तव्य है।[6]

भाष्यकार ने कुम्हार एवं साधु की घटना का उल्लेख करते हुए उनकी क्षमायाचना को अव्यवहर्त्तव्य बताया है क्योंकि वहां प्रमाद से विरति नहीं, किन्तु गलती की पुनरुक्ति है।[7]

लोकोत्तर भाव व्यवहर्त्तव्य वह होता है, जो गीतार्थ हो या अगीतार्थ, अपनी प्रतिसेवना को सद्भाव से कहता है और प्रायश्चित्त कर लेता है। वह अवक्र, अकुटिल, निरहंकारी, अलोभी, कारण-प्रतिसेवी, प्रियधर्मा, बहुश्रुत, दृढ़धर्मा, संविग्न, पापभीरु और सूत्रार्थविद् होता है। कुछ आचार्यों का इसमें मतान्तर भी है। उनके अनुसार जो वक्र, मायावी आदि होते हैं, वे यदि सद्भावपूर्वक आलोचना करते हैं तो वे लोकोत्तर भाव-व्यवहर्त्तव्य माने गए हैं। जानबूझकर प्रतिसेवना करने वाले को लोकोत्तरिक भाव-व्यवहर्त्तव्य क्यों स्वीकृत किया इसके उत्तर में टीकाकार कहते हैं कि प्रायश्चित्त का इच्छुक होने के कारण वह मुनि जिनाज्ञा के अभिमुख है, उसमें जिनाज्ञा के प्रति प्रद्वेष नहीं है, वह अंतःकरण की विशुद्धि एवं यतनापूर्वक प्रतिसेवना में प्रवृत्त होता है, अतः वह भाव-व्यवहर्त्तव्य है।[8]

ग्रंथकार ने भंगों के आधार पर भी भाव-व्यवहर्त्तव्य की व्याख्या प्रस्तुत की है–

कदाचित् कारण उपस्थित होने पर जो अयतना से दोष सेवन करता है, वह भी भावव्यवहर्त्तव्य है फिर यतना से दोषसेवन

---

१. व्यभा. ३२६।
२. जीचू.पृ. ४।
३. व्यभा.२ टी. प. ४ : तेन च पंचविधेन व्यवहारेण करणभूतेन व्यवहरन् कर्त्ता यन्निष्पादयति कार्यं तद् व्यवहर्त्तव्यमित्युच्यते व्यवहर्त्तव्यकार्ययोगात् पुरुषा अपि व्यवहर्त्तव्याः।
४. व्यभा.१७, १८ टी. प. १०।
५. व्यभा.१९ टी. प. ११।
६. व्यभा.२४।
७. व्यभा. २५।
८. व्यभा.१९, २०।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करने वाले का तो कहना ही क्या?[1]

• अकृत्य सेवन करते समय जो यह चिन्तन करे कि मैं प्रायश्चित्त लेकर शुद्धि कर लूंगा, वह भी भाव-व्यवहर्त्तव्य है।[2]

• विशेष कारण उपस्थित होने पर या नहीं होने पर यतना से या अयतना से अकृत्य सेवन करके जो सद्भाव रूप से गुरु के समीप अपनी आलोचना कर लेता है, वह भाव व्यवहर्त्तव्य है।[3]

• जो प्रियधर्मा, दृढ़धर्मा, संविग्न, पापभीरु एवं सूत्रार्थविद् होते हैं, वे सब भाव-व्यवहर्त्तव्य हैं।[4]

भाष्यकार के अनुसार अगीतार्थ के साथ व्यवहार नहीं करना चाहिए। वे यथार्थ निर्णय करने पर उसे स्वीकार नहीं करते अतः वे अव्यवहर्त्तव्य होते हैं। गीतार्थ व्यवहर्त्तव्य होता है क्योंकि वह किसी भी परिस्थिति को सही रूप में स्वीकार करता है। इस प्रसंग में भाष्यकार ने दो गीतार्थों में सचित्तादि वस्तु को लेकर उत्पन्न विवाद एवं उनके विधायक दृष्टिकोण की चर्चा की है।[5]

व्यवहार के द्वारा दोषविशुद्धि हेतु व्यवहारी जो प्रायश्चित्त देता है, वह भी व्यवहर्त्तव्य है। उसके आलोचना, प्रतिक्रमण आदि दस भेद हैं। जो इन प्रायश्चित्तों का वहन करते हैं अथवा जिन पर इन प्रायश्चित्तों का प्रयोग किया जाता है, वे भी व्यवहर्त्तव्य हैं।

प्रायश्चित्त

दोषविशुद्धि के लिए जो प्रयत्न किया जाता है, वह प्रायश्चित्त है। जिसके द्वारा चित्त की विशोधि होती है, वह प्रायश्चित्त है।[6] दोषों की लघुता एवं गुरुता के आधार पर प्रायश्चित्त के दस भेद किए गए हैं—१. आलोचना, २. प्रतिक्रमण, ३. मिश्र, ४. विवेक, ५. व्युत्सर्ग, ६. तप, ७. छेद, ८. मूल, ६. अनवस्थाप्य, १०. पारांचित।[7]

तत्त्वार्थ सूत्र में प्रायश्चित्त के नौ भेदों का वर्णन मिलता है। वहां मूल, अनवस्थाप्य और पारांचित्त—इन तीन प्रायश्चित्तों के स्थान पर परिहार एवं उपस्थापना— इन दो प्रायश्चित्तों का उल्लेख मिलता है।[8] दिगम्बर साहित्य में नौ प्रायश्चित्तों का ही उल्लेख है।[9] आचार्य अकलंक कहते हैं कि जीव के परिणाम असंख्येय हैं तथा अपराध भी उतने ही हैं लेकिन प्रायश्चित्त के भेद उतने नहीं हैं। ये भेद व्यवहारनय की अपेक्षा से समुच्चय रूप में कहे गए हैं।[10] प्रायश्चित्तों का विस्तृत विवेचन व्यवहार की पीठिका में मिलता है।[11]

आचार-विशुद्धि की तरतमता के आधार पर निर्ग्रन्थ के पांच प्रकार हैं—१. पुलाक, २. बकुश, ३. कुशील, ४. निर्ग्रन्थ, ५. स्नातक।[12]

निर्ग्रन्थों को दिए जाने वाले प्रायश्चित्तों का क्रम इस प्रकार है—

• पुलाक निर्ग्रन्थ को व्युत्सर्ग तक प्रथम छह प्रायश्चित्त दिए जाते हैं।[13]

• बकुश एवं प्रतिसेवना कुशील में जो स्थविरकल्पी होते हैं, उनके लिए दस तथा जिनकल्पिक के लिए आठ प्रायश्चित्तों का विधान है।[14]

---

१. व्यभा. २१।
२. व्यभा. २२।
३. व्यभा. २३।
४. व्यभा. २६।
५. व्यभा. २७, २८ टी. प. १३, १४।
६. जीभा. ५।
७. व्यभा. ४१७६, ४१८०, ठाणं १०/७३
८. त. ६/२२।
६. मूला. ३६२।
१०. तत्त्वार्थ वार्तिक ६/२२ पृ. ६२२।
११. व्यभा. ५३-१३५।
१२. व्यभा. ४१८४।
१३. व्यभा. ४१८६।
१४. व्यभा. ४१८५।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

• निर्ग्रन्थ के लिए आलोचना एवं विवेक तथा स्नातक के लिए केवल विवेक प्रायश्चित्त विहित है।[1]

चारित्र के आधार पर भी प्रायश्चित्त/व्यवहर्त्तव्य की योजना की गई है।[2]

• सामायिक चारित्र वाले को छेद और मूल छोड़कर आठ प्रायश्चित्त दिए जाते हैं।

जिनकल्पिक सामायिक संयमी को तप पर्यन्त छह प्रायश्चित्त तथा छेदोपस्थापनीय में स्थित जिनकल्पी के लिए मूल पर्यन्त आठ प्रायश्चित्तों का विधान है।

परिहारविशुद्ध स्थविरकल्पी के लिए प्रथम आठ तथा परिहार विशुद्ध जिनकल्पी के लिए प्रथम छह प्रायश्चित्तों का विधान है।

सूक्ष्मसंपराय तथा यथाख्यातचारित्री के लिए आलोचना तथा विवेक--ये दो प्रायश्चित्त विहित हैं।

जब तक तीर्थ का अस्तित्व है तब तक निर्ग्रन्थों में बकुश एवं प्रतिसेवना कुशील तथा संयतों में इत्वरिक सामायिक संयत एवं छेदोपस्थापनीय चारित्र—इनका अस्तित्व रहेगा।[3] भद्रबाहु के बाद अंतिम दो प्रायश्चित्तों का लोप होने पर भी प्रथम आठ प्रायश्चित्तों का व्यवहार तीर्थ की व्यवच्छित्ति तक चलता रहेगा।[4]

प्रायश्चित्तार्ह

तप के आधार पर भी प्रायश्चित्तार्ह के दो भेद किये गए हैं—कृतकरण और अकृतकरण। बेले-तेले आदि तप से अपने आप को भावित करने वाले कृतकरण हैं तथा जो बेले-तेले आदि का तप नहीं कर सकते, वे अकृतकरण हैं। इनके भी दो भेद हैं--सापेक्ष एवं निरपेक्ष। जिन, केवली आदि निरपेक्ष हैं तथा आचार्य, उपाध्याय, भिक्षु आदि सापेक्ष हैं। इनके भेद, प्रभेद एवं विस्तार के लिए देखें व्यभा॰ गा॰ १५६-१७३।

प्रायश्चित्तवाहक

प्रायश्चित्तवाहक के दो भेद हैं—निर्गत तथा वर्तमान। जो छेद आदि प्रायश्चित्तों का वहन कर रहे हैं, वे निर्गत तथा जो तप पर्यन्त प्रथम छह प्रायश्चित्तों में स्थित हैं, वे वर्तमान कहलाते हैं। इनके भेद-प्रभेदों के विस्तृत वर्णन के लिए देखें (गा॰ ४७२-७८ टी॰ प १-३)

प्रायश्चित्तार्ह पुरुष के चार प्रकार भाष्य में मिलते हैं—

(१) उभयतरक (२) आत्मतरक (३) परतरक (४) अन्यतरक।

जो षट्मासी तप करते हुए अग्लान रूप से आचार्य की भी वैयावृत्य करते हैं, वे उभयतर कहलाते हैं। जो केवल तप में शक्ति सम्पन्न होते हैं, वैयावृत्त्य की लब्धि से हीन होते हैं, वे आत्मतरक कहलाते हैं।

जो तप करने में असमर्थ होते हैं, पर आचार्य आदि की वैयावृत्त्य करते हैं, वे परतरक कहलाते हैं।

जिनका तप और वैयावृत्त्य दोनों में सामर्थ्य होता है पर एक समय में एक ही कार्य कर सकते हैं, वे अन्यतरक कहलाते हैं।

आत्मतर एवं परतर—ये दो प्रायश्चित्त वहन के अभिमुख होते हैं लेकिन जो परतर और अन्यतर होते हैं, उनमें प्रायश्चित्त का निक्षेप किया जाता है। इनके विस्तृत वर्णन के लिए देखें—व्यभा॰ ४७९-५०२ टी॰ प ३-११।

प्रायश्चित्तदान में अनेकान्त

विचारशुद्धि एवं विधायक चिंतन में अनेकान्त का महत्त्वपूर्ण स्थान है। जैन आचार्यों ने अनेकान्त के प्रयोग को दर्शन की भूमिका के साथ-साथ व्यवहार की भूमिका पर भी उतारा और प्रत्येक क्षेत्र में इसकी महत्ता को प्रमाणित किया।

प्रायश्चित्त में विषमता को अनेकान्त दृष्टि से स्पष्ट करते हुए भाष्यकार कहते हैं कि इंद्रिय विषयों की प्राप्ति समान होने पर भी एक व्यक्ति उनसे विरक्त होता है और दूसरा आसक्त। अतः इन्द्रियों के विषय प्रधान नहीं, प्रधान है अध्यात्म। मन की

१. व्यभा॰ ४१८७।
२. व्यभा॰ ४१८९-९२।
३. व्यभा॰ ४१९३।
४. व्यभा॰ ४१९२, ४१९३; जी॰१०२।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आसक्ति एवं विरक्ति ही बंध एवं मोक्ष का प्रमाण है, विषय नहीं। प्रायश्चित्त की प्राप्ति में भी आंतरिक परिणाम ही अधिक प्रमाण बनते हैं, इन्द्रियों के अर्थ नहीं। इसीलिए समान रूप से विषय सेवन करने पर भी एक व्यक्ति प्रायश्चित्त का भागी होता है और दूसरा नहीं होता।[१]

सापेक्षता अनेकान्त का प्राण है। निरपेक्षता सत्य को एकांगी बना देती है। सापेक्षता द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव के अनुसार व्यवहार करने का विवेक जागृत करती है। दो व्यक्ति समान रोग से अभिभूत हैं। उनमें जो शरीर से बलवान् है, उसे वमन-विरेचन आदि कर्कश क्रिया करवाई जा सकती है किंतु जो दुर्बल है उसे मृदु क्रिया द्वारा स्वास्थ्य लाभ करवाया जाता है। वैसे ही जो धृति एवं संहनन से युक्त है उसे परिहार तप भी दिया जा सकता है किंतु जो धृति, संहनन आदि से हीन है, उसे सामान्य तप का प्रायश्चित्त दिया जाता है।[२] इस संदर्भ में भाष्यकार ने दो आचार्यों का उल्लेख किया है—सापेक्ष एवं निरपेक्ष। निरपेक्ष आचार्य परिस्थिति को समझे बिना अपराध के आधार पर प्रायश्चित्त देते हैं। उसको सहने में असमर्थ मुनि कभी संयम से तथा कभी जीवन से हाथ धो बैठते हैं। इससे संघ छिन्न-भिन्न हो जाता है। निरपेक्ष आचार्य के पास कोई रहना नहीं चाहता अतः तीर्थ का विच्छेद हो जाता है।[३]

सापेक्ष आचार्य जानते हैं कि केवल अपराध प्रायश्चित्त की तुला नहीं हो सकता। प्रायश्चित्त उतना ही दिया जाना चाहिए, जितना प्रतिसेवक वहन कर सके। अतः वे दोषों के अनवस्था प्रसंग के निवारण में कुशल होते हैं। वे चारित्र की रक्षा एवं तीर्थ की अव्युच्छित्ति में निमित्तभूत बनते हैं। वे करुणा और अनुग्रह की भावना से भावित होते हैं। वे देखते हैं कि प्रतिसेवी दीर्घ तपस्यामय प्रायश्चित्त को वहन करने में समर्थ नहीं है तो उसके समक्ष नानाविध विकल्प प्रस्तुत करते हैं और सामर्थ्य के अनुसार तपोवहन की यथार्थता बताते हैं। जैसे किसी प्रतिसेवी को पांच उपवास, पांच आयंबिल, पांच एकासन, पांच पुरिमड्ढ तथा पांच निर्विकृतिक—ये पांच कल्याणक प्रायश्चित्त स्वरूप आए हों तो उस प्रतिसेवी मुनि के समक्ष नानाविध विकल्प प्रस्तुत करते हैं और यथासामर्थ्य विकल्प को वहन करने की बात कहते हैं। इन पांच कल्याणकों को करने में असमर्थ मुनि को चार, तीन, दो, एक कल्याणक करने को कहते हैं। वह भी नहीं कर सकने पर उसे अंत में एक निर्विकृतिक करने की बात कहते हैं। इस उपक्रम से मुनि की विशुद्धि हो जाती है और वह संयम में स्थिर हो जाता है। उपाय के अभाव में प्रतिसेवी विशोधि को भूलकर और अधिक मलिन हो जाता है। वह संघ-विद्रोही बन जाता है।[४] इस प्रसंग में भाष्यकार ने सापेक्ष एवं निरपेक्ष धनिक का दृष्टान्त प्रस्तुत किया है। सापेक्ष धनिक निर्धन व्यक्ति को उधार दिया हुआ धन भी उपाय से प्राप्त कर लेता है। लेकिन निरपेक्ष धनिक स्वयं की, धन की तथा ऋण लेने वाले—तीनों की हानि कर देता है।[५] उपाय से विशोधि के प्रसंग में भाष्यकार ने वृषभ का दृष्टान्त प्रस्तुत किया है। वृषभ के खेत में घुसने पर यदि खेत का स्वामी उचित उपाय नहीं करता तो वृषभ पूरे खेत को रौंद डालता है। यदि स्वामी धैर्य के साथ उचित उपाय करता है तो वह वृषभ को खेत से बाहर निकालकर खेत की रक्षा कर सकता है। इसी प्रकार आचार्य प्रतिसेवी की विशोधि यदि उचित उपायों द्वारा करते हैं तो वे व्यक्ति के संयम को बचा लेते हैं और जो ऐसा नहीं कर पाते वे गुरु हानि में रहते हैं।

प्रतिसेवी जब अपराधों की आलोचना के लिए गुरु के समक्ष उपस्थित होता है, उस समय यदि आचार्य उसको प्रोत्साहित करे कि तुम धन्य हो, कृतपुण्य हो क्योंकि तुमने गुप्त अपराधों को प्रकट करने का उत्कट साहस किया है। जो सूक्ष्मतम अपराध की आलोचना करता है, वह धन्य-धन्य है। यह सुनकर आलोचक प्रसन्न होकर ऋजुता से अपनी सभी स्खलनाओं एवं अपराधों को प्रकट कर देता है।

आलोचना के समय आचार्य उसको प्रताड़ित करे या तर्जना दे कि तुम सदा स्खलना करते ही रहते हो, तुम ऐसे हो, वैसे हो आदि तो व्यक्ति चाहते हुए भी सम्यक् आलोचना नहीं कर पाता और वह अपने दोषों को छिपा लेता है। कभी-कभी असह्य ताड़ना से कुपित होकर वह आचार्य का घात भी कर सकता है तथा कलह की उद्भावना कर संघ में असमाधि उत्पन्न कर सकता है क्योंकि कुपित व्यक्ति के लिए कुछ भी असंभव नहीं होता। सापेक्ष-निरपेक्ष व्यवहार के संदर्भ में भाष्यकार ने भिक्षुणी,

१. व्यभा. १०२८, १०२९ टी. प. १५।
२. व्यभा. ५४४, ५४५।
३. व्यभा. ४२०२।
४. व्यभा. ४२०३-४२०८।
५. व्यभा ४१९७-४२०१।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्याध एवं गाय के दृष्टान्त प्रस्तुत किए हैं।[1] (देखें--परिशिष्ट ८ कथा सं. २८-३३) इन दृष्टान्तों से स्पष्ट है कि सापेक्ष एवं निरपेक्ष व्यवहार से मनुष्य ही नहीं, पशु भी प्रभावित होते हैं।

समान अपराध होने पर भी गीतार्थ-अगीतार्थ, यतना-अयतना, संहनन-संहननहीनता आदि के आधार पर कम-ज्यादा प्रायश्चित्त भी दिया जा सकता है।[2] एक ही गलती में प्रायश्चित्तदान की विविधता का हेतु पक्षपात नहीं, अपितु विवेक है। भाष्यकार ने प्रायश्चित्त की विभिन्नता एवं विशोधि के प्रसंग में रजक और जलघट का दृष्टान्त प्रस्तुत किया है। जैसे रजक वस्त्रों के मल को जलघट से मलरहित करता है वैसे ही आचार्य प्रायश्चित्त देकर दोषों का अपनयन करते हैं। मलापनयन में मल के अनुसार जल का प्रयोग होता है। इस प्रसंग में निम्न चतुर्भंगी द्रष्टव्य है--

एक वस्त्र एक जलकुंभ से स्वच्छ होता है।

एक वस्त्र अनेक जलकुंभों से स्वच्छ होता है।

अनेक वस्त्र एक जलकुंभ से स्वच्छ होते हैं।

अनेक वस्त्र अनेक जलकुंभों से स्वच्छ होते हैं।

घर पर जलकुंभों से जो वस्त्र स्वच्छ नहीं होता, उसे नदी, तालाब आदि पर काष्ठपट्टिका से पीट-पीटकर स्वच्छ किया जाता है। उसी प्रकार षाण्मासिक प्रायश्चित्त से जो विशोधि नहीं होती उसकी विशोधि मूल, छेद, अनवस्थाप्य तथा पारांचित से होती है। प्रतिसेवक की राग-द्वेष की हानि-वृद्धि के आधार पर मासिक आदि तपःवृद्धि तथा छेद आदि प्रायश्चित्तों का आलम्बन लिया जाता है।[3] इस संदर्भ में भाष्यकार ने वातादी रोग एवं घृतकुंभ तथा औषध आदि की चतुर्भंगी भी प्रस्तुत की है।[4]

प्रश्न उपस्थित होता है कि राग-द्वेष की वृद्धि से जैसे प्रायश्चित्त बढ़ता है वैसे ही राग-द्वेष की हानि से क्या प्रायश्चित्त कम भी होता है? समाधान प्रस्तुत करते हुए ग्रन्थकार कहते हैं कि मंद अनुभाव से अनेकविध अपराध हो जाने पर भी उनकी विशोधि अल्प तप से हो जाती है। दशम प्रायश्चित्त जितना अपराध सेवन कर मुनि दसवें, नौवें यावत् निर्विकृतिक प्रायश्चित्त ग्रहण कर भी विशुद्ध हो जाता है। उसी प्रकार अन्यान्य अपराध पर भी अल्प-अल्पतम प्रायश्चित्तों से विशुद्ध हो जाता है।[5]

प्रतिसेवना की भिन्नता होने पर भी प्रतिसेवक (गीतार्थ, अगीतार्थ) तथा अध्यवसाय के भेद से समान प्रायश्चित्त देने पर भी तुल्य शोधि हो सकती है। निम्न उद्धरण प्रायश्चित्तदान में अनेकान्त एवं सापेक्षता के श्रेष्ठ उदाहरण कहे जा सकते हैं--

एक व्यक्ति ने तीव्र अध्यवसाय से मासिक प्रायश्चित्त जितनी प्रतिसेवना की, उसको एक मास का प्रायश्चित दिया जा सकता है।

दूसरे ने मंद अध्यवसाय से दो मास प्रायश्चित्त जितनी प्रतिसेवना की, उसको प्रत्येक मास के पन्द्रह दिनों के अनुपात से एक मास का प्रायश्चित्त दिया जा सकता है।

तीसरे ने मंदतम अध्यवसाय से तीन मास प्रायश्चित्त जितनी प्रतिसेवना की, उसको प्रत्येक मास के दस-दस दिनों के अनुपात से एक मास का प्रायश्चित्त दिया जा सकता है।

चौथे ने अतिमंदतम अध्यवसाय से चार मास प्रायश्चित्त जितनी प्रतिसेवना की, उसको प्रत्येक मास के साढ़े सात दिनों के अनुपात से एक मास का प्रायश्चित्त दिया जा सकता है।

इस बात की पुष्टि में भाष्यकार ने 'पांच-वणिक एवं पन्द्रह गधे' का दृष्टान्त प्रस्तुत किया है। देखें परिशिष्ट नं. ८ कथा सं. १५।

कोई व्यक्ति अनेक मासिक प्रायश्चित्त स्थानों का सेवन कर एक बार में ही सभी की आलोचना कर लेता है और आगे प्रतिसेवना न करने का मानस बना लेता है, वह मासिक प्रायश्चित्त से मुक्त हो सकता है। किन्तु जो मुनि बार-बार प्रतिसेवना करके आलोचना करता है उसे उसी प्रतिसेवना के लिए मूल और छेद का प्रायश्चित्त भी प्राप्त हो सकता है।[6] इस बात को स्पष्ट

१. व्यभा ५८०, ५८१ टी. प. ३६-४१, १०४४-४६।
२. व्यभा ४०२६; टी. प. ३०, तुल्येऽप्यपराधे दारुणानामन्यत् प्रायश्चित्तमन्यत् भद्रकाणाम्।
३. व्यभा ५०५-५०८।
४. व्यभा ४४०-४२।
५. व्यभा ३३१, ३३२, टी. प. ४६, ५०।
६. व्यभा ३३६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करने के लिए भाष्यकार ने गंजे पनवाड़ी की कथा को प्रस्तुत किया है (देखें परिशिष्ट नं. ८ कथा सं. १८)।

जो मुनि अशुभ परिणामों से निष्कारण ही मासिक प्रायश्चित्त जितनी प्रतिसेवना करता है, वह एक पूरे मास के प्रायश्चित्त से विशुद्ध होता है, क्योंकि वह दुष्ट अध्यवसाय के कारण प्रतिसेवना से प्रत्यावृत्त नहीं होता।

जो मुनि पुष्ट आलंबन के आधार पर शुभ परिणामों से बहुमासिक प्रायश्चित्त जितनी प्रतिसेवना करता है, वह एक मास के प्रायश्चित्त से भी विशुद्ध हो जाता है क्योंकि ऐसा व्यक्ति दंड पाकर अपनी आत्मा में दुःखी होता है, क्लेश पाता है।

दुष्ट अध्यवसाय से प्रतिसेवना कर जो मुनि आत्मनिंदा करता है, उसे भी बहुमासिक प्रायश्चित्त जितनी प्रतिसेवना में एक मास का ही दंड दिया जाता है।[1]

भाष्य में प्रायश्चित्त में अनेकान्त के और भी अनेक उदाहरण मिलते हैं। प्रायश्चित्त में अनेकान्त पद्धति के अनुसरण से शासन की अव्यवच्छित्ति और साधकों में शासन-प्रतिबद्धता के भाव वृद्धिंगत होते हैं। जैन आचार्य इस दृष्टि से बहुत सफल हुए हैं।

आलोचना

प्रायश्चित्त के भेदों में आलोचना का प्रथम एवं महत्त्वपूर्ण स्थान है। गलती होने पर उसे सरलतापूर्वक गुरु के समक्ष प्रकट करना आलोचना है। दूसरों के समक्ष अपनी गलती प्रकट करने से व्यक्ति के आगे का रास्ता प्रशस्त हो जाता है। भाष्यकार ने आलोचना के बारे में सर्वांगीण विवेचन प्रस्तुत किया है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी आलोचना का जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान है। आलोचना से होने वाले विशेष परिणामों का उल्लेख उत्तराध्ययन सूत्र में मिलता है—[2]

- आंतरिक शल्यों की चिकित्सा।
- सरल मनोभाव की विशेष उपलब्धि।
- तीव्रतर विकारों से दूर रहने की क्षमता और पूर्वसंचित विकार के संस्कारों का विलय।

आलोचना के तीन प्रकार हैं—

१. विहारालोचना

२. उपसंपदालोचना

३. अपराधालोचना

इनके विस्तृत वर्णन के लिए देखें—व्यभा गा. २३३-३०४।

दिगम्बर साहित्य में आलोचना के दो भेद मिलते हैं —

१. ओघ २. पदविभाग अर्थात् सामान्य और विशेष।

आलोचना के लाभ

जैन आगमों में अपनी स्खलना को गुरु के सामने स्पष्ट रूप से कहने का निर्देश स्थान-स्थान पर मिलता है। यह मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि व्यक्ति जब अपने मार्गदर्शक के समक्ष अपराध स्वीकार कर लेता है तब वह हल्का हो जाता है। भाष्यकार ने अनेक स्थलों पर आलोचना से होने वाले गुणों का उल्लेख किया है। वे दृष्टान्त द्वारा इस बात को समझाते हुए कहते हैं—चिकित्सा में निष्णात वैद्य भी स्वयं की चिकित्सा स्वयं नहीं करता। वह अन्य वैद्य के पास चिकित्सा करवाता है। इसी प्रकार आचार्य भी अन्य आचार्य के पास विशोधि के लिए जाते हैं और बालक की भांति ऋजुभावों से आलोचना करते हैं। उस समय वे माया और मद से शून्य हो जाते हैं।[3]

आलोचना करने के निम्न गुण हैं[4]—

---

१. व्यभा. ३४०।

२. उ. २९। ६।

३. व्यभा. ४२९६-९९।

४. व्यभा ४३०१, भआ ४११।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

• पांच प्रकार के आचार का सम्यग् पालन होता है।

• विनय गुण का प्रवर्तन होता है।

• आलोचना करने की परिपाटी का उद्दीपन होता है।

• आत्मा को निःशल्य कर दिया जाता है।

• संयम का अनुपालन होता है।

• आर्जव आदि गुणों का उपबृंहण होता है।

• मैं निःशल्य हो गया हूं—ऐसी परम तुष्टि होती है।

• मैंने आलोचना नहीं की—इस परितप्ति का शमन हो जाता है।

ग्रंथकार ने प्रकारान्तर से भी आलोचना की निष्पत्तियों का उल्लेख किया है—

लघुता : जैसे भारवाहक अपने भार को उतारकर स्वयं को हल्का अनुभव करता है, वैसे ही आलोचक अपने शल्य का उद्धरण कर लघु एवं हल्का हो जाता है।

आह्लाद : उससे प्रमोदभाव उत्पन्न होता है। अतिचार ताप से तप्त व्यक्ति अपने अतिचार की तप्ति का अपनयन वैसे ही कर देता है जैसे मलयगिरि के पवन के संसर्ग से ताप का हरण होता है।

स्वपरप्रसन्नता : आलोचना से व्यक्ति स्वयं को दोषों से मुक्त अनुभव करता है। यह देखकर दूसरे भी आलोचना के अभिमुख होते हैं और दोषों से मुक्त हो जाते हैं।

आर्जवता : स्वयं के दोषों को दूसरों के समक्ष प्रकट करना आर्जव धर्म की प्रतिपालना है।

विशोधि : अतिचार के पंक से मलिन चारित्र की शुद्धि प्रायश्चित्त के जल से होती है।

दुष्करकरण : प्रतिसेवना करना दुष्करकरण नहीं है, उसकी आलोचना करना दुष्कर कार्य है क्योंकि इसे वही व्यक्ति कर सकता है, जो विशेष सामर्थ्य से सम्पन्न एवं मोक्षाभिलाषी है।[1]

दिगम्बर परम्परा में प्रायश्चित्त करने के निम्न लाभ बताए गए हैं—

१. प्रमाद का निवारण।

२. मानसिक प्रसन्नता।

३. निःशल्यता।

४. दोष की पुनरावृत्ति का निवारण।

५. मर्यादा-पालन।

६. संयम में दृढ़ता।

७. आराधना।[2]

अकलंक के अनुसार बहुत बड़ा तप भी आलोचना के बिना वैसे ही फल नहीं देता जैसे विरेचन से मलशुद्धि किए बिना खाई हुई औषधि।[3]

आलोचनार्ह

जैन आगमों में व्यवहारी/आलोचनाप्रदाता के निम्न गुण प्रसिद्ध हैं—

आचारवान्—पांचों प्रकार के आचार से सम्पन्न।

अवधारवान्—आलोचक के द्वारा आलोच्यमान पूरे विषय को धारण करने में समर्थ। भगवती आराधना के अनुसार चौदह पूर्व, दसपूर्व एवं नवपूर्व का धारक, महामतिमान्, सागर के समान गंभीर, कल्प एवं प्रकल्प का धारक आचार्य आधारवान् या

---

१. व्यभा ३१७।

२. तत्त्वार्थवार्तिक ९/२२ पृ. ६२०।

३. तत्त्वार्थवार्तिक ९/२२ पृ. ६२१।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूर्व, दसपूर्व एवं नवपूर्व का धारक, महामतिमान्, सागर के समान गंभीर, कल्प एवं प्रकल्प का धारक आचार्य आधारवान् या अवधारवान् होता है।[1]

व्यवहारवान्–पांचों प्रकार के व्यवहारों का ज्ञाता तथा उनके आधार पर प्रायश्चित्त देने में कुशल।

अपव्रीडक–आलोचक यदि लज्जावश अतिचारों का गोपन करता है तो अनेक प्रयोगों के द्वारा उसकी लज्जा का अपनयन करने वाला।

प्रकुर्वी–सम्यक् प्रायश्चित्त देकर आलोचक की विशोधि करने वाला।

अपरिस्रावी–आलोचना करने वाले के आलोचित दोषों को दूसरों के सामने प्रकट नहीं करने वाला।[2]

निर्यापक–आलोचक को बड़े प्रायश्चित्त का निर्वहन कराने में कुशल।

अपायदर्शी–आलोचक को इहलोक-परलोक के अपाय बताकर प्रायश्चित्त वहन करने के लिए प्रोत्साहित करने वाला।

ठाणं में अंतिम तीन गुणों में क्रम-व्यत्यय है। वहां अपरिस्रावी, निर्यापक एवं अपायदर्शी–यह क्रम मिलता है।[3] भगवती आराधना में विस्तार से इन गुणों का उल्लेख मिलता है।[4]

ठाणं के दसवें स्थान में दस गुणों का उल्लेख है।[5] प्रियधर्मा एवं दृढ़धर्मा ये दो गुण अतिरिक्त मिलते हैं वहां इन गुणों से युक्त आचार्य या बहुश्रुत ही दूसरों को आलोचना या प्रायश्चित्त दे सकता है।

भाष्यकार ने आलोचनार्ह साध्वी की योग्यता के निम्न मानक प्रस्तुत किए हैं–

गीतार्थ–सूत्र, अर्थ और तदुभय में निष्णात।

कृतकरण– अनेक बार जिसने आलोचना दी हो।

प्रौढ़–जो सूत्र और अर्थ में समर्थ एवं प्रायश्चित्त देने में समर्थ हो।

परिणामक–अतिपरिणामक या अपरिणामक न हो।

गंभीर–आलोचक की महान् प्रतिसेवना को सुनकर भी अप्रतिस्रावी हो।

चिरदीक्षित–चिरकाल से संयमपर्याय का पालन करने वाली हो।

वृद्ध–ज्ञान, संयमपर्याय तथा वय में वृद्ध हो।

इन गुणों से युक्त साध्वी आलोचनार्ह होती है। आलोचनार्ह श्रमण के लिए भी इन गुणों का होना आवश्यक है।[6]

आलोचक के गुण

भाष्य में आलोचक के निम्न गुणों का उल्लेख मिलता है–

जाति सम्पन्न–जो जाति सम्पन्न होता है, वह प्रायः अकृत्य नहीं करता और यदि प्रमादवश कर लेता है तो उसका उचित प्रायश्चित्त कर शुद्ध हो जाता है।

कुल सम्पन्न–जो कुल सम्पन्न होता है, वह प्राप्त प्रायश्चित्त का सम्यग् निर्वहन करता है।

विनय सम्पन्न–जो विनय संपन्न होता है, वह सम्यग् आलोचना करता है।

ज्ञान सम्पन्न–जो ज्ञान सम्पन्न होता है, वह श्रुत के अनुसार सम्यग् आलोचना करता है। वह जान लेता है कि अमुक श्रुत के आधार पर मुझे प्रायश्चित्त दिया गया है। अब मैं शुद्ध हो गया हूँ।

दर्शन सम्पन्न–जो दर्शन सम्पन्न होता है, वह प्रायश्चित्त से होने वाली विशुद्धि पर श्रद्धा रखता है।

चारित्र सम्पन्न–जो चारित्र सम्पन्न होता है वह जानता है कि बिना सम्यग् आलोचना किए विशोधि नहीं होती।

---

१. भआ. ४३०।

२. व्यभा. ५२०, भ. २५/५५४ : अट्ठहिं ठाणेहिं संपन्ने अणगारे अरिहति आलोयणं पडिच्छित्तए, तं जहा–आयारवं, आधारवं, ववहारवं, उव्वीलए, पकुव्वए अपरिस्सावी, निज्जवए, अवायदंसी।

३. ठाणं ८/१८।

४. भआ. ४१९-५२८।

५. ठाणं १०/७२।

६. व्यभा. २३७८।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षान्त–जो क्षान्त–क्षमाशील होता है, वह गुरु आदि के कठोर प्रायश्चित्त को भी सम्यक् मानता है।

दान्त–जो दान्त होता है, वह प्रायश्चित्त रूप में प्राप्त तपस्या का सम्यग् निर्वहन करता है।

अमायी–जो अमायी होता है, वह कुछ भी छुपाए बिना आलोचना करता है।

अपश्चात्तापी–जो अपश्चात्तापी होता है, वह यह कभी नहीं सोचता कि मैंने अभी आलोचना करके उचित कार्य नहीं किया। मैं प्रायश्चित्त को कैसे वहन करूंगा? वह मानता है–मैं कृत-पुण्य हूं कि मैंने दोषों का प्रायश्चित्त कर लिया।[१]

आलोचना का क्रम

प्रतिसेवना होने पर साधु को अपने गच्छ में आचार्य के पास आलोचना करनी चाहिए। उनके अभाव में क्रमशः उपाध्याय, प्रवर्त्तक, स्थविर, गणावच्छेदक के पास आलोचना करनी चाहिए। अपने गच्छ में इन पांचों के न होने पर अन्य सांभोजिक गण के पास जाना चाहिए। वहां भी आचार्य आदि के क्रम से आलोचना करने का क्रम निर्दिष्ट है। क्रम का उल्लंघन करने पर चार लघु मास के प्रायश्चित्त का विधान है।[२]

अन्य सांभोजिक गण के आचार्य आदि के अभाव में असांभोजिक संविग्न गण के आचार्य के पास आलोचना करनी चाहिए। उनकी अविद्यमानता में क्रमशः पार्श्वस्थ, गीतार्थ, सारूपिक,[३] पश्चात्कृत[४] गीतार्थ के पास आलोचना करनी चाहिए। पश्चात्कृत को इत्वरिक सामायिक व्रत देकर भी आलोचना की जा सकती है, जिससे उसकी वंदना या कृतिकर्म किया जा सके।

इन सबके अभाव में भरुकच्छ के कोरंटक[५] उद्यान या गुणशिल उद्यान में जाकर तेले के द्वारा देवता का आह्वान कर सम्यक्त्वी देवता के समक्ष आलोचना करनी चाहिए। यदि उस देवता के स्थान पर कोई दूसरा देवता उत्पन्न हो गया है तो उसको आह्वान करने पर वह देवता कहता है कि अभी महाविदेह में तीर्थंकर को पूछकर आता हूं। वह महाविदेह क्षेत्र में तीर्थंकर से पूछकर साधु को प्रायश्चित्त देता है। उन देवताओं के अभाव में तीर्थंकर प्रतिमा के समक्ष स्वयं आलोचना करके स्वयं ही प्रायश्चित्त ग्रहण कर ले। अथवा पूर्व दिशा की ओर अभिमुख होकर अर्हत् एवं सिद्ध की साक्षी से अपनी प्रतिसेवना की आलोचना कर स्वयं ही प्रायश्चित्त ग्रहण करे।[६]

आलोचना करने की विधि

आलोचक सर्वप्रथम अपने नए वस्त्रों से अथवा नए प्रातिहारिक वस्त्रों से निषद्या तैयार करे। उस पर आचार्य पूर्वाभिमुख होकर बैठें। आलोचक दक्षिण या उत्तराभिमुख होकर खड़ा रहे। यदि आचार्य उत्तराभिमुख विराजित हों तो आलोचक वामपार्श्व में पूर्वाभिमुख होकर खड़ा रहे। यदि आलोचना-प्रदाता तीर्थंकर आदि विशिष्ट व्यक्तियों के विहरण की दिशा के अभिमुख बैठे हों तो आलोचक द्वादशावर्त्त वंदनक देकर, हाथ जोड़कर खड़ा रहे अथवा उत्कटुक आसन में बैठे और आलोचना करे। यदि उसकी प्रतिसेवना अति विस्तृत हो और वह लम्बे समय तक उत्कटुक आसन में बैठने में असमर्थ हो अथवा वह अर्श रोग से आक्रान्त हो तो वह गुरु को निवेदन कर निषद्या पर, औपग्रहिक पादप्रोंछन पर अथवा यथायोग्य आसन पर बैठकर बद्धाञ्जलि होकर आलोचना करे।[७] जैसे एक भोला बालक अपने माता-पिता के समक्ष ऋजुता से अच्छा-बुरा सब कुछ बता देता है वैसे ही आलोचक भी गुरु के समक्ष माया और अहंकार से शून्य होकर ऋजुभाव से अपनी सारी प्रतिसेवना छोटी या बड़ी स्पष्ट रूप से निवेदित कर दे।[८]

---

१. व्यभा. ५२१, ५२२, टी. प, १८-१६ ; ठाणं ८/१८, १०/७१; भ. २५/५५३।
२. व्यभा. ६६५।
३. जो संघ से बाहर निकलने पर भी मुनि वेश को नहीं छोड़ते, वे सारूपिक कहलाते हैं।
४. जो दीक्षित होकर पुनः उत्प्रव्रजित हो गए, वे पच्छाकड़ (पश्चात्कृत) कहलाते हैं।
५. कोरण्टक उद्यान का उल्लेख इसलिए किया है क्योंकि वहां तीर्थंकर मुनिसुव्रत स्वामी अनेक बार समवसृत हुए तथा अनेक साधु-साध्वियों को प्रायश्चित्त दिया। वहां स्थित सम्यक्त्वी देवता ने यह अनेक बार देखा है अतः उसको आह्वान कर आलोचना का निर्देश है।
६. व्यभा. ६७५, ६७६।
७. व्यभा. ३१५।
८. व्यभा. ४२६६।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आलोचना के दोष

आकम्प्य–आलोचनाचार्य की वैयावृत्त्य करके उनकी कृपा प्राप्त कर आलोचना करना।

अनुमान्य–'ये आचार्य मृदुदंड देंगे', ऐसा सोचकर उनके पास आलोचना करना। निशीथ चूर्णि में इसका अर्थ 'मैं दुर्बल हूं अतः मुझे कम प्रायश्चित्त दें' ऐसा अनुनय कर आलोचना करना किया है।[1]

यद्दृष्ट–उसी दोष की आलोचना करना, जो दूसरों के द्वारा या आचार्य के द्वारा दृष्ट या ज्ञात है।

बादर–अवज्ञा के भय से केवल स्थूल दोषों की आलोचना करना, सूक्ष्म दोषों को छुपाना।

सूक्ष्म–केवल सूक्ष्म दोष की आलोचना करना, स्थूल की नहीं।

छन्न–प्रच्छन्नरूप से आलोचना करना अथवा मंद शब्दों में आलोचना करना, जिससे गुरु स्पष्ट न सुन सकें।

शब्दाकुल–जोर-जोर से बोलकर आलोचना करना, जिससे कि अगीतार्थ मुनि भी उसे सुन सके।

बहुजन–इसके तीन अर्थ मिलते हैं–

(१) अनेक लोगों के बीच आलोचना करना।

(२) जहां आलोचना करने वाले अधिक हों, वहां आलोचना करना।

(३) एक के आगे आलोचना कर फिर दूसरे के पास भी आलोचना करना।

अव्यक्त–अगीतार्थ के पास आलोचना करना।

तत्सेवी–उसी गुरु के पास आलोचना करना, जो उस दोष का सेवन कर चुका है अथवा सेवन करता है। इससे शिष्य सोचता है कि गुरु स्वयं उस दोष का प्रतिसेवी है इसलिए मुझे अल्प प्रायश्चित्त देंगे।[2] षट्प्राभृत में तत्सेवी का अर्थ–जिस दोष का प्रकाशन किया है उसका पुनः सेवन करना किया है।[3] तत्त्वार्थवार्तिक में आलोचना के दस दोषों में कुछ अंतर मिलता है।[4]

आलोचना का काल

दोनों पक्षों की अष्टमी, नवमी, षष्ठी, चतुर्थी एवं द्वादशी–ये अप्रशस्त तिथियां हैं।[5] इसके अतिरिक्त कुछ नक्षत्र भी आलोचना आदि के लिए अप्रशस्त माने गए हैं। सन्ध्यागत (चौदहवां-पन्द्रहवां) नक्षत्र में आलोचना करने पर कलह का उद्भव होता है। विलंबी नक्षत्र (सूर्य द्वारा परिभुक्त होकर त्यक्त) में कुभोजन की प्राप्ति, विड्डारिक नक्षत्र में शत्रु की विजय, रविगत नक्षत्र में अशांति, संग्रह (क्रूर ग्रह से आक्रान्त) नक्षत्र में संग्राम का उद्भव, राहुहत (सूर्य एवं चन्द्रग्रहण) नक्षत्र में मृत्यु तथा ग्रहभिन्न (जिसके मध्य से ग्रह चला गया) नक्षत्र में रक्तवमन होता है। अतः ये सात नक्षत्र आलोचना के योग्य नहीं हैं।[6]

अप्रशस्त तिथियों के अतिरिक्त सभी तिथियां प्रशस्त हैं। व्यतिपात आदि दोष वर्जित दिवस तथा प्रशस्त मुहूर्त्त एवं करण में आलोचना करनी चाहिए। आलोचक को उच्चस्थानगत ग्रहों में अथवा बुध, शुक्र, बृहस्पति, चन्द्र आदि सौम्य ग्रहों में, इन ग्रहों से सम्बन्धित राशियों में तथा इन ग्रहों के द्वारा अवलोकित लग्नों में आलोचना करनी चाहिए।[7]

आलोचना का स्थान एवं दिशा

आलोचना करने में स्थान एवं दिशा आदि का विवेक भी आवश्यक है। अप्रशस्त स्थान अर्थात् भग्नगृह अथवा रुद्रदेव का मंदिर,[8] अमनोज्ञ तिल, माष, कोद्रव आदि धान्यों के ढेर के निकट तथा अमनोज्ञ वृक्ष, जैसे–निष्पत्रक करीर, बदरी, बबूल, दवदग्ध

१. निचू ४ पृ. ३६३।
२. व्यभा. ५२३ ; भ. २५/५५२ : आकंपइत्ता अणुमाणइत्ता, जं दिट्ठं बादरं च सुहुमं वा।
छन्नं सद्दाउलयं, बहुजणअव्वत्त तस्सेवी॥ भआ. ५६४-६०८
३. षट्प्राभृत १८/ श्रुतसागरीय वृत्ति पृ. ९
४. तत्त्वार्थवार्तिक ९/२२ पृ. ६२०
५. व्यभा. ३०९।
६. व्यभा. ३१०, ३११।
७. व्यभा. ३१४।
८. व्यभा. ३०६।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वृक्ष, क्षार एवं कटुरस वाले वृक्षों के नीचे आलोचना नहीं करनी चाहिए।[1] ऊसरभूमि, भृगुप्रपात, दग्धस्थल, विद्युत् आदि द्वारा प्रहत स्थल—ये सारे अप्रशस्त स्थान हैं। तांबा, त्रपु, शीशक के ढेर भी आलोचना के लिए वर्जनीय माने गए हैं।[2] शून्यगृह, अरण्य, प्रच्छन्नस्थान, उपाश्रय के भीतर या मध्य का स्थान, ध्रुवकर्मिकों के काम का स्थान आलोचना के लिए अयुक्त है।[3]

शालि आदि प्रशस्त धान्यों का ढेर तथा मणि, स्वर्ण, मौक्तिक, वज्र, वैडूर्य, पद्मराग आदि का ढेर आलोचना के लिए प्रशस्त है। इक्षुवन, फलित-पुष्पित आराम, शालिवन, चैत्यगृह, अखंडगृह, प्रतिध्वनित होने वाला स्थान, प्रदक्षिणा आवर्तोदक वाली नदी या कमल-सरोवर आदि आलोचना के प्रशस्त क्षेत्र हैं।[4]

आलोचना के लिए तीन दिशाएं प्रशस्त मानी गई हैं—पूर्व, उत्तर अथवा वे दिशाएं जिनमें अर्हत्-केवली, मनःपर्यवज्ञानी, चतुर्दशपूर्वी, त्रयोदशपूर्वी, द्वादशपूर्वी एकादशपूर्वी, दशपूर्वी, नवपूर्वी तथा युगप्रधान आचार्य विचरण कर रहे हों।[5]

आलोचना विशोधि का सशक्त उपक्रम है। आलोचना तब ही ठीक हो सकती है, जब आलोचक स्वस्थचित्त होता है। जब व्यक्ति अन्यमनस्क होता है या चित्त में संतुलन नहीं होता तब वह अनर्गल प्रलाप करता है तथा अपने दोषों का उचित रूप से उद्भावन नहीं कर सकता।

चित्त की अवस्थाएं

चित्त की अनेक अवस्थाएं हैं। भगवान् महावीर ने कहा—**'अणेगचित्ते खलु अयं पुरिसे'**—यह पुरुष अनेक चित्तवाला होता है।[6] चित्त की मुख्य दो अवस्थाएं हैं—समाधिस्थ एवं असमाधिस्थ अर्थात् स्वस्थ चित्त एवं अस्वस्थ चित्त। मनोविज्ञान की भाषा में इसे सामान्य एवं असामान्य चित्त कहा जा सकता है।

भाष्यकार ने अस्वस्थ चित्त की तीन अवस्थाओं का वर्णन किया है—

१. क्षिप्तचित्त, २. दृप्तचित्त, ३. उन्मत्तचित्त

क्षिप्तचित्त

क्षिप्तचित्त का अर्थ है—चित्त-विप्लव, चित्त की रुग्णता। भाष्यकार के अनुसार निम्न कारणों से व्यक्ति क्षिप्त होता है—अनुराग, भय और अपमान।[7]

१. अनुराग—किसी प्रिय व्यक्ति का अनिष्ट या मरण जानकर विक्षिप्त होना, जैसे—पति का अकस्मात् मरण सुनकर भार्या का क्षिप्तचित्त होना।[8]

२. भय—विक्षिप्तता का एक बहुत बड़ा कारण भय है। भाष्यकार ने भय के अनेक कारणों का उल्लेख किया है। सिंह, मदोन्मत्त हाथी, शस्त्र आदि देखकर भयभीत हो जाना, मेघ-गर्जन, बिजली का कड़कना आदि भयंकर आवाज सुनकर भयभीत होना, आग आदि को देखकर भयाक्रान्त होना आदि।[9]

आधुनिक मनोवैज्ञानिकों ने इन्हें असंगत भय माना है। उन्होंने भय से होने वाले मानसिक रोगों की एक लम्बी सूची प्रस्तुत की है, जिसे फोबिया कहते हैं। उनके अनुसार भय के कुछ कारण ये हैं—ऊंचे स्थान का भय, खुले स्थान का भय, पीड़ा से भय, तूफान, बिजली एवं गर्जन से भय, बंद स्थानों से भय, स्त्रियों से भय, रक्त से भय, जल से भय, कीटाणुओं से भय, अकेलेपन से भय, शव का भय, अंधेरे से भय, भीड़ से भय, रोग से भय, अग्नि से भय, भोजन से भय, जानवरों से भय, रोग-संक्रमण से भय।[10]

---

१. व्यभा. ३०७, भआ. ५५७।
२. व्यभा. ३०८।
३. व्यभा. २३६९, २३७०।
४. व्यभा. ३१३।
५. व्यभा. ३१४ ; भआ तु. ५६२।
६. आयारो ३/४२।
७. व्यभा. १०७८, १०७९।
८. व्यभा. १०८०-८५।
९. व्यभा. १०८६।
१०. आधुनिक असामान्य मनोविज्ञान पृ. २५३।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भय से क्षिप्त होने में भाष्यकार ने सोमिल ब्राह्मण का उदाहरण दिया है। गजसुकुमाल कृष्ण के लघुभ्राता थे। उन्होंने प्रव्रज्या के प्रथम दिन ही एकरात्रिकी श्मशान प्रतिमा स्वीकार की। सोमिल ब्राह्मण वहाँ गया, उसने अपने जामाता को मुनि वेष में देखा। उसका मन प्रतिशोध से भर गया। वह गजसुकुमाल की मृत्यु का कारण बना। गजसुकुमाल की मृत्यु के बाद कृष्ण के भय से सोमिल ब्राह्मण क्षिप्तचित्त हो गया।[१]

अपमान

अपमान या असम्मान क्षिप्तचित्तता का बहुत बड़ा कारण है। जैसे सारी सम्पत्ति छीन लेने पर नगरसेठ का विक्षिप्त होना। अथवा वाद-विवाद में पराजित होने पर व्यक्ति या मुनि का विक्षिप्त हो जाना।[२]

क्षिप्तचित्तता के निवारण के उपाय

अनुराग से उत्पन्न क्षिप्तचित्तता को मरण की अनिवार्यता और संसार की अस्थिरता का बोध कराने से दूर किया जा सकता है।

हिंस्र पशुओं को देखकर भयाक्रान्त होने पर आचार्य हस्तिपाल, सिंहपाल आदि को बुलाकर हाथी मंगाकर दूसरे छोटे मुनि को दिखाते हैं। वे डरते नहीं तब उनके उदाहरण से क्षिप्तचित्त मुनि के भय को दूर करते हैं।

यदि शस्त्र और अग्नि को देखकर क्षिप्तचित्त हुआ हो तो विद्या से शस्त्र और अग्नि का स्तंभन कर क्षिप्त मुनि के देखते-देखते उस शस्त्र और अग्नि को पैरों तले रौंद कर दिखाते हैं। अथवा हाथों को पानी से भिगोकर अग्नि का स्पर्श करके कहते हैं—कहाँ है अग्नि का भय?

यदि गर्जारव के भय से क्षिप्त हुआ हो तो स्थविर मुनि आकाश में शुष्क चर्म का विकर्षण-आकर्षण करते हैं और उससे गर्जारव के सदृश शब्द उत्पन्न कर उसे स्वस्थ करते हैं।

वाद में पराजित होने पर जो क्षिप्तचित्त हो जाता है, उसके समक्ष उस विजयी को लाकर कहते हैं—अरे! वास्तव में जीत तुम्हारी हुई थी। लोगों ने उसे समझा नहीं। देख, यह स्वयं अपनी पराजय स्वीकार करता है। शिष्य इस प्रतिकार को सही मानकर स्वयं स्वस्थ हो जाता है।

ये उदाहरण क्षिप्तचित्त को स्वस्थ करने के मनोवैज्ञानिक कारणों पर आधारित हैं। आज का मनोविज्ञान भी इन कारणों का प्रयोग करता है।[३]

इसके अतिरिक्त वायु के क्षुभित होने पर तथा दैविक उपद्रव से भी व्यक्ति क्षिप्त हो जाता है। वायु रोग से उत्पन्न विक्षिप्तता स्निग्ध-मधुर भोजन एवं करीष की शय्या का प्रयोग करने से दूर की जा सकती है। तथा दैविक उपद्रव दूर करने के लिए देवता के कायोत्सर्ग का विधान है।[४]

दृप्तचित्त

क्षिप्तचित्त व्यक्ति मौन रूप से अपने पागलपन को प्रकट करता है लेकिन दृप्तचित्त व्यक्ति असंबद्ध प्रलाप करता रहता है।[५] यही दोनों में भेद है। क्षिप्तचित्तता का कारण अपमान या असम्मान है। लेकिन दृप्तचित्तता का कारण अत्यधिक सम्मान या लाभ प्राप्त करना है।[६] जैसे ईंधन से अग्नि उद्दीप्त होती है वैसे ही अत्यधिक हर्ष आदि की स्थिति में व्यक्ति उद्दीप्त हो

---

१. व्यभा. १०७९
२. व्यभा. १०७९।
३. व्यभा. १०८७-१११६ टी. प. २९-३४।
४. व्यभा. १०९८ टी. प. ३१, ३२।
५. व्यभा. ११२३: जो होइ दित्तचित्तो सो पलवतिऽणिच्छियव्वाइं।
६. व्यभा. ११२४ टी. प. ३६।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाता है।[1] दृप्तचित्त के प्रसंग में भाष्यकार ने राजा शातवाहन का उदाहरण प्रस्तुत किया है। शातवाहन खुशी के अनेक समाचारों को सुनकर दृप्त हो जाता है। वह अनर्गल प्रलाप एवं असंबद्ध क्रिया करने लगता है।[2]

उन्मत्त चित्त

जिस स्थिति में व्यक्ति दिग्मूढ़ हो जाता है, वह उन्मत्त चित्त कहलाता है। वह आत्मसंचेतक होता है अर्थात् अपना दुःख स्वयं ही उत्पन्न करता है।[3] दो कारणों से व्यक्ति उन्मत्त बनता है—यक्ष के आवेश से तथा मोहनीय कर्म के उदय से। इसके अतिरिक्त पित्त के उद्रेक एवं वायुक्षोभ से भी व्यक्ति उन्मत्त बन जाता है।[4]

भाष्यकार ने मोह से उत्पन्न उन्मत्तता को दूर करने के विविध उपायों का निर्देश किया है।[5]

यदि वायु से उत्पन्न उन्मत्तता है तो तैल-मालिश, घृत-पान आदि उपायों द्वारा चिकित्सा की जा सकती है। यदि पित्त की प्रबलता से उन्मत्तता हुई है तो दूध में मिश्री आदि मिलाकर पिलाने से चिकित्सा की जा सकती है।[6]

विधायक चिन्तन से व्यक्ति का मनोबल वृद्धिंगत हो जाता है और निषेधात्मक चिन्तन से भय के साथ निराशा भी बढ़ जाती है तथा मनोबल टूट जाता है। इसलिए भय-निवारण में विधायक चिंतन और उचित आश्वासन का बहुत बड़ा महत्त्व है। इस संदर्भ में भाष्यकार द्वारा उल्लिखित निम्न दृष्टान्त बहुत महत्त्वपूर्ण हैं--कोई व्यक्ति कुएं में गिर गया। वह इस बात से भयभीत हो गया कि मैं इस कुएं से बाहर कैसे निकलूंगा? तब यदि कुएं के तट पर खड़े व्यक्ति आश्वासन देते हैं कि तुम डरो मत, हम तुम्हें निकाल देंगे। देखो, हम रस्सी भी लाए हैं। इस प्रकार आश्वासन मिलने पर वह निर्भय हो जाता है और स्थिरता से विघ्न का पार पा जाता है। इसके विपरीत यदि कोई कहे—देखो, यह बेचारा कुएं में गिरा है। यह मर जाएगा, इसको कौन बाहर निकालेगा? तब वह निराश होकर अशक्त हो जाता है और अकारण ही भयाक्रान्त होकर मर जाता है।[7] कोई व्यक्ति नदी के स्रोत में बहने लगा। मरने के डर से वह भयभीत हो गया। तट पर खड़े व्यक्ति यदि आश्वासन देते हैं तो वह नदी को पार कर लेता है, अन्यथा वह निराश होकर भय से मर जाता है।[8]

इस प्रकार उन्मत्तता, क्षिप्तता आदि अवस्थाओं से आक्रान्त व्यक्ति असाधारण या असामान्य चित्त वाला हो जाता है। भाष्य में इन अवस्थाओं का सुंदर विश्लेषण हुआ है। भाष्यकार ने मनोवैज्ञानिक के रूप में चित्त की इन असामान्य या असाधारण अवस्थाओं के कारण एवं निवारण का सटीक वर्णन प्रस्तुत किया है।

मनोरचना में क्षेत्र का प्रभाव

क्षेत्र भी व्यक्ति के चरित्र एवं उसकी मनोरचना को प्रभावित करता है। भाष्यकार ने क्षेत्र के आधार पर मनोरचना के सुंदर उदाहरण प्रस्तुत किए हैं।

मगध देशवासी इंगित और आकार से, कौशल देशवासी केवल देखने मात्र से तथा पांचाल देशवासी आधा कहने से पूरे अभिप्राय को जान जाते हैं। दक्षिणवासी बिना कहे कुछ नहीं जानते, साक्षात् कहने पर ही जान पाते हैं क्योंकि वे जड़प्रज्ञ होते हैं।[9] आंध्र प्रदेशवासी अक्रूर अभिप्राय वाले, महाराष्ट्री अवाचाल तथा कौशलदेशवासी बहुदोषी एवं पापी होते हैं।[10]

---

१. व्यभा. ११२४, ११२५।
२. व्यभा. ११२६-३१; देखें परिशिष्ट नं. ८, कथा सं. ५६।
३. व्यभा. ११५३ टी. प. ४२।
४. व्यभा. ११४७ टी. प. ४०,४१।
५. व्यभा. ११४८-५१।
६. व्यभा. ११५२।
७. व्यभा. ५४६, टी. प. २९।
८. व्यभा. ५४६, टी. प. ३०।
९. व्यभा. ४०२० : मागहा इंगितेणं तु, पेहिएण य कोसला। अद्धुत्तेण उ पंचाला, नाणुत्तं दक्खिणावहा॥
१०. व्यभा. २९५९ : अंधं अकूरमययं, अवि या मरहट्ठयं अवोकिल्लं। कोसलयं च अपावं, सतेसु एक्कं न पेच्छामो॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भावधारा और आराधना

जैन दर्शन में चारित्राराधना भावों की विशुद्धि पर आधारित है। अप्रमत्त अवस्था में यदि जीवहिंसा हो जाए तो द्रव्यहिंसा ही है। प्रमत्त अवस्था में जीवहिंसा न होने पर भी हिंसा का दोष लगता है। आलोचना के संदर्भ में निम्न प्रसंग पठनीय है—कोई व्यक्ति मैं आलोचना करूंगा इस चिन्तन से आलोचनार्ह के पास प्रस्थित हुआ लेकिन यदि बीच में ही वह कालगत हो गया अथवा आलोचनार्ह कालगत हो गया अथवा आलोचनार्ह के पास पहुंचकर रोग से आक्रान्त होकर वह बोलने में समर्थ नहीं रहा अथवा आलोचनार्ह रोगाक्रान्त हो गया तो वह आलोचना न करने पर भी आराधक है क्योंकि उसकी परिणामधारा विशुद्ध है, वह आलोचना करना चाहता है।[१]

प्रतिमाएं

जैन आगमों में साधना की अनेक पद्धतियों का वर्णन है, उनमें प्रतिमा का विशिष्ट स्थान है। प्रतिमा का अर्थ है—साधना का विशेष संकल्प या अभिग्रह।[२] दूसरे शब्दों में साधना की विशेष पद्धति को प्रतिमा कहा जाता है। जैन परम्परा में बहुविध प्रतिमाओं का वर्णन है। साधु एवं श्रावकों के लिए भी अलग-अलग प्रतिमाओं का उल्लेख है।[३] भगवान् महावीर ने साधनाकाल में अनेक प्रतिमाओं का अभ्यास किया था। ठाणं में अनेक प्रतिमाओं का वर्णन है।[४] प्रस्तुत ग्रंथ में तीन प्रतिमाओं का विस्तार से वर्णन है—

१. मोकप्रतिमा।
२. यवमध्यचन्द्रप्रतिमा
३. वज्रमध्यचन्द्रप्रतिमा।

मोक प्रतिमा—

मोक का अर्थ है—प्रस्रवण। यह प्रस्रवण पर आधारित है अतः इसका नाम मोकप्रतिमा हो गया। निरुक्त के आधार पर इसका अर्थ करते हुए ग्रंथकार कहते हैं जो साधु को पापकर्मों से मुक्त करती है, वह मोकप्रतिमा है।[५] भाष्यकार ने द्रव्य, क्षेत्र, काल एवं भाव से इस प्रतिमा की व्याख्या की है।

द्रव्यतः—प्रस्रवण पीना।

क्षेत्रतः—गांव आदि के बाहर रहना।

कालतः—प्रथम निदाघकाल में अथवा अंतिम निदाघकाल में।[६] अभयदेव सूरि ने कालतः शरद् एवं निदाघ—दोनों कालों का उल्लेख किया है।[७]

भावतः—स्वाभाविक प्रस्रवण ग्रहण करना। प्रतिमाप्रतिपन्न मुनि कृमियुक्त या शुक्रयुक्त प्रस्रवण नहीं पीता।[८] मधुमेह के रोगी का प्रस्रवण भी दोषयुक्त होने के कारण नहीं पीया जाता।[९] स्थानांग वृत्ति में भावतः की व्याख्या देव आदि के उपसर्ग को सहन करना किया है।[१०]

इस प्रतिमा में सात दिन का उपवास किया जाता है। उपवास-काल में प्रस्रवण-पान का प्रयोग किया जाता है। प्रतिमा पालन के बाद आहार-ग्रहण की विधि इस प्रकार है[११]—

---

१. व्यभा. ४०५२, ४०५३ ; भआ. ४०५-४०८।
२. स्थाटी. प. १८४ : प्रतिमा—प्रतिज्ञा अभिग्रहः।
३. विस्तार के लिए देखें दशाश्रुतस्कंध की छठी एवं सातवीं दशा।
४. ठाणं २/२४३-४८।
५. व्यभा. ३७६० : साधुं मोयंति पावकम्मेहिं, एएण मोयपडिमा।
६. व्यभा. ३८०९।
७. स्थाटी. प. ६१ : कालतः शरदि निदाघे वा प्रतिपद्यते।
८. व्यभा. ३७६५, ३७६६।
९. व्यभा. ३७६७।
१०. स्थाटी. प. ६१ : भावतस्तु दिव्याद्युपसर्गसहनमिति।
११. व्यभा. ३८०३-३८०६।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

- प्रथम सप्ताह में गर्म पानी के साथ चावल।
- दूसरे सप्ताह में यूप–मांड।
- तीसरे सप्ताह में तीन भाग उष्ण पानी तथा थोड़े मधुर दही के साथ चावल।
- चतुर्थ सप्ताह में दो भाग उष्णोदक तथा दो भाग मधुर दही के साथ चावल।
- पांचवें सप्ताह में अर्द्ध उष्णोदक और अर्द्ध मधुर दही के साथ चावल।
- छठे सप्ताह में त्रिभाग उष्णोदक और दो भाग मधुर दही के साथ चावल।
- सातवें सप्ताह में मधुर दही में थोड़ा-सा उष्णोदक मिलाकर उसके साथ चावल।
- आठवें सप्ताह में मधुर दही अथवा अन्य जूषों के साथ चावल।

सात सप्ताह तक रोग के प्रतिकूल न हो, वैसा भोजन दही के साथ किया जाता है।

प्रतिमा से होने वाले तीन लाभों की चर्चा भाष्यकार ने की है–

- सिद्धि की प्राप्ति।
- महर्द्धिक देवत्व की प्राप्ति।
- रोगमुक्ति एवं शरीर का कनकवर्ण होना।[1]

इस प्रतिमा को बलशाली व्यक्ति ही ग्रहण कर सकता है। प्रथम तीन संहनन वाले व्यक्ति इस प्रतिमा के धारक होते हैं। अंतिम तीन संहनन वाले मुनि यदि इस प्रतिमा को धारण करते हैं तो उनकी धृति वज्रकुड्य के समान होनी चाहिए।[2]

यवमध्यचंद्रप्रतिमा

यव आदि और अंत में तनु एवं मध्य में स्थूल होता है। वज्र आदि और अंत में स्थूल और मध्य में तनुक होता है। इन आकारों के माध्यम से चन्द्रमा को प्रतीक बनाकर तपस्या का निर्देश है इसलिए ये यवमध्यचंद्रप्रतिमा एवं वज्रमध्यचंद्रप्रतिमा कहलाती हैं।[3]

यवमध्यचन्द्रप्रतिमा मास के शुक्ल पक्ष से प्रारम्भ की जाती है। जैसे शुक्लपक्ष में चन्द्रमा की कला प्रतिपदा से एक-एक बढ़ती जाती है और पूर्णिमा को पन्द्रह कलाएं पूर्ण हो जाती हैं वैसे ही यवमध्यचन्द्रप्रतिमाप्रतिपन्न मुनि प्रतिपदा को एक दत्ती ग्रहण करता है और प्रतिदिन एक-एक दत्ती बढ़ाता हुआ पूर्णिमा को पन्द्रह दत्तियां ग्रहण करता है। कृष्णपक्ष की प्रतिपदा को चंद्रमा की चौदह कलाएं दृग्गोचर होती हैं वैसे ही प्रतिमाप्रतिपन्न मुनि कृष्णपक्ष की प्रतिपदा को चौदह दत्तियां लेता है और प्रतिदिन एक-एक दत्ती कम करते-करते अमावस्या को उपवास करता है। यवमध्यचंद्रप्रतिमा मास के आदि में तनु, मध्य में पूर्ण तथा अंत में पुनः तनु हो जाती है। इस प्रकार यह आदि-अंत में तनुक एवं मध्य में स्थूल होती है।[4]

वज्रमध्यचन्द्रप्रतिमा

वज्रमध्यचन्द्रप्रतिमा मास के कृष्णपक्ष में प्रारम्भ की जाती है। प्रतिमाप्रतिपन्न मुनि कृष्णपक्ष की प्रतिपदा को चौदह दत्तियां ग्रहण करता है और प्रतिदिन एक-एक दत्ती घटाता हुआ अमावस्या को उपवास करता है। शुक्लपक्ष की प्रतिपदा को एक दत्ती से प्रारम्भ कर प्रतिदिन एक-एक दत्ती बढ़ाता जाता है और पूर्णिमा को पन्द्रह दत्तियां ग्रहण करता है। यह प्रतिमा मास के आदि-अंत में पृथुल और मध्य में तनुक होती है। वज्र का यही आकार होता है।[5]

प्रतिमा प्रतिपन्न की योग्यता

वज्रऋषभनाराच, नाराच एवं अर्द्धनाराच–इन तीनों में से एक संहनन वाला मुनि इन प्रतिमाओं को स्वीकार कर सकता है। उसका जन्म पर्याय जघन्यतः उनतीस वर्ष, उत्कृष्टतः कुछ कम पूर्व कोटि वर्ष का होना चाहिए। सूत्र और अर्थ की दृष्टि से वह

---

१. व्यभा ३८०२।
२. व्यभा ३८०६ टी. प. १७।
३. व्यभा ३८३३।
४. व्यभा ३८३४।
५. व्यभा ३८३३, ३८३४ टी. प. २।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नौवें पूर्व की तीसरी आचार वस्तु का और उत्कृष्टतः कुछ कम दस पूर्वों का ज्ञाता होना चाहिए। जो मुनि संहनन और पर्याय के साथ सूत्र और अर्थ में बलीयान् होता है, वह इन प्रतिमाओं को स्वीकार कर सकता है। प्रतिमाप्रतिपन्न मुनि पांच व्यवहारों का ज्ञाता होना आवश्यक है।[1]

प्रतिमाओं को स्वीकार करने वाला व्युत्सृष्टकाय एवं त्यक्तदेह होता है। व्युत्सृष्टकाय का अर्थ है—रोगातंक उत्पन्न होने पर भी शरीर का प्रतिकर्म नहीं करना। त्यक्तदेह का अर्थ है—किसी के द्वारा बांधने, मारने, पीटने एवं रोधन करने पर भी उसका निवारण नहीं करना। प्रतिमाप्रतिपन्न मुनि दैविक, मानुषिक, तिर्यञ्च सम्बंधी—तीनों परीषहों को समभावपूर्वक सहन करता है।[2]

प्रतिमाप्रतिपन्न मुनि अज्ञातोञ्छ ग्रहण करता है तथा वह भी एक ही व्यक्ति द्वारा दिया हुआ। यदि दो-तीन व्यक्ति भिक्षा दें तो वह ग्रहण नहीं करता। वह श्रमणों, भिक्षाचरों तथा द्विपद-चतुष्पदों को लांघकर भिक्षा के लिए नहीं जाता। वे जब अपना प्रयोजन सिद्ध कर चले जाते हैं तब प्रतिमाप्रतिपन्न मुनि भिक्षा के लिए निकलते हैं। जिस क्षेत्र में तीन भिक्षाकाल हों, वहां वह मुनि श्रमणों से पूर्व अथवा श्रमणों के पश्चात् भिक्षा के लिए निकलते हैं। जहां दो भिक्षाकाल हों वहां श्रमणों के चले जाने पर भिक्षा करते हैं।[3] प्रतिमाप्रतिपन्न मुनि गर्भवती स्त्रियों तथा जिनका शिशु अभी स्तनपान कर रहा हो, उससे भिक्षा नहीं लेते।[4]

ऐतिहासिक तथ्य

इतिहास अतीत को वर्तमान में प्रस्तुत करता है। इससे प्राचीन और अर्वाचीन परम्परा को समझने का अवसर भी प्राप्त होता है। इतिहास से यह अवबोध सुस्पष्ट हो जाता है कि द्रव्य, क्षेत्र और काल के आधार पर कब-कैसे परिवर्तन होते हैं? ऐतिहासिक तथ्य वर्तमान के लिए तो प्रेरक होते ही हैं साथ ही भविष्य के लिए भी नयी प्रेरणा देते हैं। प्रस्तुत भाष्य में अनेक ऐतिहासिक तथ्यों की प्रस्तुति हुई है। ग्रंथ में वर्णित ऐतिहासिक तथ्य धर्म, राजनीति, समाज आदि से सम्बन्धित हैं। इन तथ्यों के आलोक में कुछ ऐतिहासिक तथ्यों का केवल संकेतमात्र किया जा रहा है—

- प्रथम तीर्थंकर के समय में उत्कृष्ट तप एक वर्ष का, मध्य के बावीस तीर्थंकरों के समय में उत्कृष्ट आठ मास का तथा अंतिम तीर्थंकर के समय में उत्कृष्ट छह मास का तप होता है (गा. १४४)।
- चतुर्दशपूर्वी के साथ प्रथम संहनन का विच्छेद हो गया (गा. ५५६)।
- चाणक्य द्वारा नंदवंश का समूल नाश हुआ (गा. ७१६)।
- कोंकण देश के स्थानक नगर में सोने की खान थी। (गा. ६१५ टी. प. १२७)।
- भरुकच्छ में कोरंटक उद्यान में भगवान् सुव्रतस्वामी अनेक बार समवसृत हुए तथा अनेक साधुओं को प्रायश्चित्त दिया (गा. ६७५)।
- शातवाहन राजा की उन्मत्तता का वर्णन (गा. ११२६-३१)।
- आचार्य वज्र एवं रानी पद्मावती की घटना (गा. १४१४, १४१५)।
- तगरा नगरी के आठ व्यवहारी एवं आठ अव्यवहारी शिष्यों का वर्णन; व्यवहारी शिष्यों का नामोल्लेख (गा. १६६४)।
- मथुरा नगरी में क्षपक की घटना, जिसने देवता की सहायता से स्तूप पर श्वेत पताका फहरवा कर जैन धर्म की प्रभावना की (गा. २३३०, २३३१)।
- आर्यरक्षित अंतिम आगम व्यवहारी थे। उनके बाद साध्वियों को छेदसूत्र की वाचना बंद हो गई (गा. २३६५)।
- कपिल ब्राह्मण, महावीर एवं गौतम की घटना (गा. २६३८)।
- राजा शातवाहन और पटरानी पृथिवी की घटना (गा. २६४५-४७)।
- लोहार्य मुनि द्वारा भगवान् महावीर के लिए भिक्षा लाना (गा. २६७१)।

---

१. व्यभा. ३८३६।

२. व्यभा. ३८३७-४२।

३. व्यभा. ३८५२-६२।

४. व्यभा. ३८६३।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

- आर्य समुद्र एवं आर्य मंगू का घटना प्रसंग[1] (गा. २६८९-९२)।
- आचार्य भद्रबाहु की महापान (महाप्राण) साधना (गा. २७०३)।
- मिथ्यात्व के प्रसंग में गोविंदाचार्य, जमाली, श्रावक, तच्चण्णिय एवं गोष्ठामाहिल का उल्लेख (गा. २७१३, २७१४)।
- आर्य महागिरि के पश्चात् संभोज की परम्परा नहीं रही। (गा. २६०८ टी. प. १४)
- आर्यरक्षित ने दशपुर नगर में इक्षुगृह नामक उद्यान में वर्षावास में एक अतिरिक्त मात्रक रखने की अनुज्ञा दी। (गा. ३६०५, ३६०६)।
- आर्यरक्षित के बाद तीसरे संहनन का विच्छेद हो गया (गा. ३७८० टी. प. १३)।
- केवली के विच्छेद होने के कुछ समय बाद चतुर्दशपूर्वी का विच्छेद हो गया (गा. ४१६५)।
- दुःप्रसभ आचार्य के बाद महावीर के तीर्थ की व्यवच्छित्ति (गा. ४१७४)।
- प्रथम संहनन एवं चतुर्दशपूर्वी का एक साथ विच्छेद होता है। उनके विच्छिन्न होने पर अनवस्थाप्य और पारांचित—इन दोनों अंतिम प्रायश्चित्तों का भी विच्छेद हो गया (गा. ४१८१)।
- तीर्थ की अवस्थिति महावीर-निर्वाण के २१ हजार वर्ष बाद तक रहेगी (गा. ४२१४)।
- चेटक एवं कोणिक के मध्य महाशिलाकंटक एवं रथमुसल युद्ध का उल्लेख (४३६३-६५)।
- प्रायोपगमन का विच्छेद चतुर्दशपूर्वी के साथ हो गया (गा. ४४०१)।
- कुम्भकारकृत नगर में सुव्रतस्वामी के शिष्य आचार्य स्कन्दक के शिष्यों को यंत्र में पीलने की घटना (४४१७)।
- सुबंधुमंत्री के द्वारा चाणक्य को कंडों के मध्य अग्नि में प्रज्वलित करने का उल्लेख (४४२०)।
- चिलातपुत्र एवं कालादवैश्य के प्रायोपगमन संथारे का उल्लेख (४४२२,४४२३)।
- जंबू के पश्चात् बारह अवस्थाओं के विच्छेद का उल्लेख (गा. ४५२६)।
- उज्जयिनी में शक के राजा बनने की घटना (४५५७-५६)।
- महावीर के शासन में १४ हजार प्रकीर्णक तथा शेष तीर्थंकरों के शासन में जितने प्रत्येकबुद्ध उतने प्रकीर्णक (गा. ४६७१)।

राज्य व्यवस्था के घटक तत्त्व

आचारप्रधान ग्रंथ होने पर भी भाष्य में राज्य एवं राजनीति सम्बंधी महत्त्वपूर्ण चर्चा प्राप्त होती है। यहां भाष्य में चर्चित कुछ महत्त्वपूर्ण पहलुओं को प्रस्तुत किया जा रहा है। राज्य व्यवस्था को सुचारु रूप से चलाने हेतु आधारभूत पांच व्यक्तियों की अनिवार्यता मानी गयी है—राजा, वैद्य, धनवान्, नैयतिक एवं रूपयक्ष।[2] कौटिल्य ने शासन-तंत्र के सात अंग स्वीकार किए हैं—१. स्वामी, २. अमात्य ३. राष्ट्र अथवा जनपद ४. दुर्ग, ५. कोश ६. दण्ड, ७. मित्र[3]।

भाष्य में उल्लिखित ये पांच व्यक्ति पांच क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करने वाले प्रतिनिधि पुरुष कहे जा सकते हैं। किसी भी देश की शासन-व्यवस्था को सुदृढ़, गतिशील एवं सुचारु रूप से चलाने में इन पांच तत्त्वों की आवश्यकता रहती है—

१. सुदृढ़ राजनीति।
२. सम्यक् चिकित्सा।
३. आर्थिक सुव्यवस्था।
४. जीविका की सुलभता।
५. न्याय एवं धर्मपरायणता।

---

१. तुलना निभा. १११६ चू. पृ १२५।
२. व्यभा. ६२४।
३. क. अर्थशास्त्र अ. ६/१: स्वाम्यमात्य-जनपद-दुर्ग-कोश-दण्डमित्राणि प्रकृतयः।
ख. मनुस्मृति ६/२६४: स्वाम्यमात्यौ पुरं राष्ट्रं, कोशदण्डौ सुहृत्तथा।
सप्तप्रकृतयो ह्येताः, सप्ताङ्गं राज्यमुच्यते॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजा, वैद्य आदि पांचों व्यक्ति राज्य की सुव्यवस्था के सशक्त घटक होते थे। समूचे जनपद की सुख-शांति इन्हीं पर निर्भर रहती थी।

राजा–

भारतीय राज्य व्यवस्था में राजा को सर्वोपरि स्थान प्राप्त था। वह देवता की भांति पूज्य होता था। प्रायः सभी प्राचीन ग्रंथों में राजा के कर्त्तव्य एवं उसके आदर्शों का वर्णन मिलता है।[१] राजा के सहयोगी के रूप में युवराज, महत्तरक, अमात्य और कुमार–इन चार व्यक्तियों का उल्लेख मिलता है। ये पांच तत्त्व जिस शासन व्यवस्था में होते, वह गुणयुक्त विशाल राज्य माना जाता था।[२]

भाष्य के अनुसार राजा अपने द्वारा अर्जित स्वाधीन ऐश्वर्य का भोग करने वाला, उद्वेग रहित, राज्य की किसी भी व्यवस्था की चिन्ता से मुक्त, राज्य-व्यवस्था के संचालन में निरपेक्ष होता था। वह पितृपक्ष एवं मातृपक्ष से शुद्ध, प्रजा से दसवां हिस्सा कर लेकर संतुष्ट होने वाला, लौकिक आचार-समस्त धर्म-दर्शनों एवं नीतिशास्त्र आदि का ज्ञाता तथा धर्म के प्रति अत्यधिक आस्था रखने वाला होता था।[३]

भाष्य-साहित्य में दो प्रकार के राजाओं का उल्लेख मिलता है--सापेक्ष एवं निरपेक्ष। सापेक्ष राजा अपने जीवन काल में ही योग्य उत्तराधिकारी को युवराज पद दे देता था, जिससे वह शासन व्यवस्था में निपुण हो जाए और लोगों की उसके प्रति आस्था जग जाए। जिस राजा के कालगत हो जाने पर सामंत या मंत्री उत्तराधिकारी का चुनाव करते, वह निरपेक्ष राजा कहलाता था।[४]

प्रकारान्तर से भाष्य में राजा के दो भेद और मिलते हैं–आत्माभिषिक्त एवं पराभिषिक्त। जो अपने पराक्रम से राज्य में राजा के रूप में अभिषिक्त होता, वह आत्माभिषिक्त कहलाता है–जैसे भरत चक्रवर्ती। जिनका अभिषेक दूसरों के द्वारा किया जाता है, वे पराभिषिक्त हैं, जैसे–भरत के पुत्र आदित्ययशा आदि।[५]

जो राजा चतुरंगिणी सेना, अनेक प्रकार के वाहन, समृद्ध भाण्डागार एवं औत्पत्तिकी आदि बुद्धि से युक्त होते वे सफल राजा कहलाते थे। बल, वाहन एवं धन आदि से हीन राजा राज्य की रक्षा नहीं कर सकता था।[६] राजाज्ञा का बहुत महत्त्व होता था। उसको भंग करने वाले को कड़ा दण्ड मिलता । कभी-कभी अपराधी को प्राणदण्ड भी दिया जाता था।[७]

राजा के पश्चात् दूसरा महत्त्वपूर्ण स्थान युवराज का था। युवराज प्रातःकाल अपने दैनिक कार्यों एवं धार्मिक अनुष्ठान से निवृत्त होकर राज्य सभा में आकर बैठता तथा राज्य की व्यवस्था को देखता था।[८]

राज्य का तीसरा महत्त्वपूर्ण अंग महत्तरक था। महत्तरक युवराज के साथ राज्य के कार्य में हाथ बंटाता था। वह गंभीर, मृदु, नीतिशास्त्र में कुशल तथा विनयसम्पन्न होता था।[९] इस शब्द की विस्तृत व्याख्या डा. मोहनचंद ने अपने शोधग्रन्थ में की है।[१०]

राज्य शासन की व्यवस्था चलाने में मंत्री का महत्त्वपूर्ण स्थान होता था। वह राजा के हर कार्य में सहयोगी रहता था। समय-समय पर राजा को परामर्श देने में भी उसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती थी। कौटिल्य ने राजा को निर्देश दिया है कि उसे मंत्रिपरिषद् से परामर्श लेना चाहिए। कौटिल्य के अनुसार इंद्र को सहस्राक्ष इसीलिए कहा गया क्योंकि उसकी मंत्रिपरिषद् में १००० बुद्धिमान् पुरुष थे, जो उसके नेत्र रूप थे।[११] भाष्य के अनुसार पूरे जनपद एवं देश की चिन्ता मंत्री के जिम्मे होती थी। मंत्री का व्यवहारज्ञ एवं नीतिकुशल होना अनिवार्य था। व्यवहार कुशलता से वह हर विवाद को आसानी से निपटा देता था।[१२]

१. देखें--महाभारत शान्ति पर्व।
२. व्यभा. ९२६।
३. व्यभा. ९२७, ९२८।
४. व्यभा. १८९२-९५।
५. व्यभा. २४०८।
६. व्यभा. २४०९, २४१०।
७. व्यभा. ३१०३, ४२६२, ४२६३।
८. व्यभा. ९२९।
९. व्यभा. ९३०।
१०. जैन संस्कृत महाकाव्यों में भारतीय समाज पृ. १२६-३४।
११. अर्थशास्त्र १/१०/५ पृ. ४७ : इंद्रस्य हि मंत्रिपरिषदृषीणां सहस्रम्। तच्चक्षुः । तस्मादिदं द्व्यक्षं सहस्राक्षमाहुः
१२. व्यभा. ९३१।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मंत्री के चातुर्य के प्रसंग में भाष्यकार ने एक कथा का उल्लेख किया है। राजा और पुरोहित दोनों अपनी पत्नियों के परवश थे। अपनी-अपनी स्त्रियों के कहने से राजा घोड़ा बना तथा पुरोहित ने अकाल में शिर का मुंडन करवाया। मंत्री को चारपुरुषों से यह बात ज्ञात हुई। उसने सोचा, यदि पड़ोसी राजाओं को यह बात ज्ञात होगी तो वे राजा के इस कृत्य पर हंसेंगे तथा राजा का पराभव करेंगे। राजा को स्त्रीपरवश जानकर राज्य पर भी अधिकार कर लेंगे। मंत्री राजा और पुरोहित के सामने वक्रोक्ति में बोला—'उस ग्राम और नगर को धिक्कार है, जहां पर स्त्री नायिका होती है। वे पुरुष भी धिक्कार के पात्र हैं, जो स्त्री के पराधीन हैं।[१] जिस गांव या नगर में स्त्री बलवान् है, वह शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।' इस प्रकार अमात्य समय पर राजा को भी शिक्षा देता था।[२]

राजकुमार को युद्धविद्या सिखाई जाती थी। यह रणनीति में कुशल होता था। पड़ोसी या अनार्य राजा द्वारा उपद्रव किए जाने पर राजकुमार उनको उपशान्त करने में सक्षम होता था। जो दुर्दान्त शत्रु होते, उनमें अपनी शक्ति से क्षोभ उत्पन्न कर देता था। वह पूरे जनपद में तथा सभी दिशाओं में अपने पराक्रम एवं दमननीति के लिए प्रसिद्ध होता था।[३]

वैद्य

वैद्यशास्त्रों में निपुण वैद्य पूरे जनपद में सम्मानार्ह होते थे क्योंकि नागरिकों के आरोग्य के वे मुख्य संवाहक होते थे। माता-पिता द्वारा संक्रान्त अथवा आतंक या रोग से उत्पन्न दोष का समाधान वैद्य करते थे। वे सबमें शारीरिक समाधि पैदा करते थे।[४] युद्धस्थलों में भी वैद्यों को साथ ले जाया जाता था। कुशल वैद्य घायल सुभटों की चिकित्सा कर उनको दूसरे दिन युद्ध के लिए तैयार कर देते थे।

धनवान्

धनवान् एवं श्रेष्ठी लोग किसी भी देश की शोभा होते थे। उनके पास दादा-परदादा से संक्रान्त करोड़ों की सम्पदा तथा विपुल मात्रा में सोना, मणि-मुक्ता तथा विभिन्न रत्नों का भण्डार होता था। विपुल ऐश्वर्य से युक्त व्यक्ति ही धनवान् की कोटि में आते थे।[५]

नैयतिक

जो धान्य वितरण की व्यवस्था में नियुक्त होते थे, वे नैयतिक कहलाते थे। उनके पास सभी प्रकार के धान्यों का विपुल संग्रह होता था। स्थान-स्थान पर उनके धान्य कोठागार होते थे। धान्य के वितरण में उनकी प्रमुख भूमिका होती थी।[६]

रूपयक्ष

भारतीय राज्य व्यवस्था का यह वैशिष्ट्य रहा है कि यहाँ राजनीति धर्म से संपृक्त रही है। अशोक के शिलालेखों में धर्म-महामात्रों का उल्लेख इसी बात की ओर संकेत करता है। मलयगिरि ने रूपयक्ष का अर्थ धर्मपाठक किया है। अर्थात् जो मूर्तिमान् धर्म हो, वे रूपयक्ष कहलाते थे। रूपयक्ष को आज की भाषा में धर्माध्यक्ष (न्यायाधीश) कहा जा सकता है। ये भंभी, आसुरुक्ष आदि शास्त्रों के ज्ञाता होते थे। ये माढर के नीतिशास्त्र एवं कौटिल्य द्वारा प्रणीत दण्डनीति में प्रवीण होते थे। किसी भी परिस्थिति में रिश्वत ग्रहण कर न्याय करने के पक्षधर नहीं होते थे। यह मेरा है और यह पराया—ऐसा सोचकर किसी के साथ पक्षपात नहीं करते तथा निर्णय में सदा निष्पक्ष रहते थे।[७]

---

१. व्यभा· ९३२-३७।
२. व्यभा· ९४७ टी प. १३१ : राज्ञोऽपि यः शिक्षाप्रदानेऽधिकारी सोऽमात्यः।
३. व्यभा· ९४८।
४. व्यभा. ९४९।
५. व्यभा. ९५०।
६. व्यभा· ९५१।
७. व्यभा· ९५२।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकारान्तर से भी राज्य में प्रमुख स्थान पर आसीन पांच व्यक्तियों के नामों का उल्लेख भाष्य में मिलता है[१]—राजा, युवराज, अमात्य, श्रेष्ठी,[२] पुरोहित।[३]

राज्य का उत्तराधिकारी

प्राचीन शासन पद्धति में राज्य का उत्तराधिकारी वंश परम्परा से होता था। राजा का ज्येष्ठ पुत्र ही राज्य का अधिकारी होता था। कौटिल्य के अनुसार राज्य का उत्तराधिकारी ज्येष्ठपुत्र को बनाने में हानि नहीं है पर वह अविनीत और उद्दण्ड नहीं होना चाहिए।[४] एक से अधिक पुत्र होने पर राजा परीक्षा करके योग्य पुत्र को युवराज पद देता था। वह राजकुमार के शौर्य, बुद्धिबल, व्यवहार कुशलता, करुणा आदि गुणों को देखकर राज्य का भार सौंपता था।

राजा द्वारा राजकुमार की शक्ति आदि गुणों की परीक्षा के अनेक उदाहरण भाष्य में मिलते हैं।[५] कभी-कभी राजा नैमित्तिकों से भी इस बारे में विमर्श किया करता था। जो राज्य में क्षेम (नीरोगता), शिव (कल्याण), सुभिक्ष एवं उपद्रवों का अभाव कर सके, उसे राजा अपना उत्तराधिकारी बनाता था। तथा जो डमर, मारि, दुर्भिक्ष एवं चोर आदि से जनता की रक्षा न कर सके, जो धन-धान्य एवं कोश की सुरक्षा न कर सके तथा जिसके कारण पड़ोसी राजा बलवान हो जाए ऐसे राजकुमार को युवराज पद नहीं दिया जाता था।[६]

यदि राजा निःसंतान होता और बिना युवराज पद की घोषणा किए ही कालगत हो जाता तो मंत्री एवं सामन्तगण द्वारा अधिवासित करके घोड़े या हाथी को नगर के तिराहे-चौराहे पर घुमाया जाता था। घोड़ा या हाथी जिस व्यक्ति को अपनी पीठ देता वही राजा घोषित कर दिया जाता था। इस क्रम में चोर का भी राज्याभिषेक हो जाता था। चोर मूलदेव का राजा बनना ऐसी ही एक घटना है।[७]

अंतःपुर

राजघराने में रानियों के अंतःपुर की भांति कन्याओं के अंतःपुर भी होते थे। अंतःपुर की रक्षा हेतु राजा बहुत सावधान रहता था। उनकी सुरक्षा का भार महत्तरिकाओं पर होता था। कन्या-अन्तःपुर में यौवन प्राप्त कन्याएं अधिक रहती थीं। कन्याएं गवाक्ष में बैठकर यदा-कदा अन्यान्य व्यक्तियों के साथ आलाप-संलाप करती थीं। यदि महत्तरिका इस ओर ध्यान नहीं देती या कड़ा अनुशासन नहीं करती तो कन्याएं भाग जाती थीं। लेकिन कुछ महत्तरिकाएं कन्याओं पर पूरा अनुशासन रखती थीं, जिससे वे दुःशील नहीं बन पाती थीं।[८] अंतःपुर में हर किसी का प्रवेश वर्जित था। राजा का विश्वासपात्र व्यक्ति ही अंतःपुर में प्रवेश कर सकता था।

सेठ लोग यदि परदेश जाते तो वे अपनी वयःप्राप्त कन्याओं को राजा के कन्या-अन्तःपुर में रखकर चले जाते, जिससे उनकी सुरक्षा रहती थी। राजा अपनी कन्या की भांति उनकी सुरक्षा करता था।[९]

गुप्तचर

राजनीति में गुप्तचरों का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। प्राचीन साहित्य में इनके लिए गूढ़पुरुष, चारपुरुष आदि शब्दों का प्रयोग मिलता है। राज्य की व्यवस्था को सुचारुरूप से देखने हेतु अमात्य गुप्तचरों की नियुक्ति करता था। आंतरिक उपद्रवों एवं बाह्य आक्रमणों की गुप्त जानकारी इनसे ज्ञात की जाती थी। ये गुप्तचर पड़ोसी राज्य में रहते और वहां की सूचनाएं एकत्रित कर

---

१. व्यभा. २१६।
२. राजा द्वारा प्रदत्त देवताचिह्नित सुवर्णपट्ट से विभूषित तथा सम्पूर्ण नगर की चिन्ता करने वाला नागरिक श्रेष्ठी कहलाता था।
३. शान्तिकर्म करने वाला।
४. अर्थशास्त्र १/१७।
५. व्यभा. १६३६-४०, १६६४ देखें परि ८, कथा सं. ६०।
६. व्यभा. १५६४-६७।
७. व्यभा. १८६५-६७ देखें-परिशिष्ट ८, कथा सं. ८७।
८. व्यभा. ६६७, ६६८, १६०७।
९. व्यभा. १६०४, १६०५।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अमात्य तक पहुंचाते। भाष्य में चार प्रकार के गुप्तचरों का उल्लेख आता है--सूचक, अनुसूचक प्रतिसूचक और सर्वसूचक।

●सूचक पड़ोसी राज्यों में जाकर अन्तःपुरपालक के साथ मैत्री कर वहां के सारे रहस्यों को जान लेते थे।

●अनुसूचक नगर के अन्दर की गुप्त बातों को ज्ञात करते थे।

●प्रतिसूचक नगरद्वार के समीप अल्पप्रवृत्ति करते हुए अवस्थित रहते तथा पड़ोसी राज्य से आने-जाने वाले शत्रु की घात में रहते थे।

●सर्वसूचक अपने नगर में बार-बार आते-जाते रहते थे।

इन चारों प्रकार के गुप्तचरों का आपस में गहरा संबंध रहता था। सूचक जो कुछ भी नयी बात सुनते या देखते वे अनुसूचक को बता देते। अनुसूचक सारा वृत्तान्त प्रतिसूचक को तथा प्रतिसूचक सारे वृत्तान्त के साथ-साथ स्वयं द्वारा गृहीत तथ्य सर्वसूचक को बता देते और फिर सर्वसूचक अमात्य तक सारा रहस्य पहुंचा देते। इन गुप्तचरों में स्त्री और पुरुष दोनों होते थे। ये पड़ोसी नगर, पड़ोसी राज्य, अपने राज्य तथा अपने नगर एवं अन्तःपुर में रहते थे। गुप्तचरी करने वाली स्त्रियों को उचित वेतन-दान मिलता था। अमात्य इन गुप्तचर पुरुष और स्त्रियों से शत्रुराज्य की सारी बातें जान लेते थे।[१]

कौटिल्य ने नौ प्रकार के गुप्तचरों का उल्लेख किया है—कापटिक, उदास्थित गृहपतिक, वैदेहिक, तापस, सत्री, तीक्ष्ण, रसद और भिक्षुक।[२]

राज्यकर

राजा प्रजा से दस प्रतिशत कर लेकर संतुष्ट हो जाता था।[३] नगर कर से मुक्त होते थे।[४] एक गांव से दूसरे गांव में सामान ले जाने पर चुंगी कर लगता था, जो प्रत्येक व्यापारी को बीस प्रतिशत देना पड़ता था।[५]

जिस विधवा महिला के पुत्र नहीं होता, उसको जीवन-निर्वाह योग्य धन देकर शेष सम्पदा राज्य-कोष में रख ली जाती थी पर कुछ दयालु राजा इसके अपवाद भी होते थे।[६] यदि कहीं उत्खनन में निधि मिल जाती तो उस पर राजा का अधिकार होता था, लेकिन कभी-कभी राजा प्रसन्न होकर उस भूमि के स्वामी को ही वह निधि दे दिया करता था।

ब्याज का धन्धा अधिक होता था। ब्याज पर दिये रुपयों की वापिस वसूली कठिन होती थी। जो मीठा बोलता, सापेक्ष व्यवहार करता या सहन कर लेता वह ऋण का धन वापिस ले सकता था। किसान आवश्यकता पड़ने पर धान्य भी ब्याज पर देते थे।[७]

अर्थव्यवस्था

आचार प्रधान ग्रंथ होने के कारण अर्थव्यवस्था एवं व्यवसाय आदि का विशेष वर्णन इस ग्रंथ में नहीं मिलता लेकिन भाष्य में वर्णित विविध कथाओं के माध्यम से उस समय की अर्थ व्यवस्था को जाना जा सकता है।

दुकानों के लिए शाला शब्द का प्रयोग होता था। चक्कियसाला (तैली की दुकान), गंधियसाला (सुगंधित द्रव्य की दुकान), घोडगसाला, लोणियसाला आदि विविध शालाओं का वर्णन मिलता है।[८] विविध प्रकार के वस्त्रों का व्यापार चलता था।[९] ताम्रलिप्त एवं सिंधुदेश के वस्त्र अधिक प्रसिद्धि-प्राप्त थे।[१०] सामुद्रिक व्यापार द्वारा माल का आयात-निर्यात होता था।[११] समुद्र में एक

---

१. व्यभा. ६३९-४७।
२. अर्थशास्त्र १/६/१०/१।
३. व्यभा. ६२७।
४. व्यभा. ६१५ टी. प. १२७।
५. व्यभा. ४५५, ४५६।
६. व्यभा. ३२५१।
७. व्यभा. २६१०।
८. व्यभा. ३७२५।
९. व्यभा. ३७३६।
१०. व्यभा. २८६५।
११. व्यभा. १२०१, १२०२।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थान से दूसरे स्थान पर जाने हेतु बड़े-बड़े पोत तथा विविध प्रकार की नौकाएं काम में लाई जाती थीं। विशेष रूप से चार प्रकार की नौकाओं का उल्लेख मिलता है।[१]

- **समुद्रनौ**—जिससे समुद्र पार किया जा सके।
- **अवयानी**—अनुस्रोत में चलने वाली नौका।
- **उद्यानी**— प्रतिस्रोत में चलने वाली नौका।
- **तिर्यग्गामिनी**—नदी के पानी को तिरछा काटती हुई चलने वाली नौका।

कर्जदार का यदि जहाज डूब जाता और वह स्वयं बच जाता तो उसे ऋण चुकाना अनिवार्य नहीं था। इसे वणिग्न्याय कहा जाता था।[२] वेश्यावृत्ति खूब चलती थी। पांच या दस कौड़ी में वेश्याएं अकृत्य सेवन के लिए तैयार हो जाती थीं। कभी-कभी इस कार्य के विनिमय में वेश्याओं को बिना किनारी वाला कपड़ा भी दिया जाता था।[३]

न्याय के क्षेत्र में रिश्वत चलता था।[४] कार्य के प्रति अनुत्तरदायी व्यक्ति का समाज में कोई स्थान नहीं था। उनको आजीविका के साधन मिलने दुर्लभ थे।[५] तत्कालीन प्रचलित अनेक शिल्प, शिल्पी एवं कर्मकरों का उल्लेख भाष्य में मिलता है।[६] भाष्य में 'कोक्कास' नामक शिल्पी का उल्लेख महत्त्वपूर्ण है। इसका उल्लेख आवश्यकचूर्णि एवं वसुदेवहिंडी में भी मिलता है।[७] वह यंत्रमय कबूतर एवं हंस बनाकर उनसे शालि चुगवा लेता था।[८]

विभिन्न प्रकार की मुद्राओं के उल्लेख से भी उस समय की अर्थव्यवस्था एवं संस्कृति का ज्ञान होता है। भाष्य में कार्षापण, काकणी, उंडि, रूप्यक, माषक, दीनार आदि मुद्राओं का उल्लेख मिलता है।[९]

सांस्कृतिक एवं सामाजिक तथ्य

समय जानने के लिए जल-नालिका या बालू-नालिका का प्रयोग किया जाता था।[१०] साधु लोग सूत्र एवं अर्थ परावर्तन के परिमाण के आधार पर कालज्ञान कर लेते थे। उनका सूत्र-परावर्तन इतना लयबद्ध होता कि सूर्य के मेघाच्छन्न होने पर भी वे कालज्ञान कर लेते थे।[११]

कबूतर का नए घर पर बैठना अपशकुन माना जाता था। ज्योतिषी से पूछकर उस अपशकुन का निवारण भी किया जाता था।[१२] प्रयोजनवश बाहर जाते समय वस्त्र आदि की स्खलना को अपशकुन माना जाता था। अपशकुन आदि होने पर आठ श्वासोच्छ्वास प्रमाण पंच परमेष्ठी मंत्र अथवा दो श्लोकों के चिन्तन जितने समय के कायोत्सर्ग का विधान है। दूसरी बार अपशकुन होने पर सोलह श्वासोच्छ्वास तथा तीसरी बार प्रतिघात या अपशकुन होने पर बत्तीस श्वासोच्छ्वास के कायोत्सर्ग का उल्लेख है। चौथी बार प्रतिघात या अपशकुन होने पर वहां से प्रस्थान न किया जाए अथवा कोई अन्य प्रयोजन प्रारम्भ न किया जाए।[१३] विविध लौकिक मान्यताओं का उल्लेख भी भाष्य में मिलता है, जैसे नख को दांत से काटने पर कलह होता है आदि।

---

१. व्यभा. ११० टी. प. ३६।
२. व्यभा. १२०० टी. प. ५१।
३. व्यभा. १६२२।
४. व्यभा. १३ टी. प. ८।
५. व्यभा. २३२३-२५।
६. देखें परि. १६ एवं २०।
७. आवचू. भाग १ पृ. ५४१; वसुदेवहिंडी भा. १ पृ. २।
८. व्यभा. २३६३ टी. प. २०।
९. देखें-परिशिष्ट २०।
१०. व्यभा. ४०४७ टी. प. ३३।
११. व्यभा. ७८३ टी. प. ६३: सूत्रार्थचिन्तनप्रमाणेन कालं दिनरात्रिगतागतरूपं जानाति; व्यभा. ७८६-७८८।
१२. व्यभा. २८८१।
१३. व्यभा. ११७,११८।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यत्र-तत्र ऐन्द्रजालिक विविध करतब दिखाते हुए घूमते थे। साथ ही संन्यासी वर्ग भी इसका प्रयोग करता था। जादूगर मुंह से गोले को निगलकर कान से निकाल देते थे।[१] जादू-टोनों का प्रयोग भी खूब चलता था।[२]

मृतक-परिष्ठापन में अन्य सावधानियों के साथ दिशा का विशेष ध्यान रखा जाता था। विपरीत दिशा में परिष्ठापन करने का विशेष प्रभाव होता था।[३] उत्तरदिशा में मृतक का परिष्ठापन उत्तम माना जाता था। आनंदपुर में साधु उत्तरदिशा में परिष्ठापन करते थे।[४]

विविध प्रकार के भोजों का आयोजन होता था—आवाह(वरपक्ष का भोजन), वीवाह (वधूपक्ष की ओर से भोजन), जण्ण (नाग आदि देवताओं को श्राद्ध), करडुय (मृतक भोज) आदि।[५]

वाद-विवाद के प्रसंग चलते थे। वाचिक संग्राम में जाते समय वादी अनेक बातों का ध्यान रखते थे। वाक्पाटव के लिए ब्राह्मी आदि औषधि का सेवन करते थे। बुद्धिबल, धारणाबल एवं ऊर्जा की वृद्धि के लिए दूध एवं घी का विशेष प्रयोग किया जाता था।[६]

वाद-विवाद किनके साथ करना चाहिए और किनके साथ नहीं करना चाहिए, इसका भी सुन्दर विवेक भाष्यकार ने प्रस्तुत किया है—आर्य, विज्ञ, भव्य, धर्मप्रतिज्ञ, अलीकभीरू, शीलवान्, आचारवान् के साथ वाद करना चाहिए। अर्थपति, नृपति, पक्षपाती, बलवान्, प्रचण्ड, गुरु, नीच, एवं तपस्वी के साथ वाद नहीं करना चाहिए।[७]

गंगायात्रा पर सार्थवाह बहुत जाते थे।[८] मालवदेश में चोरों का प्रभाव अधिक था। चोर धन-माल की ही चोरी नहीं करते थे, व्यक्तियों एवं साध्वियों का भी अपहरण कर लेते थे।[९]

नारी

अवस्था की दृष्टि से अठारह वर्ष की युवती डहरिका तथा ४० साल की स्त्री तरुणी कहलाती थी।[१०] नारी की पराधीनता का चित्र खींचते हुए भाष्यकार कहते हैं— नारी बचपन में पिता, यौवन में पति तथा वृद्धावस्था में पुत्र के अधीन रहती है, अतः नारी कभी स्वाधीन नहीं रहती।[११]

कभी-कभी पुरुष महिलाओं पर हाथ भी उठा लेते थे। महिलाओं की शक्ति बढ़ना उचित नहीं माना जाता था। भाष्य में स्पष्ट उल्लेख है कि जिस गांव या नगर में महिला नायिका है, वह गांव या नगर शीघ्र नष्ट हो जाता है तथा जो लोग स्त्री के परवश हैं, वे धिक्कार के पात्र हैं।

साध्वियों को कुछेक विशेष ग्रंथों की वाचना देने का निषेध था। बृहत्कल्प भाष्य में निषेध के हेतुओं का उल्लेख है।

वास्तुविद्या

वास्तुविद्या की दृष्टि से अनेक महत्त्वपूर्ण तथ्य प्रस्तुत ग्रन्थ में मिलते हैं। एक खम्भे पर आधारित प्रासाद बनाए जाते थे।[१२] कभी-कभी रानी या पत्नी की इच्छा से हाथीदांत से जटित सौध भी बनाए जाते थे।[१३]

१. व्यभा. ८७६।
२. व्यभा. ८७६ टी. प. ११७।
३. व्यभा. ३२६९-७३।
४. व्यभा. ३२७५ टी. प. ७६।
५. व्यभा. ३७३६।
६. व्यभा. ७५७ टी. प. ८४।
७. व्यभा. ७१२-७१५।
८. व्यभा. १६१२-१४।
९. व्यभा. १६८१, ३२५२।
१०. व्यभा. २३१३,।
११. व्यभा. १५९०, तुलना मनुस्मृति।
१२. व्यभा. ६३ टी. प. २४।
१३. व्यभा. ५१७ टी. प. १७।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मकान बनाने से पूर्व उसका .रूप तैयार किया जाता था।[1] संघ को शीतगृह की उपमा दी गई है। इससे स्पष्ट है उस समय वातानुकूलित मकान भी बनाए जाते थे।[2] मकान बनाने में पत्थर एवं लोहे की ईंटे काम में लाई जाती थीं।[3]

चक्रवर्ती के भवन १०८ हाथ, वासुदेव के ६४ हाथ, मांडलिक के ३२ हाथ तथा साधारण लोगों के भवन १२ हाथ ऊंचे होते थे।[4]

आठ मंजिल के ऊंचे प्रासादों का उल्लेख मिलता है। मकानों में तलघर भी बनाए जाते थे।[5] राजभवन एवं सेठ लोगों के मकानों में मणि-मुक्ता जड़े रहते थे।

दासप्रथा

महावीर द्वारा दासप्रथा का विरोध किए जाने पर भी भाष्यकार के समय तक इस प्रथा का समूल नाश नहीं हुआ था। निशीथ भाष्य में अनेक प्रकार के दासों का उल्लेख मिलता है। जो गर्भ से ही दास बना लिए जाते वे 'ओगालित' कहलाते। खरीदकर लाए हुए को क्रीतदास तथा ऋण से मुक्त न होने के कारण बने दास को 'अणए' कहा जाता। दुर्भिक्ष के कारण भी कुछ लोग दासवृत्ति स्वीकार कर लेते।[6] राजा का अपराध होने पर भी दण्ड के कारण व्यक्ति दास बना लिए जाते।[7] म्लेच्छ या चोरों द्वारा अपहृत व्यक्ति कालान्तर में दास के रूप में बेच दिये जाते। कोई अपने बच्चे को मित्र के घर छोड़कर स्वयं दीक्षित हो जाता, मित्र के कालगत होने पर उस घर में आदर न मिलने पर वह दासवृत्ति स्वीकार कर लेता।[8]

किसी को दासत्व से मुक्त कराना कठिन कार्य था। भाष्यकार ने साधु द्वारा अपने पुत्र को दासत्व से मुक्त कराने के अनेक उपाय निर्दिष्ट किए हैं।[9] कभी-कभी दास या दासी को किसी कार्य से प्रसन्न होकर स्वामी उसका मस्तक प्रक्षालित कर देता, जिससे उसे दासता से मुक्ति मिल जाती।[10] दास को दीक्षित करने का निषेध था पर संथारे के इच्छुक दास को दीक्षित करने का विधान भी था।[11]

पर्यवलोकन

व्यवहार भाष्य एक आकर ग्रंथ है। अनेक विषयों का इसमें समावेश है। टीकाकार मलयगिरि ने इस पर टीका लिखकर इसको और अधिक प्रशस्त बना दिया है। यद्यपि इस ग्रंथ का मुख्य प्रतिपाद्य प्रायश्चित्त देकर साधक की विशोधि करना है, परन्तु इस प्रतिपाद्य के परिपार्श्व में ग्रंथकार ने और भी अनेक तथ्यों का प्रतिपादन किया है। प्रस्तुत ग्रंथ भाष्यकालीन सभ्यता एवं संस्कृति पर विशद प्रकाश डालता है। ग्रंथकार ने जैन परम्परागत विधि-विधानों का अविकल संकलन कर उनकी पारंपरिकता को अविच्छिन्न रखा है।

भाष्य में अनेक मत-मतान्तरों का उल्लेख है। पांचों व्यवहारों के संदर्भ में अनेक महत्त्वपूर्ण मंतव्यों का उल्लेख भाष्य एवं टीका में प्राप्त है। हमने भाष्यगत अनेक विषयों को छुआ है फिर भी अनेक विषय अछूते ही रह गए हैं। इसमें वर्णित चतुर्भंगियों पर विशद प्रकाश डाला जा सकता है और उनके माध्यम से अनेक नए-नए तथ्य सामने आ सकते हैं। दशवें उद्देशक में वर्णित चतुर्भंगियां मानव मन का सुंदर विश्लेषण प्रस्तुत करती हैं।

---

१. व्यभा. ४१७६।
२. व्यभा. १६८१।
३. व्यभा. २२८३।
४. व्यभा. ३७४८,३७४९।
५. व्यभा. ३७४७।
६. निभा. ११७४।
७. निभा. ३६७६, व्यभा ११७४।
८. व्यभा. ११८०,११८१।
९. व्यभा. ११८२-९२।
१०. व्यभा. २६५४ टी. प. ३८।
११. व्यभा. ११७२।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सभ्यता एवं संस्कृति के तथ्यों को हम बहुत अल्पमात्रा में प्रस्तुत कर पाए हैं। इसका एक कारण तो यह है कि कुछेक तथ्य अनेक परिशिष्टों में समाहित हो चुके हैं अतः उनको पुनः यहां दोहराना उचित नहीं लगा।

इतना लिखे जाने पर भी महसूस हो रहा है कि अभी भी बहुत कुछ लिखना शेष है।

१ जून १९९६
जैन विश्व भारती, लाडनूं

मुनि दुलहराज
समणी कुसुमप्रज्ञा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

The glimpses of Vyavahāra Bhāṣya

Classification of the Āgamas

The Āgamas are divided into two classes : Aṅga and Pūrva. Āryarakṣita has classified them into four divisions. (1) Caraṇakaraṇānuyoga, (2) Dharma-kathānuyoga, (3) Gaṇitānuyoga, (4) Dravyānuyoga.[1] At the time of compilation of the canonical literature the Āgamas were divided into two types—Aṅga praviṣta (inner corpus) and Aṅga Bāhya (outer corpus). Nandī Sūtra mentions the division keeping in view the time. Some Āgamas studied in the first and the last quarters of the day are known as Kālika and those which can be studied at all times, are known as Utkālika. The latest classification of Āgamas, however, falls into four categories—Aṅga, Upāṅga, Mūla and Cheda. At the present time this very classification is more popular.

Importance of Cheda Sūtras

Jainism has been much emphatical on the purification of conduct, to such an extent that even in dream if one commits violence or speaks falsehood, he has to undergo repentance. References to it are found in the canonical works in the form of 'Prakīrṇa'. In due course of time, however, independent need for the literature on do's and don'ts about asceticism began to be felt. From the point of view of dravya, kṣetra, kāla etc. there emerged some changes in ethical code. According to circumstances some alternative rules were also framed which came to be known as exceptions. Cheda Sūtras deal with various ethical compendium of the monk but at the same time there is provision for occasional exceptions. These sūtras, not only frame the mode of an ascetic's life but suggest punishment too in event of slightest infringement of rules. In the colloquial language they are known as Penal code but in ethico-metaphysical language they were known as rules of 'Prāyaścitta'. The word 'kappai' indicates the rules for an ascetic to be practised. But 'no kappai' means that the saint is not allowed to perform such deeds. In Buddhist tradition are find diffuse reference of ethics, discipline and repentance as in the 'Vinaya Piṭaka'. Similarly such rules are found in 'Srouta sūtra' and 'Smṛtis' of the Vedic legacy. Amidst huge number of Cheda Sūtras, Niśītha occupies a prominent place. The Vyavahāra Bhāṣya refers to the significance of Niśītha with several instances in its fifth and sixth uddeśakas. Daśāśrutaskandha is entirely different from the three works from the point of view of subject matter and the style of composition. This work also contains the monastic rules which have to be observed and also to be avoided in a systematic way. Hence this work is subsumed under Cheda Sūtras.

While discussing the supremacy between the aphorism of the Agama and its meaning, the latter is regarded more prominent in Vyavahāra Bhāṣya. In the same context, while dealing with the meaning of other Āgamas, the meaning of Cheda Sūtras is attached more significance. The reason stated thereof is that the commentators are of the opinion that whenever there are moral aberrations and defects imposed, the Cheda sūtra have purificatory effect, so leaving aside the pūrvas, the Cheda Sūtras are superior to other Āgamas as regards the meaning. Cheda Sūtras have been referred to as 'Uttama Sruta' in the Niśītha Bhāṣya. The reason for naming it as 'Uttama Śruta' has been explained by the Cūrṇikāra that there is the direction of repentance (prāyaścitta), by which the conduct becomes purified that is why Cheda Sūtra is regarded as 'Uttama Śruta'.[1] There is an explicit reference to Niśītha that without studying Acārāṅga, the teaching of Cheda Sūtra by any

1. Dasa Agas. Chūr. p. 2
2. Nandī Sū. 77, 78
3. Vyavahāra Bhāṣya 1829: jamhā tu hoti sodhi, chedasuyatthena khalitacaranassa tamhā chedasuyattho, balavam mottūṇa puvvagatam.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Ācārya invites repentance; in other words if the Ācārya teaches Cheda Sūtras without studying Ācārāṅga he has to face the punishment of Prāyaścitta.[2] The knower of Cheda Sūtra is known as 'Śruta-Vyavahārī.[4] Cheda Sūras are basically mystical literature. Like 'Yoni Prābhṛta' etc, it is also to be kept secret. The teaching of Cheda Sūtras are restricted to a few. Niśītha Bhāṣya and Cūrṇi clearly mention that the work should not be taught in the assembly of simpleton ignorant and also those ascetics who have not finished their studies. However an exception is made by permitting even the undeserving to be taught Niśitha in view of the cessation due to dravya, kṣetra, kāla and bhāva.[6] According to Pañcakalpa Bhāṣya Cheda Sūtra was permitted for teaching only to the experienced disciples whereas the improvident and extra-improvident were debarred from it.[7] Cheda Sūtra taught to apariṇāmaka disciples are ruined like the milk poured in a clay-built and verjuiced pot. In the Order containing abundant novice ascetics, Cheda Sūtra was taught in perfect secrecy lest the novice ascetics change their minds and leave the Order.

The authorship of Cheda Sūtras

The Cheda Sūtras were culled from the 'Pūrvas'. The literature 'Niryukti' and 'Bhāṣya' refer to the third Ācāra Vastu of Pratyākhyāna Pūrva from which the four Cheda Sūtras, such as Daśāśrutaskandha, Bṛhatkalpa, Vyavahāra and Niśītha originated.[9] Regarding the author-ship of Niśītha there is no unanimity of opinion amongst the scholars. Some scholars are of the view that Niśītha is also the work of Bhadrabāhu. But this does not appear to be logical. Actually Niśītha is not the work of Caturdaśapūrvadhar Bhadrabāhu. Arguments can be advanced in the support of this hypothesis.

1. Daśāśrutaskandha's niryukti and Pañcakalpa bhāṣya respectfully pay obeisance to Bhadrabāhu the author of Daśa, Kalpa and Vyavahāra but no reference at all is found of Ācārakalpa and Niśītha.[11]

Regarding the time limit of the study of the Āgamas as stated in Vyavahāra Sūtra, there is a simultaneous reference of Daśāśruta, Vyavahāra and Kalpa.[12] Particularly Āvaśyaka sūtra invariably refers to uddeśakas

---

1. Niśitha bhāṣya 6184 cūrṇi, p. 253.
2. Niśītha; 19/18
3. Niśītha bhāṣya, 6395, Vyavahārabhāṣya, 320
4. Vyavahāra bhā'‹6–sya 4432-35
5. Vyavhāra bhāṣya 646, Commentary p. 58 Niśītha bhāṣya 5947, cūrṇi. p. 190
6. Niśītha bhāṣya, 1223: nāūṇa chedasuttaṁ pariṇāmage hoti dāyavvaṃ.
7. Pañcakalpa bhāṣya, 1223 : nāūṇa chedasuttaṁ pariṇāmage hoti dāyavvaṃ.
   Vya. Bh. 1739
8. Vyavahāra bhāṣya 4100, 4101.
9. Vyavahāra bhāṣya : 4173
   (a) savvaṃ pi ya pacchittaṃ, paccakkāṇassa tatiyavatthummi/
   tatto cciya nijjūḍhaṃ, pakappakappo ya vavahāro//
   (b) Pañcakalpa bhāṣya 23:
   āyāradasā kappo, vavahāro navama puvva ṇisando/
   (c) Ācārāṅga niryukti 291:
   āyārapakappo puṇa, paccakkhāṇassa tatiyavatthūo/
   āyāranāmadhejjā, visaimā pāhuḍacchedā//
10. (a) Daśāśrutaskandha, niryukti:
   vandāmi bhaddabāhuṃ, pāīṇaṁ carimasagalasuyanāṇim/
   suttasa kāragamisim dasāsu kappe ya vavahare//
   (b) Pañcakalpa bhāṣya 12:
   to suttakārao khalu, sa bhavati dasakappavavahāre/
11. Daśāśrutaskanadha, niryukti ': Pañcakalpa bhāṣya /
12. Vyavahāhara Sūtra 10/27
   pañcavāsapariyāyassa samaṇassa nigganthassa/
   kappai dasā kappavavahāre addisittae//

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

of these three works,[1] excluding, however, the Niśītha which has been referred to separately.[2] Referring to the Śruta-vyavahāri, the Commentator has accepted Kalpa and Vyavahāa and the knower of their Niryuktis on these works as Śrutavyavahārī. There also is no reference to Niśītha and Ācāraprakalpa yet the significance of Niśītha has been indicated in various gathers in the Vyavahāra bhāṣya, but it appears that these lines are added later on. Because Niśītha later on gained a prominent and prestigious place; otherwise, the Commentator would have definitely referred to Niśītha as having compiled this work. Winternitz has accepted Niśītha as modern one and had dubbed Niśītha as anthological one.[5] There is a common agreement among the scholars that Niśītha was compiled by Viśākha Gaṇi, who was contemporary of Bhadrabāhu.

Similarly there is a problem regarding the compilation of Daśāśrutaskandha which contains the life and (sthavirāvali) ascetic order of Bhagavāna Mahāvīra. If so, how can it be regarded as derived from Pūrvas? It looks probable, some part of it has been supplemented to it later on. The bhāṣya literature elaborately discusses the circumstances leading to the compilation of Cheda Sūtras. According to the Commentator the ninth Pūrva is as vast as the ocean, so it should be remembered constantly, it should be forgotten[6] lest. When Bhadrabāhu found the degradation of physical and mental powers, he felt the need for the protection of character and its purificatory process, and that is why he complied Kalpa and Vyavahāra.[7] The other reason told by bhāṣyakāra is that in the absence of Caraṇakaraṇānuyoga there will be the interruption of conduct and character. Therefore, to protect the character and to preserve this Caraṇakaraṇānuyoga Bhadrabāhu had compiled these works.[8]

Cūrṇikāra clearly mentions that Bhadrābahu has composed Daśa, Kalpa and Vyavahāra due to decomposition of the power of life-span and memory and not for food, attribute or popularity etc.

The Bhāṣyakāra it with illustration-just as a man tries to collect fragrant flowers, by climbing up the Kalpavṛkṣa, but is incapable, so another one climbs up the tree out of mercy, collects the flowers and supplies them to the incompetent persons. Similarly Bhadrabāhu climbs up the Kalpavṛkṣa, as it were, and compossed the Cheda works out of mercy for incompetent persons. In this connection the bhāṣyakāra has mentioned Keśava Bihārī and Vaidya citing their examples.

The title of the work

'Cheda Sūtra' is a part of canonical works. The title 'Cheda Sūtra' is found in the Jain tradition alone. In Buddhist and Vedic legacies such classification is not found. Nandī sūtra declares that the Vyavahāra and Bṛhatkalpa, etc., are subsumed under the category of 'Kālika Śruta' (to be recited at a particular time). The Gommaṭasāra,[9] Dhavalā[10] and Tattvārtha sūtra[11] treat the Vyavahāra and other works as 'Aṅga Bāhya (outside the fold of canonical works). It appears that when Bhadrabāhu was compiling the monastic rules, there was not such groups of literature like Cheda Sūtras. Later on when such literature gained

---

1. Āvaśyaka sūtra, 8:
2. Vyavahāra bhāsya 10/15 :
   tivāsaparivāyassa samaṇassa nigganthassa kappai āyārapakappaṃ nāmaṃ ajjhayaṇaṃ addisittae.
3. Vyavahāra bhāṣya, verses 4432, 4436
4. Pañcakalpa cūrṇi—unpublished
5. A History of Indian literature, p. 446
6. Vyavahāra bhāṣya, 26-29
8. Pañcakalpa bhāṣya—42
   Dasā Śru Chū. p. 3 Pañ. kalpa Bh., 43-46 PKB, 47-48.
9. Gommaṭasāra jīva kāṇḍa, 367, 368
10. Dhavalā, Text, I. P. 96.
11. Tattavārtha 2/20

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

importance, he had to classify this new literature under special category; Yet, how the word Cheda Sūtra became prevalent is not traced in the ancient literature. The most ancient description of 'Cheda Sūtra' is found in Āvaśyaka niryukti.[1] In the light of inferential approach of several scholars, several arguments about the appropriateness of the title 'Ched Sūtra' have been furnished. According to Shubbring : out of ten categories of repentance, on basis of Cheda and Mūla the classification of Āgamas acquired two names as 'Cheda' and 'Mūla'.[2] On the basis of this inference the 'Cheda Sūtra' are genuine as regards the subject matter. The present 'Mūla Sūtras' are not in conformity with the 'Mula' repentance.

Since the sāmāyika cāritra conduct is of a short duration, the role of repentance is confined to Chedopasthāpaīnya conduct. These 'sūtras' make provision for repentance. Hence they are knwon as 'Cheda Sūtra'. In the Digambara Āgama 'Cheda piṇḍa' refers to repentance with eight synonymes, one of which is 'Cheda'. According to Śvetāmbara tradition out of ten types of 'prāyaścitta' the seventh is Cheda. The last three are adopted not as an ascetic. However, in the śramaṇic tradition the last 'prāyaścitta' is Cheda itself. Hence Cheda Sūtra is that literature which provides a method to remove the stigma of moral aberration, hence the Cheda Sūtra. The Cheda Sūtra has been equated with the conduct common to the entire monastic order as per a chapter on 'right conduct' found in the 'ṭīkā' by Malayagiri on Āvaśyaka.[3] The words 'padavibhāga' and 'Cheda', are equivalent in their connotation. All the sūtras of 'Cheda Sūtra' are independent. One sūtra has nothing to do with the other one. Even the explanation is furnished from the view-point of 'cheda' or 'vibhāga'. Also for this reason this is known as 'Cheda Sūtra'.

Regarding the title of the work Cheda Sūtra Ācārya Tulsi (present Gaṇādhipati) has provided a new clue for this. 'Cheda Sūtra' is regarded as 'uttama śruta'. 'Uttama śruta' while analysing the word, we doubts whether 'cheyasutta' is not the same as 'cheka śruta'. Cheta śruta is equivalent to 'Kalyāna Śruta' (benevolent literature) or 'uttama śruta' auspicious literature. Daśāśrutaskandha is regarded a prominent work on Cheda Sūtra.[4] From this it appears that cheya sutta and cheka sutta are not incongruent. What Daśa vaikālika (4/11) contains 'Jaṃ-Cheyaṃ taromanm samāyare', confirms 'cheya' as 'cheka'.

Cheda Sūtra is that which does not provide an obstacle in the observance of rules (of Monastic order), leading to the path of purification. Haribhadra's contention also has been expressed in his Ṭikā on 'Pañcavastu, which designates Cheda Sūtra as advocation serenity and holiness; thus the title Cheda-Sūtra' appears to be quite appropriate.

The four 'Cheda Sūtras as available today have meaningful titles, and are subsumed under Āyāradaśā, containing monastic order in various stages. It is divided into ten chapters; hence it comes to be known as Daśāśrutaskandha. Kalpa means conduct. The work which contains the monastic disciplinary rules on an extensive scale is known as Bṛhatkalpa. Malyagiri has elucidated the suitability of the title 'Bṛhatkalpa' in his Bṛhatkalpa bhāṣya, a commentary on 'Bṛhatkalpa'.[6] The 'Vyavahāra is fundamentally the sūtra on repentance. It is appropriately called vyavahār because of the five types of vyavahāra (behaviour).

The work 'Ācāra prakalpa' contains various types and alternatives of conduct. It has another title-Niśītha which means midnight or darkness. According to the commentary on Niśītha it was taught at midnight or in

1. Āvaśyaka niryukti, 777.
2. Kalpasūtra p. 8.
3. Āvaśyaka niryukti 665. Malayagiri Commentary, p. 341. padavibāga sāmācārī chedasūtrāṇi.
4. Daśāśrutaskandha cūrṇi, p. 2. imaṃ puṇa ccheyasuttapamuhabhūtam.
5. Niśīthajjhayaṇaṃ introduction, p. 3-4.
Jainendra-siddhānta-koṣa; II/306:
bajjhāṇutthānenam jenaśṇa bāhijjae tayam ṇyamā/
saṃbhava : ya parisuddham so puṇa dhammanmmi cheutti//
6. Bṛhatkalpa bhāṣyapīṭhikā. p. 4.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

the absence of light[1]. Hence the short title of 'Niśītha'.

The number of Cheda sūtras

The scholars are not unanimous about the number of Cheda Sūtras. According to Jīta Kalpa Cūrṇi the following works are subsumed under the Cheda Sūtras—Kalpa, Vyavahāra, Kalpikākalpika, Kṣullakalpa, Mahākalpa and Niśītha etc.[2] The word 'etc.' is probably, an indication of Daśāśrutaskandha. The works—Kalpikalpik, Mahākalpa and Kṣullakalpa etc. are not available today. It is indisputable that these works refer to repentance sūtras, hence they are included the category of Cheda Sūtras.

The Āvaśyaka Niryukti refers of Mahākalpa alongwith Cheda Sūtra.[5] Hiralal Kapadia's opinion is that after the extinction of Pañcakalpa, Jītakalpa was counted as Cheda Sūtra.[6] Some hold that Pañcakalpa was the part of Bṛhatkalpa Bhāṣya some time ago. But it was later on separated just as the Ogha niryukti and the Piṇḍa Niryukti.[7]

In modern times Pañcaklpa is not available. The work existed upto the early part of seventeenth century according to the list of Jain works[8], yet it cannot be asserted when actually is disappeared. In the light of the topics discussed in the Pañcaklpa Bhāṣya, it appears that Pañacakapla was regarded as a branch of Ched Sūtras. According to Winternitz the composition of Cheda Sūtra falls in this order—Kalpa, Vyavahāra, Niśītha, Piṇḍa Niryukti, Ogha Niryukti and Mahā Niśītha.[9] Winternitz did not include Jītakalpa as one of the Cheda Sūtra. Jīta Kalpa was composed after Nandī sūtra, hence Jīta Kalpa is not referred to in the work. Piṇḍa Niryukti and Ogha Niryukti describe the monastic disciplinary rules, and perhaps for this reason Winternitz has included these two works in the category of Cheda sūtras. The Digambara literture also refers to Kalpa, Vyavahāra and Niśītha, in the form of 'Aṅga-(Outer Corpus) Bhāsya' literature. But Digambara literature does not mention Jīta Kalpa, Pañcakalpa and Mahāniśītha. Daśāśruta is treated as the first Cheda Sūtra as mentioned in the 'Samavāo'.[10] The Commentator has accepted in a prominent way Daśāśrutaskandha among Cheda Sūtras11 for the reason that it describes logically the conduct of an ascetics to be followed or not.

According to Winternitz, Vyavahāra is supplementary to Bṛhatkalpa. In Bṛhatkalpa there is provision for 'Prāyaścitta', determining deeds, whereas Vyavahāra is its practical area. Of course there is room for prāyaścitta in it. According to him (Winternitz) Niśith. is a modern work since the major part of Niśītha is borrowed form Vyavahāra and some part from the first and the second Cūlā.[12] Some Ācāryas maintain the view that Daśāśruta, Bṛhatkalpa and Vyavahāra below to the same Śrutaskandha; alone but some Ācāryas hold the opinon that Daśāśruta belongs to one Śrutaskandha and Kalpa and Vyavahāra belong to the second Śrutaskandha.[13]

---

1. Niśītha bhāṣya, 69.
2. Jītakalpa cūrṇi P.1. Kappa-vavahāra kappiyākappiya—cullakapa-mahākappa-suya nisithāiesu-chedasuttesu aivitthareṇa pacchittaṃ bhaṇiyaṃ.
3. Āvaśyaka niryukti, 777, Viśeṣāvaśyaka bhāṣya, 2295
4. Sāmācārī śataka, Āgamādhikāra.
5. Jainadharama. P. 259
6. History of the Canonical literature of the Jainas, P. 37
7. History of the Canonical literture of the Jainas, P. 36
8. History of the Canonical literature of the Jainas, P. 36
9. A History of Indian Literature, P. 464
10. Samavāyāṅga 26/1
11. Daśāśrutaskandha cūrṇi, p. 2. imaṃ puṇa Chedasuttapamuhasuttaṃ
12. A History of Indian Literature, P. 446
13. Pañcakalpa Bhāṣya, 25

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Cheda Sūtras and the Anuyogas

Anuyogas are the method of writting special explanatory notes. They are mainly of four types. (1) Caraṇakaraṇānuyoga, (2) Dharmakathānuyoga, (3) Gaṇitānuyoga (4) Dravyānuyoga.

Prior to Āryarakṣita, the study of all works was done keeping in view all the four anuyogas but later on, when memory became less and less strong, Āryarakṣita classified anuyoga into four parts. From the point of view of the significance of the subject, anuyoga was classified to interpret Āgamas. On the strength of this classification the Āgamas were also divided under four heads. Since Cheda Sūtra is chiefly based on conduct, it was subsumed under Caraṇakaraṇānuyoga. In this context a disciple asks his Guru, as stated in Niśītha Cūrr whether Niśītha being pañcamacūlā of Ācārāṅga had been included in the Aṅga literature, and since it belongs to Caraṇakaraṇa, but under which anuyoga should the Aṅga Bāhya Cheda Sūtras be included? But bhāṣyakār. of Niśītha has included the Cheda Sūtras in the category of Caraṇa Karaṇānuyoga.

Niryuktikāra

Ācārya Bhadrabāhu is well-known as the 'Niryuktikāra' even Govinda Acārya's 'Govinda Niryukti' is mentioned in some places.[2] There are controversies among scholars regarding Bhadrabāhu. Winternitz and Kapadia etc, hold Bhadrabāhu I (a knower of fourteen Pūrvas) as the 'niryuktikāra' in their assessment, but Bhadrabāhu II, is the author of niryuktis on several grounds. Here some agruments are put forth so that the historical period can be determined.[4]

1. 'Niryukti' forms the first commentary on Āgama in the Prakrit-verse style. The Bhāṣyas were written on niryukti, leading to inference that the intervening period must be sufficient, since there was no provision for publication and propagation of literature. On the basis of the oral tradition and manuscripts, the knowledge was acquired from any work; if Bhadradbāhu II is accepted as the author of 'niryuktis', then the work belongs to 1th Century A.D., whereas the bhāṣyakāra belongs to the 4th or 5th century A.D.[5] From this it is clear that the period of niryukti is 2nd or 3rd century.

2. There are several verses belonging to Āvaśyaka niryukti in Mūlācāra. Mūlācāra was written before Bhadrabāhu II. It looks improbable that the verses from Mūlācāra were added to Āvaśyaka niryukti. After Gautama Ganadhara, Bhadrabāhu became an outstanding Ācārya who was accepted by both the sects with the same honour. It looks more probable that Vaṭṭakera has adopted the work of Bhadrabāhu I.

3. There are certain indications like, 'Purātani gāhā' or 'ciranatana gāhā' at several places of Bṛhat. Kalpa and Niśītha bhāṣya. These verses appear to be complied by Bhadrabāhu I. There are reference like, 'Esa cirantana gāhā', 'eyāe cirantanagāhāe ama bhaddabāhusamikata vakkhan gāhā' that before Bhadrabāhu II there were niryuktis in existence. The adjective 'Purātana' indicates its historical priority—indicative of Bhadrabāhu I. It looks, therefore, that because of the synonymous names the difference between two Bhadrabāhus could not be clear.

4. Mallavādi, the author of 'Nayacakra' belongs to 5th century A.D. He has quoted Niryukti gāthā in his works, from which the ancient period of niryukti is established.

5. In the Ṭīkā by Śāntyācārya on 'Uttarādhyayana there are some stories concerning the Pariṣahās

---

1. āvaśyakaniryukti 777, niśīthabhāṣya 6190
   jam ca mahākappasuyaṃ, jāṇi ya sesāiṃ
   chedasuttāiṃ
   caraṇakaraṇānuyoga, kāliya chedovagy-āi ya.
2. Bṛhat bhāṣya, 5473, ni, bhā 5573
3. The history of Canonical Literature of Jainas. p. 172
4. Muni Śri. Hajārīmal Smṛiti grantha P. 718, 719
5. . iin Āgama Sāhitya main Bharatiya Samaj. P. 35-37

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(afflictions) which declare that Niryuktis were written before Bhadrabāhu I, the Caturdaśapūrvī (knower of Pūrvas) should not be doubted.[1] It is clear from this statement that Bhadrabāhu I, wrote the Niryuktis in brief, but were elaborated by Bhadrabāhu II. The modern authors like Pādalipta, Kālakācārya, Āryavajra, Siṃhagiri, Somadeva, Phalgurakṣita etc. were included in the Niryukti literature, just as 'Samavāo' and 'Ṭhāṇaṃ' include, at several places, some names.

6. Maladhāri Hemacandra states in 'Viśeṣāvaśyaka Bhāṣya,' that, although the Gaṇadharas (disciples of Mahāvīra,) wrote the Āgamas in aphoristic (sūtra) style, Bhadrabāhu I, the knower of 14 Pūrvas, elaborated the doctrines for the benefit of monks and nuns by writing Niryuktis, containing 'sāmāyika' etc. into six sections.[2] Besides, Bhadrabāhu I wrote 'Kalpa' and 'Vyavahāra sūtra in the form of sūtra.[3] This view is supported by Kṣemakīrti.

Śīlaṅkā accepts that Bhadrabāhu I is the author of Niryukti. Śīlāṅka flourished in 9th or 10th century; again;[4] Droṇācārya in his Ṭīkā on 'Oghaniryukti' has stated likewise.[5]

7. That Bhadrabāhu I, was not the author of Niryukti has been opined by 'Vandāmi Bhaddabāhu', the first verse (gāthā) in the 'Daśāśrutaskandha'. The scholars are of the view that if he is the author of Niryuktis, how could he greet himself ?

It one closely refers to Āgama literature, it appears that the 'mangalācaraṇa' tradition is of later times, but, if at all stated like this, it seems that it has been a later addition.
Ācārya Bhadrabāhu has written the 'maṅgalacāraṇa', by way of 'Pañcajñāna' in the Āvaśyaka-niryukti'. Further, 'maṅgalācarṇa' verse of other 'Niryukti' have been added either by Bhadrabāhu II or his successors, as for example, the verse of 'maṅgalacāraṇa' occuring in Ācārāṅga' and The 'maṅgalācaraṇa' or 'Ācārāṅganiryukti', and the first verse on the same, has not been commented. The Commentator Śīlāṅka' through 'amgogadayaga' has hinted Bhadrabāhu I, as the author of Niryukti.[6] 'The maṅgalācaraṇa' of 'Daśavaikālika' verse has not been explained by Agastyasiṃha and Jinadāsa. Besides, 'maṅgalācaraṇa' verse(s) are not found in the 'Uttaradhyayna', 'Niśitha', and 'Niryuktis', which looks 'Pañcakalpabhāśya' has been added to the 'Niryukti' of 'Daśāśrutaskandha', because, the Niryuktis-'Niśitha', 'Vyavahāra' and 'Bṛhatkalpa' are merged with Bhāśya, But the 'Niryukti' on 'Daśāśrutaskandha', was separate one. Bhadrabāhu I, was the author of 'Daśāśrutas. The, 'maṅgalācaraṇa' verse appears to be added to it by the succeeding Ācāryas; the legacy appears to be continued in 'Pañcakalpabhāṣya' and its elaboration is also available; yet, it is a matter of further investigation.

8. The original author of 'Niryuktis' is Bhadrabāhu I, but additional verses were furnished by Bhadrabāhu II. One more proof of it lies therein, that the three verses (365, 366[7] and 367), of 'Ācārāṅganiryukti' are neither indicated nor explained, meaning thereby that these verses are added later on. There is a mention of "pañcamacūlānisihaṃ tassa ya uvariṃ bhaṇihāmi" in 'niryukti' verse, indicative of the author of Niśītha Niryukti' is Niryuktikāra' himself. There is a mention of Niryukti' in 'Āvaśyakaniryukti'; there is no indication of writing the Niśītha Niryukti', yet it looks probable, that these three verses are written by Bhadrabāhu II, and the idea of writing down the Niśītha-Niryukti' was declared by him. The method of composition of 'Niśīthaniryukti' is quite different from other 'Niryuktis' also, making Bhadrabāhu II, as the author. By way of conclusion, the redaction (writing of) of Niryukti literature had started by the second or third centuries of Vīranirvāṇa, however the systematisation of 'Niryukti' was effected by Bhadrabāhu II, the

---

1. Utt. Śāntyācārī Commentary, P. 139, 140
2. Viśeṣāva Bhāṣya Maladhari Hemachandra Commentary, P. I
3. Bṛha bhāṣ. Pīṭhikā, P. 2
4. Ācārāṅga Ṭīkā, p. 4
5. Ogha nir. Droṇācārya ; comm. p. 3
6. Ācāraṅga Ṭīkā, P. 4
7. This number is taken from compiled and unpublished Ācāraṅga Niryukti.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

proofs of which are the works—'Daśavaikālīka' and 'Āvaśyakaniryukti', there is difference of 100 verses between the 'Niryukti', on the first chapter of 'Daśavaikālika' and the Ṭīkā and Niryukti' on 'cūrṇi', similarly, hundreds of verses of 'Āvaśyakaniryukti are not commented or indicated. The difference of verses and the above stated arguments (proofs) confirm my hypothesis that they are later additions; the stories concerning the afflictions in 'Uttarādhyayana' appear to be later additions. The author of 'Niryukti' states the stories in brief only, pushing the argument in the directions that Bhadrabāhu I is the author of 'niryukti', but elaborated and elucidated by Bhadrabāhu II.

Impact on other Āgamas

The subjects dealt with in Vyavahāra and Bhāṣya on it are found in other works too. The types of Vyavahāra and types of persons and several chapters concerning self-examination are found in Sthānānga and Bhagavatī. All these prakaraṇas appear to be collected at the time of codification of the Āgamas; there are several verses from the Vyavahāra Bhāṣya traced in Digambara literature. For example, Bhagavatī Ārādhanā and Mūlācāra contains several verses from the Vyavahāra bhāṣya. Some scholars have accepted the Bhagavatī Ārādhanā and Mūlācāra as the works of compilation in which the Niryukti and Bhāṣya are found. The verses dealing with self-examination and expiation are explicitly borrowed from Vyavahāra Bhāṣya although the influence of Śaurasenī is distinct from the point of view of language.

Classification of Niryukti and Bhāṣya

Ācārya Bhadrabāhu promised to write ten Niryuktis or critical works.[1] The Niryukti on Ṛṣibhāṣita and Sūryaprajñapti are not available. There are Niryuktis on the eight works such as Āvaśyaka, Daśavaikālika, Uttarādhyayana, Sūtraktānga and Daśāśrutaskandha. But they are found practically as independent works, but the Niryuktis or commentaries on the three Cheda-sūtras, viz., Bṛhatkalpa, Vyavahāra and Niśītha are available, with their Bhāṣya. The Commentator (Bhāṣyakāra) has taken the Niryuktis as a part of his own work, hence it is extremely difficult to make the distiction between Bhāṣya and Niryukti. The Cūrṇikāra and Ṭīkākāra both have quoted the verses from Niryukti, indicating that the Niryukti was in existence after the Bhāṣya. Further, it becomes the matter of conjecture as to why the Commentator has not indicated niryukti in all the places. Another problem crops up, when the canonical works were codified and redacted, whether the Niryuktis mixed with Bhāṣya were in existence or not. One Bhāṣya (Viśeṣāvaśyaka Bhāṣya) was written on Āvaśyaka niryukti but Āvaśyakaniryukti exists today as an independent work.

Niryukti is the first commentary on the Āgamas. Hence it is clear and certain that the Niryukti on the three Cheda works must be having independent place. Since Nirtuktis were mixed with Bhāṣya, it becomes difficult to locate an independent place since the language of both and the style of presentation are quite similar. Right until the time of the Commentator, the Niryukti on the three works had no independent place, the strong evidence which is available, is the ṭīkā of Malayagiri on Bṛhatkalpa. Ācārya Malayagiri has explicitly stated in his preface to Bṛhatkalpa that 'Sūtrasparśika' Niryukti and Bhāṣya form a single work itself.[2]

The Cūrṇikāra has not given any indication at all places about the Niryuktis. It is presumed that whether the Niryukti had an independent place or not, is a matter of investigation yet, at several places one can find in the Niśītha cūrṇi such quotations 'ettha nicuttigāhā' and 'esa Bhaddabāhu ṣamikatagāhā' etc. It looks more probable that there were some Śramaṇas who had committed to the memory the old works particularly the Niryuktis or the Cheda works. For this reason alone there are verses from Niryukti at several places.

It is a formidable task to separate the works written if the linguistic style is the same and mixed, yet, an

1. āva. Nir. Gāthā 88.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

attempt is made to separate the verses from Niryukti. However, it is not claimed that the Niryuktis are separated from the Vyavahāra. In the process of separation it is possible to miss some verses from Niryukti. Also there is a possibility that the verses of the Bhāṣya are mingled with Niryukti. Several scholars have attempted the task of separation (separation of Niryukti from Vyavahāra Bhāṣya and Cheda Sūtras.)

In the present Edition, Bhāṣya and Niryukti verses are published simulataneously. In order to distinguish Niryukti verses they are shown with the letters 'ni' in the verses of the Bhāṣya. If, however, they separated exclusively the consistency, fluency and the order of the verses from Niryukti and Bhāṣya will not be maintained. For, the Bhāṣyakāra makes use fo the Niryukti only while commenting. Hence, he has made Niryukti as an inseparable part of the Bhāṣya. In the event of total separation, the discrepancy of the subject of the total work will be felt at every step. We have adopted certain rules to determine the niryuktis from Bhāṣya as follows—

(1) Wherever there is a quotation—'essa Bhaddabāhuṣamikatagāhā it is presumed that it has been adopted from the Niryukti since Bhadrabāhu is the real author of the Niryuktis.

(2) Wherever the Commentator uses the work 'idānīṃ nugutti',. 'imā suttaphasiya', and 'ādhunā niryuktivistāraḥ', meaning thereby the Commentator has used them 'as a nirukti itself.' In this, at several places one comes across some antagonistic ideas in the Ṭīkā of the Bṛhatkalpa. Only one gāthā appears to be taken from Niryukti, and in the another work from Dvāragāthā; Yet in some other from Sarograha gāthā and in some from Bhāṣya gāthā. Muni Puṇyavijayaji has prepared a chart of such verses, (gāthā) indicating their differences in the sixth volume. It is a matter of reasearch that the discrepancies amongst the verses are found in the ṭikā on Bṛhatkalpa and Vyavahāra[10]; but, why not in Niśītha? The only satisfactory answer which can be inferred is that the Cūrṇi is oldest historically; by that time, probably, there might not be differences of its views. Even such controversial verses are made part and parcel of Niryukti verses.

(3) The Niśītha Cūrṇi refers to at several places like ''esā cirantana' and 'esā purātanigāhā' but one cannot assert that these verses are from Niryukti only. Possibly they might be older verses also whose use Bhadrabāhu might have made in his Niryukti. But at several places the Niśītha Cūrṇikāra has ascribed the verse to Bhadrabāhu Svāmī. The same verse is taken to be the older verse of from the old legacy by Malayagiri in his commentary on the Bṛahatkalpa. Just as Niśītha Bhāṣya 762 verse contains in Niśītha Cūrṇi as 'Bhadrabāhukrita'; the same verse has been accepted as 'purātanagāthā in the commentary on Bṛhatkalpa (3664). From the above stated quotation it is self evident that the old verse were composed by Bhadrabāhu. Hence we have accepted them as Niryukti verses.

(4) Cirantanagāthā appears to be older than Bhadrabāhu II. For, the Niśītha Commentator has stated clearly that—'esa Cirantanagāhā eyāye Cirantanagāhā imā Bhaddabāhū Sāmikata Vakkhāṇagāhā'. From this it is clear that—Cirantanagāthā is prior to the time of Bhadrabāhu II, as it is explicit from the very name of it. Bhadrabāhu has adopted these verses and made them inseparable part of Niryukti. There is another proof that these verse are part of Niryukti has been borne by Bṛhatkalpa Bhāṣya, 383 is Cirantangāthā. The Cūrṇikāra states in the begining of the 383 verse as, 'Cinamevārtham Bhāṣyakhāro Vyākyānayati'. From it, is self-evident that the work Cirantanagāthā must be from Niryukti only.

Hundreds of verses from Āvaśyaka, Daśavaikālik, and Niryuktis are found in the Bhāṣya on the three Cheda sūtras. Sometimes the Niryuktikāra himself had adopted and incorporated verses from other Niryuktis in Vyavahāra and other Niryuktis also. But at several places the Commentator has used the verses from Niryukti is his own Bhāṣya to enrich the contents. In the Niśisuvtha bhāṣya there are several verses from Piṇḍa Niryukti and Ogha Niryukti. It appears that the Commentator has quoted them verbatim. In the same way the Commentator states in Vyavahāra Bhāṣya 'Atha bhāṣyavistāraḥ' but it appears that the verses are from the chapter—Asvādhyaya of Āvaśyaka Niryukti—these verses are quoted in Niśītha Bhāṣya and Vyavahāra Bhāṣya but there is much difference in the meanings in the matter of research. Under what circumstances

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

these differences emerged due to scriptographist or the reading methods? It is due to the custom of memorising them or by the writer of niryuktis as occasion demanded? At several places it is not clear and self-evident, that the Niryuktikāra himself has utilized the niryuktis or the Bhāṣyakāra has quoted, wherever there are verses from the Niryuktis, I have indicated them separately.

(5) Nothing can be said definitely about Dvāragāthā (introductory verse) and Saṃgraha gāthā (collected verse). Mostly the Bhāṣyakāra writes the Dvāragāthā in order to elucidate and comment, but most of the introductory verses and collected verses are from the Niryuktis, as explained by the Commentator. Paṇḍita Malavania treats Dvāragāthā as Niryukti gāthā.[1] Besides this, the sixth part of Bṛhatkalpa and the chart made out of it, proves that the Niryukti gāthās are taken as Saṃgraha gāthā and some as Dvāragāthā. The reason stated to regard Dvāragāthā as Niryukti gāthā is that the gāthā which is to be treated as Saṃgraha gāthā in the ṭikā on Bṛhatkalpa, the same verse is treated as Niryukti in ṭikā on Vyavahāra.

(6) Special feature of Niryukti is that all Niryuktis are not written in the same style; yet, a Niryukti on one work contains uniformity in language, style and description. e.g. in the Niryukti on Uttarādhyayana three verses in the beginning of each chapter are on repentance in every aphorism—'So aṇaṇṇavattham, micchatta viradhaṇaṃ pave', so pavati anamadini'.

The Cūrṇikāra has indicated that at several places the verses are adopted in the form of Niryukti only. The references by Cūrṇikāra and the composition style become the basic for treating the verses, subsuming them under the category of Niryukti. At several places such verses indicative of Niryukti are found in the ṭikā on Bṛhatkalpa and Vyavahāra . For example, in the Vyavahāra Bhāṣya 1054th verse, there is a reference to Niryukti-vistaraḥ. One more reason can be cited to regard such verses as verses of niryukti—since the verse guruka, laghuka, māsika, caturmāsika-etc. pertaining to Prāyaścitta expiation became popular after the author of Niryukti. At the time of Niryukti spiritual adherent took Prāyaścitta, at the slightest breach of order and practice of mithyātva etc. However it appears that several cases of prāyaścitta became popular.

(7) The speciality of the author of Niryukti lies therein that he adopts stories and example to explain any topic pertaining to prāyaścitta. Wherever there is an indication of such stories and wherever the commentator explains such verses, the explaination provided by Bhāṣyakāra in the context of such stories, I view them to be from the niryukti itself.

The reason for substantiating the verses found in Niryukti is that at several places the Commentator has hinted at the brief stories—'Atha enāmeva gāthāṃ bhāṣyakāra vivṛṇoti'. From this it is self-evident that the verse is from Niryukti only, although the commentator has not indicated at several places; still, such verses are taken to be from the Niryukti itself.

(8) Wherever the Commentator has treated the verse from Bṛhatkalpa as having been drawn from Niryukti but such verses are in Niśītha also, without naming Niryukti. The Cūrṇikāra maintains that—'imā vakkhānagāhā', it is clear that the privious verse is from the Niryukti made self-evident by Vakkhāyagāhā, since the Commentator is explaining the Niryukti only.

Now the question arises whether the verse preceding 'vakhāna gāthā' should be regarded as of Niryukti or not because such reference are at several places, similarly the gāthā preceding—'imā vibhāsā', 'imá vakkhā' and idānīṃ enāmeva gāthām, vyākhyānayati' etc. must be from Niryukti only. In the same way 'imā Bhaddabāhusāmikata gāhā etīe ima do Vakkhāṇagahāo' (4005) found in Niśītha Bhāṣya, it is clear that the commentator is writting Vyākhyānagāthā, on Niryukti.

(9) At some places the commentator uses, 'Bhāṣyavistāraḥ, Atha bhāṣyaṃ' etc. but these verses appear to be obviously from the Niryukti.

I have shown these verses in the footnote in the serial order, at the initial stage, e.g.; vyabhābāhi upto

1. Niśī bhāṣ. Pīṭhikā, p. 41-42

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(2522). The commentator has used 'Bhāṣyavistārah' but it looks belonging to Niryukti gāthā. The strong reason for this inference is that the first line of the verse no 2522 occurs in verse no. 2524. Any author will not repeat the verses unless the Commentator quotes from his previous Ācāryas. In that case alone repetition is possible.

(10) It is clear from the independent Niryukti works, by the linguistic style, the author of Niryukti has his own peculiarity to adopt the verses reflecting Nikṣepa. The author of Niryukti interprets the verse from the Mūla-sūtra on the basis of nikṣepa (etymological connotation). Although Bhāṣyakāra writes down the verse which are nikṣepa-oriented, but most of the verses which are of etymological nature, are certainly from Niryukti. Hence despite the fact that no verse like Niryukti-vistārah niryuktikṛta, yet the nikṣepa-oriented verse are deemed to be of Niryukti only. Viśeṣāvaśyaka Bhāṣya clearly mentions that the main purpose of Niryukti is to interpret the work on the basis of nikṣepa and not what else it means.[1]

After such an interpretation the niryuktikāra and bhāṣyakāra are to interpret from the point of view of dravya, kṣetra, kāla and bhāva. At several places the niryuktikāra himself interprets the verse dravya, kṣetra etc. e.g. the Niryukti on Daśavaikālika furnishes the meaning dravya maṅgala, Bhāva maṅgala etc. Bhāṣya is nothing but an explanation of Niryukti. Hence it is possible that the bhāṣyakāra has tried to interpret at certain places the connotation of dravya, kṣetra etc; eg; the ṭikākāra has observed in Vyavahāra Bhāṣya which is 197 vyāsārthaṃ to bhāṣyakṛtavikkṣuh icchāruk-sapamaha—from this quotation it becomes clear that the bhāṣyakāra has planned on the basis of nikṣepa.

The problem arises whether the one aphorism with the other and one chapter with the other one and the verses indicative of such a relation belong to niryuktikāra or bhāṣyakāra ? or belong to vyākhyākāra? or belong to any Ācārya? The satisfactory solution is extremely difficult, for the simple reason that several controversies arise.

The related verse does not exist in the aphorism of the first chapter of Vyavahāra bhāṣya, clearly meaning thereby that it has been added later on. It is mentioned that Bhadrabāhu writes a verse concerning the sūtra in the verse no. 1895 of Niryukti Bhāṣya quoted therein.

Vyavahāra Bhāṣya contains a verse no. 1298—

'Vyāsārthaṃ to bhāṣyakṛt vivakṣuḥ prathamatah pūrvasūtreṇa saha saṃbandhamāha' is found to be quoted. These three references need to be explained. At many places in the verses concerning the sūtras, the vyākhyākāra has not given any clarification; however, they have added—'atha Bhāṣya', Atha niryuktivistārah, or "imā niggutti" are mentioned. From this one point becomes clear probably the vyākhyākāra himself has composed the verses pertaining to the sūtras. Another strong evidence for this assumption is that there are several verses which are in congruency with the verses quoted in Niśītha, Bṛhatkalpa and Vyavahāra. However, the verses concerning the sūtras do not tally with one another. Only the verses in Bṛhakalpa and Vyavahāra tally with each other because both the commentaries have the same author. It looks probable that the bhāṣyakāra or Vyākhyākāra have tried to bring about the relation between one sūtra with the other. The one from the language point of view the verses in Bṛhatkalpa and Vyavahāra tally with each these verses do not symbolize that they belong to Niryukti, since the style of Niryukti is very brief. They never explain any subject in details, however, the concerned verses based upon these sūtras are conjoined with the Niryuktis on the Cheda Sūtras; it would increase in size, since there occur two or three verses simulataneously indicating the meaning involved in the said sūtra.

Malayagiri mentions at several places in his ṭīkā on Vyavahāra like this—'Adhunā niryukti-bhāṣya-vistārah' or 'Adhunā bhāṣya-niryukti-vistārah' but it becomes very difficult to decide whether the Niryukti Gāthā is first or Bhāṣya Gāthā, because at several places the bhāṣyakāra explains the dissimilar

1. Viśeṣāva bhāṣya, self commentary 961

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

works e.g. wherever there is the statement—niryukti bhāṣya-vistārah, there the Niryukti verse is selected first. So for as Niryukti works occur, it should be decided on the merit of inference, priority of explanation and the serial order of the subjects, but wherever—Bhāṣya niryukti-vistāraḥ, there the Niryukti verse is selected first. So far as niryukti works occur, it should be decided on the merit of inference, priority of explanation and the serial order of the subjects, but wherever—Bhāṣya niryukti-vistāraḥ is mentioned, there primarily Bhāṣya and secondarily Niryukti verses are accepted. Just as in the Vyavahāra Bhāṣya Niryuktis are found after adhyayana and uddeśaka, e.g.; Ācārānga, Sūtrārkṛtānga etc. but in the hybrid Niryukti there is no serial order at all. In this conection it appears probable that the bhāṣyakāra has rearranged the verses keeping in view of to maintain consistency in the gāthās. At several places the bhāṣyakāra has commented upon Niryukti verse and at several places he has tried to establish an order between Bhāṣya Gāthā and Niryukti,'as for example; 'Sutte atthe' belonging to Vyavahāra Bhāṣya (6th verse) actually belongs to Niryukti verse. In this, only one category of, or onesided meaning has been imposed on Bhāva Vyvahāra.

But in these, Jīta Vyavahāra, the prominence is given to the single meaning or it is unambiguous. The eighth verse is from Bhāṣya. In this process, the bhāṣyakāra has tried to establish the relation with the seventh verse. If, however, the seventh verse is not regarded as from Bhāṣya. In this process, the bhāṣyakāra has tried to establish the relation with the seventh verse. If, however, the seventh verse is not regarded as from Niryukti Gāthā, then the ninth gāthā will again have the same onesided meaning as in Jīta. The author of the single work will rarely commit repetitions. Similarly in the verse no. 52 the bhāṣyakāra has tried to relate one gāthā with rarely commit repetitions. Similarly in the verse no. 52 the bhāṣyakāra has tried to relate one gāthā with the other. In gāthā no . 52 it is mentioned like 'Pacchittam va imam dasaha' and in verse no 53 belongs to Niryukti which contains ten types of repentance. The Bhāṣyakāra tries to relate this serial order. The Cūrṇikāra of Niśītha and Malayagiri, a Commentator has tried to separate Niryukti from Bhāṣya. The ṭīkākāra has attempted to relate the explanation of the verse to the order of the verses. From this it becomes clear, from which verse and which part it, has been explained in so many verses. Without the explanations by ṭīkāra it is extremely difficult to isolate niryukti from Bhāṣya. At several places after hundreds of verses, the initial verse is explained as indicated by the tīkākāra. A brief analysis has been provided on certain points concerning the separation of Bhāṣya and Niryukti.

One can make in-depth study of independent Niryuktis and having studied the verses in their serial order it can lead to the separation of Niryukti Gāthās. In this attempt my own arguments stay. However, it cannot be claimed whether the classification is perfectly proved. This is my first attempt and not the last one. In this process it is possible that some verses from Niryukti may be missed, despite our careful efforts. We hope in this direction the research scholars will throw some light in due course.

Bhāṣya

Bhāṣya occupies the second place amongst the commentaries on Āgama. In the Vyavahāra bhāṣya, verse no. 4693 the bhāṣyakāra has named these commentaries as Bhāṣya. The Composition of Niryukti is of very brief style. There are ten Niryuktis with their names. Similarly there are then Bhāṣyas on ten works.

1. Āvaśyaka[1]	2. Daśavaikālika	3. Uttarādhyayana
4. Bṛhatkalpa[2]	5. Pañcakalpa	6. Vyavahāra
7. Niśītha	8. Jītakalpa	9. Ogha niryukti
10. Piṇḍa niryukti.		

According to Muni Puṇyavijaya, the detailed Bhāṣyas were written on Vyavahāra. and Niśītha. But are

1. There are three commentaries on Āvaśyaka-Mūlabhāṣya, bhāṣya and Viśeṣāvaśyaka Bhāṣya.
2. There is extensive and short commentary on Bṛhatkalpa. The Bṛhat bhāṣya is available up to 3rd uddeśaka only and that too is incomplete.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

today untraceable, out of which Bṛhatkalp Vyavahāra and Niśītha, are in the verse form. Jītakalpa, Viśeṣāvaśyaka. and Pañcaka'pa. are of medium extent, Piṇḍa. Niryukti and Ogha Niryukti of small size and Daśaśrutaskandha and Uttrādhyana, the Bhāṣya on these are of very small size.

It is a matter of investigation why on three Cheda Sūtras the Bhāṣya is extensive; if so, why not the Bhāṣya is written on Daśasūtraskandha ? If the Niryukti, is written on four Cheda Sūtras there must be some Bhāṣya on Daśasūtraskandha, but unfortunately it is not available. Out of the above mentioned then Bhāṣyas, the Bhāṣya is mainly of compilation on Niśīth. Jītakalp. and Pañcakalp because the Bhāṣyas on other works and verses from Niryukti are mostly of collective nature.

Jinabhadragaṇi Kṣamāśramaṇa clearly mentions in his Bhāṣya on Bṛhatkalp, "Kalpa, Vyavahāra and Niśītha are as vast as ocean." Hence it is stated herein that the jewels of the śruta are like drops in such an ocean, there by they form the essence of the contents of literature.[1] From this it is self-evident that the Bhāṣya on three Chedasūtras existed before Jinabhadragaṇi 'Udadhi sadṛśa'. This objective is not applicable or appropriate in the context of Mūla-sūtras, since they are not such a vast liteature. On whichever works Niryuktis are not written, the explanation (Vyākhyā) on the Bhāṣya sūtras are adopted, e.g., Jītakalpa Bhāṣya etc. Some Bhāsyas are written on the Niryuktis also, just as on Piṇḍa and Ogha niryukti. Amongst the Bhāṣyas on Cheda Sūtras, Bhāṣya on Vyavahāra is very important, though it deals chiefly with expiation (prāyaścitta); occasionaly there is a discussion pertaining to Society, Economics, Politics, and Psychology etc. The Bhāṣyakāra has explained every sūtra of Vyavahāra Without the help of Bhāṣya, by mere reading the aphorisms of Vyavahāra it is difficult to understand the work.

Bhāṣyakāra

Among Bhāṣyakāras, two names of Commentators are prominent. (1) Jinabhadragaṇi Kṣamāśramaṇa (2) Saṅghadāsagaṇi, Muni Puṇyavijayaji is of the view that there are four Commentators (i) Jinabhadragani kṣamāśramana, (ii) Saṅghadāsagaṇi. (3) the author of Vyavahāra Bhāṣaya., and (4) that of Kalpabṛhat bhāṣya. It is well known that Jinbhadragaṇi is the author of Viśeṣavaśyak Bhāṣya. However there is not unanimity of rules regarding the authorship of Bhāṣyas on Bṛhatkalpa and Vyavahāra. The ancient writers had the custom to write works without personal discussions viz; regarding their place of writing, the patronage extended to them and some hints about their personality, all leading to difficulty about the authorship of any work after the lapse of long time. Similarly the synonymity of names led to search of the orignal author. Malayagiri in his preface to Bṛhat has said 'Sukhagrahaṇadhāraṇāya bhāraṇāya bhāsyakāra, bhāṣyaṃ kṛtavān', without naming the author.[2] Exactly in the ṭīkās of Niśītha Cūrṇi and Vyavahāra, the Commentator has not given any hint about the bhāṣyakāra.

Pandit Dalsukhabhāī Mālvaṇiā in his Introduction of Niśītha Pīthikā has tried to prove that Siddhasena might be the author of Niśītha.[3] He has indicated in this aspect: Siddhasena, is the author of Bṛhatkalpa. Bhāṣya. In support of his argument he cites a verse from Niśītha curṇi, suggesting that it is the work of Siddhasena—'Siddhaseṇāyariyo Vakkhāṇaṃ Kareti,'. The same verse occurs in Bṛhatkalpa Bhāṣya-'Bhāṣyakāro Vyākhyānayati'. Therefore it is surmised that Siddhasena is the Commentator of Niśītha. Bṛhat Bhāṣya, and Vyavahāra. Besides these arguments cited above, there are some more additonal reasons. Muni Puṇyavijayaji accepts Saṅghadāsagaṇi as the Commentator of Bṛhatkalpa Bhāṣya. In to his opinion these were two Ācāryas named Sanghadāsagaṇi, The first Saṅghadāsagaṇi, had the honorific title—Vācaka—who wrote the first part of Vasudevahiṇḍi. The second Saṅghadāsagaṇi. lived after the first one who wrote 'Laghubāṣhya' on Bṛhatkalpa Bhāṣya. He was having the title of 'Kṣmāśramaṇa.[4] Ācārya Saṅghadāsagaṇi is decidedly the author

1. Jītakalpa bhāṣya 2605; Kapavvavahārāṇam udadhisaricchāṇa taha ṇisīhassa/ bhutasāresa Sutarayaṇa binduṇavaṇita ṇātavvao//
2. Bṛhatkalpabhāṣya pīṭhikā, P. 2
3. Niśīthabhāṣya pīṭhikā, preface, p. 40-44
4. Bṛhatkalpabhāṣya; vol. 6, preface p. 20

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

of Bhāṣya in support of which the Citation of Kṣemakīrti is clear and distinct.

kalpenalpamanartham pratipadamarpayati yo'rthanikurambaṃ śrī sanaghadśsagaṇaye cintāmaṇaye namastasmai//
asya ca svalpagranthamaharthatayā duḥkhabodhatayā
ca sakalatrilokīsubhagaṇakaraṇakṣamāśramaṇanāmadheya-
bhidheyaiḥśrīsaṇghadāsagaṇipūjyaiḥ
Pratipadaprakaṭitasarvajñājñāvirādhanāsamudbhūta-prabhūtapratyapāyajālaṃ
nipuṇacaraṇakaraṇaparipālanopāya-
gocaravicāravācālaṃ sarvathā dūṣaṇakaraṇenāpyadūṣyaṃ bhāṣyaṃ viracayāṃcakre.'

In the context of this quotation the opinion of Muni Punyavijayaji appears to be appropriate that Ācārya Saṅghdāsagaṇi must be a Commentator of Bṛhat kalp. Bhāṣya . A point has to be elucidated that the author. Bṛhat kalp Bhāṣya and Vyavāhara. Bhāṣya must be one and the same, because the first verse of the Bṛhat kalp Bhāṣya clearly suggests that.

'Kappavvavahārāṇam vakhāṇavihiṃ pavakkhāmi'.

The Ṭīkākāra has referred to this verse as 'sūtrasparśika niryuktibhaṇitamidaṃ' Similarly Chūrṇikāra has said—'Āyārio bhāsam kāḍakāmo ādāveva gāthā sūtramāha'. From the point of view of priority, the opinion of Chūrṇikāra looks correct.

Again, the relevancy of the opinion of Cūrṇikāra is that at the end of Vyavahārakalp Bhāṣya. There is a mention of 'Kappavvavahārāṇaṃ bhāsaṃ...' this verse must be of Bhāṣyakāra in which he vows that he declares to write a commentary on Kalpa and Vyavahāra. The word 'vakkhāṇavidhi' indicates in the direction of Bhāśya because Niryukti is written in very brief style. For this the phrase 'vakkhāṇavihim' should not have been used.

Therefore the said verse is not of Niryukti but must be of Bhāṣya. The phrase used by bhāśyakāra 'kappavvavahārāṇaṃ' makes it clear that here the written Bhāṣya is on only Bṛhat kalpa Bhāṣya and Vyavahāra, but not on Niśītha.

Paṇḍita Dalsukha Mālvaṇia accepts Siddhasenagaṇi as the author of Niśītha Bhāṣya because the cūrṇikāra of Niśītha Bhāṣya has mentioned as, 'Asya Siddhasenācāryo Vyākhyāṃ karoti' at several places; yet it looks inconsistent to regard Siddhasena as the author of Bhāṣya, for Cūrṇikāra has not referred to Siddhasena in prologue or epilogue. If Siddhasena would have been the author of Bhāṣya, he would have been necesarily referred by the cūrṇikāra, either at the begining or at the end of the work.

In this context my personal opinion is that the Niśīha Bhāṣya must be a compilation work which must have been compiled by ācārya Siddhasena. At several places he has written the commentary in verses in order to explain the verses of Niryukti. Hence Niśīha Bhāṣya should not be regarded as the original work but appears to be a compilation. If an attempt is made to eliminate the verses from this work, the number of original verses would be much less. Further, the rest of the original work would not remain at all. Paṇḍita Mālavaṇiā accepts this truth and he is of the opinion that Niśīha Bhāṣya must have been written not by one Acārya but by others. The bhāśyakāra has utilized the verses which have come down from tradition and had added"new verses to it.[1]

It looks more Probable that the Bhāṣhykāra composed this work either in Kauśaladeśa or in an area nearby, as there are some incidents or episodes concerning Kauśaladeśa. Beside this the decisive proof is that on the ground of that area (Kauśala deśas) he describes 'kauśalayeṣu apavam satesu ekkam na pecchāmo,' meaning thereby that not even one among hundreds is free from sinful life, The author suggests that, through

1. Niśīthabhāśya pīṭhikā; p. 29-30
2. Viśesaṇavatī gāthā. 33
3. Vyavahārabhāṣya. 2638

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

peccahāmo, he himself has witnessed the life.

The period of the Composition of Bhāṣya

Saṅghadāsagaṇi, the author of Bhāṣya is also controversial; the scholars have not thought of his time; it appears that Saṅghadāsagaṇi is prior to Jinabhadra, in support of which several arguments may be made:

There occurs the following verse in Viśeaṣaṇavati of Jinabhadragaṇi:

Siho ceva sudadho, jam rayagihammi ya kavibaduotti
sisas vavahare goyamovasamio sa nikkhanto.[2]

Also there is a verse in Vyavahāra Bhāṣya :

siho tivittha nihato, bhamium rayagiha kavilabhadugatti
jinavirakahanamanuvasam gotamovasama dikhha ya.[3]

The reference to, 'vavahāre' in Viśeṣanavati certainly refers to Vyavahārabhāṣya, as there is no reference of this story in the Mūlasūtra.

The Viśeṣāvaśyaka Bhāṣya is composed after Vyavahārabhāṣya. The obvious reason for this is that if the Viśeṣāvaśyaka Bhāṣya would have been before the author of Bṛhatakalpa and Vyavahārabhāṣya, he would have incorporated the gāthā of Viśeṣāvaśyaka Bhāṣya in his work, as the Viśeṣāvaśyaka is a model work, in which there is detailed description of several topics, where several verses are in the bhāṣya, Pañcakalpa, Niryuktibhāṣya etc. in Vyavahārabhāṣya and Bṛhat Bhāṣya. 'Mano paramodhipuaye' of Bhāṣya occurs in Viśeṣāvaśyaka-bhāṣya. It is from Vyavahāra-bhāṣya of Viśeṣāvaśyaka -Bhāṣya that the author has quoted it; this is self evident. Hence Vyavahāra-bhāṣya is prior to Viśeṣāvaśyaka-bhāṣya which is quite plain.

The author of Vyavahāra-Bhāṣya flourished before Jinabhadra, as is clear from the fact that the Jītakalpacūrṇi and Niśītha etc. describe the concept of expiation (prāyaścitta) one gets mentally deranged). Jinabhadragaṇi Kṣamāśramaṇa wrote Jītakalpa on the request of his disciples, explaining the concept of prāyaścitta.[1]

Kalpa, Vyavahāra indicate the Bhāśya and not merely the Mūlasūtras, since original work is small in magnitude. There are several verses from Vyavahāra-bhāśya concerning prāyaścitta in Jītakalpa mentioned verbatim.

Jītakalpa	VyaVyavahāra=Bhāṣya	Jīta kalp	Vyavahāra-Bhāṣyaā
18	110	22	114
19	111	31, 32	conp.10,11

Niśītha-bhāṣya. was collected before Jinabhadragaṇi, as the Niśītha Bhāṣya mentions pramāda etc; with the description of sleep. Niśītha-bhāṣya. (135) mentions 'poggala dante' verse in the context of 'Styanardhi' sleep. This verse also occurs in Viśeṣāvaśyaka-(235); but it becomes clear that Viśeṣāvaśyaka-Commenatator has quoted from Niśītha-bhāṣya-in-the context of Vyañjanāvagraha. With a little alteration, this verse is mentioned in Bṛhat-Bhāṣya. (5016)

The commetator Saṅghadās gaṇi flourished in 5th or 6the century A.D. Pt. Dalsukha Mālvaṇia has proved that Jīnabhadra belonged to 6th or 7th C.A.D.

The Bhāṣya works seem to be written down between 4th and 6th centuries. If the composition of Bhāṣya-works are pushed to 7th C.A.D. then there would be several discrepancies in the determination of the period of Vyākhyā literature. In ancient time, there was not printing system at all and as such the manuscript(s) would take practically a century or so to gain popularity or propagation. The Bhāṣyas were written in the seventh century and Haribhadra wrote the commentatries in the 8th C.A.D., but at the time of Cūrṇis, the interval is quite limited.

1. Jītakalpacūrṇi p. 1, 2
2. Bhadrabāhu II has changed and added in Niryukti, whose time is V.S. 6th Century.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

I have accepted the **First Bhadrabāhu**-Caturdaśapūrvī as the author of Niryuktis, whose time is in V.S. 2nd crntury.[2] Bhāṣyas were written in Vikram Samvat 4th, or 5th, Cūrṇis in 7th and Tīkā from 8th C. till 13th C.AD. This fixation of the priod appears quite logical. The second Bhadrabāhu, belonging to 6th Cen. has introduced some changes in the Niryukti and has made it extensive.

It is but definite that the order of the Vyākhyās on Āgamas is as follows:

1. Niryukti
2. Bhāṣya
3. Cūrṇi] and
4. Ṭīkā

However, while writting Vyākhyā on different works, including the writting of the original work for the purpose of Vyākhyā, there are some deficiencies or defects. For example, the Bhāṣya on Pañcakalpa can be cited:

Parijunnesa bhanita, suvina devie puptanculae
nagarana damsanenam, pavvajjassvassae vutta

The story of Puṣpacūlā does not ocur in the Bhāṣya on Viśeṣāvaśyaka, but is found in the Āvaśyakacūrni. Therefore, it is clear that the Āvaśyakacūrṇi existed before the Bhāṣyakāra of Pañcakalpa.

The Bhāṣya was written after Cūrṇi on Jīta kalpa because Cūrṇi explains the verses of Jītakalpa in which there is no mention of Bhāṣya. If the Bhāṣya verses would be available to the Cūrṇikāra he would have definitely commented upon them. The Cūrṇikāra has quoted several verses from Vyavahāra-bhāṣya.

The scholars are led to think over the matter that the Niśītha bhāṣya 545 has been quoted in the svia.bhā. which is self evident—'Siddhasenayariyena ja jayana bhaniya tam ceva samkhevao Bhaddabāhu bhannati' From this it is clear that it points to the second Bhadrabāhu. The first Bhadrabāhu obviously cannot comment on Siddhesena.

For this reason Bhadrabāhu I preceded Siddhesena by some centuries. The ṭikākāra mentions in his Bṛhat kalp Bbhāṣya. (2611) this verse. 'Bhāṣyakṛta Savistaraṃ yatana proktā tāmeva niryuktikṛdekagāthayā samgṛhāha.'

This quotation has served as an incentive for the scholars to think over; on the basis of this, it looks probable that Sidhesena flourished before Bhadrabāhu II in the last quarter of 5th Century A.D. The Niryukti and some Bhāṣyas on the Niryukti were available to Bhadrabāhu II. Muni Puṇyavijayaji regarded Agastyasiṃha Cūrnī prior to Daśvai.bhā. and he advanced some arguments in this connection.[1] The Bhāṣya. from the linguistic style appears to be much earlier work. The tendency to adopt apabhraṁśa begins approximately from the 6th century but even if one tries to locate the apabhraṃśa words in the Bhāṣya, it is not possible. On the other hand the Mahārastri has more influence in this aspect.

In the light of subject matter, coinage system and cultural aspects as described in the bhā. it compels us to conclude that the work belongs to 4th or 5th century A.D. Therefore the Bhāṣhyakāra's period should be 4th or 5th century A.D.

The teaching of Cheda Sūtras to nuns

Āryarakṣita was the last observant of Āgama. On the strength of his knowledge they could understand that the nuns were to be instructed in the Cheda Sūtras, which was not to be treated as deviation. Then, the

1. Daśa. Agastyasimgh commentary, p. 1517
2. Vyavahāra bhāṣya. 2365
3. Vyavahārabhāṣya 2366-68
4. Ibid., 2314-22

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

nuns were allowed to read Cheda Sūtras. After Āryarakṣita, there were no āgama-observants. To understand the mind of the nuns there was total absence of such insightful knowledge. After that period, the nuns were promoted to read Cheda sūtras so that they may not give up their self-control.2 Then the question arose if they are prohibited to read Cheda sūtra, how would they be on the path of self-purification. In reply to this problem the author declares that the nuns used to take 'prāyaścitta' from the senior nuns until the time of Aryarakshita, and in the absence of such nuns, who could administer the prāyaścitta ? The saints also started approaching the nuns for prāyaścitta, leaving the saints of their own saṅgh. After Āryarakṣia the nuns could approach the saints for self-introspection and prāyaścitta.

Even at the time of Āryarakṣita the same practice was in vogue. If the nuns had violated the rules of observing 'mūla guṇas', they has to go to the senior nuns and explained the whole process. In the absence of suitable nun, the sādhvī could go to a saint, who was well-versed in Cheda literature.3

If, however, any nun, despite her studies forgot the literature and rules laid therein out of inertia, she would never become the head of the nunnery throughout life.[4] Some reasons are cited by the Bhāṣyakāra to the effect that the secret of Cheda sūtra could be forgotten. Some interesting stories pertaining to Malayavati, Magadhasenā and Taraṅgavatī reveal that the revision of these works mostly of character and conduct is not practicable. Besides this, the astrology, ominology and occult knowledge, mantra etc. replaced the conduct-improving literature and were practically forgotten because of the method of self-realisation and the knowledge of 'Nimitta Śāstra.[1] The Bhāṣyakāra gives the example of the āyurvedic practitioner and warriors etc. who damaged their own career of living due to the inertia.[2]

The nun who become physicaly handicapped, engaged in the service of the handicapped, busy with the collection of alms, during the time of famine, is likely to forget the ethical doctrines; she was allowed to remain in the nunnery. But this, forgetfulness is not the cause of vanity and inertia. Such nuns were assigned the works of Gaṇa.

There are 4694 verses in VBh. There is a long *pīṭhikā* in the beginning, which can be called as 'preface' in modern terminology. The whole text is divided into ten uddeśakas (chapters).

The present work discusses many topics, some have been complied in the appendices. We have given 23 appendices wheih throw light on important facets of the text. The appeandices are as follow :

1. The alphabetical index of verses of VBh.
2. The " " " " " Niryukta verses
3. The number of Sūtras and the order of bhāṣya verses related to them.
4. Equivalence of the verses of Bhāṣya and *Ṭīkā*.
5. Synonyms
6. Etymology
7. The lexicon of the *deśī* words
8. The stories.
9. The Definitions
10. The Similies
11. The list of the words, nikṇpa of which is given
12. The Maxims

---

1. Vyavahārabhāṣya 2320-22
2. Ibid., 2323-28

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

13. Comparison with other works.
14. The facts concerning the Ayurvaidic system of medicine and health.
15. Collection of important facts about meditation and kāyotsarga.
16. Collection of miscellaneuous references to Dṛṣṭivāda
17. The Oriental learnings
18. Quotations of verses in the Ṭīkā.
19. Name Index (Proper—AMES)
20. Classified index
21. References of Niryukti mentioned in Ṭīkā.
22. References of Curṇi in Ṭīkā.
23. Classified Index of subjects.

Conclusion

The VBh is a classical work like a treasure of knowledge. It contains various branches of knowledge. Commentator Malayagin has added to its magnificance by his commentary (*Ṭīkā*). The main subject of the text is 'to purify the soul of he ascetic through expiation'. Nevertheless, the author has dealt with many other important topics in the course of his main subject. It elucidates elaborately the culture compilation of the rules and regulations of the Jain monastic tradition, the author has maintained the continuity of traditions.

In addition, the author refers to the difference of opinions wherever possible. For example, we get allusions to many important schools relating to the five *vyavahāras*. In our preface in Hindi, we have given a detailed account of five *vyavahāras* and many other important topics discussed in the texts yet there are many more which are left out.

Although the complete translation of the preface in English would have been profitable, but for the want of time, only a part of it has been translated.

—Muni Dulaharaj
—Samani Kusum Prajña

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संकेत-निर्देशिका

' ' –यह दो या उससे अधिक शब्दों के स्थान में पाठान्तर होने का सूचक है।

X क्रास का चिह्न पाठ न होने का द्योतक है।

पाठ के पूर्व या अंत में खाली बिंदु (०) अपूर्ण पाठ का द्योतक है।

अनुद्वा–अनुयोगद्वार
अनुद्वामटी–अनुयोगद्वारमलधारीया टीका
अभि अभिधान चिंतामणि नाममाला
अमर–अमरकोश
अर्थशास्त्र–कौटिलीय अर्थशास्त्र
आनि–आचारांग निर्युक्ति
आवचू–आवश्यक चूर्णि
आवनि–आवश्यक निर्युक्ति
आवभा–आवश्यक भाष्य
आवमटी–आवश्यक मलयगिरिटीका
आवसू–आवश्यक सूत्र
आवहाटी–आवश्यक हारिभद्रीया टीका
उ–उत्तराध्ययन
उनि–उत्तराध्ययन निर्युक्ति
उशांटी–उत्तराध्ययन शांत्याचार्य टीका
ओनि–ओघ निर्युक्ति
गा–गाथा
गोजी–गोम्मटसार जीवकाण्ड
चू–चूर्णि
जंबूटी–जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति टीका
जी–जीतकल्प
जीचू–जीतकल्प चूर्णि
जीटी–जीतकल्प टीका
जीभा–जीतकल्प भाष्य
जैनेन्द्र–जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश
ज्ञा–ज्ञाताधर्मकथा
ज्ञाटी–ज्ञाताधर्मकथा टीका
टी–टीका
त–तत्त्वार्थ सूत्र
दश–दशवैकालिक
दशअचू–दशवैकालिक अगस्त्यसिंहचूर्णि
दशचू–दशवैकालिक चूलिका
दशनि–दशवैकालिक निर्युक्ति
दश्रुचू–दशाश्रुतस्कंध चूर्णि
दश्रुनि–दशाश्रुतस्कंध निर्युक्ति
नि–निशीथ
निगा–निर्युक्ति गाथा
निचू–निशीथ चूर्णि
निपीभू–निशीथपीठिका भूमिका
निभा–निशीथ भाष्य
निसी–निसीहज्झयणं
पंकचू–पंचकल्प चूर्णि
पंकभा–पंचकल्प भाष्य
प–पत्र
परि–परिशिष्ट
पिनि–पिंड निर्युक्ति
पृ–पृष्ठ
प्र–प्रकाशित
प्राश–प्राकृत शब्दानुशासन
भ–भगवती
मनु मिता–मनुस्मृति मिताक्षरा
मूला–मूलाचार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भआ–भगवती आराधना
भटी–भगवती टीका
भागा–भाष्यगाथा
भू–भूमिका
बृचू–बृहत्कल्प चूर्णि
बृपी–बृहत्कल्पभाष्य पीठिका
बृपीटी–बृहत्कल्पभाष्य पीठिका टीका
बृभा–बृहत्कल्प भाष्य
मवृ–(व्यवहार) मलयगिरि टीका
मवृपा–मलयगिरि टीका पाठान्तर
मु–मुद्रित व्यवहार भाष्य
वा प्र–वाचना प्रमुख
विभा–विशेषावश्यक भाष्य
विभामहेटी–विशेषावश्यक भाष्य मलधारीहेमचंद्र टीका
विभास्वोटी–विशेषावश्यक भाष्य स्वोपज्ञ टीका
राजटी–राजप्रश्नीय टीका
राजेन्द्र–राजेन्द्र अभिधान कोश
रावा–तत्त्वार्थ राजवार्तिक
व्यभा–व्यवहार भाष्य
व्यभापी–व्यवहार भाष्य पीठिका
व्यसू–व्यवहार सूत्र
शब्द–शब्दकल्पद्रुम
सं–संपादित, संपादक
सम–समवाओ
सू–सूयगडो
सूनि–सूत्रकृतांग निर्युक्ति
स्थाटी–स्थानांग टीका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषयानुक्रम

१,२.	व्यवहार, व्यवहारी एवं व्यवहर्त्तव्य की प्ररूपणा।
३.	ज्ञानी, ज्ञान और ज्ञेय की मार्गणा तथा 'व्यवहार' शब्द का निरुक्त।
४.	वपन एवं हार शब्द के एकार्थक।
५.	व्यवहार की परिभाषा।
६.	व्यवहार शब्द के निक्षेप।
७.	भावव्यवहार के एकार्थक।
८, ६.	एकार्थकों में पांचों व्यवहारों का समवतार।
१०-१२.	जीतव्यवहार के आधार पर प्रायश्चित्त-विधि।
१३.	व्यवहारी के निक्षेप।
१४.	भावव्यवहारी का स्वरूप।
१५.	प्रायश्चित्त दाता के चार गुण।
१६.	निश्रा तथा उपश्रा शब्द की व्याख्या।
१७,१८.	लौकिक व्यवहर्त्तव्य का स्वरूप।
१६.	लोकोत्तरिक व्यवहर्त्तव्य का स्वरूप।
२०-२२.	भावव्यवहर्त्तव्य का स्वरूप, प्रकार एवं उसके गुण।
२३.	प्रकारान्तर से भावव्यवहर्त्तव्य के लक्षण।
२४.	द्रव्य व्यवहर्त्तव्य के लक्षण।
२५.	अव्यवहर्त्तव्य के अन्तर्गत कुंभार का दृष्टान्त।
२६.	व्यवहर्त्तव्य के अधिकारी।
२७.	अगीतार्थ के साथ व्यवहार करने का निषेध।
२८.	गीतार्थ की व्यवहार ग्रहण सम्बन्धी योग्यता का वर्णन।
२६,३०.	उदाहरण द्वारा गीतार्थ की विशेषता का वर्णन।
३१,३२.	प्रायश्चित्त के समय व्यवहर्त्तव्य का सीमा-विस्तार।
३३.	अगीतार्थ को पहले उपदेश तथा बाद में प्रायश्चित्त देने का विधान।
३४.	प्रायश्चित्त के निरुक्त, भेद आदि के कथन की प्रतिज्ञा।
३५.	प्रायश्चित्त के निरुक्त।
३६.	प्रायश्चित्त के चार भेद।
३७,३८.	प्रतिसेवक, प्रतिसेवना एवं प्रतिसेवितव्य का स्वरूप कथन।
३६.	प्रतिसेवना के प्रकार।
४०.	प्रतिसेवना और प्रतिसेवक का एकत्व तथा नानात्व।
४१.	मूलगुण तथा उत्तरगुण विषयक प्रतिसेवना की व्याख्या।
४२.	अतिक्रम, व्यतिक्रम आदि के भेद से उत्तरगुण प्रतिसेवना के चार प्रकार।
४३.	अतिक्रम, व्यतिक्रम आदि का उदाहरण द्वारा स्वरूप-कथन।
४४.	अतिक्रम आदि के लिए प्रायश्चित्त विधान।
४५.	मूलगुण प्रतिसेवना के पांच भेद।
४६.	संरंभ, समारंभ और आरंभ की परिभाषा।
४७-५०.	शुद्ध, अशुद्ध नयों का प्रतिपादन और मीमांसा।
५१.	पहले उत्तरगुण प्रतिसेवना की व्याख्या क्यों? प्रश्न और समाधान।
५२,५३.	प्रतिसेवना प्रायश्चित्त के दस भेदों का उल्लेख।
५४.	आलोचना प्रायश्चित्त का विवेचन।
५५.	आलोचना प्रायश्चित्त की इयत्ता और आलोचना किसके पास?
५६.	आलोचना प्रायश्चित्त का पात्र।
५७-५६.	आलोचना प्रायश्चित्त कब? कैसे? क्यों?
६०,६१.	प्रतिक्रमण प्रायश्चित्त का विवेचन।
६२.	प्रतिरूप विनय के चार प्रकार।
६३.	ज्ञान विनय के आठ प्रकार।
६४.	दर्शन विनय के आठ प्रकार।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६५. चारित्र विनय के आठ प्रकार।
६६. प्रतिरूप विनय के भेद, प्रभेद।
६७. कायिक विनय के आठ प्रकार।
६८. वाचिक विनय के चार प्रकार।
६९. ऐहिक हितभाषी का स्वरूप।
७०. परलोक हितभाषी का स्वरूप।
७१. अहितभाषित्व का कथन।
७२. मितभाषिता का स्वरूप।
७३. अपरुषभाषिता का स्वरूप।
७४. प्रासंगिकभाषिता की सफलता।
७५. अप्रासंगिकभाषिता का स्वरूप।
७६. अनुविचिन्त्यभाषिता।
७७. मानसिक विनय के दो भेद।
७८-८४. औपचारिक विनय के सात भेद तथा उनका विस्तृत विवेचन।
८५. स्वपक्ष और विपक्ष में किया जाने वाला लोकोपचार विनय।
८६. प्रतिरूप विनय के भेद तथा उनका वर्णन।
८७-९०. अनुलोमवचन का अनुपालन।
९१,९२. प्रतिरूपकायक्रिया विनय।
९३. विश्रामणा (शरीर चांपने) के लाभ।
९४,९५. गुरु के प्रति अनुकूल-वर्तन के दृष्टान्त।
९६. अप्रशस्त समिति, गुप्ति के लिए प्रायश्चित्त का विधान।
९७. गुरु के प्रति उत्थानादि विनय न करने पर प्रायश्चित्त का उल्लेख।
९८. प्रतिक्रमणार्ह प्रायश्चित्त।
९९-१०५. तदुभय प्रायश्चित्त का वर्णन।
१०६,१०७. महाव्रत अतिचार सम्बन्धी तदुभयार्ह प्रायश्चित्त का कथन।
१०८,१०९. विवेकार्ह प्रायश्चित्त।
११०. व्युत्सर्गार्ह प्रायश्चित्त।
१११-१३. कायोत्सर्ग प्रायश्चित्त का विषय, परिमाण, कब और क्यों का समाधान।
११४. उद्देश, समुद्देश आदि में कितने श्वासोच्छ्वास का प्रायश्चित्त।
११५. पहले उद्देश तथा पश्चात् प्रस्थापना का उल्लेख।
११६. पहले प्रस्थापना फिर उद्देश आदि का समाधान।
११७,११८. वस्त्रादि के स्खलित होने पर नमस्कार महामंत्र का चिंतन अथवा सोलह, बत्तीस आदि श्वासोच्छ्वास का कायोत्सर्ग।
११९. प्राणवध आदि में सौ श्वासोच्छ्वास का कायोत्सर्ग।
१२०. प्राणवध आदि में २५ श्लोकों का ध्यान तथा स्त्रीविपर्यास में १०८ श्वासोच्छ्वास के कायोत्सर्ग का प्रायश्चित्त।
१२१. उच्छ्वास का कालमान—श्लोक का एक चरण।
१२२,१२३. कायोत्सर्ग में कौन सा ध्यान—कायिक, वाचिक या मानसिक? प्रश्न तथा उत्तर।
१२४. कायोत्सर्ग के लाभ
१२५,१२६. तपोर्ह प्रायश्चित्त का कथन तथा उसके विविध प्रकार।
१२७-३४. मासिक आदि विविध प्रायश्चित्तों का विधान।
१३५. मूल, अनवस्थित और पारांचित प्रायश्चित्त के विषय।
१३६-३९. प्रतिसेवना प्रायश्चित्त का औचित्य।
१४०. आरोपणा प्रायश्चित्त का कालमान।
१४१-४३. आरोपणा प्रायश्चित्त छह मास ही क्यों? धान्य पिटक का दृष्टान्त
१४४. किसके शासनकाल में कितना तपःकर्म?
१४५-४८. विषम प्रायश्चित्त दान में भी तुल्य विशोधि।
१४९,१५०. प्रतिकुंचना प्रायश्चित्त के भेद-प्रभेद।
१५१. बृहत्कल्प और व्यवहार दोनों सूत्रों में विशेष कौन?
१५२,१५३. दोनों के अभिधेय भेद का दिग्दर्शन तथा विविध उदाहरण।
१५४. कल्प और व्यवहार में प्रायश्चित्त दान का विभेद।
१५५. अभिन्न व्यंजन में भी अर्थभेद।
१५६. शब्द-भेद से अर्थ-भेद।
१५७,१५८. प्रायश्चित्तार्ह पुरुष।
१५९. कृतकरण के भेद—सापेक्ष तथा निरपेक्ष। निरपेक्ष कृतकरण के तीन भेद।
१६०. अकृतकरण के दो भेद—अनधिगत तथा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

	अधिगत।
१६१.	प्रकारान्तर से पुरुषभेद मार्गणा।
१६२.	कृतकरण का स्वरूप।
१६३,१६४.	निरपेक्ष कृतकरण के प्रायश्चित्त का स्वरूप।
१६५-६७.	सापेक्ष कृतकरण के प्रायश्चित्त का स्वरूप।
१६८.	अकृतकरण की अधिगत विषयक प्ररूपणा।
१६९,१७०.	प्रायश्चित्तदान के भेद से आचार्य आदि के तीन भेदों का उल्लेख।
१७१.	गीतार्थ और अगीतार्थ के दोषसेवन में अंतर।
१७२.	दोष के अनुरूप प्रायश्चित्तदान का उल्लेख।
१७३.	गीतार्थ के दर्प प्रतिसेवना की प्रायश्चित्त-विधि।
१७४.	अज्ञानवश अशठभाव से किए दोष का प्रायश्चित्त नहीं।
१७५.	जानते हुए दोष का सेवन करने वाला दोषी।
१७६.	तुल्य अपराध में भी प्रायश्चित्त की विषमता क्यों? कैसे?
१७७.	गीतार्थ के विषय में विशोधि का नानात्व।
१७८-८०.	आचार्य आदि की चिकित्साविधि का भंडी और पोत के दृष्टान्त से नानात्व का समर्थन।
१८१.	चिकित्सा का सकारण निर्देश।
१८२.	अकारण चिकित्सा का निषेध।
१८३.	सालंबसेवी की चिकित्सा का समर्थन।
१८४-८६.	कल्प और व्यवहार भाष्य में प्रायश्चित्त तथा आलोचना विधि का भेद।
१८७.	निर्देशवाचक जे. के आदि शब्दों का संकेत।
१८८.	भिक्षु शब्द के निक्षेप।
१८९.	'भिक्षणशीलो भिक्षुः' निरुक्त की यथार्थता।
१९०.	भिक्षु शब्द की प्रवृत्ति, अप्रवृत्ति की मीमांसा।
१९१.	सभी भिक्षाजीवी भिक्षु नहीं—इसका विवेचन।
१९२.	सचित्त आदि लेने वाला भिक्षु कैसे?
१९३.	भिक्षु कौन?
१९४.	'क्षुधं भिनत्ति इति भिक्षुः' इस निर्वचन की यथार्थता।
१९५.	भिक्षु शब्द के एकार्थकों का निर्वचन।
१९६,१९७.	मास शब्द के निक्षेप।
१९८.	कालमास के प्रकार।
१९९.	नक्षत्रमास आदि के दिन-परिमाण।
२००.	दिनराशि की स्थापना।
२०१-२०४.	अभिवर्द्धित मास का दिन-परिमाण निकालने का उपाय—अभिवर्द्धितकरण।
२०५-२०८.	ऋक्ष आदि नक्षत्र मासों के विषय में विशेष जानकारी।
२०९.	भावमास का प्रतिपादन।
२१०-१२.	परिहार शब्द के निक्षेप एवं उनकी व्याख्या।
२१३.	स्थान शब्द के निक्षेप और उनकी व्याख्या।
२१४.	द्रव्य स्थान और क्षेत्र स्थान।
२१५.	ऊर्ध्वादि स्थान।
२१६.	प्रग्रहस्थान।
२१७.	आचार्य आदि पांच प्रकार का प्रग्रह।
२१८.	योध-स्थान के पांच प्रकार।
२१९,२२०.	संधना-स्थान।
२२१.	प्रतिसेवना के प्रकार।
२२२-२४.	दर्प और कल्प-प्रतिसेवना।
२२५.	कर्मोदय हेतुक तथा कर्मक्षयकरणी प्रतिसेवना।
२२६.	प्रतिसेवना और कर्म का हेतुहेतुमद्भाव।
२२७.	प्रतिसेवना का क्षेत्र, काल और भाव से विमर्श।
२२८-३०.	आलोचना और शल्योद्धरण के लाभ।
२३१,२३२.	आलोचना के तीन प्रकार।
२३३.	आलोचना महान् फलदायी।
२३४,२३५.	विहार-आलोचना के भेद-प्रभेद।
२३६.	आलोचना का काल-नियम।
२३७.	विविध-आलोचना का स्वरूप।
२३८.	ओघ-आलोचना के प्रकार।
२३९.	विहार-विभाग आलोचना-विधि।
२४०-४३.	आलोचना की विधि।
२४४.	विहार-आलोचना का स्वरूप।
२४५.	विहार आलोचना से उपसंपदा आलोचना तथा अपराध आलोचना का नानात्व।
२४६.	उपसंपदा आलोचना देने का प्रशस्त और अप्रशस्त काल।
२४७.	उपसंपद्यमान के प्रकार तथा आलोचना विधि।
२४८.	दिनों के आधार पर प्रायश्चित्त की वृद्धि।
२४९.	मुनि को गण से बहिष्कृत करने के १० कारण।
२५०-५५.	अयोग्य मुनि को गण से बहिष्कृत न करने पर प्रायश्चित्त।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५६. कलह आदि करने पर प्रायश्चित्त।
२५७-६०. एकाकी, अपरिणत आदि दोषों से युक्त के लिए प्रायश्चित्त का विधान।
२६१,२६२. शिष्य, आचार्य तथा प्रतीच्छक के प्रायश्चित्त की विधि।
२६३,२६४. निर्गमन-आगमन के शुद्ध-अशुद्ध की चतुर्भंगी।
२६५. आचार्य और शिष्य में पारस्परिक परीक्षा।
२६६. परीक्षा के 'आवश्यक' आदि नौ प्रकार।
२६७. आचार्य द्वारा शिष्य की परीक्षा।
२६८. पंजरभग्न अविनीत की प्रवृत्तियां।
२६९. परीक्षा-संलग्न शिष्य का गुरु को आत्मनिवेदन।
२७०,२७१. परीक्षा के प्रतिलेखन आदि बिन्दुओं की व्याख्या।
२७२. उपसंपद्यमान शिष्य का दो स्थानों से आगमन।
२७३. पंजर शब्द विविध संदर्भ में।
२७४. संगृहीतव्य और असंगृहीतव्य का निर्देश।
२७५-७७. वाचना के लिए समागत अयोग्य शिष्य की वारणा-विधि।
२७८. स्वच्छंदमति के निवारणार्थ वाग्यतना।
२७९. अलस आदि के प्रति वाग्यतना।
२८०-८२. वाग्यतना के विषय में शिष्य का प्रश्न और सूरि का उत्तर।
२८३. प्रत्यनीक के लिए अपवाद।
२८४. ज्ञान आदि के लिए उपसंपद्यमान का नानात्व।
२८५,२८६. ज्ञान, दर्शन, चारित्र के लिए उपसंपद्यमान का नानात्व।
२८७. विभिन्न स्थितियों में शिष्य और आचार्य दोनों को प्रायश्चित्त।
२८८. उपसंपन्न की सारणा-वारणा।
२८९. ज्ञानार्थ उपसंपद्यमान की प्रायश्चित्त-विधि।
२९०. दर्शनार्थ तथा चारित्रार्थ उपसंपद्यमान की प्रायश्चित्त-विधि।
२९१. गच्छवासी की प्राघूर्णक द्वारा वैयावृत्त्य विधि।
२९२. वैयावृत्त्यकर की स्थापना संबंधी आचार्य के दोष।
२९३. उपसंपद्यमान क्षपक की चर्चा।
२९४. तप से स्वाध्याय की वरिष्ठता।
२९५,२९६. गण में एक क्षपक के रहते दूसरे के ग्रहण का विवेक।
२९७. क्षपक की सेवा न करने से आचार्य को प्रायश्चित्त।
२९८. प्रायश्चित्त-दान में आचार्य का विवेक।
२९९. विशेष प्रयोजनवश छह माह पर्यन्त दोषी को प्रायश्चित्त न देने पर भी आचार्य निर्दोष।
३००,३०१. अन्य कार्यों में व्यापृत आचार्य की यतना।
३०२. आलोचना कैसे दी जाए?
३०३. अपराध-आलोचना का विमर्श।
३०४. अपराधालोचना करने वाले की मनःस्थिति जानकर उसे समझाना।
३०५. अपराधालोचना के द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव।
३०६. अप्रशस्त द्रव्य के निकट आलोचना वर्जनीय।
३०७. अमनोज्ञ धान्यराशि आदि के क्षेत्र में आलोचना वर्जनीय।
३०८,३०९. अप्रशस्त काल में आलोचना वर्जनीय।
३१०-१२. वर्जनीय नक्षत्र एवं उनमें होने वाले दोष।
३१३. प्रशस्त क्षेत्र में आलोचना देने का विधान।
३१४. प्रशस्त काल में आलोचना का विधान।
३१५. आलोचनार्ह की सामाचारी।
३१६. आलोचनीय का विमर्श।
३१७. आलोचना के लाभ।
३१८. आलोचनार्ह के दो प्रकार—आगमव्यवहारी, श्रुतव्यवहारी। आगम व्यवहारी के छः प्रकार।
३१९. आलोचना में आगमव्यवहारी की श्रेष्ठता।
३२०. श्रुतव्यवहारी कौन? उनकी आलोचना कराने की विधि।
३२१. आलोचक की माया का परिज्ञान करने में अश्व का दृष्टान्त।
३२२. आलोचक द्वारा तीन बार अपराध कथन का उद्देश्य। माया करने का प्रायश्चित्त भिन्न तथा अपराध का प्रायश्चित्त भिन्न।
३२३. श्रुतज्ञानी द्वारा आलोचक की माया का ज्ञान करने के साधन।
३२४. प्रतिकुंचक के लिए प्रायश्चित्त तथा तीन दृष्टान्त।
३२५. प्रायश्चित्त-दान में विषमता संबंधी शिष्य का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रश्न तथा आचार्य का समाधान।
३२६. आगम श्रुतव्यवहारी के प्रायश्चित्त दान का औचित्य।
३२७. तीन दृष्टान्त—गर्दभ, कोष्ठागार और खल्वाट।
३२८. प्रायश्चित्त-दान की विविधता का हेतु अर्हद्-वचन।
३२६,३३०. प्रतिसेवना की विषमता में भी प्रतिसेवक के भेद से तुल्यशोधि में पांच वणिक् और पन्द्रह गधों का दृष्टान्त।
३३१. प्रायश्चित्त भिन्न, शोधि समान।
३३२. गीतार्थ और अगीतार्थ के विषम प्रायश्चित्त संबंधी शिष्य का प्रश्न तथा आचार्य का उत्तर।
३३३-३५. दंडलातिक दृष्टान्त का विवरण और उसका उपनय।
३३६,३३७. विषम प्रायश्चित्त संबंधी शिष्य का प्रश्न, आचार्य का उत्तर।
३३८. खल्वाट के दृष्टान्त का उपनय।
३३६-४१. प्रतिसेवक के परिणाम के आधार पर प्रायश्चित्त और उसका फल।
३४२. दण्ड ग्रहण करने व न करने पर साधु के लाभ-अलाभ।
३४३. दण्ड ग्रहण करने व न करने पर गृहस्थ के लाभ-अलाभ।
३४४,३४५. मूल विषयक शिष्य की शंका और आचार्य का विकल्प प्रदर्शन द्वारा समाधान।
३४६,३४७. उद्घात, अनुद्घात आदि के विविध संयोगों के विकल्प।
३४८. प्रायश्चित्त की वृद्धि-हानि विषयक चर्चा।
३४६. प्रायश्चित्त में वृद्धि-हानि का आधार—सर्वज्ञ-वचन।
३५०. बहुक के प्रकार तथा जघन्य और उत्कृष्ट बहुक के विकल्प।
३५१. द्वारगाथा द्वारा स्थापना, संचयराशि आदि का कथन।
३५२,३५३. स्थापनारोपण के तारतम्य का हेतु।
३५४. अपरिणामक को स्थापनारोपण से प्रायश्चित्त न देने में दोष।
३५५. अतिपरिणामक को स्थापनारोपण से प्रायश्चित्त न देने में दोष।
३५६. चार प्रकार के स्थापना स्थान तथा आरोपणा स्थान।
३५७. किस जघन्य स्थापना स्थान में जघन्य आरोपणा स्थान।
३५८. जघन्य स्थापना बीस रात दिन, उत्कृष्ट स्थापना एक सौ पैंसठ दिन रात।
३५६. जघन्य और उत्कृष्ट आरोपणा का कालमान तथा पांच-पांच दिन का प्रक्षेप।
३६०. स्थापना तथा आरोपणा में चरमान्त तक पांच-पांच की वृद्धि।
३६१. उत्कृष्ट आरोपणा की परिज्ञान-विधि।
३६२. आरोपणा स्थान में उत्कृष्ट स्थापना का परिज्ञान।
३६३. प्रथम स्थान में स्थापना स्थान और आरोपणा स्थान आदि कितने?
३६४,३६५. संवेध संख्या जानने का उपाय।
३६६,३६७. स्थापना तथा आरोपणा के पदों का परिज्ञान।
३६८-४३१. स्थापना एवं आरोपणा का विविध दृष्टियों से विमर्श।
४३२. अतिक्रम, व्यतिक्रम आदि के गुरु, गुरुतर का विवेक।
४३३. प्रायश्चित्त का विधान अतिक्रम आदि के आधार पर।
४३४. सूत्र में अभिहित सभी प्रायश्चित्त स्थविरकल्प के आचार के आधार पर।
४३५. निशीथ का परिचय।
४३६,४३७. निशीथ के उन्नीस उद्देशकों में प्रतिपादित दोषों का एकत्व कैसे? प्रश्न और आचार्य का समाधान।
४३८. दोषों के एकत्व विषयक घृतकुटक तथा नालिका दृष्टान्त।
४३६-४२. दोषों के एकत्व विषयक औषध का दृष्टान्त।
४४३. चतुर्दशपूर्वी के आधार पर दोषों का एकत्व तथा प्रायश्चित्त-दान।
४४४. नालिका से कालज्ञान की विधि।
४४५. जाति के आधार पर दोषों का एकत्व।
४४६-५२. अनेक अपराधों का एक प्रायश्चित्त : अगारी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं चोर का दृष्टान्त।
४५३-५६. प्रायश्चित्त-दान के विविध कोण तथा मरुक का दृष्टान्त।
४६०. छह मास से अधिक प्रायश्चित्त न देने का विधान।
४६१-६६. छेद और मूल कब, कैसे?
४७०,४७१. पिंडविशोधि, समिति, भावना, तप, प्रतिमा, अभिग्रह आदि उत्तरगुणों की संख्या का परिज्ञान।
४७२. प्रायश्चित्त वहन करने वालों के प्रकार।
४७३,४७४. निर्गत और वर्तमान तथा संचित और असंचित प्रायश्चित्तवाहकों का परिज्ञान।
४७५. संचय, असंचय तथा उद्घात, अनुद्घात की प्रस्थापन-विधि।
४७६.,४७७. असंचय के तेरह तथा संचय के ग्यारह प्रस्थापना-पद।
४७८. संचयित प्रायश्चित्त के पद।
४७६,४८०. प्रायश्चित्त के योग्य पुरुष।
४८१,४८२. उभयतर प्रायश्चित्त में सेवक का दृष्टान्त।
४८३. उभयतर पुरुष द्वारा वैयावृत्त्य न करने पर प्रायश्चित्त का विधान।
४८४. उभयतर तथा परतर के प्रायश्चित्त दान में अन्तर।
४८५. भिन्न मास आदि प्रायश्चित्त देने की विधि।
४८६,४८७. उद्घात और अनुद्घात प्रायश्चित्त वहन करने वाले के लघु-गुरु मासिक का निर्देश।
४८८. उद्घात और अनुद्घात के आपत्ति स्थान।
४८९-९१. उद्घात और अनुद्घात की प्रायश्चित्त विधि।
४९२. अनुग्रहकृत्स्न प्रायश्चित्त।
४९३. निरनुग्रहकृत्स्न प्रायश्चित्त।
४९४. दुर्बल और बलिष्ठ को यथानुरूप प्रायश्चित्त।
४९५,४९६. प्रायश्चित्त-दान का विवेक।
४९७-५००. आत्मतर तथा परतर को प्रायश्चित्त देने की विधि।
५०१. अन्यतर को प्रायश्चित्त देने की विधि।
५०२. 'मूल' प्रायश्चित्त किसको?
५०३,५०४. प्रायश्चित्त विषयक प्रश्न तथा उत्तर।
५०५-५०८. जलकुट और वस्त्र के दृष्टान्त से शुद्धि का विवेक।
५०९-१२. राग-द्वेष की वृद्धि एवं हानि से प्रायश्चित्त में वृद्धि और हानि विषयक प्रश्नोत्तर।
५१३,५१४. हीन या अधिक प्रस्थापना क्यों? आचार्य का समाधान।
५१५,५१६. राग और द्वेष की हानि और वृद्धि का परिज्ञान कैसे?
५१७. निकाचना का विवरण तथा आलोचना संबंधी दन्तपुर का कथानक।
५१८. आलोचना, आलोचनार्ह तथा आलोचक—तीनों की समवस्थिति।
५१९,५२०. आलोचनार्ह की योग्यता तथा गुण।
५२१,५२२. आलोचक की योग्यता तथा गुण।
५२३. आलोचना के दस दोष।
५२४. प्रशस्त द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव में आलोचना करने का विधान।
५२५. सातिरेक, बहुसातिरेक आदि सूत्रों के अनेक विकल्प।
५२६,५२७. भिक्षाग्रहण के समय होने वाले पांच दोषों का वर्णन तथा प्रायश्चित्त।
५२८-३४. परस्पर संयोग से होने वाले विकल्प।
५३५-५८. परिहार तप की योग्यता के परीक्षण बिन्दु—पृच्छा, पर्याय, सूत्रार्थ, अभिग्रह आदि।
५५९. परिहार तप करने वाले का वैयावृत्त्य।
५६०,५६१. वैयावृत्त्य के तीन प्रकार तथा सुभद्रा आदि के दृष्टान्त।
५६२,५६३. त्रिविध-अनुशिष्टि की भावना।
५६४. आत्मोपलम्भ का स्वरूप।
५६५. उपग्रह के दो प्रकार।
५६६. उपग्रह का प्रवर्तन समस्त गच्छ में।
५६७. समस्त गच्छ में अनुशिष्टि का प्रवर्त्तन।
५६८,५६९. कौन आचार्य इहलोक में हितकारी और कौन परलोक में?
५७०. सारणा न करने वाला आचार्य समीचीन क्यों नहीं?
५७१. कृत्स्न प्रायश्चित्त का आरोपण।
५७२,५७३. कृत्स्न के छह प्रकार।
५७४. पहले किस कृत्स्न से आरोपण?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५७५,५७६. प्रतिसेवना और आलोचना की चतुर्भंगी।
५७७. प्रथम पूर्वानुपूर्वी की व्याख्या।
५७८,५७९. पूर्वोक्त चतुर्भंगी का स्पष्टीकरण।
५८०-८४. प्रतिकुंचना-अप्रतिकुंचना की चतुर्भंगी, व्याध, गोणी और भिक्षुकी का दृष्टान्त।
५८५. शुद्धि का उपाय मायारहित आलोचना।
५८६. तीन प्रकार के आचार्य और तीन प्रकार के आलोचनार्ह।
५८७-९६. स्वस्थानानुग तथा परस्थानानुग के आधार पर आचार्य के नौ भेद तथा प्रायश्चित्त की विविधता।
५९७,५९८. प्रायश्चित्त देने की प्रस्थापना के भेद-प्रभेद।
५९९-६०३. आरोपणा के पांच प्रकारों की व्याख्या।
६०४. प्रायश्चित्त वहन करने वालों के दो प्रकार—कृतकरण तथा अकृतकरण।
६०५. अकृतकरण के दो भेद।
६०६. प्रायश्चित्तवाहक के दो भेद।
६०७-११. कृतकरण के स्वरूप की व्याख्या।
६१२-१६. निरपेक्ष का एक और सापेक्ष के तीन भेद क्यों?
६१७-२३. भंडी और पोत का दृष्टान्त।
६२४. पारिहारिक और अपारिहारिक की सामाचारी।
६२५,६२६. पारिहारिक कौन का समाधान।
६२७. छलना के दो प्रकार।
६२८. भावछलना की व्याख्या और प्रकार।
६२९-३१. नैषेधिकी और अभिशय्या की चर्चा।
६३२. नैषेधिकी और अभिशय्या में निष्कारण जाने से प्रायश्चित्त।
६३३-३८. वसतिपालक के अभिशय्या में जाने से दोष।
६३९-४३. निष्कारण अभिशय्या अथवा नैषेधिकी में जाने के दोष।
६४४-४८. कारण से अभिशय्या में न जाने का प्रायश्चित्त।
६४९. अभिशय्या में जाने का निषेध।
६५०. अभिशय्या में नायक कौन?
६५१,६५२. अगीतार्थ को नायक क्यों और कैसे?
६५३-५७. असामाचारी के दोषों का निरूपण।
६५८. सम्यक् प्रायश्चित्त-दान का दृष्टान्तों द्वारा कथन।
६५९,६६०. अधिक प्रायश्चित्त देने के अलाभ।
६६१. प्रायश्चित्त उतना ही जितने से शोधि हो।
६६२-६४. प्रायश्चित्त न देने से हानि में व्याध का दृष्टान्त।
६६५. प्रायश्चित्त न देने वाले आचार्य का अधःपतन।
६६६-६९. उचित प्रायश्चित्त देकर शोधि कराने वाले आचार्य की सुगति। अंतःपुरपालक का दृष्टान्त।
६७०. अभिशय्या में जाने की आपवादिक विधि।
६७१-७५. अभिशय्या में जाने की यतना का निर्देश।
६७६. अभिशय्या में जाने का अन्य मुनियों को निर्देश।
६७७,६७८. प्रतिषिद्ध अभिशय्या का अपवाद तथा वृषभों की स्वीकृति।
६७९. अभिशय्या और नैषेधिकी के भेद।
६८०. अभिनैषेधिकी और अभिशय्या का स्वरूप।
६८१. शय्यातर को पूछकर अभिशय्या में जाने का समय।
६८२. आवश्यक सम्पन्न करके अभिशय्या में जाने का निर्देश।
६८३. अभिशय्या में रात्रि में न जाने के कारणों का निर्देश।
६८४,६८५. आवश्यक को पूर्ण कर या न कर अभिशय्या में जाने का विधान।
६८६-८९. अभिशय्या से लौटने पर करणीय कार्य।
६९०. परिहार सामाचारी।
६९१. भिक्षु शब्द की चालना और प्रत्यवस्थान से व्याख्या।
६९२,६९३. वैयावृत्त्य करने में गणी, आचार्य आदि के प्रतिषेध का कारण और समाधान।
६९४,६९५. पारिहारिक अन्य गच्छ में क्यों जाए? कारणों का निर्देश।
६९६-९९. पारिहारिक मुनि के माहात्म्य का अवबोध तथा आचार्य का कर्त्तव्य।
७००-७०२. कार्य की प्राथमिकता में व्रण का दृष्टान्त और उपनय।
७०३,७०४. पारिहारिक के साथ कौन जाए?
७०५-७०८. कारणवश पारिहारिक तप छोड़ने वाले मुनि की चर्या का निर्देश।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७०६-११. वाद करने का विवेक-दान।
७१२. वाद किसके साथ?
७१३. जीतने के पश्चात् स्व-समय की प्ररूपणा करने का निर्देश।
७१४. राजा यदि स्वयं वाद करने की इच्छा प्रकट करे तब मुनि का कर्त्तव्य।
७१५. वाद किन-किन के साथ नहीं करना, इसका निर्देश।
७१६. नलदाम का दृष्टान्त।
७१७,७१८. वाद की सम्पन्नता के पश्चात् एक दो दिन वसति में रहने का निर्देश।
७१९-२१. समस्त गण का निस्तारण न कर सकने की स्थिति में आचार्य आदि पंचक का निस्तारण।
७२२,७२३. साधुओं की निस्तारण-विधि।
७२४,७२५. साध्वियों की निस्तारण-विधि।
७२६. साधु-साध्वी दोनों की निस्तारण विधि।
७२७,७२८. भिक्षु, क्षुल्लक आदि के निस्तारण का क्रम।
७२९,७३०. भिक्षुक आदि के क्रम का कारण।
७३१-३३. भिक्षुकी क्षुल्लिका के क्रम का कारण।
७३४-४२. संयमच्युत साधु-साध्वियों का निस्तारण-क्रम।
७४३. क्षुल्लक आदि के क्रम का प्रयोजन।
७४४-४७. दुर्लभ भक्त निस्तारण-विधि।
७४८,७४९. भक्त-परिज्ञा और ग्लान।
७५०-५४. वृषभ, योद्धा और पोत का दृष्टान्त।
७५५. भक्त प्रत्याख्यात व्यक्ति की सेवा के बिन्दुओं का निर्देश।
७५६-६०. वादी के लिए करणीय कार्यों का निर्देश।
७६१-६७. परिहारतप का निक्षेपण कब? कैसे?
७६८,७६९. प्रतिमा-प्रतिपन्न की सामाचारी।
७७०. दृष्टान्तों द्वारा एकाकी विहार प्रतिमा के लिए योग्य-अयोग्य की चर्चा।
७७१-७४. शकुनि और सिंह का दृष्टान्त तथा उपनय।
७७५,७७६. परिकर्मकरण सामाचारी का निर्देश।
७७७. प्रतिमाप्रतिपन्न मुनि की तप, सत्त्व आदि पांच तुलाएं।
७७८,७७९. तपो भावना।
७८०. सत्त्व भावना।
७८१. सूत्र भावना।
७८२. एकत्व भावना।
७८३. बल भावना।
७८४. सहस्रयोधी की कथा।
७८५,७८६. परिकर्मित का तपस्या द्वारा परीक्षण।
७८७. बलभावना।
७८८,७८९. प्रतिमाप्रतिपत्ति के लिए आचार्य को निवेदन।
७९०. गृहिपर्याय ओर व्रतपर्याय का काल-निर्देश।
७९१,७९२. परिकर्म के लिए अनेकविध पृच्छा।
७९३. आत्मोत्थ, परोत्थ तथा उभयोत्थ परीषह।
७९४. शैक्ष को एडकाक्ष की उपमा।
७९५,७९६. देवता द्वारा आंख का प्रत्यारोपण।
७९७. भावित और अभावित के गुण-दोष।
७९८-८०६. प्रतिमा-प्रतिपत्ति की विधि और उसके बिन्दु।
८०७. आचार्य आदि की प्रतिमा-प्रतिपत्ति विधि।
८०८. प्रतिमा की समाप्ति-विधि और प्रतिमाप्रतिपन्न का सत्कारपूर्वक गण में प्रवेश।
८०९. सत्कारपूर्वक गण में प्रवेश कराने के गुण।
८१०. अधिकृत सूत्र का विस्तृत वाच्यार्थ।
८११. सत्कार-सम्मान को देख अव्यक्त मुनि प्रतिमा स्वीकार करने के लिए व्यग्र।
८१२. रानी का संग्राम के लिए आग्रह करना।
८१३. अव्यक्त के लिए प्रतिमा का वर्जन।
८१४-१६. आचार्य द्वारा निषेध करने पर प्रतिमा स्वीकार करने का परिणाम और प्रायश्चित्त।
८१७,८१८. भयग्रस्त भिक्षु द्वारा पत्थर फेंकने से होने वाले दोष तथा प्रायश्चित्त।
८१९. देवता कृत उपसर्ग।
८२०. बहुपुत्रा देवी का दृष्टान्त।
८२१. पुरुषबलि का दृष्टान्त।
८२२,८२३. देवताकृत अन्य उपद्रवों में पलायन करने का प्रायश्चित्त।
८२४,८२५. देवीकृत माया में मोहित श्रमण को प्रायश्चित्त।
८२६. अन्यान्य प्रायश्चित्तों का विधान।
८२७-३१. राजा और योद्धाओं के दृष्टान्त का निगमन तथा विविध प्रायश्चित्तों का विधान।
८३२. निंदा और खिंसना के लिए प्रायश्चित्त।
८३३. अननुज्ञात अभिशय्या से निर्गमन प्रतिषिद्ध।
८३४. पार्श्वस्थ, यथाछंद आदि पांचों के नानात्व

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

	कथन की प्रतिज्ञा।
८३५,८३६.	पार्श्वस्थ का स्वरूप एवं उसके प्रायश्चित्त की विधि।
८३७-४३.	उत्सव के बिना अथवा उत्सव में शय्यातरपिंड ग्रहण का प्रायश्चित्त।
८४४-४६.	रागद्वेष युक्त आचार्य की दुर्गन्धित तिल से तुलना।
८४७,८४८.	प्रशस्ततिल का दृष्टान्त और उपनय।
८४९,८५०.	पार्श्वस्थ के विविध प्रायश्चित्तों का विधान।
८५१.	परिपूर्ण प्रायश्चित्त से शुद्धि।
८५२-५६.	पार्श्वस्थ के निरुक्त तथा भेद-प्रभेद।
८५७.	अभ्याहृतपिंड और नियतपिंड की व्याख्या।
८५८.	पार्श्वस्थ होकर संविग्नविहार का स्वीकरण।
८५९.	आलोचना के लिए तत्पर होना।
८६०.	यथाछंद का स्वरूप-कथन।
८६१.	उत्सूत्र एवं यथाछंद का स्वरूप।
८६२-८६८.	यथाछंद का स्वरूप-कथन।
८६९.	अकल्पिक की व्याख्या।
८७०.	संभोज की व्याख्या।
८७१,८७२.	यथाच्छंद की प्ररूपणा तथा उसके दोष।
८७३.	पार्श्वस्थ एवं यथाछंद के मान्य उत्सव।
८७४,८७५.	पार्श्वस्थ तथा यथाछंद के प्रायश्चित्त।
८७६.	कुशील आदि की प्रायश्चित्त विधि।
८७७-८०.	कुशील के प्रकार और प्ररूपणा।
८८१.	कौतुक आदि का प्रायश्चित्त।
८८२-८७.	अवसन्न की प्ररूपणा और भेद-प्रभेद।
८८८.	अवसन्न का स्वरूप एवं संसक्त के प्रकार।
८८९,८९०.	संक्लिष्ट एवं असंक्लिष्ट संसक्त का स्वरूप।
८९१-९३.	गण से अपक्रमण और पुनरागमन।
८९४,९०६.	भिक्षुक लिंग में देशान्तरगमन विहित तथा अन्यलिंग कब? कैसे?
९०७.	निर्गमन एवं अवधावन के एकार्थक।
९०८,९०९.	अवधावन के कारण और वेश परित्याग कब?
९१०.	लिंग-परित्याग की विधि एवं अक्षभंग का दृष्टान्त।
९११,९१२.	शकटाक्ष का दृष्टान्त एवं निगमन।
९१३.	मुद्रा एवं चोर का दृष्टान्त।
९१४,९१५.	सूत्र से संबंध जोड़ने वाली गाथाएं।
९१६,९१७.	अकृत्यस्थान सेवन का विषय।
९१८,९१९.	आचार्य आदि दूर होने पर आलोचना की अनिवार्यता।
९२०.	आचार्य, उपाध्याय आदि पांच में से किसी एक के पास आलोचना।
९२१.	आलोचना बिना सशल्य मरने पर सद्गति दुर्लभ।
९२२.	प्रवृत्ति और परिणाम का समन्वय।
९२३.	आचार्य आदि पंचक न होने पर संघ में क्यों नहीं रहना चाहिए?
९२४,९२५.	जहां राजा, वैद्य आदि पंचक न हों वहां वणिक् का रहना व्यर्थ।
९२६.	गुणयुक्त विशाल राज्य के पांच घटक।
९२७,९२८.	राजा का लक्षण।
९२९.	युवराज का स्वरूप।
९३०,९३१	महत्तर और अमात्य का लक्षण।
९३२-३४.	स्त्री परवश राजा और पुरोहित का दृष्टान्त।
९३५.	स्त्री के वशवर्ती पुरुषों को धिक्कार।
९३६.	जहां स्त्रियां बलवान् उस ग्राम या नगर का विनाश।
९३७.	स्त्री के वशवर्ती पुरुष का हिनहिनाना और अपर्व में मुंडन।
९३८-४७.	गुप्तचरों के प्रकार।
९४८.	कुमार का स्वरूप।
९४९.	वैद्य का स्वरूप।
९५०.	धनवान् का स्वरूप।
९५१.	नैयतिक का स्वरूप।
९५२.	रूपयक्ष का स्वरूप।
९५३.	आचार्य, उपाध्याय आदि पंचक से हीन गण में रहने का निषेध।
९५४,९५५.	आचार्य का स्वरूप एवं कर्त्तव्य।
९५६,९५७.	उपाध्याय का स्वरूप एवं कर्त्तव्य।
९५८,९५९	प्रवर्तक का स्वरूप एवं कर्त्तव्य।
९६०,९६१.	स्थविर का स्वरूप।
९६२.	गीतार्थ का स्वरूप।
९६३.	राजा आदि पंचक से हीन राज्य की स्थिति।
९६४.	आचार्य आदि पंचक परिहीन गण में आलोचना का अभाव।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९६५-७१. आचार्य आदि पंचक न होने पर आलोचना एवं प्रायश्चित्त किससे?

९७२-७४. आहार, उपधि आदि की गवेषणा।

९७५,९७६. प्रायश्चित्त ग्रहण करने के विविध ऐतिहासिक एवं प्रागैतिहासिक तथ्य।

९७७. प्रायश्चित्त का वहन करते समय दूसरे प्रायश्चित्तार्ह कार्य की भी आलोचना करने का निर्देश।

९७८. सम्बन्ध गाथा के माध्यम से प्रायश्चित्त दान की भिन्न-भिन्न विधियों का संकेत।

९७९. दुग, साधर्मिक एवं विहार आदि शब्दों के निक्षेप कथन की प्रतिज्ञा।

९८०-८५. दुग शब्द के छह निक्षेप तथा उनका विस्तार।

९८६-९४. साधर्मिक के बारह निक्षेप तथा उनका विस्तृत विवरण।

९९५-९८. विहार के चार निक्षेप एवं उनका वर्णन।

९९९-१००२. अगीतार्थ के साथ विहार का निषेध तथा गोरक्षक-दृष्टान्त।

१००३. द्वारगाथा द्वारा मार्ग, शैक्ष, विहार आदि द्वारों का कथन।

१००४-१००८. अगीतार्थ के साथ विहार करने से होने वाले आत्मसमुत्थ दोषों का विस्तृत वर्णन।

१००९-१४. भाव-विहार की परिभाषा और भेद-प्रभेद।

१०१५. दो मुनियों के विहार करने में होने वाले दोष।

१०१६. ग्लान को एकाकी छोड़ने के दोष।

१०१७-२०. एकाकी ग्लान के मरने पर होने वाले दोष तथा उनका प्रायश्चित्त।

१०२१,१०२२. शल्यद्धार का निरूपण।

१०२३,१०२४. शिष्य द्वारा सूत्र की निरर्थकता बताना और आचार्य द्वारा समाधान।

१०२५,१०२६. दो का विहार कब? कैसे?

१०२७-३०. समान अपराध पर प्रायश्चित्त में भेद क्यों?

१०३१. दो साधर्मिकों की परस्पर प्रायश्चित्त विधि।

१०३२-३५. अनेक प्रायश्चित्तभाक् साधर्मिकों की आलोचना-विधि और परंपरा।

१०३६-४१. परिहारकल्पस्थित भिक्षु के प्रायश्चित्त-वहन में मृग का दृष्टान्त एवं उपनय।

१०४२-४६. योद्धा एवं वृषभ का दृष्टान्त।

१०४७,१०४८. प्रायश्चित्त वहन न कर सकने वाले मुनि की चर्या।

१०४९. परिहारी के अशक्त होने पर अनुपरिहारी द्वारा वैयावृत्य का निर्देश।

१०५०. समर्थ होने पर सेवा लेने से प्रायश्चित्त।

१०५१. तपःशोषित मुनि को रोग से मुक्त करने का दायित्व।

१०५२. ग्लान होने के कारणों का निर्देश।

१०५३. गिला की व्याख्या।

१०५४-५६. परिहारी का आगमन और निर्यूहणा (वैयावृत्य) न करने पर प्रायश्चित्त का विधान।

१०५७. अशिव से गृहीत-अगृहीत के चार विकल्प।

१०५८. अशिवगृहीत मुनि का संघ में प्रवेश होने पर हानियां।

१०५९,१०६०. अशिवगृहीत मुनि का गांव के बाहर या उपाश्रय में एकान्त स्थान में रहने का विधान।

१०६१-६३. अशिवगृहीत मुनि के साथ व्यवहार करने की सावधानियां।

१०६४. व्यवहार के एकार्थक एवं लघु प्रायश्चित्त का प्रस्थापन।

१०६५-७०. गुरुक, लघुक एवं लघुस्वक आदि तीन व्यवहारों के भेद-प्रभेद।

१०७१,१०७२. नौवें प्रायश्चित्त प्राप्त मुनि की वैयावृत्य करने का निषेध, परन्तु राजवेष्टि एवं कर्म-निर्जरा के लिए करने का आदेश।

१०७३. अनवस्थाप्य और पारांचित प्रायश्चित्त का स्वरूप।

१०७४,१०७५. पारांचित के प्रति आचार्य का कर्त्तव्य।

१०७६. घोर प्रायश्चित्त से क्षिप्त होने वाले साधु की वैयावृत्य।

१०७७-८०. क्षिप्तचित्तता के लौकिक एवं लोकोत्तरिक कारण।

१०८१-८५. राग से क्षिप्त होने वाले जितशत्रु राजा के भाई की कथा।

१०८६. तिर्यंच के भय से होने वाली क्षिप्तचित्तता।

१०८७. अपमान से होनेवाली क्षिप्तचित्तता एवं उसकी यतना का निर्देश।

१०८८-११०५. विभिन्न कारणों से होने वाली क्षिप्तचित्तता के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निवारण के उपाय।

११०६,११०७. परिणाम के आधार पर चारित्र के चार विकल्प।

११०८-१६. राग-द्वेष के अभाव में क्षिप्तचित्त के कर्मबंध नहीं, नर्तकी का दृष्टान्त।

१११७-२२. क्षिप्तचित्त मुनि के स्वस्थ होने पर प्रायश्चित्त की विधि।

११२३. दीप्तचित्तता व्यक्ति की स्थिति।

११२४. दीप्तचित्तता और दीप्तचित्त में अन्तर।

११२५. मद से दीप्तचित्तता

११२६-३१. दीप्तचित्तता में शातवाहन राजा की दृप्तता और उसका निवारण।

११३२-३९. लोकोत्तरिक दीप्तचित्तता के कारण एवं निवारण की विस्तृत चर्चा।

११४०-४५. यक्षाविष्ट होने के कारणों में अनेक दृष्टान्तों का कथन।

११४६. यक्षाविष्ट की चिकित्सा।

११४७-५१. मोह से होने वाले उन्माद की यतना एवं चिकित्सा।

११५२. वायु से उत्पन्न उन्माद की चिकित्सा।

११५३. आत्मसंचेतित उपसर्ग के दो कारण—मोहनीय कर्म का उदय तथा पित्तोदय।

११५४. तीन प्रकार के उपसर्ग।

११५५-६२. मनुष्य एवं तिर्यञ्चकृत उपसर्ग-निवारण के विभिन्न उपाय।

११६३-६५. गृहस्थ से कलह कर आये साधु का संरक्षण तथा उसके उपाय।

११६६,११६७. कलह की क्षमायाचना करने का विधान तथा प्रायश्चित्तवाहक मुनि के प्रति कर्त्तव्य।

११६८. इत्वरिक और यावत्कथिक तप का प्रायश्चित्त।

११६९-७१. भक्तपानप्रत्याख्यानी का वैयावृत्त्य।

११७२. उत्तमार्थ (संथारा) ग्रहण करने के इच्छुक दास को भी दीक्षा।

११७३,११७४. सेवकपुरुष, अवम आदि द्वारों का कथन।

११७५-७९. सेवकपुरुष दृष्टान्त की व्याख्या।

११८०-९०. अभाव से दास बने पुत्र की दासत्व से मुक्ति के उपाय।

११९१-९७. ऋणमुक्त न बने व्यक्ति की प्रव्रज्या सम्बन्धी चर्चा।

११९८-१२०२. ऋणार्त्त प्रव्रजित व्यक्ति की ऋणमुक्ति : विविध उपाय।

१२०३. अनार्य एवं चोर द्वारा लूटे जाने पर साधु का कर्त्तव्य।

१२०४. अशिवादि होने पर परायत्त को भी दीक्षा तथा अनार्य देश में विहरण का निर्देश।

१२०५. अनवस्थाप्य कैसे?

१२०६. गृहीभूत करके उपस्थापना देने का निर्देश।

१२०७. गृहीभूत करने की विधि। दाक्षिणात्यों का मतभेद।

१२०८,१२०९. गृहीभूत क्यों?

१२१०. गृहीभूत करने की आपवादिक विधि।

१२११-१३. अनवस्थाप्य अथवा पारांचित प्रायश्चित्त वहन करने वाले का कल्प और उसके ग्लान होने पर आचार्य का दायित्व।

१२१४,१२१५. प्रायश्चित्त वहन करने वाला यदि नीरोग है तो उसका आचार्य के प्रति कर्त्तव्य और गण में आने, न आने के कारण।

१२१६. ग्लान के पास सुखपृच्छा के लिए जाने के विविध निर्देश।

१२१७-१९. राजा द्वारा देश-निष्कासन का आदेश होने पर परिहार तप में स्थित ग्लान मुनि द्वारा अपनी अचिंत्य शक्ति का प्रयोग।

१२२०-२८. ग्लानमुनि द्वारा राजा को प्रतिबोध और देश निष्कासन की आज्ञा का निरसन।

१२२९. अगृहीभूत की उपस्थापना।

१२३०,१२३१. व्रतिनी द्वारा आचार्य पर मिथ्याभियोग।

१२३२,१२३३. आचार्य को गृहीभूत न करने के लिए शिष्यों की धमकी।

१२३४-३६. दो गणों के मध्य विवाद का समाधान।

१२३७-३९. दूसरे को संयमपर्याय में लघु करने के लिए मिथ्या आरोप लगाने का कारण।

१२४०-४२. मिथ्या आरोप कैसे? आचार्य द्वारा गवेषणा और यथानुरूप प्रायश्चित्त।

१२४३-४८. भूतार्थ जानने की अनेक विधियों का वर्णन।

१२४९. अभ्याख्यानी और अभ्याख्यात व्यक्ति की मनःस्थिति का निरूपण।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२५०, १२५१. मुनि-वेश में अवधावन के कारणों की मीमांसा।
१२५२,१२५३. अवधावित मुनि की शोधि के प्रकार।
१२५४. द्रव्यशोधि का वर्णन।
१२५५,१२५६. प्रायश्चित्त के नानात्व का कारण।
१२५७. क्षेत्रविषयक शोधि।
१२५८. काल से होने वाली विशोधि।
१२५९-६४. द्रव्य, क्षेत्र आदि के संयोग की विशुद्धि एवं विभिन्न प्रायश्चित्त।
१२६५-७६. भावविशोधि की प्रक्रिया।
१२७७. सूक्ष्म परिनिर्वापण के दो भेद।
१२७८. रोहिणेय का दृष्टान्त लौकिक निर्गपण।
१२७९-८२. लोकोत्तर निर्वापण।
१२८३,१२८४. प्रतिसेवी और अप्रतिसेवी कैसे?
१२८५,१२८६. महातडाग का दृष्टान्त तथा उसका निगमन।
१२८७-९१. गच्छ-निर्गत मुनि पुनः गण में आने का प्रतिषेध करता है तो उससे उपधिग्रहण की प्रक्रिया।
१२९२-९७. प्रतिसेवना का विवाद और उसका निष्कर्ष।
१२९८. व्यक्तलिंग विषयक मुनि के प्रायश्चित्त का निरूपण।
१२९९,१३००. एक पाक्षिक मुनि के प्रकार।
१३०१. सापेक्ष एवं निरपेक्ष राजा का दृष्टान्त।
१३०२-१३०५. इत्वर आचार्य, उपाध्याय की स्थापना विषयक ऊहापोह।
१३०६. श्रुत से अनेकपाक्षिक इत्वर आचार्य की स्थापना के दोष।
१३०७-१३०९. श्रुत से अनेकपाक्षिक यावत्कथिक आचार्य की स्थापना के दोष।
१३१०. स्थापित करने योग्य आचार्य के चार विकल्प।
१३११-२१. इत्वर तथा यावत्कथिक आचार्य की स्थापना के अपवाद एवं विविध निर्देश।
१३२२-२४. प्रथम विकल्प में स्थापित आचार्य सम्बन्धी निर्देश।
१३२५. लब्धि रहित को न आचार्य पद और न उपाध्याय पद आदि।
१३२६. आचार्य के लक्षणों से सहित मुनियों को दिशा-दान--आचार्य पद पर स्थापन।
१३२७. आचार्य पद पर स्थापित गीतार्थ मुनियों को उपकरण-दान।
१३२८. अनिर्मापित मुनि को गणधर पद देने पर स्थविरों की प्रार्थना।
१३२९. उसे संघाटक देने का निर्देश।
१३३०-३३. स्थापित आचार्य का गण को विपरिणमित करने का प्रयास और ग्वालों का दृष्टान्त।
१३३४-३६. गण द्वारा असम्मत मुनि को आचार्य बनाने पर प्रायश्चित्त।
१३३७. परिहारी तथा अपरिहारी के पारस्परिक संभोज का वर्जन।
१३३८-४२. परिहार तप का काल और परिहरण विधि।
१३४३-४६. परिहार कल्पस्थित मुनि का अशन पान लेने व देने का कल्प तथा अकल्प।
१३४७. संसृष्ट हाथ आदि को चाटने पर प्रायश्चित्त।
१३४८. आचार्य आदि के आदेश पर संसृष्ट हाथ आदि चाटने का विधान।
१३४९. सूपकार का दृष्टान्त।
१३५०. बचे हुए भोजन से परिवेषक को देने का परिमाण।
१३५१. सूत्र की संबंध सूचक गाथा।
१३५२-५६. पारिहारिक की सामाचारी आदि।
१३५७-६१. गण धारण कौन करे? सपरिच्छद या अपरिच्छद?
१३६२-६४. इच्छा शब्द के निक्षेप।
१३६५-६८. गण-शब्द के निक्षेप।
१३६९-७१. गण-धारण का उद्देश्य—निर्जरा। गणधर को महातडाग की उपमा।
१३७२. गुणयुक्त को गणधर बनाने का निर्देश।
१३७३. गणधर प्रतिबोधक आदि पांच उपमाओं से उपमित।
१३७४. प्रतिबोधक उपमा का स्पष्टीकरण।
१३७५. देशक उपमा की व्याख्या।
१३७६,१३७७. सपलिच्छन्न एवं अपलिच्छन्न के विविध उदाहरण एवं कथाएं।
१३७८. बुद्धिहीन राजकुमार की कथा।
१३७९. भावतः अपलिच्छन्न की व्याख्या।
१३८०. लघुस्रोत का दृष्टान्त।
१३८१. अगीतार्थ से गण का विनाश।
१३८२. जंबूक एवं सिंह की कथा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३८३,१३८४. अगीतार्थ की चेष्टाओं की नीलवर्णी सियार से तुलना एवं उपनय।
१३८५,१३८६. जंबूक की बुद्धिमत्ता एवं सिंह की पराजय।
१३८७. द्रव्य एवं भाव से अप्रशस्त उदाहरण।
१३८८,१३८९. द्रमक/भिखारी का दृष्टान्त एवं उसका निगमन।
१३९०,१३९१. ग्वाले का दृष्टान्त एवं निगमन।
१३९२. द्रव्यतः पलिच्छन्नत्व के दोष।
१३९३-९८ लब्धिमान् होने पर भी गण-धारण में क्षम नहीं, क्यों?
१३९९. गणधारी के गुण।
१४००. पूजा के निमित्त गण-धारण का निषेध।
१४०१. कर्मनिर्जरण के लिए गण-धारण।
१४०२-१४०५. पूजा के निमित्त गण-धारण की अनुज्ञा।
१४०६,१४०७. गण-धारण करने वाले को कितने शिष्य देय?
१४०८-१२. परिच्छद के भेद-प्रभेद तथा उदाहरण।
१४१३. द्रव्य-भाव परिच्छद की चतुर्भंगी।
१४१४,१४१५. भरुकच्छ में वज्रभूति आचार्य की कथा।
१४१६. द्रव्य परिच्छद का मूल है—औरस बल और आकृति।
१४१७-२०. अबहुश्रुत और गीतार्थ की चतुर्भंगी तथा प्रायश्चित्त कथन।
१४२१-२९. गणधारण के योग्य की परीक्षा-विधि।
१४३०-३३. शिष्य का प्रश्न और गुरु द्वारा परीक्षा-विधि का समर्थन।
१४३४-४१. राजकुमार के दृष्टान्त से गणधारण की योग्यता का कथन।
१४४२. गणधारण के लिए अयोग्य।
१४४३. अयोग्य को आचार्य पद देने से हानि।
१४४४-४६. सामाचारी में शिथिलता के प्रसंग में अंगारदाहक का दृष्टान्त।
१४४७-६४. गणधारण के लिए अनर्ह कौन-कौन?
१४६५-६७. देशान्तर से आगत प्रव्रजित मुनियों की चर्या।
१४६८. पुरुषयुग के विकल्प।
१४६९,१४७० सात पुरुष युग।
१४७१-७४. स्थविरों को पूछे बिना गण-धारण का प्रायश्चित्त।
१४७५,१४७६. स्वगण में स्थविर न हो तो दूसरे गण के स्थविरों के पास उपसंपदा लेने का निर्देश।
१४७७-७९. गणधारक उपाध्याय आदि का श्रुत परिमाण तथा अन्यान्य लब्धियां।
१४८०. आचारकुशल, प्रवचनकुशल आदि का निर्देश तथा आचारकुशल के भेद।
१४८१-८७. आचारकुशल की व्याख्या।
१४८८-९४. संयमकुशल की व्याख्या।
१४९५-९८. प्रवचनकुशल की व्याख्या।
१४९९-१५०५. प्रज्ञप्तिकुशल की व्याख्या।
१५०६-१४. संग्रहकुशल की व्याख्या।
१५१५-१९. उपग्रहकुशल का विवरण।
१५२०,१५२१. अक्षताचार की व्याख्या।
१५२२. क्षताचार, सबलाचार आदि पदों की व्याख्या।
१५२३. आचारप्रकल्पधर कौन? चार विकल्प।
१५२४-२६. आचार्यपद-योग्य के विषय में शिष्य का प्रश्न तथा पुष्करिणी आदि अनेक दृष्टान्तों से आचार्य का समाधान।
१५२७. पुष्करिणी का दृष्टान्त।
१५२८. आचारप्रकल्प का पूर्व रूप और वर्तमान रूप।
१५२९. प्राचीनकाल में चोर विविध विद्याओं से सम्पन्न, आज उनका अभाव।
१५३०. प्राचीनकाल में गीतार्थ चतुर्दशपूर्वी, आज प्रकल्पधारी।
१५३१. प्राचीनकाल में शस्त्रपरिज्ञा से उपस्थापना, आज दसवैकालिक के चौथे अध्ययन षड्जीवनिकाय से उपस्थापना।
१५३२. पहले और वर्तमान में पिंडकल्पी की मर्यादा में अन्तर।
१५३३. पहले आचारांग से पूर्व उत्तराध्ययन का अध्ययन, अब दशवैकालिक का अध्ययन।
१५३४. पहले कल्पवृक्ष का अस्तित्व अब अन्यान्य वृक्षों की मान्यता।
१५३५. प्राचीन और अर्वाचीन गोवर्ग की संख्या में अन्तर।
१५३६. प्राचीन एवं अर्वाचीन मल्लों के स्वरूप में अन्तर।
१५३७,१५३८. प्राचीन एवं अर्वाचीन प्रायश्चित्त के स्वरूप में अन्तर।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५३९. पहले चतुर्दशपूर्वी आदि आचार्य आज युगानुरूप आचार्य।
१५४०,१५४१. त्रिवर्ष पर्यायवाला केवल उपाध्याय पद, पांच वर्ष पर्याय वाला उपाध्याय तथा आचार्य पद एवं अष्ट वर्ष पर्याय वाला सभी पद के योग्य।
१५४२. अपवाद सूत्र।
१५४३-४८. तत्काल प्रव्रजित को आचार्य पद क्यों? कैसे?
१५४९-५३. राजपुत्र, अमात्यपुत्र आदि की दीक्षा, उत्प्रव्रजन, पुनः दीक्षा तथा पद-प्रतिष्ठापन।
१५५४-६०. तत्काल प्रव्रजित राजपुत्र आदि को आचार्य बनाने के लाभ।
१५६१-६६. पूर्व पर्याय को त्याग पुनः दीक्षित होने वाले राजकुमार आदि को आचार्य पद देने के लाभ।
१५६७. श्रुत समृद्ध पर गुणविहीन को आचार्य पद देने का निषेध।
१५६८,१५६९. श्रुतविहीन पर लक्षणयुक्त को आचार्य पद देने की विधि।
१५७०-७५. स्वगण में गीतार्थ के अभाव में अध्ययन किसके पास?
१५७६. आचार्य और उपाध्याय—दो का गण में होना अनिवार्य।
१५७७. नवक, डहरक, तरुण आदि के प्रव्रज्या पर्याय की अवस्था का निर्देश।
१५७८,१५७९. अभिनव आचार्य और उपाध्याय के संग्रह का निर्देश।
१५८०-८७. नए आचार्य का अभिषेक किए बिना पूर्व आचार्य के कालगत होने की सूचना देने से हानियां।
१५८८. गण में आचार्य और उपाध्याय के भय से आचार-पालन में सतर्कता।
१५८९. प्रवर्त्तिनी की निश्रा में साध्वियों के आचार-पालन में तत्परता।
१५८९/१. स्त्री की परवशता और उसका संरक्षण।
१५९०,१५९१. स्त्री परवश क्यों?
१५९२,१५९३. मुनि की गणस्थिति के लिए आचार्य, उपाध्याय अनिवार्य। साध्वी की गणस्थिति के लिए आचार्य-उपाध्याय तथा प्रवर्त्तिनी की अनिवार्यता—उत्सर्ग और अपवाद।
१५९४,१५९५. गण से अपक्रमण कर मैथुनसेवी मुनि को तीन वर्ष तक कोई भी पद देने का निषेध।
१५९६-९९. सापेक्ष एवं निरपेक्ष मैथुनसेवी का विस्तृत वर्णन।
१६००-१०. मोहोदय की चिकित्सा-विधि।
१६११-१४. आचार्य आदि पदों के लिए यावज्जीवन अनर्ह व्यक्तियों का दृष्टान्तों से विमर्श।
१६१५-२३. वेदोदय के उपशान्त न होने पर परदेशगमन तथा अन्यान्य उपाय।
१६२४-२७. पुनः लौटने पर गुरु के समक्ष आलोचना एवं प्रायश्चित्त।
१६२८. प्रतिसेवी मुनि को तीन वर्ष तक वंदना न करने का विधान।
१६२९-३३. तीन वर्ष में यदि वेदोदय उपशान्त न हो तो यावज्जीवन पद के लिए अनर्ह।
१६३४. महाव्रत के अतिचारों का प्रतिपादन। आचार्य की स्थापना का विवेक।
१६३५, १६३६. अभीक्ष्ण मायावी, मैथुनप्रतिसेवी, अवधानकारी मुनि बहुश्रुत होने पर भी आचार्यादि पद के लिए यावज्जीवन अनर्ह।
१६३७-३९. एकत्व बहुत्व का विमर्श।
१६४०. अशुचि कौन? मायावी।
१६४१,१६४२. अशुचि के दो भेद।
१६४३-४७. मायावी आदि मुनि सूरि पद के लिए अनर्ह।
१६४८. मायावी का अनाचरण।
१६४९. मायावी कौन?
१६५०-५४. संघ में सचित्त आदि के लिए विवाद होने पर उसके समाधान की विधि।
१६५५-५९. संघ की घोषणा पर मुनि को अवश्य जाने का निर्देश और न जाने पर प्रायश्चित्त।
१६६०,१६६१. सचित्त के निमित्त विवाद का समाधान।
१६६२-६६. प्रतिपक्ष के बलवान होने पर व्यवहारछेत्ता का कर्त्तव्य।
१६६७,१६६८. संघ-मर्यादा की महानता एवं विभिन्नता।
१६६९-७४. पर्षद् का विवाद निपटाने की प्रक्रिया।
१६७५,१६७६. तीर्थंकर की आज्ञा ही प्रमाण।
१६७७-८१. संघ की विशेषता और उसकी सुपरीक्षित कारिता।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६८२-८५. आचार्य आदि ही नहीं किन्तु संयमाराधना संसार-मुक्ति का साधन।
१६८६. संघ को शीतगृह की उपमा क्यों?
१६८७. संघ शब्द की व्युत्पत्ति।
१६८८-६१. असंघ की व्याख्या और परिणाम।
१६६२. संघ में रहकर कहीं भी प्रतिबद्ध न होने का निर्देश।
१६६३. व्यवहारछेदक के दो प्रकार।
१६६४-१७०२. आचार्य के आठ अव्यवहारी एवं व्यवहारी शिष्यों का स्वरूप।
१७०३,१७०४. दुर्व्यवहारी का फल।
१७०५-१७०७. आठ व्यवहारी शिष्यों के नाम और उनके व्यवहार का सुफल।
१७०८,१७०६. युगप्रधान आचार्य के पास तीन परिपाटी ग्रहण करने वाला व्यवहारी।
१७१०-१२. व्यवहारकरण योग्य कौन?
१७१३. अव्यवहारी का स्वरूप।
१७१४. राग-द्वेष रहित व्यवहार का निर्देश।
१७१५-१७. स्वच्छंदबुद्धि का निर्णय अश्रेयस्कर और उसका प्रायश्चित्त।
१७१८. गौरव रहित होकर व्यवहार करने का निर्देश।
१७१६-२५. आठ प्रकार के गौरव और उनका परिणाम।
१७२६,१७२७. व्यवहार और अव्यवहार की इयत्ता और परिणति।
१७२८. गणी का स्वरूप।
१७२६. कालविभाग से दो या तीन साधु के विहार का कल्प-अकल्प।
१७३०. बृहद्गच्छ से सूत्रार्थ में हानि।
१७३१. पंचक और सप्तक से युक्त गच्छ तथा जघन्य और मध्यम गच्छ का परिमाण।
१७३२. ऋतुबद्धकाल में पंचक और वर्षाकाल में सप्तक से हीन को प्रायश्चित्त।
१७३३. उपर्युक्त गच्छ परिमाण का सूत्रार्थ से विरोध।
१७३४-४७. दो मुनियों के विहरण के कारणों का निर्देश एवं उनकी व्याख्या।
१७४८,१७४६. वर्षावास में वसति को शून्य न करने का निर्देश।
१७५०-६२. वसति को शून्य करने से होने वाले दोष तथा प्रायश्चित्त।
१७६३-६५. वर्षावास में दो मुनियों का साथ कैसे?
१७६६,१७६७. वर्षावास के योग्य जघन्य और उत्कृष्ट क्षेत्र।
१७६८. वर्षावासयोग्य उत्कृष्ट क्षेत्र के तेरह गुण।
१७६६. अयोग्य क्षेत्र में वर्षावास बिताने से प्रायश्चित्त।
१७७०,१७७१. कीचड़युक्त प्रदेश के दोष।
१७७२. प्राणियों की उत्पत्ति वाले प्रदेश के दोष।
१७७३. संकड़ी वसति में रहने के दोष।
१७७४-७८. दूध न मिलने वाले प्रदेश में रहने के दोष।
१७७६. जनाकुल वसति में रहने के दोष।
१७८०. वैद्य और औषध की अप्राप्ति वाले स्थान के दोष।
१७८१. निचय और अधिपति रहित स्थान के दोष।
१७८२. अन्यतीर्थिक बहुल क्षेत्रावास से होने वाले दोष।
१७८३,१७८४. सुलभभिक्षा वाले क्षेत्र में स्वाध्याय, तप आदि की सुगमता।
१७८५. संग्रह, उपग्रह आदि पंचक का विवरण।
१७८६,१७८७. उत्कृष्ट गुण वाले वर्षावासयोग्य क्षेत्र में तीन मुनियों के रहने से होने वाले संभावित दोष।
१७८८. बालक को वसतिपाल करने के दोष।
१७८६. आचार्य के रहने से वसति के दोषों का वर्जन।
१७६०-६२. दो-तीन मुनियों के रहने से समीपस्थ घरों से गोचरी का विधान।
१७६३-६७. एक ही क्षेत्र में आचार्य और उपाध्याय की परस्पर निश्रा।
१७६८-१८००. एकाकी और असमाप्तकल्प कैसे?
१८०१. स्थविरकृत मर्यादा।
१८०२. सूत्रार्थ के लिए गच्छान्तर में संक्रान्त होने पर क्षेत्र किसका?
१८०३. तीन और सात पृच्छा से होने वाले क्षेत्र का आभवन।
१८०४,१८०५. अक्षेत्र में उपाश्रय की मार्गणा कैसे?
१८०६. उपाश्रय के तीन भेद।
१८०७,१८०८. उपाश्रय-निर्धारण की विधि।
१८०६. प्रव्रज्या विषयक उपाश्रय की पृच्छा।
१८१०-१७. प्रव्रज्या के इच्छुक व्यक्ति को विपरिणत करने के नौ कारणों का निर्देश।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८१८-२३. वर्षाकाल में समाप्तकल्प और असमाप्तकल्प वाले मुनियों की परस्पर उपसंपदा कैसे?
१८२४. सूत्रार्थ भाषण के तीन प्रकार।
१८२५. सूत्र में कौन किससे बलवान्?
१८२६. सूत्रार्थ में कौन किससे बलवान?
१८२७,१८२८. सूत्र से अर्थ की प्रधानता क्यों? कारणों का निर्देश।
१८२९. सभी सूत्रों से छेद सूत्र बलीयान् कैसे?
१८३०. मंडली-विधि से अध्ययन का उपक्रम।
१८३१. आवलिका विधि और मंडलिका विधि में कौन श्रेष्ठ?
१८३२. घोटककंडूयित विधि से सूत्रार्थ का ग्रहण।
१८३३-३५ समाप्तकल्प की विधि का विवरण।
१८३६-४३. प्रव्रज्या के लिए आए शैक्ष एवं विभिन्न मुनियों से वार्तालाप।
१८४४-४८. प्रव्रजित होने के बाद शैक्ष किसकी निश्रा में रहे?
१८४९. शैक्ष के दो प्रकार—साधारण और पश्चात् कृत।
१८५०,१८५१. ऋतुबद्धकाल में गणावच्छेदक के साथ एक ही साधु हो तो उससे होने वाले दोष एवं प्रायश्चित्त विधि।
१८५२. चार कानों तक ही रहस्य संभव।
१८५३. गणावच्छेदक को दो साधुओं के साथ रहने का निर्देश।
१८५४. गीतार्थ एवं सूत्र की निश्रा।
१८५५. घोटककंडूयन की तरह सूत्रार्थ का ग्रहण।
१८५६-६०. क्षेत्र पूर्वस्थित मुनि का या पश्चाद् आगत मुनि का।
१८६१-६३. पश्चात्कृत शैक्ष के भेद एवं स्वरूप।
१८६४,१८६५. गण-निर्गत मुनि संबंधी प्राचीन और अर्वाचीन विधि, भद्रबाहु द्वारा तीन वर्ष की मर्यादा।
१८६६-७६. विविध उत्प्रव्रजित व्यक्तियों की पुनः प्रव्रज्या का विमर्श।
१८७७-८८. वागन्तिक व्यवहार का स्वरूप और विविध दृष्टान्त।
१८८९. पुरुषोत्तरिक धर्म के प्रमाण का कथन।
१८९०,१८९१. ऋतुबद्ध काल में आचार्य आदि की मृत्यु होने पर निश्रा की चर्चा।
१८९२-९५. लौकिक उपसंपदा में राजा का उदाहरण।
१८९६,१८९७. निर्वाचित राजा मूलदेव की अनुशासन विधि।
१८९८,१८९९. लोकोत्तर सापेक्ष-निरपेक्ष आचार्य का विवरण।
१९००. उपनिक्षेप के दो प्रकार।
१९०१-१९०८. उपनिक्षेप में श्रेष्ठीसुता का लौकिक दृष्टान्त।
१९०९. परगण की निश्रा में साधुओं का उपनिक्षेप कब कैसे?
१९१०-१२. साधुओं की परीक्षानिमित्त धन्य सेठ की चार पुत्रवधूओं का दृष्टान्त एवं निगमन।
१९१३-१५. आचार्य गण का भार किसको दे?
१९१६-२१. उपसंपदा के लिए अनर्ह होने पर निर्गमन और गमन के चार विकल्प।
१९२२-३३. अन्य मुनियों के साथ रहने से पूर्व ज्ञानादि की हानि-वृद्धि की परीक्षा विधि।
१९३४,१९३५. उपसंपन्न गच्छाधिपति के अचानक कालगत होने पर कर्त्तव्य-निदर्शन।
१९३६-४१. सापेक्ष उपनिक्षेप में राजा द्वारा राजकुमारों की परीक्षाविधि।
१९४२-४८. नवस्थापित आचार्य का कर्त्तव्य और मुनियों की विभिन्न कार्यों के लिए नियुक्ति।
१९४९-५१. सूत्रार्थ की वृद्धि न होने से उत्पन्न दोष और गुरु का अनुशासन।
१९५२. वृषभ द्वारा सारणा-वारणा।
१९५३-५५. गच्छ और गणी विषयक चार विकल्प।
१९५६. स्थविरों द्वारा सारणा-वारणा।
१९५७-६९. आचारप्रकल्प के सूत्रार्थ से सम्पन्न और असम्पन्न अनगार के विहार का क्रम।
१९७०-७९. मुनि किसके साथ रहे—इस विवेक का विस्तृत वर्णन।
१९८०-८२. अपान्तराल में समनोज्ञ के साथ एक रात, तीन रात अथवा अधिक रात रहने के कारणों का निर्देश।
१९८३-८९. वर्षावास में भिक्षा, वसति और शंका समाधान के लिए अन्यत्र गमन का विवेक।
१९९०-९२. आचार्य पद पर स्थापना विषयक विविध विकल्प।
१९९३-९८. जीवित अवस्था में पूर्व आचार्य द्वारा नए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आचार्य की स्थापना, परीक्षा और राजा का दृष्टान्त।

१९९९-२००३. मरण शय्या पर स्थित आचार्य का विवरण।

२००४-२००७. अगीतार्थ का मरणासन्न आचार्य को निवेदन।

२००८,२००९. मरणासन्न आचार्य को अगीतार्थ मुनि द्वारा भय दिखाना।

२०१०. भिन्न देश से आए मुनि की अनर्हता।

२०११. वाचक और निष्पादक ही आचार्य के योग्य।

२०१२. आचार्य द्वारा अनुमत शिष्य को गण न सौंपने पर प्रायश्चित्त।

२०१३. अयोग्य मुनि द्वारा आचार्य पद न छोड़ने पर प्रायश्चित्त।

२०१४. आचार्य द्वारा अनुमत शिष्य यदि विशेष साधना पर जाए तो अन्य मुनि को निर्मापित करने की प्रार्थना।

२०१५. विशेष साधना की अपेक्षा गच्छ का परिचालन विपुल निर्जरा का कारण।

२०१६. गीतार्थ मुनियों के कथन पर यदि कोई आचार्य पद का परिहार न करे तो प्रायश्चित्त।

२०१७. आचार्य के प्रति शिष्य का अवश्यकरणीय कर्त्तव्य।

२०१८,२०१९. आचार्य और उपाध्याय का रोग और मोह के कारण अवधावन।

२०२०-२२. रोग से अवधावन की चिकित्सा-परिपाटी, परिपाटी के चार घटक और उनका चिकित्सा-विवेक।

२०२३-३०. रोग से अवधावनोत्सुक मुनि की चिकित्सा-विधि।

२०३१-५२. भग्नव्रत की उपस्थापना और प्रायश्चित्त-विधि।

२०५३-५६. प्रायश्चित्त की विस्मृति के चार कारण।

२०५७-६२. स्मरण-अस्मरण विषयक विवरण।

२०६३,२०६४. गणापक्रमण करने वाले का विवरण।

२०६५-६९. 'अट्ठे लोए परिजुण्णे' सूत्र की व्याख्या।

२०७०-७३. सूत्रार्थ का सही अर्थ जान लेने पर गणापक्रमण।

२०७४. गुरु की आज्ञा की प्रधानता।

२०७५-७८. अभिनिचारिकायोग का विवरण तथा प्रायश्चित्त।

२०७९,२०८०. चरिकाप्रविष्ट द्वितीय सूत्र की व्याख्या।

२०८१. उपपात के एकार्थक।

२०८२,२०८३. मितगमन आदि का निर्देश तथा ध्रुव की व्याख्या।

२०८४. सूत्रगत 'वेउट्टिय' शब्द का भावार्थ कथन।

२०८५. कायसंस्पर्श की व्याख्या।

२०८६. स्मारणा, वारणा आदि भिक्षुभाव के घटक।

२०८७. गणमुक्त साधना करने के कुछ हेतु।

२०८८,२०८९. आचार्य की अनुज्ञा के बिना गणमुक्त होने पर प्रायश्चित्त।

२०९०. आचार्य द्वारा क्षेत्र की प्रतिलेखना।

२०९१. क्षेत्र की प्रतिलेखना न करने के दोष।

२०९२-२१०१. चरिकाप्रविष्ट आदि चार सूत्रों की निर्युक्ति। चरिका से निवृत्त विपरिणत मुनि विषयक विवरण और प्रायश्चित्त।

२१०२,२१०३. विदेश अथवा स्वेदश में दूर प्रस्थान करने की विधि।

२१०४,२१०५. उपसंपद्यमान की परीक्षा।

२१०६,२१०७. परीक्षा में अनुत्तीर्ण साधुओं का विसर्जन।

२१०८-१२. प्रतीच्छक कितने समय तक प्रतीच्छक?

२११३-१६. निर्गम की अनुज्ञा और उसकी यतना।

२११७. आभवद् व्यवहार विधि तथा प्रायश्चित्त-विधि।

२११८-२४. आगाढ और अनागाढ़ स्वाध्याय भूमि का कालमान।

२१२५-२७. योग को वहन करने वाले मुनि के योग का भंग कब कैसे?

२१२८-३६. योग विसर्जन का कारण और विधि।

२१३७-४६. निर्विकृतिक आहार-विधि तथा अन्य विवरण।

२१४७-४९. माया से योग विसर्जन का परिणाम।

२१५०-५७. मायावी मुनि के व्यवहार के अनेक कोण।

२१५८. नालबद्ध और वल्लीबद्ध के प्रकार और व्यक्तियों का निर्देश।

२१५९-६४. उपस्थापना पहले पीछे किसको?

२१६५-७६. आचार्य के लिए आभाव्य शिष्य कौन?

२१७७-८५. दो के विहरण की मर्यादा तथा प्रायश्चित्त आदि का विवरण।

२१८६-८९. रत्नाधिक का शैक्ष के प्रति कर्त्तव्य।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१६०-२२०६. दो संख्याक भिक्षु, गणावच्छेदक आदि विषयक वर्णन।
२२०७-१५. आभवद् व्यवहार के भेद तथा विवरण।
२२१६-२९. अवग्रह के तीन भेदों का विवरण।
२२३०-४२. निर्गमन की चतुर्भंगी और उसका विवरण।
२२४३-५४. असंस्तरण में साधुओं की चतुर्भंगी आदि का वर्णन।
२२५५. काल के आधार पर अवग्रह के तीन भेद।
२२५६,२२५७. वृद्धावास का निर्वचन तथा कालमान।
२२५८-६३. वृद्धावास में रहने के हेतुओं का निर्देश।
२२६४-६८. जंघाबल की क्षीणता का अवबोध।
२२६९-७२. स्थविर का क्षेत्र और काल से अपराक्रम जानने का निर्देश।
२२७३-७५. गच्छवास को सहयोग देने की विधि।
२२७६,२२७७. वृद्धों के प्रति चतुर्विध यतना।
२२७८-८२. वृद्धावास के प्रति कालगत यतना।
२२८३-८८. वृद्धावास की बसति एवं संस्तारक यतना का निर्देश।
२२८९,२२९०. ग्लानत्व, असहायता तथा दौर्बल्य के कारण होने वाला वृद्धावास।
२२९१. अनशन-प्रतिपन्न की निश्रा में प्रतिचारक के रहने का कालमान।
२२९२-९७. सूत्रार्थ के निष्पादक की वृद्धावास में रहने की काल-मर्यादा।
२२९८. एक क्षेत्र में रहने के कारणों का निर्देश।
२२९९. संलेखना-प्रतिपन्न के साथ तरुण साधु के रहने की काल-मर्यादा।
२३००-२३०३. अवग्रह के तीन प्रकार एवं उनके कल्प-अकल्प की काल मर्यादा।
२३०४. साध्वियों की विहार संबंधी मर्यादा।
२३०५,२३०६. ऋतुबद्ध काल में सात तथा वर्षाकाल में नौ साध्वियों के विहार का निर्देश एवं उसके कारण।
२३०७-११. प्रवर्त्तिनी के कालगत होने पर आचार्य के समीप जाने की परम्परा।
२३१२. साध्वियों की प्रमादबहुलता एवं अस्थिरता की कथा।
२३१३,२३१४. नव, डहरिका तथा तरुणी की व्याख्या और प्रवर्त्तिनी बनने की अर्हता।
२३१५-१८. अन्यगच्छ से समागत साध्वी की विज्ञप्ति।
२३१९-२१. प्रकल्प अध्ययन की विस्मृति करने वाले को यावज्जीवन गण न सौंपने का निर्देश तथा प्रकल्प की विस्मृति के कारणों की खोज।
२३२२-२६. विद्यानाश में अजापालक, योध आदि के अनेक दृष्टान्त।
२३२७,२३२८. प्रमत्त साध्वी को गण देने, न देने का विमर्श।
२३२९. प्रमत्त मुनि को गण देने, न देने का विमर्श।
२३३०,२३३१. मथुरा नगरी में क्षपक का वृत्तान्त।
२३३२,२३३३. प्रकल्पाध्ययन नष्ट होने पर स्थविर और आचार्य की कर्त्तव्यता।
२३३४. सूत्रार्थधारक ही गणधारी।
२३३५. कृतयोगी के सूत्र-नाश का कारण।
२३३६. गण को स्वयं धारण करने का विवेक
२३३७. कृतिकर्म का विधान और निधान का दृष्टान्त।
२३३८,२३३९. गर्व से कृतिकर्म न करने पर प्रायश्चित्त।
२३४०-४२. अविधि से कृतिकर्म करने पर प्रायश्चित्त।
२३४३-४५. कृतिकर्म की विधि।
२३४६,२३४७. स्थविरों के द्वारा कृतिकर्म करने से तरुणों को प्रेरणा।
२३४८. आलोचना किसके पास?
२३४९-५५. संभोज (पारस्परिक व्यवहार) के छह प्रकार तथा विवरण।
२३५६-६०. सांभोजिक एवं असांभोजिक का विभाग कब?
२३६१-६४. आलोचना-विधि तथा दोष।
२३६५. आर्यरक्षित तक आगमव्यवहारी अतः साध्वियों को छेदसूत्र की वाचन की परम्परा।
२३६६. आगमव्यवहारी के अभाव में साध्वियों द्वारा प्रायश्चित्तदान-विधि।
२३६७-७२. साध्वियों का श्रमणों के पास तथा श्रमणों का साध्वियों के पास प्रायश्चित्त लेने का विधान।
२३७३-७८. साध्वी का श्रमणों के पास आलोचना करने की विधि तथा दृष्टिराग की चिकित्सा।
२३७९-८५. सांभोजिक निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थियों की पारस्परिक सेवा कब? कैसे?
२३८६-९१. ग्लान श्रमण की वैयावृत्त्य करने वाली आर्यिका की योग्यता के बिन्दु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३९२,२३९३. श्रमण द्वारा ग्लान श्रमणी की तथा श्रमणी द्वारा ग्लान श्रमण की वैयावृत्त्य करने की विधि।
२३९४,२३९५. आगाढ प्रयोजन में द्विपक्ष वैयावृत्त्य अनुज्ञात।
२३९६. वैयावृत्त्य का सामान्य नियम।
२३९७. सूत्र से अर्थ का सम्बन्ध कैसे?
२३९८-२४००. विपक्ष के वैयावृत्त्य से दोष।
२४०१-२४०७. औषध आदि का ग्रहण तथा वैद्य का दृष्टान्त।
२४०८. राजा के दो प्रकार—आत्माभिषिक्त और पराभिषिक्त।
२४०९. पराक्रमी राजा के चार बिंदु।
२४१०. सूत्रार्थविहीन एवं औषधविहीन आचार्य की व्यर्थता।
२४११-१५. औषधि आदि निचय सम्बन्धी शिष्य का प्रश्न और आचार्य का उत्तर।
२४१६-२२. औषध के संचय का निषेध।
२४२३. समाधि के लिए शिष्य का प्रश्न और आचार्य का उत्तर।
२४२४-२७. विद्या और मंत्र का संनिचय विहित।
२४२८-३२. गणधारी के चिकित्साज्ञान की अनिवार्यता।
२४३३,२४३४. लवसप्तमदेव का स्वरूप।
२४३५ स्वपक्ष से चिकित्सा, विपक्ष से नहीं।
२४३६. वैयावृत्त्य विषयक सूत्र और अर्थ में विपर्यास की चर्चा।
२४३७,२४३८. वैद्य के अभाव में वैयावृत्त्य किससे?
२४३९-४३. दूती विद्या, आदर्श विद्या आदि द्वारा रोगनिवारण का निर्देश।
२४४४. निर्ग्रन्थ के निर्ग्रन्थी द्वारा तथा निर्ग्रन्थी के निर्ग्रन्थ द्वारा वैयावृत्त्य करने पर प्रायश्चित्त का विधान।
२४४५,२४४६. जिनकल्पिक और स्थविरकल्पिक के वैयावृत्त्य का विधान।
२४४७. सर्पदंश के लिए ज्ञातविधि का ज्ञान।
२४४८-५५. ज्ञातविधि का संज्ञान, प्रायश्चित्त तथा विविध दोषों की समापत्ति।
२४५६-५९. सेनापति का दृष्टान्त।
२४६०,२४६१. लोभ की समुदीरणा में रत्नस्थाल का दृष्टान्त।
२४६२-७३. ज्ञातविधिगमन के दोष तथा संयम से चालित करने के ११ उपाय।
२४७४-७९. उत्प्रव्रजित मुनि द्वारा होने वाले दोषों का वर्णन।
२४८०-८२. ज्ञातविधिगमन के उत्सर्ग, अपवाद तथा यतना।
२४८३. स्वाध्याय तथा भिक्षाभाव द्वारा शिष्य की परीक्षा।
२४८४,२४८५. मंदसंविग्न और तीव्रसंविग्न कौन?
२४८६-८८. उपसर्ग-सहिष्णु की परीक्षा।
२४८९. स्वजनों से प्रतिबद्ध या अप्रतिबद्ध की पहचान।
२४९०-९३. ज्ञातविधि में जाने वाले की योग्यता और सहयोगियों की चर्चा।
२४९४. स्वज्ञातिक मुनि द्वारा धर्मकथा करने का निर्देश और विधि।
२४९५. थावच्चापुत्र का दृष्टान्त कहने का निर्देश।
२४९६-९९. पूर्वायुक्त और पश्चादायुक्त भोजन की व्याख्या।
२५००. भिक्षु को द्रव्यों के प्रमाण आदि का ज्ञान।
२५०१. सात प्रकार का ओदन।
२५०२. शाक, व्यञ्जन आदि का परिमाण।
२५०३. द्रव्य ग्रहण का परिमाण।
२५०४. भिक्षा-वेला का ज्ञान तथा संविग्न संघाटक।
२५०५-२५०९. ग्लान मुनि की चिकित्सा में पुरःकर्म तथा पश्चात् कर्म का विवेक।
२५१०-१३. ग्लान के प्रयोजन से ज्ञातविधि प्राप्त करने वाले मुनियों की यतना।
२५१४-१८. ज्ञातविधि प्राप्त करने के हेतु।
२५१९,२५२०. बहुश्रुत के अनेक अतिशय।
२५२१. आचार्य के पांच अतिशेषों का वर्णन।
२५२२-२९. आचार्य के चरण-प्रमार्जन की विधि। अविधि से करने पर दोष तथा प्रायश्चित्त।
२५३०,२५३१. आचार्य के बहिर्गमन का हेतु तथा शैक्ष का प्रश्न।
२५३२-३७. आचार्य के वसति के बाहर ठहरने के दोष।
२५३८-४१. क्या भिक्षु वसति के बाहर रह सकता है? प्रश्न का समाधान।
२५४२-५२. दूसरा अतिशय—संज्ञाभूमि में गमन, निषेध और अपवाद।
२५५३-५७. लौकिक विनय बलवान् या लोकोत्तर विनय?
२५५८,२५५९. आचार्य के संज्ञाभूमि-गमन के अवसर पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुनियों का कर्त्तव्य।
२५६०-६५. आचार्य की रक्षा का दृष्टान्त द्वारा समर्थन।
२५६६. आचार्य की रक्षा के लाभ।
२५६७,२५६८. तीसरा अतिशय—अतिशायी प्रभुत्व।
२५६९-७१. आचार्य को भिक्षा के लिए न जाने के हेतु।
२५७२-९९. आचार्य को गोचरी से निवारित न करने पर प्रायश्चित्त तथा उससे होने वाले दोष।
२६००-२६०२. आचार्य द्वारा भिक्षार्थ न जाने के गुण।
२६०३-२६०६. कारणवश आचार्य का भिक्षार्थ जाने पर शिष्य का कर्त्तव्य।
२६०७-२६०९. गोचरचर्या सम्बन्धी आचार्य और शिष्य का ऊहापोह।
२६१०-१४. कौटुम्बिक से आचार्य की तुलना।
२६१५-१७. निरपेक्ष और सापेक्ष दंडिक का दृष्टान्त।
२६१८-२५. आचार्य के भिक्षार्थ जाने के कारणों का निर्देश तथा भिक्षार्थ न जाने पर प्रायश्चित्त।
२६२६-२८. भिक्षा की सुलभता न होने पर आचार्य किन किन को भिक्षार्थ भेजे?
२६२९,२६३०. गणिपिटक पढ़ने वालों की वैयावृत्य से महान् निर्जरा।
२६३१. विभिन्न आगमधरों की वैयावृत्य से निर्जरा की तरतमता।
२६३२. प्रावचनी आचार्य की वैयावृत्य से महान् निर्जरा।
२६३३-३६. भावों के आधार पर निर्जरा की तरतमता।
२६३७,२६३८. निश्चयनय से निर्जरा का विवेचन।
२६३९. सूत्रधर, अर्थधर एवं उभयधर की वैयावृत्त्य से निर्जरा।
२६४०-४६. सूत्र और अर्थ से सूत्रार्थ श्रेष्ठ तथा शातवाहन का दृष्टान्त।
२६४७,२६४८. अर्थमंडली में स्थित आचार्य का अभ्युत्थान विषयक गौतम का दृष्टान्त।
२६४९-६०. अभ्युत्थान से व्याक्षेप आदि दोष।
२६६१-६४. अभ्युत्थान के तीन कारण।
२६६५. अभ्युत्थान का क्रम।
२६६६-६९. सापेक्ष-निरपेक्ष शिष्य के सम्बन्ध में शकट का दृष्टान्त।
२६७०,२६७१. द्रव्य और भाव भक्ति में लोहार्य और गौतम का दृष्टान्त।
२६७२. गुरु की अनुकम्पा और गच्छ की अनुकम्पा से तीर्थ की अव्यवच्छित्ति।
२६७३. गुरु की गच्छ के प्रति अनुकम्पा से ही दशविध वैयावृत्त्य का समाचरण।
२६७४-८२. आचार्य के पांच अन्य अतिशयों का विवरण।
२६८३. हाथ, मुंह आदि धोने के लाभ।
२६८४. आचार्य के योगसंधान के प्रति शिष्यों की जागरूकता।
२६८५-९२ अतिशयों को भोगने में विवेक, आर्य समुद्र तथा आर्य मंगु का निदर्शन।
२६९३-२७०२. पूर्व वर्णित पांच अतिशयों में अंतिम दो अतिशयों का वर्णन।
२७०३. भद्रबाहु का 'महापान' ध्यान और महापान की व्युत्पत्ति।
२७०४. आचार्य का वसति के बाहर रहने का कारण।
२७०५. गणावच्छेदक तथा गणी के दो अतिशयों का कथन।
२७०६,२७०७. भिक्षु के दश अतिशय।
२७०८. सूत्राध्ययन किए बिना एकलवास करने का निषेध और उसका प्रायश्चित्त।
२७०९,२७१०. अपठित श्रुत वाले अनेक मुनियों का एक गीतार्थ के साथ रहने का विधान।
२७११-१८. अपठितश्रुत मुनियों का गच्छ से अपक्रमण एवं उससे होने वाले दोष।
२७१९,२७२०. अपठितश्रुत मुनियों के एकान्तवास का विधान।
२७२१-२४. एक या अनेक का एकलवास और सामाचारी का विवेक।
२७२५-२८. गीतार्थनिश्रित की यतना और मुनियों के संवास की व्यवस्था।
२७२९-३३. पृथक् पृथक् वसति में रहने का विधान और उसकी यतना-विधि।
२७३४-३८. अपठितश्रुत मुनियों के साथ आचार्य का व्यवहार और तीन स्पर्धकों का सहयोग।
२७३९-४४. एक दिन में अपठितश्रुत स्पर्धकों का शोधन और प्रायश्चित्त।
२७४५,२७४६. बहुश्रुत को भी अकेले रहने का निषेध।
२७४७. अभिनिर्वगड़ा के प्रकार एवं एकाकी रहने का प्रायश्चित्त।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७४८-५७. लज्जा, भय आदि के कारण पापाचरण से रक्षा।
२७५८-६४. शुभ-अशुभ मनःपरिणामों की स्थिति का विभिन्न उपमाओं से निरूपण।
२७६५,२७६६. एक लेश्यास्थान में असंख्य परिणाम-स्थानों का कथन।
२७६७. लेश्यागत विशुद्ध भावों से मोह का अपचय।
२७६८. शुभ परिणाम से मोह कर्म का क्षय होता है या नहीं?
२७६९-७८. एकाकी विहरण के दोष।
२७७९-८१. बहुश्रुत के एकाकीवास का समर्थन।
२७८२. बहुश्रुत के त्वगृदोष होने के कारण एकाकी रहने का विधान।
२७८३-८५. त्वगृदोष के प्रकार तथा उसकी सावधानी के उपाय।
२७८६-८८. त्वगृदोषी की आचार्य द्वारा सारणा-वारणा अन्यथा प्रायश्चित्त।
२७८९-९२. त्वगृदोष संक्रमण के हेतु।
२७९३-२८०२. अबहुश्रुत के त्वगृदोष होने पर यतना विधि।
२८०३-२८०६. हस्तकर्म आदि से शुक्र निष्कासन।
२८०७-१२. शुक्र निष्कासन के विविध उपाय।
२८१३-१८. साध्वी के एकाकी रहने के दोष।
२८१९-२३. संयम भ्रष्ट साध्वी के पुनः प्रव्रजित होने की आकांक्षा।
२८२४-३१. संयमभ्रष्ट साध्वी को गण से विसर्जित करने की विधि।
२८३२,२८३३. इत्वरिक और यावत्कथिक दिगूबंध का कथन।
२८३४. सूत्र की संबंध गाथा।
२८३५-३८. गण से निर्गत भिक्षुणी का पुनः आना।
२८३९-४१. अन्यदेशीय वस्त्रों से प्रावृत भिक्षुणी को देखकर वृषभों का ऊहापोह।
२८४२-४५. साध्वियों द्वारा लब्ध वस्त्रों को गुरु को दिखाने की परम्परा और न दिखाने पर प्रायश्चित्त।
२८४६,२८४७. प्रवर्त्तिनी को गुरुतर दंड के लिए शिष्य का प्रश्न एवं आचार्य का उत्तर।
२८४८-५३. पति द्वारा परित्यक्त स्त्री की प्रव्रज्या और उसे पुनः गृहस्थ जीवन में लाने में परिव्राजिका की भूमिका।
२८५४-६०. प्रव्रज्या के पारग-अपारग का परीक्षण।
२८६१-६६. मायावी भिक्षुणी द्वारा छिद्रान्वेषण।
२८६७. सूत्र और अर्थ की पारस्परिकता।
२८६८. अन्य गण से आगत साध्वियों को वाचना आदि।
२८६९. आभीरी की प्रव्रज्या, विपरिणाम और उसका प्रायश्चित्त।
२८७०-७७. समागत निर्ग्रन्थी को गण में न लेने के कारण और प्रायश्चित्त।
२८७८-९१. प्राघूर्णक मुनि की विविध शंकाएं एवं उनके आधार पर विसांभोजिक करने पर प्रायश्चित्त।
२८९२-९५. परोक्ष में विसांभोजिक करने के दोष।
२८९६-२९०५ सांभोजिक और विसांभोजिक व्यवहार किसके साथ?
२९०६. आगत मुनियों की द्रव्य आदि से परीक्षा और फिर सहभोज।
२९०७. ज्ञात-अज्ञात के साथ बिना आलोचना के सहभोज करने पर प्रायश्चित्त।
२९०८. ज्ञात-अज्ञात की परीक्षा आर्य महागिरि से पूर्व नहीं, बल्कि आर्य सुहस्ति के बाद।
२९०९-११. विभिन्न क्षेत्रों से आए मुनियों के आने पर की जाने वाली यतना।
२९१२. स्वदेशस्थ मुनियों के प्रति की जाने वाली यतना।
२९१३,२९१४. अभिनिवारिका से आगत मुनि गुरु के पास कब जाए?
२९१५. कालवेला के अपवाद के कारण।
२९१६. कालवेला में न आने पर प्रायश्चित्त।
२९१७,२९१८. प्राघूर्णक मुनियों के आने पर तत्रस्थ मुनियों का कर्त्तव्य।
२९१९,२९२०. आगत मुनियों का तीन दिनों का आतिथ्य और भिक्षाचर्या की विधि।
२९२१,२९२२. निर्ग्रन्थ सूत्र के बाद निर्ग्रन्थी सूत्र का कथन और उसकी प्रासंगिकता।
२९२३. साध्वी के परोक्षतः सम्बन्ध-विच्छेद का कथन।
२९२४-२८. संयतीवर्ग को विसांभोजिक करने की विधि।
२९२९. निर्ग्रन्थिनी की दीक्षा का प्रयोजन।
२९३०-३३. सूत्रगत प्रयोजन के बिना साध्वी को प्रव्रजित करने के दोष।
२९३४-४०. मुनि पुरुष को और साध्वी स्त्री को प्रव्रजित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करे—इस विषयक शिष्य का प्रश्न और आचार्य का समाधान।
२६४१-५०. स्त्री को प्रव्रजित करने की चार तुलाएं एवं उनका विवरण।
२६५१,२६५२. साध्वी का साधु को प्रव्रजित करने का उद्देश्य।
२६५३-६१. क्षेत्रविकृष्ट तथा भवविकृष्ट दिशा संबन्धी विवरण तथा दृष्टान्त।
२६६२-६८. अन्य आचार्य के पास जाने की इच्छुक भिक्षुणी के मार्गगत दोष।
२६६९-७२. क्षेत्रविकृष्ट, भवविकृष्ट विषयक अपवाद।
२६७३-७८. निर्ग्रन्थ सम्बन्धी क्षेत्रविकृष्ट तथा भव-विकृष्ट का विवरण।
२६७९-३००६. कलह और अधिकरण के विविध पहलू तथा उपशमन विधि।
३००७-१३. निर्ग्रन्थिनियों के पारस्परिक कलह के कारण एवं उपशमन विधि।
३०१४,३०१५. स्वपक्ष के द्वारा परपक्ष को स्वाध्याय के लिए उद्दिष्ट करने पर प्रायश्चित्त।
३०१६. स्तुति और स्तव की परिभाषा।
३०१७. अकाल स्वाध्याय में ज्ञानाचार की विराधना।
३०१८. कालादि उपचार के बिना विद्या की सिद्धि नहीं तथा क्षुद्र देवताओं द्वारा उपद्रव।
३०१९. सूत्र देवताधिष्ठित क्यों?
३०२०,३०२१. विद्याचक्रवर्ती का यत्किंचित् कथन विद्या क्यों? दृष्टान्त और उपनय।
३०२२,३०२३. जिनेश्वर की वाणी के आठ गुण।
३०२४,३०२५. अकाल में अंग पढने का निषेध।
३०२६. अकाल में आवश्यक का निषेध क्यों नहीं?
३०२७. अकाल में स्वाध्याय के दोष।
३०२८-३१. द्रव्य और भाव विष का कथन।
३०३२,३०३३. श्रमण-श्रमणियों को स्वपक्ष में ही वाचना देने का निर्देश।
३०३४-४४ स्वाध्यायकरण काल तथा स्वपक्ष-परपक्ष की उद्देशन-विधि और अपवाद।
३०४५-४७. साध्वी का साधु की निश्रा में स्वाध्याय करने के गुण-दोष।
३०४८. ज्ञान और चारित्र के बिना दीक्षा निरर्थक।
३०४९,३०५०. विशुद्धि के अभाव में चारित्र का अभाव।
३०५१-५३. ज्ञान-दर्शन-चारित्र की आराधना के लिए साध्वियों को पढ़ाने का निर्देश।
३०५४,३०५५. अप्रशस्त भाव से दिए जाने वाले प्रवाचना के दोष।
३०५६-५८. साधु साध्वी को प्रवाचना कब दे?
३०५९,३०६०. मुनि और साध्वी की परीक्षा के बिंदु।
३०६१-७७. परीक्षा न करने पर होने वाले दोष और उसका प्रायश्चित्त।
३०७८-८२. वाचना के लिए योग्य साध्वी का स्वरूप-कथन।
३०८३,३०८४. भार्या-साध्वी आदि को वाचना देने का निषेध।
३०८५-९३. कौन किसको वाचना दे? तथा वाचना की द्रव्य आदि से यतना।
३०९४,३०९५. गणधर साध्वियों को वाचना देते समय कैसे बैठे?
३०९६. वाचना किनको न दे?
३०९७. उपाध्याय भी स्थविर की सन्निधि में वाचना दे।
३०९८,३०९९. वाचना के समय साध्वियां कैसे बैठें?
३१००. स्वाध्याय-काल में स्वाध्याय करने का निर्देश।
३१०१,३१०२. अस्वाध्याय के भेद-प्रभेद तथा दोष।
३१०३,३१०४. अस्वाध्यायिक में स्वाध्याय करने के दोष तथा राजा का दृष्टान्त।
३१०५-३१०९. अस्वाध्याय काल में स्वाध्याय करने के हेतु उससे होने वाले दोष तथा पांच पुरुषों का दृष्टान्त।
३११०-१३. संयमोपघाती अस्वाध्यायिक का निरूपण।
३११४-१६. औत्पातिक अस्वाध्यायिक का निरूपण।
३११७-२४. देव सम्बन्धी अस्वाध्यायिक का निरूपण।
३१२५-३०. व्युद्ग्रह सम्बन्धी अस्वाध्यायिक का निरूपण।
३१३१-५२. औदारिक शरीर सम्बन्धी अस्वाध्यायिक के भेद-प्रभेद।
३१५३-५६. स्वाध्याय-काल में स्वाध्याय करने का निर्देश तथा कालग्रहण की सामाचारी।
३१५७,३१५८. काल प्रत्युपेक्षण की २४ भूमियां।
३१५९. काल की तीन भूमियों के प्रत्युपेक्षण का निर्देश।
३१६०,३१६१. दैवसिक अतिचार का चिन्तन।
३१६२-८७. आवश्यक के बाद तीन स्तुति करने का निर्देश और तदनन्तर काल प्रत्युपेक्षणा की विधि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१८८-९३. प्रादोषिक कालग्रहण कर गुरु के पास आने की विधि और गुरु को निवेदन।
३१९४-३२१४. काल चतुष्क की उपघात विधि।
३२१५-२१. स्वाध्याय की प्रस्थापन विधि।
३२२२. अस्वाध्यायिक में स्वाध्याय करने का निषेध किन्तु वाचना की अनुमति।
३२२३-२७. आत्मसमुत्थ अस्वाध्यायिक के भेद और उसकी यतना।
३२२८,३२२९. अस्वाध्यायिक में स्वाध्याय करने से दोष।
३२३०-३३. शरीरगत रक्त का अस्वाध्यायिक क्यों नहीं? शिष्य का प्रश्न और आचार्य का उत्तर।
३२३४-३९. राग, द्वेष, मोह वश अस्वाध्यायिक में स्वाध्याय करने के दोष।
३२४०-४२. साधु एवं साध्वी के परस्पर वाचना देने का प्रयोजन एवं दीक्षा पर्याय का कालमान।
३२४३,३२४४. आचार्य, उपाध्याय और प्रवर्त्तिनी का संग्रह क्यों?
३२४५-५२. साध्वियों के अवश्य संग्रह का निर्देश तथा अनेक दृष्टान्तों द्वारा समर्थन।
३२५३. जरापाक मुनि की व्याख्या।
३२५४-५७. मृत साधु की परिष्ठापन-विधि तथा उपकरणों का समर्पण।
३२५८,३२५९. मृत परिष्ठापन में स्थण्डिल की प्रत्युपेक्षणा।
३२६०,३२६१. प्रत्युपेक्षण न करने के दोष और प्रायश्चित्त।
३२६२-६४. स्थण्डिल में परिष्ठापन के दोष।
३२६५,३२६६. मृत के लिए वस्त्रों का विवेक।
३२६७-७३. मृत के परिष्ठापन में दिशा का विवेक।
३२७४-७६. परिष्ठापन करने योग्य स्थण्डिल का निर्देश।
३२७७-७९. श्मशान में परिष्ठापन की विधि।
३२८०-८२. सात से कम मुनि होने पर परिष्ठापन की विधि।
३२८३. गृहस्थों द्वारा मुनि के शव का परिष्ठापन, उसके दोष और प्रायश्चित्त।
३२८४-८६. मुनि द्वारा ही मुनि के शव का परिष्ठापन करने का निर्देश।
३२८७-९९. अकेले मुनि द्वारा शव के परिष्ठापन की विधि।
३३००-३३०५. परिष्ठापन की विशेष विधि एवं प्रायश्चित्त का विधान।
३३०६. शव को परलिंग क्यों किया जाता है?
३३०७,३३०८. शव के उपधिग्रहण की विधि।
३३०९-४२. अवग्रह विषयक अवधारणा, शय्यातर कब, कैसे?
३३४३. विधवा आदि को शय्यातर बनाने का विधान।
३३४४. विधवा और धव शब्द का निरुक्त।
३३४५,३३४६. शय्यातर से सम्बन्धित प्रभु और अप्रभु की व्याख्या।
३३४७-३३४८. शय्यातर की अनुज्ञापना किससे?
३३४९-५३. मार्ग आदि में भी अवग्रह की अनुज्ञापना। वृक्ष पडालिका आदि को शय्यातर बनाने का निर्देश।
३३५४. राज्यावग्रह का निर्देश।
३३५५,३३५६. संस्तृत, अव्याकृत और अव्यवच्छिन्न की व्याख्या।
३३५७,३३५८. पूर्वानुज्ञात अवग्रह का कालमान।
३३५९. भिक्षुभाव की व्याख्या।
३३६०-६२. राजा के कालगत होने पर अनुज्ञापना किसको?
३३६३-६५. भद्रक को अनुज्ञापित करने पर राजा का दातव्य सम्बन्धी प्रश्न और उत्तर।
३३६६. प्रायोग्य का स्वरूप कथन।
३३६७. भद्रक द्वारा दीक्षा की अनुज्ञा का निषेध।
३३६८. राजा को अनुज्ञापित किए बिना देश छोड़ने पर प्रायश्चित्त।
३३६९. देश छोड़ने के उपायों का निर्देश।
३३७०-७७. प्रव्रज्या के लिए अनुज्ञा-अननुज्ञा का कथन।
३३७८-८१. राजा को अनुकूल बनाने का विधान।
३३८२. साधर्मिक अवग्रह का कथन।
३३८३. गृह शब्द के एकार्थक और साधर्मिक अवग्रह के भेद।
३३८४. गृह के तीन प्रकार।
३३८५. शिष्य द्वारा शय्यासंस्तारक भूमि के लिए गुरु को निवेदन।
३३८६,३३८७. आचार्य द्वारा उस याचित भूमि की स्वीकृति।
३३८८. ऋतुबद्धकाल, वर्षावास और वृद्धावास के योग्य शय्या-संस्तारक।
३३८९-९४. संस्तारक के विविध विकल्प, उनकी व्याख्या और प्रायश्चित्त।
३३९५. सूत्र का प्रवर्त्तन सकारण, कारण की जिज्ञासा।
३३९६. संस्तारक के लिए तृण ग्रहण करने की विधि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३९७,३३९८. जिनकल्पिक और स्थविरकल्पिक के लिए तृणों का परिमाण।
३३९९,३४००. ग्लान और अनशन किए हुए मुनि के संस्तारक का स्वरूप।
३४०१. अग्लान के लिए तृणमय संस्तारक का वर्जन।
३४०२. कल्प और प्रकल्प की व्याख्या।
३४०३. ऋतुबद्ध काल में तृण ग्रहण करने की यतना।
३४०४,३४०५. ऋतुबद्ध काल में फलकग्रहण की यतना और फलक के पांच प्रकार।
३४०६. यतना से गृहीत फलक का प्रायश्चित्त।
३४०७. फलक को उपाश्रय के बाहर से लाने की विधि।
३४०८. गोचराग्र के लिए जाते समय भिक्षा और संस्तारक दोनों लाने का निर्देश।
३४०९. ऋतुबद्ध काल में संस्तारक न लेने पर प्रायश्चित्त।
३४१०-१२. वर्षाकाल में संस्तारक ग्रहण न करने पर प्रायश्चित्त और उसके कारण।
३४१३. वर्षाकाल में फलक-संस्तारक ग्रहण की विधि।
३४१४-७३. वर्षाकाल में फलक के ग्रहण, अनुज्ञापना आदि पांच द्वारों का विस्तृत वर्णन।
३४७४,३४७५. वृद्धावास योग्य संस्तारक का कथन और उसका कालमान।
३४७६. सहाय रहित वृद्ध की सामाचारी।
३४७७-८१. दंड, विदंड आदि पदों की व्याख्या और उनका उपयोग।
३४८२. दंड आदि उपकरणों की स्थापना विधि।
३४८३. दंड आदि के स्थापना संबंधी शिष्य का प्रश्न और आचार्य का उत्तर।
३४८४-८८. अतिवृद्ध मुनि का उपकरणों को रखकर भिक्षा के लिए जाने का कारण और यतना का निर्देश।
३४८९-९१. मार्ग में स्थविर के भटक जाने पर अन्वेषण-विधि।
३४९२-९४. स्थविर द्वारा खोज की अन्य विधि में उपकरणों की स्थापना करने के वर्जनीय स्थानों का निर्देश।
३४९५. उपकरणों को स्थापित करने के स्थानों का निर्देश।
३४९६-३५०५. लोहकार आदि ध्रुवकर्मिक को उपकरण संभलाने तथा उसके नकारने पर उपधि प्राप्त करने की विधि।
३५०६-३५०८. शून्यगृह में आहार करने की विधि।
३५०९,३५१०. अवग्रह का अनुज्ञापन तथा अनुज्ञापक।
३५११-१७. प्रातिहारिक तथा सागारिक शय्या-संस्तारक को बाहर ले जाने की विधि और प्रायश्चित्त।
३५१८. अननुज्ञाप्य संस्तारक के ग्रहण का विधान।
३५१९. अननुज्ञाप्य शय्या-संस्तारक ग्रहण करने के दोष तथा प्रायश्चित्त।
३५२०-२३. दत्तविचार और अदत्तविचार अवग्रहों में तृण-फलक आदि लेने की विधि और निषेध।
३५२४. अननुज्ञात अवग्रह में रहने के दोष।
३५२५-३०. अननुज्ञात अवग्रह का ग्रहण किन कारणों से?
३५३१-३५. वसति स्वामी को अनुकूल करने की विधि।
३५३६-५०. लघुस्वक उपधि के प्रकार तथा परिष्ठापित उपधि ग्रहण के दोष एवं प्रायश्चित्त।
३५५१-६१. पथ में विश्राम करने से मिथ्यात्व आदि दोष।
३५६२-६५. मार्ग में विश्राम करने का अपवाद मार्ग।
३५६६-६८. विश्राम के पश्चात् प्रस्थान के समय सिंहावलोकन, विस्मृत वस्तु को न लाने पर प्रायश्चित्त।
३५६९,३५७०. कैसी वस्तु विस्मृत होने पर न लाए?
३५७१-७९. विस्मृत उपधि की दूसरे मुनियों द्वारा निरीक्षण विधि।
३५८०-८२. विस्मृत उपधि को ग्रहण करने के पश्चात् मुनि क्या करे?
३५८३-९२. उपधि-परिष्ठापन की विधि तथा आनयन विधि।
३५९३. अतिरिक्त पात्र ग्रहण की विधि।
३५९४. उद्देश एवं निर्देश की व्याख्या।
३५९५. प्रमाणोपेत उपकरण धारण का निर्देश।
३५९६,३५९७. अतिरिक्त पात्र धारण के दोष, शिष्य का प्रश्न तथा समाधान।
३५९८-३६०३. अनेक मुनियों द्वारा एक ही पात्र रखने के दोष।
३६०४-१०. आचार्य आर्यरक्षित द्वारा मात्रक की सकारण अनुज्ञा।
३६११-१५. कारण के अभाव में मात्रक प्रयोग का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रायश्चित्त।
३६१६,३६१७. अतिरिक्त पात्र ग्रहण के हेतु।
३६१८,३६१९. आभिग्रहिक मुनि के प्रकार तथा आचार्य द्वारा पात्र लाने का आदेश।
३६२०-२५. अतिरिक्त पात्र ग्रहण के तीन प्रकार।
३६२६. आचार्य द्वारा संदिष्ट आभिग्रहिकों की सामाचारी।
३६२७. पात्र-प्रतिलेखन।
३६२८. आनीत पात्रों की वितरण विधि।
३६२९-३३. पुराने पात्र ग्रहण करने के अनेक हेतु, पात्र दुर्लभता के कारण नंदी आदि पांच प्रकार के पात्रों के ग्रहण का निर्देश।
३६३४. पात्र देने वालों के दो प्रकार—एक या अनेक।
३६३५. निर्दिष्ट को पात्र न देने पर प्रायश्चित्त।
३६३६. भिक्षुणी सम्बन्धी निर्देश्य के पांच प्रकार और विभिन्न विकल्प।
३६३७-४१. ग्लान आदि को पात्र न देने पर प्रायश्चित्त।
३६४२ छह प्रकार के जुंगित।
३६४३-४५. ग्लान आदि को पात्र आदि देने की विधि।
३६४६-४९ पात्र देने वाला सांभोजिक अथवा असांभोजिक प्रश्न तथा उत्तर।
३६५०,३६५१. उपकरण सांभोजिक तथा असांभोजिक कैसे?
३६५२-५४. गच्छनिर्गत मुनि के संवेग प्राप्ति के तीन स्थान।
३६५५-५७. अवधावन करने वाले मुनि की सारणा-वारणा।
३६५८-६४. अवधावित मुनि का पुनः आगमन तथा उपकरण सम्बन्धी निर्देश।
३६६५-७९. अगार लिंग तथा स्वलिंग में अवधावन।
३६८०-८५. आहार की मात्रा का विवेक, जघन्य, उत्कृष्ट मात्रा तथा अमात्य का दृष्टान्त।
३६८६-९९. शिष्यों को उपयुक्त आहार न देने वाले आचार्य।
३७००-३७०२. उपयुक्त आहार-ग्रहण करने की विधि।
३७०३. सागारिक पिंड संबन्धी निर्देश।
३७०४. आदेश शब्द की व्याख्या।
३७०५. आदेश, दास और भृतक के पिंड की आठ सूत्रों से मार्गणा।
३७०६-३७०८. प्रातिहारी और अप्रातिहारी का वर्णन।
३७०९. भद्रक एवं प्रान्त व्यक्ति के चिन्तन में भेद।
३७१०-१४. सूत्र में आज्ञा फिर अर्थ गत निषेध क्यों?
३७१५. निसृष्ट अप्रातिहारी पिंड।
३७१६. पूर्व-संस्तुत एवं पश्चात्-संस्तुत आदि का वर्णन।
३७१७-२०. सागारिक दोष एवं प्रसंग दोष से भक्तपान-ग्रहण का निषेध।
३७२१-२३. एगचुल्ली आदि की व्याख्या।
३७२४-३६. साधारण शालाओं के भेद एवं उनमें भक्त ग्रहण का निषेध।
३७३७. व्यंजन ग्रहण विषयक सामाचारी।
३७३८-४२. गोरस, गुड़ आदि औषधियों के दो प्रकार।
३७४३-५७. वृक्ष आदि से सम्बन्धित शय्यातर के अवग्रह का विवेक।
३७५८-७५. विभिन्न दृष्टियों से कल्प-अकल्प का विवेचन।
३७७६-८८. प्रतिमाओं (विशेष साधना) के विभिन्न प्रकार और विवरण।
३७८९-३८०२. क्षुल्लिका एवं महल्लिका मोक प्रतिमा का स्वरूप एवं विवरण।
३८०३-३८०९. मोकप्रतिमा सम्पन्न कर उपाश्रय में अनुसरणीय विधि।
३८१०. मोकप्रतिमा सम्पन्न साधक के गुण।
३८११-१७. दत्तियों का विवरण।
३८१८,३८१९. उपहृत के प्रकार और विवरण।
३८२०-२२. शुद्ध आदि पदों की व्याख्या।
३८२३-२७. अवगृहीत के तीन प्रकार तथा व्याख्या।
३८२८-३०. दीयमान प्रयोग्य तथा संहृत की व्याख्या।
३८३१-३६. यवमध्यचन्द्रप्रतिमा तथा वज्रमध्यचन्द्रप्रतिमा का स्वरूप, दत्तिया तथा संहनन।
३८३७-४१. प्रतिमाधारी और व्युत्सृष्ट काय।
३८४२-५१. उपसर्गों के प्रकार एवं दृष्टान्तों से उनका अवबोध।
३८५२-६४. अज्ञातोञ्छ के प्रकार और ग्रहण विधि।
३८६५-७७. देहली का अतिक्रमण करने से उत्पन्न दोष।
३८७८-८० प्रतिमाधारी द्वारा उद्यान आदि में पिण्ड-ग्रहण की विधि।
३८८१-८५. पांच प्रकार के व्यवहार की उपयोग-विधि।
३८८६. आज्ञा के दो प्रकार।
३८८७. आज्ञा व्यवहार की आराधना के प्रकार और उसका परिणाम।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८८८. व्यवहार के दो अर्थ।
३८८९. व्यवहर्त्तव्य के दो प्रकार—आभवत् और प्रायश्चित्त।
३८९०. आभवत् और प्रायश्चित्त व्यवहार के पांच-पांच प्रकार।
३८९१-९६. क्षेत्र विषयक आभवत् और क्षेत्र प्रतिलेखना।
३८९७. जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट क्षेत्र के गुण।
३८९८. जघन्य क्षेत्र का स्वरूप।
३८९९. क्षेत्र के चौदह गुण।
३९००,३९०१. वर्षायोग्य क्षेत्र का अनुज्ञापन।
३९०२-१५. क्षेत्र के अनुज्ञापन में पूर्वनिर्गत, पश्चाद्निर्गत आदि।
३९१६-२२. क्षेत्र यदि अपर्याप्त हो तो कौन वहां रहे और कौन न रहे?
३९२३. आषाढ शुक्ला दशमी को वर्षावास की मर्यादा का उल्लेख।
३९२४-२७. सारूपिक आदि को अनुज्ञापित कर वसति से बाहर रहने की विधि।
३९२८-३१. संविग्नबहुल काल में आषाढ़ शुक्ला दशमी को वर्षावास की मर्यादा। वर्तमान में इस मर्यादा के अतिक्रमण के कारणों का उल्लेख।
३९३२-४२. पार्श्वस्थों का स्वरूप।
३९४३-४९. वर्षावास के लिए क्षेत्र की घोषणा तथा बाधाएं।
३९५०. क्षेत्र का अन्वेषण और क्षेत्र का व्यवहार।
३९५१-५५. वृषभ क्षेत्र के प्रकार तथा वहां रहने की विधि।
३९५६,३९५७. पूर्वसंस्तुत एवं पश्चात्संस्तुत की व्याख्या तथा क्षेत्र सम्बन्धी विचार।
३९५८-६०. श्रुतसम्पत् के दो प्रकार तथा विवरण।
३९६१-६३. ज्ञान अभिधारण के विविध विकल्प।
३९६४,३९६५. माता पिता आदि निर्मिश्र वल्ली और उसके लाभ।
३९६६,३९६७. मिश्र वल्ली के अन्तर्गत कौन-कौन?
३९६८-७१. अभिधारक के दो प्रकार और उनका विवरण।
३९७२-७४. अभिधार्यमाण आचार्य के जीवित और कालगत अवस्था पर संपादनीय विधि।
३९७५. ज्ञान, दर्शन आदि के अभिधार्यमाण का विवरण।
३९७६. चारित्र के लिए अभिधारण करने के लाभ।
३९७७,३९७८. अभिधार्यमाण किसकी निश्रा में?
३९७९. अर्थप्रदाता की बलवत्ता का कथन।
३९८०. श्रुतसम्पत् का विवरण।
३९८१-९२. सुख-दुःख उपसम्पदा का प्रतिपादन।
३९९३-९९. मार्गोपसम्पद् का विवरण।
४०००-४००७. विनयोपसम्पद् का विवरण।
४००८,४००९. आभवत् व्यवहार का उपनय।
४०१०-१९. प्रायश्चित्त व्यवहार के चार प्रकार।
४०२०-२२. मागध आदि के दृष्टान्तों से मन से कराना तथा मन से अनुज्ञा।
४०२३,४०२४. काया से अनुज्ञा।
४०२५-२७. प्रमाद विषयक प्रायश्चित्त में नानात्व क्यों?
४०२८. पांच व्यवहारों के नाम।
४०२९-३६. आगम व्यवहार के भेद-प्रभेद।
४०३७. आगमतः परोक्ष व्यवहारी कौन?
४०३८. श्रुत से व्यवहार करने वाले आगमव्यवहारी कैसे?
४०३९. जानने की अपेक्षा केवलज्ञानी और श्रुतज्ञानी की समानता।
४०४०,४०४१. प्रत्यक्षज्ञानी और परोक्षज्ञानी में प्रायश्चित्त दान की समानता।
४०४२-४५. प्रत्यक्षज्ञानी एवं परोक्षज्ञानी प्रदत्त प्रायश्चित्त में शिष्य का प्रश्न और गुरु का उत्तर।
४०४६,४०४७. प्रत्यक्षज्ञानी एवं परोक्षज्ञानी के ज्ञान विषयक धमक का दृष्टान्त।
४०४८,४०४९. श्रुतज्ञानी और प्रत्यक्षज्ञानी विशोधि के ज्ञाता।
४०५०-५३. विशोधि की विधि।
४०५४. आगमव्यवहारी के सामने आलोचना करने के गुण।
४०५५. द्रव्य, पर्याय आदि से आलोचना की परिशुद्धि।
४०५६-६०. अज्ञान, भय आदि कारणों से प्रतिसेवना।
४०६१,४०६२. प्रतिसेवना के कारणों का आगम-विमर्श।
४०६३. आप्त की परिभाषा।
४०६४-६९. आगमव्यवहारी प्रायश्चित्त कब और कैसे देते हैं?
४०७०-७९. आलोचनार्ह कौन?
४०८०-८२. आचार्य की आठ संपदाएं तथा उनके भेद-प्रभेद।
४०८३-८६. आचार संपदा के चार प्रकार।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४०८७-९०. श्रुत संपदा के चार प्रकार।
४०९१-९४. शरीर संपदा के चार प्रकार।
४०९५-९७. वचन संपदा के चार प्रकार।
४०९८-४१०३. वाचना संपदा के चार प्रकार।
४१०४-१५. मति संपदा के चार प्रकार।
४११६-२४. संग्रह परिज्ञा के चार प्रकार।
४१२५-२८. व्यवहार समर्थ के ३६ स्थान।
४१२९-३१. विनयप्रतिपत्ति के चार भेद।
४१३२-३९. आचार विनय के चार प्रकार तथा उनका विवरण।
४१४०-४२. श्रुत विनय के चार प्रकार तथा उनका विवरण।
४१४३-४९. विक्षेपणा विनय का विवरण।
४१५०-५५. दोष-निर्घातन विनय के प्रकार तथा उनका विवरण।
४१५६. छत्तीस स्थानों में कुशल ही आगमव्यवहारी।
४१५७-६२. आगमव्यवहारी के अन्यान्य गुण।
४१६३,४१६४. वर्तमान में आगमव्यवहारी एवं चारित्र शुद्धि का व्यवच्छेद।
४१६५. चतुर्दश पूर्वधर का व्यवच्छेद।
४१६६. केवली आदि के व्यवच्छेद से क्या प्रायश्चित्त का भी व्यवच्छेद?
४१६७. प्रायश्चित्त के व्यवच्छेद से चारित्र-निर्यापकों की व्यवच्छित्ति कैसे?
४१६८-७१. परोक्षज्ञानी द्वारा प्रायश्चित देना महान् पाप, कारण का निर्देश।
४१७२. व्यवच्छित्ति के विषय में आचार्य का उत्तर।
४१७३. निशीथ, कल्प और व्यवहार का निर्यूहण नौवें पूर्व से।
४१७४. दस प्रकार के प्रायश्चित्त तथा आठ प्रायश्चित्त का विधान कब तक?
४१७५-७९. प्रायश्चित्तों की यथावत् अवस्थिति में चक्रवर्ती के वर्धकिरत्न का उदाहरण।
४१८०. प्रायश्चित्त के दस प्रकार।
४१८१-८३. अनवस्थाप्य और पारांचित प्रायश्चित्त चतुर्दश पूर्वी के साथ विच्छिन्न।
४१८४-८७. पुलाक आदि पांच प्रकार के निर्ग्रन्थ तथा उनके प्रायश्चित्तों का विवरण।
४१८८-९३. सामायिक आदि पांच प्रकार के निर्ग्रन्थ तथा उनके प्रायश्चित्तों का विधान।
४१९४-४२०३. प्रायश्चित्तों के वाहक क्यों नहीं? धनिक का दृष्टान्त।
४२०४-१२. तीर्थ की अव्यवच्छित्ति का उपाय—उपयुक्त प्रायश्चित्त दान, तिल का दृष्टान्त।
४२१३,४२१४. दर्शन और ज्ञान से ही तीथ की रक्षा, पक्ष-विपक्ष का विवरण।
४२१५. प्रायश्चित्त के बिना चारित्र की अवस्थिति नहीं।
४२१६. चारित्र के बिना निर्वाण नहीं।
४२१७. तीर्थ और निर्ग्रन्थ अन्योन्याश्रित।
४२१८. चारित्र की धुरा : महाव्रत और समिति की आराधना।
४२१९. तीर्थ की धुरा : ज्ञान और दर्शन की आराधना।
४२२०. निर्यापकों के प्रकार एवं उनकी अव्यवच्छित्ति।
४२२१-२६. तीन प्रकार के अनशनों का विवरण।
४२२७-३०. निर्व्याघात भक्तपरिज्ञा से सम्बन्धित द्वारों का उल्लेख।
४२३१-३५. भक्तपरिज्ञा के लिए गणनिस्सरण और परगणगमन के गुणों का वर्णन।
४२३६,४२३७. प्रशस्त अध्यवसायों में आरोहण का उल्लेख।
४२३८-५०. संलेखना के प्रकार, १२ वर्ष में की जाने वाली तपस्या का विवरण।
४२५१-६४. अगीतार्थ के पास अनशन करने के अनेक दोष अतः गीतार्थ की मार्गणा करने का निर्देश।
४२६५-६७. असंविग्न के समीप अनशन करने के दोष और प्रायश्चित्त।
४२६८-७२. संविग्न की मार्गणा का निर्देश।
४२७३-७५. अनशन में अनेक निर्यापक रखने का निर्देश।
४२७६-७९. अनशन की पारगामिता के लिए देवता आदि का सहयोग, तद्विषयक कंचनपुर की घटना।
४२८०,४२८१. अनशनकर्त्ता का व्याघात कैसे?
४२८२-८४. गच्छ को पूछे बिना अनशन करने वाले आचार्य को प्रायश्चित्त तथा अनापृच्छा के दोष।
४२८५-९४. अनशनकर्त्ता की गच्छ, आचार्य तथा अन्य मुनियों द्वारा परीक्षा, कोंकणक तथा अमात्य का दृष्टान्त।
४२९५-४३००. अनशनकर्त्ता की शोधि का उपाय—आलोचना।

४३०१. आलोचना के गुण।
४३०२-१०. ज्ञान, दर्शन, चारित्र संबंधी अतिचारों की आलोचना।
४३११-१५. अनशनकर्त्ता के लिए प्रशस्तस्थान का निर्देश।
४३१६-१९. अनशनकर्त्ता के लिए प्रशस्त वसति का निर्देश।
४३२०-२३. अनशनकर्त्ता के लिए निर्यापकों के गुण और कर्त्तव्य।
४३२४-३२. अनशनकर्त्ता को चरम आहार देने के गुण।
४३३३,४३३४. चरमाहार में द्रव्य-संख्या की परिहानि।
४३३५-३७. अनशनकर्त्ता के प्रति प्रतिचारकों का कर्त्तव्य।
४३३८-४१. प्रतिचारक और प्रतिचर्य के महान निर्जरा कब? कैसे?
४३४२-४४. अनशनकर्त्ता के लिए संस्तारक का स्वरूप।
४३४५,४३४६. अनशनकर्त्ता का उद्वर्तन विषयक विवेक।
४३४७-५९. अनशनकर्त्ता को समाधि उत्पन्न करने के उपाय।
४३६०-७०. अनशनकर्त्ता द्वारा आहार-पानी मांगने पर प्रतिचारकों का कर्त्तव्य।
४३७१-७३. अनशनकर्त्ता को आहार के बिना समाधि न होने पर आहार देने का निर्देश।
४३७४-७६. कालगत अनशनकर्त्ता का चिह्नकरण, प्रकार और विधि।
४३७७-८०. भक्तपरिज्ञा अनशन में व्याघात आने पर गीतार्थ द्वारा प्रयुक्त उपाय।
४३८१-९०. व्याघातिम बालमरण के हेतु।
४३९१. इंगिनीमरण अनशन और पांच तुलाएं।
४३९२-९४. भक्तपरिज्ञा और इंगिनीमरण में अन्तर।
४३९५-९८. पादोपगमन (प्रायोपगमन) अनशन का स्वरूप और विधि।
४३९९. प्रायोपगमन अनशनकर्त्ता के भेदविज्ञान का चिन्तन।
४४००. प्रायोपगमन अनशनकर्त्ता के मेरु की भांति अप्रकंपध्यान।
४४०१. प्रायोपगमन अनशनकर्त्ता की अर्हता।
४४०२, ४४०३. अनशनकर्त्ता के देव और मनुष्यों द्वारा अनुलोम-प्रतिलोम द्रव्यों का मुख में प्रक्षेप और उसका विवरण।
४४०४. अनशनकर्त्ता का संहरण।
४४०५. अनशनकर्त्ता की फलश्रुति।
४४०६. अनशनकर्त्ता को अनुलोम उपसर्गों में सम रहने का निर्देश।
४४०७, ४४०८. पूर्वभव के प्रेम से देवता द्वारा अनशनकर्त्ता का संहरण।
४४०९-१३. पुरुषद्वेषिणी विभिन्न गुणकलित राजकन्या द्वारा बत्तीस लक्षणधर अनशनी का ग्रहण तथा उसके द्वारा की जाने वाली चेष्टाएं।
४४१४-१६. अनशनी के अचलित होने पर उस कन्या द्वारा शिला-प्रक्षेप तथा अनशनी के महान् निर्जरा।
४४१७,४४१८. मुनि सुव्रतस्वामी के शिष्य स्कन्दक का वृत्तान्त।
४४१९,४४२०. श्वापदों द्वारा खाए जाने पर तथा अग्नि से जलाए जाने पर भी पादपोपगत का अविचलन।
४४२१,४४२२. चिलातिपुत्र की सहनशीलता के समान प्रायोपगमन अनशनकर्त्ता की सहनशीलता।
४४२३-२९. प्रायोपगमन अनशनी के निष्प्रतिकर्म का कालायवेसी, अवंतीसुकुमाल आदि अनेक दृष्टान्तों से समर्थन।
४४३०,४४३१. आचार्य भद्रबाहु द्वारा निर्यूढ पांच व्यवहारात्मक श्रुत।
४४३२,४४३३. श्रुतव्यवहारी कौन?
४४३४,४४३५. कल्प और व्यवहार की निर्युक्ति का ज्ञाता ही श्रुतव्यवहारी।
४४३६. कल्प और व्यवहार का निर्यूहण क्यों?, श्रुत व्यवहारी का स्वरूप।
४४३७-३९. आज्ञाव्यवहारी का स्वरूप और विवरण।
४४४०-४४५८. दूरस्थ आचार्य के पास आलोचना करने की विधि में आज्ञाव्यवहार का निर्देश तथा शिष्य की परीक्षा-विधि।
४४५९,४४६०. आलोचना के अठारह स्थान।
४४६१-६७. दर्पप्रतिसेवना और कल्पप्रतिसेवना के विविध विकल्प।
४४६८-४५०२. दर्प प्रतिसेवना और कल्पप्रतिसेवना के ३४ प्रकार की आलोचना का क्रम।
४५०३-४५०६. धारणा के एकार्थक तथा उनके व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ।
४५०७-११. धारणा व्यवहार किसके प्रति?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५१२-२०. धारणा व्यवहार प्रयोक्ता की विशेषताएं।
४५२१,४५२२. जीत व्यवहार का स्वरूप।
४५२३. जीतव्यवहार कब से? शिष्य का प्रश्न।
४५२४,४५२५. प्रथम संहनन, चतुर्दश पूर्वधरों की व्यवच्छित्ति के साथ व्यवहार चतुष्क का लोप मानने वालों का निराकरण और प्रायश्चित्त।
४५२६,४५२७. जंबूस्वामी के निर्वाण के बाद १२ अवस्थाओं का व्यवच्छेद।
४५२८. चतुर्दशपूर्वी की व्यवच्छित्ति होने पर तीन वस्तुओं का व्यवच्छेद–प्रथम संहनन, प्रथम संस्थान, अन्तर्मूहूर्त्त में चौदह पूर्वों का परावर्तन।
४५२९,४५३०. व्यवहार चतुष्क के धारकों का विवरण।
४५३१. चौदहपूर्वी के व्यवच्छेद होने पर व्यवहार चतुष्क का व्यवच्छेद मानना मिथ्या।
४५३२. तित्थोगाली में सूत्रों के व्यवच्छेद का विवरण।
४५३३-४९. जीत व्यवहार के विविध प्रयोग।
४५५०-५३. पांच प्रकार के व्यवहारों का गुणोत्कीर्तन।
४५५४-६६. चार प्रकार के पुरुष–अर्थकर, मानकर, उभयकर, नोउभयकर का विवरण तथा शक राजा का दृष्टान्त।
४५६७-७० चार प्रकार के पुरुष–गणार्थकर आदि तथा राजा का दृष्टान्त।
४५७१,४५७२. चार प्रकार के पुरुष–गणसंग्रहकर आदि।
४५७३,४५७४. चार प्रकार के पुरुष–गणशोभकर आदि।
४५७५,४५७६. चार प्रकार के पुरुष–गणशोधिकर आदि।
४५७७-८०. लिंग और धर्म के आधार पर चार प्रकार के पुरुष।
४५८१-८४. गणसंस्थिति और धर्म के आधार पर चार प्रकार के पुरुष।
४५८५-८८. प्रियधर्म और दृढ़धर्म के आधार पर पुरुषों के चार प्रकार।
४५८९-९४. चार प्रकार के आचार्य।
४५९५,४५९६. चार प्रकार के अंतेवासी।
४५९७,४६०१. तीन प्रकार की स्थविरभूमियां।
४६०२-४६०६. तीन शैक्षभूमियां।
४६०७. परिणामक के दो प्रकार– आज्ञा परिणामक, दृष्टान्त परिणामक।
४६०८. आज्ञा परिणामक का विवरण।
४६०९. दृष्टान्त परिणामक का स्वरूप।
४६१०-१२. दृष्टान्त परिणामक में विविध दृष्टान्तों द्वारा श्रद्धा का उत्पादन।
४६१३-२४. इन्द्रियावरण और विज्ञानावरण विषयक वर्णन।
४६२५-२८. षड्जीवनिकाय में जीवत्व सिद्धि।
४६२९-३५. जड्ड के प्रकार और विवरण।
४६३६. जलमूक आदि व्यक्ति दीक्षा के अयोग्य।
४६३७-४४. प्रव्रजित करने के विषय में व्यक्ति विशेष का विवरण।
४६४५. प्रव्रज्या की अल्पतम वय का निर्देश।
४६४६-५१. आठ वर्ष से कम बालक में चारित्र की स्थिति नहीं, कारणों का निर्देश।
४६५२-५४. आचारप्रकल्प–निशीथ के उद्देशन का कालमान।
४६५५-५९. सूत्रकृतांग, स्थानांग आदि आगमों के अध्ययन का दीक्षा पर्यायकाल।
४६६०. द्वादशवर्ष पर्याय वाले मुनि को अरुणोपपात, वरुणोपपात आदि पांच देवताधिष्ठित सूत्रों का अध्ययन विहित।
४६६१,४६६२. अरुणोपपात आदि के परावर्तन से देवता की उपस्थिति।
४६६३-६५. तेरह वर्ष की संयम पर्याय वाले मुनि के लिए उत्थान श्रुत आदि चार ग्रंथों का अध्ययन विहित तथा इन ग्रंथों के अतिशयों का कथन।
४६६६. चौदह वर्ष के संयम पर्याय वाले मुनि के लिए स्वप्नभावना ग्रंथ का अध्ययन विहित।
४६६७. पन्द्रह वर्ष के संयमपर्याय वाले मुनि के लिए चारणभावना ग्रंथ का अध्ययन विहित और उससे चारणलब्धि की उत्पत्ति का कथन।
४६६८-७०. तेजोनिसर्ग आदि ग्रंथ के अध्ययन का संयम पर्याय काल और उन ग्रंथों का अतिशय।
४६७१. प्रकीर्णकों तथा प्रत्येक बुद्धों की संख्या का कथन।
४६७२,४६७३. प्रकीर्णक को पढ़ाने से विपुल निर्जरा।
४६७४. आचारांग आदि अंगों के अध्ययन की विधि।
४६७५-८१. दस प्रकार का वैयावृत्त्य और उनकी क्रियान्विति के तेरह पद।
४६८२,४६८३. साधर्मिक के प्रति वैयावृत्त्य का विशेष निर्देश।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४६८४-८८. तीर्थंकर के वैयावृत्त्य का कथन क्यों नहीं? शिष्य का प्रश्न और आचार्य का उत्तर।

४६८६. दस प्रकार के वैयावृत्त्य से एकान्त निर्जरा।

४६६०. ज्ञाननय और चरणनय का कथन।

४६६१. नय की परिभाषा।

४६६२. ज्ञाननय और क्रियानय में शुद्धनय कौन?

४६६३. कल्प और व्यवहार के मूल भाष्य के अतिरिक्त सारा विस्तार पूर्वाचार्य कृत।

४६६४. भाष्य के अध्ययन की निष्पत्ति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्यवहार भाष्य

१. ववहारो ववहारी, ववहरियव्वा य 'जे जहा पुरिसा'[१] ।
एतेसिं तु पयाणं, पत्तेय परूवणं वोच्छं[२] ॥

२. ववहारी खलु कत्ता, ववहारो होति करणभूतो उ ।
ववहरियव्वं कज्जं, कुंभादितियस्स जह सिद्धी ॥नि. १ ॥

३. नाणं नाणी णेयं, अन्ना वा[३] मग्गणा भवे तितए ।
विविहं[४] वा विहिणा वा, ववणं हरणं[५] च ववहारो ॥

४. ववणं ति रोवणं ति य, पकिरण परिसाडणा[६] य एगट्ठं ।
हारो त्ति य हरणं ति य, एगट्ठं[७] हीरते व त्ति ॥

५. अत्थी पच्चत्थीणं, हाउं एगस्स[८] ववति बितियस्स ।
एतेण उ ववहारो, अधिगारो[९] एत्थ उ विहीए ॥

६. ववहारम्मि चउक्कं[१०], दव्वे पत्तादि 'लोइयादी वा'[११] ।
नोआगमतो भणगं, भावे एगट्ठिया तस्स ॥दारं ॥नि. २ ॥

७. सुत्ते अत्थे जीते, कप्पे मग्गे तधेव नाए य ।
तत्तो य इच्छियव्वे, आयरियव्वे य[१२] ववहारो ॥नि. ३ ॥

८. एगट्ठिया अभिहिया, न य ववहारपणगं[१३] इहं[१४] दिट्ठं ।
'भणणति एत्थेव तयं'[१५], दट्ठव्वं अंतगयमेव ॥

९. आगमसुताउ सुत्तेण, सूइया अत्थतो उ ति-चउत्था ।
बहुजणमाइण्णं पुण, जीतं उचियं ति एगट्ठं ॥

१०. दद्दुरमादिसु[१६] कल्लाणगं, तु विगलिंदिएसऽभत्तट्ठो[१७] ।
परियावण एतेसिं, चउत्थमायंबिला होंति ॥

११. अपरिण्णा[१८] कालादिसु, अपडिक्कंतस्स निव्विगतियं तु ।
निव्विगतिय[१९] पुरिमड्ढो, अंबिल खमणा[२०] य आवासे ॥

---

१. पाठांतरं जे जहा काले (मवृ)।
२. भाष्यकृदेतदाह (मवृ)।
३. वि य (अ, स)।
४. विविहो (अ)।
५. धरणं (अ, स)।
६. ०सायणा (स)।
७. एक्कट्ठं (अ, स)।
८. एकस्सत्ति सूत्रे षष्ठी पंचम्यर्थे प्राकृतत्वात् (मवृ)।
९. अहि० (ब)।
१०. चउक्के (ब, स)।
११. ०यादिया (अ), ०यादीया (स)।
१२. व (ब)।
१३. ववहारे० (अ)।
१४. इदं (ब)।
१५. आभणणति एत्थेव (स)।
१६. मकारोऽलाक्षणिकः प्राकृतत्वात् (मवृ)।
१७. ०दिए अभत्तट्ठो (स)।
१८. सूत्रे विभक्तिलोप आर्षत्वात् (मवृ)।
१९. निव्वित्तिय (अ), निव्वीतिय (ब)।
२०. खवणा (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२. जं जस्स व पच्छित्तं, आयरियपरंपराएँ अविरुद्धं ।
जोगा य[1] बहुविकप्पा, एसो खलु जीयकप्पो उ ॥दारं ॥

१३. दव्वम्मि लोइया खलु, लंचिल्ला भावतो उ मज्झत्था ।
उत्तरदव्व[2] अगीता, गीता वा लंचपक्खेहिं[3] ॥ नि.४ ॥

१४. पियधम्मा दढधम्मा[4], संविग्गा चेवऽवज्जभीरू य ।
सुत्तत्थ-तदुभयविऊ, अणिस्सियववहारकारी य ॥ नि.५ ॥

१५. पियधम्मे[5] दढधम्मे, य पच्चओ होइ गीतसंविग्गे ।
रागो उ[6] होति निस्सा, 'उवस्सितो दोससंजुत्तो'[7] ॥

१६. अहवा आहारादी, दाहिइ मज्झं तु एस निस्सा उ ।
सीसो पडिच्छिओ[8] वा, होति उवस्सा कुलादी वा ॥दारं ॥

१७. लोए चोरादीया, दव्वे भावे विसोहिकामा उ ।
जाय-मयसूतगादिसु, निज्जूढा 'पातगहता य'[9] ॥ नि.६ ॥

१८. फासेऊण अगम्मं, भणाति[10] सुमिणे गतो अगम्मं ति ।
एमादि लोगदव्वे, उज्जू[11] पुण होति भावम्मि ॥ नि.७ ॥

१९. परपच्चएण[12] सोही, दव्वुत्तरिओ[13] उ[14] होति एमादी[15] ।
गीतो व[16] अगीतो वा, सब्भावउवट्ठितो भावे ॥नि. ८ ॥

२०. अवंकि[17] अकुडिले[18] यावि, कारणपडिसेवि तह य आहच्च ।
पियधम्मे य बहुसुते[19], बिद्धियं उवदेस पच्छित्तं ॥नि. ९ ॥

२१. आहच्च कारणम्मि य[20], सेवंतो अजयणं सिया कुज्जा ।
एसो वि[21] होति भावे, किं पुण जतणाएँ सेवंतो[22] ॥

२२. 'पडिसेवितम्मि सोधिं'[23], काहं आलंबणं कुणति जो उ ।
सेवंतो वि अकिच्चं, ववहरियव्वो स खलु भावे[24] ॥

---

१. व (ब , अ) ।
२. °दव्वे (अ), °दव्वेग (ब), द्रव्यशब्दोऽत्राप्रधानवाची (मवृ) ।
३. लंचपासेहि (अ, स) ।
४. दिढ° (ब) ।
५. °धम्मो (ब) ।
६. य (ब) ।
७. °स्सिए देस° (अ) ।
८. °छत्तो (अ) ।
९. पायगहणंतो (ब), पायकहता उ (स) ।
१०. भणेति (ब) ।
११. सामान्यविवक्षायामेकवचनं (मवृ) ।
१२. परमच्च° (ब) ।
१३. ०त्तरिते (ब), °त्तरितो (अ) ।
१४. वा (ब) ।
१५. पढमादी (अ) ।
१६. उ (ब) ।
१७. छंद की दृष्टि से यहां अवंकि पाठ स्वीकृत किया है ।
१८. अकुविले (अ) ।
१९. बहुस्सुते (स) ।
२०. x (ब) ।
२१. व (ब) ।
२२. सेविंतो (अ), सेवित्ता (स) ।
२३. °सेविय विसोही (ब) ।
२४. भावो (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३. अधवा कज्जाकज्जे, जताऽजतो वावि सेवितुं[१] साधू ।
सब्भावसमाउट्टो, ववहरियव्वो हवइ भावे ॥

२४. निक्कारण[२] पडिसेवी, कज्जे निद्धंधसो[३] य[४] अणवेक्खो ।
देसं वा सव्वं वा, गूहिस्सं दव्वतो एसो ॥

२५. सो वि हु ववहरियव्वो, अणवत्था वारणं तदन्ने यं ।
घडगारतुल्लसीलो[५], अणुवरतोसन्न[६] मज्झत्ति[७] ॥

२६. पियधम्मो जाव सुयं, ववहारण्णा उ जे समक्खाता ।
सव्वे वि जहुद्दिट्ठा, ववहरियव्वा य ते होंति ॥

२७. अग्गीतेणं[८] सद्धिं, ववहरियव्वं न चेव पुरिसेणं ।
जम्हा सो ववहारे, कयम्मि सम्मं न सद्दहति ॥

२८. दुविहम्मि वि ववहारे, गीतत्थो पट्ठविज्जती[९] जं तु ।
तं सम्मं पडिवज्जति[१०], गीतत्थम्मी गुणा चेव ॥

२९. सच्चित्तादुप्पण्णे, गीतत्था सति दुवेण्ह गीताणं ।
एगतरे उ निउत्ते[११], सम्मं ववहारसद्दहणा ॥

३०. गीतो यऽणाइयंतो[१२], छिंद तुमं चेव छंदितो[१३] संतो[१४] ।
कहमंतरं ठावेति, तित्थगराणंतरं[१५] संघं ॥

३१. पियधम्मे दढधम्मे, संविग्गे चेव जे उ पडिवक्खा[१६] ।
ते वि हु ववहरियव्वा, किं पुण जे तेसि पडिवक्खा ॥

३२. बितियमुवएस[१७] अवंकादियाण[१८] जे होंति तु[१९] पडिवक्खा ।
ते वि हु ववहरियव्वा, पायच्छित्ताऽऽभवंते य ॥

३३. उवदेसो उ अंगीते, दिज्जति बितिओ उ सोधि[२०] ववहारो ।
गहिते वि[२१] अणाभव्वे, दिज्जति बितियं तु पच्छित्तं ॥ दारं ॥

---

१. सेवितं (अ)।
२. विभक्तिलोपः प्राकृतत्वात् (मवृ)।
३. निद्धंधसो देशीवचनमेतद् अकृत्यं प्रतिसेवमानो (मवृ)।
४. व्व (अ, स)।
५. ०सील (अ, स)।
६. अणवर उस्सन्न (ब), अणवर तुस्सण्ण (स)।
७. मज्झम्मि (अ), मज्झं तु (स)।
८. ०तेणिं (अ), छंद की दृष्टि से ग द्वित्व हुआ है।
९. पाठांतरं पण्णविज्जइ (मवृ)।
१०. ०वज्जसि (अ)
११. निवत्ते (ब)।
१२. णाइतंतो (अ)।
१३. छिंदितो (अ, स)।
१४. सत्तो (ब)।
१५. ०गरेणंतरं (अ, ब)।
१६. ०वक्खो (अ)।
१७. मकारोऽलाक्षणिकः द्वितीयं मतान्तरमित्यर्थः (मवृ)।
१८. मवंका० (ब)।
१९. तू (अ)।
२०. सो व हु (अ), सो वि (ब)।
२१. व (अ), य (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३४. पायच्छित्तनिरुत्तं, भेदा जत्तो[1] परूवणपुहुत्तं[2] ।
अज्झयणाण विसेसो, 'तदरिहपरिसा य'[3] सुत्तत्थो ॥दारं ॥नि.१० ॥

३५. पावं छिंदति जम्हा, पायच्छित्तं तु भण्णते तेण ।
पाएण वा वि चित्तं[4], विसोहए[5] तेण पच्छित्तं ॥नि.११ ॥

३६. पडिसेवणा य संजोयणा य आरोवणा य बोधव्वा ।
पलिउंचणा चउत्थी, पायच्छित्तं चउद्धा उ ॥दारं ॥नि.१२ ॥

३७. पडिसेवओ[6] य[7] पडिसेवणा य पडिसेवितव्वगं चेव ।
एतेसिं 'तु पयाणं'[8], पत्तेय परूवणं वोच्छं ॥दारं ॥नि.१३ ॥

३८. पडिसेवओ सेवंतो, पडिसेवण[9] मूलउत्तरगुणे य ।
पडिसेवियव्वदव्वं, रूविव्व सिया अरूविव्व ॥नि.१४ ॥

३९. पडिसेवणा तु भावो, सो पुण कुसलो व[10] होज्जऽकुसलो[11] वा ।
कुसलेण होति कप्पो, अकुसलपरिणामतो[12] दप्पो ॥नि.१५ ॥

४०. नाणी न विणा नाणं[13], णेयं पुण तेसऽणन्नमन्नं च[14] ।
इय दोण्हमणाणत्तं[15], भइयं पुण सेवितव्वेण ॥

४१. मूलगुण-उत्तरगुणे, दुविहा पडिसेवणा समासेणं ।
मूलगुणे पंचविहा, पिंडविसोहादिया इयरा ॥

४२. सा पुण अइक्कम[16] वइक्कमे[17] य अतियार तह अणायारे ।
संरंभ[18] समारंभे, आरंभे रागदोसादी ॥

४३. आधाकम्मनिमंतण[19], पडिसुणमाणे[20] अतिक्कमो होति ।
पदभेदादि वतिक्कम[21], गहिते ततिएतरो गिलिए ॥दारं ॥

४४. तिन्नि य[22] गुरुकामा सा, विसेसिया तिण्ह व अह[23] गुरुअंते ।
एते चेव उ[24] लहुया, विसोधिकोडीय[25] पच्छित्ता ॥

---

१. जत्ते (ब), जुत्तो (अ)।
२. परूवणाबहुलं (मु)।
३. ०परिसाइ (स)।
४. अत्र चित्तशब्देन जीवोऽभिधीयते (मवृ)।
५. सोहए य (अ, स)।
६. ०सेवितो (ब), ०सेवतो (अ)।
७. तु (निभा ७३)।
८. तिण्हं पि (निभा)।
९. ० सेवणं (अ)।
१०. व्व (अ, स)।
११. ०अकुसलो (निभा ७४), होइ अकुसलो (स)।
१२. ० पडिसेवणा (अ, निभा)।
१३. णाणा यं (ब), नाणा उ (अ)।
१४. वा (ब, निभा)।
१५. दोन्नम ० (अ), दोण्ह व अणा ० (निभा ७५)।
१६. अविकम्म (ब)।
१७. वइकम्मे (ब)।
१८. सारंभ (अ, स)।
१९. ० कम्मामंतण (अ, ब, स)।
२०. ० माणं (ब)।
२१. वइक्कमो (अ)।
२२. वि (स), उ (ब)।
२३. उ (ब, स)।
२४. य (ब)।
२५. ०कोडीए (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५. पाणिवह[१]-मुसावाए, अदत्त-मेहुण-परिग्गहे चेव ।
मूलगुणे पंचविहे, परूवणा तस्सिमा होति ॥

४६. संकप्पो संरंभो[२], परितावकरो भवे समारंभो ।
आरंभो उद्दवतो, सव्वनयाणं पि सुद्धाणं[३] ॥

४७. सव्वे वि होंति सुद्धा[४], नत्थि असुद्धो नयो उ सट्ठाणे ।
पुव्वा व पच्छिमाणं[५], सुद्धा ण उ पच्छिमा तेसिं ॥

४८. वेणइए मिच्छत्तं, ववहारनया उ जं विसोहिंति ।
तम्हा तेच्चिय सुद्धा, भइयव्वं होति इयरेहिं[६] ॥

४९. ववहारनयस्साया, कम्मं काउं फलं समणुहोति ।
इति वेणइए कहणं[७], विसेसणे माहु[८] मिच्छत्तं ॥

५०. संकप्पादी ततियं[९], अविसुद्धाणं तु होति उ[१०] नयाणं ।
इयरे बाहिरवत्थुं, नेच्छंताया जतो हिंसा ॥

५१. चोएइ 'किं उत्तरगुणा, पुव्वं'[११] बहुय-थोव-लहुयं च[१२] ।
अतिसंकिलिट्ठभावो, मूलगुणे सेवते पच्छा ॥

५२. पडिसेवियम्मि दिज्जति[१३], 'पच्छित्तं इहरहा उ पडिसेहे'[१४] ।
'तेण पडिसेवणच्चिय'[१५] पच्छित्तं 'वा इमं'[१६] दसहा ॥दारं ॥

५३. आलोयण पडिकमणे, मीस विवेगे तहा विउस्सग्गे ।
तव-छेय-मूल-अणवट्ठया[१७] य पारंचिए चेव[१८] ॥दारं ॥नि.१६ ॥

५४. आलोयण त्ति का पुण, कस्स सगासे व होति कायव्वा ।
केसु व कज्जेसु भवे, गमणागमणादिएसुं[१९] तु ॥

५५. बितिए नत्थि वियडणा, 'वा उ'[२०] विवेगे तधा विउस्सग्गे ।
आलोयणा उ नियमा, गीतमगीते[२१] य केसिंचि ॥

---

१. पाण० (स) ।
२. सारंभो (अ,ब) ।
३. सुद्धाणमित्यत्र प्राकृतत्वात् पूर्वस्याकारस्य लोपो द्रष्टव्यः सर्वनयानामप्यशुद्धानाम् (मवृ) ।
४. सुद्धो (अ, ब) ।
५. ० पाण उ (अ, स) ।
६. व्यवहारभाष्य की हस्तप्रतियों एवं मुद्रित टीका वाली भाष्य गाथाओं में क्रमव्यत्यय है । हस्तलिखित प्रतियों में ५१ वीं गाथा ४८ वीं के बाद है फिर ४९ एवं ५० वीं गाथा है । विषय की क्रमबद्धता की दृष्टि से हमने मुद्रित पुस्तक वाली गाथाओं का क्रम स्वीकृत किया है ।
७. कवणं (अ) ।
८. मकारोऽलाक्षणिकः (मवृ) ।
९. तितियं (अ) ।
१०. न उ (ब) ।
११. उत्तरगुणा किं (ब) ।
१२. x (अ, स) ।
१३. देज्जति (ब) ।
१४-१५. x (अ) ।
१६. च्चिमं (ब), तं चिमं (स) ।
१७. अणवट्ठतो (स), अणवट्ठिया (ब) ।
१८. निर्युक्तिः संक्षेपार्थः विस्तरार्थं तु प्रतिद्वारं भाष्यकृदेव वक्ष्यति (मवृ) ।
१९. ठाणागम० (स) ।
२०. तवे (अ), वो उ (स) ।
२१. गीतमिति प्राकृतत्वात् षष्ठ्यर्थे प्रथमा (मवृ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५६. करणिज्जेसु उ[1] जोगेसु, छउमत्थस्स भिक्खुणो ।
आलोयणा व पच्छित्तं, गुरुणं अंतिए सिया ॥नि०१७॥

५७. भिक्ख-वियार-विहारे, अन्नेसु य एवमादिकज्जेसु ।
अविगडियम्मि[2] अविणओ, होज्ज असुद्धे व परिभोगो ॥

५८. अन्नं च छाउमत्थो, तधन्नहा वा हवेज्ज उवजोगो ।
आलोएंतो ऊहइ, सोउं च वियाणते सोता ॥

५९. आसंकमवहितम्मि[3] य, होति सिया अवहिए तहिं पगतं ।
गणतत्तिविप्पमुक्के, विक्खेवे[4] वावि आसंका ॥दारं॥

६०. गुत्तीसु य समितीसु य, पडिरूवजोगें तहा पसत्थे य ।
वतिक्कमें[5] अणाभोगे, पायच्छित्तं पडिक्कमणं[6] ॥दारं॥नि.१८॥

६१. केवलमेव अगुत्तो, सहसाणाभोगतो व 'ण य हिंसा'[7] ।
तहियं तु पडिक्कमणं, आउट्टि तवो न वाऽदाणं ॥

६२. पडिरूवग्गहणेणं, विणओ खलु सूइतो[8] चउविगप्पो ।
नाणे दंसण-चरणे, पडिरूव 'चउत्थओ होति'[9] ॥

६३. काले विणए बहुमाणे, उवहाणे तहा अनिण्हवणे ।
वंजण-अत्थ-तदुभए, अट्ठविधो 'नाणविणओ उ'[10] ॥

६४. निस्संकिय निक्कंखिय, निव्वितिगिच्छा अमूढदिट्ठी य ।
उववूह-थिरीकरणे, वच्छल्लपभावणे अट्ठ[11] ॥

६५. पणिधाणजोगजुत्तो, पंचहि समितीहिं तिहिं य[12] गुत्तीहिं ।
एस 'उ चरित्तविणओ'[13], अट्ठविहो होति नायव्वो ॥

६६. पडिरूवो खलु विणओ, काय-वइ[14]-मणे तहेव उवयारे ।
अट्ठ चउव्विह दुविहो, सत्तविह परूवणा[15] तस्स[16] ॥

६७. अब्भुट्ठाणं[17] अंजलि-आसणदाणं अभिग्गह-किती य ।
सुस्सूसणा य अभिगच्छणा[18] य संसाहणा चेव[19] ॥

---

१. अनुष्टुप् छंद की दृष्टि से उ पाठ अतिरिक्त है ।
२. ०गहियम्मि (स) ।
३. आशंकमिति प्राकृतत्वादाशंकायाम् (मवृ) ।
४. वक्खेवे (अ, स) ।
५. ०कमे य (ब) ।
६. व्यासार्थं तु भाष्यकृद् व्याचिख्यासुः प्रथमतो गुत्तीसु य समिइसु य व्याख्यानयति (मवृ) ।
७. अप्पहिंसा (मवृ, मु) ।
८. सूतिओ (ब) ।
९. चउत्थो वा होइ (अ) ।
१०. णाणपयारो (निभा ८, दशनि १५८) ।
११. निभा २३, दशनि १५७, उत्त. २८ ।३१ ।
१२. उ (अ, स) ।
१३. चरित्तायारो (निभा ३५, दशनि १५९) ।
१४. व्वइ (स) ।
१५. पवत्तणा (स) ।
१६. दशनि (२९७) में यह गाथा कुछ अंतर के साथ इस प्रकार है—
पडिरूवो खलु विणओ, काइयजोगे य वाय-माणसिओ ।
अट्ठ चउव्विह दुविहो, परूवणा तस्सिमा होति ॥
१७. ०ट्ठाण (अ, स) ।
१८. सूत्रे स्त्रीत्वं प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
१९. दशनि (२९८) में इसका उत्तरार्ध इस प्रकार है—
सुस्सूसण- अणुगच्छण संसाधण काय अट्ठविहो ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६८. हित-मित-अफरुसभासी[१], अणुवीइभासि स वाइओ विणओ ।
एतेसिं तु विभागं, वोच्छामि अहाणुपुव्वीए[२] ॥

६९. वाहिविरुद्धं भुंजति, देहविरुद्धं च आउरो कुणति ।
आयासऽकाल[३] चरियादिवारणं एहियहियं[४] तु ॥

७०. सामायारी सीदंत चोयणा[५] उज्जमंत संसा[६] य ।
दारुणसभावयं[७] चियर[८], वारेति[९] परत्थहितवादी ॥

७१. अत्थि पुण काइ चिट्ठा, इह-परलोगे य अहियया[१०] होति ।
थद्ध-फरुसत्त-नियडी, अतिलुद्धत्तं व इच्चादी ॥दारं ॥

७२. तं पुण अणुच्चसद्दं, 'वोच्छिण्ण मितं'[११] 'च भासते'[१२] मउयं ।
मम्मेसु अदूमंतो[१३], सिया व परियागवयणेणं ॥

७३. तं पि य अफरुस-मउयं, हिययग्गाहिं सुपेसलं भणइ ।
नेहमिव उग्गिरंतो, नयण-मुहेहिं च[१४] विकसंतो[१५] ॥दारं ॥

७४. 'तं पुण'[१६]ऽविरहे भासति[१७],न चेव तत्तोऽपभासियं[१८] कुणति[१९] ।
जोएति[२०] तहा कालं, जह वुत्तं होइ सफलं तु ॥

७५. अमितं अदेसकाले, भावियमवि[२१] भासियं निरुवयारं ।
आयत्तो वि न गेण्हति, किमंग पुण जो पमाणत्थो ॥

७६. पुव्वं बुद्धीएँ पासित्ता, ततो[२२] वक्कमुदाहरे ।
अचक्खुओ व्व[२३] नेतारं, 'बुद्धिं अन्नेसए'[२४] गिरा[२५] ॥दारं ॥

७७. माणसिओ पुण विणओ, दुविहो उ समासतो मुणेयव्वो ।
अकुसलमणो निरोहो, कुसलमणउदीरणं चेव ॥दारं ॥

७८. अब्भासवत्ति छंदाणुवत्तिया[२६] कज्जपडिकिती[२७] चेव ।
अत्तगवेसण कालण्णुया[२८] य सव्वाणुलोमं च[२९] ॥**नि.१९** ॥

---

१. अपरुस० (स) ।
२. दशनि (२९९) में इसका उत्तरार्ध इस प्रकार है—
अकुसल मणोनिरोहो, कुसलमणउदीरणा चेव ।
३. ०अकाल (ब, स) ।
४. एहितधियं (अ) ।
५. चोवणं (ब) ।
६. शंसा प्रशंसा उपबृंहणमुद्यच्छंसा (मवृ) ।
७. ० सभावतम्मि य (अ), ०भावतं (स) ।
८. पि य (ब), तिय (स) ।
९. वारिति (ब) ।
१०. अहितिया (ब, स) ।
११. वोच्छिण्णं तं (अ), ०ण्णम्मि तं (स) ।
१२. पभासए (अ), वि भासते (स) ।
१३. अडूमेंतो (स), अदूमेयंतो (ब) ।
१४. व (अ) ।
१५. संकंतो (ब) ।
१६. तम्मि या (अ, ब), तं पि य (स) ।
१७. भासणे (ब) ।
१८. तत्तोऽवहासियं (ब), ०अवहासितं (स) ।
१९. कुणेति (ब) ।
२०. जोएइत्ति देशीवचनमेतद् निरूपयति (मवृ) ।
२१. भासियमवि (अ) ।
२२. तत्तो (अ) ।
२३. व (अ) ।
२४. बुद्धी अन्ने उ ते (अ, स) ।
२५. दशनि २६८ ।
२६. परच्छंदवत्तिया (अ, स) ।
२७. कज्जे प ० (ब) ।
२८. कालण्णया (ब) ।
२९. व्यासार्थं तु भाष्यकृद् बिभणिषुः प्रथमतोऽभ्यासवर्तित्वं व्याख्यानयन्नाह (मवृ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७९. गुरुणो य लाभकंखी[१], अब्भासे वट्टते सया साधू ।
आगार-इंगिएहिं, संदिट्ठो वत्ति काऊणं ॥दारं ॥

८०. कालसभावाणुमता, आहारुवही[२] उवस्सया चेव ।
नाउं ववहरति[३] तहा, छंदं अणुवत्तमाणो उ ॥दारं ॥

८१. इह-परलोगासंसविमुक्कं[४], कामं वयंति विणयं तु ।
मोक्खाहिगारिएसुं, अविरुद्धो सो दुपक्खे वि ॥दारं ॥

८२. एमेव य अनिदाणं, वेयावच्चं तु[५] होति कायव्वं ।
कयपडिकिती 'वि जुज्जति'[६], न कुणति सव्वत्थ तं जइ वि ॥दारं ॥

८३. दव्वावदिमादीसुं[७], अत्तमणत्ते व गवेसणं[८] कुणति ।
आहारादिपयाणं, छंदम्मि[९] उ छट्ठओ विणओ ॥दारं ॥

८४. सामायारिपरूवण[१०], निद्देसे चेव बहुविहे[११] गुरुणो[१२] ।
'एमेव त्ति तध त्ति य'[१३], सव्वत्थऽणुलोमया एसा[१४] ॥

८५. लोगोवयारविणओ, इति एसो वण्णितो सपक्खम्मि ।
आसज्ज कारणं पुण, कीरति जतणा विपक्खे वि ॥

८६. चउधा वा पडिरूवो, तत्थेगणुलोमवयणसहितत्तं ।
पडिरूवकायकिरिया[१५], फासणसव्वाणुलोमं[१६] च ॥नि.२० ॥

८७. अमुगं कीरउ आमं ति, भणति अणुलोमवयणसहितो उ ।
वयणपसादादीहि य, अभिणंदति तं वइं[१७] गुरूणो ॥

८८. चोदयंते[१८] परं थेरा, इच्छाणिच्छे[१९] य तं वइं[२०] ।
जुत्ता[२१] विणयजुत्तस्स, गुरुवक्काणुलोमता[२२] ॥

८९. गुरवो[२३] जं पभासंति[२४], तत्थ खिप्पं[२५] समुज्जमे ।
न ऊ सच्छंदया सेया, लोए किमुत उत्तरे ॥

---

१. लाह ० (ब) ।
२. आहार उवही (ब)
३. उव० (अ, स) ।
४. ° संभविमु० (अ) ।
५. x (ब) ।
६. स वि बुज्झति (ब) ।
७. दव्वावितिमा ० (अ) ।
८. गविसणं (स) ।
९. छंदम्मि इति तृतीयार्थे सप्तमी (मवृ) ।
१०. ०परूविणं (ब) ।
११. बहु विविहे (ब) ।
१२. गुरुणो इत्यत्र कर्त्तरि षष्ठी (मवृ) ।
१३. आसेतत्ति तहत्ति य (स) ।
१४. ८५, ८६ की गाथा अ प्रति में नहीं है ।
१५. अणुलोमका० (स) ।
१६. सूत्रे सर्वानुलोममिति भावप्रधानो निर्देशः (मवृ) ।
१७. वयं (ब) ।
१८. चोयंति (अ) ।
१९. ० णिच्छिय (ब) ।
२०. व सिं (अ) ।
२१. जुत्तं (ब) ।
२२. गुरुवक्खाणु ० (अ) ।
२३. गुरुवो (ब) ।
२४. पसाहंति (ब) ।
२५. खिप्प (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९०. जधुत्तं[1] गुरुनिद्देसं, जो वि आदिसती मुणी ।
तस्सा वि विहिणा जुत्ता[2], गुरुवक्काणुलोमता ॥दारं ॥

९१. अद्धाणवायणाए, णिण्णासणयाएँ[3] परिकिलंतस्स ।
सीसादी जा पाया, किरिया पादादऽविणओ तु ॥

९२. जत्तो व[4] भणाति गुरू, करेति कितिकम्म मो[5] ततो पुव्वं ।
संफासणविणओ[6] पुण, परिमउयं वा जहा सहति ॥दारं ॥

९३. वातादी सट्ठाणं[7], वयंति बद्धासणस्स जे खुभिया ।
खेदजओ[8] तणुथिरया[9], बलं च अरिसादओ[10] नेवं ॥दारं ॥

९४. सेतवपू[11] मे कागो[12], दिट्ठो चउदंतपंडरो[13] वेभो ।
आमं ति[14] पडिभणंते, सव्वत्थऽणुलोमपडिलोमे[15] ॥

९५. मिणु[16] गोणसंगुलेहिं, गणेह[17] से[18] दाढवक्कलाइं[19] से ।
अग्गंगुलीय वग्घं, तुद डेव गडं भणति आमं ॥

९६. तत्थ उ पसत्थगहणं, परिपिट्टण[20] छिज्जमादि वारेति ।
'ओसन्नगिहत्थाण य'[21], उट्ठाणादी य पुव्वुत्ता ॥दारं ॥

९७. जो जत्थ उ करणिज्जो, उट्ठाणादी उ अकरणे तस्स ।
होति पडिक्कमियव्वं, एमेव य वाय-माणसिए ॥

९८. अवराहअतिक्कमणे, वइक्कमे चेव तह[22] अणाभोगे[23] ।
भयमाणे उ अकिच्चं, पायच्छित्तं पडिक्कमणं ॥दारं ॥

९९. संकिए सहसक्कारे[24] भयाउरे आवतीसु य ।
महव्वयातियारे य, छण्हं ठाणाण बज्झतो[25] ॥**नि.२१** ॥

---

१. जं जुत्तं (अ) ।
२. वुत्ता (अ, ब, स) ।
३. णिच्चासणतो य (स), निच्चासण० (अ, ब), निन्यासनतया-निरंतरोपवेशनतः (मवृ) ।
४. x (ब) ।
५. तो (ब), मो इति पादपूरणे (मवृ) ।
६. संफरिसण ० (मु, मवृ) ।
७. सत्थाणं (अ) ।
८. ० जत्तो (ब) ।
९. ० थिरयं (अ) ।
१०. आयरिसादतो (ब) ।
११. ० वउ (अ) ।
१२. कातो (ब) ।
१३. ० पंडुरो (मु) ।
१४. च (अ, ब) ।
१५. x (ब) ।
१६. मिण (ब, स) ।
१७. गणेहिं (ब), मिणेहि (अ), मिणाहि (स) ।
१८. वा (ब) ।
१९. ०चक्कलाइं (स) ।
२०. परिपट्टण (ब), परिपेट्टण (अ) ।
२१. ० थाणं (ब) ।
२२. वह (अ) ।
२३. अहाभोगे (ब) ।
२४. सहसागारे (मु) ।
२५. मबज्झतो (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१००. हित्थो[१] व ण हित्थो मे, सत्तो भणियं व न भणियं मोसं ।
उग्गहणुण्णमणुण्णा, ततिए[२] फासे[३] चउत्थम्मि ॥

१०१. इंदियरागद्दोसा, उ पंचमे किं 'गतो मि न गतो त्ति'[४] ।
छट्ठे लेवाडादी, धोतमधोतं न वा मे त्ति[५] ॥

१०२. इंदियअव्वागडिया[६], जे अत्था अणुवधारिया[७] ।
तदुभयपायच्छित्तं, पडिवज्जति भावतो ॥

१०३. सद्दा सुता बहुविहा, तत्थ य केसुइ[८] गतो मि रागं ति[९] ।
अमुगत्थ मे वितक्का[१०], पडिवज्जति तदुभयं तत्थ ॥

१०४. एमेव सेसए[११] वी, विसए आसेविऊण जे पच्छा ।
काऊण एगपक्खे, न तरति तहियं तदुभयं तु ॥दारं ॥

१०५. उवयोगवतो सहसा, भएण वा पेल्लिते[१२] कुलिंगादी ।
अच्चाउरावतीसु य, अणेसियादी-गहण-भोगा ॥दारं ॥

१०६. सहसक्कार[१३] अतिक्कम-वतिक्कमे चेव तह अतीयारे[१४] ।
भवति च सद्दग्गहणा, पच्छित्तं तदुभयं तिसु वि ॥दारं ॥

१०७. अतियारुवओगे[१५] वा, एगतरे तत्थ होति आसंका ।
नवहा जस्स विसोही, तस्सुवरिं छण्ह बज्झं तु ॥दारं ॥

१०८. कडजोगिणा तु गहियं, सेज्जा-संथार[१६]-भत्त-पाणं वा ।
अफासु[१७]-अणेसणिज्जं', नाउ[१८] विवेगो उ पच्छित्तं ॥**नि.२२** ॥

१०९. पउरण्ण-पाणगामे, किं 'साहूण ठंति'[१९] सावए[२०] पुच्छा ।
नत्थि वसहि[२१] त्ति य कता, ठिएसु[२२] अतिसेसिय विवेगो ॥दारं ॥

११०. गमणागमण-वियारे[२३], सुत्ते वा सुमिण-दंसणे राओ ।
नावा नदिसंतारे, पायच्छित्तं विउस्सग्गो ॥**नि.२३** ॥

---

१. हित्थो त्ति देशीपदत्वात् हिंसितः (मवृ)।
२. तरिंति (अ)।
३. कामे (व)।
४. गत्तो त्ति न गतो मि (अ)।
५. मोत्ति (अ, स)।
६. ० अव्वोगडिया (स)।
७. ० धारया (ब)।
८. केसुति (अ, स), केषुचिदपि (मवृ)।
९. तु (ब)।
१०. व तक्का (ब)।
११. सेवए (ब)।
१२. पेल्लतो (अ)।
१३. सहसाकारे (मु)
१४. अइयारे (ब)।
१५. अतियारुवया (ब)।
१६. संथारं (ब)
१७. अप्फास० (ब)।
१८. x (अ)।
१९. साहु न वेति (मु)।
२०. भावए (अ), षष्ठीसप्तम्योरर्थं प्रत्यभेदात् श्रावकस्य (मवृ)।
२१. ० हिए (ब)।
२२. धिएसुं (अ, स)।
२३. विहारे (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१११. भत्ते पाणे सयणासणे य, अरहंत-समणसेज्जासु ।
उच्चारे पासवणे, पणवीसं[1] होंति ऊसासा ॥

११२. वीसमण असतिकाले, पढमालिय-वास संखडीए वा ।
इरियावहियट्ठाए[2], गमणं तु पडिक्कमंतस्स ॥

११३. एमेव[3] सेसगेसु वि, होति निसज्जाय अंतरा[4] गमणं ।
आगमणं जं तत्तो[5], निरंतर गयागयं होति[6] ॥

११४. उद्देस-समुद्देसे, सत्तावीसं तहा अणुण्णाए ।
अट्ठेव य[7] ऊसासा, पट्ठवणा पडिकमणमादी ॥

११५. पुव्वं पट्ठवणा खलु, उद्देसादी य पच्छतो होंति ।
पट्ठवणुद्देसादिसु[8], अणाणुपुव्वी कया किन्नु ॥

११६. अज्झयणाणं तितयं[9], पुव्वुत्तं पट्ठविज्जती[10] जेहिं ।
तेसिं उद्देसादी, पुव्वमतो पच्छ[11] पट्ठवणा ॥

११७. सव्वेसु खलियादिसु[12], झाएज्जा पंचमंगलं ।
दो सिलोगे व चिंतेज्जा, एगग्गो वावि तक्खणं ॥

११८. बितियं पुण खलियादिसु, उस्सासा 'तह य होंति'[13] सोलसया[14] ।
ततियम्मि उ बत्तीसा, चउत्थएँ[15] 'न गच्छते'[16] अन्नं ॥

११९. पाणवध[17]-मुसावादे, अदत्त-मेहुण-परिग्गहे सुमिणे ।
सयमेगं ति अणूणं, 'ऊसासाणं भवेज्जासि'[18] ॥

१२०. महव्वयाइँ झाएज्जा, सिलोगे पंचवीस वा ।
इत्थीविप्परियासे तु, सत्तावीससिलोइओ[19] ॥

१२१. पायसमा ऊसासा, कालपमाणेण[20] होंति नायव्वा[21] ।
एतं कालपमाणं, काउस्सग्गे मुणेयव्वं[22] ॥

---

१. पणु० (अ, स) ।
२. ०यट्ठीए (ब) ।
३. एसेव (ब) ।
४. अंतरे (ब) ।
५. ततो (ब) ।
६. होंति (स) ।
७. उ (स) ।
८. ०द्देसादीण (अ, स) ।
९. तिगयं (अ, स) ।
१०. पट्ठवेज्जती (ब) ।
११. पुव्व (अ) ।
१२. ०याईसु (ब) ।
१३. होंति तह य (अ) ।
१४. सोलस्स (अ, स) ।
१५. चउत्थम्मि (स) ।
१६. x (ब) ।
१७. पाणि० (अ) ।
१८. ०साणब्भवे० (अ) ।
१९. सिलोतितो (अ) ।
२०. कालमाणेण (ब) ।
२१. कायव्वा (अ, स) ।
२२. मुणे एवं (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२२. कायचेट्ठं निरुंभित्ता[1], मणं वायं च सव्वसो ।
वट्टति[2] 'काइए झाणे'[3], सुहुमुस्सासवं मुणी ॥

१२३. न विरुज्झंति 'उस्सग्गे, झाणे'[4] 'वाइय-माणसा'[5] ।
तीरिए पुण उस्सग्गे, तिण्हमण्णतरं सिया ॥

१२४. मणसो एगग्गत्तं, जणयति[6] देहस्स हणति जड्डुत्तं ।
काउस्सग्गगुणा खलु, सुह-दुहमज्झत्थया चेव ॥दारं ॥

१२५. दंडग्गहनिक्खेवे[7], आवस्सियाए[8] निसीहियाए[9] य ।
गुरुणं च अप्पणामे, पंचराइंदिया[10] होंति ॥

१२६. वेंटियगहनिक्खेवे[11], निट्ठीवण[12] आतवा उ छायं च ।
थंडिल्लकण्हभोमे, गामे राइंदिया पंच ॥

१२७. एतेसिं[13] अण्णतरं, निरंतरं अतिचरेज्ज तिक्खुत्तो ।
निक्कारणमगिलाणे, पंच उ राइंदिया[14] छेदो ॥

१२८. हरिताले हिंगुलए[15], मणोसिला अंजणे य लोणे य ।
मीसग[16]पुढविक्काए[17], जह उदउल्ले[18] तधा मासो ॥

१२९. सज्झायस्स अकरणे, काउस्सग्गे[19] तहा 'य पडिलेहा'[20] ।
पोसहिय-तवे य तधा, अवंदणा[21] चेइयाणं[22] च ॥**नि.२४** ॥

१३०. सुत्तत्थपोरिसीणं, अकरणे मासो उ होति 'गुरु-लहुगो'[23] ।
चाउक्कालं पोरिसिं, उवाइणं[24] तस्स चउलहुगा ॥दारं ॥

१३१. जइ उस्सग्गे न कुणति[25], तति मास निसण्णए[26] निवण्णे य ।
सव्वं चेवावासं[27], न कुणति तहियं 'चउलहुं ति'[28] ॥दारं ॥

---

१. निरुभेत्ता (ब) ।
२. वट्टते (अ) ।
३. कायज्झाणे (अ, ब) ।
४. उस्सग्गज्झाणा (ब) ।
५. कातिय माणसा (अ, स) सूत्रे च द्वित्वेऽपि बहुवचनं प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
६. जणति (अ, स) ।
७. ०निक्खेवा (अ) ।
८. आवसियाए (मु) ।
९. निसीहिया (अ, स) ।
१०. चउराइं ० (ब) ।
११. बेंदिय ० (स) ।
१२. निट्ठुसणा (ब), निट्ठुहणे (अ, स) ।
१३. एसेसिं (अ) ।
१४. रायंदिया (ब) ।
१५. हिंगुलुए (ब) ।
१६. मीसीग (ब) ।
१७. पुढविकाए (ब) ।
१८. उदल्ले (अ) ।
१९. कायोत्सर्गस्य सूत्रे सप्तमी षष्ठीसप्तम्योरर्थं प्रत्यभेदात् (मवृ) ।
२०. अपडिलेहे (स), ०लेहे (अ), पडिलेहा इति विभक्तेरत्र लोपः प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
२१. वंदणे (ब), अवंदणे (अ) ।
२२. चेईयाणं (ब) ।
२३. लहुगुरुओ (अ, स) ।
२४. उवातिणं (ब) ।
२५. कुणती (ब) ।
२६. निसज्जए (ब) ।
२७. ०वस्सं (मु) ।
२८. ०लहुत्ते (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३२. चाउम्मासुक्कोसे, मासिय मज्झे य पंच उ जहन्ने ।
उवहिस्स अपेहाए[1], एसा खलु होति आरुवणा ॥

१३३. चउ-छट्ठऽट्ठमऽकरणे[2], अट्ठमि-पक्ख चउमास-वरिसे य ।
लहु-गुरु-लहुगा गुरुगा, अवंदणे चेइसाधूणं ॥

१३४. 'एतेसु तिठाणेसुं'[3], भिक्खू जो वट्टती[4] पमादेणं ।
सो मासियं ति लग्गति, उग्घातं वा अणुग्घातं ॥नि.२५ ॥

१३५. छक्काय चउसु लहुगा, परित्तलहुगा य गुरुग साहारे ।
संघट्टण परितावण[5], लहु-गुरुगऽतिवायणे[6] मूलं ॥दारं ॥नि.२६ ॥

१३६. पडिसेवणं विणा खलु, संजोगारोवणा न विज्जंति[7] ।
माया चिय[8] पडिसेवा, अइप्पसंगो य इति एक्कं ॥दारं ॥नि.२७ ॥

१३७. एगाधिगारिगाण[9] वि, नाणत्तं केत्तिया[10] व दिज्जंति ।
आलोयणाविही वि य. इय नाणत्तं चउण्हं पि ॥

१३८. सेज्जायरपिंडे या, उदउल्ले खलु तहा अभिहडे[11] य ।
आहाकम्मे य • तहा, सत्त उ सागारिए मासा ॥

१३९. रण्णो आधाकम्मे, उदउल्ले खलु तहा अभिहडे[12] य ।
दसमास रायपिंडे[13], उग्गमदोसादिणा चेव ॥दारं ॥

१४०. पंचादी आरोवण[14], नेयव्वा जाव होंति छम्मासा ।
तेण पणगादियाणं[15], छण्हुवरिं[16] झोसणं कुज्जा ॥दारं ॥नि.२८ ॥

१४१. किं कारणं न दिज्जति, छम्मासाण परतो उ आरुवणा ।
भणति[17] गुरू पुण[18] इणमो, 'जं कारण'[19] झोसिया सेसा ॥

१४२. आरोवणनिप्फण्णं[20], छउमत्थे जं जिणेहिं उक्कोसं ।
तं तस्स उ तित्थम्मी[21], ववहरणं धन्नपिडगं[22] वा[23] ॥नि.२९ ॥

---

१. उपेहाए (ब) ।
२. ०ट्ठ अकरणे (अ, स) ।
३. एतेसु तिसु ठाणेसु (ब), एतेसुं ठाणेसु (अ, स) ।
४. वट्टति (ब) ।
५. ०वणु (ब) ।
६. ०वादणे (ब) ।
७. दिज्जंति (अ, स) ।
८. वियं (अ) ।
९. एक्काधि० (अ) ।
१०. कित्तिया (ब) ।
११,१२. अभिकडे (ब) ।
१३. ०पिंडे य (ब) ।
१४. यारो० (अ) ।
१५. परमासियाणं (अ, स), परमातियाणं (ब) ।
१६. छिण्हु० (अ) ।
१७. सणति (ब) ।
१८. मुण (अ, स) ।
१९. अत्र हेतौ प्रथमा (मवृ) ।
२०. ०निप्फण्णा (स) ।
२१. ०म्मि (ब), ०म्मिं (स) ।
२२. ०पिडगा (ब) ।
२३. यह गाथा सभी हस्तप्रतियों में है किन्तु मुद्रित टीका में उद्धृत गाथा के रूप में है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४३. जो जया पत्थिवो होति, सो तदा धन्नपत्थगं ।
ठावितेऽन्नं[१] पुरिल्लेणं, ववहरंते य दंडए[२] ॥दारं ॥

१४४. संवच्छरं तु पढमे, मज्झिमगाणऽट्ठमासियं[३] होति ।
छम्मास पच्छिमस्स उ, माणं भणियं तु उक्कोसं ॥

१४५. पुणरवि चोएति ततो, पुरिमा चरमा य विसमसोहीया ।
किह सुज्झंती ते ऊ, चोदग ! इणमो सुणसु[४] वोच्छं ॥

१४६. कालस्स[५] निद्धयाए[६], देहबलं धितिबलं च जं पुरिमे[७] ।
तदणंतभागहीणं, कमेण जा पच्छिमा अरिहा ॥

१४७. संवच्छरेणावि न तेसि आसी, जोगाण हाणी दुविहे बलम्मि ।
जे यावि धिज्जादि[८] अणोववेया[९], तद्धम्मया[१०]सोधयते 'त एव'[११] ॥

१४८. पत्थगा[१२] जे पुरा आसी, हीणमाणा उ तेऽधुणा ।
माण भंडाणि धन्नाणं, सोधिं जाणे तहेव उ ॥

१४८/१. जो जया पत्थिवो होति, सो तदा धन्नपत्थगं ।
ठावितेऽन्नं पुरिल्लेणं, ववहरंते य दंडए[१३] ॥

१४९. दव्वे खेत्ते काले, भावे पलिउंचणा चउविगप्पा ।
चोदग ! कप्पारोवण, इहइं[१४] भणिता पुरिसजाया[१५] ॥दारं ॥नि.३० ॥

१५०. 'सच्चित्ते अच्चित्ते'[१६], जणवयपडिसेवितं तु[१७] अद्धाणे ।
सुब्भिक्खम्मि दुभिक्खे, हट्ठेण तधा गिलाणेणं[१८] ॥

१५१. कप्पम्मि वि पच्छित्तं, ववहारम्मि वि तमेव पच्छित्तं ।
कप्पव्ववहाराणं, को णु विसेसो त्ति चोदेति ॥

---

१. ठावेत ० (अ)।
२. डंडए (अ), यह गाथा स प्रति में अनुपलब्ध है।
३. ०ट्ठम्मासितं (अ)।
४. मुणसु (स, ब)।
५. काले (अ, स)।
६. निद्धे ओसभि (ब, स)।
७. पुरिसे (अ)।
८. धीयादि (अ, स), धैर्यादि (मवृ)।
९. अणोविवेया (ब)।
१०. ते धम्मया (अ), ते धम्म वा (स)।
११. तहावि (अ), तधा वि (स)।
१२. एच्छगा (अ)।
१३. सभी हस्तप्रतियों में १४८वीं गाथा के बाद (जो जया... १४३ वीं गाथा का पुनरावर्तन हुआ है। किन्तु हमने इस गाथा को भाष्य गाथा के क्रमांक में नहीं जोड़ा है।
१४. इं इति पादपूरणे 'इजेराः पादपूरणे' इति वचनात् सानुस्वारता प्राकृतत्वात् (मवृ)।
१५. इस गाथा के बाद अ और स प्रति में एक गाथा अतिरिक्त मिलती है किन्तु वृत्ति में इस गाथा का कोई उल्लेख नहीं है। छंद की दृष्टि से भी यह गाथा संगत नहीं है—
दव्वम्मि सच्चित्तं, पडिसेवंते वि अच्चित्तं।
खेते जणवय सेवियं तु अद्धाणे सेवियं वेति ॥
१६. सचित्ते अचित्तं (ब)।
१७. व (ब)।
१८. मिलाणं वा (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५२. जो अवितहववहारी, सो नियमा वट्टते तु कप्पम्मि ।
इति[1] वि हु नत्थि विसेसो[2], अज्झयणाणं[3] दुवेण्हं पि[4] ॥नि.३१॥

१५३. कप्पम्मि कप्पिया खलु, मूलगुणा चेव उत्तरगुणा[5] य ।
ववहारे ववहरिया, पायच्छित्ताऽऽभवंते य ॥

१५४. अविसेसियं[6] च[7] कप्पे, इहइं[8] तु विसेसितं इमं चउधा ।
पडिसेवण संजोयण, आरोवण[9] कुंचियं[10] चेव ॥

१५५. नाणत्तं दिस्सए अत्थे, अभिन्ने वंजणम्मि वि ।
वंजणस्स य भेदम्मि, कोइ अत्थो न भिज्जति ॥

१५६. 'पढमो त्ति इंद-इंदो'[11], बितीयओ[12] होइ इंद-सक्को त्ति ।
ततिओ गो-भूप[13]-पसू, 'रस्सी चरमो घड-पडो त्ति'[14] ॥

१५७. वंजणेण य नाणत्तं, अत्थतो य विकप्पियं[15] ।
दिस्सते कप्पणामस्स, ववहारस्स तधेव य ॥

१५८. वट्टंतस्स अकप्पे, पच्छित्तं तस्स वण्णिया[16] भेदा ।
जे पुण पुरिसज्जाया, तस्सरिहा ते इमे[17] होंति ॥नि.३२॥

१५९. कतकरणा इतरे वा, सावेक्खा खलु तहेव निरवेक्खा ।
निरवेक्खा जिणमादी, सावेक्खा आयरियमादी ॥नि.३३॥

१६०. अकतकरणा[18] वि[19] दुविहा, अणभिगता अभिगता य बोधव्वा ।
जं सेवेति अभिगते, अणभिगते अत्थिरे इच्छा[20] ॥नि.३४॥

१६१. अहवा सावेक्खितरे, निरवेक्खा सव्वसो[21] उ कयकरणा ।
इतरे कयाऽकया[22] वा, थिराऽथिरा[23] होंति गीतत्था ॥नि.३५॥

१६२. छट्ठऽट्ठमादिएहिं, कयकरणा ते उ उभयपरियाए ।
अभिगतकयकरणत्तं[24], जोगायतगारिहा[25] केई ॥

---

१. इय (अ, स)।
२. विसेसियं (ब)।
३. x (ब)।
४. ति (अ)।
५. ०गुणे (ब)।
६. ०सेवियं (अ)।
७. वि (अ)।
८. इः पादपूरणे (मवृ)।
९. आरुवणा (ब)।
१०. लुंचियं (अ, स)।
११. हस्तप्रतियों में 'पढमो इंदो इंदो त्ति' पाठ मिलता है किन्तु छंद की दृष्टि से 'पढमो ति इंद इंदो' पाठ होना चाहिए।
१२. बितियओ (ब, स)।
१३. x (अ, स)।
१४. प्रतियों में 'रस्सिणो त्ति चरमो घड-पडो त्ति' पाठ मिलता है पर छंद की दृष्टि से 'रस्सी चरमो घड-पडो त्ति' पाठ संगत लगता है।
१५. सवि० (ब)।
१६. वट्टिया (स)।
१७. इमा (अ, ब)।
१८. कयकरणा (ब)।
१९. हु (ब)।
२०. अत्था (स)।
२१. नियमसो (अ, स), सव्वहा (मु)।
२२. कया अकया (अ, स)।
२३. थिरा अथिरा (अ, ब)।
२४. ०गते कय० (अ)।
२५. आयतकयोगार्हा (मवृ), हेतावत्र प्रथमा (मवृ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६३. निव्वितिए पुरिमड्ढे, 'एक्कासण अंबिले'[१] चउत्थे य ।
पणगं दस पण्णरसा, वीसा तह पण्णवीसा य ॥

१६४. मासो लहुओ गुरुगो, चउरो मासा हवंति लहु-गुरुगा ।
छम्मासा 'लहु-गुरुगा'[२], छेदो मूलं तध दुगं च ॥

१६५. पढमस्स होति मूलं, बितिए मूलं च छेदों छग्गुरुगा ।
जयणाय होति सुद्धो, अजयण[३] गुरुगा[४] तिविधभेदो ॥**नि.३६** ॥

१६६. सव्वेसिं अविसिट्ठा, आवत्ती तेण पढमता मूलं ।
सावेक्खे गुरु[५] मूलं, कताकते होति छेदो उ ॥

१६७. सावेक्खो त्ति च काउं, गुरुस्स[६] कडजोगिणो भवे छेदो ।
अकयकरणम्मि[७] छग्गुरु, इति अड्ढोकंतिए[८] नेयं ॥

१६८. अकयकरणा[९] तु गीता, जे य अगीता य अकय अथिरा य ।
तेसावत्ति[१०] अणंतर[११], बहुयंतरियं व झोसो वा ॥

१६९. आयरियादी तिविधो, सावेक्खाणं तु किं कतो भेदो ।
एतेसिं पच्छित्तं, दाणं चऽण्णं अतो तिविधो[१२] ॥

१७०. कारणमकारणं वा, जयणाऽजयणा व नत्थिऽगीयत्थे ।
एतेण कारणेणं, आयरियादी भवे[१३] तिविधा ॥

१७१. कज्जाकज्ज[१४] जताजत, अविजाणंतो अगीतों[१५] जं सेवे ।
सो होति तस्स दप्पो, गीते दप्पाऽजते दोसा ॥

१७२. दोसविभवाणुरूवो, लोए दंडो वि[१६] किमुत उत्तरिए ।
तित्थुच्छेदो इहरा, निराणुकंपा न य विसोही ॥

१७३. अहवा कज्जाकज्जे, जयाजयं ते य कोविदो[१७] गीतो ।
दप्पाऽजतो निसेवं[१८], अणुरूवं पावए दोसं ॥

१७४. कप्पम्मि अकप्पम्मि य, जो पुण अविणिच्छितो[१९] 'अकज्जं पि'[२०] ।
कज्जमिति सेवमाणो, 'अदोसवं सो'[२१] असढभावो[२२] ॥

---

१. ०सणं० (ब), ०सणयंबिले (अ) ।
२. गुरुलहुगा (अ) ।
३. अजयणा (अ) ।
४. गुवगा (अ) ।
५. गुरौ आचार्ये गाथायां विभक्तिलोपः प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
६. अत्र गुरुशब्देनोपाध्यायः प्रोच्यते (मवृ) ।
७. ०करणं व (अ) ।
८. अड्ढोकंतेए (ब) ।
९. अवयक० (ब) ।
१०. तेसामत्थि (स) ।
११. मणंतर (अ) ।
१२. तिविधे (ब) ।
१३. भवे इति बहुत्वेप्येकवचनं प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
१४. कज्जमकज्जे (अ) ।
१५. अगीतो व्व (अ) ।
१६. उ (अ), तु (स) ।
१७. कोवितो (ब, स) ।
१८. निसेवे (मु) ।
१९. ०च्छतो (अ) ।
२०. x (ब) ।
२१. ०सवंतो (अ) ।
२२. असढे० (अ), अत्र हेतौ प्रथमा (मवृ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७५. जं वा[1] दोसमजाणंतो, हेहंभूतो[2] निसेवती ।
'होज्ज निद्दोसवं केण'[3], विजाणंतो तमायरं ॥

१७६. एमेव य तुल्लम्मि वि, अवराहपयम्मि वट्टिता दो वि ।
तत्थ वि जहाणुरूवं, दलंति दंड[4] दुवेण्हं पि ॥

१७७. एसेव[5] य[6] दिट्ठंतो, तिविधे गीतम्मि सोधिनाणत्तं[7] ।
वत्थुसरिसो उ दंडो, दिज्जति[8] लोए वि पुव्वुत्तं ॥

१७८. 'तिविधे तेगिच्छम्मी'[9], उज्जुग-वाउलण-साहुणा चेव ।
पण्णवणमणिच्छंते, दिट्ठंतो भंडिपोतेहिं ॥नि.३७॥

१७९. सुद्धालंभि[10] अगीते, अजतण[11] करण-कहणे भवे गुरुगा ।
कुज्जा व अतिपसंगं, असेवमाणे व असमाधी ॥

१८० जा एगदेसे अदढा उ भंडी, सीलप्पए सा तु करेति कज्जं ।
जा दुब्बला[12] 'संठविया वि संती'[13], न तं तु सीलंति विसण्णदारुं[14] ॥

१८१. जो एगदेसे अदढो उ पोतो, सीलप्पए सो उ करेति कज्जं ।
जो दुब्बलो संठवितो वि संतो, न तं तु सीलंति विसण्णदारुं ॥

१८२. संदेहियमारोग्गं[15], पउणो[16] वि न पच्चलो तु जोगाणं ।
इति सेवंतो दप्पे, वट्टति न य सो तधा गीतो[17] ॥

१८३. काहं अछित्तिं[18] अदुवा अधीतं[19], तवोवधाणेसु य उज्जमिस्सं ।
गणं व 'नीइए य'[20] सारविस्सं, सालंबसेवी समुवेति मोक्खं ॥

इति पीठिका

---

१. x (ब) ।
२. देहं० (अ), हेहंभूतो नाम गुणदोषपरिज्ञानविकलोऽशठभावः (मवृ) ।
३. निद्दोसवं केण हुज्जा (मु) ।
४. डंडं (अ) ।
५. एमेव (ब) ।
६. उ (अ), तु (स) ।
७. विसोहिना ० (ब) ।
८. विज्जंति (स) ।
९. तेण्ह वि तेइच्छम्मि (अ, स) ।
१०. सुद्धालंभे (अ, स), सुद्धालाभे (मवृ) ।
११. जयणा (अ) ।
१२. दुब्बली (स) ।
१३. संठविज्जा व संता (ब) ।
१४. विसिण्ण० (अ) ।
१५. संडेहिय० (अ) ।
१६. पउतो (अ) ।
१७. कज्जो (ब) ।
१८. अछित्ती य (ब), अछित्ति (स) ।
१९. अधीहं (स) ।
२०. णीए व उ (अ, स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रथम उद्देशक

१८४. दुहओ[१] भिन्नपलंबे, मासियसोही उ वण्णिया कप्पे ।
तस्स पुण इमं[२] दाणं, भणियं आलोयणविधी य ॥

१८५. एमेव सेसएसु वि, सुत्तेसुं कप्पनामअज्झयणे ।
जहि[३] मासिय आवत्ती[४], तीसे दाणं इहं भणियं ॥

१८६. छट्ठअपच्छिमसुत्ते, जिण-थेराणं ठिती समक्खाया ।
तधियं पि होति मासो, अमेरतो[५] सो तु निप्फण्णो ॥

१८७. जे त्ति व से त्ति व के त्ति व, निद्देसा होंति एवमादीया ।
भिक्खुस्स परूवणया, जे त्ति कओ होति निद्देसो[६] ॥नि.३८॥

१८८. नामं ठवणाभिक्खू, दव्वभिक्खू य भावभिक्खू य ।
दव्वे सरीरभविओ, भावेण तु संजतो भिक्खू[७] ॥नि.३९॥

१८९. भिक्खणसीलो भिक्खू, अण्णे वि न ते अणण्णवित्तित्ता ।
निप्पिसितेणं णातं, पिसितालंभेण सेसा उ[८] ॥नि.४०॥

१९०. अविहिंस बंभचारी, पोसहिय अमज्जमंसियाऽचोरा ।
सति[९] लंभ परिच्चाई, होंति तदक्खा 'न सेसा उ'[१०] ॥

१९१. अधवा[११] एसणासुद्धं, जधा गिण्हंति साधुणो[१२] ।
भिक्खं नेव[१३] कुलिंगत्था, भिक्खजीवी 'वि ते जदि'[१४] ॥

१९२. दगमुद्देसियं चेव, कंद-मूल-फलाणि य ।
सयंगाहा परत्तो य, गिण्हंता किह[१५] भिक्खुणो[१६] ॥

१९३. अचित्ता एसणिज्जा य, मिता काले परिक्खिता ।
जहालद्धा विसुद्धा य, एसा वित्ती य भिक्खुणो ॥

---

१. दुहुतो (ब), दुहतो (स) ।
२. इहं (अ, ब) ।
३. जहिं य (ब) ।
४. आवित्ती (स) ।
५. अमेरतओ (ब) ।
६. अधुना निर्युक्तिकृद् विस्तरं वस्तुकाम आह (मवृ), निभा ६२७३ ।
७. सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्तेरवसरप्राप्तः (मवृ), निभा ६२७४, दशनि (३०९) में इस गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
दव्वम्मि आगमादी, अन्नो वि य पज्जवो इणमो ।
८. निभा ६२७५ ।
९. सय (स) ।
१०. न पुण सेसा (निभा ६२७६) ।
११. अहव वा (ब) ।
१२. भिक्खुणो (निभा ६२७७) ।
१३. नेवं (स) ।
१४. ति ते जती (ब), ति ते जधा (अ, स) ।
१५. कह (अ) ।
१६. तुलना-व्यभा १९२-१९६—निभा ६२७८-६२८२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९४. 'दव्वे य भाव'[१] भेयग, भेदण भेत्तव्वगं च तिविहं तु ।
नाणादि भाव-भेयण, कम्मखुधेगट्ठयं[२] भेज्जं ॥नि.४१ ॥

१९५. भिंदंतो यावि खुधं, भिक्खू जयमाणगो जती होति ।
तव-संजमे तवस्सी, भवं खवंतो भवंतो उ[३] ॥नि.४२ ॥

१९६. नामं ठवणा दविए, खेत्ते काले तहेव भावे य ।
मासस्स परूवणया, पगतं पुण कालमासेणं ॥नि.४३ ॥

१९७. दव्वे भविओ निव्वत्तिओ[४], य खेत्तम्मि जम्मि वण्णणया ।
काले जहि वण्णिज्जति, नक्खत्तादी च पंचविहो ॥नि.४४ ॥

१९८. नक्खत्ते चंदे या[५], उडु[६] आदिच्चे य होति बोधव्वा ।
अभिवड्ढिते[७] य तत्तो, पंचविधो कालमासो उ[८] ॥

१९९. रिक्खादी मासाणं, 'आणयणोवायकरणमिणमं तु'[९] ।
जुगदिणरासी ठाविय[१०], अट्ठारसयाइँ तीसाइं ॥

२००. 'ताधे हराहि'[११] भागं, रिक्खादीयाण दिणकरंताणं ।
सत्तट्ठी बावट्ठी, एगट्ठी सट्ठिभागेहिं ॥

२०१. अभिवड्ढितकरणं[१२] पुण, ठाविय रासिं इमं तु कायव्वं ।
उणयालीससताइं[१३], पण्णट्ठाइं अणूणाइं[१४] ॥

२०२. एतस्स भागहरणं, चउवीसेणं सतेण कायव्वं ।
जे लद्धा ते दिवसा, सेसा भागा मुणेयव्वा ॥

२०३. अहवा वि तीसतिगुणे, सेसे तेणेव भागहारेणं ।
भइयम्मि[१५] जं तु लब्भति, ते उ मुहुत्ता मुणेयव्वा ॥

२०४. तस्स वि जं अवसेसं, बावट्ठीए उ तस्स गुणकारो ।
गुणकार-भागहारे, बावट्ठीए उ[१६] अववट्टो[१७] ॥

२०५. दोहिं तु हिते भागे, जे लद्धा ते बिसट्ठिभागा[१८] उ ।
एतेसिमागयफलं[१९], रिक्खादीणं कमेण इमं[२०] ॥

---

१. दव्वे भावे (स)।
२. कम्मक्खुहे० (ब), ०खहेकट्ठया (अ)।
३. दशनि (३१८) में यह गाथा कुछ पाठांतर के साथ मिलती है—
भिंदंतो य जह खुधं, भिक्खू जतमाणओ जती होति।
संजमचरओ चरओ, भवं खवेंतो भवंतो तु ॥
४. णिव्वित्तिओ (निभा ६२८३)।
५. दीर्घत्वमार्षत्वात् (मवृ)।
६. उउ (ब)।
७. अहिव० (अ), अतिवद्धिते (स)।
८. य (ब)।
९. करणमिणमं तु आणणोवाए (अ, स), मूल पाठ हमने टीका की व्याख्या के अनुसार स्वीकृत किया है।
१०. भाविय (स)।
११. ताधि हरासि (ब)।
१२. ०वद्धित० (अ, ब)।
१३. ०सताति (अ)।
१४. अणूणायं (ब), ०णाईस (स)।
१५. भतितम्मि (ब)।
१६. य (स)।
१७. उववट्टो (अ), उवउट्टो (ब)।
१८. x (ब)।
१९. एतेसिं आगय० (ब)।
२०. इमो (ब), इमे (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०६. अहरत्त[1] सत्तवीसं, तिसत्तसत्तट्ठिभागनक्खत्ते ।
चंदो उ अगुणतीसं[2], बिसट्ठिभागा य बत्तीसं[3] ॥

२०७. उडुमासे तीस दिणा, आइच्चो तीस होति अद्धं च ।
अभिवड्ढितेक्कतीसा[4], इगवीससतं[5] च भागाणं[6] ॥

२०८. एक्कत्तीसं च दिणा, इगुतीसमुहुत्त-सत्तरसभागा ।
एत्थं पुण अधिगारो, नायव्वो कम्ममासेणं[6] ॥

२०९. मूलादिवेदगो खलु, भावे जो 'वावि जाणओ'[8] तस्स ।
न हि अग्गिनाणतोऽग्गीणाणं भावे ततोऽणण्णो ॥नि.४५ ॥

२१०. नामं ठवणा दविए, परिरय-परिहरण वज्जणुग्गहता[9] ।
भावावण्णे[10]ऽसुद्धे, नव परिहारस्स नामाइं ॥नि.४६ ॥

२११. कंटगमादी दव्वे, गिरि-नदिमादीण[11] परिरयो होति ।
परिहरण-धरण भोगे, लोउत्तर वज्ज इत्तरिए[12] ॥

२१२. खोडादिभंगणुग्गह, भावे आवण्णसुद्धपरिहारो[13] ।
मासादी आवण्णे, तेण तु पगतं न अन्नेहिं ॥दारं ॥

२१३. नामं ठवणा दविए, खेत्तऽद्धा, 'उड्ढ वसहि विरती य'[14] ।
संजम-पग्गह-जोहे, अचल-गणण-संधणा भावे ॥नि.४७ ॥

२१४. सच्चित्तादी दव्वे, खेत्ते गामादि अद्ध-दुविहा उ ।
सुर-नारग भवठाणं, सेसाणं काय-भवठाणं[15] ॥

२१५. ठाण-निसीय-तुयट्टण[16], उड्ढादी[17] वसहि निवसए जत्थ ।
विरती देसे सव्वे, संजमठाणा असंखा उ[18] ॥दारं ॥

२१६. पग्गह 'लोइय इतरे'[19], एक्केक्को तत्थ होइ पंचविहो ।
राय-जुवरायऽमच्चे, सेट्ठी[20] पुरोहिय[21] लोगम्मि[22] ॥

---

१. अहोरत्त (ब), छंद की दृष्टि से अहरत्त पाठ स्वीकृत किया है।
२. उगुण० (अ), अउणत्तीसं (निभा ६२८४)।
३. बिउट्ठभागा० (अ, ब)।
४. अभिवड्ढिएक० (अ, स)।
५. एगवीस० (अ)।
६. इस गाथा का उत्तरार्ध निभा (६२८५) में इस प्रकार है—
अभिवड्ढितो य मासो, पगतं पुण कम्ममासेणं।
७. निभा ६२८६।
८. वा वियाणतो (निभा ६२९१)।
९. ०ग्गहिता (ब) वज्जणोग्गहे चेव (निभा ६२९२)।
१०. भावाविण्णे (ब)।
११. ०मादीसु (निभा ६२९३)।
१२. तित्तिरिए (ब), इत्तिरिए (अ, स) इस गाथा के बाद टीका में 'लोगे जह' . . . गाथा 'उक्तं च' उल्लेख के साथ, उद्धृत गाथा के रूप में दी है तथा व्याख्यात भी है। किन्तु यह हस्तप्रतियों में नहीं मिलती है। निशीथभाष्य (६२९४) में यह गाथा भागा के क्रम में है—
लोगे जह माता ऊ, पुत्तं परिहरति एवमादी उ।
लोउत्तरपरिहारो, दुविहो परिभोग धरणे य ॥
१३. ०हारे (निभा ६२९५)।
१४. उड्ढ उवरती वसही (अ), उडुओ विरति वसही (निभा ६२९६)।
१५. निभा (६२९७) में इस गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
तिरियनरे कायठिती, भवठिति चेवावसेसाण।
१६. अत्र विभक्तिलोपः प्राकृतत्वात् (मवृ)।
१७. उद्धादी (अ, ब)।
१८. निभा ६२९८।
१९. लोतियरे य (अ)।
२०. सेट्ठि (ब, स)।
२१. पुरोधिय (अ)।
२२. निभा (६२९९) में २१६ और २१७ के स्थान पर निम्न गाथा मिलती है—
रायाऽमच्च पुरोहिय, सेट्ठी सेणावती य लोगम्मि।
आयरियादी उत्तरे, पग्गहणं होइ उ निरोहो ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१७. आयरिय उवज्झाए, पवत्ति-थेरे तहेव गणवच्छे ।
एसो लोगुत्तरिओ, पंचविहो पग्गहो होति ॥दारं ॥

२१८. आलीढ-पच्चलीढे, वेसाहे मंडले 'य समपाए'[1] ।
अचले निरेयकाले, गणणे एक्कादि जा कोडी[2] ॥दारं ॥

२१९. रज्जुयमादि[3] अछिन्नं, कंचुयमादीण छिन्नसंधणया ।
सेढिदुगं अच्छिन्नं, अपुव्वगहणं तु भावम्मि ॥

२२०. मीसाओ ओदइयं, गतस्स मीसगमणे पुणो[4] छिन्नं ।
अपसत्थ[5] पसत्थं वा, भावे पगतं तु छिन्नेण ॥दारं ॥

२२१. मूलुत्तरपडिसेवा[6], मूले पंचविध उत्तरे दसधा ।
एक्केक्का वि य दुविहा, दप्पे कप्पे[7] य नायव्वा[8] ॥**नि.४८** ॥

२२२. किध[9] भिक्खू जयमाणो, आवज्जति मासियं तु परिहारं ।
कंटगपहे व[10] छलणा, भिक्खू वि तहा विहरमाणो ॥

२२३. तिक्खम्मि उदगवेगे, विसमम्मि[11] व[12] विज्जलम्मि वच्चंतो ।
कुणमाणो वि पयत्तं, अवसो जह पावए[13] पडणं ॥

२२४. तह समण-सुविहियाणं, सव्वपयत्तेण वी जतंताणं ।
कम्मोदयपच्चइया[14], विराहणा कस्सइ हवेज्जा[15] ॥

२२५. अन्ना वि हु पडिसेवा, सा तु[16] न कम्मोदएण जा जयतो[17] ।
सा कम्मक्खयकरणी, दप्पाऽजत[18] कम्मजणणी उ[19] ॥

२२६. पडिसेवणा उ[20] कम्मोदएण कम्ममवि[21] तं निमित्तागं ।
अण्णोण्णहेउसिद्धी, तेसिं बीयंकुराणं[22] च[23] ॥

२२७. दिट्ठा खलु पडिसेवा, सा उ कहिं होज्ज पुच्छिए एवं ।
भण्णति अंतोवस्सय, बाहिं व वियारमादीसु ॥

---

१. समपदे य (स, निभा ६३००) ।
२. यावत् (मवृ) ।
३. रज्जुमादि (निभा ६३०१) ।
४. तहा पुणो (ब) ।
५. ० सत्थं (निभा ६३०२) ।
६. ०सेवण (ब) ।
७ x (ब) ।
८. निभा ६३०३ ।
९. किह (ब, निभा ६३०४) ।
१०. व्व (स) ।
११. विसमं च (ब) ।
१२. वि (निभा ६३०५) ।
१३. पावती (निभा) ।
१४. ०पच्चतिया (निभा ६३०६) ।
१५. भवेज्जा (ब) ।
१६. ऊ (ब) ।
१७. जयतु (अ), जतणा (स, निभा ६३०७) ।
१८. दप्पाजति (अ) ।
१९. तो (ब) ।
२०. वि (निभा ६३०८) ।
२१. कम्मम्मि (स) ।
२२. बीजांकुरयोरिव गाथायां द्वित्वेऽपि बहुवचनं प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
२३. वा (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२८. पडिसेविएँ दप्पेणं, कप्पेणं वावि 'अजतणाए उ'[१] ।
न वि णज्जति वाधातो, कं वेलं होज्ज जीवस्स ॥

२२९. तं न खमं खु पमातो[२], मुहुत्तमवि अच्छितुं[३] ससल्लेणं ।
आयरियपादमूले, 'गंतूण समुद्धरे'[४] सल्लं ॥

२३०. न हु सुज्झती ससल्लो, जह भणियं सासणे जिणवराणं ।
उद्धरियसव्वसल्लो, सुज्झति जीवो धुतकिलेसो ॥

२३१. अहगं च सावराधी[५], आसो विव[६] पत्थितो[७] गुरुसगासं ।
वइयग्गामे संखडि, 'पत्ते आलोयणा'[८] तिविहा ॥नि.४९ ॥

२३२. सिग्घुज्जुगती आसो[९], अणुयत्तति[१०] सारहिं न अत्ताणं ।
इय संजममणुयत्तति, वइयादि[११] अवंकितो साधू ॥

२३३. आलोयणापरिणतो, सम्मं संपट्ठितो[१२] गुरुसगासं ।
जदि अंतरा उ[१३] कालं, 'करेति आराहओ सो उ'[१४] ॥

२३४. पक्खिय चउ संवच्छर, उक्कोसं बारसण्ह वरिसाणं[१५] ।
समणुण्णा आयरिया, फड्डगपतिया य[१६] विगडेंति ॥नि.५० ॥

२३५. तं पुण ओह-विभागे[१७], दरभुत्ते ओह जाव भिन्नो उ ।
तेण[१८] परेण विभागो, 'संभम-सत्थादि भयणा उ'[१९] ॥नि.५१ ॥

२३६. ओहेणेगदिवसिया[२०], विभागतो एगऽणेग[२१] दिवसा उ ।
'रत्तिं च'[२२] दिवसतो वा, विभागतो ओघतो दिवसं[२३] ॥नि.५२ ॥

२३७. विभागओ[२४] अपसत्थे, दिणम्मि रत्तिं विवक्खतो वावि ।
आदिल्ला दोण्णि भवे, विवक्खतो होति ततिया उ[२५] ॥नि.५३ ॥

---

१. ०णाओ (ब)।
२. पमातो इति अत्र दकारस्य लोपः प्राकृतत्वात् प्रमादतः (मवृ)।
३. आसिउं (मु)।
४. गंतूणं उद्धरे (निभा ६३०९)।
५. ०राही (ब)।
६. इव (निभा ६३१०)।
७. पच्छितो (अ), पच्छिउं (ब)।
८. पत्तेयालो० (स)।
९. वासो (ब)।
१०. अणुवत्तति (निभा ६३११)।
११. वतियादि (अ)।
१२. संपत्थितो (मु)।
१३. य (ब)।
१४. करेज्ज आराहओ तह वि (निभा ६३१२), ०हओ सो वि (ब)।
१५. द्वादशभिर्वर्षैः सूत्रे षष्ठी तृतीयार्थे (मवृ)।
१६. उ (अ), वि (निभा ६३१३)।
१७. ओहविभागे इति प्राकृतत्वात् तृतीयार्थे सप्तमी (मवृ)।
१८. तेनेत्यव्ययमनेकार्थत्वात् तत इत्यर्थे द्रष्टव्यम् (मवृ)।
१९. ०सत्थादिसुं भइतं (निभा ६३१४) अ और स प्रति में इस गाथा के बाद अप्पा मूल ... (गा. २३८) है। उसके बाद ओहेणेग .. (गा. २३६) विभागओ ... (गा. २३७) गाथाएं हैं।
२०. ओहे एगदि० (निभा ६३१५)।
२१. णेग एग (अ)
२२. रत्तिं पि (निभा), रात्रौ वा गाथायां द्वितीया सप्तम्यर्थे प्राकृतत्वात् (मवृ)।
२३. दिवसे अत्रापि द्वितीया सप्तम्यर्थे (मवृ)।
२४. विभागेण (अ)।
२५. गाथाओं के क्रम में निभा में यह गाथा अनुपलब्ध है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३८. अप्पा[१] मूलगुणेसुं, 'उत्तरगुणतो[२] विराधणा अप्पा'[३] ।
अप्पा पासत्थादिसु, दाणग्गहसंपयोगोहा ॥नि.५४॥

२३९. भिक्खादिनिग्गएसुं, रहिते विगडेंति[४] फड्डगवईओ[५] ।
सव्वसमक्खं केई, ते बीसरियं तु सारेंति[६] ॥

२४०. मूलगुण पढमकाया, तत्थ[७] वि पढमं तु पंथमादीसु ।
'पाद अपमज्जणादी'[८], बितिए उल्लादि[९] पंथे[१०] वा ॥

२४१. ततिए पतिट्ठियादी[११], अभिधारणवीयणादि वाउम्मि ।
बीयादिघट्ट पंचम[१२], इंदिय अणुवायतो[१३] छट्ठे ॥

२४२. दुब्भासिय हसितादी[१४], बितिए[१५] ततिए अजाइउग्गहणं[१६] ।
घट्टणपुव्वरतादी, इंदिय-आलोय मेहुण्णे ॥

२४३. मुच्छातिरित्त पंचम[१७], छट्ठे लेवाड अगद[१८]-सुंठादी ।
गुत्ति-समिती विवक्खा, अणेसिगहणुत्तरगुणेसु[१९] ॥

२४४. संतम्मि वि[२०] बलविरिए, तवोवहाणम्मि[२१] जं न उज्जमियं ।
एस[२२] विहारवियडणा[२३], वोच्छं उवसंप नाणत्तं ॥

२४५. एगमणेगा दिवसेसु, होति 'ओघे य'[२४] पदविभागे य[२५] ।
उपसंपयावराहे, नायमनायं परिच्छंति ॥

२४६. दिव-रातो उवसंपय, अवराधे दिवसतो[२६] पसत्थम्मि ।
उव्वातो[२७] तद्दिवसं, तिण्हं तु[२८] अतिक्कमे[२९] गुरुगा ॥नि.५५॥

---

१. अप्प (ब)।
२. ०गुणतो (ब)।
३. विराहणा अप्पउत्तरगुणेसुं (निभा ६३१६)।
४. वियडंति (ब)।
५. फड्डुगपती उ (अ, स), फद्दगपती वा (ब)।
६. कहयंति (निभा ६३१७)।
७. तेसु (निभा ६३१८)।
८. पादप्पम० (निभा)
९. उल्ला उ (अ, स)।
१०. पंते (स)।
११. पदिट्ठियादि (ब)।
१२. पंचमे (ब)।
१३. ०वातिओ (निभा ६३१९)।
१४. हस्सादी (अ, स)।
१५. बीए (ब)।
१६. अजाइयग्गहणं (अ), आजातीउग्गहणे (ब), अजाइतो गहणे (निभा ६३२०)।
१७. यहां छंद की दृष्टि से पंचम शब्द में सप्तमी विभक्ति का लोप हुआ है।
१८. अगत (अ, स)।
१९. निभा (६३२१) में इस गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
उत्तरभिक्खऽविसोही, असमितत्तं च समितीसु।
२०. य (निभा ६३२२)।
२१. ततो व हीणम्मि (ब), तवोवहाणेणं (अ)।
२२. एसि (ब)।
२३. वियार० (अ)।
२४. ओहे य इत्यादि तृतीयार्थे सप्तमी (मवृ), ओघेण (निभा ६३२३)।
२५. या (ब)।
२६. दिवसतो इति सप्तम्यन्तात् तद्दिवसे (मवृ)।
२७. उव्वातो (ब)।
२८. पि (ब)।
२९. वइक्कमे (अ, निभा ६३२५), उवक्कमे (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४७. समणुण्णदुगनिमित्तं, उवसंपज्जंत[1] होति एमेव ।
अन्नमणुण्णे नवरिं[2], विभागतो कारणे भइयं[3] ॥

२४८ पढमदिणमविप्फाले[4], 'लहुओ बितिए गुरु'[5] तइए[6] लहुया ।
'तेच्चिय तस्स अकधणे'[7], सुद्धमसुद्धो विमेहिं[8] तु ॥

२४९. अधिकरण[9]-विगतिजोगे, पडिणीए[10] थद्ध-लुद्ध-निद्धम्मे ।
अलस-अणुबद्धवेरे[11], सच्छंदमती पयहियव्वे[12] ॥दारं ॥**नि.५६** ॥

२५०. गिहि-संजय-अधिगरणे, लहु गुरुगा[13] तस्स अप्पणो छेदे ।
विगतिं[14] न देइ घेत्तुं, भुत्तुव्वरितं[15] च गहिते[16] वि ॥दारं ॥

२५१. नववज्जियावदेहो[17], पगतीए दुब्बलो अहं[18] भंते ! ।
तब्भावितस्स[19] एण्हिं, न य गहणं धारणं कत्तो ॥दारं ॥

२५२. एगंतरनिव्विगती, जोगो पच्चत्थिगो व 'मे तत्थ'[20] ।
'चुक्क-खलितेसु'[21] गेण्हति, छिद्दाणि[22] कहेति य[23] गुरूणं ॥दारं ॥

२५३. चंकमणादुड्डाणे[24], कडिगहणं झाओ[25] नत्थि थद्धेवं[26] ।
'भुंजति सयमुक्कोसं'[27], न य देंतऽन्नेसि[28] लुद्धेवं ॥दारं ॥

२५४. 'आवस्सिया-पमज्जण'[29], 'अकरणता उग्गदंड निद्धम्मो'[30] ।
बालादड्ढा दीहा, 'भिक्खाचरिया य उब्भामा'[31] ॥दारं ॥

२५५. पाण-सुणगा व भुंजति, एगत्तो भंडिउं पि अणुबद्धो ।
एगागिस्स न[32] लब्भा, चलिउं[33] थेवं पि सच्छंदो[34] ॥दारं ॥

---

१. ०संपज्जे ते (अ, ब), ०संपज्जते वि (स) ।
२. नवरं (स) ।
३. भतियं (अ, स), भयइयं (ब), निभा ६३२४ । निभा में २४६ और २४७ की गाथा में क्रमव्यत्यय है ।
४. प्रथमदिवसमिति सप्तम्यर्थे द्वितीया (मवृ), विप्फालेइ देशीवचनमेतत् न पृच्छतीत्यर्थः (मवृ) ।
५. लहु बितिए गुरुतो (अ, स) ।
६. तति (ब), ततियए (निभा) ।
७. तस्स विकहणे तेच्चिय (निभा ६३२६) ।
८. इमेहिं (अ, निभा), एतेहिं (स) ।
९. ०करणं (अ) ।
१०. पडणीए (अ) ।
११. ०बद्धरोसो (अ) ।
१२. परिहियव्वे (निभा ६३२७) ।
१३. गुरुणा (अ) ।
१४. विगती (निभा ६३२८) ।
१५. भुत्तुद्धरियं (मु) ।
१६. गथिते (अ) ।
१७. ०वज्जियव्व देहो (ब), ०वज्जियाए देहो (स), वज्जियावो नाम देशी- वचनत्वादिक्षुः (मवृ), ०य वज्जिया य (निभा ६३२९) ।
१८. मिहं (अ, ब) ।
१९. सब्भा० (अ) ।
२०. तहि साहू (निभा ६३३०), मे अत्थि (मु) ।
२१. x (ब), बुक्क० (मवृ, स) ।
२२. छिड्डाणि (निभा, स) ।
२३. ते (ब) ।
२४. चंकमणादि उड्डाणे (ब), चक्क० (स), चंकमणादि उड्डण (निभा ६३३१) ।
२५. ज्झातो (अ) ।
२६. लद्धेवं (अ) ।
२७. उक्कोस सयं भुंजति (निभा) ।
२८. देय अन्नेसि (ब) ।
२९. आवासिय अप० (अ, स), आवासियमज्जणया (निभा) ।
३०. अकरण अति उग्ग० (निभा ६३३२) ।
३१. ०रिया सउब्भामा (स), भिक्खालसिओ य उब्भामं (निभा) ।
३२. नु (ब) ।
३३. दलिउं (स), वलिउं (अ) ।
३४. निभा (६३३३) में यह गाथा कुछ पाठांतर से मिलती है—
पाणसुणगा व भुंजंति, एक्कउ असंखडेवमणुबद्धो ।
एक्कल्लस्स न लब्भा, चलितुं पेवं तु सच्छंदो ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५६. जइ भंडण पडिणीए, लुद्धे अणुबद्धरोस चउगुरुगा ।
सेसाण[१] होंति लहुगा, एमेव पडिच्छमाणस्स[२] ॥दारं ॥

२५७. 'एगे अपरिणए वा'[३], अप्पाधारे[४] य थेरए ।
गिलाणे बहुरोगे[५] य, मंदधम्मे य पाहुडे ॥नि.५७ ॥

२५८. एगाणियं तु मोत्तुं, वत्थादि अकप्पिएहि वा सहितं ।
अप्पाधारो वायण, तं चेव य पुच्छिउं देति[६] ॥

२५९. थेरमतीवमहल्लं[७], अजंगमं मोत्तु आगतो[८] 'गुरुं तु'[९] ।
सो च परिसा व थेरा, अहं तु वट्टावओ[१०] तेसिं ॥

२६०. तत्थ गिलाणो एगो, जप्पसरीरो तु[११] होति बहुरोगी ।
निद्धम्मा गुरु-आणं, न करेंति ममं पमोत्तूणं[१२] ॥

२६१. एतारिसं विउसज्ज[१३] विप्पवासो[१४] न कप्पति ।
'सीसायरिय पडिच्छे'[१५], पायच्छित्तं विहिज्जइ[१६] ॥

२६२. 'एगे गिलाण पाहुड'[१७], तिण्ह वि गुरुगा उ सिस्समादीणं[१८] ।
सेसे सिस्से गुरुगा, 'पडिच्छ लहुगा'[१९] गुरू सरिसं ॥

२६३. सीस[२०]-पडिच्छे पाहुड, छेदो राइंदियाणि[२१] पंचेव ।
आयरियस्स वि[२२] गुरुगा, दोवेते पडिच्छमाणस्स ॥

२६४. एतद्दोसविमुक्कं, वइयादी[२३] अपडिबद्धमायातं ।
दाऊणं[२४] पच्छित्तं, पडिबद्धं पी[२५] पडिच्छेज्जा ॥नि.५८ ॥

२६५. सुद्धं पडिच्छिऊणं, अपडिच्छणे[२६] लहुग तिण्णि[२७]दिवसाणि ।
सीसे[२८] 'आयरिए वा'[२९] पारिच्छा तत्थिमा होति[३०] ॥

---

१. सेसाणं (अ)।
२. निभा (६३३४) में इसका पूर्वार्द्ध इस प्रकार है—
समणऽधिकरणे पडिणीय लुद्ध अणुबद्धवेरे चउगुरुगा।
३. ०णए या (स), अहवा एगेऽपरिणते (निभा ६३३५)।
४. अप्पाहारे (अ, निभा)।
५. ०रोगी (मु)।
६. निभा (६३३६) में कुछ अंतर के साथ यह गाथा मिलती है—
एक्कल्लं मोत्तूणं, वत्थादि अकप्पिएहि सहितं वा।
सो उ परिसा व थेरा, अहऽण्णसेहादि वट्टावे ॥
७. ०महल्लं (ब), थेरं अतीम० (अ)।
८. मागतो (ब)।
९. गुरुगं (अ)।
१०. वज्जावओ (अ), वर्त्तापकः प्रतिजागरकः (मवृ)।
११. य (मु)।
१२. पि मोत्तूणं (अ, स), निभा ६३३७।
१३. वियोसज्ज (अ)
१४. विप्पि० (ब)।
१५. सीसपडिच्छायरिए (निभा ६३३८)।
१६. विपज्जते (अ, ब), विवज्जइ (स)।
१७. एगे गिलाणगे वा (ब)।
१८. सीसगा० (निभा ६३३९)।
१९. लहुय पडिच्छे (निभा)।
२०. सिस्स (स)।
२१. रायंदियाण (ब)।
२२. उ (ब, स निभा ६३४०)।
२३. वयाती (ब), वतियादी (अ)।
२४. दाऊण व (निभा ६३४१)।
२५. पि (स), छंद की दृष्टि से इकार दीर्घ हुआ है।
२६. अपरिछिण्णे (स, निभा ६३४२)।
२७. दुण्णि (ब)।
२८. सिस्से (ब)।
२९. ०रियादी (अ), ० रियं वा (ब)।
३०. होवे (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६६. 'आवस्सग - पडिलेहण, सज्झाए'[१] भुंजणे य भासाए ।
वीयारे गेलण्णे, भिक्खग्गहणे पडिच्छंति ॥**नि.५९** ॥

२६७. केई[२] पुव्वनिसिद्धा, केई[३] सारेति तं न सारेंति[४] ।
संविग्गो सिक्ख[५] मग्गति, मुत्तावलि मो[६] अणाहोऽहं[७] ॥

२६८. हीणाधियविवरीते, सति वि[८] बले पुव्वऽठंति[९] चोदेति[१०] ।
अप्पणए चोदेती, न ममंति[११] 'सुहं इहं'[१२] वसितुं ॥

२६९. जो पुण चोइज्जंते, दट्ठूण 'नियत्तए ततो ठाणा'[१३] ।
भणति[१४] अहं भे चत्तो, चोदेह ममं पि सीदंतं ॥दारं ॥

२७०. पडिलेहणसज्झाए, एमेव य हीणमधियविवरीतं[१५] ।
दोसेहिं वावि भुंजति, गारत्थियढड्डरा[१६] भासा ॥

२७१. थंडिल्लसमायारिं[१७], हावति[१८] अतरंतगं[१९] न पडिजग्गे ।
अभणितो[२०] भिक्ख न हिंडति, 'अणेसणादी व पिल्लेई'[२१] ॥

२७२. जतमाण परिहवंते, आगमणं तस्स दोहि ठाणेहिं ।
पंजरभग्गमभिमुहे[२२], आवस्सगमादि[२३] आयरिए ॥

२७३. पणगादिसंगहो होति, पंजरो जा य सारणऽण्णोण्णे ।
पच्छित्तं चमढणाहिं[२४], निवारणं सउणिदिट्ठंतो ॥

२७४. ते पुण एगमणेगा, णेगाणं सारणा[२५] जधापुव्वं[२६] ।
उपसंपद आउट्टे[२७], अणउट्टे अण्णहिं गच्छे ॥

२७५. निग्गमणे परिसुद्धे, आगमणेऽसुद्ध[२८] देंति पच्छित्तं ।
निग्गमणे अपरिसुद्धे, 'इमाइ जयणाय वारेंति'[२९] ॥**नि.६०** ॥

---

१. आवासग सज्झाए पडिलेहण (निभा ६३४३)।
२. केयं (स)।
३. केयिं (अ)।
४. x (ब)।
५. भिक्ख (अ), भिक्खं (ब)।
६. मो इति निपातः पादपूरणे (मवृ)।
७. निभा ६३४४।
८. व (अ), च (निभा ६३४५)।
९. पुव्वट्ठंते (ब), पुव्वगते (निभा)।
१०. चोतीति (ब)।
११. इमं ति (अ)।
१२. इहइं सुहं (अ, ब)।
१३. ततो नियत्तती ठाणा (निभा ६३४६), ०तउट्ठाणा (ब)।
१४. भावति (ब)।
१५. हीण अहिय० (ब, निभा ६३४७)।
१६. ०ढड्ढता (ब)।
१७. थंडिलसामायारी (ब, स)।
१८. हवेति (स)।
१९. अतरंगतं (ब), अतरंतरं (स)।
२०. अभणतितो (अ)।
२१. अणेसाई वा पल्लेइ (अ), ०पेल्लेति (निभा ६३४८)।
२२. ०भग्गहभिमुहे (अ), ०भग्गअभिमुहे (स, निभा ६३४९)।
२३. आवासयमादि (निभा)।
२४. ०ढणादी (निभा ६३५०)।
२५. सारणं (अ, ब, निभा ६३५१)।
२६. जहाकप्पे (निभा)।
२७. अविउट्टे (ब), षष्ठीसप्तम्योरर्थं प्रत्यभेदात् (मवृ)।
२८. ०असुद्धे (स), x (ब)।
२९. इमा उ जयणा तहिं होति (निभा ६३५२)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७६. नत्थी संकियसंघाडमंडली भिक्खबाहिराणयणे ।
पच्छित्तऽविउस्सग्गे[1], निग्गमसुत्तस्स छण्णेणं ॥दारं ॥**नि.६१** ॥

२७७. नत्थेयं[2] मे जमिच्छसि[3], 'सुतं मया'[4] आम संकितं तं तु ।
न य संकितं तु दिज्जति, निस्संकसुते गवेस्साहि ॥

२७८. एगागिस्स[5] न लब्भा, 'वीयारादी वि जयण'[6] सच्छंदे ।
भोयणसुत्ते मंडलिय, पढंते[7] वा[8] नियोयंति[9] ॥

२७९. अलसं भणंति बाहिं, जइ[10] हिंडसि 'अम्ह एत्थ'[11]बालादी ।
पच्छित्तं हाडहडं[12], अविउस्सग्गो तहा विगती ॥

२८०. तत्थ 'वि मायामोसो'[13], एवं तु भवे अणज्जवजुतस्स[14] ।
वुत्तं च उज्जुभूते, सोही तेलोक्कदंसीहिं ॥

२८१. एस अगीते जयणा, गीते वि करेंति जुज्जती जं तु[15] ।
विद्देसकरं इहरा, मच्छरिवादो वि[16] फुडरुक्खे[17] ॥

२८२. निग्गमऽसुद्धमुवाएण, वारितं गेण्हते समाउट्टं ।
अधिगरण पडिणिऽणुबद्धमेगागि[18] जढं न सातिज्जा[19] ॥

२८३. पडिणीयम्मि उ भयणा, गिहिम्मि आयरियमादिदुट्ठम्मि[20] ।
संजयपडिणीए पुण, 'न होंति उवसामिते भयणा'[21] ॥

२८४. सो पुण उवसंपज्जे, नाणट्ठा[22] दंसणे चरित्तट्ठा[23] ।
एतेसिं नाणत्तं, वोच्छामि अहाणुपुव्वीए ॥

२८५. वत्तणा[24] संधणा चेव, गहणे सुत्तत्थ-तदुभए[25] ।
वेयावच्चे खमणे, काले 'आवकहादि य'[26] ॥**नि.६२** ॥

---

१. अविउस्सग्गे (ब), विओसग्गे (निभा ६३५३)।
२. णिच्छत्त (ब)।
३. जमिच्छह (निभा ६३५४)।
४. सुत्तं मए (निभा)।
५. एक्कल्लेण (निभा ६३५५)।
६. वीया जयणा (ब)।
७. पडंते (ब)।
८. वी (निभा)।
९. निओएंति (अ, ब)।
१०. जति (निभा ६३५६)।
११. एत्थ अम्ह (अ)।
१२. आडहडं (स), हाडहडं देशीपदमेतत् तत्कालमित्यर्थः (मवृ)।
१३. भवे माय० (अ, निभा ६३५७)।
१४. अणवज्जुयस्स (अ)।
१५. इस गाथा का पूर्वार्ध निभा (६३५८) में इस प्रकार है—
एसा उ अगीयत्थे, जयणा गीते वि जुज्जती जं तु।
१६. य (निभा)।
१७. ०रुक्खा (अ)।
१८. पडिणीएणु० (ब)।
१९. सातिज्जे (अ, स), संगिण्हे (निभा ६३५९)।
२०. उवसामितेवणुवसंते (अ, ब, स)।
२१. ०मिए जयणा (अ), न होति तं खाम भयणा वा (निभा ६३६०)।
२२. नाणट्ठाइ (अ)।
२३. चरित्ते य (मु)।
२४. वर्तनेति अत्र सप्तमीलोपः प्राकृतत्वात् वर्तनायां एवमेव संधनायाम् (मवृ)।
२५. अत्र निमित्तं सप्तमी (मवृ)।
२६. आवकहादीया (अ, स), निभा ६३६१।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८६. दंसण-नाणे सुत्तत्थ-तदुभए वत्तणादि[१] एक्केक्के ।
उपसंपदा चरित्ते, वेयावच्चे य खमणे य[२] ॥

२८७. सुद्धऽपडिच्छण[३] लहुगा, अकरेंते सारणा[४] अणापुच्छा ।
तीसु वि मासो लहुओ, वत्तणादीसु ठाणेसु[५] ॥नि.६३॥

२८८. सारेयव्वो नियमा, उवसंपन्नो सि जं निमित्तं तु ।
तं कुणसु तुमं भंते!, अकरेमाणे विवेगो उ ॥

२८९. अणणुण्णमणुण्णाते[६], देंत पडिच्छंत भंग चउरो उ ।
'भंगतियम्मि वि मासो'[७], दुहओऽणुण्णाएँ सुद्धो उ ॥दारं॥

२९०. एमेव दंसणे वी, वत्तणमादी पदा उ जध नाणे ।
वेयावच्चकरो[८] पुण, इत्तरितो आवकहिओ[९] य[१०] ॥

२९१. तुल्लेसु जो सलद्धी, अन्नस्स व वारएणऽनिच्छंते[११] ।
तुल्लेसु व[१२] आवकही, 'तस्सऽणुमएण च इत्तरिओ'[१३] ॥

२९२. अणणुण्णाते लहुगा, अचियत्तमसाह जोग्गदाणादी[१४] ।
निज्जरमहती हु भवे, तवस्सिमादीण 'करणे वी'[१५] ॥

२९३. आवकही इत्तरिए[१६], इत्तरियं 'विगिट्ठ तहऽविगिट्ठे[१७] य' ।
सगणामंतण[१८] खमणे, अणिच्छमाणं न तु निओए[१९] ॥

२९४. अविकिट्ठ किलम्मंतं[२०], भणंति मा खम करेहि सज्झायं ।
सक्का किलम्मितुं जे, वि[२१] विगिट्ठेणं[२२] तहिं वितरे ॥

२९४/१. बारसविहम्मि वि तवे, सब्भिंतरबाहिरेँ कुसलदिट्ठे ।
न वि अत्थि न वि होही, सज्झायसमं तवोकम्मं[२३] ॥

---

१. वत्तणा य (मु) ।
२. निभा ६३६२ ।
३. ०अपडिच्छण्णे (ब) ।
४. सारणा अत्र विभक्तिलोपः आर्षत्वात् (मवृ) ।
५. निभा ६३६३, चौथा चरण अनुष्टुप् छंद है ।
६. मकारोऽलाक्षणिकः (मवृ), अणणुण्णाऽणुण्णाते (निभा ६३६४) ।
७. भंगतिए मासलहु (निभा) ।
८. ०वच्चाइकरो (ब) ।
९. आवकहाए (मवृ) ।
१०. वा (अ, ब), निभा (६३६५) में इस गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है— सगणामंतण खमणं, अणिच्छमाणं ण उ निओए ॥
११. ०णइच्छंते (निभा ६३६६), अणिच्छंते (ब, स) ।
१२. वि (ब), य (निभा) ।
१३. तस्साणुमते व इत्तरिए (निभा) ।
१४. उग्गदाणादी (स) ।
१५. उ करेंते (निभा ६३६७) ।
१६. इत्तरिते (अ) ।
१७. विकिट्ठ तध विकिट्ठे (अ) ।
१८. ०मंतणा (ब) ।
१९. नियोगो (ब) ।
२०. किलामंतं (निभा ६३६८) ।
२१. x (अ) ।
२२. तिकिट्ठेणं (स) ।
२३. यह गाथा तीनों हस्तप्रतियों में अप्राप्त है । मुद्रित भाष्य की प्रति में इस गाथा के आगे भा. १११ का उल्लेख है । पर यह संख्या गलती से लगी है क्योंकि इससे पूर्व की गाथा में भी १११ का क्रमांक है । इसके अतिरिक्त टीकाकार ने 'यत उक्तं' कहकर इसे उद्धृत किया है तथा इस गाथा की व्याख्या भी नहीं की है । प्रसंगानुसार भी यह भाष्य के क्रम में नहीं जुड़ती । यह दशवैकालिक निर्युक्ति (१६०) की गाथा है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२९५. अण्णपडिच्छण लहुगा, असति[१] गिलाणोवमे 'अडंते य'[२] ।
पडिलेहण-संथारग, पाणग तह 'मत्तगतिगं च'[३] ।।नि.६४ ।।

२९६. दुण्हेगतरे खमणे, अण्ण पडिच्छंतऽसंथरे[४] आणा ।
अप्पत्तिय परितावण[५], सुत्ते हाणिऽन्नहिं[६] वड्मो[७] ।।

२९७. गेलण्णतुल्लगुरुगा, अडंत[८] परितावणा[९] सयंकरणे ।
णेसणगहणागहणे, दुगट्ठ हिंडंत मुच्छा य[१०] ।।

२९८. 'पढमदिणम्मि न पुच्छे'[११], लहुओ मासो उ[१२] बितिय 'गुरुओ य'[१३] ।
ततियम्मि होंति[१४] लहुगा, तिण्हं तु वतिक्कमे[१५] गुरुगा[१६] ।।

२९९. कज्जे भत्तपरिण्णा, गिलाण 'राया व'[१७] धम्मकहि-वादी ।
छम्मासा उक्कोसा, तेसिं तु वतिक्कमे गुरुगा ।।

३००. अन्नेण पडिच्छावे, तस्सऽसति[१८] सयं पडिच्छते रत्तिं[१९] ।
उत्तरवीमंसाए, खिन्नो य[२०] 'निसिं पि'[२१] न पडिच्छे[२२] ।।

३०१. दोहि तिहिं वा दिणेहिं, जइ विज्जति[२३] तो न होति पच्छित्तं ।
तेण[२४] परमणुण्णवणा, कुलादि रण्णो[२५] व दीवेंति[२६] ।।

३०२. आलोयण तह चेव य, मूलुत्तर नवरि[२७] विगडिते[२८] मं[२९] तु ।
इत्थं सारण चोयण, निवेदणं[३०] ते वि एमेव ।।दारं ।।

३०३. एमेव य अवराहे, किं ते न कया तहिं चिय विसोधी ।
अहिकरणादी साहति[३१], गीयत्थो वा तहिं नत्थि ।।

---

१. गुरुग (निभा ६३६९)।
२. अडंतिया (ब)।
३. ०तिगम्मि (निभा)।
४. ०संधरे (अ)।
५. परियावण (अ)।
६. ०अन्नहिं (स), अन्यत्र (मवृ)।
७. वतिमो (निभा ६३७०)।
८. अडंते (अ)।
९. यावणा उ (अ, ब)।
१०. निभा ६३७१।
११. पढमदिणे ण पडिच्छे (अ, स)।
१२. य (ब)।
१३. गुरुतम्मि (अ, स)।
१४. होति (अ, ब)।
१५. अतिक्कमे (मवृ)।
१६. निभा (६३७२) में गाथा का पूर्वार्द्ध इस प्रकार है—
पढमदिणाणापुच्छे, लहुगो गुरुगा य होंति बितियम्मि।
१७. रायाइ (ब), राय (अ, स), रायाए (मवृ), राया य (निभा ६३७३)।
१८. तस्सासति (ब)।
१९. रत्ती (स)।
२०. वा (निभा)।
२१. निसिं व (अ), निशायामपि (मवृ)।
२२. पविसे (निभा ६३७४)।
२३. छिज्जति (स, निभा ६३७५)।
२४. तेनेत्यव्ययं ततः इत्यर्थे (मवृ)।
२५. रण्णा (ब)।
२६. दीवति (ब), दीहिंति (स)।
२७. x (ब)।
२८. विगलिते (अ)।
२९. इमं (मु, निभा ६३७६), छंद की दृष्टि से इमं के स्थान पर मं पाठ स्वीकृत किया है।
३०. निवेयणा (अ)।
३१. कहयती (निभा ६३७७)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०४. नत्थि[१] इहं पडियरगा[२], खुलखेत्त[३] उग्गमवि[४] य पच्छित्तं ।
संकितमादी व पदे, जधक्कमं ते तह विभासा[५] ॥

३०५. दव्वादिचतुरभिग्गह, पसत्थमपसत्थए दुहेक्केक्के ।
अपसत्थे वज्जेउं, 'पसत्थएहिं तु आलोए'[६] ॥नि.६५ ॥

३०६. भग्गघरे कुड्डेसु[७] य, रासीसु य जे दुमा य अमणुण्णा ।
तत्थ न आलोएज्जा, तप्पडिवक्खे दिसा तिण्णि[८] ॥नि.६६ ॥

३०७. अमणुण्णधन्नरासी, अमणुण्णदुमा य होंति दव्वम्मि[९] ।
भग्गघर-रुद्द-ऊसर, पवाय दड्ढादि[१०] खेत्तम्मि ॥

३०८. 'निप्पत्त कंटइल्ले'[११], विज्जुहते[१२] खार-कडुग-दड्ढे य ।
अय-'तउय-तंब'[१३]-सीसग, दव्वे धन्ना य अमणुण्णा[१४] ॥

३०९. पडिकुट्ठेल्लगदिवसे[१५], वज्जेज्जा अट्ठमिं च नवमिं च ।
छट्ठिं च चउत्थिं च, बारसिं दोण्हं पि पक्खाणं[१६] ॥नि.६७ ॥

३१०. संझागतं रविगतं, विड्डेरं[१७] संगहं[१८] विलंबिं च ।
राहुहतं गहभिन्नं, व वज्जए[१९] सत्तनक्खत्ते ॥

३११. संझागतम्मि कलहो, होइ कुभत्तं विलंबिनक्खत्ते[२०] ।
विड्डेरे[२१] परविजयो, आदिच्चगते अनिव्वाणी[२२] ॥

३१२. जं संगहम्मि[२३] कीरति, नक्खत्ते तत्थ वुग्गहो होति ।
राहुहयम्मि य मरणं, गहभिन्ने सोणिउग्गालो[२४] ॥

३१३. तप्पडिवक्खे 'खेत्ते, उच्छुवणे सालि-चेइयघरे वा'[२५] ।
गंभीरसाणुणाए, पयाहिणावत्तउदए य ॥

---

१. न वि य (निभा ६३७८) ।
२. परिय० (अ, निभा) ।
३. ० खेत्तं (स), खुलक्षेत्रं नाम मंदभिक्षं (मवृ) ।
४. उज्जम० (अ) ।
५. विभासे (स) ।
६. आलोयण मो पसत्थेसुं (निभा ६३७९) ।
७. पाठांतरं रुद्देसु (अपा, स, मवृ) ।
८. निभा ६३८० ।
९. x (ब) ।
१०. दड्ढा य (अ), दड्ढा य (ब) निभा ६३८१ ।
११. निपत्त कंटइवेल्ले (ब), निप्पत्तग कंदइले (अ) ।
१२. ०हरे (स) ।
१३. तउए तंबे (अ, मवृ) ।
१४. निभा ६३८२ में इसका उत्तरार्ध इस प्रकार है—
अय - तंब - तउय कयवर, दव्वे धण्णा य अपसत्था
१५. पडिकुव्वेल्लग० (ब), ०दिवस (स) इह इल्लप्रत्ययः प्राकृते स्वार्थे प्रतिकुष्टा इव प्रतिकुष्टेल्लकाः (मवृ) ।
१६. निभा ६३८३ ।
१७. विड्डिरं (ब) ।
१८. संगहं च (ब), सग्गहं (निभा ६३८४) ।
१९. वज्जेए (अ) ।
२०. विलंब० (अ, स) ।
२१. विद्देरे (अ) ।
२२. अणेव्वाणी (ब, निभा ६३८५) ।
२३. सग्गहम्मि (निभा ६३८६) ।
२४. लोहिउ० (ब, स) ।
२५. दव्वे खेत्ते उच्छुवण चेइयघरे वा (निभा ६३८७) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१४. उत्तदिणसेसकाले, उच्चट्ठाणा[१] गहा य भावम्मि ।
पुव्वदिसि[२] उत्तरा वा, चरंतिया जाव नवपुव्वी ॥

३१५. निसेज्ज ऽसति'[३] पडिहारिय, कितिकम्मं काउ पंजलुक्कुडुओ ।
बहुपडिसेवऽरिसासु य, अणुण्णावेउ निसेज्जगतो ॥

३१६. चेयणमचित्तदव्वे[४], 'जणवयमद्धाण होति'[५] खेत्तम्मि ।
'दिण-निसि'[६] सुभिक्ख-दुभिक्खकाले भावम्मि हट्ठितरे[७] ॥नि.६८॥

३१७. लहुयल्हादीजणणं[८], अप्पपरनियत्ति अज्जवं सोही ।
दुक्करकरणं विणओ, निस्सल्लत्तं च सोधिगुणा[९] ।

३१८. आगम-सुतववहारी, आगमतो छव्विहो उ ववहारी ।
केवल-मणोधि-चोद्दस-दस-नवपुव्वी य नायव्वो[१०] ॥नि.६९॥

३१९. पम्हुट्ठे पडिसारण, अप्पडिवज्जंतयं न खलु सारे ।
जइ पडिवज्जति सारे, दुविहऽतियारं[११] पि पच्चक्खी[१२] ॥नि.७०॥

३२०. कप्पपकप्पी[१३] तु सुते, आलोयावेंति ते उ तिक्खुत्तो ।
सरिसत्थमपलिकुंची[१४], 'विसरिसपरिणामतो कुंची'[१५] ॥नि.७१॥

३२१. तिन्नि उ वारा जह दंडियस्स[१६] पलिउंचियम्मि अस्सुवमा ।
सुद्धस्स होति मासो, पलिउंचिते[१७] तं चिमं चण्णं[१८] ॥नि.७२॥

३२२. अत्थुप्पत्ती असरिसनिवेयणे[१९] दंड पच्छ ववहारो ।
इय लोउत्तरियम्मि वि, कुंचियभावं तु दंडेति ॥दारं॥

३२३. आगारेहि 'सरेहि य'[२०], पुव्वावर-वाहताहि[२१] य गिराहि ।
नाउं कुंचियभावं, परोक्खनाणी ववहरंति[२२] ॥नि.७३॥

---

१. उद्धट्ठाणा (निभा ६३८८)।
२. ०दिस (ब, निभा)।
३. ०ज्जासति (ब, निभा ६३८९)।
४. ०दव्वं (ब)।
५. ०वय मग्गे वि होइ (अ, स), ०मग्गे य होति (निभा ६३९०)।
६. णिसिदिण (निभा)।
७. हिट्ठि० (ब), हट्ठेयरे इति सप्तमी तृतीयार्थे (मवृ), इस गाथा के बाद टीका की मुद्रित पुस्तक में जह बालो ... गाथा मिलती है। किंतु तीनों हस्तप्रतियों में यह गाथा नहीं है। निभा (६३९२) में यह गाथा ६३९१ के बाद भाग्य के क्रम में है।
८. ० जणयं (निभा ६३९१)।
९. ब प्रति में इस गाथा का केवल पहला चरण ही मिलता है।
१०. णायव्वा (निभा ६३९३), ब प्रति में इस गाथा का पूर्वार्द्ध नहीं है।
११. ०तिधारिं (अ)।
१२. निभा ६३९४।
१३. ०पकप्पा (निभा ६३९५)।
१४. ०थअपलिउंची (ब, स), ०त्थेऽपलिउंची (निभा)।
१५. असरिस० (अ, स), ०रिस पडिकुंचितं जाणे (निभा)।
१६. डंडीतस्स (स)।
१७. ०उंचइ (अ)।
१८. निभा (६३९६) में इस गाथा का पूर्वार्द्ध इस प्रकार है—
आसेण य दिट्ठंतो, चउव्विहं तिण्णि दंडिएण जहा।
१९. x (ब), विसरिस० (निभा ६३९७)।
२०. x (ब)।
२१. वाहिताहिं (अ), महयाहि (ब)।
२२. निभा ६३९८।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३२४. कुंचिय जोहे[१] मालागारे, मेहे[२] पलिउंचिते तिगट्ठाणा ।
पंचगमा नेयव्वा, बहूहिं उक्खड्डुमड्डाहिं[३] ॥

३२५. बहुएसु एगदाणे, 'रागो एक्केक्कदाण दोसो उ'[४] ।
एवमगीते चोदग, 'गीतम्मि य अजयसेविम्मि'[५] ॥

३२६. जो जत्तिएण रोगो, पसमति तं देति[६] भेसज्जं वेज्जो[७] ।
एवागम-सुतनाणी[८], 'सुज्झति जेणं तयं देंति'[९] ॥

३२७. चोदग मा गद्दभत्ति[१०], कोट्ठारतिगं दुवे य खल्लाडा ।
अद्धाणे सेवितम्मि, सव्वेसिं[११] 'घेत्तु णं[१२] दिण्णं[१३] ॥नि.७४ ॥

३२८. अवि य हु सुत्ते भणियं[१४], सुत्तं विसमं[१५] ति मा भणसु एवं ।
संभवति 'न सो हेऊ'[१६], अत्ता जेणालियं बूया[१७] ॥

३२९. कामं विसमा वत्थू, तुल्ला सोही तथा वि[१८] खलु तेसिं ।
पंचवणि तिपंचखरा, अतुल्लमुल्ला य आहरणा[१९] ॥नि.७५ ॥

३३०. विणिउत्तभंडभंडण, मा भंडह तत्थ एगु सट्ठीए ।
दो तीस तिन्नि[२०] वीसग, चउ पन्नर पंच बारसगे[२१] ॥

३३१. कुसलविभागसरिसओ, गुरू[२२] य साधू य होंति वणिया वा[२३] ।
रासभसमा य मासा, मोल्लं पुण रागदोसा उ[२४] ॥

३३२. वीसुं दिण्णे पुच्छा[२५], दिट्ठंतो तत्थ दंडलतिएण[२६] ।
दंडो रक्खा तेसिं, भयजणणं चेव सेसाणं ॥नि.७६ ॥

३३३. दंडतिगं[२७] तु पुरतिगे, ठवितं पच्चंतपरनिवारोहे ।
भत्तट्ठ तीसतीसं[२८], कुंभग्गह 'आगया जे तु'[२९] ॥

---

१. जोधि (अ), सल्ले (निभा ६३९९) ।
२. मेढि (अ) ।
३. देशीपदमेतत् पुनः पुनः शब्दार्थः (मवृ), भाष्यकृदाह (मवृ) ।
४. रागो दोसो य एगदाणे उ (निभा ६४०१) ।
५. गीए वि अजयसेवेमि (ब) ।
६. देवंति (ब) ।
७. विज्जे (अ) ।
८. मकारस्य लोपः प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
९. तं देंति विसुज्झते जेण (निभा ६४०२) ।
१०. गद्दहेति (अ) ।
११. सव्वेसु वि (निभा ६४००) ।
१२. घेत्तूणं (स) ।
१३. टीका में इस गाथा के लिए संग्रहणीय गाथा का उल्लेख है । यह गाथा हस्तप्रतियों तथा निभा में ३२४ के बाद मिलती है । किन्तु मुद्रित टीका में यह गाथा जो जत्तिएण . . . (३२७) के बाद मिलती है । विषयवस्तु के अनुसार यही क्रम उचित लगता है ।
१४. भणियं च (अ) ।
१५. समं (अ) ।
१६. पसाहेऊ (ब) ।
१७. भावार्थं स्वयमेव भाष्यकृद् वक्ष्यते (मवृ), निभा ६४०३ ।
१८. व (अ, स) ।
१९. ब प्रति में इस गाथा का उत्तरार्ध नहीं है, निभा ६४०४ ।
२०. तिन्न (अ) ।
२१. ब प्रति में यह गाथा नहीं है, निभा ६४०५ ।
२२. गुरुतो (अ, ब) ।
२३. व (स)
२४. निभा ६४०६ ।
२५. पुच्छसि (ब) ।
२६. डंडलइतेण (निभा ६४०७) ।
२७. डंडतियं (स) ।
२८. वीस तीसं (स) ।
२९. पराइ आगमणं (अ, स), मागमो जेत्तुं (निभा ६४०८) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३४. कामं ममेदकज्जं, कयवित्तीएहि[1] कीस भे गहितं ।
एस पमादो तुज्झं[2], दस दस कुंभे दलह[3] दंडं ॥

३३५. तित्थगरा[4] रायाणो, जतिणो दंडा य[5] कायकोट्ठारा[6] ।
असिवादिवुग्गहा पुण, अजय-पमायारुहण[7] दंडो ॥

३३६. 'बहुएहि वि मासेहिं[8], एगो जइ दिज्जती तु पच्छित्तं ।
एवं बहु सेवित्ता, एक्कसि विगडेमु[9] चोदेति ॥दारं ॥

३३७. मा वद एवं एक्कसि, विगडेमो सुबहुए वि सेवित्ता ।
लब्भिसि एवं चोदग !, देंते खल्लाड 'खडुगं वा'[10] ॥

३३८. खल्लाडगम्मि खडुगा, दिन्ना तंबोलियस्स एगेणं ।
सक्कारेत्ता जुयलं[11], दिन्नं बितिएण वोरवितो ॥

३३९. एवं तुमं पि चोदग !, एक्कसि पडिसेविऊण मासेणं ।
मुच्चिहिसी बितियं[12] पुण, 'लब्भसि मूलं तु पच्छित्तं'[13] ॥

३४०. असुहपरिणामजुत्तेण[14], सेविए एगमेग[15] मासो तु ।
दिज्जति 'य बहुसु'[16] एगो, सुहपरिणामो जया[17] सेवे ॥

३४१. दिण्णमदिण्णो दंडो, 'सुह-दुहजणणो'[18] उ दोण्ह वग्गाणं ।
साहूणं दिण्णसुहो, अदिण्णसोक्खो गिहत्थाणं ॥

३४२. उद्धितदंडो साहू, अचिरेण उवेति सासयं[19] ठाणं ।
सोच्चिय[20]ऽणुद्धियदंडो[21], संसारपवट्टओ[22] होति ॥

३४३. उद्धियदंडगिहत्थो, 'असण-वसणविरहितो'[23] दुही होति ।
सोच्चिय[24]ऽणुद्धियदंडो, असण-वसणभोगवं होति ॥

३४४. कसिणारुवणा[25] पढमे, बितिए बहुसो वि सेवितो[26] सरिसा ।
संजोगो पुण ततिए, तत्थंतिमसुत्त[27] वल्ली वा ॥

---

१. ०वित्तीएवि (अ, स) ।
२. तुब्भं (ब, स, निभा ६४०९) ।
३. वहह (निभा) ।
४. तित्थंकर (निभा ६४१०) ।
५. उ (ब, स) ।
६. ०कोठारा (ब) ।
७. ०रुवण (अ) ।
८. बहुकेष्वपि मासेसु सूत्रे तृतीया सप्तम्यर्थे प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
९. ०डेमि (निभा ६४११) ।
१०. खलुयं व (अ, स). यह गाथा ब प्रति में प्राप्त नहीं है, निभा ६४१२ ।
११. जुवलं (स), जुयलं वि (ब), निभा ६४१३ ।
१२. बीयं (अ) ।
१३. लब्भिहिसी छेदमूलं तु पच्छित्तं (निभा ६४१४) ।
१४. ०जुएण (ब) ।
१५. एगएव (अ), एवमेग (ब) ।
१६. बहूसु (स) ।
१७. जतो (स) ।
१८. हित दुह० (निभा ६४१५) ।
१९. सासणं (ब) ।
२०. सो विय (अ, ब) ।
२१. अणुड्डिय० (ब) ।
२२. ०पकड्डओ (अ, स, निभा ६४१६) ०पवड्ढतो (ब) ।
२३. ०वसणमाधिओ (अ), ०वसणरहिओ (निभा ६४१७) ।
२४. ०चिय (ब), ०विय (अ) ।
२५. किसणारु० (ब) ।
२६. सेविता (निभा ६४१८) ।
२७. सूत्रेण गृहीतः विभक्तिलोपोऽत्र प्राकृतत्वात् (मवृ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३४५. जे भिक्खू बहुसो मासियाणि[१] 'सुत्तं विभासियव्वं तु'[२] ।
दोमासिय तेमासिय[३], कयाइ[४] एगुत्तरा वुड्ढी ॥नि.७७ ॥

३४६. उग्घातमणुग्घाते[५], मूलुत्तरदप्पकप्पतो चेव ।
संजोगा कायव्वा, पत्तेगं मीसगा चेव[६] ॥नि.७८ ॥

३४७. एत्थ पडिसेवणाओ, एक्कग-दुग-तिग[७]-चउक्क-पणगेहिं ।
दस[८] दस पंचग एक्कग, अदुव अणेगाउ[९] एयाओ[१०] ॥

३४८. जध[११] मन्ने बहुसो मासियाणि सेवित्तु[१२] वड्डती[१३] उवरिं ।
तह हेट्ठा[१४] परिहायति, दुविहं तिविधं च आमं[१५] ति[१६] ॥

३४९. केण पुण कारणेणं[१७], जिणपण्णत्ताणि काणि पुण ताणि[१८] ।
जिण 'जाणंति उ[१९] ताइं[२०], चोयग पुच्छा बहुं[२१] नाउं ॥

३५०. तिविहं च होति बहुगं, जहन्नगं[२२] मज्झिमं च उक्कोसं ।
जहन्नेण[२३] तिन्नि बहुगा, 'उक्कोसो पंचचुलसीता'[२४] ॥

३५१. ठवणा-संचय-रासी, माणाइ[२५] पभू य कित्तिया[२६] लिद्धा ।
दिट्ठा निसीधनामे, सव्वे वि तहा अणायारा[२७] ॥दारं ॥नि.७९ ॥

३५२. बहुपडिसेवी 'सो विय[२८], 'गीतोऽगीतो वि अपरिणामो य'[२९] ।
अहवा अतिपरिणामो, तप्पच्चयकारणा ठवणा[३०] ॥नि.८० ॥

३५३. एगम्मि णेगदाणे, णेगेसु य एगदाणमेगेगं[३१] ।
जं दिज्जति तं गिण्हति, गीतमगीतो[३२], य परिणामी ॥

---

१. ०याइं (अ, निभा ६४२०)।
२. सेवित्तुं तह चेव (अ)।
३. x (ब)।
४. कया उ (ब), कया य (अ)।
५. ०घाताणुग्धाते (निभा ६४२१)।
६. यह गाथा अ प्रति में नहीं है।
७. x (ब)।
८. दह (अ)।
९. अणेगातो (ब)।
१०. णेयाओ (निभा ६४२२)।
११. जे व (ब)।
१२. सेवितं (अ), सेवितुं (मु)।
१३. वट्टती (ब, स)।
१४. चेट्ठा (अ)।
१५. आमशब्दोऽनुमतौ सम्मतमेतत् (मवृ)।
१६. ती (निभा ६४२३), इस गाथा के बाद निभा (६४२४) में एक अतिरिक्त गाथा मिलती है।
१७. कारणेण य (अ)।
१८. भणिया (स)।
१९. जाणंते (निभा ६४२५)।
२०. ताई (ब)।
२१. बहुशः शब्दो विशेषितेषु सूत्रेषु बहुशब्दोऽस्ति (मवृ)।
२२. जहन्नं (ब)।
२३. छंद की दृष्टि से जहणेण पाठ होना चाहिए।
२४. पंचसयुक्कोस चुलसीता (निभा ६४२६)।
२५. माणाति (ब)।
२६. कतिया (अ), केतिया (स, निभा ६४२७)।
२७. अतीयारा (ब)।
२८. सो या (अ, ब)।
२९. गीईओ विपरिणामे वि (ब), निभा (६४२८) में इसका पूर्वार्द्ध इस प्रकार है—
बहुपडिसेविय सो यावि, अगीओ अवि य अपरिणामो वि।
३०. ठवणं (निभा), स प्रति में ३५२-३५४ तक की तीन गाथाएं अनुपलब्ध हैं।
३१. एगणेगणंगा वा (निभा ६४२९)।
३२. गीय अगीतो (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५४. बहुएसु एगदाणे, सोच्चिय सुद्धो न सेसगा मासा ।
'माऽपरिणामे संका'[1], सफला मासा कता तेणं ॥

३५५. ठवणामेत्तं[2] आरोवणत्ति इति[3] णाउमतिपरीणामो ।
कुज्जा व[4] अतिपसंगं, बहुए[5] सेवित्तु मा विगडे ॥

३५६. ठवणा वीसिग पक्खिग, पंचिग[6] एगाहिया य[7] बोधव्वा[8] ।
आरोवणा वि पक्खिग, पंचिग तह 'पंच एगाहा'[9] ॥

३५७. वीसाएँ अद्धमासं, पक्खे पंचाहमारुहेज्जाहि[10] ।
पंचाहे[11] पंचाहं, एगाहे चेव एगाहं[12] ॥

३५८. ठवणा होति जहन्ना, वीसं राइंदियाणि पुण्णाइं[13] ।
पण्णट्ठं चेव[14] सयं, ठवणा उक्कोसिया होति[15] ॥

३५९. आरोवणा जहन्ना, पन्नरराइंदियाइ[16] पुण्णाइं ।
उक्कोसं सट्ठिसतं[17], दोसु[18] वि पक्खेवगो[19] पंच ॥

३६०. पंचण्हं परिवुड्ढी[20], ओवड्ढी[21] चेव होति पंचण्हं ।
एतेण पमाणेणं, नेयव्वं जाव चरिमं ति[22] ॥

३६१. 'जा ठवणा'[23] उद्दिट्ठा, छम्मासा ऊणिगा[24] भवे ताए ।
आरोवण उक्कोसा, तीसे ठवणाय[25] नायव्वा ॥

३६२. आरोवण[26] उद्दिट्ठा, छम्मासा ऊणगा भवे ताए ।
आरोवणाइ तीसे, ठवणा उक्कोसिया होति[27] ॥

३६३. तीसं ठवणाठाणा, तीसं आरोवणाय ठाणाइं[28] ।
ठवणाणं संवेधो, चत्तारिसया तु[29] पण्णट्ठा[30] ॥

---

१. अपरिणते तु संका (निभा ६४३०) ।
२. ०मेत्त (ब), मात्रशब्दस्तात्पर्यार्थविश्रांतेस्तुल्यवाची (मवृ) ।
३. इय (ब) ।
४. तु (निभा ६४३१)
५. बहुगं (स, निभा) ।
६. पंचय (ब), पंचिया (अ) ।
७. उ (मु) ।
८. णायव्वा (निभा ६४३२) ।
९. x (अ), पंचिया एगा (स), पंचिगेगाहा (निभा ६४३२) ।
१०. ०रुभिज्जा (अ, ब) ।
११. पंचाह (ब) ।
१२. निभा ६४३३ ।
१३. पुन्नाति (ब) ।
१४. चेव य (ब) ।
१५. निभा ६४३४ ।
१६. पन्नरस० (ब) ।
१७. सट्ठिसयं (मु) ।
१८. दोहि (निभा ६४३५) ।
१९. पक्खेवंतो (अ) ।
२०. परिघट्टी (ब), परिवड्ढी (स) ।
२१. ओवट्टी (अ) ।
२२. निभा ६४३६ ।
२३. जाव ठवण (निभा ६४३६), जो ठ० (ब) ।
२४. ऊणगा (ब, स) ।
२५. ठवणाइ (ब) ।
२६. ०वणा (मु) ।
२७. निभा ६४३८ ।
२८. ठाणाति (ब) ।
२९. य (ब) ।
३०. निभा ६४३९ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६४. गच्छुत्तरसंवग्गे, उत्तरहीणम्मि पक्खिवे आदी[1] ।
अंतिमधणमादिजुयं[2], गच्छद्धगुणं[3] तु सव्वधणं[4] ॥

३६५. दो रासी ठावेज्जा[5], रूवं पुण पक्खिवेहिं[6] एगत्तो ।
जत्तो[7] य देति अद्धं, तेण गुणं जाण संकलियं ॥

३६६. आसीता दिवससया, दिवसा पढमाण ठवणरुवणाणं[8] ।
सोधित्तुत्तरभइए, ठाणा दोण्हं पि रूवजुता ॥

३६७. 'ठवणरुवणाण तिण्हं'[9], उत्तरं तु[10] पंच पंच विण्णेया ।
एगुत्तरिया एगा, सव्वावि[11] हवंति अट्ठेव ॥

३६८. तीसा तेत्तीसा वि य, पणतीसा अउणसीय सयमेव ।
एत्ते[12] ठवणाण पदा, एवइया चेव रुवणाणं ॥

३६९. ठवणारोवणदिवसे, माणा उ विसोधइत्तु[13] जं सेसं ।
इच्छितरुवणाय भए, असुज्झमाणे खिवइ[14] झोसं ॥

३७०. 'जेत्तियमेत्तेणं सो'[15], सुद्धं भागं पयच्छती रासी ।
तत्तियमेत्तं पक्खिव, अकसिणरुवणाइ झोसग्गं[16] ॥

३७१. ठवणा दिवसे माणा, विसोधइत्ताण भयह[17] रुवणाए ।
जो छेदं सविसेसो, अकसिणरुवणाएँ सो झोसो ॥

३७२. जत्थ पुण देति सुद्धं, भागं आरोवणा उ सा कसिणा ।
दोण्हं पि गुणय[18] लद्धं, इच्छियरुवणाएँ जदि मासा ॥

३७३. दिवसा पंचहि भइया, दुरूवहीणा उ ते भवे मासा ।
मासा दुरूवसहिता, पंचगुणा ते भवे दिवसा[19] ॥

३७४. ठवणारोवणसहिता, संचयमासा हवंति एवइया ।
कत्तो किं 'गहियं ति'[20] य, ठवणामासे ततो सोधे[21] ॥

३७५. दिवसेहि जइहि मासो, निप्फण्णो भवति सव्वरुवणाणं ।
ततिहि गुणिया उ मासा, ठवणदिणजुता उ छम्मासा ॥

---

१. आदिं (ब, स)।
२. ०जुयगं (अ, ब)।
३. गच्छद्धगणं (ब)।
४. करणगाथामाह (मवृ), निभा ६४४०।
५. उ टविज्जा (मु), भावेज्जा (स)।
६. ०वाहि (ब, स)।
७. जुत्तो (निभा ६४४१, ६४४७)।
८. ०ठवणाणं (अ)।
९. ०ठवणाणं तिण्हं तु (ब, स)।
१०. x (ब, स)।
११. सव्वादि (अ)।
१२. एतेण (अ)।
१३. विसोधयंतु (ब)।
१४. खिवे (अ, स)।
१५. ०मेत्तेण वि सो (अ), ०मेत्तेण य सो (स)।
१६. कोसग्गं (ब)।
१७. भतित (अ, स)।
१८. गुणसु (ब)।
१९. यह गाथा अ और स प्रति में नहीं है। इस गाथा का आगे गाथा ३७७ में पुनरावर्तन हुआ है।
२०. गहिय त्ति (ब)।
२१. सोहे (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३७६. रुवणाए[1] जइ मासा, तइभागं तं करे तिपंचगुणं ।
सेसं च पंचगुणियं, ठवणादिवसा जुता[2] दिवसा[3] ॥

३७७. दिवसा पंचहिं भइता, दुरूवहीणा उ[4] ते[5] भवे मासा ।
मासा दुरूवसहिता, पंचगुणा ते भवे दिवसा[6] ॥

३७८. जत्थ उ दुरूवहीणं[7], न होज्ज भागं च पंचहि न देज्जा ।
'तहि ठवणरुवणमासो, एगे तु दिणा'[8] तु ते चेव ॥

३७९. एक्कादिया[9] तु दिवसा, नायव्वा जाव होंति चउदसओ[10] ।
एकातो मासातो, निप्फण्णा परतो[11] दुगहीणा ॥

३८०. जइ वा दुरूवहीणे, कतम्मि होज्जा[12] तहिं[13] तु आगासं ।
तत्थ वि एगो मासो, दिवसा ते चेव दोण्हं पि ॥

३८१. उक्कोसारुवणाणं, मासा जे होंति करणनिद्दिट्ठा ।
ते ठवणामासजुता[14], संचयमासा उ सव्वेसिं ॥नि. ८१ ॥

३८२. पढमा ठवणा वीसा, पढमा आरोवणा भवे[15] पक्खे ।
तेरसहिं मासेहिं, 'पंच उ'[16] राइंदिया झोसो[17] ॥

३८३. पढमा ठवणा वीसा, बितिया आरोवणा भवे वीसा ।
अट्ठारसमासेहिं[18], एसा पढमा भवे कसिणा[19] ॥

३८४. पढमा ठवणा वीसा, ततिया आरोवणा उ पणुवीसा[20] ।
तेवीसा मासेहिं, पक्खो तु तहिं भवे झोसो[21] ॥

३८५. एवं एता गमिता, गाहाओ[22] होंति आणुपुव्वीए ।
एतेण कमेण भवे, चत्तारिसता उ पण्णट्ठा[23] ॥

३८६. तेत्तीसं ठवणपदा, तेत्तीसारोवणाय ठाणाइं ।
ठवणाणं संवेहो, पंचेव 'सया तु[24] एगट्ठा[25] ॥

---

१. रुवणाई (ब) ।
२. जुत्ता (अ) ।
३. यह गाथा ब प्रति में नहीं है ।
४. य (अ) ।
५. वे (ब) ।
६. यह गाथा पुनरुक्त हुई है । देखें गा. ३७३, विषयवस्तु की दृष्टि से यह यहां भी संगत है ।
७. ०हीणा (अ, ब) ।
८. ०तहि तत्त न रुवणामासो एगो दिणा (अ) ।
९. ०दीया (मु) ।
१०. चोद्दसओ (अ) ।
११. परतो य (ब) ।
१२. होज्जा व (ब) ।
१३. जहिं (ब) ।
१४. ठवणमासजुत्ता (अ, स) ।
१५. x (अ) ।
१६. पंचमयं (ब) ।
१७. निभा ६४४३ ।
१८. अट्ठारसहिं मासेहिं (अ, स) ।
१९. निभा ६४४४ ।
२०. पण ० (स) ।
२१. निभा ६४४५ ।
२२. गाहातो (ब) ।
२३. निभा ६४४६ ।
२४. सयाए (ब) ।
२५. निभा ६४४८ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८६/१ ठवणारोवण वि जुया, छम्मासा पंचभागभइया जे ।
रूवजुया ठवणपया, तिसु चरिमा देसभागेक्को[१] ॥

३८७. पढमा ठवणा पक्खो, पढमा[२] आरोवणा भवे पंच[३] ।
चोत्तीसामासेहिं, एसा पढमा भवे कसिणा[४] ॥

३८८. पढमा ठवणा पक्खो, बितिया आरोवणा भवे दस उ ।
अट्ठारसमासेहिं[५], पंच य[६] राइंदिया झोसो[७] ॥

३८९. पढमा ठवणा पक्खो, ततिया आरोवणा भवे पक्खो ।
बारसहिं मासेहिं, एसा बितिया भवे कसिणा[८] ॥

३९०. एवं एता गमिता, गाहाओ होंति आणुपुव्वीए[९] ।
एतेण[१०] कमेण भवे, पंचेव सता उ[११] एगट्ठा[१२] ॥

३९१. पणतीसं ठवणपदा, पणतीसारोवणाइ ठाणाइं ।
ठवणाणं संवेधो, छच्चेव सता भवे तीसा[१३] ॥

३९२. पढमा ठवणा पंच य[१४], पढमा आरोवणा भवे पंच ।
छत्तीसामासेहिं, एसा पढमा भवे कसिणा[१५] ॥

३९३. पढमा ठवणा 'पंच य'[१६], बितिया आरोवणा भवे दस उ ।
एगूणवीसमासेहिं, पंच तु[१७] राइंदिया झोसो ॥

३९४. पढमा ठवणा 'पंच य'[१८], ततिया आरोवणा भवे पक्खो ।
तेरसहिं[१९] मासेहिं[२०], पंच तु राइंदिया झोसो ॥

३९५. एवं एता गमिता, गाहाओ होंति आणुपुव्वीए ।
एतेण कमेण भवे, छच्चेव सयाइ तीसाइं[२१] ॥

३९६. अउणासीतं[२२] ठवणाण, सतं[२३] 'आरोवणा वि'[२४] तह चेव ।
सोलस चेव सहस्सा, दसुत्तरसयं च संवेधो ॥

---

१. यह गाथा सभी हस्तप्रतियों में अप्राप्त है। इसकी व्याख्या टीकाकार ने की है। टीकाकार इस गाथा के पूर्व लिखते हैं– 'गच्छानयनाय पूर्वसूरिप्रदर्शितेयं करणगाथा' इस वाक्य से स्पष्ट है कि यह भाष्यकार से पूर्व किसी आचार्य द्वारा लिखी गई है तथा प्रसंगवश इसे उद्धृत कर दिया गया है। निशीथभाष्य में इस क्रम में यह गाथा नहीं मिलती है।
२. तइया (ब)।
३. पक्खो (ब)।
४. निभा ६४४९।
५. अट्ठारसहिं मा० (अ, निभा ६४५०)।
६. उ (ब, स)।
७. कोसो (अ)।
८. निभा ६४५१।
९. अणुपु० (ब)।
१०. एए तेण (अ)।
११. x (ब)।
१२. निभा ६४५२।
१३. निभा ६४५३।
१४. उ (ब)।
१५. निभा ६४५४।
१६. पंचा (निभा ६४५५)।
१७. एवं उ (ब)।
१८. पंच उ (ब), पंचा (निभा ६४५६)।
१९. तेरसएहिं (ब)।
२०. x (ब)।
२१. निभा ६४५७।
२२. ०णातीसं (अ)।
२३. संति (अ)।
२४. ०वणाण (निभा ६४५८)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३९७. पढमा ठवणा एक्को, 'पढमा आरोवणा भवे एक्को'[१] ।
आसीतं[२] माससतं, एसा पढमा भवे कसिणा[३] ॥

३९८. पढमा ठवणा एक्को, बितिया आरोवणा भवे दोन्नि ।
एक्कानउतिमासेहिं[४], एक्को उ तहिं भवे झोसो[५] ॥

३९९. पढमा ठवणा एक्को, ततिया आरोवणा भवे तिन्नि ।
एगट्ठीमासेहिं[६], एक्को उ तहिं भवे झोसो ॥

४००. एवं खलु गमिताणं, गाहाणं होंति सोलससहस्सा ।
सतमेगं च दसहियं[७], नेयव्वं[८] आणुपुव्वीए[९] ॥

४०१. असमाहीठाणा[१०] खलु, सबला य परीसहा य मोहम्मि ।
पलितोवम - सागरोवम, परमाणु ततो असंखेज्जा[११] ॥दारं ॥**नि.८२** ॥

४०२. बारस अट्ठग छक्कग, माणं भणितं जिणेहि सोधिकरं ।
तेण परं जे मासा, साहण्णंता[१२] परिसडंति[१३] ॥**नि.८३** ॥

४०३. केवल-मणपज्जवनाणिणो य तत्तो य ओहिनाणजिणा ।
चोद्दस-दस-नवपुव्वी, 'कप्पधर पकप्पधारी य'[१४] ॥**नि.८४** ॥

४०४. 'घेप्पंति च सद्देणं'[१५], निज्जुत्ती-सुत्त-पेढियधरा य ।
आणा-धारण-जीते, य होंति पभुणो उ[१६] पच्छित्ते ॥दारं ॥

४०५. अणुघातियमासाणं[१७], दो चेव सता हवंति बावण्णा ।
तिण्णि सया बत्तीसा, होंति य उग्घातियाणं[१८] पि ॥**नि.८५** ॥

४०६. पंचसता चुलसीता[१९], सव्वेसिं[२०] मासियाण बोधव्वा ।
तेण परं वोच्छामी[२१], चाउम्मासाण[२२] संखेवं[२३] ॥

४०७. छच्चसता चोयाला, चाउम्मासाण[२४] होंतऽणुग्घाया[२५] ।
सत्त सया चउवीसा, चाउम्मासाण उग्घाता ॥

---

१. x (अ) ।
२. आसीया (स, ब) ।
३. निभा ६४५९ ।
४. एगानेउईमा०(ब) ।
५. निभा ६४६० ।
६. इगसट्ठीमा० (निभा ६४६१) ।
७. दससहियं (अ) ।
८. नायव्वं (ब, मु) ।
९. आणुपुव्वेए (ब), निभा ६४६२ ।
१०. x (अ) ।
११. निभा ६४६३ ।
१२. संभहण्णंता (निभा ६४६६) ।
१३. ०सडिंति (ब) ।
१४. कप्पवर पकप्पवर चेव (अ), निभा ६४६७ ।
१५. अन्ना वि य आएसा (अ, स) ।
१६. य (निभा ६४६८) ।
१७. अणुग्घाइमा० (ब, निभा ६४६९) ।
१८. उवग्घा० (ब) ।
१९. चुलुसीया (ब) ।
२०. सव्वेसिं य स (अ), सव्वे य (स) ।
२१. वोच्छामि (ब) ।
२२. चाउरमा० (ब) ।
२३. निभा ६४७० ।
२४. ०म्मासा य (निभा ६४७१) ।
२५. अणुग्घाया इत्यत्र षष्ठ्यर्थे प्रथमा प्राकृतत्वात् (मवृ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४०८. तेरससतअट्ठट्ठा[१], चाउम्मासाण होंति सव्वेसिं[२] ।
तेण परं वोच्छामी, सव्वसमासेण संखेवं[३] ॥

४०९. नवयसता[४] 'य सहस्सं, ठाणाणं'[५] पडिवत्तिओ[६] ।
'बावण्णा ठाणाइं'[७], सत्तरि आरोवणा कसिणा ॥

४१०. सव्वेसिं ठवणाणं, उक्कोसारोवणा भवे कसिणा ।
सेसा चत्ता[८] कसिणा, ता खलु नियमा अणुक्कोसा[९] ॥

४११. वीसाए तू 'वीसा, चत्त असीया'[१०] य तिण्णि कसिणाओ ।
तीसाएँ पक्ख पणवीस[११], तीस पण्णास[१२] पणसतरी[१३] ॥

४१२. चत्ताए वीस पणतीस[१४], सत्तरी चेव तिण्णि कसिणाओ ।
पणयालाए पक्खो, पणयाला चेव दो कसिणा[१५] ॥

४१३. पण्णाए पण्णट्ठी[१६], पणपण्णाए य[१७] पण्णवीसा य[१८] ।
सट्ठिठवणाएँ पक्खो, वीसा तीसा य चत्ता य[१९] ॥

४१४. सयरीए[२०] पणपण्णा, तत्तो पण्णत्तरीएँ 'पक्ख पणतीसा'[२१] ।
असतीए[२२] ठवणाए[२३], वीसा पणुवीस पण्णासा[२४] ॥

४१५. नउतीय पक्ख तीसा[२५], पणताला चेव तिण्णि कसिणाओ ।
सतियाएँ[२६] वीस चत्ता, पंचुत्तर[२७] पक्ख पणवीसा[२८] ॥

४१६. दस्सुत्तरसतियाए[२९], पणतीसा वीस उत्तरे पक्खो ।
वीसा[३०] तीसा य तधा, कसिणाओ तिण्णि 'बीए य'[३१] ॥

---

१. तेरसय अट्ठसट्ठा (ब)।
२. सव्वेहिं (स)।
३. निभा ६४७२।
४. नवसयत्ता (अ)।
५. ०स्सट्ठाणाणं (ब), ०सहस्सं व ठाणाणं (स)।
६. ०वत्तिओ होंति (मु)।
७. बावन्नट्ठा० (निभा ६४७३), गाथा के द्वितीय चरण में अनुष्टुप छंद है।
८. चत्ता य (अ)।
९. निभा ६४७४।
१०. वीसं चत्तमसीती (निभा ६४७५), ०चत्त वसीती (स)।
११. पणु० (अ, निभा)।
१२. पण्णा य (अ)।
१३. पण्णसयरी (अ)।
१४. पणुवीस (अ, स)।
१५. निभा ६४७६, ४१०-४१३ तक की गाथाएं ब प्रति में नहीं हैं।
१६. पन्नट्ठा (अ)।
१७. उ (अ, निभा ६४७७)।
१८. उ (अ, निभा)।
१९. x (ब)।
२०. सत्तरीए (अ, स)।
२१. पण्णरस पणुतीसा (अ, ब, स)।
२२. असीतेण (ब), असीतिए (अ)।
२३. x (ब)।
२४. पण्णा य (अ, ब), निभा (६४७८) में कुछ शाब्दिक अंतर के साथ निम्न गाथा मिलती है—
सयरीए पणपण्णा, तत्तो पणसत्तरी य पन्नरसा।
पणतीसा असितीए, वीसा पणुवीस पण्णा य ॥
२५. तीया (अ)।
२६. सति आयाए (ब)।
२७. ०त्तरे (ब)।
२८. पणु० (अ, निभा ६४७९)।
२९. दस उत्तर० (निभा ६४८०)।
३०. तीसा (अ)।
३१. बीए वा (स), वीसऽहिए (निभा)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१७. तीसुत्तरपणवीसा, पणतीसा पक्खिया भवे कसिणा ।
'चत्तालीसा वीसा'[1], पण्णासं[2] पक्खिया कसिणा[3] ॥

४१८. सव्वासिं ठवणाणं, एत्तो सामण्णलक्खणं वोच्छं ।
मासग्गे झोसग्गे, हीणाहीणे य गहणे य[4] ॥

४१९. 'जति मि भवे आरोवण'[5], ततिभागं[6] तं करे ति-पंचगुणं ।
सेसं पंचहि गुणिए[7], ठवणादिजुता उ छम्मासा[8] ॥

४२०. जति मि भवे आरुवणा, ततिभागं तस्स 'पण्णरसहि गुणे'[9] ।
ठवणारोवणसहिता, छम्मासा होंति नायव्वा[10] ॥

४२१. जेण तु पदेण गुणिता, होऊणं सो न होति गुणकारो ।
तस्सुवरिं जेण गुणे, होति समो सो हु[11] गुणकारो ॥

४२२. जतिहि[12] गुणे आरोवण, ठवणाजुत्तो[13] हवंति छम्मासा ।
तावतियारुवणाओ, हवंति सरिसाऽभिलावाओ ॥

४२३. ठवणारोवणमासे[14], नाऊणं तो[15] भणाहि मासग्गं ।
जेण[16] समं तं कसिणं, जेणऽहियं[17] तं च झोसग्गं ॥

४२४. जत्थ उ दुरूवहीणा, न होंति तत्थ उ भवंति साभावी ।
'एगादी जा'[18] चोद्दस, एक्कातो सेस[19] दुगहीणा[20] ॥

४२५. 'उवरिं तु'[21] पंचभइए, 'जे सेसा तत्थ केइ'[22] दिवसा उ ।
ते सव्वे एक्काओ, मासाओ होंति नायव्वा ॥

४२६. होति समे समगहणं, तह वि य पडिसेवणा उ नाऊणं ।
हीणं वा 'अहियं वा'[23], सव्वत्थ समं च[24] गेण्हेज्जा[25] ॥

---

१. चत्ताले इगवीसा (निभा), चत्ताले वीसा उ (ब)।
२. ०ण्णासे (ब, निभा ६४८१)।
३. इस गाथा के बाद निभा (६४८२) में निम्न गाथा अतिरिक्त मिलती है। टीका में इस गाथा की संक्षिप्त व्याख्या मिलती है किंतु हस्तप्रतियों तथा टीका की मुद्रित प्रति में यह गाथा नहीं मिलती—
   वीसिगठवणाए तु, एयाओ हवंति सत्तरी कसिणा।
   सेसाण वि जा जत्तिय, नाऊणं ता भणिज्जाहि ॥
४. निभा ६४८३।
५. आरुवणा जति मासा (निभा ६४८४)।
६. ततियभंगं (ब)।
७. गुणायए (ब), गुणाए (अ, स)।
८. ४२० से ४२३ तक की गाथाएं ब प्रति में नहीं है।
९. पणरसहिं गुणए (अ)।
१०. यह गाथा स प्रति में नहीं है, निभा ६४८५।
११. तु (निभा ६४८६)।
१२. जईह (स)।
१३. ठवणाए जुता (निभा ६४८७)।
१४. ०रोवण दिवसे (निभा ६४८८)।
१५. ता (अ)।
१६. जं च (निभा)।
१७. ०ठियं (स)।
१८. ०दीया (अ)।
१९. जाव (स)।
२०. निभा ६४८९।
२१. उवरिंसु (अ)।
२२. जे सेसा केइ तत्थ (निभा ६४९०), जति सेसा० (अ)।
२३. x (ब)।
२४. वा (ब)।
२५. निभा ६४९१।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२७. विसमा आरुवणाओ[१], विसमं गहणं तु होति नायव्वं ।
सरिसे वि[२] सेवितम्मी, जध झोसो तध खलु विसुद्धो[३] ॥

४२८. एवं खलु ठवणातो[४], आरुवणाओ[५], विसेसतो[६] होंति ।
ताहि गुणा तावइया, नायव्व तहेव झोसा[७] य ॥

४२९. 'कसिणा आरुवणाए'[८], समगहणं 'होति तेसु'[९] मासेसु ।
'आरुवणा अकसिणाय'[१०], विसमं झोसो 'जधा सुज्झे'[११] ॥

४२९/१ जइ इच्छसि नाऊणं, ठवणारोवण जहाहि मासेहिं ।
गहियं तद्दिवसेहिं, तम्मासेहिं हरे भागं[१२] ॥

४३०. एवं तु समासेणं, भणियं[१३] सामण्णलक्खणं[१४] बीयं ।
एतेण लक्खणेणं, 'झोसेतव्वा व'[१५] सव्वाओ ॥दारं ॥

४३१. कसिणाऽकसिणा एता, सिद्धा उ भवे पकप्पनामम्मि[१६] ।
चउरो अतिक्कमादी, सिद्धा[१७] तत्थेव अज्झयणे ॥

४३२. अतिक्कमे वतिक्कमे, चेव अतियारे तधा अणायारे ।
गुरुओ[१८] य[१९] अतीयारो, गुरुयतरागो[२०] अणायारो ॥

४३३. तत्थ भवे न तु सुत्ते, अतिक्कमादी तु वण्णिता केई[२१] ।
चोदग सुत्ते सुत्ते, अतिक्कमादी उ जोएज्जा ॥

४३४. सव्वे वि य पच्छित्ता, जे सुत्ते ते पडुच्चऽणायारं ।
थेराण भवे कप्पे, जिणकप्पे चतुसु वि पदेसु[२२] ॥

४३५. निसीध[२३] नवमा पुव्वा, पच्चक्खाणस्स ततियवत्थूओ ।
आयारनामधेज्जा, वीसतिमे[२४] पाहुडच्छेदा[२५] ॥दारं ॥नि.८६ ॥

---

१. आरोवणाए (स, निभा ६४९२)।
२. व (अ)।
३. विसुज्झो (स), विसुज्झे (निभा)।
४. ०णाउ (अ)।
५. x (अ)।
६. समासओ (निभा ६४९३)।
७. जोसा (ब) सर्वत्र।
८. कसिणाए रुवणाए (निभा ६४९४)।
९. ते तेसु (अ), तेसु होइ (निभा)।
१०. ०वण अकसिणाए (निभा)।
११. जह विसुज्झे (अ)।
१२. यह गाथा हस्तप्रतियों में नहीं मिलती है। टीका में यह गाथा भाष्यगाथा के क्रम में व्याख्यात है। किन्तु यह करणगाथा के रूप में किसी अन्य ग्रन्थ से उद्धृत की गई प्रतीत होती है। निशीथ भाष्य में इस गाथा को भाष्यगाथा के साथ न जोड़कर उद्धृत गाथा के रूप में रखा है।
१३. भन्नियं (ब)।
१४. ०खणे (ब)।
१५. झोसेयव्वाओ (स, निभा ६४९५)।
१६. ०नामंसि (ब)।
१७. सुद्धा (निभा ६४९६)।
१८. असतो (ब)।
१९. उ (अ, स)।
२०. गुरुगतरो उ (निभा ६४९७)।
२१. केति (अ, ब, निभा ६४९८)।
२२. निभा ६४९९।
२३. निसीहं (ब)।
२४. वीसतिमा (ब)।
२५. निभा ६५००।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४३६. पत्तेयं पत्तेयं, पदे पदे भासिऊण अवराधे ।
ते केण कारणेणं, दोसा एगत्तमावन्ना[1] ॥नि.८७॥

४३७. जिणचोद्दसजातीए, आलोयणदुब्बले य आयरिए ।
एतेण कारणेणं, दोसा एगत्तमावन्ना[2] ॥नि.८८॥

४३८. ‘घतकुडगो उ’[3] जिणस्सा[4], चोद्दसपुव्विस्स[5] नालिया होति ।
दव्वे एगमणेगे, निसज्ज एगा अणेगा य ॥नि. ८९॥

४३९. उप्पत्ती[6] रोगाणं, तस्समणे[7] ओसधे[8] य विब्भंगी ।
नाउं तिविधामयिणं[9], देंति तधा ओसधगणं तु[10] ॥

४४०. एक्केणेक्को[11] छिज्जति, एगेण[12] अणेग णेगहिं एक्को ।
णेगेहिं पि अणेगे[13], पडिसेवा एव मासेहिं ॥

४४१. एक्कोसहेण छिज्जंति[14], केइ कुविता य[15] तिण्णि वातादी ।
बहुएहिं छिज्जंती[16], बहूहि[17] एक्केक्कतो वावि ॥

४४२. विब्भंगी व[18] जिणा खलु, रोगी साहू य[19] रोग अवराहा ।
सोधी य ओसहाइं[20], तीए जिणा उ वि सोहंति[21] ॥दारं॥

४४३. एसेव य दिट्ठंतो, विब्भंगिकतेहि[22] वेज्जसत्थेहिं ।
भिसजा करेंति किरियं, सोहेंति तधेव पुव्वधरा[23] ॥

४४४. नालीय परूवणता, जह तीय गतो उ नज्जते कालो ।
तध पुव्वधरा भावं, ‘जाणंति विसुज्झए[24] जेणं ॥दारं॥

४४५. मास-चउमासिएहिं, बहूहि वेगं[25] तु दिज्जते सरिसं ।
असणादी दव्वाओ, विसरिसवत्थूसु[26] जं गुरुगं ॥दारं॥

---

१. मेगत्त० (ब, निभा ६५०१)।
२. यह गाथा अ प्रति में नहीं है, निभा ६५०२।
३. ०कुडवो य (अ, निभा ६५०३)।
४. जिणस्स (स)।
५. चोदस० (अ)।
६. उप्पत्ति (अ)।
७. तस्स कम्मे (ब)।
८. ओसधि (अ)।
९. ०मइणं (ब)।
१०. निभा ६५०४।
११. एगेणेगो (निभा ६५०५)।
१२. x (अ)।
१३. तेणेगा (ब)।
१४. किज्जंति (अ), भिज्जंति (ब)।
१५. उ (स)।
१६. वि छिज्जंति (निभा)।
१७. बहुएहि (अ, निभा ६५०६)।
१८. वा (ब), वि (स)।
१९. उ (ब, स)।
२०. उसहाति (ब)
२१. निभा (६५०७) में इस गाथा के स्थान पर निम्न गाथा मिलती है—
धण्णंतरितुल्लो जिणो, णायव्वो आतुरोवमो साहू।
रोगा इव अवराहा, ओसहसरिसा य पच्छित्ता॥
२२. विब्भंगगएहिं (ब)।
२३. निभा ६५०८।
२४. जाणंती सुज्झते (निभा ६५०९)।
२५. एगं (निभा ६५१०)।
२६. विसरस० (ब), ०वत्थूओ (निभा)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४४६. अगारीय[१] दिट्ठंतो, एगमणेगे 'य ते य'[२] अवराधा ।
भंडी चउक्कभंगो, सामिय[३] पत्ते य तेणम्मि[४] ॥

४४७. णीसज्ज[५] वियडणाए[६], एगमणेगे य होति चउभंगो[७] ।
वीसरि उस्सण्णपदे, बिति-तति चरिमे[८] सिया दोवि ॥

४४८. गावी[९] पीता[१०] 'वासी, य'[११] हारिता[१२] भायणं च ते भिन्नं ।
अज्जेव[१३] ममं सुहयं, करेहि[१४] पडओ वि ते नट्ठो[१५] ॥

४४९. एगावराहदंडे, अण्णे य[१६] कहेतऽगारि[१७] हम्मंती ।
एवं णेगपदेसु वि, दंडो[१८] लोगुत्तरे एगो ॥

४५०. णेगासु चोरियासु[१९], मारणदंडो न सेसगा दंडा ।
एवं णेगपदेसु वि, एक्को दंडो उ न[२०] विरुद्धो ॥दारं ॥

४५१. संघयणं जध सगडं, धिती उ 'धोज्जेहि होंति उवणीया'[२१] ।
बिय तिय चरिमे भंगे, तं दिज्जति[२२] जं तरति वोढुं ॥दारं ॥

४५२. निवमरण मूलदेवो[२३], 'आसऽहिवासे व'[२४] पट्ठि न तु दंडो ।
'संकप्पिय गुरुदंडो, मुच्चति'[२५] जं वा तरति वोढुं ॥दारं ॥

४५२/१ एगत्तं दोसाणं, दिट्ठं कम्हा उ अन्नमन्नेहिं ।
मासेहिं[२६] तो घेत्तुं, दिज्जति एगं तु पच्छित्तं[२७] ॥

४५३. चोदग पुरिसा दुविधा, 'गीताऽगीत-परिणामि इतरे य'[२८] ।
दोण्ह वि पच्चयकरणं, सव्वे सफला कता मासा ॥नि.९० ॥

---

१. अगारीए य (ब), आगारीय य (स), आगारिय (निभा ६५११) ।
२. ण तेण (अ), य तेण (ब) ।
३. सामी (ब) ।
४. ०म्मि (स) ।
५. णिसज्जाय (अ), निसेज्जा य (निभा ६५१२) ।
६. विगडणं (अ) ।
७. ०भंगी (ब), इह स्त्रीत्वे पुंस्त्वम् प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
८. चरमे (ब) ।
९. गोवी (ब) ।
१०. विहिया (अ), पिता (स) ।
११. वासिया (ब) ।
१२. धारिता (अ, स) ।
१३. अज्जे वि (अ) ।
१४. करउ (ब) ।
१५. दंडो (अ, स), हरिओ (निभा ६५१४) निभा में ४४८ और ४४९ की गाथा में क्रमव्यत्यय है ।
१६. x (अ), वि (निभा ६५१३) ।
१७. कधिय अगा० (अ), कहेह गारि (स) ।
१८. डंडो (स) ।
१९. ०यासू (निभा ६५१५) ।
२०. स (स) ।
२१. धुज्जेहि होति उवणीतो (स, निभा ६५१६) ।
२२. विज्जति (निभा) ।
२३. देवमूलो (अ) ।
२४. आसाहिवासा य (ब), आसऽहिवासे य (निभा ६५१७) ।
२५. x (अ), ०मुंचति (निभा) ।
२६. x (अ) ।
२७. यह गाथा टीका की मुद्रित पुस्तक में भाष्य गाथा के क्रम में नहीं है । किन्तु टीका में संक्षिप्त व्याख्या है । सभी हस्तप्रतियों में यह गाथा मिलती है । यह गाथा उपसंहारात्मक है । ऐसा संभव लगता है कि बाद के आचार्यों ने विषय की स्पष्टता के लिए इस गाथा को बाद में जोड़ दिया हो । निशीथ भाष्य में भी इस क्रम में यह गाथा नहीं मिलती है ।
२८. वणिए मरुए णिहीण दिट्ठंतो (निभा ६५१८) ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

४५४. वणिमरुगनिही य पुणो, दिट्ठंता तत्थ होंति कायव्वा[1] ।
गीतत्थमगीताण य, उवणयणं तेहि कायव्वं[2] ॥नि.९१॥

४५५. वीसं वीसं[3] भंडी[4], वणिमरुसव्वा य तुल्लभंडीओ ।
'वीसतिभागं सुंकं'[5], मरुगसरिच्छो इहमगीतो[6] ॥

४५६. अहवा वणिमरुगेण य, निहिलभऽनिवेदिते[7] वणियदंडो ।
मरुए पूयविसज्जण, इय कज्जमकज्ज जतमजते ॥

४५७. मरुगसमाणो उ गुरू, पूतिज्जति मुच्चती य 'सव्वं से'[8] ।
साधू वणिओ व जधा, वाहिज्जति सव्वपच्छित्तं ॥

४५८. अधवा महानिहिम्मी[9], जो उवयारो स एव[10] थोवे वि ।
विणयादुवयारो[11] पुण, 'जो छम्मासे स'[12] मासे वि ॥

४५९. सुबहूहि वि मासेहिं, छम्मासाणं[13] परं न दातव्वं ।
अविकोवितस्स एवं, विकोविए अन्नहा होति ॥

४६०. सुबहूहि वि मासेहिं, 'छेदो मूलं तहिं[14] न दातव्वं ।
अविकोवितस्स एवं, विकोविते अन्नहा होति ॥

४६१. गीतो विकोविदो खलु, कतपच्छित्तो सिया अगीतो वि ।
छम्मासिय 'पट्ठवणाय तस्स'[15] सेसाण पक्खेवो ॥

४६२. 'मूलऽतिचारे चेतं'[16], पच्छित्तं होति उत्तरेहिं वा ।
तम्हा खलु मूलगुणे, नऽतिक्कमे उत्तरगुणे वा ॥

४६३. मूलव्वयातियारा, जदऽसुद्धा[17] चरणभंसगा होंति ।
उत्तरगुणातियारा, 'जिणसासण कीस'[18] पडिकुट्ठा[19] ॥

४६४. उत्तरगुणातियारा, जदसुद्धा चरणभंसगा होंति ।
मूलव्वयातियारा, जिणसासण कीस पडिकुट्ठा[20] ॥

४६५. मूलगुण उत्तरगुणा, जम्हा भंसंति[21] चरणसेढीतो ।
तम्हा जिणेहि दोण्णि[22] वि, पडिसिद्धा सव्वसाहूणं[23] ॥

---

१. णाय० (स)।
२. ४५४ से ४५९ तक की गाथाओं में निशीथ भाष्य में क्रमव्यत्यय है। विषय की क्रमबद्धता की दृष्टि से व्यवहार भाष्य का क्रम संगत प्रतीत होता है।
३. x (अ)।
४. भंडा (अ, स)।
५. वीसतिभाओ सुक्कं (निभा ६५२१)।
६. ०मतीगतो (ब), इय अगीओ (निभा)।
७. ०लंभणिवेदणे (निभा ६५२२)।
८. ० से सव्वं (निभा ६५१९, ६५२३)।
९. ० निहिम्मि (अ, ब), ०निहिम्मि य (स)।
१०. चेव (निभा ६५२६)।
११. विणियातोपयारो (अ)।
१२. छम्मासे तहेव (निभा)।
१३. छण्हं मासाण (निभा ६५२०)।
१४. छण्हं मासाण परं (निभा ६५२४)।
१५. पट्ठवणा एतस्स (निभा ६५२५)।
१६. ०चारेहिंतो (निभा ६५२७)।
१७. x (अ)।
१८. ०सणे किं (ब, निभा)।
१९. ०क्कुट्ठा (निभा ६५२८)।
२०. पडिक्कुट्ठा (निभा ६५२९)।
२१. भासंति (ब)
२२. दोण्ह (स)।
२३. निभा ६५३०।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४६६. 'अग्गघातो हणे[1] मूलं, मूलघातो[2] य अग्गयं ।
तम्हा खलु मूलगुणा, न संति न य उत्तरगुणा उ[3] ॥

४६७. चोदग छक्कायाणं, तु संजमो जाऽणुधावते[4] ताव ।
मूलगुण उत्तरगुणा, दोण्णि वि अणुधावते ताव ॥

४६८. इत्तरिसामाइय छेद संजम तह दुवे नियंठा य ।
बउस-पडिसेवगाओ[5], अणुसज्जंते[6] य जा तित्थं ॥

४६९. मूलगुणदतिय-सगडे, उत्तरगुण मंडवे सरिसवादी[7] ।
छक्कायरक्खणट्ठा, दोसु वि सुद्धे[8] चरणसुद्धी[9] ॥

४७०. पिंडस्स जा विसोधी[10], समितीओ भावणा तवो[11] दुविधो[12] ।
पडिमा अभिग्गहा वि य, उत्तरगुण मो[13] वियाणाहि[14] ॥

४७१. बायाला अट्ठेव य, पणुवीसा बार बारस उ चेव ।
दव्वादि चउरभिग्गह, भेदा खलु उत्तरगुणाणं[15] ॥

४७२. निग्गयवट्टंता 'वि य'[16], संचइता खलु तहा असंचइता ।
एक्केक्काए दुविधा, उग्घात तहा अणुग्घाता ॥नि.१२ ॥

४७३. छेदादी आवण्णा, उ निग्गता ते तवा उ बोधव्वा ।
जे पुण वट्टंति तवे, ते वट्टंता मुणेयव्वा ॥

४७४. मासादी आवण्णे, जा छम्मासा असंचयं होति ।
छम्मासाउ[17] परेणं, संचइयं तं मुणेयव्वं ॥

४७५. मासादि असंचइए, संचइए छहि तु होति पट्ठवणा ।
तेरसपदऽसंचइए, संचए[18] एक्कारसपदाइं ॥

४७६. 'तवतिग छेदतिगं वा'[19], मूलतिगं अणवट्ठाणतिगं[20] च ।
चरमं च एक्कसरयं, पढमं तववज्जियं बितियं ॥

४७७. बितियं संचइयं खलु, तं आदिपएहि दोहि रहियं तु ।
छम्मासतवादीयं, एक्कारसपदेहि[21] चरमेहिं ॥दारं ॥

---

१. अग्गग्घाते हतं (अ, स)।
२. मूला० (अ)।
३. निभा (६५३१) में इसका उत्तरार्ध इस प्रकार है—
छक्कायसंजमो जाव, तावऽणुसज्जणा दोण्हं।
इस गाथा के बाद अ प्रति तथा निभा (६५३२) में निम्न गाथा अतिरिक्त मिलती है—
जा संजमता जीवेसु, ताव मूला य उत्तरगुणा य।
इत्तरिय छेद संजम, नियंठ बकुसा य पडिसेवा॥
४. जावाऽणु० (ब)।
५. बाउस० (अ)।
६. अणुकज्जंते (ब)।
७. सरियवादी (स), सर्षपादिः (मवृ)
८. अत्र गाथायामेकवचनं प्राकृतत्वात् (मवृ)।
९. निभा ६५३३।
१०. विसुद्धी (ब)।
११. तधा (ब)।
१२. दुविहिं (ब)।
१३. मो इति पादपूरणे (मवृ)।
१४. ०णाहे (ब), निभा ६५३४।
१५. निभा (६५३५) में इस गाथा के स्थान पर कुछ अंतर के साथ निम्न गाथा मिलती है—
तिग बाताला अट्ठ य, पणुवीसा बार बारस च्चेव।
छण्णउदी दव्वादी, अभिग्गहा उत्तरगुणा उ॥
१६. या (निभा ६५३६)।
१७. ०मासाओ (ब)।
१८. संचति (निभा ६५३७)।
१९. तवतिगं छेदतिग (निभा ६५३८)।
२०. अणवट्ठावण ०(अ, स)।
२१. छंद की दृष्टि से एक्कारपएहि पाठ होना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४७८. छम्मासतवो छेदादियाण, तिग तिग तहेक्क 'चरमं वा'[१] ।
संवड्ढितावराधे, एक्कारसपया[२] उ संचइए[३] ॥

४७९. पच्छित्तस्स उ[४] अरहा, इमे उ पुरिसा चउव्विहा होंति ।
उभयतर आततरगा, परतरगा अण्णतरगा य[५] ॥

४८०. आततर-परतरे या[६], आततरे अभिमुहे य निक्खित्ते ।
एक्केक्कमसंचइए[७], संचइ उग्घातऽणुग्घाते[८] ॥नि.९३॥

४८१. जह मासओ उ लद्धो, सेवयपुरिसेण जुयलयं[९] चेव ।
तस्स दुवे तुट्ठीओ, वित्ती य कया जुयलयं च ॥

४८२. एवं उभयतरस्सा, दो तुट्ठीओ उ सेवगस्सेव ।
सोही य कता मे त्ती, वेयावच्चे निउत्तो य ॥

४८३. सो पुण जइ वहमाणो, आवज्जति इंदियादिहि[१०] पुणो वि ।
तं पि य से आरुभिज्जइ, भिन्नादी[११] पंचमासंतं ॥

४८४. तवबलितो सो जम्हा, तेण र[१२] अण्णे वि दिज्जते बहुगं ।
परतरओ पुण जम्हा, दिज्जति बहुए वि तो थोवं[१३] ॥

४८५ वीसऽट्ठारस लहु-गुरु, भिन्नाणं 'मासियाण आवण्णो'[१४] ।
सत्तारस पण्णारस, लहुगुरुगा मासिया होंति[१५] ॥

४८६. उग्घातियमासाणं, सत्तरसेव य अमुच्चयंतेणं[१६] ।
णेयव्व दोण्णि तिण्णि य, गुरुगा पुण होंति पण्णरसा ॥

४८७. सत्त-चउक्का उग्घातियाण, पंचेव होंतऽणुग्घाता[१७] ।
पंच लहुगा उ पंच उ, गुरुगा पुण पंचगा तिण्णि[१८] ॥

४८८. उक्कोसा उ पयाओ, ठाणे ठाणे दुवे परिहवेज्जा ।
एवं दुगपरिहाणी, नेयव्वा जाव तिण्णेव[१९] ॥

---

१. चरिमं च (अ)।
२. छंद की दृष्टि से 'एक्कारपया' पाठ होना चाहिए।
३. निभा (६५३९) में इस गाथा की संवादी निम्न गाथा मिलती है:—
छेदतिगं मूलतिगं, अणवट्ठतिगं च चरिममेगं च ।
संवड्ढितावराधे, एक्कारसपया उ संचइए ॥
४. x (अ)।
५. ब प्रति में इस गाथा का उत्तरार्ध नहीं है।
६. वि य (ब), वा (निभा ६५४०)।
७. ०क्क असंच ०(अ, स)।
८. उग्घायमणु ०(अ), ब प्रति में ४८०-८२ तक की तीन गाथाएँ नहीं हैं।
९. जुवलयं (स)।
१०. इंदियाइहि (ब)।
११. भिन्नाइं (अ)।
१२. रेफः पादपूरणे इजेराः पादपूरणे इति वचनात् (मवृ), व (निभा ६५४२)।
१३. अप्पं (निभा)।
१४. मासियावन्नो (अ)।
१५. निभा ६५४३।
१६. अणुमुयंतेण (अ, निभा ६५४४)।
१७. होंति अणुघाया (ब), अनुद्घातिका नाम अत्र गाथायां प्रथमा षष्ठ्यर्थे (मवृ)।
१८. निभा ६५४५।
१९. यह गाथा स प्रति में अनुपलब्ध है। निभा ६५४६।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४८९. अट्ठट्ठ उ अवणेत्ता[१], सेसा दिज्जंति जाव तु तिमासो ।
जत्थट्ठगावहारो, न होज्ज[२] तं झोसए सव्वं[३] ॥

४९०. बारस दस नव चेव य[४], सत्तेव जहन्नगाइ ठाणाइं ।
'वीसऽट्ठारस सत्तर'[५], 'पन्नर ठाणाण बोधव्वा'[६] ॥

४९१. पुणरवि जे अवसेसा, मासा जेहिं[७] पि छण्हमासाणं ।
उवरिं झोसेऊणं, छम्मासा सेस दायव्वा ॥

४९२. छहिं[८] दिवसेहि गतेहिं, छण्हं मासाण होंति पक्खेवो ।
छहि चेव य सेसेहिं, छण्हं मासाण पक्खेवो[९] ॥

४९३. एवं बारसमासा, छद्दिवसूणा तु[१०] जेट्ठपट्ठवणा ।
छद्दिवसगतेऽणुग्गह, निरणुग्गह 'छाग ते खेवो'[११] ॥

४९४. चोदेति रागदोसे, दुब्बलबलिते य[१२] जाणते चक्खू ।
भिण्णे खंधग्गिम्मि य, मासचउम्मासिए चेडे[१३] ॥दारं ॥

४९५. सत्त चउक्का उग्घातियाण पंचेव होंतऽणुग्घाता ।
'पंच लहु पंच गुरुगा'[१४], गुरुगा पुण पंचगा तिण्णि ॥

४९६. सत्तारस पण्णारस, 'निक्खेवा होंति मासियाणं तु'[१५] ।
तीसऽट्ठारस भिन्ने, तेण परं निक्खिवणता उ ॥

४९७. आततरमादियाणं, मासा लहु गुरुग सत्त पंचेव ।
चउ-तिग-चाउम्मासा, तत्तो उ चउव्विहो भेदो[१६] ॥दारं ॥**नि.९४** ॥

४९८. सत्त उ[१७] मासा उग्घातियाण, छच्चेव होंतऽणुग्घाया ।
पंचेव य चतुलहुगा, चतुगुरुगा होंति चत्तारि[१८] ॥

४९९. आवण्णो इंदिएहिं, परतरए झोसणा ततो परेण ।
मासलहुगा य सत्त उ, छच्चेव य होंति मासगुरू ॥

---

१. उवणेत्ता (अ)।
२. होति (निभा ६५४८)।
३. निभा में ४८९ एवं ४९९ की गाथा में क्रमव्यत्यय है।
४. तु (निभा)।
५. वीसट्ठारा ० (ब), वीसट्ठार सत्तरस (अ)।
६. पन्नरहाणी मुणेयव्वा (निभा ६५४७)।
७. तेसिं (अ)।
८. सूत्रे तृतीया सप्तम्यर्थे (मवृ)।
९. निभा ६५४९, इस गाथा के बाद निभा (६५५०, ६५५१) में दो निम्न गाथाएं और मिलती हैं—
जे ते झोसियसेसा, छम्मासा तत्थ पट्ठवित्ताणं ।
छद्दिवसूणे छोढुं, छम्मासे सेस पक्खेवो ॥
अहवा छहि दिवसेहिं, गतेहि जति सेवती तु छम्मासे ।
तत्थेव तेसि खेवो, छद्दिणसेसेसु वि तहेव ॥
१०. x (स)।
११. छागते खेवो (निभा ६५५२)।
१२. उ (अ)।
१३. निभा ६५५३।
१४. पंच लहुगा य गुरुगा (अ), पंच लहुगा उ पंच उ (निभा ६५५४)।
१५. निक्खेवो होति मासियाणं पि (निभा ६५५५)।
१६. निभा ६५५६।
१७. अ (निभा ६५५७)।
१८. मुद्रित टीका में भाष्यगाथा के क्रमांक में यह गाथा नहीं है किन्तु इसकी व्याख्या टीका में उपलब्ध है। सभी हस्तप्रतियों एवं निभा में यह गाथा इसी क्रम में मिलती है। विषयवस्तु की दृष्टि से भी यह गाथा यहां प्रासंगिक लगती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५००. चउलहुगाणं पणगं, चउगुरुगाणं[1] तहा चउक्कं च ।
तत्तो छेदादीयं, होति[2] चउक्कं मुणेयव्वं[3] ॥

५०१. तं चेव पुव्वभणियं, परतरए नत्थि एगखंधादी ।
दो जोए अचयंते, वेयावच्चट्ठया[4] झोसो ॥दारं ॥

५०२. तवऽतीतमसद्दहिए, तवबलिए चेव होति परियागे[5] ।
दुब्बलअपरीणामे[6], अत्थिर[7] अबहुस्सुते[8] मूलं ॥नि.९५ ॥

५०३. जध मन्ने एगमासियं, सेविऊण एगेण सो उ निग्गच्छे ।
तध मन्ने एगमासियं, सेविऊण 'चरमेण निग्गच्छे'[9] ॥

५०३/१. जध मन्ने एगमासियं, सेविऊण एगेण सो उ निग्गच्छे ।
तध मन्ने एगमासियं, सेविऊण भिन्नेण निग्गच्छे[10] ॥

५०४. जिणनिल्लेवणकुडए[11], मासे अपलिकुंचमाणे सट्ठाणं ।
मासेण[12] विसुज्झिहिती, तो देंति[13] गुरूवदेसेणं[14] ॥नि.९६ ॥

५०५. एगुत्तरिया घडछक्कएण, छेदादि होंति निग्गमणं ।
एतेहि दोसवुड्ढी[15], 'उप्पत्ती रागदोसेहिं'[16] ॥नि.९७ ॥

५०६. अप्पमलो होति सुची[17], कोइ पडो जलकुडेण[18] एगेण ।
मलपरिवुड्ढीय[19] भवे, कुडपरिवुड्ढीय[20] जा 'छ तू'[21] ॥

५०७. तेण परं[22] सरितादी, गंतुं सोधेंति[23] बहुतरमलं तु ।
मलनाणत्तेण भवे, आदंचण[24]-जत्त-णाणत्तं ॥

---

१. ०गाण (स)।
२. होंति (अ, ब)।
३. निभा (६५५८) में ४९९ एवं ५०० इन दोनों गाथाओं के स्थान पर निम्न गाथा मिलती है :—
आवण्णो इंदिएहिं, परतरए झोसणा ततो परेणं ।
मासा सत्त य छच्च य, पणग चउक्कं चउ चउक्कं ॥
४. ०ट्ठिया (निभा ६५५९)।
५. ०याते (ब)।
६. ०अपरिणामे (अ, ब, स)।
७. अथिरे (अ), अत्थिरं (निभा ६५६०)।
८. ०स्सुए (अ)।
९. निग्गच्छते दोहिं (निभा ६५६१)।
१०. यह गाथा टीका की मुद्रित पुस्तक में नहीं है किन्तु सभी हस्तप्रतियों में उपलब्ध है। टीकाकार ने इस गाथा के बारे में कोई उल्लेख नहीं किया है। यह गाथा ५०३ की ही संवादी है तथा अतिरिक्त सी प्रतीत होती है। निशीथ भाष्य में भी इस क्रम में यह गाथा नहीं है। हमने इसे भागा के क्रम में नहीं जोड़ा है।
११. ०कुडवे (ब)।
१२. मासेहि (निभा ६५६२)।
१३. दिंति (ब)।
१४. व्यभा ५१२।
१५. ० वड्ढी (अ, ब)।
१६. कप्पिज्जइ दोहि ठाणेहिं (ब), उप्पज्जति दोहि ठाणेहिं (सपा) उप्पज्जति रागदोसेहिं (निभा ६५६३), व्यभा ५११।
१७. सुती (ब)।
१८. ०कुढेण (अ), ०पडेण (स)।
१९. ० वड्ढीए (ब)।
२०. ० वड्ढीउ (अ)।
२१. यं तु (स), छन्नू (ब), निभा ६५६४।
२२. परि (ब)।
२३. सोहिंतु (ब)।
२४. आयंचण (ब, निभा ६५६५)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५०८. बहुएहि जलकुडेहिं[1], बहूणि वत्थाणि काणि वि[2] विसुज्झे ।
अप्पमलाणि बहूणि वि, 'काणिइ सुज्झंति[3] एगेणं ॥नि.९८॥

५०९. जध मन्ने दसमं सेविऊण, निग्गच्छते[4] तु दसमेण ।
तध मन्ने दसमं सेविऊण एगेण[5] निग्गच्छे ॥

५१०. जध मन्ने बहुसो मासियाणि[6] सेवित्तु[7] एगेण[8] निग्गच्छे ।
तध मन्ने बहुसो मासियाइ[9] सेवित्तु[10] बहूहि निग्गच्छे[11] ॥

५११. एगुत्तरिया[12] घडछक्कएण, छेदादि होंति निग्गमणं ।
एतेहि[13] दोसवुड्ढी[14], उप्पत्ती[15] रागदोसेहिं[16] ॥

५१२. जिणनिल्लेवणकुडए, मासे अपलिकुंचमाणे सट्ठाणं ।
मासेण[17] विसुज्झिहिती, तो[18] देंति गुरूवदेसेणं[19] ॥

५१३. पत्तेयं पत्तेयं, पदे पदे भासिऊण[20] अवराधे ।
तो केण कारणेणं, हीणब्भहिया[21] व पट्ठवणा ॥नि.९९॥

५१४. मणपरमोधिजिणाणं[22], 'चउदस दसपुव्वियं[23] च नवपुव्वि ।
थेरेव समासेज्जा, ऊणऽब्भहिया च पट्ठवणा ॥नि.१००॥

५१५. हा दुट्ठु कतं हा दुट्ठु कारितं दुट्ठु अणुमयं 'मे त्ति'[24] ।
अंतो अंतो डज्झति[25], पच्छातावेण वेवंतो[26] ॥

५१६. जिणपण्णत्ते भावे, असद्दहंतस्स 'तस्स पच्छित्तं'[27] ।
हरिसमिव[28] वेदयंतो, तधा तधा वड्ढते उवरिं ॥

५१७. एत्तो[29] निकायणा[30] मासियाण, जध[31] घोसणं पुहविपालो ।
दंतपुरे कासी या[32], आहरणं तत्थ कायव्वं ॥

---

१. ०कुंडेहिं (स)।
२. य (अ)।
३. काणिवि सुज्झंति (अ), काणिति सुज्झंति (निभा ६५६६)।
४. णिगगच्छे (निभा ६५६७)।
५. नवमेण (ब)।
६. ०याइं (अ, ब)।
७. सेवितू (अ)।
८. एगेण सो उ (अ, स)।
९. ०याई (ब)।
१०. सेविउं (ब)।
११. निभा ६५६८।
१२. एक्कुत्त० (अ)।
१३. तेहिं तु (ब)।
१४. ०वड्ढी (ब, निभा)।
१५. उप्पज्जति (निभा ६५६९)।
१६. निभा ६५६३, यह गाथा पुनरुक्त हुई है, देखें व्यभा ५०५।
१७. मासेहि (निभा)।
१८. ता (अ)।
१९. जिणोवएसेणं (अ,ब, स, निभा) पाठांतरे जिनोपदेशेन (मवृ) निभा ६५७०, ६५६२। यह गाथा पुनरुक्त हुई है। देखें व्यभा ५०४।
२०. भाणिऊण (स, निभा ६५७१)।
२१. ०हियं (अ, स)।
२२. ०जिणं च (ब), ०जिणं वा (अ, निभा ६५७२)।
२३. चोद्दस दसपुव्वि (ब)।
२४. मित्ति (ब)।
२५. भिज्जती (ब)।
२६. निभा ६५७३।
२७. अपत्तियं तस्स (अ), पत्तियं तस्स (निभा ६५७४)।
२८. हरिसं विव (निभा)।
२९. इत इति तृतीयार्थे पञ्चमी ततोऽयमर्थः (मवृ)।
३०. णिक्का ०(निभा ६५७५)।
३१. जं व (स)।
३२. उ (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५१८. आलोयणारिहालोयओ य[1] आलोयणाय दोसविधी ।
पणगातिरेग जा पणवीस, पंचमसुत्ते अध विसेसो[2] ॥नि.१०१॥

५१९. आलोयणारिहो खलु, निरावलावी[3] उ जह उ दढमित्तो ।
अट्ठहि चेव गुणेहिं[4], इमेहि जुत्तो उ[5] नायव्वो[6] ॥नि.१०२॥

५२०. आयारवं आधारवं[7], ववहारोव्वीलए[8] 'पकुव्वी य'[9] ।
निज्जवगऽवायदंसी[10], अपरिस्सावी[11] य बोधव्वो[12] ॥नि.१०३॥

५२१. आलोएंतो एत्तो, दसहि गुणेहिं तु होति उववेतो ।
जाति-कुल-विणय-नाणे, दंसण-चरणेहि संपण्णो ॥नि.१०४॥

५२२. खंते दंते अमायी य, अपच्छतावी य होति बोधव्वे ।
आलोयणाए दोसे, एत्तो वोच्छं समासेणं ॥नि.१०५॥

५२३. आकंपयित्त अणुमाणयित्ता[13], जं दिट्ठं बादरं च सुहुमं वा ।
छण्णं सद्दाउलगं, बहुजण अव्वत्त तस्सेवी[14] ॥नि.१०६॥

५२४. आलोयणाविधाणं, तं चेव उ[15] दव्व-खेत्त-काले य ।
भावे सुद्धमसुद्धे, ससणिद्धे सातिरेगाइं ॥नि.१०७॥

५२५. पणगेणऽहिओ मासो, दसपक्खेणं च वीसभिण्णेणं[16] ।
संजोगा कायव्वा, गुरु-लघुमासेहि य अणेगा[17] ॥

५२६. ससणिद्ध बीयघट्टे, काएसुं[18] मीसएसु[19] परिठविते[20] ।
इत्तर[21]-सुहुम-सरक्खे, पणगा एमादिया[22] होंति[23] ॥

---

१. उ (अ) ।

२. यह गाथा ब प्रति में नहीं है। निभा (६५७६) में यही गाथा इस प्रकार मिलती है :—
पणगातिरेग जा पणवीससुत्तम्मि पंचमे विसेसो ।
आलोयणारिऽऽहालोयओ य आलोयणा चेव ॥

३. निरव ०(अ, स) ।

४. य गुणेहिं तू (अ, स) ।

५. x (ब) ।

६. इन गाथाओं के क्रम में निभा में ५१९, ५२१ एवं ५२२ ये तीन गाथाएं नहीं मिलती हैं ।

७. आहारवं (निभा, अ) ।

८. ० हारुव्वीलीए (ब) ।

९. पकुव्वी य त्ति कुर्व इत्यागम प्रसिद्धो धातुरस्ति यस्य विकुर्वणेति प्रयोगः (मवृ) ।

१०. निज्जव अवाय ०(अ) ।

११. अप्परि ०(ब) ।

१२. निभा में यह गाथा उद्धृत गाथा के रूप में है। चूर्णिकार ने विस्तार से इसकी व्याख्या की है (निचू ४ पृ. ३६३) ।

१३. ०णतित्ता (ब), ०माणवित्ता (स) ।

१४. यह गाथा निभा में उद्धृत गाथा के रूप में है। चूर्णिकार ने इसकी विस्तार से व्याख्या की है (निचू ४ पृ ३६३) ।

१५. य (अ, स), x (निभा ६५७८) ।

१६. x (अ) ।

१७. निभा (६५७७) में यह गाथा इस प्रकार मिलती है :—
अहवा पणएणऽहिओ, मासो दस-पक्ख-वीसभिण्णेणं ।
संजोगा कायव्वा, लहु-गुरुमासेहि य अणेगा ॥

१८. काएसू (ब) ।

१९. मास० (अ, ब) ।

२०. परिट्ठवए (ब) ।

२१. इत्तिरि (अ, स), इतरस्मिन् (मवृ) ।

२२. एगादिया (अ) ।

२३. निभा ६५७९ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५२७. ससणिद्धमादि अहियं, 'पारोक्खी सोच्च देंति'[१] अहियं तु[२] ।
हीणाहियतुल्लं वा, नाउं भावं तु पच्चक्खी ॥

५२८. एत्थ पडिसेवणाओ, एक्कग-दुग-तिग-चउक्क-पणगेहिं ।
छक्कग - सत्तग- अट्ठग - 'नव - दसगेहिं अणेगा उ'[३] ॥

५२९. करणं एत्थ उ इणमो, एक्कादेगुत्तरा[४] दस ठवेउं ।
हेट्ठा पुण विवरीयं, काउं[५] रूवं गुणेयव्वं ॥

५३०. दसहि गुणेउं रूवं, एक्केण हितम्मि भागे[६] जं लद्धं ।
तं पडिरासेऊणं, पुणो वि नवहिं गुणेयव्वं[७] ॥

५३१. दोहि हरिऊण भागं, पडिरासेऊण तं पि जं[८] लद्धं ।
एतेण कमेणं तू, कायव्वं आणुपुव्वीए ॥

५३२. उवरिमगुणकारेहिं[९], हेट्ठिल्लेहिं व भागहारेहिं ।
जा[१०] आदिमं तु ठाणं, गुणितेमे[११] होंति संजोगा ॥

५३३. दस चेव य पणताला, 'वीसालसतं च दो दसहिया य'[१२] ।
दोण्णि सया बावण्णा, दसुत्तरा दोण्णि य[१३] सता उ ॥

५३४. वीसालसयं[१४] पणतालीसा, दस चेव होंति एक्को य ।
तेवीसं च सहस्सं, 'अदुव अणेगा'[१५] उ णेगाओ ॥

५३४/१. कोडिसयं सत्तऽहियं, सत्ततीसं च होंति लक्खाइं ।
एयालीससहस्सा, अट्ठसया अहिया तेवीसा[१६] ॥

५३५. जच्चिय[१७] सुत्तविभासा, हेट्ठिल्लसुतम्मि वण्णिता एसा ।
सच्चिय इहं पि नेया, नाणत्तं ठवणपरिहारे[१८] ॥

५३६. को भंते! परियाओ[१९], सुत्तत्थाभिग्गहो[२०] तवोकम्मं ।
'कक्खडमकक्खडे वा'[२१], सुद्धतवे मंडवा दोण्णि ॥नि.१०८॥

---

१. तु परोक्खी सो उ देंति (निभा ६५८०)।
२. य (ब)।
३. ०वणेगा उ (अ), णवग दसहिं च णेगाओ (निभा ६५८१) गाथाओं के क्रम में निभा में ५२९ से ५३२ तक की गाथाएं नहीं मिलती हैं।
४. एक्काएगु० (ब)।
५. काऊ (ब)।
६. भागेण (ब)।
७. उ णेयव्वं (स)।
८. जे (अ)।
९. ०गुणिगारेहिं (ब)।
१०. यावत् (मवृ)।
११. गुणिते इमे (स)।
१२. वीस य सयं च दो दसहिगाइं (निभा ६५८२)।
१३. उ (निभा)।
१४. वीसा य सयं (निभा ६५८३)।
१५. अट्ठे वणेगा (अ)।
१६. यह गाथा सभी हस्तप्रतियों में नहीं मिलती है। मुद्रित टीका में यह भाष्यगाथा के क्रम में है, किन्तु टीकाकार ने इसकी व्याख्या नहीं की है। निशीथभाष्य में यह गाथा चूर्णि में उद्धृत गाथा के रूप में है (निचू ४ पृ ३६६)।
१७. जे च्चिय (अ)।
१८. यह गाथा निभा में अनुपलब्ध है।
१९. परितातो (अ)।
२०. सुत्तट्ठा ०(अ)।
२१. ०खडे या (अ, स), ०क्खडेसु (निभा ६५८४)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५३७. सगणम्मि नत्थि पुच्छा, अन्नगणा आगतं तु[1] जं जाणे ।
अण्णातं पुण पुच्छे, परिहारतवस्स जोग्गट्ठा[2] ॥

५३८. गीतमगीतो गीतो, अहं[3] ति किं वत्थु कासवसि जोग्गो ।
'अविगीते त्ति य भणिते'[4], थिरमथिर तवे य कयजोग्गो[5] ॥दारं ॥

५३९. गिहिसामन्ने य तहा, परियाओ दुविह[6] होति नायव्वो ।
इगुतीसा[7] वीसा वा, जहन्न उक्कोस देसूणा[8] ॥दारं ॥

५४०. नवमस्स ततियवत्थू[9], जहन्न-उक्कोस-ऊणगा दसओ ।
सुत्तत्थऽभिग्गहा पुण, दव्वादि तवोरयणमादी ॥दारं ॥

५४१. 'एतगुणसंजुयस्स उ'[10], किं कारण दिज्जते तु परिहारो ।
कम्हा 'पुण परिहारो'[11], न दिज्जती[12] तव्विहूणस्स ॥

५४२. जं मायति[13] तं छुब्भति, सेलमए मंडवे न एरंडे ।
उभयबलियम्मि[14] एवं[15], परिहारो दुब्बले सुद्धो ॥

५४३. अविसिट्ठा[16] आवत्ती, सुद्धतवे 'चेव तह य परिहारे'[17] ।
वत्थुं पुण आसज्जा[18], दिज्जति इतरो व इतरो वा ॥

५४४. वमण-विरेयणमादी, कक्खडकिरिया जधाउरे बलिते[19] ।
कीरति न[20] दुब्बलम्मी[21], अह दिट्ठंतो तवे दुविधो ॥

५४५. सुद्धतवो अज्जाणं, ऽगीयत्थे[22] दुब्बले असंघयणे[23] ।
धिति-बलिते य 'समन्नागत सव्वेसिं पि'[24] परिहारो ॥

५४६. विउसग्गजाणणट्ठा, ठवणाभीतेसु[25] दोसु ठवितेसु ।
अगडे 'नदी य'[26] राया, दिट्ठंतो भीयआसत्थो ॥

---

१. व (निभा) ।
२. निभा (६५८६) में इस गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
परियाओ जम्मदिक्खा, अउणत्तीस वीस कोडी य ।
३. महं (स) ।
४. अगीतो त्ति य ०(निभा ६५८५), अविगीए ति भणिए (ब) ।
५. यह गाथा निभा में क्रमव्यत्यय से मिलती है ।
६. दुव्विहो (ब) ।
७. उगु ०(अ, स) ।
८. गाथाओं के क्रम में निभा में ५३९ एवं ५४१ ये दो गाथाएं अनुपलब्ध हैं ।
९. ०वत्थुं (अ, स, निभा ६५८७) ।
१०. ०संजुत्तस्स (स) ।
११. उ परीहारो (स) ।
१२. दिज्जए (ब) ।
१३. माइय (ब) ।
१४. ० बलिए वि (निभा ६५८८) ।
१५. एयं (स) ।
१६. ० सिद्धा (ब) ।
१७. तह य होति परि ०(निभा ६५८९) ।
१८. आसज्जे (स) ।
१९. पलिते (अ, स) ।
२०. य (अ, स) ।
२१. दुब्बलम्मि वि (निभा ६५९०) ।
२२. अगीयत्थे (निभा ६५९१) ।
२३. ण संघ ०(ब) ।
२४. ०गते य सव्वेसिं (अ, स) ।
२५. भीए य (निभा ६५९२) ।
२६. नदीसर (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५४७. निरुवस्सग्गनिमित्तं, भयजणणट्ठाय[1] सेसगाणं[2] च ।
तस्सऽप्पणो य गुरुणो, य साहए[3] होति पडिवत्ती[4] ॥

५४८. कप्पट्ठितो अहं ते, अणुपरिहारी य एस ते गीतो ।
पुव्विं[5] कतपरिहारो, तस्सऽसतितरो वि दढदेहो[6] ॥

५४९. एस तवं पडिवज्जति, न किंचि आलवति[7] मा य आलवह[8] ।
अत्तट्ठचिंतगस्सा, वाघातो भे ण कायव्वो[9] ॥नि.१०९ ॥

५५०. आलावण पडिपुच्छण, परियट्टुट्ठाण वंदणग मत्ते ।
पडिलेहण संघाडग, भत्तदाण संभुंजणा चेव[10] ॥नि.११० ॥

५५१. 'संघाडगा उ जाव उ[11], लहुओ मासो दसण्ह उ पदाणं ।
लहुगा य भत्तदाणे[12] संभुंजण[13] होंतऽणुग्घाता[14] ॥

५५२. संघाडगा[15] उ जाव उ, गुरुगो मासो दसण्ह उ पयाणं ।
भत्तपयाणे[16] संभुंजणे य परिहारिगे गुरुगा ॥

५५३. कितिकम्मं च[17] पडिच्छति, परिण्ण पडिपुच्छणं[18] पि से देति ।
सो चिय[19] गुरुमुवचिट्ठति, उदंतमवि पुच्छितो कहए[20] ॥

५५४. उट्ठेज्ज निसीएज्जा, भिक्खं हिंडेज्ज भंडगं पेहे ।
कुविय-पियबंधवस्स व, करेति इतरो वि तुसिणीओ[21] ॥दारं ॥

५५५. अवसो[22] व रायदंडो, 'न एवमेवं तु'[23] होति पच्छित्तं ।
संकर-सरिसवसगडे, मंडववत्थेण दिट्ठंता ॥

५५६. अणुकंपिता च[24] चत्ता, अहवा सोधी न विज्जते तेसिं ।
कप्पट्ठगभंडीए, दिट्ठंतो धम्मया[25] सुद्धो ॥

---

१. ०णट्ठाए (ब) ।
२. समगाणं (अ) ।
३. साधूए (ब) ।
४. अ प्रति में गाथा का उत्तरार्ध नहीं है ।निभा २८७८, ६५९३ ।
५. पुव्वं (अ) ।
६. गाथा का पूर्वार्द्ध अ प्रति में नहीं है । निभा २८७९, ६५९४ ।
७. आलवे (ब) ।
८. आलवहा (बृभा) ।
९. निभा २८८०, ६५९५, बृभा ५५९७ ।
१०. चेय (ब), निभा ६५९६, २८८१, १८८७ बृभा ५५९८ ।
११. ०गातो जाव उ (अ, ब) ।
१२. भत्तपाणे (निभा २८८२, ६५९७) ।
१३. संभुंजणे (निभा, अ) ।
१४. बृभा ५५९९ ।
१५. ०डगो (ब) ।
१६. भत्तप्प० (अ, ब), भत्ते पाणे (निभा २८८३, ६५९८) ।
१७. तु निभा ६५९९, २८८४ ।
१८. ०पुच्छियं (ब) ।
१९. वि य (निभा, अ) ।
२०. कहति (ब) ।
२१. निभा २८८५, ६६०० ।
२२. अवसो इत्यत्र प्रथमा तृतीयार्थे आर्षत्वात् (मवृ) ।
२३. न य एवं च (निभा ६६०१), न एवमेवं तु (ब) ।
२४. व (निभा ६६०२) ।
२५. धम्मया स्त्रीत्वं प्राकृतत्वात् (मवृ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५५७. जो जं काउ समत्थो, सो तेण विसुज्झते असढभावो ।
गूहितबलो न सुज्झति, धम्म-सभावो त्ति एगट्ठं[१] ॥

५५८. आलवणादी उ पया, सुद्धतवे तेण[२] कक्खडो न भवे ।
इतरम्मि उ ते नत्थी, कक्खडओ[३] तेण सो होति ॥

५५९. तम्हा उ कप्पट्ठितं. अणुपरिहारिं च तो ठवेऊणं[४] ।
कज्जं वेयावच्चं, किच्चं तं वेयविच्चं[५] तु[६] ॥

५६०. वेयावच्चे तिविधे, अप्पाणम्मि य परे तदुभए य[७] ।
अणुसट्ठि[८] उवालंभे, उवग्गहे चेव तिविधम्मि[९] ॥नि. १११ ॥

५६१. अणुसट्ठीय सुभद्दा, उवलंभम्मि य मिगावती देवी ।
'आयरिओ दोसु उवग्गहो य सव्वत्थ वायरिओ'[१०] ॥नि. ११२ ॥

५६२. दंडसुलभम्मि लोए, मा अमतिं[११] कुणसु दंडितो मि त्ति ।
एस दुलभो हु दंडो, भवदंडनिवारओ[१२] जीव[१३] ! ॥

५६३. अवि य हु विसोधितो[१४] ते, अप्पणायार मइलितो जीव ! ।
इति अप्प परे उभए, 'अणुसट्ठि थुतित्ति'[१५] एगट्ठा[१६] ॥

५६४. तुमए चेव कतमिणं, न सुद्धकारिस्स दिज्जते दंडो ।
इह मुक्को वि न मुच्चति, परत्थ 'अह होउवालंभो'[१७] ॥दारं ॥

५६५. दव्वेण य भावेण य, उवग्गहो दव्वें[१८] अण्णपाणादी ।
भावे पडिपुच्छादी, करेति जं वा गिलाणस्स[१९] ॥

५६६. परिहारऽणुपरिहारी, दुविहेण उवग्गहेण[२०] आयरिओ ।
उवगेण्हति[२१] सव्वं वा, सबालवुड्ढाउलं गच्छं[२२] ॥

---

१. एगट्ठा (निभा ६६०३)।
२. अत्थि तेण (अ, स)।
३. कक्खडो (ब, स)।
४. भवेऊणं (स)।
५. वेज्जवच्चं (अ, स)।
६. निभा (६६०४) में व्यभा की ५५८-५५९ इन दोनों गाथाओं के स्थान पर निम्न गाथा मिलती है—
सुद्धतवे परिहारिय, आलवणादीसु कक्खडे इतरे।
कप्पट्ठिय अणुपरियट्टण वेयावच्चकरणे य ॥
७. या (ब)।
८. अणुसिट्ठि (ब)।
९. निभा ६६०५।
१०. आयरिओ दोसु वि उवग्गहेसु सव्वत्थ आयरिओ (निभा ६६०६), आयरितो पुण दोसुवग्गहे सव्वत्थ वायरितो (अ, स)।
११. अमती (अ), आमतीं (स)।
१२. ०णिवारणो (निभा ६६०७)।
१३. जीवा (ब)।
१४. विसोही उ (ब)।
१५. अणुसिट्ठी थुइ ति (अ)।
१६. निभा ६६०८।
१७. अहा उवा ०(अ), निभा ६६०९।
१८. दव्वे इति तृतीयार्थे सप्तमी (मवृ)।
१९. निभा ६६१०।
२०. दुवग्गहेण (स)।
२१. उवगिण्हति (ब)।
२२. निभा ६६११।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५६७. अधवाऽणुसट्ठुवालंभुवग्गहे[1] कुणति तिन्नि वि गुरू से ।
सव्वस्स 'वि गच्छस्सा'[2], अणुसट्ठादीणि[3] सो कुणति ॥

५६८. आयरिओ केरिसओ, इहलोए केरिसो व परलोए ।
इहलोएऽसारणिओ[4], परलोएँ फुडं भणंतो उ[5] ॥

५६९. जीहाए विलिहंतो, न भद्दओ जत्थ सारणा नत्थि ।
दंडेण वि ताडेंतो, स भद्दओ सारणा जत्थ[6] ॥

५७०. जह सरणमुवगयाणं, जीवियववरोवणं नरो कुणति ।
एवं सारणियाणं, आयरिओ असारओ गच्छे[7] ॥

५७१. एवं पि कीरमाणे, अणुसट्ठादीहि 'वेयवच्चे उ'[8] ।
'कोवि य'[9] पडिसेवेज्जा, सेविय कसिणेऽऽरुहेयव्वे[10] ॥

५७२. पडिसेवणा य संचय, आरुवणअणुग्गहे य बोधव्वे ।
अणुघातनिरवसेसं[11], कसिणं पुण छव्विहं होति ॥नि.११३॥

५७३. पारंचि[12] सतमसीतं छम्मासारुवणछड्डिणगतेहिं[13] ।
'कालगुरुनिरंतरं व'[14], अणूणमधियं भवे छट्ठं ॥नि.११४॥

५७४. एत्तो[15] समारुभेज्जा[16] ऽणुग्गह कसिणेण चिण्णसेसम्मि ।
आलोयणं सुणेत्ता[17], पुरिसज्जातं च विण्णाय[18] ॥

५७५. पुव्वाणुपुव्वि[19] दुविधा, पडिसेवणाय[20] तधेव आलोए ।
पडिसेवण आलोयण, पुव्वं पच्छा य[21] चउभंगो ॥नि.११५॥

५७६. पुव्वाणुपुव्वि पढमो, विवरीते बितिय ततियए गुरुगो ।
आयरियकारणा वा, पच्छा पच्छा[22] व सुण्णो उ ॥नि.११६॥

५७७. पच्छित्तऽणुपुव्वीए, जयणा-पडिसेवणाय अणुपुव्वी ।
एमेव वियडणाए[23], बितिय-ततियमादिणो[24] गुरुगो ॥

---

१. अधवा अणु ०(अ, स) ।
२. गच्छस्स व (अ), वा गणस्सा (निभा ६६१२, स) ।
३. अणुसत्था० (स) ।
४. ०लोए असार ०(ब) ।
५. वि (ब), निभा ६६१३ ।
६. निभा ६६१४ ।
७. निभा ६६१५ ।
८. वेज्जवच्चे उ (ब, स), ०वच्चेसु (अ) ।
९. को यं (अ, स) ।
१०. कसिणारुभेदव्वे (अ), अ और स प्रति में यह गाथा ५६८ के बाद है उसके बाद ५६९ एवं ५७० की गाथा है । गाथाओं के क्रम में निभा में यह गाथा नहीं मिलती है ।
११. ० सेसे (निभा ६६१६) ।
१२. पारंची (स) ।
१३. छड्डिणगएहिं ति अत्र तृतीया सप्तम्यर्थे (मवृ) ।
१४. कालकनिरंतरं वा (अ, निभा ६६१७) ।
१५. एत्तो इति प्राकृत[illegible]वशात् षष्ठ्यर्थे पंचमी (मवृ) ।
१६. ० रोहेज्जा (ब) ।
१७. सुणेज्जा (निभा ६६१८) ।
१८. विण्णेयं (अ, स) ।
१९. ० पुव्वी (निभा ६६१९) ।
२०. ० सेवणता (निभा), ०वणाए (ब) ।
२१. उ (निभा) ।
२२. पुच्छा (निभा ६६२०) ।
२३. ० डणाय (ब), ०डणादी (निभा ६६२१) ।
२४. ० मायणो (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५७८. पुव्वं गुरूणि[१] पडिसेविऊण, पच्छा लहूणि सेवित्ता ।
लहुए पुव्वं[२] कधयति[३], मा मे दो देज्ज पच्छित्ते ॥

५७९. अधवाऽजतपडिसेवि, त्ति नेव दाहिंति मज्झ पच्छित्तं ।
इति दो मज्झिमभंगा, चरिमो पुण पढमसरिसो उ[४] ॥

५८०. पलिउंचण चउभंगो[५], वाहे गोणी य पढमतो सुद्धो ।
तं चेव य मच्छरिते, सहसा पलिउंचमाणे उ[६] ॥नि.११७॥

५८१. खरंटणभीतो रुट्ठो, सक्कारं देति[७] ततियए सेसं ।
भिक्खुणि वाधि[८] चउत्थे, सहसा पलिउंचमाणो उ ॥

५८२. अपलिउंचिय पलिउंचियम्मि[९] य चउरो हवंति भंगा उ ।
वाहे य गोणि[१०] भिक्खुणि, चउसु वि भंगेसु दिट्ठंतो[११] ॥

५८३. पढम-ततिएसु पूया[१२], खिंसा इतरेसु 'पिसिय-पय-खोरे'[१३] ।
एमेव[१४] उवणओ खलु, 'चउसु वि भंगेसु वियडेंते'[१५] ॥

५८४. इस्सरसरिसो[१६] उ गुरू, 'वाधो साधू'[१७] पडिसेवणा मंसं ।
णूमणता[१८] पलिउंचण, सक्कारो वीलणा[१९] होति ॥

५८५. 'आलोयण त्ति'[२०] य पुणो, जा 'एसाऽकुंचिया उभयतो'[२१] वि ।
सच्चेव होति सोही, तत्थ य मेरा इमा होति ॥नि.११८॥

५८६. आयरिए[२२] कह सोधी, सीहाणुग-वसभ-कोल्हुगाणूए[२३] ।
अधवा वि सभावेणं, निमंसुगे[२४] मासिगा तिण्णि ॥नि.११९॥

५८७. 'सट्ठाणाणुग केई'[२५], परठाणाणुग य केइ गुरुमादी[२६] ।
स निसिज्जाए कप्पो, पुच्छ[२७] निसेज्जा च उक्कुडुओ[२८] ॥

---

१. गुरूण (ब), अत्र गुरुशब्दो बृहदभिधायी (मवृ) ।
२. पुव्विं (निभा ६६२२, अ) ।
३. कहई (ब, स) ।
४. निभा ६६२३ ।
५. चतुर्भंगी गाथायां पुंस्त्वनिर्देशः प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
६. निभा ६६२४ ।
७. देंति (निभा ६६२५) ।
८. वाधे (ब) ।
९. पलिंयचियम्मि (ब)
१०. गोणु (अ) ।
११. गाथाओं के क्रम में निभा में ५८२ एवं ५८३ ये दोनों गाथाएं अनुपलब्ध हैं ।
१२. पूरिया (ब) ।
१३. बितिय प० (स) ।
१४. एसेव (अ, स) ।
१५. भंगे चउसु वि य विगडंते (ब), ०विगदेंतो (स) ।
१६. ईसर ० (ब) ।
१७. साहू वाहो (निभा ६६२६) ।
१८. तूमणयेति देशीपदमेतत् स्थगनमित्यर्थः (मवृ), मुद्रित टीका में लिपिदोष से णू के स्थान पर तू छप गया है, ऐसा प्रतीत होता है ।
१९. वीलणं (ब), पीलणं (अ, स) ।
२०. ० यणो त्ति (अ), ०यणा वि (ब) ।
२१. एसाकुंचीया भयतो (ब), एसअंकुचिया० (अ, स, निभा ६६२७) ।
२२. ० रिएहिं (ब) ।
२३. कोल्लुयाणुए (निभा) ।
२४. निम्मंसुगे (निभा ६६२८) ।
२५. ० णुगा केती (ब), ०केयिं (स) ।
२६. गुरुगादी (निभा ६६२९) ।
२७. पुंच्छ (ब) ।
२८. तुक्कुडुतो (अ), उक्कुडए (निभा) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५८७/१. सीहाणुगस्स गुरुणो, सीहाणुग-वसभ-कोल्हुगाणूए ।
वसभाणुयस्स सीहे, वसभाणुय कोल्हुयाणूए[१] ॥

५८७/२. अधवा वि कोल्हुयस्सा, सीहाणुग वसभ-कोल्लुए चेव ।
आलोयंताऽऽयरिए, वसहे भिक्खुम्मि चारुवणा[२] ॥

५८८. मासो दोन्नि उ[३] सुद्धो, चउलहु[४] लहुओ य अंतिमो सुद्धो ।
गुरुया लहुया लहुओ, भेदा गणिणो नवगणिम्मि ॥

५८९. दोहि वि गुरुगा एते, गुरुम्मि नियमा तवेण कालेणं ।
वसभम्मि य तवगुरुगा, कालगुरू होंति भिक्खुम्मि[५] ॥

५९०. लहुगा लहुगो सुद्धो, गुरुगा लहुगो य अंतिमो सुद्धो ।
छल्लहु चउलहु लहुओ[६], वसभस्स तु नवसु ठाणेसु[७] ॥

५९१. दोहि वि गुरुगा एते, गुरुम्मि नियमा तवेण कालेणं ।
वसभम्मि य[८] तवगुरुगा, कालगुरू होंति भिक्खुम्मि[९] ॥

५९२. चउगुरु चउलहु सुद्धो, छल्लहु चउगुरुग अंतिमो सुद्धो ।
छग्गुरु चउलहु लहुओ, भिक्खुस्स तु नवसु ठाणेसुं[१०] ॥

५९३. दोहि वि गुरुगा एते, गुरुम्मि नियमा तवेण कालेणं ।
वसभम्मि य[११] तवगुरुगा, कालगुरू होंति भिक्खुम्मि ॥

५९४. सव्वत्थ वि सट्ठाणं, अमुंचमाणस्स[१२] मासियं लहुयं ।
परठाणम्मि[१३] य सुद्धो, जइ उच्चतरे भवे इतरो ॥

५९५. चउगुरुगं मासो या[१४], मासो छल्लहुग चउगुरू मासो ।
'छग्गुरु[१५] छल्लहु चउगुरु, बितियादेसे भवे सोही'[१६] ॥

---

१. कोल्लुगा० (स) सर्वत्र ।
२. ५८७/१-२ ये दोनों गाथाएं हस्तप्रतियों में मिलती हैं पर टीका की मुद्रित पुस्तक में नहीं हैं। किन्तु टीकाकार ने 'इयमत्र भावना' कहकर इनकी व्याख्या की है। संभव लगता है कि विषय को स्पष्ट करने के लिए टीका की व्याख्या के अनुसार बाद में इन गाथाओं को जोड़ दिया गया हो। निशीथ भाष्य में भी इस क्रम में ये गाथाएं नहीं मिलती हैं।
३. य (ब, निभा ६६३०), वा (स)।
४. ० लहुतो (अ)।
५. निभा ६६३१, इस गाथा के बाद निभा (६६३२) में निम्न गाथा अतिरिक्त मिलती है—
   एमेव य वसभस्स वि, आयरियादी नवसु ठाणेसु ।
   नवरं चउलहुगा पुण, तस्सादी छल्लहू अंते ॥
६. X (ब)।
७. निभा ६६३३।
८. वि (निभा ६६३४)।
९. निभा (६६३५) में इस गाथा के बाद निम्न गाथा अतिरिक्त मिलती है—
   एमेव य भिक्खुस्स वि, आलोएंतस्स नवसु ठाणेसु ।
   चउगुरुगा पुण आदी, छग्गुरुगा तस्स अंतम्मि ॥
१०. निभा ६६३६।
११. वि (निभा ६६३७)।
१२. अमुयत० (ब), अणुमुयंतस्स (अ, स, निभा ६६३९)।
१३. X (ब)।
१४. वा (ब)।
१५. चउगुरुयं (ब)।
१६. छग्गुरुयं छल्लहुयं, चउगुरुयं वा बितिएणं (अ, स), निभा ६६४०।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५९६. सव्वत्थ वि[1] 'समासणे, आलोएंतस्स[2] चउगुरू होंति ।
विसमा'लण नीयतरे[3] अकारणे अविहिए मासो[4] ॥

५९७. मासादी पट्ठविते, जं अण्णं सेवती[5] तगं सव्वं ।
साहणिऊणं मासा, 'छद्दिज्जंते परे'[6] झोसो ॥

५९८. दुविहा पट्ठवणा खलु, एगमणेगा य होतऽणेगा य ।
तवतिग परियत्ततिगं, तेरस ऊ[7] जाणि य पदाणि[8] ॥नि.१२० ॥

५९९. पट्ठविता 'ठविता या'[9] कसिणाकसिणा तहेव हाडहडा ।
आरोवण पंचविहा, पायच्छित्तं पुरिसजाते[10] ॥नि.१२१ ॥

६००. पट्ठविता य[11] वहंते, वेयावच्चट्ठिता ठवितगा[12] उ ।
कसिणा झोसविरहिता[13], जहि झोसो सा अकसिणा उ[14] ॥

६०१. उग्घातमणुग्घातं[15], मासादि तवो उ दिज्जते सज्जं[16] ।
मासादी निक्खित्ते, जं सेसं तं अणुग्घातं[17] ॥

६०२. छम्मासादि वहंते, अंतरें आवण्ण जा तु आरुवणा ।
सा होति अणुग्घाता, तिन्नि विगप्पा तु चरिमाए[18] ॥

६०३. 'सा पुण'[19] जहन्न-उक्कोस-मज्झिमा 'होंति तिन्नि'[20] तु विगप्पा ।
मासो छम्मासा वा[21], अजहन्नुक्कोस जे मज्झे[22] ॥

६०३/१. 'एगूणवीसति विभासितस्स'[23] हत्थादिवायणं तस्स ।
आरोवणरासिस्स तु, वहंतगा होंतिमे पुरिसा[24] ॥

६०४. कयकरणा इतरे या, सावेक्खा खलु तहेव निरवेक्खा ।
निरवेक्खा जिणमादी, सावेक्खा आयरियमादी[25] ॥

---

१. वी (स)।
२. सट्ठाणं अणुमुयंतस्स (निभा ६६३८)।
३. निच्चतरे (अ, ब, स)।
४. इस गाथा में निभा में क्रमव्यत्यय है।
५. सेवितं (स)।
६. ० ज्जंतेतरे (अ, निभा ६६४१)।
७. उ (निभा),
८. पताई (निभा ६६४२)।
९. ठवितिया (स)।
१०. निभा ६६४३, अ, ब प्रति में ५९८ से ६०३ तक की गाथाएं नहीं मिलती है। उसके स्थान पर व्यभा की दुहओ_ (गाथा १८४) से नामं_ (गाथा १८८) तक की गाथाएं मिलती है।
११. उ (ब)।
१२. ठवितिगा (अ, स)।
१३. ० विरया (अ)।
१४. तु (निभा ६६४४)।
१५. ०घाता (अ)।
१६. जत्थ (अ, स)।
१७. निभा ६६४५।
१८. निभा ६६४६।
१९. अधवा (अ, स)।
२०. तिन्नि होंति (अ)।
२१. या (अ, स)।
२२. निभा ६६४७।
२३. एक्कूणविसतिविभासियम्मि (निभा ६६४८)।
२४. यह गाथा टीका की मुद्रित पुस्तक में भाग के क्रम में नहीं है तथा इसकी व्याख्या भी टीकाकार ने नहीं की है। हस्तप्रतियों में यह गाथा प्राप्त है। निशीथभाष्य की गाथाओं के क्रम में यह गाथा मिलती है। संभव है लिपिकारों द्वारा यह प्रसंगवश बाद में जोड़ दी गई हो।
२५. निभा ६६४९, व्यभा १५९।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६०५. अकतकरणा वि[१] दुविधा, अणभिगता अभिगता य बोधव्वा ।
जं सेवेति[२] अभिगते, अणभिगते अत्थिरे इच्छा[३] ॥

६०६. अहवा साविक्खितरे, निरवेक्खा नियमसा[४] उ कयकरणा ।
इतरे कताऽकता वा, थिराऽथिरा नवरि गीयत्था[५] ॥

६०७. छट्ठट्ठमादिएहिं, कयकरणा ते उ उभयपरियाए[६] ।
अभिगतकयकरणत्तं, जोगायतगारिहा[७] केई[८] ॥

६०८. सव्वेसिं अविसिट्ठा, आवत्ती तेण पढमता मूलं ।
सावेक्खे गुरुमूलं[९], 'कताकते होति छेदो उ'[१०] ॥

६०९. पढमस्स होति मूलं, बितिए मूलं च छेद छग्गुरुगा ।
जतणाय होति सुद्धो, अजयण[११] गुरुगा तिविधभेदो[१२] ॥

६१०. सावेक्खो त्ति च काउं, गुरुस्स कडजोगिणो[१३] भवे छेदो ।
अकयकरणम्मि छग्गुरु, इति 'अड्डोकंतिए नेयं'[१४] ॥

६११. अकयकरणा उ[१५] गीता, जे य 'अगीता य अकय'[१६] अथिरा य ।
तेसावत्ति अणंतर, बहुयंतरियं व झोसो वा[१७] ॥

६१२. आयरियादी तिविधो, सावेक्खाणं तु किं कतो भेदो ।
एतेसिं पच्छित्तं, दाणं चऽण्णं अतो तिविधो[१८] ॥

६१३. कारणमकारणं वा, जतणाऽजतण 'व नत्थिऽगीयत्थे'[१९] ।
एतेण कारणेणं, आयरियादी भवे तिविधा[२०] ॥

---

१. य (ब) ।
२. सेवति (अ, स) ।
३. निभा ६६५०, व्यभा १६० ।
गाथा ६०४ से ६१८ तक की गाथाओं का पुनरावर्तन हुआ है। ये व्यभा १५९-१८१ तक की गाथाएं हैं। बीच में कुछ गाथाएं छूट भी गई हैं। तथा कुछ गाथाओं में क्रमव्यत्यय भी हुआ है। टीकाकार स्वयं इस बात का उल्लेख करते हुए कहते हैं —एतत्प्रभृतिका गाथा यद्यपि प्रागपि व्याख्याता तथापि मूलटीकाकारेणापि भूयो पि व्याख्याता इति तन्मार्गानुसारतः स्थानाशून्यार्थं वयमपि लेशेन व्याख्यामः (मवृभाग ३ प ४८) इनमें कुछ गाथाएं टीका में व्याख्यात नहीं हैं किन्तु हमने इन्हें भाष्यगाथा के क्रम में रखा है।
४. ०मसो (स) ।
५. निभा ६६५१, व्यभा १६१ ।
६. ०परियारा (निभा ६६५२) ।
७. जोगा य तवारिहा (निभा), ० तधारिधा (अ, स) ।
८. कोइ (स), व्यभा १६२ ।
९. गुरौ आचार्ये गाथायामत्र विभक्तिलोपः प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
१०. कतमकते छेदमादी तु (निभा ६६५५), व्यभा १६६ ।
११. अकरण (स) ।
१२. निभा ६६५६, यह गाथा टीका में नहीं है किन्तु हस्तप्रतियों में प्राप्त है।प्रथम भाग में प्राप्त गाथाओं के अनुसार ६०९-६१० की गाथा में क्रम व्यत्यय है।
१३. कय० (अ) ।
१४. अड्डोक्कंतीए णेयव्वं (निभा ६६५७), एवड्डोकंतीए नेयं (अ), व्यभा १६७ ।
१५. य (निभा, स) ।
१६. अगीयाऽकता य (निभा ६६५८) ।
१७. व्यभा १६८ ।
१८. यह गाथा टीका में नहीं है किन्तु हस्तप्रतियों में प्राप्त है। प्रथम भाग में भी इस क्रम में यह गाथा मिलती है, व्यभा १६९ ।
१९. य तत्थ गीयत्थे (निभा ६६५३) ।
२०. व्यभा १७०, निभा में ६६५३ एवं ६६५४ ये दोनों गाथाएं व्यभा (६०७) गाथा के बाद हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६१४. कज्जाऽकज्ज[1] जताऽजत, अविजाणंतो अगीतो जं सेवे ।
सो हो‌इ तस्स दप्पो, गीते दप्पाजते दोसा[2] ॥

६१५. दोसविभवाणुरूवो, लोए दंडो वि किमुत उत्तरिए ।
तित्थुच्छेदो इहरा, निराणुकंपा न 'वि य सोही'[3] ॥

६१६. तिविधे तेगिच्छम्मी, उज्जुग-वाउलण-साहणा चेव ।
पण्णवणमणिच्छंते, दिट्ठंतो भंडिपोतेहिं[4] ॥

६१७. सुद्धालंभि[5] अगीते, अजयणकरणकधणे भवे गुरुगा ।
कुज्जा व अतिपसंगं, असेवमाणे व असमाधी[6] ॥

६१८. जा एगदेसे अदढा[7] उ भंडी, सीलप्पए सा उ करेति कज्जं ।
जा दुब्बला संठविता वि संती, न तं तु सीलेंति विसण्णदारुं[8] ॥

६१९. जो एगदेसे अदढो[9] उ पोतो, सीलप्पए सो उ[10] करेति कज्जं ।
जो दुब्बलो संठवितो[11] वि संतो, न तं तु सीलंति विसण्णदारुं[12] ॥

६२०. निव्वितिए[13] पुरिमड्ढे, एक्कासण अंबिले 'चउत्थे य'[14] ।
'पण दस पण्णरसे या, वीसा तत्तो य पणुवीसा'[15] ॥

६२१. मासो लहुगो गुरुगो, चउरो लहुगा य होंति गुरुगा य ।
छम्मासा लहु-गुरुगा, छेदो मूलं तध दुगं च[16] ॥

६२२. एसेव गमो नियमा, मास - दुमासादिगा तु संजोगा ।
उग्घातमणुग्घाए, 'मीसम्मि य सातिरेगे य'[17] ॥

६२३. एसेव गमो नियमा, समणीणं दुगविवज्जितो होति ।
आयरियादीण जहा, पवित्तिणिमादीण वि तधेव[18] ॥

---

१. कज्जमकज्जे (स), कज्जमकज्ज (अ, निभा ६६५४)।
२. व्यभा १७१, ६१५-६१६ ये दोनों गाथाएं टीका की मुद्रित पुस्तक में नहीं हैं। किन्तु हस्तप्रतियों में प्राप्त है। व्यवहारभाष्य के प्रथम भाग (१७१-७२) में भी इस क्रम में ये दोनों गाथाएं मिलती हैं।
३. य विसोही (अ), निभा ६६५९, इस गाथा के बाद पहले भाग में पांच गाथाएं (१७३-७७) और मिलती हैं। उनका टीका एवं हस्तप्रति दोनों में कोई उल्लेख नहीं है।
४. भंडिवोदेहिं (स), निभा ६६६१, व्यभा १७८।
५. ० लंभे (अ, निभा ६६६०)।
६. यह गाथा टीका में नहीं है किन्तु हस्तप्रतियों में प्राप्त है। व्यभा में भी १७९ के क्रमांक में यह गाथा मिलती है।
७. ण दढा (स)।
८. व्यभा १८०।
९. ण दढो (स)।
१०. य (ब)।
११. सीलवितो (अ, स)।
१२. व्यभा १८१।
१३. निव्वितीय (अ, स), निव्विगितिय (निभा)।
१४. अभत्तट्ठे (निभा)।
१५. गाथा का उत्तरार्ध निभा (६६६२) में इस प्रकार है—
पण दस पण्णर वीसा, तत्तो य भवे पणुव्वीसा (निभा, व्यभा १६३), (६१९-६२०) ये दोनों गाथा टीका की मुद्रित पुस्तक में नहीं है किन्तु हस्तप्रतियों में प्राप्त हैं।
१६. निभा ६६६३, व्यभा १६४।
१७. मीसं मीसाइरेगे य (निभा ६६६४)। यह गाथा टीका की मुद्रित पुस्तक में नहीं है किन्तु हस्तप्रतियों में मिलती है। निशीथ भाष्य में भी इस क्रम में यह गाथा मिलती है।
१८. निभा ६६६५।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६२४. परिहारियाण[१] उ विणा, भवंति इतरेहिं वा अपरिहारी ।
मेरावसेसकधणं, इति मिस्सगसुत्तसंबंधो ॥

६२५. पुव्वंसि[२] अप्पमत्तो, भिक्खू उववण्णितो[३] भदंतेहिं ।
'एक्के दुवे व'[४] होज्जा, बहुया उ कहं[५] समावण्णा[६] ॥

६२६. चोदग बहुउप्पत्ती, जोधा व जधा तधा समणजोधा ।
दव्वच्छलणे जोधा, भावच्छलणे समणजोधा ॥नि.१२२ ॥

६२७. आवरिता वि रणमुहे, जधा छलिज्जंति अप्पमत्ता वि ।
छलणा 'वि होति दुविहा'[७], जीवंतकरी[८] य इतरी य ॥

६२८. मूलगुण-उत्तरगुणे, जयमाणा[९] वि हु तधा छलिज्जंति ।
भावच्छलणाय जती, 'सा वि य देसे य सव्वे य'[१०] ॥

६२९. एवं तू परिहारी, अप्परिहारी[११] य हुज्ज बहुया उ[१२] ।
'तेगेंतो व निसीहिं[१३], अभिसेज्जं वावि चेतेज्जा[१४] ॥नि.१२३ ॥

६३०. ठाणं निसीहिय त्ति य, एगट्ठं जत्थ[१५] ठाणमेवेगं ।
चेतेंति[१६] निसि दिया[१७] वा, सुत्तत्थनिसीहिया सा तु ॥नि.१२४ ॥

६३१. सज्झायं काऊणं, निसीहियातो निसिं चिय उवेंति ।
अभिवसिउं[१८] जत्थ निसिं, उवेंति पातो[१९] तई सेज्जा[२०] ॥

६३२. निक्कारणम्मि गुरुगा, कज्जे लहुगा अपुच्छणे लहुओ ।
पडिसेहम्मि य लहुया, गुरुगमणे होंतऽणुग्घाता ॥नि.१२५ ॥

६३३. तेणादेस गिलाणे झामण'[२१] इत्थी नपुंस मुच्छा य ।
ऊणत्तणेण दोसा, हवंति एते उ वसधीए ॥दारं ॥नि.१२६ ॥

---

१. पारिहा० (स)।
२. पुव्वीसु (अ, स)।
३. ० ण्णिउं (ब)।
४. एक्क व दुए (ब)।
५. कध (अ), कह (ब)।
६. अ और स प्रति में ६२५वीं गाथा के बाद ६२९ एवं ६३०वीं गाथा मिलती है फिर ६२६वीं गाथा है। हमने मुद्रित टीका के क्रम को स्वीकृत किया है।
७. वि य होति दुहा (अ, स)।
८. जीयंत ० (ब)।
९. जइमाणा (स)।
१०. x (ब)।
११. अपरिहारिय (ब)।
१२. ऊ (स)।
१३. ते एगतो निसीधिं (स)।
१४. यह गाथा अ और स प्रति में प्राप्त है। टीका की मुद्रित पुस्तक में यह गाथा नहीं है किन्तु इसकी व्याख्या प्राप्त है। संभव लगता है संपादक के द्वारा यह गाथा छूट गई है। विषयवस्तु की दृष्टि से भी यह गाथा यहां संगत लगती है।
१५. तत्थ (स)।
१६. चिंतिति (स)।
१७. दिवा (स)।
१८. ० वसिओ (ब)।
१९. पादो (अ), प्रातः (मवृ)।
२०. अ और स प्रति में चोयग_ (गाथा ६२६) से मूलगुण_ (गाथा ६२८) ये तीन गाथाएं इस गाथा (६३१) के बाद है। संभव है लिपिकार द्वारा यह क्रमव्यत्यय हो गया हो।
२१. झामण (ब), तामण (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६३४. दुविधाऽवहार सोधी, एसणघातो य जा य परिहाणी ।
आएसमविस्सामण[1], परितावणता य एक्कतरे ॥

६३५. आदेसमविस्सामण[2], परितावण[3] तेसऽवच्छलत्तं[4] च ।
गुरुकरणे वि य दोसा, हवंति[5] परितावणादीया ॥दारं ॥

६३६. सयकरणमकरणे वा, गिलाण परितावणा य दुहओ[6] वि ।
बालोवधीण[7] दाहो, तदट्ठ अण्णे वि आलित्ते ॥दारं ॥

६३७. इत्थी नपुंसगा[8] वि य, ओमत्तणतो[9] तिहा भवे दोसा[10] ।
अभिघात पित्ततो वा, मुच्छा अंतो व बाहिं व ॥दारं ॥

६३८. जत्थ वि य ते वयंती[11], अभिसेज्जं वा वि अभिणिसीधिं वा ।
तत्थ वि य इमे दोसा, होंति गयाणं मुणेयव्वा[12] ॥

६३९. वीयार तेण आरक्खि, तिरिक्खा इत्थिओ नपुंसा य ।
सविसेसतरे दोसा, दप्पगयाणं हवंतेते ॥दारं ॥नि.१२७ ॥

६४०. अप्पडिलेहियदोसा, अविदिन्ने वा हवंति उभयम्मि[13] ।
वसधीवाघातेण य, एंतमणिंते य दोसा उ ॥

६४१. सुण्णाइ गेहाइ उवेंति तेणा, आरक्खिया ताणि य संचरंति ।
तेणो त्ति एसो पुररक्खितो वा, अन्नोन्नसंका[14] अतिवायएज्जा[15] ॥दारं ॥

६४२. दुगुंछिता[16] वा अदुगुंछिता वा, दित्ता अदित्ता व तहिं तिरिक्खा ।
चउप्पया वाल सिरीसवा वा, एगो व 'दो तिण्णि व'[17] जत्थ[18] दोसा ॥

६४३. संगारदिन्ना[19] व उवेंति तत्था, 'ओहा पडिच्छंति'[20] निलिच्छमाणा ।
इत्थी नपुंसा च करेज्ज दोसे, 'तस्सेवणट्ठा व'[21] उवेंति जे उ ॥

६४४. कप्पति उ[22] कारणेहिं, अभिसेज्जं गंतुमभिनिसीधिं[23] वा ।
लहुगाओ अगमणम्मि, ताणि य कज्जाणिमाइं तु ॥

---

१. x (ब), आएस अविस्सा० (अ) ।
२. गाथायां मकारोऽलाक्षणिकः एवमन्यत्रापि द्रष्टव्यम् (मवृ) ।
३. परिभावण (स) ।
४. तेसं अवच्छलत्थं (स), तेसु अवत्सलत्वं (मवृ) ।
५. होंति (अ, स) ।
६. दुहितो (ब) ।
७. वालोवि० (स) ।
८. नपुंसिकया (ब), नपुंसगता (अ) ।
९. उमत्तणहो (अ), उम्मत्त० (स) ।
१०. वेसा (ब)
११. वियंती (स) ।
१२. अ प्रति में इस गाथा का उत्तरार्ध नहीं है ।
१३. उदयम्मि (स) ।
१४. x (अ) ।
१५. दयइ वादएज्जा (ब) ।
१६. दुगुंछिता (स) ।
१७. दो व तिण्णि (ब) ।
१८. तत्थ (स) ।
१९. सिंगार० (स) ।
२०. अहवा य दिच्छंति (स) ।
२१. ० णट्ठाए (ब) ।
२२. ऊ (स) ।
२३. गंतु अभि० (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६४५. असज्झाइय पाहुणए, संसत्ते वुट्ठिकाय सुयरहसे[१] ।
पढमचरमे[२] दुगं तू, सेसेसु य होति अभिसेज्जा ॥नि.१२८॥

६४६. छेदसुत-विज्जमंता, पाहुड-अविगीत-महिसदिट्ठंतो ।
इति दोसा चरमपदे[३], पढमपदे पोरिसीभंगो[४] ॥दारं॥

६४७. अतिसंघट्टे हत्थादिघट्टणं जग्गणे अजिण्णादी[५] ।
दोसु य[६] संजमदोसा, जग्गण 'उल्लोवहीया वा'[७] ॥दारं॥

६४८. दिट्ठं कारणगमणं[८], जइ[९] उ गुरू वच्चती[१०] ततो गुरुगा ।
ओराल[११] इत्थि पेल्लण, संका पच्चत्थिया दोसा ॥

६४९. 'गुरुकरणे पडियारी'[१२], भएण[१३] बलवं 'करेज्ज जे रक्खं'[१४] ।
कंदप्प-विग्गही वा, अचियत्तो ठाणदुट्ठो वा ॥

६५०. गंतव्व गणावच्छो, पवत्ति थेरे य गीतभिक्खू य ।
एतेसिं असतीए, अग्गीते मेरकहणं तु ॥नि.१२९॥

६५१. मज्झत्थोऽकंदप्पी[१५], जो दोसे लिहति लेहओ[१६] चेव ।
केसु[१७] य ते सीएज्जा[१८], दोसेसुं ते इमे सुणसु ॥

६५२. थेर-पवत्ती गीता, ऽसतीएँ मेरं कहंतऽगीयत्थे[१९] ।
भयगोरवं च[२०] जस्स उ, करेंति सयमुज्जओ जो य[२१] ॥

६५३. पडिलेहणऽसज्झाए, आवस्सग दंड विणय राइत्थी[२२] ।
तेरिच्छ वाणमंतर, पेहा नहवीणि[२३] कंदप्पे ॥दारं॥नि. १३०॥

६५४. पडिलेहण सज्झाए, न करेंति हीणऽहियं च विवरीतं ।
सेज्जोवहि-संथारे, दंडगउच्चारमादीसु ॥दारं॥

---

१. ०रहस्से (स)।
२. ०चरिमे (ब), ०चरमे य (अ)।
३. चरिम० (ब) सर्वत्र।
४. पोरुसी ०(स)।
५. अजीरादी (अ, ब)।
६. उ (अ, स)।
७. उल्लोवती आता (अ)।
८. कारणे० (अ)।
९. जती (स)।
१०. वच्चए (ब)।
११. ओराले (ब, स)।
१२. गुरुमादी पडियरतो (अ, स)।
१३. भए व (अ)।
१४. करेसति पक्खं (अ, ब)।
१५. मज्झतो अकंदप्पी (अ, ब)।
१६. लेहितो (ब)।
१७. तेसु (ब), तेसि (अ)।
१८. सिंदेज्जा (स)।
१९. अगीयत्थे (अ)।
२०. व (ब)।
२१. अ और स प्रति में यह गाथा प्राप्त नहीं है।
२२. रायत्ती (ब)।
२३. ० वीण (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६५५. 'न करेंताऽऽवासं वा'[१], हीणहियनिविट्ठ[२] पाउय निसण्णा[३] ।
दंडग्गहादि[४] विणयं, रायणियादीण न करेंति ॥दारं॥

६५६. रायं[५] इत्थिं[६] तह अस्समादि वंतर रधे[७] य पेहेंति[८] ।
तध नक्खवीणियादी, 'कंदप्पादी व कुव्वंति'[९] ॥

६५७. एतेसु वट्टमाणे, अट्ठिय पडिसेहिए[१०] इमा मेरा ।
हियए करेति दोसे, गुरुय कहिते 'स ददे सोधिं'[११] ॥

६५८. अतिबहुयं पच्छित्तं, अदिन्न वाहे य रायकन्ना उ[१२] ।
ठाणासति[१३] पाहुणए, न[१४] उ गमणं 'मास कक्करणे'[१५] ॥नि.१३१॥

६५९. अति वेढिज्जति[१६] भंते !, मा हु दुरुव्वेढओ[१७] भवेज्जाहि ।
पच्छित्तेहि[१८] अकंडे[१९], निद्दयदिण्णेहि भज्जेज्जा ॥

६६०. तं दिज्जउ[२०] पच्छित्तं, जं तरती सा य कीरती मेरा ।
जा तीरति परिहरिउं[२१], मोसादि अपच्चओ इहरा[२२] ॥

६६१. जो जत्तिएण[२३] सुज्झति, अवराधो तस्स तत्तियं देति[२४] ।
पुव्वमियं परिकहितं, घड-पडादिएहि[२५] नाएहिं ॥

६६२. कंटगमादिपविट्ठे, नोद्धरति[२६] सयं न 'भोइए कहति'[२७] ।
कमढीभूत वणगते, आंगलणं खोभिता मरणं ॥

६६३. बितिओ सयमुद्धरती, अणुद्धिए भोइयाय[२८] णीहरति ।
परिमद्दण दंतमलादि पूरण[२९] 'धाडण पलातो'[३०] व्व ॥

६६४. वाहत्थाणी साधू, वाहि[३१] गुरू कंटकादि अवराधा ।
सोही य ओसधाइं, पसत्थनातेणुवणओ[३२] उ ॥

---

१. न करेंती आवस्सं (ब)।
२. ०निवट्ठ (अ, ब)।
३. निवण्णो (स)।
४. डंडग्गहीइ (स)।
५. राइं (ब, स)।
६. इत्थी (स)।
७. रधि (अ)।
८. पोहेंति (ब)।
९. कंदप्पे या विकुव्वंति (अ, स), कंदप्पायाई निकुव्वंति (ब)।
१०. पडिसेविए (अ, ब)।
११. ददे सोधी वा (अ)।
१२. य (ब)।
१३. ठागा० (स)।
१४. x (अ)।
१५. मासे अक्करणे (स), मासो उ फक्क ० (ब)।
१६. वढि० (ब)।
१७. दुरुव्वूढत्तो (ब)।
१८. अच्छित्तेहि (स)।
१९. अयंडे (ब)।
२०. दिज्जति (अ, ब)।
२१. परिहरीउ (ब), पाठांतरं वा परिवहिडमिति (मवृ)।
२२. इतरा (स)।
२३. जत्तिएहि (स)।
२४. देंति (ब, स)।
२५. पडगादीहि (स)।
२६. नो उव्वरति (अ, स), नोव्वरति (ब)।
२७. वेइए कहति (अ), न चोइए कहए (स)।
२८. भोतियाए से (अ), भोतिया सि (स)।
२९. पुण्णं (ब)।
३०. वणगयप० (ब, मु)।
३१. वाहो (ब), वाही (अ)।
३२. ०नातेण विणओ उ (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६६५. पडिसेविते[१] उवेक्खति, न य णं उव्वीलते[२] अकुव्वंतं[३] ।
संसारहत्थिहत्थं, पावति विवरीतमितरो[४] उ ॥

६६६. आलोयमणालोयण, 'गुणा य दोसा य'[५] वण्णिया एते ।
अयमन्नो दिट्ठंतो, सोहिमदेंते य देंते य ॥

६६७. निज्जूहादि[६] पलोयण, अवारण[७] पसंग अग्गदारादी ।
धुत्तपलायण निवकहण दंडणं अन्नठवणं च ॥

६६८. निज्जूहगतं दट्ठुं, बितिओ अन्नो उ वाहरित्ताणं[८] ।
विणय करेति[९] तीसे, सेसभयं पूयणा रण्णा ॥

६६९. राया इव तित्थयरा, महत्तर गुरू तु साधु कन्नाओ ।
ओलोयण[१०] अवराहा, अपसत्थपसत्थगोवणओ[११] ॥

६७०. असज्झाइएँ असंते, ठाणासति[१२] पाहुणागमे चेव ।
अन्नत्थ न गंतव्वं, गमणे गुरुगा तु पुव्वुत्ता ॥

६७१. वत्थव्वा वारंवारएण, जग्गंतु मा य वच्चंतु ।
एमेव य पाहुणए, जग्गण गाढं[१३] अणुव्वाए ॥

६७२. एमेव य संसत्ते, देसे अगलंतए य सव्वत्था ।
अम्हवहा पाहुणगा, उवेंति रिक्का उ कक्करणा ॥

६७३. बितियपयं[१४] आयरिए, निद्दोसे दूरगमणऽणापुच्छा ।
पडिसेहिय[१५] गमणम्मी, तो[१६] तं वसभा 'बला नेंति'[१७] ॥

६७४. जत्थ गणी न वि णज्जति, भद्देसु य[१८] जत्थ नत्थि ते दोसा ।
तत्थ वयंतो सुद्धो, इयरे वि वयंति[१९] जयणाए ॥

६७५. वसधीय असज्झाए, सण्णादिगतो य पाहुणे दट्ठुं ।
सोउं[२०] च असज्झायं, वसधिं उवेंति भणति अन्ने ॥

---

१. ० सेवंत (मु) ।
२. ओवीलए (अ) ।
३. व कुव्वंतं (अ), अकुव्वंतो (ब) ।
४. विवरिम्मि इयरो (अ, स) ।
५. दोसा य गुणा य (अ, ब, स) ।
६. ० जूढादि (अ) ।
७. आगरण (स) ।
८. वहरत्ताणं (ब) ।
९. करेंति (ब) ।
१०. आलो ० (ब) ।
११. ० थगो उवणओ उ (अ), ०पसत्थवणओ तु (स) ।
१२. ठाणासति (स) ।
१३. बाढं (ब, स) ।
१४. ०पदे (स) ।
१५. पडिसेविय (स) ।
१६. वो (ब) ।
१७. पलाणंति (अ, स) यहां ब के स्थान पर लिपिदोष से प हो गया है । अ और स प्रति में प्रायः स्थानों पर ब के स्थान पर प लिखा हुआ है ।
१८. व (अ, स), या (ब) ।
१९. वसंति (ब, स) ।
२०. मोत्तुं (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६७६. दीवेध[१] गुरूण[२] इमं, दूरे वसही इमो वियालो य ।
संथार-काल-काइयभूमी पेहट्ठ एमेव ॥दारं ॥

६७७. एमेव य पडिसिद्धे, सण्णादिगतस्स किंचि पडिपुच्छा[३] ।
तं पि य होढा[४] असमिक्खिऊण पडिसेहितो जम्हा ॥

६७८. जाणंति व णं वसभा, अधवा वसभाण तेण सब्भावो ।
कहितो[५] न मेत्थ[६] दोसो, तो णं वसभा बला नेंति ॥

६७९. अभिसेज्ज अभिनिसीहिय, एक्केक्का दुविध होंति नायव्वा ।
एगवगडाय अंतो, बहिया संबद्धऽसंबद्धा ॥नि. १३२ ॥

६८०. जा सा तु[७] अभिनिसीधिय, सा नियमा होति तू असंबद्धा ।
संबद्धमसंबद्धा, अभिसेज्जा होति नायव्वा ॥

६८१. धरमाणच्चिय सूरे, संथारुच्चार-कालभूमीओ ।
पडिलेहितऽणुण्णविते, वसभेहि वयंतिमं वेलं[८] ॥

६८२. आवस्सगं तु काउं, निव्वाघातेण होति गंतव्वं ।
वाघातेण तु भयणा, देसं सव्वं वऽकाऊणं[९] ॥

६८३. तेणा सावय[१०] वाला, गुम्मिय आरक्खि ठवण पडिणीए ।
इत्थि - नपुंसग - संसत्त - वास - चिक्खल्ल - कंटे य ॥

६८४. थुतिमंगलकितिकम्मे, काउस्सग्गे[११] य तिविधकितिकम्मे ।
तत्तो य[१२] पडिक्कमणे, 'आलोयण अकयकितिकम्मे'[१३] ॥

६८५. काउस्सग्गमकाउं[१४], कितिकम्मालोयणं[१५] जहण्णेणं ।
गमणम्मि उ[१६] एस विधी, आगमणम्मी[१७] विहिं वोच्छं ॥

६८६. आवस्सगं अकाउं, निव्वाघाएण होति आगमणं ।
वाघायम्मि उ भयणा, देसं सव्वं च काऊणं ॥

६८७. काउस्सग्गं काउं, कितिकम्मालोयणं पडिक्कमणं ।
कितिकम्मं तिविहं वा, काउस्सग्गं परिण्णाय ॥

---

१. दीवेह (ब)।
२. गुरुणा (ब)।
३. ०पुच्छे (अ)।
४. होढो (अ), होढा देशीपदमेतत् दत्तमेव कृतमेवेत्यर्थे (मवृ)।
५. गहितो (स)।
६. मित्थ (ब), मेत्थि (स)।
७. तो (ब)।
८. इमं वेलामिति कालाध्वनोर्व्याप्ताविति सप्तम्यर्थे द्वितीया (मवृ)।
९. अकाऊणं (ब)।
१०. सावयं (ब)।
११. उस्सग्गो (अ)।
१२. x (अ)।
१३. ० यणा य किति० (अ), ० यण तो य किति० (स), अ और स प्रति में यह गाथा आवस्सगं....(६८६) गाथा के बाद है।
१४. ०ग्ग उ काउं (ब)।
१५. कति० (अ)
१६. वि (ब), य (अ)।
१७. ० णम्मि (अ, स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६८८. थुतिमंगलं च काउं, आगमणं होति अभिनिसेज्जाओ ।
बितियपदे 'भयणा ऊ'[१], गिलाणमादीसु कायव्वा ॥

६८९. गेलण्णवास महिया, पदुट्ठ[२] अंतेपुरे निवे अगणी ।
अधिगरण हत्थिसंभम, गेलण्ण निवेयणा नवरिं ॥

६९०. परिहारो खलु पगतो, अदिन्नगं वावि पावपरिहारं[३] ।
सक्खेत्तनिग्गमो वा, भणितो[४] इमगं तु दूरे वि ॥

६९१. पडिहारियगहणेणं, भिक्खुग्गहणं ति[५] होति 'किं न'[६] गतं ।
किं च गिहीण वि भण्णति, गणि-आयरियाण पडिसेधो ॥

६९२. वेयावच्चुज्जमणे, गणि-आयरियाण किण्णु पडिसेधो ।
भिक्खुपरिहारिओ वि हु, करेति[७] किमुतायरियमादी ॥

६९३. जम्हा आयरियादी, निक्खिविऊणं करेंति परिहारं ।
तम्हा आयरियादी, वि भिक्खुणो होंति नियमेणं ॥

६९४. परिहारिओ उ गच्छे, सुत्तत्थविसारओ सलद्धीओ ।
अन्नेसिं गच्छाणं[८], इमाइं[९] कज्जाइं जायाइं ॥**नि.१३३** ॥

६९५. अकिरिय[१०] जीए पिट्टण, संजमबद्धे[११] य लब्भऽलब्भंते[१२] ।
भत्तपरिण्णगिलाणे, संजमऽतीते य 'वादी य'[१३] ॥**नि.१३४** ॥

६९६. न वि य समत्थो वन्नो[१४], अहयं गच्छामि 'निक्खिवय भूमिं[१५]' ।
सरमाणेहि य भणियं, आयरिया जाणगा[१६] तुज्झं[१७] ॥

६९७. जाणंता माहप्पं, कहेंति[१८] सो वा सयं परिकधेति ।
'तत्थ स वादी'[१९] हु मए, वादेसु पराजितो बहुसो ॥

६९८. चोएति कहं तुब्भे, परिहारतवं गतं[२०] पवण्णं तु ।
निक्खिविउं पेसेहा[२१], चोदग ! सुण कारणमिणं तु ॥

१. भयणातो (अ), ०यणा उ (स) ।
२. पकुट्ठ (अ) ।
३. पाव एतं तु (अ, स) ।
४. भणिओ य (ब) ।
५. तु (ब) ।
६. किन्नु (ब) ।
७. कारेति (ब) ।
८. गच्छादीनां षष्ठी सप्तम्यर्थे प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
९. इमाई (ब) ।
१०. अकिरिया (स) ।
११. ०बंधे (मवृ) ।
१२. लभंतमलभंते (ब) ।
१३. वादीए (ब) ।
१४. ०धन्नो (अ) ।
१५. निक्खिवए भूमी (अ, स) ।
१६. जाणवा (अ) ।
१७. तुब्भं (ब, स) ।
१८. करेंति (स) ।
१९. बलवादीसु (स) ।
२०. पगतं (स) ।
२१. पेसेधो (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६९९. तिक्खेसु[1] तिक्खकज्जं, सहमाणेसु य कमेण कायव्वं ।
न य नाम न कायव्वं, कायव्वं वा उवादाए[2] ॥

७००. वणकिरियाए[3] जा होति, वावडा[4] जर-धणुग्गहादीया ।
काउमुवद्दवकिरियं, समेंति तो तं वणं[5] वेज्जा ॥

७०१. जह आरोग्गे पगतं, एमेव इमं[6] पि कम्मखवणेणं[7] ।
इहरा उ अवच्छल्लं, ओभावण[8] तित्थहाणी य[9] ॥

७०२. अप्परिहारी[10] गच्छति, 'तस्सऽसतीए व जो उ'[11] परिहारी ।
उभयम्मि वि अविरुद्धे[12], आयरहेतुं[13] तु तग्गहणं ॥नि. १३५ ॥

७०३. 'संविग्गमणुण्णजुतो, असती'[14] अमणुण्णमीसपंथेण ।
समणुण्णेसुं भिक्खं, काउं वसतेऽमणुण्णेसुं ॥

७०४. एमेव य संविग्गेऽसंविग्गे चेव एत्थ[15] संजोगा ।
पच्छाकड साभिग्गह, सावग-संविग्ग पक्खी[16] य ॥

७०५. 'आहारोवहि-झाओ'[17], 'सुंदरसेज्जा वि'[18] होति हु[19] विहारो ।
कारणतो तु वसेज्जा, इमे उ ते कारणा होंति ॥

७०६. उभतो गेलण्णे वा, वास नदी सुत्त अत्थ पुच्छा वा ।
विज्जानिमित्तगहणं, करेति आगाढपण्णे[20] वा ॥

७०७. वहमाण अवहमाणो, संघाडेगेण वा असति एगो ।
असती मूलसहाए[21], अन्ने वि सहायए देंति ॥

७०८. मोत्तूण भिक्खवेलं, जाणिय कज्जाइ पुव्वभणियाइं ।
अप्पडिबद्धो वच्चति, कालं थामं च आसज्ज[22] ॥

७०९. गंतूणं य सो तत्थ, पुव्वं[23] संगेण्हते ततो परिसं ।
संगिण्हिऊणं[24] परिसं, करेति वादं समं तेण ॥

---

१. तिणक्खेसु (अ) ।
२. उवाताए (अ, स) ।
३. ० किरियाण वि (ब) ।
४. वावरा (ब) ।
५. वण्ण (ब) ।
६. यमं (ब) ।
७. कम्मब्भवणेण (ब), कम्मब्भधणेण (अ) ।
८. ० वणं (ब) ।
९. या (अ, ब) ।
१०. अपरीहारी (स) ।
११. तस्सासतीए उ जाति (स) ।
१२. विरुद्धे (ब) ।
१३. द्वितीया पञ्चम्यर्थे आदरख्यापनार्थम् (मवृ) ।
१४. ०जुता सतीय (स) ।
१५. पंथ (अ, स) ।
१६. पक्खा (स) ।
१७. ०वहिज्झातो (अ), आहार उपधि स्वाध्यायः (मवृ) ।
१८. सेज्जाए (अ), सेज्जा य (स) ।
१९ तु (स) ।
२०. ०पक्खे (ब) ।
२१. ०सहावो (स) ।
२२. आसज्जा (ब) ।
२३. पुव्विं (ब) ।
२४. संगिण्हित्ता (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७१०. अबंभचारी[१] एसो, किं नाहिति कोट्ठ[२] एस उवगरणं[३] ।
वेसित्थीय[४] पराजित, निव्विसयपरूवणा[५] समए[६] ॥

७११. जो पुण अतिसयनाणी, सो जंपती[७] एस भिन्नचित्तो त्ति ।
को णेण समं वादो, 'दट्ठुं पि न जुज्जते एस'[८] ॥

७१२. अज्जेण भव्वेण वियाणएण[९], धम्मप्पतिण्णेण अलीयभीरुणा ।
सीलंकुलायारसमन्नितेण[१०], तेणं समं वाद समायरेज्जा[११] ॥

७१३. परिभूयमति एतस्स, एतदुत्तं[१२] न एस णे समओ ।
समएण विणिग्गहिते, गज्जति वसभोव्व परिसाए ॥

७१४. अणुमाणेउं रायं, सण्णातग गेण्हमाण[१३] विज्जादी ।
'पच्छाकडे चरित्ते'[१४], जधा तधा नेव सुद्धो उ ॥

७१५. अत्थवतिणा निवतिणा, पक्खवता बलवया पयंडेण ।
गुरुणा नीएण तवस्सिणा य सह वज्जए[१५] वादं ॥

७१६. नंदे 'भोइय खण्णा'[१६], आरक्खिय[१७] 'घडण गेरु'[१८] नलदामे ।
मूतिंग[१९] गेह डहणा, ठवणा भत्ते सपुत्त सिरा ॥

७१७. समतीतम्मि तु कज्जे, परे वयंतम्मि[२०] 'एग दुविहं वा'[२१] ।
संवासो न निसिद्धो, तेण परं छेदपरिहारो[२२] ॥

७१८. सुत्तत्थपाडिपुच्छं, करेंति[२३] साधू तु तस्समीवम्मि ।
आगाढम्मि य जोगे, तेसिं[२४] गुरू होज्ज कालगतो ॥

७१९. बंधाणुलोमयाए, उक्कमकरणं तु होति सुत्तस्स ।
आगाढम्मि य[२५] कज्जे, दप्पेण वि ते भवे छेदो ॥दारं ॥

---

१. अव्वभरिया (अ), पुव्वंभयारि (स) ।
२. कोट्ठु (अ), कोट्ठा (ब) ।
३. अहिगरणं (मवृ) ।
४. वेस० (अ), वेसे० (ब) ।
५. निव्विसिय० (अ) ।
६. समत्थो (ब) ।
७. भणाति (ब) ।
८. x (ब) ।
९. वियारएण (अ) ।
१०. सील शब्द में छंद की दृष्टि से अनुस्वार अतिरिक्त है ।
११. समारभेज्जा (अ, स), ब प्रति में यह गाथा नहीं है ।
१२. एतदुग्ग (स) ।
१३. अगेण्ह (स) ।
१४. ० कडोव्वरित्ते (स) ।
१५. वच्चए (अ) ।
१६. तोतिय वेणा (अ), खण्णा इति देशीपदमेतत् सर्वात्मना लूषिताः (मवृ) ।
१७. आयरक्खिता (ब) ।
१८. घडण गह (ब), घडणाग (स) ।
१९. मूयंग (ब), मुईग इति देशीपदं मत्कोटवाचकं (मवृ) ।
२०. वयंतंसि (मु), ववंतम्मि (स) ।
२१. एग दु तिहं वा (ब) ।
२२. ० छेद ववहारो (अ) ।
२३. करेति (स) ।
२४. तेसिं (ब), तेसि य (अ) ।
२५. उ (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७२०. आयरिए अभिसेगे, भिक्खू खुड्डे तहेव थेरे य ।
गहणं तेसिं इणमो, संजोगगमं[1] तु[2] वोच्छामि ॥

७२१. तरुणे निप्फन्नपरिवारे, लद्धिजुत्ते तहेव अब्भासे ।
अभिसेयम्मि य चउरो, सेसाणं पंच चेव गमा ॥

७२२. तरुणे बहुपरिवारे, सलद्धिजुत्ते तधेव अब्भासे ।
एते वसभस्स गमा[3], निप्फन्नो जेण सो नियमा ॥

७२३. तरुणे निप्फन्ने या, बहुपरिवारे सलद्धि अब्भासे ।
भिक्खू खुड्डा[4] थेराण, होंति एते गमा पंच ॥

७२४. पवत्तिणि अभिसेगपत्त, 'थेरि तह भिक्खुणी य खुड्डी य'[5] ।
'गहणं तासिं इणमो, संजोगगमं तु वोच्छामि'[6] ॥दारं ॥

७२५. तरुणी निप्फन्नपरिवारा, सलद्धिया जा य होंति अब्भासे ।
अभिसेयाणं[7] चउरो, सेसाणं पंच चेव गमा ॥दारं ॥

७२६. आयरिय गणिणि[8] वसभे[9], कमसो गहणं तहेव अभिसेया ।
सेसाण पुव्वमित्थी, मीसगकरणे कमो एस ॥दारं ॥

७२७. भिक्खू खुड्डग थेरे, अभिसेगे[10] चेव तध य आयरिए ।
गहणं तेसिं इणमो, संजोगगमं तु वोच्छामि ॥

७२८. तरुणे निप्फन्नपरिवारे, सलद्धिए जे य होति अब्भासे ।
अभिसेयम्मि य चउरो, सेसाणं[11] पंच चेव गमा ॥

७२९. असहंते[12] पच्चत्तरणम्मी[13] मा होज्ज सव्वपत्थारो ।
खुड्डो भीरऽणुकंपो[14], असहो घातस्स थेरो य ॥

७३०. गणि आयरिया उ सहू, 'देहवियोगे तु'[15] साहस विवज्जी ।
एमेव भंसणम्मि वि, उदिण्णवेदो त्ति नाणत्तं ॥दारं ॥

७३१. भिक्खुणी खुड्डी थेरी, अभिसेगा य पवत्तिणी चेव ।
करणं तासिं इणमो, संजोगगमं तु वोच्छामि ॥

---

१. ० कमं (निभा ६०२०) ।
२. च (अ) ।
३. गणा (अ) ।
४. खुद्दा (अ), खुड्डग (ब) ।
५. भिक्खुणि खुड्डा तहेव थेरी य (मु)
६. अभिसेगाए चउरो, जल-थलवासीसु संजोगा (निभा ६०२२) ।
७. ०सेयाए (स) ।
८. गणि (अ) ।
९. वसधे (अ) ।
१०. ० सेगा (ब) ।
११. शेषेषु षष्ठी सप्तम्यर्थे प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
१२. षष्ठ्यर्थे च सप्तमी (मवृ) ।
१३. पच्चासूरणम्मि (अ, ब, स), प्रत्यास्तरणं नाम संमुखीभूय युद्धकरणं (मवृ) ।
१४. भीरुऽणु० (ब), हीर० (स) ।
१५. देहविएहिं (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७३२. तरुणी निप्फन्नपरिवारा, सलद्धिया जा य होति अब्भासे ।
अभिसेयाए चउरो, सेसाणं पंच चेव गमा ॥दारं॥

७३३. पंतावणमीसाणं, दोण्हं वग्गाण होति करणं तु ।
पुव्वं तु संजतीणं, पच्छा पुण संजताण भवे ॥

७३४. भिक्खू खुड्डे थेरे, अभिसेगायरिय संजमे पडुप्पन्ने ।
करणे तेसिं इणमो, संजोगगमं तु वोच्छामि ॥

७३५. तरुणे निप्फन्नपरिवारे, सलद्धिए[1] जे य होति अब्भासे ।
अभिसेयम्मि य चउरो, सेसाणं पंच चेव गमा ॥

७३६. अपरिणतो सो जम्हा, अन्नं भावं वएज्ज[2] तो पुव्विं[3] ।
अपरीणामो[4] अधवा, न वि नज्जति किंचि[5] काहीइ[6] ॥

७३७. भिक्खुणि[7] खुड्डी थेरी, अभिसेग पवत्तिणि[8] संजमे पडुपण्णे ।
करणं तासिं इणमो, संजोगगमं तु वोच्छामि ॥

७३८. तरुणी निप्फन्नपरिवारा[9] सलद्धिया जा य होति अब्भासे ।
अभिसेगाए चउरो, सेसाणं पंच चेव गमा ॥दारं॥

७३९. खुड्डे थेरे भिक्खू, अभिसेगायरिय 'भत्तपाणं तु'[10] ।
करणं[11] तेसिं इणमो, संजोगगमं तु वोच्छामि ॥

७४०. तरुणे निप्फन्नपरिवारे, सलद्धिए जे य होति अब्भासे ।
'अभिसेयम्मि य'[12] चउरो, सेसाणं पंच चेव गमा ॥

७४१. खुड्डिय[13] थेरी भिक्खुणि, अभिसेग पवत्तिणी 'भत्तपाणं तु'[14] ।
करणं तासिं[15] इणमो, संजोगगमं तु वोच्छामि ॥

७४२. तरुणी निप्फन्नपरिवारा, सलद्धिया जा य होति अब्भासे ।
अभिसेगाए[16] चउरो, सेसाणं पंच चेव गमा ॥

७४३. अणुकंपा जणगरिहा[17], तिक्खखुधो[18] तेण[19] खुड्डओ पढमं ।
इति भत्तपाणरोहे, दुल्लभभत्ते वि[20] एमेव ॥दारं॥

---

१. सलद्धेए (ब)।
२. च वज्जते (अ)।
३. पुव्वं (ब)।
४. अपरि० (स)।
५. किं व (स)।
६. काधिति (अ), काहिंतु (ब)।
७. भिक्खु (ब)।
८. पवत्तणि (अ)।
९. ० वार (अ)।
१०. चट्टेण लहंति (अपा), वद्धेण लहंति (सपा)।
११. करणं तु (ब)।
१२. ० सेयम्मी (निभा ६०२१)।
१३. खुड्डीया (स)।
१४. चट्टेण लहंति (अपा), वद्धेण लहंति (सपा)।
१५. तेसिं (ब)।
१६. अभिसेयम्मि य (अ, स)।
१७. ० गरहा (ब, स)।
१८. तिक्खब्बाधा (अ), तिक्खखुहो (ब)।
१९. होइ (अ)।
२०. या (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७४४. खुड्डे थेरे भिक्खू, अभिसेगायरिय दुल्लभं भत्तं ।
करणं तेसिं इणमो, संजोगगमं तु वोच्छामि ॥

७४५. तरुणे निप्फन्नपरिवारे, सलद्धिए जे य होति अब्भासे ।
अभिसेयम्मि य चउरो, सेसाणं पंच चेव गमा ॥

७४६. खुड्डिय थेरी भिक्खुणि, अभिसेयपवित्ति दुल्लभं भत्तं ।
करणं तासिं इणमो, संजोगगमं तु वोच्छामि ॥

७४७. तरुणी निप्फन्नपरिवारा, सलद्धिया जा य होति अब्भासे ।
अभिसेयाए चउरो, सेसाणं पंच चेव गमा[१] ॥

७४८. परिणाय[२] गिलाणस्स य, दोण्ह वि कतरस्स होति कायव्वं ।
असतीय 'गिलाणस्स य'[३], दोण्ह वि संते परिण्णाए ॥

७४९. सावेक्खो उ गिलाणो, निरवेक्खो जीवितम्मि उ परिण्णी ।
इति दोण्ह वि कायव्वे, उक्कमकरणे[४] करे असहू ॥

७५०. 'वसभे जोधे'[५] य तहा, निज्जामगविरहिते जहा पोते ।
पावति विणासमेवं, 'भत्तपरिण्णाय संमूढो'[६] ॥

७५१. नामेण वि गोत्तेण य, विपलायंतो वि सावितो संतो ।
अवि भीरू वि नियत्तति[७], वसभो अप्फालितो[८] पहुणा[९] ॥

७५२. अप्फालिया जह[१०] रणे, जोधा भंजंति परबलाणीयं ।
गीतजुतो[११] उ परिण्णी, तध जिणति परीसहाणीयं ॥

७५३. सुनिउणनिज्जामगविरहियस्स पोतस्स जध भवे नासो ।
गीतत्थविरहियस्स उ, तहेव नासो परिण्णिस्स[१२] ॥

७५४. निउणमतिनिज्जामगो[१३], पोतो जह इच्छितं[१४] वए भूमिं[१५] ।
गीतत्थेणुववेतो, तह य[१६] परिण्णी लहति सिद्धिं ॥

---

१. ७४४ से ७४७ तक की चारों गाथाएं हस्तप्रतियों में प्राप्त नहीं हैं किन्तु टीका की मुद्रित प्रति में भाष्यगाथा के क्रम में हैं। यद्यपि ये गाथाएं पुनरावृत्त हुई हैं किन्तु 'दुर्लभभक्त द्वार' को स्पष्ट करने वाली हैं अतः हमने इन्हें भाष्यगाथा के क्रम में जोड़ा है।
२. परिण्णाय (ब)।
३. ०णस्सा (स)।
४. ०करणं (स)।
५. जोहे वसभे (ब)।
६. परिण्णाए मूढसण्णो उ (स)।
७. णिइयत्तइ (ब)।
८. अप्पाणितो (स)।
९. पुहुणा (ब), पउणा (अ)।
१०. जह उ (भ)।
११. ० जुत्तो (ब), ० जतो (अ)।
१२. परिण्णस्स (स)।
१३. विउण्णमती ० (ब)।
१४. इच्छयं (ब)।
१५. भूमी (स)।
१६. ऊ (ब), उ (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७५५. 'उव्वत्तणा य'[१] पाणग, धीरवणा[२] चेव धम्मकहणा[३] य ।
अंतो बहि नीहरणं, 'तम्मि य'[४] काले णमोक्कारो ॥दारं ॥

७५६. जोच्चिय भंसिज्जंते, गमओ सो चेव भंसियाणं पि ।
हेट्ठा अकिरियवादी, भणितो इणमो[५] किरियवादी ॥

७५७. वादे जेण समाधी, विज्जागहणं च वादि[६] पडिवक्खो ।
न सरति विक्खेवेणं[७], निव्विसमाणो तहिं गच्छे ॥दारं ॥

७५८. वाया पोग्गललहुया[८], मेधा उज्जा य धारणबलं च ।
तेजस्सिता य सत्तं, वायामइमम्मि संगामे ॥

७५९. तत्थ गतो वि य संतो, पुरिसं थामं च नाउ[९] तो[१०] ठवणा[११] ।
साधीणमसाधीणे, गुरुम्मि ठवणा असहुणो उ ॥

७६०. कामं अप्पच्छंदो, निक्खिवमाणो तु दोसवं होति[१२] ।
तं पुण जुज्जति असढे, तीरितकज्जे पुण वहेज्जा ॥

७६१. सरमाणो जो उ[१३] गमो, अस्सरमाणे[१४] वि होति एमेव ।
एमेव मीसगम्मि वि, देसं सव्वं च आसज्ज ॥**नि.१३६** ॥

७६२. विज्जानिमित्त उत्तरकहणे[१५] अप्पाहणा[१६] य 'बहुगा उ'[१७] ।
अतिसंभम तुरित[१८] विणिग्गयाण[१९] दोण्हं पि विस्सरितं[२०] ॥

७६३. पुव्वं सो सरिऊणं, संपत्थित[२१] विज्जमादिकज्जेहिं ।
जस्स पुणो विस्सरियं, निव्विसमाणो तधि पि वए ॥

७६४. देसं वा वि वहेज्जा, देसं च ठवेज्ज अहव झोसेज्जा ।
सव्वं वा वि वहेज्जा, ठवेज्ज सव्वं व[२२] झोसेज्जा ॥

७६५. निक्खिव न निक्खिवामी, पंथेच्चिय देसमेव वोज्झामि[२३] ।
असहू पुण निक्खिवते, झोसंति भुएज्ज[२४] तवसेसं ॥

---

१. ० तणाइ (ब) ।
२. धीरा ० (अ) ।
३. ० कधणया (अ) ।
४. धम्मिय (स) ।
५. य इमो (ब) ।
६. वाहे (स) ।
७. ०वक्खे० (ब)
८. ०लपडुवा (अ), ०लपडवा (स) ।
९. नातो (ब) ।
१०. वा (अ) ।
११. ठवणं (ब) ।
१२. भणितो (ब, स) ।
१३. य (ब) ।
१४. असर० (अ, ब) ।
१५. ० करणे य (ब) ।
१६. अप्पाहणा य संदेशका बहुकाः कथिताः (मवृ) ।
१७. पहुगा उ (अ, स) ।
१८. तरिति ।
१९. ० ग्गमे वि (अ) ।
२०. वीस० (ब) ।
२१. संपच्छिते (स) ।
२२. पि (अ), च (ब) ।
२३. वोच्छामि (स) ।
२४. वसेज्ज (अ, ब, स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७६६. एमेव[1] य 'सव्वं पि[2] हु[3], दूरद्धाणम्मि[4] तं भवे नियमा ।
'एमेव सव्वदेसे[5], वाहणझोसा पडिनियत्ते'[6] ॥

७६७. वेयावच्चकराणं, होंति[7] अणुग्घातियं[8] पि उग्घातं[9] ।
सेसाणमणुग्घाता[10], अप्पच्छंदो ठवेंताणं ॥

७६८. निग्गमणं तु 'अधिकितं, अणुवत्तति'[11] वा तवाधिकारो उ ।
तं पुण वितिण्णगमणं[12], इमं तु सुत्तं उभयधा वि ॥**नि.१३७** ॥

७६९. संथरमाणाण[13] विधी, आयारदसासु वण्णितो पुव्विं ।
सो चेव य होति इहं, तस्स विभासा इमा होति ॥

७७०. घरसउणि सीह[14] पव्वइय, सिक्ख परिकम्मकरण दो जोधा ।
थिरकरणेगच्छखमदुग, 'गच्छारामा ततो णीति'[15] ॥दारं ॥**नि.१३८** ॥

७७१. वासगगतं[16] तु पोसति, चंचूपूरेहि सउणिया छावं[17] ।
वारेति तमुड्डुंतं[18], जाव समत्थं[19] न जातं तु ॥

७७२. एमेव वणे सीही[20], सा रक्खति छावपोयगं[21] गहणे ।
खीरमिउपिसियचव्विय[22], जा खायइ अट्ठियाइं पि ॥

७७३. 'मारितममारितेहि य'[23], तं 'तीरावेति छावएहिं तु'[24] ।
वण- महिस- हत्थि- वग्घाण पच्चलो जाव सो जातो ॥

७७४. अकतपरिकम्ममसहं[25], दुविधा सिक्खा अकोविदमपत्तं ।
पडिवक्खेण उवमिमो, सउणिग[26]-सीहादि छावेहिं ॥दारं ॥

७७४/१. पव्वज्जा सिक्खावय[27], अत्थग्गहणं च[28] अणियतो वासो ।
निप्फत्ती य विहारो, सामायारी ठिती चेव[29] ॥

---

१. एसेव (अ)।
२. सव्वम्मि (अ, स)।
३. वि (अ)।
४. दूरद्धाणं पि (अ), दूरठाणम्मि (स)।
५. देसि सव्वे (ब)।
६. पडिवन्ने सव्वट्ठ वि वाहण ज्झोसो पडिनियत्ते (अ)।
७. होंति (स)।
८. ० तिया (अ, स)।
९. उग्घातिए (अ), उग्धाता (स)।
१०. सेसाणअणु० (ब)।
११. अहिकयं अणुयत्तति (ब)।
१२. विदिण्ण० (ब, स)।
१३. ० माणम्मि (अ)।
१४. सीध (अ)।
१५. x (अ)।
१६. वासगगयं ति प्राकृतत्वादाद्याकारस्य लोप आवासो नीडमावास एवावासकस्तद्गतं (मवृ)।
१७. सावं (मु)।
१८. सउड्डुति (अ, स)।
१९. गाथायां नपुंसकनिर्देशः (मवृ)।
२०. सावी (अ)।
२१. छावणावयं (स)।
२२. ०मउपि० (अ), ०मयुपि ०(स)।
२३. ० रिएहिं (अ)।
२४. णीराए तु सावपोतेहिं (स)।
२५. ० मसहू (अ), ०मसहु (स)।
२६. सउणादि (ब), सउणग (स)।
२७. ०वती (अ)।
२८. तु (अ, ब), निभा ३८१३, बृभा ११३२, १४४६।
२९. यह गाथा स प्रति में अनुपलब्ध है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७७४/२. पव्वज्जा सिक्खावय, अत्थग्गहणं तु[1] सेसए भयणा ।
सामायारिविसेसो, नवरं[2] 'वुत्तो उ पडिमाए'[3] ॥

७७५. गणहरगुणेहि जुत्तो, जदि[4] अन्नो गणहरो गणे अत्थि ।
'नीति गणातो इहरा'[5], कुणति गणे चेव परिकम्मं ॥

७७६. जइ वि हु दुविधा सिक्खा, आइल्ला[6] होति[7] गच्छवासम्मि ।
तह वि य एगविहारे, जा जोग्गा तीय[8] भावेति ॥

७७७. तवेण सत्तेण सुत्तेण, एगत्तेण बलेण य ।
तुलणा पंचधा वुत्ता, पडिमं[9] पडिवज्जतो ॥नि. १३९ ॥

७७८. 'चउभत्तेहिं तिहिं उ'[10], छट्ठेहिं अट्ठमेहि दसमेहिं[11] ।
बारस-चउदसमेहि[12] य, धीरो धितिमं तुलेतऽप्पं[13] ॥

७७९. जह सीहो तह साधू, गिरि-नदि सीहो तवोधणो साधू ।
वेयावच्चऽकिलंतो, अभिन्नरोमो य आवासे ॥दारं ॥

७८०. पढमा उवस्सयम्मी, बितिया बाहि ततिया चउक्कम्मि ।
सुण्णघरम्मि[14] चउत्थी, 'पंचमिया तह'[15] मसाणम्मि[16] ॥दारं ॥

७८१. उक्कतितोवत्तियाइं[17], सुत्ताइं सो करेति सव्वाइं ।
मुहुत्तद्धपोरिसीए[18], दिणे य 'काले अहोरत्ते'[19] ॥दारं ॥

७८२. अण्णो देहाओऽहं, नाणत्तं जस्स एवमुवलद्धं ।
सो किंचि आहिरिक्कं, न कुणति देहस्स भंगे वि ॥दारं ॥

७८३. एमेव य देहबलं, अभिक्खआसेवणाए[20] तं होति ।
लंखग-मल्ले उवमा, आसकिसोरे व्व जोग्गविते ॥दारं ॥

---

१. व (ब) ।
२. नवरिं (ब) ।
३. पडिमाए वुत्तो उ (अ, स) ।
७७४।१-२ ये दोनों गाथाएं अ, ब हस्तप्रतियों एवं टीका में उपलब्ध हैं। टीकाकार ने ७७४।१ गाथा के लिए 'संग्राहिका चेयं गाथा' का उल्लेख किया है तथा ७७४।२ के लिए 'तथा चाह' का उल्लेख किया है। इन उद्धरणों से स्पष्ट है कि प्रसंगवश इन्हें उद्धृत कर दिया गया है। विषय की दृष्टि से भी ये गाथाएं यहां प्रासंगिक नहीं लगतीं।
४. होइ (ब) ।
५. णीति ततो इहरा पुण (स) ।
६. आइन्ना (अ, स) ।
७. तेहिं (अ, स) ।
८. ताय (स) ।
९. जिणकप्प (बृभा १३२८) ।
१०. चउभत्तेणं जतिउं (ब, मु), चउभत्तेण जतितुं (स) ।
११. x (ब) ।
१२. चोद्दस० (अ) ।
१३. तुले अप्पं (ब), तुलंतप्पं (स) ।
१४. ०यम्मि य (अ, स), ०म्मि (स) ।
१५. तह पंच ०(स) ।
१६. सुसा० (बृभा १३३५, ब) ।
१७. ० वत्तिराति (ब) ।
१८. ०पोरुसीए (स) ।
१९. कालेहो० (अ), काले य होरत्ते (स) ।
२०. मासेव० (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७८४. पज्जोयमवंतिवति खंडकण्ण[1] सहस्समल्ल[2] पारिच्छा ।
महकाल[3] छगल सुरघड[4], तालपिसाए करे मंसं ॥

७८५. न किलम्मति[5] दीघेण वि, तवेण न वि[6] तासितो वि बीहेति[7] ।
छण्णे वि[8] ठितो वेलं[9], साहति पुट्ठो अवितधं तु ॥

७८६. पुरपच्छसंथुतेहिं[10], न सज्जती[11] दिट्ठिरागमादीहिं ।
दिट्ठी-मुहवण्णेहि य, अब्भत्थबलं समूहं ति ॥

७८७. उभओ किसो[12] किसदढो, दढो किसो यावि[13] दोहि वि दढो य[14] ।
बितिय-चउत्थ[15] पसत्था, धितिदेहसमस्सिया[16] भंगा ॥दारं ॥

७८८. सुत्तत्थझरियसारा, 'कालं सुत्तेण'[17] तु[18] सुट्ठु नाऊणं ।
परिजिय[19] परिकम्मेण य, सुट्ठु तुलेऊण अप्पाणं[20] ॥

७८९. तो विण्णवेंति[21] धीरा[22], आयरिए[23] एगविहरणमतीया ।
परियागसुतसरीरे, कतकरणा तिव्वसड्ढागा[24] ॥

७९०. एगूणतीसवीसा, कोडी आयारवत्थु दसमं च ।
संघयणं पुण आदिल्लगाण तिण्हं तु अन्नतरं ॥

७९१. जइ विऽसि तेहुववेओ[25], आतपरे दुक्करं[26] खु वेरग्गं ।
आपुच्छणा विसज्जण, पडिवज्जण गच्छसमवायं[27] ॥नि.१४० ॥

७९२. परिकम्मितो वि वुच्चति, किमुत अपरिकम्म[28] मंदपरिकम्मा[29] ।
आतपरोभयदोसेसु, होति दुक्खं खु वेरग्गं ॥

७९३. पढम-बितियादलाभे[30], रोगे पण्णादिगा य आताए ।
सीउण्हादी उ परे, निसीहियादी[31] उ उभए वि ॥

---

१. ० कण्णि (ब) ।
२. साहस्सि० (स) ।
३. महाकाल (अ) ।
४. सुरकुड (ब) ।
५. किलस्सति (स) ।
६. य (अ, स) ।
७. बीधिति (अ), पीहेइ (स) ।
८. ति (अ) ।
९. मूलं (स) ।
१०. गाथायां तृतीया सप्तम्यर्थे (मवृ) ।
११. सक्कइ (अ), सज्जति (ब) ।
१२. कसो (ब) ।
१३. उ (अ) ।
१४. वि (अ), या (ब) ।
१५. चरमा (मु) ।
१६. ०समब्भिया (स) ।
१७. सुत्तेण कालं (ब) ।
१८. x (अ) ।
१९. परिचिय (ब) ।
२०. मप्पाणं (स) ।
२१. विण्णिवेंति (अ) ।
२२. वीरा (अ, स) ।
२३. ० रियं (ब) ।
२४. ०सड्ढागा (अ, ब) ।
२५. तिए उववेओ (ब), तेधुववेतो (स) ।
२६. उक्करं (अ) ।
२७. गच्छतोसवणो (अ), गच्छओसवणं (स) ।
२८. परिकम्म (अ, ब), परीकम्म (स) ।
२९. ०परीकम्मो (स) ।
३०. बीयतोदलाभे (ब) ।
३१. ०याए (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७९४. एतेसुप्पण्णेसुं[1], दुक्खं वेरग्गभावणा काउं ।
पुव्वं अभावितो खलु, 'जध सेहो एलगच्छो उ'[2] ॥

७९५. परिकम्मणाय[3] खवगो, सेह 'बलामोडि सो'[4] वि तध ठाति ।
पाभातियउवसग्गे, कतम्मि पारेंति सो सेहो ॥

७९६. पारेहि तं पि भंते !, देवयअच्छी चवेडपाडणया ।
काउस्सग्गाऽऽकंपण, एलगस्सपदेस निव्वित्ती ॥

७९७. भावितमभाविताणं, गुणा गुणण्णा 'इय त्ति तो'[5] थेरा ।
वितरंति[6] भावियाणं, दव्वादि सुभे य पडिवत्ती ॥

७९८. निरुवस्सग्गनिमित्तं, उस्सग्गं वंदिऊण आयरिए ।
आवस्सियं तु काउं, निरवेक्खो वच्चए भगवं ॥

७९९. परिजितकालामंतण, खामण[7] तव-संजमे य संघयणा ।
भत्तोवधिनिक्खेवे, आवण्णो लाभगमणे य ॥दारं ॥**नि.१४१** ॥

८००. परिचियसुओ उ मग्गसिरमादि जा[8] जेट्ठ[9] कुणति परिकम्मं ।
एसोच्चिय सो कालो, पुणरेति गणं उवग्गम्मि ॥

८०१. जो जति मासे काहिति, पडिमं सो तत्तिए जहण्णेण ।
कुणति मुणी परिकम्मं[10], उक्कोसं भावितो जाव ॥

८०२ तव्वरिसे कासिंची[11], पडिवत्ती अन्नहिं उवरिमाणं[12] ।
आइण्णपतिण्णस्स[13] तु[14], इच्छाए भावणा सेसे ॥दारं ॥

८०३. आमंतेऊण गणं, सबालवुड्ढाउलं खमावेत्ता ।
उग्गतवभावियप्पा, संजम पढमे व बितिए वा ॥दारं ॥

८०४. पग्गहियमलेवकडं, भत्तजहण्णेण नवविधो उवही ।
'पाउरणवज्जियस्स उ'[15], इयरस्स दसादि जा बारा[16] ॥दारं ॥

८०५. वसहीए[17] निग्गमणं[18], हिंडंतो सव्वभंडमादाय ।
न य निक्खिवति[19] जलादिसु, जत्थ से सूरो वयति[20]अत्थं ॥दारं ॥

---

१. एते समुप्पण्णेसु (मु) ।
२. सो होए एलगच्छो वा (ब) ।
३. ० कम्मणा उ (अ, स) ।
४. बलामोडिए (ब) ।
५. उ इय ते (अ), य ईया तो (ब), ति ईय तो (स) ।
६. विचरंति (स) ।
७. कामण (ब) ।
८. यावत् (मवृ) ।
९. जेट्ठो (अ) ।
१०. x (अ) ।
११. कासिचा (ब) ।
१२. तुवरिं ० (ब)
१३. आतिण्ण ० (अ), आदिन्न ० (ब) ।
१४. वि (ब) ।
१५. ० यस्सा (ब) ।
१६. थेरा (अ, ब), पारा (स) ।
१७. ० हीय उ (ब) ।
१८. निक्खमणं (अ), निक्खिवणं (स) ।
१९. निक्खवइ (अ) ।
२०. वइ (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८०६. मणसा वि अणुग्घाया, सच्चित्ते यावि[1] कुणति उवदेसं ।
अच्चित्तजोग्गगहणं, भत्तं पंथो य ततियाए ॥दारं ॥

८०७. एमेव गणायरिए, गणनिक्खिवणम्मि नवरि नाणत्तं ।
पुव्वोवहिस्स अहवा, निक्खिवणमपुव्वगहणं तु ॥

८०८. तिरियमुब्भाम[2] णियोग[3], दरिसणं साधु सण्णि वप्पाहे[4] ।
दंडिग भोइग[5] असती, सावगसंघो व सक्कारं ॥दारं ॥नि.१४२ ॥

८०९. उदभावणा पवयणे, सद्धाजणणं तहेव बहुमाणो ।
ओहावणा[6] कुतित्थे, जीतं तह तित्थवुड्ढी[7] य ॥

८१०. एतेण सुत्त न गतं, सुत्तनिवातो इमो उ[8] अव्वत्ते[9] ।
उच्चारितसरिसं[10] पुण, परूवितं पुव्व 'भणितं पि'[11] ॥

८११. आगमणे सक्कारं[12], कोइं[13] दट्ठूण जातसंवेगो ।
आपुच्छण पडिसेहण[14], देवी संगामतो णीति[15] ॥

८१२. संगामे निवपडिमं, 'देवी काऊण'[16], जुज्झति[17] रणम्मि ।
बितियबले नरवतिणा, नातुं गहिता धरिसिता य ॥

८१३. दूरे ता पडिमाओ, गच्छविहारे[18] वि सो न निम्माओ[19] ।
निग्गंतुं आसन्ना, नियत्तइ[20] लहुय गुरू दूरे ॥

८१४. सच्छंदो सो गच्छा, निग्गंतूणं ठितो उ सुण्णघरे[21] ।
सुत्तत्थसुण्णहियओ, संभरति इमेसिमेगागी ॥

८१५. आयरिय-वसभसंघाडए य कंदप्प[22] मासियं लहुयं ।
एगाणिय[23] सुण्णघरे, अत्थमिते पत्थरे गुरुगा ॥

८१६. पत्थर छुहए[24] रत्तीं[25], गमणे गुरुलहुग दिवसतो होंति ।
आतसमुत्था एते, देवयकरणं[26] तु वोच्छामि[27] ॥नि.१४३ ॥

---

१. वा वि (अ), चेव (ब)।
२. तीरिय उब्भाम (ब)।
३. णितोध (ब), णिओत (स)।
४. वप्पाहो (ब), मप्पाहे (स)।
५. भोविग (अ), तोइग (स)।
६. उब्भावणा (स)।
७. ०वड्ढी (अ)।
८. य (ब), इ (अ)।
९. अच्चित्ते (स)।
१०. उच्चारिं स० (अ), उच्चारिए स० (ब)।
११. भणितम्मि (अ, ब)।
१२. थक्कारं (ब)।
१३. कोति (ब), कोइ (अ)।
१४. पडिवज्जण (अ)।
१५. णीती (ब)।
१६. काऊण देवि (ब)।
१७. कुज्झति (स)।
१८. ० विहारेण (अ)।
१९. निम्मगतो (ब)।
२०. ० त्तए (ब, स)।
२१. ० घरं (ब)।
२२. कंदप्प ति अत्र विभक्तिलोपो मत्वर्थीयलोपश्च प्राकृतत्वात् (मवृ)।
२३. एक्काणिय (ब)।
२४. छुहणे (अ, स), छुहइ त्ति प्रवेशयति (मवृ)।
२५. रत्ता (स)।
२६. देवकरणं (ब)।
२७. गाथा के पूर्वार्द्ध में मात्राएँ अधिक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८१७. पत्थरमणसंकप्पे, मग्गण दिट्ठे य गहित खित्ते[1] य ।
पडित परितावित मएँ[2], पच्छित्तं होति तिण्हं पि ॥

८१८. मासो लहुओ गुरुगो, चउरो लहुगा य होंति गुरुगा य ।
छम्मासा लहु गुरुगा, छेदो मूलं तह दुगं च ॥

८१९. बहुपुत्ति[3] पुरिस मेहे, उदयग्गी जड्डु[4] सप्प चउलहुगा ।
अच्छण अवलोग[5] नियट्ट, कंटग गेण्हण दिट्ठे य भावे य[6] ॥नि. १४४ ॥

८२०. बहुपुत्तत्थी[7] आगम, दोसूवलेसु[8] तु थालि-विज्झवणं[9] ।
अण्णोण्णं पडिचोयण, वच्च गणं 'मा छले पंता'[10] ॥

८२१. ओवाइयं[11] समिद्धं, महापसुं[12] देमु[13] सज्जमज्जाए[14] ।
एत्थेव ता निरिक्खह, दिट्ठे वाडुं[15] व समणो[16] वा ॥दारं ॥

८२२. उदगभएण पलायति, पवति व रुक्खं व रोहए सहसा ।
एमेव 'सेसएसु वि'[17], भएसु[18] पडिकार मो कुणति ॥

८२३. जेट्ठज्ज[19] पडिच्छाही, अहं पि तुब्भेहि समं[20] वच्चामि[21] ।
इति सकलुणमालत्तो, मुज्झति[22] सेहो अथिरभावो[23] ॥

८२४. अच्छति[24] अवलोएति य, लहुगा पुण 'कंटगों मे लग्गो त्ति'[25] ।
गुरुगा निवत्तमाणे[26], तह कंटगमग्गणे चेव ॥

८२५. कंटगपायग्गहणे[27], छल्लहु छग्गुरुग चलणमुक्खेवे[28] ।
दिट्ठम्मि वि छग्गुरुगा, परिणयकरणे य सत्तट्ठे[29] ॥

८२६. लहुगा य दोसु दोसु य, गुरुगा छम्मास लहु गुरुच्छेदो ।
भिक्खु गणायरियाणं, मूलं अणवट्ठ पारंची ॥

---

१. खत्ते (ब) ।
२. मूले (अ, स) ।
३. ० पुत्तित्थि (ब), ०पुत्तियं (स) ।
४. जड्डे (अ) ।
५. ० लोकण (अ) ।
६. गाथा के उत्तरार्ध में मात्राएं अधिक हैं ।
७. ०पुत्तित्थी (अ) ।
८. दोसुपलेसु (स), द्वयोरुपलयोः (मवृ) ।
९. विब्भवणं (ब) ।
१०. पंतमालवणे (अ), पंत मा छलणा (स) ।
११. उपवातिय (ब), उवातियं (अ) ।
१२. महापशुर्नाम पुरुषः (मवृ) ।
१३. देमो (ब) ।
१४. अज्जम० (अ, ब) ।
१५. वाडं (अ), वाडुं देशीवचनमेतत् नशनं करोति नश्यतीत्यर्थः (मवृ) ।
१६. सरणं (अ, स) ।
१७. ० एसुं (ब) ।
१८. पदेसु (स) ।
१९. जेट्ठे य (अ) ।
२०. समग (अ, ब) ।
२१. गच्छामो (अ) ।
२२. मुच्छइ (अ) ।
२३. अत्थिर० (ब) ।
२४. अच्छति त्ति प्रतीक्षते (मवृ) ।
२५. कंटओ मे य उग्गो ति (ब), कट्ठओ मे लगोत्ति (अ, स) ।
२६. नियत्त ० (अ, स) ।
२७. ०पाउग्ग ० (अ, स) ।
२८. चलण उ० (अ) ।
२९. सत्तट्ठ त्ति अत्र पूरणप्रत्ययास्तस्य लोपः प्राकृतत्वात् (मवृ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८२७. आसन्नातो लहुगो, दूरनियत्तस्स गुरुतरो दंडो[1] ।
चोदग संगामदुगं, नियट्ट खिंसंतऽणुग्घाया ॥

८२८. दिट्ठं लोए आलोगभंगि वणिए य अवणिएँ नियत्तो[2] ।
अवराधे णाणत्तं, न रोयए केण तो[3] तुज्झं[4] ॥

८२९. अक्खयदेहनियत्तं, बहुदुक्खभएण[5] जं समाणेह ।
'एयं महं न'[6] रोयति, 'को ते'[7] विसेसो भवे एत्थ ॥

८३०. एसेव[8] व दिट्ठंतो, पुररोधे जत्थ वारितं रण्णा ।
मा णीह तत्थ णिंते, दूरासन्ने य णाणत्तं ॥

८३१. सेसम्मि चरित्तस्सा, आलोयणता पुणो पडिक्कमणं ।
छेदं परिहारं वा, 'जं आवण्णे तयं'[9] पावे ॥

८३२. एवं सुभपरिणामं[10], पुणो वि गच्छम्मि तं पडिनियत्तं ।
जो हीलति[11] खिंसति वा, पावति गुरुए[12] चउम्मासे[13] ॥

८३३. उत्ता[14] वितिण्णगमणा, इदाणिमविदिण्ण निग्गमे सुत्ता ।
पडिसिद्धमवत्तस्स व, इमेसु[15] सव्वेसु पडिसिद्धं ॥

८३४. पासत्थ अहाछंदो[16], कुसील ओसन्नमेव[17] संसत्तो ।
एतेसिं णाणत्तं, वोच्छामि अधाणुपुव्वीए[18] ॥नि.१४५ ॥

८३५. गच्छम्मि केइ पुरिसा, सउणी जह पंजरंतरनिरुद्धा ।
सारण - पंजर - चइया[19], 'पासत्थगतादि विहरंति'[20] ॥

८३६. तेसिं पायच्छित्तं, वोच्छं ओघे य पदविभागे[21] य ।
ठप्पं तु पदविभागे, ओहेण इमं तु वोच्छामि[22] ॥

८३७. ऊसववज्ज कदाई, लहुओ लहुया अभिक्खगहणम्मि ।
ऊसवकदाइ लहुगा, गुरुगा य अभिक्खगहणम्मि[23] ॥

---

१. डंडो (स)।
२. य अंते (ब)।
३. तं (स)।
४. तुब्भं (ब, स)।
५. ०ख हतेण (अ, स)।
६. एवं महन्नं (अ), एवं तहण्णं (स)।
७. को व (अ, स)।
८. एमेव (स)।
९. जहि आवाए तं (ब)।
१०. सुद्धप० (ब)।
११. हीले (अ, ब, स)।
१२. गुरुओ य (ब), गुरुए व (अ)।
१३. छम्मासा (ब)।
१४. वुत्ता (अ, स)।
१५. इमे (अ)।
१६. महाछंदो (अ, स)।
१७. उस्सण्ण (स)।
१८. निभा ४३५०।
१९. जतिया (अ)।
२०. ० गता पविह ० (अ, स), ब प्रति में इस गाथा का केवल प्रथम चरण प्राप्त है।
२१. गाथायां सप्तमी तृतीयार्थे (मवृ)।
२२. ब प्रति में यह गाथा नहीं है।
२३. ब प्रति में इस गाथा का केवल प्रथम चरण है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८३८. चउ-छम्मासे वरिसे, कदाइ 'लहु गुरुग तह य'[१] छग्गुरुगा ।
एतेसु चेवऽभिक्खं[२], चउगुरु तह छग्गुरुच्छेदो ॥

८३९. एसो उ होति ओघे, एत्तो पदविभागतो पुणो वोच्छं ।
चउत्थमासे चरिमे, ऊसववज्जं जदि कदाइ ॥

८४०. गेण्हति लहुओ लहुया, गुरुया इत्तो[३] अभिक्खगहणम्मि ।
चउरो लहुया गुरुया, छग्गुरुया ऊसवविवज्जा[४] ॥

८४१. उस्सव[५] कदाइगहणे, चउरो लहुगा य गुरुग छग्गुरुगा ।
एवं[६] अभिक्खगहणे, छग्गुरु चउ छग्गुरुच्छेदो[७] ॥

८४२. ऊसववज्जं[८] न गेण्हति[९], निब्बंधो ऊसवम्मि गेण्हति उ ।
अज्झोयरगादीया[१०], इति अहिगा ऊसवे सोही ॥

८४३. एवं उवड्डियस्सा[११], पडितप्पिय[१२] साधुणो पदं हसति[१३] ।
चोदेति राग-दोसे, दिट्ठंतो पण्णगतिलेहिं ॥

८४४. जो तुम्हं[१४] पडितप्पति[१५], तस्सेगट्ठाणगं[१६] तु हासेह[१७] ।
वड्ढेह[१८] अपडितप्पे, इति रागद्दोसिया तुब्भे ॥

८४५. इहरह वि ताव चोदग !, कडुयं 'तेल्लं तु'[१९] पन्नगतिलाणं ।
किं पुण निंबतिलेहिं[२०], भावितयाणं भवे खज्जं[२१] ॥

८४६. एवं[२२] सो पासत्थो, अवण्णवादी पुणो य साधूणं ।
तस्स य[२३] महती सोधी, बहुदोसो सोत्थ भो चेव[२४] ॥

८४७. 'जह पुण ते चेव'[२५] तिला, उसिणोदग धोत खीरउव्वक्का[२६] ।
तेसिं जं तेल्लं तू, तं घयमंडं विसेसेति ॥

---

१. लहुगा गुरुगा य (ब) ।
२. ०अभिक्खं (अ, स) ।
३. त्तो (स) ।
४. ऊसग० (अ, स) ।
५. ऊसव (स) ।
६. होंति (स) ।
७. ब प्रति में तथा टीका की मुद्रित पुस्तक में कुछ अंतर के साथ निम्न गाथा मिलती है पर टीकाकार ने व्याख्या ऊपर वाली गाथा की की है ।
चउरो लहुया गुरुगा, छम्मासा ऊसवम्मि उ कयाई ।
एवं अभिक्खगहणे, छग्गुरु चउ छग्गुरुच्छेदो ॥
८. ऊसग० (ब) सर्वत्र ।
९. गेण्हती (अ) ।
१०. अज्झोवर० (अ) ।
११. ० स्स (अ) ।
१२. ० तप्पए (ब) ।
१३. हुसियं (अ, स) ।
१४. तुब्भं (स) ।
१५. परित० (ब) ।
१६. तस्सेगं ठाणगं (ब) ।
१७. हासे वा (अ), हासे य (ब) ।
१८. वद्देह (ब), वड्ढेध (अ) ।
१९. तेल्लेसु (ब) ।
२०. किंच फलेहि (अ, स) ।
२१. अखज्जं (अ) ।
२२. एगं (अ, स) ।
२३. तु (अ) ।
२४. ८५० की गाथा अ और स प्रति में इस गाथा (८४६) के बाद है ।
२५. x (ब) ।
२६. खीरतोवक्का (अ, ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८४८. कारण संविग्गाणं, आहारादीहि तप्पितो जो उ[1] ।
नीयावत्तणुतावी[2], तप्पक्खिय वण्णवादी य[3] ॥

८४९. पावस्स उवचियस्स वि, पडिसाडण मो[4] करेति 'एवं तु'[5] ।
सव्वासिरोगिउवमा, सरदे य पडे अविधुयम्मि[6] ॥

८५०. पण्णे य थंते किमिणे, य अणुवातं च ठितो उल्लो य ।
केण वि से वातपुट्ठेण, बुभुलइयं मुणेऊणं ॥

८५१. थोवं[7] भिन्नमासादिगाउ, य राइंदियाइं[8] जा पंच ।
सेसेसु[9] पदं हसती[10], पडितप्पिय एतरे सकलं[11] ॥

८५२. दुविहो खलु पासत्थो, देसे सव्वे य होति नायव्वो ।
सव्वे 'तिन्नि विकप्पा'[12], देसे सेज्जातरकुलादी[13] ॥**नि.१४६** ॥

८५३. दंसण-नाण[14]-चरित्ते-तवे य[15] अत्ताहितो पवयणे य ।
तेसिं पासविहारी[16], पासत्थं तं वियाणाहि[17] ॥

८५४. दंसण-नाण-चरित्ते, सत्थो अच्छति तहिं न उज्जमति ।
एतेणउ[18] पासत्थो, एसो अन्नो वि पज्जाओ[19] ॥

८५५. पासो त्ति बंधणं ति य, एगट्ठं बंधहेतवो पासा ।
पासत्थिय पासत्थो, अन्नो वि एस पज्जाओ[20] ॥

८५६. सेज्जायरकुलनिस्सित, ठवणकुलपलोयणा अभिहडे य ।
पुव्विं पच्छासंथुत, 'णितियग्गपिंडभोइ य'[21] पासत्थो[22] ॥

८५७. आइण्णमणाइण्णं, निसीधऽभिहडं[23] च णो निसीहं च ।
साभावियं च नियतं[24], निकायण[25] निमंतणा[26] लहुगो ॥

---

१. इस गाथा का पूर्वार्ध अ और स प्रति में इस रूप में मिलता है—एवं संविग्गाणं, गिलाणमाईण वट्टितो जो उ।
२. ० तणुतप्पी (मु)।
३. उ (अ)।
४. मो इति पादपूरणे (पवृ)।
५. सो एवं (ब)।
६. इस गाथा का उत्तरार्ध अ और स प्रति में इस प्रकार है-- निययगुणेण झोसेति, न एत्थ रागो व दोसो वा।
७. थोवे तु (ब)।
८. ० याई (ब)।
९. सेसे उ (मु)।
१०. हसन्ति (ब)।
११. इस गाथा का पूर्वार्ध अ और स प्रति में इस प्रकार है— थोवं पणगादीयं, जा भिन्नतो व झोसए तस्स।
१२. णाणातितिगं (अ, स)।
१३. निभा ४३४०।
१४. नाणं (ब)।
१५. x (अ)।
१६. ० हारे (ब, स)।
१७. निभा ४३४१।
१८. वि (ब)।
१९. निभा ४३४२।
२०. निभा ४३४३।
२१. नियग्गपिंडभोई उ (ब), ० भोति (निभा ४३४४)।
२२. उत्तरार्ध में मात्रा अधिक होने से छंदभंग है।
२३. निसीधाभि० (स)।
२४. नितियं (ब), णतियं (स)।
२५. निकाय (अ)।
२६. निमंतणे (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८५८. संविग्गजणो जड्डो[१], जह सुहिओ सारणाएँ चइओ उ ।
वच्चति संभरमाणो, तं चेव गणं पुणो एति[२] ॥

८५८/१. किह पुण एज्जाहि पुणो, जध वणहत्थी तु बंधणं चंतितो ।
गंतूण वणं एज्जा, पुणो वि सो चारिलोभेणं ॥

८५८/२. एवं सारणवतितो, पासत्थादीसु गंतु सो एज्जा ।
सुद्धो वि चारिलोभो, सारणमादीणवड्डाए ॥

८५८/३. आलोइयम्मि सेसं, जति चारित्तस्स अत्थि से किंचि ।
तो दिज्जति तव-छेदो, अध नत्थि ततो से मूलं तु ॥

८५९. अत्थि य सि सावसेसं, जइ नत्थी मूलमत्थि तव-छेदा ।
थोवं जति आवण्णो, पडितप्पिय साहुणं सुद्धो[३] ॥

८६०. उस्सुत्तमायरंतो, उस्सुत्तं चेव पण्णवेमाणो[४] ।
एसो उ अधाछंदो, इच्छाछंदो त्ति[५] एगट्ठा ॥नि. १४७॥

८६१. उस्सुत्तमणुवदिट्ठं, सच्छंदविगप्पियं अणणुवादी[६] ।
परतत्तिपवित्ते[७] तिंतिणे य इणमो[८] अहाछंदो ॥

८६२. सच्छंदमतिविगप्पिय, किंची[९] सुहसायविगतिपडिबद्धो ।
तिहि गारवेहि मज्जति, तं जाणाहि य अधाछंदं ॥

८६३. अहछंदस्स परूवण, उस्सुत्ता दुविध होति नायव्वा ।
चरणेसु 'गतीसुं जा'[१०], तत्थ य चरणे इमा होति ॥

८६४. 'पडिलेहण मुहपोत्तिय'[११], रयहरण[१२]-निसेज्ज-मत्तए[१३]पट्टे[१४] ।
पडलाइ चोल उण्णादसिया[१५] पडिलेहणा पोत्ते ॥

८६५. दंतच्छिन्नमलित्तं, हरियठित[१६] पमज्जणा य णितस्स ।
अणुवादि[१७] अणणुवादी, 'परूवणा चरणमादीसु'[१८] ॥

---

१. जड्डो व (ब)।
२. अ और स प्रति में ८५८ गाथा के स्थान पर ८५८ ।१-३ ये तीन गाथाएं मिलती हैं। इन तीनों का भाव ८५८ की गाथा में संक्षिप्त रूप से प्राप्त है। ये गाथाएं व्याख्यात्मक प्रतीत होती हैं। टीकाकार ने भी इन गाथाओं की व्याख्या नहीं की है।
३. अ और स प्रति में इस गाथा के स्थान पर निम्न गाथा मिलती है— थोवं जदि आवण्णो, पणगाती जाव भिण्णमासो उ।
पडितप्पितो य बहुसो, साधूणं तो भवे सुद्धो॥
४. वण्ण० (ब)।
५. य (ब)।
६. ० वायं (ब), ०वाइं (बपा)।
७. ० पवत्ते (अ, निभा ३४९२)।
८. एसो (ब)।
९. कंची (ब)।
१०. गती ताव (अ), गतीसु ता (स)।
११. पडिलेहणि मुहपत्ती (अ), ० मुहपोती (स, निभा ३४९३)।
१२. रयहर (अ, ब)।
१३. पाय मत्तए (अ, स)।
१४. चोलपट्टकः (मवृ)।
१५. इण्णाद० (स)।
१६. हरियट्ठि (निभा ३४९४)।
१७. ० वाय (ब)।
१८. एमादी परूवणा वितहा (अ), परूव चरणगतीसुं पि (ब), ० एमादि पवत्तणा वितधा (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८६६. 'अणुवाति त्ती णज्जति'[1], जुत्तीपडितं[2] तु भासए एसो ।
जं पुण सुत्तावेयं[3], तं होही[4] अणणुवाइ त्ति ॥

८६७. सागारियादि पलियंकनिसेज्जासेवणा य गिहिमत्ते ।
निग्गंथिचिट्ठणादी, पडिसेहो मासकप्पस्स[5] ॥

८६८. चारे वेरज्जे या[6], पढमसमोसरण तह य नितिएसु[7] ।
सुण्णे अकप्पिए या[8], अण्णाउंछे य संभोए[9] ॥

८६८/१. सागारियपिंडे को दोसो, फासुए ठवण चेव पलियंके ।
गिहिनिसेज्जाएँ को दोसो, उवसंतेसु गुणाहिओ ॥

८६८/२. गिहिमत्तेणुड्डाहो, निग्गंथीचिट्ठणादि को दोसो ।
जस्स तु तधियं दोसो, होही तस्सण्णठाणेसु ॥

८६८/३. पडिसेधो मासकप्पे, तिरियादी उ बहुविधो दोसो ।
सुत्तत्थपारिहाणी, विराधणा संजमातो य ॥

८६८/४. वेरज्जे चरंतस्स, को दोसो चत्तमेव देहं तु ।
फासुयपढमोसरणे, को दोसो णितियपिंडे य ॥

८६८/५. सुण्णाए वसधीए, उवघातो किन्नु होति उवधिस्स ।
पाणवधादि असंते, अधव असुण्णा वि ऊहम्मे[9] ॥

८६९. 'किंवा अकप्पिएणं'[10], गहियं फासुं[11] तु होति अब्भोज्जं[12] ।
अन्नाउंछं[13] को वा, होति गुणो कप्पिते गहिते[14] ॥

८७०. पंचमहव्वयधारी, समणा सव्वे वि किं न भुंजंति ।
इय चरणवितधवादी[15], एत्तो वोच्छं गतीसुं तु ॥

८७१. खेत्तं गतो उ[16] अडविं[17], एक्को संचिक्खती[18] तहिं चेव ।
तित्थकरो त्ति य पियरो, खेत्तं पुण[19] भावतो सिद्धी ॥

---

१. अणुवाइ तिग विज्जइ (ब)।
२. जुत्तीए पडितं (ब)।
३. ० वेडं (ब)।
४. होइ (अ)।
५. निभा ३४९५।
६. वा (ब, निभा)।
७. नितिए य (निभा), नीए या (ब)।
८. वा (निभा ३४९८), य (ब)।
९. ८६८।१-५ ये पाचों गाथाएं केवल अ और स प्रति में प्राप्त हैं। ८६७-६८ इन दोनों गाथाओं में संक्षिप्त में इन गाथाओं का सार है। ये गाथाएं व्याख्यात्मक सी प्रतीत होती हैं। टीकाकार ने भी इन गाथाओं का कोई उल्लेख नहीं किया है। तुलना के लिए देखें—निभा ३४९५-९७।
१०. किं च अकप्पियएणं (अ, ब)।
११. फासुयं (मु)।
१२. आभोयं (ब)।
१३. अन्नातोच्छे (अ), ०उंछे (स)।
१४. अत्र गाथायां सप्तमी तृतीयार्थे (मवृ)।
१५. चरणे० (अ)।
१६. य (ब, मु)।
१७. अडवी (अ, ब)।
१८. ०क्खए (ब)।
१९. तू (निभा ३४९९)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८७२. जिणवयणसव्वसारं, मूलं संसारदुक्खमोक्खस्स ।
सम्मत्तं मइलेत्ता, ते दुग्गतिवड्ढगा[१] होंति ॥

८७३. सक्कमहादीया पुण, पासत्थे ऊसवा मुणेयव्वा ।
अधछंद[२] ऊसवो पुण[३], जीए[४] परिसाय उ कधेति[५] ॥

८७४. जधि लहुगो तधि लहुगा, जधि लहुगा चउगुरू तधिं[६] ठाणे ।
जधि ठाणे चउगुरुगा, छम्मासा 'ऊ तहिं'[७] जाणे ।

८७५. जधियं[८] पुण छम्मासा, तहि छेदो छेदठाणए मूलं ।
पासत्थे जं[९] भणियं, अहछंद विवड्ढियं जाणे ॥

८७६. पासत्थे आरोवण, ओहविभागेण[१०] वण्णिता पुव्वं[११] ।
सच्चेव[१२] निरवसेसा, कुसीलमादीण णेयव्वा[१३] ॥

८७७. एत्तो तिविधकुसीलं, तमहं वोच्छामि आणुपुव्वीए ।
दंसण-नाण-चरित्ते, तिविध कुसीलो मुणेयव्वो ॥**नि. १४८** ॥

८७८. नाणे नाणायारं, जो तु विराधेति[१४] कालमादीयं ।
दंसणे दंसणायारं, चरणकुसीलो इमो होति ॥

८७९. कोउगभूतीकम्मे, पसिणाऽपसिणे निमित्तमाजीवी ।
कक्क-कुरुया[१५] य लक्खण, उवजीवति 'मंत-विज्जादी'[१६] ।

८८०. जाती कुले गणे या, कम्मे सिप्पे[१७] तवे सुते चेव ।
सत्तविधं आजीवं, उवजीवति जो कुसीलो सो[१८] ॥

८८१. भूतीकम्मे लहुओ, लहु गुरुग निमित्त 'सेसएँ इमं तु'[१९] ।
लहुगा य सयंकरणे, परकरणे होंतऽणुग्घाता ॥

८८२. दुविधो खलु ओसण्णे, देसे सव्वे य होति नायव्वो ।
देसोसण्णो तहियं[२०], आवासादी इमो होति ॥**नि. १४९** ॥

---

१. दोग्गइ ० (अ)।
२. अधाछंदे (स)।
३. पुणो (ब)।
४. जा वि (अ), जाधे (स)।
५. कहिति (ब), कधिति (अ)।
६. जहिं (अ)।
७. तत्थ ऊ (ब)।
८. जहिं य (ब)।
९. जह (मु)।
१०. ० भागे य (अ, स)।
११. पुव्विं (अ, स)।
१२. सा चेव (स)।
१३. णायव्वा (अ)।
१४. विरोधिति (स)।
१५. ० कुरुए (स)।
१६. विज्जमंतादी (ब), निभा (४३४५) में इस गाथा का उत्तरार्ध इस रूप में है—
कक्क-कुरुय-सुमिण-लक्खण-मूल-मंत-विज्जोवजीवी कुसीलो उ।
१७. मग्गे (स)।
१८. उ (ब)।
१९. छंद की दृष्टि से 'सेसए मं तु' पाठ संगत लगता है।
२०. गहियं (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८८३. आवस्सग[1]-सज्झाए 'पडिलेहण-झाण[2]-भिक्ख भत्तट्ठे[3] ।
आगमणे[4] निग्गमणे, ठाणे य[5] निसीयण तुयट्टे[6] ॥नि. १५० ॥

८८४. आवस्सगं अणियतं, करेति हीणातिरित्तविवरीयं[7] ।
'गुरुवयणे य नियोगो, वलाति'[8] इणमो उ ओसन्नो[9] ॥

८८५. जध उ बइल्लो बलवं, भंजति समिलं तु सो[10] वि एमेव ।
गुरुवयणं अकरेंतो, वलाति[11] कुणती 'च उस्सोढुं'[12] ॥

८८६. उउबद्धपीढफलगं, ओसन्नं संजयं वियाणाहि ।
ठवियग-रइयगभोई[13], एमेया पडिवत्तिओ[14] ॥

८८७. सामायारी वितहं, कुणमाणो[15] जं च[16] पावए जत्थ ।
संसत्तो च अलंदो, नडरूवी एलगो चेव[17] ॥नि. १५१ ॥

८८८. गोभत्तालंदो विव, बहुरूवनडोव्व[18] एलगो चेव ।
संसत्तो सो दुविधो, असंकिलिट्ठो व इतरो य ॥नि. १५२ ॥

८८९. पासत्थ-अधाछंदे, कुसील-ओसण्णमेव संसत्ते ।
पियधम्मो पियधम्मे[19], 'असंकिलिट्ठो उ संसत्तो'[20] ॥

८९०. पंचासवप्पवत्तो[21], जो खलु तिहि गारवेहि पडिबद्धो ।
इत्थि-गिहिसंकिलिट्ठो, संसत्तो 'सो य नायव्वो'[22] ॥

८९१. देसेण अवक्कंता[23], सव्वेणं चेव भावलिंगा उ ।
इति समुदिता तु सुत्ता, इणमन्नं दव्वतो विगते[24] ॥

---

१. आवासग (निभा) ।
२. ० लेहज्झाण (निभा) ।
३. अन्ये तु व्याचक्षते अभत्तट्ठ त्ति (मवृ) ।
४. अतिग ० (अ), अभिग० (स) ।
५. ऊ (ब) ।
६. इस गाथा का उत्तरार्ध निभा (४३४६) में इस प्रकार है—
काउसग्गपडिकमणे, कितिकम्मं णेव पडिलेहा ।
७. अ और स प्रति में गाथा का पूर्वार्ध इस प्रकार है—
आवस्सगमादियाइं ण करे अधवा वि हीणमधियाइं ।
८. गुरुवयणनियोगवलायमाणे (निभा ४३४७, स) ।
९. उस्सन्नो (अ) ।
१०. ॒णो (स) ।
११. वली वि (अ) ।
१२. उ वा सोढुं (ब), उत्शब्दोऽत्र निषेधार्थे असोढा इत्यर्थः (मवृ) ।
१३. ०भोती (निभा ४३४८) ।
१४. इस गाथा के स्थान पर अ और स प्रति में निम्न गाथा प्राप्त होती है
एसो देसोसण्णो, सव्वोसण्णो इमो उ बोधव्वो ।
ठवियगरतियगभोती, उउबद्धगपीढफलगो य ॥
१५. ओसन्नो (निभा ४३४९) ।
१६. तु (अ, स) ।
१७. इस गाथा का उत्तरार्ध अ और स प्रति में इस प्रकार है—
जं च ततं सीततं, दट्ठूण ऽन्ने वि सीदंति (अ) ।
१८. ०रूवो० (अ, ब) ।
१९. पियधम्मेसु (स, निभा ४३५०) ।
२०. चेव असंकिलिट्ठो भवे एसो (अ), चेव इणमो तु संसत्तो (निभा) ।
२१. ० पसत्तो (अ, स) ।
२२. संकलिट्ठो सो (अ), निभा ४३५१ ।
२३. उव० (अ, स) ।
२४. अभुना निर्युक्तिभाष्यविस्तरः (मवृ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८९२. कंदप्पा परलिंगे, मूलं गुरुगा य गरुलपक्खम्मि ।
सुत्तं तु भिक्खुगादी, कालक्खेवो व गमणं वा[1] ॥नि. १५३ ॥

८९२/१. कंदप्पा लिंगदुगं, जो कुणइ तस्स होइ मूलं तु ।
गुरुगा उ गरुलपक्खे, अद्धंसे चोलपट्टे य ॥

८९२/२. लहुगा संजतिपाते, सीसदुवारी य लहुयतो खंधे ।
चोदेत फलं सुत्ते, सुत्तनिवातो उ कारणितो ॥

८९३. खंधे दुवार संजति, गरुलद्धंसे य पट्ट लिंगदुवे ।
लहुओ लहुओ लहुया, तिसु चउगुरु दोसु मूलं तु ॥

८९४. असिवादिकारणेहिं[2], 'रायपदुट्ठे व'[3] होज्ज परलिंगं ।
कालक्खेवनिमित्तं, पण्णवणट्ठा व गमणट्ठा ॥

८९५. जं जस्स[4] अच्चितं तस्स, पूयणिज्जं तमस्सिया[5] लिंगं ।
खीरादिलद्धिजुत्ता, गमेंति तं छन्नसामत्था ॥

८९६. कलासु[6] सव्वासु सवित्थरासु, आगाढपण्हेसु 'य संथवेसु'[7] ।
जो जत्थ सत्तो तमणुप्पविस्से, अव्वाहतो तस्स स एव पंथा ॥

८९७. अणुवसमंते[8] निग्गम, लिंगविवेगेण होति आगाढे ।
देसंतरसंकमणं, भिक्खुगमादी कुलिंगेण ॥

८९८. आरियसंकमणे[9] परिहरेंति दिट्ठम्मि 'जा तु'[10] पडिवत्ती ।
असतीय पविसणं थूभियम्मि[11] गहियम्मि[12] जा जतणा ॥दारं ॥नि. १५४ ॥

८९९. आरिय-देसारियलिंगसंकमो 'एत्थ होति'[13] चउभंगो[14] ।
बितिचरमेसुं[15] अन्नं, असिवादिगतो करे लिंगं ॥दारं ॥

९००. परिहरति उग्गमादी, विहारठाणा य तेसि लिंगीणं ।
अप्पुव्वेसा गमितो, आयरियत्तेतरो इमं[16] तु ॥दारं ॥

---

१. ८९२।१, २ ये दोनों गाथाएं अ औ स प्रति में प्राप्त हैं। ये गाथाएं व्याख्यात्मक एवं संक्षिप्त सी प्रतीत होती हैं। टीकाकार ने इन गाथाओं का कोई उल्लेख नहीं किया है।
२. गाथायां तृतीया सप्तम्यर्थे प्राकृतत्वात् (मवृ)।
३. रायदुट्ठे वा (ब)।
४. जं तु (अ, स)।
५. व अस्सिया (अ, स)।
६. कालासु (स)।
७. पसत्थवेसु (स)।
८. अणुवसते (अ), ० सयंति (ब)।
९. आयरिए सं. (अ)।
१०. जा य (ब)।
११. थूभणं ति (ब), थूभयं ति (अ, स)।
१२. गहयम्मि (ब), गथिय० (अ)।
१३. य त्ति एत्थ (ब)।
१४. चतुर्भंगी गाथायां पुंस्त्वनिर्देशः प्राकृतत्वात् (मवृ)।
१५. बितियच० (ब)।
१६. यमं (ब), छंद की दृष्टि से यहां मं पाठ संगत लगता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९०१. मोणेण जं च गहियं[1], तु[2] कुक्कुडं[3] उभयतो वि अविरुद्धं ।
पच्चयहेउपणामो, जिणपडिमाओ मणे कुणति[4] ॥दारं ॥

९०२. भावेति पिंडवातित्तणेण, घेत्तुं च वच्चति अपत्ते[5] ।
कंदादिपोग्गलाण य, 'अकारगमहं ति पडिसेधो'[6] ॥

९०३. बितियपयं 'तु गिलाणो'[7], निक्खेव चंकमणादि कुणमाणो ।
'लोयं वा कुणमाणो, कितिकम्मं वा सरीरादी'[8] ॥

९०४. अह पुण 'रूसेज्जाही, तो घेत्तु'[9] विगिंचते जधा[10] विहिणा ।
एवं तु तहिं जतणं, कुज्जाही कारणागाढे[11] ॥

९०५. इति कारणेसु[12] गहिते, परलिंगे तीरिते तहिं कज्जे ।
जयकारी[13] सुज्झति विगडणाय इतरो जमावज्जे ॥

९०६. एगतरलिंगविजढे, इति सुत्ता वण्णिता तु जे हेट्ठा ।
उभयजढे अयमन्नो, आरंभो होति सुत्तस्स ॥नि. १५५ ॥

९०७. निग्गमणमवक्कमणं, निस्सरण-पलायणं च एगट्ठं[14] ।
'लोट्टण-लुठण-पलोट्टण'[15], ओहाणं[16] चेव एगट्ठं ॥नि. १५६ ॥

९०८. विसयोदएण[17] अधिगरणतो व चइतो[18] व दुक्खसेज्जाए ।
इति[19] लिंगस्स विवेगं, करेज्ज पच्चक्खपारोक्खं ॥

९०९. अंतो उवस्सए छड्डुणा उ, बहि गाम मज्झ 'पासे वा'[20] ।
बितियं गिलाणलोए, कितिकम्मसरीरमादीसु[21] ॥

९१०. उवसामिते परेण व, सयं च समुवट्ठिते उवट्ठवणा ।
तक्खणचिरकालेण य[22], दिट्ठंतो अक्खभंगेण ॥

---

१. जहियं (अ), गहेय (ब) ।
२. x (ब) ।
३. कुक्कड (ब) ।
४. अ प्रति में इस गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
भत्तासति पविसंतो, थूभपणामे जिणपणामं ।
५. अयं पात्रे अपत्ते इति अत्र प्राकृतत्वात् यकारलोप: (मवृ) ।
६. ० रग एवं (ब) ।
७. ति गिलाणो (ब) ।
८. यह गाथा अ और स प्रति में नहीं है । ब प्रति में इस गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
लोयं च करमाणो, कितिकम्मम्मी सरीरे वी ।
९. रुसेज्जा इहि घेत्तुं (ब) ।
१०. जध (अ) ।
११. ०गाढं (ब) ।
१२. ०णेण (अ) ।
१३. जतयाती (अ, स), जइकारि (ब) ।
१४. एगट्ठा (ब) ।
१५. लुटण लोट्टण ० (मु) ।
१६. उड्डाणं (अ) ।
१७. विस उदएणं (अ, ब) ।
१८. चतिओ (ब) ।
१९. इइ (ब) ।
२०. पासत्थे (ब) ।
२१. इस गाथा के स्थान पर अ और स प्रति में निम्न गाथा मिलती है—
आयरिए अणुसट्ठो, जति भावो तस्स सण्णियसेज्जा ।
अंतोवस्सयबाहिं, गामा तध गामबहितो वा ॥
२२. व (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९११. मूलगुण-उत्तरगुणे, असेवमाणस्स तस्स अतियारं ।
तक्खण[1] उवट्ठियस्स उ, किं कारण दिज्जते[2] मूलं ॥दारं ॥

९१२. सेवउ मा व वयाणं, अतियारं तध वि देंति से मूलं ।
विगडासवा जलम्मि[3] उ, 'कहं तु'[4] नावा न वुड्डेज्जा[5] ॥

९१३. 'चोरिस्सामि त्ति'[6] मतिं[7], जो खलु संधाय फेडए मुद्दं ।
अहियम्मि वि सो चोरो, एमेव इमं पि पासामो[8] ॥

९१४. अतियारे खलु नियमेण, विगडणा एस सुत्तसंबंधो ।
किंचि[9] न तेणाचिण्णं, दोन्नि नि लिंगा जढा जेणं ॥

९१५. अहवा हेट्ठाणंतरसुत्ते, आलोयणा[10] भवे नियमा ।
इहमवि[11] हु[12] जं निमित्तं, उल्लट्ठो तस्स कायव्वो ॥

९१६. अन्नतरं तु[13] अकिच्चं, मूलगुणे चेव उत्तरगुणे य ।
'मूलं च सव्वदेसं'[14], एमेव य उत्तरगुणेसु[15] ॥नि. १५७ ॥

९१७. अहवा पणगादीयं, मासादी वावि जाव छम्मासा ।
एयं[16] तवारिहं खलु, छेदादि चउण्ह वेगतरं ॥

९१८. तं सेविऊणऽकिच्चं[17] विगडेयव्वं कमेणिमेणं तु ।
सगुरुकुलमादिएणं, जाव उ अरहंतसक्खीयं[18] ॥

९१९. आउयवाघातं वा, दुल्लभगीतं व एसकालं[19] तु ।
अपरक्कममासज्ज व, सुत्तमिणं 'तु दिसा'[20] जाव ॥

९२०. 'सुत्तमिणं कारणियं'[21], आयरियादीण[22] जत्थ गच्छम्मि ।
पंचण्हं होतऽसती, एगो च तहिं[23] न वसितव्वं ॥नि. १५८ ॥

---

१. लक्खण (अ)।
२. दिज्जती (अ, स)।
३. कुलम्मि (ब)।
४. कहन्नु (अ)।
५. पूरेज्जा (अ, स)।
६. ०स्सामी ति (स)।
७. इमं (ब)।
८. स प्रति में ९१३वीं गाथा के बाद 'बितियपदं तु गिलाणो' (व्यभा ९०३) गाथा और मिलती है।
९. किंति (ब), किंच (अ)।
१०. आलोवणा (ब)।
११. इह विय (अ, स)।
१२. य (ब)।
१३. व (ब)।
१४. मूले सव्वं देसं (स)।
१५. अधुना निर्युक्तिभाष्यविस्तरः (मवृ)।
१६. एते (अ, स)।
१७. ०अकिच्चं (स)।
१८. यह गाथा केवल अ और स प्रति में प्राप्त है। टीका की मुद्रित प्रति में इसकी संक्षिप्त व्याख्या है किंतु गाथा नहीं मिलती है। विषय वस्तु की दृष्टि से यह यहां संगत लगती है।
१९. एण्हकालं (अ)।
२०. तद्दिसा (ब), तु दिसा (अ)।
२१. सुत्तस्सेतं कारण (अ), सुत्तं से तं कारण (स)।
२२. ० रियाण (ब)।
२३. जहिं (अ, ब, स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९२१. एवं[1] असुभ-गिलाणे[2], परिण्णकुलकज्जमादि 'वग्गे उ'[3] ।
अण्ण सति[4] ससल्लस्सा[5], जीवितघाते[6] चरणघातो ॥दारं ॥

९२२. एवं होति विरोधो, 'आलोयणपरिणतो य सुद्धो य'[7] ।
एगंतेण पमाणं, परिणामो वी न खलु अम्हं ॥

९२३. चोदग[8] किं वा कारण, पंचण्हऽसती 'न तत्थ'[9] वसितव्वं ।
दिट्ठंतो वाणियए, 'पिंडिय अत्थे'[10] वसिउकामे ॥

९२४. तत्थ न कप्पति[11] वासो, आधारा[12] जत्थ नत्थि पंच इमे[13] ।
राया वेज्जो धणिमं, नेवइया[14] रूवजक्खा[15] य ॥

९२५. दविणस्स जीवियस्स व, वाघातो होज्ज जत्थ णत्थेते ।
वाघाते चेगतरस्स, दव्वसंघाडणा[16] अफला ॥

९२६. रण्णा[17] जुवरण्णा वा, 'महयरग अमच्च'[18] तह कुमारेहिं ।
एतेहिं परिग्गहितं, वसेज्ज रज्जं[19] गुणविसालं[20] ॥

९२७. उभओ जोणीसुद्धो, राया दसभागमेत्तसंतुट्ठो ।
लोगे वेदे समए, कतागमो धम्मिओ राया ॥

९२८. पंचविधे कामगुणे, साहीणे भुंजते[21] निरुव्विग्गे ।
वावारविप्पमुक्को, राया एतारिसो होति ॥

९२९. आवस्सयाइ[22] काउं, जो पुव्वाइं[23] तु निरवसेसाइं ।
अत्थाणी मज्झगतो[24] पेच्छति कज्जाइं[25] जुवराया ॥दारं ॥

९३०. गंभीरो मद्दवितो, 'कुसलो जो'[26] जातिविणयसंपन्नो ।
जुवरण्णाए सहितो[27], पेच्छइ कज्जाइ महतरओ[28] ॥दारं ॥

---

१. एगं (ब) ।
२. किलाणे (स) ।
३. ०य (ब) वग्गि वा (स) ।
४. ०ऽसती (अ) ।
५. ०ल्लादी (अ) ।
६. जीए वि० (ब) ।
७. ०परिणइ त्ति जं भणितो (ब), ०परिणते त्ति जं भणियं (अ) ।
८. चोयणग (ब) ।
९. तहिं न (ब) ।
१०. पिंडियत्थे (अ, स) ।
११. करेति (अ) ।
१२. आहारा (अ) ।
१३. यमे (ब) ।
१४. नेवतिया (अ), नीतिकारिणः (मवृ) ।
१५. रूवरक्खा (अ), रूपयक्षाः धर्मपाठकाः (मवृ) ।
१६. ०संपिंडणा (अ, स) ।
१७. रण्णो (ब) ।
१८. ० यरगऽमच्च (ब) ।
१९. X (ब) ।
२०. गुणसमिद्धं (अ, स) ।
२१. भुंजति (ब) ।
२२. ० स्सगादि (ब), आवासगाइं (अ, स) ।
२३. सव्वाइं (अ, स) ।
२४. ० गई (ब) ।
२५. कयाइं (ब) ।
२६. कुलजो सो (स) ।
२७. सहियं (अ) ।
२८. मयहरतो (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९३१. सज्जणवयं च पुरवरं, चिंततो[1] अच्छई[2] 'नरवतिं च'[3] ।
ववहारनीतिकुसलो, अमच्चो एयारिसो अधवा[4] ॥

९३२. राया पुरोहितो वा[5], संगिल्लाउ[6] नगरम्मि दो वि जणा ।
अंतेउरे धरिसिया, अमच्चेण[7] खिंसिता दो वि ॥

९३३. छंदाणुवत्ति[8] तुब्भं[9], मज्झं वीमंसणा[10] निवे खलिणं ।
निसिगमण मरुगथालं, धरेति भुंजंति ता[11] दो वि[12] ॥

९३४. पडिवेसिय रायाणो, सोउमिणं परिभवेण हसिहिंति ।
थीनिज्जितो पमत्तो, त्ति णाउ[13] रज्जं पि पेलेज्जा[14] ॥

९३५. धित्तेसिं[15] गामनगराणं, जेसिं इत्थी पणायिगा ।
ते यावि धिक्कया[16] पुरिसा, जे इत्थीणं वसंगता ॥

९३६. इत्थीओ बलवं जत्थ, गामेसु नगरेसु वा ।
सो गामं नगरं वापि, खिप्पमेव विणस्सति[17] ॥

९३७. इत्थीओ बलवं जत्थ, गामेसु नगरेसु वा ।
अणस्सा जत्थ हेसंति[18], 'अपव्वम्मि य मुंडणं'[19] ॥

९३८. सूयग तहाणुसूयग[20], पडिसूयग सव्वसूयगा चेव ।
पुरिसा कतवित्तीया, वसंति सामंतरज्जेसु[21] ॥

९३९. सूयिग तहाणुसूयिग[22], पडिसूयिग सव्वसूयिगा चेव ।
महिला कयवित्तीया, वसंति सामंतरज्जेसु[23] ॥

९४०. सूयग तहाणुसूयग, पडिसूयग सव्वसूयगा चेव ।
पुरिसा कयवित्तीया, वसंति सामंतनगरेसु ॥

९४१. सूयिग तहाणुसूयिग, पडिसूयिग सव्वसूयिगा चेव ।
महिला कयवित्तीया, वसंति सामंतनगरेसु ॥

---

१. चिंतितो (ब), चिंतेतो (स) ।
२. अच्छए (अ, स) ।
३. नरवरं तु (अ), ०वइं तु (स) ।
४. होइ (अ) ।
५. या (स) ।
६. संघिल्लाउ (ब), सग्घिल्लाउ (स) ।
७. अमच्चेणं (ब), अमच्चेण य (स) ।
८. ० णुयत्ति (ब) ।
९. तुब्भं (ब) ।
१०. धीमं० (अ) ।
११. या (स) ।
१२. इस गाथा का उत्तरार्ध अ प्रति में नहीं है ।
१३. वावि (ब, स) ।
१४. यह गाथा अ प्रति में नहीं है ।
१५. धिक्किया (स), धिग्योगे द्वितीयाप्राप्तावपि षष्ठी प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
१६. धिद्धिकया (ब), वेक्किया (अ) ।
१७. यह गाथा अ और स प्रति में नहीं है ।
१८. हिंसंति (अ, स) ।
१९. अपव्वे मुंडितं सिरं (अ), इस गाथा का पूर्वार्ध अ और स प्रति में नहीं है ।
२०. तहा अणुसू० (अ, स) सर्वत्र ।
२१. परंतरज्जेसु (बपा) ।
२२. ० सूयग (ब, स) सर्वत्र, महिला से सम्बन्धित सभी गाथाओं में सूयिग के स्थान पर सूयग पाठ है ।
२३. निययम्मि रज्जम्मि (ब), परंतरज्जेसु (बपा) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९४२. सूयग तहाणुसूयग, पडिसूयग सव्वसूयगा चेव ।
पुरिसा कयवित्तीया, वसंति नियगम्मि रज्जम्मि ॥

९४३. सूयिग तहाणुसूयिग, पडिसूयिग सव्वसूयिगा चेव ।
महिला कयवित्तीया, वसंति नियगम्मि रज्जम्मि ॥

९४४. सूयग तहाणुसूयग, पडिसूयग सव्वसूयगा चेव ।
पुरिसा कयवित्तीया, वसंति नियगम्मि नगरम्मि

९४५. सूयिग तहाणुसूयिग, पडिसूयिग सव्वसूयिगा चेव ।
महिला कयवित्तीया, वसंति नियगम्मि नगरम्मि[1] ॥

९४६. सूयग तहाणुसूयग, पडिसूयग सव्वसूयगा चेव ।
पुरिसा कयवित्तीया, वसंति अंतेउरे रण्णो ॥

९४७. सूयिग तहाणुसूयिग, पडिसूयिग सव्वसूयिगा चेव ।
महिला कयवित्तीया, वसंति अंतेउरे रण्णो ॥

९४८. पच्चंते खुब्भंते[2], दुद्दंते सव्वतो दमेमाणो ।
संगामनीतिकुसलो, 'कुमार एतारिसो होति'[3] ॥

९४९. अम्मापितीहि जणियस्स, तस्स[4] आतंकपउरदोसेहिं ।
वेज्जा देंति[5] समाधिं, जहिं कता आगमा होंति ॥दारं ॥

९५०. कोडिग्गसो हिरण्णं, मणि-मुत्त-'सिल-प्पवाल-रयणाइं'[6] ।
अज्जय-पिउ-पज्जामय, एरिसया होंति धणमंता[7] ॥दारं ॥

९५१. सणसत्तरमादीणं, धन्नाणं कुंभकोडिकोडीओ[8] ।
जेसिं तु[9] भोयणट्ठा, एरिसया होंति नेवतिया[10] ।दारं ॥

९५२. भंभीय[11] मासुरुक्खे, माढरकोडिण्णदंडनीतीसु[12] ।
अधऽलंचऽपक्खगाही[13], एरिसया रूवजक्खा तु[14] ॥दारं ॥

---

१. ९४४-४५ ये दोनों गाथाएं ब प्रति में नहीं हैं। ९४५ वाली गाथा टीका की मुद्रित प्रति में प्राप्त नहीं है। किंतु अ और स प्रति में उपलब्ध है। ये गाथाएं विषय वस्तु की दृष्टि से यहां संगत लगती हैं। क्योंकि ९४४ वाली गाथा पुरुष से सम्बन्धित है और ९४५ वाली महिला से। पिछली गाथाओं में पुरुष और महिला दोनों से सम्बन्धित गाथाएं आई हैं राज्य के बाद ये नगर से सम्बन्धित गाथाएं है।

२. खलु भंते (ब)।

३. कुमारा एयारिसा होंति (ब)।

४. जस्स (स)।

५. दिंति (ब)।

६. सिला पवालयं च (अ), सिला पवालयाइं च (स)।

७. ० मंतु (ब), ० मंतो (अ)।

८. ० कोडाकोडीणं (अ, स)।

९. ता (मु)।

१०. निवतिया (ब), नियतिर्व्यवस्था तत्र नियुक्तास्तथा वा चरंतीति नियतिका: (मवृ)।

११. हंभीय (अ, स)।

१२. ०कोडल्ल डंडनीती य (अ, स)।

१३. ०अपक्ख० (अ, स)।

१४. ९५२ से ९५४ तक की गाथाएं ब प्रति में नहीं हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९५३. तत्थ न कप्पति वासो, गुणागरा जत्थ नत्थि पंच इमे ।
आयरिय-उवज्झाए[१], पवित्ति-थेरे य गीतत्थे ॥

९५४. सुत्तत्थतदुभएहिं, उवउत्ता नाण-दंसण-चरित्ते ।
गणतत्तिविप्पमुक्का, एरिसया होंति आयरिया ॥

९५५. एगग्गया य झाणे, वुड्ढी[२] तित्थगरअणुकिती[३] गुरुया ।
आणाथेज्जमिति[४] गुरू, कयरिणमोक्खो न वाएति ॥दारं ॥

९५६. सुत्तत्थतदुभयविऊ, उज्जुत्ता[५] नाण-दंसण-चरित्ते ।
निप्फादगसिस्साणं, एरिसया होंतुवज्झाया ॥

९५७. सुत्तत्थेसु थिरत्तं, रिणमोक्खो आयतीय पडिबंधो ।
पाडिच्छा[६] मोहजओ[७], 'तम्हा वाए उवज्झाओ'[८] ॥दारं ॥

९५८. तव-नियम-विणयगुणनिहि, पवत्तगा नाण-दंसण-चरित्ते ।
संगहुवग्गहकुसला, पवत्ति एतारिसा होंति ॥

९५९. संजम-तव-नियमेसुं, 'जो जोग्गो तत्थ'[९] तं पवत्तेंति ।
असहू य नियत्तेंती[१०], गणतत्तिल्ला पवत्तीओ ॥दारं ॥

९६०. संविग्गो मद्दवितो, पियधम्मो नाण-दंसण-चरित्ते ।
जे अट्ठे परिहायंति, ते सारेंतो हवति थेरो ॥

९६१. थिरकरणा पुण थेरो, पवत्ति वावारितेसु अत्थेसु ।
जो जत्थ सीदति[११] जती, संतबलो[१२] तं पचोदेति[१३] ॥

९६२. उद्धावणा[१४] पधावण, खेत्तोवधिमग्गणासु[१५] अविसादी ।
सुत्तत्थतदुभयविऊ, गीयत्था एरिसा होंति ॥दारं ॥

९६३. जध पंचकपरिहीणं, रज्जं डमर-भय-चोर-उव्विग्गं ।
उग्गहितसगडपिडगं, 'परंपरं वच्चते सामिं'[१६] ॥

९६४. इय पंचकपरिहीणे, गच्छे आवन्नकारणे[१७] साधू ।
आलोयणमलभंतो, परंपरं वच्चते सिद्धे ॥नि. १५९ ॥

---

१. ०ज्झाया (स)।
२. इड्ढी (अ)।
३. ०अणुगिई (ब)।
४. ०छेज्ज ० (ब), ०थेज्जम्मि (स)।
५. उज्जत्तो (अ, स)।
६. पारिच्छे (स)।
७. ० जुतो (अ)।
८. तम्हा उ गणी पवाएइ (अ, ब), तम्हा उ गणी उ वाएति (मवृपा)।
९. जोगो जत्थ तत्थ (ब)।
१०. नियत्तेती (स)।
११. सायति (ब)।
१२. अ प्रति में ब के स्थान पर प्रायः सभी स्थानों पर प पाठ मिलता है।
१३. च सारेति (अ, स)।
१४. उड्डावणा (स), उद्धावनं प्राकृतत्वात् स्त्रीत्वनिर्देशः (मवृ)।
१५. खेत्ते बहि० (स)।
१६. परं व वए सामी (ब)।
१७. आसन्न० (अ, ब, स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९६५. आयरिए आलोयण, पंचण्हं असति गच्छबहिया[1] जो[2] ।
वोच्चत्थे चउलहुगा, अगीयत्थें[3] होंति चउगुरुगा ॥

९६६. संविग्गे गीयत्थे, असती पासत्थमादि सारूवी ।
गीतत्थे अब्भुट्ठित, असति 'मग्गणं व'[4] देसम्मि[5] ॥नि. १६० ॥

९६७. खेत्ततो दुवि मग्गेज्जा, जा चउत्थ सत्त जोयणसताइं ।
बारससमा उ कालतो उक्कोसेणं विमग्गेज्जा ॥

९६८. एवं पि विमग्गंतो, जति न लभेज्जा तु गीत-संविग्गं ।
पासत्थादीसु ततो, विगडे अणवट्ठितेसुं पि ॥

९६९. तस्सऽसति सिद्धपुत्ते, पच्छकडे चेव होतिऽगीयत्थे ।
आवकधाए लिंगे, तिण्हा वि अणिच्छिइत्तिरियं ॥नि. १६१ ॥

९७०. असतीय लिंगकरणं, सामाइयइत्तरं[6] च कितिकम्मं ।
तत्थेव य सुद्धतवो, 'सुह-दुक्ख गवेसती सो वि'[7] ॥नि. १६२ ॥

९७१. लिंगकरणं निसेज्जा, कितिकम्ममणिच्छतो पणामो[8] य[9] ।
एमेव देवयाए, नवरं सामाइयं मोत्तुं[10] ॥

९७२. आहार-उवधि-सेज्जा, 'एसणमादीसु होति'[11] जतितव्वं ।
अणुमोयण कारावण, सिक्खत्ति[12] पयम्मि सो सुद्धो ॥

९७३. चोदति[13] से परिवारं, अकरेमाणे भणाति वा[14] सड्ढे ।
अव्वोच्छित्तिकरस्स उ, सुतभत्तीए कुणह पूयं ॥

९७४. 'दुविधाऽसतीय तेसिं'[15], आहारादी करेति सव्वं से ।
पणहाणीय जयंतो, अत्तट्ठाए वि एमेव ॥

९७४/१. तेसिं पि य असतीए, ताधे आलोएँ देवयसगासे ।
कितिकम्मनिसेज्जविधी, तधाति सामाइयं णत्थि[16] ॥

---

१. ०पधिता (अ), ०पहिया (ब) ।
२. तु (स) ।
३. गीयत्थे (अ) ।
४. वि मग्गणं (स) ।
५. ९६६-६९ ये चार गाथाएं अ और स प्रति में मिलती हैं । इन गाथाओं के स्थान पर टीका और ब प्रति में निम्न गाथा मिलती है—

संविग्गे गीयत्थे, सारूवि पच्छकडे य गीयत्थे ।
पडिक्कंत अब्भुट्ठित, असती अन्नत्थ तत्थेव ॥

टीकाकार ने इसी गाथा की व्याख्या की है । किन्तु विषयवस्तु की स्पष्टता की दृष्टि से ऊपर वाली चारों गाथाएं अधिक स्पष्ट प्रतीत होती हैं । संभव है टीकाकार के समक्ष ये गाथाएं नहीं थीं ।
६. ० इत्तिरं (अ) ।
७. गवेसणा जाव सुह-दुक्खे (ब) ।
८. पणामेउं (ब) ।
९. उ (स) ।
१०. यह गाथा स प्रति में अनुपलब्ध है ।
११. तस्सट्ठा एसणाति (अ) ।
१२. सिक्खा ति (ब) ।
१३. चोदति (अ, स) ।
१४. या (मु) ।
१५. ० सईया तेसि (ब) ।
१६. यह गाथा केवल अ और स प्रति में प्राप्त है । टीकाकार ने भी इसकी कोई व्याख्या नहीं की है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९७५. कोरंटगं जधा भावितद्रुमं पुच्छिऊण[1] वा अन्नं ।
असति[2] अरिहंत-सिद्धे, जाणंतो सुद्धो जा चेव ॥

९७६. सोधीकरणा दिट्ठा, गुणसिलमादीसु[3] जाहि[4] साधूणं ।
तो देंति विसोधीओ, पच्चुप्पण्णा[5] व पुच्छंति ॥

इति प्रथम उद्देशक

१. पुच्छिऊण (अ) ।
२. वासति (स) ।
३. ० सीलमादीहि (अ, स) ।
४. जह य (मु) ।
५. पच्चपिण्णा (ब), ०पण्णो (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्वितीय उद्देशक

९७७. अब्भुट्ठियस्स पासम्मि, वहंतो[1] जदि कयाइ[2] आवज्जे ।
'अत्थेणेव उ जोगो'[3], पढमाओ होति[4] बितियस्स ॥

९७८. अधवा एगस्स विधी, वुत्तो[5] णेगाण होति अयमन्नो ।
आइण्णविगडिते[6] वा, पट्ठवणा एस संबंधो ॥दारं ॥

९७९. दो साहम्मिय छब्बारसेव लिंगम्मि होति चउभंगो ।
चत्तारि 'विहारम्मि उ'[7], दुविहो भावम्मि भेदो उ[8] ॥नि. १६३ ॥

९८०. नामं ठवणा दविए, खेत्ते काले य होति बोधव्वे ।
भावे य दुगे एसो, निक्खेवो छव्विहो होति ॥नि. १६४ ॥

९८१. चित्तमचित्तं एक्केक्कगस्स जे जत्तिया 'उ दुगभेदा'[9] ।
खेत्ते दुपदेसादी, दुसमयमादी उ कालम्मि ॥नि. १६५ ॥

९८२. भावे पसत्थमियरं[10], होति पसत्थं तु णाणि-णोणाणे ।
केवलियछउम णाणे[11], णोणाणे दिट्ठि-चरणे य ॥नि. १६६ ॥

९८३. एक्केक्कं पि य तिविहं, सट्ठाणे नत्थि खइय अतियारो ।
उवसामिएसु दोसुं, अतियारो होज्ज सेसेसु[12] ॥नि. १६७ ॥

९८३/१. भावे अपसत्थ-पसत्थगं च दुविधं तु होति णायव्वं ।
अविरय-पमायमेव य, अपसत्थं होति दुविधं तु ॥

९८३/२. णाणे णोणाणे या, होति पसत्थम्मि ताव दुविधं तु ।
णाणे खओवसमितं, खइयं च तहा मुणेयव्वं ॥

९८३/३. णोणाणे विय दिट्ठी, चरणे एक्केक्कयं तिधा मुणेयव्वं ।
मीसं तधोवसमितं, खइयं च तधा मुणेयव्वं ॥

---

१. व वहंतो (अ), वहंति (ब) ।
२. कधं वि (अ), कहं वि (स) ।
३. अत्थेणे उ जोगो व (ब) ।
४. होहिति (ब) ।
५. उत्तो (स) ।
६. आयण्ण० (ब), आवण्ण० (अ, स) ।
७. विहारं पि (ब) ।
८. इस गाथा के स्थान पर अ और स प्रति में निम्न गाथा प्राप्त है—
दुयगम्मि निक्खेवो, उक्कोसा-धम्मिते य बारसगो ।
चउभेदो य विहारे, णेयव्वा आणुपुव्वीए ॥
९. ते दुभेया (ब) ।
१०. अपस० (अ) ।
११. केवलछ० (स) ।
१२. ९८२ एवं ९८३ ये दो गाथाएं अ और स प्रति में अप्राप्त हैं। किन्तु इनके स्थान पर ९८३/१-४ ये चार गाथाएं मिलती हैं। देखें टिप्पण ९८३/४ की गाथा का टिप्पण ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९८३/४. णाणादीसुं तीसु वि, सट्ठाणे णत्थि खइय अतिचारो ।
उवसामिए वि दोसुं, दिट्ठी चरणे य सट्ठाणे[1] ॥

९८४. सट्ठाणपरट्ठाणे[2], खओवसमितेसु तीसु वी भयणा ।
दंसण-उवसम-खइए[3], परठाणे होति भयणा उ ॥

९८५. दव्वदुए दुपदेणं, सच्चित्तेणं च एत्थ अहिगारो ।
मीसेणोदइएणं[4], भावम्मि वि होति 'दोहिं पि'[5] ॥दारं ॥

९८६. नामं ठवणा दविए, खेत्ते काले य पवयणे लिंगे ।
दंसण-नाण-चरित्ते, अभिग्गहे भावणाए[6] य[7] ॥दारं ॥नि.१६८ ॥

९८७. नामम्मि सरिसनामो, ठवणाए कट्ठकम्ममादीसु ।
दव्वम्मि 'जो उ'[8] भविओ, साधम्मि सरीरगं जं च ॥

९८८. खेत्ते समाणदेसी, कालम्मि तु एक्ककालसंभूतो ।
पवयणसंघेकतरो, लिंगे रयहरण-मुहपोत्ती[9] ॥

९८९. दंसण-नाणे-चरणे, तिग पण-पण 'तिविध होति व चरित्तं[10] ।
दव्वादी तु अभिग्गह, अह भावण मो अणिच्चादी ॥

९९०. 'साहम्मिएहि कहितेहिं'[11], लिंगादी होति एत्थ चउभंगो[12] ।
नामं ठवणा दविए, भाव विहारे य चत्तारि ॥नि. १६९ ॥

९९१. लिंगेण उ साहम्मी, नोपवयणतो य निण्हगा सव्वे ।
पवयणसाधम्मी पुण, न लिंग दस होंति ससिहागा[13] ॥

९९२. साधू तु लिंग पवयण, णोभयतो कुतित्थ-तित्थयरमादी ।
उववज्जिऊण एवं, भावेतव्वो तु सव्वे वी[14] ॥

९९३. एमेव य लिंगेणं, दंसणमादीसु होंति भंगा उ ।
भइएसु उवरिमेसुं, हेट्ठिल्लपदं तु छड्डेज्जा ॥

---

१. ९८३/१-४ ये चारों गाथाएं केवल अ और स प्रति में मिलती हैं। ये गाथाएं ९८२-९८३ इन दोनों गाथाओं के स्थान पर हैं। ये व्याख्यात्मक सी प्रतीत होती हैं। ये गाथाएं बाद में बनाई गई या पहले, यह खोज का विषय है। प्रति के पाठांतर के रूप में मुद्रित टीका के सपादक ने टीका में इन गाथाओं का उल्लेख किया है। पर मूल टीकाकार ने इन गाथाओं का कोई उल्लेख नहीं किया है।

२. ० परठाणे (अ)।

३. खंतिए (ब)।

४. ०दएण य (स)।

५. दुविध तु (अ), दोहिं तु (स)।

६. भावयाओ (स)।

७. उ (ब)।

८. उ जो (अ, स)।

९. ० पत्ती (स)।

१०. तिविहो होइ चरित्ते (मवृ)।

११. गाथायां तृतीया सप्तम्यर्थे प्राकृतत्वात् (मवृ)।

१२. चतुर्भंगी गाथायां पुंस्त्वमार्षत्वात् (मवृ)।

१३. अ और स प्रति में इस गाथा के स्थान पर निम्न गाथा मिलती है—

पवयणतो लिंगेण य, चउभंगो एत्थ होति णायव्वो ।
जो जत्थ निवडति तहिं, भंगम्मि सो उ कायव्वो ॥

हमने टीका की व्याख्या के आधार पर ९९१ वीं गाथा को मूल में स्वीकृत किया है।

१४. यह गाथा केवल अ और स प्रति में प्राप्त है। टीकाकर ने इसकी व्याख्या नहीं की है। किन्तु विषयवस्तु की दृष्टि से यह यहां संगत प्रतीत होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९९४. पत्तेयबुद्धनिण्हव[1], उवासए केवली य आसज्ज ।
खइयादिए य भावे, पडुच्च भंगे[2] तु जोएज्जा ॥

९९५. नामं ठवणा दविए, भावे य[3] चउव्विहो विहारो उ ।
विविधपगारेहि रयं, हरती जम्हा[4] विहारो उ ॥नि. १७० ॥

९९६. आहारादीणट्ठा, जो य[5] विहारो अगीत-पासत्थे ।
जो यावि अणुवउत्तो, 'विहरति दव्वे'[6] विहारो उ ॥नि. १७१ ॥

९९७. गीतत्थो तु[7] विहारो, बितिओ[8] 'गीतत्थनिस्सितो होति'[9] ।
एत्तो ततियविहारो, नाणुण्णातो जिणवरेहिं ॥नि. १७२ ॥

९९८. जिणकप्पितो गीतत्थो, 'परिहारविसुद्धिओ वि गीयत्थो'[10] ।
गीयत्थे इड्डिदुगं, सेसा गीयत्थनिस्साए ॥नि. १७३ ॥

९९९. चोदेइ अगीयत्थे, किं कारण मो[11] निसिज्झति विहारो ।
सुण[12] दिट्ठंतं[13] चोदग !, सिद्धकरं[14] तिण्ह वेतेसिं[15] ॥

१०००. तिविधे संगेल्लम्मी[16], जाणंते निस्सिते अजाणंते ।
पाणंधि[17] छित्तकुरुणे[18], अडवि जले 'सावए तेणा'[19] ॥

१००१. एते सव्वे[20] दोसा, जो जेण उ निस्सितो य परिहरति ।
निवडइ दोसेसुं पुण, अयाणतो नियमया तेसु ॥

१००२. एवं उत्तरियम्मि वि, अयाणतो निवडई तु दोसेसुं ।
मग्गाईसु इमेसू, ण य होती निज्जराभागी[21] ॥

१००३. मग्गे सेहविहारे, मिच्छत्ते एसणादि विसमे य[22] ।
सोधी गिलाणमादी, तेणा दुविधा व[23] तिविधा वा ॥दारं ॥नि. १७४ ॥

१. ०निण्हय (स)।
२. भावो (अ)।
३. x (अ)।
४. जम्हा ततो (अ, स)।
५. उ (ब)।
६. विहार दव्वे (अ)।
७. य (ब)।
८. बीतो (अ)।
९. ० मीसतो भणितो (अ, ब, स), गीतार्थमिश्रितः (मवृपा)।
१०. x (अ)।
११. मो पादपूरणे (मवृ)।
१२. मुणि (अ)।
१३. दिट्ठंतो (ब, अ)।
१४. सिद्धिगतं (स)।
१५. व तेसिं (ब), एतेसिं (अ)।
१६. संगिल्लो नाम गोसमुदायः (मवृ)।
१७. पाणंधीति देशीपदमेतत् वर्तिनी वाचकम् (मवृ)।
१८. छेत्तकुरुणे (स)।
१९. आवए सीमे (स)।
२०. दव्वे (अ, स)।
२१. १००१-१००२ ये दोनों गाथाएं केवल अ और स प्रति में मिलती हैं। १००० वीं गाथा की टीका में इनका संक्षिप्त भावार्थ मात्र मिलता है किन्तु स्वतंत्र व्याख्या नहीं है। विषय वस्तु की दृष्टि से ये गाथाएं यहां संगत प्रतीत होती हैं।
२२. या (अ)।
२३. वि (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१००४. मग्गं सद्दव[१] रीयति, पाउस[२] उम्मग्ग अजतणा[३] एवं[४] ।
सेहकुलेसु य[५] विहरति, नऽणुवत्तति[६] ते ण गाहेति[७] ॥दारं ॥

१००५. दसुदेसे[८] पच्चंते, वइगादि[९] विहार पाणबहुले य ।
अप्पाणं च परं वा, न मुणति मिच्छत्तसंकंतं ॥दारं ॥

१००६. आहार-उवधि सेज्जा, उग्गमउप्पायणेसणकडिल्ले[१०] ।
लग्गति अवियाणंतो, दोसे एतेसु सव्वेसु[११] ॥दारं ॥

१००७. मूलगुण उत्तरगुणे, आवण्णस्स य न याणई[१२] सोहिं ।
पडिसिद्ध[१३] त्ति न कुणति, गिलाणमादीण तेगिच्छं[१४] ॥

१००८. अप्पसुतो त्ति व काउं, वुग्गाहेउं हरंति खुड्डादी[१५] ।
तेणा सपक्ख इतरे, सलिंगगिहि अन्नहा[१६] तिविधा ॥

१००९. एते चेव य ठाणे, गीतत्थो निस्सितो उ[१७] वज्जेति ।
भावविहारो एसो, दुविहो तु समासतो भणितो ॥

१०१०. सो पुण होती दुविधो, समत्तकप्पो तधेव असमत्तो[१८] ।
'तत्थ समत्तो इणमो, जहण्णमुक्कोसतो होति'[१९] ॥

१०११. गीतत्थाणं तिण्हं, समत्तकप्पो जहन्नतो होति ।
बत्तीससहस्साइं, हवंति[२०] उक्कोसओ एस[२१] ॥

१०१२. तिण्ह समत्तो कप्पो, जहण्णतो 'दोन्नि ऊ'[२२] जया[२३] विहरे[२४] ।
गीतत्थाण वि लहुगो, अगीत गुरुगा इमे दोसा ॥

१०१३. दोण्हं[२५] विहरंताणं, सलिंग-गिहिलिंग-अन्नलिंगे य ।
होति बहुदोसवसही, गिलाणमरणे य सल्ले य ॥दारं ॥नि. १७५ ॥

---

१. सदेव (अ, स) ।
२. पायस (अ) ।
३. मजत० (ब) ।
४. वा (ब) ।
५. हु (स) ।
६. नणुय ० (ब) ।
७. गाहेंति (ब) ।
८. ० देसु (ब), देसुदेसे (स) ।
९. वतिया ० (ब) ।
१०. ण उग्गम० (अ) ।
११. इस गाथा का उत्तरार्ध अ और स प्रति में इस प्रकार है—
खलितस्स य पच्छित्तं, अमुणंतो णासए चरणं ।
१२. याणए (ब) ।
१३. ० सिद्धे (ब) ।
१४. अ और स प्रति में इस गाथा के स्थान पर निम्न गाथा है—
पडिसिद्ध त्ति न कुणते, तेइच्छं कुणति वा विवच्चासं ।
असिवोम-रायदुट्ठत्ति, मद्धजतणादिगहणेणं ॥
१५. कुड्डाई (स) ।
१६. अन्नावा (ब) ।
१७. व (अ) ।
१८. असमत्थो (स) ।
१९. इणमो जहण्णमुक्कोस, उ होति गीयत्थाणं ति (ब) ।
२०. वहंति (स) ।
२१. एसो (ब) ।
२२. दोन्नितो (अ, ब) ।
२३. जहा (स) ।
२४. विहारे (ब) ।
२५. दोण्ह वि (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०१४. एगस्स सलिंगादी, वसहीए हिंडतो य साणाही[१] ।
दोसा दोण्ह वि हिंडंतगाण वसधीय होंति इमे[२] ॥

१०१५. मिच्छत्त[३] बडुग[४] चारण, भडे य मरणं तिरिक्ख-मणुयाणं ।
आदेस-वाल-निक्केयणे य सुण्णे भवे दोसा ॥दारं ॥नि. १७६ ॥

१०१६. गेलण्णसुण्णकरणे, खद्धाइयणे[५] गिलाणअणुकंपा ।
साणादी य दुगुंछा[६], तस्सट्ठगतम्मि कालगते ॥दारं ॥

१०१७. गिहि-गोण[७]-मल्ल-राउल, निवेदणा पाण कड्ढणुड्डाहे ।
छक्कायाण विराधण, झामित मुक्के य[८] वावण्णे[९] ॥

१०१८. गोण 'निवे साणेसु'[१०] य, गुरुगा सेसेसु चउलहू होंति[११] ।
उड्डाहो त्ति च काउं, निववज्जेसुं भवे लहुगा[१२] ॥

१०१९. बिंति य मिच्छादिट्ठी[१३], कत्तो धम्मो तवो व एतेसिं ।
इहलोगे फलमेयं[१४], परलोए मंगुलतरागं[१५] ॥

१०२०. जदि एरिसाणि पावंति, दिक्खिया खु अम्ह दिक्खाए ।
पव्वज्जाभिमुहाणं, पुणरावत्ती भवे दुविधा ॥

१०२१. वालेण विप्परद्धे, सल्ले वाघातमरणभीतस्स ।
एवं दुग्गतिभीते[१६], वाघातो सल्लमोक्खट्ठा ॥

१०२२. मरिउं ससल्लमरणं, संसाराडविमहाकडिल्लम्मि ।
सुचिरं भमंति जीवा, अणोरपारम्मि ओतिण्णा[१७] ॥

१०२३. जम्हा एते दोसा, तम्हा दोण्हं न कप्पति विहारो ।
एयं[१८] सुत्तं अफलं[१९], अह सफलँ निरत्थओ अत्थो ॥नि. १७७ ॥

१०२४. मा वद सुत्तनिरत्थं[२०], न निरत्थगवादिणो भवे[२१] थेरा ।
कारणियं पुण सुत्तं, इमे य ते कारणा होंति ॥

---

१. सुण्णाई (अ)।
२. यमे (अ), यह गाथा केवल अ और स प्रति में प्राप्त है। इससे पूर्व की गाथा की टीका में इसका भावार्थ मात्र मिलता है। किन्तु स्वतंत्र व्याख्या एवं गाथा नहीं मिलती। विषयवस्तु की दृष्टि से यह यहां संगत प्रतीत होती है तथा अगली गाथा से जुड़ती है।
३. मिच्छत्ति व (अ)।
४. बदुग (ब)।
५. खद्धाययणे (स)।
६. दुगंच्छा (ब)।
७. गोणं (ब, स)।
८. व (अ)।
९. यावण्णे (ब)।
१०. ० पाणेसु (अ, स), निक्कासणे (ब)।
११. होइ (अ)।
१२. लहुगो (ब)।
१३. मिच्छद्दि ० (ब)।
१४. ०मेवं (स)।
१५. मंगुलोपमं (बपा)।
१६. दुर्गतिभीते षष्ठीसप्तम्योरर्थं प्रत्यभेदात् (भवृ)
१७. उत्तिण्णा (अ)।
१८. एए (ब), एवं (स)।
१९. अहलं (अ)।
२०. सुत्तमणत्थं (स), सुत्तअणत्थं (अ)।
२१. जतो (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०२५. असिवे ओमोदरिए, रायासंदेसणे[1] जतंता वा ।
अज्जाण गुरुनियोगा, पव्वज्जा णातिवग्ग दुवे[2] ॥

१०२६. समगं भिक्खग्गहणं, निक्खमण-पवेसणं अणुण्णवणं ।
एगो कधमावण्णो[3], एगोत्थ[4] 'कहं न आवण्णो'[5] ॥

१०२७. एगस्स खमणभाणस्स, धोवणं[6] बहिय इंदियत्थेहिं[7] ।
एतेहिं कारणेहि, आवण्णो वा अणावण्णो ॥

१०२८. तुल्ले 'वि इंदियत्थे'[8], 'सज्जति एगो'[9] विरज्जती बितिओ[10] ।
अज्झत्थं खु[11] पमाणं, न इंदियत्था[12] जिणा बेंति ॥

१०२९. मणसा उवेति विसए, 'मणसेव य'[13] सन्नियत्तस्स तेसु ।
इति वि हु अज्झत्थसमो, बंधो विसया न उ पमाणं ॥

१०३०. एवं[14] खलु आवण्णे, तक्खण आलोयणा तु गीतम्मि[15] ।
ठवणिज्जं ठवइत्ता[16], वेयावडियं[17] करे बितिओ ॥

१०३१. बितिए निव्विस एगो, निव्विट्ठेतेण[18] निव्विसे इतरो[19] ।
एगतरम्मि[20] अगीते, दोसु व[21] सगणेतरो सोधी ॥

१०३२. एमेव ततियसुत्ते, 'जदि एगो बहुगमज्झ'[22] आवज्जे ।
आलोयण गीतत्थे, सुद्धे[23] परिहार जध पुव्वि ॥

१०३३. सरिसेसु[24] असरिसेसु व, अवराधपदेसु जदि गणो[25] लग्गे ।
बहुयकतम्मि वि दोसो[26] त्ति होति सुत्तस्स संबंधो ॥नि. १७८ ॥

१०३४. सव्वे वा गीतत्था, मीसा व जहन्न एग गीतत्थो ।
परिहारिय आलवणादि भत्तं देंत व[27] गेण्हंता ॥

१०३५. लहु गुरु लहुगा गुरुगा, सुद्धतवाणं च होति पणवणा ।
अध होंति[28] अगीतत्था, अन्नगणे सोधणं कुज्जा ॥

---

१. ०संदेहए (ब) ।
२. दुगे (मु) ।
३. कध आ० (अ, स) ।
४. एगो व (मु) ।
५. x (स) ।
६. धोयणं (ब) ।
७. इंदिएहिं वा (अ) ।
८. वियंदि ० (ब) ।
९. एगो सज्जति (ब) ।
१०. एगो (मु) ।
११. मु (ब) ।
१२. ०यट्ठा (अ) ।
१३. मणसा वि (ब) ।
१४. एयं (स) ।
१५. गीयत्थ (ब) ।
१६. च ठवेत्ता (अ, स) ।
१७. वेज्जाव० (स) ।
१८. निव्वोट्ठेतेण (ब) ।
१९. बितितो (अ, स) ।
२०. एगयणम्मि (अ) ।
२१. य (ब) ।
२२. बहुमज्झे जति उ एगो (अ, स) ।
२३. सुद्ध (अ, स) ।
२४. ० सम्मि (मु) ।
२५. जणो (अ, स) ।
२६. दोसि (ब) ।
२७. य (ब) ।
२८. होति (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०३६. परिहारियाधिकारे[1], अणुवत्तंते[2] अयं विसेसो उ ।
आवण्ण दाण संथरमसंथरे चेव नाणत्तं ॥

१०३७. उभयबलं[3] परियागं, सुत्तत्थाभिग्गहे य वण्णेत्ता ।
न हु जुज्जति वोत्तुं जे[4], जं तदवत्थो वि आवज्जे[5] ॥

१०३८. 'दोहि वि गिलायमाणे'[6], पडिसेवंते मएण दिट्ठंतो ।
आलोयणायऽफरुसे[7], जोधे वसभे य दिट्ठंतो ॥दारं ॥**नि.१७९** ॥

१०३९. गिम्हेसु मोक्खितेसुं, दट्ठुं वा हम्मतो जलोतारे[8] ।
चिंतेति जदि न पाहं, तोयं तो मे धुवं मरणं ॥

१०४०. पिच्चा[9] मरिउं पि[10] सुहं, कयाइ व[11] सचेट्ठतो पलाएज्जा[12] ।
इति[13] चिंतेउं पाउं, नोल्लेउं[14] तो गतो वाहं[15] ॥

१०४१. मिगसामाणो साधू, दगपाणसमा अकप्पपडिसेवा ।
वाहोवमो य बंधो, सेविय[16] तो तं पणोल्लेति[17] ॥दारं ॥

१०४२. परबलपहारचइया, वायासरतोदिता[18] य ते पहुणा ।
परपच्चूहअसत्ता[19], तस्सेव भवंति[20] घाताए ॥

१०४३. नामेण य[21] गोत्तेण व, पसंसिया चेव पुव्वकम्मेहिं ।
भग्गवणिया वि जोधा, जिणंति सत्तुं उदिण्णं पि ॥

१०४४. इय[22] आउरपडिसेवंत, चोदितो[23] अधव तं निकायंतो[24] ।
लिंगारोवणचागं, करेज्ज घातं च कलहं वा ॥दारं ॥

१०४५. जं पि 'न चिण्णं'[25] तं तेण, चमढियं[26] पेल्लितं वसभराए ।
केदारेक्कदुवारे, पोयालेणं[27] निरुद्धेणं ॥

---

१. ० याहिगारं (मु) ।
२. अणुय ० (अ) ।
३. ० बले (ब) ।
४. जे इति पादपूरणे (भवृ) ।
५. यावण्णे (ब) ।
६. पढमबितितोदएणं (अ, स) ।
७. ० यणा अफरुसो (ब) ।
८. जलोवारे (अ) ।
९. पाउं (स) ।
१०. मि (ब) ।
११. x (अ) ।
१२. पलेज्जामि (अ, स) ।
१३. इति य (ब), इयं (स) ।
१४. ० ल्लेयं (ब) ।
१५. वाहिं (ब) ।
१६. सो विय (अ) ।
१७. पुणोल्लेति (अ, स) ।
१८. ० चोतिया (अ) ।
१९. ० च्चुहासत्ता (ब) ।
२०. व ठंति (अ), वट्टति (ब) ।
२१. व (स) ।
२२. इति (अ) ।
२३. चोतिते (ब), चोइया (स) ।
२४. निकाएतो (अ) ।
२५. मचिण्णंत (ब) ।
२६. चमहितं (अ) ।
२७. पोवालेणं (स), सांडवृषभेन (भवृ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०४६. तणुयम्मि वि अवराधे, कतम्मि अणुवाय चोदितेणेवं[1] ।
सेसचरणं पि मलियं, अपसत्थ-पसत्थबितियं तु ॥

१०४७. तेणेव सेवितेणं, असंथरंतो वि संथरो[2] जातो ।
'बितिओ पुण सेवंतो, अकप्पियं'[3] नेव संथरति ॥

१०४७/१. जं से अणुपरिहारी, करेति तं जइ बलम्मि संतम्मि ।
न निसिद्धति जा सातिज्जणा तु तहियं तु सट्ठाणं[4] ॥

१०४८. एमेव बितियसुत्ते[5], नाणत्तं नवरऽसंथरंतम्मि ।
करणं[6] अणुपरिहारी, चोदग[7]! गोणीय दिट्ठंतो ॥नि. १८० ॥

१०४९. पेहाभिक्खग्गहणे, उट्ठेंत निवेसणे य धुवणे य ।
जं जं न तरति काउं, तं तं से करिति[8] बितिओ तु ॥नि. १८१ ॥

१०५०. जं से अणुपरिहारी, करेति तं जइ बलम्मि संतम्मि ।
न निसेहइ सा सातिज्जणा उ तहियं तु सट्ठाणं[9] ॥

१०५१. तवसोसियस्स वातो[10], खुभेज्ज पित्तं व दो वि[11] समगं वा ।
सन्नग्गिपारणम्मी, गेलन्नमयं तु संबंधो ॥

१०५२. पढमबितिएहि न तरति, गेलण्णेणं तवो किलंतो वा ।
निज्जूहणा अकरणं[12], ठाणं च न देति वसधीए ॥

१०५३. 'निववेट्ठिं च कुणंतो'[13], जो कुणती[14] एरिसा गिला होति ।
पडिलेहुट्ठवणादी, वेयावडियं[15] तु पुव्वुत्तं ॥

१०५४. परिहारियकारणम्मि[16], आगमनिज्जूहणम्मि[17] चउगुरुगा ।
आणादिणो य दोसा, जं सेवति तं च पाविहिति[18] ॥नि. १८२ ॥

१०५५. कालगतो से सहाओ, असिवे राया व[19] बोहिय भए वा[20] ।
एतेहिं कारणेहि, एगागी होज्ज परिहारी ॥

---

१. चोदिते एवं (स)।
२. संथरं (अ, स)।
३. बितिए पुण सेवित्ता अकप्पिए (अ, स)।
४. यह गाथा सभी हस्तप्रतियों में इसी क्रम में प्राप्त है किन्तु टीका में यह गाथा १०४९ के बाद है। विषय वस्तु के क्रम की दृष्टि से यह वहीं संगत प्रतीत होती है। देखें टिप्पण न. ९।
५. ० सुत्तेण (ब)।
६. करणे (अ, स)।
७. रोयग (अ)।
८. करेति (अ)।
९. यह गाथा सभी हस्तप्रतियों में १०४७ वीं गाथा के बाद प्राप्त होती है। टीका में यह गाथा इसी क्रम में प्राप्त है। ब प्रति में यह गाथा पुनः इस क्रम में प्राप्त है। विषयवस्तु की दृष्टि से टीका का क्रम सम्यक् प्रतीत होता है।
१०. वाऊ (मु)।
११. व (ब)।
१२. ०रणे (अ, स)।
१३. ० विट्ठं पि कु ० (ब), ०वेढिं च करेंतो (स)।
१४. कुणति (ब)।
१५. वेज्जाव ० (अ), वेयावट्टियं (ब)।
१६. परिहारकारणम्मी (ब)।
१७. आगमे नि० (स), ०निज्जुह० (ब)।
१८. अत्र निर्युक्तिविस्तरः (मवृ)।
१९. य (अ)।
२०. य (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०५६. 'तम्हा कप्पठितं से, अणुपरिहारिं व ठावित करेज्जा'[१] ।
बितियपदे असिवादी[२], अगहितगहितम्मि आदेसो ॥

१०५७. गहितागहिते भंगा, चउरो न उ विसति पढम-बितिएसु ।
इच्छाय ततियभंगे, सुद्धो उ[३] चतुत्थओ भंगो ॥

१०५८. अतिगमणे[४] चउगुरुगा, साहू सागारि गाम 'बहि ठंति'[५] ।
कप्पट्ठ सिद्ध सण्णी, साहु[६] गिहत्थं 'व पेसेति'[७] ॥

१०५९ गंतूण पुच्छिऊणं[८], 'तस्स य वयणं'[९] करेंति 'न करेंति'[१०] ॥नि. १८३ ॥
एगाभोगण सव्वे, बहिठाणं वारणं इतरे ॥

१०६०. वोच्छिन्नघरस्सऽसती[११], पिहद्दुवारे वसंति संबद्धे ।
एगो तं[१२] पडिजग्गति, जोग्गं सव्वे वि झोसंति[१३] ॥

१०६१. सागारियअचियत्ते, 'बहि-पडियरणा'[१४] तधा वि नेच्छंते ।
अदिट्ठे कुणति एगो, न पुणो त्ति य बेंति दिट्ठम्मि ॥

१०६२. बहुपाउग्गउवस्सय[१५], असती वसभा दुवेऽहवा तिण्णि ।
कइतवकलहेणऽण्णहिं[१६], उप्पायण बाहि[१७] संछोभो[१८] ॥

१०६३. ते तस्स सोधितस्स य[१९] उव्वत्तण संतरं व धोवेज्जा[२०] ।
अच्छिक्कोवधि[२१] पेहे, अच्चितलिंगेण जो पउणो ॥

१०६४. ववहारो आलोयण, सोही पच्छित्तमेव एगट्ठा ।
थोवो उ अधालहुसो, पट्ठवणा होति दाणं तु[२२] ॥

१०६५. गुरुगो गुरुगतरागो, अधागुरूगो य होति ववहारो ।
'लहुसो लहुसतरागो'[२३], 'अहालहूसो य ववहारो'[२४] ॥

---

१. तम्हा कायव्वं से कप्पट्ठिय अणुपरिहारियं ठवेऊण (ब, मु) ।
२. ० वादि य (ब) ।
३. x (ब) ।
४. अतिरमणे (ब) ।
५. बहियादि (ब), बहिठाति (अ, स) ।
६. साहू (अ) ।
७. च पासेति (ब) ।
८. पुणिऊणं (अ) ।
९. सागारिय वयणं ० (ब), तस्सं उ वयणेण (स) ।
१०. x (अ) ।
११. विच्छिन्न ० (ब) ।
१२. णं (अ, ब) ।
१३. जोसंति (ब) ।
१४. बाहि पडियरण (ब) ।
१५. ० ग्गपुव० (अ, स) ।
१६. कयकलहे अण्णेहिं (ब), कलहेण तहिं (स) ।
१७. बोधि (अ) ।
१८. संथोभो (अ) ।
१९. उ (स) ।
२०. धोए० (ब), धोवेइज्जा (स) ।
२१. अच्छिक्का अस्पृष्टास्संतः बहुवचनप्रक्रमेऽप्येकवचनं गाथायां प्राकृतत्वात् वचनव्यत्ययोऽपि हि प्राकृते (मवृ)
२२. अ और स प्रति में यह गाथा इस प्रकार है—
थोवे उ अधालहुसो, ववहारो रोवणा य पच्छित्तं ।
सोहि त्ति य एगट्ठं, पट्ठवणं होति दाणं तु ॥
२३. लहुओ लहुयत्तरागो (स) ।
२४. लहुओ य होति वव० (ब) बृभा ६२३५, व्यभा १११७ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०६६. लहुसो लहुसतरागो, 'अहालहूसो य'[१] होति ववहारो ।
एतेसिं पच्छित्तं, वोच्छामि अधाणुपुव्वीए[२] ॥

१०६७. गुरुगो य होति मासो, गुरुगतरागो भवे[३] चउम्मासो ।
अहगुरुगो[४] छम्मासो, गुरुगे पक्खम्मि पडिवत्ती[५] ॥

१०६८. तीसा य पण्णवीसा[६], वीसा पण्णरसेव य[७] ।
दस पंच य दिवसाइं, लहुसगपक्खम्मि[८] पडिवत्ती[९] ॥

१०६९. गुरुगं च अट्ठमं[१०] खलु, गुरुगतरागं च होति दसमं तु ।
'अहगुरुग दुवालसमं'[११], गुरुगे पक्खम्मि पडिवत्ती[१२] ॥

१०७०. छट्ठं च चउत्थं वा, आयंबिल-एगठाण[१३]-पुरिमड्ढं ।
निव्वितिगं[१४] दायव्वं, अधालहुसगम्मि[१५] सुद्धो वा[१६] ॥

१०७१. पच्छित्तं खलु पगतं, निज्जूहणठाणुवत्तते जोगो[१७] ।
होति तवो छेदो वा, 'गिलाण तुल्लाधिगारं वा'[१८] ॥

१०७२. सगणे गिलायमाणं, कारण[१९] परगच्छमागयं वा वि ।
मा हु न कुज्जा निज्जूहगो[२०] त्ति इति सुत्तसंबंधो ॥

१०७३. अणवट्ठो[२१] पारंची, पुव्वं भणितं[२२] इमं तु नाणत्तं ।
कायव्व गिलाणस्स तु, अकरणे गुरुगा य आणादी ॥ नि. १८४ ॥

१०७४. ओलोयणं गवेसण, आयरिओ कुणति सव्वकालं पि ।
उप्पण्णकारणम्मी[२३], सव्वपयत्तेण कायव्वं[२४] ॥

१०७५. जो उ उवेहं कुज्जा, आयरिओ केणई पमादेणं ।
आरोवणा तु तस्सा, कायव्वा पुव्वनिद्दिट्ठा ॥

१०७६. घोरम्मि तवे दिन्ने, भएण सहसा भवेज्ज खित्तो[२५] उ ।
'गेलन्नं वा'[२६] पगतं, अगिलाकरणं[२७] च संबंधो ॥

---

१. अधालहुसाइ (ब)।
२. बृभा ६२३६, व्यभा १११८।
३. हवे (ब), य होइ (बृभा ६२३७)।
४. अधागुरुतो (अ, स)।
५. व्यभा १११९।
६. पणु० (स)।
७. या (ब)।
८. लहुसप० (अ)।
९. गाथा के द्वितीय चरण में अनुष्टुप् छंद का प्रयोग है। बृभा ६२३८, व्यभा ११२०।
१०. X (ब)।
११. अधागुरुयं बारसगं (अ, स), अहागुरुगं दुवालस (बृभा ६२३९)।
१२. व्यभा ११२१।
१३. एगल्लाण (ब)।
१४. निव्वतिगं (अ), निव्वियगं (बृभा ६२४०)।
१५. ० सगमे (अ)।
१६. य (ब), व्यभा ११२२।
१७. जग्गो (अ)।
१८. ० हिगारो व (ब), ०गारं च (स)।
१९. कारणे (अ)।
२०. ० ढतो (अ), ० ढगो (ब)।
२१. अणवट्ठप्पो (ब)।
२२. भणितो (ब, मु)।
२३. उप्पण्णो गेलण्णे (अ, स)।
२४. १०७४-७७ तक की चार गाथाएं ब प्रति में नहीं हैं।
२५. खेत्तो (अ)।
२६. गेलन्नमिव (अ), गेलण्णम्मि व (स)।
२७. अगिलाए करणं (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०७७. लोइय लोउत्तरिओ, दुविहो खित्तो समासतो होति ।
कह[1] पुण हवेज्ज खित्तो, इमेहि सुण कारणेहिं तु[2] ॥नि. १८५ ॥

१०७८. रागेण वा भएण व, अधवा 'अवमाणितो नरिंदेणं'[3] ।
एतेहिं खित्तचित्तो[4], वणियादि परूविया[5] लोगे[6] ॥नि. १८६ ॥

१०७९. भयतो सोमिलबडुओ, सहसोत्थरितो व संजुगादीसु ।
'धणहरणेण पहूण'[7] व, विमाणितो लोइया खित्तो ॥

१०८०. रागम्मि[8] रायखुड्डो, जड्डादि तिरिक्ख चरग[9] वादम्मि[10] ।
रागेण जहा[11] खित्तो, तमहं वोच्छं समासेणं[12] ॥

१०८१. 'जितसत्तुनरवतिस्स उ'[13], पव्वज्जा सिक्खणा विदेसम्मि ।
काऊण पोतणम्मी[14] 'सव्वायं निव्वुतो भगवं'[15] ॥

१०८२. 'एगो य तस्स भाया[16], रज्जसिरिं पयहिऊण पव्वइतो ।
भाउगअणुरागेणं[17], खित्तो जातो इमो उ विधी ॥

१०८३. तेलोक्कदेवमहिता, तित्थगरा[18] नीरया गता सिद्धिं[19] ।
थेरा वि गता केई, चरणगुणपभावगा धीरा[20] ॥

१०८४. न हु होति सोइयव्वो[21], जो कालगतो दढो चरित्तम्मि ।
सो होति सोइयव्वो, जो संजमदुब्बलो विहरे[22] ॥

१०८५. जो जह व तह व लद्धं, भुंजति आहार-उवधिमादीयं ।
समणगुणमुक्कजोगी, संसारपवड्ढगो[23] भणितो[24] ॥

१०८६. जड्डादी तेरिच्छे, सत्थे 'अगणी य थणियविज्जू य'[25] ।
ओमे पडिभेसणता, चरगं[26] पुव्वं[27] परूवेउं ॥

---

१. किह (अ) ।
२. यह गाथा अ और स प्रति में अनुपलब्ध है किन्तु टीका में यह गाथा व्याख्यात है । विषय वस्तु की दृष्टि से भी यह गाथा यहां प्रासंगिक है ।
३. कालगतो सेसाओ (अ) ।
४. ०चिता (बृभा), बृहत्कल्प भाष्य में क्षिप्तचित्त के पूरे प्रसंग में स्त्रीलिंग का प्रयोग हुआ है । हमने उन पाठांतरों को नहीं लिया है ।
५. ० वित्तो (ब) ।
६. बृभा ६१९५ ।
७. णरवतिणा व पतीण (बृभा ६१९६) ।
८. रागे सप्तमी तृतीयार्थे (मवृ) ।
९. चरिय (ब) ।
१०. वाडम्मि (अ, स) ।
११. जह (अ, स) ।
१२. बृभा ६१९७ ।
१३. जियसत्तू य णरवती (बृभा ६१९८) ।
१४. ० णस्सा (ब) ।
१५. वायं सो निव्वुतो भगवं (ब), संवायं निप्फतो भयवं (अ), संवादं नि ०(स) ।
१६. एक्का य तस्स भगिणी (बृभा ६१९९) ।
१७. भाउ अणु० (स) ।
१८. ० यराई (ब) ।
१९. मुक्खं (अ), मोक्खं (स) ।
२०. बृभा ६२०० । इस गाथा के बाद बृभा (६२०१) में निम्न गाथा और मिलती है ।
बंभी य सुंदरी या, अन्ना वि य जाउ लोगजेट्ठाओ ।
ताओ वि य कालगया, किं पुण सेसाओ अण्णाओ ॥
२१. सोविय ० (ब), सोतिय ० (अ) ।
२२. बृभा ६२०२ ।
२३. ० ड्डुतो (अ), ०ड्डतो (स) ।
२४. होइ (अ), बृभा ६२०३ ।
२५. अगणि य थणियविज्जाउ (अ) ।
२६. चरियं (बृभा ६२०४) ।
२७. पत्तं (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०८७. अवधीरितो व गणिणा[१], अहवण[२] सगणेण कम्हिइ[३] पमाए ।
वायम्मि वि चरगादी, 'पराजितो तत्थिमा जतणा'[४] ॥

१०८८. कण्णम्मि एस सीहो, गहितो अध धाडितो[५] य सो हत्थी ।
'खुड्डुलतरगेण तु मे'[६], ते वि य गमिया पुरा पाला[७] ॥

१०८९. सत्थऽग्गिं[८] थंभेउं, पणोल्लणं णस्सते[९] य सो हत्थी ।
थेरीचम्मविकड्डण[१०], अलातचक्कं व[११] दोसुं तु ॥

१०९०. एतेण जितो मि अहं, तं पुण सहसा न लक्खियं णेण ।
धिक्कयकइतवलज्जावितेण[१२] 'पउणो ततो'[१३] खुड्डो ॥

१०९१. तह वि य अठायमाणे, संरक्खमरक्खणे[१४] य चउगुरुगा ।
आणादिणो य दोसा, 'जं सेवति जं च पाविहिति'[१५] ।नि. १८७॥

१०९२. छक्कायाण विराधण, 'झामण तेणाऽतिवायणं'[१६] चेव ।
'अगडे विसमे पडिते'[१७], तम्हा रक्खंति जतणाए ॥नि.१८८॥

१०९३. सस्सगिहादीणि डहे, 'तेणे अहवा'[१८] सयं व हीरेज्जा ।
मारण-पिट्टणमुभए, तद्दोसा जं च सेसाणं ॥

१०९४. महिड्ढिए उट्ठनिवेसणा य, आहार-विगिंचणा-विउस्सग्गो ।
'रक्खंताण य'[१९] फिडिते, अगवेसणे होंति चउगुरुगा[२०] ॥नि.१८९॥

१०९५. अम्हं एत्थ पिसाओ[२१], रक्खंताणं पि फिट्टति[२२] कयाई ।
सो हु परिक्खेयव्वो, महिड्ढियाऽऽरक्खिए कधणा ॥दारं॥

१०९६. मिउबंधेहि तधा णं, जमेंति जह सो सयं तु उट्ठेति[२३] ।
उव्वरगसत्थरहिते, बाहि कुडंगे[२४] असुण्णं च[२५] ॥दारं॥

---

१. गणिणो (स), गुरुणा (बृभा ६२०५)।
२. अहवा (अ)।
३. कम्मिति (अ)।
४. परातियाए इमा जयणा (बृभा)।
५. धारिओ (बृभा ६२०६)।
६. खुड्डुलतरिया तुज्झं (बृभा)।
७. इह पदैकदेशे पदसमुदायोपचारात् पाला इत्युक्ते हस्तिपालाः (मवृ)।
८. ०ग्गी (ब, स)।
९. णासए (अ, स)।
१०. थेरीय चम्मकड्डण (अ, स)।
११. तु (बृभा ६२०७)।
१२. ०वितो य (ब)।
१३. पउणायइ (बृभा ६२०८)।
१४. सारक्खण अर० (ब)।
१५. विराहण इमेहिं ठाणेहि (बृभा ६२०९)।
१६. कामण तेणेति ०(ब), ०तेणे निवा० (बृभा)।
१७. अगड विसमे पडेज्ज व (बृभा ६२१०)।
१८. तेणेज्ज व (स, बृभा ६२११), तेणे अवसो (ब)।
१९. ०ताणं (अ, स)।
२०. बृभा ६२१२।
२१. पिसादी (बृभा ६२१३)।
२२. पिट्टति (स)।
२३. उट्ठाति (अ, स)।
२४. कुडंडे (अ), कुदंडे (स)।
२५. बृभा ६२१४।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०९७. उव्वरगस्स उ[1] असती, पुव्वखतऽसती[2] य खम्मते अगडो ।
तस्सोवरिं च[3] चक्कं, न छिवति जह[4] उप्फिडंतो[5] वि ॥

१०९८. निद्ध-महुरं च भत्तं, करीससेज्जा य नो जधा वातो[6] ।
दिव्विय धातुक्खोभे[7], 'नातुस्सग्गे ततो[8] किरिया ॥

१०९९. अगडे[9] पलाय मग्गण, अन्नगणा वा वि जे न सारक्खे ।
गुरुगा 'य जं च जत्तो, तेसिं च निवेयणाकरणं'[10] ॥

११००. छम्मासे पडियरिउं[11], अणिच्छमाणेसु भुज्जतरगो वा[12] ।
कुल-गण-संघसमाए, पुव्वगमेणं[13] निवेदेज्जा[14] ॥

११०१. रण्णो निवेदितम्मि, तेसिं वयणे गवेसणा होति ।
ओसधवेज्जासंबंधुवस्सए तीसु वी[15] जतणा[16] ॥नि.१९० ॥

११०२. पुत्तादीणं किरियं, सयमेव घरम्मि कोइ कारेज्जा[17] ।
अणुजाणंते य तहिं, इमे वि[18] गंतुं पडियरंति ॥

११०३. ओसध वेज्जे देमो[19], 'पडिजग्गह णं'[20] 'तहिं ठितं चेव'[21] ।
तेसिं च 'णाउ भावं'[22], न देंति मा णं गिही कुज्जा ॥

११०४. आहार-उवहि-सेज्जा, उग्गम-उप्पायणादिसु जतंता[23] ।
वातादी खोभम्मि वि[24], जयंति पत्तेगमिस्सा वा ॥

११०५. पुव्वुद्दिट्ठो[25] य विधी, इह वि करेंताण होति तह चेव ।
तेगिच्छम्मि 'कयम्मि य'[26], आदेसा तिन्नि सुद्धो वा[27] ॥

११०६. चउरो य होंति भंगा, तेसिं वयणम्मि[28] होति पण्णवणा ।
परिसाए मज्झम्मी, पट्ठवणा होति पच्छित्ते[29] ॥

---

१. य (ब) ।
२. पुव्विखया ० (ब), पुव्वकय (अ) ।
३. x (अ) ।
४. जं (अ) ।
५. उप्फिडंती (बृभा ६२१५), उप्फडंतो (स) ।
६. वाऊ (ब) ।
७. देविय० (बृभा ६२१६) ।
८. नाउ उस्सग्गतो (ब) ।
९. अगडे इति सप्तमी पंचम्यर्थे (मवृ) ।
१०. जं वा जत्तो, तेसिं च निवेयणं काउं (बृभा ६२१७)
अ प्रति में इस गाथा के स्थान पर निम्न गाथा मिलती है—
रक्खंताण य फिडिते, अगवेसणे गुरुगा जो वि अन्नगणे ।
न वि सारक्खति गुरुगा, जं च जो निवेयणं च करे ॥
ब प्रति में १०९९ से पूर्व निम्न गाथा अतिरिक्त मिलती है—
उच्चार-विगिंचणया, उट्ठनिवेसण तहा विउस्सग्गो ।
रक्खंताण य फिडिए, अगवेसणे होंति चउगुरुगा ॥
११. पडिसरिओ (ब) ।
१२. व्व (ब) ।
१३. पुव्वकमेणं (अ, स) ।
१४. ०एज्जं (ब), णिवेदेंति (बृभा ६२१८) ।
१५. वि (अ) ।
१६. बृभा ६२१९ ।
१७. कारेति (बृभा ६२२०) ।
१८. य (अ, स) ।
१९. देमि (ब), देंमि (स) ।
२०. पडिजग्ग पवयणं (ब) ।
२१. इहं ठिताऽऽसत्रं (बृभा ६२२१) ।
२२. विरूवभावं (मु) ।
२३. जयंति (बृभा ६२२२) ।
२४. य (अ) ।
२५. पुव्वद्दि० (ब) ।
२६. ०यम्मी (अ, स) ।
२७. बृभा ६२२३ ।
२८. गाथायां सप्तमी तृतीयार्थे (मवृ) ।
२९. बृभा ६२२४ ।

Jain Education International . For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११०७. वड्ढति हायति उभयं, अवट्ठियं च चरणं भवे चउधा ।
खइयं तहोवसमियं, मीसमहक्खाय[1] खित्तं च ॥

११०८. कामं आसवदारेसु, वट्टितो[2] पलवितं[3] बहुविधं च ।
लोगविरुद्धा य पदा, 'लोगुत्तरिया य'[4] आइण्णा[5] ॥

११०९. न य बंधहेतुविगलत्तणेण कम्मस्स उवचओ[6] होति ।
लोगो वि एत्थ सक्खी, जह एस परव्वसो[7] कासी[8] ॥

१११०. रागद्दोसाणुगता, जीवा कम्मस्स बंधगा होंति ।
रागादिविसेसेण य, बंधविसेसो 'वि अविगीतो'[9] ॥

११११. कुणमाणी[10] वि य चेट्ठा, परतंता नट्टिया बहुविहा उ ।
किरियाफलेण जुज्जति, न जधा एमेव एतं[11] पि ॥

१११२. जदि इच्छसि सासेरी[12], अचेतणा तेण से चओ नत्थि ।
जीवपरिग्गहिया पुण, बोंदी असमंजसं समता ॥

१११३. चेतणमचेतणं[13] वा, परतंतत्तेण 'दो वि'[14] तुल्लाइं ।
न तया विसेसितं[15] एत्थ, किंचि भणती सुण विसेसं ॥

१११४. णणु सो चेव विसेसो, जं एगमचेतणं सचित्तेगं ।
जध चेतणे विसेसो, तह भणसु इमं णिसामेह[16] ॥

१११५. जो पेल्लितो परेणं, हेऊ वसणस्स होति कायाणं ।
तत्थ न दोसं इच्छसि, लोगेण समं तहा तं च[17] ॥

१११६. पासंतो[18] वि य काये, अपच्चलो अप्पगं विधारेउं ।
जह पेल्लितो अदोसो, एमेव इमं[19] पि पासामो ॥

१११७. गुरुगो गुरुगतरागो, अधागुरूगो य होति ववहारो ।
लहुगो लहुयतरागो, अहालहूगो य ववहारो[20] ॥

---

१. मिस्स० (बृभा ६२२५)।
२. वट्टितो (स)।
३. ०विओ (ब)।
४. उत्तरिया चेव (अ, म)।
५. बृभा ६२२६।
६. उवचंतो (अ)।
७. परस्स सो (स)।
८. बृभा ६२२७।
९. य इति गीतो (अ, बृभा ६२२८)।
१०. कुणमाणा (बृभा ६२२९)।
११. एव (ब)।
१२. सासेरीति देशीवचनमेतद् यंत्रमयी नर्तकी (मवृ), सासेरा (स, बृभा ६२३०)।
१३. चेयणं अचे० (ब)।
१४. णणु हु (बृभा ६२३१)।
१५. विसेसयं (अ)।
१६. पि सामेहिं (अ), बृभा ६२३२।
१७. बृभा ६२३३।
१८. पस्संतो (बृभा ६२३४)।
१९. मिमं (ब)।
२०. बृभा ६२३५, व्यभा १०६५।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११९८. लहुसो लहुसतरागो, अधालहूसो य होति ववहारो ।
एतेसिं[1] पच्छित्तं, वोच्छामि अधाणुपुव्वीए[2] ॥

११९९. गुरुगो य होति मासो, गुरुगतरागो भवे[3] चउम्मासो ।
अहगुरुगो[4] छम्मासो, गुरुगे पक्खम्मि पडिवत्ती ॥

१२००. तीसा य पण्णवीसा[5], वीसा पण्णरसेव य ।
दस पंच य दिवसाइं, लहुसगपक्खम्मि[6] पडिवत्ती[7] ॥

१२०१. गुरुगं च अट्ठमं खलु, गुरुगतरागं च होति दसमं तु ।
अहगुरुगं बारसमं[8], गुरुगे पक्खम्मि पडिवत्ती[9] ॥

१२०२. छट्ठं च चउत्थं वा, आयंबिल-एगठाण-पुरिमड्ढं ।
निव्वितिगं दायव्वं, अधालहुसगम्मि सुद्धो वा[10] ॥

१२०३. एसेव गमो नियमा, दित्तादीणं पि होति नायव्वो ।
जो होइ दित्तचित्तो, सो पलवतिऽनिच्छियव्वाइं[11] ॥

१२०४. इति एस असम्माणो, खित्तोऽसम्माणतो भवे दित्तो ।
अग्गी व इंधणेहिं[12], दिप्पति चित्तं इमेहिं तु ॥

१२०५. लाभमदेण व मत्तो, अधवा जेऊण दुज्जए सत्तू ।
दित्तम्मि[13] सातवाहण, तमहं वोच्छं समासेणं[14] ॥नि. १९१॥

१२०६. 'मधुरा दंडाऽऽणत्ती, निग्गत सहसा'[15] अपुच्छिउं कतरं ।
तस्स व तिक्खा[16] आणा, दुधा गता दो वि पाडेउं ॥नि. १९२॥

१२०७. सुतजम्म महुरपाडण, निहिलंभनिवेयणा जुगव दित्तो ।
सयणिज्जखंभकुड्डे, कुट्टेइ[17] इमाइ पलवंतो[18] ॥

१२०८. सच्चं भण गोदावरि ![19], पुव्वसमुद्देण साधिता संती ।
सातहणकुलसरिसं[20], जदि ते कूले कुलं अत्थि[21] ॥

१२०९. उत्तरतो हिमवंतो, दाहिणतो सातवाहणो[22] राया ।
समभारभरक्कंता, तेण न पल्हत्थए पुढवी[23] ॥

---

१. एतेसं (ब)।
२. बृभा ६२३६, व्यभा १०६६।
३. य होइ (ब, बृभा ६२३७)।
४. अधागु० (स), व्यभा १०६७।
५. पणुवीसा (स)।
६. लहुयग० (अ)।
७. बृभा ६२३८, व्यभा १०६८, गाथा के द्वितीय चरण में अनुष्टुप् छंद का प्रयोग हुआ है।
८. दुवालसमं (ब)।
९. बृभा ६२३९, व्यभा १०६९।
१०. बृभा ६२४०, व्यभा १०७०।
११. बृभा ६२४१।
१२. इंधणेणं (बृभा ६२४२)।
१३. दिट्ठम्मि (अ)।
१४. बृभा ६२४३।
१५. महुराऽऽणत्ती दंडे सहसा निग्गम (बृभा ६२४४)।
१६. तिक्ख य (ब)।
१७. कोट्टेइ (अ)।
१८. बृभा ६२४५।
१९. गोता ० (ब, स)।
२०. साताहतण० (ब)।
२१. बृभा ६२४६।
२२. सालवा ० (ब), सालिवा० (बृभा ६२४७)।
२३. पुधवी (स), पुहवी (बृभा)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११३०. एताणि य अन्नाणि य, पलवियवं सो अभाणियव्वाइं[1] ।
कुसलेण अमच्चेणं, खरगेणं[2] सो उवाएणं ॥

११३१. विद्दवितं केणं ति य, तुब्भेहिं[3] पायतालणा खरए[4] ।
कत्थ त्ति मारितो सो, दुट्ठ[5] त्ति य दंसणे[6] भोगा ॥

११३२. महज्झयण भत्त खीरे, कंबलग-पडिग्गहे 'फलग सड्ढे'[7] ।
पासादे कप्पट्ठे, वादं काऊण वा दित्तो ॥नि. १९३॥

११३३. पुंडरियमादियं खलु, अज्झयणं कड्ढिऊण दिवसेणं ।
हरिसेण दित्तचित्तो, एवं होज्जाहि कोई[8] उ ॥

११३४. दुल्लभदव्वे देसे, पडिसेधितगं[9] अलद्धपुव्वं वा ।
आहारोवधिवसधी, 'अहुण विवाहो व कप्पट्ठो'[10] ॥

११३५. दिवसेण 'पोरिसीय व'[11], तुमए ठवियं[12] इमेण अद्धेण ।
एतस्स नत्थि गव्वो, दुम्मेधतरस्स को तुज्झं ॥

११३६. तद्दव्वस्स दुगुंछण, दिट्ठंतो भावणा असरिसेणं ।
पगयम्मि पण्णवेत्ता, विज्जादिविसोहि जा कम्मं[13] ॥नि. १९४॥

११३७. उक्कोस[14] बहुविधीयं, आहारोवगरणफलगमादीयं ।
खुड्डेणोमतरेणं, आणीतोभामितो पउणो[15] ॥

११३८. आदिट्ठ[16]सड्ढकहणं, आउट्टा अभिणवो य पासादो[17] ।
कतमेत्ते य विवाहे, सिद्धादिसुता • कइतवेणं ॥

११३९. चरगादि पण्णवेउं, पुव्वं तस्स पुरतो जिणावेंति ।
ओमतरागेण ततो, पगुणंति ओभामितो एवं[18] ॥

११४०. पोग्गलअसुभसमुदओ, एस अणागंतुको दुवेण्हं[19] पि ।
जक्खावेसेणं[20] पुण, नियमा आगंतुगो होति ॥

---

१. अभाणि सव्वाइं (स), अणिच्छियव्वाइं (बृभा ६२४८)।
२. x (अ)।
३. तुज्झेहिं (ब)।
४. खरिते (अ, स)।
५. दुट्ठि (ब)।
६. दरिसिते (बृभा ६२४९)।
७. य फलए य (बृभा ६२५०)।
८. कोइ (अ), कोइं (स)।
९. ० सेहिय तं (ब)।
१०. अक्खतजोणी व धूया वि (बृभा ६३५३), ११३४-३८ तक की गाथाओं में बृभा एवं व्यभा की गाथाओं में क्रमव्यत्यय है।
११. पोरुसीय य (स)।
१२. पढितं (बृभा ६२५१)।
१३. बृभा (६२५२) में इस गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
काऊण होति दित्ता, वादकरणे तत्थ जा ओमा।
१४. उक्कोसं (स)।
१५. पडुणो (ब), बृभा (६२५४) में इस गाथा के स्थान पर निम्न गाथा है—
पगयम्मि पण्णवेत्ता, विज्जातिविसोधिकम्ममादी वा ।
खुड्डीय बहुविहे आणियम्मि ओभावणा पउणा ॥
१६. अद्दिट्ठ (स, बृभा ६२५५)।
१७. पासादी (स)।
१८. यह गाथा बृभा में अनुपलब्ध है।
१९. व दोण्हं (बृभा ६२५६)
२०. जक्खादेसेणं (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११४१. अहवा भयसोगजुतो, चिंतद्दण्णो[१] व अतिहरिसितो[२] वा ।
आविस्सति जक्खेहिं, अयमन्नो होति संबंधो[३] ॥

११४२. पुव्वभवियवेरेणं, अहवा रागेण रंगितो संतो ।
एतेहि जक्खविट्ठो, 'सेट्ठी सज्झिलग वेसादी'[४] ॥नि. १९५ ॥

११४३. सेट्ठिस्स दोन्नि महिला, पिया य वेस्सा[५] य वंतरी जाता ।
सामन्नम्मि पमत्तं[६], छलेति तं पुव्ववेरेणं[७] ॥

११४४. जेट्ठगभाउगमहिला, अज्झोवण्णाउ होति खुड्डुलए ।
धरमाण मारितम्मी, पडिसेहे वंतरी जाया[८] ॥

११४५. भतिया कुडुंबिएणं, पडिसिद्धा वाणमंतरी जाया ।
सामन्नम्मि[९] 'पमत्तं, छलेति'[१०] तं पुव्ववेरेणं[११] ॥

११४६. तस्स य[१२] भूततिगिच्छा, भूतरवावेसणं सयं वावि ।
णीउत्तमं[१३] तु भावं, नाउं किरिया जधापुव्वं[१४] ॥

११४७. उम्माओ खलु दुविधो, जक्खावेसो[१५] य मोहणिज्जो य[१६] ।
जक्खावेसो वुत्तो, मोहेण इमं तु वोच्छामि ॥

११४८. रूवंगिं[१७] दट्ठूणं, उम्मादो अहव पित्तमुच्छाए ।
कह रूवं दट्ठूणं, हवेज्ज उम्मायपत्तो तु[१८] ॥

११४९. दट्ठूण नडिं कोई[१९], उत्तरवेउव्वियं मयणमत्तो[२०] ।
तेणेव 'य रूवेण'[२१] उ, 'उड्डम्मि कतम्मि[२२] निव्विण्णो ॥

११५०. पण्णविता य विरूवा[२३], उम्मंडिज्जंति तस्स पुरतो तु ।
'रूववतीय तु'[२४] भत्तं, तं दिज्जति जेण छड्डेति[२५] ॥

---

१. चितद्दितो (अ) ।
२. ० हरिसिउं (ब) ।
३. बृभा ६२५७ ।
४. सवत्ति भयए य सज्झिलगा (बृभा ६२५८) ।
५. पेस्सा (स) ।
६. पयत्तं (ब) ।
७. ११४३वीं गाथा के स्थान पर बृभा (६२५९) में निम्न गाथा मिलती है—
वेस्सा अकामओ निज्जराए मरिऊण वंतरी जाता ।
पुव्वसवत्तिं खेत्तं, करेति सामण्णभावम्मि ॥
८. गाथायामतीतकालेऽपि वर्तमानता प्राकृतत्वात् (मवृ), इस गाथा के स्थान पर बृभा (६२६१) में निम्न गाथा मिलती है—
जेट्ठो कणिट्ठभज्जाए, मुच्छिओ णिच्छितो य सो तीए ।
जीवंते य मयम्मी, सामण्णे वंतरो छलए ॥
९. ० त्रं पि (ब) ।
१०. ˚म्मत्ति छलेहिंति (स) ।
११. बृभा ६२६०
१२. उ (स) ।
१३. विणीउ० (ब), णीउत्तिमं (स) ।
१४. ० पुव्विं (स, बृभा ६२६२) ।
१५. ० एसो (ब, बृभा ६२६३) ।
१६. उ (अ) ।
१७. रूवंगं (स) ।
१८. बृभा (६२६४) में इस गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
तद्दायणा णिवाते, पित्तम्मि य सक्करादीणि ।
१९. केती (ब), कोयिं (स) ।
२०. मतणखेत्ता (बृभा ६२६५) ।
२१. परूवेणं (स) ।
२२. गाथायां पुंस्त्वं प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
२३. दुरूवो (बृभा ६२६६) ।
२४. ०वतो पुण (बृभा) ।
२५. छुड्डेति (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११५१. गुज्झंगम्मि उ[1] वियडं, पज्जावेऊण खडियमादीणं[2] ।
तद्दायणा विरागो[3], 'होज्ज जधासाढभूतिस्स'[4] ॥

११५२. वाते अब्भंगसिणेहपज्जणादी तहा निवाते य ।
सक्करखीरादीहि य, पित्ततिगिच्छा उ कातव्वा ॥

११५३. मोहेण पित्ततो वा, आयासंचेयओ[5] समक्खातो ।
एसो उ उवस्सग्गो, इमो तु अण्णो परसमुत्थो ॥

११५४. तिविहे य उवस्सग्गे, दिव्वे माणुस्सए तिरिक्खे य ।
दिव्वो उ पुव्वभणितो, 'माणुस-तिरिए अतो वोच्छं'[6] ॥

११५५. विज्जाए मंतेण व, 'चुण्णेण व'[7] जोइतो[8] अणप्पवसो ।
अणुसासणा लिहावण[9], खमगे महुरा तिरिक्खादी ॥नि. १९६ ॥

११५६. विज्जा मंते चुण्णे, अभिजोइय बोहिगादिगहिते वा ।
अणुसासणा लिहावण, महुरा खमगादि व बलेणं ॥

११५७. विज्जादऽभिजोगो पुण, दुविहो माणुस्सिओ य दिव्वो य ।
तं पुण जाणंति कधं[10], जदि नामं गिण्हते तेसिं[11] ॥

११५८. अणुसासितम्मि अठिते[12], विद्देसं देंति तह वि य अठंते[13] ।
जक्खीए कोवीणं, तस्स उ पुरतो[14] लिहावेंति[15] ॥

११५९. विसस्स विसमेवेह[16], ओसधं अग्गिमग्गिणो ।
मंतस्स पडिमंतो उ, दुज्जणस्स विवज्जणा[17] ॥

११६०. जदि पुण होज्ज गिलाणो, निरुज्झमाणो[18] ततो सि[19] तेगिच्छं ।
संवरितमसंवरिता, उवालभंते निसिं वसभा ॥दारं ॥

११६१. थूभमह सड्ढि समणी, बोधियहरणं य[20] निवसुताऽऽतावे[21] ।
मज्झेण य अक्कंदे, कतम्मि जुद्धेण मोएति[22] ॥दारं ॥

---

१. य (मु) ।
२. खदियमा ० (ब) ।
३. विरामो (स) ।
४. तीसे तु हवेज्ज दट्ठूणं (बृभा ६२६७) ।
५. ०संचेइतो (ब), आतासंवेतिओ (बृभा ६२६८) ।
६. माणुस्से आभिओग्गे य (बृभा ६२६९) ।
७. चुण्णेणं (अ, स) ।
८. जोतिया (बृभा ६२७०) ।
९. ०वणा (ब) ।
१०. कहिं (ब) ।
११. तस्स (बृभा ६२७१) ।
१२. अट्ठिए (ब) ।
१३. अट्ठते (ब, मु) ।
१४. पुरिओ (ब) ।
१५. बृभा ६२७२ ।
१६. ०वेहं (स) ।
१७. ०ज्जणं (बृभा ६२७३) ।
१८. निरुब्भमाणी (बृभा ६२७४) ।
१९. से (अ) ।
२०. तु (बृभा) ।
२१. निवस्स ता (अ) ।
२२. बृभा ६२७५ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११६२. गामेणारण्णेण[1] व, अभिभूतं संजतं तु तिरिएणं[2] ।
थद्धं[3] पकंपितं[4] वा, रक्खेज्ज अरक्खणे गुरुगा ॥

११६३. अभिभवमाणो समणं, परिग्गहो 'वा सि'[5] वारितो कलहो ।
उवसामेयव्व[6] ततो, अह कुज्जा दुविधभेदं तु[7] ॥

११६४. संजमजीवितभेदे, सारक्खण साधुणो य[8] कायव्वं ।
पडिवक्खनिराकरणं, तस्स ससत्तीय कायव्वं ॥

११६५. अणुसासण भेसणया, जा लद्धी जस्स तं न हावेज्जा ।
किं वा सति[9] सत्तीए, होति सपक्खे उवेक्खाए ॥

११६६. अधिकरणम्मि कतम्मि, खामित समुवट्ठितस्स पच्छित्तं ।
तप्पढमता भएण व, होज्ज किलंतो च वहमाणो[10] ॥

११६७. पायच्छित्ते दिन्ने, भीतस्स विसज्जणा[11] किलंतस्स ।
अणुसट्ठिवहंतस्स[12] उ, भयेण खित्तस्स[13] तेगिच्छं ॥

११६८. पच्छित्तं इत्तरिओ, होति तवो वण्णितो उ जो एस ।
आवकहिओ पुण तवो, होति परिण्णा[14] अणसणं तु[15] ॥

११६९. अट्ठं वा हेउं वा, समणस्स उ विरहिते कहेमाणो ।
मुच्छाय[16] विवडियस्स उ, कप्पति गहणं[17] परिण्णाए[18] ॥

११७०. गीतत्थाणं[19] असती, सव्वऽसतीए व कारणपरिण्णा ।
पाणग-भत्तसमाधी, कहणा आलोग[20] धीरवणा ॥

११७१. जदि वा न निव्वहेज्जा, असमाधी 'वा सें'[21] तम्मि गच्छम्मि ।
करणिज्जंऽणत्थगते[22], ववहारो पच्छ सुद्धो वा ॥

---

१. ० ण अर ० (ब) ।
२. तिरिगेणं (बृभा ६२७६) ।
३. बद्धं (ब) ।
४. ० पियाः (ब), पक्कपितं (स) ।
५. वावि (ब) ।
६. ०सामितो व्व (अ) ।
७. इस गाथा का भाव बृभा (६२७७, ६२७८) में प्राप्त है—
अभिभवमाणो समणिं, परिग्गहो वा सें वारिते कलहो ।
किं वा सति सत्तीए, होइ सपक्खे उविक्खाए ॥
कयाणे अहिगरणे ओममणं दुविहऽतिक्कमं दिस्स ।
अणुसासण भेस निरुंभणा य तो तीएं पडिवक्खो ॥
८. उ (स) ।
९. सती (स) ।
१०. बृभा ६२७९ ।
११. ०सज्जणं (बृभा ६२८०) ।
१२. अणुसट्ठितं व० (अ) ।
१३. खेत्त० (अ) ।
१४. पुरिण्णा (ब) ।
१५. बृभा ६२८१ ।
१६. मुच्छाणो (ब) ।
१७. महणं (ब) ।
१८. बृभा ६२८२ ।
१९. गीतज्जाणं (बृभा ६२८३) ।
२०. आलोकं आलोचनं (मवृ) ।
२१. व से (अ), वासं (ब), वावि (बृभा ६२८४) ।
२२. ०अण्णत्थ वि (बृभा) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११७२. वुत्तं हि उत्तमट्ठे, पडियरणट्ठा व दुक्खरे[1] दिक्खा ।
एत्तो[2] य[3] तस्समीवं[4], जदि हीरति[5] अट्ठजायमतो ॥

११७३. अत्थेण जस्स[6] कज्जं, संजातं एस अट्ठजातो तु ।
सो पुण संजमभावा, चालिज्जंतो[7] परिगिलाति[8] ॥

११७४. सेवगपुरिसे ओमे, आवन्न अणत्त[9] बोहिगे तेणे ।
एतेहिं अट्ठजातं, उप्पज्जति संजमठितस्स[10] ॥दारं ॥नि. १९७ ॥

११७५. अपरिग्गहगणियाए, सेवगपुरिसो उ कोइ आलत्तो[11] ।
सा तं अतिरागेणं, 'पणयइ तओ अट्ठजाता य'[12] ॥

११७६. सा रूविणि त्ति काउं, रण्णाऽऽणीता तु खंधवारेण ।
इतरो तीय विउत्तो, दुक्खत्तो 'सो उ'[13] निक्खंतो ॥

११७७. 'पच्चागता य'[14] सोउं, निक्खंतं बेति गंतु णं तहियं ।
बहुयं मे उवउत्तं[15], जदि दिज्जति तो विसज्जामि ॥

११७८. सरभेद वण्णभेदं, अंतद्धाणं विरेयणं वावि ।
वरधणुग-पुस्सभूती, कुसलो[16] सुहुमे य झाणम्मि[17] ॥

११७९. 'अणुसट्ठिं उच्चरती'[18], गमेंति णं मित्त-णायगादीहिं ।
एवं पि अठायंते[19], करेंति सुत्तम्मि जं वुत्तं[20] ॥दारं ॥

११८०. सकुडुंबो निक्खंतो, अव्वत्तं दारगं तु निक्खिविउं ।
मित्तस्स घरो सोच्चिय, कालगतो 'तोऽवमं जायं'[21] ॥दारं ॥

११८१. तत्थ अणाढिज्जंतो, तस्स य पुत्तेहि सो ततो चेडो ।
घोलंतो आवण्णो, दासत्तं तस्स आगमणं ॥

---

१. दुयक्खरं (ब) ।
२. इती (बृभा ६२८५) ।
३. व (अ, स) ।
४. गाथायां द्वितीया पंचम्यर्थे (मवृ) ।
५. धीरंति (स) ।
६. विवक्षायामत्र षष्ठी येनेत्यर्थः (मवृ) ।
७. चोलि० (स) ।
८. ० लादी (ब), समवलंत्रे (बृभा ६२८६) ।
९. अणते (ब) ।
१०. निर्युक्तिगाथासंक्षेपार्थः (मवृ, बृभा), बृभा ६२८७, इस गाथा के बाद बृभा (६२८८) में निम्न गाथा अतिरिक्त मिलती है—
पियविप्पयोगदुहिया, णिक्खंता सो य आगतो पच्छा ।
अगिलाणिं च गिलाणिं, जीवियकिच्छं विसज्जेति ॥
११. आलग्गो (अ) ।
१२. न पणयते अट्ठजाताती (स), ११७५-७७ तक की गाथाओं के स्थान पर बृभा (६२८९) में निम्न गाथा मिलती है—
अपरिग्गहियागणियाऽविसज्जिया सामिणा विणिक्खंता ।
बहुगं मे उवउत्तं, जति दिज्जति तो विसज्जेमि ॥
१३. तेय (अ) ।
१४. पच्चागयं तु (अ) ।
१५. उववत्तं (ब) ।
१६. गुलिया (अ, ब, बृभा ६२९०), गुलया (स) ।
१७. व्यभा १९४ ।
१८. ० सट्ठिमणुवरतं (बृभा ६२९१), ०सट्ठिमुच्च० (स) ।
१९. अट्ठाइयंते (ब) ।
२०. अ प्रति का एक पत्र प्राप्त न होने से ११७९ से १२०१ तक की गाथाओं के पाठभेद नहीं लिए हैं ।
२१. मंचओ जातो (अ, स) ११८०-८१ इन दोनों गाथाओं के स्थान पर बृभा (६२९२) में निम्न गाथा मिलती है—
सकुडुंबो मधुराए, निक्खिविऊणं गयम्मि कालगतो ।
ओमे फिडित परंपर, आवण्णा तस्स आगमणं ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११८२. 'अणुसासकहण ठवितं[1], भीसणववहार लिंग जं जत्थ[2] ।
दूराऽऽभोग-गवेसण[3], पंथे जतणा य जा जत्थ ॥नि. १९८ ॥

११८३. नित्थिण्णो तुज्झ घरे, रिसिपुत्तो[4] मुंच होहिती धम्मो ।
धम्मकहपसंगेणं, कधणं थावच्चपुत्तस्स[5] ॥

११८४. तह वि अठंते ठवितं, भीसणववहार निक्खमंतेणं[6] ।
तं घेत्तूणं दिज्जति, तस्सऽसतीए इमं कुज्जा[7] ॥

११८५. नीयल्लगाण तस्स व, भेसणं[8] ता[9] राउले सयं वावि ।
अविरिक्का मो अम्हे, कहं व[10] लज्जा ण तुज्झं ति[11] ॥

११८६. ववहारेण य[12] अहयं, भागं घेच्छामि 'बहुतरागं भे'[13] ।
अच्चियलिंगं व करे, पण्णवणा दावणट्ठाए[14] ॥

११८७. पुट्ठा व अपुट्ठा वा, चुतसामिनिधिं कधिंति ओहादी ।
घेत्तूण जावदट्ठो, पुणरवि सारक्खणा जतणा[15] ॥

११८८. सोऊण अट्ठजातं, अट्ठं पडिजग्गते[16] उ आयरिओ ।
संघाडगं च देती, पडिजग्गति[17] णं 'गिलाणं पि'[18] ॥

११८९. काउं निसीहियं अट्ठजातमावेदणं गुरूहत्थे ।
दाऊण पडिक्कमते, मा पेहंता मिगा पस्से[19] ॥

११९०. सण्णी व सावगो वा, 'केवतिओ[20] देज्ज अट्ठजातस्स ।
पच्चुप्पण्णनिहाणे[21], कारणजाते गहणसोधी ॥दारं ॥

११९१. थोवं पि धरेमाणो, कत्थति दासत्तमेति अदलंतो ।
परदेसम्मि वि[22] लब्भति, वाणियधम्मे 'ममेस त्ति[23] ॥

---

१. ०सासण कह ० (स), ०सासण कह ठवणं (बृभा ६२९३)।
२. सत्थ (ब)।
३. दूराभंग० (ब)।
४. इसिकण्णा (बृभा)।
५. बृभा (६२९४) में इस गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
सेहोवट्ठविचित्तं, तेण व अण्णेण वा णिहितं।
६. ०तेणा (ब)।
७. यह गाथा बृभा में नहीं है।
८. भीसणं (ब), भेसणं (स)।
९. X (स)।
१०. वि (ब)।
११. बृभा ६२९५।
१२. व (स)।
१३. ० तराभंगेते (ब), ०रागं ते (स)।
१४. बृभा (६२९६) में इस गाथा के स्थान पर निम्न गाथा मिलती है—
णीयल्लएहि तेण व, सद्धिं ववहार कातु मोदणता।
जं अंचितं व लिंगं, तेण गवेसित्तु मोदेइ॥
१५. बृभा ६२९७।
१६. ० जगारणं (ब), ०जग्गती (बृभा ६२९८)।
१७. पडिजत्तइ (स)।
१८. ० णम्मि (ब)।
१९. बृभा ६२९९।
२०. केवाडिए (ब), केवडिए (स)।
२१. पुव्वुप्पण्ण० (बृभा ६३००)।
२२. व (स)।
२३. मणेस त्ति (ब), बृभा ६३०१।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११९२. नाहं विदेस आहरणमादि विज्जा[1] य मंत-जोगा य ।
निमित्तें य रायधम्मे, पासंड गणे धणे[2] चेव[3] ॥दारं ॥नि. १९९ ॥

११९३. सारिक्खतेण[4] जंपसि, जातो अण्णत्थ ते वि आमं ति ।
'बहुजणविण्णायम्मि उ'[5], थावच्चसुतादिआहरणं ॥

११९४. 'विज्जादी सरभेदण'[6], अंतद्धाणं[7] विरेयणं वावि ।
वरधणुग-पुस्सभूती, गुलिया सुहुमे य झाणम्मि ॥

११९५. असतीए विण्णवेंति, रायाणं सो वि होज्ज अह भिन्नो ।
तो से कहेज्ज धम्मो[8], अणिच्छमाणे इमं कुज्जा ॥

११९६. पासंडे व सहाए, गेण्हति[9] तुज्झं पि एरिसं होज्जा[10] ।
होहामो य सहाया, तुब्भं[11] पि जो व गणो बलिओ ॥

११९७. एतेसिं असतीए, संता व जदा ण होंति उ सहाया ।
ठवणा दूराभोगण, लिंगेण व एसितुं देंति[12] ॥दारं ॥

११९८. एमेव अणत्तस्स[13] वि, तवतुलणा नवरि एत्थ[14] नाणत्तं ।
जं जस्स होति भंडं, सो 'देति ममंतिगो धम्मो'[15] ॥

११९९. जो णेण कतो धम्मो, तं देउ[16] ण एत्तियं समं तुलति ।
हाणी[17] जावेगाहिं[18], तावइयं विज्जथंभणता ॥

१२००. जदि पुण नेच्छेज्ज तवं, वाणियधम्मेण ताधि सुद्धो उ ।
को पुण वाणियधम्मो, सामुद्दे 'संभवे इणमो'[19] ॥

१२०१. वत्थाणाऽऽभरणाणि य, सव्वं छड्डित्तु एगविंदेणं[20] ।
पोतम्मि विवण्णम्मिं, वाणियधम्मे हवति सुद्धो ॥

१२०२. एवं इमो वि साधू, तुज्झं नियगं च सार मोत्तूणं ।
निक्खंतो तुज्झ घरे, करेउ[21] इण्हं[22] तु वाणिज्जं ॥दारं ॥

---

१. वेज्जा (ब) ।
२. x (ब) ।
३. बृभा ६३०२ ।
४. सारक्खएणं (स) ।
५. ०यम्मिं (बृभा ६३०३) ।
६. सरभेद वण्णभेदं (बृभा ६३०४) ।
७. अत्तद्धाणं (ब) ।
८. वि धम्मो (ब) ।
९. गेण्हम्मि (ब) ।
१०. अत्थि (बृभा ६३०५) ।
११. तुज्झं (ब) ।
१२. बृभा ६३०६ ।
१३. अणंतस्स (स) ।
१४. तत्थ (ब, स, बृभा) ।
१५. नोदति मं ति णो धम्मो (ब), बृभा (६३०७) में इस गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
बोहिय तेणेहि हिते, ठवणादि गवेसणे जाव ।
१६. देसु (स) ।
१७. हीणा (स) ।
१८. ०गाहं (बृभा ६३०८) ।
१९. संभमे इमो तु (स), यह गाथा बृभा में नहीं है ।
२०. ०वंदेणं (स), ० वत्थेणं (बृभा ६३०९) ।
२१. करेऊ (ब) ।
२२. ईण्हं (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२०३. बोधियतेणेहि[1] हिते, विमग्गणा साधुणो नियमसा उ ।
अणुसासणमादीओ[2] एसेव कमो निरवसेसो ॥

१२०४. तम्हा अपरायत्ते[3], 'दिक्खेज्ज अणारिए'[4] य वज्जेज्जा ।
अद्धाणअणाभोगा, विदेस[5] असिवादिसुं[6] दो वि ॥

१२०५. अट्ठस्स कारणेणं, साधम्मियतेणमादि जदि कुज्जा ।
इति अणवट्ठे जोगो, नवमातो यावि दसमस्सा ॥

१२०६. अणवट्ठो पारंचिय[7], पुव्वं भणिया इमं तु नाणत्तं ।
गिहिभूतस्स य करणं, अकरण गुरुगा य आणादी ॥

१२०७. वरनेवत्थं एगे, ण्हाणविवज्जमवरे[8] जुगलमेत्तं ।
परिसामज्झे धम्मं, सुणेज्ज कधणा पुणो दिक्खा ॥

१२०८. ओभामितो न कुव्वति, पुणो वि सो तारिसं अतीचारं ।
होति भयं सेसाणं, गिहिरूवे[9] धम्मता चेव ॥

१२०९. किं वा तस्स न दिज्जति, गिहिलिंगं जेण भावतो लिंगं ।
अजढे वि दव्वलिंगे, सलिंग[10] पडिसेवणा विजढं ॥

१२१०. अग्गिहिभूतो कीरति, रायणुवत्तिय[11] पदुट्ठ सगणो वा ।
परमोयावणइच्छा, दोण्ह गणाणं विवादो वा ॥नि. २०० ॥

१२११. ओलोयणं गवेसण, आयरिओ कुणति सव्वकालं पि ।
उप्पण्णे कारणम्मि[12], सव्वपयत्तेण कायव्वं[13] ॥नि. २०१ ॥

१२१२. जो 'उ उवेहं कुज्जा'[14], आयरिओ[15] केणई पमादेणं ।
आरोवणा उ तस्सा, कायव्वा पुव्वनिद्दिट्ठा[16] ॥

१२१३. आहरति भत्तपाणं, उव्वत्तणमादियं[17] पि से कुणति ।
सयमेव गणाधिवती, अध अगिलाणो सयं कुणति[18] ॥

१२१४. उभयं पि दाऊण सपाडिपुच्छं, वोढुं[19] सरीरस्स य वट्टमाणिं ।
आसासइत्ताण तवो किलंतं, तमेव खेत्तं समुवेंति थेरा[20] ॥

---

१. ०तेणाति (स)।
२. ० मादीसु (ब)।
३. ० रायत्ते (ब)।
४. ०ज्जाणारिए (स)।
५. विसए (अ)।
६. ० वादि तु (अ), ० वादिसू (बृभा ६३१०)।
७. ० चितो य (अ, ब)।
८. ० मधरे (स)।
९. गिण्ह रूवे (ब)।
१०. सलिंगे (अ, स)।
११. ० णुवित्तिए (अ), ०वत्ती य (स)।
१२. ० णम्मि य (अ)।
१३. यह गाथा ब प्रति में नहीं है। बृभा ५०३६।
१४. कुज्जाहि उवेहं (अ, स)।
१५. ०रिया (ब)।
१६. बृभा ११८३, ५०३७, निभा ३०८४।
१७. ०दयं (ब)।
१८. बृभा ५०३८।
१९. X (ब)।
२०. बृभा ५०३९, इस गाथा के बाद बृभा (५०४०) में निम्न गाथा अतिरिक्त मिलती है—
असहू सुत्तं दातुं, दो वि अदाउं व गच्छति पए वि।
संघाडओ से भत्तं, पाणं चाऽऽणेति मग्गेणं॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२१५. गेलण्णेण व पुट्ठो, अभिणवमुक्को ततो व रोगातो[1] ।
कालम्मि दुब्बले वा, 'कज्जे अण्णे'[2] व वाघातो[3] ॥

१२१६. पेसेति उवज्झायं, अन्नं गीतं व जो तहिं जोग्गो ।
पुट्ठो व अपुट्ठो वा, स वावि[4] दीवेति तं कज्जं[5] ॥

१२१७. जाणंता माहप्पं, सयमेव भणंति एत्थ तं जोग्गो ।
अत्थि मम एत्थ[6] विसओ, अजाणते 'सो व ते बेंति'[7] ॥

१२१८. अच्छउ महाणुभागो, जधासुहं गुणसयागरो संघो ।
गुरुगं पि इमं कज्जं, मं[8] पप्प भविस्सते लहुगं[9] ॥

१२१९. अभिधाणहेतुकुसलो, बहूसु नीराजितो विदुसभासु ।
गंतूण[10] रायभवणे, भणाति तं रायदारिट्ठं[11] ॥

१२२०. पडिहाररूवी भण रायरूविं, 'तं इच्छते'[12] संजतरूवि[13] दट्ठुं ।
निवेदयित्ता य स पत्थिवस्स, जहिं निवो तत्थ तयं[14] पवेसे ॥

१२२१. तं पूयइत्ताण[15] सुहासणत्थं, पुच्छिसु रायाऽऽगतकोउहल्ले ।
पण्हे उराले असुते कदाई[16], स यावि आइक्खति पत्थिवस्स[17] ॥

१२२२. जारिसग आयरक्खा[18], सक्कादीणं न तारिसो एसो ।
तुह 'राय ! दारपालो[19], तं पि य चक्कीण[20] पडिरूवी[21] ॥

१२२३. समणाणं पडिरूवी[22], जं पुच्छसि राय तं कधमहं ति ।
निरतीयारा समणा, न तहाहं[23] तेण पडिरूवी[24] ॥

१२२४. निज्जूढो[25] मि नरीसर !, खेत्ते वि जतीण अच्छिउं[26] न लभे ।
अतियारस्स विसोधिं[27], पकरेमि पमायमूलस्स[28] ॥

---

१. रोतातो (स), रोगावो (ब) ।
२. अत्र सप्तमी तृतीयार्थे प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
३. बृभा ५०४१ ।
४. यावि (स) ।
५. बृभा ५०४३ ।
६. एओ (ब) ।
७. ते वि सो बेति (अ, स), सो पवन्नएति (ब), बृभा ५०४४ ।
८. ममं (ब) ।
९. बृभा ५०४५ ।
१०. गव्वण (ब) ।
११. ० दारट्ठं (बृभा ५०४६) ।
१२. तमिच्छए (बृभा ५०४७) ।
१३. संजइरूवि (ब) ।
१४. तहिं (अ), तय (ब) ।
१५. पूययत्ताण (अ) ।
१६. कयाती (ब), कदायि (स)
१७. पत्थितस्स (स), बृभा ५०४८ ।
१८. आतरिक्खा (स) ।
१९. राया दाणपालो (ब) ।
२०. चक्काण (स) ।
२१. बृभा ५०४९ ।
२२. स पडि ० (ब) ।
२३. तवाहं (अ), तहं (ब) ।
२४. बृभा ५०५० ।
२५. निज्जूहो (स) ।
२६. अत्थिउं (ब) ।
२७. विसोधी (स) ।
२८. बृभा ५०५१ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२२५. कधणाऽऽउट्टण[1] आगमणपुच्छणं दीवणा य कज्जस्स ।
वीसज्जियं ति य मया[2], हासुस्सलितो[3] भणति राया ॥

१२२६. वादपरायणकुवितो, चेइयतद्दव्वसंजतीगहणे[4] ।
पुव्वुत्ताण[5] चउण्ह वि, कज्जाण हवेज्ज अण्णतरं[6] ॥

१२२७. संघो न लभति कज्जं, लद्धं कज्जं महाणुभागेणं ।
तुज्झं 'तु विसज्जेमी'[7], सो वि य[8] संघो त्ति पूएति[9] ॥

१२२८. अब्भत्थितो व[10] रण्णा, सयं वि[11] संघो विसज्जयति तुट्ठो ।
आदी[12] मज्झऽवसाणे, स यावि दोसो धुतो होति[13] ॥दारं ॥

१२२९. सगणो य पदुट्ठो सो, आवण्णो तं च कारणं नत्थि ।
एतेहि कारणेहिं, अगिहिब्भूते उवट्ठवणा ॥

१२३०. ओहासणपडिसिद्धा, बहुसयणा देज्ज छोभगं वतिणी ।
तं चावण्ण अन्नत्थ, कुणह 'गिहीयं ति ते'[14] बेंति[15] ॥

१२३१. ते नाऊण पदुट्ठे, मा होहिति[16] तेसि गम्मतरओ त्ति ।
मिच्छिच्छा[17] मा सफला, होहिति तो सो अगिहिभूतो ॥दारं ॥

१२३२. सोउ गिहिलिंगकरणं, अणुरागेणं भणंतऽगीतत्था ।
मा गिहियं कुणह गुरुं, अध कुणह इमं निसामेह ॥

१२३३. विद्धंसामो अम्हे, एवं ओभावणा जइ गुरुणं ।
एतेहिं[18] कारणेहिं, अगिहिब्भूते[19] उवट्ठवणा ॥दारं ॥

१२३४. अण्णोण्णेसु गणेसुं, वहंति तेसिं गुरवो अगीताणं ।
ते बेंति अण्णमण्णं, किह काहिह[20] अम्ह थेर त्ति ॥

१२३५. गिहिभूते त्ति य वुत्ते, अम्हे वि करेमु[21] तुज्झ गिहिभूतं ।
अगिहि त्ति दोन्नि वि मए, भणंति थेरा इमं दो वी ॥

---

१. कहण उट्टण (ब)।
२. मए (बृभा ५०५२)।
३. ० स्सधितो (ब), ० स्सलितो (अ)।
४. ० संजतिग्ग ० (ब), संजति तग्गहणे (स)।
५. ०त्तणि (अ)।
६. बृभा ५०४२, यह गाथा बृभा व्यभा (१२१५) के बाद है।
७. ति विसज्जेमि (बृभा)।
८. यं (ब)।
९. पुज्जो त्ति (अ), पुज्जेति (स), बृभा ५०५३।
१०. वि (ब)।
११. व (ब, बृभा)।
१२. आदं (ब)।
१३. बृभा ५०५४।
१४. गिहियं ति तो (स)।
१५. देंति (अ), बंति (ब)।
१६. होही (ब)।
१७. मिच्छत्ता (ब)।
१८. एतेसिं (बपा)।
१९. अगिहे भूते (ब)।
२०. कहिह (ब)।
२१. करणेमो (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२३६. न विसुज्झामो[१] अम्हे, अगिहिभूतो य तधावऽणिच्छेसु ।
इच्छा सिं[२] पूरिज्जति, गणपत्तियकारगेहिं तु ॥

१२३७. पुव्वं वतेसु ठविते, रायणियत्तं[३] अविसहंत कोई[४] ।
ओमो भविस्सति इमो, इति छोभगसुत्तसंबंधो ॥

१२३८. पत्तियपडिवक्खो[५] वा, अचियत्तं तेण छोभगं देज्जा ।
पच्चयहेतुं च परे, सयं च पडिसेवितं भणति[६] ॥

१२३९. रायणियवायएणं, खलियमिलिय[७] पेल्लणाय उदएणं ।
देउलमेधुणम्मि य, अब्भक्खाणं कुडंगम्मि[८] ॥नि. २०२॥

१२४०. जेट्ठज्जेण अकज्जं, सज्जं अज्जाघरे कतं अज्ज ।
उवजीवितोऽत्थ[९] भंते!, मए वि संसट्ठकप्पो त्थ[१०] ॥

१२४१. अधवा उच्चारगतो, कुडंगमादी[११] कडिल्लदेसम्मि[१२] ।
तत्थ य कतं अकज्जं, जेट्ठज्जेणं सह 'मए वि'[१३] ॥

१२४२. तम्मागते[१४] वताइं[१५], दाहामो[१६] देंति 'वा तुरंतस्स'[१७] ॥
भूतत्थे पुण णाते, अलियनिमित्तं न मूलं तु[१८] ॥

१२४३. चरिया[१९]-पुच्छण-पेसण, कावालि[२०] तवो य संघो जं भणति ।
चउभंगो[२१] हि निरिक्खी, देवय तहियं विही एसो ॥नि.२०३॥

१२४४. आलोइयम्मि निउणे, कज्जं से सीसते तयं सव्वं ।
पडिसिद्धम्मि य इतरो, भणाति 'बितियं पि'[२२] ते नत्थि ॥दारं॥

१२४५. दोण्हं पि अणुमतेणं, चरिया[२३] वसभेहि पुच्छिय[२४] पमाणं ।
अन्नत्थ वसभ तुब्भे[२५], जा कुणिमो देवउस्सग्गं ॥

१२४६. अट्ठिगमादी वसभा, पुव्विं पच्छा व गंतु निसिसुणणा ।
आवस्सग आउट्टण, सब्भावे वा[२६] असब्भावे ॥

---

१. विसुज्झेमो (स)।
२. सं इति तेषां (मवृ)।
३. राइणि० (स)।
४. होइ (ब)
५. ०पडिबंधो (स)।
६. सणति (अ)।
७. ०मितिय (स)।
८. अधुना निर्युक्तिभाष्यविस्तरः (मवृ)।
९. उवजीविए त्थ (स)।
१०. त्था (अ, स)।
११. कडंग० (स)।
१२. ०देसं (ब)।
१३. मेती (ब)।
१४. ० गमे (अ, ब), तम्हा गते (स), तस्मिन् आगते (मवृ)।
१५. विवाइं (अ)।
१६. दाहीमो (ब), दाहेमो (अ)।
१७. चाउरंत० (अ)।
१८. व (ब)।
१९. तस्स पडिच्छण (अ, स)।
२०. x (ब)।
२१. गाथायां पुंस्त्वं प्राकृतत्वात् (मवृ)।
२२. बितियत्थि (ब)।
२३. चरियया (ब)।
२४. पुच्छइ (ब), पुच्छते (अ)।
२५. तुल्लो (स)।
२६. व (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२४७. सेहो त्ति मं[1] भाससि[2] निच्चमेव, बहूण[3] मज्झम्मि व[4] किं कधेसि ।
अभासमाणाण[5] परोप्परं वा, दिव्वाणमुस्सग्ग[6] तवस्सि कुज्जा ॥

१२४८. किंचि तधा तह दिस्सति[7], चउभंगे पंतदेवता[8] भद्दा ।
अन्नीकरेति[9] मूलं, इतरे सच्चप्पतिण्णा तु ॥

१२४९. छोभगदिण्णो दाउं, व छोभगं सेविउं[10] व तदकिच्चं ।
सच्चाओ व[11] असच्चं, ओहावणसुत्तसंबंधो[12] ॥

१२५०. सो पुण लिंगेण समं, ओहावेमो तु लिंगमधवा वि ।
किं पुण लिंगेण समं, ओधावि[13] इमेहि कज्जेहिं[14] ॥नि. २०४॥

१२५१. जदि जीविहिति[15] भज्जाइ, जइ वा वि 'धणं धरति जति व वोच्छंति[16] ।
लिंगं मोच्छं संका, पविट्ठ तत्थेव[17] उवहम्मे ॥नि. २०५॥

१२५२. गच्छम्मि केइ पुरिसा, सीदंते विसयमोहियमतीया ।
ओधावंताण गणा[18], चउव्विहा तेसिमा सोही ॥नि. २०६॥

१२५३. दव्वे खेत्ते काले, भावे सोही उ तत्थिमा दव्वे ।
राया जुवे[19] अमच्चे, पुरोहित-कुमार-कुलपुत्ते ॥

१२५४. एतेसिं रिद्धीओ, दट्ठुं लोभाउ सन्नियत्तंते[20] ।
पणगादीया सोधी, बोधव्वा मासलहुगं ता ॥

१२५५. चोदेती कुलपुत्ते, गुरुगतरं राइणो उ लहुगतरं[21] ।
पच्छित्तं किं कारण, भणंति[22] सुण चोदग ! इमं तु ॥

१२५६. दीसति धम्मस्स फलं, पच्चक्खं तत्थ[23] उज्जमं कुणिमो[24] ।
इड्ढीसु पतणुवीसुं[25], व[26] सज्जते[27] होति णाणत्तं ॥

---

१. मम (ब) ।
२. भावति (बपा) ।
३. पभूण (स) ।
४. वि (ब) ।
५. ० माणे (अ, ब, स) ।
६. ० स्सग्गिं (अ) ।
७. दीसति (स) ।
८. पंचदे० (अ) ।
९. अत्तीकरेंति (स) ।
१०. सेवियं (स) ।
११. x (ब), वा (अ) ।
१२. ० सच्चसं० (स) ।
१३. ओधावइ (ब) ।
१४. अधुना निर्युक्तिभाष्यविस्तरः (मवृ) ।
१५. जीवेहिति (अ, ब) ।
१६. बंधणं धरइ जं वोच्छत्ति (ब) ।
१७. वुत्थेव (स) ।
१८. गणो (ब) ।
१९. जुते (ब) ।
२०. सन्नियत्तुतो (ब), षष्ठीसप्तम्योरर्थं प्रत्यभेदात् सम्यग् निवर्तमानस्य (मवृ) ।
२१. ० गतरग (अ) ।
२२. भणति (स) ।
२३. तस्स (ब) ।
२४. कुणिइमो (ब) ।
२५. पणुईसु (अ), पतणुईसु (स) ।
२६. वि (अ) ।
२७. सज्जंतो (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२५७. खेत्ते 'निवपधनगरद्दारे उज्जाणं परेण'[१] सीमतिक्कंते ।
पणगादी जा लहुगो, एतेसु[२] उ[३] सन्नियत्तंते ॥

१२५८. पढमदिणनियत्तंते, लहुओ दसहि सपदं भवे काले[४] ।
संजोगो पुण एत्तो, 'दव्वे खेत्ते य'[५] काले य ॥

१२५९. दव्वस्स य खेत्तस्स य, संजोगे[६] 'होति सा इमा सोधी'[७] ।
रायाणं रायपधे, दट्ठुं जा सीमतिक्कंते ॥

१२६०. पणगादी जा मासो, जुवरायं निवपधादि दट्ठूणं ।
दसराइंदिवमादी[८], मासगुरू होंति[९] अंतम्मि ॥

१२६१. सचिवे पण्णरसादी, लहुगं तं वीसमादि उ पुरोधे ।
अंतम्मि उ चउगुरुगं, कुमार भिन्नादि जा छ तू ॥

१२६२. कुलपुत्ते मासादी, छग्गुरुगं होति 'अंतिमं ठाणं'[१०] ।
एत्तो उ[११] दव्वकाले, संजोगमिमं तु वोच्छामि ॥

१२६३. रायाणं तद्दिवसं, दट्ठूण नियत्ति[१२] होति मासलहुं ।
दसदिवसेहिं सपदं, जुवरण्णादी[१३] अतो[१४] वोच्छं ॥

१२६४. मासगुरू चउलहुया, चउगुरु-छल्लहू छग्गुरुगमादी ।
नवहिं अट्ठहि सत्तहि, छहि पंचहि चेव चरमपदं[१५] ॥

१२६५. इति दव्व खेत्त काले, भणिता सोधी उ 'भाव इणमण्णा'[१६] ।
दंडिग[१७] भूणग[१८] संकंत, 'विवण्णे भुंजणे'[१९] दोसु ॥नि. २०७॥

१२६६. दंडित सो उ नियत्ते, पुत्तादि[२०] मते व चउलह होंति[२१] ।
संकंत मताए वा, भोईए[२२] 'चउगुरू होंति'[२३] ॥

१२६७. अह पुण भुंजेज्जाही, दोहिं तु वग्गेहि तत्थ समगं तु ।
इत्थीहिं पुरिसेहिं व[२४], तहिं य आरोवणा इणमा ॥

---

१. ० जाणे परेण (ब, अ), छंद की दृष्टि से 'निवपधनगरे उज्जाण परेण' पाठ होना चाहिये ।
२. गाथायां सप्तमी पंचम्यर्थे (मवृ) ।
३. य (मु) ।
४. कालं (अ) ।
५. X (ब) ।
६. जोगो (अ) ।
७. होति सा भवे सोधी (अ), होतिमा भवे सोधी (स) ।
८. ० माइ (ब) ।
९. होंति (अ) ।
१०. अंतिमट्ठाणं (अ, स) ।
११. य (स) ।
१२. नियत्ते (अ, स) ।
१३. जुय ० (ब) ।
१४. ततो (मु) ।
१५. चरिम० (अ) ।
१६. भावतो इणमण्णाइं (अ, ब) ।
१७. डंडित (स) ।
१८. भूणके देशीपदमेतत् बालके (मवृ) ।
१९. विसण्णे भंजणा० (स), दोसु त्ति तृतीयार्थे सप्तमी (मवृ) ।
२०. पुत्ता य (ब) ।
२१. होइ (अ) ।
२२. भोतीते (अ, स), भोइए (ब) ।
२३. हुंति चउगुरुगा (अ, स) ।
२४. य (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२६८. लहुगा य दोसु दोसु य, गुरुगा[1] छम्मास लहु-गुरुच्छेदो ।
निक्खिवणम्मि य मूलं, जं चऽन्नं सेवते[2] दुविधं ॥नि. २०८॥

१२६९. 'पुरिसे उ नालबद्धे'[3], अणुव्वतोवासए[4] य चउलहुगा ।
एयासुं चिय थीसुं, अनालसम्मे य चउगुरुगा ॥

१२७०. अणालदंसणित्थीसु[5], दिट्ठाभट्ठपुरिसे[6] य छल्लहुगा ।
'दिट्ठ त्ति'[7] पुम अदिट्ठो, मेहुणभोईय छग्गुरुगा ॥

१२७१. अदिट्ठआभट्ठासुं[8] थीसुं[9] संभोइ संजती छेदो ।
अमणुण्णसंजतीए, मूलं थीफाससंबंधो ॥

१२७२. अधवा वि पुव्वसंथुत, पुरिसेहिं सद्धि चउलहू होंति ।
पुरसंथुतइत्थीए[10], पुरिसेतर[11] दोसु वी गुरुगा ॥

१२७३. पच्छासंथुतइत्थीए, छल्लहु मेहुणिया[12] छग्गुरुगा ।
समणुण्णेतर संजति, छेदो मूलं जधाकमसो ॥

१२७४. अहव पुरसंथुतेतर, पुरिसित्थीओ य सोयवादीसु[13] ।
समणुण्णेतरसंजति, अड्डोकंतीय[14] मूलं तु ॥

१२७५. थीविग्गह-किलिबं वा, मेधुणकम्मं च चेतणमचेतं[15] ।
मूलोत्तरकोडिदुगं[16], परित्तऽणंतं च एमादी[17] ॥

१२७६. एतेसिं तु पदाणं, जं सेवति पावती तमारुवणं ।
अन्नं च जमावज्जे, पावति तं तत्थ तहियं[18] तु ॥

१२७७. तत्तो य पडिनियत्ते, सुहुमं परिनिव्ववेंति[19] आयरिया ।
भरितं[20] महातलागं, तलफलदिट्ठंतचरणम्मि[21] ॥

१२७८. अमिलायमल्लदामा, अणिमिसनयणा य नीरजसरीरा ।
चउरंगुलेण भूमिं, न छिवंति सुरा जिणो कहति[22] ॥

---

१. लहुगा (स)।
२. सेविए (स)।
३. सर्वत्र सप्तमी तृतीयार्थेषु पुरुषेण (मवृ)।
४. ० तोसावए (ब)।
५. ० णत्थिसु (ब)।
६. दिट्ठासेट्ठपु० (ब)।
७. दिट्ठित्थि (स)।
८. अदिट्ठा सट्ठासु (ब), अदिट्ठाभट्ठासु (स)।
९. X (स)।
१०. पुरि० (ब)।
११. पुरिसंतर (ब)।
१२. ० णीया (ब), मेहुणीए (मु)।
१३. सोयमादीसु (अ, स)।
१४. अज्जोकं ० (अ)।
१५. ० मचेईया (ब)।
१६. ० दुविहं (अ)।
१७. दुविधाए (सपा)।
१८. तहिं (ब)।
१९. ० निव्वेवेंति (अ)।
२०. वरितं (अ)।
२१. उ वणम्मि (ब), उवधिम्मि (स)।
२२. कधए (अ, स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२७९. 'सुहुमा य कारणा'[1] खलु, लोए एमादि उत्तरे इणमो ।
मिच्छद्दिट्ठीहि कता, किण्णु हु भे[2] 'तत्थ उवसग्गा'[3] ॥

१२८०. अवि सिं[4] धरति[5] सिणेहो, पोराणो आओ[6] णिप्पिवासाए[7] ।
इति गारवमारुहितो[8], कधेति[9] सव्वं जहावत्तं[10] ॥

१२८१. एवं भणितो संतो, उत्तुइओ[11] सो कधेति[12] सव्वं तु ।
जं णेण समणुभूतं, जं वा से तं कयं तेहिं ॥

१२८२. ण्हाणादीणि कताइं, देह वते मज्झ बेंति[13] तु अगीतो[14] ।
पुव्वं च उवस्सग्गा, किलिट्ठभावो[15] अहं आसी ॥

१२८३. वेसकरणं पमाणं, न होति न य मज्जणं णऽलंकारो ।
सातिज्जितेण सेवी, अणणुमतेणं असेवी तु ॥

१२८४. जो सो विसुद्धभावो, उप्पण्णो तेण ते चरित्तप्पा[16] ।
धरितो निमज्जमाणी, 'जले व[17] नावा कुविंदेण[18] ॥

१२८५. जध वा महातलागं, भरितं भिज्जंतमुवरि पालीयं ।
तज्जातेण[19] निरुद्धं, तक्खणपडितेण[20] तालेण ॥

१२८६. एवं चरणतलागं[21], णातय उवसग्गवीचिवेगेहिं[22] ।
भिज्जंतु[23] तुमे धरियं, धिति-बलवेरग्गतालेणं[24] ॥

१२८७. पडिसेहियगमणम्मी, आवण्णो जेण तेण सो पुट्ठो ।
संघाडतिहे वोच्छो, उवधिग्गहणे ततो विवदो[25] ॥नि. २०९ ॥

१२८८. एगाह तिहे पंचाहए य ते बेंति णं सहायाणं ।
वच्चामोऽणिच्छंते, भणंति[26] उवहिं पि[27] ता[28] देहि ॥

---

१. सुकुमालका ० (अ, स), सुहुम कारणा य (ब)।
२. ते (ब)।
३. तत्थुवस्स ० (अ, स)।
४. सिं ति एतेषां (मवृ)।
५. धिरइ (अ)।
६. अतो (ब)।
७. ०वासाइं (स)।
८. रारवमा ० (बपा)।
९. कहिति (ब), करेति (अ)।
१०. जहावित्तं (मु)।
११. उत्तुइओ त्ति देशीपदमेतत् गर्वे वर्तते (मवृ)।
१२. कधिति (अ)।
१३. एति (अ)।
१४. गीतो (अ)।
१५. किलट्ठ ० (ब)।
१६. ० त्तातो (अ, स)।
१७. जलेण (ब)।
१८. कुविंडेण (ब)।
१९. तज्जामेण (स), तज्जातेनेति प्राकृतत्वात् तृतीया पंचम्यर्थे (मवृ)।
२०. पडिगेण (अ)।
२१. चरित ० (अ, ब, स)।
२२. ० वीति० (अ)।
२३. भिज्जंतं (स)।
२४. धीबल० (अ)।
२५. वितातो (ब), १२८७ से १२९१ तक की पांच गाथाएं स प्रति में नहीं हैं।
२६. गणंति (अ)।
२७. ति (अ)।
२८. तो (ब)।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

१२८९. 'न वि देमि त्ति य भणिते'[१], गएसु जदि सो ससंकितो सुवति[२] ।
उवहम्मति निस्संके, न हम्मए अपडिबज्झंते[३] ॥

१२९०. संवेगसमावन्नो, अणुवहतं घेत्तु एति तं चेव ।
अध होज्जाहि उवहतो, सो वि य जदि होज्ज गीतत्थो[४] ॥

१२९१. तो अन्नं उप्पायंते[५], चोवहयं विगिंचिउं[६] एति[७] ।
अप्पडिबज्झंते तू, सुचिरेण वि[८] हू[९] न उवहम्मे ॥

१२९२. गंतूण तेहि कधितं, स यावि आगंतु तारिसं कहए ।
तो तं होति पमाणं, विसरिसकधणे[१०] विवादो उ ॥

१२९३. अधवा बेंति अगीता, मज्जणमादीहि एस गिहिभूतो ।
तं 'तु न'[११] होति पमाणं, सो चेव तहिं पमाणं तु[१२] ॥

१२९४. पडिसेवि[१३] 'अपडिसेवी, एवं'[१४] थेराण[१५] होति उ विवादो[१६] ।
तत्थ वि होति पमाणं, स एव पडिसेवणा न खलु ॥

१२९५. मज्जण-गंधपरियारणादी[१७] जह नेच्छतो अदोसा य[१८] ।
'अणुलोमा उवसग्गा'[१९] एमेव इमं पि पासामो ॥

१२९६. जध चेव य पडिलोमा, अपदुस्संतस्स होंतऽदोसा य[२०] ।
एमेव य अणुलोमा, होंति[२१] असातिज्जणे अफला ॥

१२९७. साहीणभोगचाई[२२], अवि महती[२३] निज्जरा उ एयस्स ।
सुहुमो वि[२४] कम्मबंधो, न होति तु नियत्तभावस्स ॥

१२९८. निक्खित्तम्मि उ लिंगे, मूलं सातिज्जणे य ण्हाणादी ।
दिण्णेसु य[२५] होति दिसा[२६]. दुविधा वि वतेसु संबंधो ॥

---

१. जं वि देमि य भणिए (अ) ।
२. x (अ) ।
३. अ प्रति में इस गाथा का उत्तरार्ध नहीं है ।
४. १२९०, ९१ ये दोनों गाथाएं अ प्रति में नहीं है ।
५. उप्पाएंतं (ब) ।
६. ० चिओ (ब) ।
७. होइ (स) ।
८. व (ब) ।
९. छंद की दृष्टि से उकार दीर्घ हुआ है ।
१०. ० करणे (ब) ।
११. तु य न (अ) ।
१२. सो (बपा) ।
१३. ० सेवी (ब) ।
१४. x (ब) ।
१५. स्थविरैः सह गाथायां षष्ठी तृतीयार्थे (मवृ) ।
१६. वितादो (ब) ।
१७. ० याणयादि (ब) ।
१८. उ (स) ।
१९. ० लोमतोव ० (अ) ।
२०. x (ब) ।
२१. x (अ, ब) ।
२२. ० भोगभागी (अ) ।
२३. महइ (ब) ।
२४. मे (ब) ।
२५. x (ब) ।
२६. दिसाण (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२९९. दुविहो य एगपक्खी[१], पव्वज्जसुते य होति नायव्वो ।
सुत्तम्मि एगवायण, पव्वज्जाए कुलिव्वादी ॥नि.२१०॥

१३००. सकुलिव्वओ पव्वज्जाओ[२], पक्खिओ एगवायणसुत्तम्मि ।
अब्भुज्जयपरिकम्मे, मोहे रोगे व इत्तरिओ[३] ॥

१३०१. दिट्ठंतो जध राया, सावेक्खो खलु तधेव निरवेक्खो ।
सावेक्खो जुगनरिंद, ठवेति इय गच्छुवज्झायं ॥

१३०२. गणधरपाउग्गाऽसति[४], पमादअट्ठावि एव कालगते ।
थेराण पगासेंति[५], जावऽन्नो ण ठावितो तत्थ ॥

१३०३. पव्वज्जाय कुलस्स य, गणस्स संघस्स चेव पत्तेयं ।
समयं सुतेण भंगा, कुज्जा कमसो दिसाबंधो ॥

१३०४. आणादिणो य दोसा, विराहणा[६] होति इमेहि ठाणेहिं ।
संकितअभिणवगहणे, तस्स व दीहेण कालेण ॥नि. २११॥

१३०५. परिकम्मं कुणमाणो, मरणस्सऽब्भुज्जयस्स[७] 'व विहारे'[८] ।
मोहे रोगचिगिच्छा[९], 'ओहावेंते य'[१०] आयरिए[११] ॥

१३०६. दुविध तिगिच्छं काऊण, आगतो संकियम्मि कं पुच्छे ।
पुच्छंति[१२] व कं इतरे, गणभेदो पुच्छणा हेउं[१३] ॥

१३०७. न तरति सो संधेउं, अप्पाहारो व[१४] पुच्छिउं[१५] देति ।
अन्नत्थ 'व पुच्छंते'[१६], सच्चित्तादी उ गेण्हंति ॥

१३०८. सुततो अणेगपक्खिं[१७], एते दोसा भवे ठवेंतस्स ।
पव्वज्जऽणेगपक्खिय[१८], ठवयंत भवे इमे दोसा ॥

१३०९. दोण्ह वि बाहिरभावो, सच्चित्तादीसु भंडणं नियमा ।
होति स[१९] गणस्स भेदो, सुचिरेण न एस अम्ह त्ति[२०] ॥

१३१०. अन्नतरतिगिच्छाए, पढमाऽसति ततियभंगमित्तिरियं'[२१] ।
ततियस्सेव[२२] तु असती, बितिओ 'तस्साऽसति चउत्थो'[२३] ॥

---

१. ० पक्खा (ब) ।
२. ० व्वओ तु (अ, स) ।
३. इत्तिरिया (अ, स) ।
४. ० पाउब्भाऽसति (अ), ०पातोग्गा ० (ब) ।
५. पगासेती (स) ।
६. ० हण (ब) ।
७. मरणस्सा ० (अ) ।
८. ववहारो (ब, स) ।
९. ० वितिच्छा (ब) ।
१०. ओहाविते वि (स) ।
११. आरिणिए (ब) ।
१२. पुच्छंतु (ब, स) ।
१३. होउं (ब) ।
१४. व्व (ब) ।
१५. पुच्छिउ (ब) ।
१६. X (ब) ।
१७. ० पक्खं (ब) ।
१८. ०पक्खिं (स) ।
१९. X (ब) ।
२०. अ और स प्रति में १३०८ और १३०९ की गाथा में क्रमव्यय है ।
२१. ० भंगं इत्तिरिओ (ब) ।
२२. पढमस्सेव (अ, स) ।
२३. अपुज्जतेगतरे (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३११. पगतीए मिउसहावं, पगतीए सम्मतं विणीतं[1] वा ।
णाऊण गणस्स गुरुं, ठावेंति अणेगपक्खि पि ॥

१३१२. साधारणं तु पढमे, बितिए खेत्तम्मि ततिय सुह-दुक्खे ।
अणभिज्जंते सीसे[2], सेसे[3] एक्कारसविभागो[4] ॥

१३१३. पुव्वुद्दिट्ठं तस्सा, पच्छुद्दिट्ठं पवाययंतस्स ।
संवच्छरम्मि पढमे, पडिच्छए जं तु सच्चित्तं[5] ॥

१३१४. पुव्वं पच्छुद्दिट्ठं[6], पडिच्छए जं तु होति सच्चित्तं ।
संवच्छरम्मि बितिए, तं सव्वं पवाययंतस्स[7] ॥

१३१५. पुव्वं पच्छुद्दिट्ठं, सीसम्मि 'जं तु होति'[8] सच्चित्तं ।
संवच्छरम्मि पढमे, तं सव्वं गुरुस्स आभवति[9] ॥

१३१६. पुव्वुद्दिट्ठं तस्सा[10] पच्छुद्दिट्ठं पवाययंतस्स ।
संवच्छरम्मि बितिए, सीसम्मि तु 'जं व'[11] सच्चित्तं ॥

१३१७. पुव्वं पच्छुद्दिट्ठं, सीसम्मि जं तु होति सच्चित्तं ।
संवच्छरम्मि ततिए, तं सव्वं पवाययंतस्स[12] ॥

१३१८. पुव्वुद्दिट्ठं तस्सा, पच्छुद्दिट्ठं पवाययंतस्स[13] ।
संवच्छरम्मि पढमे, 'तं सव्वं सिस्सिणीए तु'[14] ॥

१३१९. पुव्वं पच्छुद्दिट्ठं, सिस्सिणिए[15] जं तु होति सच्चित्तं ।
संवच्छरम्मि बितिए, तं सव्वं पवाययंतस्स[16] ॥

१३२०. पुव्वं पच्छुद्दिट्ठं, 'पडिच्छियाए उ जं तुं' सच्चित्तं[17] ।
संवच्छरम्मि पढमे, तं सव्वं पवाययंतस्स ॥

१३२१. जम्हा एते दोसा, दुविहे उ[18] अपक्खिए तु ठवितम्मि ।
तम्हा उ ठवेयव्वो, कमेणिमेणं तु आयरिओ ॥

---

१. वणीय (अ), वणियं (ब)।
२. सिस्से (स)।
३. समे (ब), सेसेसु (अ)।
४. बृभा ५४०७, निभा ५३०३।
५. बृभा ५४०९, निभा ५५०६।
६. ० दिट्ठे (अ, ब) सर्वत्र।
७. पव्वाय० (ब), यह गाथा स-प्रति में नहीं है बृभा ५४१०, निभा ५५०७।
८. होति जं तुं (स)।
९. आलवति (अ), बृभा ५४११, निभा ५५०८।
१०. गणस्स उ (ब)।
११. ज़ोइ (अ), नं तु (बृभा ५४१२, निभा ५५०९)।
१२. बृभा ५४१३, निभा ५५१०, यह गाथा अ और ब हस्तप्रति में अप्राप्त है। टीका में इसकी व्याख्या उपलब्ध है। विषय वस्तु की दृष्टि से यह यहां संगत प्रतीत होती है।
१३. पव्वाय० (ब)।
१४. सिस्सिए जं तु सच्चित्तं (ब), बृभा ५४१४, निभा ५५११।
१५. सिस्सीए (अ, स)।
१६. पव्वा० (ब), ब प्रति में १३१८ एवं १३१९ की गाथा में क्रमव्यत्यय है। १३१८ वाली गाथा पुनरुक्त हुई है, बृभा ५४१५, निभा ५५१२।
१७. पडिच्छ० (अ), पडिच्छगा जं तु होति (बृभा ५४१६), निभा ५५१३।
१८. वि (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३२२. एतस्सेगदुगादी, निप्फण्णा तेसि बंधति दिसाओ ।
संपुच्छण-ओलोयण, दाणे[1] मिलितेण दिट्ठंतो ॥नि. २१२ ॥

१३२३. गीतमगीता[2] बहवो, गीतत्थसलक्खणा[3] उ जे तत्थ ।
तेसिं दिसाउ दाउं[4], वितरति सेसे जहरिहं तु ॥

१३२४. मूलायरि[5] राइणिओ[6], अणुसरिसो तस्स होउवज्झाओ ।
गीतमगीता सेसा, सज्झिलगा होंति सीसाहा[7] ॥

१३२५. राइणिया[8] गीतत्था, अलद्धिया धारयंति पुव्वदिसं ।
अपहुव्वंत सलक्खण, केवलमेगे दिसाबंधो ॥

१३२६. सीसे य पहुव्वंतं, सव्वेसिं तेसि होति दायव्वा ।
अपहुप्पंतेसुं पुण, केवलमेगे दिसाबंधो[9] ॥

१३२७. अच्चित्तं च[10] जहरिहं, दिज्जति 'तेसुं च'[11] बहुसु गीतेसु ।
एस विधी अक्खातो, अग्गीतेसुं इमो उ विधी ॥

१३२८. अरिहं व अनिम्माउं[12], णाउं थेरा भणंति जो ठवितो ।
एतं[13] गीतं काउं, देज्जाहि दिसिं अणुदिसिं[14] वा[15] ॥

१३२९. सो[16]निम्माविय[17]ठवितो, अच्छति जदि तेण 'सह ठितो'[18]लद्धं[19] ।
अह न वि चिट्ठति तहियं, संघाडो तो सि दायव्वो[20] ॥

१३३०. पेसेति गंतुं व सयं व पुच्छे, संबंधमाणो उवधिं 'च देती'[21] ।
सज्झंतिया सिं च समल्लिया वि, सच्चित्तमेवं न लभे करेंतो ॥

१३३१. गोवालगदिट्ठंतं[22], करेंति[23] जध दोन्नि भाउगा गोवा[24] ।
रक्खंती गावीओ[25], पिहप्पिहा असहिया दो वि ॥

---

१. दोण्णि (ब) ।
२. गीतमगीतत्था (ब) ।
३. ० सलक्खमो (अ) ।
४. णाउं (अ, ब, स) ।
५. ०यरिय (अ) ।
६. राय० (ब) ।
७. सीसा य (स), हकारो अलाक्षणिकः (मवृ) ।
८. राय ० (ब) ।
९. यह गाथा अ और स प्रति में नहीं है ।
१०. X (स) ।
११. तेसिं एव (अ) ।
१२. ०म्मायं (स) ।
१३. एवं (ब) ।
१४. ० दिसं (अ) ।
१५. व (अ) ।
१६. तं (अ) ।
१७. निम्म० (अ), निम्मे० (स) ।
१८. सद्धि तो (स) ।
१९. लद्धि (अ) ।
२०. ब प्रति में इस गाथा के स्थान पर निम्न गाथा मिलती है—
सो निम्मवियं ठवितो, पट्ठदिसो वावि जो अपरिवारो ।
कप्पसहाए दिन्ने, विप्परिणामेंति मामेरा ॥
२१. देहीई (ब) ।
२२. गोवालदि ० (ब) ।
२३. करेइ (ब) ।
२४. गोवो (ब) ।
२५. गोणीउं (ब), गोणीओ (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३३२. गेलण्णे एगस्स उ, दिण्णा 'गोणी उ ताहि'[१] अन्नस्स ।
इय नाऊणं ताहे, सहिया जाया दुवग्गा[२] वि ॥

१३३३. एवं दोण्णि[३] वि अम्हे, पिहप्पिहा तह वि विहरिमो समयं ।
वाघाते अण्णोण्णे[४], सीसा व[५] 'परं च न'[६] भयंति ॥

१३३४. असरिसपक्खिगठविते, परिहारो एस सुत्तसंबंधो ।
काऊण व तेगिच्छं, सातिज्जियआगते[७] सुत्तं ॥

१३३५. अहवा गणस्स अप्पत्तियं तु ठावेति[८] होति परिहारो ।
एसो त्ति ण एसो त्ति व, ठविज्जते[९] भंडणं सगणे[१०] ॥

१३३६. परिहारो वा भणितो[११], न तु परिहारम्मि वण्णिता मेरा ।
ववहारे वा पगते, अह ववहारो भवे[१२] तेसिं[१३] ॥

१३३७. कारणिगा[१४] मेलीणा[१५], बहुगा परिहारिगा भवेज्जाही ।
अप्परिहारियभोगो[१६], परिहारि[१७] न भुंजति[१८] वहंतो ॥

१३३८. गिम्हाणं आवण्णो, चउसु वि मासेसु देंति आयरिया ।
पुण्णम्मि मासवज्जण[१९], अप्पुण्णे मासियं लहुयं ॥

१३३९. पणगं पणगं मासे, वज्जेज्जति[२०] मास[२१] छण्हमासाणं ।
न य भद्द-पंतदोसा, पुव्वुत्तगुणा ततो[२२] वासो ॥

१३४०. वासासू बहुपाणा, बलिओ[२३] कालो[२४] चिरं न[२५] ठायव्वं ।
सज्झाय-संजम-तवे, धणियं अप्पा नियोतव्वो ॥

१३४१. मासस्स गोण्णणामं, परिहरणा पूतिनिव्वलणमासो ।
तत्तो[२६] पमोयमासो, भुंजणवज्जण न सेसेहिं ॥

---

१. ० उ ताहे (ब), गोणीए ताहे (अ) ।
२. दुयग्गा (स) ।
३. दोण्हि (स) ।
४. वाघायाणं णोण्णे (अ) ।
५. तु (स) ।
६. परत्त ण (अ, स) ।
७. साइज्जिमागते (अ, स) ।
८. ठावेंतो (स), ठाविते (ब) ।
९. ० ज्जतू (ब) ।
१०. समणे (स) ।
११. गणितो (स) ।
१२. हवे (स) ।
१३. तिसिं (ब) ।
१४. कारणगा (ब) ।
१५. मेलाणे (ब) ।
१६. x (ब), अपरीहा० (स) ।
१७. ० हार (ब) ।
१८. भुज्जए (अ), भुज्जइ (स) ।
१९. मासे० (स) ।
२०. वज्जि ० (ब) ।
२१. मासो (अ) ।
२२. अतो (अ, स) ।
२३. बलिय (ब) ।
२४. कालि (ब) ।
२५. व (स) ।
२६. पत्तो (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३४२. दिज्जति सुहं च[1] वीसुं, तवसोसियस्सय जं बलकरं तु ।
पुणरवि य होति जोग्गो[2], अचिरा दुविहस्स वि तवस्स ॥

१३४३. एसा वूढे[3] मेरा, होति अवूढे अयं पुण विसेसो ।
सुत्तेणेव निसिद्धे, होति[4] अणुण्णा उ सुत्तेण[5] ॥

१३४४. किह तस्स दाउ किज्जति[6], चोदग ! सुत्तं तु होति कारणियं ।
सो दुब्बलो गिलायति, तस्स उवाएण देंतेवं[7] ॥

१३४५. तवसोसियस्स मज्झो, ततो व तब्भावितो भवे[8] अधवा ।
थेरा णाऊणेवं, वदंति[9] भाएहि तं अज्जो[10] ॥

१३४६. परिमित असती अण्णो, सो वि य परिभायणम्मि कुसलो उ ।
उच्चूरपउरलंभे[11], अगीतवामोहणनिमित्तं ॥

१३४७. परिभाइयसंसट्ठे, जो हत्थं संलिहावइ परेण ।
फुसति व कुड्डे छड्डे, अणणुण्णाए भवे लहुओ ॥

१३४८. कप्पति य विदिण्णम्मी[12], चोदगवयणं च सेससूवस्स ।
एवं कप्पति अप्पायणं च कप्पट्ठिती चेसा[13] ॥

१३४९. एवतियाणं भत्तं, करेहि दिण्णम्मि सेसयं तस्स ।
इय भोइय[14] पज्जत्ते, सेसुव्वरियं च देंतस्स ॥

१३५०. दव्वप्पमाणं तु विदित्तु पुव्वं, 'थेरा सि दापंति'[15] तयं पमाणं ।
जुत्ते वि सेसं भवती[16] जहा उ, उच्चूरलंभे तु पकामदाणं ॥

१३५१. आदाणाऽवसाणेसु[17], संपुडितो[18] एस होति उद्देसो ।
एगाहिगारियाणं[19], वारेति अतिप्पसंगं वा ॥

१३५२. सपडिग्गहे परपडिग्गहे, य बहि पुव्व पच्छ तत्थेव ।
आयरिय-सेहऽभिग्गह[20], समसंडासे अहाकप्पो[21] ॥नि. २१३ ॥

---

१. व (ब) ।
२. जुग्गो (अ) ।
३. छूढे (ब) ।
४. होउ (अ) ।
५. तेणेव (अ, स) ।
६. कज्जति (अ, स) ।
७. देंते व (ब) ।
८. वा (अ) ।
९. वयंत (अ), वदंत (स) ।
१०. कुज्जो (अ) ।
११. उप्परप० (अ) ।
१२. व दिण्णंसि (अ, स) ।
१३. चेव (अ, स) ।
१४. भाइय (स) ।
१५. थेराण से दाएति (स) ।
१६. भवते (अ, स) ।
१७. ० ण्णादवसाणेसु (ब) ।
१८. संपुड्डितो (स) ।
१९. एकाहिकारियाइं (स) ।
२०. सेह पडिग्गह (स) ।
२१. अधुना निर्युक्तिभाष्यविस्तरः (मवृ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३५३. कारणिय[1] दोन्नि थेरा, सो व गुरू अधव केणई असहू ।
पुव्वं सयं तु गेण्हति, पच्छा घेत्तुं च थेराणं ॥

१३५४. जइ एस समाचारी, किमट्ठसुत्तं इमं तु आरद्धं ।
सपडिग्गहेतरेण[2] व, परिहारी वेयवच्चकरे[3] ॥

१३५५. दुल्लभदव्वं पडुच्च, व तवखेदितो समं वसति काले ।
चोदग ! कुव्वंति तयं, जं वुत्तमिहेव[4] सुत्तम्मि ॥नि. २१४ ॥

१३५६. पास उवरिव्व गहितं, कालस्स दवस्स वावि असतीए ।
पुव्वं भोत्तुं[5] थेरा, दलंति समगं च भुंजंति ॥

इति द्वितीय उद्देशक

१. ० णिया (अ, ब) ।
२. अपडिग्ग० (अ, स) ।
३. वेज्जव० (ब) ।
४. तु मिहेव (अ), वुत्तमिमेव (स) ।
५. भत्तं (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तृतीय उद्देशक

१३५७. तेसिं चिय दोण्हं पी, 'सीसायरियाण पविहरंताणं'[१] ।
इच्छेज्ज गणं वोढुं, जदि सीसो[२] एस संबंधो ॥

१३५८. तेसिं कारणियाणं, अन्नं देसं[३] गता य[४] जे सीसा[५] ।
तेसिमागंतु[६] कोई, गणं धरेज्जाह वा जोग्गो ॥

१३५९. थेरे अपलिच्छन्ने, अपलिच्छन्ने सयं पि चग्गहणा ।
दव्वाऽछन्नो थेरो, 'इतरो सीसो भवे दोहिं'[७] ॥

१३६०. नोकारो खलु देसं, पडिसेहयती कयाइ कप्पेज्जा ।
ओसन्नम्मि उ थेरे, सो चेव परिच्छओ[८] तस्स ॥

१३६१. भिक्खू इच्छा गणधारए, अपव्वाविते[१०] गणो नत्थि ।
इच्छातिगस्स अट्ठा[११], महातलागेण ओवम्मं[१२] ॥दारं ॥नि. २१५ ॥

१३६२. जो जं इच्छति[१३] अत्थं, नामादी तस्स सा भवति इच्छा ।
नामम्मि[१४] जं तु इच्छा, इच्छति नामं च जस्सिच्छा ॥

१३६३. एमेव होति ठवणा, निक्खिप्पति इच्छते व जं ठवणं ।
सामित्तादी[१५] जधसंभवं तु 'दव्वादि, जं भणसु'[१६] ॥

१३६४. भावे पसत्थमपसत्थिया[१७] य अपसत्थियं न इच्छामो ।
'इच्छामो य पसत्थं'[१८], नाणादीयं[१९] तिविधइच्छं[२०] ॥

१३६५. नामादि गणो चउहा, दव्वगणो खलु पुणो भवे तिविधो ।
लोइय-कुप्पावणिओ, लोगुत्तरिओ य बोधव्वो ॥नि. २१६ ॥

---

१. ० याणं विह ० (ब) ।
२. सिस्सो (अ, स) ।
३. देसस्स (अ) ।
४. उ (अ, स) ।
५. सिस्सा (अ) सर्वत्र ।
६. ते मागंतु (ब) ।
७. इयरो पुण वा भवे दोहिं (अ, स), टीका की मुद्रित पुस्तक में यह गाथा कुछ अंतर के साथ मिलती है । छंद की दृष्टि से भी यह गाथा ठीक नहीं है—
थेरे अपलिच्छन्ने, सयं पि च गहणा तत्थ ।
छन्नो थेरो पुण वा, इयरो सीसो भवे दोहिं ॥
८. पलिच्छाओ (स) ।
१०. ० विउं (ब) ।
११. इड्ढा (स) ।
१२. ० वम्मो (अ, ब), एष निर्युक्तिगाथासंक्षेपार्थः (मवृ) ।
१३. इच्छिति (ब) ।
१४. नामं (स) ।
१५. सामत्ता० (ब) ।
१६. ० दिसु गणस्स (ब, स) ।
१७. मकारोऽलाक्षणिकः (मवृ) ।
१८. X (ब) ।
१९. णाणादयं (ब) ।
२०. ०इच्छा (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३६६. सच्चित्तादिसमूहो, लोगम्मि गणो उ मल्लपोरादी ।
चरगादिकुप्पवयणो, लोगोत्तरओसन्नऽगीताणं[1] ॥नि. २१७॥

१३६७. गीतत्थ उज्जुयाणं, गीतपुरोगामिणं चऽगीताणं ।
एसो खलु भावगणो, नाणादितिगं च जत्थत्थि ॥दारं॥नि. २१८॥

१३६८. भावगणेणऽहिगारो, सो उ[2] अपव्वाविए न संभवति ।
इच्छातियगहणं पुण, नियमणहेतुं तओ[3] कुणति ॥नि. २१९॥

१३६९. 'किं नियमेति[4] निज्जरनिमित्तं 'न्न उ'[5] पूयमादिअट्ठाए ।
धारेति गणं जदि पहु, महातलागेण सामाणो ॥नि. २२०॥

१३७०. तिमि-मगरेहि न खुब्भति, जहंबुनाधो[6] वियंभमाणेहिं ।
सोच्चिय महातलागो, पफुल्लपउमं च जं अन्नं ॥

१३७१. परवादीहि न खुब्भति, संगिण्हंतो गणं च न गिलाति[7] ।
होती य सदाभिगमो, सत्ताण[8] सरोव्व पउमड्डो ॥

१३७२. एतगुणसंपउत्तो, ठाविज्जति गणहरो उ गच्छम्मि ।
पडिबोधादीएहि य, जइ होति गुणेहि संजुत्तो ॥

१३७३. पडिबोहग[9] देसिय सिरिघरे य निज्जामगे य बोधव्वे ।
तत्तो य महागोवो, एमेता पडिवत्तिओ[10] ॥

१३७४. जह आलित्ते[11] गेहे, कोइ पसुत्तं नरं तु बोधेज्जा ।
जरमरणादिपलित्ते, संसारघरम्मि तध उ जिए ॥

१३७५. बोहेंति अपडिबुद्धे, 'देसियमादी वि[12] जोएज्जा ।
एयगुणविप्पहूणे[13], अपलिच्छन्ने य न धरेज्जा ॥नि. २२१॥

१३७६. दोहि वि अपलिच्छन्ने, एक्केक्केणं वऽपलिच्छन्ने[14] य ।
आहरणा होंति इमे, भिक्खुम्मि गणं धरंतम्मि ॥नि. २२२॥

१३७७. भिक्खू[15] कुमार विरए[16], झामणपंती सियालरायाणो ।
वित्तत्थजुद्ध[17] असती, दमग भतग दामगादी या[18] ॥दारं॥नि. २२३॥

---

१. चौथे चरण में मात्रा अधिक होने से छंदभंग है।
२. य (स)।
३. पुणो (अ, ब, स)।
४. णियमेण ती (स)।
५. तओ (ब)।
६. जहंपुनाहो (अ, स)।
७. मिलाति (स)।
८. सत्ताणु (अ)।
९. पडिबोधिक (स)।
१०. गाथा के अंतिम चरण में अनुष्टुप् छंद का प्रयोग है।
११. आदित्ते (स)।
१२. दिसियम्मादी एव (ब)।
१३. ० विप्पहीणे (स)।
१४. अवलि० (स)।
१५. भिक्ख (अ, ब)।
१६. वियर (ब) वियरए (स)।
१७. ०त्थसुह (स)।
१८. य (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३७८. बुद्धिबलपरिहीणो, कुमार पच्चंतडमरकरणं तु ।
अप्पेणेव बलेणं, गेण्हावण सासणा[१] रण्णा ॥

१३७९. सुत्तत्थअणुववेतो, अगीतपरिवार गमणपच्चंतं[२] ।
परतित्थिगओभावण[३], सावग सेहादवण्णो उ ॥

१३८०. वणदवसत्तसमागम, विरए[४] सीहस्स पुंछ डेवणया ।
तं दिस्स जंबुगेण वि, विरए छूढा मिगादीया ॥

१३८१. अद्धाणादिसु एवं, दट्ठुं सव्वत्थ एव मण्णंतो ।
भवविरयं[५] अग्गीतो, पाडेतऽन्ने[६] वि पवडंतो ॥दारं ॥

१३८२. जंबुगकूवे चंदे, सीहेणुत्तारणाय[७] पंतीए ।
जंबुगसपंतिपडणं, एमेव अगीतगीताणं ॥दारं ॥

१३८३. नीलीराग खसद्दुम, हत्थी सरभा सियाल 'तरच्छा उ[८] ।
बहुपरिवार[९] अगीते, विज्जुयणोभावणपरेहिं[१०] ॥

१३८४. सेहादी कज्जेसु व, कुलादिसमितीसु जंपउ अयं तु ।
गीतेहि विस्सुयं[११] तो, निहोडणमपच्चवतो[१२] सेहे[१३] ॥

१३८५. एक्केक्क एगजाती, पतिदिणसम एव कूवपडिबिंबं ।
सीहे[१४] 'पुच्छण एज्जण'[१५], कूवम्मि य डेव उत्तरणं ॥दारं ॥

१३८६. एमेव जंबुगो वी, कूवे पडिबिंबमप्पणो दिस्स ।
डेवणय तत्थ मरणं, समुयारो[१६] गीतऽगीताणं ॥

१३८७. एते य उदाहरणा, 'दव्वे भावे[१७] अपलिच्छन्नम्मि ।
दव्वेणऽपलिच्छन्ने, 'भावेऽपलिछण्ण होंति इमे[१८] ॥नि. २२४ ॥

१३८८. दमगे वइया खीर घडि, खट्ट चिंता य कुक्कुडिप्पसवो ।
धणपिंडण[१९] समणेरिं[२०] ऊसीसग भिंदण घडीए ॥

---

१. सासणे (स) ।
२. ०वच्चंतं (स) ।
३. तोभा० (अ, ब) ।
४. वियरयो नाम लघुस्रोतोरूपो जलाशयः स च षोडशहस्तविस्तारो (मवृ) ।
५. भवे वियरयमिति द्वितीया प्राकृतत्वात् सप्तम्यर्थे (मवृ) ।
६. पडितन्ने (अ), पडेतन्ने (ब) ।
७. सीहणु ० (ब), ० रणीए (अ) ।
८. कच्छू य (अ, स) ।
९. ०परीवार (स) ।
१०. विज्जयणो० (अ) ।
११. विब्बुसं (अ, स) ।
१२. ०डण अप०(स) ।
१३. शैक्षे प्राकृतत्वात् षष्ठ्यर्थे सप्तमी एकवचने बहुवचनं (मवृ) ।
१४. सीधि (अ) ।
१५. पुच्छ कतिजणा (अ, स) ।
१६. समोतारो (स) ।
१७. द्रव्ये भावे च सप्तमी प्राकृतत्वात् तृतीयार्थे (मवृ) ।
१८. होंति इमे तइयभंगम्मि (ब) भावेण पलि० (स), भावे सप्तमी तृतीयार्थे (मवृ) ।
१९. ०पिण्हण (स) ।
२०. समणारिं (अ) समणेरी (स) समानेतरं (मवृ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३८९. पव्वावइत्ताण बहू य सिस्से[1], पच्छा करिस्सामि गणाहिवच्चं ।
इच्छाविगप्पेहि विसूरमाणो, सज्झायमेवं[2] न करेति मंदो ॥दारं ॥

१३९०. गावीओ रक्खंतो, घेच्छं भत्तीय पड्डिया[3] तत्तो ।
वड्डंतो गोवग्गो, होहिंति[4] य वच्छिगा तत्थ[5] ॥

१३९१. 'तेसिं तु[6] दामगाइं करेमि मोरंगचूलियाओ य[7] ।
एवं तु ततियभंगे, वत्थादी पिंडणमगीतो ॥

१३९२. 'ताणि बहूणि[8] पडिलेहयंतो, अद्धाणमादीसुय संवहंतो ।
एमेव 'वासं मतिरित्तगं से[9], वातादी खोभो य सुते य हाणी[10] ॥

१३९३. चोदेति न[11] पिंडेति[12] य, कज्जे गेण्हति य जो सलद्धीओ ।
तस्स न दिज्जति किं गणो, भावेउ[13] जो य[14]ऽसंच्छन्नो ॥

१३९४. चोदग ! अप्पभु असती, पूयापडिसेध[15] निज्जरतलाए ।
सतं[16] से अणुजाणाति, पव्वविते[17] तिण्णि 'इच्छा से'[18] ॥नि. २२५ ॥

१३९५. भण्णति[19] अविगीतस्स हु, उवगरणादीहि[20] जदि वि संपत्ती ।
तह वि न सो॰ पज्जत्तो, करीलकाउव्व वोढव्वो ॥

१३९६. न य जाणति वेणइयं[21] कारावेउं न 'यावि कुव्वंति[22] ।
ततियस्स परिभवेणं, सुत्तत्थेसुं[23] अपडिबद्धा ॥

१३९७. बियभंगे[24] पडिसेहो, जं पुच्छसि तत्थ कारणं सुणसु[25] ।
जइ से[26] होज्ज धरेज्जं, तदभावे किण्णु धारेउं ॥

१३९८. तं पि य हु दव्वसंगहपरिहीणं[27] परिहरंति सेहादी ।
संगहरिते य सगलं, गणधारित्तं[28] कहं होति ? ॥

---

१. सीसे (अ) ।
२. ०मेव (ब) ।
३. फड्डिया (ब) ।
४. दोहिंति (स) ।
५. तस्स (ब) ।
६. होहिंति (ब) ।
७. या (ब) ।
८. ताइं बहूहिं (ब) ।
९. वासं मतिरित्त संगो (अ, स) ।
१०. हासं (ब) ।
११. य (अ) ।
१२. पिंडइ (ब) ।
१३. भावेण उ (अ) ।
१४. उ (अ) ।
१५. ० सेहा (अ, स) ।
१६. संतं (अ) ।
१७. पव्वाविते (अ) ।
१८. इच्छामि (ब) ।
१९. भणति (स) ।
२०. गाथायां तृतीया षष्ठ्यर्थे (मवृ) ।
२१. विणयशब्दस्य पुंस्त्वेऽपि प्रत्यये समानीते नपुंसकलिंगता (मवृ) ।
२२. या विगुव्वंति (अ) ।
२३. सूत्रार्थाभ्यां गाथायां सप्तमी तृतीयार्थे प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
२४. बितिए (अ), बितियभंगे (स) ।
२५. जाणसि (ब) ।
२६. सो (अ) ।
२७. ० संगहुप० ।
२८. गणधीरितं (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३९९. 'आहारवत्थादिसु लद्धिजुत्तं'[१], आदेज्जवक्कं[२] च अहीणदेहं ।
सक्कारभज्जम्मि[३] इमम्मि लोए, पूयंति सेहा य पिहुज्जणा य ॥दारं ॥

१४००. पूयत्थं[४] णाम गणो, धरिज्जते एव ववसितो सुणय[५] ।
आहारोवहिपूयाकारण[६] न गणो धरेयव्वो ॥दारं ॥

१४०१. कम्माण निज्जरट्ठा, एवं खु गणो भवे धरेयव्वो ।
निज्जरहेतुववसिता, पूयं पि च[७] केइ इच्छंति ॥दारं ॥

१४०२. गणधारिस्साहारो[८], उवकरणं संथवो य[९] उक्कोसो ।
सक्कारो सीसपडिच्छगेहि गिहि-अन्नतित्थीहिं ॥

१४०३. सुत्तेण[१०] अत्थेण य उत्तमो उ, आगाढपण्णेसु य भावितप्पा ।
जच्चन्नितो 'वा वि'[११] विसुद्धभावो, संते गुणेवं[१२] पविकत्थयंतो ॥

१४०४. आगम्म एवं[१३] बहुमाणितो हु[१४], आणाथिरत्तं च अभावितेसु ।
विणिज्जरा वेणइयाय निच्चं, माणस्स[१५] भंगो वि य पुज्जयंते ॥

१४०५. लोइयधम्मनिमित्तं, तडागखाणावितम्मि पदुमादी[१६] ।
न वि गरहिताणि[१७] भोत्तुं एमेव इमं पि पासामो ॥दारं ॥

१४०६. संतम्मि उ केवइओ[१८], सिस्सगणो[१९] दिज्जती ततो तस्स ।
पव्वाविते समाणे, तिण्णि जहन्नेण दिज्जंति ॥

१४०७. एगो चिट्ठति पासे, सण्णा आलित्तमादि[२०] कज्जट्ठा ।
भिक्खादि वियार दुवे, पच्चयहेउं च दो होउं ॥

१४०८. दव्वे भावपलिच्छद[२१], दव्वे तिविहो उ होति चित्तादी[२२] ।
लोइय लोउत्तरिओ, दुविधो वावार जुत्तितरो ॥नि. २२६ ॥

१४०९. दो भाउगा विरिक्का, एक्को पुण तत्थ उज्जतो कम्मे ।
उचितभतिभत्तदाणं[२३], अकालहीणं च परिवुड्ढी[२४] ॥

---

१. ० त्थादि सलद्धि० (ब) ।
२. आगज्ज० (अ)
३. सक्कारहज्जम्मि (ब, मवृपा) ।
४. पूइत्थं (अ) ।
५. सुणता (अ, स) ।
६. कारणतोऽत्र विभक्तिलोपः प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
७. य (अ), x (ब) ।
८. गणं धरि० (ब) ।
९. उ (अ, ब) ।
१०. सुतेण (स) ।
११. या वि (अ, स) ।
१२. x (अ) ।
१३. एव (ब) ।
१४. या (अ, स) ।
१५. मणुव्व (स) ।
१६. पडुमादी (अ) ।
१७. गरधि० (अ), ०हियाण (ब) ।
१८. केवलितो (ब) ।
१९. सिस्सगुणो (स) ।
२०. अलित० (ब) ।
२१. पलिच्छग (अ, ब, स) ।
२२. चित्ताइं (ब) ।
२३. ०भत्तपाणं (स) ।
२४. ० वड्ढी (ब, स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४१०. कतमकतं न वि जाणति, न य उज्जमते सयं न वावारे ।
भत्तिभत्तकालहीणे[1], दुग्गहियकिसीय परिहाणी ॥

१४११. जो जाए लद्धीए, उववेतो तत्थ तं नियोएति ।
उवकरणसुते अत्थे, वादे[2] कहणे गिलाणे य[3] ॥

१४१२. जध जध वावारयते, जधा य वावारिता न हीयंति[4] ।
तध तध गणपरिवुड्ढी, निज्जरवुड्ढी वि एमेव ॥

१४१३. दंसण-नाण-चरित्ते, तवे य विणए य होति भावम्मि ।
संजोगे चउभंगो, बितिए नायं वइरभूती[5] ॥नि. २२७ ॥

१४१४. भरुयच्छे नहवाहण[6], देवी पउमावती वइरभूती[7] ।
ओरोह कव्वगायण, कोउय निव पुच्छ देविगमो ॥

१४१५. कत्थ त्ति निग्गतो सो, सयमासण एस चेव चेडिकधा ।
विप्परिणाममदाणं, विरूवपरिवाररहिते[8] य ॥

१४१६. मूलं खलु दव्वपलिच्छदस्स[9] सुंदेरमोरसबलं च ।
आकितिमतो हि नियमा, सेसा वि हवंति लद्धीओ ॥

१४१७. जो सो उ पुव्वभणितो, अपभू सो उ अविसेसितो तहियं ।
सो चेव विसेसिज्जति, इहइं सुत्ते य अत्थे य ॥

१४१८. अबहुस्सुतऽगीतत्थे, 'दिट्ठंता सप्पसीसवेज्जसुते'[10] ।
अत्थविहूण धरेंते, मासा चत्तारि भारियया[11] ॥

१४१९. अबहुस्सुते अगीतत्थे, निसिरए वावि धारए व गणं ।
तद्देवसियं 'तस्स उ'[12], मासा चत्तारि भारियया[13] ॥

१४२०. सत्तरत्तं तवो होति[14], ततो छेदो पधावती ।
छेदेणऽछिन्नपरियाए, ततो मूलं ततो दुगं[15] ॥

१४२१. जो सो चउत्थभंगो[16], दव्वे भावे य होति संच्छण्णो ।
गणधारणम्मि अरिहो, सो सुद्धो होति नायव्वो ॥नि. २२८ ॥

---

१. ० हीणं (अ)।
२. वाय (अ), वादी (ब)।
३. या (ब)।
४. हावेंति (अ, ब)।
५. ० भूमि (ब), वतिरभूई (अ)।
६. नरवाहणे (ब)।
७. वइरभूमी (ब)।
८. विरुयपरिहार० (अ), विरुयपरिवार० (स)।
९. ० पलिच्छगस्स (ब, स)।
१०. ससप्पे तहा होति वेज्जपुते य (ब)।
११. हारीता (अ)।
१२. तस्सा (बृभा)।
१३. भारीता (अ, स), बृभा ७०३।
१४. होही (अ), होती (ब)।
१५. बृभा ७०५, निभा ५५८६।
१६. चउत्थं० (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४२२. सुद्धस्स य पारिच्छा, खुड्डुय थेरे य तरुणखग्गूडे ।
दोमादिमंडलीए, सुद्धमसुद्धे ततो पुच्छा ॥दारं॥नि. २२९ ॥

१४२३. उच्चफलो अह खुड्डो, सउणिच्छावो व[1] पोसिउं दुक्खं ।
पुट्ठो वि होहिति न वा, पलिमंथो सारमंतस्स[2] ॥

१४२४. पुट्ठो वासु मरिस्सति, दुराणुयत्ते[3] न वेत्थ[4] पडिगारो ।
सुत्तत्थपारिहाणी, थेरे बहुयं 'निरत्थं तु'[5] ॥दारं ॥

१४२५. अहियं[6] पुच्छति ओगिण्हते बहुं किं गुणो मि रेगेणं ।
होहिति य विवद्धंतो[7], एसो हु ममं पडिसवत्ती ॥दारं ॥

१४२६. कोधी व निरुवगारी, फरुसो सव्वस्स वामवट्टो[8] य ।
'अविणीतो ति च काउं'[9], हंतुं सत्तुं[10] च निच्छुभती[11] ॥दारं ॥

१४२७. वत्थाहारादीभि य, संगिण्हऽणुवत्तए[12] य जो जुयलं ।
गाहेति अपरितंतो, गाहण 'सिक्खावए तरुणं'[13] ॥दारं ॥

१४२८. खरमउएहिऽणुवत्तति[14], खग्गूडं जेण पडति पासेण ।
देमो विहार विजढो, तत्थोड्डुणमप्पणा कुणति ॥दारं ॥

१४२९. इय सुद्धसुत्तमंडलि, दाविज्जति अत्थमंडली चेव ।
दोहिं पि असीदंते, देति[15] गणं चोदए पुच्छा ॥

१४३०. चोदेति भाणिऊणं, उभयच्छन्नस्स दिज्जति गणो त्ति ।
सुत्ते य अणुण्णातं, 'भगवं! धरणं'[16] पडिच्छन्ने ॥

१४३१. अरिहाऽणरिहपरिच्छं, अत्थेणं जं पुणो परूवेध[17] ।
एवं होति विरोधो, सुत्तत्थाणं दुवेण्हं पि ॥

१४३२. संति हि आयरियबितिज्जगाणि सत्थाणि चोदग! सुणेहि[18] ।
सुत्ताणुण्णातो वि हु, होति कदाई अणरिहो तु ॥

---

१. वि (अ), वा (ब)।
२. सारवंत० (अ)।
३. ० णुवत्ते (स)।
४. चेत्थ (अ)।
५. निरत्थए (ब)।
६. अधितं (अ)।
७. विवट्टंतो (ब)।
८. वाम अट्टो (अ, ब, स)।
९. अव्विणीतो त्ति व काउ (ब)।
१०. वत्थुं (ब)।
११. निच्छहती (अ)।
१२. ०अणुयत्तते (अ)।
१३. सिक्खावती तरुणं (अ), सिक्खा य तरुणं च (ब)।
१४. ०णुयत्तति (स)।
१५. देंति (अ, स)।
१६. धरणं भगवं! (ब)।
१७. ० वेहु (ब), ० वेहो (अ)।
१८. सुणाहि (अ, स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४३३. तेण परिच्छा कीरति, सुवण्णगस्सेव ताव निहसादी ।
तत्थ[1] इमो दिट्ठंतो, रायकुमारेहि कायव्वो ॥

१४३४. सूरे वीरे सत्तिय[2], ववसायि[3] थिरे चियाग-धितिमंते ।
बुद्धी विणीयकरणे, सीसे वि तधा परिच्छाए ॥

१४३५. निब्भयओरस्सबली, अविसायि[4] पुणो करेति संठाणं ।
न विसम्मति[5] देती, अणिस्सितो[6] चउहाऽणुवत्ती य[7] ॥

१४३६. परवादी उवसग्गे, उप्पण्णे सूर आवइं तरति ।
अद्धाणे तेणमादि, ओरस्सबलेण संतरति[8] ॥

१४३७. अब्भुदए वसणे वा, अखुब्भमाणो उ सत्तिओ होति ।
आवति कुलादिकज्जेसु, चेव ववसायवं तरति ॥

१४३८. कायव्वमपरितंतो, काउं[9] वि थिरो अणाणुतावी[10] तु ।
थोवा तो विदलंतो[11], चियाग य वंदणसीलो उ ॥

१४३९. उवसग्गे सोढव्वे, झाए[12] किच्चेसु यावि धितिमंतो ।
बुद्धिचउक्कविणीतो, अधवा गुरुमादिविणितो[13] उ ॥

१४४०. दव्वादी जं जत्थ उ, जम्मि व किच्चं तु जस्स वा जं तु ।
किच्चति[14] अहीणकालं, जितकरण-विणीय एगट्ठा ॥

१४४१. एवं जुत्तपरिच्छा, जुत्तो वेतेहि एहि उ अजोग्गो ।
आहारादि[15] धरेंतो, तिंतिणिमादीहि दोसेहिं ॥नि. २३० ॥

१४४२. बहुसुत्ते गीतत्थे, धरेति आहार-पूयणट्ठाई ।
तिंतिणि-चल-अणवट्ठिय, दुब्बलचरणा अजोग्गा उ ॥

१४४३. एवं परिक्खितम्मी, पत्ते दिज्जति अपत्ति[16] पडिसेहो ।
दुपरिक्खितपत्ते पुण, वारिय[17] हावेंतिमा[18] मेरा ॥

---

१. वत्थ (ब) ।
२. सत्ती (अ, ब, स) ।
३. ० साधि (ब) ।
४. ०साती (स) ।
५. विसमइ (अ) ।
६. निस्सितो (अ), ०स्सितो य (स) ।
७. गाथा १४३५ से १४४७ तक की गाथाएं ब प्रति में नहीं है ।
८. तं तरति (अ) ।
९. दावुं (स) ।
१०. ० णुभावी (अ) ।
११. विवलंतो (अ) ।
१२. साए (अ) ।
१३. ०विणओ (स), छंद की दृष्टि से इकार ह्रस्व हुआ है ।
१४. कुच्चइ (अ, स) ।
१५. आधारादि (अ) ।
१६. अपत्ते (स) ।
१७. चारिया (अ) ।
१८. धावेंतिमा (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४४४. दिट्ठो व[1] समोसरणे, अधवा थेरा तहिं तु वच्चंति ।
परिसा य घट्ठ-मट्ठा, चंदणखोडी[2] खरंटणया ॥

१४४५. इंगालदाह[3] खोडी, पविसे दिट्ठा उ वाणिएणं[4] तु ।
जा मुल्लं[5] आणयते, इंगालट्ठाय सा[6] दड्ढा ॥

१४४६. इय चंदणरयणनिभा, पमायतिक्खेण परसुणा भेत्तुं ।
दुविध पडिसेवि सिहिणा[7], ति-रयण खोडी तुमे दड्ढा[8] ॥

१४४७. एतेण अणरिहेहिं[9], अण्णे इय सूइया अणरिहा उ ।
के पुण ते इणमो ऊ, दीणादीया मुणेयव्वा[10] ॥

१४४८. दीणा जुंगित चउरो, जातीकम्मे य सिप्पसारीरे ।
पाणा डोंबा[11] किणिया[12], सोवागा चेव जातीए ॥नि. २३१ ॥

१४४९. पोसग-संवर[13]-नड-लंख वाह-मच्छंध-रयग[14]-वग्गुरिया ।
पडगारा य परीसह, सिप्प-सरीरे य वोच्छामि ॥

१४५०. हत्थे[15] पादे कण्णे, नासे उट्ठेहि[16] वज्जियं[17] जाणे ।
वामणग मडभ[18] कोढिय, काणा तध पंगुला चेव ॥

१४५१. दिक्खेउं पि न कप्पति, जुंगिता कारणे वि[19] अदोसा वा ।
अण्णायदिक्खिते वा, णाउं न करेंति आयरिए ॥

१४५२. पच्छा वि होंति विकला[20], आयरियत्तं न कप्पती तेसिं ।
सीसो ठावेतव्वो[21], काणगमहिसो व निण्णम्मि[22] ॥

१४५३. गणि अगणी वा गीतो, जो व अगीतो वि[23] आगितीमंतो ।
लोगे स पगासिज्जति, हावेंति[24] न किच्चमियरस्स[25] ॥दारं ॥

१४५४. 'एते दोसविमुक्का'[26], वि अणरिहा होंतिमे तु अण्णे[27] वि ।
अच्चाबाधादीया, तेसि विभागो उ कायव्वो ॥नि. २३२ ॥

---

१. वि (अ)।
२. ०खोरी (अ)।
३. ०डाह (स)।
४. वाणितेचं (अ)।
५. मूलं (अ, स)।
६. ता (स)।
७. सिहिण (अ)।
८. x (अ)।
९. अणरिसेणं (स)।
१०. अ प्रति में इसका एक चरण ही मिलता है।
११. डेंबा (ब)।
१२. किरिया (ब, स)।
१३. संपय (स)।
१४. पग्गह (ब)।
१५. हस्ते सप्तमी प्राकृतत्वात् तृतीयार्थे (मवृ)।
१६. उट्ठिहिं (ब)।
१७. वज्जिओ (अ)।
१८. वडभ (स)।
१९. व (ब)।
२०. विकलया (ब)।
२१. टावे तत्थ (अ)।
२२. निसणम्मि (ब)।
२३. व (ब)।
२४. ठावेंति (अ, स)।
२५. ० मियरे उ (अ, ब, स)।
२६. एतद्दो० (मु)।
२७. अन्नि (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४५५. अच्चाबाध अचायंते, नेच्छती अप्पचिंतए[1] ।
एगपुरिसे कहं निंदू, कागबंझा कधं भवे[2]? ॥नि. २३३ ॥

१४५६. अच्चाबाहो बाधं, मन्नति बितिओ धरेउमसमत्थो[3] ।
ततिओ न चेव इच्छति, तिण्णि वि एते अणरिहा उ ॥दारं ॥

१४५७. अब्भुज्जतमेगतरं, पडिवज्जिस्सं ति अत्तचिंतो उ ।
जो वा गणे वसंतो[4], न वहति तत्ती उ अन्नेसिं ॥दारं ॥

१४५८. एवं भग्गति सिस्सं[5], पणट्ठे[6] मरंति[7] विद्धसंते वा ।
सत्तमयस्स वि एवं, नवरं पुण ठायते एगो ॥दारं ॥

१४५९. 'अधवा इमे अणरिहा'[8], देसाणं दरिसणं[9] करेंताणं[10] ।
जे पव्वावित तेणं, थेरादि पयच्छति गुरूणं ॥नि. २३४ ॥

१४६०. थेरे अणरिहे सीसे[11], खग्गूडे[12] एगलंभिए ।
उक्खेवग इत्तिरिए, पंथे[13] कालगते 'ति या'[14] ॥नि. २३५ ॥

१४६१. थेरा उ अतिमहल्ला[15], अणरिहा उ काण-कुंटमादीया ।
खग्गूडा य अवस्सा, एगालंभी पधाणो उ ॥दारं ॥

१४६२. तं एगं न वि देती, अवसेसे देंति सो[16] गुरूणं तु ।
अधवा वि एगदव्वं, लभंति ते देंति तु गुरूणं ॥

१४६३. उक्खेवेणं दो तिन्नि, व उवणेति सेसमप्पणो[17] गिण्हे ।
आयरियाणित्तिरियं, बंधति दिसमप्पणो[18] व कइ[19] ॥

१४६४. पंथम्मि य कालगता, पडिभग्गा वावि[20] तुम्ह[21] जे सीसा ।
एते सव्वअणरिहा, तप्पडिवक्खा भवे अरिहा ॥दारं ॥

१४६५. एसा गीते मेरा, इमा उ अपरिग्गहाणऽगीताणं[22] ।
गीतत्थ-पमादीण व, अपरिग्गहसंजतीणं च[23] ॥दारं ॥

---

१. ० चिंतइए (अ)।
२. अ प्रति में १४४७ के बाद यह गाथा मिलती है।
३. ०उ अस० (स)।
४. वि संतो (अ, ब, स)।
५. सीसं (अ, स)।
६. पण छट्ठे (अ, स), पणट्ठि (ब)।
७. मरंत (अ)।
८. अधव इमे ऽणरिहा ऊ (अ, ब)।
९. देसणं (अ)।
१०. करेंतेणं (स)।
११. सिस्से (अ, स)।
१२. खग्गडे (अ)।
१३. x (ब)।
१४. तिय (ब), विय (स)।
१५. अवि मह० (स)।
१६. जे (मु)।
१७. सेस अप्पणा (अ, स)।
१८. दिस अप्पणा (अ, स)।
१९. १४६१-६३ तक की तीन गाथाएं ब प्रति में नहीं हैं।
२०. यावि (अ)।
२१. तुज्झ (अ, स)।
२२. ०अगीताणं (स)।
२३. वा (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४६६. गीतत्थमगीतत्थे, अज्जाणं खुड्डए उ[१] अन्नेसिं ।
आयरियाण सगासे, अमुयत्तणेण[२] तु निप्फण्णो[३] ॥

१४६७. सीस पडिच्छे होउं[४], पुव्वगते कालिए य निम्माओ ।
तस्सागयस्स सगणं, किं आभव्वं[५] इमं सुणसु ॥

१४६८. सीसो सीसो सीसो, चउत्थगं[६] पि पुरिसंतरं लभति ।
हेट्ठा वि लभति तिण्णी, पुरिसजुगं सत्तहा होति ॥नि. २३६ ॥

१४६९. मूलायरिए वज्जित्तु[७], उवरि सगणो उ हेट्ठिमे तिन्नि ।
अप्पा य सत्तमो खलु, पुरिसजुगं सत्तधा होति ॥

१४७०. अधवा न लभति उवरिं, हेट्ठिच्चिय[८] लभति[९] तिण्णि तिण्णेय ।
तिण्णि तल्लाभ-परलाभ, तिण्णि दासक्खरे णातं ॥

१४७१. दुहओ वि[१०] पलिच्छन्ने[११], अप्पडिसेधो[१२] त्ति मा अतिपसंगा ।
धारेज्ज[१३] अणापुच्छा, गणमेसो सुत्तसंबंधो ॥

१४७२. काउं देसदरिसणं, आगतऽठवितम्मि[१४] उवरता[१५] थेरा ।
असिवादिकारणेहिं, व ठावितो[१६] साधगस्सऽसती ॥

१४७३. सो कालगते तम्मि उ, गते विदेसम्मि[१७] तत्थ व अपुच्छा ।
थेरे धारेति गणं, भावनिसट्ठं अणुग्घाता[१८] ॥

१४७४. सयमेव दिसाबंधं, अणणुण्णाते[१९] करे अणापुच्छा[२०] ।
थेरेहि य पडिसिद्धो, सुद्धा लग्गा उवेहंता ॥

१४७५. सगणे थेरा ण संति[२१], तिगथेरे वा तिगं उवट्ठाति[२२] ।
सव्वाऽसति इत्तिरियं[२३], धारेति[२४] न मेलितो जाव ॥

१४७६. जे उ अधाकप्पेणं, अणणुण्णातम्मि[२५] तत्थ साहम्मी ।
विहरंति तमट्ठाए, न तेसि छेदो न परिहारो ॥

---

१. व (स) ।
२. अमुतित्त० (स) ।
३. निम्माओ (मु, मवृ) ।
४. होति (ब) ।
५. आभज्जं (अ) ।
६. चउत्था (अ) ।
७. x (ब), वज्जंतु (अ, स) ।
८. हेट्ठिट्ठिय (ब) ।
९. लब्भइ (मु) ।
१०. उ (ब) ।
११. पलिछन्ने (ब) ।
१२. अपडि० (अ) ।
१३. वारेज्ज (ब) ।
१४. ० अट्ठवितम्मि (अ, स) ।
१५. उवगया (ब) ।
१६. ण ठवितो (स) ।
१७. विदेसं व (स) ।
१८. पणुग्घाता (अ), पुणग्घाता (ब) ।
१९. अणणुवन्ने (ब) ।
२०. यणा ० (अ) ।
२१. सती (स) ।
२२. वुवट्ठाति (अ) ।
२३. इत्तरियं (स) ।
२४. धारति (ब) ।
२५. अणुण्णायम्मि (ब, अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४७७. भावपलिच्छायस्स उ, परिमाणट्ठाय होतिमं सुत्तं ।
सुतचरणे उ पमाणं, सेसा य हवंति जा लद्धी ॥

१४७८. एक्कारसंगसुत्तत्थधारया नवमपुव्वकडजोगी ।
बहुसुत-बहुआगमिया, सुत्तत्थविसारदा धीरा ॥

१४७९. एतग्गुणोववेता, सुतनिघसा णायगा महाणस्स[1] ।
आयरिय-उवज्झाए, पवत्ति थेरा अणुण्णाता[2] ॥

१४८०. आचारकुसल - संजम - पवयण - पण्णत्ति - संगहोवगहे[3] ।
अक्खुयअसबलऽभिन्न[4] ऽसंकिलिट्ठायारसंपण्णे ॥नि. २३७ ॥

१४८१. अब्भुट्ठाणे आसण, किंकर अब्भासकरणमविभत्ती ।
पडिरूवजोगजुंजण, नियोगपूजा जधाकमसो ॥दारं ॥नि. २३८ ॥

१४८२. अफरुस - अणवल[5] - अचवलमकुक्कुयमदंभगोमसीभरगा[6] ।
सहित-समाहित-उवहित-गुणनिधि आयारकुसलो[7] उ ॥दारं ॥नि. २३९ ॥

१४८३. अब्भुट्ठाणं गुरुमादी[8], आसणदाणं च होति तस्सेव[9] ।
गोसे व य आयरिए, संदिसहे किं करोमि त्ति ॥

१४८४. अब्भासकरणधम्मुज्जुयाण अविभत्तसीसपाडिच्छे ।
पडिरूवजोग जह पेढियाय जुंजण[10] करेति[11] धुवं ॥दारं ॥

१४८५. पूयं जधाणुरूवं, गुरुमादीणं करेति[12] कमसो उ ।
ल्हादीजणणमफरुसं, अणवलया होतऽकुडिलत्तं ॥दारं ॥

१४८६. अचवलथिरस्स भावो, अप्फंदणया[13] य होति[14] अकुयत्तं ।
उल्लावलालसीभर, सहिता कालेण नाणादी[15] ॥दारं ॥

१४८७. सम्मं आहितभावो, समाहितो उवहितो[16] समीवम्मि ।
नाणादीणं 'तु ठितो'[17], गुणनिहि जो आगर गुणाणं ॥

१४८८. आयारकुसल एसो, संजमकुसलं अतो उ वोच्छामि ।
पुढवादिसंजमम्मी, सत्तरसे जो भवे कुसलो ॥नि. २४० ॥

---

१. महाजनस्य (मवृ) ।
२. अणुण्णुता (अ) ।
३. संगहो गहितो (अ, ब, स) ।
४. ०बलाऽभिन्न (ब), ०असबल अभिन्न (स) ।
५. अणवल त्ति अत्र प्राकृत्वात् यकारलोपः तेन अवलया इति द्रष्टव्यं (मवृ) ।
६. ०मकक्कुय ० (अ) ।
७. मायारं० (स) ।
८. गुरुमादियाण (ब, स) ।
९. तेसेवं (ब, स) ।
१०. भुंजण (स) ।
११. करेमि (अ) ।
१२. करेह (मु) ।
१३. अकंडणता (स) ।
१४. होंति (अ, ब) ।
१५. अ और स प्रति में इसका उत्तरार्ध इस प्रकार है—
उल्लावेंतेण णिंति उ, सीभरा सहिय णाणादी ।
१६. उयहितो (ब), समहितो (स) ।
१७. तुट्ठेतो (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४८८/१. पुढवि-दग-अगणि मारुय-वणस्स-बि-ति-चउ-पणिंदि-अज्जीवो ।
पेहुप्पेह-पमज्जण, परिठवण मणो वई काए[1] ॥

१४८९. अधवा गहणे निसिरण, एसण-सेज्जा-निसेज्ज-उवधी य ।
आहारे वि[2] य सतिमं[3], पसत्थजोगे य जुंजणया ॥दारं ॥नि. २४१ ॥

१४९०. इंदिय-कसायनिग्गह, पिहितासव 'जोग झाणमल्लीणो'[4] ।
संजमकुसलगुणनिधी, तिविधकरण भाव सुविसुद्धो ॥दारं ॥नि. २४२ ॥

१४९१. गेण्हति पडिलेहेउं, पमज्जिउं तह य[5] निसिरए यावि ।
उवउत्तो एसणाएँ, सेज्ज-निसेज्जोवहाहारे ॥

१४९२. 'एतेसुं सव्वेसुं'[6], जो ति ण पम्हुस्सते तु सो सतिमं ।
जुंजति पसत्थमेव तु, मण-भासा-काय-जोगं तु ॥

१४९३. सोतिंदियादियाणं[7] निग्गहणं चेव तह[8] कसायाणं ।
पाणातिवाइयाणं[9], संवरणं आसवाणं च ॥

१४९४. झाणेऽपसत्थ एयं, पसत्थझाणे य जोगमल्लीणो ।
संजमकुसलो एसो, सुविसुद्धो तिविधकरणेणं ॥दारं ॥

१४९५. सुत्तत्थहेतुकारण, वागरणसमिद्धचित्तसुतधारी ।
पोराणदुद्धरधरो[10], सुतरयणनिधाणमिव पुण्णो ॥नि. २४३ ॥

१४९६. धारिय-गुणिय[11] समीहिय, निज्जवणा विउलवायणसमिद्धो ।
पवयणकुसलगुणनिधी, पवयणऽहियनिग्गहसमत्थो[12] ॥नि. २४४ ॥

१४९७. नयभंगाउलयाए, दुद्धर इव सद्दो होति ओवम्मे[13] ।
धारियमविप्पणट्ठं[14], गुणितं परिवत्तियं[15] बहुसो ॥

१४९८. पुव्वावरबंधेणं[16], समीहितं वाइयं तु निज्जवितं ।
बहुविधवायणकुसलो, पवयणअहिए य निग्गिण्हे ॥

१४९९. लोगे वेदे समए, तिवग्गसुत्तत्थगहितपेयालो ।
धम्मत्थ-काम-मीसग, कधासु[17] कहवित्थरसमत्थो ॥नि. २४५ ॥

---

१. यह गाथा सभी हस्तप्रतियों में नहीं है । टीकाकार ने सत्तरह संयम के प्रसंग में इस गाथा को उद्धृत किया है अतः इसे भाष्य के क्रम में नहीं जोड़ा है ।
२. ति (अ) ।
३. सत्तिमं (ब) ।
४. जोगज्झाणमल्लीणा (स) ।
५. वि (ब) ।
६. एएसू सव्वेसू (स) ।
७. ० दियायाण (अ, ब) ।
८. तह य (ब) ।
९. पाणतिवायादीणं (स) ।
१०. ० धरं (स) ।
११. मुणिय (ब) ।
१२. ०निग्गमस० (स, मवृपा), ० निग्गह पसत्थो (अ) ।
१३. ओधम्मे (स) ।
१४. धारिय ण विप्प० (अ, स) ।
१५. परियत्तियं (मु) ।
१६. ०बंधिणं (अ) ।
१७. कधा वि (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५००. जीवाजीवा[1] बंधं, मोक्खं गतिरागतिं सुहं दुक्खं[2] ।
पण्णत्तीकुसलविदू[3], परवादिकुदंसणे[4] महणो ॥नि. २४६ ॥

१५०१. पण्णत्तीकुसलो खलु, जह खुड्डगणी मुरुंडराईणं[5] ।
पुट्ठो कध न वि देवा, गतं पि कालं न याणंति ॥

१५०२. तो उट्ठितो गणधरो[6], राया वि य उट्ठितो ससंभंतो ।
अध खीरासवलद्धी, कधेति[7] सो खुड्डगगणी उ ॥

१५०३. जाहे य पहरमेत्तं[8], कधियं न य मुणति कालमध[9] राया ।
तो बेति खुड्डगगणी, रायाणं एव जाणाहि ॥दारं ॥

१५०४. जध उट्ठितेण[10] वि तुमे, न वि णातो एत्तिओ इमो कालो ।
इय गीत-वादियविमोहिया उ देवा न जाणंति[11] ॥

१५०५. अब्भुवगतं च रण्णा, कधणाए[12] एरिसो भवे कुसलो ।
ससमयपरूवणाए, महेति सो कुसमए[13] चेव ॥दारं ॥

१५०६. दव्वे भावे संगह, दव्वे तू उक्ख[14] हारमादी[15] तु ।
साहिल्लादी[16] भावे, परूवणा तस्सिमा होति ॥नि. २४७ ॥

१५०७. साहिल्ल[17] वयण-वायण-अणुभासण-देस-कालसंसरणं[18] ।
अणुकंपणमणुसासण[19], पूयणमब्भंतरं करणं ॥दारं ॥नि. २४८ ॥

१५०८. संभुंजण संभोगे, भत्तोवधिअन्नमन्नसंवासो[20] ।
संगहकुसलगुणनिधी[21], अणुकरणकरावणनिसग्गो[22] ॥दारं ॥नि. २४९ ॥

१५०९. वयणे तु अभिग्गहियस्स, केणती तस्स उत्तरं भणति ।
वायणाए[23] किलंते उ, गुरुम्मी वायणं देती ॥

१५१०. साधूणं अणुभासति, आयरिएणं तु भासिते संते ।
सारेताऽऽयरियाणं[24], देसे काले गिलाणादी ॥दारं ॥

---

१. ०जीवं (स)।
२. x (अ)।
३. ०विहु (अ)।
४. ०दंसणु (ब)।
५. ०रायाणं (अ, स)।
६. गणिवरो (अ, ब, स)।
७. कधिते (अ, स)।
८. ०मेत्थं (स)।
९. काल अध (अ)।
१०. दुट्ठितेण (अ, स)।
११. याणंति (ब)।
१२. कधणे (ब)।
१३. कुम्मए (अ)।
१४. उक्खु (अ)।
१५. भार० (स), आहारादिकश्च (मवृ)।
१६. सादिल्लादी (स)।
१७. साहिज्ज (मु)।
१८. ०संवरणं (ब)।
१९. ०मणुभासण (अ), ०अणु ० (अ)।
२०. ०संवाहो (ब, स)।
२१. ०निदी (अ)।
२२. ०करणं करा० (ब), ०कारा० (स)।
२३. वायणयाए (स)।
२४. सायणायरियणं (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५११. दुक्खत्ते अणुकंपा, अणुसासण भज्जमाणरुट्ठे वा ।
जो वा जहुत्तकारी, अणुसासणकिच्चमेतं तु ॥दारं ॥

१५१२. 'पूयण अधागुरूणं'[1], अब्भंतर[2] दोण्ह उल्लवेंताणं ।
'ततियं कुणती'[3] बहिया, बेति गुरूणं च तं इट्ठो ॥दारं ॥

१५१३. संभुंजण संभोगेण, भुज्जते[4] जस्स कारगं भत्तं[5] ।
तं घेत्तुमप्पणागं, देती एमेव उवहिं पि ॥दारं ॥

१५१४. अणुकरणं 'सिव्वण लेवणादि'[6], अणुभासणा तु दुम्मेधो ।
एरिस तस्स निसग्गो, जं भणियं एरिससभावो ॥दारं ॥

१५१५. 'बाला सहु'[7] वुड्ढेसुं, संत तवकिलंतवेयणातंके ।
सेज्ज - निसेज्जोवधि - पाणमसण - भेसज्जुवग्गहिते[8] ॥नि. २५० ॥

१५१६. दाण-दवावण-कारावणेसु[9], करणे य कतमणुण्णाए[10] ।
उवहितमणुवहितविधी, जाणाहि उवग्गहं एयं ॥नि. २५१ ॥

१५१७. बालादीणं तेसिं, सेज्जनिसेज्जोवधिप्पदाणेहिं ।
भत्तऽन्नपाण-भेसजमादीहि उवग्गहं कुणति ॥

१५१८. देति सयं दावेति य, करेति[11] कारावए य अणुजाणे ।
उवहित जं जस्स गुरुहिं, 'दिण्णं तं'[12] तस्स उवणेति ॥दारं ॥

१५१९. अणुवहितं जं तस्स उ, दिन्नं तं देति सो उ अन्नस्स ।
खमासमणेहि दिण्णं, तुब्भं ति उवग्गहो एसो ॥दारं ॥

१५२०. आधाकम्मुद्देसिय, 'ठविय रइय'[13] कीय कारियच्छेज्जं ।
उब्भिण्णाऽऽहडमाले, वणीमगाऽऽजीवग निकाए ॥नि. २५२ ॥

१५२१. परिहरंति असण-पाणं, सेज्जोवधिपूति-संकितं मीसं ।
अक्खुतमसबलमभिन्नऽसंकिलिट्ठमावासए जुत्तो ॥नि. २५३ ॥

१५२२. ओसन्न खुयायारो[14], सबलायारो य होति पासत्थो ।
भिन्नायारकुसीलो, संसत्तो संकिलिट्ठो उ ॥

१५२३. तिविधो य पकप्पधरो, सुत्ते अत्थे य तदुभए चेव ।
सुत्तधरवज्जियाणं, तिग-दुगपरिवड्डुणा[15] गच्छे ॥नि. २५४ ॥

---

१. ०ण महागु० (स) ।
२. सब्भं० (स) ।
३. तेसिं ति य कुणति (अ, स) ।
४. जुज्जते (अ, स) ।
५. भुत्तं (स) ।
६. सिव्व संलेव० (स), सिव्वणुले ० (ब) ।
७. बाल सह (अ) ।
८. समाहारो द्वन्द्वस्तस्मिन् सप्तमी षष्ठ्यर्थे (मवृ) ।
९. ०वणे य (मु) ।
१०. ०ण्णायं (स) ।
११. करे य (मु) ।
१२. दिन्नयं (अ) ।
१३. ठवियतर (ब) ।
१४. खुवायारो (ब) ।
१५. ० परिकड्डणा (अ), ० परिकड्डणा (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५२४. पुव्वं वण्णेऊणं, दीहं परियागसंघयणसद्धं[१] ।
'दसपुव्वीए धीरे'[२], मज्जाररडिय[३] परूवणया ॥

१५२५. पुक्खरिणी[४] आयारे, आणयणा तेणगा[५] य गीतत्थे ।
'आयारम्मि उ'[६] एते, आहरणा होंति नायव्वा ॥दारं ॥नि. २५५ ॥

१५२६. सत्थपरिण्णा छक्कायअधिगमं पिंड उत्तरज्झाए ।
रुक्खे व वसभ गावे[७], जोधा[८] सोही य पुक्खरिणी ॥दारं ॥नि. २५६ ॥

१५२७. पुक्खरिणीओ पुव्विं, जारिसया तो[९] ण तारिसा[१०] एण्हिं ।
तह वि य ता पुक्खरिणी[११], हवंति 'कज्जा य[१२] कीरंति ॥

१५२८. आयारपकप्पे ऊ, नवमे पुव्वम्मि आसि सोधी य ।
तत्तो च्चिय निज्जूढो[१३], 'इधाणितो एण्हि किं न भवे'[१४] ? ॥नि. २५७ ॥

१५२९. तालुग्घाडिणि[१५]-ओसावणादि, विज्जाहि तेणगा आसि ।
एण्हिं ताउ[१६] न संती, तधावि किं तेणगा न खलु ॥दारं ॥

१५३०. पुव्विं चोद्दसपुव्वी, एण्हिं जहण्णो पकप्पधारी उ ।
मज्झिमगकप्पधारी[१७], कह[१८] सो उ न होति गीतत्थो ॥दारं ॥

१५३१. पुव्विं सत्थपरिण्णा, अधीत-पढिताइ होउवट्ठवणा ।
एण्हिं छज्जीवणिया, किं सा उ न होउवट्ठवणा ॥दारं ॥

१५३२. बितियम्मि बंभचेरे, पंचमउद्देस[१९] आमगंधम्मि[२०] ।
सुत्तम्मि पिंडकप्पी, इह पुण पिंडेसणा एसो[२१] ॥दारं ॥

१५३३. आयारस्स उ उवरिं, उत्तरज्झयणाणि[२२] आसि पुव्विं तु ।
दसवेयालिय उवरिं, इयाणि किं ते न होंति[२३] उ ॥दारं ॥

---

१. सव्वं (अ) ।
२. ० वीए य धरे (ब) ।
३. ०रूवे (अ), ०रूते (ब) ।
४. पुप्फरणी (अ), ०रणी (स) ।
५. तेणुगा (अ) ।
६. आयरियम्मि (ब, स) ।
७. जूए (अ), जूधे (स) ।
८. जोधि (ब) ।
९. उ (ब) ।
१०. तारिसिया (मु) ।
११. ०रिणि (ब) ।
१२. कज्जाइं (मु) ।
१३. निज्जोढं (ब) ।
१४. इधाणि उ सोहिं किं न भवे (ब), ०किं न तवे (स) ।
१५. ०ग्घाडणि (अ), तालुग्घो० (ब) ।
१६. तातो (अ, ब) ।
१७. ०पकप्प० (मु) ।
१८. किं (मु) ।
१९. पंचमुद्देस (ब) ।
२०. ० गंधिम्मि (अ, स) ।
२१. एओ (स) ।
२२. ०ज्झयणा उ (ब) ।
२३. होंता (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५३४. 'मत्तंगादी तरुवर'[१], न संति एण्हिं न होंति किं रुक्खा ।
महजूहाहिव[२] दप्पिय, पुव्विं वसभाण 'पुण एण्हिं'[३] ॥दारं ॥

१५३५. पुव्विं कोडीबद्धा, जूहाओ[४] नंदगोवमादीणं ।
एण्हिं न संति ताइं, किं जूहाइं[५] न होंती[६] उ ॥दारं ॥

१५३६. साहस्सी मल्ला खलु, महपाणा पुव्वि आसि जोहाओ[७] ।
ते 'तुल्ला नत्थेण्हिं'[८], किं ते जोधा न होंती उ ॥दारं ॥

१५३७. पुव्विं छम्मासेहिं, परिहारेणं व[९] आसि सोधी तु ।
सुद्धतवेणं निव्वितियादी एण्हिं वि सोधी तु ॥दारं ॥

१५३८. किध[१०] पुण एवं सोधी, जह पुव्विल्लासु पच्छिमासुं च ।
पुक्खरिणीसुं[११] वत्थादियाणि सुज्झंति तध सोधी ॥दारं ॥

१५३९. एवं आयरियादी, चोद्दसपुव्वादि यासि पुव्विं तु ।
एण्हिं[१२] जुगाणुरूवा, आयरिया होंति नायव्वा[१३] ॥

१५४०. तिवरिसएगट्ठाणं[१४], दोन्नि[१५] य ठाणा उ पंचवरिसस्स ।
सव्वाणि विकिट्ठो[१६] पुण, वोढुं वा एंति ठाणाइं ॥

१५४१. नोइंदिइंदियाणि य, कालेण जियाणि[१७] तस्स दीहेण[१८] ।
कायव्वेसु 'बहूसु य'[१९], अप्पा खलु भावितो तेणं ॥

१५४२. उस्सग्गस्सऽववादो, होति विवक्खो उ तेणिमं सुत्तं ।
नियमेण विकिट्ठो[२०] पुण, तस्सासी[२१] पुव्वपरियाओ ॥

१५४३. चोदेति तिवासादी[२२], पुव्वं वण्णेउ दीहपरियागं ।
तद्दिवसमेव एण्हिं[२३], आयरियादीणि[२४] किं देह ॥

१. मज्जंमादी० (ब), ०तरुवए (अ) ।
२. ०जूधा विव (स) ।
३. पुण्हिं (ब) ।
४. जूहाऊ (अ), जूधातू (स) ।
५. जूहाती (ब) ।
६. संती (ब) ।
७. जोधत्ते (अ) ।
८. तुल्ल नत्थि एण्हिं (मु) ।
९. च (मु) ।
१०. किं च (स) ।
११. पुक्खरणीसु (ब) ।
१२. एवं (स) ।
१३. इस गाथा के बाद सभी हस्तप्रतियों में निम्न गाथा अतिरिक्त मिलती है—
आसन्न खुतायारो, सबलायारो य होति पासत्थो
भिन्नायारकुसीलो, संसतो संकिलिट्ठो उ ॥
यह गाथा पुनरावृत्त हुई है । (द्र. व्यभा १५२२)
१४. ० रिसे एगं ठाणं (मु) ।
१५. दोण्हि (अ) ।
१६. वियट्ठो (अ, ब) ।
१७. जयाणि (ब) ।
१८. देहेण (अ, ब) ।
१९. य बहूसु (स) ।
२०. विकट्ठो (अ), किलिट्ठो (ब) ।
२१. तस्सीसी (ब) ।
२२. तिसवासादी (ब) ।
२३. एण्हं (स) ।
२४. ०याईणं (ब), ०रियाणं (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५४४. भण्णति तेहि कयाइं, वेणइयाणं[1] तु उवधिभत्तादी[2] ।
गुरुबालासहुमादी, णेगपगारा उवग्गहिता ॥

१५४५. ताइं पीतिकराइं[3], असई[4] अदुव त्ति होंति थेज्जाइं ।
वेसिय[5] अणवेक्खाए[6], जिम्ह जढाइं तु विस्संभो[7] ॥

१५४६. सव्वत्थअविसमत्तेण[8], कारगो[9] होति सम्मुदी नियमा ।
बहुसो य विग्गहेसुं, अकासि गणसम्मुदिं[10] सो उ ॥

१५४७. थिरपरिचियपुव्वसुतो[11], सरीरथामावहार[12] विजढो उ ।
पुव्विं विणीतकरणो, करेति सुत्तं सफलमेयं ॥नि. २५८ ॥

१५४८. किह पुण तस्स निरुद्धो, परियाओ होज्ज तद्दिवसतो उ ।
पच्छाकड[13] सावेक्खो, सण्णातीहिं[14] बलाणीतो[15] ॥

१५४९. पव्वज्ज अप्पपंचम, कुमारगुरुमादि उवधि ते नयणं ।
निज्जंतस्स निकायण, पव्वइते तद्दिवसपुच्छा ॥

१५५०. पियरो व[16] तावसादी, पव्वइउमणा उ ते फुरावेंति[17] ।
ठविता रायादीसुं, ठाणेसुं ते जधाकमसो ॥

१५५१. नीता वि फासुभोजी[18], पोसधसालाए पोरिसीकरणं ।
धुवलोयं[19] च करेंती, लक्खणपाढे य पुच्छंती ॥

१५५२. जो तत्थऽमूढलक्खा[20], रितुकाले तीय एक्कमेक्कं तु ।
उप्पाएऊण सुतं, ठावित[21] ताधे पुणो एंति ॥

१५५३. अब्भुज्जतमेगतरं, पडिवज्जिउकाम[22] थेरऽसति अन्ने ।
'तद्दिवसमागते ते'[23], ठाणेसु ठवेंति तेसेवं[24] ॥

१५५४. कह दिज्जति तस्स गणो, तद्दिवसं चेव पव्वतियगस्स ।
भण्णति तम्मि य ठविते, होंती सुबहू गुणा उ इमे ॥

---

१. ०इयाणि (अ)।
२. उवरिभ० (स)।
३. पिति० (अ, स)।
४. असइं (स)।
५. विसिय (ब)।
६. अणधिक्काए (अ)।
७. विस्संतो (अ, स)।
८. अच्चत्थ वि० (स), ० समत्थेण (ब)।
९. कारतो (अ)।
१०. ० सम्मुइयइ (ब), ०साम्मुती (अ, स)।
११. ०सुत्तो (ब)।
१२. ०थामाविहार (ब)।
१३. पच्छावड (ब)।
१४. सण्णातेहिं (अ)।
१५. तहिं णीतो (ब)।
१६. य (ब)।
१७. फुराविंति (ब), फुराविंति त्ति देशीपदमेतद् अपहारयन्ति (मवृ)।
१८. परुसभोजी (अ), ०भोइं (स)।
१९. ०लोवं (स)।
२०. तत्थामूढ० (स)।
२१. उवेइ (अ)।
२२. पडिवज्जति काम (स)।
२३. ०मागतेसुं (मु)।
२४. ते चेव (ब), तस्सेव (मु)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५५५. साधू विसीयमाणे, अज्जा[१] गेलण्ण भिक्ख उवगरणे ।
ववहारइत्थियाए, वादे य अकिंचणकरे य ॥नि.२५९॥

१५५६. एते गुणा भवंती, तज्जाताणं कुडुंबपरिवुड्ढी[२] ।
ओहाणं पि य तेसिं, अणुलोमुवसग्गतुल्लं तु[३] ॥नि. २६०॥

१५५७. साहूणं अज्जाण य, विसीदमाणाण होति थिरकरणं ।
जदि एरिसा वि धम्मं, करेंति अम्हं किमंग पुणो ॥दारं॥

१५५८. किं च भयं गोरव्वं, बहुमाणं चेव तत्थ कुव्वंति ।
गेलण्णोसहिमादी, सुलभं उवकरण-भत्तादी ॥दारं॥

१५५९. संजतिमादी गहणे, ववहारे[४] होति[५] दुप्पधंसो[६] उ ।
तग्गोरवा उ वादे, हवंति अपराजिता एवं[७] ॥दारं॥

१५६०. पडिणीय अकिंचकरा[८], होंति अवत्तव्वअट्ठजाते य[९] ।
तज्जायदिक्खिएणं[१०], होति विवड्ढी वि य गणस्स ॥

१५६१. अपवदितं[११] तु निरुद्धे[१२], आयरियत्तं तु पुव्वपरियाए ।
इमओ पुण अववादो[१३], असमत्तसुयस्स तरुणस्स ॥

१५६२. तिण्णी[१४] जस्स य पुण्णा, वासा पुण्णेहि वा तिहि उ[१५] तं तु ।
वासेहि[१६] निरुद्धेहिं, लक्खणजुत्तं पसंसंति ॥दारं॥

१५६३. किं अम्ह लक्खणेहिं, तव-संजमसुट्ठियाण[१७] समणाणं ।
गच्छविवड्ढिनिमित्तं[१८], इच्छिज्जति[१९] सो जहा कुमरो[२०] ॥

१५६४. बहुपुत्तओ नरवती, सामुद्दं भणति कं[२१] ठवेमि निवं ।
दोस-गुण एगऽणेगे, सो वि य तेसिं परिकधेति[२२] ॥

१५६५. निद्धूमगं च डमरं, मारी – दुब्भिक्ख-चोर-पउराइं[२३] ।
धण-धन्न-कोसहाणी, बलवति पच्चंतरायाणो ॥

---

१. कज्जे (स)।
२. ० परिवड्ढी (अ)।
३. च (ब)।
४. अवहारे (मवृ)।
५. होंति (अ)।
६. वुप्प० (अ)।
७. चेव (अ, स)।
८. अकिंच्च० (ब), अकिंचि० (स)।
९. या (ब)।
१०. तज्जाति० (स)।
११. अधवा तियं (स)।
१२. निरुद्धं (मु)।
१३. अधवातो (अ)।
१४. तिण्णि उ (ब)।
१५. वा (अ)।
१६. वीसेहि (स)।
१७. ० सुत्थियाण (ब)।
१८. ० विवुड्ढिनि ० (ब)।
१९. इच्छइ (अ)।
२०. कुमारो (ब)।
२१. किं (ब)।
२२. परिहरेति (ब)।
२३. डमराइं (अ), पउराई (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५६६. खेमं सिवं सुभिक्खं, निरुवस्सग्गं गुणेहि उववेतं ।
अभिसिंचंति कुमारं, गच्छे 'वि तयाणुरूवं'[1] तु ॥

१५६७. 'जह ते'[2] रायकुमारा, सलक्खणा जे सुहा जणवयाणं ।
संतमवि[3] सुतसमिद्धं, न ठवेंति गणे गुणविहूणं ॥

१५६८. लक्खणजुत्तो जइ वि हु, न समिद्धो सुतेण तह[4] वि तं ठवए[5] ।
तस्स पुण होति देसो[6], असमत्तो[7] पकप्पणामस्स ॥

१५६९. देसो सुत्तमधीतं, न[8] तु अत्थो अत्थतो[9] व असमत्ती ।
सगणे अणरिहगीताऽसतीय गिण्हेज्जिमेहिंतो[10] ॥

१५७०. संविग्गमसंविग्गे, सारूविय-सिद्धपुत्तपच्छण्णे ।
'पडिकंत अब्भुट्ठिते'[11], असती अन्नत्थ[12] तत्थेव[13] ॥

१५७१. सगणे व परगणे वा, मणुण्ण अण्णेसि वा[14] वि असतीए ।
संविग्गपक्खिएसुं, सरूवि-सिद्धेसु पढमं ति[15] ॥

१५७२. मुंडं व धरेमाणे, 'सिहं च फेडंतऽणिच्छससिहे वि'[16] ।
लिंगेण मसागारिए[17], वंदणादीणि न हावेंति ॥

१५७३. आहार-उवधि-सेज्जा-एसणमादीसु होति जतितव्वं ।
अणुमोदण-कारावण, सिक्ख त्ति पदम्मि तो सुद्धो ॥

१५७४. चोदति[18] से परिवारं, अकरेमाणं भणाति[19] वा सड्ढे ।
अव्वोच्छित्तिकरस्स हु, सुतभत्तीए कुणह पूयं ॥

१५७५. दुविधाऽसतीय तेसिं, आहारादी[20] करेति से सव्वं ।
पणहाणीय जतंतो, अत्तट्ठाए वि[21] एमेव ॥

१५७६. आयरियाणं[22] सीसो, परियाओ वा वि अधिकितो एस ।
सीसाण केरिसाण व, ठाविज्जति सो तु आयरिओ ॥

---

१. तु ताणुरूविं (ब), वि तताणु ० (स)।
२. जधतू (ब)।
३. संतयमि (ब)।
४. मं (अ)।
५. ठवइ (अ), ठविए (ब)।
६. दोसो (अ, स)।
७. ० मत्थो (अ)।
८. ण्ं (ब)।
९. अधव उ (ब)।
१०. ० ज्जमेहिं ततो (ब), ० ज्जिमे अत्थं (अ, स)।
११. पडिक्कंत अब्भुठिए (ब)।
१२. अन्नस्स (अ)।
१३. वत्थेव (स)।
१४. या (अ)।
१५. तु (स)।
१६. सिहं वत्थो तेणिच्छ ससिहो वि (ब)।
१७. ० मा सगा (स)।
१८. चोदेति (अ), नोयइ (मु)।
१९. भणति (मु)।
२०. ० राइं (ब)।
२१. x (ब)।
२२. ० रियातो (अ, ब, स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५७७. तेवरिसो होति नवो, आसोलसगं[१] तु डहरगं बेंति ।
तरुणो चत्ता सत्तरुण[२], मज्झिमो थेरओ सेसो ॥

१५७८. अणवस्स वि डहरगतरुणगस्स नियमेण संगहं बेंति ।
एमेव तरुणमज्झे, थेरम्मि य संगहो[३] नवए ॥

१५७९. वा खलु मज्झिमथेरे, गीतमगीते[४] य होति नायव्वं ।
उद्दिसणा उ अगीते, पुव्वायरिए उ गीतत्थे ॥

१५८०. नवडहरगतरुणगस्स, विधीय[५] वीसुंभियम्मि[६] आयरिए ।
पच्छन्ने अभिसेओ, नियमा पुण संगहट्ठाए[७] ॥नि. २६१ ॥

१५८१. आयरिए कालगते, न पगासेज्जऽट्ठविते[८] गणहरम्मि ।
'रण्णो व्व'[९] अणभिसित्ते, रज्जे खोभो तधा गच्छे ॥नि. २६२ ॥

१५८२. अणाधोऽधावण[१०] सच्छंद, खित्त-तेणे सपक्खपरपक्खे ।
लतकंपणा य तरुणोऽसारण माणावमाणे य ॥नि. २६३ ॥

१५८३. जायामो अणाहो[११] त्ति, अण्णहि गच्छंति केइ ओधावे[१२] ।
सच्छंदा[१३] व भमंती[१४], केई खित्ता व होज्जाही ॥दारं ॥

१५८४. पासत्थ-गिहत्थादी[१५], उन्निक्खावेज्ज खुड्डगादी उ ।
लता व[१६] कंपमाणा उ, केई तरुणा उ अच्छंति[१७] ॥दारं ॥

१५८५. आयरियपिवासाए, कालगतं सोउ 'ते वि'[१८] गच्छेज्जा ।
गच्छेज्ज धम्मसद्धा, व[१९] केइ सारेंतगस्सऽसती ॥दारं ॥

१५८६. माणिता वा गुरूणं[२०], थेरादी तत्थ केइ तू[२१] नत्थि ।
माणं तु ततो अण्णो, अवमाणभया व गच्छेज्जा ॥

१५८७. तम्हा न पगासेज्जा[२२], कालगतं एयदोसरक्खट्ठा[२३] ।
अण्णम्मि ववट्ठविते[२४], ताधि पगासेज्ज कालगतं ॥

---

१. आसोलगं (ब)।
२. सत्तरूए (ब)।
३. संगहो व (ब)।
४. ० मगीयं ति (अ)।
५. विहीउ (ब), विधी उ (स)।
६. वीसंतियम्मि (अ)
७. संगहे ठाति (ब)।
८. ०अट्ठिते (अ)।
९. रण्णा वि (अ, स)।
१०. ० धारण (ब)।
११. अणाह (स)।
१२. तो धावे (अ)।
१३. अच्छंदा (ब)।
१४. भवंती (अ), भवंता (स)।
१५. ० थाइ उ (अ)।
१६. वा (अ, ब)।
१७. गच्छंति (अ, सपा)।
१८. तेसि (अ), सो वि (ब)।
१९. वि (मु)।
२०. गुरूणं तु (ब) गुरुभिःअत्र गाथायां षष्ठी तृतीयार्थे प्राकृतत्वात् (मवृ)।
२१. उ (ब)।
२२. ० सेज्ज (ब)।
२३. एतद्दोस० (स)।
२४. वत्थविते (अ, ब, स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५८८. दूरत्थम्मि वि कीरति[१], पुरिसे गारव-भयं सबहुमाणं ।
छंदे य अवट्टंती, चोदेउं जे[२] सुहं होति ॥

१५८९. मिधोकहा 'झड्डर-विड्डरेहिं'[३], कंदप्पकिड्डा[४] बकुसत्तणेहिं ।
पुव्वावरत्तेसु य निच्चकालं, संगिण्हते णं गणिणी स्थीणा[५] ॥

१५८९/१. जाता पितिवसा नारी, दिण्णा नारी पतिव्वसा ।
विहवा पुत्तवसा नारी, नत्थि नारी सयंवसा[६] ॥

१५९०. जातं पिय रक्खंती, माता-पिति-सासु-देवरादिण्णं[७] ।
पिति-भाति[८]-पुत्त-विहवं, गुरु-गणि-गणिणी य अज्जं पि ॥

१५९१. एगाणिया[९] अपुरिसा, सकवाडं[१०] परघरं तु नो पविसे ।
सगणे व[११] परगणे वा, पव्वतिया वी तिसंगहिता ॥

१५९२. आयरिय-उवज्झाया, सततं साहुस्स संगहो दुविहो ।
आयरिय-उवज्झाया, अज्जाण पवत्तिणी ततिया[१२] ॥

१५९३. 'बितियपदे सा'[१३] थेरी, जुण्णा गीता य[१४] जदि खलु भविज्जा ।
आयरियादी तिण्ह वि, असतीय न उद्दिसावेज्जा ॥

१५९४. नवतरुणो मेहुण्णं, कोई सेवेज्ज एस संबंधो ।
अब्बंभरक्खणादिव्व, संगहो एत्थ विसए व ॥

१५९५. अपरीयाए[१५] वि[१६] गणो, दिज्जति वुत्तं ति मा अतिपसंगा ।
सेवियमपुण्णपज्जय[१७], दाहिंति गणं[१८] अतो सुत्तं ॥

१५९६. दुविधो साविक्खितरो, निरवेक्खोदिण्ण[१९] जातऽणापुच्छा[२०] ।
जोगं च अकाऊणं, जो व स वेसादि[२१] सेवेज्जा ॥

१५९७. सावेक्खो उ उदिण्णो, आपुच्छ गुरुं तु सो जदि उवेहं ।
तो 'गुरुगा उ'[२२] भवंती, सो व अणापुच्छ जदि गच्छे ॥

---

१. करइ (स) ।
२. जे इति पादपूरणे (मवृ) ।
३. सदूरवदूरेहिं (अ, स), वड्डरघड्डरेहिं (ब) ।
४. ० विड्डा (ब), ०कीडा (स) ।
५. सव्वाण (ब) ।
६. इस गाथा के लिए सभी हस्तप्रतियों में 'इमा अन्नपरिवाडीए गाहा' का उल्लेख है। टीका में भी लोकेप्यपि स्त्रियस्त्रिविधं संग्रहमाह' का उल्लेख है। १५९० वीं गाथा इसी की संवादी है। इसलिए हमने इसे मूलगाथा के क्रम में नहीं रखा है।
७. देवराइन्नं (अ, स) ।
८. भाइ (ब), तात (अ) ।
९. एगाविया (स) ।
१०. सकव्वाड (ब) ।
११. इ (स) ।
१२. यह गाथा स प्रति में अनुपलब्ध है।
१३. बितिए एसा (ब) ।
१४. उ (ब) ।
१५. अपरिणयाए (अ), अपवियाए (स) ।
१६. व (ब) ।
१७. सेवय ० (अ), ० णपुव्वय (ब) ।
१८. x (ब) ।
१९. निरवेक्खो उदिण्णं य (ब) ।
२०. जात अणा० (स) ।
२१. देसादि (स) ।
२२. उ गुरुगा (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५९८. अधवा सइ[१] दो वा वी, आयरिए पुच्छ अकडजोगी वा ।
गुरुगा तिण्णि उ वारे[२], तम्हा पुच्छेज्ज आयरिए ॥

१५९९. बंधे य घाते य पमारणेसु[३], दंडेसु अन्नेसु य दारुणेसु ।
पमत्तमत्ते पुण चित्तहेउं, लोए व[४] पुच्छंति उ तिण्णि वारे ॥

१६००. आलोइयम्मि गुरुणा, तस्स तिगिच्छा[५] विधीय कायव्वा ।
निव्वीतिगमादीया, नायव्व कमेणिमेणं तु ॥नि. २६४॥

१६०१. 'निव्विति ओम तव वेय'[६], वेयावच्चे तधेव ठाणे य[७] ।
आहिंडणा य मंडलि, चोदगवयणं च कप्पट्ठी ॥नि. २६५॥

१६०२. एवं पि अठायंते, अद्धाणादेक्कमेक्क तिगवारा ।
वज्जेज्ज सच्चित्ते पुण, इमे उ ठाणे पयत्तेणं ॥

१६०३. सदेससिस्सिणि सज्झंतिया सिस्सिणि 'कुल-गणे'[८] य संघे य ।
कुलकन्नगा य[९] विधवा, वधुका[१०] य तधा सलिंगेण ॥

१६०४. लिंगम्मि उ चउभंगो, पढमे भंगम्मि होति चरमपदं ।
मूलं चउत्थभंगे, बितिए ततिए य भयणा उ[११] ॥

१६०५. सलिंगेण सलिंगे, सेवते[१२] चरिमं[१३] तु होति बोधव्वं ।
सलिंगेणऽन्नलिंगे[१४], देवी कुलकन्नगा[१५] चरिमं ॥

१६०६. नवमं तु अमच्चीए, विधवीय[१६] कुलच्चियाय मूलं तु ।
'परलिंगे य'[१७] सलिंगे, सेवंते होति भयणा उ[१८] ॥

१६०७. सदेससिस्सिणीए[१९], सज्झंती कुलच्चियाएँ[२०] चरमं तु ।
'नवमं गणच्चियाए'[२१], य संघच्चियाएँ मूलं तू ॥

१६०८. परलिंगेण परम्मि उ, मूलं अहवा वि होति भयणा उ ।
एतेसिं भंगाणं, जतणं वोच्छामि सेवाए ॥

१६०९. तत्थ तिगिच्छाय विही, निव्वितीयमादियं[२२] अतिक्कंते ।
उवभुत्तथेरसहितो, अद्धाणादीसु तो पच्छा ॥

---

१. सइं (स) ।
२. वारा (ब) ।
३. पमारणे य (ब, स) ।
४. वि (मु) ।
५. चिगि० (अ) ।
६. निव्वितोम तवे वेए (अ), निव्वितीय ओम० (ब) ।
७. उ (अ) ।
८. कुलमण्णे (अ), कुलग गणा (ब) ।
९. इ (अ) ।
१०. बहुगा (अ) ।
११. तू (अ) ।
१२. सेवेते (अ) ।
१३. चरमं (ब) ।
१४. सलिंग अन्नलिंगे (स) ।
१५. कुलकन्यकां वा गाथायां विभिक्तिलोपः प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
१६. विहविए (अ), विधव (ब) ।
१७. परलिंगेण (स) ।
१८. अ प्रति में गाथा का उत्तरार्ध नहीं है ।
१९. ०सिस्सेणीए (अ) ।
२०. कुलिच्चि० (स) ।
२१. x (अ) ।
२२. णितियमा० (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६१०. अट्ठाग सद्द हत्थे, अच्चित्ततिरिक्ख भंगदोच्चेणं ।
एग-दु-तिण्णि वारा[1], सुद्धस्स[2] उवट्ठिते[3] गुरुगा ॥

१६११. एमेव गणायरिए, निक्खिवणा 'नवरि तत्थ'[4] नाणत्तं ।
अयपालग[5]-सिरिघरिए, जावज्जीवं अणरिहा उ ॥

१६१२. अइयातो[6] रक्खंतो, अयवालो दट्ठु 'तित्थजत्ती उ'[7] ।
कहिं वच्चह[8] तित्थाणि, बेति अहगं[9] पि वच्चामि ॥

१६१३. छड्डेऊण[10] गतम्मी, सावज्जादीहि खइत-हित नट्ठा[11] ।
पच्चागतो व दिज्जति, न लभति य भतिं[12] न वि अयाओ[13] ॥

१६१४. एवं सिरिघरिए वी[14], एवं तु गणादिणो अणिक्खित्ते[15] ।
जावज्जीवं न लभति[16], तप्पत्तीयं गणं सो उ ॥

१६१५. जा[17] तिन्नि अठायंते[18], सावेक्खो वच्चते[19] उ परदेसं ।
तं चेव य ओधाणं[20], जं उज्झति दव्वलिंगं तु ॥

१६१६. एमेव बितियसुत्ते, 'बियभंगनिसेवियम्मि वि'[21] अठंते ।
ताधे पुणरवि नयती[22], निव्वीतियमादिणा विधिणा ॥

१६१७. 'जदि तह'[23] वी न उवसमे, ताधे जतती चउत्थभंगेणं ।
पुव्वुत्तेणं विधिणा, निग्गमणे नवरि[24] नाणत्तं ॥

१६१८. उम्मत्तो व पलवते, गतो व[25] आणेत्तु[26] बज्झते सिढिलं ।
भावित वसभा मा णं, बंधह[27] नासेज्ज मा दूरं ॥

---

१. दारा (मु) ।
२. समुद्धस्स (स) ।
३. गाथायां सप्तमी षष्ठ्यर्थे (मवृ) ।
४. नवरित्थ (अ) ।
५. अतिवालग (अ, ब) ।
६. अतियारो (अ) ।
७. ० जत्ता उ (ब), जत्तासु (अ) ।
८. वच्चहे (अ) ।
९. अहिगं (ब) ।
१०. रक्खेऊण (अ) ।
११. x (अ) ।
१२. भत्तिं (ब) ।
१३. अतातो (ब) ।
इस गाथा के बाद टीका की मुद्रित पुस्तक में निम्न गाथा भाग के क्रम में मिलती है—
कोई भईए अजाओ, रक्खति तेण अडवीएँ आया उ ।
चारयंतेण व रक्खंतेण, कप्पडियादी दिट्ठा ॥
यह गाथा सभी हस्तप्रतियों में नहीं है। विषयवस्तु की दृष्टि से भी यह यहां प्रासंगिक नहीं है क्योंकि कथा का सार गाथा १६१२-१६१३ इन दो गाथाओं में आ गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि टीका के गद्य भाग को ही पद्य के रूप में लिख दिया गया है। इसीलिए छंद की दृष्टि से भी यह असंगत है। टीका की गद्य भाग की कथा 'गगं संपट्ठिया तेण पुच्छिया', से प्रारम्भ होती है। इसे गद्य भाग में जोड़ देने से कथा सम्पूर्ण लगती है।
१४. x (अ, ब) ।
१५. व अक्खित्तो (ब) ।
१६. लभते (अ) ।
१७. जो (अ) ।
१८. अभायंते (स) ।
१९. पच्चते (अ) ।
२०. ओहावण (ब) ।
२१. बितिए भंगे वि सेवितम्मि उ (स) ।
२२. जायति (स) ।
२३. ततित तध (अ) ।
२४. x (अ) ।
२५. वि (अ) ।
२६. आणिंतु (ब) ।
२७. बंधइ (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६१९. गुरु आपुच्छ पलायण, 'पासुत्तमिगेसु अमुगदेसं ति'[१] ।
मग्गण वसभाऽदिट्ठे[२], भणंति मुक्का मु[३] सेसस्स[४] ॥

१६२०. विहरण वायण[५] खमणे, वेयावच्चे गिहत्थधम्मकथा ।
वज्जेज्ज समोसरणं, पडिवयमाणो हितट्ठीओ[६] ॥

१६२१. गंतूण अन्नदेसं, वज्जित्ता[७] पुव्ववण्णिते देसे[८] ।
लिंगविवेगं काउं, 'सड्ढि किढी'[९] पण्णवेत्ताणं ॥

१६२२. पण पण्णिगादि[१०] किड्डिसु[११], किंचि अदेंतो उ[१२] अहव अदसादी ।
अपया य अंतो छग्गुरु, बाहिं तू चउगुरु निसेगे ॥

१६२३. सपया अंतो मूलं, छेदो पुण होति बाहिरनिसेगे ।
अणुपुव्वि पडिसेवति, वज्जंत सदेसमादीओ[१३] ॥

१६२४. फासुयपडोयारेण, न यऽभिक्खनिसेव जाव छम्मासा ।
चउगुरु छम्मासाणं, परतो मूलं मुणेयव्वं ॥

१६२५. आगंतुं अन्नगणे, सोधिं[१४] काऊण वूढपच्छित्तो ।
सगणे गणमुब्भामे[१५], दरिसेती ताधि[१६] अप्पाणं ॥

१६२६. बेति य लज्जाए अहं, न तरामि गंतु गुरुसमीवम्मि[१७] ।
न य तत्थ जं कतं मे, निग्गमणं चेव सुमरामि ॥

१६२७. तेहि निवेदिएँ गुरुणो, गीता गंतूण आणयंति तयं ।
मिगपुरतो य[१८] खरंटण, वसभ निवारेंति मा भूतो ॥

१६२८. कत्थ गतो अणपुच्छा[१९], साधु किलिट्ठा तुमं विमग्गंता ।
मा णं अज्जो वंदह, तिण्णि उ वरिसाणि दंडो[२०] से ॥

१६२९. तिण्हं समाण पुरतो[२१], होतऽरिह[२२] पुणो वि[२३] निव्विकारो उ ।
जावज्जीवमणरिहा, इणमन्ने[२४] तू गणादीणं ॥

---

१. ० मिगेऽमुगदेसम्मि (अ)।
२. वसभा अदिट्ठे (अ, स)।
३. मो (मु)।
४. मोसस्स (स)।
५. वीयण (अ)।
६. हियट्ठाओ (ब)।
७. वज्जेंतो (अ), वज्जंतो (स)।
८. दोसे (ब)।
९. सन्निकढी (अ), ०कढी (स)।
१०. पण्ण० (स)।
११. किढिसु (ब)।
१२. वि (अ)।
१३. ०मादीतो (ब)।
१४. सोहि (ब)।
१५. ० सब्भामे (ब)।
१६. ताहे (मु)।
१७. ० समीवं तु (मु)।
१८. उ (मु)।
१९. अणा० (अ, स)।
२०. डंडो (स)।
२१. परतो (स)।
२२. होतेरिहो (ब)।
२३. x (ब)।
२४. अणमण्णे (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६३०. पढमोऽनिक्खित्तगणो[1], बितिओ पुण होति अकडजोगि त्ति ।
ततिओ जम्म[2] सदेसे, चउत्थ उ विहारभूमीए ॥

१६३१. पंचम निक्खित्तगणो, कडजोगी जो[3] भवे सदेसम्मि ।
जदि सेवंति[4] अकरणं, पंचण्ह वि[5] बाहिरा होंति ॥

१६३२. आयरियमादियाणं[6], पंचण्हं जज्जियं[7] अणरिहा उ[8] ।
चउगुरु य सत्तरत्तादि, जाव आरोवण धरेंतो ॥

१६३३. अधव[9] अणिक्खित्तगणादिएसु चउसुं पि सोलसउ भंगा ।
चरिमे[10] सुत्तनिवातो, जावज्जीव[11]ऽणरिहा[12] सेसा ॥

१६३४. वतअतिचारे पगते, अयमवि अण्णो य[13] तस्स अतियारो ।
इत्तिरियमपत्तं वा, वुत्तं इदमावकहियं[14] तु ॥

१६३५. अधवा एगधिगारो, उद्देसो ततियओ य[15] ववहारो ।
केरिसओ आयरिओ, ठाविज्जति केरिसो 'णे त्ति'[16] ॥

१६३६. अधवा दीवगमेतं, जध पडिसिद्धो अभिक्खमाइल्लो[17] ।
सागारिसेवि एवं, अभिक्खओधाणकारी[18] य ॥

१६३७. एगत्त - बहुत्ताणं[19], सव्वेसिं 'तेसि एगजातीणं'[20] ।
सुत्ताणं पिंडेणं[21], वोच्छं अत्थं समासेणं ॥

१६३८. एगत्तियसुत्तेसुं, भणिएसुं किं 'पुणो बहुग्गहणं'[22] ।
चोदग ! सुणसू[23] इणमो, जं कारण मो[24] बहुग्गहणं ॥

१६३९. लोगम्मि सतमवज्झं, होतमदंडं[25] सहस्स मा एवं[26] ।
होही[27] उत्तरियम्मि वि, सुत्ता उ कया बहुकए - वि ॥

---

१. ०अणिक्खित्त० (अ) ।
२. तस्स (ब) ।
३. जा (अ) ।
४. सेवंती (अ) ।
५. वी (मु) ।
६. ०दिवाणं (अ) ।
७. जज्जितं (अ) ।
८. व (ब) ।
९. x (अ) ।
१०. चरमे (मु) ।
११. अहरिहा (ब) ।
१२. अण० (स) ।
१३. उ (ब), व (स) ।
१४. इमावक ० (ब) ।
१५. तु (स) ।
१६. णित्ति (अ) ।
१७. ०मादिल्लो (अ) ।
१८. ०ओहाण० (स) ।
१९. पुहुत्ताणं (अ), पुहेत्ताणं (स) ।
२०. तेसिमेग ० (ब) ।
२१. पंडणं (ब) ।
२२. बहु पुणोग्गहणं (अ, ब) ।
२३. सुणेसु (ब) ।
२४. मो इति पादपूरणे (मवृ) ।
२५. होइ अदंडं (अ) ।
२६. एयं (अ) ।
२७. होहिति (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६४०. कुलगणसंघप्पत्तं, 'सच्चित्तादी उ'[1] कारणागाढं[2] ।
छिद्दाणि[3] निरिक्खंतो[4], मायी[5] तेणेव असुईओ[6] ॥

१६४१. दव्वे भावे असुई, भावे आहारवंदणादीहिं ।
कप्पं कुणति अकप्पं, विविहेहिं[7] य रागदोसेहिं ॥नि. २६६ ॥

१६४२. दव्वे भावे असुई, दव्वम्मी विट्ठमादिलित्तो[8] उ ।
पाणतिवायादीहि उ, भावम्मि उ होति असुईओ ॥

१६४३. तप्पत्तीयं तेसिं, आयरियादी न देंति जज्जीवं[9] ।
के पुण ते भिक्खु इमे, अबहुस्सुतमादिणो होंति ॥

१६४४. अबहुस्सुते य ओमे, पडिसेवते[10] अयतोऽप्पचिंते[11] य ।
निरवेक्ख-पमत्त माई, अणरिहे जुंगिते चेव[12] ॥नि. २६७ ॥

१६४५. अबहुस्सुतो पकप्पो, अणधीतोमो[13] तु तिवरिसारेणं ।
निक्कारणो वि भिक्खू[14], कारण 'पडिसेवओ जो उ'[15] ॥

१६४६. अब्भुज्जतनिच्छियओ[16] अप्पचिंतो निरवेक्खबालमादीसु ।
अन्नतरपमायजुतो[17], असच्चरुइ[18] होति माई तु ॥

१६४७. अवलक्खणा अणरिहा, अच्चाबाधादिया[19] य जे वुत्ता ।
चउरो य जुंगिता खलु, 'अच्चंति य'[20] भिक्खुणो एते[21] ॥

१६४८. अधवा जो आगाढं, वंदणआहारमादि संगहितो[22] ।
कप्पं कुणति अकप्पं, विविहेहि य रागदोसेहिं ॥

१६४९. मायी कुणति अकज्जं, को माई जो[23] भवे मुसावादी ।
को पुण मोसावादी, को असुई[24] पावसुतजीवी[25] ॥

१६५०. किह पुण कज्जमकज्जं, करेज्ज आहारमादिसंगहितो ।
जह कम्हिइ[26] नगरम्मी, उप्पण्णं संघकज्जं तु ॥

---

१. ० सादीसु (ब)।
२. कारणा आगाढं (ब)।
३. छिड्डाणि (ब, स)।
४. निरक्ख० (स)।
५. माती (अ, ब)।
६. असुतीओ (ब)।
७. विविकेहिं (ब)।
८. विट्ठिमा० (ब)।
९. जज्जीयं (स)।
१०. पडिसेवति (अ)।
११. आयतो० (ब), ०तो अणचिंते (स)।
१२. निर्युक्तिकृद्वाह (मव)।
१३. अधीतोमो (स)।
१४. भिक्खं (स)।
१५. ० सेवी व अजतो (स)।
१६. ० निच्छिति (अ), ०निच्छित्तो (अ)।
१७. ० जुतो (ब, स)।
१८. असच्चभूय (ब)।
१९. ० बाहादिया (अ)।
२०. अच्चंत य (ब)।
२१. एंतो (ब)।
२२. सगहिओ (ब)।
२३. जे (ब)।
२४. असुती (अ, ब)।
२५. ० जीवा (ब)।
२६. कम्हि (अ, स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६५१. बहुसुत-बहुपरिवारो, य आगतो तत्थ कोइ[१] आयरिओ ।
तेहि य नागरगेहिं, सो तु निउत्तो तु ववहारो[२] ॥

१६५२. नाएण छिण्ण ववहार, कुल-गण-संघेण कीरति पमाणं ।
तो सेविउं[३] पवत्ता[४], 'आहारादीहि य'[५] कज्जिया[६] ॥

१६५३. तो छिंदिउं पवत्तो[७], निस्साए तत्थ सो उ ववहारं ।
पच्चत्थीहिं[८] नायं[९], जह छिंदइ एस निस्साए ॥

१६५४. को णु हु हवेज्ज अन्नो, जो[१०] नाएणं नएज्ज[११] ववहारं ।
अध अन्नयसमवाओ, घुट्ठो वा तो[१२] य तत्थ विदू ॥

१६५५. घुट्ठम्मि[१३] संघकज्जे, धूलीजंघो 'वि जो'[१४] न एज्जाही[१५] ।
कुल-गण-संघसमाए, लग्गति गुरुगे चउम्मासे ॥

१६५६. 'जं काहिंति'[१६] अकज्जं, तं पावति सति बले अगच्छंतो ।
अन्नहि[१७] ताव ओधाणमादी[१८] जं कुज्ज तं पावे ॥

१६५७. तम्हा तु संघसद्दे, घुट्ठे[१९] गंतव्व धूलिजंघेणं ।
धूलीजंघनिमित्तं, •ववहारो उड्डितो[२०] सम्मं ॥

१६५८. तेण य सुतं[२१] जहेसो, तेल्ल-घतादीहि संगिहीतो उ ।
कज्जाइ[२२] नेइ वितधं, माई[२३] पावोवजीवी[२४] उ ॥

१६५९. सो आगतो उ संतो, वितधं दट्ठूण तत्थ ववहारं ।
समएण निवारेती[२५], कीस[२६] इमं कीरति अकज्जं ॥

१६६०. निद्ध-महुरं निवातं, विणीतमविजाणएसु जंपंतो ।
सच्चित्तखेत्तमीसे, अत्थधर[२७] निहोडणं[२८] विधिणा ॥

---

१. X (ब) ।
२. ब प्रति में गाथा का उत्तरार्ध नहीं है ।
३. सेवेउं (स) ।
४. पयत्ता (अ, स) ।
५. ०दीहिं (स) ।
६. गा. १६५२ से १६५४ तक की तीन गाथाएं ब प्रति में नहीं है ।
७. पयत्तो (अ, स) ।
८. ० थीहित ।
९. य णातिं (स) ।
१०. को (अ) ।
११. तु नेज्ज (आ), तु वेज्ज (स) ।
१२. आयो (अ, स) ।
१३. पुट्ठम्मि (ब) ।
१४. विज्जो (अ) ।
१५. एज्जाहि (ब) ।
१६. न कहिंति (मु) ।
१७. अण्णादी (अ) ।
१८. तोहाण ० (ब) ।
१९. पुट्ठे (अ) ।
२०. उवड्डितो (ब) ।
२१. सुत्तं (अ) ।
२२. कज्जाइं (ब) ।
२३. माती (ब), माया (स) ।
२४. पावोविज्जीवी (ब) ।
२५. निवारिंती (ब) ।
२६. कीसा (ब) ।
२७. अट्ठ० (ब) ।
२८. ० हणा (अ, स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६६१. एवं चेव य सुत्तं, उच्चारेउं दिसं[1] अवहरंति ।
अप्पावराह आउट्ट[2], दाण इतरे[3] तु जज्जीवं[4] ॥

१६६२. एवं[5] ताव[6] बहूसुं, मज्झत्थेसु[7] तु सो उ ववहरति ।
अह होज्ज बली[8] इतरो, तो बेति तु तत्थिमं वयणं ॥

१६६३. रागेण व दोसेण व, पक्खग्गहणेण एक्कमेक्कस्स ।
कज्जम्मि कीरमाणे, किं अच्छति संघमज्झत्थो ॥

१६६४. रागेण व दोसेण व, पक्खग्गहणेण एक्कमेक्कस्स ।
कज्जम्मि कीरमाणे, अण्णो वि[9] भणेउ[10] ता किंचि ॥

१६६५. बलवंतो सव्वं वा, भणाति अण्णो वि लभति को एत्थ[11] ।
वोत्तुं जुत्तमजुत्तं, उदाहु न वि लब्भतेऽण्णस्स ॥

१६६६. जदि बेंती 'लब्भते वि, वोत्तु तुमं'[12] जं तु जाणसी जुत्तं ।
तो अणुमाणेऊणं, बेति[13] तहिं नायतो सो उ ॥

१६६७. संघो महाणुभागो, अहं च वेदेसिओ इहं भयवं ।
संघसमितिं[14] न जाणे, तं भे[15] सव्वं खमावेमि ॥

१६६८. देसे देसे ठवणा[16],'अण्णऽण्णा अत्थ'[17] होति समितीणं ।
गीयत्थेहाइण्णा[18], अदेसिओ तं न जाणामि ॥

१६६९. अणुमाणेउं संघं, परिसग्गहणं करेति तो पच्छा ।
किह पुण गेण्हति परिसं, इमेणुवायेण्ण सो कुसलो ॥

१६७०. परिसा ववहारी या, मज्झत्था रागदोसनीहूया ।
जइ[19] होंति दो वि पक्खा, ववहरिउं तो सुहं होति ॥

१६७१. ओसन्नचरणकरणे, सच्चव्ववहारया दुसद्दहिया ।
चरणकरणं जहंतो, सच्चव्ववहारयं पि जहे ॥

१६७२. जइया णेणं चत्तं, अप्पणतो नाण-दंसण-चरित्तं ।
ताधे[20] तस्स परेसुं, अणुकंपा नत्थि जीवेसु ॥

---

१. दिसि (ब)।
२. आअट्ट (अ)।
३. इयरे उ इति सप्तमी षष्ठ्यर्थे (मवृ)।
४. जा जीवं (अ), जज्जीयं (स)।
५. एयं (अ), एतं (स)।
६. ततो (ब)।
७. x (ब)।
८. पली (स)।
९. य (ब)।
१०. भणाउ (अ)।
११. अत्थ (ब)।
१२. ते लब्भते ते वि तुमं (अ), लबत्ते ऊवेहि तुम (ब)।
१३. बिंति (ब)।
१४. ० समिति (ब), ० समितं (अ)।
१५. ते (ब)।
१६. x (ब)।
१७. अण्णण्णा (अ)।
१८. गीतार्थैराचीर्णा (मवृ)।
१९. जहिं (ब)।
२०. तइया (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६७३. भवसतसहस्सलद्धं, जिणवयणं भावतो जहंतस्स ।
जस्स न जातं दुक्खं, न तस्स दुक्खं परे दुहिते ॥

१६७४. आयारे वट्टंतो, आयारपरूवणा असंकियओ[१] ।
आयारपरिब्भट्ठो, सुद्धचरणदेसणे[२] भइओ ॥

१६७५. तित्थगरे भगवंते, जगजीववियाणए तिलोगगुरू ।
जो न करेति पमाणं, न सो पमाणं सुतधराणं ॥

१६७६. तित्थगरे भगवंते, जगजीववियाणए तिलोगगुरू ।
जो उ करेति पमाणं, सो उ पमाणं सुतधराणं ॥

१६७७. संघो गुणसंघातो, संघायविमोयगो य कम्माणं ।
रागद्दोसविमुक्को, होति समो सव्वजीवाणं ॥

१६७८. परिणामियबुद्धीए, उववेतो होति समणसंघो उ ।
कज्जे निच्छयकारी, सुपरिच्छियकारगो संघो ॥

१६७९. किह सुपरिच्छियकारी, एक्कसि दो तिण्णि वावि पेसविते ।
न वि उक्खिवए सहसा, को जाणति नागतो केणं ॥

१६८०. नाऊण परिभवेणं[३], नागच्छंते ततो उ निज्जुहणा ।
आउट्टे ववहारो, एवं सुविणिच्छकारी[४] उ ॥

१६८१. आसासो वीसासो, सीतघरसमो य होति मा भाहि ।
अम्मापितीसमाणो, संघो सरणं तु सव्वेसिं ॥नि. २६८ ॥

१६८२. सीसो पडिच्छओ वा, आयरिओ वा न सोग्गती[५] नेति[६] ।
जे सच्चकरणजोगा, ते संसारा विमोएंति ॥

१६८३. सीसो पडिच्छओ वा, आयरिओ वावि[७] एतें इहलोए ।
जे सच्चकरणजोगा, ते संसारा विमोएंति ॥

१६८४. सीसो पडिच्छओ वा, कुल-गण-संघो न 'सोग्गतिं नेति'[८] ।
जे सच्चकरणजोगा, ते संसारा विमोएंति ॥

१६८५. सीसो पडिच्छओ वा, कुल-गण-संघो व एतें इधलोए ।
जे सच्चकरणजोगा, ते संसारा विमोएंति[९] ॥

---

१. असंकेतो (अ)।
२. सुद्ध च० (अ)।
३. x (ब)।
४. सुविदिट्ठकारी (अ) सुगविट्ठकारी (ब)।
५. सोगती (अ)।
६. निंति (ब)।
७. x (ब)।
८. सोगतिं निंति (ब)।
९. यह गाथा ब प्रति में नहीं है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६८६. सीसे कुलव्विए 'व गणव्विय'[१] संघव्विए य समदरिसी ।
ववहारसंथवेसु य, सो सीतघरोवमो संघो ॥

१६८७. गिहिसंघातं जहितुं[२], संजमसंघातगं उवगए णं[३] ।
णाण-चरण-संघातं, संधायंतो[४] हवति संघो ॥

१६८८. नाण-चरणसंघातं, रागद्दोसेहि[५] जो विसंघाए ।
सो संघाते अबुहो, गिहिसंघातम्मि अप्पाणं[६] ॥

१६८९. नाण-चरणसंघातं, रागद्दोसेहि जो विसंघाते ।
सो भमिही संसारे, चउरंगंतं अणवदग्गं[७] ॥

१६९०. दुक्खेण लभति बोधिं, बुद्धो वि य न लभते चरित्तं[८] तु ।
उम्मग्गदेसणाए, तित्थगरासायणाए य[९] ॥

१६९१. उम्मग्गदेसणाए, संतस्स य छायणाय मग्गस्स ।
बंधति कम्मरयमलं, जरमरणमणंतकं[१०] घोरं ॥

१६९२. 'पंचविधं उवसंपय'[११], नाऊणं खेत्तकालपव्वज्जं ।
तो संघमज्झयारे, ववहरियव्वं अणिस्साए ॥नि. २६९ ॥

१६९३. उस्सुत्त ववहरंतो, 'तु वारितो'[१२] नेव होति ववहारो ।
बेति[१३] जदि बहुस्सुतेहि, कतो त्ति तो[१४] भण्णती इणमो ॥नि. २७० ॥

१६९४. तगराए नगरीए, एगायरियस्स पास[१५] निप्फण्णा[१६] ।
सोलस सीसा तेसिं, अव्ववहारी[१७] उ अट्ठ इमे ॥नि. २७१ ॥

१६९५. मा कित्ते कंकडुकं, कुणिमं पक्कुत्तरं च चव्वाइं[१८] ।
बहिरं च गुंठसमणं, अंबिलसमणं च निद्धम्मं ॥नि. २७२ ॥

१६९६. कंकडुओ विव मासो, सिद्धिं[१९] न उवेति जस्स[२०] ववहारो ।
कुणिम[२१] नहो व न सुज्झति, दुच्छेज्जो जस्स ववहारो ॥दारं ॥

---

१. गणिव्वए य (अ), X (ब) ।
२. जधितुं (अ) ।
३. णमिति वाक्यालंकारे (मवृ) ।
४. संघाततो (अ) ।
५. ० दोसेहि (अ) ।
६. मुद्रित टीका में इसका उत्तरार्ध इस प्रकार है—
अबुहो गिहि संघायम्मि, अप्पाणं मेलितो न सो संघो ।
७. अउयदग्गं (ब) ।
८. वण्णितं (ब) ।
९. ब प्रति में गाथा का उत्तरार्ध नहीं है ।
१०. ० मरणऽणंतयं (ब) ।
११. ० विध उवसंपया (अ) ।
१२. उवाणितो (ब) ।
१३. बिति (अ) ।
१४. णो (अ) ।
१५. फास (अ) ।
१६. निसण्णा (मवृ) ।
१७. अत्थवव० (ब) ।
१८. चव्वाती (ब) ।
१९. सद्धिं (अ) ।
२०. तस्स (ब) ।
२१. कुणिमा (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६९७. फलमिव पक्कं पडए, पक्कस्सऽहवा न गच्छते पागं ।
ववहारो तज्जोगा[1], ससिगुत्तसिरिव्व सन्नासे ॥दारं ॥

१६९८. पक्कुल्लोव्व[2] भया वा, कज्जं पि न सेसया[3] उदीरेंति ।
पाएण आहतो त्ति व, उत्तर सोवाहणेणं ति ॥

१६९९. रोमंथयते कज्जे, चव्वागी नीरसं च[4] विसनेत्तं ।
कहिते कहिते कज्जे, भणाति बधिरो व न सुतं मे ॥दारं ॥

१७००. मरहट्ठलाडपुच्छा, केरिसया लाडगुंठ साधिंसु[5] ।
पावार[6] भंडिछुभणं[7], दसिया गणणे[8] पुणो दाणं ॥

१७०१. गुंठाहि एवमादीहि, हरति मोहित्तु तं तु ववहारं ।
अंबफरिसेहि[9] अंबो, न ताणि[10] सिद्धिं[11] तु ववहारं ॥दारं ॥

१७०२. एते अकज्जकारी, तगराए आसि तम्मि 'उ जुगम्मि'[12] ।
जेहि कता ववहारा, खोडिज्जंतऽण्णरज्जेसु ॥

१७०३. इहलोए य अकित्ती, परलोए दुग्गती धुवा तेसिं ।
अणाणाय जिणिंदाण, जे ववहारं[13] ववहरंति ॥

१७०४. तेण न बहुस्सुतो वी, होति पमाणं अणायकारी[14] तु ।
नाएण ववहरंतो, होति पमाणं जहा उ इमे ॥

१७०५. कित्तेहि[15] पूसमित्तं, वीरं सिवकोट्ठगं[16] व अज्जासं[17] ।
अरहन्नग धम्मण्णग[18], खंदिल गोविंददत्तं च ॥

१७०६. एते उ कज्जकारी, तगराए आसि तम्मि उ जुगम्मि[19] ।
जेहि कया ववहारा, अक्खोभा अण्णरज्जेसु ॥

१७०७. इहलोगम्मि य कित्ती, परलोगे सोग्गती धुवा तेसिं ।
आणाएँ जिणिंदाणं, जे ववहारं ववहरंति ॥

१७०८. केरिसओ[20] ववहारी, आयरियस्स उ जुगप्पहाणस्स ।
जेण सगासेग्गहितं[21], परिवाडीहिं तिहि असेसं ॥नि. २७३ ॥

---

१. वा जोगा (अ)।
२. पक्कुल्ला व (ब)।
३. सेसयं (अ)।
४. व (अ)।
५. साहिंतु (अ)।
६. पावारे (ब)।
७. भंजि छु० (ब)।
८. गणिणे (अ, ब)।
९. ० फरुसेहि (अ)।
१०. णेति (अ, ब)।
११. सिद्धं (ब)।
१२. उज्जुगम्मि (ब)।
१३. ववहारी (अ)।
१४. ० कारि (अ)।
१५. किं तेहि (अ, ब)।
१६. ० कोट्ठकिं (अ)।
१७. अज्जासा (अ)।
१८. धम्मल्लग (ब)।
१९. जुगम्मि (अ)।
२०. केरिसितो (ब)।
२१. सकासे गहियं (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७०९. सूयपारायणं[१] पढमं, बितियं पदुब्भेदयं[२] ।
तइयं च निरवसेसं, जदि सुज्झति गाहगो[३] ॥नि. २७४॥

१७१०. 'गाहगआयरिओ ॐ,[४] पुच्छति सो जाणि विसमठाणाणि ।
जति निव्वहती तहियं, तिं[५] तस्स हिययं[६] ततो सुज्झे ॥

१७११. अहवा गाहगो सीसो, तिहिं[७] परिवाडीहि जेण[८] निस्सेसं ।
गहितं गुणितं अवधारितं च सो होति ववहारी ॥

१७१२. पारायणे समत्ते, थिरपरिवाडी पुणो उ[९] संविग्गे ।
जो निग्गतो वितिण्णो[१०], गुरुहिं सो होति ववहारी ॥

१७१३. पडिणीय-मंदधम्मो, जो निग्गतो अप्पणो सकम्मेहिं ।
न हु तं[११] होति पमाणं, असमत्तो देसनिग्गमणे[१२] ॥

१७१४. आयरियादेसऽवधारितेण अत्थेण गुणियक्खरिएण[१३] ।
तो संघमज्झयारे[१४], ववहरियव्वं अणिस्साए[१५] ॥

१७१५. आयरियअणादेसा, धारिय-सच्छंदबुद्धिरइएण[१६] ।
सच्चित्तखेत्तमीसे, जो ववहरते[१७] न सो धण्णो ॥

१७१६. सो अभिमुहेति लुद्धो[१८], संसारकडिल्लगम्मि अप्पाणं ।
उम्मग्गदेसणाए, तित्थगरासायणाए य[१९] ॥

१७१७. उम्मग्गदेसणाए[२०], संतस्स य छायणाय मग्गस्स ।
ववहरिउमचायंते, मासा चत्तारि भारीया[२१] ॥

१७१८. गारवरहितेण तहिं, ववहरियव्वं तु संघमज्झम्मि ।
को पुण गारव इणमो, परिवारादी[२२] मुणेयव्वो ॥

१७१९. परिवार-इड्ढि[२३] - धम्मकहि-वादि - खमगो[२४] तहेव नेमित्ती ।
विज्जा राइणियाए[२५], गारवो त्ति अट्ठहा होति[२६] ॥

---

१. मूलगपा० (अ), मूगपा० (ब) ।
२. पडुब्भे० (ब) ।
३. गाहातो (ब) ।
४. गाहगो उ आ० (अ) ।
५. x (ब) ।
६. हियउं (अ) ।
७. तहिं (अ), तिहं (ब) ।
८. जहिं (ब) ।
९. इ (ब), वि (अ) ।
१०. विदिण्णे (अ) ।
११. सो (ब) ।
१२. होति नि० (ब) ।
१३. गुणिवधारितेणं (अ) ।
१४. कारशब्दोऽत्र स्वरूपमात्रे संघमध्ये (मवृ) ।
१५. ० साणं (अ, ब) ।
१६. ० बुद्धिधारिएण स० (ब) ।
१७. ववहारए (ब) ।
१८. धण्णे (मवृ) ।
१९. x (ब) ।
२०. x (ब) ।
२१. हारिया (ब) ।
२२. ० रादि (अ, ब) ।
२३. वुड्ढी (ब) ।
२४. खमए (अ) ।
२५. रायणि० (अ) ।
२६. होंति (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७२०. बहुपरिवार-महिड्ढी, निक्खंतो वावि धम्मकहि[1] वादी ।
जदि गारवेण जंपेज्ज, अगीतो[2] भण्णती इणमो ॥

१७२१. जत्थ उ परिवारेणं, पयोयणं[3] तत्थ भणिहह तुज्झे[4] ।
इड्ढीमंतेसु तधा, धम्मकहा[5] वादिकज्जे वा ॥

१७२२. पवयणकज्जे खमगो[6], नेमित्ती[7] चेव विज्जसिद्धे य[8] ।
रायणिए वंदणगं, जहि दायव्वं तहि भणेज्जा ॥

१७२३. न हु गारवेण सक्का, ववहरिउं संघमज्झयारम्मि ।
नासेति[9] अगीतत्थो, अप्पाणं चेव कज्जं तु[10] ॥

१७२४. नासेति[11] अगीयत्थो, चउरंगं सव्वलोएँ सारंगं ।
नट्ठम्मि[12] उ चउरंगे, न हु सुलभं होति चउरंगं ॥

१७२५. थिरपरिवाडीएहिं, संविग्गेहिं अणिस्सियकरेहिं ।
कज्जेसु जंपियव्वं, अणुयोगियगंधहत्थीहिं ॥

१७२६. एयगुणसंपउत्तो, ववहरती संघमज्झयारम्मि ।
एयगुणविप्पमुक्के[13], • आसायण सुमहती होति ॥

१७२७. आगाढमुसावादी, बितिय तईए[14] य[15] लोवितवते[16] तु ।
माई य पावजीवी, असुईलित्ते[17] कणगदंडे ॥

इति तृतीय उद्देशक

---

१. धम्मिकधि (ब)।
२. गीतो (अ)।
३. ० यणं तु (ब)।
४. मुज्झे (ब)।
५. x (ब)।
६. खमणा (अ)।
७. निमित्ती (अ, ब)।
८. या (अ)।
९. नासिति (ब)।
१०. च (ब)।
११. नासे य (ब)।
१२. नेट्ठम्मि (ब)।
१३. ० विप्पहूणो (अ, ब)।
१४. ततिए (अ)।
१५. उ (ब)।
१६. लोइय ० (अ)।
१७. असुइलित्ते (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चतुर्थ उद्देशक

१७२८. एतद्दोसविमुक्को, होति गणी भावतो पलिच्छन्नो ।
दव्वपलिच्छागस्स उ, परिमाणट्ठा इमं सुत्तं ॥

१७२९. आदिमसुत्ते दोण्णि वि, भणिया ततियस्स इह पुणं तेसिं ।
कालविभागविसेसो, कत्थ दुवे कत्थ वा तिण्णि ॥

१७३०. पारायणे समत्ते, व[1] निग्गतो अत्थतो भवे जोगो ।
बहुकायव्वे[2] गच्छे, एगेण समं बहिं ठाति ॥

१७३१. पणगो व सत्तगो वा, कालदुवे खलु जहण्णतो गच्छो ।
'बत्तीसती सहस्सो'[3], उक्कोसो सेसओ मज्झो ॥

१७३२. उडुवासे[4] लहु लहुगा, एते गीते अगीत गुरु[5] गुरुगा ।
अकयसुताण बहूण वि, लहुओ लहुया वसंताणं ॥

१७३३. एवं सुत्तविरोहो, अत्थे वा उभयतो भवे दोसो ।
कारणियं[6] पुण सुत्तं, इमे य तहिं कारणा होंति ॥

१७३४. संघयणे[7] वाउलणा, नवमे पुव्वम्मि गमणमसिवादी ।
सागर जाते जयणा, उडुबद्धाऽऽलोयणा भणिता ॥नि. २७५ ॥

१७३५. आयरिय-उवज्झाया, संघयणा[8] धितिय[9] 'जे उ'[10] उववेया ।
सुत्तं अत्थो व[11] बहुं, गहितो गच्छे य वाघातो ॥

१७३६. 'धम्मकहि महिड्ढीए'[12], आवास-निसीहिया य आलोए ।
पडिपुच्छवादिगहणे, रोगी[13] तह[14] दुल्लभं भिक्खं ॥

१७३७. वाउलणे सा भणिता, जह उद्देसम्मि पंचमे कप्पे ।
नवम 'दसमा उ'[15] पुव्वा, अभिणवगहिया उ नासेज्जा ॥दारं ॥

---

१. वि (अ) ।
२. पिहु काय० (ब) ।
३. बत्तीसा य सह० (अ) ।
४. उउ० (ब) सर्वत्र ।
५. x (ब) ।
६. कारिणियं (ब) ।
७. ० यणा (अ) ।
८. ० यण (अ) ।
९. धियाय (ब)
१०. ते य (अ) ।
११. य (अ, ब) ।
१२. धम्मकहिड्डीए (ब) ।
१३. रोगि (अ) ।
१४. मह (ब) ।
१५. दसातो (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७३८. असिवादिकारणेणं[1], उम्मुगणायं ति[2] होज्ज जा दोण्णि ।
सागरसरिसं नवमं, अतिसयनयभंगगुविलत्ता[3] ॥

१७३९. पाहुडविज्जातिसया[4], निमित्तमादी सुहं च पतिरिक्के ।
छेदसुतम्मि व[5] गुणणा[6], 'अगीतबहुलम्मि गच्छम्मि'[7] ॥

१७४०. कयकरणिज्जा थेरा, सुत्तत्थविसारया सुतरहस्सा ।
जे य समत्था वोढुं, कालगताणं उवहिदेहं ॥

१७४१. एय गुणसंपउत्ता, कारणजातेण ते दुयग्गा वि ।
उउबद्धम्मि विहारो, एरिसयाणं अणुण्णातो ॥दारं ॥

१७४२. जातो य अजातो वा, दुविधो कप्पो उ होति[8] नायव्वो ।
एक्केक्को वि य दुविहो, समत्तकप्पो य असमत्तो ॥दारं ॥

१७४३. गीतत्थो जातकप्पो, अगीतो खलु भवे अजातो उ ।
पणगं समत्तकप्पो, तदूणगो होति असमत्तो ॥दारं ॥

१७४४. अहवा जातसमत्तो, जातो[9] चेव उ[10] तहेव असमत्तो ।
अज्जातो य समत्तो, अज्जातो चेव असमत्तो ॥दारं ॥

१७४५. तेसिं जयणा इणमो, भिक्खग्गगह[11] निक्खमप्पवेसे[12] य ।
अणुण्णवणं पि य समगं, बेंति य गिहि देज्ज ओधाणं[13] ॥

१७४६. उडुबद्धे[14] अविरहितं, एतं जं तेहि[15] होति साधूहिं ।
कारेंति कुणति व सयं, गणी वि आलोयणमभिक्खं ॥दारं ॥

१७४७. एतेहि कारणेहिं, हेमंते गिंसु अप्पबीयाणं ।
धितिदेहमकंपाणं[16], कप्पति वासो दुवेण्हं पि ॥नि. २७६ ॥

१७४८. नियमा होति असुण्णा[17], वसधी नयणे[18] य वण्णिता दोसा ।
'दुस्संचर बहुपाणा'[19], वासावासे वि उच्छेदो[20] ॥

---

१. ० णेहिं (मु) ।
२. य (ब) ।
३. ० भंग गहणत्ता (ब) ।
४. ० घिज्जातीया (अ, ब) ।
५. वि (ब) ।
६. गणणा (ब) ।
७. गाथायां सप्तमी षष्ट्यर्थे (मवृ) ।
८. होंति (ब) ।
९. x (ब) ।
१०. व (ब) ।
११. ० गहा (अ) ।
१२. निग्गमप्प० (अ, ब) ।
१३. वोधाणं (ब), उपधानं (मवृ) ।
१४. उदु० (अ)
१५. वेहि (ब)
१६. धीतिदेहमकंपं (ब) ।
१७. मसुण्णा (अ), x (ब) ।
१८. न य मे (ब) ।
१९. णिस्संचरपहु० (अ) ।
२०. तोच्छेदो (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७४९. वासाण दोण्ह लहुगा, आणादिविराधणा वसधिमादी ।
संथारग उवगरणे[1], गेलण्णे सल्लमरणे य ॥दारं ॥नि. २७७ ॥

१७५०. सुण्णं मोत्तुं वसहिं[2], भिक्खादी कारणओ जदि दो वि ।
वच्चंत ततो[3] दोसा, गोणादीया हवंति इमे ॥

१७५१. गोणे साणे छगले[4], सूगर[5]-महिसे[6] तहेव परिकम्मे ।
मिच्छत्तबडुगमादी, अच्छते सलिंगमादीणि ॥नि. २७८ ॥

१७५२. गोणादीय पविट्ठे, धाडंतमधाडणे[7] भवे लहुगा ।
अधिकरणवसधिभंगा, तह पवयण-संजमे दोसा ॥

१७५३. दुक्खं ठितेसु वसधी, परिकम्मं कीरति त्ति इति नाउं ।
भिक्खादिनिग्गतेसुं, सअट्ठमीसं विमं कुज्जा ॥

१७५४. उच्छेव बिलट्ठगणे[8], भूमीकम्मे समज्जणाऽऽमज्जे ।
कुड्डाण लिंपणं दूमणं, च एयं तु परिकम्मं ॥

१७५५. जदि[9] ढक्किंतोच्छेवा[10], तति मास बिलेसु[11] 'गुरुग सुद्धेसु'[12] ।
पंचेदियउद्दाते, एग-दुग-तिगे उ मूलादी ॥

१७५६. भूमीकम्मादीसु उ, फासुगदेसे[13] उ होति मासलहू ।
सव्वम्मि लहुगा अफासुएण देसम्मि सव्वे य ॥दारं ॥

१७५७. सोच्चा गत[14] त्ति लहुगा, अप्पत्तिय गुरुग जं च वोच्छेदो ।
बडु-चारण-भडमरणे, पाहुण निक्केयणा सुण्णे ॥दारं ॥

१७५८. अह चिट्ठति तत्थेगो, एगो हिंडति य उभयहा दोसा ।
सल्लिंगसेवणादी, आउत्थ परे[15] उभयतो वा ॥

१७५९. सुण्णे सगारि दट्ठुं, संथारे[16] पुच्छ कत्थ समणा उ ।
सोउं गय त्ति लहुगा, अप्पत्तिय छेद चउगुरुगा ॥

१७६०. कप्पट्ठग संथारे, खेलणं[17] लहुगो तुवट्ट गुरुगो उ ।
नयणे दहणे चउलहु, एत्तो उ महल्लए वोच्छं ॥

---

१. ० रणं (अ)।
२. वसही (अ)।
३. तो (ब)।
४. छगणा (ब)।
५. सूगरे (ब)।
६. x (अ)।
७. धाडिंत० (अ)।
८. बिलच्छगणे (अ)।
९. जेइ (ब)।
१०. ढक्केतो० (अ)।
११. तिलेसु (अ)।
१२. गुरुगमुच्चेसु (अ)।
१३. ० दोसे (अ)।
१४. गति (अ)।
१५. परे य (अ)।
१६. सप्तमी प्राकृतत्वात् द्वितीयार्थे (मवृ)।
१७. खेलणु (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७६१. तुवट्ट नयणे दहणे[१], लहुगा गुरुगा हवंतऽणायारे ।
अह उवहम्मति उवधि, त्ति घेत्तुं[२] हिंडति मासलहू ॥दारं ॥

१७६२. उल्ले लहुग गिलाणादिगा य सुण्णे ठवेंति चउलहुगा ।
अणरक्खितोवहम्मति, हडे व पावेंति जं जत्थ ॥दारं ॥

१७६३. गेलण्णमरणसल्ला, बितिउद्देसम्मि वण्णिता पुव्वं[३] ।
ते चेव निरवसेसा, नवरं[४] इह इं[५] तु बितियपदं ॥दारं ॥

१७६४. असिवादिकारणेहिं, अहवा फिडिता उ खेत्तसंकमणे[६] ।
तत्तियमेत्ता व भवे, दोण्हं वासासु 'जयण इमा'[७] ॥

१७६५. एगो रक्खति वसधिं, भिक्ख वियारादि बितियतो याति[८] ।
संथरमाणेऽसंथर, निद्दोस्सुवरिं ठवित्तुवहिं[९] ॥

१७६६. सुत्तेणेवुद्धारो, कारणियं तं तु होंति सुत्तं ति ।
कप्पो त्ति अणुण्णातो, वासाणं[१०] केरिसे खेत्ते ॥

१७६७. महती वियारभूमी, विहारभूमी य सुलभवित्ती य[११] ।
सुलभा वसही य जहिं, जहण्णयं वासखेत्तं तु ॥नि० २७९ ॥

१७६८. चिक्खल्ल पाण थंडिल, वसधी-गोरस-जणाउलो वेज्जो ।
ओसधनिययाऽहिवती[१२], पासंडा भिक्ख-सज्झाए[१३] ॥नि० २८० ॥

१७६९. पाणा थंडिल वसधी, अधिपति[१४] पासंड भिक्ख-सज्झाए ।
लहुगा सेसे लहुगो, केसिंची[१५] सव्वहिं लहुगा ॥

१७७०. नीसिरण[१६] कुच्छणागार, कंटका सिग्ग[१७] आयभेदो[१८] य ।
संजमतो पाणादी, आगाह निमज्जणादीया[१९] ॥

१७७१. धुवणे[२०] वि होंति[२१] दोसा, उप्पीलणादि[२२] य बाउसत्तं च ।
सेधादीणमवण्णा[२३], अधोवणे[२४] चीरनासो वा ॥दारं ॥

---

१. डहणे (अ) ।
२. घेत्तुं णं (ब) ।
३. पुव्विं (स) ।
४. नवर (ब) ।
५. इकारः पादपूरणे (मवृ) ।
६. x (ब) ।
७. जयणयमो (ब), जइणमो (अ) ।
८. जाति (अ) ।
९. ० वही (ब) ।
१०. गाथायां षष्ठी सप्तम्यर्थे (मवृ) ।
११. या (ब) ।
१२. ० निवया० (अ) ।
१३. मज्झाए (अ) ।
१४. अहिवति (ब), अहिए य (ब) ।
१५. केसिं वा (ब) ।
१६. नीसिरणं (ब), निसि (स) ।
१७. सिज्ज (अ), सिग्ग त्ति देशीपदमेतत् परिश्रम इत्यर्थः (मवृ) ।
१८. ताय ० (ब) ।
१९. निमज्जणे सीया (अ) ।
२०. धुवणा (ब) ।
२१. x (अ) ।
२२. ० णादी (स) ।
२३. ० दीण अवण्णा (अ, स) ।
२४. अहोवणो (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७७२. मूइंगविच्छुगादिसु[1], दो दोसा संजमे य सेसेसु ।
नियमा दोस दुगुंछिय[2], अथंडिल निसग्ग धरणे[3] य ॥दारं ॥

१७७३. वसहीय संकुडाए[4], विरल्ल[5] अविरल्लणे भवे[6] दोसा ।
वाघातेण व अण्णाऽसतीय दोसा उ वच्चंते ॥दारं ॥

१७७४. अतरंत बालवुड्ढा, अभाविता[7] चेव गोरसस्सऽसती[8] ।
जं पाविहिंति दोसं, आहारमएसु पाणेसु ॥

१७७५. नणु भणिय रसच्चाओ, पणीयरसभोयणे य[9] दोसा उ ।
किं गोरसेण भंते !, भण्णति सुण चोयग ! इमं तु ॥

१७७६. कामं तु रसच्चागो, चतुत्थमंगं तु बाहिरतवस्स ।
सो पुण सहूण जुज्जति, असहूण य[10] सज्जवावत्ती[11] ॥

१७७७. अगिलाय तवोकम्मं, परक्कमे संजतो त्ति इति वुत्तं ।
तम्हा[12] उ रसच्चाओ, नियमातो होति सव्वस्स ॥

१७७८. जस्स उ सरीरजवणा, रिते[13] पणीयं[14] न होति साहुस्स ।
सो वि य[15] हु भिण्णपिंडं, भुंजउ अहवा जधसमाधी ॥दारं ॥

१७७९. चउभंगो अजणाउल[16], कुलाउले चेव ततियतो भंगो ।
भोइयमादि जणाउल, कुलाउलमडंबमादीसु ॥

१७८०. वेज्जस्स ओसधस्स व, असतीय गिलाणतो व जं पावे ।
'वेज्जसगासे नितो, आणेंतो'[17] चेव जे दोसा ॥दारं ॥

१७८१. नेचइया[18] पुण धन्नं, दलंति 'असारा य अंचितादीसु'[19] ।
अधिवम्मि होति रक्खा, निरंकुसेसुं[20] बहू दोसा ॥दारं ॥

१७८२. पासंडभावितेसुं[21], लभंति ओमाण मो अतिबहूसु ।
अवि य विसेसुवलद्धी, हवंति कज्जेसु उ[22] सहाया ॥दारं ॥

---

१. मूतिंग० (अ)।
२. दुगुच्छिय (अ, स)
३. वरणे (अ, ब, स)।
४. संकडाए (ब)।
५. x (ब)।
६. भवे य (ब)।
७. सभाविता (स)।
८. ०सस्स असती (ब)।
९. तु (स)।
१०. तु (स)।
११. ० वावत्ति (ब)।
१२. अम्हा (अ)।
१३. रुते (ब)।
१४. पणीए (ब)।
१५. व (ब)।
१६. उ जणा० (अ)।
१७. ०समाण णंते आणेते (अ)।
१८. निवईया (अ), नेवतिया (ब)।
१९. आसार अंछिता० (स)।
२०. ०सेसू (स)।
२१. गाथायं सप्तमी पंचम्यर्थे (मवृ)।
२२. व (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७८३. नाण-तवाण विवड्ढी, गच्छस्स य संपया सुलभभिक्खे[१] ।
न य एसणाय घातो, नेव य ठवणाय भंगो उ ॥दारं ॥

१७८४. वायंतस्स उ पणगं, पणगं च[२] पडिच्छतो[३] भवे सुत्तं ।
एगग्गं[४] बहुमाणो, कित्ती य गुणा य सज्झाए ॥दारं ॥

१७८५. संगहुवग्गहनिज्जर,[५] सुतपज्जवजायमव्ववच्छित्ती[६] ।
पणगमिणं पुव्वुत्तं, जे चायहितोपलंभादी[७] ॥नि. २८१ ॥

१७८६. एवं ठिताण पालो, आयरिओ सेस मासियं लहुयं ।
कप्पट्ठिनीलकेसी[८], आयसमुत्था परे उभए ॥

१७८७. तरुणे वसहीपाले, कप्पट्ठिसलिंगमादि आउभया[९] ।
दोसा उ पसज्जंती[१०], अकप्पिए दोसिमे अण्णे[११] ॥

१७८८. बलि धम्मकहा किड्डा, पमज्जणा वरिसणा य पाहुडिया ।
खंधार अगणिभंगे, मालवतेणा य णाती य[१२] ॥

१७८९. तम्हा पालेति[१३] गुरू[१४], पुव्वं काऊण सरीरचिंतं तु ।
इहरा आउवधीणं, विराधण धरेंतमधरेंते ॥

१७९०. जदि संघाडो तिण्ह वि, पज्जत्ताणीति[१५] तो गुरु न नीति ।
अह न वि आणे[१६] ताहे, वसधी आलोग हिंडणया ॥

१७९१. आसण्णेसुं गेण्हंति, जत्तियमेत्तेण होति पज्जत्तं ।
जावइए 'णं ऊणं'[१७], इतराणीयं तु तं गिण्हे ॥

१७९२. सव्वे वप्पाहारा, भवंति गेलण्णमादि दोसभया ।
एवं जतंति तहियं, वासावासे वसंता उ ॥

१७९२/१. एमेव य गणवच्छे, अप्पचउत्थस्स होति वासासु ।
नवरं दो चिट्ठंति, दो हिंडित संथरे इयरे[१८] ॥

---

१. ०भिक्खा (स) ।
२. x (ब) ।
३. परिच्छतो (स) ।
४. एगत्तं (अ) ।
५. ० ग्गहा नि० (अ) ।
६. ० पज्जव साय० (ब) ।
७. वातहितो ० (ब) ।
८. कप्पट्ठीनी० (स) ।
९. x (ब) ।
१०. उप्पज्जति (ब) ।
११. यत्ते (अ) ।
१२. या (अ) ।
१३. पालेयति (ब) ।
१४. गुरुं (अ) ।
१५. ० त्ताणेंति (स) ।
१६. याणे (अ) ।
१७. ण व ऊणा (स) ।
१८. यह गाथा केवल ब प्रति में प्राप्त है । टीका में यह गाथा अप्राप्त है । विषयवस्तु की दृष्टि से भी यह यहां प्रासंगिक प्रतीत नहीं होती ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७९३. इति पत्तेया सुत्ता[१], पिंडगसुत्ता[२] इमे पुण गुरूणं ।
दुप्पभिई[३] तिप्पभिई[४], बहुत्तमिह[५] मग्गणा खेत्ते ॥

१७९४. हेट्ठा दोण्ह विहारो, भणितो किं पुण इयाणि[६] बहुयाणं[७] ।
एगक्खेत्तठिताणं, तु मग्गणा खेत्त[८] अक्खेत्ते ॥

१७९५. उडुबद्धसमत्ताणं[९], उग्गह एग दुग पिंडियाणं पि ।
साधारणपत्तेगे, संकमति पडिच्छए पुच्छा[१०] ॥नि. २८२॥

१७९६. अप्पबितियप्पततिया[११], ठिताण खेत्तेसु दोसु दोण्हं तु ।
उडुबद्ध होति खेत्तं[१२], गमणागमणं जतो अत्थि ॥नि. २८३॥

१७९७. खेत्तनिमित्तं सुहदुक्खतो व सुत्तत्थकारणे वावि ।
असमत्ते उवसंपय, समत्त सुहदुक्खयं मोत्तुं ॥नि. २८४॥

१७९८. पडिभग्गेसु मतेसु व, असिवादी कारणेसु फिडिता वा ।
एतेण तु एगागी, असमत्ता[१३] वा भवे थेरा[१४] ॥नि. २८५॥

१७९९. एग-दुगपिंडिता वि हु, लभंति अण्णोण्णनिस्सिया खेत्तं ।
असमत्ता बहुया वि हु, न लभंति अणिस्सिया खेत्तं ॥

१८००. जदि पुण समत्तकप्पो, दुहा ठितो तत्थ होज्ज चउरन्ने ।
चउरो वि अप्पभूते, लभंति दो ते इतरनिस्सा ॥

१८०१. एगागिस्स उ दोसा, असमत्ताणं च तेण थेरेहिं ।
एस ठविता उ मेरा, इति व[१५] हु मा होज्ज एगागी ॥

१८०२. दोमादि ठिता साधारणम्मि सुत्तत्थकारणा एक्कं[१६] ।
जदि तं उवसंपज्जे, पुव्वठिता वावि संकंतं ॥

१८०३. पुच्छाहि तीहि दिवसं, सत्तहि पुच्छाहि मासियं हरति ।
अक्खेत्तुवस्सए पुच्छमाण[१७] दूरावलिय मासो ॥नि. २८६॥

१८०४. ण्हाणऽणुयाण[१८] अद्धाण, सीसे कुल 'गण चउक्क संघे य'[१९] ।
गामादिवाणमंतर, महे व उज्जाणमादीसु ॥

---

१. सुत्तादि (ब) ।
२. x (अ) ।
३,४. ० भितिं (अ) ।
५. बहुमिह (ब) ।
६. इहाणि (स) ।
७. बहुयराणं (अ) ।
८. x (अ) ।
९. उउ० (ब) ।
१०. निर्युक्तिकृत् सविस्तरमाह (मवृ) ।
११. ० यप्पतियाइ (ब) ।
१२. खेते (ब) ।
१३. असमत्था (स) ।
१४. १७९७-९८ ये दोनों गाथाएं ब प्रति में नहीं हैं ।
१५. वि (ब) ।
१६. एक्क य (ब) ।
१७. ० माणा (स) ।
१८. ० हाणाणुजाण (ब) ।
१९. गणे व चउक्के या (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८०५. इंदक्कील[1] मणोग्गाह, जत्थ[2] राया जहिं व पंच इमे ।
अमच्च-पुरोहिय-सेट्ठि, सेणावति-सत्थवाहो य ॥

१८०६. पुप्फावकिण्ण मंडलियावलिय उवस्सया[3] भवे तिविधा ।
जो[4] अब्भासे तस्स उ, दूरे कहंत[5] न लभे मासो ॥

१८०७. किह पुण साहेयव्वा, उद्दिसियव्वा[6] जहक्कमं सव्वे[7] ।
अध पुच्छति संविग्गे, 'तत्थ व'[8] 'सव्वे व'[9] अद्धा वा ॥

१८०८. मोत्तूण असंविग्गे, जे जहियं ते उ[10] साहती[11] सव्वे ।
सिद्धम्मि जेसि पासं, गच्छति तेसिं न अन्नेसिं ॥

१८०९. नीयल्लगाण[12] व भया, हिरिव त्ति असंजमाधिकारे वा ।
एमेव देसरज्जे, गामेसु य पुच्छकधणं तु ॥

१८१०. अहवा वि अण्णदेसं, संपट्ठियगं[13] तगं मुणेऊणं[14] ।
'माया-नियडिपधाणो[15]', विप्परिणामो इमेहिं तु ॥

१८११. चेइय साधू वसही, वेज्जा व न संति[16] तम्मि देसम्मि ।
पडिणीय सण्णि * साणे, विहारखेत्ताऽहिगो मग्गो ॥नि. २८७ ॥

१८१२. वंदण पुच्छा कहणं, अमुगं देसं वयामि पव्वइउं ।
नत्थि तहिं चेइयाइं, दंसणसोधी जतो हुज्जा ॥

१८१३. 'पूया उ'[17] दट्ठुं जगबंधवाणं, साहू विचित्ता समुवेंति तत्थ ।
चागं च दट्ठूण उवासगाणं, सेहस्स 'वी थिरइ'[18] धम्मसद्धा ॥दारं ॥

१८१४. न संति साहू तहियं विवित्ता, ओसण्णकिण्णो[19] खलु सो कुदेसो ।
संसग्गिहज्जम्मि[20] इमम्मि लोए, सा भावणा तुज्झ[21] वि मा भवेज्जा ॥

१८१५. सेज्जा न संती[22] अहवेसणिज्जा इत्थी पसू-पंडगमादिकिण्णा * ।
आउत्थमादीसु[23] य तासु निच्चं, ठायंतगाणं[24] चरणं न सुज्झे ॥दारं ॥

---

१. इंदक्खील (ब) ।
२. जत्थ य (अ) ।
३. उवस्सग (ब) ।
४. जे (ब) ।
५. कहंतो (स) ।
६. x (ब) ।
७. किं नु (अ) ।
८. तत्थेव (ब) ।
९. x (ब) ।
१०. य (अ) ।
११. साहयंती (अ) ।
१२. नियः (ब) ।
१३. संपच्छि० (अ, स) ।
१४. तु णाऊणं (अ, स) ।
१५. माय नियडिप्पहाणो (ब, स) ।
१६. संत (स) ।
१७. पूयातो (ब) ।
१८. वित्थारति (ब), वितिथि ० (अ, स) ।
१९. उस्स० (स) ।
२०. संसग्गितज्ज० (अ), संसग्गभज्ज० (स) ।
२१. तुब्भ (स) ।
२२. संति (ब) ।
२३. आतित्थ० (ब), आउत्थि० (अ, स) ।
२४. ठावंत० (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८१६. वेज्जा तहिं नत्थि तहोसहाइं, लोगो य पाएण सपच्चणीओ ।
दाणादि सण्णी य तहिं न संती, साणेहि किण्णो सह[1] लूसएहिं ॥दारं ॥

१८१७. अणूवदेसम्मि[2] वियारभूमी, विहारखेत्ताणि[3] य तत्थ नत्थी ।
साहूसु आसण्णठितेसु तुज्झं[4], को दूरमग्गेण मडप्फरो ते[5] ॥

१८१८. 'वासासुं अमणुण्णा'[6], असमत्ता 'जे ठिता'[7] भवे वीसुं ।
तेसिं न होति खेत्तं, अह पुण समणुण्णय करेंति ॥नि. २८८ ॥

१८१९. तो तेसिं होति खेत्तं, को उ पभू तेसि जो उ रायणिओ ।
लाभो पुण जो तत्था, सो सव्वेसिं तु सामण्णो[8] ॥नि. २८९ ॥

१८२०. अहव[9] जइ वीसु वीसुं, ठिता उ असमत्तकप्पिया[10] होज्जा ।
अण्णो समत्तकप्पी, एज्जाही तस्स तं[11] खेत्तं ॥

१८२१. अहवा दोण्णि व तिण्णि व[12], समगं पत्ता समत्तकप्पी उ ।
सव्वेसिं तो तेसिं, तं खेत्तं होति साधरणं[13] ॥

१८२२. अपुण्णकप्पो व दुवे तओ वा, जं काल[14] कुज्जा समणुण्णयं तु ।
तक्कालपत्तो[15] य समत्तकप्पो, साधारणं तं पि हु तेसि खेत्तं ॥

१८२३. साधारणट्ठिताणं, जो भासति तस्स तं भवति खेत्तं ।
वारग तद्दिण पोरिसि, मुहुत्त भासे उ जो ताहे[16] ॥

१८२४. आवलिया मंडलिया, घोडग कंडूइतए[17] व भासेज्जा ।
सुत्तं भासंति सामाइयादि जा अट्ठसीतिं[18] तु ॥नि. २९० ॥

१८२५. सुत्ते जहुत्तरं[19] खलु, बलिया जा होति दिट्ठिवाओ त्ति ।
अत्थे[20] वि होति एवं, छेदसुतत्थं नवरि मोत्तुं ॥नि. २९१ ॥

१८२६. एमेव मीसगम्मि वि, सुत्ताओ बलवगो पगासो उ ।
पुव्वगतं खलु बलियं, हेट्ठिल्लतथा किमु सुयातो[21] ॥

---

१. य स (अ)।
२. अण्णगदे ० (अ), अणूग० (स)।
३. विहारि ० (अ)।
४. तुब्भं (स)।
५. तो (स)।
६. वासाए समणुण्णा (ब), वासासू अ० (स)।
७. जीविता (अ)।
८. x (ब)।
९. अह (ब)।
१०. असमत्ते क० (अ)।
११. तु (स)।
१२. वि (स)।
१३. साधारं (ब), यह गाथा अ प्रति में नहीं है।
१४. बाल (ब)।
१५. तक्काय० (अ)।
१६. ताधे (मु)।
१७. कंडूइए (ब)।
१८. ० सीई (ब)।
१९. ० तर (ब)।
२०. अत्थि (स)।
२१. सुतं तु (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८२७. परिकम्मेहि य अत्था, सुत्तेहि य जे य सूइया[1] तेसिं ।
होति विभासा उवरिं, पुव्वगतं तेण बलियं तु ॥नि. २९२ ॥

१८२८. तित्थगरत्थाणं खलु, अत्थो सुत्तं तु गणहरत्थाणं ।
अत्थेण य[2] वंजिज्जति, सुत्तं तम्हा उ सो बलवं ॥नि. २९३ ॥

१८२९. जम्हा उ होति सोधी, छेदसुयत्थेण खलितचरणस्स ।
तम्हा[3] छेदसुयत्थो, बलवं मोत्तूण पुव्वगतं ॥नि. २९४ ॥

१८३०. एमेव मंडलीय वि, पुव्वाहिय नट्ठ 'धम्मकह-वादे'[4] ।
अधव पइण्णग[5] सुत्ते, अधिज्जमाणे[6] बहुसुते वि ॥नि. २९५ ॥

१८३१. छिण्णाछिण्णविसेसो, आवलियाए उ अंतए ठाति[7] ।
मंडलीय सट्ठाणं[8], सच्चित्तादीसु संकमति ॥

१८३२. दोण्हं तु संजताणं, घोडगकंडूइयं[9] करेंताणं ।
'जो जाहे जं पुच्छति, सो ताधि'[10] पडिच्छओ तस्स ॥नि. २९६ ॥

१८३३. एवं 'ताव समत्ते'[11], कप्पे भणितो विधी उ जो एस ।
एत्तो समत्तकप्पो, वोच्छामि विधिं[12] समासेण ॥

१८३४. गणिआयरियाणं तो[13], खेत्तम्मि ठिताण दोसु गामेसु ।
वासासु होति खेत्तं, निस्संचारेण बाहिरतो ॥

१८३५. वासासु समत्ताणं[14], उग्गह एगदुगपिंडिताणं पि ।
साधारणं तु केसिं, वोच्छं दुविहं च पच्छकडं ॥नि. २९७ ॥

१८३६. अक्खेत्त जस्सुवट्ठति[15], खेत्ते व[16] समट्ठिताण[17] साधारे ।
वायंतियववहारे, कयम्मि जो जस्सुवट्ठाति[18] ॥नि. २९८ ॥

१८३७. साधारणट्ठिताणं, सेहे पुच्छंतुवस्सए जो उ ।
दूरत्थं 'पि हु'[19] निययं, साहती उ तस्स मासगुरू[20] ॥

---

१. सूलिता (स) ।
२. उ (ब) ।
३. तम्हा उ (अ) ।
४. ० कहि वादी (स) ।
५. पतिण्णग (ब) ।
६. अविज्ज० (ब) ।
७. ठामि (ब) ।
८. मुट्ठाणं (ब) ।
९. ० कंडुइतगं (स) ।
१०. जो जाहे णु पुच्छति तस्सो ताहे (ब) ।
११. ता असमत्ते (ब) ।
१२. विहिं (ब), विधी (स) ।
१३. ता (स) ।
१४. समत्ता (ब) ।
१५. ०वट्ठितो (स) ।
१६. वा (अ) ।
१७. समठिताण (स) ।
१८. ० ट्ठामि (अ) ।
१९. वा (ब), पी (स) ।
२०. ० गुरु (अ, स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८३८. सव्वे उद्दिसियव्वा, अह पुच्छे[1] कतर एत्थ आयरिओ ।
बहुस्सुय तवस्सि व पव्वायगो[2] य[3] तत्थ वि तहेव ॥

१८३९. सव्वे सुतत्था य बहुस्सुया य[4], पव्वायगा आयरिया पहाणा[5] ।
एवं तु वुत्ते समुवेति जस्स[6], सिट्ठे विसेसे 'चउरो य'[7] किण्हा ॥

१८४०. धम्ममिच्छामि सोउं जे[8], पव्वइस्सामि रोइए[9] ।
कहणा लद्धितोऽहीणो, जो पढमं सो उ साहति ॥

१८४१. पुणो वि कहमिच्छंते, तत्तुल्लं भासते परो[10] ।
एवं तु[11] कहिते जस्स, उवट्ठायति[12] तस्स सो[13] ॥

१८४२. अणुवसंते च[14] सव्वेसिं, सलद्धिकहणा[15] पुणो ।
रायणियादि उवसंतो[16], तस्स सो 'मा य नासउ'[17] ॥

१८४३. जं जाणह आयरियं, तं देह[18] ममं ति एव भणितम्मि[19] ।
जदि बहुया ते सीसा, दलंति सव्वेसिमेक्केक्कं[20] ॥

१८४४. रायणिया थेराऽसति, कुल-गण-संघे दुगादिणो भेदो[21] ।
एमेव वत्थ-पाए, तालायर 'सेवगा भणिता'[22] ॥**नि. २९९** ॥

१८४५. रायणियस्स उ एगं, दलंति तुल्लेसु थेरगतरस्स ।
तुल्लेसु जस्स असती, तहावि तुल्ले इमा मेरा[23] ॥

१८४६. साकुलगा[24] कुलथेरे, गण-थेर गणिव्वएयरे[25] संघे ।
रायणिय थेर असती, कुलादिथेराण वि तहेव ॥

१८४७. साधारणं व काउं, दोण्ह[26] वि सारेंत[27] जाव अण्णो[28] उ ।
उप्पज्जति सिं सेहो, एमेव य वत्थपत्तेसु ॥

१. पट्ठे (ब) ।
२. पव्वावगा (अ, स)
३. ते (स) ।
४. वा (ब) ।
५. पहाणो (ब) ।
६. जस्सु (अ) ।
७. तुगे तु (स) ।
८. जे इति पादपूरणे (मवृ) ।
९. रोतितो (स) ।
१०. परं (स) ।
११. तू (स) ।
१२. उवट्ठायंति (ब) ।
१३. यह गाथा अ प्रति में नहीं है ।
१४. वि (स) ।
१५. सलद्धी ० (स) ।
१६. 'तोवसंते (अ) ।
१७. मादि नासतो (अ) ।
१८. देहत्ति दर्शयतेत्येवं (मवृ) ।
१९. भणितं पि (अ) ।
२०. सव्वेसि एक्के० (स) ।
२१. विभेया (ब) ।
२२. सेवए वणिए (अ) ।
२३. ब प्रति में इस गाथा का प्रथम एवं अंतिम चरण है ।
२४. सोउलगा (ब) ।
२५. गणिच्छए ० (ब) ।
२६. दोण्णि (स) ।
२७. सारेंति (स) ।
२८. अण्णा (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८४८. चोदेति वत्थपाया, कप्पंते[1] वासवासि[2] घेत्तुं जे ।
जह[3] कारणम्मि सेहो, तह तालचरादिसु[4] वत्थाइं ॥

१८४९. साधारणो अभिहितो, इयाणि पच्छाकडस्स[5] अवयारो[6] ।
सो उ गणावच्छेइय, पिंडगसुत्तम्मि[7] भणिहिती ॥

१८५०. एमेव गणावच्छे, एगत्त-पुहत्त[8] दुविधकालम्मि ।
जं एत्थं[9] नाणत्तं, तमहं वोच्छं समासेणं ॥

१८५१. जह होंति पत्थणिज्जा, कप्पट्ठी 'नीलकेसि सव्वस्स'[10] ।
तध 'चेव गणावच्छो'[11], किं कारण जेण[12] तरुणो उ ॥

१८५२. 'दोण्हं चउकण्णरहं'[13], भवेज्ज छक्कण्ण[14] मो[15] न संभवति ।
सिद्धं लोके तेण उ, परपच्चयकारणा तिन्नि[16] ॥

१८५३. जयणा तत्थुडुबद्धे, समभिक्खाऽणुण्ण निक्खम[17] पवेसा ।
वासासु दोन्नि चिट्ठे, दो हिंडेऽसंथरे इतरे ॥

१८५४. एमेव बहूणं पी, जहेव भणिता[18] उ आयरियसुत्ते ।
जाव उ[19] सुतोवसंपद, नवरि इमं तत्थ नाणत्तं ॥

१८५५. साधारणट्ठितासुं[20], सुत्तत्थाइं परोप्परं गिण्हे ।
वारंवारेण तहिं, जह आसा कंडुयंते वा ॥

१८५६. अह पुव्वठिते पच्छा, अण्णो एज्जाहि बहुसुते[21] खेत्ते ।
सो खेत्तुवसंपन्नो, 'पुरिमल्लो खेत्तिओ तत्थ'[22] ॥

१८५७. खेत्तिओ जइ इच्छेज्जा, सुत्तादी किंचि गेण्हिउं ।
सीसं जइ मेधावी, पेसे खेत्तं तु तस्सेव ॥

१८५८. असती तव्विधसीसेऽणिक्खित्तगणे उ वाए[23] संकमति ।
अहवावि अगीतत्थे, निक्खिवती[24] गुरुग न य खेत्तं ॥

---

१. कप्पति (अ), कप्पंति (स)।
२. वासे वासे (स)।
३. अह (ब)।
४. ० दिसू (स)।
५. ० कडिस्स (ब)।
६. ववहारो (ब)।
७. पंडग ० (ब)।
८. पुहुत्त (ब)।
९. एत्थ (अ)।
१०. ० केसिस्स (ब)।
११. चेव उ गणि वि (स)।
१२. जेण उ (ब)।
१३. दोण्ह चउकण्णरहसं (ब)।
१४. ० ण्णग (ब)।
१५. मो इति पादपूरणे (मवृ)।
१६. तिन्नी (स)।
१७. निगगम (ब)।
१८. गणिया (ब)।
१९. य (ब)।
२०. ० ठिता तु (स)।
२१. बहुस्सुतो (स)।
२२. मज्झिल्लो पुरिसो खेत्तिओ (अ), मज्झिल्लो पुरिमो खेत्तीउ (स)।
२३. वायए (स)।
२४. ० वति (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८५९. अध निक्खिवती[1] गीते, होही[2] खेत्तं तु तो गणस्सेव ।
तस्स पुण अत्तलाभो, वायंत न निग्गतो जाव ॥

१८६०. 'आगंतुगो वि'[3] एवं, ठवेंत[4] खेत्तोवसंपदं लभति ।
साधारणे य दोण्हं, एसेव गमो य नायव्वो ॥

१८६१. साधारणो अभिहितो[5], इयाणि पच्छाकडं तु वोच्छामि ।
सो दुविधो बोधव्वो, गिहत्थ सारूविओ[6] चेव ॥नि. ३०० ॥

१८६२. 'असिहो ससिहगिहत्थो'[7], रयहरवज्जो उ होति सारूवी ।
धारेति निसिज्जं तू, एगं ओलंबगं[8] चेव ॥नि. ३०१ ॥

१८६३. गिहिलिंगं पडिवज्जति, जो ऊ तद्दिवसमेव जो तं तु ।
उवसामेती अण्णो, तस्सेव ततो पुरा आसी ॥

१८६४. एण्हिं पुण जीवाणं, उक्कडकलुसत्तणं वियाणेत्ता ।
तो भद्दबाहुणा ऊ, तेवरिसा ठाविता ठवणा ॥

१८६५. परलिंग निण्हवे[9] वा, सम्मद्दंसण जढे तु संकंते ।
तद्दिवसमेव इच्छा, सम्मत्तजुए समा तिण्णि ॥

१८६६. एमेव देसियम्मि वि, सभासितेणं तु समणुसिट्ठम्मि[10] ।
ओसण्णेसु[11] वि[12] एवं, अच्चाइण्णे न पुण एण्हिं ॥

१८६७. सारूवी जज्जीवं, पुव्वायरियस्स जे य पव्वावे ।
अपव्वविय सच्छंदो, इच्छाए जस्स सो देति[13] ॥नि० ३०२ ॥

१८६८. जो पुण गिहत्थमुंडो, अधवा मुंडो उ तिण्ह वरिसाणं ।
आरेणं पव्वावे, सयं च पुव्वायरिय सव्वं[14] ॥

१८६९. अपव्ववित[15] सच्छंदा, तिण्हं उवरिं तु जाणि पव्वावे ।
अपव्वविताणि जाणि य, सो वि य जस्सिच्छते[16] तस्स ॥

१८७०. गंतूणं 'जदि बेती'[17], अहयं तुज्झं इमाणि[18] अन्नस्स ।
एयाणि तुज्झ नाहं, दो वी तुज्झं दुवेण्हस्स[19] ॥

---

१. निक्खे० (अ)।
२. होति (स)।
३. आगंतु ततो (ब)।
४. ठवेंतो (स)।
५. उ भणितो (ब)।
६. ० वितो (ब)।
७. ससिहे असिहगि० (अ, स)।
८. ओलबगं (ब)।
९. निण्हते (स)।
१०. ०णुसट्ठम्मि (ब, स)।
११. उस्स० (अ)।
१२. उ (ब)।
१३. स प्रति में इस गाथा का उत्तरार्ध नहीं है।
१४. यह गाथा स प्रति में नहीं है।
१५. अपव्वाविते (अ, स)।
१६. जस्सच्छिते (अ), जस्सेत्थए (ब)।
१७. जइ भणइ (ब)।
१८. इमाणि (स)।
१९. दुवेण्णस्स (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८७१. छिण्णम्मि उ परियाए, उवट्ठियंते हु[1] पुच्छिउं[2] विहिणा ।
तस्सेव अणुमतेणं, पुव्वदिसा पच्छिमा वावि ॥

१८७२. संविग्गमुद्दिसंते, पडिसेहं तस्स संथरे गुरुगा ।
किं अम्हं तु परेणं, अधिकरणं जं तु तं तेसिं ॥

१८७३. एवं खलु[3] संविग्गेऽसंविग्गे वारणा न उद्दिसणा ।
अब्भुवगत जं भणती[4], पच्छ भणंते न से इच्छा ॥

१८७४. एमेव निच्छिऊणं[5], उट्ठितो पच्छ तेसिमाउट्टो[6] ।
इतरेहि व रोसवितो, सच्छंद दिसं पुणो न लभे ॥

१८७५. अण्णाते परियाए, पुण्णे न कधेज्ज जो समुट्ठंतो ।
लज्जाय मा व घेच्छिति[7], मा व न दिक्खेज्जिमा[8] भयणा ॥

१८७६. णाते व जस्स भावो, न नज्जते तस्स दिज्जते लिंगं ।
दिण्णम्मि दिसिं[9] नाहिति, कालेण व सो सुणंतो वा ॥

१८७७. अधवा अण्णऽण्णकुला[10], पडिभज्जिउकाम समण समणी य ।
अणुसिट्ठा[11] परे न ठिता, करेंति वायंतववहारं[12] ॥

१८७८. अध न कतो तो पच्छा, तेसिं अब्भुट्ठिताण[13] ववहारो ।
गोणी आसुब्भामिग[14], कुडुंबि खरए य खरिया य ॥

१८७९. गोणीणं संगेल्लं, उब्भामइला य नीत[15] परदेसं ।
तत्तो खेत्ते देवी, रण्णो अभिसेचणे[16] चेव ॥

१८८०. संजइइत्त भणंती, संडेणऽण्णस्स जं तु गोणीए ।
जायति तं[17] गोणिवतिस्स[18] होति एवम्ह[19] एताइं ॥दारं ॥

१८८१. बेंतितरे अम्हं तू, जध वडवाए[20] उ अण्णआसेणं[21] ।
जं जायति मोल्लम्मी[22], अदिण्ण तं आसिगस्सेव ॥दारं ॥

---

१. तु (स) ।
२. पुच्छिओ (ब) ।
३. खलु ऊ (अ) ।
४. भणति (अ) ।
५. णेच्छि ० (स) ।
६. एस आउट्टो (ब), तेसि आउट्टो (स) ।
७. घेच्छति (स) ।
८. ० ज्ज मा (ब) ।
९. दिसं (अ) ।
१०. अण्णोऽण्ण ० (ब) ।
११. अणुसट्ठा (अ,स) ।
१२. ० तवावारं (ब), वायंतिव ० (स) ।
१३. पुव्वट्ठि ० (अ) ।
१४. आसू भामिग (अ,स) ।
१५. णाय (स) ।
१६. अभिचेयणा (ब) ।
१७. ता (ब) ।
१८. गोणिपयस्स (अ) ।
१९. एयम्ह (ब), एवण्ह (स) ।
२०. वलवाए (अ, स) ।
२१. अण्णयासेणं (ब) ।
२२. मूलम्मी (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८८२. जस्स महिलाय जायति, उब्भामइलाय तस्स तं होति ।
संजतिइत्त[1] भणंती, 'इतरे बेंती इमं'[2] सुणसु ॥

१८८३. तेणं कुडुंबितेणं, उब्भामइलेण[3] दोण्ह वी दंडो[4] ।
दिण्णो सावि य तस्सा, जाया एवम्ह[5] एताइं ॥

१८८४. पुणरवि य संजतित्ता, बेंती खरियाय अण्णखरएणं ।
जं[6] जायति[7] खरियाधिवस्स[8], होति एवम्ह[9] एताइं ॥

१८८५. गोणीणं संगेल्लं, नट्ठं अडवीय अण्णगोणेणं ।
जायाइ वत्थगाइं, गोणाहिवतीउ गेण्हंति ॥

१८८६. उब्भामिय पुव्वुत्ता, अहवा नीता उ जा परविदेसं ।
तस्सेव उ सा भवती, एवं अम्हं तु आभवती ॥दारं ॥

१८८७. इतरे भणंति बीयं, तुब्भं तं नीयमन्नखेत्तं[10] तु ।
तं होति खेत्तियस्सा[11], एवं अम्हं तु एताइं ॥दारं ॥

१८८८. रण्णो धूयातो खलु, न माउछंदा 'उ ताउ'[12] दिज्जंति ।
न य पुत्तो अभिसिच्चति[13], तासिं छंदेण एवम्हं ॥

१८८९. एमादि उत्तरोत्तर[14], दिट्ठंता बहुविधा न उ[15] पमाणं ।
पुरिसोत्तरिओ धम्मो, होति पमाणं पवयणम्मि ॥

१८९०. आयरियउवज्झायम्मि[16], अधिकिते अधिकिते य कालम्मि ।
निस्सोवसंपय त्ति य, एगट्ठमयं तु संबंधो ॥

१८९१. अधवा एगतरम्मि उ, आयरियगणिम्मि[17] वावि आहच्च ।
वीसुंभूते[18] गच्छंति, फड्डुग[19] फड्डुगा व गणं[20] ॥

१८९२. लोगे य उत्तरम्मी[21], उवसंपद लोगिगी उ रायादी ।
राया वि होति[22] दुविधो, सावेक्खो चेव निरवेक्खो[23] ॥**नि. ३०३** ॥

---

१. ० तितत्त (ब) ।
२. उब्भामइल्ले इमे (ब) ।
३. ० मइल्लेण (ब) ।
४. डंडो (स) ।
५. वेवम्ह (ब), एवम्मि (स) ।
६. जा (ब) ।
७. जायति तं (स) ।
८. खरियाहिवतिस्स (मु) ।
९. छंद की दृष्टि से होतेवम्ह (होति एवम्ह) पाठ होना चाहिए ।
१०. नीय अण्ण ० (स) ।
११. खत्तिय ० (ब) ।
१२. तो ततो (अ)
१३. अभिणिसि ० (स) ।
१४. उत्तरुत्तर (ब) ।
१५. य (स) ।
१६. ० उवज्झाए (अ) ।
१७. ० गणम्मि (ब) ।
१८. वीसंभूए (ब) ।
१९. फड्डुगं (अ)
२०. गाथा के उत्तरार्ध में छंदभंग है ।
२१. ० म्मि य (स) ।
२२. इति (अ) ।
२३. अधुना निर्युक्तिविस्तरः (मवृ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८९३. जुवरायम्मि[१] उ ठविते, 'पया उ'[२] बंधंति आयतिं तत्थ ।
नेव य कालगतम्मी, खुब्भंति पडिवेसिय नरिंदा[३] ॥नि. ३०४॥

१८९४. पच्छन्नराय तेणे[४], आत-परो दुविध होंति निक्खेवो ।
लोइय[५]-लोगुत्तरिओ, लोगुत्तर ठप्पितर वोच्छं ॥नि. ३०५॥

१८९५. निरवेक्खे कालगते, भिन्नरहस्सा तिगिच्छऽमच्चो[६] य ।
अहिवास[७] आस हिंडण[८], वज्झो त्ति य मूलदेवो[९] उ ॥नि. ३०६॥

१८९६. आसस्स पट्टिदाणं[१०], आणयणं[११] हत्थचालणं रण्णो ।
अभिसेग भोइ परिभव, तण-जक्ख निवायणं आणा ॥

१८९७. जक्खऽतिवातियसेसा, सरणगता जेहि तोसितो पुव्वं[१२] ।
ते कुव्वंती रण्णो, अत्ताण परे य निक्खेवं ॥दारं॥

१८९८. पुव्वं आयतिबंधं[१३], करेति[१४] सावेक्ख गणधरे ठविते ।
अट्ठविते पुव्वुत्ता, दोसा उ अणाहमादीया ॥नि. ३०७॥

१८९९. आसुक्कारोवरते, अट्ठविते गणहरे इमा मेरा ।
चिलिमिलि[१५] हत्थाणुण्णा, परिभव सुत्तत्थहावणया ॥नि. ३०८॥

१९००. दंडेण[१६] उ अणुसट्ठा, लोए लोगुत्तरे य अप्पाणं ।
उवनिक्खिवंति[१७] सो पुण, लोइय लोगुत्तरे दुविहो[१८] ॥

१९०१. जह[१९] कोई[२०] वणिगो[२१] तू, धूयं[२२] सेट्ठिस्स हत्थें निक्खिविउं ।
दिसिजत्ताए[२३] गतो त्ति, कालगतो सो य सेट्ठीओ ॥

१९०२. सेट्ठिस्स तस्स धूता, वणियसुतं घेत्तु रण्णो समुवगता ।
अहयं एस सही मे, पालेयव्वा उ[२४] तुब्भेहिं ॥

१९०३. इति[२५] होउ त्ति य भणिउं, कण्णा अंतेउरम्मि तुट्ठेणं ।
रण्णा पक्खित्ताओ, भणिता वाहरिउ पाला उ ॥

---

१. ० राणम्मि (स)।
२. पयातो (ब)।
३. छंद की दृष्टि से 'खुब्भंती पाडिवेसिय नरिंदा' पाठ होना चाहिए।
४. तेणं (अ)।
५. लोतिय (ब)।
६. तिरिच्छ ० (स)।
७. अहियास (अ)।
८. भिडण (स)।
९. मूलभद्दो (स)।
१०. पुट्ठ ० (स), पट्ठ ० (अ), पृष्ठं दत्तं गाथायां स्त्रीत्वं प्राकृतत्वात्।
११. अणायणं (ब)।
१२. पुव्वि (अ), पुव्वि ति (स)।
१३. आततिं ० (ब), आयती ० (स)।
१४. करिति (स)।
१५. ० मिणी (स)।
१६. डंडेण (स)।
१७. उवनिक्खेवंती (ब)।
१८. दुविधं (स)।
१९. कध (अ)।
२०. कोति (अ), कोती (ब)।
२१. वाणितो (ब)।
२२. तयं (अ)।
२३. दिसयत्ताए (अ)।
२४. तो (अ)।
२५. इय (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९०४. जध रक्खह मज्झ सुता, तहेव एया उ दोवि पालेह ।
'तीए वि ते उ'[1] पाले, विण्णविय विणीतकरणाए ॥

१९०५. जध कन्ना एयातो, रक्खह एमेव रक्खह ममं पि ।
जह चेव ममं रक्खह, तह रक्खहिमं[2] सहिं मज्झ ॥

१९०६. इय होउ अब्भुवगते, अह तासिं तत्थ[3] संवसंतीणं[4] ।
कालगतमहत्तरिया, जा कुणती[5] रक्खणं तासिं ॥

१९०७. सविकारातो दट्ठुं, सेट्ठिसुया विण्णवेति रायाणं ।
महतरित[6] दाणनिग्गह, वणियागम रायविण्णवणं ॥

१९०८. पूएऊण विसज्जण, सरिसकुलदाण उ दोण्ह वी भोगो ।
एमेव उत्तरम्मि वि, अवत्तराइंदिए[7] हुवमा[8] ॥

१९०९. एते अहं च तुब्भं, वत्तीभूतो सयं तु धारेति ।
जसपच्चया उराला, मोक्खसुहं चेव उत्तरिए[9] ॥

१९१०. सावेक्खो पुण पुव्वं, परिक्खते[10] जध धणो उ सुण्हाओ[11] ।
अणियतसहाव[12] परिहाविय भुत्ता छड्डिया[13] वुड्ढा ॥

१९११. 'ओमेऽसिवमतरंते, य'[14] उज्झिउं[15] आगतो न खलु जोग्गो ।
कितिकम्मभारभिक्खादिएसु[16] भुत्ता उ[17] भुत्तीए ॥दारं ॥

१९१२. न य छड्डिता न भुत्ता, नेव य परिहाविया[18] न परिवूढा[19] ।
ततिएणं ते चेव उ, समीव॰ पच्चाणिता गुरुणो ॥

१९१३. उवसंपाविय पव्वाविता य अण्णे य तेसि संगहिता ।
एरिसए देति गणं, 'कामं ततियं पि पूएमो'[20] ॥

१९१४. तम्मि गणे अभिसित्ते[21], 'सेसगभिक्खूण अप्पनिक्खेवो'[22] ।
जे पुण फड्डुगवतिया, आतपरे तेसिं[23] निक्खेवो ॥

---

१. तीय वि ते तू (ब)।
२. रक्खहमं (अ)।
३. सत्थ (ब)।
४. संवसिधीणं (स)।
५. कुणति (ब)।
६. महहरिय (अ)।
७. अव्वत्त ० (स)।
८. उवमा (अ,स)।
९. ब प्रति में यह गाथा १९१० वीं गाथा के बाद पुनरावृत्त हुई है।
१०. परिक्खहह (ब)।
११. सुण्हा वी (ब)।
१२. अणितिय ० (ब), ० सहाय (अ)।
१३. ततिया (अ), तच्चिया (स)
१४. ० सिव अतरंते व (ब)।
१५. उज्झितं (अ)।
१६. ० दिए (स)।
१७. य (अ,स)।
१८. परिहारिया (अ,स)।
१९. परिवुड्ढा (स)।
२०. x (ब)।
२१. ० सित्तं (अ)।
२२. ० भिक्खूणप्प ० (स)।
२३. होति (ब,स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९१५. एवं कालगते तू, ठविते[१] सेसाण आयनिक्खेवो ।
फड्डगवतियाणं[२] पुण, आयपरो होति निक्खेवो ॥

१९१६. उवसंपज्जण अरिहे, अविज्जमाणम्मि होति गंतव्वं ।
गमणम्मि सुद्धऽसुद्धे, चउभंगो होति नायव्वो ॥

१९१७. 'असतीए वायगस्स'[३], जं वा तत्थत्थि तम्मि गहितम्मि ।
संघाडो एगो वा, दायव्वो असति[४] एगागी ॥

१९१८. अध सव्वेसिं तेसिं[५], नत्थि उ उवसंपयारिहो अन्नो ।
सव्वे[६] घेत्तुं गमणं, जतियमेत्ता व इच्छंति ॥

१९१९. एवं सुद्धे निग्गम, गच्छे वइयादि अपडिबज्झंतो ।
संविग्गमणुण्णेहिं, तेहि वि दायव्व संघाडो ॥

१९२०. एगं व दो व दिवसे, संघाडट्ठाय[७] सो पडिच्छेज्जा ।
असती 'एगागी तो'[८] जतणा उवही न उवहम्मे ॥

१९२१. एसो पढमो भंगो, एवं सेसा कमेण जोएज्जा ।
आसन्नुज्जयठाणं, गच्छे दारा य तत्थ इमे ॥

१९२२. पारिच्छहाणि[९] असती, आगमणं निग्गमो असंविग्गे ।
निवेदण 'जतण निसट्ठं'[१०], दीहखद्धं परिच्छंति[११] ॥नि. ३०९ ॥

१९२३. पासत्थादिविरहितो, काहियमादीहि वावि दोसेहिं ।
संविग्गमपरितंतो, साहम्मियवच्छलो जो उ ॥

१९२४. अब्भुज्जतेसु ठाणं, परिच्छिउं हायमाणए[१२] मोत्तुं ।
केसु पदेसुं हाणी, वुड्ढी[१३] वा तं निसामेहि ॥

१९२५. तव-नियम-संजमाणं, जहियं हाणी न कप्पते तत्थ ।
तिगवुड्ढी तिगसोही, पंचविसुद्धी 'सुसिक्खा य'[१४] ॥दारं ॥नि. ३१० ॥

१९२६. 'बारसविधे तवे तू'[१५], इंदिय-नोइंदिए य 'नियमे उ'[१६] ।
संजमसत्तरसविधे, हाणी जहियं[१७] तहिं न वसे ॥दारं ॥

---

१. ठविह (अ) ।
२. फड्डगपति ० (अ) ।
३. असतीय वायगस्सा (स) ।
४. असई वा ० (ब) ।
५. तेणं (स) ।
६. सव्वो (ब) ।
७. संघाडत्थं (ब) ।
८. एगाणितो (ब), एगागितो (स) ।
९. पाडिच्छ ० (ब) ।
१०. जणण निसट्ठे (अ, स) ।
११. पडिच्छंति (ब) ।
१२. ० माणीय (ब) ।
१३. वड्ढी (ब) ।
१४. सुसिक्खिया (ब) ।
१५. ० विधे उ तवे तु (अ, स) ।
१६. नियमेसु (स) ।
१७. तहियं (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९२७. तव-नियम-संजमाणं, एतेसिं चेव तिण्ह तिगवुड्ढी[१] ।
नाणादीण[२] व तिण्हं, तिगसुद्धी उग्गमादीणं ॥दारं ॥

१९२८. पासत्थे ओसण्णे, कुसील-संसत्त तह अहाछंदे ।
एतेहि जो विरहितो, पंचविसुद्धो हवति सो उ[३] ॥

१९२९. पंच य महव्वयाइं, अहवा वी नाण-दंसण-चरित्तं ।
तव-विणओ वि य पंच उ, पंचविधुवसंपदा वावि[४] ॥दारं ॥

१९३०. सोभणसिक्खसुसिक्खा[५], सा पुण आसेवणे य गहणे[६] य ।
दुविधाए वि न हाणी, जत्थ 'य तहियं'[७] निवासो उ ॥

१९३१. एतेसु[८] ठाणेसु, सीदंते चोदयंति[९] आयरिया ।
हावेंति उदासीणा, न तं पसंसंति आयरिया ॥

१९३२. आयरिय-उवज्झाया, नाणुण्णाता जिणेहि सिप्पट्ठा ।
नाणे चरणे जोगा, पावगा 'उ तो'[१०] अणुण्णाता ॥

१९३३. नाण-चरणे निउत्ता, जा पुव्व परूविया चरणसेढी ।
सुहसीलठाणविजढे, निच्चं सिक्खावणा कुसला ॥दारं ॥

१९३४. जेण वि पडिच्छिओ सो, कालगतो सो वि होति आहच्च ।
सो वि य सावेक्खो वा, निरवेक्खो वा गुरू आसी ॥**नि. ३११** ॥

१९३५. सावेक्खो सीसगणं, संगह कारेति आणुपुव्वीए ।
'पाडिच्छ आगते त्ति'[११] व, एस वियाणे अह महल्लो ॥

१९३६. जह राया व कुमारं, रज्जे ठावेउमिच्छते[१२] जं तु[१३] ।
भड जोधे[१४] वेति तगं[१५], सेवह तुब्भे कुमारं ति ॥

१९३७. अहयं अतीमहल्लो, तेसिं वित्ती उ[१६] तेण दावेति ।
सो पुण परिक्खिऊणं[१७], इमेण विहिणा[१८] उ ठावेति[१९] ॥

१९३८. परमन्न भुंज सुणगा, छड्डुण दंडेण वारणं बितिए ।
भुंजति[२०] देति य ततिओ[२१], तस्स उ दाणं न इतरेसिं ॥

---

१. ० वड्ढी (ब) ।
२. ० दीणि (स) ।
३. तू (स) ।
४. वावी (स) ।
५. सोभणभिक्खसुभिक्खा (अ) ।
६. महणा (अ) ।
७. उवहितं (अ), तो तहियं (ब) ।
८. एतेसु उ (अ) ।
९. चोदेंति (स) ।
१०. ततो (अ,ब) ।
११. पाडिच्छागते व तीए (अ,स) ।
१२. ठाविसु ० (स) ।
१३. च (अ,स) ।
१४. जोधि (अ) ।
१५. तिगं (अ) ।
१६. तो (ब) ।
१७. परिच्छि ० (अ) ।
१८. विहि य (ब) ।
१९. भावेंति (ब) ।
२०. भुंजंति (अ) ।
२१. वइतो (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९३९. परबलपेल्लिउ नासति, बितिओ[1] दाणं न 'देति तु भडाणं'[2] ।
'न वि जुज्जंते ते ऊ'[3], एते दो वी[4] अणरिहाओ ॥

१९४०. ततिओ रक्खति कोसं, देति य[5] भिच्चाण ते[6] य जुज्झंति ।
पालेतव्वो अरिहो, रज्जं तो तस्स तं दिण्णं ॥

१९४१. अभिसित्तो सट्ठाणं, अणुजाणे भडादि[7] अहियदाणं च ।
वीसुंभिय आयरिए, गच्छे वि तयाणुरूवं तु ॥

१९४२. दुविधेण संगहेणं, गच्छं संगिण्हते महाभागो ।
तो विण्णवेंति ते वी, तं चेव य ठाणयं अम्हं ॥

१९४३. उवगरण बालवुड्ढा, खमग गिलाणे[8] य धम्मकधि वादी ।
गुरुचिंत वायणा-पेसणेसु[9] कितिकम्मकरणे य ॥

१९४४. एतेसुं ठाणेसुं, जो आसि समुज्जतो[10] अठवितो वि ।
ठवितो वि य न विसीदति, 'स ठावितुमलं'[11] खलु परेसिं[12] ॥

१९४५. एवं ठितो ठवेती[13], अप्पाण परस्स[14] गोविसो[15] गावो ।
अठितो न ठवेति परं, न य तं ठवितं चिरं होति[16] ॥

१९४६. पउरतणपाणियाइं[17], 'वणाइ रहियाइ'[18] खुड्डुजंतूहिं[19] ।
नेति वि सो गोणीओ[20], जाणति व उवद्दुकालं[21] च ॥

१९४७. जह गयकुलसंभूतो, गिरिकंदर-विसम-कडगदुग्गेसु ।
परिवहति अपरितंतो, निययसरीरुग्गते[22] दंते[23] ॥

१९४८. इय पवयणभत्तिगतो, साहम्मियवच्छलो असढभावो ।
परिवहति साधुवग्गं, खेत्तविसमकालदुग्गेसु[24] ॥दारं ॥

१९४९. जत्थ पविट्ठो जदि तेसु, उज्जता होउ पच्छ हावेंति ।
'सीसे आयरिए'[25] वा, परिहाणी तत्थिमा होंति ॥दारं ॥**नि. ३१२** ॥

---

१. बितिदो (अ)।
२,३. x (ब)।
४. वि (अ,स)।
५. x (ब)।
६. तो (स)।
७. भयादि (अ,स)।
८. गिलाणा (अ)।
९. पेसणासु (अ)।
१०. सुज्जओ (ब)।
११. संठावि ० (स)।
१२. गाथायां षष्ठी द्वितीयार्थे प्राकृतत्वात् (मवृ)।
१३. ठविइ (ब)।
१४. परं च (ब)।
१५. गोवृषः (मवृ)।
१६. होंति (ब)।
१७. ० तणपूयमाई (ब)।
१८. रहियाइं वणाइं (स)।
१९. खुद ० (स)।
२०. मो लाभे (अ)।
२१. उवच्छकाले (अ)।
२२. नियसरी ० (ब)।
२३. दश्रुनि २९।
२४. दश्रुनि ३०।
२५. सीसा आयरिया (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९५०. 'पडिलेह दिय'[१] तुयट्टण, निक्खिव आदाण विणय-सज्झाए ।
आलोग[२] ठवण मंडलि, भासा गिहमत्त सेज्जतरो ॥नि. ३१३ ॥

१९५१. एमादी सीदंते, वसभा चोदेंति चिट्ठति[३] ठितम्मि[४] ।
असती थेरा गमणं, अच्छति ताहे[५] पडिच्छंतो ॥नि. ३१४ ॥

१९५२. गुरुवसभगीतऽगीते, 'न चोदेति'[६] गुरुगमादि चउलहुओ[७] ।
सारेति 'सारवेति य'[८], खरमउएहिं जहावत्थुं[९] ॥

१९५३. गच्छो गणी य सीदति, बितिए[१०] न गणी तु ततिय[११] न वि गच्छो ।
जत्थ गणी 'अवि सीयति'[१२], सो पावतरो न पुण[१३] गच्छो ॥

१९५४. आयरिए[१४] जतमाणे, चोदेतुं[१५] जं[१६] सुहं हवति गच्छो ।
तम्मि उ विसीदमाणे, चोदणमियरे कधं गिण्हे[१७] ॥

१९५५. आसण्णट्ठितेसु[१८] उज्जएसु जहति सहसा न तं गच्छं ।
मा दूसेज्ज[१९] अदुट्ठे, दूरतरं[२०] वा पणासेज्जा ।

१९५६. कुलथेरादी आगम[२१], चोदणता जेसु विप्पमादंति ।
'चोदयति तेसु'[२२] ठाणं, अठितेसु[२३] तु निग्गमो भणितो ॥दारं ॥

१९५७. कप्पसमत्ते विहरति, असमत्ते[२४] जत्थ होंति आसण्णा ।
'साधम्मि तहिं'[२५] गच्छे, असतीए ताहि दूरं पि ॥नि. ३१५ ॥

१९५८. वइयादीए दोसे, असंविग्ग[२६] यावि सो परिहरंतो[२७] ।
के उ असंविग्गा खलु, निययादीया[२८] मुणेयव्वा ॥

१९५९. णितियादीए अधच्छंद, वज्जित[२९] पविस दाण गहणे य ।
लहुगा भुंजण[३०] गुरुगा, संघाडे मास जं चण्णं ॥

---

१. पडिलेहिय (अ) ।
२. आलोयग (ब) ।
३. चिट्ठसि (अ) ।
४. भयम्मि (स) ।
५. गाहे वि (अ) ।
६. अचोदते (अ) ।
७. जा लहुओ (स) ।
८. ० वेती (ब) ।
९. ० वत्थू (स) ।
१०. बितिओ (अ) ।
११. ततिए (ब) ।
१२. अवसीदति (ब,स) ।
१३. सो (ब) ।
१४. आयरियए (अ) ।
१५. चोयणं (ब) ।
१६. जे (ब,स) ।
१७. x (अ) ।
१८. ० ठितेसु तु (स) ।
१९. हासेज्ज (स) ।
२०. ० तरे (ब) ।
२१. आगमो (स) ।
२२. चोतिए त्ति एसु (ब), चोदित ठितेसु (स) ।
२३. अच्छितेसु (स) ।
२४. असमत्थे (ब,स) ।
२५. साहम्मिएहिं (अ,स) ।
२६. अतिसंवि ० (ब) ।
२७. ० हरंति (स) ।
२८. नितिया ० (अ,स) ।
२९. वज्जित्ता (अ) ।
३०. भुंजणु (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९६०. एते 'चेव य'[1] गुरुगा, पच्छित्ता होंति तू अधाछंदे ।
अमणुण्णेसु मासो, संभुंजण होंति चउगुरुगा ॥

१९६१. संविग्गेगंतरिया, पडिच्छ संघाडए असति एगो ।
साहम्मिएसु जतणा, तिण्णि दिण पडिच्छ सज्झाए ॥**नि. ३१६** ॥

१९६२. बहिगाम घरे सण्णी, सो वा 'सागारिओ उ बहि'[2] अंतो ।
ठाण-निसेज्ज-तुयट्टण, गहितागहितेण जागरणा ॥**नि. ३१७** ॥

१९६३. वसधी[3] समणुण्णाऽसति, गामबहिं ठाति सो निवेदेउं ।
अनिवेदितम्मि लहुगो, आणादिविराधणा चेव ॥

१९६४. गेलण्णे न काहिती[4], कोधेणं जं च पाविहिति[5] तत्थ[6] ।
तम्हा उ निवेदेज्जा, जतणाए तेसिमाए उ ॥

१९६५. तुब्भं अहेसि[7] दारं, उस्सूरो 'त्ती जुताएँ'[8] एवं तु ।
न य नज्जति सत्थो वी, चलिहिति किं केत्तियं वेलं[9] ॥

१९६६. साहुसगासे वसिउं, अतिप्पियं[10] मज्झ किं करेमि त्ति ।
सत्थवसो[11] हं भंते !, गोसे मे वहेज्जह[12] उदंतं[13] ॥

१९६७. एवं न ऊ दुरुस्से[14], अह बाहिं होज्ज पच्चवाता उ ।
ताधे सुण्णघरादिसु, वसति निवेदेज्ज[15] तह चेव ॥

१९६८. अधुणुव्वासिय सकवाड 'निब्बिलं निच्चलं'[16] वसति सुण्णे ।
तस्साऽसति[17] सण्णिघरे[18], इत्थीरहिते वसेज्जा वा ॥

१९६९. सहिते वा अंतो बहि, बहि अंतो वीसु घरकुडीए वा ।
तस्साऽसति नितियादिसु, वसेज्ज उ इमाएँ जतणाए ॥

१९७०. नितियादि उवहि भत्ते, सेज्जा सुद्धा य उत्तरे मूले ।
संजतिरहिते कालेऽकाले सज्झायऽभिक्खं च ॥**नि. ३१८** ॥

१९७१. सेज्जुवधि-भत्तसुद्धे, संजतिरहिते य भंग सोलसओ ।
संजति अकालचारिणि, सहिते बहुदोसला वसधी ॥

---

१. चेय ण (ब) ।
२. सागारितो बहि (अ) ।
३. वसतीए (अ), वसहा (ब) ।
४. कहिंति (ब), काहिंती (स) ।
५. पाविही (स) ।
६. जत्थ (ब) ।
७. अहेसी (स) ।
८. त्ती जुई उ (ब), ति जुती तु (स) ।
९. वेलां सप्तम्यर्थे व्याप्तौ द्वितीया (मवृ) ।
१०. ० प्पिउं (अ) ।
११. सत्थिवसो (स) ।
१२. वहेज्जह (ब) ।
१३. उवदंत (ब) ।
१४. दुरस्से (ब) ।
१५. ० एज्जा (ब), निवेदं तु (स) ।
१६. निव्वले निच्चले (अ, स) ।
१७. तस्स असती (स) ।
१८. सुण्णघरे (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९७२. सागारि-तेणा-हिम-वास दोसा, दुसोहिता तत्थ उ होज्ज[1] सेज्जा ।
वत्थण्णपाणाणिव तत्थ ठिच्चा[2], गिण्हंति जोग्गाणुवभुंजते वा ॥

१९७३. आहारोवधिसेज्जा, उत्तरमूले असुद्ध सुद्धे य ।
अप्पतरदोसपुव्विं, असतीय महंतदोसे वि ॥

१९७४. पढमाऽसति बितियम्मि वि[3], तहियं पुण ठाति कालचारीसु ।
एमेव सेसएसु वि, उक्कमकरणं पि पूएमो ॥

१९७५. सेज्जं सोहे उवधिं, भत्तं सोहेति संजतीरहिते[4] ।
पढमो बितिओ संजतिसहितो पुण कालचारिणिओ[5] ॥

१९७६. आदियणे कंदप्पे, वियालओरालियं[6] वसंतीणं ।
नितियादी छद्दसहा[7], 'संजोएमो अहाछंदो'[8] ॥

१९७७. ठिय निसिय तुयट्टे वा, गहितागहिते य[9] जग्ग[10] सुवणं वा ।
पासत्थादीणेवं[11] नितिए[12] मोत्तुं अपरिभुत्ते[13] ॥

१९७८. 'एमेव अधाछंदे'[14], पडिहणणा झाण - अज्झयण कण्णा ।
ठाणठितो वि निसामे, 'सुण आहरणं'[15] च गहितेणं ॥

१९७९. जध कारणे निगमणं[16], दिट्ठं एमेव सेसगा चउरो ।
ओमे असंथरंते, आयारे वइयमादीहिं[17] ॥

१९८०. समणुण्णेसु वि वासो, एगनिसिं किमु व[18] अण्णमोसण्णे ।
असढो पुण जतणाए, अच्छेज्ज चिरं पि तु इमेहिं ॥नि. ३१९ ॥

१९८१. वासं खंधार नदी, तेणा सावय वसेण सत्थस्स ।
एतेहि कारणेहिं, अजतणजतणा 'य नायव्वा'[19] ॥नि. ३२० ॥

१९८२. दोसा उ ततियभंगे, गाणंगणिता य गच्छभेदो य ।
सुयहाणी कायवधो, दोण्णि वि दोसा भवे चरिमे ॥नि. ३२१ ॥

---

१. होइ (मु) ।
२. गिव्वा (अ) ।
३. ति (अ) ।
४. संजति ० (अ) ।
५. अकालचारिणी उ (ब), कालचारिणीओ (अ,स) ।
६. वियालितोरालियं (अ,स) ।
७. ० सता (स) ।
८. संजोएमु तहाच्छंदो (ब,स) ।
९. ण (स) ।
१०. x (ब) ।
११. ० दीणं (ब) ।
१२. नियए (ब) ।
१३. यह गाथा अ प्रति में नहीं है ।
१४. x (अ) ।
१५. सुणणाहरणं (अ,ब) ।
१६. अतिगमणं (ब), अधिगमणं (स) ।
१७. वइयामा ० (अ) ।
१८. वि (ब) ।
१९. ततो सव्वा (अ,स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९८३. एमेव य वासासुं[1], भिक्खे वसधीय संक नाणत्तं ।
एगाह चउत्थादी, असती अन्नत्थ तत्थेव[2] ॥नि. ३२२॥

१९८४. अपरीमाण पिहब्भावे, एगत्ते अवधारणे ।
एवं[3] सद्दो उ एतेसुं[4], एगत्ते तु इहं भवे[5] ॥

१९८५. एगत्तं उउबद्धे[6], जधेव[7] गमणं तु भंगचउरो य[8] ।
तध चेव य वासासुं, नवरि इमं तत्थ नाणत्तं ॥दारं॥

१९८६. पउरण्णपाणगमणं[9], इहरा[10] परिताव एसणाघातो ।
खेत्तस्स य[11] संकमणे, गुरुगा लहुगा य आरुवणा ॥दारं॥

१९८७. वारग जग्गण दोसा, जागरियादी[12] 'हवंति अन्नासु'[13] ।
तेणादि संक लोए, भाविणमत्थं व पासंति ॥दारं॥

१९८८. आसण्णखेत्तभावित[14], भिक्खादि[15] परोप्परं मिलंतेसु[16] ।
जा अट्ठमं अभावित, माणं[17] अडंत[18] बहू पासे ॥

१९८९. पायं न[19] रीयति जणो[20], वासे पडिवत्तिकोविदो[21] जो य ।
असतोवबद्धदूरे, न्य अच्छते जा पभायम्मि[22] ॥

१९९०. आयरियत्ते पगते, अणुयत्तंते तु[23] कालकरणम्मि ।
अत्थे सावेक्खो वा, वुत्तो इमओ[24] वि सावेक्खो ॥

१९९१. अतिसयमरिट्ठतो वा, धातुक्खोभेण वा धुवं मरणं ।
नाउं सावेक्खगणी, भणंति सुत्तम्मि जं वुत्तं ॥

१९९२. अन्नतर उवज्झायादिगा उ गीतत्थपंचमा पुरिसा ।
उक्कसण 'माणणं ति'[25] य, एगट्ठं ठावणा चेव[26] ॥

---

१. वासासू (स)।
२. इस गाथा के लिए टीकाकार ने भाष्यप्रपंचः का उल्लेख किया है किन्तु यह गाथा निर्युक्ति की होनी चाहिए।
३. एव (स)।
४. एतेसिं (अ)।
५. ब प्रति में इसका केवल प्रथम चरण प्राप्त है।
६. उदुबद्धे (अ,स)।
७. तधेव (अ)।
८. उ (स)।
९. x (ब)।
१०. इधरा (अ)।
११. उ (ब)।
१२. सागारियादी (अ,स)।
१३. होंति अन्नेसु (स)।
१४. ० भावण (ब)।
१५. भिक्खादी (ब)।
१६. मिलद्भिः गाथायां सप्तमी तृतीयार्थे (मवृ)।
१७. माणमिति वाक्यालंकारे (मवृ)।
१८. अडंतं (ब)।
१९. न य (अ)।
२०. यणो (ब)।
२१. पडिसेवति को ० (ब)।
२२. पहायम्मि (ब), पभायंति (स)।
२३. य (अ)।
२४. तिमओ (स)।
२५. माणण त्ति (ब)।
२६. इस गाथा का उत्तरार्ध अ प्रति में नहीं है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९९३. पुव्वं ठावेति गणे, जीवंतो गणधरं जहा[1] राया ।
कुमरे[2] उ परिच्छित्ता, रज्जरिहं ठावए रज्जे ॥

१९९४. दहिकुड अमच्च आणत्ति, कुमारा 'आणयण तहिं'[3] एगो ।
पासे निरिक्खिऊणं[4], असि मंति पवेसणे रज्जं ॥

१९९५. दसविधवेयावच्चे, नियोग कुसलुज्जयाणमेवं तु ।
ठावेति[5] 'सत्तिमंतं, असत्तिमंते'[6] बहू दोसा ॥

१९९६. दोमादी गीतत्थे, पुव्वुत्तगमेण सति गणं विभए[7] ।
मीसे व अणरिहे वा, अगीतत्थे वा भएज्जाहि[8] ॥

१९९७. गीताऽगीता मिस्सा[9], अधवा अत्थस्स देस[10] गहितो तू[11] ।
तत्थ अगीत अणरिहा[12], आयरियत्तस्स[13] होंती उ ॥

१९९८. 'कहमरिहो वि'[14] अणरिहो, 'किण्णु हु'[15] असमिक्खकारिणो थेरा ।
ठावेंति जं अणरिहं, चोदग ! सुण कारणमिणं तु ॥

१९९९. उप्पियण[16] भीतसंदिसण, अदेसिए[17] चेव फरुससंगहिते ।
वायगनिप्फायग[18] अण्णसीस इच्छा अधाकप्पो ॥नि. ३२३ ॥

२०००. सन्निसेज्जागतं दिस्स[19], सिस्सेहि[20] परिवारितं ।
कोमुदीजोगजुत्तं वा[21], तारापरिवुडं ससिं[22] ॥

२००१. गिहत्थपरतित्थीहिं, संसयत्थीहि निच्चसो ।
सेविज्जंतं[23] विहंगेहिं, सरं 'वा कमलोज्जलं'[24] ॥

२००२. खग्गूडे अणुसासंतं, सब्भावंतं समुज्जते ।
गणस्स अगिला कुव्वं, संगहं विसए सए ॥

२००३. इंगितागारदक्खेहिं, सदा छंदाणुवत्तिहिं ।
अविकूलितनिद्देसं[25], रायाणं व अगायगं[26] ॥

---

१. जध व (स) ।
२. कुमारे (स) ।
३. अतिणणं वहि (ब), अतिणण तहिं (स) ।
४. परिक्खि ० (ब) ।
५. ठावेंति (ब,स) ।
६. सत्तमत्तं असत्त ० (अ, ब, स) ।
७. वितए (अ) ।
८. सए ० (अ), ० ज्जाही (स) ।
९. मीसा (स) ।
१०. दोसो (अ) ।
११. उ (अ) ।
१२. णरिहा (ब) ।
१३. आयरिया तस्स (ब) ।
१४. अध अरिहो उ (अ,स) ।
१५. किण्हु (अ) ।
१६. उप्पेयण (अ) ।
१७. संदेविए (ब) ।
१८. ० निप्फायक (अ) ।
१९. पस्स (स) ।
२०. सीसेहि (अ) ।
२१. व (ब) ।
२२. ससी (स) ।
२३. ० ज्जंते (ब, स) ।
२४. व कमलु ० (अ, स) ।
२५. अविकूडित ० (ब) ।
२६. अपाणगं (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२००४. उप्पन्नगारवे एवं, गणि त्ति परिकंखितो ।
उप्पियंतं गणिं दिस्स, अगीतो भासते इमं ॥

२००५. अलं मज्झ गणेणं ति, तुब्भे जीवह मे चिरं ।
किमेतं[1] तेहि पुट्ठो उ, दिज्जते मे[2] गणो किल ॥

२००६. अट्ठाविते व[3] पुव्वं तु, गीतत्था उप्पियंतए ।
आमं[4] दाहामु एतस्स, सम्मतो एस अम्ह वि ॥

२००७. गीतत्थो 'य वयत्थो'[5] य, संपुण्णसुहलक्खणो ।
सम्मतो एस सव्वेसिं, साधू ते ठावितो गणे[6] ॥दारं ॥

२००८. असमाहियमरणं[7] ते, करेमि[8] जइ मे गणं ण ऊ देसि ।
इति 'गीते तु'[9] अगीते, संदिसए गुरु 'ततो भीतो'[10] ॥

२००९. आमं ति वोत्तु गीतत्था, जाणंता तं च कारणं ।
कथट्ठे तं तु निज्जूहे, 'अतिसेसी य'[11] संवसे ॥दारं ॥

२०१०. अरिहो वऽणरिहो होति, जो उ तेसिमदेसिओ ।
तुल्लदेसी व फरुसो[12], मधुरोव्व[13] असंगहो ॥दारं ॥

२०११. वायंतगनिप्फायग[14], चउरो भंगा तु पढमगो गज्झो ।
ततिओ तु होति सुण्णो[15], अण्णेण व सो पवाएति[16] ॥

२०१२ असती व अन्नसीसं, ठावेंति गणम्मि[17] जाव निम्मातो[18] ।
एसो चेव अणरिहो, अहवा वि इमो ससिस्सो[19] वि ॥

२०१३. जो[20] अणुमतो 'बहूणं, गणधर'[21] अचियत्त[22] दुस्समुक्किट्ठो[23] ।
दोसा अणिक्खिवंते, सेसा दोसं च पावेंति[24] ॥

२०१४. अब्भुज्जतमेगतरं, ववसितुकामम्मि होति सुत्तं तु ।
ते बेंति कुणसु एक्कं, गीतं पच्छा जहिच्छाते ॥

---

१. किमेय (ब) ।
२. मो (अ) ।
३. वि (अ) ।
४. आमो (ब, स) ।
५. तधवत्थो (अ), य ववत्थो (स) ।
६. x (ब), गणो (स) ।
७. ० माधीय ० (स) ।
८. करेंति (ब) ।
९. भीतो उ (अ) ।
१०. x (अ, ब) ।
११. अतिसीसे य (अ), ० सेसिय (स) ।
१२. फरसो (मवृ) ।
१३. ० व (अ, स) ।
१४. वायंतिगनिप्फावग (ब) ।
१५. पुण्णो (ब) ।
१६. वा वाएइ (मु) ।
१७. गणिम्मि (स) ।
१८. णिप्फातो (ब) ।
१९. ससीसो (अ, स) ।
२०. जा (अ) ।
२१. x (ब) ।
२२. अच्छियत्तो (ब) ।
२३. ० मुक्कट्ठो (स) ।
२४. पावंति (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०१५. 'निम्माऊणं एगं'[१], इमं पि मे निज्जराय दार तु ।
निक्खिव न निक्खिववामी, इत्थं इतरे तु खुब्भंति ॥

२०१६. दुसमुक्कट्ठं निक्खिव, भणंत[२] गुरुगा 'अणुट्ठितं तह य'[३] ।
एमेव अण्णसीसे[४], निक्खिवणा गाहिते[५] नवरिं ॥

२०१७. आवस्सग[६] सुत्तत्थे[७], भत्ते आलोयणा उवट्ठाणे ।
पडिलेहण[८] कितिकम्मं, मत्तग संथारगतिगं च ॥

२०१८. गेलण्णम्मि अधिकते[९], अठायमाणे सिया तु ओधाणं[१०] ।
भवजीवियमरणा[११] वा, संजमजीवा[१२] इमं होति ॥

२०१९ मोहेण व[१३] रोगेण[१४] व, ओधाणं भेसयं पयत्तेणं ।
धम्मकधानिमित्तेण[१५], अणाधसाला गवेसणता[१६] ॥नि. ३२४ ॥

२०२०. मोहेण पुव्वभणितं, रोगेण करेंतिमाएँ जतणाए ।
आयरियकुलगणे वा, 'संघे व'[१७] कमेण पुव्वुत्तं ॥

२०२१. छम्मासे आयरिओ, कुलं तु संवच्छराणि तिन्नि भवे ।
संवच्छरं गणो खलु, जावज्जीवं भवे संघो ॥

२०२२. अधवा बितियादेसो, गुरुवसभे भिक्खुमादि तेगिच्छं ।
जहरिह[१८] बारसवासा, तिछक्कमासा[१९] असुद्धेणं ॥

२०२३. पयत्तेणोसधं[२०] से, करेंति सुद्धेण उग्गमादीहिं ।
पणहाणीय अलंभे[२१], धम्मकहाहिं[२२] निमित्तेहिं ॥नि. ३२५ ॥

२०२४. तह वि[२३] न लभे असुद्धं, बहिठिय[२४] सालाहिवाणुसट्ठादी[२५] ।
नेच्छंते बहिदाणं, सलिंगविसणेण उड्डाहो ॥नि. ३२६ ॥

२०२५. पणगादी जा गुरुगा, अलब्भमाणे बहिं तु पाउग्गे ।
बहिठित सालगवेसण, तत्थ पभुस्साणुसट्ठादी'[२६] ॥

---

१. निम्माणकुणेगेहिं (ब), निम्माणेऊण एगं (स) ।
२. भण्णाति (ब) ।
३. ० ट्ठिहंते य (स) ।
४. असण्णीसे (अ) ।
५. गाहितं (ब) ।
६. आवासग (अ, ब) ।
७. सुत्तत्था (ब) ।
८. पडिलेहा (ब) ।
९. अतिकते (अ), अतिगते (ब) ।
१०. उद्धाणं (अ) ।
११. ० मरणं (ब) ।
१२. ० जीया (अ) ।
१३. च (ब) ।
१४. x (ब) ।
१५. धम्मकहादिनिमित्ते (अ) ।
१६. अधुना निर्युक्तिविस्तरः (मवृ) ।
१७. संघेण (अ, स) ।
१८. जहारिय (ब) ।
१९. ति छक्कि ० (स) ।
२०. पयत्तेण ओसधं (स) ।
२१. असंते (अ) ।
२२. ० कहादी (स) ।
२३. व (अ) ।
२४. बहिट्ठित्त (स) ।
२५. सालादिवा ० (ब) ।
२६. स प्रति में यह गाथा अनुपलब्ध है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०२६. 'असती अच्चियलिंगे'[1], पविसण पतिभाणवंत[2] वसभाओ[3] ।
जदि पडिवत्तियकुसला, भावेंति नियल्लगत्तं से ॥

२०२७. अधव पडिवत्तिकुसला, तो तेण समं करेंति उल्लावं ।
पभवंतो वि य सो वी, 'वसभे उ अणुत्तरीकुणति'[4] ॥

२०२८. तो भणति कलहमित्ता, तुब्भे वहेज्जह[5] मे उदंतं ति ।
ते वी[6] य पडिसुणंती, एवं एगाय छम्मासा ॥

२०२९. छम्मासा छम्मासा, बितिए ततियाय एव सालाए ।
'काऊ अट्ठारस'[7] ऊ, अपउण ताहे विवेगो उ ॥

२०३०. गुरुणो जावज्जीवं, फासुयअप्फासुएण तेगिच्छं[8] ।
वसभे बारसवासा, अट्ठारस भिक्खुणो मासा ॥

२०३१. ओहाविय भग्गवते[9], होंति उवट्ठा पुणो उवट्ठंते[10] ।
उक्कसणा[11] वा पगता, इमा वि अण्णा समुक्कसणा[12] ॥

२०३२. संभरण उवट्ठावण, तिण्णि उ पणगा हवंति उक्कोसा ।
माणणिज्ज पिंतादी उ[13], तेसऽसती छेद परिहारो ॥

२०३३. अच्छउ ता उट्ठवणा, पुव्वं पव्वावणादि[14] वत्तव्वा ।
अडयाल पुच्छ सुद्धे, भण्णति दुक्खं खु सामण्णं ॥

२०३४. गोयर अचित्तभोयण, सज्झायमण्हाण-भूमिसेज्जादी ।
अब्भुवगतम्मि दिक्खा, दव्वादीसुं पसत्थेसुं ॥

२०३५. लग्गादी व तुरंते, अणुकूले दिज्जते उ अहजायं ।
सयमेव तु थिरहत्थो, गुरू जहण्णेण तिण्णट्ठा ॥

२०३६. अण्णो वा थिरहत्थो[15], सामाइयतिगुणमट्ठगहणं[16] च ।
तिगुणं पादक्खिण्णं, नित्थारग[17] गुरुगुणविवड्ढी[18] ॥

२०३७. फासुयआहारो से, अणहिंडंतो य गाहए सिक्खं ।
ताहे उ उवट्ठावण, छज्जीवणियं तु पत्तस्स ॥

२०३८. अप्पत्ते अकहित्ता[19], अणभिगतऽपरिच्छ अतिक्कमे वा से ।
एक्केक्के चउगुरुगा, चोयग ! सुत्तं तु कारणियं ॥**नि. ३२७** ॥

---

१. x (अ) ।
२. पविभा ० (ब) ।
३. वसभा तु (स) ।
४. वसभे तु उत्तरी ० (स) ।
५. वभेज्जह (अ) ।
६. विं (ब) ।
७. कालत्तट्ठारस (अ, स) ।
८. तेयच्छं (ब) ।
९. भग्गविते (अ) ।
१०. अवट्ठंते (ब) ।
११. उवक्क ० (अ) ।
१२. ० सणं (अ) ।
१३. अधुना भाष्यनिर्युक्तिविस्तरः (मवृ), गाथा के तृतीय चरण में अनुष्टुप् छंद है ।
१४. पव्वायणा (अ) ।
१५. वरहत्थो (अ) ।
१६. ० गुण अट्ठ ० (अ) ।
१७. x (अ) ।
१८. गुरुगण ० (अ, ब) ।
१९. अकहितो (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०३९. अप्पत्ते[1] तु सुतेणं, परियागमुवट्ठवेंत[2] चउगुरुगा ।
आणादिणो य दोसा, विराहणा छण्ह कायाणं ॥दारं ॥

२०४०. 'सुत्तत्थं अकहित्ता'[3] जीवाजीवे य बंधमोक्खं च ।
उट्ठवणे चउगुरुगा, विराहणा जा भणितपुव्वं ॥दारं ॥

२०४१. अणधिगतपुण्णपावं, उवट्ठवेंतस्स चउगुरू होंति ।
आणादिणो य दोसा, मालाए होति दिट्ठंतो ॥ दारं ॥नि. ३२८ ॥

२०४२. उदउल्लादि परिच्छा, अहिगय नाऊण तो वते देंति ।
एक्केक्कं तिक्खुत्तो, जो न कुणति तस्स चउगुरुगा ॥

२०४३. उच्चारादि अथंडिल, वोसिर[4] ठाणादि वावि पुढवीए ।
नदिमादि दगसमीवे, सागणि निक्खित्त तेउम्मि ॥

२०४४. वियणऽभिधारण[5] वाते, हरिए जह पुढविए तसेसुं च ।
एमेव गोयरगते, होति परिच्छा उ काएहिं ॥

२०४५. दव्वादिपसत्थवया, एक्केक्क तिगं तु[6] उवरिमं हेट्ठा ।
दुविधा तिविधा य दिसा, आयंबिल निव्विगितिया वा ॥

२०४६. पिय-पुत्त खुड्ड[7] थेरे, खुड्डगथेरे अपावमाणम्मि ।
सिक्खावण पण्णवणा, दिट्ठंतो दंडियादीहिं ॥

२०४७. थेरेण अणुण्णाते, 'उवट्ठऽणिच्छे व ठंति'[8] पंचाहं ।
ति पणमणिच्छे[9] उवरिं[10], वत्थुसहावेण जाहीयं ॥

२०४८. दो थेर खुड्ड[11] थेरे, खुड्डग[12] वोच्चत्थ मग्गणा होति ।
रण्णो अमच्चमादी, संजतिमज्झे महादेवी ॥

२०४९. दो पत्त पिता-पुत्ता, एगस्स उ 'पुत्त पत्त'[13] न उ थेरा ।
गहितो[14] व सयं वितरति, राइणिओ होतु एस 'वि य'[15] ॥

---

१. अपत्ते (अ) ।
२. ० गउट्ठावेंते (ब) ।
३. ० मकहित्ता (अ), ० अवकहेंता (ब) ।
४. वोसिरण (अ) ।
५. वियाण ० (ब) ।
६. ति (ब) ।
७. खुद्द (ब) ।
८. उवउट्ठ व, णिच्छो ठवंति (ब) ।
९. ० मतिच्छे (ब) ।
१०. वुवरिं (अ) ।
११. खुद्द (अ) ।
१२. खुद्दग (अ) सर्वत्र ।
१३. पुत्तो पत्तो (अ, स) ।
१४. गधितो (ब) ।
१५. वितो (अ, ब), विया (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०५०. राया[1] रायाणो वा, दोण्णि वि समपत्त दोसु पासेसु ।
ईसर-सेट्ठि-अमच्चे, निगम[2] घडाकुल दुए खुड्डे ॥

२०५१. समगं तु अणेगेसुं, पत्तेसुं अणभिजोगमावलिया ।
एगतो दुहतो ठविता, समराइणिया जधासन्नं[3] ॥

२०५२. ईसिं अवणय[4] अंतो, वामे पासम्मि होति आवलिया ।
अभिसरणम्मि[5] य वुड्डी, ओसरणे सो व अण्णो वा ॥

२०५३. दप्पेण पमादेण व, वक्खेवेण व गिलाणतो वावि ।
एतेहि असरमाणे, चउव्विहं होति पच्छित्तं ॥**नि. ३२९** ॥

२०५४. वायामवग्गणादिसु[6], दप्पेण अणुट्ठवेंति[7] चउगुरुगा ।
विकधादिपमादेण व, चउलहुगा होंति बोधव्वा ॥

२०५५. सिव्वण-तुण्णण-सज्झाय-झाण-लेवादि दाण कज्जेसुं[8] ।
वक्खेवे होंति गुरुगो, गेलण्णेण तु मासलहू ॥

२०५६. धम्मकधा इड्डिमतो, वादे अच्चुक्कडे व गेलण्णे ।
'बितियं चरमपदेसुं'[9], दोसुं 'पुरिमेसु तं'[10] नत्थि ॥

२०५७. सरमाणे पंचदिणा, असरमाणे वि[11] तत्तिया चेव ।
कालो त्ति व समयो त्ति व, अद्धा कप्पो त्ति एगट्ठं ॥

२०५८. जाहे सुमरति[12] ताहे, असाहगं रिक्खलग्ग दिणमादी ।
बहुवक्खेवम्मि य गणे, सरियं पि पुणो वि विस्सरति ॥

२०५९. दसदिवसे चउगुरुगा, दसेव उ छल्लहु-छग्गुरू चेव ।
तत्तो छेदो मूलं, अणवट्ठप्पो य पारंची[13] ॥

२०६०. एसादेसो पढमो, बितिए तवसा अदम्ममाणम्मि ।
उभयबलदुब्बले वा, संवच्छरमादि साहरणं ॥

२०६१. एते दो आदेसा, मीसगसुत्ते हवंति नायव्वा ।
पढमबितीएसुं पुण, सुत्तेसु इमं तु णाणत्तं ॥

---

१. x (ब) ।
२. नियम (अ, ब) ।
३. x (ब) ।
४. अण्णो (स)
५. ० सरयम्मि (स) ।
६. ० णादीसु (स) ।
७. अणुवट्ठवंति (ब), णुट्ठवेंति (अ) ।
८. गाथायां सप्तमी तृतीयार्थे (मवृ) ।
९. बितियपयं चरिमे (अ, स) ।
१०. परमेसु ते (स) ।
११. व (ब) ।
१२. सुमिरति (ब) ।
१३. २०५९-२०६१ ये तीन गाथाएं ब प्रति में नहीं हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०६२. चउरो य पंच दिवसा, चउगुरू छ एव होति छेदो वि ।
तत्तो 'मूलं नवमं'[१], चरमं पि य एगसरगं तु ॥

२०६३. कीस गणो मे गुरुणो, हितो[२] त्ति इति भिक्खु अन्नहिं गच्छे ।
गणहरणेण कलुसितो, स एव भिक्खू[३] वए अण्णं ॥

२०६४. पव्वावितोऽगीतेहिं[४], अन्नहि गंतूण उभयनिम्मातो ।
आगम्म सेससाहण[५], ततो य साधू गतोऽण्णत्थ ॥

२०६५. तत्थ वि य अन्नसाधुं, अटे त्ती[६] अहिज्जमाण साधूणं ।
बेती[७] मा पढ एवं, 'किं तिय'[८] अत्थो न होएवं ॥

२०६६. अत्थो वि अत्थि[९] एवं, आम[१०] नमोक्कारमादि सव्वस्स ।
केरिस पुण अत्थो[११] ती, बेती सुण 'सुत्तमट्ट त्ति'[१२] ॥

२०६७. अट्टे चउव्विधे खलु, दव्वे नदिमादि जत्थ तणकट्ठा ।
आवत्तंते पडिया, अहव[१३] सुवण्णादियावट्टे ॥

२०६८. अहवा अत्तीभूतो, सच्चित्तादीहि होति दव्वेहिं[१४] ।
भावे कोहादीहिं[१५], अभिभूतो होति अट्टो उ ॥

२०६९. परिजुण्णो[१६] उ दरिद्दो, दव्वे धणरयणसारपरिहीणो ।
भावे नाणादीहिं[१७], परिजुण्णो एस[१८] लोगो उ ॥

२०७०. एवं सिद्धे अत्थे, सो बेती कत्थ मे अधीयं ति ।
'अमुगस्स सन्निगासे'[१९], अहगं पी तत्थ वच्चामि ॥

२०७१. सो तत्थ गतोऽधिज्जति, मिलितो सज्झंतिएहि उब्भामे ।
पुट्ठो सुत्तत्था ते, सरंति 'निस्साय कं विहरे'[२०] ॥

२०७२. अमुगं निस्साऽगीतो, विहरति कप्पेण गीतसिस्सस्स ।
अहमवि य तस्स[२१] कप्पा, जं वा भगवं उवदिसंति ॥

---

१. नवमं मूलं (अ)।
२. हतो (ब)।
३. भिक्खं (अ)।
४. ० अगीतेहि (स)।
५. ० साहसण (ब)।
६. आडि त्ति (अ), अट्टेत्ति य (स)।
७. बिंती (ब)।
८. कित्तिय (ब)।
९. अत्थ (अ, ब)।
१०. आमं (स)।
११. अत्थी (अ)।
१२. ० मट्ठम्मि (अ)।
१३. अधवा (अ)।
१४. दव्वम्मि (ब)।
१५. ० दीहि उ (अ)।
१६. परिभूतो (ब)।
१७. ० दीहं (ब)।
१८. सव्व (अ)।
१९. अमुग त्ति सन्नि ० (अ), अमुग सगासे (ब)।
२०. वा कहं विहरे (ब)।
२१. कस्स (मवृ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०७३. रायणियस्स ऊ गणो[1], गीतत्थोमस्स[2] विहरती निस्सा ।
जो जेण होति महितो[3], तस्साणादी 'न हावेमि'[4] ॥

२०७४. इति खलु आणा बलिया[5], आणासारो य गच्छवासो उ ।
मोत्तुं आणापाणुं, सा कज्जा सव्वहिं जोगे ॥

२०७५. अहवा तदुभयहेउं, आइण्णो[6] सो बहुस्सुत गणो उ ।
उस्सूरभिक्खखेत्ते, चइयाणं[7] चारिया जोगो ॥

२०७६. पंचाहग्गहणं पुण, बलकरणं होति पंचहि दिणेहिं ।
एग-दुग-तिण्णि-पणगा, आसज्ज बलं विभासाए ॥

२०७७. उवसंपज्जमाणेण, जा दत्ताऽऽलोयणा[8] पुरा ।
अवसण्णेहि[9] आगम्म, पडिक्कंतो उ भावतो ॥

२०७८. जा[10] याणुण्णवणा पुव्वं, कता साधम्मि उग्गहे ।
संभावणाय सालंद, जा भावो अणुवत्तती[11] ॥

२०७९. परं ति परिणते भावे, परिभूतो तु सो पुणो ।
नवोवसंपदाए[12] व, तत्थाऽऽलोए[13] पडिक्कमे ॥

२०८०. जइ पुण किं वावण्णो, तत्थ तु[14] आलोइउं उवट्ठाति[15] ।
विप्परिणयम्मि भावे, एमेव अविप्परिणयम्मि ॥

२०८१. उववातो निद्देसो, आणा विणओ य होंति[16] एगट्ठा ।
तस्सट्ठाए पुणरवि[17], मितोग्गहो वासगाणुण्णा ॥

२०८२. मितगमणं[18] चेट्ठणतो, मितभासिं मितं च भोयणं भंते ।
मज्झ धुवं अणुजाणह, जा य धुवा[19] गच्छमज्जाया ॥

२०८३. नियय[20] च तहावस्सं, अहमवि ओधायमादि जा मेरा ।
निच्चं जाव सहाए, न लभामि इधाऽऽवसे ताव ॥

---

१. गुरु (अ) ।
२. ० त्थोमिस्स (ब) ।
३. अधितो (अ) ।
४. निभावेमो (ब) ।
५. x (अ) ।
६. आदिण्णो (ब) ।
७. चययाणं (ब), वइयाणं (स) ।
८. उत्ता ० (अ, स) ।
९. ओसन्नेहि (अ, स) ।
१०. जो (ब) ।
११. ता णुअत्तती (स) ।
१२. न चेव सप ० (अ) ।
१३. जत्था ० (अ, स) ।
१४. वि (अ) ।
१५. अव ० (स) ।
१६. होति (स) ।
१७. पुणिरवि (ब) ।
१८. ० गमण (स) ।
१९. धुया (स) ।
२०. नितियं (अ, स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०८४. दिवसे दिवसे वेउट्टिया उ पक्खे व वंदणादीसु ।
पट्ठवणमादिएसु[१], उववाय पडिच्छणा बहुधा ॥

२०८५. अब्भुवगते तु गुरुणा, सिरेण संफुसति तस्स कमजुगलं ।
कितिकम्ममादिएसु य, निंतमणिंते य जे[२] फासा ॥

२०८६. भिक्खूभावो[३] सारण, वारण[४] पडिचोदणं जधापुव्वं[५] ।
तह चेव इयाणिं पी, निज्जुत्ती सुत्तफासेसा ॥

२०८७. आकिण्णो सो गच्छो, सुह-दुक्खपडिच्छएहि सीसेहिं[६] ।
दुब्बल-खमग-गिलाणे, निग्गम संदेसकहणे[७] य[८] ॥**नि. ३३०** ॥

२०८८. अहमवि 'एहामो ता'[९], अण्णत्थ इहेव मं[१०] मिलिज्जाह ।
अतिदुब्बले[११] य नाउं, विसज्जणा[१२] नत्थि[१३] इतरेसिं ॥

२०८९. तं चेव पुव्वभणितं, आपुच्छण मास दोच्चऽणापुच्छा ।
उवजोग बहिं सुणणा, साधू सण्णी गिहत्थेसु ॥

२०९०. नाऊण य निग्गमणं, पडिलेहण सुलभ-दुल्लभं भिक्खं ।
जे य गुणा आपुच्छा, जे वि य दोसा अणापुच्छा ॥

२०९१. पच्चंत[१४] सावयादी[१५], तेणा दुब्भिक्ख तावसीओ य ।
नियगपदुद्धाणा[१६], फेडणा य[१७] हरियपण्णी[१८] य[१९] ॥

२०९२. अण्णत्थ तत्थ 'विपरिणते या'[२०] गेलण्णे होति चउभंगो ।
फिडिता[२१] गतागतेसु य, 'अपुण्ण ~पुण्णेसु'[२२] वा दोच्चं[२३] ॥**नि. ३३१** ॥

२०९३. अवरो परस्स निस्सं, जदि खलु सुह-दुक्खिया करेज्जाहि ।
अब्भंतरा[२४] उ सेहं, लभति गुरू पुण न लभती तु ॥

२०९४. गेलण्णे चउभंगो, तेसिं अहवा वि होज्ज आयरिए ।
दोण्हं पी होज्जाही, अहव न होज्जाहि दोण्हं पि[२५] ॥

---

१. ० एसु य (स) ।
२. जा (अ, ब) ।
३. भिक्खोवतो (अ, स) ।
४. x (अ) ।
५. ० पुव्विं (अ) ।
६. सिस्सेहिं (अ, स) ।
७. ० करणे (स) ।
८. साम्प्रतमेषा वक्ष्यमाणा सूत्रस्पर्शिकानिर्युक्तिः (मवृ) ।
९. एहमेत्तो (अ), एहमोत्त (स) ।
१०. मिं (स) ।
११. इति ० (स) ।
१२. विभज्जणा (स) ।
१३. नत्थि य (ब) ।
१४. पुच्छंत (ब) ।
१५. सावताइं (स) ।
१६. दुट्ठद्धाणे (अ) ।
१७. या (ब), x (स) ।
१८. ० पल्ली (स) ।
१९. या (ब) ।
२०. विप्परिणते य (स) ।
२१. फेडिया (अ) ।
२२. पुण्णऽपुण्णेसु (अ) ।
२३. निर्युक्तिमाह (मवृ) ।
२४. ० तर (अ) ।
२५. पी (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०९५. आयरिय अपेसंते, लहुओ अकरेंत चउगुरू होंति ।
परितावणादि दोसा, तेसिं अप्पेसणे[1] एवं ॥

२०९६. अहवा दोण्ह वि होज्जा, ऽसंथरमाणेहि तह वि गविसणया[2] ।
तं चेव य पच्छित्तं, असंथरंता भवे सुद्धा ॥

२०९७. हट्ठेणं न गविट्ठा, अतरंत न ते य विप्परिणया उ ।
तत्थ वि न लभति सेहे, लभति[3] कज्जे विपरिणया वि[4] ॥

२०९८. लद्धुं[5] अविप्परिणते, कधेंति भावम्मि विप्परिणयम्मि[6] ।
इति मायाए गुरुगो, सच्चित्तादेसगुरुगा वा ॥

२०९९. सुहदुक्खिया गविट्ठा, सो चेव य उग्गहो य सीसा य ।
विप्परिणमंतु मा वा, अगविट्ठेसुं तु सो न लभे[7] ॥

२१००. विप्परिणतम्मि भावे, लद्धं अम्हेहि बेंति[8] जइ पुट्ठा ।
पच्छा[9] पुणो वि जातो, लभंति दोच्चं अणुण्णवणा ॥

२१०१. आगतमणागताणं, उडुबद्धे[10] सो विधी तु जा भणिता ।
अद्धाणसीसगामे[11], एस विहीए ठिय[12] विदेसं ॥

२१०२. सत्थेणं सालंबं[13], गतागताण इह मग्गणा होति[14] ।
तत्थऽण्णत्थ[15] गिलाणे, लहु-गुरु-लहुगा चरिम जाव ॥

२१०३. पुण्णे व[16] अपुण्णे वा, विपरिणतेसु जा होतऽणुण्णवणा ।
गुरुणा वि न[17] कायव्वा, संकालद्धे[18] विपरिणते उ ॥

२१०४. पारिच्छनिमित्तं वा, सब्भावेणं च बेति[19] तु पडिच्छे ।
उवसंपज्जितुकामे, मज्झं तु अकारगं इहइं ॥

२१०५. अण्णं गविसह खेत्तं, पाउग्गं 'जं च'[20] होति सव्वेसिं ।
बालगिलाणादीणं, सुहसंथरणं महाणस्स ॥

---

१. पि अपेसणे (अ) ।
२. गवेस ० (ब) ।
३. लब्भति (अ) ।
४. वी (स) ।
५. अद्धं (ब) ।
६. विपरि ० (स) ।
७. लभवे (ब) ।
८. होंति (स) ।
९. पुच्छा (ब) ।
१०. उउ ० (ब) ।
११. ० सीसगम्मि वि (ब, स) ।
१२. पट्ठिय (स) ।
१३. सावलभं (स) ।
१४. होंति (अ) ।
१५. तत्थ नत्थि (ब), ० ण्णत्थि (स) ।
१६. वा (अ, स) ।
१७. हु (ब) ।
१८. ० लद्धम्मि (स) ।
१९. वण्णति (स) ।
२०. जत्थ (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१०६. कतसज्झाया एते, पुव्वं गहितं[१] पि नासते अम्हं[२] ।
खेत्तस्स अपडिलेहा, अकारका तो[३] विसज्जेति[४] ॥

२१०७. सव्वं करिस्सामु[५] ससत्तिजुत्तं, इच्चेवमिच्छंत पडिच्छिऊणं ।
निद्देसबुद्धीय न यावि भुंजे, तं वाऽगिला पूरयते सि इच्छं ॥

२१०८. निट्ठितमहल्लभिक्खे, कारण उवसग्गऽगारिपडिबंधो[६] ।
पढमचरिमाइ मोत्तुं, निग्गम सेसेसु ववहारो ॥नि. ३३२ ॥

२१०९. सम्मत्तम्मि सुते तम्मि, निग्गमो तस्स होति इच्छाए ।
मंडलि महल्लभिक्खे, जह अन्ने सो वि[७] जावए ॥दारं ॥

२११०. कारणे असिवादिम्मि, सव्वेसिं[८] होति निग्गमो ।
दंसमादि उवसग्गे, सव्वेसिं एवमेव[९] तू[१०] ॥

२१११. नीयल्लएहिं[११] उवसग्गो, जदि गच्छंति नेतरे[१२] ।
निग्गच्छति ततो एगो, पडिबंधो वावि[१३] भावतो ॥

२११२. आतपरोभयदोसेहि, जत्थऽगारीय होज्ज पडिबंधो ।
तत्थ न संचिट्ठेज्जा[१४], नियमेण तु निग्गमो तत्थ ॥

२११३. पढमचरिमेसऽणुण्णा, निग्गम सेसेसु होति ववहारो ।
पढमचरिमाण निग्गम, इमा उ जयणा तहिं होति ॥

२११४. सरमाणे उभए वी, काउस्सग्गं[१५] तु काउ वच्चेज्जा ।
पम्हुट्ठे दोण्ह वि ऊ, आसन्नातो नियट्टेज्जा[१६] ॥

२११५. दूरगतेण तु सरिए साधम्मिं[१७] दट्ठु तस्सगासम्मि ।
काउस्सग्गं काउं, जं लद्धं तं च पेसेति ॥

२११६. पढमचरमाण एसो, निग्गमणविही समासतो भणितो ।
एत्तो मज्झिल्लाणं, ववहारविधिं तु वोच्छामि ॥

२११७. सज्झायभूमि[१८] वोलंते, जोए छम्मास पाहुडे ।
सज्झायभूमि दुविधा, आगाढा चेवऽणागाढा ॥नि. ३३३ ॥

---

१. गधितं (अ) ।
२. अमुं (अ) ।
३. ता (अ) ।
४. विसज्जेहि (अ), यह गाथा ब प्रति में नहीं है ।
५. ० स्सामो (स) ।
६. ० एकारि ० (अ) ।
७. तह (स) ।
८. सव्वे से (ब) ।
९. ० मेवं (स) ।
१०. x (अ, ब) ।
११. णीयणएहिं (ब) ।
१२. ते नरे (ब) ।
१३. टीका की व्याख्या एवं छंद की दृष्टि से वावि के स्थान पर व पाठ होना चाहिए ।
१४. संचिक्खेज्जा (अ, स) ।
१५. x (ब) ।
१६. नियत्तेज्जा (स) ।
१७. साधम्मी (स) ।
१८. ० भूमी (अ, स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२११८. जहण्णेण तिण्णि[1] दिवसा, णागाढुक्कोस[2] होति बारस तु ।
एसा दट्ठीवाए[3], महकप्पसुतम्मि[4] बारसगं ॥नि. ३३४ ॥

२११९. सकंतो य[5] वहंतो, काउस्सग्गं तु छिन्नउवसंपा ।
अकयम्मी उस्सग्गो, जा पढती[6] तं सुतक्खंधं ॥

२१२०. ता लाभो उद्दिसणायरियस्स जदि वहति वट्टमाणिं से ।
अवहंतम्मि[7] उ लहुगा, एस विधी होइऽणागाढे[8] ॥

२१२१. आगाढो वि जहन्नो, कप्पिगकप्पादि तिण्णऽहोरत्ता ।
उक्कोसो छम्मासो, वियाहपण्णत्तिमागाढे[9] ॥नि. ३३५ ॥

२१२२. तत्थ वि[10] काउस्सग्गं, आयरियविसज्जितम्मि छिन्ना तु ।
संसरमसंसरं वा, 'अकाउस्सगं तु भूमीए'[11] ॥

२१२३. तीरिंत अकते उ गते, जावन्नं[12] न पढते उ[13] ता पुरिमा ।
आसन्नाउ नियत्तति, दूरगतो वावि अप्पाहे ॥दारं ॥

२१२४. अतोसविते[14] पाहुडे, णिंते छेदो पडिच्छ[15] चउगुरुगा ।
जो वि य तस्स उ लाभो, तं पि य न लभे[16] पडिच्छंतो ॥

२१२५. तत्थ वि य अच्छमाणे, गुरुलहुया सव्वभंग[17] जोगस्स ।
आगाढमणागाढे[18], देसे भंगे उ गुरु-लहुओ ॥

२१२६. आयंबिलं न कुव्वति, भुंजति विगती उ[19] सव्वभंगो उ ।
चत्तारि पगारा पुण, होंति इमे देसभंगम्मि ॥

२१२७. न करेति[20] भुंजिऊणं, करेति काउं सयं च भुंजति[21] उ ।
वीसज्जेह[22] मम्मंतिय, गुरु-लहुमासो विसिट्ठो उ ॥

२१२८. एक्केक्के आणादी, विराधणा होति संजमायाए[23] ।
अहवा कज्जे[24] उ इमे, दट्ठुं जोगं विसज्जेज्जा[25] ॥नि.३३६ ॥

---

१. तन्नि (ब) ।
२. अणागा ० (स) ।
३. दिट्ठिवाए (अ) ।
४. तम्भ क ० (अ) ।
५. उ (अ, स) ।
६. पढति (अ), पढमं (स) ।
७. उव ० (अ) ।
८. होति अणगाढे (अ, स) ।
९. विवाह ० (ब) ।
१०. वि य (अ), वि उ (स) ।
११. अकए लभंतो भूमी ए (अ) ।
१२. जायपणं (ब), जा अन्नं (स) ।
१३. x (ब) ।
१४. अविओसंते (अ) ।
१५. परिच्छ (अ) ।
१६. लंभे (अ) ।
१७. सव्वे भंगे (अ) ।
१८. आगाढ अणा ० (ब) ।
१९. तो (स) ।
२०. करेंति (स) ।
२१. भुंजती (स) ।
२२. ० ज्जेहि (स) ।
२३. संजमतीते (ब) ।
२४. करेज्जं (अ) ।
२५. विवेज्जे ० (अ, स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१२९. दट्ठु विसज्जण जोगे, गेलण्णं वय महामहड्ढाणे[1] ।
आगाढ नवगवज्जण, निक्कारण[2] कारणे विगती ॥नि. ३३७ ॥

२१३०. जोगे गेलण्णम्मि य, आगाढियरे य होति चउभंगो[3] ।
पढमो उभयागाढो, बितिओ ततिओ य एक्केणं ॥

२१३१. उभयम्मि वि आगाढे, 'दट्ठे पक्कुद्धरेहि'[4] तिण्णि दिणे ।
मक्खेंति[5] अठायंते, पज्जंत[6] धरे दिणे तिन्नि ॥

२१३२. जत्तियमेत्ते दिवसे, विगतिं सेवति न उद्दिसे तेसु[7] ।
तह वि य अठायमाणे, निक्खिवणं सव्वहा जोगो ॥

२१३३. जदि निक्खिप्पति दिवसे, भूमीए तत्तिए उवरि वड्ढे[8] ।
अपरिमितं तुद्देसो, भूमीए उवरितो[9] कमसो ॥

२१३४. गेलण्णमणागाढे, रसवति[10] नेहोव्वरे असति पक्का ।
तह वि य अठायमाणे, आगाढतरं[11] तु निक्खिवणा ॥दारं ॥

२१३५. तिण्णि तिगेगंतरिते, गेलण्णागाढ निक्खिव परेणं ।
तिण्णि तिगा अंतरित चउत्थभंगे व[12] निक्खिवणा[13] ॥दारं ॥

२१३६. वइया अजोगि जोगी, व अदढ अतरंतगस्स दिज्जंते ।
निव्विगितियमाहारो[14], अंतरविगतीय निक्खिवणं ॥

२१३७. आयंबिलस्सऽलंभे, चउत्थमेगंगियं[15] च तक्कादी ।
असतेतरमागाढे, निक्खिवणुद्देस तह चेव ॥दारं ॥

२१३८. जदि निक्खिप्पति दिवसे, भूमीए तत्तिए उवरि वड्ढे ।
अपरिमितं तुद्देसो, भूमीए उवरितो कमसो[16] ॥

२१३९. सक्कमहादीएसु व, 'पमत्त मा तं'[17] सुरा छले ठवणा ।
पीणिज्जंतु व अदढा, इतरे 'उ वहंति'[18] न पढंति ॥

१. ० महड्ढाणे (स) ।
२. ० रणे (अ) ।
३. चतुर्भंगी गाथायां पुंस्त्वनिर्देशः प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
४. दड्ढेल्लग पक्कएहि (स) ।
५. मक्खेति (स) ।
६. पच्चंत (स, अ) ।
७. तं तु (स) ।
८. तु वुड्ढे (ब) ।
९. रिए (स) ।
१०. रसमणि (अ, स) ।
११. मागाढ ० (अ, ब, स) ।
१२. वि (अ, स) ।
१३. ० वणिं (ब) ।
१४. निव्वीति ० (स) ।
१५. चउत्थ एगंगियं (अ) ।
१६. यह गाथा सभी हस्तप्रतियों में नहीं है किन्तु टीका की मुद्रित प्रति में प्राप्त है । विषयवस्तु की दृष्टि से यह गाथा यहां प्रासंगिक प्रतीत होती है ।
१७. पमत्तगाणं (अ) ।
१८. उवहुंति (अ, ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१४०. अद्धाणं-म[१] जोगीणं, एसियं सेसगाण[२] पणगादी ।
असतीय अणागाढे, 'निक्खिव सव्वाऽसती'[३] इतरे ॥दारं ॥

२१४१. आगाढम्मि उ[४] जोगे, विगतीओ नव वि वज्जणीया उ ।
दसमाय[५] होति भयणा, सेसग भयणा वि इतरम्मि ॥

२१४२. निक्कारणे न कप्पंति, विगतीओ जोगवाहिणो ।
कप्पंति कारणे भोत्तुं, अणुण्णाया[६] गुरूहि उ ॥

२१४३. विगतीकए ण जोगं, निक्खिवए अदढे बले ।
स भावतो अनिक्खित्ते[७], निक्खित्ते वि य तम्मि उ ॥

२१४४. विगतिकते[८] ण जोगं[९] निक्खिवे 'दढ-दुब्बले'[१०] ।
से भावतो अनिक्खित्ते[११], उववातेण गुरूण उ ॥

२१४५. सालंबो विगतिं जो उ, आपुच्छित्ताण[१२] सेवए[१३] ।
स जोगे देसभंगो उ, सव्वभंगो विवज्जए ॥

२१४६. जह कारणे[१४] असुद्धं, भुंजंतो न उ असंजतो[१५] होति ।
तह कारणम्मि जोगं, न खलु अजोगी ठवेंतो उ[१६] ॥

२१४७. अण्णो इमो पगारो, पडिच्छयस्स उ अहिज्जमाणस्स ।
माया-नियडीजुत्तो[१७], ववहार सचित्तमादिम्मि[१८] ॥

२१४८. उप्पण्णे उप्पण्णे, सच्चित्ते जो उ निक्खिवे जोगं ।
सव्वेसिं गुरुकुलाणं, उवसंपद[१९] लोविता तेण ॥नि. ३३८ ॥

२१४९. बहिया[२०] य अणापुच्छा, विहीय आपुच्छणाय मायाए ।
गुरुवयणे पच्छकडो[२१], अब्भुवगम तस्स इच्छाए ॥नि. ३३९ ॥

२१५०. अहिज्जमाणे[२२] उ सचित्तं, उप्पण्णं तु जया भवे जोगो ।
निक्खिप्पंतं भंते !, कज्जं मे किंचि बेती तु ॥

---

१. अद्धाणो मे (स, ब) ।
२. सेसाण (ब) ।
३. निक्खिवण सव्वऽसति (ब) ।
४. य (स) ।
५. दसगाय (स) ।
६. अणुण्णतो (स) ।
७. उ निक्खित्ते (ब) ।
८. ० करणे (अ) ।
९. जा जोगं (अ, ब)
१०. अदढे बले (अ) ।
११. उ निक्खित्ते (अ) ।
१२. ० त्ताणि (ब, स) ।
१३. सेवइ (अ, स) ।
१४. करणे (अ) ।
१५. असंजमो (ब) ।
१६. वि (स) ।
१७. ० जुओ (अ) ।
१८. ० मादम्मि (ब) ।
१९. उवसंपज्ज (ब) ।
२०. बधिता (अ) ।
२१. पच्छु ० (अ) ।
२२. ० माणं (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१५१. बहिया[१] व अणापुच्छा, उब्भामे लभिय सहमादी[२] तु ।
नेति सय पेसवेति व, आसन्नठिताण तु[३] गुरूणं ॥दारं ॥

२१५२. अहवुप्पण्णे सच्चित्तादी मा मे य एतहंच्छिन्ती[४] ।
मायाए आपुच्छति, नायविधिं गंतुमिच्छामि ॥

२१५३. पव्वावेउं तहियं, नालमणाले य पत्थवे गुरुणो ।
आगंतुं च निवेदति[५], लद्धा[६] मे 'नालबद्ध त्ति'[७] ॥दारं ॥

२१५४. ण्हाणादिसु इहरा[८] वा, दट्ठुं पुच्छा कया सि पव्वविता[९] ।
अमुएण अमुगकालं[१०], इह पेसवियाणिता वावि ॥

२१५५. सो तु पसंगऽणवत्था[११], निवारणट्ठाय मा हु अण्णो वि ।
काहिति एवं होउं, गुरुयं आरोवणं देति[१२] ॥

२१५६. अब्भुवगतस्स सम्मं, तस्स उ पणिवइय वच्छलो कोवि[१३] ।
वितरति तच्चिय सेहे, एमेव य वत्थपत्तादी[१४] ॥

२१५७. एवं तु अहिज्जंते, ववहारो अभिहितो समासेण ।
अभिधारेंते इणमो, ववहारविधिं पवक्खामि ॥

२१५८. जं होति नालबद्धं, धाडियणाती व जो 'व तल्लाभं'[१५] ।
भोएहिति विमग्गंतो, छव्विह सेसेसु आयरिओ[१६] ॥

२१५९. उवसंपज्जते[१७] जत्थ, तत्थ पुट्ठो[१८] भणाति तू ।
वयचिंधेहि संगारं, वण्ण सीते यऽणंतगं ॥

---

१. बाधिता (अ) ।
२. ० मादि (स) ।
३. य (ब) ।
४. एतहिंच्छती (स) ।
५. निवेदं (अ), निवेदे (स) ।
६. लद्ध (ब) ।
७. ० बद्धंति (ब) ।
८. इहरो (स) ।
९. पव्वतितो (अ, स) ।
१०. अमुइकालं (स) ।
११. ० गं अण ० (अ) ।
१२. देंति (स) ।
१३. कोइ (अ, स) ।
१४. ० पत्तावि (स) ।
१५. तहिं लंभो (अ, स) ।
१६. इस गाथा के बाद टीका की मुद्रित पुस्तक में निम्न गाथा भाग के क्रम में मिलती है किन्तु सभी हस्तप्रतियों में यह गाथा अप्राप्त है । यह गाथा प्रसंगवश यहां उद्धृत कर दी गई है, ऐसा प्रतीत होता है—
वल्ली संतरऽणंतर, अणंतरा छज्जणा इमे हुंति ।
माया पिया य भाया, भगिणी पुत्तो य धूया य ॥
१७. उवसंपज्जंते (अ) ।
१८. अपुट्ठो (अ, स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१६०. नालबद्धा उ लब्भंते, जया तमभिधारए ।
जे यावि चिंधकालेहिं, संवतंति उवट्ठिता ॥

२१६१. अण्णकाले वि[1] आयाता, कारणेण उ केण वि ।
ते वि तस्साभवंती उ, विवरीयायरियस्स उ ॥

२१६२. विप्परिणयम्मि भावे, जदि भावो सिं[2] पुणो वि उप्पण्णो ।
ते होंतायरियस्स[3] उ, अधिज्जमाणे[4] य जो लाभो ॥

२१६३. जे यावि वत्थपातादी[5], चिंधेहि संवयंति उ ।
आभवंती[6] उ ते तस्सा, विवरीयायरियस्स उ[7] ॥

२१६४. नालबद्धे उ लब्भंते, जया तमभिधारए ।
जो य लाभो[8] तहिं कोइ, वल्लीसंतरणं[9] तेण[10] ॥दारं ॥

२१६५. आभवंताधिगारे उ, वट्टते तप्पसंगता ।
आभवंता इमे वण्णे[11], सुहसीलादि आहिता ॥

२१६६. सुहसीलऽणुकंपातट्ठिते[12], य[13] संबंधि खमग गेलण्णे ।
सच्चित्तेसऽसिहाओ, पकट्टए[14] धारए उ दिसा ॥नि.३४० ॥

२१६७. सुहसीलताय पेसेति[15], कोइ दुक्खं खु[16] सारवेउं जे ।
देति उ आतट्ठीणं, सुहसीलो दुट्ठसीलो त्ति ॥

२१६८. तणुगं पि नेच्छए दुक्खं, सुहमाकंखए सदा ।
सुहसीलतए तावी[17] सायागारवनिस्सितो[18] ॥दारं ॥

२१६९. एमेव य असहायस्स, देति कोइ अणुकंपयाए उ ।
नेच्छति परमातट्ठी[19], गच्छा निग्गंतुकामो वा ॥दारं ॥

२१७०. पेसवे सो उ[20] अन्नत्थ, सिणेहा णातगस्स वा ।
खमए वेयवच्चट्ठा[21], देज्ज वा तहि कोति तु ॥दारं ॥

---

१. ति (स) ।
२. सि (अ, ब) ।
३. होति आय ० (ब), आचार्यस्य गाथायामेकवचनं प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
४. अहि ० (ब) ।
५. गाथायां पुंस्त्वं प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
६. ० वंति (ब) ।
७. यह गाथा टीका की मुद्रित पुस्तक में भागा के क्रम में न होकर उद्धृत गाथा के रूप में है किन्तु सभी हस्तप्रतियों में यह उपलब्ध है तथा विषयवस्तु के क्रम में भी संगत प्रतीत होती है ।
८. लाभा (अ) ।
९. ० मंतरण (ब) ।
१०. यह गाथा टीका की मुद्रित पुस्तक एवं स प्रति में अप्राप्त है । किन्तु अ, ब प्रति में यह मिलती है ।
११. X (ब), अण्णे (अ) ।
१२. सुहसीला ० (अ), ० कंपा इति ठिते (ब) ।
१३. व (स) ।
१४. पयट्टए (ब), पयड्डए (स) ।
१५. देसेति (स) ।
१६. व (स) ।
१७. वादी (ब) ।
१८. सदागा ० (अ, ब) ।
१९. परमाठिती (ब) ।
२०. ० वेसि (ब), पेसवेति (अ) ।
२१. वेयाव ० (ब), वेज्जव ० (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१७१. पेसेति गिलाणस्स व, अधव गिलाणे सयं अचायंतो[1] ।
पेसंतस्स उ असिहो, ससिहो पुण पेसितो जस्स ॥दारं ॥

२१७२. चोदेती[2] कप्पम्मी[3], पुव्वं भणितं[4] तु[5] पेसितो जस्स ।
ससिहो वा असिहो वा, असंथरे सो तु तस्सेव ॥

२१७३. भण्णति पुव्वुत्तातो[6], पच्छा वुत्तो विही भवे बलवं ।
कामं कप्पेऽभिहितं, इह असिहं दाउ न लभति तु ॥

२१७४. संविग्गाण विधी एसो, असंविग्गे न दिज्जते ।
कुलिच्चो व गणिच्चो वा, दिण्णं पि तं तु कड्डए ॥

२१७५. खित्तादी आउरे भीते, अदिसत्थी[7] व जं दए ।
सच्चित्तादी कुलादीओ, भुज्जो तं परिकड्डए ॥

२१७६. नालबद्धे अनाले वा, सीसम्मि नत्थि[8] मग्गणा ।
दोक्खरक्खरदिट्ठंता, सव्वं आयरियस्स उ ॥

२१७७. चारियसुत्ते भिक्खू[9], थेरो वि य अधिकितो[10] इहं तेसिं ।
दोण्ह वि विहरंताणं, का मेरा लेसतो जोगो ॥

२१७८. साहम्मियत्तणं वा, अणुयत्तति होतिमे वि साधम्मी ।
उवसंपया व[11] पगता, 'इहं पि उवसंपया'[12] तेसिं ॥

२१७९. साधम्मि पडिच्छन्ने, उवसंपय दोण्ह वी पलिच्छेदो ।
वोच्चत्थ मासलहुओ, कारण असती सभावो वा[13] ॥नि. ३४१ ॥

२१८०. सज्झंतियंतवासिणो, दो वि भावेण नियमसो छन्नो ।
रायणिए उवसंपय, सेहतरगेण य कायव्वो ॥

२१८१. आलोइयम्मि सेहेण, तस्स विगडे उ पच्छराइणिओ ।
इति अकरणम्मि[14] लहुगो, अवरोवर[15] गव्वतो लहुगा ॥

२१८२. एगस्स उ[16] परिवारो[17], बितीए[18] रायणियत्तवादो[19] य ।
इति गव्वो न कायव्वो, दायव्वो चेव संघाडो[20] ॥

---

१. अचाएतो (स)।
२. चोदेति (अ)।
३. ० म्मि (स)।
४. भणती (स)।
५. ति (ब)।
६. पुव्वत्तातो (स)।
७. अदिसित्थी (स)।
८. तत्थ (अ)।
९. भिक्ख (अ)।
१०. अधिकितं (अ), अधिकतो (स)।
११. य (ब, स)।
१२. इहइं पुवसंपया (मु)।
१३. टीकाकार ने इस गाथा के लिए भाष्यविस्तर: का उल्लेख किया है किन्तु यह निर्युक्ति की होनी चाहिए।
१४. अकार ० (अ)।
१५. अपरोप्पर (स)।
१६. य (स)।
१७. परीवारो (स)।
१८. बितिए (अ, स)।
१९. रातिणित्तवादो (अ)।
२०. गाथा के द्वितीय चरण में आर्या छंद है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१८३. पेहाभिक्खकितीओ, करेंति सो यावि[1] ते पवाएति ।
न पहुप्पंते दोण्ह वि, गिलाणमादीसु च न देज्जा ॥

२१८४. अत्तीकरेज्जा[2] खलु जो विदिण्णे, एसो वि मज्झंति महंतमाणी ।
न तस्स ते देति बहिं तु नेउं, तत्थेव किच्चं पकरेंति[3] जं से[4] ॥

२१८५. वारंवारेण[5] से देति, न य दावेति वायणं ।
तह वि भेदमिच्छंत, अविकारी[6] तु कारए ॥

२१८६. रायणियपरिच्छन्ने, उवसंप पलिच्छओ य इच्छाए ।
सुत्तत्थकारणा पुण, पलिच्छदं[7] देंति आयरिया ॥

२१८७. सुत्तत्थं जदि गिण्हति, तो से देति पलिच्छदं ।
गहिते वि देति संघाडे, मा से नासेज्ज[8] तं सुतं ॥

२१८८. अबहुस्सुते न देती[9], निरुवहते तरुणए य संघाडं ।
घेत्तूण जाव वच्चति, तत्थ उ गोणीय दिट्ठंतो ॥

२१८९. साडगबद्धा गोणी, जध तं घेत्तुं पलाति दुस्सीलो ।
इय विप्परिणामेंते[10], न देज्ज संते वि हु सहाए ॥

२१९०. संखऽहिगारा तुल्लाधिगारिया[11] एस लेसतो जोगो ।
आयरियस्स व सिस्सो[12], भिक्खु अभिक्खू[13] अह तु भिक्खू ॥

२१९१. एमेव सेसएसु वि, गुणपरिवड्ढीय ठाणलंभो उ ।
दुप्पभिई[14] खलु संखा, बहुओ पिंडो तु तेण परं ॥

२१९२. संभोइयाण दोण्हं, खेत्तादी पेहकारणगताणं ।
पंते समागताणं, भिक्खूण[15] इमा भवे[16] मेरा ॥

२१९३. भिक्खुस्स मासियं[17] खलु, पलिच्छणाणं च सेसगाणं तु ।
चउलहुगऽपलिच्छण्णे, तम्हा उवसंपया तेसिं[18] ॥**नि. ३४२** ॥

२१९४. दो भिक्खूऽगीतत्था[19],गीता 'एक्को व'[20] होज्ज[21] उ अगीते ।
राइणियपलिच्छन्ने, पुव्वं इतरेसु लहुलहुगा ॥

---

१. वावि (अ), तावि (स)।
२. ० करेज्ज (स)।
३. पगरेंति (अ)।
४. सो (ब)।
५. ० वारएण (स)।
६. अधिकारी (अ, ब)।
७. पलिच्छगो (ब)।
८. नासेति (अ)।
९. देंति (स)।
१०. जा परिणामेंते (अ, स)।
११. तुण्णाधि ० (ब)।
१२. सीसो (स)।
१३. अभिक्खु (अ, स)।
१४. ० भितिं (स)।
१५. भिक्खण (अ)।
१६. ठवे (स)।
१७. मासयं (स)।
१८. एनामेव निर्युक्तिगाथां भाष्यकृद् व्याचिख्यासुः .... (मवृ) ।
१९. ० अगीतत्थी (ब)।
२०. एक्केक्कं (ब)।
२१. होउ (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१९५. दोसु अगीतत्थेसुं, अधवा गीतेसु सेहतर पुव्वं[१] ।
जदि नालोयति[२] लहुगो, न विगडे इयरो वि जदि पच्छा ॥

२१९६. 'रायणिए गीतत्थेण'[३], राइणिए चेव विगडणा पुव्विं ।
देंति विहारविगडणं, तो पच्छा राइणियसेहे ॥

२१९७. सेहतरगे वि पुव्वं[४], गीयत्थे दिज्जते[५] पगासणया[६] ।
पच्छा गीतत्थो वि हु, ददाति आलोयणमगीतो ॥

२१९८. अवराहविहारपगासणा य[७] दोण्णि[८] व भवंति गीतत्थे ।
अवराहपयं मोत्तुं, पगासणं होतऽगीतत्थे[९] ॥

२१९९. भिक्खुस्सेगस्स गतं, पलिच्छण्णाण इदाणि वोच्छामि ।
दव्वपलिच्छाएणं, जहण्णेण अप्पततियाणं ॥

२२००. तेसिं गीतत्थाणं, अगीतमिस्साण[१०] एस चेव विधी ।
एत्तो सेसाणं पि य, वोच्छामि विधी जधाकमसो ॥दारं ॥

२२०१. सेसा तू[११] भण्णंती, अप्पबितीया उ जे जहिं[१२] केई[१३] ।
गीतत्थमगीतत्थे, मीसे य विधी उ सो चेव ॥

२२०२. संजोगा उ च सद्देण, अधिगता जध य एग दो चेव ।
एगो जदि न वि दोण्णी[१४], उवगच्छे चउलहूओ[१५] से ॥

२२०३. पच्छा इतरे एगं, जदि न वि उवगच्छ मासियं लहुयं ।
जत्थ वि एगो तिण्णी, न उवगमे तत्थ वा[१६] लहुगा ॥

२२०४. एमेव अप्पबितिओ[१७], अप्पतईयं[१८] तु जइ न उवगच्छे ।
इयरेसि मासलहुयं[१९], एवमगीते य गीते य ॥

२२०५. मीसाण एग गीतो, होंति अगीता उ दोन्नि तिण्णी वा[२०] ।
एगं[२१] उवसंपज्जे, ते उ अगीता इहर मासो ॥

---

१. पुव्विं (स) ।
२. नालोए(स) ।
३. x (ब) ।
४. पुव्विं (अ) ।
५. दिज्जती (अ, स) ।
६. पगासणा (स) ।
७. उ (ब), तो (अ) ।
८. दोण्ह (स) ।
९. होंतिऽगीत ० (ब) ।
१०. ० मीसाण (स) ।
११. उ (अ, ब) ।
१२. तहिं (स) ।
१३. केपि (अ, स) ।
१४. दोण्हि (ब) ।
१५. ० लहुओ (स) ।
१६. वी (स) ।
१७. ० बीतो (अ) ।
१८. ० तइयं (अ, स) ।
१९. मासियं तु (अ, स) ।
२०. वि (अ, स) ।
२१. एवं (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२०६. 'सो वि य'[१] जदि न वि इतरे, तस्स वि मासो उ एव सव्वत्थ ।
उवसंपया य[२] तेसिं, भणिता[३] अण्णोण्णनिस्साए[४] ॥

२२०७. अण्णोण्णनिस्सिताणं, अग्गीताणं पि उवग्गहो तेसिं ।
गीतपरिग्गहिताणं, इच्छाए[५] तेसिमो होति ॥नि. ३४३ ॥

२२०८. इच्छित-पडिच्छितेणं[६], खेत्ते[७] वसधीय दोण्ह वी लाभो ।
अच्छं[८] न होति उग्गह, निक्कारण कारणे दोण्हं ॥

२२०९. समयपत्ताण[९] साधारणं तु दोण्हं पि होति[१०] तं खेत्तं ।
विसमं पत्ताणं पुण, 'इमा उ तहि मग्गणा'[११] होति ॥

२२१०. पडियरते व गिलाणं, सयं गिलाणाउरे व मंदगती ।
अपत्तस्स[१२] वि एतेहिं, उग्गहो दप्पतो नत्थि ॥

२२११. एमेव गणावच्छे, पलिछण्णाणं व[१३] सेसगाणं तु ।
पलिछन्ने ववहारो, दुविधो[१४] वागंतिओ नाम ॥

२२१२. पहगाम[१५] चित्तऽचित्तं, थीपुरिसं[१६] बाल-वुड्ढ-सत्थादी[१७] ।
इच्छाए[१८] 'वा देती'[१९], जो जं लभइ[२०] भवे बितिओ ॥

२२१३. समगीतागीता वा, गीतत्थपरिग्गहे य[२१] सति कज्जे ।
असमत्ताण वि खेत्तं, अपहू पच्छा समत्तो वि ॥

२२१४. समपत्तकारणेणं[२२], खेत्ते वसधीय दोण्ह वी लाभो ।
रातिणिय[२३] होति उग्गह, 'गीतत्थसमम्मि दोण्हं पि ॥

२२१५. एमेव बहूणं पी, 'पिंडे नवरोग्गहस्स'[२४] उ विभागो ।
किं कतिविह कस्स कम्मि[२५], केवइयं वा भवे कालं[२६] ॥नि. ३४४ ॥

२२१६. किं उग्गहो त्ति भणिए, उग्गहतिविधो उ होति चित्तादी ।
एक्केक्को पंचविधो, देविंदादी मुणेयव्वो ॥दारं ॥

---

१. x (अ), सोधी (स) ।
२. उ (अ, स) ।
३. गणिता (स) ।
४. ० निस्साणं (ब) ।
५. इत्थीए (स) ।
६. ० तेण य (स) ।
७. पत्ते (स) ।
८. अच्छंत (अ), अच्छते (स) ।
९. समयं प ० (स) ।
१०. होंति (ब) ।
११. इमातो मग्गणा तहि (ब) ।
१२. सपत्त ० (स) ।
१३. वा (ब) ।
१४. दुविध (अ) ।
१५. ० गामे (अ) ।
१६. ० पुरिस (स) ।
१७. वत्थादी (स), वत्थिती (ब) ।
१८. इच्छाई (अ) ।
१९. वायंति (अ, ब), वायंती (स) ।
२०. लाभी (स) ।
२१. ० ग्गहाण (स), ० ग्गहेण (अ) ।
२२. समपुव्विका ० (स) ।
२३. रातिणिए (अ) ।
२४. पिंडण नवरोवग्ग ० (अ) ।
२५. कम्मि व (अ), व कहिं (स) ।
२६. कालो (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२१७. कस्स पुण उग्गहो त्ती[१], परपासंडीण उग्गहो नत्थि ।
निण्होसन्ने संजति, अगीते य गीत एक्के वा ॥

२२१८. ओसण्णाण बहूण[२] वि, गीतमगीताण उग्गहो नत्थि ।
सच्छंदियगीताणं[३], असमत्त अणीसगीते वि ॥

२२१९. एवं ता सावेक्खे, निरवेक्खाणं पि उग्गहो नत्थि ।
मोत्तूण अधालंदे, तत्थ 'वि जे'[४] गच्छपडिबद्धा ॥

२२२०. आसन्नतरा जे तत्थ, संजता सो व जत्थ नित्थरति[५] ।
तहियं देंतुवदेसं, आयपरं ते न इच्छंति ॥

२२२१. 'अगीत समणा'[६] संजति, गीतत्थपरिग्गहाण खेत्तं तु ।
अपरिग्गहाण गुरुगा, न लभति सीसेत्थ[७] आयरिओ ॥

२२२२. गीतत्थागत[८] गुरुगा, असती एगाणिए वि गीतत्थे ।
समुसरण[९] नत्थि उग्गह, वसधीय उ मग्गणऽक्खेत्ते ॥दारं ॥

२२२३. सेसं सकोसजोयण, पुव्वग्गहितं तु जेण तस्सेव ।
समगोग्गह[१०] साधारं, पच्छागत होति अक्खेत्ती ॥

२२२४. अण्णागते कहंतो[११], उवसंपण्णो तहिं च ते सव्वे ।
संकंतं तु कहंती[१२], साधारण तस्स जो भागो ॥

२२२५. निक्खित्तगणाणं वा, तेसिं वि[१३] य होति तं तु खेत्तं तु ।
खेत्तभया वा कोई, माइट्ठाणेण सुण एवं ॥

२२२६. कुड्डेण चिलिमिणीए, अंतरितो सुणति कोइ माणेणं[१४] ।
अधवा चंकमणीयं[१५], करेंत[१६] पुच्छागमो तत्थ ॥

२२२७. पुच्छाहि तीहि दिवसं, सत्तहि पुच्छाहि मासियं हरति[१७] ।
अधवा विसेसमन्नो, इमो तु तहियं अहिज्जंते ॥

२२२८. जदि[१८] निक्खिविऊण गणं, उवसंपाएऽहवा[१९] वि सीसं तु ।
तो[२०] तेसिं चिय खेत्तं, वायंतो[२१] लाभ खेत्तबहिं[२२] ॥

१. त्ति (स) ।
२. बहूया (स) ।
३. सच्छंदय अगीताण य (स) ।
४. कते (ब) ।
५. निच्छरइ (स) ।
६. अग्गीत समण (स) ।
७. सीसत्थ (ब) ।
८. ० थागीते (अ) ।
९. समोस ० (ब, स) ।
१०. समत्तोग्गह (अ) ।
११. कहिंते (स) ।
१२. कधिते (अ), कधेंतो (स) ।
१३. पि (स) ।
१४. मोणेणं (ब) ।
१५. चक्कमणीयं (अ, स) ।
१६. करेमो (स) ।
१७. हरिति (ब) ।
१८. इति (स) ।
१९. ० संपादे अहवा (अ) ।
२०. ता (ब) ।
२१. वायंति (ब) ।
२२. खेत्तुवहिं (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२२९. अह बेती[१] वायंतो[२], लाभो णो नत्थि 'हं ति',[३] वच्चामो ।
इतरेहि य सो रुद्धो, मा वच्चसु अम्ह साधारं[४] ॥

२२३०. निग्गमणे चउभंगो, निद्दित[५] सुहदुक्खयं जदि करेंति ।
निद्दित पधावितो[६] वा, रुद्धो[७] पच्छा य वाघातो ॥नि. ३४५ ॥

२२३१. वत्थव्व णेंति न उ जे, ऊ पाहुण पाहुणाण इतरो वा ।
उभयं च नोभयं वा, चउभयणा होति एवं तु ॥

२२३२. आगंतु भद्दगम्मी, पुव्वठिता गंतु जइ[८] पुणो एज्जा ।
तम्मि अपुण्णे मासे, संकमति पुणो वि सिं[९] खेत्तं ॥

२२३३. वत्थव्वभद्दगम्मी, संघाडग जतण तह 'वि उ'[१०] अलंभे ।
आगंतुं णेंति[११] ततो, अच्छति उ पवायगो नवरं ॥

२२३४. सुहदुक्खितो समत्ते, वाएंतो[१२] निग्गतेसु सीसेसु ।
वाइज्जंतो वि तधा, निग्गतसीसो समत्तम्मि ॥दारं ॥

२२३५. दोण्ह[१३] वि विणिग्गतेसुं, वाएंतो तत्थ खेत्तिओ होति ।
तम्मि सुए असमत्ते, समत्त तस्सेव संकमति ॥

२२३६. 'संथरे दो'[१४] वि न णिंति[१५], तेहिं[१६]उववाइया तु जदि सीसा ।
लाभो नत्थि महं ति य, अहव समत्ते पधावेज्जा[१७] ॥

२२३७. जदि वायगो समत्ते, 'णिंतो तु'[१८] पडिच्छितेहि रुंभेज्जा[१९] ।
असिवादिकारणे वा, न णिंत[२०] लाभो इमो होति ॥

२२३८. आयसमुत्थं[२१] लाभं, सीसपडिच्छेहि सो[२२] लभति[२३] रुद्धो ।
एवं छिण्णुववाते, अछिण्ण सीसा गते दोण्हं ॥

२२३९. एवं ता उडुबद्धे[२४], वासासु इमो विधी हवति तत्थ ।
खेत्तपडिलेहगा[२५] तू, पवट्टिया[२६] तेण अन्नत्थ ॥

---

१. बेंति (अ), बिंती (स)।
२. वाइंतो (ब)।
३. ध त्ति (अ), व ति (स)।
४. x (अ)।
५. न ठिते (अ)।
६. पधाइतो (स)।
७. रुट्ठो (अ)।
८. जति (अ)।
९. स (ब)।
१०. ति य (अ)।
११. णेति (ब)।
१२. एवं तो (ब)।
१३. दोण्णि (स)।
१४. संथरितो (ब)।
१५. णिंती (स)।
१६. तेही उ (अ, ब)।
१७. य धाएज्जा (स)।
१८. णितिहिं (अ)।
१९. रुब्भेज्जा (स)।
२०. नेति (ब)।
२१. अत्तसमुक्कं (स)।
२२. सा (ब)।
२३. लभय (अ)।
२४. उउ ० (ब)।
२५. खेत्तप्पडिलेहगा उ (ब)।
२६. पयट्टिया (अ, स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२४०. जा तुब्भे पेहेहा[१], ताधेतेसिं[२] इमं तु सारेमि ।
तं च समत्ते तेसिं, वासं च पबद्धमालग्गं ॥

२२४१. निग्गंतूण न तीरति, चउमासे तत्थ लाभमायगतं ।
लभते[३] वोच्छिण्णेवं, कुव्वंति गिलाणगस्स वि य ॥

२२४२. अध पुण अच्छिण्णसुते, ते आया[४] बेंतिमे न[५] तुब्भे तु ।
अम्हे खेत्तं देमो, साधारण तम्मि तेसिं तु ॥

२२४३. असंथरण[६] णिंतऽणिंतें[७], चउभंगो होति तत्थ वि तधेव ।
एवं ता खेत्तेसुं, इणमन्ना मग्गणविधादी[८] ॥

२२४४. अद्धाणादिसु नट्ठा, अणुवट्ठविता[९] तहा[१०] उवट्ठविया ।
अगविट्ठा य गविट्ठा, निष्फण्णा धारणदिसासु ॥

२२४५. संभममहंतसत्थे, भिक्खायरिया गता[११] व ते नट्ठा ।
सिग्घगतिपरिरएण व, आउरतेणादिएसुं वा ॥

२२४६. गवेसऊ[१२]मा व कतव्वया जे[१३], 'स एव'[१४] तेसिं तु दिसा पुरिल्ला ।
गवेसमाणो लभते ऽणुबद्धे, अणाढिता संगहिता तु जेणं ॥

२२४७. गवेसिए पुव्वदिसा, अगविट्ठे तु पच्छिमा[१५] ।
'अणुवट्ठविते एवं'[१६], अभिधारेंते उ इणमन्ना[१७] ॥

२२४८. अभिधारेंतो वच्चति, वत्त-अवत्तो व वत्त एगागी ।
जं लभति खेत्तवज्जं, अभिधारेज्जंत[१८] तं सव्वं ॥

२२४९. अव्वत्ते[१९] ससहाये, परखेत्तविवज्जलाभ[२०] दोण्हं पि ।
सव्वो सो मग्गिल्लो, जाव न निक्खिप्पए तत्थ ॥

२२५०. निक्खित्तनियत्ताणं, खेत्तं यो[२१] लाभ होति वाएंते ।
तस्स वि य 'जाव न णीति'[२२], लाभो सो ऊ पवायंते[२३] ॥

---

१. पहेधा (अ) ।
२. ताधि तेसिं (अ) ।
३. लभती (अ, स) ।
४. यावि (ब) ।
५. य (स) ।
६. ०रणे (अ) ।
७. णेणंताणं (ब) ।
८. गाथायां च स्त्रीत्वनिर्देशः प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
९. अणुवट्ठविया (ब) ।
१०. तह (ब) ।
११. वाता (अ) ।
१२. गवेसयत्तू (अ), गवेसिता (स) ।
१३. जो (ब) ।
१४. सव्वे वा (स) ।
१५. पच्छा (ब) ।
१६. अणुबद्ध ठिते (ब), अणुवट्ठिए य (अ) ।
१७. इस गाथा के प्रारम्भ में टीका में ऐसा उल्लेख है—अन्येन आचार्येण श्लोकेन बद्धस्तमेव श्लोकमाह (मवृ) ।
१८. अतिधा ० (ब) ।
१९. सव्वत्ते (ब) ।
२०. ० विवज्जो लाभे (अ) ।
२१. तो (स), ते (अ) ।
२२. जाव णीइ (ब) ।
२३. व वायंते (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२५१. अहवा आयरिओ वी, निक्खित्तगणागतो उ आउत्थं ।
वायंत देति[1] लाभं, जं[2] खेत्तीओ तओ णीसो[3] ॥

२२५२. आरब्भसुत्ता सरमाणगा तू[4], जा पिंडसुत्तं इणमंतिमं तु ।
एमेव वच्चो खलु संजतीणं, वोच्छिन्नमीसेसु[5] अयं विसेसो ॥

२२५३. वोच्छिन्ने उ उवरते, गुरुम्मि गीताण उग्गहो तासिं ।
दोण्ह बहूण व पिंडे[6] कुलिच्चमन्नं जमभिधारे[7] ॥

२२५४. मीसो उभयगणावच्छेए[8], तत्थ समणीण जो[9] लाभो ।
सो खलु गणिणो नियमा, पुव्वठिता जाव तत्थऽण्णा ॥दारं ॥

२२५५. केवतिकालं[10] उग्गह, तिविधो उउबद्ध[11] वास वुड्ढे[12] य ।
मास - चउमासवासे, गेलण्णे सोलमुक्कोसो ॥**नि. ३४६** ॥

२२५६. वुड्ढस्स उ जो वासो, वुड्ढि व गतो तु कारणेणं[13] तु ।
एसो उ वुड्ढवासो, तस्स उ कालो इमो होति ॥

२२५७. अंतो मुहुत्तकालं, जहन्नमुक्कोसपुव्वकोडीओ ।
मोत्तुं गिहिपरियागं, जं जस्स उ आउगं तित्थे ॥

२२५८. 'विज्जा कया'[14] चारिय लाघवेण, तत्तो[15] तवो देसितसिद्धिमग्गो ।
अहाविहिं[16] संजम पालइत्ता, दीहाउणो वुड्ढवासस्स कालो[17] ॥

२२५९. सुत्तागम बारसमा[18], चरियं देसाण दरिसणं तु कतं ।
उवकरण-देह-इंदिय, तिविधं पुण लाघवं होति ॥

२२६०. चउत्थछट्ठादि तवो कतो उ[19], अव्वोच्छित्ताय[20] होति सिद्धिपहो ।
सुत्तविहीए संजम, वुड्ढो अह दीहमाउं च ॥

२२६१. अब्भुज्जतमचएंतो, अगीतसिस्सो[21] व गच्छपडिबद्धो ।
अच्छति जुण्णमहल्लो, कारणतो वा अजुण्णो[22] वी[23] ॥

---

१. ददेइ (ब)।
२. जो (स)।
३. आणीसो (ब)।
४. तो (अ, ब)।
५. ० मिस्सेसु (अ)।
६. पिंडए (अ)।
७. जतभि० (ब), जलभि ० (स)।
८. ० गणावच्छेइ उ (अ, स)।
९. जा (स)।
१०. केयति ० (ब)।
११. उदु ० (स)।
१२. घुड्ढे (स)।
१३. अकारणेणं (स)।
१४. कया विज्जा (अ, स)।
१५. ततो (ब)।
१६. ० विहं (ब)।
१७. गाथा के चौथे चरण में छंदभंग है।
१८. बारससमा (ब)।
१९. गाथा के प्रथम चरण में उपेन्द्रवज्रा छंद है।
२०. ० च्छित्ति उ (अ), ० च्छित्ती उ (स)।
२१. ० सीसा (स)।
२२. जहण्णो (अ)।
२३. वि (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२६२. जंघाबले च खीणे, गेलण्णऽसहायता व दुब्बल्ले[१] ।
अहवावि उत्तमट्ठे, निप्फत्ती चेव तरुणाणं ॥नि. ३४७॥

२२६३. खेत्ताणं च अलंभे, कतसंलेहे य[२] तरुणपडिकम्मे ।
एतेहिं कारणेहिं, वुड्ढावासं वियाणाहि[३] ॥नि. ३४८॥

२२६४. दुण्णि वि दाऊण दुवे[४], सुत्तं दाऊण अत्थवज्जं[५] च ।
दोण्णी दिवड्ढमेगं, तु गाउयं[६] तीसु अणुकंपा ॥

२२६५. खेत्तेण अद्धजोयण, कालेणं जाव भिक्खवेला उ ।
खेत्तेण य कालेण य, जाणसु सपरक्कमं थेरं ॥

२२६६. जो गाउयं समत्थो, सूरादारब्भ[७] भिक्खवेला उ ।
विहरउ एसो सपरक्कमो, न विहरे उ[८] तेण परं ॥

२२६७. वीसामण उवगरणे, भत्ते पाणेऽवलंबणे चेव ।
गाउय दिवड्ढदोसुं, अणुकंपे सा तिसुं होति ॥

२२६८. अधवा आहारुवधी[९], सेज्जा अणुकंप एस तिविधा उ ।
पढमालिदाणविस्सामणादि[१०], उवधी य वोढव्वे[११] ॥

२२६९. खेत्तेण अद्धगाउय[१२], कालेण य जाव भिक्खवेला उ ।
खेत्तेण य कालेण य, जाणसु अपरक्कमं थेरं ॥

२२७०. अण्णो जस्स न जायति, दोसो देहस्स जाव मज्झण्हो ।
सो विहरति सेसो पुण, अच्छति मा दोण्ह वि किलेसो ॥

२२७१. भमो वा पित्तमुच्छा वा, उद्धसासो व खुब्भति ।
गतिविरए[१३] वि संतम्मि मुच्छादिसु[१४] न रीयति ॥

२२७२. चउभाग-तिभागद्धे, सव्वेसिं गच्छतो परीमाणं ।
संतासंतसतीए, वुड्ढावासं वियाणाहि ॥

२२७३. अट्ठावीसं[१५] जहण्णेण, उक्कोसेण सतग्गसो ।
सहाया तस्स[१६] जेहिं तु, उड्ढवणा न जायति[१७] ॥

---

१. दुब्बले (स)।
२. व (अ, स)।
३. वियाणेहि (स)।
४. पुव्वे (ब)।
५. सुत्तवज्ज (अ, स)।
६. गाऊयं (ब)।
७. सूरदा० (अ)।
८. उ न विहरे (स)।
९. ० वधि (अ, स)।
१०. पढमालिपाण ० (ब)।
११. बोधव्वे (स)।
१२. अद्धागा ० (स)।
१३. ० विरिए (अ, स)।
१४. इच्छादी (अ), इच्छाइसु (स)।
१५. ० वीस (ब)।
१६. जस्स (अ)।
१७. जायंति (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२७४. चत्तारि सत्तगा तिण्णि, दोण्णि एक्को व होज्ज असतीए ।
संतासती अगीता, ऊणा तु असंतओ असती ॥

२२७५. दो संघाडा भिक्खं, एक्को बहि 'दो य'[१] गेण्हते थेरं ।
आलित्तादिसु[२] जतणा, इहरा परिताव-दाहादी[३] ॥

२२७६. आहारे जतणा वुत्ता, तस्स जोग्गे य पाणए[४] ।
निवाय[५] मउए[६] चेव, छवित्ताणेसणादिसु ॥नि. ३४९ ॥

२२७७. वुड्ढावासे जतणा, खेत्ते काले वसही[७] संथारे ।
खेत्तम्मि नवगमादी, परिहाणी एक्कहिं वसही[८] ॥नि. ३५० ॥

२२७८. भागे भागे मासं, काले वी जाव एक्कहिं सव्वं ।
पुरिसेसु वि सत्तण्हं, असतीए जाव एक्को उ ॥

२२७९. 'पुव्वभणिता तु जतणा, वसही'[९] भिक्खे वियारमादी य ।
सच्चेव[१०] य होइ इहं, वुड्ढावासे[११] वसंताणं ॥दारं ॥

२२८०. धीरा कालच्छेदं, करेंति अपरकम्मा तहिं थेरा ।
कालं वा विवरीअं, करेंति तिविहा तहिं[१२] जतणा ॥

२२८१. अव्विवरीतो नामं, काल[१३] उवट्ठाण दोसपरिहाणी[१४] ।
असती वसधीए पुण, अव्विवरीतो उवट्ठे वि ॥

२२८२. तिविधा जतणाहारे, उवही[१५] सेज्जासु होति कायव्वा ।
उग्गमसुद्धा तिण्णि वि, असतीए पणगपरिहाणी ॥दारं ॥

२२८३. सेलियकाणिट्ठघरे[१६], पक्केट्टामेय[१७] पिंडदारुघरे ।
कडितं[१८] कडगतणघरे, वोच्चत्थे होति चउगुरुगा ॥

२२८४. कोट्टिमघरे वसंतो, आलित्तम्मि वि न डज्झती तेण ।
सेलादीणं गहणं, रक्खति य निवातवसधा उ ॥दारं ॥

---

१. दोण्ह (अ)।
२. आदित्ता ० (ब)।
३. दाहाइं (अ)।
४. पाणुए (स)।
५. नियाय (अ)।
६. मउयं (स)।
७. वसहि (स)।
८. वसती (अ, स)।
९. सेहा उ पुव्वभणिया तु जयणा वसही (ब)।
१०. स एव (ब)।
११. ० वासं (स)।
१२. अहि (स)।
१३. कालो (ब)।
१४. ० परिहरति (ब, स)।
१५. उवहि (ब)।
१६. ० णिट्टहरे (अ, ब)।
१७. ० ट्टा आमेय (अ), पक्के आमेय (ब, स)।
१८. कडिते (अ, स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२८५. थिरमउयस्स उ असती, अप्पडिहारिस्स[१] चेव वच्चंति ।
बत्तीसजोयणाणि वि, आरेण अलब्भमाणम्मि ॥

२२८६. वसधिनिवेसण साही[२], दूराणयणं पि जो उ पाउग्गो ।
असतीय पाडिहारिय, मंगलकरणम्मि नीणेंति[३] ॥

२२८७. ओगाली[४] फलगं पुण, मंगलबुद्धीय सारविज्जंतं ।
पुणरवि मंगलदिवसे, अच्चितमहितं पवेसेंति ॥

२२८८. पुव्वम्मि[५] अप्पिणंती[६], अण्णस्स व[७] वुड्ढवासिणो देंति ।
मोत्तूण वुड्ढवासिं, आवज्जति चउलहू[८] सेसे ॥

२२८९. पडियरति गिलाणं वा, सयं गिलाणो वि[९] तत्थ वि तधेव ।
भावितकुलेसु अच्छति, असहाए रीयतो दोसा ॥दारं ॥

२२९०. ओमादी तवसा[१०] वा, अचायतो[११] दुब्बलो वि एमेव ।
संतासंतसतीए, बलकरदव्वे य जतणा उ ॥

२२९१. पडिवण्ण उत्तमट्ठे, पडियरगा वा वसंति तन्निस्सा ।
आयपरे[१२] निप्फत्ती, कुणमाणो वावि अच्छेज्जा[१३] ॥दारं ॥

२२९२. संवच्छरं च झरए, बारसवासाइ कालियसुतम्मि ।
सोलस य दिट्ठिवाए, एसो उक्कोसतो कालो ॥

२२९३. बारसवासे गहिते, उ कालियं झरति वरिसमेगं तु ।
सोलस उ[१४] दिट्ठिवाए, गहणं झरणं दसदुवे य[१५] ॥

२२९४. झरए[१६] य कालियसुते, पुव्वगते य जइ एत्तिओ कालो ।
आयारपकप्पनामे, कालच्छेदे उ कयरेसिं ॥

२२९५. सुत्तत्थतदुभएहिं, जे उ समत्ता महिड्ढिया थेरा ।
एतेसिं तु पकप्पे, भणितो कालो[१७] नितियसुत्ते[१८] ॥

२२९६. थेरे निस्साणेणं[१९], कारणजातेण एत्तिओ कालो ।
अज्जाणं पणगं पुण, नवगग्गहणं तु सेसाणं ॥

---

१. अपडि० (अ) ।
२. वावि (अ), साधी (स) ।
३. णीणंती (स) ।
४. ओयाली (अ, ब) ।
५. पुण्णम्मि (ब, स) ।
६. अप्पणंती (ब) ।
७. वि (ब) ।
८. ० लहुं (स) ।
९. व (स) ।
१०. वचसा (स) ।
११. अचइतो (ब) ।
१२. आयपरेण (अ) ।
१३. अट्ठेज्जा (स) ।
१४. य (स) ।
१५. या (स) ।
१६. झरिए (ब) ।
१७. काले (अ) ।
१८. नियय० (ब) ।
१९. निस्सेण्णं (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२९७. जे गेण्हिउं धारइउं[1] च जोग्गा, थेराण ते देंति 'सहायए तु'[2] ।
गेण्हंति ते ठाणठिता[3] सुहेणं, किच्चं च थेराण करेंति सव्वं ॥दारं ॥

२२९८. आसज्ज खेत्त-काले, बहुपाउग्गा न संति खेत्ता वा ।
निच्चं च विभत्ताणं, सच्छंदादी बहू दोसा ॥दारं ॥

२२९९. जध चेव उत्तमट्ठे[4], कतसंलेहम्मि ठंति तध चेव ।
तरुणप्पडिकम्मं पुण, रोगविमुक्के बलविवड्ढी ॥दारं ॥

२३००. वुड्ढावासातीते, कालातीते न उग्गहो तिविधो ।
आलंबणे विसुद्धे, उग्गह तक्कज्जवुच्छेदो ॥नि. ३५१ ॥

२३०१ आगास कुच्छिपूरो, उग्गह पडिसेधितम्मि जो कालो ।
न हु होति उग्गहो सो, कालदुगे[5] वा अणुण्णातो ॥

२३०२. गिम्हाण चरिममासो, जहिं कतो तत्थ जदि पुणो वासं ।
ठायंति अन्नखेत्ताऽसतीय[6] दोसु पि तो लाभो ॥

२३०३. एमेव य समतीते, वासे तिण्णि दसगा उ उक्कोसं ।
वासनिमित्तठिताणं, • उग्गह छम्मास उक्कोसा ॥

इति चतुर्थ उद्देशक

---

१. धारदिउं (अ, स)।
२. सहायहेउं (ब)।
३. थाणं ० (स)।
४. उत्तिमट्ठे (स)।
५. ० दुवे (ब)।
६. ० सितीय (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचम उद्देशक

२३०४. उद्देसम्मि चउत्थे, जा मेरा वण्णिता तु साहूणं ।
सा चेव पंचमे संजतीण गणणाय नाणत्तं. ॥

२३०५. वुत्तमधवा[१] बहुत्तं[२], पिंडगसुत्ते चउत्थचरमम्मि ।
अबहुत्ते[३] पडिसेहं, काउमणुण्णा बहूणं तु ॥

२३०६. संघयणे वाउलणा, छट्ठे अंगम्मि गमणमसिवादी ।
सागर जाते जतणा, उडुबद्धालोयणा[४] भणिता ॥नि. ३५२ ॥

२३०७. जध भणित चउत्थे पंचमम्मि 'तहेव इमं'[५] तु नाणत्तं ।
गमणित्थि[६] मीस संबंधि[७], वज्जिते[८] पूजिते लिंगे ॥

२३०८. वीसुंभिताय सव्वासि, गमणमद्धद्ध[९] जाव दोण्हेक्का ।
संबंधि इत्थिसत्थे, भावितमविकारितेहिं वा ॥

२३०९. असिवादिएसु[१०] फिडिया, कालगते वावि तम्मि आयरिए ।
तिगथेराण य असती, गिलाणओधाण[११] सुत्ता उ ॥

२३१०. साहीणम्मि वि[१२] थेरे, पवत्तिणी[१३] चेव तं परिकधेति ।
एसा पवत्तिणी भे, जोग्गा गच्छे बहुमता य[१४] ॥

२३११. अब्भुज्जयं विहारं, पडिवज्जिउकाम[१५] दुस्समुक्कट्ठं ।
जह[१६] होती समणाणं, भत्तपरिण्णा तधा तासिं ॥

२३१२. जइ वि य पुरिसादेसो, पुव्वं तह वि य विवच्चओ[१७]जुत्तो ।
जेण समणी उ पगता[१८], पमादबहुला य अथिरा य ॥

२३१३. तेवरिसा होति नवा, अट्ठारसिया तु डहरिया होति ।
तरुणी खलु जा जुवती, चउरो दसगा य[१९] पुव्वुत्ता ॥नि. ३५३

---

१. खुत्तम ० (ब) ।
२. पहुत्तं (ब) ।
३. अपहुत्ते (ब) ।
४. उउब० (ब) ।
५. तह चेव मं (स) ।
६. गमणत्थि (स, ब) ।
७. संबंधे (ब) ।
८. वज्जए (अ) ।
९. ० ण अट्ठट्ठ (ब), ० अद्धद्ध (स) ।
१०. गाथायां सप्तमी तृतीयार्थे प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
११. गिलाणि ० (अ) ।
१२. व (अ) ।
१३. पविंत्तिणी (स) ।
१४. या (स) ।
१५. परिव ० (ब) ।
१६. कह (ब) ।
१७. विवज्जओ (स) ।
१८. पगतं (अ) ।
१९. व (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३१४. सा एय[1] गुणोवेता, सुत्तत्थेहिं पकप्पमज्झयणं ।
सभां .ज्जता इतो[2] यावि, आगता नवसु या[3] अण्णा ॥

२३१५. अत्थेण मे पकप्पो, समाणितो न य जितो महं भंते ! ।
अमुगा मे संघाडं, ददंतु[4] वुत्ता तु ·पा गणिणा ॥

२३१६. सा दाउं आढत्ता, नवरि 'य णट्ठं'[5] न किंचि आगच्छे ।
एमेव मुणमुणंती[6], चिट्ठति मुणिया य सा तीए ॥

२३१७. पुणरवि साहति गणिणो, सा[7] नट्ठसुता दलाह मे अण्णं ।
अब्भक्खाणं पि सिया, वाहेउं होतिमा पुच्छा ॥दारं ॥

२३१८. दंडग्गहणनिक्खेवे, आवसियाए[8] निसीहियाऽकरणे ।
गुरुणं[9] च अप्पणामे, य भणसु आरोवणा का उ[10] ॥

२३१९. पुट्ठा अनिव्वहंती, किध[11] नट्ठं[12] ऽबाधतो पमादेणं ।
साहेति[13] पमादेणं, सो य पमादो इमो होति ॥

२३२०. धम्मकहनिमित्तादी, तु पमादो तत्थ होति नायव्वो ।
मलयवति - मगधसेणा, तरंगवइयाइ[14] धम्मकहा ॥दारं ॥

२३२१. गह-चरिय-विज्ज-मंता, चुण्ण-निमित्तादिणा पमादेणं ।
नट्ठम्मी[15] संधयती[16], असंधयंती व सा न लभे ॥

२३२२. जावज्जीवं तु गणं, इमेहिं नाएहि लोगसिद्धेहिं ।
अइपाल-वेज्ज-जोधे[17], धणुगादी भग्गफलगेणं[18] ॥

२३२३. खेलंतेण तु अइया[19], पणासिया जेण सो पुणो न लभे ।
सूलादिरुजा नट्ठा, वि लभति एमेव उत्तरिए ॥दारं ॥

२३२४. जदि से सत्थं नट्ठं, पेच्छह से सत्थकोसगं गंतुं ।
हीरति कलंकितेसु[20], भोगो जूतादिदप्पेणं ॥दारं ॥

---

१. एव (अ, स) ।
२. इंतो (स) ।
३. ता (अ, स) ।
४. ददातु (अ, स) ।
५. पणट्ठं (अ) ।
६. मुणुमुणिता (अ) ।
७. ता (अ) ।
८. ० याय (स) ।
९. तरुणं (ब) ।
१०. उं (स) ।
११. किह (अ) ।
१२. नट्ठा (स) ।
१३. सोहेति (ब) ।
१४. ० वइया उ (अ) ।
१५. नट्ठम्मि य (स) ।
१६. संचयती (स) ।
१७. जोहे (ब) ।
१८. ० फलएहिं (ब, स) ।
१९. अतिया (अ) ।
२०. कलिकिएसु (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३२५. चुक्को जदि सरवेधी[१], 'तहा वि पुलएह'[२] से सरे गंतुं ।
अकलंक कलंकं वा, भग्गमभग्गाणि य धणूणि ।।दारं ।।

२३२६. फालहियस्स वि एवं, जइ[३] फलओ भग्गलुग्ग तो भोगो ।
हीरति सव्वेसिं वि य, न भोगहारो[४] भवे कज्जे[५] ।।

२३२७. एवं दप्पपणासित, न वि देंति गणं पकप्पमज्झयणे ।
आबाहेणं[६] नासिते[७], गेलण्णादीण दलयंति ।।

२३२८. गेलण्णे असिवे वा, ओमोयरियाय रायदुट्ठे य[८] ।
एतेहि नासियम्मी[९], संधेमाणीय[१०] देंति गणं ।।

२३२९. एमेव य साधूणं, वाकरणनिमित्तछंद[११] कधमादी ।
बितियं[१२] गिलाणओ मे, अद्धाणे चेव थूभे य ।।**नि. ३५४** ।।

२३३०. मधुरा खमगातावण, देवय आउट्ट आणवेज्ज[१३] त्ति ।
किं मम असंजतीए, अप्पत्तिय होहिती कज्जं ।।

२३३१. थूभविउव्वण भिक्खू[१४], विवाद छम्मास संघ को सत्तो ।
खमगुस्सग्गा कंपण, खिंसण सुक्का कयपडागा[१५] ।।

२३३२. एवं ताव पणट्ठे, भिक्खुस्स गणो न दिज्जते[१६] सुत्ते ।
नट्ठसुते मा हु गणं, हरेज्ज थेरे अतो सुत्तं ।।

२३३३. सुत्ते अणिंत[१७] लहुगा, अत्थे अणिंत धरेति[१८] चउगुरुगा ।
सुत्तेण वायणा अत्थे, सोही तो[१९] दो ऽणुण्णाया ।।

२३३४. अवि य विणा सुत्तेणं, ववहारे तू[२०] अपच्चओ होति ।
तेणं उभयधरो[२१] ऊ, गणधारी सो अणुण्णातो ।।

२३३५. असती कडजोगी पुण, अत्थे एतम्मि[२२] कप्पति धरेउं[२३] ।
जुण्णमहल्लो सुत्तं, न तरति पच्चुज्जयारेउं ।।

---

१. सरवेहा (ब)।
२. तहा पुलोएह (ब)।
३. X (ब)।
४. भोगाहारो (ब)।
५. वेज्जो (स)।
६. अपावेणं (अ)।
७. नासितो (ब)।
८. या (ब, स)।
९. नासिएणं (अ, ब, स)।
१०. संवेमा ० (अ)।
११. ० छेद (ब)।
१२. बीयं (स)।
१३. ० वेज्जो (अ)।
१४. भिच्चू (अ)।
१५. ०पडागा य (अ, स)।
१६. दिज्जती (अ)।
१७. आणंते (अ)।
१८. धारइ (अ)।
१९. ता (स)।
२०. पि (अ), ऊ णं (ब)।
२१. उभयधारो (अ)।
२२. पुतम्मि (ब)।
२३. धारणे (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३३६. उभयधरम्मि उ सीसे, विज्जंते[१] धारणा[२] तु इच्छाए ।
मा परिभवनयणं वा, गच्छे व अणिच्छमाणम्मि ॥

२३३७. एमेव बितियसुत्तं, कारणियं सति बले न हावेति ।
जं जत्थ उ कितिकम्मं, निहाणसम ओमराइणिए[३] ॥

२३३८. सुत्तम्मि य चउलहुगा, अत्थम्मि य चउगुरुं च गव्वेणं ।
कितिकम्ममकुव्वंतो, पावति थेरो सति बलम्मि ॥

२३३९. उवयारहीणमफलं, होति निहाणं 'करेति वाऽणत्थं'[४] ।
इति निज्जराएँ लाभो, न होति विब्भंगकलहो वा[५] ॥

२३४०. दूरत्थो वा पुच्छति[६], अधव निसेज्जाय सन्निसण्णो उ ।
अच्चासण्णनिविट्ठुट्ठिते य चउभंग बोधव्वो ॥

२३४१. अंजलिपणामऽकरणं[७], विप्पेक्खंते दिसऽहो[८] उड्ढमुहं ।
भासंत अणुवउत्ते, व हसंते पुच्छमाणो उ ॥

२३४२. एतेसु य[९] सव्वेसु वि, सुत्ते लहुओ उ अत्थे गुरुमासो ।
नाभीतोवरि लहुगा, गुरुगमधो कायकंडुयणे ॥

२३४३. तम्हा वज्जंतेणं, ठाणाणेताणि पंजलुक्कुडुणा[१०] ।
सोयव्व पयत्तेणं, कितिकम्मं वावि कायव्वं ॥

२३४४. तेण वि धारेतव्वं, पच्छावि य उट्ठितेण मंडलिओ ।
वेट्ठुट्ठनिसण्णस्स[११] व, सारेतव्वं[१२] हवति भूओ ॥

२३४५. अह से 'रोगो होज्जा'[१३], ताहे भासंत एगपासम्मि ।
सन्निसण्णो तुयट्टो[१४], व अच्छते णुग्गहपवत्तो ॥

२३४६. थेरस्स तस्स किं तू, एद्देहेणं[१५] किलेसकरणेणं ।
भण्णति एगत्तुवओगसद्धाजणणं च तरुणाणं ॥

२३४७. सो तु गणी अगणी वा, अणुभासंतस्स सुणति पासम्मि[१६] ।
न चएति जुण्णदेहो, होउं बद्धासणो सुचिरं ॥

---

१. विज्जते (स)।
२. धारणे (अ)।
३. ० रातिणिए (ब)।
४. करति वा अणत्थं (अ, स)।
५. गा. २३३९-२३४० ये दोनों गाथाएं ब प्रति में नहीं हैं।
६. अच्छति (स)।
७. ० म अकरणं (स)।
८. दिसाहो (स)।
९. उ (ब)।
१०. ० लुक्कडुणा (अ)।
११. ० निवण्णस्स (अ, ब, स)।
१२. ० तव्वा (स)।
१३. रोगो न होज्ज (मु)।
१४. तुवट्टो (अ)।
१५. X (स)।
१६. पारम्मि (ब), भासम्मि (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३४८. थेरो अरिहो आलोयणाय, आयारकप्पिओ जोग्गो[1] ।
सा य न होति विवक्खे, नेव सपक्खे अगीतेसु ॥

२३४९. 'संभोइग त्ति'[2] भणिते, संभोगो छव्विहो उ आदीए ।
भेदप्पभेदतो वि य, णेगविधो होति नायव्वो ॥

२३५०. ओह अभिग्गह दाणग्गहणे अणुपालणाय उववाते ।
संवासम्मि य छट्ठो, संभोगविधी मुणेयव्वो ॥नि. ३५५ ॥

२३५१. ओघो पुण बारसहा, उवधीमादी कमेण बोधव्वो ।
कातव्व परूवणया, एतेसिं आणुपुव्वीए ॥

२३५२. उवहि-सुत-भत्तपाणे, अंजलिपग्गहे त्ति य ।
दावणा य निकाए य, अब्भुट्ठाणे त्ति यावरे ॥

२३५३. कीकम्मस्स[3] य करणे, वेयावच्चकरणे ति य[4] ।
समोसरण सन्निसेज्जा, कधाए य पबंधणा ॥

२३५४. उवहिस्स य छब्भेदा, उग्गम - उप्पायणेसणासुद्धो ।
परिकम्मण - परिहरणा, संजोगो छट्ठओ होति ॥

२३५५. एवं जधा निसीधे[5] पंचम उद्देसए समक्खातो ।
संभोगविधी सव्वो[6], तधेव इह इं पि वत्तव्वो[7] ॥

२३५६. अगडे[8] भाउय तिल-तंदुले, व[9] सरक्खे य गोणि असिवे य ।
अविणट्ठे संभोगे, सव्वे संभोइया आसी ॥दारं ॥

२३५७. आगंतु तदुत्थेण व, दोसेण विणट्ठ 'कूवें तो'[10] पुच्छा ।
कउ आणीयं उदगं, अविणट्ठे नासि सा पुच्छा ॥दारं ॥

२३५८. भोइकुल[11] सेवि भाउग, दुस्सीलेगे तु 'जो ततो'[12] पुच्छा ।
एमेव सेसएसु वि, होति विभासा तिलादीसु ॥दारं ॥

२३५९. 'साधम्मिय वइधम्मिय'[13] निघरिसभाणे तधेव कूवे य ।
'गावी पुक्खरिणीया'[14], नीएल्लग सेवगागमणे[15] ॥

---

१. जुग्गो (अ)।
२. संभोतिग त्ति (अ), संभोगोत्ति (ब)।
३. कितिकम्म० (अ, स)।
४. एयं (स)।
५. निसीहे (ब)।
६. सद्दो (स)।
७. बोधव्वो (ब)।
८. अगदे (अ, स)।
९. य (स)।
१०. कुते ततो (स)।
११. भोति ० (अ)।
१२. जाव तओ (ब)।
१३. साधम्मत वतिधम्मय (अ)।
१४. वावी पुक्खरणीया (स)।
१५. सेवं आग० (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३६०. एतेसिं कतरेणं, संभोगेणं तु होंति'[१] संभोगी ।
समणाणं समणीओ, भण्णति अणुपालणाए उ ॥

२३६१. आलोयणा सपक्खे, परपक्खे[२] चउगुरुं च आणादी ।
भिन्नकधादि विराधण, दट्ठूण व भावसंबंधो ॥नि. ३५६ ॥

२३६२. मूलगुणेसु चउत्थे, विगडिज्जंते[३] विराधणा होज्जा ।
णिच्छक्क[४] दिट्ठिमुहरागतो य भावं[५] विजाणंति ॥

२३६३. अप्पच्चय निब्भयया[६], पेल्लणया जइ पगासणे दोसा ।
वतिणी वि होति गम्मा[७], नियए दोसे पगासेंती ॥

२३६४. वंदत वा उट्ठे[८] वा, गच्छो तध लहुसगत्त आणयणे ।
विगडेंत[९] पंजलिउडं[१०], दट्ठूणुड्डाह कुवियं तू[११] ॥

२३६५. तो[१२] जाव अज्जरक्खित, आगमववहारतो[१३] वियाणेत्ता ।
न भविस्सति दोसो त्ती[१४], तो वायंती उ छेदसुतं ॥

२३६६. आरेणागमरहिया, मा विद्दाहिंति[१५] 'तो न'[१६] वाएंति ।
तेण कधं कुव्वंत, सोधिं तु अयाणमाणीओ ॥

२३६७. तो जाव अज्जरक्खिय, सट्ठाण पगासयंसु[१७] वतिणीओ ।
असतीय विवक्खम्मि वि, एमेव य होंति समणा वि ॥

२३६८. मेहुणवज्जं आरेण, केइ[१८] समणेसु ता पगासेंति ।
तं तु न जुज्जति जम्हा, लहुसगदोसा सपक्खे वि ॥

२३६९. असती कडजोगी पुण, मोत्तूणं संकिताइं ठाणाइं ।
आइण्णे धुवकम्मिय[१९], तरुणी थेरस्स दिट्ठिपधे ॥

२३७०. सुण्णघर देउलुज्जाण-रण्ण पच्छण्णुवस्सयस्संतो ।
एय विवज्जे ठायंति[२०], तिण्णि चउरोऽहवा पंच ॥

---

१. X (अ) ।
२. X (ब) ।
३. विगडियंति (अ), विगडिज्जते (ब) ।
४. णिछक्ककतो य (स) ।
५. भाव (ब) ।
६. निब्भयिया (ब) ।
७. गम्म (अ) ।
८. उट्ठो (अ)
९. विगलेंत (अ) ।
१०. पंजलिअडं (अ, स) ।
११. इस गाथा की व्याख्या टीका में नहीं है । मात्र 'द्वितीयगाथा सम्प्रदायात् व्याख्येया' इतना उल्लेख है ।
१२. ततो (ब) ।
१३. ० हारिणो (स) ।
१४. त्ति (ब) ।
१५. विद्दाहोति (अ), विद्दहेंति (स) ।
१६. तेण (स) ।
१७. पगासतिंसु (अ, स), पगासविंसु (ब) ।
१८. कोति (स) ।
१९. धुवगम्मिय (अ) ।
२०. ठायंती (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३७१. थेरतरुणेसु भंगा, चउरो सव्वत्थ परिहरे दिट्ठिं ।
दोण्हं पुण तरुणाणं, थेरे थेरी य पच्चुरसिं ॥

२३७२. थेरो पुण असहायो, निग्गंथी थेरिया वि ससहाया ।
सरिसवयं च विवज्जे, 'असती पंचम'[१] पडुं[२] कुज्जा ॥

२३७३. ईसिं ओणा उद्धट्ठिया उ आलोयणा विवक्खम्मि ।
सरिपक्खे उक्कुडुओ, पंजलिविट्ठो वणुण्णातो ॥

२३७४. दिट्ठीय होंति गुरुगा, सविकारा ओसर[३] त्ति सा भणिता ।
तस्स[४] विवड्ढित[५] रागे, तिगिच्छ जतणाय कातव्वा ॥

२३७५. अण्णेहि पगारेहि, जाहे नियत्तेउ सो न तीरति उ ।
घेत्तूणाभरणाई, तिगिच्छ जतणाय कातव्वा ॥

२३७६. जारिससिचएहिं[६] ठिया, तारिसएहिं तमस्सणी वरिया ।
संभलि[७] विणोयकेतण, विलेवणं चिहुरगंडेहिं ॥

२३७७. अधवा वि सिद्धपुत्तिं, 'पुव्वं गमिऊण तीय'[८] सिचएहिं ।
आवरिय[९] कालियाए, सुण्णागारादि संमेलो ॥

२३७८. गीतत्था कयकरणा, पोढा परिणामिया य गंभीरा ।
'चिरदिक्खिया य'[१०] वुड्ढा, जतीण आलोयणा जोग्गा[११] ॥

२३७९. आलोयणाय दोसा, वेयावच्चे वि होंति ते[१२] चेव ।
नवरं पुण णाणत्तं, बितियपदे[१३] होति कायव्वं ॥

२३८०. उडुभयमाणसुहेहिं[१४], देह सभावाणुलोमभुंजेहिं[१५] ।
कढिणहिययाण वि मणं, वंकंतऽचिरेण कइतविया[१६] ॥

२३८१. जह चेव य बितियपदे, दलंति[१७] आलोयणं तु जतणाए ।
एमेव य बितियपदे, वेयावच्चं[१८] तु अण्णोण्णे ॥

२३८२. भिक्खू मयणच्छेवग,[१९] एतेहि गणो उ होज्ज आवण्णो ।
वायपराइओ[२०] वा से, संखडिकरणं च वित्थिण्णं[२१] ॥

---

१. असतीए पंचमं (स)।
२. X (ब)।
३. तोसर (अ)।
४. कस्स (अ)।
५. विवद्धित (ब)।
६. ० सिवकेहु (स)।
७. संभणि (स)।
८. मे कुणती य (ब)।
९. आवलिय (अ)।
१०. ० दिक्खितया (अ, स)।
११. जुग्गा (अ)।
१२. तह (ब)।
१३. बितियए (अ)।
१४. उदुभय० (स)।
१५. ० भुज्जेहिं (स)।
१६. कतिविभिया (ब), केतविया (अ)।
१७. लभंति (ब)।
१८. वेज्जावच्चं (अ)।
१९. मदणिच्छेवग (स)।
२०. वायापरियाओ (अ)।
२१. विच्छिण्णं (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३८३. कइतवधम्मकधाए[1], आउट्टो बेति[2] भिक्खुगाणट्ठा[3] ।
परमण्णमुवक्खडियं, मा[4] जातु असंजयमुहाइं ॥

२३८४. तं कुणह5णुग्गहं मे, साहूजोग्गेण एसणिज्जेण ।
पडिलाभणाविसेणं, पडिता[5] पडिती य सव्वेसिं ॥

२३८५. आयंबिल खमगा5सति, लद्धाण चरंतएण[6] उ विसेण ।
बितियपदे जतणाए, कुणमाणि[7] इमा तु निद्दोसा ॥

२३८६. संबंधिणि गीतत्था, ववसायि[8] थिरत्तणे य कतकरणा ।
चिरपव्वइया य बहुस्सुता परीणामिया[9] जाव[10] ॥नि. ३५७॥

२३८७. गंभीरा मद्दविता, मितवादी अप्पकोउहल्ला य ।
साधुं गिलाणगं खलु, पडिजग्गति[11] एरिसी अज्जा ॥नि. ३५८॥

२३८८. ववसायी[12] कायव्वे, थिरा उ जा संजमम्मि होति दढा ।
कतकरण जीय[13] बहुसो, वेयावच्चा 'कया कुसला'[14] ॥

२३८९. चिरपव्वइयसमाणं, तिण्हुवरि बहुस्सुया पकप्पधरी ।
परिणामिय परिणामं, *सा[15] जाणति पोग्गलाणं तु[16] ॥

२३९०. काउं न उत्तुणई, गंभीरा मद्दविया अविम्हइया[17] ।
कज्जे परिमियभासी, मियवादी होइ अज्जा उ ॥

२३९१. कक्खंतं गुज्झादी[18], न निरिक्खे अप्पकोउहल्ला य[19] ।
एरिसगुणसंपन्ना[20], साहूकरणे[21] भवे[22] जोग्गा ॥

२३९२. पडिपुच्छिऊण वेज्जे, दुल्लभदव्वम्मि होति जतणा उ ।
विसघाई[23] खलु कणगं, निधि जोणीपाहुडे[24] सड्ढे ॥

२३९३. असतीए अण्णलिंगं, तं पि जतणाय 'होति कायव्वं'[25] ।
गहणे पण्णवणे[26] वा, आगाढे हंसमादी[27] वि ॥

---

१. कतितवं० (अ)।
२. पेति (अ)।
३. भिच्छुगा० (स)।
४. मं (अ)।
५. x (अ)।
६. चरंतए (अ)।
७. कुणमाणो (ब)।
८. ०साय (ब)।
९. परिणा ० (स)।
१०. जाया (स)।
११. पडिजयति (ब)।
१२. ० साया (अ), ० साती (ब)।
१३. जो य (अ)।
१४. य कुसला या (ब)।
१५. जो (ब)।
१६. यह गाथा स प्रति में नहीं है।
१७. विम्ह ० (ब)।
१८. गुज्झाती (ब)।
१९. तु (स)।
२०. ० संपुन्ना (अ)।
२१. ०करणा (स)।
२२. हवइ (अ)।
२३. ० घाइं (स)।
२४. जोणि० (स)।
२५. होज्ज जोयव्वं (अ), होति जोयव्वं (स)।
२६. ०वगो (अ)।
२७. हंसपाई (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३९४. पडिसिद्धमणुण्णातं, वेयावच्चं इमं खलु दुपक्खे ।
'सा चेव'[1] य समणुण्णा, इहं पि कप्पेसु[2] नाणत्तं ॥

२३९५. अत्थेण व आगाढं, भणितं[3] इहमवि य होति आगाढं ।
अहवा अतिप्पसत्तं, तेण निवारेति[4] जिणकप्पे[5] ॥

२३९६. सुत्तम्मि कड्ढियम्मी, वोच्चत्थ करेंत[6] चउगुरू होंति ।
आणादिणो य दोसा, विराधणा जा भणितपुव्वं ॥नि. ३५९ ॥

२३९७. संबंधो दरिसिज्जति, उस्सुत्तो खलु न विज्जते अत्थो ।
उच्चारित छिण्णपदे, विग्गहते चेव अत्थो उ ॥

२३९८. अक्खेवो पुण कीरति, कत्थतिऽक्खेव विणा वि तस्सिद्धी[7] ।
जत्थ अवायनिदरिसण[8], एसेव उ होति अक्खेवो ॥

२३९९. किं कारणं न कप्पति, अक्खेवो[9] दोसदरिसणं सिद्धी[10] ।
लोगे वेदे समए, विरुद्धसेवादयो[11] णाता ॥

२४००. तम्हा सपक्खकरणे, परिहरिता पुव्ववण्णिता दोसा ।
कप्पे छड्डुद्देसे, तह चेव इहं पि दट्ठव्वा ॥

२४०१. चोएती परकरणं, नेच्छामो दोसपरिहरणहेतुं ।
किं पुण भेसज्जगणो, घेत्तव्व गिलाणरक्खट्ठा ॥

२४०२. पुव्वं[12] तु अगहितेहिं[13] दूरातो[14] ओसहाइ आणिंति[15] ।
तावत्तो[16] उ गिलाणो, दिट्ठंतो दंडियादीहिं ॥

२४०३. उवट्ठितम्मि संगामे, रण्णो बलसमागमो ।
एगो वेज्जोत्थ[17] वारेती, न तुब्भे जुद्धकोविया ॥

२४०४. घेप्पंतु[18] ओसधाइं, 'वणपट्टा मक्खणाणि'[19] विविहाणि ।
सो बेतऽमंगलाइं, मा कुणह अणागतं चेव ॥

२४०५. किं घेत्तव्वं रणे जोग्गं, पुच्छित्ता इतरेण ते ।
भणंति वणतिल्लाइं, घतदव्वोसहाणि य[20] ॥

---

१. सच्चेव (अ, स), सं चेव (ब)।
२. कज्जेसु (अ)।
३. भणिउ (ब)।
४. निवारिंति (ब)।
५. जिणिंदो (ब)।
६. करेंति (ब)।
७. तस्सड्ढी (स)।
८. ०सणं (स)।
९. अक्खेइवो (अ)।
१०. सुद्धी (स)।
११. ० दतो (अ)।
१२. पुव्वि (अ)।
१३. अग्गहि० (ब), गाथायां तृतीया सप्तम्यर्थे प्राकृतत्वात् (मवृ)।
१४. दूरा जा (अ)।
१५. आणंती (ब), आणेती (स)।
१६. ताणत्तो (स)।
१७. वेज्जो व (ब)।
१८. घेत्तु तु (अ)।
१९. वणवट्टमक्खणाणं (ब), पि वण० (स)।
२०. यह गाथा अ प्रति में नहीं है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४०६. भग्गासिव्वित संसित्ता, वणा वेज्जेहि जस्स उ ।
सो पारगो उ संगामे, पडिवक्खो विवज्जते ॥

२४०७. एमेवासणपेज्जाइं[1], खज्जलेज्झाणि[2] जेसि उ ।
भेसज्जाइं[3] सहीणाइं, पारगा ते समाहिए ॥

२४०८. अधवा राया दुविधो, आतभिसित्तो पराभिसित्तो[4] य ।
आतभिसित्तो भरहो, तस्स उ पुत्तो परेणं तु ॥

२४०९. बलवाहणकोसा या[5], बुद्धी उप्पत्तियाइया[6] ।
साधगो उभयोवेतो, सेसा तिण्णि असाधगा ॥

२४१०. बलवाहणत्थहीणो, बुद्धीहीणो न रक्खते रज्जं ।
इय सुत्तत्थविहीणो, ओसहहीणो उ गच्छं तु ॥

२४११. आयपराभिसित्तेणं, तम्हा[7] आयरिएण उ ।
ओसधमादीणि चओ, कातव्वो 'चोदए सिस्सो'[8] ॥

२४१२. सीसेणाभिहिते एवं, बेंति आयरिओ ततो ।
वदतो गुरुगा तुब्भं, आणादीया विराधणा ॥नि. ३६० ॥

२४१३. दिट्ठंतसरिसं काउं, अप्पाण परं च केइ नासंति ।
ओसधमादीनिचओ, कातव्व जधेव राईणं[9] ॥

२४१४. कोसकोट्ठारदाराणि, पदातिमादियं[10] बलं ।
एवं[11] मणुयपालाणं, किण्णु तुज्झं पि रोयति ॥

२४१५. जो वि ओसहमादीणं, निचओ सो वि अक्खमो ।
न संचये सुहं अत्थि[12], इहलोए परत्थ य ॥

२४१६. आदिसुतस्स विरोधो, समणचियत्ता गिहीण अणुकंपा ।
पुव्वायरियऽन्नाणी, अणवत्था वंत मिच्छत्तं ॥दारं ॥नि. ३६१ ॥

२४१७. जं वुत्तमसणपाणं, खाइमं साइमं तधा ।
संचयं तु न कुव्वेज्जा, 'एयं दाणि विरोधितं'[13] ॥दारं ॥

२४१८. 'परिग्गहे निजुज्जंता'[14], परिचत्ता तु संजता ।
भारादिमादिया दोसा, पेहा 'पेहकतादि य'[15] ॥

---

१. एवमेवसंपज्जाइं (स), ० वासण दिप्पई (ब)।
२. ०लेज्झिणि (स)।
३. पेसज्जाति (अ)।
४. परभि० (स)।
५. य (ब)।
६. ० यात्ति य (अ)।
७. जम्हा (स)।
८. चोयती सीसो (ब)।
९. रातीणं (अ)।
१०. पदादिमा० (अ)।
११. एयं (ब)।
१२. अत्थी (स)।
१३. इयं दाइं विराधितं (स)।
१४. परिग्गहेण निज्जुत्ता (ब)।
१५. ०दिह (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४१९. अधवा तप्पडिबंधा, अच्छंते नितियादओ[1] ।
अणुग्गहो गिहत्थाणं, सदा 'वि ताण'[2] होति उ[3] ॥दारं ॥

२४२०. पडिसिद्धा सन्निही जेहिं, पुव्वायरिएहि ते वि तु ।
अण्णाणी उ कता एवं, अणवत्थापसंगतो ॥दारं ॥

२४२१. वंतं[4] निसेवितं होति, गेण्हंता संचयं पुणो ।
मिच्छत्तं न जधावादी, तधाकारी भवंति उ ॥दारं ॥

२४२२. एते अन्ने य जम्हा उ, दोसा होंति सवित्थरा ।
तम्हा[5] ओसधमादीणं, संचयं तु न कुव्वए ॥

२४२३. जदि दोसा भवंतेते, किं खु[6] धेत्तव्वयं ततो ।
समाधिठावणट्ठाए[7], भण्णती[8] सुण तो इतो ॥

२४२४. नियमा विज्जागहणं, कायव्वं[9] होति दुविधदव्वं तु[10] ।
संजोगदिट्ठपाढी, असती गिहि - अण्णतित्थीहिं ॥

२४२५. चित्तमचित्तपरित्तं, मणंत - संजोइमं[11] च इतरं च ।
थावर - जंगम - जलजं, थलजं चेमादि दुविधं तु ॥

२४२६. जध चेव दीहपट्ठे, विज्जामंता य दुविधदव्वा य ।
एमेव सेसएसु वि, विज्जा दव्वा य रोगेसु ॥

२४२७. संजोगदिट्ठपाढी,[12] हीणधरंतम्मि[13] छग्गुरू होंति ।
आणादिणो य दोसा, विराधण इमेहि ठाणेहिं ॥नि. ३६२ ॥

२४२८. उप्पण्णे गेलण्णे, जो गणधारी न जाणति तिगिच्छं ।
दीसंततो विणासो[14], सुहदुक्खी तेण[15] तू चत्ता ॥नि. ३६३ ॥

२४२९. आतुरत्तेण कायाणं, विसकुंभादि[16] घातए ।
डाहे छेज्जे य जे अण्णे, भवंति समुवद्दवा ॥

२४३०. एते पावंति दोसा, अणागतं अगहिताय विज्जाए ।
असमाही सुयलंभं, केवललंभं 'तु उप्पाए'[17] ॥

---

१. निययादओ (अ) ।
२. देवाण (स) ।
३. य (अ, स) ।
४. धंतं (अ) ।
५. भम्मा (अ) ।
६. नु (ब) ।
७. समाधिसंधाव० (स) ।
८. आभणति (स) ।
९. x (अ) ।
१०. च (स) ।
११. णातव्वं (अ) ।
१२. संजोगे ० (अ) ।
१३. हीणचरंतम्मि (स) ।
१४. विणासे (अ) ।
१५. ते (अ) ।
१६. विसं कुं० (स) ।
१७. चुक्केज्जा (ब), भुक्केज्जा (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४३१. इह लोगिगाण परलोगियाण लद्धीण फेडितो होति ।
इहलोगे मोसादी, परलोगेऽणुत्तरादीया ॥

२४३२. असमाधीमरणेणं, एवं सव्वासि फेडितो होति[१] ।
जह आउगपरिहीणा, देवा लवसत्तमा जाता ॥

२४३३. सत्तलवा जदि आउं, पहुप्पमाणं ततो तु[२] सिज्झंतो ।
तत्तियमेत्त न भूतं, तो ते लवसत्तमा जाता ॥

२४३४. सव्वट्ठसिद्धिनामे, उक्कोसठितीय विजयमादीसु ।
एगावसेसगब्भा, भवंति लवसत्तमा देवा ॥

२४३५. तम्हा उ सपक्खेणं, कातव्व गिलाणगस्स तेगिच्छं ।
विवक्खेण न कारेज्ज, एवं उदितम्मि चोदेति ॥

२४३६. सुत्तम्मि अणुण्णातं, इह इं पुण अत्थतो निसेधेह[३] ।
कायव्व सपक्खेणं[४], चोदग सुत्तं तु कारणियं ॥

२४३७. वेज्जसपक्खाणऽसती, गिहि-परतित्थी उ तिविधसंबंधी ।
एमेव असंबंधी, असोयवादेतरा सव्वे ॥

२४३८. एतेसिं[५] असतीएँ,गिहि-भगिणि परतित्थिगी[६] तिविहभेदा[७] ।
एतेसिं असतीए, समणी तिविधा[८] करे[९] जतणा ॥

२४३९. दूती अद्दाए ता, वत्थे अंतेउरे य दब्भे वा ।
वियणे य तालवंटे[१०], चवेड ओमज्जणा जतणा ॥

२४४०. दूयस्सोमाइज्जइ, असती अद्दाग परिजवित्ताणं[११] ।
परिजवितं वत्थं वा, पाउज्जइ[१२] तेण वोमाए ॥

२४४१. एवं दब्भादीसु[१३] ओमाएऽसंफुसंत[१४] हत्थेणं ।
चावेडीविज्जाएँ व[१५], 'ओमाए चेडयं'[१६] दिंतो ॥

२४४२. एसेव गमो नियमा, निग्गंथीणं पि होति नायव्वो ।
विज्जादी मोत्तूणं, अकुसलकुसले य[१७] करणं च ॥

---

१. होउ (अ, स)।
२. य (ब)।
३. निसेहेध (अ)।
४. गाथा के तृतीय चरण में अनुष्टुप् छंद है।
५. एतेहिं (स)।
६. ० तित्थिगि (स)।
७. ति लेभे उ (ब)।
८. विविहं (ब)।
९. करेंति (अ)।
१०. तालिएंटे (अ, स), तालियंदे (ब)।
११. परिज्ज ० (अ)।
१२. पावेज्जति (अ)।
१३. दब्भादिसु (अ), ० दीसु वि (स)।
१४. ० संतो य (ब)।
१५. य (स)।
१६. तोमाए चावेडयं (ब)।
१७. न (अ, स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४४३. मंतो हवेज्ज कोई[1], विज्जा उ ससाहणा न दायव्वा ।
तुच्छा गारवकरणं, पुव्वाधीता य उ[2] करेज्जा ॥

२४४४. अज्जाणं गेलण्णे, संथरमाणे सयं[3] तु कायव्वं ।
वोच्चत्थ मासचउरो, लहु-गुरुगा[4] थेरए तरुणे ॥

२४४५. जिणकप्पिए न कप्पति, दप्पेणं अजतणाय थेराणं ।
कप्पति य कारणम्मि, जयणाय गच्छे स[5] सावेक्खो ॥

२४४६. चिट्ठति परियाओ से[6], तेण च्छेदादिया न पावेंति ।
परिहारं च न पावति, परिहार तवो त्ति एगट्ठं ॥

इति पंचम उद्देशक

१. कोती (ब)।
२. य (स)।
३. सव्वं (ब)।
४. भूया (ब)।
५. X (स)।
६. जेण (ब, स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

षष्ठ उद्देशक

२४४७. छेदण-दाहनिमित्तं[1], मंडलिडक्के य[2] दीहगेलण्णे ।
पाउग्गोसधहेउं, णायविधी[3] सुत्तसंबंधो ॥

२४४८. गेलण्णमधिकतं वा, गिलाणहेउं इमो वि आरंभो ।
आगाढं व तदुत्तं, सहणिज्जतरं इमं होति ॥

२४४९. अम्मा-पितिसंबंधो, पुव्वं पच्छा व संथुता जे तु ।
एसो खलु णायविधी, णेगा भेदा य एक्केक्के ॥

२४५०. 'नायविधिगमण लहुगा', आणादिविराधण[4] संजमायाए ।
संजमविराधणा खलु, उग्गमदोसा तहिं होज्जा[5] ॥नि. ३६४॥

२४५१. दुल्लभलाभा समणा, नीया नेहेण आहकम्मादी ।
चिरआगयस्स कुज्जा, उग्गमदोसं तु एगतरं ॥नि. ३६५॥

२४५२. इति संजमम्मि एसा[6], विराधणा होतिमा उ आयाए ।
छगलग सेणावति कलुण, रयणथाले य एमादी[7] ॥नि. ३६६॥

२४५३. जध रण्णो सूयस्सा[8], मंसं मज्जारएण अक्खित्तं[9] ।
सो अद्दण्णो मंसं, मग्गति इणमो य तत्थातो ॥

२४५४. कडुहंड[10] पोट्टलीए, गलबद्धाए उ छगलओ तत्थ ।
सूवेण[11] य सो वहितो, थक्के आतो त्ति नाऊणं ॥

२४५५. एवं अद्दण्णाइं[12], ताइं मग्गंति तं समंतेणं ।
सो य तहिं संपत्तो, ववरोवित संजमा तेहिं ॥दारं॥

२४५६. सेणावती मतो ऊ[13], 'भाय-पिया'[14] वा वि तस्स जो आसी[15] ।
अण्णो य नत्थि अरिहो[16], नवरि इमो तत्थ संपत्तो ॥

---

१. दाहसमुत्थं (अ, ब, स) ।
२. व (अ, स) ।
३. ० विही (ब) ।
४. ० लहुगाणा य ० (अ) ।
५. अधुना निर्युक्तिविस्तरः (मवृ) ।
६. एसो (अ, ब) ।
७. एमातो (ब) ।
८. सूतस्सा (अ) ।
९. आक्खेत्तं (अ) ।
१०. कलहुंड (अ) ।
११. सूतेण (अ, स) ।
१२. अट्टणाइं (अ) ।
१३. उउ (अ, ब) ।
१४. भाव पिवा (अ) ।
१५. आसि (ब) ।
१६. अरुहो (अ, स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४५७. तो कलुणं कंदंता, बेंति[१] 'अणाहा वयं'[२] विणा तुमए ।
मा य[३] इमा सेणावति, लच्छी संकामओ अन्नं ॥

२४५८. तं च कुलस्स पमाणं[४], बलविरिए[५] तुज्झऽहीणमंतं[६] च ।
पच्छावि पुणो धम्मं, काहिसि[७] दे ! ता पसीयाहि[८] ॥

२४५९. एवं कारुण्णेणं, इड्ढीय तु लोभितो तु सो तेहिं ।
ववरोविज्जति ताधे, संजमजीवाउ[९] सो तेहिं ॥दारं ॥

२४६०. अविभवअविरेगेणं, विणिग्गतो[१०] पच्छ इड्ढिमं जातं ।
थाल[११] वत्थूण पुण्णं, उवणेंति 'गेण्हिमेतं ति'[१२] ॥

२४६१. तस्स वि दट्ठूण तयं, अह लोभकली ततो उ समुदिण्णो ।
वोरवितो[१३] संजमाउ[१४], एते दोसा हवंति तहिं ॥दारं ॥

२४६२. अधवा न होज्ज एते, अण्णे दोसा हवंति[१५] तत्थेमे ।
जेहिं तु संजमातो, चालिज्जति सुट्ठितो ठियओ[१६] ॥

२४६३. अक्कंदठाणससुरे, उव्वरए पेल्लणाय उवसग्गे[१७] ।
पंथे रोवण भतए[१८], ओभावण अम्ह कम्मकरा[१९] ॥नि. ३६७ ॥

२४६४. छाघातो[२०] अणुलोमे, अभिजोग्ग विसे सयं च ससुरेणं[२१] ।
पंतवण[२२] बंधरुंभण, तं 'वा ते'[२३] वाऽतिवायाए[२४] ॥दारं ॥नि. ३६८ ॥

२४६५. दीसंतो[२५] वि हु नीया[२६], पव्वयहिययं पि[२७] संपकप्पंति ।
कलुणकिवणाणि किं पुण, कुणमाणा एगसेज्जाए ॥

२४६६. अक्कंदट्ठाणठितो[२८], तेसिं सोच्चा तु नायगादीणं ।
पुव्वावरत्त रोवण, जाय ! अणाहा वयं[२९] कोइ ॥दारं ॥

---

१. बंति (ब) ।
२. अणाहावितं (अ, स), अणाभावियं (ब) ।
३. X (अ) ।
४. पहाणं (मु) ।
५. ० रियं (स) ।
६. तुब्भ ० (अ, स), ० णमतं (अ) ।
७. काहिति (ब) ।
८. ० याही (अ) ।
९. ०जीवितातो (अ), ० जीविता वा (स) ।
१०. व णियत्तो (ब), व णिग्गितो (अ) ।
११. थालं (अ), थाणं (स) ।
१२. गेण्हिमायं ति (ब), ०मेतं ती (स) ।
१३. वोउविओ (ब) ।
१४. संजमतो (स) ।
१५. हवेज्ज (ब), हवंत (स) ।
१६. ठितत्तो (अ), थितओ (स) ।
१७. उवस्सगे (ब) ।
१८. भयए (अ) ।
१९. कम्मपरा (ब) ।
२०. छागघातः (मवृ), वाधातो (अ, स) ।
२१. असुरेणं (अ) ।
२२. पंता ० (अ) ।
२३. ताते (अ) ।
२४. ० वायाति (ब) ।
२५. सीदंता (स) ।
२६. निजका (मवृ) ।
२७. व (अ) ।
२८. ० ट्ठाणट्ठितो (स) ।
२९. वए (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४६७. महिलाएँ समं छोढुं[1], ससुरेणं ढक्कितो तु उव्वरए ।
नातविंधमागतं वा, पेल्ले उब्भामिगसगाए ॥दारं ॥

२४६८. मोहुम्मायकराइं, उवसग्गाइं करेति से विरहे ।
भज्जा[2] जेहिं तरुविव[3], वातेणं भज्जते[4] सज्जं ॥दारं ॥

२४६९. कइवेण[5] सभावेण व[6], भयओ भोइं[7] पहम्मि पंतावे ।
हिययं अमुंडितं मे, भयवं[8] पंतावए कुवितो ॥दारं ॥

२४७०. कम्महतो[9] पव्वइतो, भयओ एयम्ह आसि मा वंद ।
उब्भामकए वोद्दे[10], छाधातं[11] तस्स सा देति ॥

२४७१. मा छिज्जउ[12] कुलतंतू, धणगोत्तारं[13] तु जणय मेगसुतं ।
वत्थऽन्नमादिएहिं, अभिजोग्गेतुं[14] च तं नेंति[15] ॥

२४७२. नेच्छंति देवरा मं[16], जीवंति[17] इमम्मि इति विसं देज्जा ।
अण्णेण व दावेज्जा, ससुरो वा[18] से 'करेज्ज इमं'[19] ॥

२४७३. पंतवण बंधरोहं, तस्स वि[20] णीएल्लगा[21] व खुब्भेज्जा ।
अधवा कसाइतो ऊ[22], सो वऽतिवाएज्ज एक्कतरं ॥

२४७४. एक्कम्मि दोसु तीसु व[23], मूलऽणवट्ठो तधेव पारंची ।
अध सो अतिवाइज्जति, पावति पारंचियं ठाणं ॥दारं ॥

२४७५. अहवावि धम्मसद्धा[24], साधू तेसिं घरे न गेण्हंती ।
उग्गमदोसादिभया, ताधे नीता भणंति इमं ॥

२४७६. अम्हं अणिच्छमाणो, आगमणे लज्जणं[25] कुणति एसो ।
ओभावण हिंडंतो, अण्णे लोगो व णं भणति ॥

२४७७. णीयल्लस्स वि भत्तं, न तरह दाउं ति तुब्भ किवणं ती[26] ।
गेहे[27] भुंजसु वुत्ते, भणाति[28] नो कप्पियं भुंजे ॥दारं ॥

---

१. वेढुं (ब)।
२. भज्जाए (ब)।
३. ० विधि (स)।
४. भज्जंते (स)।
५. कतएण (स), कयतेण (अ)।
६. य (ब)।
७. भोए (स)।
८. भययं (स), भवं (अ)।
९. ०हितो (स)।
१०. पोट्टे (अ, ब, स)।
११. वाधातं (अ)
१२. विज्जउ (अ), छिज्जइ (ब)।
१३. धणकतार (अ)।
१४. ० जोग्गेहिं (ब)।
१५. णेंति (स)।
१६. मे(स), १७. जीवंते (स)।
१८. व (अ)।
१९. करेज्जतिमं (अ)।
२०. व (अ)।
२१. ० ल्लए (अ)।
२२. उ (अ, स)। २३. वि (स)।
२४. ० सड्ढा (ब)।
२५. भज्जणं (स)।
२६. ति (अ), किवणं वी (ब)।
२७. गोहे (स)।
२८. भणति (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४७८. किं तं ति खीरमादी, दामो[१] दिन्ने य भाइभज्जाओ ।
बेंति[२] सुते जायंते[३], पडिता णे कर बहू पुत्ता ॥

२४७९. दधि-धय-गुल-तेल्लकरा, तक्ककरा चेव पाडिया अम्हं ।
रायकर पेल्लिता णं, समणकरा दुक्करा वोढुं ॥

२४८०. एते अण्णे य तहिं, नातविधीगमणें होंति 'दोसा उ'[४] ।
तम्हा तु न गंतव्वं, कारणजाते भवे गमणं ॥

२४८१. गेलण्णकारणेणं, पाउग्गाऽसति तहिं तु गंतव्वं ।
जे तु समत्थुवसग्गे, सहिउं ते जंति[५] जतणाए ॥

२४८२. बहिय अणापुच्छाए[६], लहुगा लहुगो य दोच्चऽणापुच्छा ।
आयरियस्स वि[७] लहुगा, अपरिच्छित पेसवेंतस्स ॥

२४८३. तम्हा परिच्छितव्वो, सज्झाए तह[८] य भिक्खऽभावे य ।
थिरमथिरजाणणट्ठा, सो उ उवाएहिमेहिं तु ॥

२४८४. चरणकरणस्स सारो, भिक्खायरिया तधेव सज्झाओ ।
एत्थ परितम्ममाणं, तं जाणसु मंदसंविग्गं[९] ॥

२४८५. चरणकरणस्स सारो, भिक्खायरिया तधेव सज्झाओ ।
एत्थ उ उज्जममाणं[१०], तं जाणसु तिव्वसंविग्गं[११] ॥

२४८६. कइएण[१२] सभावेण य[१३], अण्णस्स य साहसे कहिज्जंते ।
मात-पिति-भात-भगिणी, भज्जा-पुत्तादिएसुं तु ॥

२४८७. सिरकोट्टणकलुणाणि[१४] य, कुणमाणाइं तु पायपडिताइं ।
अमुगेण न गणियाइं, जो जंपति[१५] निप्पिवासो त्ति ॥

२४८८. सो भावतो[१६] पडिबद्धो, अप्पडिबद्धो वएज्ज जो एवं ।
सोइहिति[१७] केत्तिए[१८] तू, नीया जे आसि संसारे ॥

२४८९. 'मुहरागमादिएहि य'[१९], तेसिं[२०] नाऊण राग-वेरग्गं ।
नाऊण थिरं ताधे, ससहायं[२१] पेसवेंति ततो ॥

---

१. ददामो (ब, स)।
२. बेति (अ, स)।
३. जावते (स)।
४. दोसाए (ब)।
५. जाति (ब)।
६. ० पुच्छीए (अ)।
७. व (ब)।
८. चेव (मु)।
९. ब प्रति में इस गाथा का केवल एक चरण है।
१०. उज्जय ० (स)।
११. यह गाथा ब प्रति में नहीं है।
१२. कतएण (ब, स)।
१३. व (स)।
१४. ० कलुसाणि (ब)।
१५. जंपिति (ब)।
१६. भावो (ब)।
१७. सोइहए (अ)।
१८. कत्तिए (अ)।
१९. ० रागमादीहिं (अ, स), ० रागमातिहिं (ब)।
२०. तेहिं (अ)।
२१. ससहाइयं (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४९०. अबहुस्सुतो अगीतो, बाहिरसत्थेहि विरहितो इतरो ।
तव्वि-.रीते गच्छे, तारिसगसहायसहितो व[१] ॥

२४९१. धम्मकही-वादीहिं[२], तवस्सि-गीतेहि संपरिवुडो उ ।
णेमित्तिएहिं[३] य तधा, गच्छति सो अ'ाछट्टो उ ॥

२४९२. पत्ताण वेल पविसण, अध पुण पत्ता पगे हवेज्जाहि ।
तं बाहिं ठावेउं, वसहिं गिण्हंति[४] अन्नत्थ ॥

२४९३. पडिवत्तीकुसलेहिं, सहितो[५] ताधे उ वच्चए तहियं ।
वास-पडिग्गहगमणं, नातिसिणेहासणग्गहणं ॥

२४९४. सयमेव उ[६] धम्मकधा, सासग[७] पंते य निम्मुहे कुणति ।
अपडुप्पण्णे य तहिं, कहेति[८] तल्लद्धिओ अण्णो ॥

२४९५. मलिया य पीढमद्दा, पव्वज्जाए य थिरनिमित्तं तु ।
थावच्चापुत्तेणं, आहरणं तत्थ कायव्वं ॥

२४९६. कहिए य[९] अकहिए वा[१०], जाणणहेउं अइंति[११] भत्तघरं[१२] ।
पुव्वाउत्तं[१३] तहियं, पच्छाउत्तं व 'जं तत्थ'[१४] ॥

२४९७. पुव्वाउत्तारुहिते, केसिंचि समीहितं तु जं जत्थ ।
एते न होंति दोण्णि[१५] वि, पुव्वपवत्तं तु जं जत्थ ॥

२४९८. पुव्वारुहिते य समीहिते य किं छुब्भते[१६] न खलु अण्णं ।
तम्हा खलु जं उचितं, तं तु पमाणं न इतरं तु ॥

२४९९. बालगपुच्छादीहिं, नाउं आयरमणायरेहिं च ।
जं जोग्गं तं गेण्हति, दव्वपमाणं च जाणेज्जा ॥दारं

२५००. दव्वप्पमाणगणणा, खारित-फोडिय तधेव अद्धा य ।
संविग्ग एगठाणा, अणेगसाधूसु पन्नरस ॥**नि. ३६९** ॥

२५०१. सत्तविधमोदणो[१७] खलु, साली-वीही य कोद्दव-जवे य ।
गोधुम-रालग-आरण्ण, कूरखज्जा य णेगविधा ॥

---

१. वा (स) ।
२. वादीहि य (ब) ।
३. निमित्तएहि (स) ।
४. मग्गंति (मु) ।
५. साधितो (अ) ।
६. x (अ, ब) ।
७. सासण (अ) ।
८. कधिति (अ) ।
९. वा (स) ।
१०. x (ब) ।
११. अइति (स) ।
१२. भत्तभरं (अ), सत्त० (स) ।
१३. उव्वाउत्तं (अ, ब) ।
१४. जेणत्थ (स) ।
१५. दोण्ह (स) ।
१६. छुब्भति (अ, स) ।
१७. मकारोऽलाक्षणिकः (मवृ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५०२. सागविहाणा य तधा, खारियमादीणि[१] वंजणाइं च ।
खंडादिपाणगाणि य, नाउं तेसिं तु परिमाणं ॥

२५०३. परिमितभत्तगदाणे, दसुवक्खडियम्मि एगभत्तट्ठो ।
अपरिमिते आरेण वि, गेण्हति[२] एवं तु जं जोग्गं ॥

२५०४. 'अद्धा य'[३] जाणियव्वा, इहरा ओसक्कणादयो[४] दोसा ।
संविग्गे संघाडो, एगो इतरेसु न विसंति[५] ॥दारं ॥

२५०५. तहियं गिलाणगस्सा, अधागडाई हवंति सव्वाइं ।
अब्भंगसिरावेधो, अपाणछेयावणेज्जाइं ॥

२५०६. जइ नीयाण गिलाणो, नीओ वेज्जो व कुणति अण्णस्स ।
तत्थ हु न पच्छकम्मं, जायति अब्भंगमादीसु ॥

२५०७. पुव्वं च मंगलट्ठा[६], तुप्पेउं[७] जइ करेति गिहियाणं ।
सिरवेध[८] - वत्थिकम्मादिएसु[९] न उ पच्छकम्मेयं[१०] ॥

२५०८. अत्तट्ठा उवणीया[११], ओसधमादी वि होंति[१२] ते[१३] चेव ।
पत्थाहारो[१४] य तहिं, अधाकडो[१५] होति साधुस्सा ॥

२५०९. अगिलाणे उ गिहिम्मी[१६], पुव्वुत्ताए करेंति जतणाए ।
अण्णत्थ पुण अलंभे, नायविधिं नेंति अतरंतं[१७] ॥

२५१०. अधुणा[१८] तु लाभचिंता, तत्थ गयाणं इमा भवति[१९] तेसिं ।
जदि[२०] सव्वेगायरियस्स, होंति तो[२१] मग्गणा नत्थि ॥

२५११. संतासंतसतीए, अह अण्णगणा[२२] बितिज्जगा णीया[२३] ।
तत्थ 'इमा मग्गणा उ'[२४], आभव्वे होंति नायव्वा ॥

२५१२. जं सो[२५] उवसामेती, तन्निस्साए य आगता जे उ ।
ते सव्वे आयरिओ, लभते पव्वावगो[२६] तस्स ॥

---

१. खारीमादीण (स)।
२. गेण्हे (स)।
३. अद्धाइ (अ)।
४. उक्कोसणा ० (अ, ब)।
५. विसंती (अ, ब)।
६. ० लद्धा (स)।
७. उप्पेउं (तुप्पेउं) देशीपदमेतत् अभ्यङ्गयद्य (मवृ)।
८. सिरि ० (स)।
९. वत्थक० (अ, स)।
१०. पत्थक० (ब)।
११. ० णीयं (स)।
१२. हवंति (ब)।
१३. तध (अ)।
१४. पच्छा ० (मु)।
१५. अहा ० (अ)।
१६. गिहम्मी (अ), गिहम्मि (स)।
१७. अणंतरं (ब)।
१८. अहुणो (ब)।
१९. हवइ (अ)।
२०. जति (ब)।
२१. तं (ब)।
२२. पुण्णगणा (अ)।
२३. ० ज्ज आणीया (ब)।
२४. इम मग्गणा ऊ (ब)।
२५. सिं (ब)।
२६. पव्वयगो (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५१३. जे पुण अधभावेणं[1], धम्मकही[2] सुंदरो त्ति वा सोउं ।
उवसामिया य[3] तेहिं, तेसिं चिय ते हवंती उ ॥

२५१४. अण्णेहि कारणेहि व, गच्छंताणं तु जतण एसेव ।
ववहारो सेहस्स य, ताइं च इमाइ कज्जाइं ॥

२५१५. तवसोसिय अप्पायण, ओमेव असंथरेंत[4] गच्छेज्जा ।
रमणिज्जं वा खेत्तं, तिकालजोग्गं तु गच्छस्स ॥

२५१६. वासे निच्चिक्खिल्लं[5], सीयलदव पउरमेव[6] गिम्हासु ।
सिसिरे य[7] घणणिवाया, वसधी तह घट्ठमट्ठा य ॥

२५१७. छिन्नमडंबं[8] च तगं, सपक्खपरपक्खविरहितोमाणं[9] ।
पत्तेय उग्गहं ति य, काऊणं तत्थ गच्छेज्जा ॥

२५१८. उवदेसं काहामि य[10], धम्मं[11] गाहिस्स पव्वयावेस्सं[12] ।
सड्ढाणि व बुग्गाहे[13], भिक्खुगमादी[14] ततो गच्छे ॥

२५१९. अतिसेसित[15] दव्वट्ठा, नायविधिं[16] वयति बहुसुतो संतो ।
णेगा य अतिसया बहुसुतस्स एसो उ पस्सेसो ॥

२५२०. अण्णो वि अत्थि[17] जोगो, असाधुदिट्ठीहि हीरमाणाणं[18] ।
वायादतिसयजुत्ता[19], तहियं गंतुं नियत्तेंति ॥

२५२१. पुणरवि भण्णति जोगो, नायविधिं[20] गंतु पडिनियत्तस्स ।
वसहिं[21] विसतो सुत्तं, संसाहितुमागते वावि ॥

२५२२. बहि-अंतविवच्चासो[22], पणगं[23] सागारि चिट्ठति मुहुत्तं ।
बितियपदं विच्छिण्णे, निरुद्धवसहीय जतणाए ॥नि. ३७० ॥

---

१. अह० ।
२. कम्म० (अ) ।
३. X (स) ।
४. असंथरतो (ब) ।
५. ० क्खिवणं (अ), अ प्रति में अनेक स्थानों पर ण्ण के स्थान पर ल्ल तथा ल्ल के स्थान पर ण्ण पाठ मिलता है ।
६. X (ब) ।
७. X (अ) ।
८. ० मंडवं (स) ।
९. गाथायामपमानशब्दएस्यान्यथोपनिपातः प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
१०. व (ब) ।
११. धम्मे (अ) ।
१२. पव्वयाविस्से (ब) ।
१३. वग्गाहे (अ) ।
१४. भिच्छुग ० (ब) ।
१५. अतिसीसिय (ब) ।
१६. ० विहं (ब) ।
१७. अत्थ (अ, ब) ।
१८. ० माणेणं (ब) ।
१९. बालादति ० (स) ।
२०. ० विहं (ब) ।
२१. वसही (अ), वसधी (स) ।
२२. अंतो वि ० (अ) ।
२३. पुणगं (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५२३. बाहिं अपमज्जंते, पणगं गणिणो उ सेसए[1] मासो ।
अप्पडिलेहदुपेहा, पुव्वुत्ता सत्तभंगा उ[2] ॥

२५२४. बहि - अंतविवच्चासो, पणगं सागारिए असंतम्मि ।
सागारियम्मि[3] उ[4] चले, अच्छंति मुहुत्तगं थेरा ॥

२५२५. थिरवक्खित्ते[5] सागारिए अणुवउत्ते पमज्जिउं पविसे ।
निव्विक्खित्तुवउत्ते, अंतो तु पमज्जणा ताहे ॥

२५२६. आभिगहितस्स[6] असती[7], तस्सेव रयोहरणेण[8]ऽण्णतरे[9] ।
पाउंछणुण्णितेण[10] व, पुच्छंति अणण्णभुत्तेणं[11] ॥

२५२७. विपुलाए अपरिभोगें, अप्पणोवासए[12] व चिट्ठुस्स[13] ।
एमेव य भिक्खुस्स वि, नवरिं बाहिं चिरतरं तु ॥

२५२८. निग्गिज्झ पमज्जाही, अभणंतस्सेव मासियं गुरुणो ।
पादरए[14] खमगादी, चोदगकज्जे गते दोसा ॥नि. ३७१ ॥

२५२९. तवसोसितो व खमगो[15], 'इड्ढिम-वुड्ढो व कोच्चितो[16] वावि ।
मा भंडण खमगादी, इति सुत्त निगिज्झ जतणाए ॥

२५३०. थाणे कुप्पति खमगो[17], किं चेव गुरुस्स निग्गमो भणितो[18] ।
भण्णति[19] कुल-गणकज्जे, चेइयनमणं च पव्वेसु ॥

२५३१. जदि एवं निग्गमणे, भणाति तो 'बाहि चिट्ठए'[20] पुच्छे ।
वुच्चति बहि[21] अच्छंते, चोदग[22] गुरुणो इमे[23] दोसा ॥

२५३२. तण्हुण्हादि अभावित, वुड्ढा वा अच्छमाण मुच्छादी[24] ।
विणए गिलाणमादी, साधू सण्णी पडिच्छंती ॥नि. ३७२ ॥

२५३३. तिण्हुण्हभावियस्सा, पडिच्छमाणस्स मुच्छमादी य[25] ।
खद्धादियणगिलाणे, सुत्तत्थविराधणा चेव ॥दारं ॥

---

१. सेसतो (ब) ।
२. च (ब), यह गाथा स प्रति में नहीं है ।
३. सागरि ० (ब) ।
४. स (ब) ।
५. थिर वक्खेत्ते (अ) ।
६. आभिगाधि० (ब) ।
७. सती (अ, ब) ।
८. रतोह० (ब) ।
९. अन्नतरो (अ, स) ।
१०. पाउछोणु० (ब) ।
११. ० सुत्तेणं (ब) ।
१२. अप्पणतोवा ० (अ) ।
१३. वेट्ठुस्स (अ), पेढस्स (ब) ।
१४. वाद० (अ, ब) ।
१५. खमतो (ब) प्रायः सर्वत्र ।
१६. कोवितो (अ, ब, स) ।
१७. खमओ (स) ।
१८. भणइ (अ) ।
१९. भणाति (स) ।
२०. बाहितीच्छिते (अ), बाहितिट्ठिय (ब) ।
२१. विहिं (स) ।
२२. वायग (ब) ।
२३. यमे (ब) ।
२४. मुच्छाती (ब) ।
२५. या (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५३४. वुड्ढाऽसहु[1] सेधादी, खमगो वा पारणम्मि भुक्खुत्तो ।
अच्छति पडिच्छमाणो, न भुंजऽणालोइयमदिट्ठं[2] ॥

२५३५. परिताव अंतराया[3], दोसा होंति अभुंजणे ।
भुंजणऽविणयादीया, दोसा तत्थ भवंति तु[4] ॥

२५३६. 'गिलाणस्सोसधादी तु'[5], न देंति[6] गुरुणो विणा[7] ।
ऊणाहियं च देज्जाही, तस्स वेलाऽतिगच्छति[8] ॥दारं ॥

२५३७. पाहुणगा[9] गंतुमणा, वंदिय जो तेसि उण्हसंतावो ।
पाणगे[10] पडिच्छंते, सद्धे वा अंतरायं तु ॥दारं ॥

२५३८. जम्हा एते दोसा, तम्हा गुरुणा न चिट्ठियव्वं तु ।
भिक्खूण चिट्ठियव्वं[11], तस्स न किं दोस होंतेते ॥नि. ३७३ ॥

२५३९. अणेग बहुनिग्गमणे, अब्भुट्ठण[12] भाविता य हिंडंता[13] ।
दसविधवेयावच्चे, सग्गाम बहिं च वायामो ॥

२५४०. सीउण्हसहा भिक्खू, न य हाणी वायणादिया तेसिं ।
गुरुणो पुण ते •नत्थी, तेण पमज्जंति[14] खेयण्णो[15] ॥दारं ॥

२५४१. धुवकम्मियं च नाउं, कज्जेणऽण्णेण वा अणतिवातिं[16] ।
अव्वक्खित्ताउत्तं[17], न उ दिक्खति बाहि भिक्खू वि ॥दारं ॥

२५४२. बहिगमणे[18] चउगुरुगा, आणादी वाणिए य मिच्छत्तं ।
पडियरणमणाभोगे, खरिमुह[19] मरुए तिरिक्खादी[20] ॥दारं ॥नि. ३७४ ॥

२५४३. सुतवं तम्मि[21] परिवारवं[22] चा[23] वणियंतरावणुट्ठाणे ।
उट्ठाण[24] निग्गमम्मि य, हाणी य परं मुहावण्णा ॥

२५४४. गुणवं तु[25] जतो[26] वणिया, पूजंतेऽण्णे[27] वि सन्नता तम्मि ।
पंडितो त्ति अणुट्ठाणे, दुविधनियत्ती अभिमुहाणं ॥दारं ॥

---

१. बाला सहु (अ, स)।
२. ० णालोतिय ० (ब)।
३. अंतरराती (अ, स), अंतरायाइ (ब)।
४. य (स)।
५. ० सधादीसु (अ)।
६. देति (स)।
७. ऊणा (ब)।
८. वेलावतिच्छति (अ)।
९. ० णगो (अ), पाहुणा (स)।
१०. पारणग (ब, स), पारणए (अ)।
११. ० यव्वं तु (अ)।
१२. ० ट्ठाणे (अ)।
१३. छिंडंता (ब)।
१४. ० ज्जंतो (अ, स)।
१५. खेत्तण्णो (अ, ब)
१६. ० तिवाइ (ब)।
१७. ० त्तावत्त (अ)।
१८. बहुग ० (स)।
१९. परिमुह (ब)।
२०. ० खाइं (ब)।
२१. तवम्मि (अ, ब, स)।
२२. परियारवं (स)।
२३. x (ब), च (अ)।
२४. उत्थाण (अ, ब)।
२५. तो (अ, स)।
२६. जति (ब)।
२७. पूजतेणं (अ)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५४५. आउट्टो त्ति व लोगे, पडियरितुच्छन्न[1] मारए मरुगो[2] ।
खरियमुहसंढगं वा, लोभेउ तिरिक्खसंगहणं ॥दारं ॥

२५४६. आदिग्गहणा[3] उब्भामिगा[4] व तह अन्नतित्थिगा[5] वावि ।
अधवा वि अण्णदोसा, हवंतिमे वादिमादीया[6] ॥

२५४७. वादी दंडियमादी[7], सुत्तत्थाणं व गच्छपरिहाणी ।
आवस्सगदिट्ठंतो[8], कुमार करंतेऽकरेंते[9] य ॥दारं ॥नि. ३७५ ॥

२५४८. सन्नागतो त्ति सिट्ठे, भयातिसारो[10] त्ति बेति परवादी ।
मा होहिंति रिसिवज्झा[11], वच्चामि अलं विवादेणं ॥

२५४९. चंदगवेज्झसरिसगं[12], आगमणं राय इड्ढिमंताणं ।
पव्वज्ज साव[13] भद्दग, इच्चादिगुणाण[14] परिहाणी ॥दारं ॥

२५५०. सुत्तत्थे परिहाणी, वीयारं गंतु जा पुणो एति ।
तत्थेव य वोसिरणे, सुत्तत्थेसुं न सीदंति[15] ॥

२५५१. तीरगते ववहारे, खीरादी होंति 'तदिह उड्डाणे'[16] ।
कोसस्स हाणि[17] परचमुपेल्लण रज्जस्स अपसत्थे ॥

२५५२. वेलं[18] सुत्तत्थाणं, न भंजते[19] दंडियादिकधणं[20] वा ।
पच्छण्णो भयकोसे, पुच्छा[21] पुण साहणा विणए ॥

२५५३. निद्धाहारो वि अहं, असइं[22] 'उट्ठेमि णो'[23] स कधयंतो ।
पासगतो मण्णे मत्तं वत्थंतरिय[24], पणामेति[25] ॥

२५५४. विणओ 'उत्तरिओ त्ति',[26] य, बलिओ गंगा कतोमुही वहति ।
पुव्वमुही अचलंतो[27], भणति[28] निवं आगितिजुतो वि ॥

---

१. ० छिन्ने (ब)।
२. तरुगो (अ)।
३. आदियहणा (ब), ०गहणे (स)।
४. उब्भामियगा (ब)।
५. अन्नउत्थिगा (अ)।
६. वादीया दीया (स)।
७. डंडिय ० (अ, स)।
८. आवासग ० (स)।
९. अकारेंते करेंते (ब), अकरेऽकरेंते (स)।
१०. ० सागो (अ)।
११. तिसिवज्झ (ब)।
१२. ० वेज्जासरिसं (स)।
१३. श्रावक (मवृ)।
१४. इड्ढादि ० (अ, ब)।
१५. सीदंती (स)।
१६. तदुभयड्डाणे (अ, स)।
१७. हाण (अ)।
१८. वंकं (स)।
१९. भुंजते (स)।
२०. ०कहणे (स)।
२१. पच्छा (अ)।
२२. असयं (बपा)।
२३. उट्ठेमिणे (अ, ब)।
२४. वत्थुत० (अ)।
२५. पणाणेति (ब), पणावेति (अ, स)।
२६. उत्तरिय त्ति (ब)।
२७. अवलंतो (अ, ब)।
२८. भणंति (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५५५. रण्णा[1] पदंसितो एस, वयउ[2] अविणीयदंसणो समणो ।
पच्चागयउस्सग्गं, काउं[3] आलोयए गुरुणो ॥

२५५६. आदिच्च दिसालोयण, तरंगतणमादिया[4] य पुव्वमुही ।
मा होज्ज दिसामोहो[5], पुट्ठो वि जणो तहेवाह[6] ॥

२५५७. वध-बंध-छेद-मारण, निव्विसिय[7] धणावहार लोगम्मि ।
भवदंडो[8] उत्तरिओ[9], उच्छहमाणस्स तो बलिओ ॥दारं ॥

२५५८. बितियपयं[10] असतीए, अण्णाय उवस्सए व सागारो[11] ।
न पवत्तति[12] संते वी, जे य समत्था समं जाति ॥

२५५९. कुषहादी निग्गमणं[13], नातिगभीरे अपच्चवायम्मि[14] ।
वोसिरिणम्मि[15] य गुरुणा, निसिरंति[16] महंतदंडधरा ॥

२५६०. जह राया तोसलिओ, मणिपडिमा रक्खते पयत्तेण ।
तह होति रक्खियव्वो, सिरिघरसरिसो उ आयरिओ ॥

२५६१. पडिमुप्पत्ती वणिए, उदधीउप्पात[17] उवायणं भीते ।
रयणदुगे[18] जिणपडिमा, करेमि जदि उत्तरेऽविग्घं ॥

२५६२. उप्पा उवसम उत्तरणमविग्घं एक्कपडिमकरणं वा[19] ।
देवयछंदेण ततो[20], जाता बितिए वि[21] पडिमा उ ॥

२५६३. तो भत्तीए वणिओ, सुस्सूसति ता परेण जत्तेण ।
ता दीवएण पडिमा, दीसंतिधरा उ रयणाइं[22] ॥

२५६४. सोऊण पाडिहेरं, राया घेत्तूण सिरिहरे छुभति ।
मंगलभत्तीय ततो, पूएति परेण जत्तेण ॥

२५६५. मंगलभत्ती अहिता, उप्पज्जति तारिसम्मि दव्वम्मि ।
रयणग्गहणं तेणं[23], रयणब्भूतो तधायरिओ ॥

---

१. रण्णो (अ)।
२. त्रियतु (स)।
३. कालो (ब)।
४. तरंगहामाइया (ब)।
५. तिसा० (ब)।
६. ततेवाह (अ)।
७. निव्विसय (स)।
८. भवरण्णो (स)।
९. ०रिए (अ, स), ० रिउं (ब)।
१०. ० पयम्मी (अ)।
११. साभारो (स)।
१२. पवयंत्त (ब)।
१३. ० मणे (ब)।
१४. अपच्चकयम्मि (स)।
१५. वोसरणम्मि (ब, स)।
१६. निसिरंत (स)।
१७. ० उप्पाउ (अ)।
१८. ० दुगो (ब)।
१९. च (स)।
२०. जतो (ब)।
२१. x (ब)।
२२. रयणाति (अ), रयणायं (बपा)।
२३. x (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५६६. पूयंति य रक्खंति[१] य, सीसा सव्वे गणिं सदा पयता[२] ।
इध परलोए य गुणा, हवंति तप्पूयणे जम्हा ॥दारं ॥

२५६७. जेणाहारो उ गणी, स बालवुड्ढस्स होति गच्छस्स ।
तो अतिसेसपभुत्तं, इमेहि दारेहि तस्स भवे ॥

२५६८. तित्थगरपवयणे निज्जरा य सावेक्ख भत्तवुच्छेदो ।
एतेहि कारणेहिं, अतिसेसा होंति आयरिए ॥दारं ॥नि. ३७६ ॥

२५६९. देविंदचक्कवट्टी, मंडलिया ईसरा[३] तलवरा य ।
अभिगच्छंति जिणिंदे, तो गोयरियं न हिंडंति ॥

२५७०. संखादीया[४] कोडी, सुराण णिच्चं जिणे उवासंति ।
संसयवागरणाणि[५] य, मणसा वयसा च पुच्छंति ॥

२५७१. उप्पण्णणाणा जह णो अडंती, चोत्तीसबुद्धातिसया जिणिंदा ।
एवं गणी अट्ठगुणोववेतो[६], सत्था[७] व नो हिंडति इड्ढिमं तु ॥

२५७२. गुरुहिंडणम्मि गुरुगा, वसभे लहुगाऽनिवाययंतस्स ।
गीताऽगीते गुरु-लहु, आणादीया बहू दोसा ॥नि. ३७७ ॥

२५७३. वाते पित्ते गणालोए, कायकिलेसे अचिंतया[८] ।
मेढी अकारगे वाले, गणचिंता वादि इड्ढिणो ॥दारं ॥नि. ३७८ ॥

२५७४. भारेण वेयणाए, हिंडंते उच्चनीयसासो[९] वा ।
बाहु-कडिवायगहणं, विसमाकारेण 'सूलं वा'[१०] ॥

२५७५. अच्चुण्हताविए[११] उ[१२], खद्ध-दवादियाण छड्डुणादीया ।
अप्पियणे असमाधी, गेलण्णे सुत्तभंगादी ॥दारं ॥

२५७६. बहिया य पित्तमुच्छा, पडणं उण्हेण वावि वसधीए ।
आदियणे[१३] छड्डुणादी, सो चेव[१४] य पोरिसीभंगो ॥दारं ॥

२५७७. आलोगो तिन्निवारे, गोणीण जधा तधेव गच्छे वि ।
नट्ठं न नाहिति[१५] नियट्टदीह सोधी निसेज्जं च ॥

---

१. टीकाकार ने सुस्सूसइ पाठ को आधार मानकर शुश्रुषन्ते छाया की है।
२. पत्ता (स)।
३. तसरा (ब)।
४. ० तीया (ब)।
५. ०वाहरणाणि (स)।
६. ० गणो० (ब)।
७. अत्थो (स)।
८. x (ब)।
९. ० सासे (ब)।
१०. मूलव्वं (ब) लिपि प्रमाद से यहां सकार के स्थान पर म हो गया है।
११. सव्वुण्ह ० (स)।
१२. ऊ (स)।
१३. ० यणो (अ)।
१४. भवे (अ)।
१५. नाभिति (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५७८. मा आवस्सयहाणी, करेज्ज भिक्खालसा व अच्छेज्जा ।
'तेण तिसंझालोगं'[१] सिस्साण करेंति[२] अच्छंतो ॥

२५७९. हिंडंतो उव्वातो[३], सुत्तत्थाणं च गच्छपरिहाणी ।
नासेहिति हिंडंतो, सुत्तं अत्थं 'च रेगेणं'[४] ॥दारं ॥

२५८०. जा आससिउं भुंजति, भुत्तो खेयं व जाव पविणेती[५] ।
ताव गतो सो[६] दिवसो, नट्ठसती दाहिती किं वा ॥

२५८१. रेगो[७] नत्थि दिवसतो, रत्तिं पि न जग्गते समुव्वातो ।
न य अगुणेउं[८] दिज्जति, जदि दिज्जति संकितो[९] दुहतो[१०] ॥दारं ॥

२५८२. मेढीभूते बाहिं, भुंजण आदेसमादि आगमणं[११] ।
विणए[१२] गिलाणमादी[१३], अच्छंतो मेढिसंदेसो ॥

२५८३. आलोय दावणं[१४] वा, कस्स करेहामो कं च छंदेमो ।
आयरिए य अडंते[१५], को अच्छिउमुच्छहे अन्नो[१६] ॥दारं ॥

२५८४. णीणिंति अकारगम्मी[१७], दव्वे पडिसेहणा[१८] हवंति दुक्खं ।
रायनिमंतणगहणे, • खिंसणवावारणा दुक्खं ॥दारं ॥

२५८५. जेणेव कारणेणं[१९], सीसमिणं मुंडियं भंदतेणं[२०] ।
वयणधरवासिणी[२१] वि हु, न मुंडिया ते कहं[२२]जीहा ? ॥

२५८६. गतमागतम्मि[२३] लोए, सीसा वि तधेव तस्स गच्छंति ।
सयमेव दुट्ठुजिब्भो, सीसे[२४] विणइस्सती केणं[२५] ॥

२५८७. पडिसेहं तमजोग्गं, अण्णस्स वि दुल्लहं भवति[२६] भिक्खं ।
सद्धाभंग[२७]ऽचियत्तं[२८], जिब्भादोसो[२९] अवण्णो य ॥दारं ॥

---

१. तेणं तिसंझलोग (x) ।
२. करेंति (स) ।
३. उव्वातो त्ति परिश्रांतो (मवृ) ।
४. आरगेणं (ब), च आरेणं (अ) ।
५. पवणेती (अ, स) ।
६. से (अ), मे (ब) ।
७. रोगा (अ) ।
८. अमुणेउं (ब) ।
९. सक्किओ (ब) ।
१०. दुहितो (स) ।
११. यागः० (अ) ।
१२. विणते (ब) ।
१३. ० मादि (अ) ।
१४. दायणं (स) ।
१५. x (ब) ।
१६. आणा (अ) ।
१७. ० गम्मि (ब, स) ।
१८. ० सेहणे (स) ।
१९. आयरेणं (ब) ।
२०. भणतेणं (अ), भडंतेण (स) ।
२१. ० वासणी (स) ।
२२. कहिं (ब) ।
२३. ० गमम्मि (ब, अ) ।
२४. सिस्से (स) ।
२५. को णं (अ) ।
२६. लहइ (अ) ।
२७. ० भंगि (अ) ।
२८. वियत्तं (ब) ।
२९. जे सो दोसो (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५८८. पुव्विं अदत्तदाणा[1], अकोविया इह उ संकिलिस्संति ।
काऊण अंतरायं, नेच्छंतिट्ठं पि[2] दिज्जंतं ॥दारं ॥

२५८९. गहण[3] पडिसेध[4] भुंजण[5], अभुंजणे चेव मासियं लहुयं ।
अमणुण्ण अलंभे वा, खिंसेज्ज व[6] सेहमादी य ॥

२५९०. वावारियगिलाणादियाण[7], गेण्हह जोग्गं ति ते तओ बेंति ।
तुब्भे कीस न गेण्हह, हिंडंता ऊ सयं चेव ॥

२५९१. एवाणाएँ परिभवो, बेंति[8] दीसए[9] य पाडिरूवं भे[10] ।
आणेह[11] जाणमाणा, खिंसंती एवमादीहिं ॥

२५९२. वाले य साणमादी, दिट्ठंतो तत्थ होति छत्तेणं ।
लोभे य आभिओगे, विसे य इत्थीकए वावी ॥दारं ॥

२५९३. मोएउं असमत्था, बद्धं रुद्धं व नच्चणं कुसिया ।
जुवतिकमणिज्जरूवो, सो पुण सव्वे वि तो सत्तो ॥

२५९४. एमेवायरियस्स वि, दोसा पडिरूववं च सो होति ।
दिज्ज विसं[12] भिक्खुवासो[13], अभिजोग्ग[14] वसीकरणमादी ॥

२५९५. नच्चणहीणा व नडा, नायगहीणा व रूविणी वावि ।
चक्कं च तुंबहीणं, न भवति एवं गणो गणिणा[15] ॥

२५९६. लाभालाभद्धाणे[16], अकारगे बालवुड्ढमादेसे ।
सेह खमए न नाहिंति, अच्छंतो नाहिंती[17] सव्वे ॥

२५९७. सोऊण गतं खिंसति, पडिच्छ[18] उव्वात वादि पेल्लेति ।
अच्छंति[19] सत्थचित्ते, न होंति दोसा तवादीया[20] ॥

२५९८. पागडियं माहप्पं, विण्णाणं चेव सुट्ठु भे गुरुणो ।
जदि सो वि[21] जाणमाणो, न वि तुब्भमणाढितो[22] होंता[23] ॥

---

१. ० दाणं (स)।
२. ति (अ)।
३. गहणे (अ)।
४. x (ब)।
५. भुज्जणे (अ)।
६. वा (ब)।
७. छंद की दृष्टि से यहां वावारियगिलाणादि पाठ होना चाहिए।
८. बेंति य (ब)।
९. दीसति (स)।
१०. ते (स)।
११. आणेध (अ)।
१२. विस (ब)।
१३. भिच्छवासो (अ)।
१४. अभिउग्गं (अ)।
१५. यावि (स)।
१६. ०द्धाणि (ब), ० लाभुद्धाणे (स)।
१७. नाहिई (ब)।
१८. पडिच्छि (स)।
१९. अच्छंते (स)।
२०. तपादयः (मवृ)।
२१. व (ब)।
२२. ० अणा ० (ब)।
२३. होंति (स)।

Jain Education International	For Private & Personal Use Only	www.jainelibrary.org

२५९९. न वि उत्तराणि पासति, पासणियाणं[1] पि होति परिभूतो[2] ।
सेहादि भद्दगा वि य, दट्ठुं अमुहं[3] परिणमंति ॥

२६००. सुत्तत्थाणं गुणणं[4], विज्जा मंता निमित्तजोगाणं ।
वीसत्थे पतिरिक्के, परिजिणति रहस्ससुत्ते य ॥दारं ॥

२६०१. रण्णा वि[5] दुवक्खरओ, ठवितो[6] सव्वस्स उत्तमो[7] होति ।
गच्छम्मि व आयरिओ, सव्वस्स वि उत्तमो होति ॥

२६०२. रायाऽमच्च पुरोहिय, सेट्ठी सेणापती-तलवरा य ।
अभिगच्छंतायरिए, तहियं[8] च इमं उदाहरणं ॥

२६०३. सोऊण य उवसंतो, अमच्च रण्णो तगं निवेदेति ।
राया वि बितियदिवसे, ततिएऽमच्ची य देवी य ॥

२६०४. सोउं[9] पडिच्छिऊणं, व गता अधवा पडिच्छणे खिंसा ।
हिंडंत[10] होंति दोसा, कारण पडिवत्तिकुसलेहिं ॥

२६०५. कारण भिक्खस्स गते, वि कज्जं अन्नं निवस्स साहित्ता ।
निज्जोग नयण पढम, 'कमादि धुवणं'[11] मणुण्णादी[12] ॥

२६०६. कयकुरुकुय आसत्थो, पविसति पुव्वरइया निसेज्जाए ।
पयता य होंति सीसा, जध चकितो[13] होति 'राया वि'[14] ॥

२६०७. सीसा[15] य परिच्चत्ता, चोदगवयणं कुडुंबि[16] झामणया ।
दिट्ठंतो दंडिएण, सावेक्खे चेव निरवेक्खे ॥नि. ३७९ ॥

२६०८. वातादीया दोसा, गुरुस्स इतरेसि किं न ते होंति? ।
रक्खप्प सिस्सचाए, हिंडणतुल्ले असमताया ॥

२६०९. दसविधवेयावच्चे, निच्चं अब्भुट्ठिया असढभावा ।
'सीसा य'[17] परिच्चत्ता, अणुज्जमंताण दंडो[18] य ॥दारं ॥

२६१०. वड्ढी धन्नसुभरियं, कोट्ठारं[19] डज्झए[20] कुडुंबिस्स ।
किं अम्ह मुहा देती, केई[21] तहियं न अल्लीणा ॥

---

१. पासतियाणं (ब) ।
२. अपरि० (अ) ।
३. समुहं (अ) ।
४. गणणं (ब) ।
५. य (स) ।
६. भवितो (स) ।
७. उत्तिमो (अ, स) ।
८. तदियं (अ) ।
९. सोउ (ब)
१०. हिंडंते (ब, स) ।
११. पढमालिका (मवृ), पढमालिमादी (अ, स) ।
१२. अणु० (ब) ।
१३. चक्की (अ),
१४. रायादि (स) ।
१५. वीसा (ब) ।
१६. कोडुंबि (अ, स) ।
१७. ते ताणि (स) ।
१८. डंडो (स) ।
१९. कोट्ठागारे (ब) ।
२०. करिज्जए (ब) ।
२१. केयं (अ), केयिं (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६११. एतस्स पभावेणं, जीवा[१] अम्हे त्ति एव नाऊणं ।
'अण्णे उ'[२] समल्लीणा, विज्झविते[३] तेसि सो तुट्ठो ॥

२६१२. जे ऊ सहायगत्तं, करेसु तेसिं अवड्डियं[४] दिन्नं ।
'दड्ढं ति'[५] न दिण्णितरे, 'य कासगा'[६] दुक्खजीवी य ॥

२६१३. आयरियकुडुंबी वा, सामाणियथाणिया[७] भवे साधू ।
वाबाधअगणितुल्ला[८], सुत्तत्था जाण धन्नं तु ॥

२६१४. एमेव विणीयाणं, करेंति सुत्तत्थसंगहं थेरा ।
हावेंति[९] उदासीणे, किलेसभागी य संसारे ॥दारं ॥

२६१५. उप्पण्णकारणे पुण, जइ सयमेव[१०] सहसा गुरू हिंडे ।
अप्पाण गच्छमुभयं,[११] परिचयती[१२] तत्थिमं नायं ॥

२६१६. सोउं परबलमायं, सहसा एक्काणिओ[१३] उ[१४] जो राया ।
निग्गच्छति सो चयती, अप्पाणं रज्जमुभयं च ॥

२६१७. सावेक्खो पुण राया, कुमारमादीहि परबलं खविया[१५] ।
अजिते सयं पि जुज्झति, उवमा एसेव गच्छे वि ॥

२६१८. अद्धाणकक्खडाऽसति, गेलण्णादेसमादिएसुं तु ।
संथरमाणे भइतो, हिंडेज्ज असंथरंतम्मि ॥नि. ३८० ॥

२६१९. पंच वि आयरियादी, अच्छंति जहन्नए वि[१६] संथरणे ।
एवं पिऽसंथरंते[१७], सयमेव गणी अडति गामे ॥

२६२०. मंडलगतम्मि[१८] सूरे, उत्तिण्णा[१९] जाव पट्ठवणवेला ।
ता एंति भुत्त सण्णागता च उक्कोससंथरणे ॥

२६२१. सण्णाउ आगताणं,च पोरिसी[२०] मज्झिमं हवति[२१] एयं[२२] ।
विसुयावितमत्थदिणे, समतिच्छंते जहण्णं तु ॥

---

१. जीवा अत्र प्रत्ययः जीविता इत्यर्थः मवृ ।
२. अण्णेसु (अ), अण्णे ऊ (ब) ।
३. X (ब) ।
४. अवट्टियं (स) ।
५. दिट्ठंति (ब) ।
६. अकासगा (अ) ।
७. सामाइय ० (अ, स) ।
८. वावारगणी ० (अ, स) ।
९. हवेंति (ब) ।
१०. समए (अ), साम एव (ब) ।
११. गच्छं उभयं (स) ।
१२. परिच्चई (ब) ।
१३. एक्कागिओ (अ) ।
१४. य (ब) ।
१५. भविया (ब) ।
१६. व (अ) ।
१७. पसंथरते (ब) ।
१८. मंगल ० (अ) ।
१९. उइण्णा (ब) ।
२०. पोरुसी (अ) ।
२१. हवंति (ब) ।
२२. एवं (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६२२. अद्धाणेऽसंथरणे, अकोवियाणं य[1] विकरण पलंबे ।
एमेव कक्खडम्मि वि, असति त्ति सहायगा नत्थि ॥

२६२३. बहुया तत्थऽतरंता[2], अहव गिलाणस्स सो परं लभति ।
एमेव य आदेसे, सेसेसु विभासबुद्धीए ॥

२६२४. अब्भुज्जयपरिकम्मं, कुणमाणं[3] जा गणं न वोसिरति ।
ताव सयं सो हिंडति, इति[4] भयणा[5] संथरंतम्मि ॥

२६२५. अद्धाणादिसुवेहं, सुहसीलत्तेण जो करेज्जाही ।
गुरुगा व[6] जं च जत्थ व, सव्वपयत्तेण कायव्वं ॥नि. ३८१ ॥

२६२६. असती पडिलोमं 'तू, सग्गामे'[7] गमण-दाणसड्ढेसु ।
पेसेंति बितियदिवसे[8], आवज्जति मासियं गुरुयं ॥नि. ३८२ ॥

२६२७. गणावच्छेएँ[9] पुव्वं[10], ठवणकुलेसुं च हिंडति सगामे ।
एवं थेरपवत्ती[11], अभिसेए गुरुगपडिलोमं[12] ॥

२६२८. ओभासिय पडिसिद्धं, तं चेव न तत्थ पट्ठवेज्जा तु ।
पडिलोमं गणिमादी, गोरव्वं[13] जत्थ वा कुणति ॥दारं ॥

२६२९. तित्थगरे त्ति समत्तं, अधुणा पावयणनिज्जरा चेव ।
वच्चंति दो वि समगं, दुवालसंगं पवयणं तु ॥

२६३०. तं तु अहिज्जंताणं, वेयावच्चे उ निज्जरा तेसिं ।
कस्स भवे केरिसया[14], सुत्तत्थ जहोत्तरं बलिया ॥नि. ३८३ ॥

२६३१. सुत्तावासगमादी[15], चोद्दसपुव्वीण तह[16] जिणाणं च ।
भावे सुद्धमसुद्धे, सुत्तत्थे मंडली चेव ॥नि. ३८४ ॥

२६३२. पावयणी खलु जम्हा, आयरिओ तेण तस्स कुणमाणो ।
महतीय निज्जराए, वट्टति साधू दसविहम्मि ॥

२६३३. जारिसगं जं वत्थुं, सुतं च तिण्हं व ओहिमादीणं ।
तारिसओ[17] च्चिअ भावो, उप्पज्जति वत्थुतो तम्हा[18] ॥

---

१. व (ब), वि (स)।
२. ० करेंता (अ, स)।
३. ० माणे (स)।
४. इय (अ)।
५. भवित (अ)।
६. य (ब), उ (स)।
७. तस्सगामे (अ), तू सगामे (ब)।
८. य बीय दिवसे (ब), बहुया दिवसे (अ)।
९. ० छेइयो (अ)।
१०. पुव्विं (अ, स)।
११. ० पवित्ती (ब)।
१२. ० लोमे (ब)।
१३. गोरवं (अ)।
१४. केरिसिया (स)।
१५. सुत्तावाईऽमुगाई (अ)।
१६. तहि (अ)।
१७. तारिसिओ (ब)।
१८. जम्हा (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६३४. गुणभूइट्ठे दव्वे, जेण य मत्ताहियत्तणं भावे ।
इति वत्थूओ इच्छति, ववहारो निज्जरं विउलं ॥

२६३५. लक्खणजुत्ता पडिमा, पासादीया समत्तऽलंकारा[1] ।
पल्हायति जध वयणं[2], तह निज्जर मो वियाणाहि ॥

२६३६. सुतवं[3] अतिसयजुत्तो सुहोचितो तध वि तवगुणुज्जुत्तो ।
जो सो मणप्पसादो, जायति सो निज्जरं कुणति ॥

२६३७. निच्छयतो[4] पुण अप्पे, 'जस्स वि'[5] वत्थुम्मि जायते भावो ।
तत्तो सो निज्जरगो, जिण-गोतम-सीहआहरणं ॥

२६३८. सीहो तिविट्ठ[6] निहतो, भमिउं रायगिह कविलबडुग त्ति ।
जिणवीरकहणमणुवसम, गोतमोवसम दिक्खा य ॥

२६३९. सुत्ते अत्थे उभए[7], पुव्वं भणिता जहोत्तरं बलिया ।
मंडलिए पुण भयणा[8], जदि जाणति तत्थ भूयत्थं ॥

२६४०. अत्थो उ महिड्ढीओ,[9] कडकरणेणं घरस्स निप्फत्ती ।
अब्भुट्ठाणे गुरुगा, रण्णो याणे[10] य देवी य[11] ॥नि. ३८५ ॥

२६४१. आराधितो णरवती, तीहि[12] उ पुरिसेहि तेसि संदिसति ।
अमुगपुरि सतसहस्सं, घरं च एतेसि दातव्वं ॥

२६४२. पट्टग[13] घेत्तूण गतो, उंडियबितिओ[14] उ ततियओ[15] उभयं ।
निप्फलगा दोण्णि तहिं, मुद्दा पट्टो य सफलो उ[16] ॥

२६४३. एवं पट्टगसरिसं, सुत्तं अत्थो य उंडियत्थाणे ।
उस्सग्गऽववायत्थो, उभयसरिच्छो य तेण बली ॥दारं ॥

२६४४. सुत्तस्स मंडलीए, नियमा उट्ठेंति आयरियमादी ।
मोत्तूण पवायंतं[17], न उ अत्थे दिक्खण गुरुं पि ॥दारं ॥

२६४५. पतिलीलं करेमाणी, नोट्ठिता सालवाहणं[18] ।
पुढवी[19] नाम सा देवी, सो य रुट्ठो तधिं[20] निवो ॥

---

१. ० अलं ०(अ), ० कारं (ब)।
२. भणंत (अ)।
३. सुतव्वं (अ)।
४. निच्छियतो (अ), णिच्छति तो (स)।
५. वि जस्स (स)।
६. तिविट्ठु (स)।
७. तदुभए (ब)।
८. भतगो (स)।
९. महिड्ढिओ (स)।
१०. पाणे (अ, ब, स)।
११. या (ब)।
१२. तिहिं (ब)।
१३. पगट्ठं (अ)।
१४. उंडुबितिओ (ब)।
१५. तइओ (ब)।
१६. य (स)।
१७. पवाएंतो (स), पवाएयंतं (अ)
१८. सालवा ० (अ, स)।
१९. पुहवी (स)।
२०. ते (स)।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

२६४६. ततो णं आह सा देवी, अत्थाणीए[1] तवारिहा ।
दासा वि सामियं एंतं[2], नोट्ठेति अवि पत्थिवं ॥

२६४७. तं वावि गुरुणो मोत्तुं, न वि उट्ठेसि कस्सति ।
न ते लीला कया होंती, उट्ठेंती हं[3] स तोसितो ॥

२६४८. कधेंतो गोयमो[4] अत्थं, मोत्तुं तित्थगरं सयं ।
न वि उट्ठेति अन्नस्स, तग्गतं चेव गम्मति[5] ॥

२६४९. सोतव्वे उ विही इणमों, अवक्खेवादि होति नायव्वो ।
वक्खेवम्मि[6] य दोसा[7], आणादीया मुणेतव्वा ॥नि. ३८६ ॥

२६५०. काउस्सग्गे वक्खेवया[8] य विकधा विसोत्तिया पयतो ।
उवणय वाउलणादि य, अक्खेवो होति आहरणे ॥नि. ३८७ ॥

२६५१. आरोवणा परूवण, उग्गह तह निज्जरा य वाउलणा ।
एतेहि कारणेहिं, अब्भुट्ठाणं तु पडिकुट्ठं ॥नि. ३८८ ॥

२६५२. उच्चारियाएँ नंदीए, वक्खेवे[9] गुरुओ भवे ।
अप्पसत्थे पसत्थे य, दिट्ठंतो हत्थिलावगा[10] ॥

२६५३. जह सालिं लुणावेंतो, कोई[11] 'अत्थारितेहिं तु'[12] ।
सेयं[13] 'हत्थिं तु दावेति'[14] धाविता ते य मग्गतो ॥

२६५४. न लूओ अध साली उ, वक्खेवेण य तेण उ ।
वक्खेवे रयाणं तु, पोरिसी एव भज्जति ॥

२६५५. विकधा चउव्विधा वुत्ता, इंदिएहिं विसोत्तिया ।
अंजलीपग्गहो चेव, दिट्ठी बुद्धुवजुत्तया[15] ॥

२६५६. नस्सए उवणेतो सो, अन्नहा वोवणिज्जति ।
नातं[16] वागरणं वा वि, पुच्छा अद्धा च भस्सति[17] ॥

२६५७. भासओ सावगो वावि, तिव्वसंजायमाणसो ।
लभंतो ओहिलंभादी[18], जधा मुंडिबगो[19] मुणी ॥

---

१. अच्छाणीए (स) ।
२. पत्तं (ब) ।
३. हिं (अ, स) ।
४. गोधमो (स) ।
५. गम्मते (स) ।
६. वक्खेतम्मि (अ) ।
७. वेसा (अ) ।
८. विक्खे ० (ब) ।
९. विक्खेवे (ब) ।
१०. लच्छिला ० (ब), होति लावगा (अ) ।
११. कोवि (स) ।
१२. अत्थारिओ हिओ (ब) ।
१३. सेति (अ) ।
१४. हत्थित्त दावेवि (अ) ।
१५. ० जुव्वया (ब) ।
१६. णत्तं (ब) ।
१७. हस्सदी (अ) ।
१८. उवलिंभादी (अ), विउलंभाती (ब) ।
१९. मुडिंयओ (अ, स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६५८. आरोवणमक्खेवं, व[१] दाउकामो तहिं तु आयरिओ ।
वाउलणाए फिट्टति, 'उग्गहिउमणो न ओगिण्हे'[२] ॥

२६५९. एगग्गो उवगिण्हति, वक्खिप्पंतस्स[३] वीसुइं[४] जाति ।
इंदपुरइंददत्ते, अज्जुणतेणे य[५] दिट्ठंतो ॥

२६६०. एते[६] चेव य दोसा, अब्भुट्ठाणे वि होंति नातव्वा[७] ।
नवरं अब्भुट्ठाणं, इमेहि तिहि[८] कारणेहिं तु ॥

२६६१. पगतसमत्ते काले[९], अज्झयणुद्देस अंगसुतखंधे ।
एतेहि कारणेहिं, अब्भुट्ठाणं तु अणुओगो[१०] ॥

२६६२. कप्पम्मि दोन्नि पगता, पलंबसुत्तं च[११] मासकप्पे य[१२] ।
दो चेव य ववहारे, पढमे दसमे य जे भणिता ॥

२६६३. पेढियाओ य सव्वाओ, चूलियाओ[१३] तधेव य ।
निज्जुत्ती कप्पनामस्स, ववहारस्स तधेव य ॥

२६६४. अण्णो वि य आएसो, जो राइणिओ य[१४] तत्थ सोतव्वे ।
अणुयोगधम्मयाए, कितिकम्मं तस्स कायव्वं ॥

२६६५. केवलिमादी चोद्दस-दस-नवपुव्वी य[१५] उट्ठणिज्जो[१६] उ ।
जे तेहि[१७] ऊणतरगा, समाण[१८] अगुरुं[१९] न उट्ठेंति ॥दारं ॥

२६६६. सावेक्खे निरवेक्खे[२०], गच्छे दिट्ठंत गामसगडेणं ।
राउलकज्जनिमित्तं, जध गामेणं[२१] कतं सगडं ॥

२६६७. अस्सामिबुद्धियाए, पडितं सडितं 'व नावि'[२२] रक्खंति ।
रण्णाणत्ते दंडो, सयं व सीदंति कज्जेसु[२३] ॥

२६६८. एव[२४] न करेंति सीसा, काहिंति[२५] पडिच्छियं[२६] ति काऊणं ।
ते वि य सीस त्ति ततो, हिंडणपेहादिसु सिग्गो[२७] ॥

---

१. X (अ) ।
२. वक्खवो उग्ग सेसे व (अ, स) ।
३. विक्ख ० (ब), वक्खिप्पि ० (स) ।
४. विस्सुतिं (मु) वीसुई (ब) ।
५. X (अ) ।
६. एगो (ब), एतो (अ) ।
७. X (ब) ।
८. तहि (अ), तेहि (स) ।
९. X (ब) ।
१०. अणुतोगो (ब) ।
११. व्व (स) ।
१२. ते (स) ।
१३. चुल्लियाउ (अ, स), चूलिया उ (ब) ।
१४. उ (स) ।
१५. उ (अ) ।
१६. ० ज्जा (अ) ।
१७. तिहिं (ब) ।
१८. समासे (अ) ।
१९. अगुरू (ब) ।
२०. X (ब) ।
२१. णामेणं (स) ।
२२. नावय (अ, स), न विय (ब) ।
२३. सव्वकज्जेसु (अ) ।
२४. एवं (ब) ।
२५. कहिंति (ब) ।
२६. पडिच्छयं (स) ।
२७. सिग्गत्ति परिश्रान्तः (मवृ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६६९. बितिएहि तु सारवितं[1], सगडं[2] रण्णा य उक्करा[3] उ कता ।
इय जे करेंति गुरुणो, निज्जरलाभो य कित्ती य ॥दारं ॥

२६७०. दव्वे भावे भत्ती, दव्वे गणिगा 'उ दूति-जाराणं'[4] ।
भावे उ सीसवग्गो[5], करेति[6] भत्ति[7] सुतधरस्स ॥

२६७१. जइ वि य लोहसमाणो, गेण्हति खीणंतराइणो उंछं ।
तह वि य गोतमसामी, पारणए गिण्हती गुरुणो ॥दारं ॥

२६७२. गुरुअणुकंपाए पुण, गच्छो अणुकंपितो महाभागो[8] ।
गच्छाणुकंपयाए, अव्वोच्छित्ती कता तित्थे ॥

२६७३. किह[9] तेण न होति कतं, वेयावच्चं तु दसविधं जेणं ।
तस्स पउत्ता[10] अणुकंपितो[11] उ थेरो थिरसभावो ॥

२६७४. अन्ने वि अत्थि भणिता[12], अतिसेसा पंच होंति आयरिए ।
जो अन्नस्स न कीरति, न यातिचारो असति[13] सेसो ॥

२६७५. भत्ते पाणे धोव्वण[14], पसंसणा हत्थ-पायसोए य ।
आयरिए अतिसेसा, अणातिसेसा अणायरिए ॥दारं ॥नि. ३८९ ॥

२६७६. कालसभावाणुमतं, भत्तं पाणं च अच्चितं खेत्ते ।
मलिणमलिणा य जाता, चोलादी तस्स धुव्वंति[15] ॥दारं ॥

२६७७. परवादीण[16] अगम्मो, नेव अवण्णं करेंति सुइसेहा[17] ।
जध अकधितो वि नज्जति[18], एस गणी उज्जपरिहीणो ॥

२६७८. जध उवगरणं सुज्झति, परिहरमाणो अमुच्छितो साहू ।
तह खलु विसुद्धभावो, विसुद्धवासाण परिभोगो ॥दारं ॥

२६७९. गंभीरो मद्दवितो, अब्भुवगतवच्छलो सिवो सोमो ।
विच्छिण्णकुलुप्पण्णो, दाया य कतण्णु तह[19] सुतवं[20] ॥

२६८०. खंतादिगुणोवेओ, पहाणणाण-तव-संजमावसहो ।
एमादि संतगुरुगुणविकत्थणं संसणातिसए ॥

---

१. ० विते (अ) ।
२. अगडं (स) ।
३. उक्कडा (स) ।
४. उद्वेति जागरणं (अ) ।
५. सीसगवग्गो (ब) ।
६. करोति (अ) ।
७. वग्गं (स) ।
८. महाणुभागो (स) ।
९. किय (अ) ।
१०. प्रयोक्ता (मवृ) ।
११. ० पिउं (ब), ० पितं (अ) ।
१२. भणितो (अ), भणिउं (ब) ।
१३. उ सति (अ, स) ।
१४. धोवण (अ) ।
१५. पुव्वंति (ब) ।
१६. ० वाईण (अ, ब) ।
१७. सुयसेहा (ब) ।
१८. नज्जए (अ) ।
१९. उ (स) ।
२०. सुभवं (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६८१. संतगुणुक्कित्तणया, अवण्णवादीण चेव पडिघातो ।
अवि होज्ज संसईणं, पुच्छाभिगमे दुविधलंभो[1] ॥

२६८२. कर-चरण-नयण[2]-दसणाइ,धोव्वणं[3] पंचमो उ अतिसेसो ।
आयरियस्स उ सययं[4], कायव्वो होति नियमेणं ॥

२६८३. मुह-नयण-दंत-पायादिधोव्वणे को गुणो त्ति ते बुद्धी ।
अग्गि मति-वाणिपडुया[5], होति अणोत्तप्पया चेव ॥दारं ॥

२६८४. असढस्स जेण जोगाण, संधणं जध उ होति थेरस्स ।
तं तह[6] करेंति तस्स उ, जध से जोगा न हायंति ॥

२६८५. एते पुण अतिसेसे, णोजीवे[7] वावि[8] को वि दढदेहो ।
निदरिसणं एत्थ भवे, अज्जसमुद्दा य मंगू य ॥

२६८६. अज्जसमुद्दा दुब्बल, कितिकम्मा तिण्णि तस्स कीरंति ।
सुत्तत्थपोरिसि समुट्ठियाण ततियं[9] तु चरमाए ॥

२६८७. सड्ढकुलेसु[10] य तेसिं, दोच्चंगादी उ वीसु घेप्पंति ।
मंगुस्स य कितिकम्मं, न य वीसुं घेप्पते किंची[11] ॥

२६८८. बेंति ततो णं सड्ढा, तुज्झ वि[12] वीसुं[13] न घेप्पते कीस ।
तो बेंति अज्जमंगू, तुब्भेच्चिय एत्थ दिट्ठंतो ॥

२६८९. जा भंडी दुब्बला उ, तं[14] तुब्भे बंधहा[15] पयत्तेण ।
न वि बंधह बलिया ऊ, दुब्बलबलिए व कुंडी वि ॥

२६९०. एवं अज्जसमुद्दा[16], दुब्बलभंडी[17] व संठवणयाए[18] ।
धारंति सरीरं तू, बलि भंडीसरिसग[19] वयं तु ॥

२६९१. निप्पडिकम्मो वि अहं, जोगाण तरामि संधणं[20] काउं ।
नेच्छामि य बितियंगे, वीसुं इति बेंति ते मंगू ॥

---

१. ० लंभा (अ)।
२. X (ब)।
३. धोवणं (ब)।
४. पययं (स)।
५. ताणि पडुता (अ, ब)।
६. तं (ब)।
७. उक्जीव (ब)।
८. यावि (स)।
९. तहियं (ब)।
१०. सढं कु ० (अ)।
११. किंचि (ब)।
१२. व (ब)।
१३. वीसू (अ, स)।
१४. ततो (ब)।
१५. बंधह (अ, स)।
१६. ० समुद्दं (अ, स)।
१७. ० हंडी (अ, स)।
१८. ० वणताए (अ)।
१९. पलि ० (अ)।
२०. साहणं (अ, स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६९२. न तरंती तेण विणा, अज्जसमुद्दा उ[1] तेण वीसं तु ।
इय[2] अतिसेसायरिए, सेसा पंतेण लाढेंती[3] ॥दारं ॥

२६९३. अंतो बहिं च वीसुं, वसमाणो मासियं तु भिक्खुस्स ।
संजमआतविराधण, सुण्णे असुभोदओ[4] होज्जा ॥

२६९४. तब्भावुवजोगेणं, रहिते कम्मादिसंजमे भेदो ।
मेरावलंबिता मे, वेहाणसमादि[5] निव्वेगो[6] ॥

२६९५. जइ वि य निग्गयभावो, तह वि य रक्खिज्जते स अण्णेहिं ।
वंसकडिल्ले छिण्णो, वि वेलुओ पावए न महिं ॥

२६९६. वीसु वसंते दप्पा, गणि आयरिए 'य होंति'[7] एमेव ।
सुत्तं पुण कारणियं, भिक्खुस्स वि कारणेऽणुण्णा ॥

२६९७. विज्जाणं परिवाडी, पव्वे पव्वे य[8] देंति आयरिया ।
मासद्धमासियाणं, पव्वं पुण होति मज्झं तु ॥

२६९८. पक्खस्स अट्ठमी खलु, मासस्स य पक्खियं मुणेयव्वं ।
अण्णं पि होति पव्वं, उवरागो चंदसूराणं ॥

२६९९. चाउद्दसीगहो[9] होति, कोइ[10] अधवावि सोलसिग्गहणं ।
वत्तं तु अणज्जंते[11], होति दुरायं तिरायं वा ॥

२७००. वा सद्देण चिरं पी, महपाणादीसु[12] सो[13] उ अच्छेज्जा ।
ओयविए[14] भरहम्मी, जह राया 'चक्कवट्टी वा'[15] ॥

२७०१. बारसवासा भरधाधिवस्स, छच्चेव वासुदेवाणं ।
तिण्णि य मंडलियस्सा, छम्मासा पागयजणस्स ॥

२७०२. जे जत्थ अधिगया[16] खलु, अस्सा दब्भक्खमादिया रण्णा ।
तेसिं[17] भरणम्मि ऊणं, भुंजति भोए अडंडादी ॥

२७०३. इय पुव्वगताधीते, बाहु सनामेव तं मिणे पच्छा ।
पियति त्ति व अत्थपदे, मिणति त्ति व[18] दो वि अविरुद्धा ॥

---

१. य (अ) ।
२. इति (स) ।
३. लाढेंति (स) ।
४. ० होदतो (ब) ।
५. वेहाणिस ० (स) ।
६. निव्वेदो (मु) ।
७. वि होति (स) ।
८. X (ब) ।
९. चउद्दसीगहो (अ) ।
१०. केइ (अ) ।
११. अणल्लंते (अ), आण ० (स) ।
१२. महावा ० (स) ।
१३. णो (अ, स) ।
१४. उसिए (ब), ० विते (अ) ।
१५. ० वट्टादी (स) ।
१६. अधिगिया (अ) ।
१७. तेति (ब) ।
१८. वि (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७०४. वा अंतो गणि[1] व गणो, वक्खेवो मा हु[2] होज्ज अग्गहणं[3] ।
वसभेहि परिक्खित्तो, उ अच्छते[4] कारणे तेहिं ॥

२७०५. पंचेते अतिसेसा, आयरिए होंति दोण्णि उ गणिस्स ।
भिक्खुस्स कारणम्मि उ, अतिसेसा 'पंच वी'[5] भणिया ॥नि. ३९० ॥

२७०६. जे सुत्ते अतिसेसा, आयरिए अत्थतो व जे भणिया ।
ते[6] कज्जे जतसेवी, भिक्खू वि न[7] बाउसी होति ॥नि. ३९१ ॥

२७०७. बालाऽसहुमतरंतं[8], सुइवादिं[9] पप्प इड्ढिवुड्ढं वा ।
दसवि भइयातिसेसा[10], भिक्खुस्स जहक्कमं कज्जे ॥

२७०८. कप्पति गणिणो वासो, बहिया एगस्स अतिपसंगेण ।
मा अगडसुता वीसुं, वसेज्ज अह सुत्तसंबंधो ॥

२७०९. एगम्मि वी[11] असंते, ण कप्पती कप्पती 'य संतम्मि'[12] ।
उडुबद्धे[13] वासासु य, गीयत्थे देसिए चेव ॥

२७१०. किध पुण होज्ज 'बहूणं, अगडसुताणं'[14] तु एगतो वासो ।
होज्जाहि कक्खडम्मी[15], खेत्ते अरसादि चइयाणं[16] ॥

२७११. चइयाण[17] य सामत्थं, संघयणजुयाण आउलाणं[18] पि ।
उडुवासे[19] लहु-लहुगा, सुतमगीयाण आणादी[20] ॥नि. ३९२ ॥

२७१२. मिच्छत्तसोहि सागारियाइ गेलण्ण अधव कालगते ।
अद्धाण-ओम[21] - संभम[22], भए य रुद्धे य ओसरिए ॥दारं ॥नि. ३९३ ॥

२७१३. मतिभेदा पुव्वोग्गह, संसग्गीए य अभिनिवेसेणं ।
गोविंदे य जमाली, सावग तच्चण्णिए गोट्ठे ॥

२७१४. मतिभेदेण जमाली, पुव्वग्गहितेण[23] होति गोविंदो ।
संसग्गि साव भिक्खू, गोट्ठामाहिलऽभिनिवेसेणं[24] ॥दारं ॥

---

१. गणी (ब) ।
२. X (अ) ।
३. ० हणा (अ) ।
४. अच्छंते (अ) ।
५. पंचमी (ब) ।
६. X (ब) ।
७. ण्णो (ब) ।
८. ० सगगमत० (अ) ।
९. सुइमादि (ब), सुहमइं (स) ।
१०. धतियाति० (अ) ।
११. वा (स) ।
१२. पसंतिम्मि (अ) ।
१३. उउ० (अ) ।
१४. बहूणमगड० (ब) ।
१५. ०डम्मि (अ, स) ।
१६. चतियाणं (ब) ।
१७. वतियाण (अ), चेतियाण (ब) ।
१८. माउलाणं (मु) ।
१९. उउ ० (स) ।
२०. माणादी (मु) ।
२१. तोम (अ) ।
२२. संसय (अ), संभय (ब) ।
२३. ० गहएण (ब) ।
२४. गाथा के उत्तरार्ध में छंदभंग है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७१५. आवण्णमणावण्णे, सोहिं न विदंति[1] ऊणमधियं[2] वा ।
जे य वसधीय दोसा, परिहरति न ते अयाणंता ॥

२७१६. गेलण्णे वोच्चत्थं, करेंति न य[3] मुयविधि वि जाणंति ।
अद्धाणमडंति[4] सया, जयण ण याणेंति[5] ओमे वि ॥दारं ॥

२७१७. अगणादिसंभमेसु य, बोहिगमेच्छादिएसु य भएसु ।
रायादुट्ठादीसु य, विराहगा जतणऽयाणंता[6] ॥

२७१८. संभमनदिरुद्धस्स वि, उन्निक्खंतस्स अधव फिडितस्स ।
ओसरियसहायस्स[7] व, छड्डेइ[8] बहिं उवहतो त्ति ॥

२७१९. एतेण कारणेणं, अगडसुयाणं बहूण वि न कप्पो ।
बितियपद रायदुट्ठे, असिवोमगुरूण संदेसा ॥

२७२०. तध नाणादीणट्ठा, एतेसिं गीतो दिज्ज[9] एक्केक्को ।
असती एगागी वा, फिडिता वा जाव न मिलंति ॥

२७२१. एगाहिगमट्ठाणे, व अंतरा तत्थ होज्ज वाघाते ।
तेणऽच्छेज्जा तत्थ उ[10], सेहस्स नियल्लगा[11] बेंति ॥

२७२२. तत्तो वि पलाविज्जति, गीतत्थबितिज्जगं तु दाऊणं ।
असतीए संगारो, कीरति अमुगत्थ मिलियव्वं ॥

२७२३. रायादुट्ठादीसु य[12], सव्वेसुं चेव होति संगारो ।
ण्हाणादि समोसरणे[13], गीतत्थबितिज्जगं मग्गे ॥

२७२४. असती एगाणीओ[14], निब्बंधे[15] वा बहूणऽगीताणं ।
सामायारीकहणं, मा बहिभावं निरुंभित्ता[16] ॥

२७२५. अण्णे गामे वासं, नाऊण निवारितं अगीयाणं ।
सग्गामे वा वीसुं, वसेज्ज अगडा अयं लेसो ॥

२७२६. अगडसुता वाधिकता, समागमो एस होति दोण्हं पि ।
सच्छंदऽणिस्सिया वा, निस्सियजतणा विही[17] भणिया ॥

---

१. विदिंति (ब) ।
२. ० महियं (अ) ।
३. ते (अ, स) ।
४. अद्धाण अडति (ब) ।
५. याणे (स) ।
६. ० जयाणंता (अ) ।
७. ० सहावस्स (ब) ।
८. छड्डेउ (स) ।
९. सिज्ज (अ) ।
१०. वि (अ) ।
११. नीय ० (ब) ।
१२. व (अ, स) ।
१३. व तोसरणे (अ) ।
१४. एगागी उ (मु) ।
१५. निव्वेवय (अ) ।
१६. निरूं भंतं (स) ।
१७. विधि (अ), विहिं (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७२७. गामे उवस्सए वा, अभिनिव्वगडाय[१] दोस ते चेव ।
नवरं पुण नाणत्तं, तिहि[२] दिवसे गीतसंवसणं ॥

२७२८. एवं पि भवे दोसा, दोसुं दिवसेसु जे भणियपुव्विं ।
कारणियं पुण वसही, असती भिक्खोभए जतणा ॥नि. ३९४॥

२७२९. संकिट्ठा वसधीए, निवेसणस्संत अन्नवसधीए ।
असतीय वाडगंतो[३], तस्सऽसती होज्ज दूरे वा ॥

२७३०. वीसुं पि वसंताणं, दोण्णि वि आवासगा सह गुरूहिं ।
दूरे पोरिसिभंगे, उग्घाडागंतु विगडेंति ॥

२७३१. गीतसहाया उ गता, आलोयण तस्स अंतियं[४] गुरुणं ।
अगडा पुण पत्तेयं, आलोएंती गुरुसगासे ॥

२७३२. एंताण 'य जंताण'[५] य, पोरिसिभंगो ततो[६] गुरु वयंती ।
थेरे अजंगमम्मि उ, मज्झण्हे वावि आलोए ॥

२७३३. एवं पि दुल्लभाए, पडिवसभठिया न एंति पतिदिवसं[७] ।
समणुण्णदढधिती य, अतरुणे बाहिं[८] विसज्जेंति ॥

२७३४. दुल्लभभिक्खे जतिउं, सग्गामुब्भाम पल्लियासुं च ।
अतिखेव[९] पोरिसिवहे, 'न वावि'[१०] ठायंति[११] तो वीसुं ॥दारं॥

२७३५. उभयस्सं अलंभम्मि वि, गीताऽसति वीसु[१२]ठंति अगडसुता ।
दुसु[१३] तीसु व[१४] ठाणेसुं, पतिदिवसालोय आयरिओ ॥

२७३६. सइरी[१५] भवंति[१६] अणवेक्खणाय[१७] जइ भिन्नवायणा लोए ।
पडिपुच्छ सोहि चोयण, तम्हा उ गुरू सया वयइ[१८] ॥

२७३७. तण्हाइयस्स पाणं, जोग्गाहारं[१९] 'च णेंति'[२०] पव्वोणिं[२१] ।
कितिकम्मं च करेंती, मा जुण्णरहोव्व सीदेज्जा ॥

---

१. ०निव्वग ० (स)।
२. तहि (अ)।
३. वागडंतो (अ)।
४. सो वि य (अ, ब, स)।
५. व यंताण (अ, स)।
६. x (ब)।
७. पविदि० (ब)।
८. बहिं (ब)।
९. ० खेत्त (ब, स)।
१०. वि यावि (अ)।
११. वायंति (ब)।
१२. वीसुं (ब)।
१३. दस्सु (अ)।
१४. उ (स)।
१५. सतिरी (अ, ब, स)।
१६. भणंति (स)।
१७. अक्खेणाय (ब)।
१८. वदती (स)।
१९. जोग्गाहाणं (ब)।
२०. चरेंति (ब)।
२१. पव्वोणी (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७३८. 'असती निच्चसहाए'[१], गेण्हति पारंपरेण[२] अण्णोऽण्णे[३] ।
ते[४] चिय अण्णेहि समं, तं मेलेउं नियत्तेंति[५] ॥

२७३९. एगत्थ वसितो[६] संतो, तेसिं[७] दाऊण पोरिसिं ।
मज्झण्हे बितियं गंतुं, भोत्तुं तत्थावरं वए ॥

२७४०. एवमेगेण दिवसेण, सोहिं कुणति तिण्ह वि ।
पडिपुच्छणं तु[८] बलवं, आह सुत्तमवत्थयं ॥

२७४१. सुत्तनिवातो थेरे, कलावकाउं तिहेण[९] वा सोधिं ।
बितियपयं च गिलाणे, कलाव काऊण आगमणं[१०] ॥

२७४२. एवं अगडसुताणं, वीसुठियाणं तु तीसु[११] गामेसु ।
लहुया असंथरंते, तेसि अणिताण[१२] वा[१३] लहुओ ॥

२७४३. एगदिणे[१४] एक्केक्के, तिट्ठाणत्थाण दुब्बलो वसधी[१५] ।
अह सो अजंगमोच्चिय, ताधे इतरे तधिं एंति[१६] ॥

२७४४. एति व पडिच्छते वा, मेधावि कलावकाउमवराधे[१७] ।
अतिदूरे पुण पणुए, पक्खे मासे परतरे वा ॥

२७४५. अगडसुताण न कप्पन्ति, वीसुं मा अतिपसंगतो सुतवं ।
एगाणिओ[१८] वसेज्जा, निकायणं[१९] चेव परिमाणं ॥

२७४६. अंतो वा बाहिं[२०] वा, अभिनिव्वगडाय ठायमाणस्स ।
गीतत्थे मासलहू[२१] गुरुगो मासो अगीतत्थे ॥नि. ३९५ ॥

२७४७. अंतो निवेसणस्सा, सोहीमादी व जाव सग्गामो ।
घरवगडाए सुत्तं, एमेव य सेसवगडासु ॥

२७४८. आणादिणो य दोसा, विराधणा होति संजमायाए ।
लज्जा-भय-गोरव-धम्मसद्ध-रक्खा चउद्धा उ ॥नि. ३९६ ॥

---

१. असतीए निच्चसहा (अ)।
२. ० परे व (स)।
३. ० अण्णो त्ति (ब)।
४. X (ब)।
५. नियत्तिंति (अ, ब)।
६. वसिउ (ब)।
७. तिसिं (ब)।
८. च (अ, स)।
९. तिविहेण (ब)।
१०. २७४१-२७४३ ये तीन गाथाएं अ प्रति में नहीं है।
११. तीस (ब)।
१२. अणंताण (ब)।
१३. वी (ब, स)।
१४. एते दिण (ब), ० दिणं (स)।
१५. वसति (स)।
१६. तेंति (ब)।
१७. ० मवराधी (अ)।
१८. एगाणितो (अ)।
१९. निगायाण (अ, स)।
२०. बहिं (ब)।
२१. ० लहुं (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७४९. लज्जणिज्जो उ होहामि[1], लज्जए[2] वा समायरं[3] ।
कुलागमतवस्सी वा, सपक्खपरपक्खतो ॥

२७५०. असिलोगस्स वा वाया, जोऽतिसंकति कम्मसं ।
तहावि साधु तं जम्हा, जसो वण्णो य संजमो ॥

२७५१. जसं समुवजीवंति, जे नरा वित्तमत्तणो ।
अलेस्सा तत्थ सिज्झंति, 'सलेसा तु'[4] विभासिता ॥

२७५२. दाहिंति गुरुदंडं तो, जइ नाहिंति[5] तत्ततो ।
तं च वोढुं न चाएस्सं[6], घातमादी तु लोगतो ॥

२७५३. जोऽहं सइरकहासु[7], चक्कामि[8] गुरुसन्नही[9] ।
सोऽहं[10] कहमुवासिस्सं, तमणायारदूसितो[11] ॥

२७५४. लोए 'लोउत्तरे चेव'[12], गुरवो[13] मज्झ सम्मता ।
मा हु मज्झावराहेण, होज्ज तेसिं लहुत्तया ॥

२७५५. 'माणणिज्जो उ'[14] सव्वस्स, न मे कोई न पूयए ।
तणाण लहुतरो होहं, इति वज्जेति पावगं ॥

२७५६. आयसक्खियमेवेह[15], पावगं जो वि वज्जते ।
अप्पेव दुट्ठसंकप्पं, रक्खा सा खलु धम्मतो ॥

२७५७. निसग्गुस्सग्गकारी य[16], सव्वतो छिन्नबंधणो ।
एगो वा परिसाए वा, अप्पाणं सोऽभिरक्खति ॥

२७५८. मणपरिणामो वीई[17], सुभासुभे कंटएण[18] दिट्ठंतो ।
खिप्पकरणं जध लंखियव्वं तहियं इमं होति ॥

२७५९. परिणामाणवत्थाणं, सति मोहे उ देहिणं ।
तस्सेव उ अभावेणं, जायते[19] एगभावया ॥

२७६०. जधाऽवचिज्जते मोहो, सुद्धलेसस्स झाइणो[20] ।
तहेव परिणामो वि, विसुद्धो परिवड्ढते[21] ॥

---

१. होहामी (स) ।
२. लज्जाए (ब) ।
३. तमायरं (ब) ।
४. सलेस्सा (स) ।
५. नाहिं वि (अ) ।
६. चाइ (ब) ।
७. ० कहासुं पि (अ, स) ।
८. चकामि (ब) ।
९. ० सन्निभो (स) ।
१०. सोहं (स) ।
११. ० दूमितो (स) ।
१२. उत्तरे यावि (ब) ।
१३. गुरुवो (स) ।
१४. ० णिज्जामि (स) ।
१५. ० वेहण (ब) ।
१६. व्व (स) ।
१७. वीयी (सं) ।
१८. कंडएण (स) ।
१९. जाए (ब) ।
२०. राइणो (अ) ।
२१. परिवट्टइ (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७६१. जधा य कम्मिणो कम्मं, मोहणिज्जं उदिज्जति ।
तधेव संकिलिट्ठो से, परिणामो विवड्ढती ॥दारं ॥

२७६२. जहा य अंबुनाधम्मि, अणुबद्धपरम्परा[1] ।
वीई उप्पज्जई[2] एवं, परिणामो सुभासुभो ॥

२७६३. कण्हगोमी[3] जधा चित्ता, कंटयं[4] वा विचित्तयं ।
तधेव परिणामस्स, विचित्ता कालकंटया ॥

२७६४. लंखिया वा[5] जधा खिप्पं, उप्पतित्ता[6] समोवए[7] ।
परिणामो तहा दुविधो, खिप्पं एति अवेति य ॥

२७६५. लेस्सट्ठाणेसु[8] एक्केक्के, ठाणसंखमतिच्छिया[9] ।
किलिट्ठेणेतरेणं वा, जे तु भावेण खुंदती[10] ॥

२७६६. भवसंहणणं[11] चेव, ठितिं वासज्ज देहिणं ।
परिणामस्स जाणेज्जा, विवड्ढी जस्स जत्तिया ॥

२७६७. विसुज्झंतेण भावेण, मोहो समवचिज्जति ।
मोहस्सावचए वावि[12], भावसुद्धी वियाहिया ॥

२७६८. उक्कड्ढंतं[13] जधा तोयं, सीतलेण झविज्जती[14] ।
गदो वा अगदेणं तु, वेरग्गेण तहोदओ ॥

२७६९. असुभोदयनिप्फण्णा, संभवंति बहूविधा ।
दोसा एगाणियस्सेवं, इमे अन्ने वियाहिया ॥

२७७०. मिच्छत्तसोधि सागारियादि गेलण्ण खद्धपडिणीए ।
बहि पेल्लणित्थि[15] वाले, रोगे तध सल्लमरणे य ॥**नि. ३९७**॥

२७७१. ओगाढं पसहायं[16] तु, पण्णवेंति कुतित्थिया ।
समावण्णो[17] विसोधिं च, कस्स पासे करिस्सति ॥दारं ॥

२७७२. भया आमोसगादीणं[18], सेज्जं वयति सारियं[19] ।
असहायस्स गेलण्णे, को से किच्चं करिस्सति ॥दारं ॥

---

१. अणुपबद्ध ० (ब) ।
२. उप्पज्जंते (स) ।
३. कण्हसगोम्ही (ब) ।
४. कंडयं (स), सर्वत्र ।
५. यं (ब) ।
६. उप्पइत्ता (इ), उप्पतेत्ता (ब) ।
७. समोयइ (अ), समोयए (ब) ।
८. ० ट्ठाणे उ (अ) ।
९. ० तिच्छया (स) ।
१०. २७६५-६६ ये दोनों गाथाएं ब प्रति में नहीं है ।
११. ० संघतणं (स), संघयणं (अ) ।
१२. यावि (स) ।
१३. उक्कथवं (ब), उक्कंतं (स) ।
१४. स विज्जति (अ) ।
१५. पेल्लणिच्छि (अ) ।
१६. अपि असहायं (मवृ) ।
१७. समं वण्णो (ब) ।
१८. समोस.० (स) ।
१९. सारिया (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७७३. मंदग्गी भुंजते खद्धं, ऊसढं[1] ति निरंकुसो ।
एगो परुट्ठगम्मो य, पेल्ले उब्भामिया व णं ॥

२७७४. वभिचारम्मि परिणते, णिंती दट्ठूण समणवसहीओ ।
पंतावणादगारो, उड्डाहपदोस एमादी[2] ॥दारं ॥

२७७५. वालेण वावि डक्कस्स, से को कुणति भेसजं ।
दीहरोगे विवड्ढि[3] च, गतो किं सो करिस्सति ॥दारं ॥

२७७६. सल्लुद्धरणविसोही, मते य दोसा बहुस्सुते वावि[4] ।
सविसेसा अप्पसुते, रक्खंति परोप्परं दोवि ॥

२७७७. अप्पेग जिणसिद्धेसु, आलोएंतो[5] बहुस्सुतो ।
अगीतो तमजाणंतो[6], ससल्लो जाति दुग्गतिं[7] ॥

२७७८. सीहो रक्खति तिणिसे, तिणिसेहि वि रक्खितो तधा सीहो[8] ।
एवण्णमण्णसहिता, बितियं[9] अद्धाणमादीसुं ॥

२७७९. कारणतो वसमाणो, गीतोऽगीतो[10] व होति निद्दोसो ।
पुव्वं च वण्णिता[11] खलु, कारणवासिस्स[12] जतणा तु ॥

२७८०. सुत्तेणेव उ सुत्तं, जोइज्जति[13] कारणं तु आसज्ज ।
संबंधघरुव्वरए[14], कप्पति वसिउं बहुसुतस्स ॥

२७८१. चरणं तु भिक्खुभावो, सामायारीय जा तदट्ठाए ।
पडिजागरणं करणं, उभओ[15] कालं महोरत्तं ॥

२७८२. वक्खारे कारणम्मि[16], निक्कारण पुव्ववण्णिता दोसा ।
किं पुण हुज्जा कारण, तद्दोसादी[17] मुणेयव्वा[18] ॥नि. ३९८ ॥

२७८३. संदंतमसंदंतं, अस्संदण चित्त[19] मंडलपसुत्ती[20] ।
किमिपूयं लसिगा[21] वा, पस्संदति तत्थिमा जतणा ॥नि. ३९९ ॥

२७८४. संदंते वक्खारो, अंतो बाहिं च सारणा तिण्णि ।
जत्थ विसीदेज्ज ततो, णाणादी उग्गमादी[22] वा ॥नि. ४०० ॥

---

१. उस्सढं (स) ।
२. २७७४-७५ ये दो गाथाएं अ और स प्रति में नहीं हैं ।
३. विवत्ति (ब) ।
४. यावि (स) ।
५. आलोएहि (ब) ।
६. य मजाणंतो (अ) ।
७. दुग्गविं (ब) ।
८. सीधो (अ) ।
९. बितिओ (स) ।
१०. गीतागीतो (स) ।
११. वन्निया (अ) ।
१२. ० वासी स (स) ।
१३. ० ज्जती (ब) ।
१४. ० घरोयरए (ब), ० घरोव्वरते (अ) ।
१५. उभतो (अ, ब) ।
१६. ० णम्मि (स) ।
१७. त्वग्दोषादीनि (मवृ) ।
१८. सम्प्रति निर्युक्तिविस्तरः (मवृ) ।
१९. सित्त (अ) ।
२०. ० पवुत्ती (स) ।
२१. रसिगा (अ) ।
२२. ०मातो (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७८५. अहवा भत्ते पाणे, सामायारीय वा विसीदंतं ।
एतेसु तीसु सारे, तिण्णि वि काले गुरू पुच्छे ॥

२७८६. गोसे केरिसियं ति य, 'कतमकतं वा'[१] किं[२] ति[३] आवासं ।
भिक्खं लद्धमलद्धं किं दिज्जउ वा तें मज्झण्हे ॥

२७८७. पेहितमपेहितं[४] वा, वट्टति ते केरिसं च अवरण्हे ।
निज्जूहणम्मि गुरुगा, अविधी परियट्टणे वावि[५] ॥

२७८८. आणादिणो य दोसा, विराहणा होतिमेहिं[६] ठाणेहिं ।
पासवण-फास-लाला[७], पस्सेए मरुयदिट्ठंतो[८] ॥नि. ४०१ ॥

२७८९. पासवण अन्नअसती, भूतीए लक्खि मा हु दूसियं मोयं ।
चलणतलेसु[९] कमेज्जा,[१०] एमेव य निक्खमपवेसो ॥

२७९०. णिंती[११]वि[१२]सो काउ तली कमेसुं, संथारओ दूर अदंसणे वि[१३] ।
मा फासदोसेण कमेज्ज तेसिं, तत्थेक्कवत्थादि व[१४] परिहरंति ॥

२७९१. न य भुंजंतेगट्ठा[१५], लालादोसेण संकमति[१६] वाही ।
सेओ से वज्जिज्जति, जल्लपडलंतरकप्पो[१७] य ॥

२७९२. एतेहि कमति[१८] वाही, एत्थं खलु सेउएण दिट्ठंतो ।
कुट्ठक्खय कच्छुयऽसिवं, नयणामयकामलादीया[१९] ॥

२७९३. एस जतणा बहुस्सुत,ऽबहुस्सुय न कीरते तु वक्खारो ।
ठावेंति एगपासे, अपरिभोगम्मि उ जतीणं व[२०] ॥

२७९४. विवज्जितो उट्ठविवज्जएहिं, मा बाहिभावं अबहुस्सुतो उ ।
कट्ठाए[२१] भूतीव[२२] तिरोकरेंति, मा एक्कमेक्कं सहसा फुसेज्जा ॥

२७९५. अगलंत न वक्खारो, लालासेयादिवज्जण तधेव ।
उस्सास-भास-सयणासणादीहि होति[२३] संकंती ॥नि. ४०२ ॥

---

१. कयं अकयं व (ब)।
२. कं (अ)।
३. ते (ब)।
४. ० मविहियं (ब)।
५. यावि (स)।
६. होयमेहिं (स)।
७. णाला (ब)।
८. मरुएण दि ० (स)।
९. चवण ० (अ)।
१०. कमेज्जं (स)।
११. णिती (अ), णिति (स)।
१२. व (ब)।
१३. वी (स)।
१४. वि (स, ब)।
१५. भुंजतेगल्ला (ब)।
१६. ० मई (अ)।
१७. ० तरप्पो (अ)।
१८. संकमति (स)।
१९. ० णामल ० (अ)।
२०. व्व (स)।
२१. कट्ठाति (अ, स)।
२२. भूति व (ब)।
२३. कोति (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७९६. अवणेतु[१] जल्लपडलं, धरेंति भाणं[२] स काइयादि[३] गतो ।
सीते व दाउ कप्पं, उवरिमधोतं परिहरंति ॥

२७९७. असहुस्सुव्वत्तणादीणि, कुव्वतो छिक्क जत्तियं ।
खेदमकुव्वंत धोवेज्ज, मट्टियादीहि तत्तियं ॥

२७९८. असती मोयमहीए, कयकप्पऽगलंतमत्तए निसिरे[४] ।
तेणेव कते कप्पे, इतरे निसिरंति[५] जतणाए ॥

२७९९. एसा जतणा उ तहिं, कालगते पुण इमो विधी होति ।
अंतरकप्पं जल्लपडलं च अगलंत उज्झंति ॥

२८००. धोतावि[६] न निद्दोसा, तेण छुड्डुंति ते दुवे ।
सेसगं तु कते कप्पे, सव्वं से परिभुंजति[७] ॥

२८०१. संदंतस्स वि किंचण,[८] असतीए मोत्तु भायणुक्कोसं ।
लेवमत्तमवणेत्ता, अण्णमयं धोविउं लिंपे ॥

२८०२. अगलंतमत्तसेवी, असतीए कप्प[९] काउ भुंजंती ।
एसा जतणा उ भवे, सव्वेसिं तेसि नायव्वा ॥

२८०३. एगाणियस्स दोसा, के त्ति[१०] भवे एस सुत्तसंबंधो ।
कारणनिवासिणो वा, दुविधा सेविस्स[११] पच्छित्तं ॥

२८०४. बाहिं वक्खारठिते, 'महिला आगम'[१२] अवारणे[१३]गुरुगा ।
वारण वासे पेल्लण, उदए पड्डिसेवणा भणिया ॥

२८०५. 'पडिसेधो पुव्वुत्तो'[१४], उज्जु[१५] अणुज्जू मिहुणचउत्थम्मि ।
निग्गममनिग्गमे वि य, जहिं च सुत्तस्स पारंभो ॥

२८०६. जुगछिद्द[१६] नालिगादिसु[१७] पढमगजामादिसेवणे सोधी ।
मूलादी पुव्वुत्ता, पंचमजामे भवे सुत्तं ॥

२८०७. दुविधं वा पडिमेतर, सन्निहितेतर अचित्तसच्चित्ते ।
बाहिं व देउलादिसु, सोही तेसिं तु पुव्वुत्ता ॥

---

१. मोत्तूण (अ) ।
२. भाणे (स) ।
३. कायादि (ब) ।
४. णसिरे (अ) ।
५. णसिरंति (अ), निसिणंति (स) ।
६. छंद की दृष्टि से 'धोया अवि' पाठ होना चाहिए ।
७. परिभुज्झति (स) ।
८. किंचणं (स) ।
९. कप्पे (ब) ।
१०. को त्ति (ब) ।
११. सो उ (स) ।
१२. महिला य आं ० (ब), महिलादागम (स) ।
१३. अकारणे (स) ।
१४. पुव्वुत्तो पडिसेधो (अ, ब) ।
१५. उज्ज (अ, ब) ।
१६. ० छिड्ड (अ, स) ।
१७. ० गादीसु (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८०८. संगारदिण्ण उ एस, साईयं[1] वा तहिं अपेच्छंती ।
'पेलेज्ज व तं'[2] कुलडा, पुत्तट्ठा 'देज्ज रूवं वा'[3] ॥

२८०९. जइ[4] सेव पढमजामे, मूलं सेसेसु गुरुग सव्वत्थ ।
अधवा दिव्वादीयं[5], सच्चित्तं होति नायव्वं[6] ॥

२८१०. जं 'सासु तिधा तितयं'[7], नादिव्वं पासवं च संगीतं ।
जह वुत्तं[8] उवहाणं[9], तं 'न पुण्णं इहावण्णं[10] ॥

२८११. बितियपदे तेगिच्छं, निव्वीतियमादियं अतिक्कंते ।
ताहे[11] इमेण विधिणा, जतणाए तत्थ सेवेज्जा ॥

२८१२. खलखिलमदिट्ठविसयं[12], विसत्त अव्वंगवं[13] गणं काउं ।
ताधे इमंसि[14] लेसे, गीतत्थ जतो निलिज्जेज्जा[15] ॥

२८१३. अभिनिव्वगडादीसुं[16], समणीण पडिस्सगस्स दोसेण ।
दोसबहुला गणातो, अवक्कमे कावि[17] संबंधो ॥

२८१४. इत्थी पण्हाति जहिं, व सेवए[18] तेण सबलियायारो ।
उज्जतविहारमण्णं[19], उवेज्ज बितिओ भवे जोगो ॥

२८१५. जा होति परिभवंतीह[20], निग्गया सीयए कहं स त्ति ।
संवासमादिएहिं, स छलिज्जति उज्जमंता वी[21] ॥

२८१६. अद्धाणनिग्गयादी, कप्पट्ठी[22] संभरंति जा बितिया ।
आगमणदेसभंगे, चउत्थि[23] पुण मग्गते सिक्खं ॥नि. ४०३ ॥

२८१७. गोउम्मुगमादीया, नाया पुव्वं मुदाहडा ओमे ।
ओमे असिवे य[24] दुट्ठे, सत्थे वा तेण अभिद्दुते ॥

२८१८. अन्नत्थ दिक्खिया थेरी, तीसे धूता य अन्नहिं ।
वारिज्जंती य सा एज्जा, धूयानेहेण तं गणं ॥

---

१. सात्तियं (अ, ब, स) ।
२. ० ज्ज वतं (अ, ब) ।
३. वा रमणीयं (अ, ब) ।
४. जय (ब) ।
५. ० दियं (स) ।
६. नेयव्वं (ब) ।
७. सासू होति तियं (अ) ।
८. पुत्तं (अ) ।
९. वुव ० (अ), उवधाणी (स) ।
१०. ० वण्णा (अ) ।
११. तधा (स) ।
१२. ० विसया (स) ।
१३. सव्वंगवि (स, अ) ।
१४. इमम्मि (अ) ।
१५. निलिच्छेज्जा (अ, ब) ।
१६. ० दीसु व (अ) ।
१७. काति (ब) ।
१८. सोतए (अ, स) ।
१९. उज्जुय ० (ब, मु) ।
२०. ० तीहिं (स) ।
२१. वि (ब) ।
२२. कप्पट्ठिय (स) ।
२३. चउत्थी (स) ।
२४. छंद की दृष्टि से 'य' पाठ अतिरिक्त है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८१९. परचक्केण रुद्धम्मि, विद्दुते बोहिकादिणा ।
जहा सिग्घे[1] पणट्ठासु, एज्ज एगाऽसहायिका[2] ॥दारं॥

२८२०. सोऊण काइ धम्मं, उवसंता परिणया य पव्वज्जं ।
निक्खंत मंदपुण्णा, सो चेव जहिं[3] तु आरंभो ॥

२८२१. आभीरी पण्णवेत्ताण[4], गता ते आयतट्ठिया ।
अह तत्थेतरे पत्ता, निक्खमंति तमुज्जतिं[5] ॥

२८२२. दट्ठुं वा सोउं वा, मग्गती तओ[6] पडिच्छिया विहिणा ।
संविग्गसिक्ख मग्गति[7], पवत्तिणी 'आयरि-उवज्झं'[8] ॥

२८२३. ण्हाणादिएसु मिलिया, पव्वावेंते भणंति ते तीसे ।
होह व उज्जुयचरणा, इमं च वइणिं वयं णेमो ॥

२८२४. भण्णति पवत्तिणी वा, तेसऽसति विसज्ज वतिणिमेतं[9] ति ।
विसज्जिए य नयंती, अविसज्जंतीय मासलहू[10] ॥

२८२५. वसभे य[11] उवज्झाए, आयरियकुलेण वावि थेरेण[12] ।
गणथेरेण गणेण वा, संघथेरेण संघेण ॥

२८२६. भणिया न विसज्जेंती, लहुगादी सोहि जाव मूलं तु ।
तीसे हरिऊण ततो[13], अण्णीसे[14] दिज्जते[15] उ गणो ॥

२८२७. एमेव उवज्झाए, अविसज्जंते हवंति लहुगा उ ।
भण्णंते[16] गुरुगादी, वसभा वा जाव नवमं तु ॥

२८२८. एमेव य आयरिए, अविसज्जंते हवंति गुरुगा उ ।
वसभादिएहि भणिए, छल्लहुगादी उ जा[17] चरिमे ॥

२८२९. साहत्थमुंडियं गच्छवासिणी बंधवे विमग्गंती ।
अण्णस्स देति संघो, णाण-चरणरक्खणा जत्थ ॥

२८३०. नाणचरणस्स पव्वज्जकारणं नाणचरणतो सिद्धी ।
जहि नाणचरणवुड्ढी, अज्जाठाणं तहिं वुत्तं ॥

---

१. सिग्घ (अ)।
२. ० सुहातिका (ब, स)।
३. जहं (अ)।
४. पल्लवे ० (अ)।
५. तमुज्जयं (अ)।
६. तु (ब)।
७. X (ब)।
८. आरिओवज्झं (स)।
९. वयणि ० (स)।
१०. ० लहुं (स)।
११. व (स)।
१२. थेराण (स)।
१३. तत्तो (स)।
१४. अण्णसी (ब), अण्णेसी (स)।
१५. दिज्जउ (अ)।
१६. भणंते (स)।
१७. जाव (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८३१. मोत्तूण इत्थ चरिमं, इत्तिरिओ होति ऊ[1] दिसाबंधो ।
ओसण्णदक्खियाए, आवकहाए दिसाबंधो ॥

२८३२. एसेव गमो नियमा, निग्गंथाणं पि होइ नायव्वो ।
नवरं पुण नाणत्तं, अणवट्ठप्पो 'य पारंची'[2] ॥

२८३३. अद्धाणनिग्गतादी, कप्पट्ठगसंभरं[3] ततो बितिओ ।
आगमणदेसभंगे, चउत्थओ मग्गए सिक्खं ॥

इति षष्ठ उद्देशक

१. उ (स)।
२. प्पो य पारंती (स)।
३. ०ट्ठगं ० (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सप्तम उद्देशक

२८३४. निग्गंथीणऽहिगारे, ओसण्णत्ते य समणुवत्तंते[१] ।
सत्तमए आरंभो, नवरं पुण दो वि निग्गंथी ॥

२८३५. सुत्तं धम्मकहनिमित्तमादि घेत्तूण निग्गया गच्छा ।
पण्णवणचेइयाणं, पूयं काऊण आगमणं ॥

२८३६. 'धम्मकहनिमित्तेहि य'[२], विज्जामंतेहि चुण्णजोगेहिं ।
इब्भादि[३] जोसियाणं, संथवदाणे[४] जिणायतणं ॥

२८३७. संबोहणट्ठयाए[५], विहारवत्ती व[६] जिणवरमहे वा ।
महतरिया तत्थ गया, निज्जरणं भत्तवत्थाणं ॥

२८३८. अणुसट्ठ उज्जमंती, विज्जंते[७] चेइयाण[८] सारवए ।
पडिवज्जंति अविज्जंतए[९] उ गुरुगा अभत्तीए ॥

२८३९. आगमणं[१०] सक्कारं, हिंडंति[११] जहिं विरूवरूवेहिं[१२] ।
लाभेण सन्नियट्टा, हिंडंति तो तहिं दिट्ठा ॥

२८४०. सक्कारिया य आया[१३], हिंडंति तहिं विरूवरूवेहिं ।
वत्थेहि पाउया ता[१४], दिट्ठा य तहिं तु वसभेहिं ॥

२८४१. भिक्खा ओसरणम्मि व[१५], अपुव्ववत्था 'उ ताउ'[१६] दट्ठूणं ।
गुरुकहण तासि पुच्छा, अम्हमदिन्ना न वा दिट्ठा ॥

२८४२. निवेदणियं[१७] च वसभे, आयरिए दिट्ठ एत्थ किं जायं[१८] ।
तुम्हे[१९] अम्ह निवेदह[२०], किं तुब्भऽहियं नवरि दोण्णि[२१] ॥

---

१. समुणुवणत्ते (ब) ।
२. ० त्तेहिं (अ) ।
३. इब्भा य (अ) ।
४. संठवठाणे (स) ।
५. संबाह ० (ब) ।
६. वि (अ) ।
७. य विज्जते (अ, स) ।
८. चितियाण (ब) ।
९. ० ज्जंतिए (ब), अवज्जं ० (स) ।
१०. ० मणे (स) ।
११. हिंडवी (ब) ।
१२. व रूवबोधेहि (स) ।
१३. आयांता (मवृ) ।
१४. तो (ब) ।
१५. वि (ब, स) ।
१६. तो ततो (स) ।
१७. निवेतियं (ब) ।
१८. जाइ (ब) ।
१९. तुब्भे (स) ।
२०. निवेदेह (ब) ।
२१. दाणि (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८४३. लहुगो लहुगा गुरुगा[१], छम्मासा होंति लहुगगुरुगा य ।
छेदो मूलं च तहा, 'गणं च'[२] हाउं विगिंचेज्जा ॥

२८४४. अण्णस्सा[३] देति गणं, अह नेच्छति[४] तं ततो[५] विगिंचेज्ज[६] ।
तं पि पुणरवि दिंतस्स[७], एवं तु कमेण सव्वासिं[८] ॥

२८४५. पवत्तिणिममत्तेणं, गीतत्था उ गणं जई ।
धारइत्ता[९] ण इच्छंति, सव्वासिं पि विगिंचणा ॥

२८४६. चोदग गुरुगो दंडो, पक्खेवग[१०] चरियसिद्धपुत्तीहिं ।
विसयहरणट्ठया तेणियं[११] च एयं न नाहिंति ॥

२८४७. अवराहो गुरु तासिं, सच्छंदेणोवधिं तु जा घेत्तुं[१२] ।
न कहंती[१३] भिन्ना वा, जं निट्ठुरमुत्तरं बेंति ॥

२८४८. अचियत्ता निक्खंता, निरोहलावण्णऽलंकियं दिस्स ।
विरहालंभे चरिया, आराहण दिक्खलक्खेण ॥

२८४९. अहवावि अण्ण कोई[१४], रूवगुणुम्मादिओ[१५] सुविहिताए ।
चरियाए[१६] पक्खेवं, करेज्ज छिद्दं[१७] अविंदंतो ॥

२८५०. सिद्धी वि कावि[१८] एवं, अधवा उक्कोसणंतगा भिन्ना ।
होहं वीसंभेउं अगहियगहिए य लिंगम्मि ॥

२८५१. वीसज्जिय नासिहिती[१९], दिट्ठंतो तत्थ[२०] घंटलोहेणं[२१] ।
तम्हा पवित्तिणीए, सारणजयणाय कायव्वा ॥

२८५२. धम्मं जइ[२२] काउ समुट्ठियासि, अज्जेव दुग्गं तु कमं सएहिं ।
तं दाणि वच्चामु गुरूण पासं, भव्वं अभव्वं च विदंति[२३] ते ऊ ॥

२८५३. जो जेणऽभिप्पाएण, एती[२४] तं भो[२५] गुरू विजाणंति ।
पारगमपारगं ति य, लक्खणतो दिस्स जाणंति ॥

---

१. X (ब) ।
२. गणस्स (ब, स) ।
३. ० स्स (स) ।
४. णेच्छिति (स) ।
५. तो (ब) ।
६. विगिंचए (अ, स) ।
७. दित्तं से (ब) ।
८. सव्वेसिं (स) ।
९. धारियत्ता (ब) ।
१०. ० वगो (ब) ।
११. तेणयं (अ) ।
१२. घित्तु (ब) ।
१३. कहेंता (ब, स), कधंता (अ) ।
१४. कोती (ब), कोइ य (अ) ।
१५. रूवीगु ० (स) ।
१६. चरिगातो (ब), चरिगादी (अ, स) ।
१७. छेदं (स) ।
१८. काति (अ) ।
१९. ० हिइ (ब) ।
२०. एत्थ (ब) ।
२१. कडुगालोहेणं (अ) ।
२२. जवि (स) ।
२३. वदंति (ब) ।
२४. एति (अ) ।
२५. भे (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८५४. पत्ता पोरिसिमादी, छाता उव्वाय[१] वुत्थ साहंति[२] ।
चोदेति पुव्वदोसे, रक्खंती नाउ[३] से भावं ॥नि. ४०४॥

२८५५. जा जीय होंति पत्ता, नयंति तं तीय पोरिसीए उ ।
छाउव्वातनिमित्तं, 'बितिया ततियाए चरिमाएँ'[४] ॥

२८५६. चरमाए जा दिज्जति, भत्तं विस्सामयंति णं जाव ।
सा[५] होति निसा दूरं, व अंतरं तेण 'वुत्थं ति'[६] ॥

२८५७. नाहिंति ममं ते तू, काई[७] नासेज्ज अप्पसंकाए ।
जा उ न नासेज्ज तहिं, तं तु गयं[८] बेंति आयरिया ॥

२८५८. न हु कप्पति दूती वा, चोरी वा अम्ह 'काइ इति'[९] वुत्ते ।
गुरुणा[१०] नाया मि अहं, वएज्ज नाहं ति वा[११] बूया ॥

२८५९. अतिसयरहिता थेरा, भावं इत्थीण नाउ दुन्नेयं ।
'रक्खेहेयं उप्पर'[१२], लक्खेह[१३] य से अभिप्पायं ॥

२८६०. उच्चारभिक्खे[१४] अदुवा विहारे, थेरीहि जुत्तं गणिणी उ पेसे ।
थेरीण असती अत्तव्वयाहि[१५], ठावेति[१६] एमेव उवस्सयम्मि ॥

२८६१. कइतविया उ पविट्ठा, अच्छति छिड्डं तहिं निलिच्छंती ।
विरहालंभे[१७] अधवा, भणाइ इणमो तहिं 'सा तू'[१८] ॥

२८६२. अविहाडा हं[१९] अव्वो, मा मं पस्सेज्ज नीयवग्गो[२०] वा ।
तं दाणि चेइयाइं, वंदह रक्खामहं वसधिं ॥

२८६३. उव्वण्णो सो धणियं[२१], तुज्झ[२२] धवो जो तदा[२३] सि नित्तण्हो[२४] ।
वभिचारी वा अण्णो, इति णात विगिंचणा तीसे[२५] ॥

---

१. उव्वाउ (स) ।
२. साहिंति (ब, स) ।
३. ते उ (ब) ।
४. बितिया य सिया ति चरिमा य (अ), २८५५-२८५८ तक की गाथाएं ब प्रति में नहीं हैं ।
५. ता (स) ।
६. वोच्छंति (स) ।
७. केई (स) ।
८. मयं (स) ।
९. काइ त्ति (अ) ।
१०. गुरुणो (स) ।
११. णो (स) ।
१२. रक्खेह एवं तुट्ठिय (ब) ।
१३. लक्खेहि (स) ।
१४. ० र भावे (ब) ।
१५. असव्वयाहि (ब), अतव्व ० (स) ।
१६. ठावेंति (अ, ब) ।
१७. ० लंते (ब) ।
१८. स त्ते (अ) ।
१९. णं (ब) ।
२०. ते य वग्गो (ब) ।
२१. खलिउ (ब) ।
२२. तुब्भ (अ, स) ।
२३. तहिं (स) ।
२४. तो य सुतो (ब), तु व असुतो (स) ।
२५. तीसो (अ, ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८६४. पारावयादियाइं[1], दिट्ठा णं[2] तासि[3] णंतगाणि मए ।
तुज्झ नत्थि महतिरिए[4], वुत्ता खुड्डीओ[5] दंसेंति[6] ॥

२८६५. कोट्टंब तामलित्तग, सेंधवए कसिणजुंगिए[7] चेव ।
बहुदेसिए य अन्ने, पेच्छसु अम्हं खमज्जाणं[8] ॥

२८६६. सच्छंद गेण्हमाणीण, होंति दोसा जतो तु इच्चादी[9] ।
इति पुच्छिउं पडिच्छा, न तासि सच्छंदता सेया[10] ॥

२८६७. अत्थेण गंथतो वा, संबंधो सव्वधा अपडिसिद्धो[11] ।
सुत्तं अत्थमुवेक्खति[12], अत्थो वि न सुत्तमतियाति[13] ॥

२८६८. नदिसोय सरिसओ वा, अधिगारो एस होति दट्ठव्वो ।
छट्ठाणंतरसुत्ता, समणीणमयं तु जा जोगो[14] ॥

२८६९. संविग्गाणुवसंता, आभीरी[15] दिक्खिया य इतरेहिं ।
तत्थारंभं दट्ठुं, विपरिणमेतर[16] व[17] दिट्ठा उ ॥

२८७०. तह चेव अब्भुवगता, जध छट्ठुद्देस वण्णिता पुव्विं ।
अविसज्जंताणं[18] पि य, दंडो[19] तह चेव पुव्वुत्तो ॥

२८७१. तं पुण संविग्गमणो, तत्थाणीतं तु जइ न इच्छेज्जा ।
'नियगा उ'[20] संजतीओ, ममकारादीहि[21] कज्जेहिं ॥

२८७२. पासत्थिममत्तेणं[22], पगती[23] वेसा[24] अचक्खुकंता वा ।
गुरुगणतण्णीयस्स तु, नेच्छंती पाडिसिद्धी या[25] ॥

२८७३. ओमाणं नो काहिति, संखलिबद्धा व[26] ताउ[27] सव्वाओ ।
मा होहिति सागरियं, 'सीदंति च उज्जतं'[28] नेच्छे ॥

---

१. वक्खेतीदीयाहिं (स)।
२. णमिति वाक्यालंकारे (मवृ)।
३. णासि (अ, स)।
४. इहरहे (अ), इतिरहे (ब)।
५. खुड्डालो (ब)।
६. दंसती (स)।
७. ० जुंगए (ब)।
८. खमंजाणं (अ)।
९. इच्छाई (ब)।
१०. सेयं (ब)।
११. अपडिसेधो (स)।
१२. ० मवेक्खति (ब)।
१३. ० मदिजाति (ब)।
१४. जोग्गो (स)।
१५. आभीरा (ब)।
१६. ० णमतेतरे (स)।
१७. य (ब)।
१८. विसेज्जंती (स)।
१९. डंडो (स)।
२०. नियगातो (ब)।
२१. ममीकारा ० (अ)।
२२. ० मणत्तेणं (ब)।
२३. पगता (ब)।
२४. बितिया (स)।
२५. वा (अ, स)।
२६. य (स)।
२७. ततो (अ, स)।
२८. सीयंती चुज्जतं (अ, स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८७४. भणति[1] वसभाभिसेए, आयरिकुलेण[2] गणेण संघेण ।
लहुगादि जाव मूलं, अण्णस्स गणो य[3] दातव्वो[4] ॥

२८७५. एवं पुव्वगमेणं, विगिंचणं जाव होति सव्वासिं ।
देंतण्ण मणुण्णाणं[5], अमणुण्ण चउण्हमेगतरं ॥

२८७६. समणुण्णमणुण्णाणं, संजत[6] तह संजतीण 'चउरो य'[7] ।
पासत्थिममत्तादि व, अद्धाणादि व्व जे चउरो ॥

२८७७. सेहि त्ति नियं ठाणं, एवं सुत्तम्मि[8] 'जं तु भणियमिणं'[9] ।
एवं कयप्पयत्ता, ताधि मुयंता उ ते सुद्धा ॥

२८७८. संभोइउं[10] पडिक्कमाविया कप्पति अयं पि संभोगो ।
सो उ विवक्खे वुत्तो[11], इमं तु सुत्तं सपक्खम्मि ॥

२८७९. संभोगो पुव्वुत्तो, पत्तेयं पुण वयंति पडिएक्कं ।
तप्पंते समणुण्णे, पडितप्पणमाणुतप्पं च[12] ॥

२८८०. सागारिए गिहा निग्गते य वडघरिय जंबुघरिए[13] य ।
धम्मिय गुलवाणियए, हरितोलित्ते य दीवे य[14] ॥नि. ४०५ ॥

२८८१. नवघरकवोतपविसण[15], दोण्हं नेमित्ति[16] जुगव पुच्छा य[17] ।
अण्णोण्णस्स घराइं, पविसध[18] नेमित्तिओ भणति ॥

२८८२. आदेसागमपढमा, भोत्तुं[19] लज्जाएँ गंतु गुरुकहणं ।
सो जइ करेज्ज वीसुं, संभोगं एत्थ सुत्तं तु ॥

२८८३. धम्मिओ देउलं तस्स, पालेति जइ भद्दओ[20] ।
सो य[21] संवड्ढितं[22] तत्थ, लद्धुं देज्जा जतीण[23] उ ॥दारं ॥

२८८४. वाणियओ गुलं तत्थ, विक्किणंतो उ तं दए ।
'तत्थ मोव्वरिए'[24] हुज्जा[25], अडं कच्छउडेण[26] वा ॥दारं ॥

---

१. भणित (स)।
२. आयरिय कुले (ब)।
३. स (स)।
४. ब प्रति में गाथा का केवल पूर्वार्द्ध है।
५. मणुण्णीणं (स)।
६. संजम (अ)।
७. चउभेदे (स)।
८. सुत्तं णिमं (ब)।
९. भणियं जं तु मिणं (स)।
१०. संभुंजियं (स)।
११. पुत्तो (ब)।
१२. तु (स)।
१३. ० घरियं (स)।
१४. सम्प्रति निर्युक्त्यवसरः (मवृ)।
१५. णेवक्खरक० (अ)।
१६. निमित्ति (ब)।
१७. या (ब)।
१८. पविसहि (अ)।
१९. मोत्तु (अ)।
२०. भद्दतो (ब)।
२१. वि (स)।
२२. संवड्ढियं (अ)।
२३. जतीणं (स)।
२४. एत्थ मोवरिए (अ, स)।
२५. हुज्ज (ब)।
२६. कत्थ ० (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८८५. हरितोलित्ता कता सेज्जा, कारणे ते य संठिता ।
पसज्झा [1]वावि पालस्स[1], चेइयट्ठा गणे गते[2] ॥

२८८६. छिण्णाणि वावि हरिताणि, पविट्ठो दीवएण वा ।
कतकज्जस्स पम्हुट्ठे, सो वि जाणे दिणे दिणे ॥

२८८७. दट्ठुं साहण लहुओ[3], वीसु करेंताण लहुग आणादी ।
अद्धाणनिग्गतादी[4], दोण्हं गणभंडणं चेव ॥नि. ४०६॥

२८८८. तं सोउ मणसंतावो, संततीए[5] तिउट्टति ।
अण्णे वि ते विवज्जंती[6], वज्जिता अमुएहि तो[7] ॥

२८८९. ततो णं अन्नतो वावि[8], ते सोच्चा इह[9] निग्गता ॥
वज्जेंता जं तु पावेंति, निज्जरंतो[10] य हाविता ॥

२८९०. तं कज्जतो अकज्जे, वा सेवितं जइ वि तमकज्जेण[11] ।
न हु कीरति पारोक्खं[12], सहसा इति भंडणं होज्जा ॥

२८९१. निस्संकियं व काउं, आसंक 'निवेदणा तहिं'[13] गमणं ।
सुद्धेहि कारणमणाभोग जाणया[14] दप्पतो[15] दोण्हं ॥नि. ४०७॥

२८९२. कज्जेण वावि गहियं, सगार[16] परियट्टतो व सो अम्हं ।
कारणमजाणतो वा, गहियं[17] किं वीसुकरणं तु ॥

२८९३. जाणंतेहि व दप्पा, घेत्तुं आउट्टिउं कता सोही ।
तुब्भेत्थ निरतियारा, पसियह भंते ! कुसीलाणं ॥

२८९४. पढमबितिओदएणं, जं सव्वं आउरेहिं तं गहियं ।
दिट्ठा दाणि भवंतो, जं बितियपएसु नित्तण्हा ॥

२८९५. सत्तमए ववहारे, अवराहविभावितस्स साधुस्स ।
आउट्टमणाउट्टे, पच्चक्खेणं विसंभोगे ॥

२८९६. संभोगऽभिसंबंधेण[18], आगते[19] केरिसेण सह[20] णेओ ।
केरिसएण विभागो, भणणति सुणसू समासेणं ॥

---

१. वसहिपालस्स (मवृ)।
२. निग्गते (ब)
३. लहुतो (ब)।
४. ० गेण्हतादी (अ)।
५. संततीय ति (स)।
६. ० ज्जंते (ब)।
७. उ (स)।
८. विहि (ब), विह (अ, स)।
९. जे (ब)।
१०. निज्जरातो (स)।
११. तं अकज्जेण (स)।
१२. पामोक्खं (स)।
१३. ० णाए बहि (स)।
१४. जणया (स)।
१५. दप्पए (ब)।
१६. सागर (ब)।
१७. गहिते(अ, ब)।
१८. संभोगे विसं ० (ब), संभोग विसंभोगो (अ)।
१९. आगतं (ब)।
२०. अह (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८९७. पडिसेधे[1] पडिसेधो, असंविग्गें दाणमादि[2] तिक्खुत्तो ।
अविसुद्धे चउगुरुगा, दूरे साधारणं काउं[3] ।।नि. ४०८ ।।

२८९८. पासत्थादिकुसीले, पडिसिद्धे 'जा तु'[4] तेसि संसग्गी ।
पडिसिज्झति एसो खलु, पडिसेधे होइ पडिसेधो[5] ।।

२८९९. सूयगडंगे एवं, धम्मज्झयणे निकाचितं भणियं ।
अकुसीले सदा भिक्खू, नो य संसग्गियं वए[6] ।।

२९००. दाणादी संसग्गी, सइं[7] कयाए[8] पडिसिद्धे लहुगो ।
आउट्टे सब्भाम त्ति, असुद्धगुरुगा तु तेण परं ।।दारं ।।

२९०१. तिक्खुत्तो मासलहू[9], आउट्टे गुरुगो मास तेण परं ।
अविसुद्धे तं वीसुं, करेति[10] जो भुंजती गुरुगा ।।

२९०२. सइ दोण्णि तिन्नि वावी, होज्ज 'अमाई तु'[11] माइ तेण परं ।
सुद्धस्स होति चरणं, मायासहिते चरणभेदो ।।

२९०३. एवं तू पासत्थादिएसु[12] संसग्गिवारिता एसा ।
समणुण्णे वि[13] ऽपरिच्छित, विदेसमादी गते एवं ।।

२९०४. समणुण्णेसु विदेसं, गतेसु पच्छण्ण होज्ज अवसन्ना[14] ।
ते वि तहिं गंतुमणा, आहत्थि[15] तहिं मणुण्णा णो ।।

२९०५. अत्थि त्ति होति लहुगो[16], कदाइ ओसन्न भुंजणे दोसा ।
नत्थि वि लहुगो भंडण, न खेत्तकहणे व पाहुण्णं ।।

२९०६. आसि तदा समणुण्णा, भुंजह दव्वादिएहि पेहित्ता ।
एवं भंडणदोसा, न होंति अमणुण्णदोसा य ।।

२९०७. णातमणाते आलोयणा[17] तु[18] ऽणालोइए भवे गुरुगा ।
गीतत्थे आलोयण, सुद्धमसुद्धं विगिंचंति[19] ।।नि. ४०९ ।।

---

१. ० सेधि (अ) ।
२. दाणमा या (अ, ब) ।
३. एष निर्युक्तिगाथासमासार्थः (मवृ) ।
४. लहु उ (अ) ।
५. इस गाथा का उत्तरार्ध ब प्रति में नहीं है ।
६. गाथा के उत्तरार्धमें अनुष्टुप् छंद है ।
७. सयं (ब) ।
८. कते (अ, स) ।
९. ०लहुं (ब) ।
१०. करोति (अ) ।
११. ० ईसु (अ) ।
१२. ० त्थादीएसु (ब) ।
१३. व (अ, स) ।
१४. उवसण्णा (अ, स) ।
१५. आहच्च (ब) ।
१६. बहुतो (स) ।
१७. ० यणे (ब) ।
१८. तो (ब) ।
१९. विविंचति (ब), एष निर्युक्तिगाथासमासार्थः (मवृ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२९०८. अविणट्ठे संभोगे, अणातणाते[१] य नासि पारिच्छा ।
एत्थोवसंपयं[२] खलु, सेहं वासज्ज आरे वी ॥

२९०९. महल्लयाय[३] गच्छस्स, कारणेहऽसिवादिहिं ।
देसंतरगता[४]ऽणोण्णे, तत्थिमा जतणा भवे ॥

२९१०. दोण्णि वि जदि गीतत्था, राइणिए[५] तत्थ विगडणा पुव्विं ।
पच्छा इतरो वि दए, समाणतो छत्तछायाओ[६] ॥

२९११. निक्कारणे असुद्धो उ[७], कारणे वाणुवायतो ।
उज्झंति[८] उवधिं दो वि, तस्स सोहिं करेंति य ॥

२९१२. एवं तु विदेसत्थे, अयमन्नो[९] खलु भवे सदेसत्थे ।
अभिणीवारीगादी, विणिग्गते[१०] गुरुसगासातो[११] ॥नि. ४१० ॥

२९१३. अभिणीवारी निग्गत, अहवा अन्नेण वावि कज्जेण ।
विसणं समणुण्णेसु, काले को यावि कालो उ ॥

२९१४. भत्तट्ठिय आवासग, 'सोधेतु मतित्ति'[१२] पच्छ अवरण्हे ।
अब्भुट्ठाणं दंडादियाण[१३], गहणेगवयणेणं ॥

२९१५. खुड्डुग विगिट्ठ गामे, उण्हं अवरण्ह तेण तु पगे वि ।
पक्खित्तं मोत्तूणं, निक्खिव उक्खित्त मोहेणं[१४] ॥नि. ४११ ॥

२९१६. जइ वि[१५] तवं आवण्णो, जा भिन्नो अहव होज्ज नावन्नो ।
तहियं ओहालोयण, तेण परेणं विभागो उ ॥

२९१७. अधवा भुत्तुव्वरितं[१६], 'संखडि अन्नेहि'[१७] वावि कज्जेहिं ।
तं मुक्कं पत्तेयं, इमे य पत्ता तहिं होज्जा ॥

२९१८. भुंजह भुत्ता अम्हे, जो वा 'इच्छति य'[१८] भुत्त सह भोज्जं ।
सव्वं व तेसि दाउं, अन्नं गेण्हंति वत्थव्वा ॥

२९१९. तिण्णि दिणे पाहुण्णं, सव्वेसिं असति बालवुड्ढाणं ।
जे तरुणा सग्गामे, वत्थव्वा बाहि हिंडंति ॥

१. णायमणाए (मु) ।
२. पच्छोव ० (ब) ।
३. ० ल्लभाए (स) ।
४. ० गयं (अ) ।
५. रातिणिए (ब) ।
६. ० छायावो (अ) ।
७. x (ब) ।
८. मज्झं ति (ब) ।
९. सय० (ब) ।
१०. व णिग्गए (ब) ।
११. निर्युक्तिगाथां भाष्यकारो विवृणोति (मवृ) ।
१२. सोहेउमति त्ति (ब) ।
१३. दंडाई (ब) ।
१४. मा ओघेन (मवृ), एष निर्युक्तिगाथासमासार्थः (मवृ) ।
१५. उ (अ, स) ।
१६. भुत्तुद्धरियं (अ) ।
१७. संखडियण्णहि (स) ।
१८. अच्छइ (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२९२०. संघाडगसंजोगे, आगंतुग भद्दएतरे बाहिं ।
आगंतुगा व बाहिं, वत्थव्वग[1] भद्दए हिंडे ॥

२९२१. मंडुगगतिसरिसो[2] खलु, अहिगारो होइ बितियसुत्तस्स ।
संपुडतो वा दोण्ह वि, होति विसेसोवलंभो वा ॥

२९२२. एसेव गमो नियमा, निग्गंथीणं पि होति नायव्वो ।
जं एत्थं नाणत्तं, तमहं वोच्छं[3] समासेणं ॥

२९२३. किं कारणं परोक्खं, संभोगो तासु कीरती वीसुं ।
पाएण ता हि तुच्छा, पच्चक्खं भंडणं कुज्जा ॥

२९२४. दोण्णि वि ससंजतीया[4], गणिणो एक्कस्स वा दुवे वग्गा ।
वीसुकरणम्मि ते च्चिय, कवोयमादी उदाहरणा ॥

२९२५. पडिसेवितं[5] तु नाउं, साहंती अप्पणो[6] गुरूणं तु ।
ते वि य वाहरिऊणं, पुच्छंती दो वि सब्भावं ॥

२९२६. जइ ताउ एगमेगं, अहवा वि 'परं गुरुं'[7] व एज्जाही[8] ।
अहवा वी[9] परगुरुओ, परवतिणी तीसु वी गुरुगा ॥

२९२७. भंडणदोसा होंती, वगडासुत्तम्मि जे भणितपुव्वं[10] ।
सयमवि य वीसुकरणे, गुरुगा चावल्लया कलहो ॥

२९२८. पत्तेयं भूयत्थं, दोण्हं पि य गणहरा[11] तुलेऊणं ।
मिलिउं तग्गुणदोसे, परिक्खिउं[12] सुत्तनिद्देसो ॥

२९२९. संभोगम्मि पवत्ते, इमा वि संभुंजते[13] उवट्ठविउं ।
सीसायरियत्ते वा, पगते न दिक्खंति[14] 'दिक्खे या'[15] ॥

२९३०. अण्णट्ठमप्पणो वा, पव्वावण चउगुरुं च आणादी ।
मिच्छत्त तेण संकट्ठ, मेहुणे गाहणे[16] जं च ॥

२९३१. तेणट्ठ मेहुणे वा, हरति अयं संकऽसंकिते सोधी ।
कक्खादभिक्खदंसण[17] 'णित्थक्कं वोभए'[18] दोसा ॥

---

१. ०व्वक (ब)।
२. मंदुग ० (स)।
३. वुच्छं (अ)।
४. असंज० (स)।
५. ०सेविउं (ब)।
६. अप्पणा (अ)।
७. परगुरुं (ब)।
८. ०ज्जाहि (ब)।
९. वि (ब)।
१०. ० पुव्विं (स)।
११. ० हरो (ब)।
१२. पडिक्खि० (अ), परिक्खितं (स)।
१३. संभुज्जए (अ, स)।
१४. दिक्खंत (अ, ब)।
१५. दिक्खतो (ब)।, यहां 'दिक्खे या' पाठ के स्थान पर वृत्ति के अनुसार 'अन्तट्ठा' पाठ की संभावना की जा सकती है।
१६. गहणे (ब)।
१७. कक्खाअभिक्ख ० (ब)।
१८. नित्थक्को वा भए (अ), णित्थक्का ० (स)।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

२९३२. 'हरति त्ती'[1] संकाए, लहुगा गुरुगा य होंति नीसंके ।
मेहुणसंके गुरुगा, निस्संकिय होति मूलं तु ॥दारं॥

२९३३. अवि धूयगादिवासो, पडिसिद्धो तह य वास सइगाहिं[2] ।
वीसत्थादी दोसा[3], विजढा एवं तु[4] पुव्वुत्ता ॥

२९३४. पव्वावणा सपक्खे, परिपुच्छउ[5] दोसवज्जिते[6] दिक्खा ।
एयं सुत्तं अफलं, सुत्तनिवातो तु कारणिओ ॥

२९३५. कारणमेगमडंबे[7], खंतियमादीसु[8] मेलणा होति ।
पव्वज्जमब्भुवगते, अप्पाण चउव्विधा तुलणा ॥नि. ४१२॥

२९३६. असिवादिकारणगतो, वोच्छिन्नमडंब संजतीरहिते ।
कधिताकधितउवट्ठित, असंक 'इत्थी इमा'[9] जतणा ॥

२९३७. आहारादुप्पायण[10], दव्वे समुइं च जाणती[11] तीसे[12] ।
जदि तरति गंतु खेत्ते, आहारादीणि वद्धाणे ॥

२९३८. गिम्हादिकालपाणग, निसिगमणमादिसु वावि जइ सत्तो[13] ।
भावे क्रोधादिजओ, गाहणणाणे य चरणे य ॥

२९३९. अब्भुज्जतमेगतरं, पडिवज्जिउकाम जो उ पव्वावे ।
गुरुगा अविज्जमाणे, अन्ने गणधारणसमत्थे ॥

२९४०. जो[14] वि य अलद्धिजुत्तो, पव्वावेंतस्स होंति गुरुगा उ ।
तम्हा[15] जो उ समत्थो, सो पव्वावेति[16] ताओ वा[17] ॥

२९४१. एव तुलेऊणऽप्पं, सा वि तुलिज्जति उ दव्वमादीहिं ।
कायाण दायणं[18] दिक्ख, सिक्ख इत्तरदिसा[19] नयणं[20] ॥नि. ४१३॥

२९४२. पेज्जादिपायरासा, सयणासण-वत्थ-पाउरणदव्वे[21] ।
दोसीण दुब्बलाणि य, सयणादि असक्कया एण्हिं ॥

---

१. हरती य (अ) ।
२. सयाहिगा (ब) ।
३. दोसे (स) ।
४. तू (अ) ।
५. ० पुच्छित (स) ।
६. विवज्जिए (ब) ।
७. कारण एय ० (ब), कारण एग ० (अ, स) ।
८. खंतीमा ० (स) ।
९. इत्थी सिमे (स) ।
१०. ० यणे (अ) ।
११. जाणते (ब, स) ।
१२. तीसि (ब) ।
१३. तत्तो (स) ।
१४. जे (ब), ता (स) ।
१५. जम्हा (स, ब) ।
१६. पव्वाविंति (ब) ।
१७. तु (स) ।
१८. दायाणं (अ) ।
१९. इतिरि ० (अ), इतरा ० (ब) ।
२०. एष निर्युक्तिगाथासमासार्थः (मवृ) ।
२१. ० दव्वं (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२९४३. पडिकारा य बहुविधा, विसयसुहा[1] आसि भे ण पुण एण्हिं ।
वत्थाणि[2] ण्हाण धूवण[3], विलेवणं[4] ओसधाइं[5] च ॥

२९४४. अद्धाण[6] दुक्खसेज्जा, सरेणु तमसा य वसहिओ खेत्ते ।
परपादेहि गताणं, 'वुत्थाण य[7] उदुसुहघरेसुं[8] ॥दारं ॥

२९४५. आहारा उवजोगो[9], जोग्गो जो जम्मि होति कालम्मि ।
सो अन्नहा न य निसिं, कालेऽजोग्गो[10] य हीणो य ॥दारं ॥

२९४६. सव्वस्स पुच्छणिज्जा, न य पडिकूलेण सइरि[11] मुदितासि ।
खुड्डी वि पुच्छणिज्जा, चोदण फरुसा गिरा भावे ॥

२९४७. जा[12] जेण वयेण[13] जधा, व लालिता[14] तं तदन्नहा भणति ।
सोयादि कसायाणं, जोगाण य निग्गहो समिती ॥दारं ॥

२९४८. आलिहण[15] सिंच तावण, वीयण दंतधुवणादि कज्जेसु ।
कायाण अणुवभोगो, फासुगभोगो परिमितो य ॥दारं ॥

२९४९. अब्भुवगयाएँ लोओ, कप्पट्ठग लिंगकरण दावणया[16] ।
भिक्खग्गहणं कधेति[17], वदति[18] वहंते दिसा तिण्णि ॥

२९५०. माऊय[19] एक्कियाए, संबंधी इत्थि-पुरिससत्थे[20] य ।
एमेव संजतीण वि, लिंगकरण मोत्तु बितियपदं ॥

२९५१. उट्ठेंत निवेसंते, सति करणादी य[21] लज्जनासो य ।
तम्हा उ सकडिपट्टं, गाहेति[22] तयं दुविधसिक्खं ॥

२९५२. आयरिय उवज्झाओ[23], ततिया[24] य पवत्तिणी[25] उ समणीणं ।
अण्णेसिं अट्ठाए, त्ति होति एतेसि तिण्हं पि ॥

२९५३. पव्वावियस्स नियमा, देंति दिसिं दुविधमेव तिविधं वा ।
सा पुण कस्स[26] विगिट्ठा[27], उद्दिस्सति[28] सन्निगिट्ठा वा ॥

---

१. विसुय ० (अ)।
२. चक्कमण (अ, स)
३. धूवा (अ)।
४. ० वणा (स)।
५. ० हाई (ब)।
६. अद्धाण (ब)।
७. वुत्थाणं (ब)।
८. उऊसुह ० (ब), उउ घरसुहेसु (अ)।
९. उवभोगो (अ, स)।
१०. अकालजोग्गो (ब)।
११. सइर (ब)।
१२. जो (ब)।
१३. वएण (स), गाथायां तृतीया सप्तम्यर्थे प्राकृतत्वात् (मवृ)।
१४. ललिता (स)।
१५. आलिहिति (स)।
१६. दायणया (अ, स)।
१७. कधिति (अ)।
१८. वदिति (ब)
१९. माऊए (ब)।
२०. सार्थेन सह गाथायां सप्तमी तृतीयार्थे (मवृ)।
२१. X (ब)।
२२. गाहंति (ब, स)।
२३. ० ज्झाया (ब)।
२४. तत्तिया (ब)।
२५. ० त्तिणा (ब)।
२६. किंचि (अ)।
२७. विसिट्ठा (ब)।
२८. उद्दिसंति (अ), उद्दिसति (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२९५४. अहवा वि सरिसपक्खस्स अभावा दिक्खणा विपक्खे वि ।
तत्थ वि कस्स विगिट्ठा[१], उद्दिस्सति[२] कस्स वा नेत्ति ॥

२९५५. दुविधं पि य वितिगिट्ठं, निग्गंथीणुद्दिसंति[३] चउगुरुगा ।
आणादिणो य दोसा, दिट्ठंतो होति कोसलए ॥

२९५६. उवसामिता जतंतेण, कोसलेणं[४] गते य सा तम्मि ।
तं चेव ववदिसंती, निक्खंता अन्नगच्छम्मि ॥

२९५७. वारिज्जंती वि गया, पडिवण्णा सा य तेण पावेणं ।
जिणवयणबाहिरेणं, कोसलएणं अकुलएणं[५] ॥

२९५८. कोसलए किं कारण, गहणं बहुदोसलो उ कोसलओ[६] ।
तम्हा दोसुक्कडया, गहणं इह कोसले अवि य ॥

२९५९. अंधं अकूरमययं, अवि था[७] मरहट्ठयं अवोकिल्लं ।
कोसलयं च अपावं, सतेसु एक्कं न पेच्छामो[८] ॥

२९६०. कोसलए जे दोसा, उद्दिस्संतम्मि किन्न सेसाणं ।
ते तेसि[९] होज्ज व न वा, इमेहि पुण नोद्दिसे ते वि[१०] ॥

२९६१. अन्नं उद्दिसिऊणं, निक्खंता वा सरागधम्मम्मि ।
अण्णोण्णम्मि ममत्तं, न हु वग्गाणं[११] पि संभवति ॥

२९६२. सुचिरं पि सारिया गच्छिहिती ममता ण याति गच्छस्स ।
सीदंतचोयणासु य, परिभूया मि त्ति[१२] मन्नेज्जा ॥

२९६३. 'गमणुस्सुएण चित्तेण'[१३], 'सिक्खा दो'[१४] वि 'न गेण्हती'[१५] ।
वारिज्जंती वि गच्छेज्जा, पंथदोसे इमे लभे ॥

२९६४. मिच्छत्त-सोहि-सागारियादि पासंड तेण सच्छंदा ।
खेत्तविगिट्ठे दोसा, अमंगलं 'भवविगिट्ठं पि'[१६] ॥नि. ४१४ ॥

२९६५. उवदेसो न सिं अत्थि, जेणेगागी उ[१७] हिंडती[१८] ।
इति मिच्छं जणो गच्छे, कत्थ सोधिं च कुव्वउ ॥दारं ॥

१. विगट्ठा (अ), विकिट्ठा (स)।
२. उद्दिसति (स)।
३. ० द्दिसंते (स)।
४. कोसलएणं।
५. अकुसलएणं (अ)।
६. X (ब)।
७. य (स)।
८. पेच्छामि (स)।
९. तेहिं (स)।
१०. वी (अ)।
११. अग्गाणं (स)।
१२. तू (ब)।
१३. छंद की दृष्टि से गमणुस्सुयचित्तेण पाठ होना चाहिए।
१४. सिक्खातो (मु)।
१५. निगिण्हती (अ), ० हेती (स)।
१६. ०विगिट्ठम्मि (अ), ० ट्ठं वा (स)।
१७. ऊ (ब)।
१८. हिंडए (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२९६६. सागारमसागारे, एगीय उवस्सए भवे दोसा ।
चरगादि[१] विपरिणामण, सपक्ख-परपक्ख-निण्हादी ॥दारं ॥

२९६७. तेणेहि वावि हिज्जति[२] सच्छंदुट्ठाण[३] गमणमादीया[४] ।
दोसा भवंति एते, किं व न पावेज्ज सच्छंदा ॥

२९६८. गोरव-भय-ममकारा[५], अवि दूरत्थे वि होंति[६] जीवंते ।
को दाणि समुग्घातस्स[७] कुणति[८] न य तेण जं किच्चं ॥

२९६९. कोसलवज्जा ते च्चिय, दोसा सविसेस 'भवविगिट्ठे वि[९] ।
दुविधं पी[१०] वितिगिट्ठं, तम्हा उ न उद्दिसेज्जाहिं ॥

२९७०. बितियं तिव्वऽणुरागा, संबंधी वा न[११] ते य[१२] सीदंति ।
इत्तरदिसा[१३] उ नयणं, अप्पाहं[१४] एव दूरम्मि ॥

२९७१. भवविगिट्ठे वि एमेव, समुग्घातो त्ति वा न वा[१५] ।
तत्थ आसंकिते बंधो, निस्संके तु न बज्झति ॥

२९७२. अधवा तस्स सीसं तु, जदि 'सा उ समुद्दिसे'[१६] ।
विप्पकट्ठे तहिं खेत्ते, जतणा जा तु सा भवे ॥

२९७३. निग्गंथाण विगिट्ठे, दोसा ते चेव मोत्तु कोसलयं ।
सुत्तनिवातोऽभिगते[१७], संविग्गे सेस इत्तरिए[१८] ॥

२९७४. सड्ढो[१९] व पुराणो वा, जदि लिंगं घेत्तु वयति अन्नत्थ ।
तस्स[२०] वितिगिट्ठबंधो[२१], जा अच्छति[२२] ताव इत्तरिओ ॥

२९७५. मिच्छत्तादी दोसा, जे वुत्ता ते तु गच्छतो तस्स ।
एगागिस्स[२३] वि न भवे, इति दूरगते वि उद्दिसणा ॥नि. ४१५ ॥

२९७६. गीतपुराणोवट्ठं, धारंतो सततमुद्दिसंतं[२४] तु ।
'आसण्णं उद्दिस्सति'[२५], पुव्वदिसं वा[२६] सयं धरए ॥

---

१. चरिगादि (स) ।
२. हज्जंति (ब) ।
३. सच्छंदुत्थाण (ब, स) ।
४. ० मादी य (अ) ।
५. ० ममिकारा (अ) ।
६. होइ (ब) ।
७. समुज्जा ० (अ, स) ।
८. कुण्इ (अ) ।
९. ० विगिट्ठम्मि (ब) ।
१०. पि (स) ।
११. णु (ब) ।
१२. उ (ब) ।
१३. इत्तिरि ० (अ, स) ।
१४. अप्पाण (ब), अप्पाहे (स) ।
१५. व (ब) ।
१६. साहस्स मुद्दिस्से (स) ।
१७. ० निवाउ अभि० (अ, ब) ।
१८. इत्तिरिए (अ, स) ।
१९. सद्धो (अ) ।
२०. वसति (स) ।
२१. विगिट्ठ ० (अ) ।
२२. इच्छति (ब) ।
२३. एगस्स य (ब), एगागियस्स (ब) ।
२४. सन्निमु ० (ब) ।
२५. आसण्णमुद्दीसती (स) ।
२६. ता (ब), य (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२९७७. चोदिज्जंतो जो पुण, उज्जमिहिति[1] तं पि नाम बंधंति ।
सेसेसु न[2] उद्दिसणा, इति भयणा खेत्तवितिगिट्ठे ॥

२९७८. एमेव य कालगते, आसण्णं तं[3] च उद्दिसति गीते ।
पुव्वदिसि[4] धारणं वा, अगीतं[5] मोत्तूण कालगतं ॥

२९७९. वितिगिट्ठा[6] समणाणं, अव्वितिगिट्ठा[7] य होति समणीणं ।
मा पाहुडं[8] पि एवं, भवेज्ज सुत्तस्स आरंभो ॥

२९८०. सेज्जासणातिरित्ते, हत्थादी[9] घट्ट भाणभेदे य[10] ।
वंदंतमवंदंते, उप्पज्जति पाहुडं एवं ॥

२९८१. अधिकरणस्सुप्पत्ती[11], जा वुत्ता पारिहारियकुलम्मि ।
सम्ममणाउट्टंते, अधिकरण ततो समुप्पज्जे ॥

२९८२. अहिगरणे उप्पन्ने, अवितोसवियम्मि[12] निग्गयं समणं ।
जे सातिज्जति भुंजे[13], मासा चत्तारि भारीया ॥

२९८३. सगणं परगणं वा वि, संकंतमवितोसिते ।
छेदादि वण्णिया सोही, नाणत्तं तु इमं भवे ॥

२९८४. मा देह ठाणमेतस्स, पेसवे जइ[14] तू गुरू ।
चउगुरू ततो तस्स, कहेति[15] य[16] चऊ लहू[17] ॥

२९८५. ओधाणं वावि वेहासं, पदोसा[18] जं तु काहिती[19] ।
मूलं ओधावणे होति, वेहासे चरिमं[20] भवे ॥

२९८६. तत्थण्णत्थ व वासं, न[21] देंति[22] मे ण वि य नंदमाणेणं ।
नंदंति ते खलु मए, इति कलुसप्पा करे पावं ॥

२९८७. आलीवेज्ज व वसधिं, गुरुणो अन्नस्स घायमरणं वा ।
कंडच्छारिउ[23] सहितो, सयं व ओरस्स[24] बलवं तु ॥

---

१. ० मिही (अ, स)।
२. पुण (स)।
३. णं (ब, स)।
४. ० दिस (अ, स)।
५. गीयं (स)।
६. विगिट्ठा (ब)।
७. अविगिट्ठा (स)।
८. पाहुणं (अ)।
९. हत्थादि (स)।
१०. यं (अ, ब)।
११. ० रणमुप्पत्ती (स)।
१२. अविउस ० (अ)।
१३. संभुज्जए य (स, ब)।
१४. जति (ब)।
१५. कहेंति (ब)।
१६. या (ब)।
१७. चऊ (स)।
१८. पडया (ब)।
१९. काहिती (स), कहेंति (ब)।
२०. चरमं (स)।
२१. ना (ब)।
२२. दिंति (ब)।
२३. ० च्छारिय (स)।
२४. तोरस्स (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२९८८. जदि[१] भासति गणमज्झे, अवप्पयोगा य तत्थ गंतूण ।
अवितोसविए एसागतो त्ति ते चेव ते दोसा ॥

२९८९. जम्हा एते दोसा, अविधीए पेसणे य कहणे[२] य ।
तम्हा इमेण विहिणा, पेसणकहणं तु कायव्वं ॥

२९९०. गणिणो अत्थि[३] निब्भेयं, रहिते किच्च पेसिते ।
गमेति तं रहे[४] चेव, नेच्छे सहामहं[५] खु ते ॥

२९९१. गुरुसमक्खं गमितो, तहावि जदि नेच्छति ।
ताहे णं गणमज्झम्मि, भासते नातिनिट्ठुरं ॥

२९९२. गणस्स गणिणो चेव, तुमम्मि[६] निग्गते तदा ।
अद्धिती[७] महती आसी, सो विपक्खो[८] य तज्जितो ॥

२९९३. गणेण गणिणा चेव, सारिज्जंतो स झंपिए ।
ताहे अन्नावदेसेण, विवेगो[९] से[१०] विहिज्जइ ॥

२९९४. महाजणो इमो अम्हं, खेत्तं पि न पहुप्पति ।
वसधी सन्निरुद्धा वा[११], वत्थपत्ता वि नत्थि नो ॥

२९९५. सगणिच्चपरगणिच्चेण[१२], समणुण्णेतरेण वा ।
रहस्सा वि व उप्पन्नं, जं जहिं तं तहिं खवे[१३] ॥

२९९६. एक्को व दो व निग्गत, उप्पण्णं जत्थ तत्थ वोसमणं ।
गामे गच्छे दुवे गच्छा[१४], कुल-गण-संघे य[१५] बितियपदं[१६] ॥

२९९७. तं जत्तिएहि दिट्ठं, तत्तियमेत्ताण[१७] मेलणं काउं ।
गिहियाण व साधूण व, पुरतो च्चिय दो वि खामंति[१८] ॥

२९९८. नवणीयतुल्लहियया, साहू एवं गिहिणो तु नाहेंति ।
न य दंडभया साहू, काहिंती[१९] तत्थ वोसमणं ॥

२९९९. बितियपदे वितिगिट्ठे, वितोसवेज्जा[२०] उवट्ठिते[२१] बहुसो ।
बितिओ जदि न उवसमे, गतो य सो अन्नदेसं तु ॥

---

१. जति (ब)।
२. कहणं (स)।
३. अत्थ (अ)।
४. रधे (स)।
५. साहा ० (स)।
६. तुममं (अ)।
७. अद्धीती (स)।
८. विवक्खो (अ)।
९. विवग्गो (ब)।
१०. मे (अ)।
११. य (स)।
१२. छंद की दृष्टि से 'सगणपरगणिच्चेण' पाठ अधिक संगत लगता है।
१३. भवे (अ), य ते (स)।
१४. गाथा के तृतीय चरण में अनुष्टुप छंद है।
१५. ण (स)।
१६. इस गाथा का उत्तरार्ध अ प्रति में नहीं है।
१७. तत्तियमत्ताण (ब)।
१८. खामिति (अ)।
१९. काहती (स)।
२०. वितिउस ० (ब)।
२१. दुवट्ठिते (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०००. कालेण व उवसंतो, वज्जिज्जंतो व[1] अन्नमन्नेहिं ।
खीरादिसलद्धीण व, देवय गेलण्णपुट्ठो वा[2] ॥

३००१. गंतुं खामेयव्वो, अधव[3] न गच्छेज्जिमेहि दोसेहिं ।
नीयल्लगउवसग्गो, तहियं गतस्स व होज्जा तु[4] ॥

३००२. सो गामो उद्वितो होज्जा, अंतरा वावि जणवतो ।
निण्हवगणं गतो वा, न तरति अधवावि पडिचरती[5] ॥

३००३. अब्भुज्जय[6] पडिवज्जे[7], भिक्खादि अलंभ अंतर तहिं वा ।
'राया दुट्ठे'[8] ओमं, असिवं वा अंतर तहिं वा ॥

३००४. सबरपुलिंदादिभयं, अंतर तहियं च[9] अधव होज्जाहि[10] ।
'एतेहिं कारणेहि'[11], वच्चंतं 'कं पि'[12] अप्पाहे ॥

३००५. गंतूण सो वि तहियं, सपक्खपरपक्खमेव मेलित्ता ।
खामेति सो वि[13] कज्जं, व दीवए[14] नागतो[15] जेण ॥

३००६. अह नत्थि कोवि[16] वच्चंतो, ताधे उवसमेती[17] अप्पणा[18] ।
खामेती[19] जत्थ णं, मिलती अदिट्ठे गुरुणंतियं ॥

३००७. निग्गंथीणं पाहुड, वितोसवेयव्व होति वितिगिट्ठं ।
किध पुण होज्जुप्पण्णं, चेइयघरवंदमाणीणं[20] ॥

३००८. चेइयथुतीण भणणे, उण्हे अण्णाउ बाहि[21] अच्छंती[22] ।
परिताविया मु[23] धणियं, कोइलसद्दाहि तुब्भाहिं ॥

३००९. नग्घंति णाडगाइं, कलं पि कलभाणिणीण[24] तुब्भाणं ।
विप्पगते भवतीणं, जायंत भयं नरवतीए[25] ॥

---

१. वि (ब)।
२. या (स)।
३. अहव (ब)।
४. तू (अ, स)।
५. गाथा के पूर्वार्द्ध में अनुष्टुप् तथा उत्तरार्ध में आर्या छंद है।
६. ० ज्जयं च (स)।
७. पडिवज्जेति (ब)।
८. रायदुट्ठं (स)।
९. व (ब)।
१०. हुज्जाहिं (ब)।
११. एतेण कारणेणं (अ)।
१२. किं वि (ब)।
१३. त्ति (अ, स)।
१४. दीवणा (ब)।
१५. एगतो (ब)।
१६. कोइ (अ)।
१७. ० समति (स)।
१८. मप्पणा (ब)।
१९. खामेति (अ)।
२०. ० माणी तं (स)।
२१. कहि (स)।
२२. अच्छंति (ब)।
२३. उ (ब)।
२४. ० भासिणीण (अ)।
२५. ० वतीतो (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०१०. इति असहण उत्तुयया[१] मज्झत्थातो समंति तत्थेव ।
असुणाव[२] सव्वगणभंडणे व गुरुसिद्धिमा मेरा ॥

३०११. गणधर गणधरगमणं[३], एगायरियस्स दोन्नि वा वग्गा ।
आसन्नागम[४] दूरे, व[५] पेसणं तं च बितियपदं ॥

३०१२. चेइयघरं[६] णिइत्ता[७], जत्थुप्पन्नं च[८] तत्थ विज्झवणं ।
लज्जभया व असिट्ठे, दुवेगतर निग्गम[९] इमं तु ॥

३०१३. आसन्नमणावाए, 'आणंते व जहिं'[१०] गणहरागम्म ।
जणणात अभिक्खामण[११], आणाविज्जऽन्नहिं[१२] वावि ॥

३०१४. वितिगिट्ठं खलु पगतं, एगंतरिओ[१३] य होति उद्देसो[१४] ।
अव्वितिगिट्ठविगिट्ठं, जध पाहुडमेव नो सुत्तं ॥

३०१५. लहुगा य सपक्खम्मी, गुरुगा परपक्ख[१५] उद्दिसंतस्स ।
अंगं[१६] सुतखंधं वा, अज्झयणुद्देस थुतिमादी[१७] ॥

३०१६. एग दुगे तिसिलोगा, थुतीसु[१८] अन्नेसि होति जा सत्त ।
देविंदत्थयमादी, तेणं तु परं थया होंति ॥

३०१७. अट्ठहा नाणमायारो, तत्थ काले य आदिमो ।
अकालझाइणा[१९] सो तु, नाणायारो विराधितो ॥

३०१८. कालादिउवयारेणं, 'विज्जा न'[२०] सिज्झए[२१] विणा देति[२२] ।
रंधे व अवद्धंसं, सा वा अण्णा व से तहिं ॥

३०१९. सलक्खणमिदं सुत्तं, जेण सव्वण्णुभासितं ।
सव्वं च लक्खणोवेयं, समधिट्ठेंति देवया ॥

३०२०. जधा विज्जानरिंदस्स[२३], जं किंचिदपि भासियं ।
विज्जा भवति[२४] सा चेह, देसे काले य[२५] सिज्झति[२६] ॥

---

१. उत्तुयय (अ), उतुइतं (स) ।
२. असुणासु (स) ।
३. गणवर ० (अ) ।
४. ० गमण (अ) ।
५. य (स) ।
६. ० घरि (स) ।
७. णितित्ता (ब) ।
८. वि (अ) ।
९. निग्गमे (अ), निग्गते (स) ।
१०. आणंतह वा से (अ), आणंते वी से (स) ।
११. अविक्खमेण (अ) ।
१२. आणातत्थन्नहिं (ब, स) ।
१३. एतंत ० (अ) ।
१४. निद्देसो (ब) ।
१५. ० पक्खे (अ) ।
१६. अंग (ब) ।
१७. ०माती (ब) ।
१८. कतीसु (अ) ।
१९. ० झातिणा (ब), ० झायणो (स) ।
२०. न विज्जा (स) ।
२१. सिज्झति (स) ।
२२. देंति (स) ।
२३. विज्जाहरि ० (स)
२४. भवती (अ, स) ।
२५. उ (ब), व (स) ।
२६. सिज्झंति (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०२१. जहा य[१] चक्किणो चक्कं, पत्थिवेहिं पि पुज्जति ।
न यावि[२] कित्तणं तस्स, 'जत्थ तत्थ'[३] व जुज्जती[४] ॥

३०२२. तहेहट्ठगुणोवेता[५], जिणसुत्तीकता वई ।
पुज्जते न य सव्वत्थ, तीसे झाओ तु जुज्जती ॥

३०२३. निद्दोसं सारवंतं च, हेतुजुत्तमलंकितं[६] ।
उवणीयं सोवयारं च, मितं मधुरमेव य[७] ॥

३०२४. पुव्वण्हे वावरण्हे[८] य, अरहो[९] जेण भासती[१०] ।
एसा[११] वि देसणा अंगे, जं च पुव्वुत्तकारणं ॥

३०२५. रत्तीदिणाण मज्झेसु, उभओ[१२] संज्झओ अवि ।
चरंति गुज्झगा केई[१३], तेण तासिं 'तु नो'[१४] सुतं ॥

३०२६. जाव होमादिकज्जेसु, उभओ संज्झओ सुरा ।
लोगेण भासिया[१५] तेण, संझावासगदेसणा ॥

३०२७. एते उ सपक्खम्मी[१६], दोसा आणादओ समक्खाया ।
परपक्खम्मि विराधण, दुविधेण विसेण दिट्ठंतो ॥नि. ४१६ ॥

३०२८. दव्वविसं खलु दुविधं, सहजं संजोइमं[१७] च तं बहुहा ।
एमेव य भावविसं, सचेतणाऽचेतणं बहुधा[१८] ॥

३०२९. सहजं सिंगियमादी[१९], संजोइम-घत-महुं च समभागं ।
दव्वविसं णेगविहं, एत्तो भावम्मि वोच्छामि ॥

३०३०. पुरिसस्स निसग्गविसं, इत्थी एवं पुमं पि इत्थीए ।
संजोइमो सपक्खो, दोण्ह वि परपक्ख[२०] नेवत्थो ॥

३०३१. घाण-रस-फासतो वा, दव्वविसं वा सइंऽतिवाएति[२१] ।
सव्वविसयाणुसारी, भावविसं दुज्जयं असइं[२२] ॥

---

१. x (ब) ।
२. वावि (ब) ।
३. अत्थ जत्थ (स) ।
४. जुज्जति (अ) ।
५. ताहे अट्ठगुणो ० (स) ।
६. हेउकारणचोइयं (निभा) ।
७. निभा ३६२०, बृभा २८२, आवनि ८८५ ।
८. यावरण्हे (ब) ।
९. अरहा (अ) ।
१०. भासति (स) ।
११. एता (अ) ।
१२. उभयतो (ब) ।
१३. केति (ब), केयिं (स) ।
१४. तो (ब), पुणो(स) ।
१५. भाविता (अ, ब) ।
१६. ०म्मिं (अ, ब, स) ।
१७. संजोइयं (अ) ।
१८. गाथा का उत्तरार्ध ब प्रति में नहीं है ।
१९. ० माती (ब) ।
२०. X (अ) ।
२१. ० वातेति (अ) ।
२२. असति (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०३२. जम्हा एते दोसा, तम्हा उ सपक्खसमणसमणीहिं ।
उद्देसो कायव्वो, किमत्थ पुण कीर उद्देसो ॥नि. ४१७॥

३०३३. 'बहुमाणविणयआउत्तया य'[1] उद्देसतो गुणा होंति ।
पढमोद्देसो[2] सव्वो, एत्तो वोच्छं करणकालं ॥

३०३४. थवथुतिधम्मक्खाणं[3], पुव्वुद्दिट्ठं तु होति संज्झाए ।
कालियकाले इतरं[4], पुव्वुद्दिट्ठं विगिट्ठे वि ॥

३०३५. पत्ताण समुद्देसो, अंगसुतक्खंध पुव्वसूरम्मि ।
इच्छा निसीहमादी, सेसा दिण पच्छिमादीसु[5] ॥

३०३६. दिवसस्स पच्छिमाए[6], निसिं तु पढमाय पच्छिमाए वा ।
उद्देसज्झयऽणुण्णा[7], न य[8] रत्ति[9] निसीहमादीणं[10] ॥

३०३७. आदिग्गहणा दसकालिओत्तरज्झयण[11] चुल्लसुतमादी ।
एतेसि भइयऽणुण्णा[12], पुव्वण्हे वावि[13] अवरण्हे ॥

३०३८. नंदीभासणचुण्णे[14], उ[15] विभासा होति अंगसुतखंधे ।
मंगलसद्धाजणणं, अज्झयणाणं[16] च वुच्छेदो ॥

३०३९. बितियपदं आयरिए, अंगसुतक्खंधउद्दिसंतम्मि[17] ।
मंगलसद्धा-भय-गोरवेण[18] तध निट्ठिते चेव ॥

३०४०. एमेव संजती वा[19], उद्दिसती संजताण बितियपदे[20] ।
असतीय संजताणं, अज्झयणाणं च वोच्छेदो ॥

३०४१. एवं ता उद्देसो, अज्झाओ[21] वी न 'कप्पे वितिगिट्ठे'[22] ।
दोण्हं पि होंति लहुगा, विराधणा चेव[23] पुव्वुत्ता ॥

३०४२. बितियविगिट्ठे[24] सागारियाएँ[25] कालगत[26] असति वुच्छेदो ।
एवं कप्पति तहियं, किं ते दोसा न संती उ ॥

---

१. ०उत्तताति (अ, स)।
२. पढमाएसो तु (स)।
३. थयथुति ० (स)।
४. त्तितरं (ब)।
५. ०मादीणि (स)।
६. ०मादी (ब)।
७. ०णुण्णाया (अ)।
८. x (अ)।
९. रत्तिं (ब)।
१०. ०मादीणि (ब)।
११. ०कालियुत्त० (स)।
१२. ० अणुण्णा (अ)।
१३. यावि (ब)।
१४. ०चुल्ले (अ)।
१५. य (अ)।
१६. सुयपूय भेत्ता (ब)।
१७. ० खंध पुव्वसूरम्मि (अ, स)।
१८. गोरवे य (स)।
१९. वी (ब)।
२०. गाथायां सप्तमी तृतीयार्थे (मवृ)।
२१. सज्झाओ (अ)।
२२. कप्पति विगिट्ठे (अ, स)।
२३. से एव (अ, स), एस (स)।
२४. बितियं विगट्ठे (ब)।
२५. ०रियाति (अ, स)।
२६. ०गत त्ति (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०४३. भण्णति[१] जेण जिणेहिं, समणुण्णायाइ[२] कारणे ताइं ।
तो दोस न संजायति, जयणाइ[३] तहिं करेंतस्स ॥

३०४४. कालगतं मोत्तूणं, इमा अणुप्पेहदुब्बले जतणा ।
अन्नवसधिं अगीते, असती[४] तत्थेवणुच्चेणं ॥

३०४५. कप्पति[५] जदि निस्साए, वितिगिट्ठे संजतीण सज्झाओ ।
इति सुत्तेणुद्धारे, कतम्मि उ[६] कमागतं भणति ॥

३०४६. पुव्वं वण्णेऊणं, संजोगविसं च जातरूवं च ।
आरोवणं च गुरुयं,[७] न हु लब्भं[८] वायणं दाउं ॥

३०४७. कारणियं खलु सुत्तं, असति पवायंतियाय[९] वाएज्जा ।
पाढेण विणा तासिं, हाणी चरणस्स होज्जाही ॥

३०४८. जाओ[१०] पव्वइताओ, सग्गं मोक्खं च मग्गमाणीओ[११] ।
जदि नत्थि नाण-चरणं, 'दिक्खा हु निरत्थिगा'[१२] तासिं ॥

३०४९. सव्वजगुज्जोतकरं, नाणं नाणेण नज्जते चरणं ।
नाणम्मि असंतम्मी, अज्जा किह नाहिति विसोधिं[१३] ॥

३०५०. नाणम्मि असंतम्मी, चरित्तं पि न विज्जते[१४] ।
चरित्तम्मि असंतम्मी, तित्थे नो सचरित्तया ॥

३०५१. 'अचरित्ताएँ तित्थस्स'[१५], निव्वाणं नाभिगच्छति ।
'निव्वाणस्स असती य'[१६], दिक्खा होति निरत्थिगा[१७] ॥

३०५२. तम्हा इच्छावेती, एतासिं नाण-दंसण-चरित्तं[१८] ।
'नाण चरणेण'[१९] अज्जा, काहिति अंतं भवसयाणं ॥

३०५३. नाणस्स दंसणस्स य, चारित्तस्स य महाणुभावस्स[२०] ।
तिण्हं पि रक्खणट्ठा, दोसविमुक्को पवाएज्जा[२१] ॥

---

१. भणति (स) ।
२. अणुण्णायाइ तु (स) ।
३. ० णाए (ब) ।
४. x (स) ।
५. कप्पंति (स) ।
६. x (ब) ।
७. गुरुइं (स) ।
८. लब्भा (स) ।
९. पवाएंतीयाए (अ) ।
१०. जो जं (स) ।
११. ०माणी उ (अ) ।
१२. दिक्खा होति निरत्थया (ब) ।
१३. ३०४९-५० ये दोनों गाथाएं ब प्रति में नहीं हैं ।
१४. चिट्ठति (स) ।
१५. x (ब) ।
१६. असती णेव्वाणस्स य (स) ।
१७. निरत्थया (स) ।
१८. चरित्ताणं (अ, स), समाहारत्वादेकवचनम् (मवृ) ।
१९. एतेण कारणेणं (अ, स) ।
२०. ०भागस्स (स) ।
२१. पवादेज्जा (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०५४. अप्पसत्थेण भावेण, वायतो[१] दोससंभवे ।
केरिसो अप्पसत्थो उ, इमो सो उ पवुच्चति[२] ॥

३०५५. परिवारहेउमनट्ठाय वभिचारकज्जहेउं वा ।
आगारा वि 'बहुविधा, असंवुडादी उ[३] दोसा उ ॥

३०५६. गणिणी कालगयाए, बहिया[४] 'न य'[५] विज्जते जया अण्णा[६] ।
संता वि मंदधम्मा, मज्जायाए पवाएज्जा ॥

३०५७. आगाढजोगवाहीए, कप्पो वावि होज्ज असमत्तो[७] ।
सुत्ततो अत्थतो वावी[८], कालगया य पवत्तिणी[९] ॥

३०५८. अन्नागय सगच्छम्मी[१०], जदि नत्थि पवाइगा[११] ।
अण्णगच्छा मणुण्णं तु, आणयंति[१२] ततो तहिं ॥

३०५९. सा तत्थ निम्मवे[१३] एक्कं, तारिसीए असंभवे ।
उग्गहधारणकुसलं, ताधे नयति[१४] अन्नत्थ[१५] ॥

३०६०. संविग्गमसंविग्गा[१६], परिच्छियव्वा य दो वि वग्गा तु ।
अपरिच्छणम्मि गुरुगा, पारिच्छ[१७] इमेहि ठाणेहिं[१८] ॥

३०६१. वच्चंति तावि[१९] एंती, भत्तं गेण्हंति 'ताए व'[२०] देंति ।
कंदप्प-तरुण-बउसं[२१], अकालऽभीता य सच्छंदा[२२] ॥

३०६२. अट्ठमी पक्खिए[२३] मोत्तुं, वायणाकालमेव य ।
पुव्वुत्ते कारणे वावि, गमणं होति अकारणं[२४] ॥

३०६३. थेरा सामायारिं, अज्जा पुच्छंति ता[२५] परिकधेंती ।
आलोयण सच्छंदं, वेंटल गेलण्ण पाहुणिया ॥नि. ४१८ ॥

---

१. वाएतो (ब)।
२. स प्रति में इस गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
कारणे दोसे जे तु, पवाएति अपसत्थेण भावेण।
३. बहुधा असंपुडादी य (स)।
४. बहिता (ब)।
५. पुण (अ)।
६. अण्णं (ब)।
७. समत्तो (स)।
८. यावि (अ, स)।
९. गाथा के उत्तरार्ध में अनुष्टुप् छंद है।
१०. ०च्छम्मि (स)।
११. पवातिगा (ब)।
१२. आणियंति (अ), आणंति (ब)।
१३. मण्णवे (स)।
१४. नयंति (अ, स)।
१५. ब प्रति में इस गाथा का केवल प्रथम चरण है।
१६. संविग्ग असं० (स)।
१७. पडिच्छ (स)।
१८. यह गाथा ब प्रति में नहीं है।
१९. तावी (स)।
२०. तावन्न (अ), ताव (स)।
२१. पाउसं (अ, स)।
२२. गाथा का पूर्वार्द्ध ब प्रति में नहीं है।
२३. वावि (ब)।
२४. ०रणे (स)।
२५. ततो (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०६४. चित्तलए सविकारा, बहुसो उच्छोलणं च कप्पट्ठे[१] ।
थलि घोड[२] वेससाला, जंत[३] वए काहिय[४] निसेज्जा ॥नि. ४१९ ॥

३०६५. जा जत्थ[५] गता सा ऊ[६], नालोए[७] दिवसपक्खियं वावी ।
सच्छंदाओ वयणे, महतरियाए न ठायंति[८] ॥दारं ॥

३०६६. विंटलाणि पउंजंति, 'गिलाणाए वि न पाडितप्पंति'[९] ।
'आगाढ वऽणागाढं'[१०], करेंति ऽणागाढ[११] आगाढं ॥

३०६७. अजतणाय व कुव्वंती[१२], पाहुणगादि अवच्छला ।
चित्तलाणि नियंसेंति[१३], चित्ता रयहरणा तधा ॥दारं ॥

३०६८. गइविब्भमादिएहिं[१४], आगार-विगार तह[१५] पदंसेंति ।
जध किढगाण[१६] वि मोहो, समुदीरति[१७] किं णु तरुणाणं ॥दारं ॥

३०६९. बहुसो उच्छोलेंती, मुह-नयणे-हत्थ-पाय-कक्खादी ।
गेण्हण मंडण रामण[१८], भोइंति[१९] व ताउ[२०] कप्पट्ठे ॥दारं ॥

३०७०. थलि[२१] घोडादिट्ठाणे, वयंति ते यावि[२२] तत्थ समुवेंति ।
वेसित्थी[२३] संसग्गी, उवस्सओ वा समीवम्मि ॥

३०७१. तह चेव हत्थिसाला, घोडगसालाण चेव आसन्ने ।
जंति तह जंतसाला, काहीयत्तं[२४] च कुव्वंती[२५] ॥

३०७२. थलि[२६] घोडादिनिरुद्धा[२७], पसज्झगहणं[२८] करेज्ज तरुणीणं[२९] ।
संकाइ[३०] होति तहियं, गोयर किमु पाडिवेसेहिं ॥

---

१. कप्पट्ठी (स) ।
२. घोडि (ब) ।
३. जंतु (ब) ।
४. ताधिया (अ), काहिया (स) ।
५. जतो (ब), जुत्तो (स) ।
६. उ (अ) ।
७. आलोए (स) ।
८. ठाएती (स) ।
९. गिलाणे या वि न तप्पंति (अ), ०पडिव तप्पंति (स) ।
१०. आगाढे या अणागाढं (ब, स) ।
११. णागाढि (अ) ।
१२. कुव्वंति (स) ।
१३. य नियंसंति (ब) ।
१४. ०भमादीएहिं (स) ।
१५. तहि (ब), तधा य (स) ।
१६. कढगाण (अ, स) ।
१७. सूदीरति (ब) ।
१८. वामण (स) ।
१९. भोयंति (ब), भोएंति (स) ।
२०. तातो (स) ।
२१. थंभि (अ), थला (स) ।
२२. वावि (स) ।
२३. वेसत्थी (ब) ।
२४. काधीयत्तं (अ, स) ।
२५. कुव्वंति (ब) ।
२६. थडि (स) ।
२७. घोला य रुद्धा (अ) ।
२८. पसण्णगहणं (अ) ।
२९. समणीणं (ब) ।
३०. संकाय (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०७३. सज्झायमुक्कजोगा, धम्मकधा विकह पेल्लणगिहीणं[1] ।
गिहीनिसेज्जं च बाहंति[2] संथवं[3] व करेंती[4] उ ।।दारं ।।

३०७४. एवं तु ताहि सिट्ठे[5], निक्खिवितव्वा[6] उ ताउ कहियं तु ।
दोसु वि संविग्गेसुं[7], निक्खिवितव्वा भवे ताउ ।।

३०७५. संजत-संजतिवग्गे[8], संविग्गेक्केक्क[9] अहव दोहिं[10] तु ।
निक्खिवण होंति गुरुगा, अध पुण सुद्धे विमे दोसा ।।

३०७६. तरुणा सिद्धपुत्तादि, पविसंति[11] नियल्लगाण[12] नीसाए ।
महयरिय[13] न वारेती, जे[14] वि य पडिसेवते[15]तहिं[16] किं च ।।

३०७७. निक्खिवण तत्थ गुरुगा, अह पुण होज्जा हु सा समुज्जुत्ता[17] ।
चरणगुणेसुं नियतं, वियक्खणा सीलसंपन्ना ।।

३०७८. समा सीस[18] पडिच्छण्णे[19], चोदणासु[20] अणालसा ।
गणिणी गुणसंपन्ना, पसज्झा[21] पुरिसाणुगा ।।

३०७९. संविग्गा भीयपरिसा[22], उग्गदंडा य कारणे ।
सज्झायझाणजुत्ता य, संगहे य विसारया ।।

३०८०. विगहा विसोत्तियादिहिं[23], वज्जिता जा य निच्चसो ।
एयग्गुणोववेयाए[24], तीए[25] पासम्मि निक्खिवे ।।

३०८१. एयारिसाय असती, वाएज्जाहि ततो सयं[26] ।
वाएंते य इमा तत्थ, विधी[27] उ परिकित्तिया ।।

३०८२. माता भगिणी धूता, मेधावी उज्जुया य आणत्ती[28] ।
एतासिं असतीए, सेसा वाएज्जिमा[29] मोत्तुं ।।

---

१. पेसण० (स)।
२. वायंती (स)।
३. संथरं (ब)।
४. करेंति (ब)।
५. सट्ठे (अ)।
६. निक्खियव्व (ब)।
७. संविग्गेसू (अ)।
८. संजमव० (अ)।
९. संविग्ग एक्केक्के (अ)।
१०. दोसु (स)।
११. ०संत (स)।
१२. नीय० (ब, स)।
१३. महरियाए (ब), ०यरिया (स)।
१४. जति (अ)।
१५. पडिसेवी (अ)।
१६. छंद की दृष्टि से तहिं पाठ अतिरिक्त है।
१७. ०समुज्जता (ब)।
१८. णीस (अ)।
१९. पडिच्छीणं (स)।
२०. चोदणेसु (अ)।
२१. पसिज्झ (स), अप्रसह्या (मवृ)।
२२. भीयपुरिसा य (स)।
२३. गाथा के प्रथम चरण में आर्याछंद है।
२४. एयगुणो ० (ब)।
२५. तीय (स)।
२६. सइं (स)।
२७. स्त्रीत्वं गाथायां प्राकृतत्वात् (मवृ)।
२८. याणंती (ब)।
२९. ० ज्जिमं (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०८३. तरुणिं पुराण भोइय[1], मेहुणियं पुव्वहसिय वभिचरियं ।
एतासु होंति दोसा, तम्हा उ[2] न वायए 'ते ऊ'[3] ॥

३०८४. वज्जकुड्डसमं चित्तं, जदि होज्जाहि दोण्ह वी[4] ।
तहा वि संकितो होति, एयाओ वाययंत उ ॥

३०८५. पुव्वं तु किढी[5] असतीय, मज्झिमा 'दोसरहित वाएती'[6] ।
गणधर अण्णतरो वावि, परिणतो तस्स असतीए ॥

३०८६. तरुणेसु सयं वाए, दोसन्नतरेण वावि जुत्तेसु ।
विधिणा तु इमेणं तू[7], दव्वादीएण उ जतंतो ॥

३०८७. दव्वे खेत्ते काले, मंडलि[8] दिट्ठी तधा पसंगो य ।
एतेसु जतणं वुच्छं, आणुपुव्विं समासतो[9] ॥

३०८८. जं खलु पुलागदव्वं, तव्विवरीतं दुवे वि भुंजंति ।
पुव्वुत्ता खलु दोसा, तत्थ निरोधे[10] निसग्गे य ॥

३०८९. सुन्नघरे पच्छन्ने, उज्जाणे देउले सभारामे ।
उभयवसधिं च मोत्तुं, वाएज्ज[11] असंकणिज्जेसु ॥

३०९०. उभयनिए[12] वतिणीय व, सण्णि अधाभद्द तह य धुवकम्मी ।
आसण्णेऽसति[13] अज्जाणुवस्सए अप्पणो वावि ॥दारं ॥

३०९१. जइ अत्थि वायणं दिंतो, अदाउं ताधि[14] गच्छति ।
अध नत्थि ताहे दाऊणं, सुत्तइत्ताण[15] पोरिसी ॥

३०९२. अह अत्थइत्ता[16] होज्जाहि[17], तो जाति पढमाए तू ।
असती[18] दोण्ह वी दाणे, इमा उ जतणा तहिं ॥

३०९३. कडणंतरितो[19] वाए, दीसंति जणेण[20] दो वि जह वग्गा ।
बंधंति मंडलिं[21] ते उ, एक्कतो यावि[22] एक्कतो ॥

---

१. भोतिक (अ)।
२. य (अ)।
३. ताउ (ब), ते तू (अ)।
४. वि (ब)।
५. कढी (अ, स)।
६. दोसरहितो उ वायवी (अ)।
७. तु (अ)।
८. मंडल (ब)
९. गाथा के उत्तरार्ध में अनुष्टुप छंद का प्रयोग है।
१०. निरोह (अ)।
११. ० ज्जा (ब)।
१२. ० निते (अ) ० निगे (स)।
१३. आतिण्णा असति (अ), अतिण्णे असति (ब)।
१४. ताधे (ब, स)।
१५. ० इत्थाण (अ)।
१६. अत्थअत्ता (स)।
१७. होज्जा (ब)।
१८. असतीय (अ, स)
१९. कडिणं ० (अ)।
२०. जणे (अ)।
२१. मंडली (स)।
२२. वावि (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०९४. लोगे वि पच्चओ खलु, वंदणमादीसु[१] होंति वीसत्था ।
दुग्गूढादी दोसा, विगारदोसा[२] य नो एवं ॥

३०९५. चिलिमिलि[३] छेदे ठायति[४], जह पासति[५] दोण्ह वी[६] पवाएंतो ।
दिट्ठी[७] संबंधादी, इमे य तहियं[८] न वाएज्जा ॥

३०९६. संगार[९] मेहुणादी य, जे यावि धितिदुब्बला ।
अण्णेण वायते ते तु, निसिं वा पडिपुच्छणं ॥

३०९७. असंतऽण्णे पवायंते, पढंति सव्वे तहिं अदोसिल्ला ।
अणिसण्णथेरिसहिया[१०], थेरसहायो पवाएंतो ॥

३०९८. जा दुब्बला होज्ज चिरं व झाओ, ताधे निसण्णा न य उच्चसद्दा ।
पलंबसंघाडि न उज्जला य, अणुण्णता वास तिरंजली[११] य ॥

३०९९. एतविहिविप्पमुक्को, संजतिवग्गं तु जो पवाएज्जा ।
मज्जायातिक्कंतं, तमणायारं वियाणाहि ॥

३१००. सज्झाओ खलु पगतो[१२], वितिगिट्ठे नो य कप्पति जधा उ ।
एमेव असज्झाए, तप्पडिवक्खे तु सज्झाओ ॥

३१०१. असज्झायं[१३] च दुविधं, आतसमुत्थं च परसमुत्थं च ।
जं तत्थ[१४] परसमुत्थं, तं पंचविहं तु नायव्वं[१५] ॥

३१०२. संजमघाउप्पाते, सादिव्वे[१६] वुग्गहे य सारीरे ।
एतेसु करेमाणे, आणादि इमो तु दिट्ठंतो[१७] ॥

३१०३. मेच्छभयघोसणनिवे[१८], दुग्गाणि अतीह मा विणिस्सिहिहा[१९] ।
फिडिता जे उ अतिगता, इतरे हियसेस[२०] निवदंडो[२१] ॥

---

१. ० मातीसु (ब)।
२. धिक्कारदोसा (अ)।
३. ० मिणि (अ, स)।
४. ट्ठायति (स)।
५. पावति (स)।
६. वा (ब)।
७. दिट्ठं (ब)।
८. तहिं (अ)।
९. सविकारा (अ)।
१०. ० थेरसहिया (ब)।
११. रितंजली (अ)।
१२. x (ब)।
१३. ०ज्झाइयं (स)।
१४. तं तु (अ, ब)।
१५. निभा ६०७४, आवनि १३२३।
१६. सादेवे (अ)।
१७. निभा (६०७५) एवं आवनि (१३२३) में गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—घोसणय मेच्छरण्णो, कोइ छलिओ पमाएणं ।
१८. नृपेन गाथायां सप्तमी तृतीयार्थे (मवृ)।
१९. ० स्सिहेहा (ब)।
२०. हय ० (ब)।
२१. निभा (६०७६) एवं आवनि (१३२४) में इस गाथा के स्थान पर निम्न गाथा मिलती है—
मेच्छभयघोसणनिवे, हियसेसा ते उ डंडिया रण्णा ।
एवं दुहओ दंडो, सुरपच्छित्ते इह परे य ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१०४. राया इव तित्थगरो, जाणवया[१] साधु घोसणं सुत्तं ।
मेच्छो य असज्झाओ, रतणधणाइं च नाणादी[२] ॥

३१०५. थोवावसेसपोरिसि, अज्झयणं वावि जो कुणइ सोउं[३] ।
नाणादिसारहीणस्स[४], तस्स छलणा तु संसारे ॥

३१०६. अहवा दिट्ठंतऽवरो[५], जध रण्णो 'केइ पंच'[६] पुरिसा उ ।
दुग्गादि[७] परितोसितो, तेहि य राया अध कयाई ॥

३१०७. तो देति तस्स राया, नगरम्मी[८] इच्छियं पयारं तू ।
गहिते य देति मोल्लं, जणस्स आहारवत्थादी[९] ॥

३१०८. एगेण तोसिततरो, गिहमगिहे तस्स सव्वहिं वियरे ।
रत्थादीसु चउण्हं, 'एविध ऽसज्झाइए उवमा'[१०] ॥

३१०९. पढमम्मि सव्वचेट्ठा, सज्झाओ वा निवारतो नियमा ।
सेसेसु असज्झाओ[११], चेट्ठा न निवारिया[१२] अण्णा ॥

३११०. महिया य भिन्नवासे, सच्चित्तरए य संजमे तिविधे ।
दव्वे खेत्ते काले, •जहियं वा जच्चिरं सव्वं[१३] ॥

३१११. महिया तु[१४] गब्भमासे, वासे पुण होंति तिन्नि उ पगारा ।
बुब्बुय तव्वज्ज फुसी, सच्चित्तरजो य आतंबो[१५] ॥

३११२. दव्वे तं चिय दव्वं, खेत्ते 'जहियं तु'[१६] जच्चिरं[१७] काले ।
ठाणादिभासभावे[१८], मोत्तुं उस्सासउम्मेसं[१९] ॥

३११३. वासत्ताणावरिता, णिक्कारण ठंति कज्जे जतणाए ।
हत्थच्छिंगुलिसण्णा[२०], पोत्तावरिता[२१] व भासंति[२२] ॥

---

१. जण ० (स)।
२. निभा ६०७७, आवनि १३२५।
३. सोउ (स), सोच्चा (निभा ६०७८)।
४. साररहियस्स (आवनि १३२६)।
५. ० अवरो (अ)।
६. पंच केति (स)।
७. दुग्गाति (स)।
८. नगरम्मि (अ, ब)।
९. ३१०६-३१०७ इन दोनों गाथा के स्थान पर निभा ६०८० एवं आवनि १३२८ में निम्न गाथा मिलती है—
दुग्गादि तोसियनिवो, पंचण्हं देइ इच्छियपयारं।
गहिए य देति मुल्लं, जणस्स आहारवत्थादी ॥
१०. एवं पढमं तु सव्वत्थ (निभा ६०८१, आवनि १३२९)।
११. सज्झाओ (स)।
१२. वि वारिया (ब), चेव वारितो (स)।
१३. निभा (६०७९) एवं आवनि (१३२७) में इस गाथा में क्रमव्यत्यय है।
१४. य (ब)।
१५. निभा (६०८२) एवं आवभा (२१६) में इस गाथा के स्थान पर निम्न गाथा मिलती है—
महिया तु गब्भमासे, सच्चित्तरयो तु ईसि आयंबो।
वासे तिन्नि पगारा, बुब्बुय तव्वज्ज फुसिता य ॥
१६. जहि पडति (निभा ६०८३)।
१७. सच्चिरं (अ)।
१८. ठाणभासादिभावे (निभा)।
१९. ० उम्मेसुं (अ)।
२०. हत्थच्छंगु ० (आवनि १३३०), हत्थत्थंगु ० (स)।
२१. पोत्तोवरिया (निभा ६०८४)।
२२. सासंति (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३११४. पंसू य मंसरुधिरे, केस-सिलावुड्डि[१] तह रउग्घाते ।
मंसरुधिरऽहोरत्तं[२], अवसेसे जच्चिरं सुत्तं ॥

३११५. पंसू अच्चित्तरजो, 'रयस्सलाओ दिसा रउग्घातो'[३] ।
तत्थ सवाते निव्वातए[४] य सुत्तं परिहरंति[५] ॥

३११६. साभाविय तिण्णि दिणा, सुगिम्हए[६] निक्खिवंति जइ जोगं ।
तो तम्मि पडंतम्मी[७], कुणंति[८] संवच्छरज्झायं ॥दारं ॥

३११७. गंधव्वदिसाविज्जुक्क[९], गज्जिते जूव[१०] 'जक्खलित्ते य'[११] ।
एक्केक्कपोरिसी[१२] गज्जितं तु दो पोरिसी[१३] हणति ॥

३११८. गंधव्वनगरनियमा, सादिव्वं[१४] सेसगाणि भजिताणि[१५] ।
जेण न नज्जंति फुडं[१६], तेण य[१७] तेसिं तु परिहारो[१८] ॥

३११९. दिसिदाह[१९] छिन्नमूलो, उक्कसरेहा पगासजुत्ता वा ।
संझाछेदावरणो, उ जूवओ सुक्क दिण[२०] तिन्नि[२१] ॥

३१२०. केसिंचि होंतऽमोहा, उ जूवओ 'ते य'[२२] होंति आइण्णा ।
जेसिं[२३] तु अणाइण्णा, 'तेसिं खलु पोरिसी दोण्णि'[२४] ॥

३१२१. चंदिमसूरुवरागे[२५], निग्घाते गुंजिते अहोरत्तं ।
चंदो जहण्णेणट्ठ उ, उक्कोसं पोरिसी बि छक्कं ॥

३१२२. सूरो जहण्ण बारस, उक्कोसं पोरिसी उ सोलस उ ।
सग्गह[२६] निव्वुड एवं, सूरादी जेणऽहोरत्ता[२७] ॥

---

१. सिल वुड्डि (निभा ६०८५)।
२. ० रुहिरे अहोरत (ब, आवनि १३३१)।
३. रयुग्घातो धूलिपडणसव्वत्तो (निभा ६०८६), रयस्सलाउ दिसा० (ब)।
४. सव्वायइ (अ)।
५. परिहवंति (स), आवनि १३३२।
६. उ गिम्हए (अ)।
७. पडंते वी (निभा ६०८७), ० तम्मि (स)।
८. करंति (आवनि १३३३)।
९. विज्जुग (निभा ६०८८), विज्जक्क (ब)।
१०. जूय (ब)।
११. जक्ख आलित्ते (आवनि १३३४, निभा)।
१२. पोरिसिं (अ)।
१३. ० पोरसी (आवनि), ० पोरिसं (स)।
१४. सादेव्वं (अ)।
१५. भतियाणि (ब)।
१६. फुडं तु (अ)।
१७. तु (अ, स)।
१८. यह गाथा निभा और आवनि में नहीं है।
१९. ० दाहे (ब)।
२०. दिणा (स)।
२१. निभा ६०८९, आवनि १३३५।
२२. ताय (आवनि १३३६), ताव (निभा), ता उ (स)।
२३. तेसिं (अ)।
२४. ० पोरिसी तिन्नी (ब), तेसिं दो पोरिसी हणति (निभा ६०९०)।
२५. ० सूरवरागे (अ), आवनि (१३३७) और निभा (६०९१) में इस गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
संझा चउपाडिवए, जं जहि सुगिम्हए नियमा ॥
२६. सगह (ब)।
२७. ३१२२ वीं गाथा के स्थान पर निभा (६०९२-६०९३), तथा कुछ शब्दभेद के साथ आवनि (१३४२-१३४३) में निम्न गाथाएं मिलती हैं—
उक्कोसेण दुवालस, अट्ठ जहण्णेण पोरिसी चंदे ।
सूरे जहण्ण बारस, पोरिसि उक्कोस दो अट्ठा ॥
सग्गहणिव्वुड एवं, सूरादी जेण होंतऽहोरत्ता ।
आइण्णं दिणमुक्के, सो चिय दिवसो य राई य ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१२३. आइन्नं दिणमुक्के, 'सो चिय'[१] दिवसो य राती य[२] ।
निग्घात गुंजितेसु, सा चिय वेला उ जा पत्ता ॥दारं ॥

३१२४. चउसंझासु न कीरति, पाडिवएसुं तधेव चउसु पि[३] ।
जो तत्थ पुज्जती तू, सव्वहिं सुगिम्हओ नियमा[४] ॥दारं ॥

३१२५. वुग्गहदंडियमादी[५], संखोभे दंडिए य कालगते ।
अणरायए य सभए, जच्चिर निद्दोच्चऽहोरत्तं[६] ॥

३१२६. 'सेणाहिवई भोइय, महयर'[७] पुंसित्थिमल्लजुद्धे य[८] ।
लोट्टादिभंडणे वा, 'गुज्झग उड्डाहमचियत्तं'[९] ॥

३१२७. दंडियकालगयम्मी[१०], जा संखोभो न कीरते ताव ।
तद्दिवस भोइ महयर[११], वाडगपति[१२] सेज्जतरमादी[१३] ॥

३१२८. पगतबहुपक्खिए वा, सत्तघरंतरमते व तद्दिवसं[१४] ।
निद्दुक्खंत्ति य गरहा[१५], न पढंति[१६] सणीयगं वावि ॥

३१२९. हत्थसयमणाहम्मी[१७], जइ सारियमादि तू विगिंचेज्जा ।
तो सुद्धं अविवित्ते[१८], अन्नं वसहिं विमग्गंति[१९] ॥

३१३०. अणणवसहीय असती, ताधे रत्तिं वसभा विगिंचंति ।
विक्खिण्णे व समंता, जं दिट्ठमसढेतरे सुद्धा[२०] ॥दारं ॥

३१३१. सारीरं पि य दुविधं, माणुसतेरिच्छिगं समासेणं ।
तेरिच्छं 'तत्थ तिहा'[२१], जल-थल-'खहजं पुणो चउहा'[२२] ॥

---

१. सो च्चिय (ब), सच्चिय (अ, स)।
२. गाथा के पूर्वार्द्ध में २७ मात्राएं हैं। यह उत्तरार्ध होना चाहिए। आवनि और निभा में भी यह उत्तरार्ध के रूप में मिलता है।
३. तु (स)।
४. यह गाथा आवनि एवं निभा में नहीं हैं इसका सारांश निभा (६०९१) तथा आवनि (१३३७) में आया हुआ है।
५. ० डंडिय ० (स)।
६. आवनि १३४४, निभा ६०९४।
७. सेणाहिव भोतिय महत्तरं (ब)।
८. सेणाहिव भोइ महयर पुंसित्थीणं च मल्लजुद्धे वा (निभा ६०९५)।
९. गुज्झ उड्डाह० (अ), ० उड्डाह अचियत्तं (ब), आवनि १३४५।
१०. ० गयम्मि (स)।
११. महत्तर (अ)।
१२. वागिमपति (अ)।
१३ इस गाथा के स्थान पर निभा (६०९६), आवनि (१३४६) में निम्न गाथा मिलती है—

तद्दिवस भोयगादी, अंतो सत्तण्ह जाव सज्झाओ।
अणहस्स य हत्थसयं, दिट्ठिविवित्तम्मि सुद्धं तु ॥

१४. गाथा का पूर्वार्ध निभा (६०९७) और आवनि (१३४७) में इस प्रकार है—महयरपगते बहुपक्खिते व सत्तघरअंतरमते वा।
१५. गरिहा (ब)।
१६. करेंति (निभा)।
१७. ० हम्मि (अ), ० हम्मि (ब)।
१८. अविगित्ते (ब)।
१९. यह गाथा निभा और आवनि में नहीं है।
२०. असुद्धा (स), इस गाथा के स्थान पर निभा (६०९८) एवं आवनि (१३४८) में निम्न गाथा मिलती है—

सागारियादिकहणं, अणिच्छ रत्तिं वसभा विगिंचंति।
विक्खिण्णे व समंता, जं दिट्ठं सढेयरे सुद्धा ॥

२१. पि य तिविहं (निभा ६०९९)।
२२. खयरं चउद्धा तु (निभा), खहजं चउद्धा उ (आवनि १३४९)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१३२. चम्मरुधिरं च मंसं, अट्ठिं[1] पि य होति चउविगप्पं तु ।
अहवा दव्वादीयं, चउव्विहं होति नायव्वं ॥

३१३३. पंचिंदियाण दव्वे, खेत्ते सट्ठिहत्थ[2] पोग्गलाइण्णं[3] ।
तिकुरत्थ[4] महंतेगा, नगरे बाहिं तु गामस्स[5] ॥

३१३४. काले 'तिपोरिसऽट्ठ व'[6], भावे सुत्तं तु नंदिमादीयं ।
बहि धोय-रद्ध-पक्के, वूढे वा होति सुद्धं तु[7] ॥

३१३५. अंतो पुण सट्ठीणं, धोतम्मी[8] अवयवा तहिं होंति ।
तो तिण्णि पोरिसीओ, परिहरितव्वा तहिं होंति[9] ॥

३१३६. महकाएऽहोरत्तं[10], मज्जारादीण मूसगादिहते ।
अविभिन्ने भिन्ने वा, पढंति एगे जइ पलाति[11] ॥

३१३७. अंतो बहिं च भिन्नं[12], अंडगबिंदू तधा विजाताए[13] ।
रायपह वूढ सुद्धे, परवयणे[14] साणमादीणि ॥

३१३८. अंडगमुज्झितकप्पे, न य भूमि[15] खणंति इहरहा[16] तिण्णि ।
असज्झाइयपमाणं, मच्छियपादा[17] जहिं खुप्पे[18] ॥दारं ॥

३१३९. अजरायु[19] तिण्णि पोरिसि, जराउगाणं जरे पडिय तिण्णि ।
निज्जंतुवस्स पुरतो, गलितं जदि निग्गलं[20] होज्जा[21] ॥

३१४०. रायपहे न गणिज्जति, अध पुण अण्णत्थ पोरिसी तिण्णि ।
अध पुण वूढं होज्जा, वासोदेणं ततो सुद्धं ॥

---

१. अत्थि (ब)।
२. सट्ठ० (स)।
३. ० लाकिण्णे (ब)।
४. तिकुरच्छ (अ)।
५. निभा ६१००
६. ० सि अट्ठेव (अ, स), ० पोरिसिऽट्ठ व (अ)।
७. निभा (६१०१) एवं आवनि (१३५१) में इसका उत्तरार्ध इस प्रकार है—सोणिय-मंसं चम्मं, अट्ठी वि य होंति चत्तारि।
८. धोयम्मि (अ, स)।
९. इस गाथा के स्थान पर निभा (६१०२, ६१०३) तथा कुछ शब्दभेद के साथ आवनि (१३५२, १३५३) में निम्न दो गाथाएं मिलती हैं—
अंतो बहिं च धोतं, सट्ठीहत्थाण पोरिसी तिण्णि।
महकाये अहोरत्तं, रद्धे वूढे य सुद्धं तु॥
बहिधोयरद्ध सुद्धो, अंतो धोयम्मि अवयवा होंति।
महकाए विरालादी, अविभिण्णं केइ णेच्छंति॥
१०. ० काए अहोरत्त (अ, स)।
११. निभा (६१०४) तथा आवभा (२१८) में यह गाथा कुछ अंतर के साथ इस प्रकार मिलती है—
मूसादिमहाकायं, मज्जारादी हताऽऽघयण केती।
अविभिण्णे गेण्हेतुं, पढंति एगे जति पलाति॥
१२. भिण्णे (स)।
१३. विआता य (स, निभा, आवनि, १३५४), वियायया (ब)।
१४. ० वयणं (निभा ६१०५)।
१५. भूमी (अ, स)।
१६. इधरा (अ)।
१७. ० पादाणं (ब)।
१८. वुड्डे (निभा ६१०६), आवभा २१९।
१९. अजराउगतो (ब)।
२०. निग्गहं (अपा), पोग्गलं (ब)।
२१. निभा (६१०७) एवं कुछ अंतर के साथ आवभा (२२०) में ३१३८ एवं ३१३९ इन दो गाथाओं के स्थान पर निम्न गाथा मिलती है—
अजराउ तिण्णि पोरिसि, जराउगाणं जरे चुते तिण्णि।
रायपहबिंदुगलिते, कप्पति अण्णत्थ पुण वूढे॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१४१. चोदेति समुद्दिसिउं, साणो जदि पोग्गलं तु एज्जाही ।
उदरगतेणं चिट्ठति[१], जा ता चउहा असज्झाओ ॥

३१४२. भण्णति जदि ते[२] एवं, सज्झाओ एव[३] तो उ नत्थि तुहं ।
असज्झाइयस्स जेण, पुण्णो सि तुमं सदाकालं[४] ॥

३१४३. जदि फुसति तहिं तुंडं[५], 'जदि वा'[६] लेच्छारितेण संचिट्ठे[७] ।
इधरा न होति चोदग, वंतं वा परिणतं जम्हा ॥दारं ॥

३१४४. माणुस्सगं चउद्धा, अट्ठि मोत्तूण सयमहोरत्तं ।
परियावण्णविवण्णे, सेसे तिग 'सत्त अट्ठेव'[८] ॥

३१४५. रत्तुक्कडया[९] इत्थी, अट्ठ दिणा तेण सत सुक्कऽधिए ।
तिण्ह[१०] दिणाण परेणं[११], अणोउगं तं महारत्तं[१२] ॥

३१४६. दंते दिट्ठ विगिंचण[१३], सेसट्ठिग[१४] बारसेव वरिसाइं[१५] ।
झामित वूढे[१६] सीताण, 'पाणमादीण रुद्दघरे'[१७] ॥

३१४७. सीताणे जं दड्ढं, न तं तु मोत्तूणऽणाह[१८] निहताइं ।
आडंबरे य रुद्दे, माइसु हेट्ठट्ठिया वारा[१९] ॥

३१४८. असिवोमाघतणेसु, बारस अविसोधितम्मि न करेंति ।
झामित-वूढे कीरति, आवासियसोधिते[२०] चेव[२१] ॥

३१४९. डहरग्गाममयम्मी[२२], न करेंती जा न नीणितं होति ।
पुरगामे व महंते, वाडगसाहिं[२३] परिहरंति ॥

३१५०. जदि तु उवस्सयपुरतो, नीणिज्जइ[२४] तं मएल्लयं ताधे ।
हत्थसयं तो जाव उ, ताव उ न करेंति सज्झायं[२५] ॥

---

१. चिट्ठंति (स)।
२. ति (ब)।
३. चेव (अ)।
४. यह गाथा निभा और आवनि नहीं है।
५. तोंड (अ, स)।
६. जति व (अ), अहवा (आवभा २२१)।
७. संचिक्खे (निभा ६१०८)।
८. सत्तट्ठेव (ब), निभा ६१०९, आवनि १३५५।
९. रत्तुक्कु० (स), रत्तुक्कडा उ (आवनि), रत्तुक्कडाओ (निभा ६११०)।
१०. तिन्नि (आवनि १३५६)।
११. वरेणं (ब)।
१२. महासत्तं (स)।
१३. ० चणं (स)।
१४. सेसट्ठी (निभा, आवनि)।
१५. वासाइं (अ, स, आवनि)।
१६. सुद्धे (निभा ६१११)।
१७. पाणरुद्धे य मायहरे (आवनि १३५७), पाणमादी य ० (निभा)।
१८. मोत्तुं अणाह (निभा ६११२)।
१९. आवभा २२२।
२०. ० सित मग्गिते (निभा ६११४)।
२१. णं च (ब), आवनि १३५९।
२२. डहरगगाममए वा (स, आवभा २२३), डहरगामम्मि मते (निभा ६११५)।
२३. वागड ० (अ), ० साही (निभा, आवभा)।
२४. नीनेज्जइ (अ)।
२५. ३१५० एवं ३१५१ ये दो गाथाएं निभा एवं आवनि में अनुपलब्ध हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१५१. को वी[१] तत्थ भणेज्जा, पुप्फादी जा उ तत्थ परिसाडी[२] ।
जा 'दीसंती ताव उ'[३], न कीरए[४] तत्थ सज्झाओ ॥

३१५२. भण्णति 'मययं तु'[५] तहिं, निज्जंतं मोत्तु होतऽसज्झायं[६] ।
जम्हा[७] चउप्पगारं, सारीरमओ न वज्जेंति[८] ॥

३१५३. एसो उ असज्झाओ, तव्वज्जिय झाओ[९] तत्थिमा जतणा[१०] ।
सज्झाइए वि कालं, कुणति अपेहितु[११] चउलहुगा[१२] ॥

३१५४. जइ नत्थि असज्झायं[१३], किं व निमित्तं तु घेप्पए कालो ।
तस्सेव जाणणट्ठा, भण्णति किं अत्थि नत्थि त्ति[१४] ॥

३१५५. पंचविधमसज्झायस्स[१५], जाणणट्ठाय पेहए कालं[१६] ।
काए विहीय पेहे, सामायारी इमा तत्थ ॥

३१५६. चउभागऽवसेसाए, चरिमाए पोरिसीए उ ।
तओ तओ तु पेहेज्जा, उच्चारादीण[१७] भूमीओ[१८] ॥

३१५७. अहियासियाय[१९] अंतो, आसन्ने 'चेव मज्झ दूरे य'[२०] ।
तिण्णेव अणहियासी[२१], अंतो छच्छच्च[२२] बाहिरओ ॥

३१५८. एमेव य पासवणे, बारस चउवीसतिं तु पेहित्ता ।
कालस्स य तिन्नि भवे, अह सूरो अत्थमुवयाति[२३] ॥

३१५९. जदि[२४] पुण निव्वाघातं[२५], 'आवस्सं तो'[२६] करेंति सव्वे वि ।
सड्ढादिकहणवाघातयाय[२७] पच्छा गुरू ठंति[२८] ॥

---

१. पिं (स)।
२. परिसंढी (अ)।
३. दीसंति ता पुण (ब)।
४. कीरति (ब), कीरउ (स)।
५. ततियं तु (ब), न तयं तु (स)।
६. ० झाई (ब), होज्ज स० (स)।
७. तम्हा (अ)।
८. निभा (६११६) और आवनि (१३६०) में इस गाथा का पूर्वार्द्ध इस प्रकार है—णिज्जंतं मोत्तूणं, परवयणे पुप्फमादि पडिसेहो।
९. x (ब)।
१०. मेरा (आवनि, निभा)।
११. सपेहेत्तु (स)।
१२. आवनि (१३६१) और निभा (६११७) में इस गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—कालपडिलेहणाए, गंडगमरुएण दिट्ठंतो॥
१३. ० ज्झाइं (स)।
१४. यह गाथा आवनि और निभा में नहीं है।
१५. ० विह असज्झा ० (अ, स)।
१६. काले (ब)।
१७. ० दीणि (ब)।
१८. ३१५५-५६ इन दोनों गाथाओं के स्थान पर आवनि (१३६२) और निभा (६११८) में निम्न गाथा मिलती है—
पंचविहमसज्झायस्स, जाणणट्ठाय पेहए कालं।
चरिमा चउभागऽवसेसियाए भूमिं ततो पेहे॥
ओनि (६३२) में यह गाथा इस प्रकार मिलती है—
चउभागऽवसेसाए, चरिमाए पडिक्कमित्तु कालस्स।
उच्चारे पासवणे, ठाणे चउवीसइं पेहे॥
१९. अहियासियाइं (आवनि १३६३)।
२०. मज्झ दूर तिण्णि भवे (निभा ६११९), मज्झि तह य दूरे य (ओनि ६३३)
२१. ० यासिय (निभा)।
२२. छ छच्च (अ)।
२३. निभा ६१२०, आवनि १३६४, ओनि ६३४।
२४. अह (आवनि)।
२५. ० घातो (स), गाथायां पुंस्त्वं प्राकृतत्वात् (मवृ)।
२६. आवासंतो (अ, स)
२७. ० वाघाततो य (निभा)।
२८. निभा ६१२१, आवनि १३६५ ओनि ६३५।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

३१६०. सेसा उ जधासत्ती[१], आपुच्छित्ताण ठंति सट्ठाणे ।
सुत्तत्थझरणहेउं[२], आयरियठितम्मि देवसियं[३] ॥

३१६१. जो होज्ज उ असमत्थो, बालो वुड्ढो 'व रोगिओ वावि'[४] ।
'सो आवस्सगजुत्तो'[५], 'अच्छेज्जा निज्जरापेही'[६] ॥

३१६२. 'आवस्सय काऊणं'[७], जिणोवदिट्ठं गुरूवदेसेणं ।
तिन्नि थुती पडिलेहा, कालस्स 'इमो विधी'[८] तत्थ ॥

३१६३. दुविधो य होति कालो, वाघातिम एतरो य नायव्वो ।
वाघातों घंघसालाय, घट्टणं धम्मकहणं[९] वा ॥

३१६४. वाघाते ततिओ[१०] सिं, दिज्जति तस्सेव ते[११] निवेदंति ।
इहरा[१२] पुच्छंति दुवे, जोगं कालस्स काहामो[१३] ॥

३१६५. 'कितिकम्मे आपुच्छण'[१४], आवासिय खलिय पडिय वाघाए ।
इंदिय दिसा य तारा, वासमसज्झाइयं चेव[१५] ॥

३१६६. कितिकम्मं कुणमाणो[१६], आवत्तगमादियं[१७] तहिं वितहं ।
कुणति 'गुरूण व वितधं'[१८], पडिच्छती तत्थ कालवधो ॥

३१६७. एवं आवासा सेज्जमादि[१९] वितहं खलिते 'य पडिते य'[२०] ।
णिंताण छीय जोती[२१], व होज्ज[२२] ताधे नियत्तेंति[२३] ॥

३१६८. अह पुण निव्वाघातं, ताहे वच्चंति कालभूमिं तु ।
जदि तत्थ गोणमादी, संसप्पादीव तो[२४] एंति[२५] ॥

---

१. ० सत्तिं (आवनि १३६६) ।
२. ० करणहेउं (ब, आवनि), ० सरणहेउं (निभा ६१२२) ।
३. ओनि ६३६ ।
४. गिलाण परितंतो (निभा, ६१२३ आवनि, १३६७, ओनि ६३७) ।
५. सो विकहाएँ विरहिओ (आवनि, निभा) सो आवासय ० (स) ।
६. ठाएज्जा जा गुरू उंति (निभा) ।
७. आवासगं तु काउं (आवनि १३६८, ओनि ३३८), आवासग कातूणं (स, निभा ६१२४) ।
८. विधी इमो (ब, ओनि) ।
९. सड्ढकहणं (स, निभा ६१२५, आवनि १३६९, ओनि ६३९) ।
१०. तत्तिओ (अ) ।
११. त्ति (अ) ।
१२. इयरे (आवनि १३७०) ।
१३. घेच्छामो (ब), निभा (६१२६) तथा ओनि (६४०) में इस गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
णिव्वाघाते दोण्णि, पुच्छंति उ काल घेच्छामो ।
१४. आपुच्छण कितिकम्मे (निभा ६१२७, आवनि १३७१) ।
१५. ओनि ६४१ ।
१६. कुणइमाणो (अ) ।
१७. आवासगमा० (अ, स) ।
१८. गुरु वि अवितहा (ब) ।
१९. ० मादी (अ) ।
२०. पडिलेहा (स) ।
२१. जोए (ब) ।
२२. होज्जा (अ) ।
२३. निव्वत्तेंता (स) ।
२४. ततो (स) ।
२५. ३१६६-६८ तक की तीन गाथाओं के स्थान पर आवनि (१३७२) निभा (६१२८) तथा ओनि (६४२) में कुछ शब्दभेद के साथ निम्न गाथा मिलती है—
जदि पुण गच्छंताणं, छीयं जोइं ततो नियत्तेंति ।
निव्वाघाते दोन्नि उ, अच्छंति दिसा णिरिक्खंता ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१६९. एमादिदोसरहिते, संडासादी पमज्जिउ निविट्ठो ।
अच्छंति निलिच्छंतो, दो दो तु दिसा 'दुयग्गा वि'[1] ॥

३१७०. सज्झायमचिंतेंता, कविहसिते विज्जु गज्जि उक्का वा[2] ।
कणगम्मि य कालवधो, दिट्ठेऽदिट्ठे इमा[3] मेरा[4] ॥

३१७१. कालो संझा य तधा, दो वि समप्पेंति जध समं चेव ।
तध तं तुलेंति कालं, 'चरमदिसं'[5] वा असज्झायं[6] ॥

३१७२. नाऊण कालवेलं, ताधे उट्ठेउ दंडधारो उ ।
गंतूण निवेदेती[7], बहुवेला 'अप्पसद्दं ति'[8] ॥

३१७३. ताधे उवउत्तेहिं, उ अप्पसद्देहि[9] तत्थ होयव्वं[10] ।
जदि न सुयत्थ केहिं[11] वि, दिट्ठंतो गंडएण तहिं ॥

३१७४. जध[12] गंडगमुग्घुट्ठे, बहूहि असुतम्मि गंडए दंडो ।
अह थोवेहिं न सुतं[13], निवयति[14] तेसिं ततो दंडो ॥

३१७५. एविध[15] वी दट्ठव्वं, दंडधरो होति दंडों तेसिं च ।
आवेदेउं गच्छति, तमेव ठाणं[16] तु दंडधरो ॥

३१७६. ताहे[17] कालग्गाही, उट्ठेति गुणेहिमेहि जुत्तो तु ।
पियधम्मो दढधम्मो, संविग्गो वज्जभीरू य ॥

३१७७. खेयण्णो य अभीरू, एरिसओ सो उ कालगाही तु ।
उट्ठेति[18] गुरुसगासं, ताधे विणएण सो एति ॥

३१७८. तिण्णि य निसीहियाओ, नमणुस्सग्गो[19] य पंचमंगलए ।
कितिकम्मं तह चेव य, काउं कालं तु पडियरती[20] ॥

---

१. दुसग्गादि (अ), तुयग्गाती (स)।
२. या (ब), य (स)।
३. यमा (ब)।
४. इस गाथा के स्थान पर निभा (६१२९), आवनि (१३७३) में कुछ अंतर के साथ निम्न गाथा मिलती है—
सज्झायमचिंतेंता, कणगं दट्ठूण पडिनियत्तेंति।
पत्ते य दंडधारी, मा बोलं गंडए उवमा॥
इसके बाद निभा एवं आवनि में दो अतिरिक्त गाथाएं और मिलती हैं।
५. ० दिसिं (निभा ६१३२)।
६. चरिमं च दिसं अस ० (आवनि १३७६), ओनि ६४६।
७. निवेयंती (ब)।
८. ० सद्द त्ति (ब), ० सद्दं ती (अ, स)।
९. मप्प ० (ब)।
१०. दायव्वं (स)।
११. कहिं (स)।
१२. अह (स)।
१३. सुयम्मि (ब)।
१४. वयति (ब)।
१५. एविधा (स)।
१६. थाणं (अ)।
१७. तीसे (अ)।
१८. उट्ठेउ (स)।
१९. नमणुस्सेधो (ब)।
२०. निभा (६१३४) एवं आवनि (१३७८) में इसकी संवादी गाथा इस प्रकार मिलती है—
णिसीहिया णमोक्कारे, काउस्सग्गे य पंचमंगलए।
कितिकम्मं च करेत्ता, बितिओ कालं च पडियरती॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१७९. थोवावसेसियाए, संझाए ठाति उत्तराहुत्तो ।
दंडधरे पुव्वमुहो, ठायति[1] दंडंतरा काउं ॥

३१८०. गहणनिमित्तुस्सग्गं, अट्ठुस्सासे य चिंतितुस्सारे[2] ।
चउवीसग दुमपुप्फिय, पुव्विग[3] 'एक्केक्क य'[4] दिसाए[5] ॥

३१८१. बिंदू य छीयऽपरिणय, 'भय-रोमंचेव होति[6] कालवधो'[7] ।
भासंत[8] मूढ संकिय, इंदियविसए य अमणुण्णो[9] ॥

३१८२. गिण्हंतस्स उ कालं[10], जदि बिंदू तत्थ[11] कोइ निवडेज्जा[12] ।
छीयं व परिणतो वा, भावो होज्जा सि अन्नत्तो ॥

३१८३. भीतो बिभीसियाए भासंतो वावि गेण्ह[13] न विसुज्झे ।
मूढो व दिसज्झयणे, संकितं वावि उवघातो ॥

३१८४. अन्नं व[14] दिसज्झयणं[15], संकंतो होज्जऽणिट्ठविसए वा ।
इट्ठेसु वा विरागं, जदि वच्चति 'तो हतो'[16] कालो ॥

३१८५. जदि उत्तरं अपेहिय, गिण्हति सेसा उ[17] ता हतो कालो ।
तीसु अदीसंतीसु वि, तारासु भवे जहण्णेणं[18] ॥

३१८६. वासं च निवडति जई[19], अहव असज्झाइयं[20] व निवडेज्जा[21] ।
एमादीहि न सुज्झे, तव्विरहम्मी[22] भवे सुद्धा[23] ॥

३१८७. गहितम्मी[24] कालम्मी, दंडधरो अच्छती तहिं चेव ।
इयरो पुण आगच्छति, जतणाए पुव्वभणिताए ॥

---

१. ठाति (ब) ।
२. चित्तउस्सासे (अ, स) ।
३. पुव्वय (अ) ।
४. एक्केक्किय (स) ।
५. निभा (६१३५), आवनि (१३७९) और ओनि (६५०) में ३१७९ एवं ३१८० इन दोनों गाथाओं के स्थान पर निम्न गाथा मिलती है—
थोवावसेसियाए, संझाए ठाति उत्तराहुत्तो ।
चउवीसग दुमपुप्फियं, पुव्वग एक्केक्कय दिसाए ॥
६. होंति (ब) ।
७. सगणे वा संकिए भवे तिण्हं (आवनि१३८०, निभा ६१३६) ।
८. भावंत (अ) ।
९. ओनि (६५१) में यह गाथा इस प्रकार है—
भासंत मूढ संकिय, इंदियविसए य होइ अमणुण्णे ।
बिंदू य छीयऽपरिणय, सगणे वा संकियं तिण्हं ॥
१०. काले (स) ।
११. तो य (स) ।
१२. निवदेज्जा (अ, स) ।
१३. गिण्ह (अ) ।
१४. वा (अ) ।
१५. ० ज्झयणो (स) ।
१६. ताधे तो (स) ।
१७. व (स) ।
१८. ३१८४ एवं ३१८५ इन दो गाथाओं के स्थान पर निभा (६१३७) एवं आवनि (१३८१) में निम्न गाथा मिलती है—
मूढो य दिसज्झयणे, भासंतो वावि गेण्हति न सुज्झे ।
अण्णं च दिसज्झयणं, संकंतोऽणिट्ठविसए वा ॥
१९. जती (ब) ।
२०. सज्झा ० (अ) ।
२१. निवडेज्जा (अ) ।
२२. ० म्मि य (ब), विरहितम्मि (स) ।
२३. सुज्झे (स) ।
२४. ० तम्मि य (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१८८. जो गच्छंतम्मि[१] विही, आगच्छंतम्मि होति सच्चेव[२] ।
जं एत्थं नाणत्तं, तमहं वोच्छं समासेणं ॥

३१८९. 'अकरण निसीहियादी, आवडणादी य होति जोतिक्खे'[३] ।
'अपमज्जिते य भीते'[४], छीते छिन्ने य कालवधो[५] ॥

३१९०. इरियावहिया हत्थंतरे वि, 'मंगलनिवेदणा समयं'[६] ।
सव्वेहि वि[७] पट्ठविते, पच्छाकरणं अकरणं वा ॥

३१९१. सन्निहिताण वडारो, पट्ठविते पमादिणो[८] दए कालं ।
'बाहि ठिते'[९] पडियरए, 'पविसति ताधे य दंडधरो'[१०] ॥

३१९२. पट्ठवित 'वंदिते वा, ताहे पुच्छंति[११] किं'[१२] सुतं भंते ।
ते वि य कधेंति सव्वं, जं जेण सुतं व दिट्ठं वा[१३] ॥

३१९३. एगस्स दोण्ह वा संकितम्मि कीरति[१४] न कीरते[१५] तिण्हं ।
सगणम्मि संकिते 'परगणं तु'[१६] गंतुं[१७] न पुच्छंति[१८] ॥

३१९४. पादोसितो अभिहितो[१९], इदाणि सामन्नतो तु वोच्छामि ।
कालचउक्कस्स वि तू, उवघायविधी उ[२०] जो जस्स[२१] ॥

३१९५. इंदियमाउत्ताणं[२२], हणंति कणगा उ सत्त[२३] उक्कोसं ।
वासासु य तिन्नि दिसा, उडुबद्धे तारगा तिन्नि[२४] ॥

३१९६. कणगा हणंति कालं, ति पंच सत्तेव 'घिं-सिसिरवासे[२५] ।
उक्का उ सरेहागा, 'रेहारहितो भवे कणगो'[२६] ॥

---

१. वच्चंतम्मि (निभा ६१३८, ओनि ६५२)।
२. स चेव (स)।
३. आवस्सिया निसीहियादी आवडणादि य होति जोतिक्खे (निभा ६१३९), निसीहिया नमुक्कार आसज्जावड-पडण जोइक्खे (ओनि ६५३)।
४. अपमज्जियभीए व (ओनि)।
५. निभा ६१३९।
६. ० दणं दारे (निभा ६१४१), ० यणा दारे (आवनि १३८३), ओनि (६५४) में इसका पूर्वार्द्ध इस प्रकार है—
आगम इरियावहिया, मंगल आवेयणं तु मरुनायं।
७. X (अ)।
८. पमायणो (ओनि)।
९. बाहिट्ठिते (निभा ६१४२, आवनि १३८४)।
१०. विसई ताए वि दंडधरो (ओनि ६५५)
११. पुच्छेइ (ओनि ६५६)।
१२. वंदिते ताहे पुच्छंति केण किं ((अ), निभा, ६१४३।
१३. आवनि १३८५।
१४. कारति (ब)।
१५. कीरवी (आवनि १३८६), कीरई (निभा ६१४४)।
१६. ० गणम्मि (ब)।
१७. गंतू (ब)।
१८. ओनि ६५७।
१९. अभिहतो (अ)।
२०. य (ब)।
२१. निभा (६१४५), ओनि (६५८), आवनि (१३८७) में इसकी संवादी गाथा इस प्रकार मिलती है—
कालचउक्के णाणत्तगं तु, पाओसियम्मि सव्वे वि।
समयं पट्ठवयंती, सेसेसु समं च विसमं वा॥
२२. ० मापुत्ताणं (अ)।
२३. तिण्णि (निभा ६१४६, आवनि १३८८)।
२४. ओनि ६५९।
२५. गिम्हि सिसिर ० (आवनि १३८९), ओभा ३१०।
२६. पगासजुत्ता व णायव्वा (निभा ६१४७)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१९७. वासासु[१] पाभातिए, तिण्णि दिसा जइ पगासजुत्ता उ[२] ।
सेसेसु तिसु वि चउरो, उडुम्मि चउरो चउदिसिं पि ॥

३१९८. तिसु तिन्नि तारगाओ, उडुम्मि पाभातिए अदिट्ठे वि ।
वासासु 'अतारगा उ'[३], चउसे छण्णे निविट्ठो वि[४] ॥

३१९९. ठाणाऽसति[५] बिंदूसु वि[६], गेण्हति विट्ठो वि पच्छिमं कालं ।
पडियरति बहिं[७] एक्को, 'एक्को अंतट्ठितो गेण्हे'[८] ॥

३२००. पादोसियऽड्ढरत्ते, उत्तरदिसि[९] पुव्व पेहए कालं ।
वेरत्तियम्मि भयणा, पुव्वदिसा पच्छिमे काले[१०] ॥

३२०१. कालचउक्कं उक्कोसेण जहण्णेण तिगं तु बोधव्वं ।
बितियपदम्मि दुगं तू, माइट्ठाणा विमुक्काणं[११] ॥

३२०२. पादोसिएण[१२] सव्वे, पढमं पोरिसि करेंति सज्झायं ।
ताधे उ सुत्तइत्ता, सुवंति जग्गंति वसभा उ ॥

३२०३. फिडितम्मि अद्धरत्ते[१३], कालं[१४] घेत्तुं सुवंति जागरिता ।
ताहे गुरू गुणंती[१५], चउत्थ सव्वे गुरू सुवति[१६] ॥

३२०४. एवं तु होंति चउरो, कह पुण होज्जाहि तिण्णि काला तु ।
पादोसियम्मि पढिते, गहितम्मी[१७] अड्ढरत्ते य[१८] ॥

३२०५. जदि वेरत्ति न सुज्झे, ताधे तेणेव अड्ढरत्तीणं[१९] ।
पढिउं[२०] पाभाईयं[२१], गिण्हंती होंति तिण्णेते[२२] ॥

३२०६. अहवा[२३] पढमे सुद्धे, बितियअसुद्धम्मि होंति तिण्णेवं[२४] ।
पादोसिय वेरत्तिय[२५], अतिउवयोगा भवे दोन्नि[२६] ॥

---

१. वासासुं (स) ।
२. गाथा का पूर्वार्द्ध निभा (६१४८),आवनि (१३९०) एवं ओभा (३११) में इस प्रकार है—
वासासु य तिन्नि दिसा, हवंति पाभाइयम्मि कालम्मि ।
३. अताराग़ा (स,निभा ६१४९,आवनि १३९१) ।
४. ति स, ओभा (३१२) ।
५. ठाणासइ (आवनि १३९२, ओनि ६६१) ।
६. य (आवनि), व (निभा ६१५०) ।
७. बाहि (ब) ।
८. गेण्हति अंतठिओ एक्को (निभा) ।
९. ० दिसा (अ) ।
१०. निभा ६१५१, ओनि ६६२, आवनि १३९३ ।
११. निभा ६१५२, आवनि १३९४ ।
१२. पाउसि ० (अ) ।
१३. अड्ढ ० (स) ।
१४. काले (अ) ।
१५. गुणेंती (अ, ब) ।
१६. निभा ६१५३, आवनि १३९५ ।
१७. ० तम्मि य (स) ।
१८. उ (अ, स) ।
१९. ० रत्तीण (ब) ।
२०. पढियं (ब) ।
२१. पाभातियं (ब) ।
२२. तिण्णे व (ब) ।
२३. अधव्वा (ब) ।
२४. तिण्णे वा (अ, स) ।
२५. वेरित्तिय (ब) ।
२६. दोन्नि वी (अ), दोण्णी (स), आवनि १३९७ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३२०७. अधवा वि[१] अद्धरत्ते, गहिए वेरत्तिए असुद्धम्मि ।
तेणेव य पढितम्मी[२], पाभातियऽसुद्ध दोण्णेव[३] ॥

३२०८. नवकालवेलसेसे, 'उवग्गहित अट्ठया'[४] पडिक्कमते ।
न पडिक्कमते[५] वेगो[६], नववारहते असज्झाओ[७] ॥

३२०९. एक्केक्क तिन्नि वारे, छीयादि[८] हतम्मि गेण्हती[९] कालं ।
गेण्हऽसती एक्को वि हु[१०], नववारे गेण्हती ताधे[११] ॥

३२१०. पाभातियम्मि काले, संचिक्खे[१२] तिण्णि छीतरुण्णेसु[१३] ।
चोदेतऽणिट्ठ[१४] सद्दे, जदि होती कालघातो तु[१५] ॥

३२११. एवं बारसवरिसे, खरसद्देणं तु हम्मती कालो ।
भण्णति[१६] माणुसऽणिट्ठे, तिरियाणं तू पहारम्मि ॥

३२१२. 'पावासि जाइया ऊ'[१७], जदि रोविज्जाहि कालवेलम्मि ।
ताधे घेप्पयऽणागत, अध[१८] पुण रोवे[१९] पगे चेव ॥

३२१३. ताधे तु पण्णविज्जति, अध अन्न ठिया जया[२०]न 'वा एक्का'[२१] ।
ताधे उग्घाडेज्जति, अध पुण बालं रुवेज्जासि[२२] ॥

३२१४. वीसरसरं[२३] रुवंते[२४], अव्वत्तगडिंभगम्मि[२५] मा गिण्हे ।
अप्पेण वि विरसेणं, महल्लचेडं तु उवहणती[२६] ॥

३२१५. गोसे य पट्ठवेंते[२७], छीते छीते तु तिन्नि वारा उ ।
आइण्ण पिसिय महियादि पेहणट्ठा दिसा पेहे[२८] ॥

---

१. X (ब) ।
२. ० तम्मि (स) ।
३. दोण्णे वा (ब) ।
४. उग्गहितट्ठिता (अ), ० हितट्ठया (स) ।
५. ० मई (ब) ।
६. एगो (अ) ।
७. निभा ६१५६ ।
८. छीता वि (अ) ।
९. गेण्हए (ब) ।
१०. उ (स) ।
११. निभा ६१५७ ।
१२. गाथायां तु सप्तमी द्वितीयार्थे (मवृ) ।
१३. छीत भिन्नेसु (ब) ।
१४. चोएऽणिट्ठ (ब), चोदेति णिट्ठ (स) ।
१५. आवनि १३९८, निभा ६१५५ ।
१६. भण्णेति (ब) ।
१७. पावासियं तु जातिं तु (ब), ० जाइयाइं (स) ।
१८. अह (अ) ।
१९. रोए (अ), रोधे (स) ।
२०. जहा (ब) ।
२१. टाएज्जा (अ, ब) ।
२२. भवेज्जासि (अ), ० ज्जासी (ब) ।
२३. वीसरसद्द (निभा) ।
२४. भवंत (ब) ।
२५. ० डिम्भग ० (अ) ।
२६. निभा ६१५९ ।
२७. पट्ठवेंति (ब) ।
२८. पेहा (ब), निभा ६१६० ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३२१६. सेज्जातर-सेज्जादिसु[१], छारादिट्ठाय[२] विसिउ पेहेंति[३] ।
तिण्ह[४] परेणऽण्णत्थ उ, तत्थ जई[५] तिण्णिवारा उ ॥

३२१७. ताधे पुणो वि अण्णत्थ, गंतुं तत्थ वि य तिन्नि वारा तु ।
एवं नववारहते, ताधे पढमाएँ न पढंति[६] ॥

३२१८. पट्ठवितम्मि सिलोगे, घाणालोगा य[७] वज्जणिज्जा उ ।
सोणिययचिरिक्काणं[८], मुत्तपुरीसाण तह चेव[९] ॥

३२१९. आलोगम्मि चिलिमिणी[१०], गंधे अन्नत्थ गंतु[११] पगरेंति[१२] ।
एसो तू सज्झाओ, तव्विवरीलो असज्झाओ[१३] ॥

३२२०. एतेसामण्णतरे, असज्झाए[१४] जो करेति[१५] सज्झायं ।
सो आणाअणवत्थं, मिच्छत्तविराधणं पावे[१६] ॥नि. ४२० ॥

३२२१. बितियागाढे सागारियादि कालगत असति[१७] वुच्छेदे ।
एतेहि कारणेहिं, जतणाए कप्पती काउं ॥

३२२२. अच्चाउलाण निच्चोउलाण[१८] मा होज्ज निच्चऽसज्झाओ ।
अरिसा[१९] भगंदलादिसु[२०], इति वायण सुत्तसंबंधो[२१] ॥

३२२३. आतसमुत्थमसज्झाइयं तु एगविध होति दुविधं वा ।
एगविहं समणाणं, दुविधं पुण होति समणीणं[२२] ॥

३२२४. धोतम्मि य[२३] निप्पगले, बंधा तिण्णेव होंति उक्कोसा[२४] ।
परिगलमाणे जतणा, दुविहम्मि य होति कायव्वा[२५] ॥

३२२५. समणो तु 'वणे व'[२६] 'भगंदले व'[२७] 'बंधेक्कगा उ वाएति'[२८] ।
तह वि गलंते छारं, छोढुं[२९] 'दो तिण्णि'[३०] 'बंधा उ'[३१] ॥

---

१. ० ज्जातीसु (ब) ।
२. छारादट्ठाय (अ) ।
३. पेहेति (अ) ।
४. तिण्णि (अ) ।
५. वि ति (अ, स) ।
६. पढेति (ब) ।
७. उ (स) ।
८. सोणियवच्चिक्काणं (अ, स) ।
९. निभा (६१६१) और आवनि (१४००) में इसकी संवादी गाथा निम्न प्रकार से मिलती है—
पट्ठवितम्मि सिलोगे, छीए पडिलेह तिन्नि अण्णत्थ ।
सोणियमुत्तपुरीसे, घाणालोगं परिहरेज्जा ॥
१०. वि चिलिमिणि (अ), ० मिली (निभा) ।
११. तं तु (अ, स) ।
१२. पकरेंति (ब) ।
१३. निभा (६१६२) एवं आवनि (१४०१) में इसका उत्तरार्ध इस प्रकार है—वाघाइमकालम्मी, गंडगमरुगा नवरि नत्थि ॥
१४. असज्झाते (निभा) ।
१५. करेंति (ब) ।
१६. निभा ६१६३, आवनि १४०२ ।
१७. अहव (निभा ६१६४) ।
१८. निच्चोउल्लाण (ब) । १९. अदिसा (निभा) ।
२०. ० दरादिसु (मु) । २१. निभा ६१६५ ।
२२. निभा ६१६६, आवनि १४०३ ।
२३. उ (आवनि १४०४) ।
२४. ० कोसं (आवनि) ।
२५. निभा ६१६७ ।
२६. वणिव्व (आवनि १४०५) ।
२७. भंगदरिव्व (आवनि), ० दलेवं (ब) ।
२८. बंधं करित्तु वाएति (आवनि) ।
२९. दाउं (आवनि, निभा ६१६८) ।
३०. इति दोण्णि (स) ।
३१. वा बंधे (निभा) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३२२६. जाधे तिन्नि विभिन्ना, ताधे हत्थसय बाहिरा धोउं ।
बंधितु पुणो वि वाए, गंतुं अण्णत्थ व[1] पढंति[2] ॥

३२२७. एमेव य समणीणं, वणम्मि इतरम्मि सत्तबंधा उ ।
तध वि य[3] अठायमाणो, धोऊणं[4] अहव अन्नत्थ[5] ॥

३२२८. एतेसामण्णतरे, असज्झाएँ अप्पणो 'उ सज्झायं'[6] ।
जो कुणति[7] अजयणाए, सो पावति आणमादीणि[8] ॥नि. ४२१ ॥

३२२९. सुतनाणम्मि अभत्ती[9], लोगविरुद्धं पमत्तछलणा य ।
विज्जासाहण वइगुण्णधम्मयाए य मा कुणसु[10] ॥

३२३०. चोदेती[11] जदि एवं, सोणियमादीहि होतऽसज्झाओ ।
तो भरितो च्चिय देहो, एतेसिं[12] किह णु कायव्वं ॥

३२३१. 'कामं भरितो तेसिं'[13], दंतादी अवजुया तध विवज्जा ।
'अणवजुता उ अवज्जा'[14], लोए तह उत्तरे चेव[15] ॥

३२३२. अब्भितरमललित्तो[16], वि कुणति 'देवाण अच्चणं'[17]लोए ।
बाहिरमललित्तो पुण, ण कुणति अवणेति[18] च ततो णं[19] ॥

३२३३. आउट्टियावराहं, सन्निहिता न खमए जधा पडिमा ।
इय परलोमे दंडो, पमत्तछलणा 'इह सिया उ'[20] ॥

३२३४. 'रागा दोसा मोहा'[21], असज्झाएँ जो करेति[22] सज्झायं ।
आसायणा व[23] का से, को वा भणितो अणायारो[24] ॥नि. ४२२ ॥

३२३५. गणिसद्दमादिमहितो, रागे दोसम्मि न सहते[25] सद्दं ।
सव्वमसज्झायमयं, एमादी होति मोहो तु ॥

---

१. व्व (स) ।
२. निशीथ चूर्णि में इस गाथा का भाव ६१६८ वाली गाथा में मिलता है किन्तु गाथा नहीं मिलती है ।
३. उ (स) ।
४. धोएउं (आवनि १४०६) ।
५. निभा ६१६९ ।
६. असज्झायं (स) ।
७. ऊणति (ब) ।
८. निभा ६१७०, आवनि १४०७ ।
९. य भत्ती (निभा) ।
१०. निभा ६१७१, आवनि १४०८ ।
११. वेदेति (अ), चोदेति (स) ।
१२. एतेहिं (स) ।
१३. कामं देहावयवा (निभा, आवनि) ।
१४. अणवज्जुया न वज्जा (आवनि), ० उ न वज्जा (निभा) ।
१५. तु. निभा ६१७२, आवनि १४०९ ।
१६. अब्भंतर ० (अ निभा ६१७३) ।
१७. देवाणमच्चणं (अ) ।
१८. अवणाति (स) ।
१९. आवनि १४१० ।
२०. य इति आणा (निभा ६१७४), आवनि १४११ ।
२१. रागेण व दोसेण व (आवनि १४१२) ।
२२. करेज्ज (निभा) ।
२३. तु (निभा) ।
२४. निभा ६१७५ ।
२५. सहती (निभा ६१७६), आवनि १४१३ । ३२३३-३५ तक की तीन गाथाएं ब प्रति में नहीं है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३२३६. उम्मायं च लभेज्जा, रोगातंकं च[1] पाउणे दीहं ।
तित्थगरभासिताओ, 'भस्सति सो संजमातो वा'[2] ॥

३२३७. इहलोए फलमेयं, परलोएँ फलं न देंति विज्जाओ ।
आसायणा सुतस्स उ[3], कुव्वंति दीहं च[4] संसारं[5] ॥दारं ॥

३२३८. नाणायार विराहितों, दंसणायार तहा चरित्तं च ।
चरणविराधणताए, मोक्खाभावो मुणेयव्वो ॥नि. ४२३ ॥

३२३९. बितियागाढे सागारियादि[6] कालगत असति[7] वुच्छेदे[8] ।
एतेहिं[9] कारणेहिं, 'जतणाए कप्पती काउं'[10] ॥

३२४०. संगहमादीणट्ठाय[11], वायणं देति अन्नमन्नस्स ।
अयमवि य संगहो च्चिय, दुविधदिसा सुत्तसंबंधो ॥

३२४१. ततियम्मि उ उद्देसे, दिसासु जो गणधरो समक्खातो ।
सो चेव य होति इहं, परियाओ वण्णितो नवरं ॥

३२४२. तेवरिस[12] तीसियाए[13], जम्मण चत्ताय कप्पति उवज्झो[14] ।
बितियाय सट्ठि-सतरी,-य जम्म पणवास आयरिओ ॥

३२४३. गीताऽगीता[15] 'वुड्ढा, अवुड्ढा'[16] व जाव तीसपरियागा ।
अरिहंति[17] तिसंगहं सा, दुसंगहं वा भयपरेणं ॥

३२४४. वयपरिणता य[18] गीता[19], बहुपरिवारा य निव्वियारा य ।
होज्जउ अणुवज्झाया, अपवत्तिणि[20] यावि[21] जा सट्ठी ॥

३२४५. एमेव अणायरिया, थेरी गणिणी व होज्ज इतरा[22] य ।
कालगतो सण्णाय[23] व, दिसाएँ धारेंति पुव्वदिसं ॥

३२४६. बहुपच्चवाय अज्जा[24], नियमा पुणऽसंगहे य परिभूता ।
संगहिता पुण अज्जा, थिरथावरसंजमा होति ॥

---

१. व (आवनि १४१४)।
२. खिप्पं धम्माओ भसेज्जा (निभा ६१७७)।
३. य (स, निभा ६१७८)।
४. व (ब), तु (अ, स, निभा)।
५. आवनि १४१५।
६. ० यादि तं (अ)।
७. सति (अ)।
८. वुच्छेउ (ब)।
९. एतेसि (अपा)।
१०. कप्पति जयणाए काउं जे (निभा ६१७९)।
११. ० णट्ठा तु (अ, स), ० णट्ठा (ब)।
१२. ० रिसा (स)।
१३. वीरियाए (अ)।
१४. उवज्झा (ब)।
१५. गीतमगीया (ब)।
१६. वुड्ढिमवुड्ढि (ब, स)।
१७. अरहति (स)।
१८. तु (अ, स)।
१९. गीयत्थे (अ)।
२०. पवित्तिणी (ब)।
२१. वावि (अ)।
२२. इयरी (अ, स)।
२३. सण्णाइ (ब)।
२४. अज्जा उ (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३२४७. पेसी अइयादीया[१], जे पुव्वमुदाहडा अवाया उ ।
ते सव्वे वत्तव्वा, दुसंगहं वण्णियंतेणं ॥

३२४८. अजायविउलखंधा, लता वातेण कंपते ।
जले वाऽबंधणा णावा, उवमा एसऽसंगहे ॥

३२४९. दिट्ठंतो गुव्विणीएँ, कप्पट्ठगबोधिएहि[२] कायव्वो ।
गब्भत्थे[३] रक्खंती, सामत्थं खुड्डए अगडे ॥

३२५०. सगोत्तरायमादीसु, गब्भत्थो वि धणं सुतो ।
रक्खते मायरं चेव, किमुतो[४] जाय वड्ढितो ॥

३२५१. वणिय मएँ रायसिट्ठे, गब्भिणि[५] धणमत्थि तो[६] पसूताए ।
सव्वं सुतस्स दाहं, 'धूयाए भत्त वीवाहं'[७] ॥

३२५२. लोउत्तरिए अज्जा, खुड्डुगबोहिहरणी[८] पसरणीयं ।
चोरोतरणं कूवे, सामत्थण वारणा लेट्ठू ॥

३२५३. अतिरेगट्ठ[९] उवट्ठा, सट्ठीपरियाय सत्तरी जम्मं ।
जरपागं माणुस्सं, पडणं एक्कस्स संबंधो ॥

३२५४. तं चेव पुव्वभणितं, सुत्तनिवातो उ पंथ गामे वा[१०] ।
गामे एगमणेगा, बहू व एमेव पंथे वि[११] ॥नि. ४२४ ॥

३२५५. एगो एगो चेव तु, दुप्पभिति अणेग सत्त बहुगा वा ।
कालगत गाम पंथे, वा जाणग उज्झणविधीए ॥नि. ४२५ ॥

३२५६. चउरो वहंति एगो, कुसादि रक्खति उवस्सयं एगो ।
एगो य समुग्घातो, इति सत्तण्हं अधाकप्पो ॥

३२५७. सत्तण्हं हेट्ठेणं, अविधी तु न कप्पती[१२] विहरिउं जे[१३] ।
एगाणियस्स[१४] अविही, उ अच्छिउं गच्छिउं वावि ॥

३२५८. णेगाण विधिं वोच्छं, नातमनाते व[१५] पुव्वखेत्तम्मि ।
दिसि[१६] थंडिल झामित बिंबमादि तीसु पदेसेसु ॥

---

१. अतिया ० (अ)।
२. ० ट्ठगपोविएहि (अ)।
३. गब्भंते (ब)।
४. किमुता (ब)।
५. गब्भिणी (स)।
६. उ (ब), तू (अ, स)।
७. धूयाउ अभत्त वेवाहं (अ), धुतुअ भत्त वेवाहं (स)।
८. ० बोहिहरणं (ब)।
९. ० रेगट्ठा (अ)।
१०. वी (स)।
११. उ (स), सम्प्रति निर्युक्तिविस्तरः (मवृ)।
१२. कप्पए (ब)।
१३. जो (अ), जे इति पादपूरणे (मवृ)।
१४. एताणि ० (स)।
१५. वि (स)।
१६. दिस (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३२५९. णाते तु पुव्वदिट्ठं, तं चेव य थंडिलं हवति[1] तत्थ ।
अण्णातवेलपत्ता, सन्नादिगता[2] तु पेहेंति ॥

३२६०. अध पुण विकालपत्ताए[3], ता चेव उ करेंति उवओगं ।
अकरण[4] हवंति लहुगा, वेलं पत्ताण चउगुरुगा ॥

३२६१. आणादिणो य दोसा, कालगते संभमादिसुं होज्जा ।
अच्छंतमणच्छंता[5], विणासगरिहं[6] च पावेंति ॥नि. ४२६ ॥

३२६२. तेणग्गिसंभमादिसु[7], तप्पडिबंधेण दाह हरणं वा ।
मइलेहिं[8] व छड्डेंती, 'गरहा य'[9] अथंडिले वावि ॥

३२६३. एते दोस अपेहित, अह पुण पुव्वं तु पेहितं होंति[10] ।
ता ताहे च्चिय णिंता[11] एते दोसा न होंता य ॥

३२६४. अह पेहिते[12] वि पुव्वं[13], दिया व रातो व होज्ज वाघातो ।
सावय-तेण भया वा[14], ढक्कियं[15] ताधे य अच्छाते ॥

३२६५. असती सुक्किकल्लाणं, दिणकालगतं निसिं विवेचंति[16] ।
परिहारितं च * पच्छाकडादि कोडी दुगेणं वा[17] ॥

३२६६. असती नीणेतु निसिं, ठवेत्तु सागारिथंडिलं पेहे ।
थंडिलवाघातम्मि वि, जतणा एसेव कातव्वा ॥

३२६७. महल्लपुरगामे वा, दिसा वाडग साहिओ[18] ।
इहरा[19] दुव्विभागा[20] तु, कुग्गामे सुविभाविया ॥

३२६८. दिसा अवर दक्खिणा य, अवरा य पच्छिम दक्खिणा पुव्वं ।
अवरुत्तरा य पुव्वा, उत्तरपुव्वुत्तरा चेव ॥नि. ४२७ ॥

३२६९. समाधी अभत्तपाणे, उवगरणे[21] झायमेव[22] कलहो य ।
भेदो गेलण्णं वा, चरिमा पुण कड्ढते अण्णं ॥नि. ४२८ ॥

---

१. भवे त्ति (स) ।
२. सन्नाति गता ० (ब) ।
३. ० पत्ताइं (ब) ।
४. करणे (अ) ।
५. ० मपेच्छता (स) ।
६. ० गरहं (अ) ।
७. ० मातिसु (ब) ।
८. मतिलेहि (ब) ।
९. गरिहादि (अ) ।
१०. होंतं (स) ।
११. णिंतो (ब) ।
१२. पेभिते (ब) ।
१३. पुव्वि (स) ।
१४. व (स) ।
१५. ढक्किता (अ, स) ।
१६. विगिंचंति (अ) ।
१७. व (अ) ।
१८. साहीतो (अ) ।
१९. इतरा (ब), इयरा (स) ।
२०. ० भागं (अ), दुव्विहारा (स) ।
२१. उवकरण (ब, स) ।
२२. झाएमेव (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३२७०. पउरण्णपाण पढमा[1], बितियाए भत्तपाण न लभंति ।
तितियाएँ उवधिमादी, नत्थि चउत्थीय सज्झाओ ॥

३२७१. 'पंचमियाय असंखड'[2], छट्ठीय गणस्स भेदणं नियमा ।
सत्तमिया[3] गेलण्णं, मरणं पुण अट्ठमी बेंति[4] ॥

३२७२. रत्ति दिसा थंडिल्ले, सिल[5] बिंबा[6] झामिते य उस्सण्णे ।
छेत्त[7] विभत्ती, सीमा, सीताणे चेव ववहारो ॥नि. ४२९ ॥

३२७३. लभमाणे[8] वा पढमाए, असतीए वाघाते वा ।
ताहे अन्नाए वि, दिसाए पेहेज्ज जयणाए ॥दारं ॥

३२७४. सिलायलं पसत्थं तु, रुक्खवुत्थादि[9] फासुयं ।
झामं 'थंडिलमादी व'[10] बिंबादीण समीव वा ॥

३२७५. उस्सण्णा[11] तिन्नि[12] कप्पा उ, होंति खेत्तेसु केसुई[13] ।
अथंडिला[14] दिसासुं वा, ते वि जाणेज्ज पण्णवं ॥

३२७६. खेत्त विभत्ते गामे, रायभए वा अदेंत सीमाए ।
भोइयमादी पुच्छा, रायपधे सीममज्झे वा ॥

३२७७. 'असतीए सीयाणे'[15], रुंभण अन्नत्थ अपरिभोगम्मि ।
असती अणुसट्ठादी, णंतग अंताइ[16] इतरे वा ॥

३२७८. अदसाइ अणिच्छंते, साधारणवयण[17] दार मोत्तूणं ।
सति लंभमुवारुहणं[18], सव्वे व विगिंचणा[19] लंभे ॥

३२७९. सीताणस्स वि असती, 'अलंभमाणे वि'[20] उवरि कायाणं ।
निसिरंता जतणाए, धम्मादि[21] पदेसनिस्साए ॥

३२८०. एस सत्तण्ह मज्जाया, ततो वा जे परेण तु ।
हेट्ठा सत्तण्ह थोवा उ, तेसिं वोच्छामि जो[22] विधी ॥नि. ४३० ॥

---

१. पढमा इत्यत्र प्राकृतत्वात् सप्तम्या लोपस्ततः प्रथमायां (मवृ) ।
२. ० याए संखड (ब) ।
३. ० मिए (स) ।
४. बेति (अ) ।
५. सिला (अ, स) ।
६. बिंबा य (स) ।
७. छेत्ता (ब) ।
८. गाथायां पुंस्त्वं प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
९. रुक्खवुच्छादि (अ), ० वच्छादि (ब) ।
१०. ० मादिच्च (ब), ० मादिं व (स) ।
११. अस्सण्णा (अ) ।
१२. दिण्ण (अ) ।
१३. केसुती (ब, स) ।
१४. ~अत्थंडिला (अ) ।
१५. असत्तीय तु संताणे (स) ।
१६. अंताय (ब) ।
१७. ० गमण (स) ।
१८. लंभमहाभवणं (ब), लंभमुधारु ० (स) ।
१९. विविं० (ब, स) ।
२०. ० माणा (स) ।
२१. सुद्धादि (स) ।
२२. जा (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३२८१. पंचण्ह दोन्नि[1] हारा[2], भयणा आरेण पालहारेसु ।
ते चेव य कुसपडिमा, नयंति हारावहारो वा ॥नि. ४३१ ॥

३२८२. एक्को व दो व उवधिं, रत्तिं वेहास दिय असुण्णम्मि ।
एक्कस्स वि तह चेवा, छड्डुण गुरुगा य आणादी ॥नि. ४३२ ॥

३२८३. गिहि-गोण-मल्ल-राउल, निवेदणा पाण कड्डणुड्डाहो ।
छक्कायाण विराधण, झामण[3] सुक्खे[4] य वावन्ने ॥

३२८४. तम्हा 'उ विहि'[5] तं[6] चेव[7], वोढुं जे जइ पच्चला ।
नयंति दो वि निद्दोच्चे, सद्दोच्चे ठावए[8] निसिं ॥

३२८५. अह गंतुमणा चेव, तो नयंति ततो[9] च्चिय ।
ओलोयणमकुव्वंतो, असढो तत्थ सुज्झए ॥

३२८६. छड्डेउं जइ जंती, नायमनाता य नाएँ[10] परलिंगं ।
जदि कुव्वंती[11] गुरुगा, आणादी भिक्खु[12] दिट्ठंतो ॥

३२८७. अचियत्तमादि वोच्छेयमादि दोसा उ होंति परलिंगे ।
अण्णात ओहि काले, अकते गुरुगा य मिच्छत्तं ॥

३२८८. एगाणिओ उ जाधे, न तरेज्ज विविंचिउं[13] तयं सो उ ।
ताधे य विमग्गेज्जा[14], इमेण विधिणा सहाए तु ॥

३२८९. संविग्गमसंविग्गे, सारूविय सिद्धपुत्त सण्णी य ।
सग्गामम्मि य पुव्वं[15], 'सग्गामे असति'[16] परगामे ॥

३२९०. अप्पाहेति सयं वा, वि गच्छती तत्थ ठाविया अण्णं ।
असती निरच्चए वा, काउं ताहे व वच्चेज्जा ॥

३२९१. संविग्गादी[17] ते च्चिय, असतीए ताधें इत्थिवग्गेणं ।
सिद्धी साविग[18] संजति, किढि[19] मज्झिमकाय तुल्ला वा ॥

---

१. दो तिन्नि (ब), दोण्ह (अ) ।
२. हार (अ) ।
३. भावण (अ) ।
४. सुक्के (ब) ।
५. उवधिं (स), उ विहिं (अ) ।
६. ते (ब) ।
७. चेवा (ब) ।
८. ट्ठावए (स) ।
९. ते (ब) ।
१०. नाती (अ) ।
११. कुव्वंति (अ) ।
१२. भिच्छु (स) ।
१३. विकिंचिउं (स) ।
१४. ० ज्ज (स) ।
१५. पुव्विं (स) ।
१६. सग्गाम सती (अ, स) ।
१७. संविग्गाति (ब) ।
१८. सावग (ब) ।
१९. कढि (अ, स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३२९२. गण[1] भोइए[2] वि जुंगित, संबरमादी मुधा अणिच्छंते ।
अणुसट्ठिं[3] अदसाइं[4], तेहि समं तो विगिंचेइ[5] ॥

३२९३. 'अह रुंभेज्ज'[6] दारट्ठो[7], मुल्लं दाऊण णीणह[8] ।
अणुसट्ठादि तहिं[9] पि[10], अण्णो वा भणती[11] जदि ॥

३२९४. मुंच दाहामहं मुल्लं, उवेहं तत्थ कुव्वती ।
अदसादीणि वा देती, सती[12] साधारणं वदे ॥

३२९५. जदि लब्भामु आणेमो[13], अलद्धे तं वियाणओ ।
सो वि लोगरवाभीतो, मुंचते दारपालओ ॥

३२९६. अण्णाए वावि परलिंगं, जतणाएँ काउं[14] वच्चती ।
उवयोगट्ठा नाऊणं, एस विधी असहायए ॥

३२९७. एतेण सुत्त 'न गयं[15], सुत्तनिवातो उ पंथ गामे[16] वा ।
एगो व अणेगो वा, हवेज्ज वीसुंभिता भिक्खू ॥

३२९८. एगाणियं तु गामे, दट्ठुं सोउं विगिंचण[17] तधेव ।
जा दाररुंभणं तू, एसो गामे विधी वुत्तो ॥

३२९९. एमेव य 'पंथम्मि वि'[18], एगमणेगे विगिंचणा विधिणा ।
एत्थं जो उ विसेसो, तमहं वोच्छं समासेणं ॥

३३००. एगो[19] एगं पासति, एगो णेगे अणेग एगं वा ।
णेगाऽणेगे ते पुण, संविग्गितरेव जे दिट्ठा ॥

३३०१. वीतिक्कंते भिन्ने, नियट्ट सोऊण पंच वि पयाइं ।
मिच्छत्त अन्नपंथेण, कड्ढणा झामणा जं च ॥नि. ४३३ ॥

३३०२. तं जीवातिक्कंतं, भिन्नं कुहितेयरं व सोऊणं ।
'एगपयं पि'[20] नियत्ते, गुरुगा उम्मग्गमादी वा ॥

---

१. गणि (ब)।
२. भोतिए (ब)।
३. ० सट्ठी (स)।
४. अदसादी (ब, स)।
५. विगिंचिंति (ब), विगिंचति तु (स)।
६. अभिरुंभिज्ज (अ)।
७. दारिट्ठो (अ, स)।
८. णीणेमो (ब), णीणेध (अ)।
९. तहियं (ब, स)।
१०. पी (स)।
११. भवति (ब), भणति (स)।
१२. असती (स)।
१३. अण्णेमो (ब)।
१४. काउ (स)।
१५. निग्गयं (स)।
१६. गामं (स)।
१७. विधिंचण (स)।
१८. ० म्मी (स)।
१९. एगं (अ, स)।
२०. ० पयम्मि (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३०३. आणादी पंचपदे[1], नियत्तणे[2] पावए इमे वन्ने ।
मिच्छत्तादी व पदे, कमविक्खेवा व जे पंच ॥दारं ॥**नि. ४३४** ॥

३३०४. गोणादि 'जत्तियाओ व'[3], पाणजाती उ[4] तत्थ मुच्छंति[5] ।
आगंतुगा व पाणा, जं पावंते[6] तयं पावे ॥

३३०५. दट्ठुं वा सोउं वा, अव्वावण्णं विविंचए विधिणा ।
वावण्णे परलिंगे[7], उवधी णातो अणातो वा ॥

३३०६. मा णं पेच्छंतु[8] बहू, इति नाते वी करेति[9] परलिंगं ।
गहितम्मि व[10] उवगरणे, परलिंगं चेव तं होति[11] ॥

३३०७. सागारकडे एक्को, मणुण्ण दिण्णोग्गहो[12] भवे बितिओ ।
अमणुण्णे अप्पिणती[13], न गेण्हती दिज्जमाणं पि ॥

३३०८. इतरेसिं घेत्तूणं[14], एगंत परिट्ठवेज्ज विधिणा उ ।
अण्णाते संविग्गो, विधिम्मि कुज्जा उ घोसणयं ॥

३३०९. 'उग्गह एव'[15] अधिकितो, इमेसु[16] सुत्ता उ उग्गहे चेव ।
साधम्मिय सागारिय, • नाणत्तमिणं दुवेण्हं पि ॥

३३१०. वक्कइय सालठाणे, चउरो मासा हवंतऽणुग्घाता[17] ।
दिय रातो असियावण[18], भिक्खगते भुंजण गिलाणे ॥

३३११. उव्वरियगिह[19] वावि, वक्कएण पउंजते ।
पउत्ते तत्थ वाघातो, विणास-गरहा[20] धुवा ॥

३३१२. एगदेसम्मि 'वा दिन्ने'[21], तन्निसा होज्ज तेणगा ।
रसालदव्वगिद्धा वा[22], सेहमादी उ जं करे ॥

३३१३. पेहा वियार-झायादी[23], जे उ दोसा उदाहिता[24] ।
अच्छंते ते भवे तत्थ, वयए[25] भिण्णकप्पता ॥

---

१. X (ब) ।
२. ० त्तणे वा (अ) ।
३. जत्तिया चेव (ब) ।
४. X (ब) ।
५. मुच्छति (ब) ।
६. पावेते (अ) ।
७. ० लिंगं (स) ।
८. पेच्छंति (अ), पेच्छंत (स) ।
९. करेती (स) ।
१०. वि
११. होंति (ब) ।
१२. दिण्ण उग्गहो (ब) ।
१३. अप्पिणतो (ब) ।
१४. घित्तूणं (ब) ।
१५. उग्गहए वि (स) ।
१६. इमे उ (ब) ।
१७. हवंति णु ० (स) ।
१८. अशिवापनं विनाशप्राप्तिरित्यर्थः (मवृ) ।
१९. ० रियघरं (स) ।
२०. गरिहा (अ, ब) ।
२१. वावण्णे (स) ।
२२. ता (ब) ।
२३. झायतो (ब) ।
२४. अभिहिता (मवृ) ।
२५. व वए (अ), वए (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३१४. भिक्खं गतेसु वा तेसु, वक्कई[१] बेति णीहमे[२] ।
णीणिते वावि पाले[३] णं[४], उवधिस्सासियावणा[५] ॥

३३१५. अधवा भरियभाणा[६] उ, आगते जदि निच्छुभे ।
भत्तपाणविणासो उ, भुंजएसागए[७] इमे ॥

३३१६. जिता[८] अट्ठि सरक्खा वि, लोगो सव्वो वि बोट्टितो[९] ।
पगासिते य अन्नेसिं[१०], हीला होति पवयणे ॥

३३१७. सीतवाताभितावेहि, गिलाणो जं तु पावती ।
अमंगलं[११] भउक्खित्ते, ठाणमन्नो वि नो दए ॥

३३१८. गहिउत्थाणरोगेणं, अच्छंते नीणितम्मि वा ।
वोसरितम्मि उड्डाहो, धरणे वातविराधणा ॥

३३१९. एते दोसा जम्हा, तहियं 'होंति उ ठायमाणाणं'[१२] ।
तम्हा न ठाइयव्वं, वक्कयसालाएँ[१३] समणेहिं ॥

३३२०. एयं सुत्तं अफलं, सुत्तनिवातो उ[१४] असति वसधीए ।
बहिया वि य असिवादी, तु कारणे तो न वच्चंती ॥

३३२१. एतेहि कारणेहिं, ठायंताणं इमो विधी तत्थ ।
छिंदंति तत्थ कालं, उडुबद्धे[१५] वासवासे वा ॥

३३२२. मासचउमासियं वा, 'न निच्छोढेव्व'[१६] उ अम्ह नियमेण ।
एवं छिन्नठिताणं, वक्कइओ आगतो होज्जा ॥

३३२३. दिन्ना 'वा चुणएणं'[१७], अहवा लोभा सयं पि देज्जाहि[१८] ।
अणुलोमिज्जति ताधे, अदेंति[१९] अणुलोमवक्कइयं ॥

३३२४. तम्मि वि अदेंत ताधे, छिन्नमछिन्ने व नेंति उडुबद्धे ।
वासासु ववहारो, उडुबद्धे[२०] कारणज्जाते ॥

३३२५. किं पुण कारणजातं, असिवोमादी उ बाहि होज्जाहि ।
एतेहि कारणेहिं, अणुलोमऽणुसट्ठिपुव्वं[२१] तु ॥

---

१. वतिक्कती (ब) ।
२. णीधमे (अ, ब) ।
३. वाले (ब) ।
४. णमिति वाक्यालंकारे (मवृ) ।
५. ० सिवावणा (अ) ।
६. ० भाणे (ब) ।
७. भुंज्जते ० (स), भुञ्जानेसु समागतः (मवृ) ।
८. ठिता (स) ।
९. पोट्टितो (स, अ) ।
१०. अन्नेहिं (अ) ।
११. अमंगल (अ, स) ।
१२. होंतो य ठायमाणेणं (ब) ।
१३. वक्या ० (स) ।
१४. य (ब) ।
१५. उउ० (अ) ।
१६. न वि णिच्छोढेव्वा (ब) ।
१७. व चूणएणं (ब), विधूणएणं (स) ।
१८. देज्जाहि (ब) ।
१९. अदेंत (अ) ।
२०. वडुबद्धे (ब) ।
२१. ० पुव्वि (ब, स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३२६. सइं[१] जंपंति रायाणो, सइं[२] जंपंति धम्मिया ।
सइं[३] जंपंति देवावि, तं पि ताव सइं[४] वदे[५] ॥

३३२७. अणुलोमिए समाणे, तं वा अन्नं वसहिं[६] उ देज्जाहि ।
अण्णो वणुकंपाए, देज्जाही वक्कयं[७] तस्स ॥

३३२८. अन्नं व देज्ज वसधिं, सुद्धमसुद्धं च तत्थ ठायंति ।
असती फरुसाविज्जति[८], न नीमु[९] दाऊण को तंसि ॥

३३२९. रायकुले ववहारो, चाउम्मासं तु दाउ निच्छुभती ।
पच्छाकडो[१०] य तहियं, दाऊणमणीसरो होति ॥

३३३०. पच्छाकडो भणेज्जा, अच्छउ भंडं इहं निवायम्मि ।
अहयं करेमि अण्णं, तुब्भं अहवा वि तेसिं तु ॥

३३३१. असती अण्णाते ऊ[११], तार्धे उवेहा[१२] न पच्चणीयत्तं[१३] ।
ठायंति तत्थ जंपति, चोदग कम्मादि तहिं दोसा ॥

३३३२. भण्णति णिताण तहिं, बहिया दोसा तु बहुतरा होंति ।
वासासु हरित • पाणा, संजमआताय कंटादी[१४] ॥

३३३३. सो चेव य होइ तरो, तेसिं ठाणं तु मोत्तु जदि दिन्नं[१५] ।
अह पुण सव्वं दिन्नं, [१६] तो णीणह[१७] वक्कती उ तरो[१८] ॥

३३३४. अह पुण एगपदेसे, भणेज्ज अच्छह तहिं न मायंति ।
वक्कइय बेति[१९] इत्थं[२०], अच्छह नो[२१] खित्त[२२] भंडेणं ॥

३३३५. तहियं दो वि तरा तू, अहवा गेण्हेज्जऽणागतं[२३] कोई[२४] ।
दुल्लभ अच्चग्घतरं[२५], नातु तहिं संकमति तस्स ॥

३३३६. जाव नागच्छते भंडं, ताव अच्छह साहुणो[२६] ।
एवं वक्कइतो साधू, भणंतो होति सारिओ ॥

१-४. सगि (अ, स) ।
५. वदा (ब) ।
६. वसति (अ) ।
७. यक्कयं (ब) ।
८. परु ० (अ) ।
९. नीणिमो (अ) ।
१०. ० कडा (ब) ।
११. जं (ब), तु (स) ।
१२. उवेह (स) ।
१३. पच्चयनिमित्तं (अ, स) ।
१४. कंटाती (ब) ।
१५. दिन्ने (ब) ।
१६. ता देंतो (स) ।
१७. टीका की मुद्रित प्रति एवं हस्तप्रतियों में णीणह शब्द नहीं मिलता है किन्तु टीका की व्याख्या के अनुसार तथा छंद की दृष्टि से यह शब्द यहां होना चाहिए ।
१८. इतरो (अ) ।
१९. बेंति (ब) ।
२०. तत्थ (ब) ।
२१. तो (ब) ।
२२. खिण्णे (अ) ।
२३. ० गइं (ब) ।
२४. कोवी (ब) ।
२५. ० तरे (स) ।
२६. साहवो (अ, स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३३७. देसं दाऊण गते[१], गलमाणं जदि छएज्ज वक्कइओ[२] ।
अण्णो वणुकंपाए[३], ताधे सागारिओ सो सिं[४] ॥

३३३८. मोत्तूणं साधूणं, गहितो पुण वक्कओ पउत्थम्मि ।
हेट्ठा उवरिम्मि[५] ठिते, मीसम्मि पडालि ववहारो ॥

३३३९. हेट्ठाकतं वक्कइएण भंडं, तस्सोवरिं वावि वसंति साधू ।
भंडं ण मे उल्लइ मालबद्धे, नो तं छयंतम्मि भवे विवाओ ॥

३३४०. वक्कइय छएयव्वे[६], ववहारकतम्मि वक्कयं[७] बेंति ।
अकतम्मि उ साधीणं, बेंति[८] तरं दाइयं वावि ॥

३३४१. अच्छयंते[९] व दाऊणं, सयं सेज्जातरे घरं ।
अणुसट्ठादि[१०] ऽणिच्छंतं, ववहारेण छावए ॥

३३४२. एसेव कमो नियमा, कइयम्मि[११] वि होति[१२] आणुपुव्वीए ।
नवरं पुण णाणत्तं, उच्चत्ता गेण्हती सो उ ॥

३३४३. सागारिय अहिगारे, अणुवत्तंतम्मि कोइ सो होति ।
संदिट्ठो व[१३] पभू वा, विधवा सुत्तस्स संबंधो ॥

३३४४. विगयधवा खलु विधवा, धवं तु भत्तारमाहु नेरुत्ता ।
धारयति[१४] धीयते[१५] वा, दधाति वा तेण तु धवो त्ति ॥

३३४५. विधवा वणुण्णविज्जति, किं पुण पिय-मात[१६]-भात-पुत्तादी ।
सो पुण पभु वऽपभू वा, अपभू पुण तत्थिमे होंति ॥

३३४६. आदेस-दास-भइए, विरिक्क जामातिए[१७] 'य दिण्णा' उ[१८] ।
अस्सामि मास लहुओ, सेस पभूऽणुग्गहेणं वा[१९] ॥नि. ४३५ ॥

३३४७. दिय रातो निच्छुभणा, अप्पभुदोसा अदिण्णदाणं च ।
तम्हा उ अणुन्नवए, पभुं च पभुणा व संदिट्ठं ॥

३३४८. गहपति गिहवतिणी[२०] वा, अविभत्तसुतो अदिन्नकण्णा वा ।
पभवति निसिट्ठविहवा[२१], आदिट्ठे वा सयं दाउं ॥

---

१. गतं (अ)।
२. वक्कतितो (ब)।
३. ०कंपाहे (ब)।
४. मिं (स)।
५. उवरिं व (स)।
६. छतेयव्वे (अ)।
७. वक्कइ (अ, स)।
८. टंति (स)।
९. अच्छएत्ते (ब), अच्छएंते (अ)।
१०. ० सट्ठादी (ब, स)।
११. कतियम्मि (ब)।
१२. होंति (ब)।
१३. वि (अ)।
१४. धारयिति (ब)।
१५. धीवते (स)।
१६. माइ (अ)।
१७. जामादिए (ब)।
१८. दिण्णातो (ब)।
१९. निर्युक्तिकृदाह (मवृ)।
२०. ० वतिणि (ब)।
२१. निसद्ध ० (ब), निसट्ठ ० (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३४९. उग्गहपभुम्मि दिट्ठे, कहितं पुण सो[1] अणुण्णवेतव्वो ।
अद्धाणादीएसु वि, संभावण सुत्तसंबंधो ॥

३३५०. अद्धाण पुव्वभणितं, सागारियमग्गणा इहं सुत्ते ।
एगेण परिग्गहिते, सागारिय सेसए भयणा ॥

३३५१. दिणे दिणे जस्स उवल्लियंती[2], भंडी वहंते व पडालियं वा ।
सागारिए होति स एग एव[3], रीढागतेसुं[4] तु जहिं वसंति ॥

३३५२. 'वीसमंता वि'[5] छायाए, जं तहिं पढमं ठिया ।
चिट्ठंति पुच्छिउं ते वि, 'पंथिए किं'[6] जहिं वसे ॥

३३५३. वसंति[7] व[8] जहिं रत्तिं, एगाऽणेगपरिग्गहे ।
तत्तिएँ तु तरे कुज्जा, ठावंतेगमसंथरे[9] ॥

३३५४. सागारिय[10] साधम्मिय, उग्गहगहणेऽणुवत्तमाणम्मि ।
सत्तम अंतिमसुत्तं, ठवंति[11] राउग्गहे थेरा ॥

३३५५. संथड[12] मो[13] अविलुत्तं[14], पडिवक्खो वा न विज्जते[15] तस्स[16] ।
अणहिट्ठियमन्नेण[17] व, अव्वोगड दाइ[18] सामन्नं ॥

३३५६. अव्वोगडं अविगडं, संदिट्ठं वा वि जं हवेज्जाहि ।
अव्वोच्छिन्न परंपरमागय तस्सेव वंसस्स ॥

३३५७. पुव्वाणुण्णा जा[19] पुव्वएहि राईहि इह अणुण्णाता ।
लंदो[20] तु होति कालो, चिट्ठति जावुग्गहो तेसिं ॥

३३५८. जं पुण असंथडं वा, गडं[21] व तह वोगडं व वोच्छिण्णं ।
नंदमुरियाण[22] व जधा, वोच्छिन्नो जत्थ वंसो उ ॥

३३५९. तत्थ उ अणुण्णविज्जति[23], भिक्खुब्भावट्ठमुग्गहो[24] नियतं ।
दिक्खादि भिक्खुभावो, अधवा ततियव्वयादी तु ॥

---

१. णो (ब) ।
२. उवणियंती (ब), उवल्लयंती (स) ।
३. एवं (अ) ।
४. राढाग ० (ब) ।
५. वीसमणादि (स) ।
६. पत्थिए किमु (अ, स) ।
७. वसति (ब) ।
८. वा (स) ।
९. ठावंतिग ० (ब) ।
१०. ० रिय (ब) ।
११. ठवेति (अ) ।
१२. थंडिल (अ) ।
१३. मो इति पादपूरणे (मवृ) ।
१४. अविसुत्तं (ब) ।
१५. विज्जति (स) ।
१६. जस्स (अ) ।
१७. अणहिट्ठय० (ब) ।
१८. दासू (ब) ।
१९. जे (स) ।
२०. लंदा (ब) ।
२१. घरं (स) ।
२२. नंदिमु ० (स) ।
२३. अणण्ण० (ब) ।
२४. ०वट्ठ उग्गहो (ब), ० वट्ठ उग्गहं (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३६०. रण्णो कालगतम्मी, अत्थिरगुरुगा अणुण्णवेंतम्मि ।
आणादिणो य दोसा, विराधण[1] इमेसु ठाणेसु[2] ॥नि. ४३६॥

३३६१. धुवमण्णे तस्स मज्झे व, तह एक्केव मुक्कसन्नाहो ।
दोण्हेगतरपदोसे[3], अणणुण्णवणे थिरे गुरुगा ॥नि. ४३७॥

३३६२. अणणुण्णविते दोसा, पच्छा वा अप्पितो अवण्णा वा ।
पत्ते पुव्वममंगल, निच्छुभण पदोस पत्थारो ॥

३३६३. ओधादी आभोगण, निमित्तविसएण[4] वावि नाऊणं ।
भद्दगपुव्वमणुण्णा, पंतमणाते व[5] मज्झम्मि ॥

३३६४. एतेणं विधिणा ऊ[6], सोऽणुण्णवितो जया[7] वदेज्जाहि ।
राया किं देमि त्ति य, जं दिण्णं अण्णराईहिं ॥

३३६५. जाणंतो अणुजाणति, अजाणओ भणति तेहि किं दिण्णं ।
पाउग्गं ति य भणिए, किं पाउग्गं इमं सुणसु ॥

३३६६. आहार-उवधि-सेज्जा, ठाण-निसीदण-तुयट्ट-गमणादी ।
थीपुरिसाण य दिक्खा, दिण्णा णो पुव्वराईहिं ॥

३३६७. भद्दो सव्वं वियरति, पंतो पुण दिक्ख वज्जमितराणि ।
अणुसट्ठादिमकाउं[8], णिंते गुरुगा य आणादी ॥

३३६८. चेइय सावग पव्वइउकामअतरंत[9] बालवुड्ढा य ।
चत्ता अजंगमा वि य, अभत्ति तित्थस्स परिहाणी ॥

३३६९. अच्छंताण वि गुरुगा, अभत्ति तित्थस्स हाणि जा वुत्ता ।
भणमाण भणावेंता[10], अच्छंति अणिच्छ[11] वच्चंति ॥

३३७०. अह पुण हवेज्ज दोन्नी[12], रज्जाइं तस्स नरवरिंदस्स ।
तहियं अणुजाणंते, दोसु वि रज्जेसु अप्पबहुं ॥

३३७१. एक्कहि विदिण्णरज्जे,ऽणुण्णा एगत्थ होइ अविदिण्णं[13] ।
एगत्थ इत्थियातो, पुरिसज्जाता[14] य एगत्थ ॥

---

१. ० हणा (अ, स) ।
२. सम्प्रति निर्युक्तिविस्तरः (मवृ) ।
३. दोण्णेग० (अ)
४. निमित्तविशेषेण (मवृ) ।
५. य (ब) ।
६. तु (अ) ।
७. जाव (ब) ।
८. ० सट्ठाइं काउं (स) ।
९. ०कामातरंत (ब) ।
१०. ० वेंती (स) ।
११. अणिच्छे (स) ।
१२. दोण्णि (स) ।
१३. गाथा का पूर्वार्द्ध अ प्रति में नहीं है ।
१४. पुरिसइज्जा य (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३७२. थेरा तरुणा 'य तधा',[1] दुग्गतया अड्डया य कुलपुत्ता ।
जाणवया नागरया, अब्भंतरया कुमारा य ॥

३३७३. ओहीमादी णाउं, जे बहुतरया उ पव्वयंति[2] तहिं ।
ते बेंति[3] समणुजाणसु, असती पुरिसेव जे बहुगा[4] ॥

३३७४. 'एताणि वितरति तहिं, कम्मघणो पुण भणेज्ज तत्थ इमं'[5] ।
दिट्ठा उ अमंगल्ला, मा वा दिक्खेज्ज अच्छंता[6] ॥

३३७५. मा वा दच्छामि पुणो, अभिक्खणं बेंति[7] कुणति निव्विसए ।
पभवंतो भणति ततो, भरहाहिवती न सि तुमं ति ॥

३३७६. केवइयं वा एतं, गोप्पदमेत्तं इमं तुहं रज्जं ।
जं पेल्लिउं व नासिय, गम्मति[8] य[9] मुहुत्तमेत्तेणं ॥

३३७७. जं होऊ तं होऊ, पभवामि[10] अहं तु अप्पणो रज्जे ।
सो भणति नीह मज्झं, रज्जातो किं बहूणा उ ॥

३३७८. अणुसट्ठी धम्मकहा[11], विज्जनिमित्तादिएहि[12] आउट्टे ।
अठिते[13] पभुस्स करणं, जधाकतं विण्हुणा पुव्वं ॥

३३७९. वेउव्वियलद्धी वादी[14], सत्थे विज्ज[15]-ओरस-बली वा ।
तवलद्धिपुलागो वा, पेल्लिती तम्मितरे[16] गुरुगा ॥

३३८०. तं घेत्तु बंधिऊणं, पुत्तं रज्जे ठवेति तु समत्थो ।
असती अणुवसमंते, निग्गंतव्वं ततो ताधे ॥

३३८१. भत्तादिफासुएणं, अलब्भमाणे य पणगहाणीए ।
अद्धाणे कातव्वा, जयणा तू जा जहिं भणिया[17] ॥

इति सप्तम उद्देशक

---

१. तम्हा (ब)
२. पव्वहिंति (स)।
३. बेति (अ, स)।
४. यह गाथा ब प्रति में नहीं है।
५. गाथा का पूर्वार्द्ध ब प्रति में नहीं है।
६. अच्छंतो (ब)।
७. बेति (ब)।
८. गम्माति (ब)।
९. तु (अ, स)।
१०. पभवो मि (स)।
११. ० कही (स)।
१२. विज्जा ० (ब, स)।
१३. अट्ठिय (ब)।
१४. वाउ (अ)।
१५. विज्जा (स)।
१६. तमेत्तरे (स)।
१७. भणियं (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अष्टम उद्देशक

३३८२. तध चेव उग्गहम्मी, अणुयत्तंतम्मि रायमादीणं ।
साधम्मि उग्गहम्मी[1], सुत्तमिणं अट्ठमे पढमं ॥

३३८३. गाहा घरे गिहे या, एगट्ठा होंति उग्गहे तिविधो ।
उडुबद्धे वासासु य, वुड्ढावासे य णाणत्तं ॥

३३८४. चाउस्सालादि गिहं, तत्थ पदेसो उ अंतो बाहिं वा ।
ओवासंतर मो पुण, अमुगाणं दोण्ह मज्झम्मि ॥

३३८५. खेत्तस्स उ संकमणे, 'कारण अन्नत्थ'[2] पट्ठविज्जंतो[3] ।
पुव्वुद्दिट्ठे तम्मि उ, उडुवासे सुत्तनिद्देसो[4] ॥नि. ४३८ ॥

३३८६. दीवेउं तं कज्जं, गुरुं व अन्नं व सो उ अप्पाहे ।
ते वि य तं भूयत्थं, नाउं असढस्स वियरंति ॥नि. ४३९ ॥

३३८७. अह पुण कंदप्पादीहि, मग्गती तो तु तस्स न दलंति[5] ।
एयं तु[6] पिंडसुत्ते, पत्तेयं[7] इहं तु वोच्छामि ॥नि. ४४० ॥

३३८८. सो पुण उडुम्मि[8] घेप्पति, संथारो वास वुड्ढवासे वा ।
ठाणं फलगादी[9] वा, उडुम्मि वासासु य दुवे वि[10] ॥नि. ४४१ ॥

३३८९. उडुबद्ध दुविहगहणा, लहुगो लहुगा य दोस आणादी ।
झामित हिय वक्खेवे, संघट्टणमादि पलिमंथो ॥नि. ४४२ ॥

३३९०. 'परिसाडि अपरिसाडी'[11], दुविधो संथारओ समासेण ।
परिसाडी झुसिरेतर, एत्तो वोच्छं अपरिसाडिं ॥

३३९१. 'एगंगि अणेगंगी'[12], संघातिमएतरो य एगंगी ।
अझुसिरगहणे[13] लहुगो, चउरो लहुगा य सेसेसु ॥

३३९२. लहुगा य झामियम्मि य[14], हरिते वि य होंति अपरिसाडिम्मि ।
परिसाडिम्मि य लहुगो, आणादिविराधणा चेव ॥नि. ४४३ ॥

---

१. ० हम्मि (स) ।
२. कारणमण्णत्थ (ब) ।
३. पत्थवि ० (स) ।
४. सम्प्रति निर्युक्तिविस्तरः (मवृ) ।
५. उ लभति (स) ।
६. X (अ) ।
७. पत्ते वि (ब, स) ।
८. उदुम्मि (अ) ।
९. फलगाइं (स) ।
१०. अधुना निर्युक्तिविस्तरः (मवृ) ।
११. ० साडी अप ० (अ), ० साडिय परि ० (स) ।
१२. एगम्मि अणेगम्मी (अ) ।
१३. अणुझुसिर० (ब) ।
१४. x (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३९३. विक्खेवो सुत्तादिसु, आगंतु तदुब्भवाण घट्टादी ।
पलिमंथो पुव्वुत्तो, मंथिज्जति संजमो जेण ॥

३३९४. तम्हा उ न घेत्तव्वो, उडुम्मि दुविधो वि एस संथारो ।
एवं सुत्तं अफलं[1], सुत्तनिवातो उ कारणिओ ॥

३३९५. सुत्तनिवातो तणेसु[2], देस[3] गिलाणे य उत्तमट्ठे य ।
चिक्खल्ल-पाण-हरिते, फलगाणि वि कारणज्जाते ॥दारं ॥नि. ४४४ ॥

३३९६. असिवादिकारणगता, उवधी कुत्थण[4] अजीरगभया[5] वा ।
अझुसिरमसंधि ऽबीए[6], एक्कमुहे भंगसोलसगं ॥

३३९७. कुसमादि[7] अझुसिराइं, असंधि[8] बीयाइ 'एक्कतो मुहाइं'[9] ।
देसी पोरपमाणा, पडिलेहा तिन्नि वेहासं ॥

३३९८. अंगुट्ठपोरमेत्ता[10], जिणाण थेराण होंति संडासो ।
भूमीय विरल्लेउं, अवणेत्तु[11] पमज्जते भूमिं[12] ॥

३३९९. गेलण्ण उत्तिमट्ठे[13], उस्सग्गेणं तु वत्थसंथारो ।
असतीय अझुसिराइं, खराऽसतीए 'तु झुसिरा वि'[14] ॥

३४००. तद्दिवसं मलियाइं, अपरिमित सइं[15] तुयट्ट जतणाए ।
उभयट्ठि[16] उट्ठिते तू, चंकमणे[17] वेज्जकज्जे वा ॥

३४०१. अन्नो निसिज्जति[18] तहिं, पाणदयट्ठाय[19] तत्थ हत्थो वा ।
निक्कारणमगिलाणे, दोसा 'ते चेव'[20] 'य विकप्पो'[21] ॥

३४०२. अत्थरणवज्जितो[22] तू, कप्पो उ होति पट्टदुगं ति[23] ।
तिप्पभिइं तु विकप्पो, 'अकारणेणं तणाभोगो'[24] ॥

---

१. मफलं (ब) ।
२. तणेसू (अ, स) ।
३. देसि (स) ।
४. कुच्छण (ब) ।
५. अजीरमभया अ प्रति में अनेक स्थलों पर ग के स्थान पर म पाठ मिलता है ।
६. ०मसंध अबीए (स) ।
७. ० माति (ब) ।
८. ० असंध (स) ।
९. एक्कमुहाइं (ब) ।
१०. ० ट्ठपव्वं मेत्ता (अ) ।
११. अवाणेत्तु (ब), अवणंतु (स) ।
१२. भूमी (स) ।
१३. उत्तमट्ठे (अ) ।
१४. वज्झुसिरा (अ) ।
१५. सयं (अ, स) ।
१६. उभयत्थि (स) ।
१७. चक्कमण (ब, स) ।
१८. निसज्जति (ब, स) ।
१९. पाणं दय ० (ब) ।
२०. ते चिय (ब), ते वि चेव (अ) ।
२१. पविकप्पो (स) ।
२२. अत्थुरण ० (अ), ० वज्जेउ (ब) ।
२३. छंद की दृष्टि से दूसरे चरण में 'कप्पो पुण होति उ पट्टदुगं ति' पाठ होना चाहिए ।
२४. अकारणे चेव तणभोगो (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३४०३. अधवा[१] अझुसिरगहणे, कप्पपकप्पो समावडिय कज्जे[२] ।
'झुसिरे व अझुसिरे'[३] वा, होति विकप्पो अकज्जम्मि[४] ॥

३४०४. जध कारणे[५] तणाइं, उडुबद्धम्मि उ हवंति गहिताइं[६] ।
तध फलगाणि वि गेण्हे, चिक्खल्लादीहि कज्जेहिं ॥

३४०५. अझुसिरमविद्धमफुडिय[७], अगुरुय - अणिसट्ठ - वीणगहणेणं ।
आयासंजम गुरुगा, सेसाणं संजमे दोसा ॥**नि. ४४५** ॥

३४०६. अझुसिरमादीएहिं, जा अणिसट्टं[८] तु पंचिगा भयणा[९] ।
अध 'संथड पासुद्धे'[१०], वोच्चत्थे होति[११] चउलहुगा ॥

३४०७. अंतोवस्सय बाहिं, निवेसणा वाडसाहिए[१२] गामे ।
खेत्तंतो अन्नगामा, खेत्तबहिं वा अवोच्चत्थं ॥

३४०८. सुत्तं च अत्थं च दुवे वि काउं, भिक्खं अडंतो तु दुवे[१३] वि एसे ।
लाभे[१४] सहू एति दुवे वि घेत्तुं, लाभासती[१५] एग दुवे व हावे ॥

३४०९. दुल्लभे सेज्जसंथारे, उडुबद्धम्मि कारणे ।
मग्गणम्मि विधी एसो, भणितो खेत्तकालतो[१६] ॥

३४१०. उडुबद्धे[१७] कारणम्मि, अगेण्हणे लहुग गुरुग वासासु ।
उडुबद्धे जं भणियं, तं चेव य सेसयं वोच्छं ॥

३४११. वासासु अपरिसाडी, संथारो सो अवस्स घेत्तव्वो ।
मणिकुट्टिमभूमीए[१८], तमगिण्हण[१९] चउगुरू आणा ॥**नि. ४४६** ॥

३४१२. पाणा सीतल कुंथू, उप्पायग दीह गोम्हि सिसुणागे[२०] ।
पणए[२१] य उवधि कुत्थण, मल उदकवधो अजीरादी ॥**नि. ४४७** ॥

---

१. x (ब, स) ।
२. कज्जं (अ) ।
३. सुसिरे वि झुसिरे (ब) ।
४. अकप्पम्मि (स) ।
५. कारणे वि (अ) ।
६. गहियायं (ब) ।
७. अझुसिर ० (ब) ।
८. अणिसिट्ठं (अ) ।
९. रुयणा (ब) ।
१०. संथया सुद्धो (ब) ।
११. होति (ब) ।
१२. ० साडिए (अ) ।
१३. दुए (ब) ।
१४. लाभि (ब) ।
१५. लाभासयं (ब) ।
१६. x (अ) ।
१७. ० बद्धं (स) ।
१८. ० भूमीय वि (अ, स) ।
१९. तमगेण्हणे (अ) ।
२०. सुणाए (ब), सुसुणाए (अ) ।
२१. पाणे (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३४१३. तम्हा खलु घेत्तव्वो, तत्थ इमे पंच वण्णिता भेदा[१] ।
गहणे य अणुण्णवणा[२], एगंगिय 'अकुय पाउग्गे'[३] ॥दारं ॥नि. ४४८ ॥

३४१४. गहणं च जाणएणं, सेज्जाकप्पो उ जेण समधीतो[४] ।
उस्सग्गववातेहिं, सो गहणे कप्पिओ होति ॥दारं ॥

३४१५. अणुण्णवणाय जतणा, गहिते जतणा य[५] होति कायव्वा ।
अणुण्णवणाएँ[६] लद्धे, बेंती[७] पडिहारियं एयं ॥

३४१६. कालं च ठवेति[८] तहिं, 'बेति य'[९] परिसाडि वज्जमप्पेहं ।
अणुण्णवण जयणेसा[१०], गहिते जतणा इमा होति ॥

३४१७. कास पुणऽप्पेयव्वो[११], बेति ममं[१२] जाधे तं भवे सुण्णो ।
अमुगस्स सो वि सुन्नो, ताधे घरम्मि ठवेज्जाहि[१३] ॥

३४१८. कहि एत्थ चेव ठाणे, पासे उवरिं च तस्स पुंजस्स ।
अधवा तत्थेवच्छउ, ते वि हु नीयल्लगा अम्हं[१४] ॥

३४१९. एसा गहिते[१५] जतणा, एत्तो गेण्हंतए उ वोच्छामि ।
एगो च्चिय गच्छे पुण, संघाडो गेण्हऽभिग्गहितो ॥

३४२०. आभिग्गहियस्सऽसती, वीसुं गहणे पडिच्छिउं सव्वे ।
दाऊण तिन्नि गुरुणो, गेण्हंतऽण्णे जहा[१६] वुड्डं ॥दारं ॥

३४२१. णेगाण[१७] तु णाणत्तं[१८], सगणेतरऽभिग्गहीण वन्नगणे ।
दिट्ठोभासण लद्धे, सण्णातुड्ढे पभू चेव[१९] ॥नि. ४४९ ॥

३४२२. दिट्ठादिएसु एत्थं, एक्केक्के 'होंतिमे उ छब्भेदा'[२०] ।
दट्ठूण अधाभावेण, वावि सोउं च तस्सेव ॥

३४२३. विप्परिणामणकधणा, वोच्छिन्ने चेव विपडिसिद्धे[२१] य ।
एतेसिं तु विसेसं, वोच्छामि अधाणुपुव्वीए ॥

---

१. भयया (अ)।
२. ०वणे (ब)।
३. कुयपातोग्गे (ब)।
४. समहीतो (अ)।
५. या (अ)।
६. अणुण्णाए (ब)।
७. बिंति (ब)।
८. ठावेति (ब)
९. चेव तिय (अ)।
१०. जतण एसा (अ)।
११. पुण घेत्तव्वो (स)।
१२. मिम (ब)।
१३. ठविज्जह (स)।
१४. तत्थ (स)।
१५. तहिं व (स)।
१६. तहा (मु)।
१७. णेगातो (ब)।
१८. णाउत्तं (ब)।
१९. चेवा (ब)।
२०. होंति छ भवे भेदा (अ, स)।
२१. विपरिणामग सिद्धे० (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३४२४. संथारो देहंतं, असहीण पभुं तु पासिउं[1] पढमो ।
ताधे पडिसरिऊणं[2], ओभासिय लद्धुमाणेति[3] ॥

३४२५. संथारो दिट्ठो न[4] य, तस्स पभू लहुग अकहणे गुरुणं ।
कधिते व[5] अकधिते[6] वा, अण्णेण वि[7] आणितो[8] तस्स ॥दारं ॥

३४२६. बितिओ उ[9] अन्नदिट्ठं, अहभावेणं तु लद्धुमाणेती[10] ।
पुरिमस्सेव[11] सो खलु, केई[12] साधारणं बेंति ॥दारं ॥

३४२७. ततिओ तु गुरुसगासे, विगडिज्जंतं सुणेतु संथारं ।
अमुगत्थ मए दिट्ठो, हिंडंतो वण्णसीसंतं ॥

३४२८. गंतूण तहिं जायति, लद्धम्मी[13] बेंति[14] अम्ह एस विधी ।
अन्नदिट्ठो न कप्पति, दिट्ठो[15] एसो उ अमुगेणं ॥

३४२९. मा देज्जसि तस्सेयं[16], पडिसिद्धे तम्मि एस मज्झं तु ।
अण्णा धम्मकधाए, आउट्टेऊण तं पुव्वं[17] ॥दारं ॥

३४३०. संथारगदाण फलादिलाभिणं बेति देहि[18] संथारं ।
अमुगं तु तिन्निवारा, पडिसेधेऊण तं[19] मज्झं ॥

३४३१. एवं विपरिणामितेण, लभति लहुगा[20] य होंति सगणिच्चे ।
अन्नगणिच्चे गुरुगा, मायनिमित्तं भवे गुरुगो ॥दारं ॥

३४३२. अह पुण जेणं दिट्ठो, अन्नो लद्धो तु तेण संथारो ।
छिन्नो तदुवरि भावो, ताधे जो लभति तस्सेव ॥

३४३३. अहवा वि तिन्नि वारा, उ मग्गितो न विं य तेण लद्धो उ ।
भावे छिन्नमछिन्ने, अन्नो जो लभति तस्सेव ॥

३४३४. एवं ता दिट्ठम्मी[21] ओभासंते[22] वि होंति छच्चेव ।
सोउं अहभावेण व, विप्परिणामे य धम्मकधा ॥

---

१. एसिउं (ब)।
२. पडियरि० (स)।
३. यह गाथा टीका की मुद्रित पुस्तक में नहीं है। किन्तु सभी हस्तप्रतियों में मिलती है। टीका में इस गाथा की व्याख्या प्राप्त है।
४. x (ब)।
५. वा (ब)।
६. अकहिते (स)।
७. व (ब)।
८. याणितो (अ)।
९. x (अ)।
१०. ० माणेति (ब)।
११. पुरिसस्सेवं (ब)।
१२. केती (ब)।
१३. लद्धम्मि (स)।
१४. बेंति (अ)।
१५. अम्हे (अ)।
१६. तस्थेयं (मु)।
१७. पुव्विं (ब)।
१८. देह (स)।
१९. तो (अ, स)।
२०. बहुगो (म)।
२१. दिट्ठंतो (ब), दिट्ठम्मि (अ)।
२२. तु भासंते (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३४३५. वोच्छिन्नम्मि व[1] भावे, 'अन्नो वन्नस्स'[2] जस्स देज्जाहि ।
एते खलु छब्भेदा, ओभासण होंति बोधव्वा[3] ॥

३४३६. ओभासिते[4] अलद्धे, अव्वोच्छिन्ने[5] 'य तस्स'[6] भावे तु ।
सोउं अण्णोभासति, लद्धाणीतो[7] पुरिल्लस्स ॥

३४३७. सेसाणि[8] जधादिट्ठे, अह भावादीणि जाव वोच्छिन्ने ।
दाराइं जोएज्जा, छट्ठ विसेसं तु वोच्छामि ॥

३४३८. अच्छिन्ने अन्नोन्नं[9], सो वा अन्नं तु जदि स[10] देज्जाही[11] ।
कप्पति जो तु पणइतो[12], तेण व अन्नेण व न कप्पे ॥

३४३९. लद्धद्दारे चेवं, जोए जहसंभवं तु दाराइं ।
जत्तियमेत्त[13] विसेसो[14], तं वोच्छामी[15] समासेणं ॥

३४४०. ओभासितम्मि लद्धे, भणंति[16] न तरामु[17] एण्हि नेउं जे ।
अच्छउ णेहामो पुण[18], कल्ले वा[19] घेच्छिहामो[20] त्ति ॥

३४४१. नवरि य अन्नो आगत, तेण वि सो चेव पणइतो[21] तत्थ ।
दिन्नो अन्नस्स ततो[22], विप्परिणामेति तह चेव ॥

३४४२. अहभावालोयण धम्मकधण वोच्छिन्नमन्नदाराणि[23] ।
णेयाइं[24] तह[25] चेव उ, 'जधेव ऊ'[26] छट्ठदारम्मि ॥

३४४३. सण्णातिए[27] वि तेच्चिय[28], दारा नवरं इमं[29] तु नाणत्तं ।
आयरिएणाभिहितो, गेण्हउ[30] संथारयं अज्जो ॥

३४४४. सुद्धदसमीठिताणं, बेती घेच्छामि तद्दिणं चेव ।
नातगिहे पडिणत्तो, मए उ संथारओ भंते ! ॥

---

१. वि (स) ।
२. वा अन्नस्स (अ, ब) ।
३. नायव्वा (मु) ।
४. ओभासणे (स) ।
५. अणवो ० (ब) ।
६. तवस्स (ब), व तस्स (स) ।
७. लद्धाणी सो (ब) ।
८. टेसाणि (ब) ।
९. अन्नो अन्नं (अ) ।
१०. सा (ब) ।
११. देज्जाहि (ब) ।
१२. पुणतितो (ब) ।
१३. जत्तियमित्तो (अ) ।
१४. विसेसा (ब) ।
१५. वोच्छाम्मि (स) ।
१६. भणामि (ब) ।
१७. तरामो (अ, ब) ।
१८. पुण्णो (अ) ।
१९. व (स) ।
२०. एच्छियामो (स) ।
२१. पणमितो (ब) ।
२२. स उ (अ) ।
२३. ० दाराणी (अ) ।
२४. णेवाणि (ब), णेयाणी (स) ।
२५. तहा (अ) ।
२६. तधेव उ (स) ।
२७. सण्णातए (स) ।
२८. एच्चिय (स) ।
२९. यमं (ब), गेण्हइ (ब) ।
३०. X (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३४४५. 'विपरिणामे तहच्चिय'[१], अन्नो गंतूण तत्थ नायगिहं ।
आसन्नतरो गिण्हति, मित्तो अन्नो विमं वोत्तुं ॥

३४४६. अन्ने वि तस्स नियगा[२], देहिह[३] अन्नं य[४] तस्स ममदाउं ।
दुल्लभलाभमणाउं, ठियम्मि दाणं हवति सुद्धं ॥

३४४७. सण्णाइगिहे[५] अन्नो, न गेण्हते तेण असमणुण्णातो ।
सति विभवे असतीए[६], सो वि हु न वि तेण निव्विसति ॥दारं ॥

३४४८. सेसाणि य दाराणी[७], तह वि य बुद्धीय भासणीयाइं ।
उद्धद्दारे[८] वि तधा, नवरं उद्धम्मि नाणत्तं ॥

३४४९. आणेऊण[९] 'न तिण्णे'[१०], वासस्स य आगमं तु नाऊणं ।
मा उल्लेज्ज हु छण्णे, ठवेति[११] मा वण्ण मग्गेज्जा ॥

३४५०. पुच्छाए णाणत्तं, केणुद्धकतं तु पुच्छियमसिद्धे ।
अन्नासढमाणीतं, पि पुरिल्ले केइ[१२] साधारं[१३] ॥

३४५१. छन्ने[१४] उद्धोवकतो, संथारो जइ वि सो अधाभावो[१५] ।
तत्थ वि सामायारी, पुच्छिज्जति इतरधा[१६] लहुगो ॥

३४५२. सेसाइं तह चेव य, विप्परिणामादियाइ दाराइं ।
बुद्धीय विभासेज्जा, एत्तो वुच्छं पभुद्दारं ॥दारं ॥

३४५३. 'पभुदारे वी'[१७] एवं, नवरं पुण तत्थ होति अहभावे ।
एगेण पुत्त जाइय, बितिएण[१८] पिता तु तस्सेव ॥

३४५४. जो पभुतरओ तेसिं, अधवा दोहिं पि जस्स दिन्नं[१९] तु ।
अपभुम्मि[२०] लहू आणा, एगतरपदोसतो जं च ॥

३४५५. अहवा दोन्नि वि पहुणो, ताधे साधारणं तु दोण्हं पि ।
विप्परिणामादीणि[२१] तु, सेसाणि[२२] तधेव भावेज्जा[२३] ॥दारं ॥

---

१. विप्परिणामेण तह चिय (स) ।
२. नियागा (अ) ।
३. देहिहि (अ) ।
४. व (अ) ।
५. पुन्नाय० (ब), सण्णात० (स) ।
६. असतीय व (स),सत्तीय (ब) ।
७. सेसाणि य दाराणं (ब) ।
८. उद्धदारे (स) ।
९. आणेतूण (अ) ।
१०. नितिण्णो (अ) ।
११. ठवेउ (अ) ।
१२. केति (अ) ।
१३. साहारं (अ) ।
१४. छिन्नो (अ) ।
१५. अहाभावो (ब) ।
१६. इयरहा (अ) ।
१७. पभुद्दारे वि (ब) ।
१८. बितिया उ (अ) ।
१९. वि दिन्नं (अ) ।
२०. गाथायां सप्तमी तृतीयार्थे (मवृ) ।
२१. ०दीण (स) ।
२२. सेसाणं (अ), सेसाणि वि (ब) ।
२३. भासेज्जा (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३४५६. एस विधी तू[1] भणितो, जहियं संघाडएहि मग्गंति ।
संघाडेहऽलभंता, ताहे वंदेण मग्गंति ॥

३४५७. वंदेणं तह चेव य, गहणुण्णवणाइ[2] तो[3] विधी एसो ।
नवरं पुण नाणत्तं, अप्पिणणे[4] होति[5] नातव्वं ॥

३४५८. सव्वे वि दिट्ठरूवे, करेहि पुण्णम्मि अम्ह एगतरो ।
अण्णो वा वाघातो, अप्पेहिति[6] जं भणसि तस्स ॥

३४५९. एवं ता सग्गामे[7], असती आणेज्ज अण्णगामातो ।
सुत्तत्थे काऊणं, मग्गति भिक्खं तु अडमाणो ॥

३४६०. अदिट्ठे सामिम्मि उ, वसिउं आणेति बितियदिवसम्मि ।
खेत्तम्मी उ[8] असंते, आणयणं खेत्तबहिया[9] उ ॥

३४६१. सव्वेहि आगतेहिं, दाउं गुरुणो उ सेस[10] जहवुड्डं ।
संथारे घेत्तूणं, ओवासे होतऽणुण्णवणा ॥

३४६२. जो पुव्व[11] अणुण्णवितो, पेसिज्जंतेण होति ओगासे ।
हेट्ठिल्ले सुत्तम्मि,• तस्सावसरो[12] इहं पत्तो[13] ॥

३४६३. नाऊण[14] सुद्धभावं, थेरा वितरंति[15] तं तु ओगासं ।
सेसाण वि जो जस्स उ, पाउग्गो तस्स तं देंति ॥

३४६४. खेल निवात पवाते, काल गिलाणे य सेह पडियरए[16] . ।
समविसमे पडिपुच्छा, आसंखडिए अणुण्णवणा ॥

३४६५. एवमणुण्णवणाए, एतं[17] दारं[18] इहं परिसमत्तं ।
एगंगियादि[19] दारा, एत्तो उड्ढं पवक्खामि ॥दारं ॥

३४६६. असंघतिमेव[20] फलगं, घेत्तव्वं तस्स असति संघाइं[21] ।
दोमादि तस्स असती[22], गेण्हेज्ज[23] अधाकडा कंबी[24] ॥

---

१. तु (अ, स)।
२. ० णुण्णवइ (अ)।
३. उ (अ)।
४. अप्पण्णे (ब)।
५. वेति (स)।
६. अप्पिहिति (ब), अप्पेहति (स)।
७. सग्गामे (स)।
८. तू (स)।
९. खेत्त वि बहिया (ब)।
१०. सेसं (ब)।
११. पुव्वि (ब, स)।
१२. ०सरं (स)।
१३. ब प्रति में गाथा का उत्तरार्ध नहीं है।
१४. नातूण (ब)।
१५. x (ब)।
१६. सिद्धपडि० (अ)।
१७. एत (अ)।
१८. x (ब)।
१९. एगिंदियादि (ब)।
२०. असंघातिमे (अ, स)।
२१. संघायं (अ), संघाय (स)।
२२. सती (अ)।
२३. ० ज्जा (अ, स)।
२४. कंबे (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३४६७. दोमादि संतराणि उ, करेति मा तत्थ तू णमंतेहिं[१] ।
'संथरए अण्णोण्णे'[२], पाणादिविराधणा हुज्जा ॥दारं ॥

३४६८. कुयबंधणम्मि[३] लहुगा, विराधणा[४] होति संजमाताए ।
सिढिलिज्जंतम्मि जधा, विराधणा होति पाणाणं ॥

३४६९. पवडेज्ज[५] व दुब्बद्धे, विराधणा तत्थ[६] होति आयाए ।
जम्हा एते दोसा, तम्हा उ कुयं न बंधेज्जा ॥

३४७०. तद्दिवसं पडिलेहा, ईसी[७] उक्खेउ[८] हेट्ठ उवरिं च ।
रयहरणेणं भंडं, अंके भूमीय[९] वा काउं ॥

३४७१. एवं तु दोन्नि वारा, पडिलेहा तस्स होति कायव्वा ।
सव्वे बंधे मोत्तुं, पडिलेहा होति पक्खस्स ॥

३४७२. उग्गममादी[१०] सुद्धो, गहणादी जो व वण्णितो एस ।
एसो खलु पाउग्गो, हेट्ठिमसुत्ते व जो भणितो ॥

३४७३. कज्जम्मि समत्तम्मी[११], अप्पेयव्वो अणप्पिणे[१२] लहुगा ।
आणादीया दोसा, बितियं उद्धाण हित दड्ढो[१३] ॥

३४७४. वुड्ढावासे चेवं, गहणादि पदा उ होंति नायव्वा ।
नाणत्त खेत्त-काले, अप्पडिहारी[१४] य सो नियमा ॥नि. ४५० ॥

३४७५. काले जा पंचाहं, परेण वा खेत्त जाव बत्तीसा ।
अप्पडिहारी[१५] असती, मंगलमादी तु पुव्वुत्ता ॥नि. ४५१ ॥

३४७६. वुड्ढो खलु समधिकितो[१६], अजंगमो[१७] सो य जंगमविसेसो ।
अविरहितो वा वुत्तो, सहायरहिते इमा जतणा ॥

३४७७. दंड विदंडे[१८] लट्ठी, विलट्ठि चम्मो य चम्मकोसे य ।
चम्मस्स य जे छेदा[१९], थेरा वि य जे जराजुण्णा ॥

३४७८. आयवताणनिमित्तं, छत्तं दंडस्स कारणं वुत्तं ।
कीस ठवेती पुच्छा, स दिग्ध थूरो व[२०] दुग्गड्ढा ॥

---

१. समंतेहिं (ब) ।
२. संथरिसेणणोण्णे (अ, स) ।
३. कुव बंध ० (अ) ।
४. विसहणा (ब) ।
५. पवडेइज्ज (स) ।
६. x (अ) ।
७. ईसिं (स) ।
८. उक्खेत्तु (स, अ) ।
९. भूमी (ब) ।
१०. ० माती (ब) ।
११. ० म्मि (अ), ०म्मि (स) ।
१२. अप्पिणो (ब), अणप्पिणा (स) ।
१३. दद्धे (अ), दिट्ठे (ब) ।
१४. अपडी० (स) ।
१५. अपडी० (स) ।
१६. ०धिगतो (ब) ।
१७. अयंगमो (स) ।
१८. विडंडे (स) ।
१९. भेदा (स) ।
२०. उ (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३४७९. भंडं पडिग्गहं खलु, उच्चारादी[1] य मत्तगा तिन्नि ।
अहवा भंडगगहणे, णेगविधं भंडगं जोग्गं ॥

३४८०. चेलग्गहणे कप्पा, तस-थावर जीवदेहनिप्फण्णा ।
दोरेतरा व[2] चिलिमिणि, चम्मं तलिगा व कत्तिव्वा[3] ॥

३४८१. 'अंगुट्ठ अवर[4] पण्हि"[5]; नह कोसग छेदणं तु जे वज्झा[6] ।
तें छिन्नसंधणट्ठा[7], दुखंड संधाणहेउं[8] वा ॥

३४८२. जदि उ[9] ठवेति[10] असुण्णे[11], न य बेती[12] देज्जहेत्थ ओधाणं ।
लहुगो सुण्णे[13] लहुगा, हितम्मि जं जत्थ पावति तु ॥

३४८३. एयं सुत्तं अफलं, जं भणितं कप्पति त्ति[14] थेरस्स ।
भण्णति सुत्तनिवातो, अतीमहल्लस्स[15] थेरस्स ॥

३४८४. गच्छाणुकंपणिज्जो, जेहिं[16] ठवेऊण कारणेहिं[17] तु' ।
हिंडति जुण्णमहल्लो, तं सुण[18] वोच्छं समासेणं ॥

३४८५. सो पुण गच्छेण समं, गंतूण अजंगमो न चाएति ।
गच्छाणुकंपणिज्जो, • हिंडति थेरो पयत्तेणं ॥

३४८६. अतक्किय उवधिणा[19] ऊ[20], भणिता थेरा अलोभणिज्जम्मि ।
संकमणे पट्ठवणं[21], पुरतो समगं च जतणाए ॥

३४८७. संघाडग एगेण व[22], समगं गेण्हंति सभय ते उवधिं ।
कितिकम्मदवं पढमा, करेंति तेसिं असति एगो ॥

३४८८. जइ गच्छेज्जाहि गणो, पुरतो पंथे य सो फिडिज्जाहि[23] ।
तत्थ[24] उ ठवेज्ज एगं, रिक्कं पडिपंथगप्पाहे[25] ॥

३४८९. सारिक्खकड्ढणीए[26], अधवा वातेण होज्ज पुट्ठो उ ।
एवं फिडितो होज्जा, अधवा वी परिरएणं[27] तू ॥

---

१. ० राती (अ) ।
२. वि (स) ।
३. ० व्व (अ) ।
४. अधर (अ) ।
५. फाणू (स), काणु (अ) ।
६. वज्जा (ब), वद्धा (अ) ।
७. बंधणट्ठा (ब) ।
८. सुखंड० (ब) ।
९. य (ब) ।
१०. ठविति (ब) ।
११. अणुसुण्णे (ब) ।
१२. बेंती (ब) ।
१३. सुण्ण (ब) ।
१४. x (अ) ।
१५. अतिम० (स) ।
१६. तहिं (ब), जेण (मु) ।
१७. कारणेणं (मु) ।
१८. पुण (ब) ।
१९. उवधिणो (ब) ।
२०. उ (ब) ।
२१. पच्छवणं (अ), पत्थवणं (स) ।
२२. वा (अ) ।
२३. फलेज्जाहि (स) ।
२४. जत्थ (अ, स) ।
२५. पडिपंथि० (स) ।
२६. सारक्ख ० (स)
२७. परिणएणं (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३४९०. कालगते व सहाए[१], फिडितो अधवावि संभमो होज्जा ।
पढमबितिओदएण व, गामपविट्ठो व जो[२] हुज्जा ॥

३४९१. एतेहि कारणेहिं, फिडितो जो अट्ठमं तु काऊणं ।
अणहिंडंतो मग्गति, इतरे वि य तं विमग्गंति ॥

३४९२. अध पुण न संथरेज्जा, तो गहितेणेव[३] हिंडती भिक्खं ।
जइ न तरेज्जाहि ततो, ठवेज्ज ताधे असुन्नम्मि ॥

३४९३. अध पुण ठवेज्जिमेहिं[४], तु सुन्नऽग्गिकम्मि[५] कुच्छिएसुं[६] वा ।
नाणुण्णवेज्ज दीहं[७], बहुभुंज पडिच्छते पत्तं[८] ॥

३४९४. तिसु लहुग दोसु लहुगो, खद्धाइयणे[९] य चउलहू होंति ।
चउगुरुग संखडीए, अप्पत्तपडिच्छमाणस्स ॥

३४९५. असतीयऽमणुण्णाणं, सव्वोवधिणा व भद्दएसु वा ।
देसकसिणेव घेत्तुं, हिंडति सति लंभ[१०] आलोए ॥

३४९६. असतीएँ अविरहितम्मि, णंतिक्कादीण[११] अंतियं ठवए[१२] ।
देज्जह ओधाणं ति य, जाव उ भिक्खं परिभमामि ॥

३४९७. ठवेति गणयंतो वा, समक्खं तेसि बंधिउं ।
आगतो रक्खिखता[१३] 'भो त्ति'[१४], तेण तुब्भेच्चिया इमे ॥

३४९८. दट्ठूण वन्नधा गंठिं[१५], केण मुक्को त्ति पुच्छती ।
रहितं किं घरं आसी, कोऽपगो व इधागतो ॥

३४९९. नत्थि वत्थुं सुगंभीरं, तं मे दावेह मा चिरा ।
न दिट्ठो वा कधं एंतो, तेण तो उभयो इधं ॥

३५००. धम्मो 'कधेज्ज तेसिं'[१६], धम्मट्ठा एव दिण्णमण्णेहिं ।
तुब्भारिसेहि[१७] एयं, तुब्भेसु य पच्चओ अम्हं ॥

---

१. सुहाए (ब) ।
२. x (अ) ।
३. गिहितेण व (अ) ।
४. गाथायां तृतीया सप्तम्यर्थे (मवृ) ।
५. सुन्नेग्गि० (अ) ।
६. कुंथितेसु (अ, ब) ।
७. दीहिं (अ) ।
८. भत्तं (ब) ।
९. खद्धाणियाण (ब) ।
१०. लंभे (अ) ।
११. नैत्यिकादीनाम् (मवृ) ।
१२. ठविए (अ) ।
१३. रक्खिणया (ब) ।
१४. होत्ति (अ), मित्ति (ब) ।
१५. गंठी (स) ।
१६. कहेज्ज एसिं (अ, ब) ।
१७. तुब्भारसेहि (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५०१. तो[1] ठवितं[2] णो[3] एत्थं, 'तं दिज्जउ'[4] सावया इमं[5] अम्हं ।
जदि ते तो रमणिज्जं, अदेंत ताधे इमं भणती ॥

३५०२. थेरो[6] त्ति काउं कुरु[7] मा अवण्णं, संती सहाया बहवे ममन्ने ।
जे उग्गमेहिंति ममे य मोसं, खेत्तादि नाउं इति बेंतऽदेंते[8] ॥

३५०३. उवधीपडिबंधेणं, सो एवं अच्छती तहिं थेरो ।
आयरियपायमूला, संघाडेगो व अहपत्तो ॥

३५०४. ते विय मग्गंति ततो, अदेंत साधेंति भोइयादीणं[9] ।
एवं तु[10] उत्तरुत्तर[11], जा राया अधव जा दिन्नं ॥

३५०५. अध पुण अक्खुय चिट्ठे[12], ताधे दोच्चोग्गहं अणुण्णवए[13] ।
तुब्भेच्चयं इमं ति य, जेणं भे रक्खियं तुमए[14] ॥

३५०६. घेत्तूवहिं सुन्नघरम्मि[15] भुंजे, खिन्नो व तत्थेव उ छन्नदेसे[16] ।
छन्नाऽसती भुंजति[17] कच्चगे तू, सव्वो[18] वि तुब्भाण करेत्तु[19] कप्पं ॥

३५०७. मज्झे दवं पिबंतो, भुत्ते वा तेहि चेव दावेति ।
नेच्छे वामोयत्तणि[20], एमेव य कच्चए डहरे ॥

३५०८. अप्पडिबज्झंतगमो, इतरे वि गवेसए[21] पयत्तेणं ।
एमेव अवुड्ढस्स वि, नवरं गहितेण अडणं तु ॥

३५०९. संथारएसु पगतेसु, अंतरा[22] छत्त-दंड-कत्तिल्ले[23] ।
जंगमथेरे जतणा, अणुकंपऽरिहे समक्खाता ॥

३५१०. दोच्चं[24] व अणुण्णवणा, भणिया इमिगा वि दोच्चऽणुण्णवणा ।
नियउग्गहम्मि पढमं, बितियं तु परोग्गहे सुत्तं ॥

३५११. परिसाडिमपरिसाडी[25], पुव्वं भणिता इमं तु नाणत्तं ।
पडिहारियसागारिय, तं चेवं ते बहिं नेंति[26] ॥ नि. ४५२ ॥

---

१. जे (ब) ।
२. ठविता (स) ।
३. ण्हे (स), X (ब) ।
४. दिज्जउ तं (ब) ।
५. इयं (ब, मु) ।
६. थेरा (ब) ।
७. कुर (ब) ।
८. वेदयंते (अ, स) ।
९. भत्तियाईणं (ब) ।
१० X (ब) ।
११. उत्तरोत्तर (ब), उत्तर उत्तर (स) ।
१२. दिट्ठे (अ, ब), ट्ठितो (स) ।
१३. अणणुवायण (ब) ।
१४. इणमो (ब, स) ।
१५. पुण्ण० (ब) ।
१६. ० देसा (ब) ।
१७. भुंजती (ब) ।
१८. संतो (स) ।
१९. करेतु (स) ।
२०. ०त्तणं (स) ।
२१. गवेषयन्ति गाथायामेकवचनं प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
२२. अंतरी (ब) ।
२३. कंतिल्ले (स) ।
२४. देच्चं (ब) ।
२५. परिसाडी ० (ब) ।
२६. सम्प्रति निर्युक्तिविस्तरः (मवृ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५१२. परिसाडी पडिसेधो, पुणरुद्धारो य वण्णितो पुव्वं[1] ।
अप्परिसाडिग्गहणं, वासासु य वण्णियं[2] नियमा ॥

३५१३. पुण्णम्मि अंत[3] मासे, वासावासे विमं भवति[4] सुत्तं ।
'तत्थेवण्ण गविस्से'[5], असती तं चेयऽणुण्णवए[6] ॥

३५१४. अहवा अवस्सघेत्तव्वयम्मि दव्वम्मि किं[7] भवे पढमं ।
नयणं समणुण्णा वा, विवच्चतो वा जधुत्ताओ[8] ॥

३५१५. एमेव अपुण्णम्मि वि, वसधीवाघाय अन्नसंकमणे ।
गंतव्वुवासयाऽसति[9], संथारो सुत्तनिद्देसो ॥

३५१६. नीहरिउं संथारं, पासवणुच्चारभूमिभिक्खादी[10] ।
गच्छेऽधवा[11] वि झायं, करेतिमा तत्थ आरुवणा ॥

३५१७. एतेसुं चउसुं पी, तणेसु लहुगो य[12] लहुगफलगेसु[13] ।
राया दुट्ठग्गहणे, चउगुरुगा होंति नातव्वा ॥

३५१८. उग्गहसमणुण्णासुं[14], सेज्जासंथारएसु य तधेव ।
अणुवत्तंतेसु भवे, पंते अणुलोमवइ सुत्तं ॥

३५१९. सेज्जासंथारदुगं[15], ऽणणुण्णवेऊण ठायमाणस्स ।
लहुगो लहुगो लहुगा, आणादी निच्छुभण पंतो ॥नि. ४५३ ॥

३५२०. एवमदिण्ण वियारे[16], दिण्णवियारे वि सभ-पवादीसु[17] ।
तण-फलगाणुण्णाता, कप्पडियादीण जत्थ भवे ॥

३५२१. ताणि वि तु न कप्पंती, अणणुण्णवितम्मि लहुगमासो उ ।
इत्तरियं पि न कप्पति, जम्हा[18] तु अजाइतोग्गहणं ॥

३५२२. जावंतिय दोसा वा[19], अदत्तनिच्छुभण दिवस-रातो वा ।
एते दोसे पावति, दिन्नवियारे वि ठायंते ॥

३५२३. किन्नु अदिन्नवियारे, कोट्ठारादीसु[20] जत्थ तणफलगा ।
रक्खिज्जंते तहियं, अणणुण्णाए न ठायंति ॥

---

१. पुव्विं (ब)।
२. वण्णिउं (स)।
३. अंतो (अ)।
४. हवति (अ)।
५. तत्थेव वा गवेसे (ब)।
६. चेवणु० (स)।
७. कं (अ, स)।
८. जहुओ (ब)।
९. गंतव्वं वासया ० (अ)।
१०. ० खाती (ब)।
११. गच्छे ऽहवं (अ)।
१२. उ (स)।
१३. ० गपक्खेसु (स)।
१४. ०ण्णासू (स)।
१५. ०संथारएसु (स)।
१६. विदारे (ब)।
१७. य वादीसु (स)।
१८. तम्हा (अ)।
१९. या (स)।
२०. कोट्ठारीसु (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५२४. दोसाण रक्खणट्ठा, चोदेति निरत्थयं ततो सुत्तं ।
भण्णति कारणियं खलु, इमे[1] य[2] ते कारणा होंति ॥नि. ४५४॥

३५२५. अद्धाणे अद्धाहिय, ओमऽसिवे गामऽणुगामवियाले[3] ।
तेणा[4] सावयमसगा, सीतं वासं दुरहियासं ॥नि. ४५५॥

३५२६. एतेहि कारणेहिं, पुव्वं[5] पेहितु दिट्ठऽणुण्णाते ।
ताधे अयंति[6] दिट्ठे, इमा तु जतणा तहिं होती ॥

३५२७. पेहेत्तुच्चारभूमादी[7], ठायंति[8] वोत्तु परिजणं ।
अच्छामो जाव सो एती, जाईहामो तमागतं ॥

३५२८. वयं वण्णं च नाऊणं, वयंति[9] वग्गुवादिणो ।
सभंडावेतरे[10] सेज्जं, अप्फंदंति[11] निरंतरं ॥

३५२९. अब्भासत्थं गंतूण, पुच्छए दूरए त्तिमा जतणा ।
तद्दिसमेंत[12] पडिच्छण, पत्तेय कधेंति सब्भावं ॥

३५३०. बिले व वसिउं नागा, पातो[13] गच्छामु सज्जणा ।
निरत्थाणं बहिं दोसा, जाते मा होज्ज तुज्झ[14] वी ॥

३५३१. जदि देति सुंदरं तू, अध उ वदिज्जाहि 'नीह मज्झ'[15] गिहा ।
अन्नत्थ[16] वसधि[17] मग्गह, तहियं अणुसट्ठिमादीणि[18] ॥

३५३२. अणुलोमणं सजाती, सजातिमेवेति[19] तह वि उ[20] अठंते[21] ।
अभियोगनिमित्तं वा, बंधण गोसे य ववहारो ॥

३५३३. मा णे छिवसु भाणाइं, मा भिंदिस्ससि णोऽजत ![22] ।
दुहतो मा य वालेंति[23], थेरा वारेंति संजए ॥

३५३४. अहवा बेंति अम्हे ते, सहामो[24] एस ते बली ।
न सहेज्जावराधं ते, तेण होज्ज न ते खमं ॥

---

१. यमे (ब)।
२. इ (अ)।
३. गामणुगामियवि ० (ब)।
४. तेणे (स)।
५. पुव्वि (अ)।
६. जइंति (अ), अइंति (स)।
७. ०भोमादी (स)।
८. ठायंती (ब, स)।
९. वयंते (स)।
१०. से भंडा० (ब)।
११. अफुरंति (अ), अप्फुंदंती (ब), अफडंती (स)।
१२. ०समित्त (अ)।
१३. पादो (ब)।
१४. तुब्भ (स)।
१५. मज्झ णीति (ब)।
१६. अण्णुत्थ (ब)।
१७. वसहिं (स)।
१८. ० मातीणि (ब)।
१९. सुजाइ० (ब)।
२०. x (ब)।
२१. अत्थते (अ)।
२२. ० जतं (अ)।
२३. छालेंति (स)।
२४. सहामु (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५३५. सो य रुट्ठो व उट्ठेत्ता, खंभं कुड्डं व कंपते ।
पुव्वं व[1] णातिमित्तेहिं, तं गमेंति पहूण वा ॥दारं ॥

३५३६. गहितऽन्नरक्खणट्ठा[2], वइसुत्तमिणं समासतो भणियं[3] ।
उवधी[4] सुत्ता उ इमे, साधम्मिय तेण रक्खट्ठा ॥

३५३७. दुविधो य अधालहुसो, जधण्णतो मज्झिमो य उवधी तु ।
अन्नतरग्गहणेणं, घेप्पति तिविधो तु उवधी तु ॥

३५३८. अंतो परिठावंते[5], 'बहिया य वियारमादीसु'[6] लहुगो ।
अन्नतरं उवगरणं, दिट्ठं संका ण घेच्छंति[7] ॥नि. ४५६ ॥

३५३९. किं होज्ज परिट्ठवितं, पम्हुट्ठं[8] वावि तो न गेण्हंती ।
किं एयस्सऽन्नस्स[9] व, संकिज्जति गेण्हमाणो वि ॥नि. ४५७ ॥

३५४०. थिग्गल धुत्तापोत्ते,[10] बालगचीरादिएहि अधिगरणं[11] ।
बहुदोसतमा कप्पा, परिहाणी जा विणा तं च ॥नि. ४५८ ॥

३५४१. एते अण्णे य बहू, जम्हा दोसा तहिं[12] पसज्जंती[13] ।
आसन्ने अंतो वा, तम्हा उवहिं न वोसिरए[14] ॥नि. ४५९ ॥

३५४२. निस्संकितं तु नाउं, विच्चुयमेयं[15] ति तार्धे घेत्तव्वं ।
संकादिदोसविजढा, नाउं वप्पेंति[16] जस्स वयं[17] ॥

३५४३. समणुण्णेतराणं वा, संजती संजताण वा[18] ।
इतरे उ अणुवदेसो, गहितं पुण घेप्पए तेहिं ॥

३५४४. बितियपदे न गेण्हेज्ज, विविंचिय दुगुंछिते असंविग्गे ।
तुच्छमपयोयणं वा, अगेण्हता होतऽपच्छित्ती ॥

३५४५. अंतो विसगलजुण्णं, विविंचितं तं च दट्ठु नो गिण्हे ।
असुइट्ठाणे[19] वि[20] चुतं, बहुधा वालादि छिन्नं वा ॥

३५४६. हीणाहियप्पमाणं, सिव्वणि 'चित्तल विरंग'[21] भंगी वा ।
एतेहि असंविग्गोवहि त्ति दट्ठुं विवज्जंती ॥

---

१. स (अ)।
२. गिहितं न रक्ख० (अ) गिहितेन्न ० (स)।
३. कधियं (अ), कहियं (स)।
४. उवहिं (स)।
५. परिट्ठवंते (स)।
६. तहिया व विहार० (स)।
७. गच्छंति (अ), सम्प्रति निर्युक्तिविस्तरः (मवृ)।
८. पम्हट्ठं (ब)।
९. एयस्स व अन्नस्स (स)।
१०. धूतापोत्ते (स)।
११. अहिग ० (ब)।
१२. तेहिं (अ)।
१३. सज्जंती (ब)।
१४. वोसिरे (अ, ब, स)।
१५. विज्जुय० (अ)।
१६. वप्पेति (अ), वप्पिति (स)।
१७. तयं (अ)।
१८. गाथा के पूर्वार्द्ध में अनुष्टुप् छंद है।
१९. असुयट्ठाणे (अ)।
२०. व (अ)।
२१. चित्तलि विभग (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५४७. एमेव य बितियपदे, अंतो मुवरिं[1] ठवेज्जउ[2] इमेहिं ।
तुच्छो अतिजुण्णो वा, सुण्णे वावी[3] विविंचेज्जा[4] ॥

३५४८. एमेव य बहिया वी, वियारभूमीय[5] होज्ज पडियं तु[6] ।
तस्स वि एसेव गमो, होति य नेओ निरवसेसो[7] ॥

३५४९. गामो खलु पुव्वुत्तो, दूइज्जंते[8] तु 'दोन्नि उ[9] विहाणा' ।
अन्नतरग्गहणेणं, दुविधो तिविधो व उवधी तु ॥

३५५०. पंथे उवस्सए वा, पासवणुच्चारमाइयंते[10] वा ।
पम्हुसती[11] एतेहिं, तम्हा मोत्तूणिमे ठाणा[12] ॥नि. ४६० ॥

३५५१. पंथे वीसमणनिवेसणादि सो मासो होति लहुगो उ ।
आगंतारट्ठाणे[13], लहुगा आणादिणो दोसा[14] ॥नि. ४६१ ॥

३५५२. मिच्छत्तअन्नपंथे, धूली उक्खणण उवधिणो[15] विणासो ।
ते चेव य सविसेसा, संकादि विविंचमाणे वी ॥दारं ॥नि. ४६२ ॥

३५५३. पंथे न ठाइयव्वं, बहवे दोसा तहिं पसज्जंति ।
अब्भुट्ठिता ति[16] गुरुगा, जं वा आवज्जती जत्तो ॥

३५५४. जाणंति अप्पणो सारं, एते समणवादिणो ।
सारमेतेसि[17] लोगो यं, अप्पणो 'न वियाणती'[18] ॥दारं ॥

३५५५. अण्णपधेण वयंते, काया सो चेव वा भवे पंथो ।
अचियत्तऽसंखडादी, भाणादिविराधणा[19] चेव ॥दारं ॥

३५५६. सरक्खधूलिचेयण्णे[20], पत्थिवाणं विणासणा ।
अचित्तरेणुमइलम्मि, दोसा धोव्वणऽधोव्वणे[21] ॥

३५५७. वेगाविद्धा[22] तुरंगादी, सहसा दुक्खनिग्गहा ।
परम्मुहं मुहं किच्चा, पंथा ठाणं[23] पणोल्लए[24] ॥

---

१. मुयरिं (ब), उवरिं (स) ।
२. ठवेज्जं (अ), ट्ठवे० (स) ।
३. वावि (अ) ।
४. विचिंतेज्जा (ब) ।
५. ०भूमि (ब) ।
६. X (ब) ।
७. अ और स प्रति में यह गाथा नहीं है ।
८. पुव्विज्जंते (ब), दूसिज्जंते (अ) ।
९. वण्णिउ (अ, ब) ।
१०. ० माईयंते (ब) ।
११. ० सति (अ) ०सते (स) ।
१२. सम्प्रति निर्युक्तिविस्तरः (मवृ) ।
१३. आगंतरसट्ठाणे (ब) ।
१४. चेव (अ,स) ।
१५. ०धिणो वा (ब) ।
१६. त्ति (अ) ।
१७. सारमित्तेसि (ब) ।
१८. य न याणई (ब,स) ।
१९. भाणेतिराहणा (ब) ।
२०. ० धूलीचे० (स)
२१. ० धोवणा (ब) ।
२२. वेगाइद्धा (अ,स) ।
२३. वणं (ब) ।
२४. गाथायामेकवचनं प्राकृतत्वात् (मवृ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५५८. पम्हुट्ठमवि अन्नत्थ, जइच्छा[1] कोवि[2] पेच्छती ।
पंथे उवरिं[3] पम्हुट्ठं, खिप्पं[4] गेण्हंति अद्धगा[5] ॥

३५५९. एवं ठितोवविट्ठे[6], सविसेसतरा भवंति उ निवण्णे ।
दोसा निद्दपमादं, गते य[7] उवधिं हरंतऽण्णे[8] ॥

३५६०. उच्चारं पासवणं, अणुपंथे[9] चेव आयरंतस्स ।
लहुगो य होति मासो, चाउम्मासो सवित्थारो ॥

३५६१. छड्डावणमन्नपहो[10], दवासती[11] दुब्भिगंध कलुसप्पे ।
तेणो त्ति व संकेज्जा, आदियणे चेव उड्डाहो ॥

३५६२. अच्चातव दूरपहे, असहू भारेण खेदियप्पा वा ।
छन्ने वा मोत्तु पहं, गामसमीवे य छन्ने वा[12] ॥

३५६३. पंथे ठितो[13] न पेच्छति, परिहरिया पुव्ववण्णिया दोसा ।
बितियपदे असतीए, जयणाए चिट्ठणादीणि ॥

३५६४. संकट्ठ हरितछाया, असती[14] गहितोवही ठितो उड्ढे[15] ।
उट्ठेति[16] व अप्पत्ते, 'सहसा पत्ते'[17] ततो पट्ठिं[18] ॥

३५६५. भुंजणपियणुच्चारे, जतणं तत्थ कुव्वती ।
उदाहडा य[19] जे दोसा, पुव्वं तेसु जतो भवे ॥

३५६६. गंतव्व पलोएउं[20], अकरणे 'लहुगो य दोस आणादी'[21] ।
पम्हुट्ठो वोसट्ठे, लहुगो[22] आणादिणो चेव ॥नि. ४६३ ॥

३५६७. पम्हुट्ठे गंतव्वं[23], अगमणे लहुगो य दोस आणादी ।
निक्कारणम्मि तिन्नी[24], उ पोरिसीकारणे सुद्धो ॥

---

१. जंतित्थाइ (अ)।
२. कोति (ब)।
३. तुवरिं (अ,स)।
४. खेप्पं (अ)।
५. अट्ठगा (ब)।
६. ठियंयं पिट्ठे (ब)।
७. एय (ब)।
८. हवंतण्णे (ब)।
९. ० पहे (ब)।
१०. छड्डाणमन्न० (ब)।
११. दव्वा० (ब)।
१२. वी (ब,स)।
१३. विट्ठो (ब)।
१४. सती व (स)।
१५. अन्छे (ब)।
१६. उट्ठेत (अ)।
१७. x (अ)।
१८. पिट्ठे (अ)।
१९. उ (अ)।
२०. पलोएज्ज (स)।
२१. दोस लहुग आणादी (ब), लहुगो तु दोस० (स)।
२२. चउरो (ब)।
२३. गंतव्व (स)।
२४. तिण्णि (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५६८. *चरमाए[1] वि नियत्तति[2], जदि वासो अत्थि अंतरा वसिमे ।*
तिण्णि वि[3] जामे वसिउं, नियत्तति निरच्चए चरिमे[4] ॥

३५६९. दूरं सो वि य तुच्छो, सावय तेणा नदी व वासं वा ।
इच्चादिकारणेहिं, करेंति उस्सग्ग मो तस्स ॥

३५७०. एवं ता पम्हुट्ठो, जेसिं तेसिं[5] विधी भवे एसो ।
जे पुण अन्ने पेच्छे[6], तेसिं तु[7] इमो विधी होति ॥

३५७१. दट्ठुवगहणे[8] लहुगो, दुविधो उवही उ नायमणातो ।
दुविधा णायमणाया, संविग्ग तधा असंविग्गा ॥

३५७२. मोत्तूण असंविग्गे, संविग्गाणं तु[9] नयणजतणाए ।
दोवग्गा[10] संविग्गे, छब्भंगा णायमण्णाए[11] ॥

३५७३. सयमेव अन्नपेसे, अप्पाहे वावि एव सग्गामे ।
परगामे वि य एवं, 'संजतिवग्गे वि छब्भंगा'[12] ॥

३५७४. ण्हाणादऽणाय[13] घोसण, सोउं गमणं च पेसणप्पाहे ।
पम्हुट्ठे वोसट्ठे, अप्पबहु असंथरंतम्मि[14] ॥

३५७५. कामं पम्हुट्ठं ण्हे, चत्तं पुण भावतो इमम्हेहिं[15] ।
इति बेंते[16] समणुण्णे, इच्छाकज्जेसु सेसेसु ॥

३५७६. पक्खिगापक्खिगा चेव, भवंति इतरे दुहा ।
संविग्गपक्खिगे[17] णेति, इतरेसिं न गेण्हती[18] ॥

३५७७. इतरे वि होज्ज गहणं, आसंकाए अणज्जमाणम्मि ।
किह पुण होज्जा संका, इमेहिं तु कारणेहिं ति ॥

३५७८. ण्हाणादोसरणे वा, अधव समावत्तितो गताणेगा ।
संविग्गमसंविग्गा, इति संका गेण्हते पडितं ॥

---

१. चरिमाए (ब)।
२. नियत्तंति (ब)।
३. व (ब)।
४. चरमे (अ)।
५. तेसं (अ)।
६. पेच्छति (ब), पुच्छे (स)।
७. व्व (स)।
८. दट्ठुमगे ० (ब), दट्ठु अमेण्हणे (स)।
९. व (अ)।
१०. गोवग्गा (ब)।
११. स प्रति में गाथा का उत्तरार्ध नहीं है।
१२. x (ब)।
१३. ण्हाणादी णाय (अ)।
१४. ३५७४ एवं ३५७५ ये दोनों गाथाएं ब प्रति में नहीं हैं।
१५. इमम्हेति (स)।
१६. बेंती (ब)।
१७. ० पक्खगे (ब)।
१८. गिण्हई (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५७९. संविग्गपुराणोवहि[१], अधवा विधि सिव्वणा[२] समावत्ती[३] ।
होज्ज व असीवितो[४] च्चिय, इति आसंकाएँ गहणं तु ॥

३५८०. ते पुण परदेसगते, नाउं भुंजंति अहव उज्झंति ।
अन्ने तु परिट्ठवणा[५], कारणभोगो व गीतेसुं ॥

३५८१. बितियपदे न गेण्हेज्ज, संविग्गाणं पिमेहि[६] कज्जेहिं ।
आसंकाएँ न नज्जति, संविग्गाणं व इतरेसिं ॥

३५८२. असिवगहितो व सोउं, ते वा उभयं व होज्ज जदि गहियं ।
ओमेण अन्नदेसं, व गंतुकामा न गेण्हेज्जा ॥

३५८३. अध पुण गहितं पुव्वं, न य दिट्ठो जस्स विच्चुयं[७] तं तु ।
पधावितअण्णदेसं[८], इमेण[९] विधिणा विगिंचेज्जा ॥

३५८४. दुविहा जातमजाता, जाता[१०] अभियोग तह असुद्धा य[११] ।
अभियोगादी[१२] छेत्तुं, इतरं पुण अक्खुतं[१३] चेव ॥

३५८५. पहनिग्गयादियाणं[१४], विजाणणट्ठाय तत्थ चोदेति ।
सुद्धासुद्धनिमित्तं, कीरतु[१५] चिंधं इमं तु तहिं[१६] ॥

३५८६. एगा दो तिन्नि वली, वत्थे कीरंति[१७] पाय-चीराणि ।
छुब्भंतु[१८] चोदगेणं, इति उदिते बेति[१९] आयरिओ ॥

३५८७. सुद्धमसुद्धं एवं, होति असुद्धं च सुद्ध वातवसा ।
तेण ति[२०] दुगेग गंथी[२१], वत्थे पादम्मि रेहा ऊ ॥

३५८८. अद्धाणनिग्गतादी[२२], उवएसाणयण पेसणं वावि ।
अविकोवित अप्पणगं, दट्ठुं भिन्ने विवित्ते य ॥नि. ४६४॥

३५८९. अद्धाणनिग्गतादी, नाउ परित्तोवधी विवित्ते वा ।
संपडुगभंडधारि, पेसंती ते विजाणंते[२३] ॥

---

१. ० पुराणो वा (ब), ० वहिं (स)।
२. सिज्जणा (ब), सीवणा (स)।
३. समावित्ती (अ)।
४. असिवीओ (ब), असिव्विओ (अ)।
५. परिट्ठावण (अ)।
६. पि एहिं (ब)।
७. विज्जुयं (अ), विव्वुयं (ब)।
८. पवहातितण्ण ० (ब)।
९. इमिणा (अ, ब)।
१०. जाय (ब)।
११. या (स)।
१२. अभिउग्गादी (ब)।
१३. अक्खयं (अ)।
१४. विहिनि० (अ, स), विहनि० (ब)।
१५. कीरइ (अ)।
१६. तइहिं (अ)।
१७. कीरति (ब)।
१८. छुब्भंति (स)।
१९. बिंति (ब)।
२०. x (ब)।
२१. गंठी (स)।
२२. ० याती (ब)।
२३. विणाणंते (ब)।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

३५९०. *गड्डा[१]-गिरि-'तरुमादीणि'[२], काउ चिंधाणि तत्थ पेसंति* ।
अवियावडा[३] सयं वा, आणंतऽन्नं व मग्गंति ॥

३५९१. नीतम्मि वि[४] उवगरणे, उवहतमेतं न इच्छती[५] कोई[६] ।
अविकोवित[७] अप्पणगं, अणिच्छमाणो विविंचंति ॥

३५९२. असतीय अप्पणो[८] वि य, झामित-हित-वूढ-पडियमादीसु ।
सुज्झति कयप्पयत्ते, तमेव गेण्हं असढभावो ॥

३५९३. उवधी दूरद्धाणे, साहम्मियतेण्णरक्खणा[९] चेव ।
अणुवत्तंते उ इमं, अतिरेगपडिग्गहे[१०] सुत्तं ।

३५९४. साधम्मिय उद्देसो, निद्देसो[११] होंति इत्थि-पुरिसाणं ।
गणिवायग उद्देसो, अमुगगणी वायए इतरो ॥

३५९५. ऊणातिरित्तधरणे, चउरो मासा हवंति उग्घाता ।
आणादिणो[१२] य दोसा, संघट्टणमादि पलिमंथो[१३] ॥**नि. ४६५** ॥

३५९६. दो पायाणुण्णाया, अतिरेगं ततियपत्त माणातो ।
धारंत पाणघट्टण[१४], भारे पडिलेह पलिमंथो[१५] ॥**नि. ४६६** ॥

३५९७. चोदेती[१६] अतिरेगे, जदि दोसा तो[१७] धरेतु ओमं तु ।
एक्कं[१८] बहूण कप्पति, हिंडंतु य चक्कवालेण[१९] ॥

३५९८. पंचण्हमेगपायं, दसमेणं एक्कमेक्क पारेउ ।
संघट्टणादि एवं, न होंति दुविधं च सिं[२०] ओमं ॥

३५९९. आहारे उवगरणे, दुविधं[२१] ओमं च होंति[२२] तेसिं तु ।
सुत्ताभिहियं च कतं, वेहारियलक्खणं चेव ॥

---

१. गेड्डा (ब)।
२. ० मादी वि (ब, स)।
३. अवियावट्टा (अ)।
४. उ (स)।
५. इच्छते (अ, स)।
६. कोति (ब)।
७. ०वितेण (अ)।
८. अप्पणा (ब)।
९. ० रक्खणो (अ), ० खणे (ब)।
१०. ० गहं (स)।
११. x (अ)।
१२. आणातिणो (अ)।
१३. सम्प्रति निर्युक्तिविस्तरः (मवृ)।
१४. पाणकट्टण (ब)।
१५. x (अ)।
१६. चोदेति (ब)।
१७. x (अ)।
१८. एगं (ब)।
१९. ० वातेणं (स)।
२०. सि (ब)।
२१. दुविध (अ)।
२२. होति (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६००. वेहारुगाण[1] मन्ने[2], जध सिं जल्लेण[3] मइलियं अंगं ।
मइला[4] य चोलपट्टा, एगं पादं च सव्वेसिं ॥

३६०१. जेसिं एसुवदेसो, तित्थयराणं तु[5] कोविया[6] आणा ।
चउरो य अणुग्घाता, णेगे दोसा इमे होंती ॥

३६०२. अद्धाणे गेलण्णे, अप्प पर चता[7] य भिन्नमायरिए ।
आदेस-बाल-वुड्ढा[8], सेहा खमगा य परिचत्ता ॥नि. ४६७ ॥

३६०३. दिंते तेसिं अप्पा, जढो उ अद्धाण[9] ते जढा जं च ।
कुज्जा कुलालगहणं, वया जढा पाणगहणम्मी ॥

३६०४. जदि होंति दोस एवं, 'तम्हा एक्केक्क धारए'[10] एक्कं ।
'सुत्ते य एगभणियं'[11], मत्तग उवदेसणा वेण्हिं[12] ॥

३६०५. दिन्नज्जरक्खितेहिं, दसपुरनगरम्मि उच्छुघरनामे ।
वासावासठितेहिं, गुणनिप्फत्तिं बहुं नाउं ॥

३६०६. दूरे चिक्खल्लो वुट्ठिकाय सज्झायझाणपलिमंथो ।
तो तेहि एस दिन्नो, एव भणंतस्स चउगुरुगा ॥

३६०७. पाणदयखमणकरणे, संघाडासति विकप्पपरिहारी ।
खमणासहु[13] एगागी, गेण्हेति तु मत्तए भत्तं ॥

३६०८. थेराणं सविदिण्णो, ओहोवधि मत्तगो जिणवरेहिं ।
आयरियादीणट्ठा, तस्सुवभोगो न इधरा उ ॥

३६०९. गुणनिप्फत्ती बहुगी, दगमासे[14] होहिंति त्ति वितरंति ।
लोभे पसज्जमाणे, वारेंति ततो पुणो मत्तं ॥

३६१०. एवं[15] सिद्धग्गहणं आयरियादीण कारणे भोगो ।
पाणदयट्ठुवभोगो, बितिओ पुण रक्खियज्जाओ ॥

३६११. जत्तियमित्ता वारा, दिणेण[16] आणेति[17] तत्तिया लहुगा ।
अट्ठहि दिणेहि सपदं, निक्कारण मत्तपरिभोगो ॥

---

१. वेहारियाण (मु) ।
२. मल्ले (अ) ।
३. जल्लो ण (ब) ।
४. मलिणा (स) ।
५. व (अ) ।
६. कोविय (ब) ।
७. वया (अ) ।
८. वुड्ढी (स) ।
९. अद्धाणे (अ, ब) ।
१०. एक्केको धार (ब) ।
११. सुत्तेगभणियं (अ) ।
१२. वेण्ही (स) ।
१३. खमगासहु (ब) ।
१४. दसमासे (अ) ।
१५. एगं (अ) ।
१६. दिणे ति (अ) ।
१७. x (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६१२. जे बेंति न घेत्तव्वो, 'उ मत्तओ'[१] जे य तं न धारेंति ।
चउगुरुगा तेसि भवे, आणादिविराधणा चेव ॥नि. ४६८ ।

३६१३. लोए होति दुगुंछा, वियारे पडिग्गहेण[२] उड्डाहो ।
आयरियादी चत्ता, वारत्तथलीय[३] दिट्ठंतो ॥

३६१४. तम्हा उ धरेतव्वो, मत्तो य पडिग्गहो य दोण्णेते ।
गणणाय पमाणेण य, एवं दोसा न होंतेते ॥

३६१५. जइ दोण्ह चेव गहणं, अतिरेगपडिग्गहो न संभवति ।
अह[४] देति तत्थ एगं, हाणी उड्डाहमादीया[५] ॥

३६१६. अतिरेगदुविधकारण, अभिणवगहणे पुराणगहणे य ।
अभिणवगहणे दुविहे[६], वावारिय[७] अप्पछंदे[८] य ॥

३६१७. भिन्ने व झामिए वा, पडिणीए तेण[९] साणमादि हिते ।
सेहोवसंपयासु य, अभिणवगहणं तु पायस्स ॥

३६१८. देसे सव्वुवहिम्मी[१०], अभिग्गही तत्थ होंति सच्छंदा ।
तेसऽसति[११] निजोएज्जा, जे जोग्गा दुविधउवधिम्मि ॥

३६१९. दुविधा छिन्नमछिन्ना, भणंति[१२] लहुगो य 'पडिसुणंते य'[१३] ।
गुरुवयण दूरें तत्थ उ, गहिते गहणे य जं वुत्तं[१४] ॥नि. ४६९ ॥

३६२०. गेण्हह वीसं पाए, तिन्नि पगारा उ तत्थ अतिरेगो ।
तत्थेव भणति एगो, मज्झ वि गेण्हेज्ज[१५] जध अज्जो ॥

३६२१. आयरिएँ भणाहि तुमं, लज्जालुस्स य भणंति आयरिए ।
नाऊण व सढभावं, नेच्छंतिधरा[१६] भवे लहुगो ॥

३६२२. जइ पुण आयरिएहिं, सयमेव पडिस्सुतं भवति तस्स ।
लक्खणमलक्खणजुतं, अतिरेगं जं तु तं तस्स ॥

३६२३. बितिओ पंथे भणती[१७], आसन्नागंतु विण्णवेंति गुरुं ।
तं चेव पेसवंती, दूरगयाणं इमा मेरा ॥

---

१. उम्मत्तअ (ब) ।
२. पडिग्गहणे (ब) ।
३. पारत्त० (ब) ।
४. इह (ब) ।
५. उड्डाहगादीया (ब) ।
६. ठविए (अ) ।
७. ववहारिय (ब) ।
८. गाथायां सप्तमी तृतीयार्थे प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
९. x (अ) ।
१०. ० वहम्मिय (स) ।
११. तस्सऽसति (ब), तेसि सति (स)
१२. भणंते (स)
१३. ० सुणेंते यं (ब) ।
१४. निर्युक्तिः व्यापारयति (मवृ) ।
१५. गिण्हइ (ब) ।
१६. ० तिहरा (अ) ।
१७. भणंती (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६२४. गेण्हामो अतिरेगं, तत्थ पुण विजाणगा गुरू अम्हं ।
देहिंति तगं वण्णं, साधारणमेव ठावेंति[1] ॥

३६२५. ततिओ लक्खणजुत्तं, अहियं बीसाएँ ते सयं गेण्हे ।
एते तिन्नि विगप्पा[2], होंतऽतिरेगस्स नातव्वा ॥

३६२६. सच्छंद पडिण्णवणा, गहिते गहणे य जारिसं भणियं ।
अल[3] थिर धुव धारणियं[4], सो वा अन्नो 'य णं धरए'[5] ॥

३६२७. ओमंथपाणमादी[6], गहणे तु विधिं तहिं पउंजंति ।
गहिए य पगासमुहे, करेंति[7] पडिलेह दो काले ॥

३६२८. आणीतेसु तु गुरुणा, दोसुं[8] गहितेसु[9] तो[10] जधावुड्ढं ।
गेण्हंति उग्गहे खलु, ओमादी मत्त सेसेवं ॥

३६२९. एमेव अछिन्नेसु वि, गहिते गहणे[11] य मोत्तु अतिरेगं ।
एत्तो पुराणगहणं, वोच्छामि इमेहि तु पदेहिं ॥

३६३०. आगमगम कालगते, दुल्लभ तहि कारणेहि एतेहिं ।
दुविधा एगमणेगा, अणेगनिद्दिट्ठ निद्दिट्ठा ॥नि. ४७० ॥

३६३१. भायणदेसा एंतो, पाए[12] घेत्तूण एति[13] दाहंति ।
दाऊणऽवरो गच्छति, भायणदेसं तहिं घेच्छं[14] ॥

३६३२. कालगयम्मि सहाए, भग्गे वण्णस्स होति अतिरेगं ।
पत्ते लंबऽतिरेगे[15], दुल्लभपाए विमे पंच ॥

३६३३. नंदि-पडिग्गह[16]-विपडिग्गहे य[17] तह कमढगं विमत्तो[18] य ।
पासवणमत्तओ वि य, तक्कज्ज[19] परूवणा चेव ॥

३६३४. एगो निद्दिस एगं, एगो णेगो[20] अणेग एगं वा ।
णेगो णेगे ते पुण, गणि वसभे भिक्खु खुड्डे य ॥

---

१. ठाविंति (ब)।
२. विकप्पा (अ)।
३. अलं (अ)।
४. ० णिय (अ)।
५. व णं वरए (अ)।
६. ओमत्थ ० (स)।
७. करेति (ब)।
८. दोसं (अ)।
९. गहिते य (ब)।
१०. तो मओ (ब), तो गया (अ)।
११. गहणं (अ)।
१२. पादो (ब)।
१३. एते (ब, स)।
१४. घेत्थं (ब)।
१५. ० तिरेग (ब)।
१६. ० गहे (ब)।
१७. इय (अ), वि (स)।
१८. चिय मत्तो (अ)।
१९. तव्वज्ज (अ)।
२०. अणेगा (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६३५. एमेव इत्थिवग्गे, पंचगमा अधव निद्दिसति मीसे ।
दाउं[1] वच्चति पेसे[2], वात्री णिंते पुण विसेसा ॥

३६३६. सच्छंदमणिद्दिट्ठे[3], पावण निद्दिट्ठमंतरा देति ।
चउलहु आदेसो वा, लहुगा य[4] इमेसि अद्धाणे[5] ॥

३६३७. अद्धाण बालवुड्ढे, गेलन्ने जुंगिते सरीरेण ।
पायच्छि-नास-कर-कन्न[6], संजतीणं पि एमेव ॥**नि. ४७१** ॥

३६३८. अद्धाण ओम असिवे, उद्दूढाण[7] वि[8] न देति जं पावे ।
बालस्सऽज्झोवाते, थेरस्सऽसतीय जं कुज्जा ॥

३६३९. अतरंतस्स अदेंते, तप्पडियरगस्स वावि जा हाणी ।
जुंगित पुव्वनिसिद्धो, 'जाति विदेसेतरो पच्छा'[9] ॥

३६४०. जातीय जुंगितो पुण, जत्थ न नज्जति तहिं तु सो अच्छे ।
अमुगनिमित्तं विगलो, इतरो जहि नज्जति[10] तहिं तु ॥

३६४१. जे हिंडंता काए, वधिंति जे[11] वि य करेंति उड्डाहं ।
किन्नु हु[12] गिहि सामन्ने, वियंगिता लोगसंका[13] उ ॥

३६४२. पायच्छि-नास-कर-कण्ण, जुंगिते जातिजुंगिते[14] चेव ।
वोच्चत्थे चउलहुगा, सरिसे पुव्वं तु समणीणं ॥

३६४३. अह एते तु न हुज्जा, ताधे निद्दिट्ठ पादमूलं तु ।
गंतूण इच्छकारं[15], काउं तो तं निवेदेति[16] ॥

३६४४. अद्दिट्ठे[17] पुण तहियं, पेसे[18] अधवा वि तस्स अप्पाहे ।
अध[19] उ न नज्जति[20] ताहे, ओसरणेसुं तिसु[21] वि मग्गे ॥

३६४५. एगे वि[22] महंतम्मि उ, उग्घोसेऊण नाउ नेति तहिं ।
अह नत्थि पवत्ती से, ताधे इच्छाविवेगो[23] वा ॥

---

१. वाउं (ब)।
२. पेसे व (ब)।
३. ०द्दिट्ठा (ब)।
४. x (ब)।
५. अद्धाणे (अ)।
६. ० कन्ना (अ)।
७. उव्वूढाण (अ)।
८. व (अ)।
९. जाव विदेसंतरं पिच्छा (ब)।
१०. निज्जति (अ)।
११. जं (ब)।
१२. णु (ब)।
१३. लोवसंका (अ)।
१४. x (अ)।
१५. मिच्छाकारं (ब)।
१६. निवेज्जंति (ब)।
१७. अद्दिट्ठं (ब)।
१८. पेसि (मु)।
१९. अट्ठ (अ)।
२०. भज्जति (ब)।
२१. ति (अ)।
२२. उ (ब)।
२३. इच्छामि वेगो (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६४६. एगे उ पुव्वभणिते, कारण निक्कारणे दुविधभेदो ।
आहिंडग ओधाणे, दुविधा ते होंति एक्केक्का ।।नि. ४७२ ।।

३६४७. असिवादी कारणिया[1], निक्कारणिया[2] य चक्कथूभादी ।
उवदेस - अणुवएसे, दुविधा आहिंडगा होंति ।।

३६४८. ओहावंता दुविधा, लिंग विहारे य होंति नातव्वा ।
एगागी छप्पेते, विहार तहिं दोसु समणुण्णा ।।

३६४९. निक्कारणिएऽणुवदेसिएँ[3] य आपुच्छिऊण वच्चंते ।
अणुसासंति उ[4] ताधे, वसभा[5] उ तहिं इमेहिं तु ।।

३६५०. एसेव चेइयाणं[6], भत्तिगतो जो तवम्मि उज्जमती ।
इति 'अणुसिट्ठे अठिते'[7], असंभोगायारभंडं तु ।।

३६५१. खग्गूडेणोवहतं[8], अमणुण्णे[9] सागयस्स वा जं तु ।
असंभोगिय उवकरणँ, इहरा गच्छे तगं नत्थि ।।

३६५२. तिट्ठाणे संवेगे[10], सावेक्खो निवत्त[11] तद्दिवसपुच्छा ।
मासो वुच्छ विवेचण, तं चेवऽणुसट्ठिमादीणि ।।

३६५३. अज्जेव पाडिपुच्छं, को दाहिति संकियस्स मे उभए ।
दंसणे कं उववूहे, किं थिरकरे[12] कस्स वच्छल्लं ।।

३६५४. सारेहिति सीदंतं[13], चरणे सोहिं च काहिती को मे ।
एव नियत्तऽणुलोमं, काउं[14] उवहिं च तं[15] देंती[16] ।।दारं ।।

३६५५. दुविधोधाविय वसभा, सारेंति भयाणि व[17] से साहिंती ।
अट्ठारसठाणाइं, हयरस्सिगयंकुसनिभाइं ।।

३६५६. संविग्गमसंविग्गे, सारूविय-सिद्धपुत्तमणुसिट्ठे[18] ।
आगमणं आणयणं, तं वा घेत्तुं न इच्छंति ।।नि. ४७३ ।।

३६५७. संविग्गाण सगासे, वुत्थो तहिं अणुसासिय नियत्तो ।
लहुगो नोवहम्मती[19], इतरे लहुगा उवहतो य ।।

---

१. ० णितो (अ, स) ।
२. ० णिओ (अ) ।
३. ० एओवदे ० (ब), ० एणोवदे ० (अ) ।
४. य (स) ।
५. वसहा (ब) ।
६. चेतियाण (अ) ।
७. अणुसट्ठिए ट्ठिए (ब) ।
८. ० डेण उवहयं (स) ।
९. ०ण्णा (ब) ।
१०. गाथायां सप्तमी प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
११. नियत्तो (स) ।
१२. थिरिकरे (स) ।
१३. सीतंतं (ब), संदंत (स) ।
१४. नाउ (अ, ब) ।
१५. से (स) ।
१६. x (स) ।
१७. वा (ब) ।
१८. ० मणुसट्ठे (स) ।
१९. न चेव हम्मति (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६५८. संविग्गादणुसिट्ठो, तद्दिवसनियत्तो जइ[1] वि न मिलेज्जा ।
न य सज्जति वइयादिसु, चिरेण वि हु तो न उवहम्मे ॥

३६५९. एगाणियस्स सुवणे[2], मासो उवहम्मते य सो उवधी ।
तेण 'परं चउलहुगा'[3], आवज्जति जं च तं सव्वं ॥

३६६०. संविग्गेहणुसिट्ठो[4], भणेज्ज जइ हं इहेव अच्छामि ।
भण्णति ते आपुच्छसु, अणिच्छ तेसिं निवेदेंति ॥

३६६१. सो पुण पडिच्छओ वा, सीसे वा तस्स निग्गतो जत्तो[5] ।
सीसं समणुण्णातं, गेण्हंतितरम्मि भयणा उ ॥

३६६२. उद्दिट्ठमणुद्दिट्ठे, उद्दिट्ठ[6] समाणयम्मि पेसंति ।
वायंति वणुण्णायं, कडं[7] पडिच्छंति उ पडिच्छं ॥

३६६३. एवं ताव विहारे, लिंगोधावी[8] वि होति[9] एमेव ।
सो पुण संकिमसंकी, संकिविहारे य एगगमो ॥

३६६४. संविग्गमसंविग्गे, संकमसंकाएँ परिणतविवगा ।
पडिलेहण निक्खिवणं, अप्पणो अट्ठाय अन्नेसिं ॥

३६६५. घेत्तूणऽगारलिंगं, वती व अवती व जो उ ओधावी[10] ।
तस्स कडिपट्टदाणं, वत्थुं वासज्ज जं जोग्गं ॥

३६६६. जइ जीविहिंति जइ वा वि, तं धणं धरति जइ व वोच्छंति[11] ।
लिंगं मोच्छिति संका, पविट्ठ वुच्छेव उवहम्मे ॥

३६६७. समुदाण चरिगाण व, भीतो गिहिपंत तक्कारणं वा ।
णीउवधिं[12] सो तेणो, पविट्ठ वुत्थे वि[13] न विहम्मे ॥

३६६८. नीसंको वणुसिट्ठो[14], नीहुवहिमयं[15] अहं खु ओहामी ।
संविग्गाण[16] य गहणं, इतरेहि विजाणगा गेण्हे ॥

---

१. ते (स)।
२. सुवण्णे (ब)।
३. य परं च दुविभा (स)।
४. संविग्नैरनुशिष्टो (मवृ), ० णुसट्ठो (अ)।
५. जुत्तो (स)।
६. उद्दिट्ठं (अ)।
७. कडे (अ)।
८. ० धाती (अ, ब)।
९. होंति (अ)।
१०. ओधाती (अ, ब)।
११. वोच्छिति (अ)।
१२. नीउवधी (ब)।
१३. व (अ)।
१४. वणुसट्ठो (अ)।
१५. नेहुव ० (स), ० वहिमहं (स)।
१६. ० ग्गाणि (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६६९. नीसंकितो वि गंतूण[१], दोहि वि वग्गेहि चोदितो[२] एती ।
तक्खण णिंत न हम्मे, तहिं परिणतस्स[३] उवहम्मे ॥

३६७०. अत्तट्ठ परट्ठा वा, पडिलेहिय रक्खितो वि उ न हम्मे ।
एवं[४] तस्स 'उ नवरिं'[५], पवेस वइयादिसू[६] भयणा ॥

३६७१. अध पुण तेणुवजीवति[७], सारूविय-सिद्धपुत्तलिंगीणं ।
'केइ भणंतुवहम्मति'[८], चरणाभावा तु तन्न भवे ॥

३६७२. सो पुण पच्चुट्ठित्तो[९], जदि तं से उवहतं[१०] तु उवगरणं ।
असतीय व तो अन्नं, उग्गोवेंति त्ति गीतत्थो ॥

३६७३. 'संजतभावित खेत्ते'[११], तस्सऽसतीए[१२] उ[१३] चक्खुवेंटिहतं ।
तस्सऽसतिवेंटलहते, उप्पाएंतो उ सो एती ॥

३६७४. जाणंति एसणं वा, सावगदिट्ठी उ पुव्वझुसिता वा ।
विंटलभाविय णेण्हि[१४], किं धम्मो न होति गेण्हेज्जा ॥

३६७५. एवं उप्पाएउं, इतरं च विगिंचिऊण तो एती ।
असती य जधा[१५] लाभं, विविंचमाणे इमा जतणा ॥

३६७६. उवहतउग्गहलंभे, उग्गहण[१६] विगिंच मत्तए भत्तं ।
अप्पत्ते[१७] तत्थ दवं, उग्गहभत्तं गिहिदवेणं ॥

३६७७. अपहुव्वंते[१८] काले, दुल्लभदवऽभाविते य[१९] खेत्तम्मि ।
मत्तगदवेण धोव्वति, मत्तगलंभे • वि एमेव ॥

३६७८. चोदेति[२०] सुद्धऽसुद्धे, संफासेणं तु तं तु उवहम्मे ।
भण्णति संफासेणं, जेसुवहम्मे न सिं सोधी ॥

३६७९. लेवाडहत्थछिक्के[२१], सहस अणाभोगतो व पक्खित्ते ।
अविसुद्धग्गहणम्मि व[२२], असुज्झ[२३] सुज्झेज्ज 'वा इतरं'[२४] ॥

---

१. घित्तूण (ब) ।
२. चोतितो (ब) ।
३. ० णय वुच्छ (अ) ।
४. एव्वं (स) ।
५. न उवरिं (ब) ।
६. वइयासु (ब) ।
७. ० जीवी उ (स) ।
८. के त्ति भणंतुवहंति (ब) ।
९. पुव्वुट्ठितो (ब), पुच्चुट्ठंतो (स) ।
१०. x (अ) ।
११. ० भाविते खेत्ते (अ) ।
१२. तओ सइंते (ब) ।
१३. व (ब) ।
१४. तेण्हि (स) ।
१५. जह (ब) ।
१६. उग्गह (ब) ।
१७. अप्पजत्ते (अ)
१८. अपहुच्वंते (अ) ।
१९. वा (ब), व (स) ।
२०. चोतिइ (अ) ।
२१. ० छिक्को (अ) ।
२२. वि (ब) ।
२३. सुज्झ (अ) ।
२४. इयरं वा (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६८०. लक्खणमतिप्पसत्तं, अतिरेगे वि खलु कप्पती उवधी ।
इति आहारेमाणं, अतिप्पमाणे बहू दोसा ॥

३६८१. अधवावि पडिग्गहगे[१], भत्तं गेण्हंति तस्स किं माणं ।
जं जं उवग्गहे वा, चरणस्स तगं तग। भणती ॥

३६८२. नियायाहारस्स सया, बत्तीसइमो उ जो भवे भागो ।
तं कुक्कुडिप्पमाणं, नातव्वं बुद्धिमंतेहिं ॥

३६८३. कुच्छियकुडी तु[२] कुक्कुडि, सरीरगं अंडगं 'मुहं तीए'[३] ।
जायति देहस्स जतो, पुव्वं वयणं ततो[४] संसं ॥

३६८४. थलकुक्कुडिप्पमाणं[५], जं वाणायासिते[६] मुहे खिवति ।
अयमन्नो तु विगप्पो, कुक्कुडिअंडोवमे कवले ॥

३६८५. अट्ठ त्ति भाणिऊणं[७], छम्मासा हावते तु बत्तीसा ।
नामं चोदगवयणं, पासाए होति दिट्ठंतो[८] ॥नि. ४७४॥

३६८६. छम्मासखवणंतम्मि, सित्थादण्हातु लंबणं ।
तत्तो लंबणवड्डीए[९], जावेक्कतीस संथरे ॥

३६८७. एक्कमेक्कं तु हावेत्ता, दिणं पुव्वेक्कमेव उ ।
दिणे दिणे उ सित्थादी, जावेक्कतीस संथरे ॥

३६८८. पगामं होति बत्तीसा, निकामं 'जं तु निच्चसो'[१०] ।
दुप्पविजहया[११] तेसु[१२], गेही भवति[१३] वज्जिया ॥

३६८९. अप्पावड्ढदुभागोम, देसणं नाममेत्तगं[१४] नामं[१५] ।
पतिदिणमेक्कत्तीसं, आहारेह[१६] त्ति जं भणह ॥

३६९०. भण्णति अप्पाहारादओ समत्थस्सऽभिग्गहविसेसा ।
चंदायणादओ विव[१७], सुत्तनिवातो पगामम्मि[१८] ॥

३६९१. अप्पाहारग्गहणं, जेण य आवस्सयाण परिहाणी ।
न वि जायति तम्मत्तं, आहारेयव्वयं नियमा ॥

---

१. ० गहणे (अ)।
२. य (ब)।
३. सुमुहीतीए (ब)।
४. तेणं (स)।
५. थेर कु ० (ब)।
६. च णाया ० (स)।
७. भासिऊणं (स)।
८. सम्प्रति निर्युक्तिविस्तरः (मवृ)।
९. ० णसड्ढीए (ब)।
१०. जं तमिच्चसो (ब)।
११. दुप्पविजढया तु (स)।
१२. ते उ (ब)।
१३. हवंति (ब)।
१४. ० मत्तगं (अ)।
१५. नामा (अ)।
१६. पाहारेमि त्ति (अ, स)।
१७. वि य (स)
१८. पगासम्मि (अ)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६९२. दिट्ठंतोऽमच्चेणं, पासादेणं तु रायसंदिट्ठे[१] ।
दव्वे खेत्ते काले, भावेण य संकिलेसेति ॥

३६९३. अलोणाऽसक्कयं[२] सुक्खं, नो पगामं व दव्वतो ।
तं खेत्ताणुचियं[३] उण्हे, काले उस्सूरभोयणं ॥

३६९४. भावे न देति विस्सामं, निट्ठुरेहिं[४] च खिंसति ।
जियं भतिं[५] च नो देति, नट्ठा अकयदंडणा[६] ॥

३६९५. अकरणे पासायस्स उ, जह सोऽमच्चो तु दंडितो रण्णा ।
एमेव य आयरिए, उवणयणं होति कातव्वं[७] ॥

३६९६. कज्जम्मि[८] वि नो विगतिं, ददाति अंतं न तं च पज्जत्तं ।
खेत्ते खलु खेत्तादी, कुवसहिउब्भामगे[९] चेव ॥

३६९७. ततियाएँ देति[१०] काले, ओमे वुस्सग्ग वादिओ निच्चं ।
संगहउवग्गहे वि य, न कुणति[११] भावे पयंडो य ॥

३६९८. लोए लोउत्तरे चेव[१२], दो वि एते असाहगा ।
विवरीयवत्तिणो सिद्धी, अन्ने दो वि य साहगा ॥

३६९९. सिद्धीपासायवडेंसगस्स[१३] करणं चउव्विधं होति ।
दव्वे खेत्ते काले, 'भावे य'[१४] न संकिलेसेति ॥

३७००. एवं तु निम्मवेंती[१५], ते वी अचिरेण सिद्धिपासादं ।
तेसिं पि इमो उ विधी, आहारेयव्वए होति ॥

३७०१. अद्धमसणस्स सव्वंजणस्स कुज्जा दवस्स दो भाए ।
वायपवियारणट्ठा, छब्भागं ऊणयं कुज्जा ॥

३७०२. एसो आहारविधी, जध भणितो सव्वभावदंसीहिं ।
धम्माऽवस्सगजोगा[१६], जेण न हायंति तं कुज्जा ॥

इति अष्टम उद्देशक

---

१. ० संदिट्ठं (ब)।
२. अलोणय सक्कतं (स)।
३. खेत्ताणुवयं (अ)।
४. निट्ठुरिहि (ब)।
५. भयं (अ, ब)।
६. ० यडंडणा (स)।
७. व णेयव्वं (ब)।
८. कज्जेण (स)।
९. ० उब्भामिणे (ब)।
१०. ददेति (ब)।
११. काउ (ब)।
१२. चेत्ता (ब)।
१३. सिद्धि ० (स)।
१४. भावेण (ब, स)।
१५. निम्मावेंती (ब)।
१६. धम्मावासगजोग्गा (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नवम उद्देशक

३७०३. आहारो खलु पगतो, घेत्तव्वो सो कहिं न[1] वा कधितं ।
सागारियपिंडस्सा, इति नवमे सुत्तसंबंधो ॥

३७०४. आयासकरो आएसितो[2] उ आवेसणं[3] व आविसति ।
सो नायगो सुही वा, पभू व परतित्थिओ वावि ॥

३७०५. आएस-दास-भइए[4], अट्ठहि सुत्तेहि मग्गणा[5] जत्थ ।
सागारियदोसेहि य, पसंगदोसेहि आगज्झो[6] ॥नि. ४७५ ॥

३७०६. तत्थादिमाइ चउरो, आदेसे[7] सुत्तमाहिया[8] ।
दोच्चेव[9] पाडिहारी, अपाडिहारी भवे दोण्णि ॥नि. ४७६ ॥

३७०७. अंतो बहिं वावि निवेसणस्स, आदेसएणं[10] व ठिते सगारे[11] ।
भत्तं न एयस्स[12] विसेसजुत्तं, तम्मी[13] दलंते खलु सुत्तबंधो ॥

३७०८. सागारियस्स[14] दोसा, 'दोसुं दोसुं'[15] पसंगतो दोसा ।
भद्दगपंतादीया, 'होंति इमे ऊ मुणेयव्वा'[16] ॥

३७०९. एतेण उवाएणं[17], गिण्हंती भद्दउग्गमेगतरं[18] ।
पंतो[19] दुदिट्ठधम्मा, विणास गरहा[20] दिय 'निसिं वा'[21] ॥

३७१०. सुत्तम्मि कप्पति त्ति य, वुत्ते किं अत्थतो निसेधेह[22] ।
एगतरदोस[23] कालिय, सुत्तनिवातो इमेहिं तु ॥

३७११. जं जह सुत्ते भणियं, तधेव तं जइ वियालणा नत्थि ।
किं कालियाणुओगो, दिट्ठो दिट्ठिप्पहाणेहिं[24] ॥

---

१. णं (अ)।
२. आएहिंतो (स)।
३. आएसणं (ब, स)।
४. भतए (स)।
५. मग्गणं (ब)।
६. आगज्झो (अ, ब)।
७. आवेसे (ब)।
८. गाथा के दूसरे चरण में अनुष्टुप् छंद है।
९. ० चेव (अ)।
१०. आसेवएणं (ब)।
११. सगासे (ब), सागारे (अ)।
१२. एजस्स (ब)।
१३. तम्मि (ब, स)।
१४. आगारि० (ब)।
१५. चउसु चउसु (स)।
१६. दोसुं पि कमेण नेयव्वा (अ, स)।
१७. कारणेणं (ब)।
१८. ० उत्तमे ० (स)।
१९. पंता (अ, स)।
२०. गरिहा (अ)।
२१. निसि व (अ)।
२२. निसेहेह (ब)।
२३. ० देसे (ब)।
२४. दिट्ठप्पहाणहं (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३७१२. अदिट्ठम्मि उ गहणं, अधवा सागारियं तु वज्जेत्ता ।
अन्नो पेच्छउ मा वा, पेच्छंते[१] वावि वज्जंता[२] ॥

३७१३. दास-भयगाण दिज्जति[३], उक्खित्तं जत्थ भत्तयं नियतं[४] ।
तम्मि वि सो चेव गमो, अंतो बाहिं व देंतम्मि ॥

३७१४. निययानिययविसेसो[५], 'आदेसो होति'[६] दास-भयगाणं ।
अच्चियमणच्चिए[७] वा, विसेसकरणं[८] 'पयत्तो य'[९] ॥

३७१५. नीसट्ठ अपडिहारी, समणुण्णातो त्ति मा अतिपसंगा[१०] ।
एगपदे परपिंडं, गेण्हे परसुत्तसंबंधो ॥

३७१६. पुरपच्छसंथुतो[११] वावि, नायओ उभयसंथुतो वावि ।
एगवगडा[१२] घरं[१३] तू[१४] पया उ चुल्ली[१५] समक्खाता ॥

३७१७. एगपए अभिणिपए[१६], अट्ठहि सुत्तेहि मग्गणा जत्थ ।
सागारियदोसेहिं, पसंगदोसेहि[१७] य अगेज्झं[१८] ॥

३७१८. आइल्ला चउरो सुत्ता, चउस्सालादवेक्खतो[१९] ।
पिहघरेसु चत्तारि, सुत्ता एक्कनिवेसणे[२०] ॥

३७१९. सागारियस्स दोसा, चउसु सुत्तेसु[२१] पसंगदोसा य ।
भद्दगपंतादीया, चउसुं पि कमेण णातव्वा[२२] ॥

३७२०. दारुग[२३]-लोणे गोरस-सूवोदग[२४]- अंबिले य सागफले[२५] ।
उवजीवति सागरियं[२६], एगपए वावि अभिणिपए[२७] ॥

३७२१. भीताइ[२८] करभयस्सा[२९], अंतो बाहिं व होज्ज एगपया ।
अभिणिपए न वि कप्पति, पक्खेवगमादिणो दोसा ॥

---

१. पेच्छतो (ब)।
२. वज्जता (ब)।
३. दिज्जते (ब)।
४. नियमं (अ)।
५. अनिययनियय ० (अ, ब)।
६. अप्पेसा होंति (ब)।
७. ० च्चियं (ब)।
८. विश्लेषकरणं (मवृ)।
९. पवत्तो या (अ)।
१०. इयप० (अ)।
११. परपच्छसंजुत्ते (अ)।
१२. ० वडवा (अ)।
१३. घडं (स)।
१४. तु (ब)।
१५. चुण्णी (अ)।
१६. अभणिए (अ)।
१७. x (ब)।
१८. अगज्झं (ब)।
१९. चाउस्सालातिवे० (अ, स)।
२०. ० सणा (स)।
२१. x (ब)।
२२. नेयव्वा (ब)।
२३. दोसग (ब)।
२४. सूतोदग (अ), सुतोदग (स)।
२५. ० फला (ब), षष्ठ्यर्थे द्वितीया प्राकृतत्वात् (मवृ)।
२६. जं सारियं (अ), जं सारिं (स)।
२७. अभिणपए (अ)।
२८. भीयाति (ब)।
२९ गाथायां षष्ठी पंचम्यर्थे संबंधविवक्षायां वा षष्ठी (मवृ)।

३७२२. जं देसी तं देमो, एते 'घेत्तुं न'[1] इच्छते[2] अम्हं ।
अधवा वि अकुलज त्ति य, गेण्हंति[3] अदिट्ठमादीयं[4] ॥

३७२३. बितियपदऽदिट्ठगहणं, असती तव्वज्जितेण दिट्ठस्स[5] ।
दिट्ठे वि पत्थियाणं[6], गहणं अंतो व[7] बाहिं वा ॥

३७२४. साधारणमेगपय[8] त्ति, किच्चं तहियं निवारियं गहणं ।
इदमवि सामण्णं वि य, साधारणसालसु य जोगो ॥

३७२५. तेल्लिय-गोलिय[9]-लोणिय-दोसिय सुत्तिय य बोधिकप्पासो[10] ।
गंधिय सोंडियसाला, जा अन्ना एवमादी उ ॥

३७२६. ववहारे उद्देसम्मि, नवमए जत्तिया[11] भवे साला ।
तासि परिपिंडिताणं, साधारणवज्जिते गहणं[12] ॥

३७२७. साहारण सामन्नं, अविभत्तमछिन्नसंथडेगट्ठं[13] ।
साल त्ति आवणं ति य, पणियगिहं चेव एगट्ठं ॥

३७२८. साहारणा उ[14] साला, दव्वे मीसम्मि आवणे भंडे ।
साहरणऽवक्कजुत्ते, छिन्नं वोच्छं अछिन्नं वा ॥नि. ४७७ ॥

३७२९. पीलेंति[15] एक्कतो वा, विक्केंति[16] व एक्कतो करिय तेल्लं ।
अधवा वि वक्कएणं, साधारणवक्कयं जाणे ॥

३७३०. पीलितविरेडितम्मी[17], पुव्वगमेणं[18] तु गहणमादिट्ठे[19] ।
एगत्थ विक्कयम्मी, अमेलियादिट्ठ[20] अन्नत्थ[21] ॥दारं ॥

३७३१. जो उ[22] लाभगभागेण[23], पउत्तो होति[24] आवणो ।
सो उ साहारणो[25] होति, तत्थ घेत्तुं न कप्पति ॥दारं ॥

---

१. घेत्तूण (स) ।
२. गाथायां एकवचनं प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
३. गहणं (स) ।
४. अदेट्ठ० (अ) ।
५. ०स्सा (ब) ।
६. पच्छियाणं (अ) ।
७. य (अ) ।
८. ० ण एग ० (स) ।
९. सोत्तिय (ब) ।
१०. पोत्तिय बोहिक० (अ) ।
११. जेत्तिया (ब) ।
१२. अह णं (ब) ।
१३. ० संघडे० (अ) ।
१४. वी (स) ।
१५. पीलंति (अ) ।
१६. विक्किते (स), विक्किते (ब) ।
१७. वियरडितम्मि (अ), ० तम्मि (स) ।
१८. ० गतेणं (अ) ।
१९. गहणं दिट्ठे (अ) ।
२०. ममेलिया० (ब) ।
२१. सण्णत्थ (स) ।
२२. जत्थ (अ) ।
२३. ० भावेण (अ) ।
२४. होंति (ब) ।
२५. ० रणा (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३७३२. छेदे 'वा लाभे वा'[१], सागारिय जत्थ होति आभागी ।
तं तु साधारणं जाणे, सेसमसाधारणं होति ॥

३७३३. सच्चित्तअच्चित्तमीसेण, 'कयएण पउंजए'[२] साला ।
तद्दव्वमन्नदव्वेण, होति साहारणं तं तु ॥

३७३४. तद्दव्वमन्नदव्वेण, वावि छिन्ने वि गहणमद्दिट्ठे[३] ।
मा खलु पसंगदोसा, संछोभ भतिं[४] व मुंचेज्जा ॥

३७३५. 'जं पि य न एति'[५] गहणं, फलकप्पासो सुरादि वा लोणं[६] ।
फासुम्मि[७] उ सामन्नं, न कप्पते जं तहिं पडितं ॥

३७३६. अंडज-'बोंडज-वालज'[८], वागज तह कीडजाण[९] वत्थाणं[१०] ।
णाणादिसागताणं, साधारणवज्जिते गहणं ॥

३७३७. सागारियम्मि पगते, 'साधारणए य'[११] समणुवत्तंते[१२] ।
ओसहिफलसुत्ताणं, वंजणनाणत्तओ जोगो ॥

३७३८. गोरस-गुल-तेल्ल-घतादि, ओसहीओ व होंति[१३] जा अण्णा ।
सूयस्स कट्टुलेण तु, ता[१४] संथडऽसंथडा[१५] होंति ॥नि. ४७८ ॥

३७३९. धुव[१६] आवाह विवाहे, जण्णे[१७] सड्ढे[१८] य करडुयछणे य ।
विविहाओ ओसहीतो, उवणीया भत्त सूयस्स ॥

३७४०. जो जं 'दट्ठु विदड्ढं'[१९] जो वा तहि भत्तसेसमुव्वारे[२०] ।
लभति जदि सूवकारो, अविरिक्कं तं पि हु न लभइ[२१] ॥

३७४१. अविरिक्को खलु पिंडो, सो चेव विरेइतो[२२] अपिंडो उ ।
भद्दगपंतादीया, धुवा उ दोसा 'विरक्के वी'[२३] ॥

---

१. व लाभए वा (ब), गाथा के तृतीय चरण में अनुष्टुप् छंद का प्रयोग है।
२. य जा पउज्जए (अ, स)।
३. ०दिट्ठो (ब)।
४. रुइं (ब)।
५. दिट्ठे जं पि य नेइ (ब)।
६. लेणं (ब)।
७. फासुं पि (स)।
८. पोंडज वालग (स)।
९. कीडजा (अ)।
१०. वच्छाण (स)।
११. ० रण पए (ब)।
१२. समणुवत्थंते (ब)।
१३. हवंति (स)।
१४. x (ब)।
१५. संथडमसं० (ब)।
१६. धुय (ब)।
१७. सण्णे (ब)।
१८. सद्धे (ब)।
१९. दट्ठु विदट्ठु (ब)।
२०. ० मुद्दारे (ब), ० मुच्चारे (स)।
२१. लब्भा (स)।
२२. विरेतितो (ब)।
२३. विरेके वि (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३७४२. जा ऊ[1] संथडियाओ सागारियसंतिया न खलु कप्पे ।
जा उ असंथडियाओ, सूवस्स[2] य ताउ[3] कप्पंति ॥

३७४३. वल्ली वा रुक्खो वा, सागारियसंतिओ[4] भएज्ज परं ।
तेसि परिभोगकाले, समणाण तहिं कहं भणियं ॥नि. ४७९ ॥

३७४४. फणसं च चिंच तल-नालिएरिमादी हवंति फलरुक्खा[5] ।
लोमसिय-तउसि[6]-मुद्दिय, तंबोलादी[7] य वल्लीओ ॥

३७४५. परोग्गहं तु सालेणं[8], अक्कमेज्ज[9] महीरुहो ।
छिंदामि त्ति य तेणुत्ते, ववहारो तहिं भवे ॥

३७४६. सागारियस्स तहियं, केवतिओ[10] उग्गहो मुणेतव्वो ।
ववहार[11] तिहा छिन्नो, पासायऽगडे बिती तिरियं[12] ॥

३७४७. उड्ढं अधे य तिरियं, परिमाणं तु वत्थुणं ।
खायमूसियमीसं[13] वा, तं वत्थूणं[14] तिधोदितं[15] ॥

३७४८. अट्ठसतं चक्कीणं, चोवट्ठी[16] चेव वासुदेवाणं ।
बत्तीसं मंडलिए, सोलसहत्था उ पागतिए ॥

३७४९. भवणुज्जाणादीणं[17], एसुस्सेहो उ वत्थुविज्जाए ।
भणितो सिप्पिनिधिम्मि[18] उ, चक्कीमादीण[19] सव्वेसिं ॥

३७५०. एवं छिन्ने तु ववहारे, परो भणति सारियं[20] ।
कप्पेमि 'हं तें'[21] सालादी[22], ततो णं आह सारिओ ॥

३७५१. मा मे कप्पेहि सालादि, दाहिंति[23] फलनिक्कयं ।
तत्थ छिन्ने 'अछिन्ने वा'[24], सुत्तसाफल्लमाहितं[25] ॥

---

१. तु (ब) ।
२. सूतस्स (स) ।
३. तातो (ब) ।
४. ० सन्नितो (ब) ।
५. पणलुक्खा (ब) ।
६. तउसिय (अ) ।
७. ० लाती (ब) ।
८. शाखया गाथायां पुंस्त्वं प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
९. मक्क ० (स) ।
१०. कयवति (ब) ।
११. ० हारो वि (अ, ब) ।
१२. तिरिए (स) ।
१३. खायमुसिय ० (ब) ।
१४. वत्थुं (ब) ।
१५. ३७४७ से ३७८५ तक की गाथाएं अ प्रति में नहीं हैं ।
१६. चोवट्ठिं (ब), चोयट्ठं (स) ।
१७. ० णातीए (ब) ।
१८. सिप्प० (ब) ।
१९. ० मातीण (ब) ।
२०. सागारियं (मवृ) ।
२१. भंते (ब), हं ती (स) ।
२२. सालाइं (स) ।
२३. दाहते (स) ।
२४. x (ब) ।
२५. सुत्तं सफलमाहियं (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३७५२. साधूणं वा न कप्पंति, सुत्तमाहु निरत्थयं ।
गेलण्णऽद्धाणओमेसु, गहणं तेसि देसियं ॥

३७५३. अविरिक्कसारिपिंडो, विरिक्का 'वि सारि दिट्ठ'[1] न वि कप्पे ।
अदिट्ठसारिएणं, कप्पंति तहिं[2] व घेत्तु जे[3] ॥

३७५४. एवं अत्तट्ठाए, सयं परूढाण[4] वावि[5] भणियमिणं ।
इणमन्नो आरंभो, समणट्ठा वाविए तम्मि ॥

३७५५. 'वल्लिं वा रुक्खं'[6] वा, कोई[7] रोवेज्ज संजयट्ठाए ।
तेसि परिभोगकाले[8], समणाण तहिं कहं भणियं ॥

३७५६. तस्स कडनिट्ठियादी, चउरो भंगे विभावइत्ताण[9] ।
विसमेसु जाण विसमं, नियमा तु समो समग्गहणे[10] ॥

३७५७. कामं सो समणट्ठा, वुत्तो तह[11] वि य न होति सो कम्मं ।
जं कम्मलक्खणं खलु, 'इह इ[12] वुत्तं'[13] न पस्सामि ॥

३७५८. सच्चित्तभावविकलीकयम्मि दव्वम्मि मग्गणा[14] होति ।
कम्मगहणा उ दव्वे, सचेयणे फासुभोईणं ॥

३७५९. संजयहेउं छिन्नं, अत्तट्ठोवक्खडं तु[15] तं कप्पे ।
अत्तट्ठा छिन्नं पि हु, समणट्ठा निट्ठियमकप्पं ॥

३७६०. बीयाणि च वावेज्जा[16], अगडं व खणेज्ज संजयट्ठाए ।
तेसि परिभोगकाले, समणाण तहिं कहं भणियं ॥

३७६१. दुच्छडणियं[17] च उदयं, जइ[18] हेउं निट्ठितं च अत्तट्ठा ।
तं कप्पति अत्तट्ठा, कयं तु जइ निट्ठितमकप्पं ॥

३७६२. समणाण संजतीण व, दाहामी[19] जो[20] किणेज्ज अट्ठाए ।
गावी-महिसीमादी[21], समणाण तहिं कहं भणियं ॥

---

१. वि सारिणा दिट्ठा (ब)।
२. ताधि (स)।
३. जे इति पादपूरणे (मवृ)।
४. परूढणे (ब)।
५. वि (स)।
६. वल्ली वा रुक्खो (स)।
७. कोयं (स)।
८. परभोग० (ब)।
९. ० वतित्ताण (ब), विभागइ ० (स)।
१०. ० गहणा (ब)।
११. होंति (स)।
१२. इ : पादपूरणे (मवृ)।
१३. वुत्तं इहं तं (स)।
१४. मग्गहणा (ब)।
१५. णु (ब)।
१६. ठावेज्ज (ब)।
१७. दुच्छडा० (स)।
१८. जति (ब) प्रायः सर्वत्र।
१९. दाहामि (स)।
२०. से (ब)।
२१. ० माती (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३७६३. संजयहेउं दूढा, 'ण कप्पते कप्पते'[1] य सयमट्ठा ।
पामिच्चिय[2]-कीया[3] वा, जदि वि य समणट्ठया[4] घेणू ॥

३७६४. चेइयदव्वं विभज्ज[5], करेज्ज कोती नरो सयट्ठाए ।
समणं वा सोवहियं, विक्केज्जा संजयट्ठाए ॥

३७६५. एयारिसम्मि दव्वे[6], समणाणं किन्नु कप्पते घेत्तुं ।
चेइयदव्वेण कयं, मुल्लेण[7] व जं सुविहिताणं ॥

३७६६. तेण पडिच्छा लोए, वि गरहिता उत्तरे किमंग पुण ।
चेइय[8] जइ पडिणीए, जो गेण्हति सो वि हु तधेव ॥

३७६७. हरियाहडिया सा खलु, ससत्तितो उग्गमेधरा गुरुगा ।
एवं तु कया भत्ती[9], न वि हाणी जा विणा तेण ॥

३७६८. जा[10] तित्थगराण 'कता, वंदणया'[11] वरिसणादि पाहुडिया ।
भत्तीहि सुरवरेहिं, समणाण तधि कहं भणियं ॥

३७६९. जइ समणाण न कप्पति, एवं[12] एगाणिया[13] जिणवरिंदा ।
गणहरमादी समणा, अकप्पिए नेव चिट्ठंति ॥

३७७०. तम्हा कप्पति ठाउं[14], जह सिद्धयणम्मि होति अविरुद्धं ।
जम्हा उ न साहम्मी, सत्था अम्हं ततो कप्पे ॥

३७७१. साहम्मियाण अट्ठो[15], चउव्विधो लिंगतो जह कुडुंबी ।
मंगलसासयभत्तीय, जं कतं तत्थ आदेसो ॥

३७७२. जइ वि य नाधाकम्मं, भत्तिकयं तध वि वज्जियंतेहिं ।
भत्ती खलु होति कया, जिणाण लोगे वि दिट्ठं तु ॥

३७७३. बंधित्ता कासवओ, वयणं अट्ठपुडसुद्धपोत्तीए[16] ।
पत्थिवमुवासते[17] खलु, वित्तिनिमित्तं भया चेव ॥

---

१. तओ न कप्पते (ब)।
२. पामेच्चिय (ब), ०च्चिति (स)।
३. क्किया (स)।
४. ० णट्ठिय (ब)।
५. विभया (स)।
६. गाथायां सप्तमी तृतीयार्थे (मवृ)।
७. मोल्लेण (ब)।
८. चेइयं (ब)।
९. भत्तीय (स)।
१०. जै (ब)।
११. कयवंदण (ब)।
१२. एयं (ब)।
१३. ण वि य (स)।
१४. ठाइउं (स)।
१५. अद्धा (ब)।
१६. ० पोत्तो य (स)।
१७. ०मुवासिते (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३७७४. दुब्भिगंधपरिस्सावी, तणुपस्सेय[1] ण्हाणिया ।
दुहा वायु वधो[2] चेव, तेण ठंति[3] न चेइए ॥

३७७५. तिण्णि वा कड्ढते जाव, थुतीओ[4] तिसिलोइया[5] ।
ताव तत्थ अणुण्णातं, कारणेण परेण वि ॥

३७७६. सागारियअग्गहणे, अन्नाउंछं फुडं समक्खातं ।
सो होतिऽभिग्गहो खलु, 'पडिमा य अभिग्गहो'[6] चेव ॥

३७७७. अन्नाउंछविसुद्धं, घेत्तव्वं तस्स किं परीमाणं[7] ।
कालम्मि य भिक्खासु[8] य, इति पडिमा सुत्तसंबंधो ॥

३७७८. अधसुत्त सुत्तदेसा, कप्पो उ विहीय मग्गनाणादी ।
तच्चं तु भवे तत्थं, सम्मं जं अपरितंतेणं ॥

३७७९. फासियजोगतिएणं, पालियमविराधि 'सोहिते चेव'[9] ।
तीरितमंतं पाविय, किट्टिय गुरुकधण जिणमाणा[10] ॥

३७८०. 'पडिमा उ'[11] पुव्वभणिता, पडिवज्जति को तिसंघयणमादी ।
नवरं पुण नाणत्तं, कालच्छेदे य भिक्खासु ॥

३७८१. एगूणपण्णे[12] चउसट्ठिगासीती[13] सयं च बोधव्वं ।
सव्वासिं पडिमाणं, कालो एसो[14] त्ति तो[15] होति ॥

३७८२. 'पढमा सत्तिगासत्त'[16]; पढमे तत्थ सत्तए' ।
एक्केक्कं गेण्हती भिक्खं, बितिए दोण्णि दोण्णि[17] उ ॥

३७८३. एवमेक्केक्किकयं भिक्खं, छुब्भेज्जेक्केक्क[18] सत्तगे[19] ।
गिण्हती अंतिमे[20] जाव, सत्त सत्त दिणे दिणे ॥

३७८४. अहवेक्केक्कियं[21] दत्ती, जा[22] सत्तेक्केक्कसत्तए ।
आदेसो अत्थि एसो वि, सीहविक्कमसन्निभो ॥

---

१. तणु रप्पेव (स) ।
२. वा अधो (मवृ) ।
३. ट्ठंति (स) ।
४. थुइओ (ब) ।
५. तिसलोतिता (ब) ।
६. पडिमादिभिग्गहो (ब)
७. परामाणं (ब) ।
८. सिक्खासु (ब) ।
९. सोभिए मेव (स) ।
१०. जिनस्य तीर्थकृतः द्वितीया षष्ठ्यर्थे प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
११. पडिमातो (ब) ।
१२. ० पन्नं (ब) ।
१३. ० सट्ठगा ० (स) ।
१४. एसे (ब) ।
१५. तु (स) ।
१६. पढमाए सत्तग सत्त (स), पढमा सत्तमा सत्त (ब) ।
१७. दोण्णिक (ब) ।
१८. वुब्भेज्जेक्केद्ध (ब) ।
१९. सत्तते (स) ।
२०. अंतिमा (ब) ।
२१. अधवा एक्के० (स) ।
२२. जाव (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३७८५. छण्णउयं भिक्खसतं, अट्ठासीता य दो सया होंति ।
पंचुत्तरा य चउरो, अद्धच्छट्ठा सया चेव ॥

३७८६. उद्दिट्ठवग्गदिवसा[1], य[2] मूलदिणसंजुया[3] दुहा छिन्ना ।
मूलेणं[4] संगुणिया[5], माणं दत्तीण पडिमासु ॥

३७८७. पदगयसु वेयसुत्तरसमाहयं दलियमादिणा सहियं ।
गच्छगुणं पडिमाणं, भिक्खामाणं मुणेयव्वं ॥

३७८८. गच्छुत्तरसंवग्गे, उत्तरहीणम्मि पक्खिवे आदिं ।
अंतिमधणमादिजुयं, गच्छद्धगुणं तु सव्वधणं ॥

३७८९. पडिमाहिंगारपगते, हवंति मोयपडिमा इमा दोण्णि ।
ता पुण गणम्मि वुत्ता, इमा उ बाहिं पुरादीणं ॥

३७९०. सव्वाओ पडिमाओ, साधुं मोयंति पावकम्मेहिं ।
एतेण मोयपडिमा, अधिगारो इह तु मोएणं ॥

३७९१. एगदुमो होंति वणं, एगाजातीय[6] जे जहिं रुक्खा ।
विवरीयं तु विदुग्गं, एसेव[7] य पव्वए वि गमो ॥

३७९२. निसज्जं[8] चोलपट्टं, कप्पं घेत्तूण मत्तगं चेव ।
एगंते पडिवज्जति, काऊण दिसाण वालोयं ॥

३७९३. 'पाउणति तं'[9] पवाए[10], तत्थ निरोहेण जिज्जते[11] दोसा ।
सण्हादिं[12] परित्ताणं , व कुणति[13] अच्चुण्ह वाते[14] वा ॥

३७९४. साभावियं च[15] मोयं, जाणति जं वावि होति विवरीयं ।
पाण-बीयससणिद्धं , सरक्खाधिराय[16] न पिएऊजा ॥

३७९५. किमिकुट्ठे सिया पाणा, ते य उण्हाभितावियाॅ[17] ।
मोएण सद्धि एज्जण्हु , निसिरेते तु छाहिए[18] ॥

---

१. उक्किट्ठवग्ग० (ब)।
२. x (स)।
३. मूलगुण० (अ)।
४. मूलेण य (ब)।
५. सयं गुणियं (स)।
६. ० जातीया (ब)।
७. एमेव (ब)।
८. निसज्जं च (स)।
९. ० णती उ (स)।
१०. पव्वाए (ब)।
११. जीयते (मवृ)।
१२. सिण्हाति (ब)।
१३. कुणंति (ब)।
१४. ० याते (ब)।
१५. वा (अ)।
१६. ० स रक्खाधियं तु (अ, स)।
१७. ० भिधाविया (स)।
१८. छायए (ब), छाविए (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३७९६. बीयं तु पोग्गला सुक्का, ससणिद्धा तु चिक्कणा[1] ।
पडंति सिथिले देहे, खमणुण्हाभितावियां ॥

३७९७. पमेहकणियाओ[2] य[3], सरक्खं पाहु[4] सूरयो ।
सो उ दोसकरो वुत्तो, तं च कज्जं न साधए[5] ॥

३७९८. बहुगी होति मत्ताओ[6], आइल्लेसु[7] दिणेसु तु ।
कमेण हायमाणी[8] तु, अंतिमे होति वा न वा ॥

३७९९. पडिणीयऽणुकंपा वा, मोयं वद्धंति[9] गुज्झगा[10] केई[11] ।
बीजादिजुतं जं वा, विवरीयं उज्झए[12] सव्वं ॥

३८००. दव्वे खेत्ते काले, भावम्मि य होति सा चउविगप्पा ।
दव्वे तु[13] होति मोयं[14], खेत्ते गामाइयाण बहिं ॥नि. ४८० ॥

३८०१. काले दिया व रातो, भावे साभावियं व इतरं वा ।
सिद्धाए[15] पडिमाए, कम्मविमुक्को हवति सिद्धो ॥नि. ४८१ ॥

३८०२. देवो महिड्ढिओ वावि, रोगातोऽहव[16] मुच्चती ।
जायती कणगवण्णो उ, आगते य इमो विही ॥नि. ४८२ ॥

३८०३. उण्होदगे य थोवे, तिभागमद्धे तिभागथोवे य ।
महुरगभिन्ना महुरग[17], एक्केक्कं सत्तदिवसाइं ॥नि. ४८३ ॥

३८०४. ओदणं उसिणोदेणं, दिणे 'सत्त उ'[18] भुंजिउं ।
जूसमंडेण[19] वा अन्ने, दिणे जावेति सत्त उ ॥

३८०५. मधुरोल्लेण थोवेण, मीसे[20] तइय[21] सत्तए ।
तिभागद्धजुतं चेव, तिभागो थोवमीसियं[22] ॥

३८०६. मधुरेणं य[23] सत्तन्ने, भावेत्ता[24] उल्लणादिणा ।
दधिगादीण भावेत्ता, 'ताहे वा'[25] सत्त सत्तए ॥

१. चक्किणा (अ, ब)।
२. पम्मेह० (ब)।
३. उ (अ)।
४. आहु (स)।
५. वासए (अ)।
६. मत्ता तू (ब, स)।
७. आयल्लेसु (ब)।
८. हीय० (मु)।
९. वट्टंति (ब, स)।
१०. गुज्झगी (स)।
११. केती (अ)।
१२. उज्झिते (स)।
१३. ति (अ)।
१४. मोघं (स)।
१५. सिद्धीए (ब)।
१६. ० तो भव (स)।
१७. ० रगा (स)।
१८. सुत्तसु (अ)।
१९. जूसं मं ० (स)।
२०. मीसेण (ब)।
२१. तत्तिय (ब)।
२२. थोवमिस्सिवं (अ), ० थोवमिस्सियं (स)।
२३. x (स)।
२४. भाविता (ब)।
२५. तहेव (ब)।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

३८०७. एवमेसा तु खुड्डीया, पडिमा होति समाणिया ।
भोच्चारुभंते[1] चोद्देणं[2], अभोच्चा सोलसेण तु ॥

३८०८. एमेव महल्ली वी, अट्ठारसमेण नवरि निट्ठाती[3] ।
परिहारो अट्ठदिवसा, न[4] हु रोगि बलिस्स वा एसा ॥नि. ४८४॥

३८०९. पडिवत्ती पुण तासिं, चरिमनिदाघे व पढमसरए[5] वा ।
संघयणधितीजुत्तो[6], फासयती दो वि एयाओ ॥

३८१०. स साहियपतिण्णो[7] उ, नीरोगो दुहतो बली ।
मितं गेण्हति[8] सुद्धुञ्छं[9], सुत्तस्सेस समुप्पदा ॥

३८११. हत्थेण व मत्तेण व, भिक्खा होति समुज्जता ।
दत्तिओ जत्तिए[10] वारे, खिवंति[11] होंति तत्तिया ॥

३८१२. अव्वोच्छिन्ननिवाताओ, दत्ती होति 'उ वेतरा'[12] ।
एगाणेगासु चत्तारि, विभागा भिक्खदत्तिसु ॥

३८१३. एगा भिक्खा एगा[13], दत्ति एग भिक्खऽणेग[14] दत्ती उ ।
णेगातो वि य एगा, णेगाओ चेव णेगाओ ॥

३८१४. एमेव एगऽणेगे, दायगभिक्खासु होइ चउभंगी[15] ।
एगो एगं दत्ती, एगो णेगाउ 'णेग एगा उ'[16] ॥
णेगा य[17] अणेगाओ, पाणीसु पडिग्गहधरेसु[18] ॥

३८१५. एगो एगं एक्कसि, एगो एक्कं बहुसो ऊ[19] वारे ।
एगो णेगा एक्कसि, एगो णेगा य[20] बहुसो य ॥

३८१६. णेगा एगं एक्कसि, णेगा एगं च णेगसो वारे ।
णेगा णेगा एक्कसि, णेगा णेगा य बहुवारे ॥

---

१. आरुहंते इत्यत्र सप्तमी तृतीयार्थे (मवृ)।
२. चउदसेणं (ब), चोदेणं (स)।
३. सिट्ठति (ब)।
४. म (अ, ब)।
५. ० सरते (अ, स)।
६. ० धिति ० (ब)।
७. साधियपइण्णा (ब), साहितुप ० (स)।
८. गेण्हती (स)।
९. सुद्धुंछ (अ)।
१०. जत्तिगा (ब)।
११. खिवती (स)।
१२. दवेतरा (अ)।
१३. एग (स)।
१४. भिक्खा य णेग (स)।
१५. गाथायां पुंस्त्वं प्राकृतत्वात् (मवृ)।
१६. णेगेमा एगं व (ब), णेग एवं च (स)।
१७. उ (अ)।
१८. यह छह चरणों का छंद है।
१९. उ (ब), तु सो (स)।
२०. तु (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८१७. पाणिपडिग्गहियस्स वि, एसेव कमो भवे निरवसेसो ।
गणवासे निरवेक्खो, सो पुण सपडिग्गहो[1] भइतो ॥

३८१८. दोण्हेगतरे पाए[2], गेण्हति उ अभिग्गही तिहोवहडं ।
दुविधं एगविधं वा, अभिहडसुत्तस्स संबंधो ॥

३८१९. सुद्धे संसट्ठे या, 'फलितोवहडे'[3] य तिविधमेक्केक्के ।
तिन्नेग दुगं[4] तिन्नि उ[5], तिगसंजोगो भवे एक्को ॥

३८२०. सुद्धं तु अलेवकडं, अहवण सुद्धोदणो भवे सुद्धं ।
संसट्ठं आयत्तं, 'लेवाडमलेवडं चेव'[6] ॥

३८२१. फलितं पहेणगादी, वंजणभक्खेहि वा विरइयं तु ।
भोत्तुमणस्सोवहियं[7], पंचम पिंडेसणा एसा ॥

३८२२. सुद्धग्गहणेणं पुण, होति चउत्थी वि एसणागहिता ।
संसट्ठे उ विभासा, फलियं नियमा तु लेवकडं ॥

३८२३. पगया अभिग्गहा खलु, सुद्धयरा ते य जोगवड्डीए[8] ।
इति उवहडसुत्तातो, तिविहं दुविहं च पग्गहियं ॥

३८२४. पग्गहितं[9] साहरियं, पक्खिप्पंतं च आसए तह य ।
तिविधं तं[10] दुविधं पुण, पग्गहियं चेव साहरियं ॥

३८२५. बहुसुतमाइण्णं 'न उ[11], बाहियऽण्णेहि जुगप्पहाणेहिं ।
आदेसो सो उ भवे, अधवावि नयंतरविगप्पो ॥

३८२६. साहीरमाणगहियं, दिज्जंतं जं च होति पाउग्गं ।
पक्खेवए दुगुंछा, आदेसो कुडमुहादीसु[12] ॥

३८२७. ओग्गहियम्मि[13] विसेसो, पंचमपिंडेसणाउ छट्ठीए ।
तं पि य हु अलेवकडं, नियमा पुव्वुद्धडं चेव ॥

---

१. सपरि ० (स) ।
२. पाते (अ) ।
३. फलताव ० (स) ।
४. दुगा (अ, स) ।
५. य (ब) ।
६. ० मलेवडेणं वा (ब, स) ।
७. ० मणुससो० (अ) ।
८. ० वुड्डीय (स) ।
९. वग्ग० (अ) ।
१०. तु (स) ।
११. तू न (अ, स) ।
१२. ० मुहातीसु (ब), कुडुगपु ० (स) ।
१३. उग्ग ० (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८२८. भुंजमाणस्स उक्खित्तं, पडिसिद्धं[1] च[2] तेण तु ।
जहण्णोवहडं तं तू, हत्थस्स[3] परियत्तणे[4] ॥

३८२९. अह साहीरमाणं[5] तु, वट्टेउं जो उ दावए ।
दलेज्जऽचलितो[6] तत्तो, छट्ठा एसा वि एसणा ॥

३८३०. भुत्तसेसं तु जं भूयो, छुभंती[7] पिठरे दए ।
संवद्धंतीव[8] अन्नस्स, आसगम्मि पगासए ॥

इति नवम उद्देशक

१. पडिसुद्धं (ब) ।
२. व (अ) ।
३. अत्थस्स (अ, ब) ।
४. गाथायां सप्तमी पंचम्यर्थे (मवृ) ।
५. ० रमणं (ब) ।
६. अवलितो (अ, ब) ।
७. छुब्भयं (ब), छुभती (स) ।
८. संवड्ढेंतीव (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दशम उद्देशक

३८३१. पगता अभिग्गहा खलु, एस उ दसमस्स होति संबंधो ।
संखा य समणुवत्तइ, आहारे वावि अधिगारो ॥

३८३२. जवमज्झ[1] वइरमज्झा, वोसट्ठ[2] चियत्त 'तिविह तीहिं'[3] तु ।
दुविधे वि सहति सम्मं, अण्णाउंछे य निक्खेवो[4] ॥दारं ॥नि. ४८५ ॥

३८३३. उवमा जवेण चंदेण, वावि जवमज्झ चंदपडिमाए[5] ।
एमेव य बितियाए, वइरं वज्जं ति एगट्ठं ॥

३८३४. पण्णरसे व उ काउं, भागे ससिणं तु सुक्कपक्खस्स ।
जा वड्डयते दत्ती, हावति ता चेव कालेण ॥

३८३५. भत्तट्ठितो व खमओ, इयरदिणे तासि होति पट्ठवओ[6] ।
चरिमे असद्धवं[7] पुण, 'होति अभत्तट्ठमुज्जवणं'[8] ॥

३८३६. संघयणे परियाए[9], सुत्ते अत्थे य जो भवे बलिओ ।
सो पडिमं पडिवज्जति, जवमज्झं वइरमज्झं च ॥

३८३७. निच्चं दिया व रातो[10], पडिमाकालो य जत्तिओ भणितो ।
दव्वम्मि य भावम्मि य, वोसट्ठं तत्थिमं दव्वे ॥

३८३८. असिणाण भूमिसयणा[11], अविभूसा कुलवधू पउत्थधवा ।
रक्खति पतिस्स सेज्जं, अणिकामा दव्ववोसट्ठो ॥

३८३९. वातिय-'पित्तिय-सिंभियरोगातंकेहिं'[12] तत्थ पुट्ठो वि ।
न कुणति परिकम्मं सो, किंचि वि वोसट्ठदेहो उ ॥दारं ॥

३८४०. जुद्धपराजिय[13] अट्टण, फलही[14] मल्ले निरुत्त परिकम्मे ।
गूहण मच्छियमल्ले, ततियदिणे दव्वतो चत्तो[15] ॥दारं ॥

---

१. जूव० (क)।
२. वोसट्ठि (क)।
३. तीहं माती (ब), तिह माती (क)।
४. टीकाकार ने इस गाथा के लिए भाष्यकारों व्याख्यानयति का उल्लेख किया है पर यह निर्युक्ति की होनी चाहिए।
५. ० पडिमाणं (क)।
६. पव्ववओ (अ)।
७. असुद्दुवं (स)।
८. होयऽभत्तट्ठ० (अ)।
९. ० याउ (ब)।
१०. रातो य (ब), य रातो य (स)।
११. भूमिसि ० (स)।
१२. ० पेतिय संभिय ० (स)।
१३. ० पराजितं (अ)।
१४. फलहिय (अ)।
१५. गहणं (स), चित्तं (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८४१. बंधेज्ज व रुंभेज्ज व, कोई[1] व हणेज्ज अधव मारेज्ज[2] ।
वारेति न जो भगवं, चियत्तदेहो अपडिबद्धो ॥दारं ॥

३८४२. दिव्वादि[3] तिन्नि चउहा, बारस एवं तु होंतुवस्सग्गा[4] ।
वोसट्ठग्गहणेणं[5], आयासंचेतणग्गहणं[6] ॥नि. ४८६ ॥

३८४३. हास पदोस वीमंस[7], पुढो विमाया[8] य दिव्विया चउरो ।
हास-पदोस-वीमंसा[9], कुसीला नरगता चउहा[10] ॥

३८४४. भयतो पदोस आहारहेतु तहऽवच्चलेणरक्खट्ठा ।
तिरिया होंति चउद्धा, एते तिविधा वि उवसग्गा[11] ॥

३८४५. घट्टण पवडण थंभण, लेसण चउधा उ आयसंचेया ।
ते पुण सन्निवयंती, वोसट्ठदारे न इहं[12] तू ॥दारं ॥

३८४६. मण-वयणकायजोगेहिं, तिहिं उ[13] दिव्वमादिए[14] तिन्नि[15] ।
सम्मं अधियासेती[16], तत्थं सुण्हाय दिट्ठंतो ॥नि. ४८७ ॥

३८४७. सासू- ससुरुक्कोसा, देवर-भत्तारमादि मज्झिमगा ।
दासादी य जहण्णा, जह सुण्हा सहइ[17] उवसग्गा ॥

३८४८. सासु-ससुरोवमा खलु, दिव्वा दियरोवमा य माणुस्सा ।
दासत्थाणी तिरिया, तह सम्मं सोऽधियासेति ॥

३८४९. दुधावेते समासेणं, सव्वे सामण्णकंटगा ।
विसयाणुलोमिया[18] चेव, तधेव पडिलोमिया ॥

३८५०. वंदण - सक्कारादी[19], अणुलोमा बंध-वहण पडिलोमा ।
तेच्चिय खमती सव्वे, एत्थं रुक्खेण दिट्ठंतो[20] ॥दारं ॥

---

१. कोइ (अ), कोइं (स) ।
२. मारेति (स) ।
३. दिव्वाति (ब, क), दिव्वावि (स) ।
४. होतुव ० (ब, क) ।
५. वोसट्ठगहणेण उ (स) ।
६. ० चेतणं गहणं (ब, अ) ।
७. वीमंसा (अ) ।
८. वेमाए (अ), वेमंतो (स) ।
९. हासप्पदोसवीमंस (स) ।
१०. चउहं (ब) ।
११. उवस्सग्गा (अ) ।
१२. इधं (ब) ।
१३. तू (स) ।
१४. दिट्ठमा ० (ब) ।
१५. विन्नि (ब, क) ।
१६. ० यासेंती (अ, ब) ।
१७. सहिय (ब) ।
१८. विसमाणु० (ब) ।
१९. ० राती (क) ।
२०. इस गाथा का उत्तरार्ध ब प्रति में नहीं है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८५१ वासीचंदणकप्पो, जह रुक्खो इय[1] सुहदुक्खसमो उ ।
रागद्दोसविमुक्को, सहती अणुलोमपडिलोमे[2] ॥दारं ॥

३८५२. अण्णाउंछं दुविहं, दव्वे भावे य होति नातव्वं ।
दव्वुंछंण्णेगविधं, 'लोगरिसीणं मुणेयव्वं'[3] ॥नि. ४८८ ॥

३८५३. उक्खल-खलए दव्वी, दंडे संडासए य पोत्तीया[4] ।
आमे पक्के य तधा, दव्वोंछं[5] होति निक्खेवो ॥दारं ॥

३८५४. पडिमापडिवण्ण एस, 'भगवं अज्ज'[6] किर एत्तिया दत्ती[7] ।
आदियति त्ति न नज्जति, अण्णाउंछं तवो[8] भणितो ॥

३८५५. दव्वादभिग्गहो[9] खलु,[10] दव्वे सुद्धुंछ मे त्ति या दत्ती ।
एलुगमेत्तं खेत्ते, गेण्हति[11] ततियाएँ कालम्मि ॥

३८५६. अण्णाउंछं एगोवणीय निज्जूहिऊण समणादी ।
अगुव्विणिं 'अबालं ती'[12], एलुगविक्खंभणे दोसा ॥दारं ॥नि. ४८९ ॥

३८५७. अण्णाउंछं च सुद्धं, पंच[13] काऊण अग्गहं ।
दिणे दिणे अभिगेण्हे[14], तासिमन्नतरी[15] य तु ॥दारं ॥

३८५८. एगस्स भुंजमाणस्स, उवणीयं तु गेण्हती ।
न[16] गेण्हे[17] दुगमादीणं[18], अचियत्तं तु मा भवे[19] ॥

३८५९. अडंते भिक्खकालम्मि, घासत्थी[20] वसभादओ ।
वज्जेति होज्ज मा तेसिं, आउरत्तेण अप्पियं ॥

३८६०. दुपय-चउप्पय-पक्खी, किमणातिथि-समण-साणमादीया[21] ।
निज्जूहिऊण[22] सव्वे, अडती भिक्खं तु सो ताधे ॥

---

१. ईय (स) ।
२. इस गाथा का पूर्वार्द्ध ब प्रति में नहीं है ।
३. लोगरिसाण मुणे० (अ), ० रिसीणं सुणे० (क) ।
४. पोत्तीय (अ) ।
५. दव्वुंछे (अ) ।
६. भयवमज्ज (ब) ।
७. दत्ता (क) ।
८. तो (स) ।
९. दव्वा य भिग्गहो (अ) ।
१०. सो (स) ।
११. गेण्हंति (स) ।
१२. अपायंति (स) ।
१३. x (अ) ।
१४. अतिगिण्हे (ब) ।
१५. ० मन्नवरी (अ) ।
१६. णो (अ) ।
१७. x (ब) ।
१८. ० मातीणं (ब) ।
१९. हवे (अ) ।
२०. घासच्छी (स) ।
२१. ० मादी तु (स) ।
२२. ० हियव्व (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८६१. पुव्वं व[1] चरति तेसिं[2], नियट्टचारेसु[3] वा अडति पच्छा ।
जत्थ भवे दोण्णि काला, चरती तत्थ अतिच्छिते[4] ॥

३८६२. अणारद्धे उ अण्णेसु, मज्झे चरति संजओ ।
गेण्हंत[5] देंतयाणं तु, वज्जयंतो अपत्तियं ॥दारं ॥

३८६३. नवमासगुव्विणीं[6] खलु, गच्छे वज्जति[7] इतरो सव्वा उ ।
खीराहारं गच्छो, वज्जेतितरो तु सव्वं पि ॥दारं ॥

३८६४. गच्छगयनिग्गते वा, लहुगा गुरुगा य एलुगा परतो ।
आणादिणो य दोसा, दुविधा य विराधणा इणमो ॥नि. ४९० ॥

३८६५. संकग्गहणे इच्छा, दुन्निविट्ठा अवाउडा ।
णिहणुक्खणणविरेगे, तेणे[8] अविदिन्न पाहुडए[9] ॥दारं ॥नि. ४९१ ॥

३८६६. बंध-वहे[10] उद्दवणे, व खिंसणा आसियावणा चेव ।
उव्वेवग कुरुंडिए[11], दीणे अविदिन्न वज्जणया ॥दारं ॥नि. ४९२ ॥

३८६७. पच्छित्ते आदेसा, संकियनिस्संकिए च गहणादी ।
तेण्णु[12] चउत्थे • संकिय, गुरुगा निस्संकिए मूलं ॥दारं ॥

३८६८. गेण्हण कड्डण ववहार, पच्छकड्डुड्डाह तह य निव्विसए ।
किण्णु[13] हु इमस्स[14] इच्छा, 'अब्भिंतरअतिगते जीए'[15] ॥दारं ॥

३८६९. दुन्निविट्ठा व होज्जाही, अवाउडा वऽगारी[16] उ ।
लज्जिया सा वि होज्जाही, संका वा से समुब्भवे ॥

३८७०. किं मन्ने घेत्तुकामो, एस ममं जेण तत्तिए[17] दूरं ।
अन्नो वा संकेज्जा, गुरुगा मूलं तु निस्संके ॥

---

१. वा (अ)।
२. तीसिं (ब)।
३. नियट्टि० (ब)।
४. अतित्थिते (स)।
५. गेण्हेत (क)।
६. ० गुव्विणी (स)।
७. वज्जेति (स)।
८. तेण (ब)।
९. पाहुडे (स) । गाथा के दूसरे चरण में अनुष्टुप् छंद है।
१०. वहे व (स, क)।
११. कुभंडिए (अ, ब), कुरुंडितो नाम उपचारक इत्युच्यते (मवृ)।
१२. तिण्णि (अ, ब), तिण्णे (क)।
१३. काणु (अ)।
१४. x (ब)।
१५. ० रमाइगतो जीवो (स)।
१६. वा अगारी (अ), वा अगारिओ (स)।
१७. तित्तिए (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८७१. आउत्थपरा[१] वावी, उभयसमुत्था व होज्ज दोसा उ ।
उक्खणनिहणविरेगं[२], तत्थ व किंची करेज्जाही ॥दारं ॥

३८७२. दिट्ठं एतेण इमं, साहेज्जा मा तु एस अन्नेसिं ।
तेणो त्ति व एमो ऊ, संका गहणादि कुज्जाही ॥

३८७३. तित्थगरगिहत्थेहिं, दोहि वि अतिभूमिपविसणमदिण्णं ।
'कीसे दूरमतिगतो'[३], य संखडं बंध - वहमादी ॥दारं ॥

३८७४. खिंसेज्ज व जह एते, अलभंत[४] वराग अंतो पविसंती ।
गलए[५] घेत्तूण वणम्मि, निच्छुभेज्जाहि बाहिरओ ॥दारं ॥

३८७५. ताओ[६] य अगारीओ, वीरल्लेणं[७] व तासिता सउणी ।
उव्वेगं[८] गच्छेज्जा, कुरुंडिओ[९] नाम उवचरओ ॥दारं ॥

३८७६. अधवा भणेज्ज एते, गिहिवासम्मि वि अदिट्ठकल्लाणा ।
दीणा अदिण्णदाणा, दोसे ते णाउ नो पविसे ॥

३८७७. उंबरविक्खंभे[१०] विज्जति, दोसा अतिगयम्मि सविसेसा ।
तध वि अफलं न सुत्तं, सुत्तनिवातो इमो जम्हा ॥

३८७८. उज्जाण घडा सत्थे, सेणा संवट्ट वय पवादी वा[११] ।
बहिनिग्गमणे जण्णे, भुंजति य जहिं पहियवग्गो[१२] ॥

३८७९. पासट्ठितो एलुगमेत्तमेव पासति 'न वेतरे'[१३]दोसा ।
निक्खमण-पवेसणे चिय, अचियत्तादी जढा[१४] एवं ॥

३८८०. असतीय पमुह कोट्ठग, सालाए मंडवे रसवतीए[१५] ।
पासट्ठितो अगंभीरे[१६], एलुगविक्खंभमेत्तम्मि[१७] ॥

३८८१. बहुआगमितो पडिमं, पडिवज्जति आगमो इमो वि खलु ।
सव्वं व पवयणं पवयणी य ववहारविसयत्थं ॥

---

१. आमुत्थ० (ब) ।
२. उक्खणणनि० (क) ।
३. कीस दूरमविगतो (स) ।
४. अलभंति (क) ।
५. नलए (ब) ।
६. तातो (ब) ।
७. ० ल्लेण तु (स) ।
८. उव्वेगं (क) ।
९. कुभंडिओ (अ, ब) ।
१०. उम्मरविक्खंभम्मि (ब), ० विक्खंतम्मि (स) ।
११. या (ब, क) ।
१२. पडियवग्गो (अ) ।
१३. णिवेयरे (स) ।
१४. जहा (ब, क) ।
१५. ० वतीयं (क), ०वतीण (ब) ।
१६. गाथा के तृतीय चरण में अनुष्टुप् छंद है ।
१७. ० मेत्तं पि (ब, अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८८२. खलियस्स व पडिमाए, ववहारो को त्ति सो इमं सुत्तं ।
ववहारविहिण्णू वा, पडिवज्जति सुत्तसंबंधो ॥

३८८३. सो पुण पंचविगप्पो, आगम-सुत-आण-धारणा-जीते ।
संतम्मि ववहरंते, उप्परिवाडी भवे गुरुगा ॥

३८८४. आगमववहारी आगमेण ववहरति सो न अन्नेणं ।
न हि सूरस्स पगासं, दीवपगासो विसेसेति[1] ॥

३८८५. सुत्तमणागयविसयं, खेत्तं कालं च पप्प ववहारो ।
होहिंति[2] न आइल्ला, जा तित्थं ताव जीतो तु[3] ॥

३८८६. दव्वे भावे आणा, भावाणा खलु सुयं जिणवराणं ।
सम्मं ववहरमाणो, उ तीय आराहओ[4] होति ॥

३८८७. आराहणा उ तिविधा, उक्कोसा मज्झिमा जहण्णा उ ।
एग दुग तिग जहन्नं, दु तिगट्ठभवा उ उक्कोसा ॥

३८८८. जेण य ववहरति मुणी, जं पि य ववहरति सो वि ववहारो ।
ववहारो तहिं ठप्पो, ववहरियव्वं तु वोच्छामि[5] ॥नि. ४९३ ॥

३८८९. आभवंते य पच्छित्ते[6], ववहरियव्वं समासतो दुविहं ।
दोसु वि पणगं पणगं, आभवणाए[7] अधीगारो ॥दारं ॥नि. ४९४ ॥

३८९०. खेत्ते सुत-सुह-दुक्खे, मग्गे विणए य पंचहा होइ ।
सच्चित्ते अच्चित्ते, खेत्ते काले य भावे य ॥दारं ॥नि. ४९५ ॥

३८९१. वासासु निग्गताणं, अट्ठसु मासेसु मग्गणा खेत्ते ।
आयरियकहण[8] साहण, नयणे गुरुगा य सच्चित्ते ॥नि. ४९६ ॥

३८९२. उडुबद्धे विहरंता, वासाजोग्गं तु पेहए खेत्तं ।
वत्थव्वा य गता वा, उव्वेक्खित्ता[9] नियत्ता वा ॥

३८९३. आलोएंतो सोउं, साहंते गंतु[10] अप्पणो गुरुणो ।
कहणम्मि होति[11] मासो, गताण तेसिं न तं खेत्तं ॥

---

१. ० सेतु (स)।
२. होहंति (ब)।
३. य (अ)।
४. ०हतो (अ)।
५. सम्प्रति निर्युक्तिविस्तरः (मवृ)।
६. गाथा के प्रथम चरण में अनुष्टुप् छंद है।
७. आरुवणाए (ब)।
८. ० कवण (अ) लिपिदोष से ह के स्थान पर व हो गया है।
९. उवेवक्खित्ता (अ)।
१०. णेतु (स)।
११. होंति (क)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८९४. सामत्थण निज्जविते, पदभेदे चेव पंथ पत्ते य ।
पणुवीसादी[1] गुरुगा, गणिणोऽगहणेण[2] वा जस्स ॥

३८९५. एसा[3] अविधी[4] भणिता, तम्हा एवं न तत्थ गंतव्वं ।
गंतव्वं विधीए तु[5], पडिलेहेऊण तं खेत्तं[6] ॥

३८९६. खेत्तपडिलेहणविधी, पढमुद्देसम्मि वण्णिता कप्पे ।
स[7] च्चेव इहुद्देसे, खेत्तविहाणम्मि नाणत्तं ॥

३८९७. चतुग्गुणोववेयं[8] तु, खेत्तं होति जहन्नगं ।
तेरसगुणमुक्कोसं, दोण्हं मज्झम्मि मज्झिमं[9] ॥नि. ४९७ ॥

३८९८. महती विहारभूमी[10], वियारभूमी य सुलभवित्ती य ।
सुलभा वसधी य जहिं, जहण्णगं वासखेत्तं तु ॥नि. ४९८ ॥

३८९९. चिक्खल्ल पाण थंडिल[11], वसधी गोरस[12] जणाउले वेज्जे[13] ।
ओसधनिययाधिपती[14], पासंडा भिक्ख-सज्झाए ॥नि. ४९९ ॥

३९००. खेत्तपडिलेहणविधी, खेत्तगुणा चेव वण्णिता एते ।
पेहेयव्वं खेत्तं, वासाजोग्गं तु जं[15] कालं ॥

३९०१. खेत्ताण अणुण्णवणा, जेट्ठामूलस्स सुद्धपाडिवए ।
अधिगरणोमाणो मो, मणसंतावो[16] महा[17] होति[18] ॥

३९०२. एतेहि कारणेहिं, अणागयं चेव होतऽणुण्णवणा[19] ।
निग्गम[20] पवेसणम्मि य, पेसंताणं[21] विधिं वोच्छं ॥नि. ५०० ॥

३९०३. केई[22] पुव्वं पच्छा, व निग्गता पुव्वमतिगता खेत्तं ।
समसीमं तू पत्ताण, मग्गणा तत्थिमा होति[23] ॥नि. ५०१ ॥

---

१. पणवी० (अ)।
२. ० गाहेण (स)।
३. एगा (ब)।
४. गाथायां स्त्रीत्वं प्राकृतत्वात् (मवृ)।
५. तू (अ)।
६. खेत्त तु (स)।
७. सो (स)।
८. ० गणोव० (क)।
९ होंति (स)।
१०. वियार ० (क)।
११. पाणि ० (क, ब)।
१२. गोलस (ब)।
१३. विज्जा (ब, क)।
१४. ० नवया० (अ), ० निवताधि ० (स)।
१५. कं (स)।
१६. मणे (ब, क)।
१७. महं (अ)
१८. हिंति (अ)।
१९. होइ अणु० (अ, स)।
२०. निग्गमण (अ, ब)।
२१. पेहिंताण (ब, स)।
२२. केती (ब, क)।
२३. होत्थि (क)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३९०४. पुव्वं विणिग्गतो पुव्वमतिगतो पुव्वनिग्गतो पच्छा ।
पच्छा निग्गत पुव्वं, तु अतिगतो[1] दो वि पच्छा वा ॥

३९०५. पढमगभंगे[2] इणमो, तु मग्गणा पुव्वऽणुण्णवे[3] जदि तु[4] ।
तो तेसि होति खेत्तं, अह पुण अच्छंति दप्पेण ॥

३९०६. खेत्तमतिगया[5] मो त्ति, वीसत्था जदि अच्छहे ।
पच्छा गतऽणुण्णवए, तेसिं खेत्तं वियाहितं ॥

३९०७. गेलण्णवाउलाणं[6] तु, खेत्तमन्नस्स नो भवे ।
निसिद्धो खमओ चेव, तेण तस्स न लब्भते ॥

३९०८. पुव्वविणिग्गता[7] पच्छा, पविट्ठा पच्छ निग्गता[8] ।
पुव्वं कयरेसि खेत्तं, तत्थ इमा मग्गणा होति[9] ॥

३९०९. गेलन्नादिकज्जेहिं[10], पच्छा इंताण[11] होति खेत्तं तु ।
'निक्कारणं ठिता' ऊ,[12] पच्छा इंता[13] 'न उ'[14] लभंति ॥

३९१०. पच्छा विणिग्गतो वि हु, दूरासन्ना समा व अद्धाणे ।
सिग्घगती तु सभावी, पुव्वं पत्तो[15] लभति खेत्तं ॥

३९११. अह पुण असुद्धभावो, गतिभेदं काउ वच्चती पुरतो ।
मा एते गच्छंती[16], पुरतो ताहें य न लभंती ॥

३९१२. समयं पि पत्थियाणं, सभावसिग्घगतिणो भवे[17] खेत्तं ।
एमेव य आसन्ने, दूरद्धाणीण जो एती[18] ॥

३९१३. अहवा समयं[19] पत्ता', समयं चेवं अणुण्णवित[20] दोहिं ।
साधारणं तु तेसिं, दोण्ह वि वग्गाण तं होति ॥

३९१४. अधवा समयं दोन्नि[21] वि, सीमं पत्ता तु तत्थ जे पुव्विं ।
अणुजाणाहे तेसिं, न जे उ दप्पेण अच्छंति ॥

---

१. अभिगओ (ब, क)।
२. पढमभंगे (ब)।
३. पुव्वव्वणु० (ब), पुव्वणण्णवे (क)।
४. ता (स)।
५. खेत्त अति० (अ, क, स)।
६. ० आउलाणं (मवृ)।
७. ० व णिग्गओ (ब)।
८. गाथा के पूर्वार्द्ध में अनुष्टुप् छंद है।
९. होही (अ)।
१०. गेलण्णादीहिं कज्जेहि (क, ब)।
११. पच्छाविंताण (अ)।
१२. ० रणट्ठिता (स)।
१३. तिंता (अ, स), एंता (ब)।
१४. तु न (स)।
१५. पत्तो न (ब)।
१६. गच्छती (अ)।
१७. भवो (अ), भवे वि (ब)।
१८. एसति (ब)।
१९. समप्पयं (ब)।
२०. अणुण्णवणिए (ब, क)।
२१. दोण्हि (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३९१५. उज्जाणगामदारे[1], वसधिं पत्ताण मग्गणा एवं ।
समयमणुण्णे साधारणं तु न[2] लभंति जे पच्छा ॥

३९१६. ते पुण दोण्णी वग्गा, गणि-आयरियाण होज्ज दोण्हं तु ।
गणिणं[3] व[4] होज्ज दोण्हं[5], आयरियाणं व दोण्हं तु ॥

३९१७. अच्छंति संथरे सव्वे, गणी[6] णीति[7] असंथरे ।
जत्थ तुल्ला भवे दो वी, तत्थिमा होति मग्गणा ॥

३९१८. निप्फण्ण[8] तरुण[9] सेहे, जुंगित[10] पादच्छि-नास-कर-कन्ना ।
एमेव संजतीणं, नवरं वुड्डीसु नाणत्तं ॥

३९१९. समणाण संजतीण य, समणी अच्छंति[11] नेंति समणा उ ।
संजोगे[12] विय बहुसो, अप्पाबहुयं असंथरणे ॥

३९२०. एमेव भत्तसंतुट्ठा, तस्सालंभम्मि अप्पभू णिंति ।
जुंगितमादीएसु[13] य, वयंति खेत्तीण जं तेसिं[14] ॥

३९२१. पत्ताण अणुण्णवणा, सारूविय-सिद्धपुत्त-सण्णी[15] य ।
भोइय मयहर[16] 'ण्हाविय, निवेयण दुगाउयाइं च'[17] ।

३९२२. सग्गाम सण्णि असती[18], पडिवसभे पल्लिए व गंतूणं ।
अम्हं रुइयं खेत्तं, नायं खु करेह अन्नेसिं ॥

३९२३. जतणाए समणाणं, अणुण्णवेत्ता वसंति खेत्तबहिं ।
वासावासट्ठाणं, आसाढे[19] सुद्धदसमीए ॥

३९२४. सारूवियादि जतणा[20], अन्नेसिं वावि साहए बाहिं ।
बाहिं[21] वावि ठिया संता[22], पायोग्गं तत्थ गेण्हंति[23] ॥

---

१. उज्झाणे ० (ब, क) ।
२. व (क) ।
३. गणणं (ब, स) ।
४. य (ब, क, मु) ।
५. X (क) ।
६. गणि (स) ।
७. णीति (अ) ।
८. निप्फल्ल (अ) ।
९. X (क) ।
१०. जुंगिय (ब) ।
११. अच्छंती (ब) ।
१२. संजोगेवि उ (अ) ।
१३. ० मातीसु (क, ब) ।
१४. जेसिं (स), गाथा के प्रथम चरण में अनुष्टुप छंद है ।
१५. सण्णा (ब) ।
१६. महंतर (स) ।
१७. ण्हावितेण चेय दुगा० (अ) ।
१८. करेहि (स) ।
१९. X (क) ।
२०. X (क) ।
२१. बंधि (अ) ।
२२. गाथा के तृतीय चरण में अनुष्टुप् छंद है ।
२३. गेण्हंति (अ, ब), गेण्हते (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३९२५. दोण्ह जतो एगस्सा, निप्फज्जति[१] ततियं बहिठिता तु ।
दुगुणपमाणवासुवहि[२], संथरि पल्लि च[३] वज्जेंती ॥

३९२६. उच्चारमत्तगादी[४], छारादी चेव वासपाउग्गं[५] ।
संथार-फलगसेज्जा, तत्थ ठिता चेवऽणुण्णवणा[६] ॥

३९२७. पुन्नो य[७] तेसिं तहि मासकप्पे, अन्नं च दूरे खलु वासजोग्गं ।
ठायंति[८]तो अंतरपल्लियाए, जं 'एसकाले य न भुंजिहिंती'[९] ॥

३९२८. संविग्गबहुलकाले, एसा मेरा पुरा तु[१०] आसी य ।
इयरबहुले उ संपति, पविसंति अणागतं[११] चेव ॥

३९२९. पेहिते[१२] न हु[१३] अन्नेहिं, पविसंताऽऽयतट्ठिया ।
इतरे[१४] कालमासज्ज, पेल्लेज्ज परिवड्ढिता[१५] ॥

३९३०. रुण्णं तगराहारं, वएहि[१६] कुसुमंसुए[१७] मुयंतेहिं ।
उज्जाणपडिसवत्तीहि, वत्थूलाहिं[१८] ठएंतीहिं[१९] ॥

३९३१. एवं पासत्थमादी तु, कालेण परिवड्ढिया ।
पेल्लेज्जा माइठाणेहिं[२०], सोच्चादी ते इमे[२१] पुणो ॥

३९३२. सोच्चाऽउट्टी अणापुच्छा, मायापुच्छाऽजतट्ठिए ।
अजयट्ठिय[२२] भंडंते[२३], ततिए समणुण्णया दोण्हं[२४] ॥नि. ५०२ ॥

३९३३. गुरुणो सुंदरक्खेत्तं, साहंतं सोच्च पाहुणो ।
नएज्ज[२५] अप्पणो गच्छं[२६], एस आउट्टिया ठितो[२७] ॥दारं ॥

३९३४. पेहितमपेहितं वा, ठायति अन्नो अपुच्छिउं[२८] खेत्तं ।
गोवालवच्छवाले[२९], पुच्छति अन्नो वि दुप्पुच्छी[३०] ॥दारं ॥

---

१. निप्पज्जति (स) ।
२. दुगुणप्प० (अ, स), ० वास बहिं (ब) ।
३. वा (ब) ।
४. ० मत्तिगाती (ब, क) ।
५. ० पातोग्गं (क) ।
६. ० णवए (स) ।
७. व (स) ।
८. X (ब, क) ।
९. ० कालेण वि सुज्झिहिंति (क), ० काले ण व भुं ० (स) ।
१०. य (ब, क) ।
११. णागयं (ब) ।
१२. पेहिंते (ब) ।
१३. तु (स) ।
१४. इतरे तु (अ) ।
१५. ० वट्टिया (क) ।
१६. वएह (स), वृत्तीभिः (मवृ) ।
१७. ० सुय (स) ।
१८. वत्थु ० (अ)
१९. ठयंतेहिं (ब), स्थाप्यमानैः गाथायां स्त्रीत्वं प्राकृतत्वात् (मवृ) ।
२०. मायठा ० (अ, स) ।
२१. यमे (ब, क) ।
२२. ० ट्ठियं (स) ।
२३. गाथायां सप्तमी षष्ठ्यर्थे बहुवचने एकवचनं प्राकृतत्वात् (मवृ
२४. गाथा के चौथे चरण में दोण्हं पाट छंद की दृष्टि से अतिरिक्त है
२५. तं एज्ज (क) ।
२६. गच्छे (स) ।
२७. ठिमो (क) ।
२८. ०च्छिय (ब) ।
२९. ० वाला (अ, क) ।
३०. दुप्पच्छी (क) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३९३५. अविधिट्ठिता तु 'दोवी, ते'[१] ततिओ पुच्छिउ विहीय[२] ठितो ।
सारूवियमादि[३] काउ, बेंतऽण्णेहिं न पेहियं[४] ॥

३९३६. तं तु वीसरियं तेसिं, पउत्था वावि ते भवे ।
'खेत्तिओ य'[५] तहिं पत्तो, तत्थिमा होति मग्गणा ॥

३९३७. आउट्टितो[६] ठितो जो उ, तस्स नामं पि नेच्छिमो ।
अणापुच्छिय दुप्पुच्छी, भंडंते खेत्तकारणा ॥

३९३८. अहवा[७] दो वि भंडंते, जयणाए ठितेण ते[८] ।
खेत्तिओ[९] दो वि जेत्तूण, भत्तं देति[१०] न उग्गहं ॥

३९३९. ततियाण सयं सोच्चा, सड्ढादीए[११] व पुच्छिउं[१२] ।
होति साधारणं खेत्तं, दिट्ठंतो[१३] खमएण तू ॥

३९४०. सुद्धं गवेसमाणो, पायसखमगो[१४] जधा भवे सुद्धो ।
तह पुच्छिउ ठायंता, सुद्धा उ भवे असढभावा ॥

३९४१. अतिसंथरणे[१५] तेसिं, उवसंपन्ना उ[१६] खेत्ततो इतरे ।
अविधिट्ठिया उ दो वी, अहव[१७] इमा मग्गणा अन्ना ॥

३९४२. पेहेऊणं खेत्तं[१८], केई[१९] ण्हाणादि गंतु ओसरणं ।
पुच्छंताण कधेंती[२०], अमुगत्थ वयं तु गच्छामो ॥

३९४३. घोसणय सोच्च सण्णिस्स[२१], पेच्छणा पुव्वमतिगते पच्छा ।
पुव्वट्ठिते[२२] परिणते, पच्छ[२३] भणंते ण[२४] से इच्छा ॥नि. ५०३ ॥

३९४४. बाहुल्ला संजताणं तु, उवग्गो यावि पाउसे ।
'ठिया मो अमुगे खेत्ते, घोसणऽण्णोण्णसाहणं ॥

---

१. दोवेते (ब, क)।
२. विहीउ (ब)।
३. सारूविमादि (ब)।
४. पेहिया (क), यह गाथा स प्रति में नहीं है। ।
५. खेत्ततो या (क)।
६. ० ट्टिया (स)।
७. अहवा वि (स)।
८. x (ब, स)।
९. खत्तिओ (अ)
१०. देंति (ब, क)।
११. सड्ढातीते (क, ब)।
१२. पुच्छियं (स)।
१३. दिट्ठंगो (अ)।
१४. ० खमतो (ब)।
१५. सति संथ० (अ, स)।
१६. य (ब, क)।
१७. अहवा (अ)।
१८. खेत्ते (ब)।
१९. केति (स)।
२०. कहेति (ब)।
२१. सण्णिस्सा (ब)।
२२. पुव्वगते (स)।
२३. पुच्छा (स)।
२४. णं (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३९४५. विभज्जंती[१] च ते पत्ता, ण्हाणादीसु समागमो ।
पहुप्पंते[२] य नो कालाऽऽसन्ना[३] घोसणयं ततो ॥

३९४६. दाणादिसड्ढकलियं, सोऊणं तत्थ कोइ[४] गच्छेज्जा ।
रमणिज्जं खेत्तं ति य, धम्मकधालद्धिसंपन्नो ॥

३९४७. संथवकहाहिं[५] आउट्टिऊण अत्तीकरेति ते सड्ढे ।
ते वि य तेसु परिणया, इतरे वि तहिं अणुप्पत्ता ॥

३९४८. नीह त्ति तेहिं[६] भणिते, सड्ढे पुच्छंति ते वि य भणंति ।
अच्छह[७] भंते दोण्ह[८] वि, न तेसि इच्छाएँ सच्चित्तं ॥

३९४९. असंथरणेऽणिताण[९], कुल-गण-संघे य होति ववहारो ।
केवतियं पुण खेत्तं, होति पमाणेण बोधव्वं ॥

३९५०. एत्थ सकोसमकोसं, मूलनिबद्धं च गामऽणुमुयंतेण[१०] ।
सच्चित्ते अच्चित्ते, मीसे य विदिण्णकालम्मि ॥

३९५१. अत्थि[११] हु वसहग्गामा, कुदेस-नगरोवमा सुहविहारो ।
बहुगच्छुवग्गहकरा, सीमच्छेदेण वसियव्वं ॥

३९५२. जहियं व तिन्नि गच्छा, पण्णरसुभया[१२] 'जणा परिवसंति'[१३] ।
एयं वसभक्खेत्तं, तव्विवरीयं भवे इतरं ॥

३९५३. तुब्भंतो मम बाहिं, तुज्झ[१४] सचित्तं ममेतरं वावि ।
आगंतुगवत्थव्वा, थी-पुरिसकुलेसु व विरेगो[१५] ॥

३९५४. एवं सीमच्छेदं[१६], करेंति साधारणम्मि खेत्तम्मि ।
पुव्वट्ठितेसु जे पुण, पच्छा एज्जाहि अन्ने[१७] उ ॥

३९५५. खेत्ते[१८] उवसंपन्ना, ते सव्वे नियमसो उ नातव्वा ।
आभव्व तत्थ तेसिं,[१९] सच्चित्तादीण किं न भवे[२०] ॥

---

१. विभिज्जंते (अ), विलिज्जंते (स) ।
२. पहुच्चंते (ब) ।
३. काले भण्णा (अ) ।
४. केति (स) ।
५. ० कधाइं (स) ।
६. तेणं (ब) ।
७. अव्वह (अ) ।
८. दोण्हि (अ, क), दोण्णि (स) ।
९. ० अणिताण (ब), असंथरे णिं० (अ) ।
१०. गाममणुमुयं० (क), अणुमुयंतेणं (ब, अ) ।
११. हत्थि (स) ।
१२. ० सुहतो (ब) ।
१३. जेण पविसंति (ब, क) ।
१४. तुहं (अ), तुब्भ (स) ।
१५. विवेगो (अ) ।
१६. सीमाछेदं (अ) ।
१७. अत्ते (क) ।
१८. खेत्त (क) ।
१९. तेंसि तु (ब, स), तेसु (क) ।
२०. गाथा के तीसरे चरण में अनुष्टुप् छंद है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३९५६. नाल[१] पुर-पच्छसंथुय, मित्ता य वयंसया य सच्चित्ते ।
आहारमत्तगतिगं[२], संथारग वसधिमच्चित्ते ॥

३९५७. उग्गहम्मि परे एयं, लभते उ अखेत्तिओ[३] ।
वत्थमादी[४] वि दिन्नं तु,[५] कारणम्मि वि सो लभे[६] ॥

३९५८. दुविहा सुतोवसंपय, अभिधारेंते[७] तहा पढंते य ।
एक्केक्का वि य दुविधा, अणंतर परंपरा चेव ॥नि. ५०४॥

३९५९. एत्थं सुयं अहीहामि[८], सुतवं सो वि अन्नहिं ।
वच्चंतो सोऽभिधारंतो, सो वि अन्नत्थमेव[९] व[१०] ॥

३९६०. दोण्हं अणंतरा[११] होंति, तिगमादी परंपरा[१२] ।
सट्ठाणं पुणरेंतस्स, केवलं तु निवेयणा ॥

३९६१. अच्छिन्नुवसंपयाएँ, गमणं सट्ठाण जत्थ वा छिन्नं ।
मग्गणकहणपरंपर, छम्मीसं[१३] चेव वल्लिदुगं[१४] ॥नि. ५०५॥

३९६२. अभिधारेंत[१५] पढंते वा, छिन्नाए ठाति अंतए ।
मंडलीए उ[१६] सट्ठाणं, लभते[१७] णो उ मज्झिमे ॥

३९६३. जो उ मज्झिल्लए जाति, नियमा सो उ अंतिमं[१८] ।
पावते निन्नभूमी[१९] तु, पाणियं व पलोट्टियं ॥

३९६४. माता पिता[२०] य भाया[२१], भगिणी पुत्तो तधेव धूता य ।
एसा[२२] अणंतरा खलु, निम्मीसा होंति वल्ली उ ॥

३९६५. सेसाण उ वल्लीणं, परलाभो होंति दोन्नि चउरो व ।
एवं[२३] परंपराए, 'विभास ततो वि[२४] य जा परतो ॥

---

१. नार (स)।
२. ०मत्तिग ० (क)।
३. अखित्तओ (अ), अखेत्तओ (स)।
४. वत्थगादी (ब, क)।
५. व (अ)।
६. लसे (ब, क)।
७. असिधारेंते (क)।
८. अहीहम्मि (अ, क)।
९. अत्थण्णहिं (ब), अण्णेतमेव (स)।
१०. वा (क)।
११. अण्णयरा (अ, ब, क, स)।
१२. ० परी (क)।
१३. छम्मासं (क)।
१४. वण्णि० (अ), अ प्रति में प्रायः सर्वत्र लिपिदोष से ल के स्थान पर ण लिखा हुआ है।
१५. अभिकरिंते (क)।
१६. x (अ)।
१७. वयते (क, ब)।
१८. अंतियं (स)।
१९. तिन्नि ० (अ)।
२०. पिय (ब)।
२१. x (ब)।
२२. एस (ब, क)।
२३. एव (स)।
२४. विभासिया तो (ब), विभासतो वि (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३९६६. माउम्माय पिया भाया, भगिणी एव पिउणो वि चत्तारि[1] ।
पुत्तो[2] धूया य तधा, भाउगमादी चउण्हं पि ॥

३९६७. अट्ठे व पज्जयाइं, चउवीसं[3] भाउ-भगिणिसहियाइं ।
'एवं एच्चिय[4] माउलसुतादओ परतरा[5] वल्ली ॥

३९६८. दुविधो अभिधारंतो[6], दिट्ठमदिट्ठो य होति नायव्वो ।
अभिधारेज्जंतगसंतएहिऽदिट्ठो य अन्नेहिं[7] ॥

३९६९. सच्चित्ते अंतरा लद्धे, जो उ गच्छति[8] अन्नहिं ।
जो तं पेसे सयं वावि, नेति[9] तत्थ अदोसवं ॥

३९७०. जो उ लद्धुं[10] वए अन्नं, सगणं पेसवेति[11] वा ।
दिट्ठा व संतऽदिट्ठा[12] वा, मायी[13] ते होंति दोण्णि वी ॥

३९७१. ण्हाणादिएसु तं दिस्सा, पुच्छा सिट्ठे हरेति[14] से ।
गुरुगा[15] चेव सच्चित्ते, अच्चित्ते तिविधं पुण[16] ॥

३९७१/१. दुविहो अभिधारंतो, दिट्ठमदिट्ठो य[17] होति नातव्वो ।
अभिधारेज्जंतगसंतएहि[18]ऽदिट्ठो य अन्नेहिं[19] ॥

३९७१/२. दिट्ठो मायि अमाई, एवमदिट्ठो वि[20] होंति दुविहो उ ।
, अमायी तु अप्पिणिती[21], माई उ न अप्पिणे[22] जो उ ॥

३९७२. एवं ता जीवंते[23], अभिधारेंतो[24] उ एइ जो साधू ।
कालगते एतम्मि उ, इणमन्नो होति ववहारो ॥नि. ५०६ ॥

---

१. हस्तप्रतियों में 'चत्तारि' पाठ नहीं मिलता किंतु टीका की व्याख्या के अनुसार तथा छंद की दृष्टि से चत्तारि पाठ होना चाहिए।
२. पुत्ता य (ब)।
३. ० वीसं खु (स)।
४. एवं इय चिय (अ, क), एव इयच्चिय (स)।
५. परंपरा (ब, स)।
६. ० धारिंतो (ब, क), ० धारेंति (स)।
७. गाथा का उत्तरार्ध ब और क प्रति में नहीं है।
८. गच्छहि (स)।
९. ण्णेइ (अ)।
१०. लद्धं (ब)।
११. पेसएति (अ)।
१२. ० अदिट्ठा (ब, स, क)।
१३. माती (क)।
१४. हरिसे (अ), हरंति (स)।
१५. गुरुगो (अ)।
१६. ३९७१ तथा ३९७१/१ ये दोनों गाथाएं ब और क प्रति में नहीं हैं। देखें टिप्पण ३९७१/१ गाथा।
१७. व (अ)।
१८. ० संतिएहिं (अ)
१९. टीकाकार के अनुसार ३९७१/१, २ ये दोनों गाथाएं अन्यकर्तृक हैं।
'अत्रैवान्यकर्तृकविधिशेषसूचकं गाथाद्वयम्।'
दुविहो..... (३९७१/१) गाथा का पुनरावर्तन हुआ है। देखें गा. ३९६८।
२०. ति (स)।
२१. अप्पिणेती (अ), अप्पिणाती (स)।
२२. अप्पिणो (स)।
२३. जीवंता (अ), जीयंता (स)।
२४. अतिधा० (ब, क)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३९७३. अप्पत्ते कालगते, सुद्धमसुद्धे अदिंतदिंते[1] य ।
पुव्विं पच्छा निग्गत[2], संतमसंते सुते बलिया ॥नि. ५०७ ॥

३९७४. लद्धे 'उवरता थेरा, तस्स सिस्साण सो भवे ।
मते वि लभते सीसो, जइ[3] से अत्थि देति वा ॥

३९७५. एवं नाणे तह दंसणे य सुत्तत्थ-तदुभए चेव ।
वत्तण[4] संधण[5] गहणे, णव णव भेदा[6] य एक्केक्के ॥

३९७६. पासत्थमगीतत्था, उवसंपज्जंति जे उ चरणट्ठा ।
सुत्तोवसंपयाए, जो लाभो सो उ तेसिं तु ॥

३९७७. गीतत्था[7] ससहाया, असमत्ता जं तु लभति सुह-दुक्खी ।
सुत्तत्थअतक्कंते[8], समत्तकप्पी[9] उ दलयंति[10] ॥

३९७८. अभिधारिज्जंतऽपत्ते[11], एस वुत्तो गमो खलु ।
पढंतेसु[12] विधिं वोच्छं, सो उ[13] पाढो इमो भवे ॥

३९७९. धम्मकहा सुत्ते या, कालिय तह दिट्ठिवाय अत्थे य ।
उवसंपयसंजोगे[14], दुगमादि जहुत्तरं बलिया ॥

३९८०. आवलिय[15] मंडलिकमो, पुव्वुत्तो छिन्नऽछिन्नभेदेणं[16] ।
एसा सुतोवसंपय, एत्तो सुहदुक्खयं वोच्छं ॥दारं ॥

३९८१. अभिधारें उवसंपण्णो[17], दुविधो सुह-दुक्खितो मुणेयव्वो ।
तस्स उ किं आभवती[18], सच्चित्ताऽच्चित्तलाभस्स ॥नि. ५०८ ॥

३९८२. सहायगो तस्स[19] उ नत्थि कोई, सुत्तं च तक्केइ न सो परत्तो ।
एगाणिए दोसगणं विदित्ता, सो गच्छमब्भेति[20] समत्तकप्पं ॥

३९८३. खेत्ते सुहदुक्खी तू, अभिधारेंताइँ दोण्णि वी लभति ।
पुर-पुच्छसंथुयाइं, हेट्ठिल्लाणं च जो लाभो ॥नि. ५०९ ॥

---

१. दिंतअदिंते (अ) ।
२. निग्गए (अ, स) ।
३. जति (अ) ।
४. वत्तणा (क) ।
५. संधणा (स) ।
६. x (क) ।
७. ० त्था जं (ब, क) ।
८. अतक्किंत (अ) ।
९. ० कप्पा (क) ।
१०. न दलंति (अ), दलंती (स) ।
११. ० ज्जंत अप्पत्ते (क, स) ।
१२. पढते उ (ब, क) ।
१३. य (अ) ।
१४. अप्पत्तयसंजोगो (क) ।
१५. ० लिया (अ) ।
१६. छिन्नाछि० (ब) ।
१७. उववण्णो (अ), छंद की दृष्टि से 'अभिधारुवसंपण्णो' पाठ होना चाहिए ।
१८. आवितिति (क), आभव इति (अ) ।
१९. तत्थ (क) ।
२०. ० मज्झेति (अ, क) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३९८४ परखेत्तम्मि वि लभती, सो दो वी तेण गहण[1] खेत्तस्स ।
जस्स वि उवसंपन्नो, सो वि से न गिण्हते ताइं ॥

३९८५. परखेत्ते वसमाणे[2] 'वतिक्कमंतो[3] व न 'लभतेऽसण्णी'[4] ।
छंदेण[5] पुव्वसण्णी, गाहित[6] सम्मादि सो लभते[7] ॥

३९८६. सुह-दुक्खितेण जदि उ, परखेत्तुवसामितो तहिं कोई ।
बेति[8] अभिनिक्खमामी[9], सो तू खेत्तिस्स[10] आभवति ॥

३९८७. अध पुण गाहित[11] दंसण, ताधे सो होति उवसमंतस्स[12] ।
कम्हा जम्हा सावय[13], तिण्णी[14] वरिसाणि पुव्वदिसा ॥

३९८८. एतेण कारणेणं, सम्मद्दिट्ठिं तु न लभते खेत्ती[15] ।
एसो उवसंपन्नो, अभिधारेंतो इमो होति ॥

३९८९. मग्गणकहणपरंपर, अभिधारेंतेण मंडलीऽछिन्ना[16] ।
एवं खलु-सुह-दुक्खे, सच्चित्तादी तु मग्गणया ॥

३९९०. जइ से'[17] अत्थि सहाया,जदि वावि करेंति तस्स तं किच्चं[18] ।
तो लभते[19] इहरा • पुण, तेसि मणुण्णाण साधारं ॥

३९९१. अपुण्णा कप्पिया जे तू, अन्नोन्नमभिधारए ।
अन्नोन्नस्स य लाभो उ[20], तेसिं साधारणो भवे ॥

३९९२. जाव एक्केक्कगो पुन्नो, ताव तं सारवेंति[21] तु ।
कुलादिथेरगाणं[22] वा, देंति जो वावि[23] सम्मतो ॥

३९९३. सुह-दुक्खे उवसंपद, एसा खलु वण्णिया समासेणं ।
अह एत्तो उवसंपय, मग्गोग्गह वज्जिते वुच्छं ॥दारं ॥

---

१. गहणी (ब) ।
२. स समाणो (अ, क), ० माणी (स) ।
३. अतिक्कमंतो (स, ब) ।
४. लभति असण्णी (स, ब) ।
५. छेदेण (क) ।
६. गाहितस्स (ब) ।
७. लभति (स) ।
८. चेति (ब) ।
९. ० मामि (स) ।
१०. खेत्तस्स (अ) ।
११. गाहितो (मु, ब) ।
१२. ०समितस्स (अ, क) ।
१३. सावति (ब, क) ।
१४. तिण्णि (मु, क) ।
१५. खित्ती (अ) ।
१६. मंडला ० (स) ।
१७. जति स (क) ।
१८. किंच (क) ।
१९. लभे (ब) ।
२०. x (ब) ।
२१. सारवेति (अ), सारमंति (स) ।
२२. ० दिथविरगाणं (ब, क), कुलाभिधे ० (स) ।
२३. वासि (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३९९४. मग्गोवसंपयाए, गीतत्थेणं परिग्गहीतस्स[१] ।
अग्गीतस्स[२] वि लाभो, का पुण उवसंपया मग्गे ॥नि. ५१० ॥

३९९५. जह कोई[३] मग्गण्णू, अन्नं देसं तु वच्चती साधू ।
उवसंपज्जति उ तगं, तत्थऽण्णो[४] गंतुकामो उ ॥नि. ५११ ॥

३९९६. अव्वत्तो अविहाडो, अदिट्ठदेसी अभासिओ वावि ।
एगमणेगे उवसंपयाय, चउभंग जा पंथो ॥नि. ५१२ ॥

३९९७. गतागत गतनियत्ते, फिडिय गविट्ठे तधेव अगविट्ठे ।
उब्भामग सन्नायग, 'नियट्टऽदिट्ठे अभासी य'[५] ॥

४९९८. उवणट्ठ अन्नपंथेण[६], वा गतं अगविसंत न लभंति ।
अगविट्ठो त्ति परिणते, गवेसमाणा खलु लभंती ॥

४९९९. अम्मा-पितिसंबद्धा, मित्ता य वयंसगा य जे तस्स ।
दिट्ठा भट्ठा[७] य तहा, मग्गुवसंपन्नओ लभति ॥दारं ॥

४०००. विणओवसंपयाए[८], पुच्छण साहण अपुच्छ गहणे य ।
नायमनाए दोन्नि वि, नमंति पक्किल्लसाली व ॥नि. ५१३ ॥

४००१. कारणमकारणे[९] वा, अदिट्ठदेसं गया विहरमाणा ।
पुच्छा[१०] विहारखेत्ते, अपुच्छ लहुगो य जं वावि ॥

४००२. सच्चित्तम्मि उ लद्धे, अण्णोण्णस्स अनिवेदणे लहुगो ।
ववहारेण व हाउं, पुणरवि दाउं[११] नवरि[१२] मासो ॥

४००३. नाए व अनाए वा, होति परिच्छाविधी जहा हेट्ठा[१३] ।
अपरिच्छणम्मि गुरुगा, जो उ[१४] परिच्छाय अविसुद्धो ॥

४००४. केई[१५] भणंति ओमो, 'नियमा निवेयइ'[१६] इच्छ इतरस्स ।
तं तु न जुज्जति जम्हा, पक्किल्लगसालिदिट्ठंतो[१७] ॥

---

१. परिग्गिही० (अ)।
२. अगीत० (क)।
३. कोती (ब, क)।
४. ० ण्णं (अ)।
५. ० अदिट्ठ भासी या (ब, क)।
६. वण्ण ० (अ)।
७. भाणित (मवृ)।
८. विणए वसं० (अ)।
९. ० रणं (स)।
१०. पुव्वं (क)।
११. दाणं (स)।
१२. नवर (अ, क, स)।
१३. दिट्ठा (क)।
१४. य (क), इ (अ)।
१५. केइ उ (स, ब, क)।
१६. नियमेण निवेइ (अ), नियमा निवेइए (स)।
१७. पक्कल्लग ० (अ), पिक्क० (क)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४००५. वंदणालोयणा चेव[1], तहेव य निवेयणा ।
सेहेण उवउत्तम्मि[2], इतरो पच्छ कुव्वती[3]. ॥दारं ॥

४००६. सुत-सुह-दुक्खे खेत्ते, मग्गे विणओवसंपयाए य ।
बावीसपुव्वसंथुय, वयंसदिट्ठे[4] य भट्ठे[5] य ॥नि. ५१४ ॥

४००७. खेत्ते मित्तादीया, सुतोवसंपन्नतो उ छल्लभते[6] ।
अम्मापिउसंबद्धो, सुह-दुक्खी एतरो दिट्ठो ॥

४००८. इच्चेयं पंचविधं, जिणाण आणाएँ कुणति सट्ठाणे ।
पावति धुवमाराहं, तव्विवरीए विवच्चासं ॥नि. ५१५ ॥

४००९. इच्चेसो पंचविहो, ववहारो आभवंतिओ नाम ।
पच्छित्ते ववहारं, सुण वच्छ ! समासतो वुच्छं ॥नि. ५१६ ॥

४०१०. सो पुण चउव्विहो दव्व-खेत्त-काले य[7] होति भावे य ।
सच्चित्ते अच्चित्ते, दुविधो पुण[8] होति दव्वम्मि ॥नि. ५१७ ॥

४०११. पुढवि-दग-अगणि-मारुय-वणस्सति तसेसु[9] होति सच्चित्ते ।
अचित्ते पिंड उवधी[10], दस पन्नरसेव सोलसगं[11] ॥

४०१२. संघट्टण 'परितावण-उद्दवणा'[12] वज्जणा[13] य सट्ठाणं ।
दाणं तु चउत्थादी, तत्तियमित्ता व कल्लाणे ॥दारं ॥

४०१३. अधवा[14] अट्ठारसगं, पुरिसे इत्थीसु वज्जिया वीसा ।
दसगं च[15] नपुंसेसुं, आरोवण वण्णिया तत्थ ॥दारं ॥नि. ५१८ ॥

४०१४. जयवणऽद्धाणरोधएँ[16], मग्गादीए य[17] होति खेत्तम्मि ।
दुब्भिक्खे य सुभिक्खे, दिया व रातो व कालम्मि[18] ॥नि. ५१९ ॥

---

१. एय (अ, स) ।
२. पउत्तम्मि (क), य उत्तम्मि (स) ।
३. कुव्वतो (स) ।
४. ० दिट्ठ (ब) ।
५. नट्ठे (क), सव्वे (अ, सपा) ।
६. ० भइ (अ), ४००७ से ४००९ तक की तीनों गाथाएं क और स प्रति में नहीं हैं ।
७. या (अ, ब) ।
८. x (ब) ।
९. तस्सेसु (ब) ।
१०. उवधी य (क) ।
११. सोलगं (स) ।
१२. ० ताव द्दवणा (अ) ।
१३. वज्जणे (अ) ।
१४. अहवा वि (ब, क) ।
१५. व (अ) ।
१६. ० अद्धाण रोवए (अ) ।
१७. वि (अ) ।
१८. ४०१४, ४०१५ ये दोनों गाथाएं क, ब और स प्रति में नहीं हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४०१५. वसिमे वि अविहिकरणं, संथरमाणम्मि खेत्तपच्छित्तं ।
अद्धाणे उ अजयणं, पवण्णे चेव दप्पेणं ॥

४०१६. कालम्मि उ संथरणे, पडिसेवति[1] अजयणा व ओमंसि[2] ।
दिय-निसिमेराऽकरणं, ऊणधियं[3] वावि कालेण ॥दारं ॥

४०१७. जोगतिए करणतिए, दप्प-पमायपुरिसे[4] य भावम्मि[5] ।
एतेसिं तु विभागं, वुच्छामि अहासमासेणं[6] ॥

४०१८. जोगतिए करणतिए, सुभासुभे तिविधकालभेएणं ।
सत्तावीसं भंगा, दुगुणा वा बहुतरा वावि ॥

४०१९. वावे मिहमंबवणं, मणसाकरणं तु होतऽवुत्ते[7] वि ।
अणुजाणसु[8] 'जा वुप्पउ'[9], मण कारावण अवारेंते ॥

४०२०. मागहा[10] इंगितेणं तु, पेहिएण य कोसला ।
अद्धुत्तेण[11] उ पंचाला, नाणुत्तं दक्खिणावहा ॥

४०२१. एवं तु अणुत्ते वी, मणसा कारावणं तु बोधव्वं ।
मणसाऽणुण्णा साधू, चूयवणं वुत्त वुप्पति वा ॥

४०२२. एवं वइ[12] कायम्मी, तिविधं करणं विभासबुद्धीए ।
हत्थादि 'सण्ण छोडिय'[13] इय काये[14] कारणमणुण्णा ॥

४०२३. एवं नवभेदेणं, पाणइवायादिगे[15] उ अइयारे ।
निरवेक्खाण मणेण वि, पच्छित्तितरेसि उभएणं ॥

४०२४. वायाम-वग्गणादी, धावण-डेवण य होति दप्पेणं ।
पंचविधपमायम्मी[16], जं जहि आवज्जती[17] तं तु[18] ॥दारं ॥

४०२५. गुरुमादीया पुरिसा, तुल्लवराहे वि तेसि नाणत्तं ।
परिणामगादिया वा, इड्ढिमनिक्खंत असहू वा[19] ॥

१. ० सेवित (स) ।
२. ओमम्मि (ब, क) ।
३. तूण ० (क) ।
४. दव्वप० (क) ।
५. भावं ति (क) ।
६. अह समा० (अ, स), अहाणुपुव्वीए (मु) ।
७. होइ अवुत्ते (अ), होउ वुत्ते (स) ।
८. ० जाणेसु (ब) ।
९. जाए वुप्पउ (अ, क), जा वुण्णउ (ब) ।
१०. मगधा (अ, स) ।
११. अत्तट्ठेण (ब) ।
१२. वय (मु, ब) ।
१३. सा पच्छोडिय (अ) ।
१४. कायेन गाथायां सप्तमी तृतीयार्थे (मवृ) ।
१५. ० वायादिते (ब, क) ।
१६. ० यम्मि (अ) ।
१७. यावज्जंति (क) ।
१८. तू (स) ।
१९. यह गाथा क प्रति में नहीं है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४०२६. पुमं बाला थिरा चेव, कयजोग्गा 'य[1] सेतरा'[2] ।
अधवा दुविहा पुरिसा, होंति दारुण-भद्दगा ॥दारं ॥

४०२७. पायच्छित्ताऽऽभवंते य[3], ववहारो सो समासतो भणितो ।
जेणं तु ववहरिज्जति, इयाणि तं तू पवक्खामि ॥नि. ५२० ॥

४०२८. पंचविहो ववहारो, दुग्गतिभयचूरगेहि[4] पण्णत्तो ।
आगम-सुत-आणा धारणा य जीते 'य पंचमए'[5] ॥नि. ५२१ ॥

४०२९. आगमतो ववहारो, सुणह[6] जहा धीरपुरिसपण्णत्तो[7] ।
पच्चक्खो य परोक्खो, सो वि[8] य दुविहो मुणेयव्वो ॥नि. ५२२ ॥

४०३०. पच्चक्खो वि य दुविहो, इंदियजो चेव नो व इंदियजो ।
इंदियपच्चक्खो वि य, पंचसु विसएसु नेयव्वो ॥नि. ५२३ ॥

४०३१. नोइंदियपच्चक्खो, ववहारो सो समासतो तिविहो ।
ओहि-मणपज्जवे या, केवलनाणे य पच्चक्खे ॥नि. ५२४ ॥

४०३२. ओधीगुण-पच्चइए, जे वट्टंते[9] सुयंगवी धीरा ।
ओहिविसयनाणत्थे, जाणसु ववहारसोधिकरे ॥

४०३३. उज्जुमती विउलमती, जे वट्टंती सुयंगवी धीरा ।
मणपज्जवनाणत्थे, जाणसु ववहारसोहिकरे[10] ॥

४०३४. आदिगरा[11] धम्माणं, चरित्तवर-नाण[12]-दंसण-समग्गा ।
सव्वत्तगनाणेणं, ववहारं ववहरंति जिणा[13] ॥

४०३५. पच्चक्खागमसरिसो, होति परोक्खो वि आगमो जस्स ।
चंदमुही विव सो वि हु, आगमववहारवं होति[14] ॥

४०३६. नातं आगमियं[15] ति य, एगट्ठं जस्स सो परायत्तो ।
सो पारोक्खो वुच्चति, तस्स पदेसा इमे होंति[16] ॥

४०३७. पारोक्खं ववहारं, आगमतो सुतधरा ववहरंति ।
चोद्दस-दसपुव्वधरा, नवपुव्वियगंधहत्थी य[17] ॥नि. ५२५ ॥

---

१. या (अ)।
२. सभावतो (स)।
३. गाथा का प्रथम चरण अनुष्टुप् छंद में है
४. ० चूरगेहि (अ, ब, स, क)।
५. पंचमा य (अ)।
६. मुणह (मु, अ), गुणह (स)।
७. वीर ० (अ)।
८. x (क)।
९. वट्टंती (क)।
१०. जीभा ८९।
११. ० गरा णं (क, स)।
१२. चारित्तवर० (ब), चरणत्तवर ० (स)।
१३. जीभा १०८।
१४. जीभा ११०।
१५. आगमणं (अ), आगमयं (ब, स)।
१६. जीभा १११।
१७. जीभा ११२।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४०३८. किह आगमववहारी, जम्हा जीवादयो 'पयत्था उ'[१] ।
उवलद्धा तेहिं तू, सव्वेहिं नयविगप्पेहिं[२] ॥

४०३९. जह केवली वि जाणति[३], दव्वं खेत्तं च काल-भावं च ।
तह चउलक्खणमेतं[४], 'सुयनाणी वी विजाणाति'[५] ॥नि. ५२६ ॥

४०४०. पणगं मासविवड्ढी[६], मासिगहाणी[७] य पणगहाणी य ।
एगाहे[८] पंचाहं, पंचाहे चेव एगाहं[९] ॥

४०४१. रागद्दोसविवड्ढिं, हाणिं[१०] वा णाउं[११] देंति पच्चक्खी ।
चोद्दसपुव्वादी वि हु, तह नाउं देंति हीणऽहियं[१२] ॥

४०४२. चोदगपुच्छा पच्चक्खनाणिणो थोव[१३] कह बहुं[१४] देंति ।
दिट्ठंतो वाणियए, जिणचोद्दसपुव्विए धमए[१५] ॥

४०४३. जं जह मोल्लं रयणं, तं जाणति रयणवाणिओ निउणो ।
थोवं[१६]तु महल्लस्स वि, कासति[१७]अप्पस्स वि[१८] 'बहुं तु'[१९] ॥

४०४४. 'अधवा कायमणिस्स उ'[२०], सुमहल्लस्स वि उ कागिणी मोल्लं[२१] ।
वइरस्स उ अप्पस्स वि, मोल्लं होती[२२] सयसहस्सं ॥

४०४५. इय मासाण बहूण वि, रागद्दोसऽप्पयाय थोवं तु ।
रागद्दोसोवचया, पणगे 'वि जिणा'[२३] बहुं देंति[२४] ॥

४०४६. पच्चक्खी पच्चक्खं, पासति पडिसेवगस्स सो भावं ।
किह जाणति पारोक्खी[२५], नातमिणं तत्थ धमएणं[२६] ॥

४०४७. नालीधमएण जिणा, उवसंहारं[२७] करेंति पारोक्खे ।
जह सो कालं जाणति, सुतेण सोहिं तहा सोउं ॥

---

१. नवपयत्था (क) ।
२. जीभा ११३ ।
३. याणति (ब) ।
४. ० मेवं (स) ।
५. ० नाणीमेव जाणाति (अ, स, क), जीभा ११४ ।
६. ० विवड्ढि (स) ।
७. मासग ० (ब) ।
८. एकाहं नाम अभक्तार्थः (मवृ) ।
९. जीभा ११५ ।
१०. हाणी (स) ।
११. णेउ (अ, क) ।
१२. जीभा ११६ ।
१३. थोव य (क), थेवे वि (जीभा) ।
१४. पभु (स) ।
१५. गाथा का उत्तरार्ध जीभा (११७) में इस प्रकार है—
भण्णति सुणसू एत्थं, दिट्ठंतं वाणिएण इमं ॥
१६. थेवं (क) ।
१७. कस्सति (स) ।
१८. उ (अ) ।
१९. बहू (स), जीभा ११८ ।
२०. अहवा वि कायमणिणो (जीभा ११९) ।
२१. कागणी ० (स, ब, क) ।
२२. होति (क) ।
२३. विउ तो (स) ।
२४. जीभा १२० ।
२५. परोक्खी (क) ।
२६. जीभा १२१ ।
२७. उवसंधारं (अ, स, जीभा १२२) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४०४८. जेसिं जीवाजीवा, उवलद्धा सव्वभावपरिणामा ।
सव्वाहि[1] नयविधीहिं, केण कतं आगमेण कयं[2] ॥

४०४९. तं पुण केण कतं तू, सुतनाणं जेण जीवमादीया ।
नज्जंति सव्वभावा, केवलनाणीण तं तु कतं[3] ॥

४०५०. आगमतो ववहारं, पर सोच्चा संकियम्मि उ[4] चरित्ते ।
आलोइयम्मि आराहणा अणालोइए भयणा ॥नि. ५२७॥

४०५१. आगमववहारी छव्विहो वि[5] आलोयणं निसामेत्ता ।
देति ततो पच्छित्तं, पडिवज्जति सारितो जइ य[6] ॥

४०५२. 'आलोइयपडिक्कंतस्स, होति आराधणा'[7] तु नियमेण ।
अणालोयम्मि भयणा, किह पुण भयणा भवति तस्स ॥

४०५३. कालं कुव्वेज्ज सयं, अमुहो वा होज्ज अहव आयरिओ ।
अप्पत्ते[8] पत्ते वा, आराधण तह वि भयणेवं[9] ॥

४०५४. अवराहं वियाणंति, तस्स सोधिं च जद्दपि ।
तधेवालोयणा[10] वुत्ता, आलोएंते बहू गुणा ॥

४०५५. दव्वेहि पज्जवेहिं[11], कम-खेत्ते काल-भावपरिसुद्धं ।
आलोयणं सुणेत्ता, तो ववहारं पउंजंति ॥नि. ५२८ ॥

४०५६. 'सहसा अण्णाणेण'[12] व, भीतेण व पेल्लितेण व परेण[13] ।
वसणेण पमादेण व, मूढेण व रागदोसेहिं ॥नि. ५२९ ॥

४०५७. पुव्वं अपासिऊणं, छूढे पादम्मि जं पुणो पासे ।
न य तरति नियत्तेउं, पायं सहसा-करणमेयं[14] ॥

४०५८. अन्नतरपमादेणं[15], असंपउत्तस्स णोवउत्तस्स ।
इरियादिसु भूतत्थे, अवट्टतो[16] एतदण्णाणं[17] ॥दारं ॥

---

१. सव्वाय (स) ।
२. गाथा का उत्तरार्ध (जीभा १२३) में इस प्रकार है—
तो पुव्वधरा सोहिं, कुव्वंति सुओवदेसेणं ।
३. जीभा. १२४ ।
४. य (स) ।
५. वावि (स) ।
६. तु, जीभा १२५, १२६ ।
७. आलोतिय पडिक्कंते होती आलोयणा (जीभा १२७) ।
८. अप्पत्तं (क) ।
९. इस गाथा के स्थान पर जीभा (१२८, १२९) में निम्न दो गाथाएं मिलती हैं—
आलोयणापरिणतो, अंतरकालं करे अभिमुहो वा ।
अहवा वी आयरिओ, एमेव य होति संपत्तो ॥
आराहओ तु तह वी, जं सम्मालोयणापरिणतो तु ।
णाराहेति अपरिणयो, एवं भयणा भवति एसा ॥
१०. तहाऽवाऽऽलोयणा (जीभा १३०)
११. ० वेहि य (ब, जीभा १३१) ।
१२. अहवा सहसण्णाणा (जीभा १३४) ।
१३. परेहिं (स, जीभा) ।
१४. जीभा १३५ ।
१५. x (क) ।
१६. अवट्टमो (क) ।
१७. एयमण्णायं (ब), जीभा १३६ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४०५९. भीतो पलायमाणो, अभियोगभएण वावि जं कुज्जा ।
'पडितो व अपडितो'[1] वा, पेलिज्जउ[2] पेल्लिओ पाणे ॥

४०६०. जूतादि होति वसणं, पंचविधो खलु भवे पमादो उ ।
मिच्छत्तभावणाओ[3], मोहो तह रागदोसा य[4] ॥

४०६१. एतेसिं ठाणाणं, अन्नतरे कारणे समुप्पन्ने ।
तो आगमवीमंसं, करेंति अत्ता तदुभएणं[5] ॥नि. ५३०॥

४०६२. जदि आगमो य आलोयणा य दोण्णि वि समं तु निवयंतो[6] ।
एसा खलु वीमंसा, जो वऽसहू[7] जेण वा[8] सुज्झे ॥

४०६३. नाणमादीणि अत्ताणि[9], जेण अत्तो[10] उ सो भवे ।
रागद्दोसपहीणो वा, जे व इट्ठा विसोधिए ॥

४०६४. सुत्तं अत्थे उभयं, आलोयण आगमो व इति उभयं ।
जं[11] तदुभयं ति वुत्तं, 'तत्थ इमा'[12] होति परिभासा ॥

४०६५. पडिसेवणातियारे, जदि नाउट्टति[13] जहक्कमं सव्वे ।
'न हु देंती'[14] पच्छित्तं, आगमववहारिणो तस्स[15] ॥

४०६५/१. पडिसेवणातियारे, जदि आउट्टति जहक्कमं सव्वे ।
देंति ततो पच्छित्तं, आगमववहारिणो तस्स[16] ॥

४०६६. कधेहि सव्वं जो वुत्तो, जाणमाणो 'वि गूहति'[17] ।
न तस्स देंति पच्छित्तं, बेंति[18] अन्नत्थ सोधय[19] ॥

४०६७. न संभरति जो दोसे, सब्भावा न य[20] मायया[21] ।
पच्चक्खी साहते ते उ, माइणो उ न साधए[22] ॥

४०६८. जदि आगमो य आलोयणा य 'दो वि विसमं निवडियाइं'[23] ।
न हु देंती[24] पच्छित्तं, आगमववहारिणो तस्स ॥

---

१. पडितो वा पडितो (क), पडिते अपडिते (अ, ब)।
२. पेल्लिज्जा (जीभा १३७)।
३. ० भावणा तू (जीभा १३८)।
४. ऊ (जीभा)।
५. जीभा १३९।
६. निवयंति (जीभा, स)।
७. असहू (जीभा १४०), वा सहू (स)।
८. वी (स)।
९. अन्नाणि (जीभा)।
१०. अत्थे (जीभा १४१)।
११. जे (क)।
१२. तत्थेसा (जीभा १४२)।
१३. आउट्टति (स)।
१४. देंति ततो (अ, स)। १५. जीभा १४३।
१६. यह गाथा व्यवहारभाष्य की मुद्रित टीका एवं हस्तप्रतियों में नहीं मिलती किन्तु टीका में इसकी संक्षेप व्याख्या है। जीतकल्पभाष्य १४४ में गाथाओं के क्रम में यह गाथा मिलती है। यह गाथा यहां प्रासंगिक है फिर भी प्रतियों में न मिलने के कारण इस गाथा को मूलगाथा के क्रमांक में नहीं जोड़ा है।
१७. निगूहति (क)।
१८. भणंति (ब)।
१९. सोहत (अ), सोहयं (ब), सोधए (स), जीभा १४५।
२०. उ (स)। २१. मायतो (अ, ब, स)।
२२. साहई (जीभा १४६), सोहए (अ)।
२३. दोण्हि वि समं न निवइताइं (जीभा)।
२४. देंति उ (जीभा १४७), होंति (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४०६९. जदि आगमो[1] य आलोयणा य दोन्नि वि समं निवडियाइं ।
देंति ततो पच्छित्तं, आगमववहारिणो तस्स[2] ॥

४०७०. 'अट्ठारसेहिं ठाणेहिं'[3], जो होति अपरिणिट्ठितो ।
नलमत्थो तारिसो होति, ववहार[4] ववहरित्तए[5] ॥

४०७१. अट्ठारसेहिं ठाणेहिं, जो होति परिणिट्ठितो[6] ।
अलमत्थो तारिसो होति, ववहारं ववहरित्तए[7] ॥

४०७२. अट्ठारसेहिं[8] ठाणेहिं, जो होति अपतिट्ठितो ।
नलमत्थो तारिसो होति, ववहारं ववहरित्तए[9] ॥

४०७३. अट्ठारसेहिं ठाणेहिं[10], जो होति सुपतिट्ठितो ।
अलमत्थो तारिसो होति, ववहारं ववहरित्तए[11] ॥

४०७४. वयछक्ककायछक्कं, अकप्प-गिहिभायणे य पलियंको ।
गोयरनिसेज्जण्हाणे, भूसा अट्ठारसट्ठाणे[12] ॥

४०७५. परिनिट्ठित परिण्णाय[13] पतिट्ठिओ जो ठितो उ तेसु[14] भवे ।
अविदु सोहिं न याणति[15], अठितो[16] पुण अन्नहा कुज्जा ॥

४०७६. 'बत्तीसाए ठाणेसु'[17], जो होति अपरिनिट्ठितो[18] ।
नलमत्थो तारिसो होति, ववहारं ववहरित्तए ॥

४०७७. बत्तीसाए ठाणेसु, जो होति परिनिट्ठितो ।
अलमत्थो तारिसो होति, ववहारं ववहरित्तए[19] ॥

४०७८. बत्तीसाए ठाणेसु, जो होति अपतिट्ठितो[20] ।
नलमत्थो तारिसो होति, ववहारं ववहरित्तए[21] ॥

४०७९. बत्तीसाए ठाणेसु, जो होति सुपतिट्ठितो ।
अलमत्थो तारिसो होति, ववहारं ववहरित्तए[22] ॥

---

१. आगमतो (ब)।
२. जीभा १४८।
३. अट्ठारस ठाणेहिं (अ), गाथायां तृतीया सप्तम्यर्थे (मवृ)।
४. ववहरणं (अ)।
५. जीभा १५०।
६. सुपरिट्ठितो (जीभा)।
७. जीभा १५१।
८. अट्ठारसहि (जीभा,अ)।
९. जीभा १५२।
१०. गुणेहिं (अ)।
११. जीभा १५३। ४०७२, ४०७३ ये दोनों गाथाएं ब और क प्रति में नहीं हैं।
१२. ० रसठाणए (स), अट्ठार ठाणेते (जीभा १५४)।
१३. परिण्णा (अ), ० ण्णाया (स, जीभा १५५)।
१४. तेसि (क), तेसू (स)।
१५. याणेइ (अ)।
१६. अट्ठितो (स)।
१७. बत्तीसाए तु ठाणेहिं (जीभा १५६) सर्वत्र।
१८. परि ० (जीभा)।
१९. जीभा १५७।
२०. अपलिट्ठितो (स)।
२१. यह गाथा ब प्रति में नहीं हैं, जीभा १५८।
२२. जीभा १५९।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४०८०. अट्ठविहा गणिसंपय[१], एक्केक्क चउव्विधा 'उ बोधव्वा'[२] ।
एसा खलु बत्तीसा, ते[३] पुण ठाणा इमे होंति[४] ॥

४०८१. आयार-सुत-सरीरे, वयणे वायण मती पओगमती ।
एतेसु संपया खलु, अट्ठमिगा संगहपरिण्णा[५] ॥दारं ॥

४०८२. एसा अट्ठविधा खलु, एक्केक्कीए[६] चउव्विधो भेदो ।
इणमो उ समासेणं, वुच्छामि अधाणुपुव्वीए[७] ॥

४०८३. आयारसंपयाए, संजमधुवजोगजुत्तया पढमा ।
बितिय[८] असंपग्गहिता, अणिययवित्ती भवे तइया[९] ॥

४०८४. तत्तो य[१०] वुड्डसीले, आयारे संपया चउब्भेया[११] ।
'चरणं तु'[१२] संजमो तू[१३], तहियं निच्चं तु उवउत्तो ॥

४०८५. आयरिओ उ[१४]बहुस्सुत[१५], तवस्सि[१६] जच्चादिगेहि व मदेहिं ।
जो होति अणुस्सित्तो, 'ऽसंपग्गहितो भवे[१७] सो उ'[१८] ॥दारं ॥

४०८६. अणिययचारि अणिययवित्ती[१९]'अगिहितो वि होति अणिकेतो[२०] ।
निहुयसभाव[२१] अचंचल, नातव्वो वुड्डसील त्ति ॥दारं ॥

४०८७. बहुसुत[२२] परिचियसुत्ते[२३], विचित्तसुत्ते य होति बोधव्वे ।
घोसविसुद्धिकरे वा[२४], चउहा सुयसंपदा होति ॥

४०८८. बहुसुतजुगप्पहाणे[२५], अब्भितर-बाहिरं 'सुतं बहुहा'[२६] ।
होति च सद्दग्गहणा, चारित्तं पी सुबहुयं पि[२७] ॥

४०८९. सगनामं व परिचितं, 'उक्कमकमतो बहूहि विगमेहिं'[२८] ।
ससमय-परसमएहिं, उस्सग्गऽववायतो चित्तं ॥दारं ॥

---

१. गणसं० (ब, क)।
२. मुणेयव्वा (अ)।
३. x (ब)।
४. जीभा १६०।
५. जीभा १६१।
६. एक्केक्काए (जीभा), ०कीतो (ब)।
७. जीभा १६२।
८. बितिया य (ब)।
९. जीभा १६३।
१०. x (क)।
११. चउद्देसा (अ, क, स)
१२. चरणमिह (जीभा १६४)।
१३. तु (अ, स)।
१४. य (जीभा १६५)।
१५. बहुसुतो (ब)।
१६. ० स्सि (ब)।
१७. ठवे (स)।
१८. सो तु असंपग्गहीउ त्ति (जीभा)।
१९. अणितिय० (क)।
२०. अगिहो य होति जो अणिसो (जीभा १६६)।
२१. ० सहाय (ब)।
२२. ० सुत्त (अ)।
२३. परिजित० (जीभा)।
२४. या (स, जीभा १६७)।
२५. बहुसुत्तजुगप० (ब)।
२६. च बहु जाणे (जीभा १६८)।
२७. तु (स, जीभा)।
२८. उक्कमकमसंघ णेयव्वो (ब), आराहाति ताव बहूहि विगमेहिं (सपा), उक्कमकमयो बहूहि व कमेहिं (जीभा १६९)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४०९०. घोसा उदत्तमादी, तेहि[१] विसुद्धं तु घोसपरिसुद्धं ।
एसा सुतोवसंपय, सरीरसंपयमतो[२] वोच्छं ॥

४०९१. आरोह परीणाहो[३], तह य अणोत्तप्पया[४] सरीरम्मि[५] ।
पडिपुण्णइंदिएहि य, थिरसंघयणो य बोधव्वो[६] ॥

४०९२. आरोहो दिग्घत्तं, विक्खंभो 'वि जइ तत्तिओ चेव'[७] ।
आरोह परीणाहे[८], 'य संपया[९] एस नातव्वा ॥दारं ॥

४०९३. तवु[१०] लज्जाए धातू, अलज्जणीओ अहीणसव्वंगो ।
होति अणोत्तप्पे[११] सो, 'अविगलइंदी तु पडिपुण्णे[१२] ॥

४०९४. पढमगसंघयणथिरो, बलियसरीरो य होति नातव्वो[१३] ।
एसा सरीरसंपय, एत्तो वयणम्मि वोच्छामि ॥दारं ॥

४०९५. आदेज्जमधुरवयणो, अणिस्सियवयण[१४] तधा असंदिद्धो ।
आदेज्जगज्झवक्को, अत्थवगाढं भवे मधुरं ॥

४०९६. अहवा अफरुसवयणो[१५], खीरासवमादिलद्धिजुत्तो वा ।
निस्सियकोधादीहिं, अहवा वी रागदोसेहिं[१६] ॥

४०९७. अव्वत्तं अफुडत्थं[१७], अत्थबहुत्ता व होति संदिद्धं ।
विवरीयमसंदिद्धं[१८], वयणेसा संपया चउहा[१९] ॥

४०९८. वायणभेदा चउरो, 'विजिओद्देसण समुद्दिसणया तु'[२०] ।
परिनिव्वविया[२१] वाए, निज्जवणा चेव अत्थस्स[२२] ॥

४०९९. तेणेव गुणेणं तू, वाएयव्वा परिक्खिउं सीसा ।
'उद्दिसति वियाणेउं'[२३], जं जस्स तु 'जोग्ग तं'[२४] तस्स ॥

---

१. तेहिं (जीभा १७०)।
२. ० संपय अतो (स), सरीरउवसंपयं (अ)।
३. परिण्णाहो (अ)।
४. अणात्त० (अ)।
५. सरीरस्स (जीभा)।
६. गाथा का उत्तरार्ध जीभा (१७१) में इस प्रकार है—
परिपुण्णिंदियमाऽऽइय संघतण थिरे य बोद्धव्वो।
७. होति तित्तिओ (जीभा १७२)।
८. ० माहो (स)।
९. उपसंपया (अ, स)।
१०. उप (अ, स)।
११. अण्णोत० (अ), अणोतव्वे (क, स)।
१२. ० इंदियपडिप्पुण्णा (ब), अविकलइंदी तु परिपुण्णो (जीभा १७३)।
१३. जीभा (१७४) में इसका पूर्वार्द्ध इस प्रकार है—
पढमादी संघयणो, बलियसरीरो थिरो मुणेयव्वो।
१४. अणिसियवयणे (जीभा १७५)।
१५. अपरुस० (ब)।
१६. गाथायां तृतीया करणविवक्षातो (मवृ), तु. जीभा १७६, १७७।
१७. अफुडत्त (जीभा १७८)।
१८. ० मसंदिट्ठ (अ)।
१९. जीभा १७८।
२०. विजि उद्दिसणा समुद्दिसणओ य (ब), विजिउद्देसेण। समुद्दिसणया उ (क)।
२१. ० णिड्डविया (ब, स)।
२२. जीभा १७९।
२३. उद्दिसई विजिणेउं (स, जीभा १८०)।
२४. जोग्गयं (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१००. अपरीणामगमादी[१], 'वियाणितु अभायणे'[२] न वाएति ।
जह आममट्टियघडे, अंबेव न छुब्भती[३] खीरं ॥

४१०१. जदि छुब्भती विणस्सति, नस्सति[४] वा एवमपरिणामादी ।
'नोद्दिस्से छेदसुतं'[५], समुद्दिसे[६] वावि[७] तं चेव ॥दारं ॥

४१०२. परिणिव्वविया वाए, जत्तियमेत्तं तु तरति उग्गहिउं[८] ।
जाहगदिट्ठंतेणं, 'परिचिते ताव तमुद्दिसति'[९] ॥दारं ॥

४१०३. निज्जवगो[१०] अत्थस्सा, जो 'उ वियाणाति'[११] अत्थ सुत्तस्स ।
अत्थेण व निव्वहती, अत्थं पि कहेति जं भणितं ॥

४१०४. मइसंपय चउभेदा, उग्गह ईहा अवाय 'धरणा य'[१२] ।
उग्गहमति छब्भेदा, तत्थ 'इमा होति णातव्वा'[१३] ॥

४१०५. खिप्पं बहु बहुविधं व, धुवऽणिस्सिय[१४] तह य होतऽसंदिद्धं ।
ओगेण्हति एवीहा, अवायमवि[१५] धारणा चेव ॥

४१०६. 'सीसेण कुतित्थीण व'[१६], उच्चारितमेत्तमेव ओगिण्हे ।
तं खिप्पं बहुगं पुण, पंच व छस्सत्तगंथसया ॥दारं ॥

४१०७. बहुविह णेगपयारं, जह लिहतिऽवधारए[१७] गणेति वि य ।
अक्खाणगं कहेती[१८], सद्दसमूहं व णेगविहं ॥

४१०८. न वि विस्सरति धुवं तू[१९] अणिस्सितं जन्न पोत्थए लिहियं ।
'अणभासियं च'[२०] गेण्हति, निस्संकित होतऽसंदिद्धं ॥दारं ॥

---

१. ० मगादी (ब), अप्परिणा ० (अ, स) ।
२. ० णितुमभा ० (जीभा) ।
३. छुब्भए (जीभा १८१) ।
४. x (स) ।
५. नोद्देसे छेदसुत्तं (ब) ।
६. ० द्दिसं (ब) ।
७. यावि (जीभा १८२) ।
८. तुग्घेत्तुं (जीभा) ।
९. परिणते ताव समुद्दि ० (अ) परिचिते तावऽण्णमुद्दिसति (ब), परिजिए ताहऽण्णु उद्दिसति (जीभा १८३) ।
१०. ० वतो (ब) ।
११. उवजाणेति (जीभा १८४) ।
१२. धारणया (जीभा १८५) ।
१३. इमे होंति छब्भेया (जीभा) ।
१४. धुव अणि० (अ) ।
१५. अवायमिति (जीभा १८६) ।
१६. परवाइण सिस्सेण व (जीभा १८७) ।
१७. ० पहारए (अ, स, जीभा १८८) ।
१८. अवेती (स)
१९. तं (जीभा) ।
२०. अणुभासिय व (स, जीभा १८९) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१०९. उग्गहियस्स उ ईहा, ईहित[1] पच्छा अणंतरमवाओ ।
अवगते पच्छ धारण, तीय विसेसो इमो नवरं[2] ॥

४११०. बहु बहुविधं पुराणं[3], दुद्धरऽणिस्सिय[4] तहेवऽसंदिद्धं[5] ।
पोराण पुरा वायित[6], दुद्धरनयभंगगुविलत्ता ॥

४१११. एत्तो उ पओगमती, चउव्विहा होति आणुपुव्वीए ।
आय पुरिसं व खेत्तं, 'वत्थु विय'[7] पउंजए वायं[8] ॥

४११२. जाणति पओगभिसजो, 'जेण आतुरस्स छिज्जती वाही'[9] ।
इय वादो य[10] कहा वा, नियसत्ति[11] नाउ कायव्वा ॥दारं ॥

४११३. पुरिसं उवासगादी, 'अहवा वी जाणिगा इयं परिसं'[12] ।
पुव्वं तु[13] गमेऊणं, ताहे वादो पओत्तव्वो[14] ॥दारं ॥

४११४. खेत्तं मालवमादी, 'अहवा वी साधुभावितं जं तु'[15] ।
नाऊण तहा विधिणा, वादो य[16] तहिं पओत्तव्वो[17] ॥

४११५. 'वत्थुं परवादी ऊ'[18], बहुआगमितो न वावि[19] णाऊणं ।
राया व[20] रायऽमच्चो[21], दारुणभद्दस्सभावो त्ति[22] ॥

४११६. बहुजणजोग्गं खेत्तं, पेहे तह फलग-पीढमाइण्णो[23] ।
वासासु एय[24] दोन्नि वि, काले य समाणए कालं ॥

४११७. पूए 'अहागुरुं पी, चउहा'[25] एसा उ संगहपरिण्णा ।
एतेसिं तु विभागं, वुच्छामि अहाणुपुव्वीए[26] ॥

---

१. ईहिते (अ, क)।
२. जीभा. १९०।
३. पोराणं (अ, क, जीभा)।
४. दुद्धर णितयं (जीभा)।
५. ०संदिट्ठं (क)।
६. व जितं (जीभा १९१)।
७. वत्थुं वि (ब)।
८. जीभा १९२।
९. वाही जेणाउरस्स छिज्जइ उ (क, जीभा १९३), जेणं आतुरस्स छिज्जई (स)।
१०. व (जीभा)।
११. ० सती (जीभा)।
१२. जाणियमजाणियं इयं० (अ)।
१३. x (अ)।
१४. जीभा १९४।
१५. साधूहिं वावि जं तु अभिक्खं (अ)।
१६. हु (जीभा)।
१७. जीभा १९५।
१८. वत्थु पुण परवाई (जीभा)।
१९. वाय (क)।
२०. वि (ब)।
२१. रायमत्तो (अ, जीभा)।
२२. जीभा १९६।
२३. जीभा (१९८) में गाथा का पूर्वार्द्ध इस प्रकार है -- बहुजणजोग्गं पेहे, खेत्तं तह पीढफलगमोगिण्हे।
२४. एते (क, अ)।
२५. ० गुरुं पि य चउत्थ (जीभा)।
२६. जीभा (१९९) में गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है -- एत्तो एक्केक्कीय य, इमा विभा मुणेयव्वा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४११८. वासे बहुजणजोग्गं, वित्थिण्णं[1] जं तु गच्छपायोग्गं ।
अहवावि[2] बाल-दुब्बल-गिलाण-आदेसमादीणं[3] ॥

४११९. खेत्तऽसति[4] 'असगहिया, ताधे वच्चंति'[5] ते उ अन्नत्थ ।
न उ मइलेंति निसेज्जा, पीढगफलगाण गहणम्मि[6] ॥

४१२०. 'वितरे न तु वासासुं, अन्ने काले उ गम्मतेऽण्णत्थ'[7] ।
पाणा सीतल-कुंथादिया 'य तो'[8] गहण वासासु ॥

४१२१. जं जम्मि होति काले, कायव्वं तं समाणए तम्मि ।
सज्झायपेहउवधी, उप्पायण[9] भिक्खमादी य[10] ॥दारं ॥

४१२२. अधागुरू[11] जेण पव्वावितो उ जस्स व अधीत[12] पासम्मि ।
अधवा अधागुरू खलु, हवंति रातीणियतरा[13] उ ॥

४१२३. तेसिं अब्भुट्ठाणं, दंडग्गह[14] तह य होति आहारे[15] ।
उवधीवहणं विस्सामणं च संपूयणा एसा ॥दारं ॥

४१२४. एसा खलु बत्तीसा, एयं जाणाति जो 'ठितो वेत्थ'[16] ।
ववहारे अलमत्थो[17], अधवा वि भवे इमेहिं तु ॥

४१२५. छत्तीसाए[18] ठाणेहिं[19], जो होति अपरिणिट्ठितो ।
नलमत्थो तारिसो होति, ववहारं ववहरित्तए[20] ॥

४१२६. छत्तीसाए ठाणेहिं, जो होति सुपरिणिट्ठितो[21] ।
अलमत्थो तारिसो होति, ववहारं ववहरित्तए ॥

४१२७. छत्तीसाए ठाणेहिं, जो होति अपतिट्ठितो ।
नलमत्थो तारिसो होति, ववहारं ववहरित्तए[22] ॥

---

१. विच्छिन्नं (ब)।
२. पडिलेह (जीभा)।
३. जीभा. २००।
४. खेत्त असइ (जीभा) खेत्तऽसति (ब)।
५. अगहित्ता ताधे गच्छंति (जीभा)।
६. जीभा (२०१) में इस गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
पीढफ्फलगग्गहणे, ण उ मइलंती निसिज्जादी।
७. वासासु विसेसेणं, अण्णं कालं तु गमय अण्णत्थं (जीभा २०२)।
८. ततो (क)।
९. x (क)।
१०. तु (अ), (जीभा २०३)।
११. अहागुरु (क)।
१२. अहाति (ब, स), अधीति (स)।
१३. ० णियवरा (क), रायणिय ० (स), रातिणियतरया (जीभा २०४)।
१४. डंड० (जीभा)।
१५. आयारे (क, ब, जीभा २०५)।
१६. पतिट्ठितो एत्थं (जीभा २०६)।
१७. अलगत्थो (क)।
१८. ० साए तु (जीभा) अग्रेपि।
१९. गुणेहिं (अ)।
२०. जीभा २०७।
२१. परिणि० (जीभा २०९)।
२२. जीभा २०८।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१२८. छत्तीसाए ठाणेहिं, जो होति सुपतिट्ठितो ।
अलमत्थो तारिसो होति, ववहारं ववहरित्तए[1] ॥

४१२९. जा भणिया[2] बत्तीसा, तीए[3] छोढूण विणयपडिवत्तिं[4] ।
चउभेदं तो होही[5], छत्तीसाए य ठाणाणं[6] ॥

४१३०. बत्तीसं वण्णिय च्चिय[7], वोच्छं चउभेदविणयपडिवत्तिं ।
आयरियंतेवासिं[8], जह विणयित्ता भवे णिरिणो[9] ॥

४१३१. आयारे 'सुत विणए'[10], विक्खिवणे चेव होति बोधव्वे ।
दोसस्स य निग्घाते, विणए चउहेस पडिवत्ती[11] ॥

४१३२. आयारे विणओ खलु, चउव्विधो होति आणुपुव्वीए ।
संजमसामायारी, तवे य गणविहरणा[12] चेव[13] ॥

४१३३. एगल्लविहारे[14] या, सामायारी उ[15] एस चउभेया[16] ।
एयासिं तु विभागं, वुच्छामि अधाणुपुव्वीए ॥

४१३४. संजममायरति सयं, परं व गाहेति[17] संजमं[18] नियमा ।
सीदंत थिरीकरणं, •उज्जयचरणं[19] च उववूहे[20] ॥

४१३५. सो सत्तरसो पुढवादियाण[21] घट्ट 'परिताव उद्दवणं'[22] ।
परिहरियव्वं नियमा[23], संजमगो[24] एस बोधव्वो ॥दारं ॥

४१३६. पक्खियपोसहिएसुं[25], कारयति[26] तवं सयं 'करोती य'[27] ।
भिक्खायरियाय तधा, निजुंजति[28] परं सयं वावि ॥

४१३७. सव्वम्मि बारसविहे, निउंजति परं सयं च उज्जुत्तो[29] ।
गणसामायारीए, गणं विसीयंत चोदेति[30] ॥दारं ॥

---

१. जीभा. २१० ।
२. होती (जीभा) ।
३. तम्मी (अ, क, जीभा), तम्मि (स) ।
४. ० वत्ती (जीभा) ।
५. होहि (ब), होती (जीभा २११) ।
६. ठाणेहिं (क) ।
७. व्विय (अ) ।
८. ० वासी (जीभा २१२) ।
९. यह गाथा स प्रति में अनुपलब्ध है ।
१०. सुतव्वि ० (स), सुत्त वि० (ब) ।
११. जीभा २१३ ।
१२. ० हणे (स) ।
१३. यह गाथा अ प्रति में नहीं है, जीभा २१४ ।
१४. एगल्लं वि० (क) ।
१५. य (जीभा) ।
१६. चउहा तु (जीभा २१५) ।
१७. गाहिंति (क) ।
१८. संजयं (ब) ।
१९. उज्जुत० (जीभा २१६) ।
२०. ० वूढे (स) ।
२१. पुहवादि० (ब) ।
२२. ० तावणोद्द० (जीभा २१९) ।
२३. नियमं (अ) ।
२४. ० मतो (ब, स) ।
२५. पक्खे य पोसहेसुं (जीभा २१८), पक्खिए पो० (अ) ।
२६. करेति (क), कारेति (स, जीभा) ।
२७. करेति वि य (स, क, जीभा) ।
२८. ० जई (क) ।
२९. उज्जमति (जीभा २१९) ।
३०. चोइंति (क) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१३८. पडिलेहण पप्फोडण[1], बाल-गिलाणादि 'वेयवच्चे य'[2] ।
सीदंतं गाहेती, सयं च उज्जुत्त[3] एतेसुं ॥दारं ॥

४१३९. एगल्लविहारादी, पडिमा पडिवज्जती 'सयऽण्णं वा'[4] ।
पडिवज्जावे एवं, अप्पाण परं च विण्एति ॥दारं ॥

४१४०. सुत्तं अत्थं च तहा, 'हित-निस्सेसं तधा पवाएति'[5] ।
एसो चउव्विधो खलु, सुतविणयो होति नातव्वो ॥

४१४१. सुत्तं 'गाहेति उज्जुत्तो'[6], अत्थं च सुणावए पयत्तेणं ।
जं जस्स होति जोग्गं, परिणामगमादिणं[7] तु हियं ॥दारं ॥

४१४२. निस्सेसमपरिसेसं[8], जाव[9] समत्तं तु ताव वाएति ।
एसो सुतविणओ खलु, वोच्छं विक्खेवणाविणयं[10] ॥

४१४३. अदिट्ठं दिट्ठं खलु, दिट्ठं साहम्मियत्तविणएणं[11] ।
'चुतधम्म ठावें धम्मे[12], तस्सेव हितट्ठमब्भुट्ठे[13] ॥

४१४४. विण्णाणाभावम्मी[14], खिव पेरण विक्खिवित्तु परसमया ।
ससमयंतेणऽभिछुभे[15], अदिट्ठधम्मं तु 'दिट्ठं' वा'[16] ॥

४१४५. धम्मसभावो सम्मद्दंसणयं[17] जेण पुव्वि न तु लद्धं ।
सो होतऽदिट्ठपुव्वो, 'तं गाहिति पुव्वदिट्ठम्मि'[18] ॥

४१४६. जह भायरं व पियरं, मिच्छादिट्ठिं पि गाहि[19] सम्मत्तं ।
दिट्ठपुव्वो सावग[20], साधम्मि करेति, पव्वावे ॥

४१४७. चुयधम्म-भट्ठधम्मो[21], चरित्तधम्माउ दंसणातो वा ।
तं ठावेति तहिं चिय, पुणो वि धम्मे जहुद्दिट्ठे ॥

---

१. पक्खोडण (स, जीभा) ।
२. ० वेच्चेसु (जीभा), वेज्जव० (अ, स) ।
३. जुत्तो तु (जीभा २२०) ।
४. सतं वऽण्णं (जीभा २२१), ० ण्णं च (स) ।
५. हितकर निस्सेयसं च वाएइ (जीभा २२३) ।
६. गाहिति जुत्तो (ब, जीभा), गाथा के प्रथम चरण में अनुष्टुप् छंद है ।
७. ० माहियं (स), ० मादितं (ब, जीभा २२४) ।
८. ० सगपरि० (स) ।
९. जावं (क) ।
१०. जीभा २२५ ।
११. साधम्मियत्ति वि. ० (अ) ।
१२. चुयधम्मं मे ठावए (अ), ० धम्म धम्म ठावए (स) ।
१३. जीभा २२६ ।
१४. ० भावम्मि (अ) ।
१५. ससमएणमभि ० (ब) ।
१६. दिट्ठंता (क, ब), जीभा २२७ ।
१७. धम्मो दंसणयं (अ), सम्मदंसण जं (जीभा २२८) ।
१८. तं गाहिति अपुव्वदिट्ठमिव (स), तं गाहे पुव्वदिट्ठमिव (जीभा २२९) ।
१९. गाहे (क) ।
२०. सावगो (अ) ।
२१. नट्ठधम्मो (जीभा २३०) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१४८. तस्स त्ती तस्सेव उ, चरित्तधम्मस्स 'वुड्डिहेतुं तु'[1] ।
वारेयऽणेसणादी, न य गेण्ह[2] सयं हितट्ठाए ॥

४१४९. जं इह-परलोगे या, हितं सुहं[3] तं खमं[4] मुणेयव्वं ।
निस्सेयस मोक्खाय[5] उ, अणुगामऽणुगच्छते जं तु[6] ॥

४१५०. दोसा कसायमादी, बंधो अधवावि अट्ठपगडीओ ।
नियय व णिच्छितं वा, धात विणासो य एगट्ठा[7] ॥

४१५१. कुद्धस्स[8] कोधविणयण[9], दुट्ठस्स य दोसविणयणं जं तु ।
कंखिय कंखाछेदो[10], आयप्पणिधाणचउहेसो ॥दारं ॥

४१५२. 'सीतघरं पिव'[11] दाहं[12], वंजुलरुक्खो व जह उ उरगविसं ।
कुद्धस्स[13] तधा कोहं, पविणेती 'उवसमेति त्ती'[14] ॥

४१५३. दुट्ठो कसायविसएहि, 'माण-मायासभाव दुट्ठो वा'[15] ।
तस्स पविणेति दोसं, नासयते धंसते व त्ति ॥दारं ॥

४१५४. कंखा उ भत्तपाणे, परसमए अहव संखडीमादी[16] ।
तस्स पविणेति कंखं[17], संखडि अन्नावदेसेणं[18] ॥दारं ॥

४१५५. जो एतेसु न वट्टति, कोधे दोसे तधेव कंखाए[19] ।
सो होति सुप्पणिहितो, सोभणपणिधाणजुत्तो[20] वा ॥

४१५६. छत्तीसेताणि ठाणाणि, भणिताणऽणुपुव्वसो[21] ।
जो कुसलो य एतेहिं, ववहारी सो समक्खातो ॥

---

१. वड्ढिए तं (अ, ब) ।
२. गिण्हे (जीभा २३१) ।
३. सुयं (क) ।
४. छंद की दृष्टि से खेमं के स्थान पर खमं पाठ मिलता है ।
५. मोक्खो (जीभा २३२) ।
६. इस गाथा के बाद जीभा (२३३) में निम्न गाथा अतिरिक्त मिलती है-- विक्खेवणविणएसो, जहक्कमं वण्णितो समासेणं । एत्तो तु पवक्खामी, विणयं दोसाण णिग्घाते ॥
७. जीभा २३४ ।
८. रुट्ठस्स (जीभा) ।
९. ० विणयं (अ, क) ।
१०. कंखछेदे (अ), कंखुच्छेए (जीभा २३५) ।
११. ० घरम्मि व (क, जीभा) ।
१२. डाहं (जीभा २३६) ।
१३. रुट्ठस्स (जीभा) ।
१४. ० मेती ती (अ) ।
१५. माणपयभावदुट्ठो व्व (जीभा २३७) ।
१६. कंख एमाई (जीभा २३८) ।
१७. दोसं (ब) ।
१८. अन्नं व देसणं (जीभा) इस गाथा के बाद जीभा (२३९) में निम्न गाथा अतिरिक्त मिलती है -- चरणाइमाइएसु तु, अहिंसमक्खो अत्थि जा कंखा । तं हेउकारणेहिं विणयउ जह होइ णिक्कंखो ॥
१९. कंखए (ब) ।
२०. ० णपरिणाय ० (जीभा २४०) ।
२१. ० ताणि अणु (जीभा २४१) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१५७. अट्ठहि अट्ठारसहिं[१], दसहि य ठाणेहि[२] जे अपारोक्खा ।
आलोयणदोसेहिं, 'छहिं अपारोक्खविण्णागा'[३] ॥नि. ५३१ ॥

४१५८. आलोयणागुणेहिं[४], 'छहिं य'[५] ठाणेहि जे अपारोक्खा ।
'पंचहि य'[६] नियंठेहिं, पंचहि य चरित्तमंतेहिं[७] ॥नि. ५३२ ॥

४१५९. अट्ठायार[८] व मादी, वयछक्कादी[९] हवंति अट्ठरसा[१०] ।
दसविधपायच्छित्ते, 'आलोयण दोसदसहिं वा'[११] ॥

४१६०. छहि काएहि वतेहि व, गुणेहि आलोयणाय दसहिं च ।
छट्ठाणावडितेहिं, छहि[१२] चेव तु जे अपारोक्खा[१३] ॥

४१६१. संखादीया ठाणा, छहि ठाणेहि पडियाण ठाणाणं ।
जे संजया सरागा, 'सेसा एक्कम्मि ठाणम्मि'[१४] ॥

४१६२. एयागमववहारी, पण्णत्ता रागदोसणीहूया ।
आणाय जिणिंदाणं, जे ववहारं ववहरंति[१५] ॥

४१६३. 'एवं भणिते भणती[१६], ते वोच्छिन्ना 'व संपयं[१७] इहइं[१८] ।
तेसु य वोच्छिन्नेसुं[१९], नत्थि विसुद्धी चरित्तस्स[२०] ॥नि. ५३३ ॥

४१६४. देंता[२१] वि न दीसंती, न वि य करेंता 'तु संपयं[२२] केई[२३] ।
तित्थं च[२४] नाण-दंसण, निज्जवगा चेव वोच्छिन्ना ॥नि. ५३४ ॥

४१६५. चोद्दसपुव्वधराणं, वोच्छेदो केवलीण वुच्छेदे ।
केसिंची[२५] आदेसो, पायच्छित्तं पि वोच्छिन्नं ॥दारं ॥

४१६६. जं जत्तिएण सुज्झति, पावं तस्स तध देंति पच्छित्तं ।
जिणचोद्दसपुव्वधरा, तव्विवरीता जहिच्छाए[२६] ॥

---

१. ० सहि य (अ, जीभा २४२)।
२. x (अ)।
३. तहियं पारोक्ख० (अ, ब) छहि य अपारो० (जीभा)।
४. ० णदोसेहिं (अ)।
५. छहियं (ब)।
६. पंचविह (अ)।
७. जीभा २४३।
८. ० यारा (ब)।
९. x (ब)।
१०. यऽट्ठरसं (जीभा)।
११. ० यणमादिए चेव (जीभा २४४)।
१२. x (ब, क)।
१३. ण पारोक्खा (क), तु. जीभा २४५, २५२।
१४. एगे ट्ठाणे विगयरागा (जीभा २५३)।
१५. जीभा २५४।
१६. इय भणिए चोएति (जीभा)।
१७. हु संपयं (जीभा), उवसंपयं (अ, क)।
१८. इहाइं (अ), इहयं (क)।
१९. ० न्नेसु य (ब, क)।
२०. जीभा २५५।
२१. दंता (अ)।
२२. उवसंपयं (अ), य संपयं (क)।
२३. केती (अ, ब)।
२४. उ (क)।
२५. केसिंचि य (जीभा २५६)।
२६. जीभा २५७।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१६७. पारगमपारगं वा, जाणंते[1] जस्स जं च करणिज्जं[2] ।
देंति तहा[3] पच्चक्खी, घुणक्खरसमो उ[4] पारोक्खी[5] ॥

४१६८. जा य ऊणाहिए[6] दाणे, वुत्ता मग्गविराधणा ।
न 'सुज्झति वि'[7] देंतो उ[8], असुद्धो जं च सोधए ॥

४१६९. अत्थं पडुच्च सुत्तं, अणागतं तं तु किंचि आमुसति[9] ।
अत्थो वि कोइ सुत्तं, अणागयं चेव आमुसति ॥

४१७०. देंता वि न दीसंती, मास-चउम्मासिया उ सोधी उ ।
'कुणमाणे य विसोधिं'[10], न पासिमो 'संपई केई'[11] ॥

४१७१. सोहीए य अभावे, देंताण करेंतगाण य अभावे ।
वट्टति संपति[12] काले[13], तित्थं सम्मत्तनाणेहिं[14] ॥

४१७२. एवं तु चोइयम्मी, आयरिओ भणति न हु तुमे नायं ।
पच्छित्तं कहियं तू, किं[15] धरती किं व वोच्छिन्नं[16] ॥

४१७३. सव्वं पि य पच्छित्तं, पच्चक्खाणस्स ततियवत्थुम्मि ।
तत्तो च्चिय[17] निज्जूढं, पकप्पकप्पो[18] य ववहारो[19] ॥

४१७४. सपदपरूवण अणुसज्जणा य[20] दस चोद्दसऽट्ठ दुप्पसभे[21] ।
अत्थं[22] न दीसइ धणिएण विणा तित्थं च निज्जवए ॥दारं ॥**नि. ५३५** ॥

४१७५. पण्णवगस्स उ सपदं, पच्छित्तं चोदगस्स तमणिट्ठं ।
तं संपयं पि विज्जति[23] जधा तधा मे निसामेहि[24] ॥

४१७६. पासायस्स 'उ निम्मं'[25], लिहाविहं[26] 'चित्तकारगेहि जहा'[27] ।
लीलविहूणं[28] नवर, आगारो होति सो चेव[29] ॥

---

१. जाणिते (ब)।
२. करणीयं (ब, क)।
३. तहा य (ब, क)।
४. ऊ (क)।
५. जीभा २५८।
६. तूणा० (अ, ब, क)।
७. सुज्झे तीइ (जीभा २५९)।
८. य (अ, स)।
९. आमसति (स, जीभा २६४)।
१०. कुणमाणा वि य सोहिं (जीभा २६०)।
११. जो व सिं देज्जा (जीभा, ब, क)।
१२. संपद (स)।
१३. कालं (अ, क)।
१४. जीभा २६१।
१५. x (ब, क)।
१६. जीभा २६३।
१७. वि य (अ, क)।
१८. कप्पपकप्पो (ब, जीभा)।
१९. जीभा २६५।
२०. x (ब, क)।
२१. दुप्पसहे (जीभा २६७)।
२२. अत्थि (स, जीभा)।
२३. दिज्जति (अ)।
२४. जीभा २६८।
२५. य नेम्मं (अ, स)।
२६. न हावियं (अ, ब), णहावितु (स)।
२७. चित्ताकरएण विणा (अ, ब, स)।
२८. लीणवि० (स)।
२९. जीभा (२७१) में गाथा का पूर्वार्द्ध इस प्रकार है --
पासादस्सयणे मणहारितं तेहिं चित्तकारेहिं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१७७. भुंजति चक्की भोए, पासाए[१] सिप्पिरयणनिम्मविते ।
किंच[२] न कारेति[३] तधा, पासाए पागयजणो वि[४] ॥

४१७८. जह रूवादिविसेसा, परिहीणा होंति पागयजणस्स ।
ण य ते ण होंति गेहा, 'एमेव इमं पि पासामो'[५] ॥

४१७९. एमेव य पारोक्खी, तयाणुरूवं तु सो वि[६] ववहरति ।
किं पुण ववहरियव्वं, पायच्छित्तं इमं दसहा ॥दारं ॥नि. ५३६ ॥

४१८०. आलोयण पडिकमणे, मीस विवेगे तहा विउस्सग्गे[७] ।
तव-छेद-मूल अणवट्ठया य पारंचिए चेव ॥नि. ५३७ ॥

४१८१. दस ता अणुसज्जंती, जा चोद्दसपुव्वि पढमसंघयणं ।
तेण परेणऽट्ठविधं, जा तित्थं ताव बोधव्वं[८] ॥

४१८२. दोसु तु वोच्छिन्नेसुं[९], अट्ठविहं देंतया करेंता य ।
न वि केई[१०] दीसंती, 'वदमाणे भारिया चउरो'[११] ॥

४१८३. दोसु वि वोच्छिन्नेसुं, अट्ठविधं देंतया करेंता य ।
पच्चक्खं दीसंते[१२], जधा तधा मे निसामेहि ॥

४१८४. 'पंचेव नियंठा खलु'[१३], पुलाग-बकुसा कुसीलनिग्गंथा ।
तह य सिणाया तेसिं, पच्छित्त जधक्कम वोच्छं ॥

४१८५. आलोयण पडिकमणे, मीस विवेगे 'तहा विउस्सग्गे'[१४] ।
तत्तो 'तवे य'[१५] छेदे, पच्छित्त पुलाग छप्पेते[१६] ॥

४१८६. बकुसपडिसेवगाणं, पायच्छित्ता हवंति सव्वे वि ।
थेराण भवे कप्पे, जिणकप्पे अट्ठहा होंति[१७] ॥

---

१. पासाइ (अ) ॥
२. किंचि (ब) ।
३. कारिंति (ब, क) ।
४. गाथा का उत्तरार्ध जीभा (२६९) में इस प्रकार है—
तं दट्ठुं रायीणं, अण्णेसिच्छा समुप्पण्णा ॥
५. भुंजति य तेसु ते भोगे (जीभा २७२) ।
६. व्व (स, जीभा २७३) ।
७. वियोस० (जीभा २७४) ।
८. इस गाथा का उत्तरार्ध जीभा (२७६) में इस प्रकार है—
तेणाऽऽरेण ऽट्ठविहं तित्थंतिम जाव दुप्पसहो ।
९. ०ण्णेसू (जीभा) ।
१०. कोती (क, स) ।
११. एव भणंतस्स चतुगुरुगा (जीभा २७९) ।
१२. दीसंती (जीभा २८०) ।
१३. पंचणियंठा भणिया (जीभा २८१) ।
१४. तहेव उस्सग्गे (स) ।
१५. य तवे (जीभा २८२) ।
१६. ब प्रति तथा मुद्रित टीका में गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
एते छ पच्छित्ता, पुलाग नियंठस्स बोधव्वा ।
स प्रति में इस गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
छप्पेते पच्छित्ता, पुलागनियंठस्स बोधव्वा ।
१७. जीभा २८३ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१८७. आलोयणा[1] विवेगो य[2], 'नियंठस्स दुवे भवे'[3] ।
विवेगो य सिणातस्स, एमेया[4] पडिवत्तिओ[5] ॥

४१८८. पंचेव संजता खलु, नातसुतेणं कधिय[6] जिणवरेणं ।
'तेसिं पायच्छित्तं, अहक्कमं कित्तइस्सामि'[7] ॥

४१८९. सामाइसंजताणं[8], पच्छित्ता[9] छेदमूलरहितऽट्ठा ।
थेराण जिणाणं पुण, तवमंतं छव्विधं होति ॥

४१९०. छेदोवट्ठावणिए, पायच्छित्ता हवंति सव्वे वि[10] ।
थेराण जिणाणं पुण, 'मूलंतं अट्ठहा होति'[11] ॥

४१९१. परिहारविसुद्धीए, मूलंता अट्ठ होंति पच्छित्ता ।
थेराण जिणाणं पुण, 'छव्विध छेदादिवज्जं वा'[12] ॥

४१९२. आलोयणा विवेगे य, तइयं तु 'न विज्जती'[13] ।
'सुहुमे य'[14] संपराए, अधक्खाए तधेव य ॥

४१९३. बउसपडिसेवगा खलु, इत्तरि[15] छेदा य संजता दोन्नि ।
जा तित्थऽणुसज्जंती,[16] अत्थि हु तेणं तु पच्छित्तं ॥

४१९४. जदि अत्थि न दीसंती[17], केइ 'करेंतत्थ धणियदिट्ठंतो[18] ।
संतमसंते विहिणा, मोयंता दो वि मुच्चंति ॥

४१९५. संतविभवो तु जाधे[19], मग्गति ताहे य देति तं सव्वं ।
जो पुण असंतविभवो, तत्थ विसेसो इमो होति ॥

४१९६. निरवेक्खो तिण्णि चयति[20], अप्पाण[21] 'धणागमं च'[22] धारणगं ।
सावेक्खो पुण रक्खति, अप्पाण धणं च धारणगं[23] ॥

---

१. ०यण (ब)।
२. यं (क), वा (जीभा)।
३. x (क)।
४. एमेवा (अ)।
५. पडिवत्तीओ (ब, जीभा २८४)।
६. कहिता (जीभा)।
७. सामाइयसंजयादी, पच्छित्तं तेसि वुच्छामि (जीभा २८५)।
८. सामाइयसंजताण (जीभा २८६)।
९. पायच्छित्ता (ब, क)।
१०. वी (अ)।
११. x (ब, क), जीभा २८७।
१२. छव्विहमेतं चिय तवंतं (जीभा २८८)।
१३. विवज्जइ (अ, क)।
१४. सुहुमम्मि (जीभा २८९)।
१५. इतिरि (ब)
१६. तित्थं अणुस० (जीभा २९०)।
१७. दीसती (क)।
१८. करेंता उ भण्णती सुणसु (जीभा २९१), इस गाथा के बाद जीभा (२९२) में निम्न गाथा अतिरिक्त मिलती है—
जह धणियो सावेक्खो, णिरवेक्खो चेव होइ दुविहो तु ।
धारणग संतविभवो, असंतविभवो य सो दुविहो ॥
१९. ताधि (स), जाधेव (जीभा २९३)।
२०. चयती (जीभा)।
२१. अप्पाणं (स), अत्ताण (जीभा)।
२२. धणं च तह य (जीभा २९४)।
२३. धारणिगं (अ, स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१९७. जो तु असंते विभवे, 'पाए घेत्तूण पडति पाडेणं'[१] ।
सो अप्पाण धणं पि य, धारणगं[२] चेव नासेति ॥

४१९८. जो पुण सहती कालं, सो अत्थं लभति[३] रक्खती तं च ।
न किलिस्सति[४] य सयं पी, एव उवाओ उ सव्वत्थ[५] ॥

४१९९. जो उ 'धारेज्ज वद्धंतं'[६], असंतविभवो सयं ।
कुणमाणो य[७] कम्मं तु, निवेसे[८] करिसावणं ॥

४२००. अणमप्पेण कालेण, सो तगं तु विमोयए ।
दिट्ठंतेसो भणितो, अत्थोवणओ इमो तस्स[९] ॥

४२०१. संतविभवेहि तुल्ला, धितिसंधयणेहि जे उ संपन्ना ।
ते आवन्ना सव्वं, वहंति निरणुग्गहं धीरा[१०] ॥

४२०२. संघयण-धितीहीणा, असंतविभवेहि होंति तुल्ला तु ।
निरवेक्खो[११] जदि तेसिं, देति ततो ते विणस्संति ॥

४२०३. ते तेण परिच्चत्ता, लिंगविवेगं तु काउ वच्चंति ।
तित्थुच्छेदो[१२] अप्पा, 'एगाणिय तेण चत्तो य'[१३] ॥

४२०४. सावेक्खो पवयणम्मि[१४], अणवत्थपसंगवारणाकुसलो[१५] ।
चारित्तरक्खणट्ठं[१६], अव्वोच्छित्तीय 'तु विसुज्झो'[१७] ॥

४२०५. कल्लाणगमावन्ने, अतरंत जहक्कमेण काउं जो ।
दस कारेंति चउत्थे, तब्बिगुणायंबिलतवे व[१८] ॥

४२०६. एक्कासणपुरिमड्ढा, निव्विगती चेव 'बिगुणबिगुणा य'[१९] ।
पत्तेयाऽसहु दाउं, कारेंति[२०] व सन्निगासं[२१] तु[२२] ॥

---

१. दब्भं घेत्तूण पडइ पाडेण (जीभा २९५)
२. धारिणगं (अ), धारणं (ब)
३. लभते (ब), लभती (स)।
४. किस्सती (ब)।
५. जीभा २९६।
६. धरेज्ज अवड्डुं (जीभा), धारिज्ज वट्टंतं (अ, स)।
७. उ (ब)।
८. निव्विसे (स, जीभा २९७), निव्वेसे (ब)।
९. जीभा २९८, गाथा के पूर्वार्द्ध में अनुष्टुप् तथा उत्तरार्ध में आर्या छंद है।
१०. जीभा २९९।
११. ते ण सुज्झंति (जीभा ३००)।
१२. तित्थच्छेदो (अ)।
१३. एवं अप्पा वि य चत्ता इणमो उ (जीभा ३०१)।
इस गाथा के बाद जीभा (३०२) में निम्न गाथा अतिरिक्त मिलती है—
ते उड्डेत्तु पलाणा, पच्छा एक्काणियो तयो होति।
ताहे किं तु करेतू, एवं अप्पा परिच्चत्तो॥
१४. ०णम्मी (ब, जीभा ३०३)।
१५. ० गधारणा ० (क) ० गकारणा० (स)।
१६. ० णत्थं (ब)।
१७. उ अविसुज्झे (ब, क)।
१८. वा (स), जीभा ३०४।
१९. ०गुणाओ (जीभा)।
२०. करेंति (अ), कारिति (ब, क)।
२१. सन्निकालं (स)।
२२. ति (जीभा ३०५)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२०७. चउ-तिग-दुगकल्लाणं[१], एगं कल्लाणगं च कारेती[२] ।
जं[३] जो उ तरति तं तस्स, देंत[४] असहुस्स भासेंती[५] ॥

४२०८. एवं सदयं दिज्जति, जेणं सो संजमे थिरो होति ।
न य सव्वहा न दिज्जति, अणवत्थपसंगदोसाओ[६] ॥

४२०९. दिट्ठंतो तेणएण, पसंगदोसेण जध वहं पत्तो ।
पावंति अणंताइं, मरणाइ अवारियपसंगा[७] ॥

४२१०. निब्भच्छणाति[८] बितियाय, वारितो[९] जीवियाण[१०] आभागी ।
नेव य थणछेदादी, पत्ता जणणी य अवराहं[११] ॥

४२११. इय अणिवारितदोसा[१२], संसारे दुक्खसागरमुवेंती ।
विणियत्तपसंगा खलु[१३], करेंति संसारवोच्छेदं[१४] ॥

४२१२. एवं धरती[१५] सोही, देंत करेंता वि एव दीसंति ।
जं पि य दंसणनाणेहि, जाति[१६] तित्थं ति तं सुणसु ॥दारं ॥

४२१३. एवं तु[१७] भणंतेणं, सेणियमादी वि थाविया[१८] समणा ।
समणस्स 'य जुत्तस्स य'[१९], नत्थी नरएसु उववाओ ॥

४२१४. जं पि य हु एक्कवीसं, वाससहस्साणि होहिती[२०] तित्थं ।
ते[२१] मिच्छासिद्धी वी[२२], सव्वगतीसुं व[२३] होज्जाहि[२४] ॥

४२१५. पायच्छित्ते असंतम्मि, चरित्तं पि न वट्टति[२५] ।
चरित्तम्मि असंतम्मि, तित्थे नो सचरित्तया ॥

---

१. ० कल्लाणा (जीभा) ।
२. कारेंता (क), करेंति (अ), कारेंति (स, जीभा) ।
३. तं (ब)
४. देंति (जीभा, क) ।
५. झोसेंति (जीभा ३०६), सासेंति (स) ।
६. जीभा ३०७ ।
७. जीभा (३०८) में यह गाथा इस प्रकार है—
तिलहारगदिट्ठंतो, पसंगदोसेण जह वहं पत्तो ।
जणणी य थणच्छेयं, पत्ता अणिवारयंती तु ॥
८. निसच्छणाति (अ), णिब्भत्थणाइ (स, जीभा ३०९) ।
९. वारिउं (ब, क) ।
१०. ० यादि (जीभा) ।
११. अवसहणं (क) ।
१२. अणिकारिय० (ब, क) ।
१३. पुण (स) ।
१४. जीभा ३१० ।
१५. भरता (ब, क) ।
१६. भाति (जीभा ३११) ।
१७. ते (जीभा) ।
१८. वाविया (स) ।
१९. य जुत्तस्सा (स), उ सुत्तम्मी (जीभा ३१२) ।
२०. होइती (जीभा), होसिती (स) ।
२१. तं (ब, स) ।
२२. वा (जीभा), विय (स) ।
२३. ति (क), तु (स), पि (जीभा ३१३) ।
२४. इस गाथा के बाद जीभा (३१४) में निम्न गाथा अतिरिक्त मिलती है—
अण्णं च इमो दोसो, पच्छित्ताभावतो तु पावइ हु ।
जह न वि चिट्ठति चरणं, तत्थ इमं गाहमाहंसु ॥
२५. चिट्ठती (ब, जीभा ३१५) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२१६. अचरित्ताय तित्थस्स[१], निव्वाणम्मि न गच्छति ।
निव्वाणम्मि असंतम्मि, सव्वा दिक्खा निरत्थया ॥

४२१७. न विणा तित्थं नियंठेहिं[२], नियंठा व अतित्थगा ।
छक्कायसंजमो जाव, 'तावऽणुसज्जणा दोण्हं'[३] ॥

४२१८. सव्वण्णूहि परूविय, छक्काय-महव्वया य समितीओ ।
सच्चेव[४] य पण्णवणा, 'संपयकाले वि'[५] साधूणं ॥

४२१९. तं णो वच्चति तित्थं, दंसण-नाणेहि एव सिद्धं तु ।
निज्जवगा वोच्छिन्ना, जं पि य भणियं तु तं न तधा[६] ॥

४२२०. सुण जध निज्जवगऽत्थी[७], दीसंति[८] जहा य निज्जविज्जंता[९] ।
इह दुविधा निज्जवगा, अत्ताण परे य बोधव्वा[१०] ॥नि. ५३८ ॥

४२२१. पादोवगमे[११] इंगिणि, दुविधा खलु होंति आयनिज्जवगा ।
निज्जवणा य[१२] परेण व, भत्तपरिण्णाय बोधव्वा[१३] ॥नि. ५३९ ॥

४२२२. पादोवगमे इंगिणि, दोन्नि वि चिट्ठंतु ताव[१४] मरणाइं ।
भत्तपरिण्णाय विधिं, वुच्छामि अहाणुपुव्वीए[१५] ॥

४२२३. पव्वज्जादी काउं, नेयव्वं 'ताव जाव'[१६]ऽवोच्छित्ती ।
पंच तुलेऊणऽप्पा[१७], भत्तपरिण्णं परिणतो उ[१८] ॥

४२२४. सपरक्कमे य 'अपरक्कमे य'[१९] वाघाय आणुपुव्वीए[२०] ।
सुत्तत्थजाणएणं, समाहिमरणं तु कायव्वं ॥

४२२५. भिक्ख-वियारसमत्थो, जो अन्नगणं च गंतु वाएति[२१] ।
एस सपरक्कमो खलु, तव्विवरीतो भवे इतरो ॥

---

१. तित्थे (जीभा ३१६)।
२. नियंतेहिं (अ, ब)।
३. ताव दुण्हाऽणु सज्जणा (जीभा ३१७)।
४. सच्चिय (अ, क)।
५. संपयकालम्मि (जीभा ३१८)।
६. जीभा ३१९।
७. ० गत्थीहि (ब), ० गच्छी (अ)।
८. दीसंत (ब)।
९. निज्जवज्जंता (ब)।
१०. जीभा ३२०।
११. पाउव० (अ)।
१२. उ (क)।
१३. जीभा ३२१।
१४. भाव (ब)।
१५. जीभा ३२२।
१६. जाव ताव (क, स)।
१७. तुलेतूण य सो (जीभा)।
१८. य (जीभा ३२३), निभा ३८१२
१९. x (ब, क)
२०. आणुव्वतीए (क), ० पुव्वी य (जीभा ३२४)।
२१. चाएति (जीभा ३२५)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२२६. एक्केक्कं तं[1] दुविधं, निव्वाघातं तधेव वाघातं ।
वाघातो वि य दुविहो, 'कालऽतियारो य इतरो वा'[2] ॥

४२२७. तं पुण अणुगंतव्वं, 'दारेहि इमेहि'[3] आणुपुव्वीए ।
गणनिसरणादिएहिं, तेसि विभागं तु वुच्छामि[4] ॥नि. ५४० ॥

४२२८. गणनिसरणे[5] परगणे, सिति[6] संलेहो[7] अगीतऽसंविग्गे ।
एगाभोगण अन्ने, अणपुच्छ-परिच्छ आलोए ॥नि. ५४१ ॥

४२२९. ठाण-वसधीपसत्थे, निज्जवगा दव्वदावणं[8] चरिमे ।
हाणऽपरितंत निज्जर, संथारुव्वत्तणादीणि[9] ॥नि. ५४२ ॥

४२३०. सारेऊण य कवयं, निव्वाघातेण चिंधकरणं व ।
अंतोबहिवाघातो[10], भत्तपरिण्णाय कायव्वो ॥दारं ॥नि. ५४३ ॥

४२३१. गणनिसरणम्मि 'उ विधी'[11], जो कप्पे वण्णितो उ सत्तविहो[12] ।
सो चेव निरवसेसो, भत्तपरिण्णाय दसमम्मि[13] ॥

४२३२. किं कारणऽवक्कमणं[14], थेराण इहं[15] तवो किलंताणं ।
अब्भुज्जयम्मि[16] • मरणे, कालुणिया झाणवाघातो[17] ॥

४२३३. सगणे आणाहाणी, अप्पत्तिय होति एवमादीयं[18] ।
परगणें गुरुकुलवासो, अप्पत्तियवज्जितो होति ॥

४२३४. उवगरणगणनिमित्तं, तु[19] वुग्गहं दिस्स वावि गणभेदं ।
बालादी थेराण[20] व, उच्चियाकरणम्मि वाघातो[21] ॥

४२३५. सिणेहो पेलवी होति, निग्गते उभयस्स वि[22] ।
आहच्च वावि वाघाते, णो सेहादि विउब्भमो[23] ॥

---

१. तु (ब)।
२. कालइक्रो व्व इतरो या (ब, क), कालाइधरो व्व इयरो व्व (जीभा ३२६), इस गाथा के बाद जीभा (३२७) में एक गाथा अतिरिक्त मिलती है—
सपरक्कमं तु तहियं, णिव्वाघायं तहेव वाघातं ।
वोच्छामि समासेणं, टप्पं अपरक्कमं दुविहं ॥
३. इमेहि दारेहि (अ)।
४. जीभा ३२८।
५. ०रणा (अ)।
६. सति (अ), गणसिति (क)।
७. सलेहा (जीभा ३२९)।
८. ० दायणं (ब), ० दायणा (जीभा ३३०)।
९. ० णादिणो (क, स)।
१०. वाघाए जयणा या (जीभा ३३१)।
११. तू विधी (अ), उवही (निभा ३८१९)।
१२. समासेणं (अ)।
१३. इहइं पि (जीभा ३३२), जीभा (३३३) में इस गाथा के बाद निम्न अतिरिक्त गाथा मिलती है—
णिसिरित्तु गणं वीरो, गंतूण य परगणं तु सो ताहे ।
कुणति दढव्ववसाओ, भत्तपरिण्णं परिणयो य ॥
१४. ० चक्कमणं (अ, क), ० चंकमणं (निभा)।
१५. तह (निभा ३८२०)।
१६. अप्पज्झयम्मि (निभा)।
१७. जीभा ३३४।
१८. ० मादीहिं (जीभा ३३५)।
१९. तू (ब)।
२०. मेराण (ब, स, क)।
२१. जीभा ३३६।
२२. उ (अ, ब)।
२३. निभा ३८२१, जीभा ३३७।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२३६. दव्वसिती भावसिती, अणुयोगधराण जेसिमुवलद्धा[1] ।
न हु उड्डगमणकज्जे, हेट्ठिल्लपदं पसंसंति[2] ॥

४२३७. संजमठाणाणं[3] कंडगाण लेसाठितीविसेसाणं ।
उवरिल्लपरक्कमणं[4], भावसिती केवलं जाव[5] ॥दारं ॥

४२३८. उक्कोसा य जहन्ना, दुविहा संलेहणा समासेण ।
'छम्मासा उ जहन्ना[6], उक्कोसा बारससमा उ[7] ॥

४२३९. 'चिट्ठतु जहण्ण मज्झा'[8], उक्कोसं 'तत्थ ताव'[9] वोच्छामि ।
जं संलिहिऊण मुणी, साहेंती[10] अत्तणो[11] अत्थं[12] ॥

४२४०. चत्तारि विचित्ताइं, विगतीनिज्जूहिताणि[13] चत्तारि ।
एगंतरमायामे, णाति[14] विगिट्ठे विगिट्ठे य[15] ॥

४२४१. संवच्छराणि चउरो, होंति[16] विचित्तं चउत्थमादीयं[17] ।
काऊण सव्वगुणितं, पारेती उग्गमविसुद्धं[18] ॥

४२४२. पुणरवि चउरण्णे[19] तू, विचित्त काऊण विगतिवज्जं तु ।
पारेति सो महप्पा, णिद्धं पणियं च वज्जेती[20] ॥

४२४३. अण्णा दोन्नि समाओ, चउत्थ काऊण पारि आयामं ।
कंजीएणं तु ततो, अण्णेक्कसमं 'इमं कुणति'[21] ॥

४२४४. तत्थेक्कं छम्मासं, चउत्थ छट्ठं व[22] काउ पारेति ।
आयंबिलेण[23] नियमा, बितिए छम्मासिय विगिट्ठं ॥

४२४५. अट्ठम-दसम-दुवालस, 'काऊणायंबिलेण पारेति'[24] ।
अन्नेक्कहायणं तू, कोडीसहियं तु काऊण[25] ॥

---

१. जेसि उव ० (स)।
२. निभा ३८२२, तु. जीभा ३३८, ३४०।
३. ० ठाणेणं (ब)।
४. ० परिक्कमणं (निभा ३८२३), ० पयक्क० (म)।
५. जीभा ३३९।
६. छम्मास जहण्णा ऊ (स)।
७. जीभा (३४१) में इस गाथा के स्थान पर निम्न गाथा मिलती है—
संलेहणा उ तिविहा, जहण्ण मज्झा तहेव उक्कोसा।
छम्मासा वरिसं वा, बारसवरिसा जहाकमसा॥
८. चिट्ठउ ताव जहण्णा (अ, स)।
९. ताव तत्थ (क)।
१०. साहिई (ब), साहंती (जीभा)।
११. अप्पणो (ब, स, जीभा ३४२)।
१२. अट्ठं (स)।
१३. ० याइं (ब, ख)।
१४. णीति ० (अ)।
१५. गाथा का उत्तरार्ध जीभा (३४३) में इस प्रकार है—
दोसु चउत्थाऽऽयामं, अविगिट्ठ विगिट्ठ कोडेक्कं ॥
१६. होंति (ब), तवं (जीभा ३४४)।
१७. ० मातीयं (ब)।
१८. ० मतिसुद्धं (ब)।
१९. ० रग्गे (अ)।
२०. जीभा ३४५।
२१. दुहा काउं (जीभा ३४६)।
२२. तु (ब)।
२३. आयामेणं (जीभा ३४७)।
२४. काउं पारे तमेव आयामं (जीभा ३४८)।
२५. इस गाथा के बाद जीभा (३४९) में निम्न गाथा अधिक मिलती है—
आयाम चउत्थादी, काऊण अपारिए पुणो अण्णं।
जं कुणयाऽऽयामादी, तं भण्णति कोडिसहितं तु॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२४६. आयंबिल उसिणोदेण[१], 'पारें हावेंत'[२] आणुपुव्वीए ।
जह 'दीवे तेल्लवत्ति'[३], खओ समं तह सरीरायुं ॥

४२४७. पच्छिल्लहायणे[४] तू, चउरो धारेंतु तेल्लगंडूसं ।
'निसिरे खेल्लमल्लम्मि'[५], किं कारण गल्लधरणं तु[६] ॥

४२४८. लुक्खत्ता मुहजंतं, मा हु खुभेज्ज तेण धारेति ।
मा हु नमोक्कारस्सा, अपच्चलो सो हविज्जाहि[७] ॥

४२४९. उक्कोसिगा उ एसा, संलेहा मज्झिमा जहन्ना य ।
संवच्छर छम्मासा, एमेव य मासपक्खेहिं[८] ॥

४२५०. एत्तो एगतरेणं, संलेहणं तु खवेतु[९] अप्पाणं ।
कुज्जा भत्तपरिण्णं, इंगिणि पाओवगमणं[१०] वा ॥दारं ॥

४२५१. अग्गीतसगासम्मी, भत्तपरिण्णं तु जो करेज्जाही ।
चउगुरुगा तस्स भवे, किं कारण जेणिमे दोसा[११] ॥

४२५२. 'नासेति अगीयत्थो'[१२], चउरंगं सव्वलोगसारंगं ।
नट्ठम्मि य चउरंगे, न हु सुलभं होति चउरंगं[१३] ॥

४२५३. किं पुण तं चउरंगं, जं नट्ठं दुल्लभं पुणो होति[१४] ? ।
माणुस्सं धम्मसुती, सद्धा तव[१५] संजमे विरियं ॥

४२५४. किह नासेति अगीतो[१६], पढमबितियएहि[१७] अद्दितो सो उ ।
ओभासे कालियाएँ[१८], तो[१९] निद्धम्मो त्ति छड्डेज्जा ॥

४२५५. अंतो वा बाहिं वा[२०], दिवा[२१] य रातो य सो विवित्तो उ ।
अट्ट-दुहट्ट-वसट्टो, पडिगमणादीणि कुज्जाहि ॥

---

१. उसुणो ० (स) ।
२. परिहावेंतो (ब, क) ।
३. दीव-तेल्लवती (जीभा ३५०), इस गाथा के बाद जीभा (३५१) में निम्न गाथा अतिरिक्त मिलती है—
बारसमम्मि य वरिसे, जे मासा उवरिमा उ चत्तारि ।
पारणए तेसिं तु, एक्कंतरतं इमं धारे ॥
४. पडिलेहणहा ० (स) ।
५. निसिरेज्जा खेल्लमल्ले (क) ।
६. जीभा (३५२) में यह गाथा इस प्रकार है—
तेल्लस्स उ गंडूसं, णीसट्ठं जाव खेलसंवुत्तो ।
तो णिसिरे खेलमत्ते, किं कारण ! गल्लधरणं तु ॥
७. हु होज्जाहि (जीभा ३५३) ।
८. जीभा ३५४ ।
९. खवेंतु (अ) ।
१०. पातोव० (ब), जीभा ३५५ ।
११. जीभा ३५६ ।
१२. नासेती अगीतो (स) ।
१३. निभा ३८२६, जीभा ३५७ ।
१४. होही (ब, क), होती (स) ।
१५. तह (जीभा ३५८) ।
१६. अगीयत्थो (अ, स) ।
१७. ० बितियाहि (क) ।
१८. कालिमाए (जीभा ३५९) ।
१९. ति (अ), ते (ब, स) ।
२०. या (स) ।
२१. दिया (जीभा ३६०), दिय (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२५६. 'मरिऊण अट्टझाणो'[1], 'गच्छे तिरिएसु वणयरेसु वा'[2] ।
संभरिऊण य रुट्ठो[3], पडिणीयत्तं करेज्जाहि[4] ॥

४२५७. अधवावि सव्वरीए, मोयं दिज्जाहि जायमाणस्स ।
सो दंडियादि[5] होज्जा, रुट्ठो साहे निवादीणं ॥

४२५८. कुज्जा कुलादिपत्थारं, सो वा रुट्ठो तु गच्छे[6] मिच्छत्तं ।
तप्पच्चयं[7] च[8] दीहं, भमेज्ज संसारकंतारं ॥

४२५९. 'सो उ विविंचिय दिट्ठो'[9], संविग्गेहिं तु अन्नसाधूहिं ।
आसासियमणुसिट्ठो[10] मरण जढ पुणो वि पडिवन्नं ॥

४२६०. एते अन्ने य तहिं, 'बहवे दोसा य पच्चवाया य'[11] ।
एतेहि कारणेहिं, अगीते[12] न कप्पति[13] परिण्णा ॥

४२६१. पंच व छस्सत्तसते, अधवा एत्तो वि सातिरेगतरे[14] ।
गीतत्थपादमूलं, परिमग्गेज्जा अपरितंतो[15] ॥

४२६२. एक्कं[16] व दो व तिन्नि व, उक्कोसं बारसेव वासाणि[17] ।
गीतत्थपादमूलं, परिमग्गेज्जा अपरितंतो[18] ॥

४२६३. गीतत्थदुल्लभं खलु 'कालं तु पडुच्च'[19] मग्गणा एसा ।
ते खलु गवेसमाणा, खेत्ते काले य परिमाणं[20] ॥

४२६४. तम्हा[21] गीतत्थेणं, पवयणगहियत्थसव्वसारेणं ।
निज्जवगेण[22] समाधी, कायव्वा उत्तिमट्ठम्मि[23] ॥दारं ॥

४२६५. 'असंविग्गसमीवे वि'[24], पडिवज्जंतस्स होंति 'गुरुगा उ'[25] ।
किं कारणं तु जहियं[26], जम्हा दोसा 'हवंति इमे'[27] ॥

१. मरितूण वट्टझाणो (ब)।
२. गच्छेज्ज व तिरिय वण० (जीभा ३६१)।
३. वेरं (जीभा)।
४. यह गाथा स प्रति में अनुपलब्ध है।
५. डंडि० (जीभा ३६२)।
६. गच्छम्मि (अ)।
७. तप्पट्ठयं (ब)।
८. व (ब), तु (जीभा ३६३)।
९. सो दिट्ठो य विगिंचितो (जीभा)।
१०. ० मणुसट्ठो (अ, ब, जीभा ३६४)।
११. बहू तहियं दोसा सपच्चवाया य (जीभा ३६५)।
१२. अगीयत्थे (अ, निभा ३८२९)।
१३. कप्पती (अ, स)।
१४. जीभा (३६६) में गाथा का पूर्वार्द्ध इस प्रकार है—
तम्हा पंच व छस्सतवावि जोयणसते समहिए वा।
१५. निभा. ३८३०।
१६. एग (अ, स)।
१७. वरिसाति (निभा ३८३१), वासाइं (अ), वासातिं (स)।
१८. जीभा ३६७।
१९. पडुच्च कालं तु (ब, स, जीभा ३६८)।
२०. निभा. ३८३२।
२१. तेण य (जीभा ३६९)।
२२. ० वतेण (निभा ३८३३)।
२३. उत्तम० (अ, क)।
२४. एवमसंविग्गे वी (जीभा ३७०)।
२५. चउगुरुगा (जीभा)।
२६. तहियं (ब)।
२७. भवतु मे (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२६६. नासेति असंविग्गो, चउरंगं सव्वलोयसारंगं[1] ।
नट्ठम्मि उ[2] चउरंगे, न हु सुलभं होति चउरंगं[3] ॥

४२६७. आहाकम्मिय[4] पाणगं[5], पुप्फा सेया[6] य बहुजणे णातं ।
सेज्जा-संथारो वि य, उवधी वि य होति अविसुद्धो[7] ॥

४२६८. एते अन्ने य तहिं, बहवे दोसा य पच्चवाया य ।
'एतेण कारणेणं'[8], असंविग्गे न कप्पति परिण्णा[9] ॥

४२६९. 'पंच व'[10] छस्सत्तसया, अहवा एत्तो वि सातिरेगतरे[11] ।
संविग्गपादमूलं, परिमग्गेज्जा अपरितंतो[12] ॥

४२७०. एक्कं व दो व तिण्णि व, उक्कोसं बारसेव वासाणि[13] ।
संविग्गपादमूलं, परिमग्गेज्जा अपरितंतो[14] ॥

४२७१. संविग्गदुल्लभं खलु, कालं तु पडुच्च मग्गणा एसा ।
ते खलु गवेसमाणा, खेत्ते काले य परिमाणं[15] ॥

४२७२. तम्हा[16] संविग्गेणं, पवयणगहितत्थसव्वसारेणं ।
निज्जवगेण समाही कायव्वा उत्तमट्ठम्मि[17] ॥दारं ॥

४२७३. एक्कम्मि उ निज्जवगे'[18], विराहणा होति कज्जहाणी य ।
सो सेहा वि य चत्ता, पावयणं चेव उड्डाहो[19] ॥

४२७४. तस्सट्ठगतोभासण, सेहादि अदाण सो परिच्चत्तो ।
दातुं व अदाउं वा[20], भवंति सेहा वि[21] निद्धम्मा ॥

४२७५. कूयति[22] अदिज्जमाणे, मारेंति[23] बल त्ति पवयणं चत्तं[24] ।
सेहा य जे[25] पडिगया, 'जणे अवण्णं पगासेंति'[26] ॥दारं ॥

---

१. सयललोय० (ब)।
२. य (जीभा ३७१)।
३. निभा ३८३४।
४. आहारम्मि य (अ), आहागम्मिय (क)।
५. पाण (अ)।
६. सीया (अ, स, जीभा ३७२), सिंगा (निभा ३८३५)।
७. सुवि ० (स)।
८. एतेहि य अण्णेहिं य (निभा ३८३६)।
९. जीभा ३७३।
१०. पंचेव (मु, ब)।
११. गाथा का पूर्वार्द्ध जीभा (३७४) में इस प्रकार है—
तम्हा पंच व छ स्सत, वावि जोयणसते समहिए वा।
१२. निभा ३८३७।
१३. वासाइं (स, जीभा ३७५), वरिसाइं (निभा ३८३८)।
१४. यह गाथा स प्रति में नहीं है।
१५. जीभा. ३७६, निभा ३८३९।
१६. तेण य (जीभा ३७७)।
१७. उत्तिम ० (क, निभा ३८४०)।
१८. निव्ववए (क), निज्जविए (अ)।
१९. जीभा. ३७८,
निभा (३८४१) में इसके स्थान पर निम्न गाथा मिलती है—
एते उ कज्जहाणी, सो वा सेहा य पवयणं चत्त।
तच्चण्णिए णिमित्ते, चतो चत्तो य उड्डाहो॥
२०. ता (ब)।
२१. वि (जीभा ३७९, निभा ३८४२) ति (अ)।
२२. रुयति (स)।
२३. मारेति (जीभा ३८०)।
२४. चत्ता (क)।
२५. जं (ब, स)।
२६. जेण य अण्णं पदाण त्ति (स),
जणो अवण्णं पदाणे ति (निभा ३८४३)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२७६. 'परतो सयं व णच्चा'[१], 'पारगमिच्छंतिऽपारगे गुरुगा'[२] ।
असती खेमसुभिक्खे, निव्वाघातेण पडिवत्ती ॥

४२७७. सयं चेव चिरं वासो, वासावासे तवस्सिणं[३] ।
तेण तस्स विसेसेण, वासासु पडिवज्जणा[४] ॥

४२७८. कंचणपुर गुरुसण्णा,[५] देवयरुवणा[६] य पुच्छ कधणा य ।
पारणगखीररुधिरं[७], आमंतण संघनासणया[८] ॥

४२७९. असिवादीहि वहंता, तं उवगरण च संजता चत्ता ।
उवधिं विणा य छड्डुण, चत्तो सो पवयणं चेव[९] ॥दारं ॥

४२८०. एगो संथारगतो, 'बितिओ संलेह ततिय पडिसेधो'[१०] ।
अपहुव्वंतऽसमाही[११], तस्स व[१२] तेसिं च असतीए[१३] ॥

४२८१. भवेज्ज जदि वाघातो, बितियं[१४] तत्थ ठावते[१५] ।
'चिलिमिणि अंतरे'[१६] चेव[१७], बहिं वंदावए जणं[१८] ॥दारं ॥

४२८२. अणपुच्छाए गच्छस्स[१९], 'पडिच्छती व जती'[२०] गुरू गुरुगा ।
चत्तारि वि[२१] विण्णेया[२२], गच्छमणिच्छंत जं पावे ॥

४२८३. पाणगादीणि[२३] जोग्गाणि, जाणि[२४] तस्स समाहिते ।
अलंभे तस्स जा हाणी[२५], परिक्केसो[२६] य जायणे[२७] ॥

४२८४. असंथरं अजोग्गा वा, जोगवाही व ते[२८] भवे ।
एसणाए[२९] परिक्केसो, जा य तस्स विराधणा ॥दारं ॥

---

१. अहवावि सो व्व परतो (जीभा ३८३)।
२. ० मिच्छत्त णिरगमिच्छंतं (निभा ३८४४)।
३. ० स्सिण तेण (निभा ३८४५)।
४. जीभा ३८४।
५. इह सण्णा (निभा)।
६. दिव्वय ० (ब), दिवे य गुरुणा य (निभा ३८४६),०रुयणा (अ, स)।
७. x (अ)।
८. जीभा ३८२।
९. जीभा ३८६, निभा (३८४७) में यह गाथा इस प्रकार है—
असिवादिकारणेहिं, वहमाणा संजता परिच्चत्ता।
उवधिविणासो जे छत्ताण चत्तो सो पवयणं चेवा ॥
१०. संलेहगते य ततियपडिसेहो (निभा)।
११. अण्णा अपुच्छ असमाही (निभा ३८४८)।
१२. वा (निभा, ब)।
१३. असमाही (जीभा ३८७), असतीं वा (स)।
१४. बीयं (क, ब)।
१५. पावए (ब)।
१६. ० मिणी अंतरा (स),-मिलिं अंतरे (जीभा ३८८)।
१७. काउं (जीभा ३८८)।
१८. निभा ३८४९।
१९. गणस्सा (जीभा ३८९)।
२०. पडिच्छंतं जति (ब, क)।
२१. x (अ, स), तु (जीभा)।
२२. वण्णेया (ब)।
२३. पावगा० (अ, ब)।
२४. जाति (निभा ३८५०)।
२५. ठाणा (निभा)।
२६. परिक्किसो (ब)।
२७. जीभा ३९०।
२८. जइ (जीभा)
२९. ०णादि (जीभा ३९१, निभा ३८५१)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२८५. अपरिच्छणम्मि गुरुगा[1], दोण्ह वि अण्णोण्णगं जधाकमसो ।
होति विराधण दुविधा, एक्को[2] एक्को व जं पावे[3] ॥

४२८६. तम्हा 'परिच्छणं तू'[4], दव्वे भावे य होति दोण्हं पि ।
संलेह पुच्छ दायण[5], दिट्ठंतोऽमच्च कोंकणए[6] ॥

४२८७. 'कलमोदण-पयकढियादि, दव्वे आणेह[7] मे त्ति इति[8] उदिते ।
भावे कसाइज्जंति[9], तेसि सगासे न पडिवज्जे[10] ॥

४२८८. अह पुण विरूवरूवे, आणीत[11] दुगुंछिते भणंतऽण्णं ।
'आणेमो त्ति'[12] ववसिते, पडिवज्जति तेसिं 'तो पासे'[13] ॥

४२८९. कलमोदणो य पयसा, अन्नं च सभावअणुमतं तस्स[14] ।
उवणीतं जो 'कुच्छति, तं तु अलुद्धं पडिच्छंति'[15] ॥

४२९०. अज्जो संलेहो ते, किं कतो न कतो त्ति एवमुदियम्मि[16] ।
भंतुं अंगुलि दावे, पेच्छह किं वा कतो न कतो[17] ॥

४२९१. न हु ते दव्वसंलेहं, पुच्छे पासामि[18] ते किसं ।
कीस ते अंगुली भग्गा?, भावं संलिहमाउर![19] ॥

४२९२. रण्णा कोंकणगाऽमच्चा, दो वि निव्विसया कता ।
दोड्डिए[20] कंजियं छोढुं, कोंकणो तक्खणा गतो ॥

---

१. गुरुगो (ब)।
२. एक्को व (अ, ब)।
३. जीभा ३९२।
४. परिच्छणा खलु (जीभा)।
५. दाण (स)।
६. जीभा (३९३) में गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
तहियं तु जो परिच्छति, दव्वपरिच्छाएँ ते इणमो ।
निभा (३८५२) में यह गाथा कुछ अंतर के साथ इस प्रकार मिलती है—
खीरोदणे य दव्वे, तच्च दुगुंच्छण्णय तहिं वितरे ।
परिच्छिया सुसंलेहदागमणेऽमच्च कोंकणते ॥
७. आणेसु (स)।
८. तो (जीभा)।
९. ० ज्जंती (स)।
१०. इस गाथा के स्थान पर जीभा (३९४, ३९५) में निम्न दो गाथाएं मिलती हैं—
मादणपयकढियादी, दव्वे आणेह मे त्ति तो उदिते ।
जदि उवहसंति ते तू, अहो इमो विगयगेहि त्ति ॥
किह मोच्छिइ त्ति भत्तं, तेसेवं दव्वयो परिच्छा उ ।
भावे कसाइज्जंती, तेसि सगासे ण पडिवज्जे ॥
११. आणाति (क)।
१२. आणेमोहित्त (ब)।
१३. तो एसो (ब), सो पासे (जीभा ३९६), इस गाथा के बाद जीभा (३९७) में निम्न अतिरिक्त गाथा मिलती है—
एवं भासी ते तू, परिच्छए दव्व भावओ विहिणा ।
ते वि य तं तु परिच्छे, दुविहपरिच्छाए इणमो तु ॥
१४. जस्स (अ, स, निभा ३८५४)
१५. कुंछइ दव्वपरिच्छाए सो सुद्धो (जीभा ३९८)।
१६. एव उदि ० (स)।
१७. जीभा (३९९, ४००) में इसके स्थान पर निम्न दो गाथाएं मिलती हैं—
भावे पुण पुच्छिज्जइ, किं संलेहो कतो त्ति ण कयोत्ति ।
इति उदिते सो ताहे, हंतूणं अंगुलिं दाए ॥
पेच्छह ता मे एयं, किं कतो ण कतो त्ति एव उदितम्मि ।
भणति गुरू तो ण तओ, एवं चिय ते ण संलीढं ॥
१८. पासाति (ब)
१९. संलेहमाउरो (ब), ० मातुरं (स, निभा ३८५५), जीभा ४०१ ।
इस गाथा के बाद जीभा (४०२) में निम्न गाथा अधिक मिलती हैं—
भावो च्चिय एत्थं तु, संलिहियव्वो सदा पयत्तेणं ।
तेणाऽऽयट्टं साहे, दिट्ठंतोऽमच्च कोंकणए ॥
२०. दोद्धिए (निभा ३८५६, जीभा ४०३)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२९३. भंडी[१] बइल्लए[२] काए, अमच्चो जा भरेति तु ।
ताव पुन्नं तु पंचाहं, नलिए[३] निधणं गतो[४] ॥

४२९४. इंदियाणि कसाए य, गारवे य किसे कुरु[५] ।
'न चेयं'[६] ते पसंसामी, किसं साधुसरीरगं[७] ॥दारं ॥

४२९५. आयरियपादमूलं, गंतूणं सति[८] परक्कमे ताधे ।
सव्वेण अत्तसोधी, 'कायव्वा एस उवदेसो'[९] ॥

४२९६. जह सुकुसलो वि वेज्जो, अन्नस्स कधेति अप्पणो[१०] वाहिं[११] ।
वेज्जस्स य सो सोउं, तो पडिकम्मं समारभते[१२] ॥

४२९७. जाणंतेण वि एवं, पायच्छित्तविहिमप्पणो[१३] निउणं ।
तह वि य पागडतरयं, आलोएयव्वयं होति[१४] ॥

४२९८ छत्तीसगुणसमन्नागतेण, तेण वि अवस्स कायव्वा ।
परपक्खिगा[१५] विसोधी, सुट्ठु वि ववहारकुसलेणं[१६] ॥

४२९९. जह बालो जंपंतो, कज्जमकज्जं च उज्जुयं भणति ।
तं तह आलोएज्जा, माया-मदविप्पमुक्को उ[१७] ॥

४३००. 'उप्पन्ना उप्पन्ना'[१८], मायामणुमग्गतो[१९] निहंतव्वा ।
आलोयण-निंदण-'गरहणादि न पुणो य'[२०] बितियं ति[२१] ॥

४३०१. आयारविणयगुणकप्पदीवणा अत्तसोहि[२२] उजुभावो ।
अज्जव-मद्दव-लाघव-तुट्ठी-पल्हायजणणं[२३] च[२४] ॥

---

१. भंडी उ (अ), भंडाउ (ब) ।
२. बहिल्लए (क, ब) ।
३. णोलिए (अ), लेणिए (ब) ।
४. जीभा ४०४, निभा (३८५७) में यह गाथा इस प्रकार है—
भंडितो बहिले काए, अमच्चो जा भरेति तु ।
ताव पुण्णं तु पंचाहे, ते पुण्णे निहणं गतो ॥
५. कुण (जीभा ४०६) ।
६. णो वयं (निभा ३८५८) ।
७. इस गाथा के बाद जीभा (४०७) में निम्न गाथा अतिरिक्त मिलती है—
एवं परिच्छिऊणं, जदि सुद्धो ताहे तं पडिच्छंति ।
ताहे य अत्तसोहिं, करेंति विहिणा इमेणं तु ॥
८. संते (निभा ३८५९) ।
९. परसक्खीयं तु कायव्वा (जीभा ४०८) ।
१०. अत्तणो (ब,क) ।
११. वाही (जीभा ४०९) ।
१२. निभा ३८६०, ओनि ७९५ ।
१३. ० विहमप्पणा (जीभा ४१०) ।
१४. निभा ३८६१ ।
१५. परसक्खिया (ब, निभा ३८६२) ।
१६. ओनि ७९४, गाथा का उत्तरार्ध जीभा (४११) में इस प्रकार है—
आलोयण णिंदण गरहणा य ण पुणो य बितियं ति ॥
१७. निभा ३८६३, ओनि ८०१ ।
१८. उप्पण्णाणुप्पण्णा (निभा ३८६४) ।
१९. माया अणु ० (स, निभा) ।
२०. गरहणा ते न पुणो वि (निभा) ।
२१. तु (स) ।
२२. आतसोही (निभा ३८६५) ।
२३. पण्हाय ० (अ) ।
२४. जीभा ४१३ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४३०२. पव्वज्जादी आलोयणा उ तिण्हं चउक्कग[1] विसोधी ।
जह[2] अप्पणो तह परे, कातव्वा उत्तमट्ठम्मि[3] ॥

४३०३. नाणनिमित्तं आसेविय तु, वितहं परूवियं वावि[4] ।
चेतणमचेतणं वा, 'दव्वं सेसेसु इमगं तु'[5] ॥

४३०४. नाणनिमित्तं अद्धाणमेति ओमे य[6] अच्छति तदट्ठा ।
नाणं व 'आगमेस्सं, ति'[7] कुणति परिकम्मणं[8] देहे ॥

४३०५. पडिसेवति विगतीओ, 'मेज्झं दव्वं'[9] व एसती[10] पिबती ।
'वायंतस्स व[11] किरिया, कता तु पणगादिहाणीए[12] ॥

४३०६. एमेव दंसणम्मि वि, सद्दहणा णवरि तत्थ णाणत्तं ।
एसण इत्थी[13] दोसे, वतं ति चरणे सिया सेवा[14] ॥

४३०७. अधवा तिगसालंबेण दव्वमादी चउक्कमाहच्च ।
आसेवितं निरालंबओ व आलोयए तं तु[15] ॥

४३०८. पडिसेवणाऽतियारे, जह वीसरिया कहिंचि[16] होज्जाहि[17] ।
तेसु[18] कह वट्टितव्वं, सल्लुद्धरणम्मि[19] समणेणं[20] ॥

४३०९. जे मे जाणंति जिणा, अवराधा 'जेसु जेसु'[21] ठाणेसु ।
ते हं आलोएउं, उवट्ठितो सव्वभावेणं[22] ॥

४३१०. एवं आलोएंतो[23], विसुद्धभावपरिणामसंजुत्तो ।
आराहओ तह वि सो, गारवपलिकुंचणा रहितो[24] ॥ दारं ॥

४३११. ठाणं पुण केरिसगं, होति पसत्थं तु तस्स[25] जं जोग्गं ।
भण्णति जत्थ न होज्जा, झाणस्स उ तस्स वाघातो[26] ॥

---

१. चतुक्किय (जीभा ४१४) ।
२. x (निभा) ।
३. उत्तिमट्ठे ति (स, निभा ३८६६) ।
४. जीभा (४१६) में इसका पूर्वार्द्ध इस प्रकार है—
णाणे वितहपरूवण, जं वा आसेवितं तदट्ठाए ।
५. दव्वे खेतादिसु इमं तु (जीभा), निभा ३८६७ ।
६. वि (स, नीभा ३८६८), व (जीभा ४१७) ।
७. आगमेस्सइ (जीभा) ।
८. ० कम्मणा (निभा) ।
९. मज्झे दव्वे (निभा ३८६९), मेहादव्वे (जीभा ४१८) ।
१०. एसता (अ) ।
११. एतस्स वि (निभा) ।
१२. पणइमादि ० (अ) ।
१३. इड्डी (निभा ३८७०) ।
१४. जीभा ४१९ ।
१५. निभा ३८७१, जीभा ४२० ।
१६. कहं वि (स, निभा ३८७२) ।
१७. हुज्जा णु (ब) ।
१८. तेसि (अ) ।
१९. ० रणं पि (अ) ।
२०. जीभा ४२१ ।
२१. तेसु तेसु (अ) ।
२२. जीभा ४२२, निभा ३८७३ ।
२३. आलोएंति (निभा ३८७४) ।
२४. जीभा ४२३ ।
२५. जस्स (ब) ।
२६. जीभा ४२४ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४३१२. गंधव्व-नट्ट जड्डऽस्स[१], चक्क-जंतऽग्गिकम्मपुरुसे य ।
णंतिक्क-रयग-देवड[२], डोंबे[३] पाडहिग[४] रायपधे ॥

४३१३. चारग कोट्टग कलाल[५], 'करकय पुप्फ-फल दगसमीवम्मि'[६] ।
'आरामे अहवियडे'[७], नागघरे पुव्वभणिए य ॥

४३१४. पढमबितिएसु कप्पे, उद्देसेसुं[८] उवस्सया 'जे तु'[९] ।
विहिसुत्ते य निसिद्धा, तव्विवरीते गवेसेज्जा[१०] ॥

४३१५. उज्जाणरुक्खमूले[११], सुण्णघरऽणिसट्ठ[१२] हरियमग्गे य ।
एवंविधे न ठायति[१३], होज्ज समाधीय वाघातो[१४] ॥दारं ॥

४३१६. इंदियपडिसंचारो, मणसंखोभकरणं जहिं नत्थि[१५] ।
चाउस्सालादि[१६] दुवे, अणुण्णवेऊण ठायंति[१७] ॥

४३१७. पाणगजोग्गाहारे, ठवेंति[१८] से तत्थ जत्थ न उवेंति ।
'अप्परिणया व'[१९] सो वा, अप्पच्चयगेहिरक्खट्ठा[२०] ॥

४३१८. भुत्तभोगी पुरा जो तु[२१], गीतत्थो वि य भावितो ।
संतेमाहारधम्मेसु[२२], सो वि खिप्पं तु खुब्भते ॥

४३१९. पडिलोमाणुलोमा[२३] वा, विसया जत्थ दूरतो ।
ठावेत्ता तत्थ[२४] से निच्चं, कहणा जाणगस्स वि[२५] ॥ दारं ॥

४३२०. पासत्थोसन्नकुसीलठाणपरिवज्जिया तु निज्जवगा ।
पियधम्मऽवज्जभीरू, गुणसंपन्ना अपरितंता[२६] ॥

४३२१. 'उव्वत्त दार'[२७] संथार[२८], कहग वादी य अग्गदारम्मि ।
भत्ते पाण[२९] वियारे, कधग दिसा जे समत्था य[३०] ॥

---

१. ०णट्टाउज्जस्स (निभा ३८७५)।
२. देवता (निभा)।
३. डोंबिल (जीभा ४२५)।
४. पोडहिग (निभा)।
५. कल्लाल (जीभा ४२६ अ, स)।
६. करकए पुप्फ दग समीवे य (जीभा), निभा (३८७६) में इसका पूर्वार्द्ध इस प्रकार है–
वारग कोट्टव कल्लाल, करय पुप्फ-फल दगसमीवम्मि।
७. आराम अहे वि ० (स, जीभा)।
८. ० सेसू (जीभा ४२७)।
९. ते ऊ (स)।
१०. गवेसे या (स), भवे सिज्जा (निभा ३८७७)।
११. उज्जाणे तरुमूले (जीभा ४२८)।
१२. ० णिसट्ट (निभा३८७९)।
१३. ठायते (ब)।
१४. निभा में ४३१४ एवं ४३१५ वीं गाथा में क्रमव्यत्यय है।
१५. नत्थि (निभा ३८७८)।
१६. ० सालाइ (जीभा ४२९, निभा, स)।
१७. उ ठंति (क, स)।
१८. x (अ)।
१९. अपरिणता वा (निभा ३८८०)।
२०. ० गिद्धि० (निभा), जीभा ४३०।
२१. वि (अ, ब)।
२२. संते साहार ० (स, जीभा ४३१, निभा ३८८१)।
२३. ० लोम अणुलोमा (जीभा ४३२)।
२४. जत्थ (ब, क)।
२५. ते (निभा ३८८२)।
२६. जीभा ४३३, निभा ३८८३।
२७. उव्वत्तणाइ (निभा ३८८४)।
२८. संथर (अ)।
२९. पाणे (स)।
३०. जीभा ४३५।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४३२२. जो जारिसिओ कालो, भरहेरवएसु[1] होंति वासेसु ।
ते तारिस ा ततिया, अडयालीसं तु निज्जवगा[2] ॥

४३२३. एवं[3] खलु उक्कोसा, परिहायंता[4] हवंति तिण्णेव[5] ।
'दो गीयत्था ततिए'[6], असुन्नकरणं जन्नेण[7] ॥ दारं ॥

४३२४. तस्स य चरिमाहारो, इट्ठो दायव्व तण्हछेदट्ठा ।
सव्वस्स चरिमकाले, अतीवतण्हा समुप्पज्जे[8] ॥

४३२५. नवविगतिसत्तओदण, 'अट्ठारसवंजणुच्चपाणं च'[9] ।
अणुपुव्विविहारीणं, समाहिकामाण उवहरिउं[10] ॥

४३२६. कालसभावाणुमतो, 'पुव्वं झुसितो सुतो व दिट्ठो वा'[11] ।
झोसिज्जति 'सो वि तहा'[12], जयणाय चउव्विहाहारो ॥

४३२७. तण्हाछेदम्मि कते, न तस्स तहियं पवत्तते[13] भावो ।
चरमं च एस भुंजति, सद्धाजणणं दुपक्खे वि[14] ॥

४३२८. किं च तन्नोवभुत्तं मे, परिणामासुइं सुइं ।
दिट्ठसारो सुहं झाति, चोदणे सेव सीदते[15] ॥

४३२९. 'तिविधं तु वोसिरेहिति'[16], ताहे[17] उक्कोसगाइ दव्वाइं ।
मग्गित्ता[18] जयणाए, चरिमाहारं[19] पदंसेंति ॥

४३३०. पासित्तु[20] ताणि कोई[21], तीरप्पत्तस्स किं ममेतेहिं ।
वेरग्गमणुप्पत्तो, संवेगपरायणो होति[22] ॥

---

१. भरहेरवते य (निभा ३८८५) ।
२. जीभा ४३४ ।
३. एते (अ, ब) ।
४. परिहायंती (जीभा), परिभावंता (ब) ।
५. दोच्चेव (जीभा) ।
६. दो गीय किं निमित्तं ? (जीभा ४३७) ।
७. निभा ३८८६ ।
८. समुज्जलइ (जीभा ४३८) ।
९. ० वंजणा य पाणं च (स), गाथा का पूर्वार्द्ध निभा (३८८७) में इस प्रकार है— णव सत्तए दसमवित्थरे य बितियं च पाणगं दव्वं ।
१०. उवहरइ (जीभा ४३९), उवहणिउं (निभा) ।
११. पुव्वज्झुसिओ सुओवइट्ठो वा (जीभा ४४०) ।
१२. सो सेहा (निभा ३८८८), सो से जहा (अ) ।
१३. पयत्तते (स) ।
१४. निभा ३८८९, जीभा (४४१) में गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
अहव कहिंचुप्पज्जति, तह वि णियत्तेइ एवं तु,
१५. सीदतो (स), सीययो (जीभा ४४२), निभा (३८९०) में यह गाथा इस प्रकार है—
किं पत्तो णो भुत्तं मे, परिणामासुयं मुयं ।
दिट्ठसारो सयं जाओ, चोदेण से सीसता ॥
जीभा (४४३) में इस गाथा के बाद एक गाथा अधिक मिलती है—
चरिमं च एस भुंजति, सद्धाजणणं च होति उभए वि ।
सजयगिहियाणं वा, तो देंति इमीय तु विही य ॥
१६. तिविधं वोसिरिओ सो (निभा ३८९१), ० वोसिरेहिं (अ) ।
१७. सो ता (जीभा ४४४), सो ताहे (अ), तु सो ताहे (क) ।
१८. मग्गंता (स, निभा ३८९१), लग्गंता (ब, क) ।
१९. चरमा० (ब) ।
२०. पासिता (स, क) ।
२१. काती (क) ।
२२. जीभा ४४५, निभा ३८९२ ।
इस गाथा के बाद जीभा (४४६) में निम्न गाथा अतिरिक्त मिलती है—
देसं भोच्चा कोई,धिद्धीकार इमेण किं मे त्ति ।
वेरग्गमणुप्पत्तो, संवेगपरायणो होति ॥
निभा (३८९३) में इस गाथा का पूर्वार्द्ध कुछ पाठांतर के साथ इस प्रकार है—देसं भोच्चा कोई, धिक्कारं करेइ इमेहि कज्जेहिं ।
मुद्रित पुस्तक तथा हस्तप्रतियों में यह गाथा अनुपलब्ध है । टीकाकार ने भी इसका कोई उल्लेख नहीं किया है । किंतु यह गाथा यहां प्रासंगिक लगती है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४३३१. सव्वं भोच्चा कोई, मणुण्णरसपरिणतो[1] भवेज्जाही ।
तं[2] चेवऽणुबंधंतो, देसं सव्वं च गेहीए[3] ॥ दारं ॥

४३३२. विगतीकयाणुबंधे, आहारणुबंधणाइ वुच्छेदो ।
परिहायमाणदव्वे, गुणवुड्ढि[4] समाधिअणुकंपा[5] ॥

४३३३. 'दवियपरिणामतो वा[6], हावेंति[7] दिणे दिणे व जा तिन्नि ।
बिंति न लब्भति[8] दुलभे, 'सुलभम्मि य[9] होतिमा जतणा ॥

४३३४. आहारे ताव छिंदाही, गेधिं तो णं[10] चइस्ससि[11] ।
जं 'वा भुत्तं न'[12] पुव्वं ते, तीरं पत्तो तमिच्छसि[13] ॥दारं ॥

४३३५. वट्टंति अपरितंता, दिया व[14] रातो व सव्वपडिकम्मं[15] ।
पडियरगा गुणरयणा[16], कम्मरयं निज्जरेमाणा ॥

४३३६. जो जत्थ होति कुसलो, सो तु न हावेति तं सति बलम्मि ।
उज्जुत्ता सनियोगे, तस्स वि दीवेंति तं सद्धं[17] ॥दारं ॥

४३३७. देहवियोगो खिप्पं, व होज्ज अहवा वि कालहरणेणं[18] ।
दोण्हं पि निज्जरा वद्धमाण[19] गच्छो उ एतट्ठा[20] ॥

४३३८. कम्ममसंखेज्जभवं, खवेति अणुसमयमेव आउत्तो ।
अन्नतरगम्मि[21] जोगे, सज्झायम्मी[22] विसेसेण ॥

४३३९. कम्ममसंखेज्जभवं, खवेति अणुसमयमेव आउत्तो ।
अन्नतरगम्मि जोगे, काउस्सग्गे विसेसेण[23] ॥

४३४०. कम्ममसंखेज्जभवं, खवेति अणुसमयमेव आउत्तो ।
अन्नतरगम्मि जोगे, वेयावच्चे विसेसेण[24] ॥

४३४१. कम्ममसंखेज्जभवं, खवेति अणुसमयमेव आउत्तो ।
अन्नतरगम्मि जोगे, विसेसतो उत्तिमट्ठम्मि[25] ॥दारं ॥

---

१. ० विपरिणतो (निभा) ।
२. ते (निभा) ।
३. गेही या (स), रोहीया (जीभा ४४७), रोचीया (निभा ३८९५) ।
४. गुणवड्ढि (स) ।
५. जीभा ४४८, निभा ३८९६ ।
६. ० परिणामं ता (जीभा ४४९) ।
७. हाविति (स), हावेति (जीभा) ।
८. लभंति (जीभा) ।
९. वि (जीभा), व (निभा ३८९७) ।
१०. तू (अ), उ (ब, क) ।
११. च इच्छसि (अ), ० स्सति (स) ।
१२. वा सत्तं न (स), भुत्तं न हु (जीभा ४५०) ।
१३. न मुच्छसि (निभा ३८९८) ।
१४. वि (क) ।
१५. ० परि ० (जीभा, निभा) ।
१६. गुणवरगा (निभा ३८९९), गुणयरगा (अ, स), मुणिवरगा (जीभा ४५१) ।
१७. सड्ढं (निभा, ३९००, जीभा ४५२) ।
१८. कालकरणेणं (जीभा ४५३) ।
१९. वट्टमाण (ब, क) ।
२०. एगट्ठा (क, निभा ३९०१) ।
२१. ० यरम्मि वि (जीभा ४५४) अयेऽपि ।
२२. ० यम्मि (अ, ब, निभा ३९०२) ।
२३. जीभा ४५५, निभा ३९०३ ।
२४. जीभा ४५६, निभा ३९०४ ।
२५. उत्तम ० (ब, अ), जीभा ४५७, निभा ३९०५ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४३४२. संथारो उत्तिमट्ठे, भूमिसिलाफलगमादिं नातव्वे[1] ।
संथारप(ट्ट)मादी, दुगचीरा तू बहू वावि ॥

४३४३. तह वि य संथरमाणे[2], कुसमादी णिंतु[3] अझुसिरतणाइं ।
तेसऽसति असंथरणे, 'झुसिरतणाई ततो पच्छा'[4] ॥

४३४४. कोयव[5] पावारग नवय, 'तूलि आलिंगिणी'[6] य भूमीए ।
एमेव अणहियासे, संथारगमादि पल्लंके[7] ॥

४३४५. पडिलेहण संथारं, पाणगउव्वत्तणादि निग्गमणं ।
सयमेव करेति सहू, 'असहुस्स करेंति अन्ने उ'[8] ॥

४३४६. कायोवचितो बलवं, निक्खमणपवेसणं च से कुणति ।
तह वि य अविसहमाणं[9], संथारगतं तु संचारे[10] ॥

४३४७. संथारो 'मउओ तस्स'[11], समाधिहेउं तु होति कातव्वो ।
तह वि य अविसहमाणे, समाहिहेउं उदाहरणं[12] ॥दारं ॥

४३४८. धीरपुरिसपण्णत्ते, सप्पुरिसनिसेविते परमरम्मे ।
धण्णा सिलातलगता[13], निरावयक्खा निवज्जंति[14] ॥

४३४९. जदि ताव सावयाकुल, गिरि-कंदर विसमकडगदुग्गेसु ।
साधेंति[15] उत्तिमट्ठं, धितिधणियसहायगा धीरा[16] ॥

४३५०. किं पुण अणगारसहायगेण अण्णोण्णसंगहबलेणं ।
'परलोइए न सक्का'[17], साहेउं उत्तमो[18] अट्ठो ॥

४३५१. जिणवयणमप्पमेयं, मधुरं[19] कण्णाहुतिं[20] सुणेंताणं[21] ।
सक्का हु साहुमज्झे[22], संसारमहोदधिं तरिउं ॥

---

१. जीभा ४५८, निभा (३९०६) में यह गाथा कुछ अंतर के साथ इस प्रकार है—
भूमि सिलाए फलए, तणाए संथार उत्तिमट्ठम्मि ।
दोमादि संथरंति, बितियपद अणधियासे य ॥
२. असंथर ० (जीभा, स) ।
३. तिंत्रि (जीभा) ।
४. व्वं होज्ज सुसिरा वि तो पच्छा (जीभा, ४५९) ।
५. कोवव (अ) ।
६. तूलीयालि ० (क) ।
७. जीभा (४६०) में इस गाथा का पूर्वार्द्ध इस प्रकार है—
तह वि असंथर कोतव, पावारग णवय तूलि भूमीए ।
निभा ३९०७ में गाथा का पूर्वार्द्ध इस प्रकार है — तण कंबल पावारे, कोयवतूली य भूमिसंथारे ।
८. उस्सग्गाणेतरे करते (निभा ३९०८), जीभा ४६१ ।
९. ० माणे (जीभा), ० माणो(ब) ।
१०. संथारे (जीभा ४६२), निभा ३९१० ।
११. तस्स मउतो (जीभा ४६३), मउतो तस्स (ब) ।
१२. निभा (३९०९) में कुछ अतर के साथ निम्न गाथा मिलती है—
उव्वत्तणणीहरणं, मओ उ अधियासणाए कायव्वो ।
संथारऽसमाहीए, समाहिहेउं उदाहरण ॥
१३. ० तलतले (जीभा ४६४), ० वलगते (अ) ।
१४. निभा ३९११ ।
१५. साहेंति (अ) ।
१६. जीभा ४६५, निभा ३९१२ ।
१७. ० लोइयं न सक्कइ (निभा ३९१३) ।
१८. अप्पणो (जीभा ४६६) ।
१९. निउणं (जीभा) ।
२०. ० हूतिं (निभा ३९१४) ।
२१. सुणेंतेणं (निभा, जीभा ४६७) ।
२२. ० मज्झं (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४३५२. सव्वे सव्वद्धाऐ, सव्वण्णू सव्वकम्मभूमीसु ।
सव्वगुरु सव्वमहिता, सव्वे मेरुम्मि अभिसित्ता[१] ॥

४३५३. सव्वाहि वि[२] लद्धीहिं, सव्वे वि परीसहे पराइत्ता ।
सव्वे वि य तित्थगरा, 'पादोवगया तु सिद्धिगया'[३] ॥

४३५४. अवसेसा अणगारा, तीत-पडुप्पण्णऽणागता सव्वे ।
केई पादोवगया, पच्चक्खाणिंगिणिं[४] केई[५] ॥

४३५५. सव्वाओ अज्जाओ, सव्वे वि य पढमसंघयणवज्जा ।
सव्वे य देसविरता, पच्चक्खाणेण तु मरंति[६] ॥

४३५६. सव्वसुहप्पभवाओ, जीवियसाराउ 'सव्वजणगाओ'[७] ।
आहाराओ रतणं, न 'विज्जति हु'[८] उत्तमं लोए[९] ॥

४३५७. विग्गहगते य सिद्धे, 'य मोत्तु'[१०] लोगम्मि जत्तिया जीवा ।
सव्वे सव्वावत्थं, आहारे होंति उवउत्ता[११] ॥

४३५८. तं तारिसगं[१२] रयणं, सारं जं सव्वलोगरयणाणं ।
सव्वं परिच्चइत्ता, पादोवगता पविहरंति[१३] ॥

४३५९. एयं पादोवगमं, निप्पडिकम्मं जिणेहि पण्णत्तं ।
जं सोऊणं खमओ[१४], ववसायपरक्कमं[१५] कुणति ॥दारं ॥

४३६०. कोई[१६] परीसहेहिं, वाउलिओ वेयणट्टिओ[१७] वावि ।
ओभासेज्ज कयाई, पढमं बितियं च आसज्ज ॥

४३६१. गीतत्थमगीतत्थं, सारेउ मतिविबोहणं[१८] काउं ।
तो पडिबोहिय[१९] छड्डे, पढमे पगयं सिया बितियं[२०] ॥

४३६२. हंदी[२१] परीसहचमू, जोहेतव्वा मणेण काएणं ।
तो मरणदेसकाले, कवयब्भूतो[२२] उ आहारो ॥

---

१. जीभा ४६८, निभा ३९१५ ।
२. व (निभा ३९१६) ।
३. पायोवगमेण सिद्धि ० (जीभा ४६९) ।
४. ०णिंगिणी (जीभा ४७०), ० णिंगणि (स) ।
५. कोइ (अ), केति (स), निभा ३९१७ ।
६. जीभा ४७१, निभा ३९१८ ।
७. ० जणितातो (निभा ३९१९), ० जणयाओ (जीभा, ४७२) ।
८. विज्जा इह (स), विज्जए (जीभा) ।
९. अण्णं (जीभा) ।
१०. मोत्तुं (निभा ३९२०), पमोत्तुं (स) ।
११. आयत्ता (जीभा), आउत्ता (अ, क), आयव्वा (स), जीभा (४७३) में गाथा का पूर्वार्द्ध इस प्रकार है—
सेलेसिसिद्ध विग्गह, केवलिओघायए य मोत्तूणं ।
१२. सारिसगं (निभा ३९२१) ।
१३. परिहरंति (अ), जीभा ४७४ ।
१४. परिण्णी (जीभा ४७५) ।
१५. ० परिक्कमं (जीभा, क), निभा ३९२२ ।
१६. केई (निभा), कोपि (जीभा) ।
१७. वेतणुड्डुतो (निभा ३९२३), वेयणट्टिओ (ब, जीभा ४७६)
१८. मतिविसोहणं (निभा ३९२४), तह विबो ० (जीभा ४७७) ।
१९. ० बोहय (ब, जीभा) ।
२०. बितिते (स) ।
२१. हंदि दु (जीभा ४७८) ।
२२. कवयतुल्लो (निभा ३९२५), कवयभूतो (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४३६३. संगामदुगं महसिलरधमुसल[1] चेव 'परूवणा तस्स'[2] ।
असुरसुरिंदावरणं, चेडग एगो गह सरस्स[3] ॥

४३६४. महसिल कंटे तहियं, वट्टंते कूणिओ[4] उ रधिएणं ।
रुक्खग्गविलग्गेणं[5], 'पट्टे पहतो उ'[6] कणगेणं ॥

४३६५. उप्फिडितुं सो कणगो[7], कवयावरणम्मि तो ततो पडितो ।
तो तस्स कूणिएणं[8], 'छिन्नं सीसं'[9] खुरप्पेणं ॥

४३६६. दिट्ठंतस्सोवणओ, कवयत्थाणी इधं तहाहारो ।
सत्तू परीसहा खलु, आराहण रज्जथाणीया[10] ॥

४३६७. जह वाऽऽउंटिय[11] पादे, पायं काऊण हत्थिणो पुरिसो ।
आरुभति तह परिण्णी[12], आहारेणं तु झाणवरं[13] ॥

४३६८. उवगरणेहि विहूणो, जध वा पुरिसो न साधए कज्जं ।
एवाहारपरिण्णी, दिट्ठंता तत्थिमे होंति[14] ॥

४३६९. लावए[15] पवए जोधे, संगामे पंथिगे[16] 'ति य'[17] ।
आउरे सिक्खए चेव, 'दिट्ठंतो कवए ति या'[18] ॥

४३७०. दत्तेणं[19] नावाए, आउह-पहुवाहणोसहेहिं[20] च ।
उवगरणेहिं च विणा, जहसंखमसाधगा सव्वे ॥

४३७१. एवाहारेण विणा, समाधिकामो न साहएँ समाधिं ।
तम्हा समाधिहेऊ[21], दातव्वो[22] तस्स आहारो[23] ॥

---

१. ० मुसिल (स)।
२. परूवणया (स)।
३. निभा (३९२६), एवं जीभा (४७९) में गाथा का पूर्वार्द्ध इस प्रकार है—
संगामदुगपरूवण, चेडग एगसर उग्गहो चेव।
णाय संगामदुगं, महसिल रहमुसलवण्णणा तेसिं ॥
४. कोणिओ (क)।
५. ० वलग्गेण (जीभा)।
६. पहतो पट्टम्मि (जीभा ४८०)।
७. करणे (अ)।
८. कोणिएणं (जीभा ४८१)।
९. सीसं छिन्नं (ब)।
१०. जीभा. ४८२।
११. वा उंडिय (अ)।
१२. परिण्णि (स)।
१३. जीभा. ४८३।
१४. जीभा. ४८४, ४३६४ से लेकर ४३६८ तक की पांच गाथाओं के स्थान पर निभा (३९२८, ३९२९) में निम्न दो गाथाएं मिलती हैं—
संगामे साहसितो, कणतेणं तत्थ आहतो संतो।
सत्तुं पुव्वविलग्गं, आहणइ उ मंडलग्गेणं ॥
रुक्खविलग्गो रुधितो, पहणइ कणएण कूणियं सीसे।
अणहो य कूणिओ से, हरति सिरमंडलग्गेणं ॥
१५. लवए (जीभा), लोवए (निभा ३९२७)।
१६. पत्थिए (जीभा ४८५)।
१७. वि य (क)।
१८. दिट्ठतसमाहिकामेतो (जीभा)।
१९. दावेणं (स)।
२०. तहोवाह ० (जीभा ४८६)।
२१. ० हेउं (जीभा ४८७))।
२२. काय व्वो (ब, क)।
२३. इस गाथा के बाद जीभा (४८८) में एक अधिक गाथा मिलती है—
धितिसंधयण विजुत्तो, असमत्थो परीसहेहियासेउं।
फिट्टति चंदगविज्झा, तेणं विणा कवयभूएण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४३७२. सरीरमुज्झियं जेण, को संगो तस्स भोयणे ।
समाधिसंधणाहेउं[1], दिज्जए सो[2] उ अंतिए[3] ॥

४३७३. सुद्धं एसित्तु ठावेंति[4], हाणीए[5] वा दिणे दिणे ।
पुव्वुत्ताए उ जयणाए, तं तु गोवेंति[6] अन्नहिं ॥दारं ॥

४३७४. निव्वाघाएणेवं, कालगयविगिंचणा 'उ विधिपुव्वं'[7] ।
कातव्व चिंधकरणं, अचिंधकरणे भवे गुरुगा[8] ॥

४३७५. 'सरीर-उवगरणम्मि य'[9], अचिंधकरणम्मि 'सो उ रातिणिओ'[10] ।
मग्गणगवेसणाए[11], गामाणं घातणं कुणति ॥दारं ॥

४३७६. न पगासेज्ज लहुत्तं, परीसहुदएण[12] होज्ज वाघातो ।
उप्पण्णे वाघाते, जो गीतत्थाण 'उ उवाओ'[13] ॥

४३७७. को गीताण उवाओ, 'संलेहगतो ठविज्जते'[14] अन्नो ।
उच्छहते जो अन्नो[15], इतरो उ गिलाणपडिकम्मं[16] ॥

४३७८. वसभो वा ठाविज्जति, अण्णस्सऽसतीय तम्मि संथारे ।
कालगतो 'त्ति य'[17] काउं, संझाकालम्मि णीणेंति[18] ॥

४३७९. एवं 'तू णायम्मी'[19], दंडिगमादीहिं[20] होति 'जयणा उ'[21] ।
सय गमणपेसणं वा, खिंसण चउरो अणुग्घाता ॥दारं ॥

४३८०. सपरक्कमे[22] जो उ गमो, नियमा अपरक्कमम्मि सो चेव ।
नवरं पुण णाणत्तं, खीणे जंघाबले गच्छे[23] ॥

---

१. समाधिसंवरणा ० (निभा ३९३०)।
२. सि (जीभा ४८९)।
३. अंततो (निभा), अन्नए, (अ), अंतए (स)।
४. ठावेंता (क), ठावेंती (अ)।
५. हाणी उ (निभा ३९३१), हाणिओ (क, स, जीभा ४९०)।
६. गोविंति (अ, क)।
७. विहीपु ० (जीभा ४९१)।
८. निभा (३९३२) में यह गाथा इस प्रकार है—
आयरितो कुंडिपदं, जे मूलं सिद्धिवासवसहीए।
चिंधकरण कायव्वं, अचिंधकरणे भवे गुरुगा ॥
९. सारीर उवकरणम्मि (क, अ), सरीरे उव ० (निभा ३९३३), उवकरण सरीरम्मि य (जीभा)।
१०. मंडिओ तहियं (जीभा ४९२)।
११. ० सणया (अ)।
१२. परिसह उद ० (ब)।
१३. उवाघातो (निभा ३९३४), उववातो (क, स), जीभा ४९३।
१४. संलेहगउट्ठविज्जए (जीभा ४९४)।
१५. यऽण्णो (जीभा), जा वण्णो (स)।
१६. ० परिक ० (स, जीभा)।
१७. वि य (क)।
१८. णीणिंति (अ), जीभा ४९५।
१९. तु णायम्मि (क, स)।
२०. डंडिय ० (स, जीभा, ४९६)।
२१. जयणेसा (जीभा), जयणा वा (क), निभा (३९३५) में गाथा का पूर्वार्द्ध इस प्रकार है—
दुविधा णायमणाया, दुविधा णाया य दंडमादीहिं।
२२. सपरिक्क ० (अ)।
२३. तु ० जीभा ४९७, ४९८, ४३८०-८१ इन दोनों गाथाओं के स्थान पर निभा (३९३६) में निम्न गाथा मिलती है—
सपरक्कमे जो उ गमो, णियमा अपरक्कमम्मि सो चेव।
पुव्वी रोगायंकेहि, नवरि अभिभूतो बालमरणं परिणतो य ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४३८१. एमेव[1] आणुपुव्वी, रोगायंकेहि नवरि अभिभूतो[2] ।
बालमरणं पि 'सिया हु'[3], मरिज्ज व[4] इमेहि हेतूहिं ॥नि. ५४४ ॥

४३८२. वालच्छ-भल्ल[5] 'विस विसूइकएँ आयंक[6] सत्रिकोसलए ।
ऊसासगद्ध रज्जू, ओमऽसिवऽभिघायसंबद्धो[7] ॥नि. ५४५ ॥

४३८३. वालेण गोणसादी[8], खदितो हुज्जाहि[9] सडिउमारद्धो ।
कण्णोट्ठणासिगादी, विभंगिया[10] अच्छभल्लेणं[11] ॥

४३८४. 'विसेण लद्धो होज्जा'[12], विसूइगा[13]वा सें[14] उट्ठिता होज्जा ।
आयंको वा कोई[15], खयमादी उट्ठिओ होज्जा ॥दारं ॥

४३८५. तिण्णि तु वारा किरिया, तस्स 'कय हवेज्ज नो य[16] उवसंतो'[17] ।
जध वोमे कोसलेण, सण्णीणं[18] पंच उ सयाइं ॥दारं ॥

४३८६. साहूणं[19] रुद्धाइं, अहयं भत्तं तु[20] तुज्झ[21] दाहामो ।
लाभंतरं च नाउं, लुद्धेणं धण्णविक्कीयं[22] ॥

४३८७. तो णाउ वित्तिछेदं, ऊसासनिरोधमादिणि कयाइ ।
'अणधीयासे तेहिं'[23], 'वेदण साधूहि ओमम्मि'[24] ॥

४३८८. अभिघातो वा विज्जू, गिरिभित्ती कोणगादि वा हुज्जा ।
संबद्धहत्थपादादओ[25], व वातेण[26] होज्जाहि ॥

४३८९. एतेहि कारणेहिं, पंडितमरणं तु काउ असमत्थो ।
ऊसासगद्धपट्ठं[27], रज्जुग्गहणं व कुज्जाही[28] ॥नि. ५४६ ॥

---

१. वाघाति (जीभा ४९९) ।
२. अतिभूतो (क) ।
३. य सिया (स, जीभा) ।
४. उ (अ, जीभा) ।
५. भिल्ल (स) ।
६. विसगय विसूगियाऽऽयंक (जीभा ५००) ।
७. ० अहिघाय संबंधो (ब) ।
८. ० साइण (ब, जीभा ५०१) ।
९. हुज्जा (अ) ।
१०. विरुगिया (अ), विभंगया (ब) ।
११. वच्छ ० (ब, स) ।
१२. लद्धो व विसेणं तू (जीभा ५०२) ।
१३. व विसूतिगा (अ, क) ।
१४. को (स) ।
१५. कोती (क), कोयि (स) ।
१६. तो उ (अ, ब) ।
१७. कया ण वि उवसमो जातो (जीभा ५०३) ।
१८. सण्णिणं (अ, क) ।
१९. सण्णीण (जीभा ५०४) ।
२०. x (अ, ब) ।
२१. तुब्भ (जीभा) ।
२२. विक्कियं (क) ।
२३. ० यासितेहिं (अ, क) ।
२४. वेडणं तु साहूहिं ओमम्मि (अ), खुहवेदण ओमे साहूहि (जीभा ५०५) ।
इस गाथा के बाद जीभा (५०६) में निम्न गाथा और मिलती है—
एवं ता कोसलए, अण्णम्मि वि ओमो होज्ज एमेव ।
सहसा छिण्णद्धाणे, असिवग्गहिया व कुज्जाहि ॥
२५. ० पादादाइ तो (अ) ।
२६. वादेण (जीभा ५०७) ।
२७. ० पच्चं (क) ।
२८. तु, जीभा ५०८, ५०९ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४३९०. अणुपुव्वविहारीणं[१], उस्सग्गनिवाइयाण जा सोधी ।
विहरंतए न सोधी, भणिता आहारलोवेण[२] ॥दारं ॥

४३९१. पव्वज्जादी काउं, नेतव्वं जाव होतऽवोच्छित्ती ।
पंच तुलेऊण 'य तो'[३], इंगिणिमरणं 'परिणतो य'[४] ॥नि. ५४७ ॥

४३९२. आयप्परपडिकम्मं[५], भत्तपरिण्णाय दो अणुण्णाता ।
परिवज्जिया य इंगिणि, चउव्विधाहारविरती य[६] ॥नि. ५४८ ॥

४३९३. ठाण-निसीय[७]-तुयट्टण, इत्तरियाइं[८] जधासमाधीए ।
सयमेव य सो कुणती, उवसग्गपरीसहऽहियासे[९] ॥नि. ५४९ ॥

४३९४. संघयणधितीजुत्तो, नवदसपुव्वा सुतेण अंगा[१०] वा ।
इंगिणि पादोवगमं, नीहारी वा अनीहारी[११] ॥नि. ५५० ॥

४३९५. पादोवगमं भणियं, समविसमे पादवो जहा[१२] पडितो ।
नवरं परप्पओगा, कंपेज्ज जधा चलतरुव्व[१३] ॥नि. ५५१ ॥

४३९६. तसपाणबीयरहिते, विच्छिन्नवियारथंडिलविसुद्धे ।
'निद्दोसा निद्दोसे, उवेंति'[१४] अब्भुज्जयं मरणं[१५] ॥

४३९७. पुव्वभवियवेरेणं, देवो साहरति कोवि[१६] पाताले ।
मा सो चरमसरीरो, न वेदणं किंचि पाविहिति ॥

४३९८. उप्पन्ने उवसग्गे, दिव्वे[१७] माणुस्सए तिरिक्खे[१८] य ।
सव्वे पराइणित्ता[१९], पाओवगता पविहरंति[२०] ॥

४३९९. जह नाम असी कोसे[२१], अण्णो 'कोसे असी वि खलु अण्णे'[२२] ।
इय मे अन्नो देहो, अन्नो जीवो त्ति मण्णंति[२३] ॥

---

१. ०विहारेणं (जीभा)।
२. ० लोवा या (जीभा ५१०) ०लोवे य, (ब,स), जीभा (५११) में इस गाथा के बाद एक अतिरिक्त गाथा मिलती है—
एसा पच्चक्खाणे, आय परे भणिय निज्जवाण विही ।
इंगिणि पायोवगमे, वोच्छामी आयणिज्जवणं ॥
३. ततो (ब), य सो (स, जीभा ५१२, निभा ३९४०)।
४. ववसिओ उ (जीभा)।
५. ० परिक्कम्मं (जीभा ५१३)।
६. निभा ३९३७।
७. णिसीयण (निभा ३९३८)।
८. मित्तिरि० (निभा), इत्तिरि० (अ)।
९. ० यासी (अ, जीभा ५१४)।
१०. संगा (निभा ३९३९)।
११. जीभा (५१५) में गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
इंगिणिमरणं नियमा, पडिवज्जति एरिसो साहू।
१२. जह (अ, ब) य जह (निभा)।
१३. ० तरुस्स (निभा ३९४२)।
१४. णिद्देसा णिद्देसे भवंति (निभा ३९४३)।
१५. जीभा ५२१।
१६. कोति (जीभा ५२२, निभा ३९४४, ३९५६)।
१७. सव्वे (अ)।
१८. तिरिच्छे (ब)।
१९. पराइणितू (क), पराजणित्ता (निभा ३९४५)।
२०. परिह० (स, निभा), जीभा ५२३।
२१. कोसी (अ, ब, निभा)।
२२. असी वि कोसी वि दो वि खलु अण्णे (निभा ३९४६)।
२३. मन्नेति (ब), मन्नेई (अ), जीभा ५४०।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४४००. पुव्वावरदाहिणउत्तरेहि, वातेहिं आवयंतेहिं ।
जह न[1] वि कंपति मेरू, तध ते झाणाउ न चलंति[2] ॥

४४०१. पढमम्मि य संघयणे, वट्टंता सेलकुड्डुसामाणा ।
तेसिं पि य वुच्छेदो, चोद्दसपुव्वीण वोच्छेदे[3] ॥

४४०२. 'दिव्वमणुया उ दुग तिग, अस्से'[4] पक्खेवगं सिया कुज्जा ।
वोसट्ठचत्तदेहो, अधाउयं कोइ पालेज्जा[5] ॥

४४०३. अणुलोमा पडिलोमा[6], दुगं तु उभयसहिता तिगं होति ।
अधवा चित्तमचित्तं, दुगं तिगं मीसगसमग्गं[7] ॥

४४०४. पुढवि-दग-अगणि-मारुय-वणस्सति तसेसु कोवि[8] साहरति ।
वोसट्ठचत्तदेहो, अधाउयं कोवि पालेज्जा[9] ॥

४४०५. एगंतनिज्जरा से, दुविधा आराधणा धुवा तस्स ।
अंतकिरियं[10] व साधू, करेज्ज देवोववत्तिं वा[11] ॥

४४०६. मज्जणगंधं पुप्फोवयारपरिचारणं[12] सिया[13] कुज्जा ।
वोसट्ठचत्तदेहो, अधाउयं को वि पालेज्जा[14] ॥

४४०७. पुव्वभवियपेम्मेणं[15], देवो देवकुरु-उत्तरकुरासु ।
कोई[16] तु साहरेज्जा, सव्वसुहा जत्थ अणुभावा[17] ॥

४४०८. पुव्वभवियपेम्मेणं, देवो साहरति नागभवणम्मि ।
जहियं इट्ठा कंता, सव्वसुहा होंति अणुभावा[18] ॥

४४०९. बत्तीसलक्खणधरो, पाओवगतो य पागडसरीरो ।
पुरिसव्वेसिणि[19] कण्णा, राइविदिण्णा[20] तु गेण्हेज्जा ॥

---

१. X (अ)।
२. निभा ३९४७।
३. निभा ३९४८।
४. देव णर दुग तिगऽस्से केइ (जीभा ५२४)।
५. निभा ३९४९।
६. ० लोमं (ब, जीभा ५२५)।
७. निभा (३९५०) में गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
अहवा सचित्तमचित्तं दुगं तिग मीसगसमे य।
८. को उ (निभा ३९५१)।
९. जीभा ५२६।
१०. ० किरिया (निभा)।
११. निभा ३९५२, ३९६३, जीभा ५४१, ५५३।
१२. ० वकार (अ)।
१३. सया (निभा ३९५३)।
१४. व्यभा ४४१०।
१५. ० पेमेणं (ब)।
१६. कोयि (निभा ३९५४)।
१७. जीभा ५४४।
१८. जीभा ५४५, निभा ३९५५ निभा (३९५६) में इस गाथा के बाद निम्न गाथा अतिरिक्त मिलती है—
पुव्वभवियवेरेणं, देवो साहरति कोति पायाले।
मासो चरिमसरीरो, न वेदगं किंचि पाविहिति॥
१९. ० सद्देसिणि (निभा ३९५७)।
२०. रायवि ० (जीभा ५४६)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४४१०. मज्जणगंधं पुप्फोवयारपरियारणं 'सिया कुज्जा'[१] ।
वोसट्ठचत्तदेहो, अहाउयं कोवि पालेज्जा[२] ॥

४४११. नवंगसुत्तप्पडिबोहयाए[३], अट्ठारसरतिविसेसकुसलाए[४] ।
बावत्तरिकलापंडियाए, चोसट्ठिमहिलागुणेहिं[५] च[६] ॥

४४१२. दो सोय नेत्तमादी[७], नवंगसोया[८] हवंति 'एते तु'[९] ।
देसी भासऽट्ठारस, रतीविसेसा उ इगवीसं[१०] ॥

४४१३. कोसल्लमेक्कवीसइविधं[११] तु एमादिएहि तु गुणेहिं ।
जुत्ताएँ रूव-जोव्वण[१२]-विलाससलावण्णकलियाए[१३] ॥

४४१४. चउकण्णंसि[१४] रहस्से, रागेणं रायदिण्णपसराए ।
तिमि-मगरेहि व उदधीं, न खोभितो जो[१५] मणो मुणिणो[१६] ॥

४४१५. जाधे पराजिता सा, न समत्था सीलखंडणं काउं ।
नेऊण[१७] सेलसिहरं, तो 'से सिल मुंचए उवरिं'[१८] ॥

४४१६. एगंतनिज्जरा से, दुविधा आराहणा धुवा तस्स ।
अंतकिरियं[१९] व साधू, करेज्ज देवोववत्तिं[२०] वा[२१] ॥

४४१७. मुणिसुव्वयंतवासी[२२], 'खंदगदाहे य कुंभकारकडे'[२३] ।
देवी पुरंदरजसा, दंडगि[२४] पालक्क मरुगे[२५] य ॥

४४१८. पंचसता जंतेणं, 'रुट्ठेण पुरोहिएण मलिताइं'[२६] ।
रागद्दोसतुलग्गं, समकरणं चिंतयंतेहिं[२७] ॥

---

१. सया कुज्जा (निभा ३९५८), व कुज्जाहि (जीभा)
२. इस गाथा का उत्तरार्ध जीभा (५४७) में इस प्रकार है—
सा पवररायकण्णा, इमेहि जुत्ता गुणगणेहिं ।
३. नवअंग ० (ब) ।
४. गाथा के प्रथम चरण में इंद्रवज्रा छंद है ।
५. चोयट्ठि ० (अ, स) ।
६. जीभा (५४८) में यह गाथा इस प्रकार है—
णवयग सोयबोहिय, अट्ठारसरतिविसेसकुसला तु ।
चोयट्ठी महिलागुणा, णिउणा य बिसत्तरिकलाहिं ॥
७. ० मादिग (जीभा ५४९) ।
८. ० सुत्ता (ब) ।
९. एतेसु (ब) ।
१०. उगुवीसं (ब, जीभा), उक्कवीसं (अ), निभा (३९६०) में यह गाथा इस प्रकार मिलती है—
सोआती णवसोत्ता, अट्ठारसे होंति देसभासाओ ।
इगतीसरइविसेसा, कोसल्लं एक्कवीसतिहा ॥
११. कोसल्लमे व वीसइ० (जीभा ५५०) ।
१२. जुव्वणि (अ) ।
१३. ० लायण्ण ० (जीभा) ।
१४. ० णम्मि (ब) ।
१५. जा (निभा ३९६१) ।
१६. जीभा ५५१ ।
१७. णाऊण (स) ।
१८. सिलमुवरिं मुयति तस्स (जीभा ५५२), निभा ३९६२ ।
१९. ० किरिया (जीभा) ।
२०. देवोववायं (निभा) ।
२१. जीभा ५५३, ५४१, निभा ३९५२, ३९६३ ।
२२. ० सुव्वयंते० (ब, क, जीभा) ।
२३. खंदगमणगारकुंभकारकडं (जीभा ५२८), खंदगपमुहा य कुंभ ० (उनि ११३)
२४. दंडय (क), दंडति (स, निभा) ।
२५. मरुतो (ब, क), मरुते (निभा ३९६४) ।
२६. ० मलिया उ (जीभा ५२९); ० मिलियाइं (ब), ० मिलियाति (निभा ३९६५), बधिता तु पुरोहिएण रुट्ठेण (उनि ११४) ।
२७. ० यंतेणं (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४४१९. 'जंतेण करकतेण व, सत्थेण'[१] व सावएहि विविधेहिं ।
देहे विद्धंसंते[२], न य[३] ते झाणाउ फिट्टंति[४] ॥

४४२०. पडिणीययाएँ[५] कोई, अग्गिं 'से सव्वतो पदेज्जाहि[६] ।
पादोवगते[७] संते, जह[८] चाणक्कस्स 'व करीसे[९] ॥

४४२१. पडिणीययाएँ केई, चम्मं से खीलएहि[१०] विहुणित्ता[११] ।
महुघतमक्खियदेहं[१२], पिवीलियाणं तु देज्जाहि ॥

४४२२. जह सो चिलायपुत्तो, वोसट्ठ-निसट्ठ[१३] 'चत्तदेहो उ'[१४] ।
सोणियगंधेण पिवीलियाहि जह 'चालणिव्व कतो'[१५] ॥

४४२३. जध सो कालायसवेसिओ[१६], वि मोग्गल्लसेलसिहरम्मि[१७] ।
खइतो विउव्विऊणं, देवेण सियालरूवेणं[१८] ॥

४४२४. जह सो वंसिपदेसी[१९], वोसट्ठ-निसट्ठ[२०] 'चत्तदेहो उ'[२१] ।
वंसीपत्तेहिं[२२] विणिग्गतेहि आगासमुक्खित्तो[२३] ॥

४४२५. जधऽवंतीसुकुमालो, वोसट्ठ-निसट्ठ-चत्तदेहो ऊ ।
धीरो सपेल्लियाए, सिवाय[२४] खइओ तिरत्तेणं[२५] ॥

४४२६. जध ते गोट्ठट्ठाणे, वोसट्ठ-निसट्ठ-चत्तदेहागा ।
'उदगेण वुज्झमाणा[२६], 'वियरम्मि उ'[२७] संकरे लग्गा ॥

४४२७. बावीसमाणुपुव्वी[२८], तिरिक्ख[२९] मणुया व भंसणत्थाए[३०] ।
विसयाणुकंपरक्खण, करेज्ज देवा व मणुया वा ॥

---

१. जंतेहि करकएहि व सत्थेहि (जीभा ५३०)।
२. विद्धंसते (ब)।
३. हु (क)।
४. निभा (३९६६) में यह गाथा कुछ अंतर के साथ मिलती है—
जंतेण कतेण व सत्थेण व सावतेकेहि विविधेहिं।
देहे विद्धंसते, ण य ते ठाणाहि उ चलंति ॥
५. ० णीयाए (अ), पडिणीयता य (निभा ३९६७)।
६. सि पदेज्ज असुभपरिणामो (जीभा ५३१)।
७. ० गमण (निभा)।
८. जइ (निभा)।
९. वा करिसे (अ)।
१०. खेलतेहि (निभा ३९६८)।
११. विणिहित्ता (निभा), विहणित्ता (जीभा ५३२), विहिणित्ता (स)।
१२. महुघित ० (स)।
१३. X (ब)
१४. ० देहाओ (जीभा ५३३)।
१५. वालंकिओ धीरो (ब, स), चालंकिओ धीरो
(क. अ. निभा ३९६९)।
१६. कालायवेसितो (ब)।
१७. जीभा (५३४) में इसका पूर्वार्द्ध इस प्रकार है—
मोग्गल्लसेलसिहरे, जह सो कालासवेसिओ भगवं।
१८. निभा ३९७०।
१९. ० पदेसे (निभा ३९७१)।
२०. णिसिट्ठ (अ)।
२१. ० देहाओ (जीभा ५३५), ० देहो ऊ (क)।
२२. वंसीपातेहिं (जीभा)।
२३. ० मुज्झित्तो (जीभा)।
२४. सिवाते (निभा ३९७२)।
२५. जीभा ५३६।
२६. ० गेणु वुब्भ० (जीभा ५३७), ० गेण वुब्भ (ब, क)।
२७. वियरम्मी (जीभा), वेयकरम्मि (अ, निभा ३९७३),
विकरम्मि (स)।
२८. ० स आणु० (जीभा ५३९), ० माणुपुव्वि (निभा ३९७४)।
२९. तेरिक्ख (ब, क)।
३०. संसण० (ब), भंसणया (निभा)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४४२८. जह सा बत्तीसघडा, वोसट्ठ-निसट्ठ-चत्तदेहा उ[१] ।
धीरा घाएण उ दीविएण डिलयम्मि[२] ओलइया[३] ॥

४४२९. एवं पादोवगमं[४], निप्पडिकम्मं तु वण्णितं सुत्ते[५] ।
तित्थगर-गणहरेहि य, साहूहि य सेवियमुदारं ॥दारं ॥

४४३०. एसाऽऽगमववहारो, जधोवएसं[६] जधक्कमं कधितो ।
एत्तो सुतववहारं, सुण वच्छ! जधाणुपुव्वीए[७] ॥

४४३१. निज्जूढं[८] चोद्दसपुव्विएण जं भद्दबाहुणा सुत्तं ।
पंचविधो ववहारो, दुवालसंगस्स णवणीतं[९] ॥

४४३२. जो सुतमहिज्जति बहुं, सुत्तत्थं च निउणं न याणेति[१०] ।
कप्पे ववहारम्मि य, 'सो न'[११] पमाणं सुतधराणं ॥

४४३३. जो सुतमहिज्जति बहुं, सुत्तत्थं च निउणं वियाणाति ।
कप्पे ववहारम्मि य, सो उ पमाणं सुतधराणं[१२] ॥

४४३४. कप्पस्स य निज्जुत्तिं, ववहारस्सेव परमनिउणस्स ।
जो अत्थतो न जाणति, 'ववहारी सो'[१३] णऽणुण्णातो ॥

४४३५. कप्पस्स य निज्जुत्तिं, ववहारस्सेव परमनिउणस्स ।
जो अत्थतो[१४] विजाणति, ववहारी सो अणुण्णातो[१५] ॥

४४३६. तं चेवऽणुमज्जंते[१६], ववहारविधिं पउंजति जहुत्तं ।
एसो सुतववहारी, पण्णत्तो • धीरपुरिसेहिं ॥नि. ५५२ ॥

४४३७. एसो सुतववहारो, जहोवएसं जहक्कमं कहितो[१७] ।
आणाए ववहारं, सुण वच्छ! जहक्कमं वोच्छं[१८] ॥

४४३८. समणस्स उत्तिमट्ठे[१९], सल्लुद्धरणकरणे अभिमुहस्स ।
दूरत्था जत्थ भवे, छत्तीसगुणा उ आयरिया[२०] ॥नि. ५५३ ॥

---

१. ० देहागा (जीभा, ५३८)।
२. दियतंमि (स), दिलयम्मि (अ)।
३. निभा (३९७४) में इसका उत्तरार्ध इस प्रकार है—
धीरागतेण उ दीवितेण दिगलम्मि ओलइया।
४. पातोव० (अ), पाउव० (क)।
५. जिणेहि पण्णत्तं (जीभा ५५७),
० तु णीणयं सुत्ते (निभा ३९७५)।
७. अहाणु० (ब), ० पुव्वाणं (क), जीभा ५५९।
६,७. जहोव ० (अ)।
८. निव्वूढं (स)।
९. जीभा ५६०।
१०. याणाति (जीभा ५६१), वियाणाति (स)।
११. ण सो (जीभा), सो उ (स)।
१२. जीभा ५६२।
१३. सो ववहारी (जीभा ५६३)।
१४. अत्थितो (क)।
१५. जीभा ५६४।
१६. ० णुसज्जंतो (क), ० मज्जंता (अ)।
१७. कहिउं (अ)।
१८. जीभा ५६५।
१९. उत्तमट्ठे (ब, क)।
२०. जीभा ५६६।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४४३९. *अपरक्कमो मि जातो, गंतुं जे कारणं तु उप्पण्णं ।*
अट्ठारसमन्नतरे, वसणगते इच्छिमो आणं[१] ॥**नि. ५५४**॥

४४४०. अपरक्कमो तवस्सी, गंतुं सो सोधिकारगसमीवं ।
आगंतु न चाएती, सो सोहिकरो वि देसातो[२] ॥

४४४१. अध पट्ठवेति[३] सीसं, देसंतरगमणनट्ठचेट्ठागो ।
इच्छामऽज्जो काउं, सोहिं तुब्भं सगासम्मि ॥

४४४२. सो वि अपरक्कमगती[४], सीसं पेसेति धारणाकुसलं ।
एयस्स दाणि पुरतो, 'करेति सोहिं'[५] जहावत्तं[६] ॥

४४४३. अपरक्कमो य सीसं, आणापरिणामगं परिच्छेज्जा ।
रुक्खे य बीजकाए, सुत्ते वाऽमोहणाधारिं[७] ॥

४४४४. दट्ठु महंतं[८] महीरुह[९], गणिओ[१०] रुक्खे विलग्गउं डेव ।
अपरिणय बेति 'तहिं न, वट्टति रुक्खे तु[११] आरोढुं'[१२] ॥

४४४५. किं वा मारेतव्वो, अहयं तो बेह[१३] डेव रुक्खातो ।
अतिपरिणामो भणती, इय होऊ[१४] अम्ह वेसिच्छा[१५] ॥

४४४६. बेति गुरू 'अह तं तू'[१६], अपरिच्छियत्थे[१७] पभाससे[१८] एवं ।
किं व मए तं[१९] भणितो, आरुभ रुक्खे तु सच्चित्ते? ॥

४४४७. तव-नियम-नाणरुक्खं, आरुभिउं भवमहण्णवावण्णं[२०] ।
संसारगड्डकूलं[२१], 'डेवेहि त्ती मए भणितो'[२२] ॥

---

१. जीभा. ५६७ ।
२. देसा उ (ब), जीभा (५६८) में ४४४० एवं ४४४१ गाथाओं के स्थान पर निम्न गाथा मिलती है—
अपरक्कमो तवस्सी, गंतुं न चतेइ सोहिकरमूलं ।
सीसं पेसेति तहिं, जहिच्छ सोहिं तुमसमीवे ॥
३. पत्थवेइ (अ, ब) ।
४. य परक्क ० (अ, ब, स) ।
५. करे विसोहिं (स) ।
६. जीभा (५६९) में गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
णातु तहिं जो जोग्गो, इमेण विहिणा परिच्छित्ता ॥
७. ० धारी (स), जीभा ५७० ।
८. महल्ल (जीभा) ।
९. महिरुहे (अ) ।
१०. भणितो (जीभा) ।
११. वि (ब) ।
१२. तयो णो वट्टति रुक्खे आरोढुं (जीभा ५७१) ।
१३. बेव (अ) ।
१४. होतू (अ) ।
१५. जीभा ५७२ ।
१६. अहय तू (क) ।
१७. अपरिगयत्थे (ब) ।
१८. अ भाससे (अ, जीभा ५७३) ।
१९. तो (अ, क), य (स) ।
२०. ० वावत्तं (जीभा), ० महण्णवे वत्तं (ब, क) ।
२१. संसारागडमूलं (जीभा), संसारगत्त ० (ब) ।
२२. डेवेहि मए तुमं भणितो (जीभा ५७४) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४४४८. जो पुण परिणामो खलु, आरुह भणितो तु[१] सो वि चिंतेती ।
नेच्छंति पावमेते, जीवाणं थावराणं पि[२] ॥

४४४९. किं पुण पंचेंदीणं, तं भवियव्वेत्थ[३] कारणेणं तु ।
आरुभण[४] ववसियं तू, वारेति गुरूऽववट्ठंभे[५] ॥

४४५०. एवाऽऽणह[६] बीयाइं, भणिते पडिसेध[७] अपरिणामो तु[८] ।
अतिपरिणामो पोट्टल[९], बंधूणं आगतो तत्थ[१०] ॥

४४५१. ते वि भणिया गुरूणं, मएँ भणियाऽऽणेह अंबिलीबीए[११] ।
न विरोधसमत्थाइं, सच्चित्ताइं व भणिताइं[१२] ॥

४४५२. तत्थ वि[१३] परिणामो तू[१४], भणती[१५] आणेमि[१६] केरिसाइं तू ।
कित्तियमित्ताइं[१७] वा, विरोहमविरोहजोग्गाइं ॥

४४५३. सो वि गुरूहिं भणितो, न ताव कज्जं पुणो भणीहामि[१८] ।
हसितो व मए 'ता वि'[१९], 'वीमंसत्थं व भणितो सि[२०] ॥

४४५४. पदमक्खरमुद्देसं, संधी-सुत्तत्थ-तदुभयं चेव[२१] ।
अक्खरवंजणसुद्धं, 'जह भणितं'[२२] सो[२३] परिकहेति[२४] ॥

४४५५. एवं[२५] परिच्छिऊणं, जोग्गं णाऊण पेसवे तं तु ।
वच्चाहि तस्सगासं[२६], सोहिं सोऊणमागच्छ[२७] ॥

४४५६. अध सो गतो उ तहियं, तस्स सगासम्मि सो करे सोधिं ।
दुग-तिग-चऊविसुद्धं[२८], तिविधे काले विगडभावो[२९] ॥

४४५७. दुविहं तु दप्प-कप्पे, तिविहं नाणादिणं तु अट्ठाए ।
दव्वे खेत्ते काले, भावे य चउव्विधं एयं[३०] ॥

---

१. वि (क) ।
२. जीभा. ५७५ ।
३. भवेय ० (अ) ।
४. आरभण (ब, क) ।
५. गुरुऽहरा थभे (जीभा ५७६), गुरु ववत्थंभे (अ), गुरुधुवत्थंभे (ब) ।
६. एवाणेह य (क, ब) ।
७. ० सेधे (ब) ।
८. तू (अ, स) ।
९. पुट्टिल (ब, क) ।
१०. तहियं (स), जीभा. ५७७ ।
११. अंबिलिबीयाइं (अ, स) ।
१२. गाथा का पूर्वार्द्ध जीभा (५७८) में इस प्रकार है—
पच्चाह गुरू ते तू, जहोदियाणेह अंबिलीबीए ।
१३. वि (स) ।
१४. परिणामगो हु तत्थ वि (जीभा ५७९) ।
१५. भणइ (ब, क) ।
१६. आणेमु (क) ।
१७. कत्तिय० (ब) ।
१८. हणी ० (अ) ।
१९. वा वि (अ)
२०. इस गाथा का उत्तरार्ध ब और क प्रति में नहीं है, जीभा ५८० ।
२१. पुट्ठो (जीभा) ।
२२. जहा भणित (स) ।
२३. मे (ब) ।
२४. कहेति सव्वं जहा भणितं (जीभा ५८१) ।
२५. एव (अ) ।
२६. तस्सेगासं (ब, क) ।
२७. ० आगच्छ (जीभा ५८२) ।
२८. चउव्विहसुद्धं (अ, ब)
२९. जीभा ५८३ ।
३०. जीभा ५८४ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४४५८. तिविधं[1] अतीतकाले, पच्चुप्पण्णे 'व सेवितं'[2] जं तु ।
सेविस्सं वा एस्से, पागडभावो विगडभावो ॥

४४५९. किं पुण आलोएती, अतियारं सो इमो य अतियारो ।
वयछक्कादीओ[3] खलु, नातव्वो आणुपुव्वीए[4] ॥

४४६०. वयछक्कं कायछक्कं, अकप्पो गिहिभायणं ।
पलियंक-निसेज्जा य, सिणाणं सोभवज्जणं[5] ॥

४४६१. तं पुण होज्जाऽऽसेविय, 'दप्पेणं अहव होज्ज कप्पेणं ।
दप्पेण दसविधं तू, इणमो वोच्छं समासेणं[6] ॥

४४६२. दप्प अकप्प निरालंब, चियत्ते अप्पसत्थ वीसत्थे[7] ।
अपरिच्छ अकडजोगी, अणाणुतावी[8] य णिस्संको[9] ॥

४४६३. एयं दप्पेण भवे, इणमन्नं कप्पियं मुणेयव्वं ।
चउवीसतीविहाणं, तमहं वोच्छं समासेणं ॥

४४६४. दंसण-नाण-चरित्ते, तव-पवयण-समिति-गुत्तिहेउं वा ।
साहम्मियवच्छल्लेण वावि कुलतो[10] गणस्सेव ॥

४४६५. संघस्सायरियस्स य, असहुस्स गिलाण-बालवुड्ढस्स ।
उदयग्गि-चोर-सावय, भय-कंतारावती वसणे[11] ॥

४४६६. एयऽन्नतरागाढे, सदंसणे नाण-चरण-सालंबो ।
पडिसेविउं[12] कयाई, होति 'समत्थो पसत्थेसु'[13] ॥

४४६७. ठावेउ[14] दप्पकप्पे, हेट्ठा दप्पस्स दसपदे ठावे ।
कप्पाधो चउवीसति, 'तेसिमहऽट्ठारसपदा उ'[15] ॥

४४६८. पढमस्स य कज्जस्सा, पढमेण पदेण सेवितं होज्जा[16] ।
पढमे छक्के अब्भिंतरं[17] तु पढमं भवे ठाणं[18] ॥

---

१. तिविहं (जीभा ५८५)।
२. विसेसियं (अ)।
३. ० छक्का ते (ब)।
४. जीभा ५८६।
५. जीभा ५८७।
६. जीभा ५८८।
७. वासत्थे (अ)।
८. ० ताविय (स), ०णुयावी (ब)।
९. णीसंको (जीभा ५८९)।
१०. कुलयो (जीभा ६०१), कुणतो (अ, क)।
११. जीभा ६०२।
१२. परिसे० (क, अ)।
१३. पसत्थो पस० (जीभा ६१५)।
१४. ठावेत्तु (जीभा ६१७)।
१५. ०पयाइं (क)।
१६. जं तु (स) सर्वत्र।
१७. अब्भं ० (स) सर्वत्र।
१८. जीभा ६१८।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४४६९ पढमस्स य कज्जस्सा, पढमेण पदेण सेवितं होज्जा[१] ।
पढमे छक्के अब्भिंतरं तु बीयं भवे ठाणं ॥

४४७०. पढमस्स य कज्जस्सा, पढमेण पदेण सेवितं होज्जा ।
पढमे छक्के अब्भितरं तु सेसेसु वि पएसु ॥

४४७१. पढमस्स य कज्जस्सा, पढमेण पदेण सेवियं होज्जा ।
बितिए छक्के अब्भितरं तु पढमं भवे ठाणं ॥

४४७२. पढमस्स य कज्जस्सा, पढमेण पदेण सेवियं होज्जा ।
बितिए छक्के अब्भितरं तु सेसेसु वि पएसु ॥

४४७३. पढमस्स य कज्जस्सा, पढमेण पदेण सेवियं होज्जा ।
ततिए छक्के[२] अब्भितरं तु पढमं भवे ठाणं ॥

४४७४. पढमस्स य[३] कज्जस्सा, पढमेण पदेण सेवियं होज्जा ।
ततिए छक्के[४] अब्भितरं तु सेसेसु वि पदेसु[५] ॥

४४७५. बितियस्स य कज्जस्सा, पढमेण पदेण सेवियं होज्जा ।
पढमे छक्के अब्भितरं तु पढमं भवे ठाणं[६] ॥

४४७६. बितियस्स य कज्जस्सा, पढमेण पदेण सेवियं होज्जा ।
पढमे छक्के अब्भितरं तु सेसेसु वि पएसु ॥

४४७७. बितियस्स य कज्जस्सा, पढमेण पदेण सेवियं होज्जा ।
बितिए छक्के अब्भितरं तु पढमं भवे ठाणं[७] ॥

४४७८. बितियस्स य कज्जस्सा, पढमेण पदेण सेवियं होज्जा ।
बितिए छक्के अब्भितरं तु सेसेसु वि पएसु ॥

४४७९. बितियस्स य कज्जस्सा, पढमेण पदेण सेवियं होज्जा ।
ततिए छक्के अब्भितरं तु पढमं भवे ठाणं ॥

४४८०. बितियस्स य कज्जस्सा, पढमेण पदेण सेवियं होज्जा ।
ततिए छक्के अब्भितरं तु सेसेसु वि पएसु ॥

---

१. जं तु (मु) सर्वत्र ।
२. छट्ठे (अ) ।
३. वि (अ, क) ।
४. छट्ठे (क) ।
५. इसके बाद हस्तप्रतियों में 'एया चेव परिवाडी एत्थुग्गहो उ भाणियव्वाओ' का उल्लेख मिलता है ।
६. जीभा ६२७ ।
७. ४४७७ से ४४८० तक की चारों गाथाएं हस्तप्रतियों में नहीं मिलती हैं । केवल टीका की मुद्रित प्रति में प्राप्त है । विषयवस्तु के क्रम में ये यहां संगत प्रतीत होती हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४४८१. पढमं कज्जं नामं, निक्कारणदप्पतो[1] 'पढमं पदं'[2] ।
पढमे छक्के पढमं, पाणइवाओ मुणेयव्वो[3] ॥

४४८२. 'एवं तु'[4] मुसावाओ, अदिन्न[5]-मेहुण-परिग्गहे चेव ।
बिति[6] छक्के पुढवादी, 'तति छक्के होयऽकप्पादी'[7] ॥

४४८३. निक्कारणदप्पेणं, अट्ठारसचारियाइ एताइं[8] ।
एवमकप्पादीसु[9] वि, एक्केक्कें 'होंति अट्ठरस'[10] ॥

४४८४. बितियं कज्जं कारण[11], पढमपदं तत्थ दंसणनिमित्तं ।
'पढमं छक्क'[12] वयाइं, तत्थ वि पढमं तु पाणवहो ॥

४४८५. दंसणमणुमुयंतेण[13], पुव्वकमेणं तु चारणीयाइं[14] ।
अट्ठारसठाणाइं, एवं नाणादि एक्केक्के ॥

४४८६. चउवीसऽट्ठारसगा[15], एवं एते हवंति कप्पम्मि ।
दस होंति अकप्पम्मी[16], सव्वसमासेण मुण[17] संखं[18] ॥

४४८७. सोऊण तस्स पडिसेवणं तु आलोयणं[19] कमविधिं व[20] ।
आगमपुरिसज्जातं[21], परियागबलं च खेत्तं च[22] ॥

४४८८. आराहेउं सव्वं, सो गंतूणं पुणो गुरुसगासं ।
तेसिं निवेदेति तधा, जधाणुपुव्विं गतं सव्वं[23] ॥

४४८९. सो ववहारविहिण्णू, अणुमज्जित्ता सुतोवदेसेणं ।
सीसस्स देति[24] आणं, तस्स इमं देहि पच्छित्तं ॥नि. ५५५ ॥

---

१. ० रणे द ० (अ)।
२. पढमापदं (अ, ब)।
३. जीभा (६२९) में यह गाथा कुछ अंतर से इस प्रकार मिलती है—
पढमं ठाणं दप्पो, दप्पो च्चिय तस्स वी भवे पढमं।
पढमं छक्कवयाइं, पाणऽतिवाओ तहिं पढमं ॥
४. बितियस्स (स)।
५. अदत्त (जीभा ६३०)।
६. बितिय (अ)।
७. ततिय छक्के अकप्पादी (ब, स)।
८. गाथा का पूर्वार्द्ध जीभा (६३१) में इस प्रकार है—
एवं दप्पपयम्मी, दप्पेणं चारिया उ अट्ठरस।
९. एवं कप्पा० (अ)।
१०. होंतिमट्ठ० (जीभा), होंति अट्ठारस (ब, स)।
११. कप्पो (जीभा ६३२)।
१२. पढम छक्के (ब)।
१३. दंसण अणुम्मुयंतो (स, जीभा ६३३)।
१४. चारिणी० (अ, ब)।
१५. ० अट्ठार० (जीभा ६३४)।
१६. ० प्पम्मि (अ, ब, स)।
१७. पुण (ब)।
१८. संखा (ब, क), इस गाथा के बाद जीभा (६३५) में निम्न अतिरिक्त गाथा मिलती है—
दप्पेणाऽऽसीयसतं, गाहाणं कप्पे होंति चत्तारि।
बत्तीसाऽऽयातेते, छस्सय होंती तु बारस य ॥
१९. ० यणा (ब)।
२०. तु (मु)।
२१. ० ज्जाइं (स)।
२२. जीभा ६३६।
२३. सव्वा (अ), इस गाथा के स्थान पर जीभा (६३७) में निम्न गाथा मिलती है—
अह सो गतो सदेसं, संतस्साऽऽलोइयल्लयं सव्वं।
आयरियाण कहेती, परियागबलं च खेत्तं च ॥
२४. देह (जीभा ६३८)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४४९०. पढमस्स य कज्जस्सा, दसविहमालोयणं निसामेत्ता ।
नक्खत्ते 'भे पीला'[१], सुक्के 'मासं तवं कुणसु'[२] ॥

४४९१. पढमस्स य कज्जस्सा, दसविहमालोयणं निसामेत्ता ।
नक्खत्ते भे पीला, 'चउमासतवं कुणसु सुक्के'[३] ॥

४४९२. पढमस्स य कज्जस्सा, दसविहमालोयणं निसामेत्ता ।
नक्खत्ते भे पीला, छम्मासतवं कुणसु[४] सुक्के ॥

४४९३. 'एवं ता'[५] उग्घाए, अणुघाते ताणि चेव किण्हम्मि ।
मासे चउमास-छमासियाणि छेदं अतो वुच्छं[६] ॥

४४९४. पढमस्स य कज्जस्सा, दसविहमालोयणं निसामेत्ता ।
नक्खत्ते भे पीला, कण्हे मासं तवं कुज्जा ॥

४४९५. पढमस्स य कज्जस्सा, दसविहमालोयणं निसामेत्ता ।
नक्खत्ते भे पीला, 'चउमासतवं कुणसु'[७] किण्हे ॥

४४९६. पढमस्स य कज्जस्सा, दसविहमालोयणं निसामेत्ता ।
नक्खत्ते भे पीला, छम्मासतवं कुणसु[८] किण्हे ॥

४४९७. छिंदंतु[९] व तं भाणं, गच्छंतु 'य तस्स'[१०] साधुणो मूलं ।
'अव्वावडा व'[११] गच्छे, अब्बितिया वा पविहरंतु[१२] ॥

४४९८. छब्भागंगुलपणगे, दसराय[१३] तिभागअद्धपण्णरसे ।
वीसाय तिभागूणं, छब्भागूणं तु पणुवीसे[१४] ॥

४४९९. मास-चउमास छक्के, अंगुल चउरो तहेव छच्चेव ।
एते छेदविगप्पा, नायव्व[१५] जहक्कमेणं तु ॥

---

१. पीला भे (जीभा) सर्वत्र ।
२. पणगं तवं कुणह (जीभा ६३९), ४४९० से ४४९६ तक की गाथाओं के क्रम में जीभा में चार गाथाएं अतिरिक्त मिलती हैं । देखें — जीभा ६४० से ६४३ तक ।
३. चाउम्मासं कुणह सुक्के (जीभा ६४५), सुक्के मासं तवं कुणसु (स) ।
४. कुणह (जीभा ६४७, क, स) ।
५. ताव ता (स) ।
६. जीभा (६४४) में यह गाथा इस प्रकार मिलती है—
एवं ता उग्घाए, अणुघाए एत्त चेव गाहाओ ।
णवरं तू अभिलावो, किण्हे पणगादि वत्तव्वो ॥
७. चाउम्मासं कुणह (जीभा ६४६) ।
८. कुणह (जीभा ६४८) ।
९. छिंदितु (ब, क) ।
१०. तवस्स (क, जीभा ६४९) ।
११. अव्वावारा (जीभा) ।
१२. परिहरंतु (ब, क, जीभा) ।
१३. ० राते (अ), दसगए (ब) ।
१४. ० वीसाए (ब), पण० (अ) ० वीसा (क) ।
१५. नायव्वा (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५००. बितियस्स य कज्जस्सा, तहियं चउवीसतिं[1] निसामेत्ता[2] ।
नवकारेणाउत्ता[3], भवंतु एवं भणेज्जासी ॥

४५०१. एवं गंतूण तहिं, जधोवदेसेण देति[4] पच्छित्तं ।
'आणाय एस भणितो, ववहारो'[5] धीरपुरिसेहिं ॥नि. ५५६ ॥

४५०२. एसाऽऽणाववहारो, जहोवएसं जहक्कमं भणितो[6] ।
धारणववहारं[7] पुण, सुण वच्छ ! जहक्कमं वोच्छं[8] ॥

४५०३. उद्धारणा विधारण[9], संधारण संपधारणा[10] चेव ।
'नाऊण धीरपुरिसा, धारणववहार तं[11] बेंति[12] ॥नि. ५५७ ॥

४५०४. पाबल्लेण उवेच्च[13] व, उद्धियपयधारणा[14] उ उद्धारा[15] ।
विविहेहि पगारेहिं, 'धारेयऽत्थं विधारो उ'[16] ॥

४५०५. सं एगीभावम्मी[17], 'धी धरणे[18] ताणि एक्कभावेणं[19] ।
धारेयऽत्थपयाणि[20] तु, तम्हा संधारणा[21] होति ॥

४५०६. 'जम्हा संपहारेउं, ववहारं पउंजती[22] ।
तम्हा कारणा[23] तेण, 'नातव्वा संपधारणा'[24] ॥

४५०७. धारणववहारेसो, पउंजियव्वो उ केरिसे पुरिसे ? ।
भण्णति गुणसंपन्ने, जारिसए तं 'सुणेह त्ति'[25] ॥

४५०८. पवयणजसंसि पुरिसे, अणुग्गहविसारए तवस्सिम्मि ।
सुस्सुयबहुस्सुयम्मि[26] य, वि वक्कपरियागसुद्धम्मि[27] ॥नि. ५५८ ॥

---

१. ० वीसगं (अ, स, जीभा) ।
२. वियाणित्ता (जीभा ६५२) ।
३. नमोक्कारे आउत्ता (अ, ब, स) ।
४. देहि (जीभा ६५३) ।
५. आणाए ववहारो भणिएसो (जीभा) ।
६. कधितो (स) ।
७. ० हारो (अ, क) ।
८. जीभा. ६५४ ।
९. विहारण (जीभा) ।
१०. संपहारणा (जीभा, ब), सप्पधा० (क), संपसारणा (अ) ।
११. ते (स) ।
१२. गाथा का उत्तरार्ध जीभा (६५५) में इस प्रकार है—
धारणववहारस्स उ, णामा एगट्ठिता एते ॥
१३. उवेक्क (ब) ।
१४. उद्धियपय० (ब, स) ।
१५. उद्धारो (जीभा ६५६) ।
१६. धारेयव्वं विधारो उ (ब) ।
१७. ० भावम्मि (अ, ब) ।
१८. धी धरणे (अ), धू धरणे (ब, स) ।
१९. एवभा० (जीभा ६५७) ।
२०. धारे तत्थ पदाणि (अ) ।
२१. साहारणा (स) ।
२२. गाथा का पूर्वार्द्ध अ प्रति में नहीं है ।
२३. कारणे (ब, जीभा ६५८) ।
२४. ० व्वं संपधारणया (अ, स) ।
२५. सुणेहि त्ति (अ, क, स), जीभा. ६५९ ।
२६. सुसुत्तब ० (स) ।
२७. ० वुड्डिम्मि (अ, ब, क), ० बुद्धिम्मि (जीभा ६६०) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५०९. एतेसु धीरपुरिसा, पुरिसज्जातेसु किंचि खलितेसु ।
रहिते 'वि धारइत्ता'[1], जहारिहं देंति पच्छित्तं ॥नि. ५५९ ॥

४५१०. रहिते नाम असंते, आइल्लम्मि[2] ववहारतियगम्मि ।
ताहे 'वि धारइत्ता'[3], वीमंसेऊण[4] जं भणियं ॥

४५११. पुरिसस्स उ अइयारं[5], विधारइत्ताण जस्स जं अरिहं[6] ।
तं 'देंति उ'[7] पच्छित्तं, केणं[8] देंती उ तं सुणह[9] ॥

४५१२. जो धारितो सुतत्थो, अणुयोगविधीय धीरपुरिसेहिं ।
आलीणपलीणेहिं[10], जतणाजुत्तेहि दंतेहिं[11] ॥नि. ५६० ॥

४५१३. अल्लीणा[12] णाणादिसु, पइ पइ लीणा उ होंति पल्लीणा[13] ।
कोधादी वा पलयं, जेसि गता ते पलीणा उ ॥

४५१४. 'जतणाजुओ पयत्तव'[14], दंतो जो उवरतो तु पावेहिं ।
अहवा 'दंतो इंदियदमेण'[15] नोइंदिएणं च[16] ॥

४५१५. अहवा 'जेणऽण्णइया, दिट्ठा'[17] सोधी परस्स कीरंति[18] ।
तारिसयं[19] चेव पुणो, उप्पन्नं कारणं तस्स[20] ॥

४५१६. सो तम्मि चेव दव्वे, खेत्ते काले य कारणे[21] पुरिसे ।
तारिसयं अकरेंतो, न हु सो आराहओ होति[22] ॥

४५१७. सो तम्मि[23] चेव दव्वे, खेत्ते काले य कारणे पुरिसे ।
तारिसयं चिय भूतो, 'कुव्वं आराहगो'[24] होति[25] ॥

---

१. विहार ० (जीभा ६६१), वि धरेइत्ता (अ, ब)।
२. आतिल्ल० (जीभा ६६२)।
३. वि धरेइत्ता (अ, ब)।
४. वीमंसे० (ब)।
५. अवराहं (जीभा)।
६. भणितं (जीभा)।
७. देति उ (स), देंति (जीभा), दिंतु व (क)।
८. जेण (ब)।
९. सुणहा (अ), सुणसु (जीभा ६६३)।
१०. अल्लीणप ० (अ)।
११. जीभा ६६४।
१२. अल्लीण (अ)।
१३. पलीणा (अ, स, जीभा ६६५)।
१४. ० जुत्तो पयत्तवं (स, जीभा ६६६)।
१५. x (ब)।
१६. इस गाथा के बाद जीभा (६६७) में निम्न गाथा अतिरिक्त मिलती है—
एरिसया जे पुरिसा, अत्थधरा ते भवंति जोग्गा उ।
धारणववहारण्णू, ववहरिउं धारणाकुसला ॥
१७. जेणं ईयादिट्ठा (जीभा ६६८)।
१८. कारंति (ब), कीरंतो (स)।
१९. तारिसं तं (स)।
२०. तस्सा (अ, ब, क)।
२१. कारणा (ब)।
२२. जीभा ६६९।
२३. तं पि (मु)।
२४. कुव्वंतो राहओ (जीभा ६७०),
२५. इस गाथा के बाद जीभा (६७१) में निम्न गाथा अतिरिक्त मिलती है—
अहवा वि इमे अण्णे, धारणववहारजोग्गयमुवेंति।
धारणववहारेणं, जे ववहारं ववहरंति ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५१८. वेयावच्चकरो वा, सीसो वा देसहिंडगो वावि ।
दुम्मेहत्ता न तरति, अवधारेउं[1] बहुं[2] जो तु ॥

४५१९. तस्स[3] उ उद्धरिऊणं, अत्थपयाइं तु देंति आयरिया ।
जेहिं[4] करेति[5] कज्जं, आधारेंतो तु सो देसो ॥

४५२०. धारणववहारो 'सो, अधक्कमं'[6] वण्णितो समासेणं ।
जीतेणं ववहारं, सुण वच्छ! जधक्कमं वुच्छं ॥

४५२१. वत्तणुवत्तपवत्तो, बहुसो अणुवत्तिओ[7] महाणेणं[8] ।
एसो उ[9] जीयकप्पो, पंचमओ होति ववहारो ॥नि. ५६१ ॥

४५२२. वत्तो णामं एक्कसि, अणुवत्तो जो पुणो बितियवारे[10] ।
ततियव्वारं[11] पवत्तो , परिग्गहीओ महाणेणं[12] ॥

४५२३. चोदेती[13] वोच्छिन्ने, सिद्धिपहे ततियगम्मि पुरिसजुगे ।
वोच्छिन्ने तिविहे संजमम्मि जीतेण ववहारो ॥नि. ५६२ ॥

४५२४. संघयणं 'संठाणं, च पढमगं'[14] जो य पुव्वउवओगो ।
ववहारे 'चउक्कं पि'[15], चोद्दसपुव्वम्मि वोच्छिन्नं ॥

४५२५. आहायरिओ[16] एवं, ववहारचउक्क 'जे उ'[17] वोच्छिन्नं ।
चउदसपुव्वधरम्मी[18], घोसंती तेसऽणुग्घाता[19] ॥

४५२६. जे भावा जहियं पुण, चोद्दसपुव्विम्मि[20] जंबुनामे य ।
वोच्छिन्ना ते इणमो, सुणसु समासेण सीसंते ॥

४५२७. मणपरमोहिपुलाए, आहारग-खवग[21]-उवसमे कप्पे ।
संजम तिय केवलिसिज्झणा य जंबुम्मि वोच्छिन्ना ॥

---

१. आहारेउं (अ, क), आराहेउं (स)।
२. बहू (जीभा ६७२)।
३. जस्स (जीभा ६७३)।
४. जेहि उ (ब)।
५. करेहि (जीभा), करेंति (स), कीरइ (अ)।
६. खलु जह ० (जीभा ६७४)।
७. अणुयत्तिओ (अ), ० यट्टिओ (स), आसेवितो (जीभा ६७५)।
८. महाजणेण (अ)।
९. य (अ, ब)।
१०. ० वारं (ब, क)।
११. ततियवारं (क)।
१२. जीभा ६७६, गा. ४५२३ से ४५३२ तक की १० गाथाएं जीभा में अनुपलब्ध हैं। इनके स्थान पर जीभा (६७७) में निम्न गाथा अतिरिक्त मिलती है—
बहुसो बहुस्सुएहिं, जो वत्तो ण य णिवारितो होति ।
वत्तऽणुपवत्तमाणं, जीएण कतं हवति एयं ॥
१३. चोदेति (ब)।
१४. संठाणगं पढमं (ब, क)।
१५. ० क्कम्मि य (ब)।
१६. आहारिऊ (अ)।
१७. जो य (क)।
१८. ० धरंम्मि (ब, स)।
१९. तेऽणुग्घाया (ब, क)।
२०. ० पुव्वम्मि (अ)।
२१. ० खवग सेढि (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५२८. संघयणं संठाणं, च पढमगं जो य पुव्वउवओगो[१] ।
एते तिन्नि वि अत्था, चोद्दसपुव्विम्मि वोच्छिन्ना ॥

४५२९. केवल-मणपज्जवनाणिणो य तत्तो य ओहिनाणजिणा ।
चोद्दस-दस-नवपुव्वी, 'आगमववहारिणो धीरा'[२] ॥नि. ५६३ ॥

४५३०. सुत्तेण ववहरंते, कप्पव्ववहारधारिणा धीरा ।
अत्थधरववहरंते, आणाए धारणाए य ॥नि. ५६४ ॥

४५३१. ववहारचउक्कस्सा, चोद्दसपुव्विम्मि छेदो जं भणियं ।
तं ते मिच्छा[३] जम्हा, सुत्तं अत्थो य धरए उ[४] ॥नि. ५६५ ॥

४५३२. तित्थोगाली एत्थं, वत्तव्वा होति आणुपुव्वीए ।
'जो जस्स'[५] उ अंगस्सा[६] वुच्छेदो जहि विणिद्दिट्ठो ॥

४५३३. जो 'आगमे य सुत्ते'[७] य सुन्नतो आणधारणाए य ।
सो ववहारं जीएण, कुणति[८] वुत्ताणुवत्तेण ॥नि. ५६६ ॥

४५३४. अमुगो अमुगत्थ कतो, जह[९] अमुयस्स अमुएण ववहारो ।
अमुगस्स वि य तह कतो, अमुगो अमुगेण ववहारो[१०] ॥

४५३५. तं चेवऽणुमज्जंते[११], ववहारविधि पउंजति जहुत्तं ।
जीतेण एस भणितो, ववहारो धीरपुरिसेहिं ॥

४५३६. धीरपुरिसपण्णत्तो, पंचमगो आगमो विदुपसत्थो ।
पियधम्मऽवज्जभीरू, पुरिसज्जायाऽणुचिण्णो य[१२] ॥

४५३७. सो जह कालादीणं, अप्पडिकंतस्स निव्विगइयं तु ।
मुहणंत फिडिय पाणग, ऽसंवरणे[१३] एवमादीसु ॥

४५३८. एगिंदिऽणंत[१४] वज्जे, घट्टण तावेऽणगाढ गाढे य ।
निव्विगितयमादीयं, 'जा आयामं तु उद्दवणे'[१५] ॥

४५३९. विगलिंदऽणंत घट्टण, 'तावऽणगाढे य गाढ उद्दवणे[१६] ।
पुरिमड्डादिकमेणं, नातव्वं जाव खमणं तु ॥

---

१. ० ओगं (स)।
२. धारिते कप्पववहारं (ब)।
३. मिच्छं (क, ब)।
४. व (स)।
५. जे तस्स (क)।
६. अन्नस्सा (ब)।
७. गाथायां सप्तमी प्राकृतत्वात् तृतीयार्थे (मवृ)।
८. कुणती (जीभा ६७८)।
९. जहा (स)।
१०. जीभा (६७९) और ब प्रति में यह गाथा इस प्रकार मिलती है—
असुतो असुयत्थकतो, जह असुयस्स असुएण ववहारो ।
असुअत्थ विय तह कओ, असुतो असुएण ववहारो ॥
११. ० णुकज्जंतो (जीभा ६८०)।
१२. जीभा. ६८१।
१३. असंवरे (जीभा ६८२), असंवरणे (अ)।
१४. एगिंदियाणंत (क)।
१५. जा आयमन्तमुद्दवणे (जीभा ६८३)।
१६. परियावण गाढ गाढ उद्दवणे (जीभा ६८४)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५४०. पंचिंदि घट्ट-तावणऽणगाढ गाढे तधेव उद्दवणे ।
एक्कासण-आयामं[1], खमणं तह पंचकल्लाणं ॥

४५४१. एमादीओ एसो, नातव्वो होति जीतववहारो ।
आयरियपरंपरएण, आगतो जाव जस्स भवे[2] ॥

४५४२. बहुसो बहुस्सुतेहिं, जो वत्तो न य निवारितो होति ।
वत्तऽणुवत्तपमाणं, जीतेण कयं भवति एयं ॥

४५४३. जं जीतं सावज्जं, न तेण जीतेण होति ववहारो ।
जं जीतमसावज्जं, तेण उ, जीतेण ववहारो[3] ॥नि. ५६७ ॥

४५४४. छार[4] हडि[5] हड्डमाला, पोट्टेण य रंगणं[6] तु सावज्जं ।
दसविहपायच्छित्तं, होति असावज्जजीतं तु ॥

४५४५. 'उस्सण्णबहू दोसे'[7], निद्धंधस[8] पवयणे य निरवेक्खो ।
एयारिसम्मि पुरिसे, दिज्जति सावज्जजीयं पि ॥

४५४६. संविग्गे पियधम्मे, य अप्पमत्ते अवज्जभीरुम्मि ।
कम्हिइ[9] पमायखलिए, देयमसावज्जजीतं तु ॥

४५४७. जं जीतमसोहिकरं, न तेण जीएण होति ववहारो ।
जं जीतं सोहिकरं, तेण उ जीएण ववहारो[10] ॥

४५४८. जं जीतमसोहिकरं, पासत्थ-पमत्त-संजयाचिण्णं ।
जइ वि महाणाइण्णं, न तेण जीतेण ववहारो[11] ॥

४५४९. जं जीतं सोहिकरं, संवेगपरायणेण[12] दंतेणं ।
एगेण[13] वि आइण्णं, तेण उ जीएण ववहारो ॥

४५५०. एवं जहोवदिट्ठस्स, धीरविदुदेसितप्पसत्थस्स ।
नीसंदो[14] ववहारस्स, 'को वि[15] कहितो समासेणं ॥

४५५१. को वित्थरेण वोत्तूण, समत्थो निरवसेसिते[16] अत्थे ।
ववहारो जस्स 'मुहे, हवेज्ज जिब्भासतसहस्सं[17] ॥

---

१. मायामं (जीभा ६८५)।
२. जीभा (६८६) में गाथा का उत्तरार्ध इस प्रकार है—
अणवज्जविसोहिकरो, संविग्गऽणगारचिण्णो त्ति ॥
३. जीभा. ६८७, इस गाथा के बाद जीभा (६८८) में निम्न गाथा अतिरिक्त मिलती है—
केरिससावज्जं तु, केरिसयं वा भवे असावज्जं ? ।
केरिसयस्स व दिज्जति, सावज्जं वावि ? इयर वा ? ॥
४. खार (जीभा), छारे (ब)।
५. हड (ब, क), छडि (जीभा)।
६. रिंगणि (मु), रिंगणं (जीभा, ६८९) ।
७. ओसण्णे बहु ० (ब, जीभा ६९०), उस्सण्णे बहु ० (ब)।
८. ० धसे य (ब)।
९. कम्ही (जीभा ६९१)।
१०. जीभा ६९२।
११. जीभा ६९३।
१२. संविग्गप ० (स, जीभा ६९४)।
१३. एतेण (स)।
१४. णिस्संदो (जीभा)।
१५. कोति (ब), एस (जीभा ६९५)।
१६. ० सेसए (ब, जीभा)।
१७. ठिता जीहाण मुहे सत ० (जीभा ६९६)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५५२. किं पुण गुणोवदेसो, ववहारस्स तु विदुप्पसत्थस्स ।
एसो भे परिकहितो[१], दुवालसंगस्स णवणीतं ॥

४५५३. ववहारकोविदप्पा, तदट्ठे य नो पमायए जोगे ।
मा 'हु य'[२] तहुज्जमंतो, कुणमाणं एस संबंधो ॥

४५५४. वुत्ता व पुरिसज्जाता, अत्थतो न वि गंथतो[३] ।
तेसिं परूवणट्ठाए[४], तदिदं सुत्तमागतं ॥

४५५५. पुरिसज्जाया चउरो, विभासितव्वा उ आणुपुव्वीए ।
अट्ठकरे[५] माणकरे, उभयकरे नोभयकरे य ॥

४५५६. पढमत्ततिया[६] एत्थं, तू[७] सफला निप्फला दुवे इतरे ।
दिट्ठंतो सगतेणा, सेवंता अण्णरायाणं ॥

४५५७. उज्जेणी सगरायाऽऽणीया[८] गव्वा 'न सुट्ठु'[९] सेवंति ।
वित्तिअदाणं चोज्जं, निव्विसया अण्णनिवसेवा ॥

४५५८. धावति पुरतो तह मग्गतो य सेवति य आसणं नीयं ।
भूमीए[१०] वि निसीयति, इंगियकारी य[११] पढमो उ ॥

४५५९. चिक्खल्ले अन्नया पुरतो, गतो से[१२] एगो नवरि सेवंतो[१३] ।
तुट्ठेण तस्स रण्णा, वित्ती उ सुपुक्खला दिन्ना ॥

४५६०. बितिओ न करेतऽट्ठं[१४], माणं च करेति जातिकुलमाणी[१५] ।
न निवेसति[१६] भूमीए[१७], न य धावति तस्स पुरतो उ ॥

४५६१. सेवति ठितो विदिण्णे, वि आसणे 'पेसितो कुणति अट्ठं'[१८] ।
इति उभयकरो ततिओ, जुज्झति य रणे समाभट्ठो[१९] ॥

४५६२. उभयनिसेध[२०] चउत्थे, बितिय-चउत्थेहि तत्थ 'न तु'[२१] लद्धा ।
वित्ती इतरेहि लद्धा, 'दिट्ठंतस्स उवणओ'[२२] उ ॥

---

१. ० कहियं (जीभा ६१७)।
२. य हु (स), पहु (अ)।
३. गव्वितो (ब, क)।
४. ० णत्थं (अ)।
५. अत्थ० (ब, क)।
६. पढमततिया (अ)।
७. तु (स)।
८. ० रायं णीय (ब, स)।
९. सुदुट्ठ (ब)।
१०. भूमीयं (स)।
११. उ (अ)।
१२. भे (स)।
१३. सिव्वंतो (अ, क, स)।
१४. करेतिट्ठं (अ, ब)।
१५. जाउ कु ० (ब, क)।
१६. निवेसविंति (ब)।
१७. भूमीयं (स)।
१८. पेसितो वि कुणतेट्ठं (अ, स)।
१९. समारुट्ठो (क)।
२०. ० निसेहो व (ब)।
२१ तु न (अ, स)।
२२. दिट्ठंतस्सुव ० (अ)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५६३. एमेवायरियस्स वि, कोई अट्ठं करेंति न य[1] माणं ।
अट्ठो उ वुच्चमाणो[2], वेयावच्चं दसविधं तु ॥

४५६४. अधवा अब्भुट्ठाणं[3], आसण किति मत्तए य संथारे ।
उववाया[4] य बहुविधा, इच्चादि हवंति अट्ठा उ ॥

४५६५. बितिओ माणकरो तू, को पुण माणो हवेज्ज तस्स इमो ।
अब्भुट्ठाणऽब्भत्थण, होति पसंसा य एमादी ॥

४५६६. ततिओभय नोभयतो, 'चउत्थओ तत्थ'[5] दोन्नि निप्फलगा[6] ।
सुत्तत्थोभयनिज्जरलाभो दोण्हं भवे तत्थ ॥

४५६७. एमेव होंति भंगा, चत्तारि गणट्ठकारिणो जतिणो ।
रण्णो सारूविय देवचिंतगा तत्थ आहरणं[7] ॥

४५६८. पुट्ठापुट्ठो पढमो, उ साहती[8] न उ[9] करेति माणं तु ।
बितिओ माणं[10] करेति, पुट्ठो वि न साहती किंचि ॥

४५६९. ततिओ पुट्ठो साहति, नोऽपुट्ठ चउत्थमेव[11] 'सेवति तु[12] ।
'दो सफला'[13] दो अफला, एवं[14] गच्छे वि नातव्वा ॥

४५७०. आहारोवहि[15]-सयणाइएहि गच्छस्सुवग्गहं कुणती ।
बितिओ माणं उभयं, च ततियओ नोभय-चउत्थो ॥

४५७१. सो पुण गणस्स अट्ठो, संगहकर[16] तत्थ संगहो दुविधो ।
दव्वे भावे तियगा[17], उ दोन्नि आहारनाणादी[18] ॥

४५७२. आहारोवहिसेज्जादिएहि दव्वम्मि संगहं कुणति ।
सीस-पडिच्छे[19] वाए, भावे न तरंति[20] जाधि गुरू[21] ॥

---

१. या (ब)।
२. उच्च० (ब, क)।
३. वब्भुट्ठणं (अ)।
४. उवाया व (अ)।
५. चउत्थतो वि (अ)।
६. निप्पुलगा (अ)।
७. ० रणा (स)।
८. साहति (ब)।
९. x (ब)।
१०. माण (स)।
११. चउत्थेणेव (ब, स)।
१२. साहति तो (क)।
१३. सेसे फला (ब)।
१४. एव्वं (क)।
१५. आहार उवहि (अ)।
१६. संगहो (ब, क)।
१७. नियमा (ब)।
१८. ० पाणादी (ब)।
१९. परिच्छे (ब)।
२०. वरंति (क)।
२१. गुरुसु (अ), गुरुसू उ (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५७३. एवं गणसोभम्मि[१] वि, चउरो पुरिसा हवंति नातव्वा ।
सोभावेंति गणं खलु, इमेहि ते कारणेहिं तु ॥

४५७४. गणसोभी खलु वादी, उद्देसे सो[२] उ पढमए[३] भणितो ।
धम्मकहि निमित्ती वा, विज्जातिसएण वा जुत्तो ॥

४५७५. एवं गणसोधिकरे[४], चउरो पुरिसा[५] हवंति विण्णेया ।
किह पुण गणस्स सोधिं, करेज्ज सो कारणेमेहिं ॥

४५७६. एगं दव्वेगघरे, णेगा आलोयणाय संका तु[६] ।
ओयस्सि[७] सम्मतो संथुतो[८] य तं दुप्पवेषं च ॥

४५७७. हेट्ठाणंतरसुत्ते, गणसोधी एस सुत्तसंबंधो ।
सोहि त्ति व धम्मो त्ति व, एगट्ठं सो दुहा होति[९] ॥

४५७८. रूवं होति सलिंगं, धम्मो नाणादियं तिगं होति ।
रूवेण य धम्मेण य, जढमजढे भंगचत्तारि ॥

४५७९. रूवजढमण्णलिंगे, धम्मजढे खलु तधा सलिंगम्मि ।
उभयजढो गिहिलिंगे[१०], दुहओ[११] सहितो सलिंगेणं[१२] ॥

४५८०. तस्स पंडियमाणस्स[१३], बुद्धिलस्स दुरप्पणो ।
मुद्धं पाएण अक्कम्म, वादी वायुरिवागतो ॥

४५८१. गणसंठिति[१४] धम्मे या[१५], चउरो भंगा हवंति नातव्वा ।
गणसंठिति अस्सिस्से, महकप्पसुतं न दातव्वं ॥

४५८२. सातिसयं इतरं वा, अन्नगणिच्चे[१६] ण देयमज्झयणं ।
इति[१७] 'गणसंठितीए उ'[१८], करेंति सच्छंदतो केई[१९] ॥

४५८३. पत्ते देंतो पढमो, बितिओ भंगो न[२०] कस्सइ[२१] वि देंतो ।
जो पुण अपत्तदायी, ततिओ भंगो उ तं पप्प ॥

---

१. ० सोभिम्मि (अ) ।
२. सेसो (अ) ।
३. पढमातो (ब) ।
४. ० सोधीकरे (अ), ० सोहीकारो (ब) ।
५. पुरिसो (ब) ।
६. तू (अ, स) ।
७. ओयासि (अ), उज्जासि (ब) ।
८. संवुतो (क) ।
९. होतिहि (क) ।
१०. ० लिंगेणं (क) ।
११. दुहितो (स) ।
१२. ४५७८-४५७९ ये दोनों गाथाएं ब प्रति में नहीं है ।
१३. ० माणिस्स (स) ।
१४. ० संथिति (स), ० संठित्ति (क) ।
१५. य (स), गाथा के प्रथम चरण में अनुष्टुप् छंद है ।
१६. ० गणव्वे (अ), ० गणेच्चे (ब) ।
१७. इय (अ, क) ।
१८. ० संठीतातो (ब) ।
१९. के ति (ब, क) ।
२०. उ (स) ।
२१. कस्सति (ब), कस्सइं (अ) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५८४. सयमेव दिसाबंधं, काऊण पडिच्छगस्स जो देति ।
उभयमवलंबमाणं, कामं तु तगं पि पुज्जामो[1] ॥

४५८५. *धम्मो य न जहियव्वो[2], गणसंठितिमेत्थ[3] णो पसंसामो* ।
जस्स पिओ सो धम्मो, सो न जहति तस्सिमो जोगो ॥

४५८६. वेयावच्चेण मुणी, उवचिट्ठति संगहेण पियधम्मो ।
उवचिट्ठति दढधम्मो, सव्वेसिं[4] निरतियारो य ॥

४५८७. दसविधवेयावच्चे, अन्नयरे खिप्पमुज्जमं कुणति ।
अच्चंतमणिव्वाही, धिति-विरियकिसे[5] पढमभंगो[6] ॥

४५८८. दुक्खेण 'उ गाहिज्जति'[7], बितिओ गहितं तु नेति जा तीरं ।
उभयत्तो कल्लाणो, ततिओ चरिमो य पडिकुट्ठो ॥

४५८९. अदढप्पियधम्माणं[8], तं वि य धम्मो करेंति[9] आयरिए ।
तेसि विहाणम्मि इमं, कमेण सुत्तं समुदियं[10] तु ॥

४५९०. पव्वावणुवट्ठावण[11], उभओ तह नोभयं[12]-चउत्थो उ ।
अत्तट्ठ-परट्ठा वा, पव्वावण केवलं[13] पढमे ॥

४५९१. एमेव य बितिओ वी[14], केवलमेत्तं उवट्ठवे[15] सो उ ।
ततिओ पुण उभयं पी, अत्तट्ठ-परट्ठ वा कुणति[16] ॥

४५९२. जो पुण नोभयकारी, सो कम्हा भवति आयरीओ[17] उ ।
भण्णति धम्मायरिओ, सो पुण गिहिओ व समणो वा ॥

४५९३. धम्मायरि पव्वावण, तह य उवट्ठावणा[18] गुरू ततिओ ।
कोइ तिहिं संपन्नो[19], दोहि वि[20] एक्केक्कएणं वा ॥

---

१. यह गाथा सभी हस्तप्रतियों में मिलती है। टीकाकार ने भी इसी गाथा की व्याख्या की है। किन्तु टीका की मुद्रित प्रति में इस गाथा के स्थान पर निम्न गाथा मिलती है—
उभयमवलंबमाणं, काम तु तगं पि पुज्जामो ।
सातिसयं देविंदोपपातिकादि इतरड्ढा ॥
२. जहेय० (अ)।
३. ० तिमिच्छतो (अ)।
४. सव्वेहिं (अ, क)।
५. ० कसे (स)।
६. पढमधम्मो (ब)।
७. ओगाहि० (अ)।
८. अदढ अपिय ० (अ), अदढापिय ० (स)।
९. करिंति (क)।
१०. समुदेयं (स)।
११. पव्वावण वुट्ठा० (अ)।
१२. नोभए (स)।
१३. केवला (क), केवली (स)।
१४. ती (अ)।
१५. उवट्ठंते (ब, क)।
१६. कुणउ (ब, क)।
१७. छंद की दृष्टि से इकार दीर्घ मिलता है।
१८. उट्ठावणा (ब)।
१९. संपत्तो (क), संपउत्तो (स)।
२०. वी (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५९४. एगो उद्दिसति[१] सुतं, एगो वाएति तेण उद्दिट्ठं ।
उद्दिसती 'वाएति य'[२], धम्मायरिओ चउत्थो य[३] ॥

४५९५. पडुच्चायरियं होति, अंतेवासी उ मेलणा ।
अंतमब्भासमासन्नं[४], समीवं चेव आहितं[५] ॥

४५९६. जह चेव उ आयरिया, अंतेवासी[६] वि होंति एमेव ।
अंते य वसति जम्हा, अंतेवासी ततो होति[७] ॥

४५९७. थेराणमंतिए[८] वासो, सो य[९] थेरो इमो तिहा ।
'भूमिं ति'[१०] य ठाणं ति य, एगट्ठा होंति कालो य ॥

४५९८. तिविधम्मि[११] व थेरम्मी, परूवणा जा[१२] जधिं सए ठाणे ।
अणुकंपसुते[१३] पूया, परियाए वंदणादीणि ॥

४५९९. आहारोवहि-सेज्जा य, संथारे खेत्तसंकमे ।
कितिछंदाणुवत्तीहिं, अणुवत्तंति[१४] थेरगं ॥दारं ॥

४६००. उट्ठाणासण-दाणादी, जोग्गाहारपसंसणं ।
नीयसेज्जाय[१५] निद्देसवत्तितो पूजए सुत्तं ॥

४६०१. उट्ठाणं वंदणं चेव, गहणं दंडगस्स य[१६] ।
परियायथेरगस्सा, करेंति[१७] अगुरोरवि ॥

४६०२. तुल्ला 'उ भूमिसंखा'[१८], ठिता च ठावेंति ते इमे होंति ।
'पडिवक्खतो व सुत्तं[१९], परियाए दीह-हस्से य[२०] ॥दारं ॥

४६०३. सेहस्स 'ति भूमीओ'[२१], दुविधा परिणामगा दुवे जड्डा ।
पत्त जहंते संभुज्जणा[२२] य भूमित्तिग[२३] विवेगो ॥नि. ५६८ ॥

---

१. उद्देसइ (क) ।
२. वायणियं (क) ।
३. उ (स) ।
४. अंतिगमब्भास० (क, स) ।
५. माहियं (ब, क) ।
६. संते० (स) ।
७. होई (अ) ।
८. थेराण अंतिए (क, स) ।
९. व (मु) ।
१०. भूमिए त्ति (ब, क) ।
११. ० म्मि (स) ।
१२. जो (अ) ।
१३. अणुकंपए (क) ।
१४. अणुवत्तिति (ब) ।
१५. ० सेज्जाहि (स) ।
१६. उ (क) ।
१७. कारिंति (क) ।
१८. भूमी संखा (क) ।
१९. x (ब) ।
२०. या (अ) ।
२१. वि भूमीओ (अ) ।
२२. संभुंजणा (अ, स) ।
२३. भूमिव्विय (ब), भूमित्तय (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४६०४. सेहस्स तिन्निभूमी, जहण्णं तह मज्झिमा य उक्कोसा ।
राइंदिव सत्त चउमासिया छम्मासिया चेव ॥

४६०५. पुव्वोवट्ठपुराणे, करणजयट्ठा जहण्णिया भूमी ।
उक्कोसा दुम्मेहं[1], पडुच्च अस्सद्दहाणं[2] च ॥

४६०६. एमेव य मज्झमिया, अणहिज्जंते असद्दहंते य ।
भावियमेहाविस्स वि, करणजयट्ठाय मज्झमिया[3] ॥

४६०७. आणा दिट्ठंतेण य, दुविधो परिणामगो[4] समासेणं ।
आणा परिणामो[5] खलु, तत्थ इमो होति नायव्वो ॥

४६०८ तमेव सच्चं नीसंकं, जं जिणेहिं पवेइयं ।
आणाए एस अक्खातो[6], जिणेहिं परिणामगो ॥

४६०९. परोक्खं हेउगं अत्थं, पच्चक्खेण उ साहयं ।
जिणेहिं एस अक्खातो[7], दिट्ठंतपरिणामगो ॥

४६१०. तस्सिंदियाणि पुव्वं, सीसंते जइ उ ताणि सद्दहति ।
तो से नाणावरणं, सीसइ[8] ताधे दसविहं तु ॥

४६११. इंदियावरणे[9] चेव, 'नाणावरणे इय'[10] ।
तो[11] नाणावरणं चेव, आहितं तु दु पंचधा ॥

४६१२. सोइंदियआवरणे[12], 'नाणावरणं च'[13] होति तस्सेव ।
एवं दुयभेदेणं[14], णेयव्वं[15] जाव 'फासो त्ति'[16] ॥

४६१३. बहिरस्स उ विण्णाणं, आवरियं[17] न पुण सोतमावरियं ।
अपडुप्पण्णो बालो, अतिवुड्ढो तध असण्णी वा ॥

४६१४. विण्णाणावरियं तेसिं, 'कम्हा जम्हा'[18] उ ते सुणेंता वि ।
न वि जाणंते किमयं[19], सद्दो संखस्स पडहस्स[20] ॥

---

१. दुम्मेहिं (क)।
२. असद्द ० (ब)।
३. मज्झिमिया (स)।
४. ० णामतो (अ, स)।
५. आयाप ० (ब, क)।
६. पक्खातो (स)।
७. पक्खातो (स)।
८. संसेइ (ब, क)।
९. ० वरणं (ब, क)।
१०. ० वरणा इयं (क)।
११. × (ब, क)।
१२. सोइंदियावरणं चेव (ब, क)।
१३. विण्णाणावरण (अ, ब)।
१४. दुपयभे० (ब)।
१५. णायव्वं (मवृ)।
१६. फास त्ती (अ)।
१७. ० वरिउं (स)।
१८. जम्हा तम्हा (स)।
१९. किमियं (स)।
२०. गाथा के प्रथम चरण में मात्रा अधिक होने से छंदभंग है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४६१५. किं ते जीवअजीवा, जीवं ति य एव तेण उदियम्मि ।
भण्णति[1] एव विजाणसु, जीवा चउरिंदिया बेंति ॥

४६१६. एवं चक्खिंदिय-घाण, जिब्भ-फासिंदिउवघातेहिं ।
एक्केक्कगहाणीए[2], जाव उ एगिंदिया नेया ॥

४६१७. सण्णिस्सिंदियघाते वि[3], तन्नाणं नावरिज्जति[4] ।
विण्णाणं नऽत्थ[5]ऽसण्णीणं, विज्जमाणे वि इंदिए ॥

४६१८. जो 'जाणति य जच्चंधो'[6], वण्णे[7] रूवे विकप्पसो ।
नेत्ते[8] वावरिते तस्स, विण्णाणं तं तु चिट्ठति ॥

४६१९. पासंता वि न जाणंति, विसेसं वण्णमादिणं[9] ।
बाला असण्णिणो चेव, विण्णाणावरियम्मि उ ॥

४६२० इंदियउवघातेणं, कमसो 'एगिंदि एव संवुत्तो[10] ।
अणुवहते उवकरणे[11], विसुज्झती[12] ओसधादीहिं ॥

४६२१ अवचिज्जते[13] य उवचिज्जते य जह इंदिएहि सो पुरिसो ।
एस उवमा पसत्था, संसारीणिंदियविभागे ॥

४६२२. परिणामो[14] जं भणियं, जिणेहि अह कारणं न जाणाति ।
दिट्ठंतपरिणामेण, परिवाडी उक्कमकमाणं[15] ॥

४६२३. चरितेण कप्पितेण व, दिट्ठंतेण[16] व तधा तयं अत्थं ।
उवणेति जधा णु[17] परो, पत्तियति 'अणोग्गरूवं पि'[18] ॥

४६२४. दिट्ठंतो परिणामे, कधिज्जते उक्कमेण[19] व कयाइ ।
जह तू एगिंदीणं, वणस्सती कत्थई पुव्वं ॥

४६२५. पत्तंति पुप्फंति फलं ददंती[20], कालं वियाणंति तधिंदियत्थे ।
जाती य वुड्ढी[21] य जरा य जेसिं, कहं न जीवा हि भवंति ते उ[22] ॥

---

१. भणइ (क)।
२. एक्केक्कं य हाणीए (अ)।
३. वी (स)।
४. न वरिज्जति (क), न विरज्जति (स)।
५. न तत्थ (क, मु), तत्थ (स)।
६. जाणय सव्वंधो (अ)।
७. वण्ण (अ)।
८. णिंते (क)।
९. वण्णवातिणं (क)।
१०. एगिंदिया व ० (ब), ० दि उवसंजुत्तो (स)।
११. धुवकरणे (अ, ब), मुवकरणे (क)।
१२. ०ज्झवि (अ)।
१३. x (क)।
१४. परिणामओ (अ), परिणाम य (ब)।
१५. उक्कमकयाणं (अ), उक्कमक्कमणं (ब)।
१६. ० तेणं (स)।
१७. ण (स)।
१८. ० रूवम्मि (मु, ब, क)।
१९. उवक्कमणे (अ, ब)।
२०. व देंति (ब)।
२१. वुड्ढा (ब)।
२२. वि (स)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४६२६. जाधे ते सद्दहिता, ताधि कहिज्जंति[1] पुढविकाईया[2] ।
जध उ पवाल-लोणा, उवलगिरीणं च परिवुड्ढी[3] ॥

४६२७. कललंडरसादीया[4], जह जीवा[5] तधेव आउजीवा वि ।
जोतिंगण जरिए[6] वा, जहुण्ह तह तेउजीवा वि ॥

४६२८. जाहे 'सद्दहति तेउ'[7], वाऊ जीवा सि[8] ताहे सीसंति ।
सत्थपरिण्णाए वि य, उक्कमकरणं तु एयट्ठा ॥

४६२९. एस परिणामगो[9] ऊ, भणितो अधुणा उ जड्डु वोच्छामि ।
सो दुविधो नायव्वो, भासाएँ सरीरजड्डो उ[10] ॥

४६३०. जलमूग-एलमूगो[11] मम्मणमूगो य भासजड्डो य ।
दुविधो सरीरजड्डो, तुल्लो करणे अणिउणो य ॥

४६३१. पढमस्स नत्थि सद्दो, जलमज्झे व भासओ[12] ।
बीयओ[13] एलगो चेव, अव्वत्तं[14] बुब्बुयायइ ॥दारं ॥

४६३२. मम्मणो पुण भासंतो, खलए अंतरंतरा ।
चिरेण णीति से वक्या, अविसुद्धा व भासते[15] ॥दारं ॥

४६३३. 'दुविधेहि जड्डुदोसेहिं'[16], विसुद्धं जो उ उज्झती ।
काया चत्ता भवे तेणं, मासा चत्तारि 'गुरुगा य'[17] ॥दारं ॥

४६३४. कधिते[18] सद्दहिते चेव, ओयवेंति[19] पडिग्गहे ।
मंडलीए उवट्ठंतु[20], इमे दोसा य अंतरा ॥

४६३५. पायस्स वा विराधण, अतिधी दट्ठूण उड्डुवमणं[21] वा ।
सेहस्स वा[22] दगुंछा, सव्वे दद्दिद्रधम्मो[23] त्ति ॥दारं ॥

---

१. कहेज्जंति (अ)।
२. ० विवाईता (अ)।
३. परिवड्ढी (अ)।
४. कवलंड ० (अ)।
५. X (क)।
६. खज्जुए (क)।
७. सद्देहिया तू (अ), सद्दहते तेउ (स)।
८. से (क)।
९. ० णामो (ब)।
१०. य (स)।
११. ० मूयय (अ)।
१२. भासिओ (क, ब)।
१३. बीओ (स)।
१४. अच्वंतं (अ, ब)।
१५. भासओ (ब)।
१६. दुविहेहिं जड्डदोसे (ब)।
१७. गुरुका तं (अ), गुरुकया (ब,क), गाथा के दूसरे और तीसरे चरण में अनुष्टुप् छंद है।
१८. कहिए (क)।
१९. उवविंति (ब)।
२०. उवइट्ठंतु (अ)।
२१. उड्डुगमणं (ब, स)।
२२. वी (स)।
२३. दुदिट्ठ ० (ब, क)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४६३६. जलमूग-एलमूगो, सरीरजड्डो य जो य अतिथुल्लो ।
जं वुत्तं तु विवेगो, भूमितियं[१] ते न दिक्खेज्जा ॥

४६३७. दुम्मेहमणतिसेसी, न जाणती जो य करणतो जड्डो ।
ते दोन्नि वि तेण उ[२] सो, दिक्खेति सिया उ अतिसेसी ॥

४६३८. अहव न भासाजड्डो, जहाति ति परंपरागतं छउमो ।
इतरं[३] पि देसहिंडग, असतीए वा विगिंचिज्जा[४] ॥

४६३९. मासतुसानातेणं, दुम्मेहं तं पि केइ इच्छंति ।
तं न भवति पलिमंथो, न यावि चरणं विणा णाणं ॥

४६४०. नातिथुल्लं न उज्झंति[५] मेहावी जो य बोब्बडो ।
जलमूग - एलमूगं[६], परिट्ठावेज्ज दोन्नि वि ॥

४६४१. मोत्तूण करणजड्डं, परियट्टंति 'जाव सेस'[७] छम्मासा ।
एक्केक्कं छम्मासा, जस्स य[८] दट्ठु विविंचणया ॥

४६४२. तिण्हं आयरियाणं, जो णं गाहेति सीस तस्सेव ।
जदि एत्तिएणं गाहितो न परिट्ठावए ताहे ॥

४६४३. देति अजंगमथेराण, वावि य जह[९] 'दट्ठु णं'[१०] जो उ ।
भणती मज्झं कज्जं, दिज्जति तस्सेव सो ताधे ॥

४६४४. जो पुण करणे[११] जड्डो, उक्कोसं तस्स होति छम्मासा ।
कुल-गण-संघनिवेदण, एयं तु 'विहिं तहिं'[१२] कुज्जा ॥

४६४५. पव्वज्जापरियाओ, वुत्तो सेहो ठविज्जए जत्थ ।
जम्मणपरियागस्स उ, विजाणणट्ठा इमं सुत्तं ॥

४६४६. ऊणऽट्ठए चरित्तं, न चिट्ठए चालणीय उदगं वा ।
बालस्स य जे दोसा, भणिता आरोवणा 'जा य'[१३] ॥नि. ५६९ ॥

४६४७. काय-वइ-मणोजोगो, हवंति तस्स अणवट्ठिया[१४] जम्हा ।
संबंधि[१५] अणाभोगे, ओमे सहसाऽववादेणं[१६] ॥नि. ५७० ॥

---

१. भूमितयं (अ), भूमित्तय (ब) ।
२. य (स) ।
३. तु (अ) ।
४. विविंचेज्जा (ब) ।
५. उब्भंति (अ, ब)
६. ० मूयगं (ब) ।
७. सेस जाव (स) ।
८. व (ब) ।
९. जह वा (अ, ब) ।
१०. दट्ठूणं (क, स) ।
११. करणा (ब) ।
१२. तहिं विहिं (ब) ।
१३. दोसा (अ) ।
१४. अणवत्थिया (ब), अणवत्तिया (अ, स) ।
१५. संबंध (ब) ।
१६. व भावेणं (अ, स), व भासणं (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४६४८. भुंजिस्से स मया सद्धिं, नीओ[1] नेच्छति संपयं ।
सो य नेहेण संबंधो, कहं चिट्ठेज्ज तं विणा[2] ॥

४६४९. अणुवट्ठवितो[3] एसो, संभुंजति मा[4] बुवेज्ज[5] अपरिणतो ।
ताहे उवट्ठाविज्जति, तो 'णं संभुंजणं[6] ताहे'[7] ॥

४६५०. 'अधव अणाभोगेणं'[8], सहसक्कारेण व होज्ज संभुत्तो[9] ।
ओमम्मि व[10] मा हु ततो[11], विप्परिणामं तु गच्छेज्जा ॥

४६५१. अदिक्खायंति वोमे[12] मं, इमे पच्छन्नभोजिणो ।
परोऽहमिति भावेज्जा, तेणावि सह भुंजते ॥

४६५२. तेहऽद्धमवरिसे उवट्ठामो पसंगतो ।
उद्दिसे[13] सेससुत्तं पि, सुत्तस्सेस उवक्कमो[14] ॥

४६५३. अहियऽट्ठमवरिसस्स वि, आयारे वि पढितेण तु पकप्पं[15] ।
देंति अवंजणजातस्स, वंजणाणं परूवणा[16] ॥

४६५४. जधा चरित्तं धारेउं, ऊणट्ठो[17] तु अपच्चलो ।
तहाविऽपक्कबुद्धी[18] उ, अवत्तायस्स नो सहू ॥

४६५५. चउवासे सूतगडं, कप्पव्ववहार पंचवासस्स ।
विगट्ठठाण समवाओ[19], दसवरिस वियाहपण्णत्ती[20] ॥

४६५६. चउवासो[21] गाढमती, न कुसमएहिं तु हीरते सो उ ।
पंचवरिसो उ जोग्गो, अववायस्स त्ति तो देंति ॥

४६५७. पंचण्हुवरि विगट्ठो, सुतथेरा जेण तेण उ विगट्ठो ।
ठाणं महिड्ढियं ति य, तेण दसवासपरियाए ॥

---

१. भीओ (ब)
२. क प्रति में गाथा का पूर्वार्द्ध नहीं है ।
३. अणुसंठवियं (ब) ।
४. वा (ब) ।
५. हुवेज्ज (अ) ।
६. संभुज्जणं (अ) ।
७. ण संभुंजति णंतो (स) ।
८. अहवा अणाभोएण (ब) ।
९. संहुत्ते (अ), संसुत्तो (स) ।
१०. वि (अ) ।
११. तव्वो (स) ।
१२. ओमे (स) ।
१३. उद्देसो (ब) ।
१४. चउक्कओ (अ) ।
१५. विकप्पं (स) ।
१६. ० वणया (स) ।
१७. तूणट्ठो (अ) ।
१८. ० बुद्धी (ब) ।
१९. समाओ (ब) ।
२०. ० विवाह० (क) ।
२१. चउमासो (स) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४६५८. एक्कारसवासस्सा[१], खुड्डि[२]-महल्ली-विमाणपविभत्ती ।
कप्पति य अंगुवंगे, वीयाहे[३] चेव चूलीओ ॥

४६५९. अंगाणमंगचूली[४], महकप्पसुतस्स वग्गचूलीओ ।
वीयाहचूलिया[५] पुण, पण्णत्तीए मुणेयव्वा ॥

४६६०. बारसवासे अरुणोववाय वरुणो य[६] गरुलवेलधरो[७] ।
वेसमणुववाएँ य तधा, एते कप्पंति उद्दिसिउं ॥

४६६१. तेसिं सरिनामा खलु, परियट्टंती[८] य एंति देवा उ ।
अंजलिमउलियहत्था, उज्जोवेंता दसदिसा उ ॥

४६६२. नामा[९] वरुणा वासं, 'अरुणा गरुला'[१०] सुवण्णगं[११] देंति ।
आगंतूण य बेंती, संदिसह उ किं करेमो त्ति ॥

४६६३. तेरसवासे कप्पति[१२], उट्ठाणसुते तधा समुट्ठाणे ।
देविंदपरियावणिय[१३], नागाण तधेव[१४] परियाणी[१५] ॥

४६६४. परियट्टिज्जति जहियं, उट्ठाणसुतं[१६] तु तत्थ उट्ठेति[१७] ।
कुल-गाम-देसमादी[१८], समुट्ठाणसुतें निविस्संति[१९] ॥

४६६५. देविंदा नागा[२०] विय, परियाणीएसु एंति[२१] ते दो वी ।
चोद्दसवासुद्दिसती[२२], महासुमिणभावणज्झयणं[२३] ॥

४६६६. एत्थं[२४] तिसइ[२५] सुमिणा[२६], बायाला[२७]चेव होंति महसुमिणा ।
बावत्तरिसव्वसुमिणा[२८], वण्णिज्जंते फलं तेसिं ॥

---

१. एक्कादस ० (ब) ।
२. खुद्दी (अ, क), खुड्डी (स) ।
३. विहाहे (ब), विवाहे (स) ।
४. अंगाणं अंग ० (अ, स) ।
५. वीवाह ० (ब, स) ।
६. व (अ) ।
७. गुरुलो ० (स), ० वेगधरो (ब, स) ।
८. ० वट्टंते (स) ।
९. नागा (ब, स) ।
१०. अरुणो गरुला (ब) ।
११. सरण्णगं (ब), सरण्णतं (क), य रत्तगं (स) ।
१२. कप्पंति (अ, ब) ।
१३. ० परियाणिय (अ), ० परियाणवि (ब) ।
१४. तदेव (ब, क) ।
१५. परियाणा (क) ।
१६. सुट्ठाण ० (स) ।
१७. उट्ठति (ब, क) ।
१८. ० मादीसु (ब) ।
१९. निविसंति (ब, क) ।
२०. नामगा (ब) ।
२१. यंति (स) ।
२२. ० वासुद्देसी (अ) ।
२३. महसु ० (स) ।
२४. एच्छं (अ) ।
२५. तीसं (स) ।
२६. सुविणा (अ, क) ।
२७. बायालं (स) ।
२८. बायत्तरि ० (ब) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४६६७. पण्गरसे चारणभावणं ती[1] उद्दिसते[2] तु अज्झयणं[3] ।
चारण.लद्धी तहियं, उप्पज्जती तु अधीतम्मि ॥

४६६८. तेयनिसग्गा सोलस, आसीविसभावणं[4] च सत्तरसे ।
दिट्ठीविसमट्ठारस[5], उगुणवीस[6] दिट्ठिवाओ तु[7] ॥

४६६९. 'तेयस्स निसरणं'[8] खलु, आसिविसत्तं[9] तहेव दिट्ठिविसं ।
लद्धीओं समुप्पज्जे, समधीतेसुं तु एतेसुं ॥

४६७०. दिट्ठीवाए पुण होति, सव्वभावाण रूवणं नियमा ।
सव्वसुत्ताणुवादी[10], वीसतिवासे उ बोधव्वो ॥

४६७१. चउद्दससहस्साइं[11], पइण्णगाणं तु वद्धमाणस्स ।
सेसाण जत्तिया खलु, सीसा पत्तेयबुद्धा उ ॥

४६७२. पत्तस्स पत्तकाले, एतेणं[12] जो उ उद्दिसे तस्स[13] ।
निज्जरलाभो विपुलो[14], किध पुण तं मे निसामेह ॥

४६७३. कम्ममसंखेज्जभवं, खवेति अणुसमयमेव आउत्तो ।
अन्नयरगम्मि जोगे, सज्झायम्मी[15] विसेसेण ॥

४६७४. आयारमादियाणं[16], अंगाणं जाव दिट्ठिवाओ तु ।
एस विही विण्णेओ, सव्वेसिं आणुपुव्वीए ॥

४६७५. दसविहवेयावच्चं, इमं समासेण होति विण्णेयं ।
आयरियउवज्झाए, थेरे य तवस्सि सेहे य ॥

४६७६. अतरंत[17] कुलगणे या, संघे 'साधम्मिवेयवच्चे य'[18] ।
एतेसिं तु दसण्हं, कातव्वं तेरसपदेहिं ॥

४६७७. भत्ते पाणे सयणासणे य पडिलेहण पायमच्छिमद्धाणे ।
राया तेणं दंडग्गहे य गेलण्णमत्ते य ॥

---

१. ति (स) ।
२. उद्दिसिए (क) ।
३. उवरूपणं (ब, क) ।
४. ० विसाधा ० (स) ।
५. दिट्ठीदसमट्ठा ० (स) ।
६. ओगुणवीसे (ब) ।
७. य (अ) ।
८. तेयस्सि निसिरणं (स) ।
९. आसीविसगं (स) ।
१०. ०सुयाणु० (क, स) ।
११. चउद्दस उ सह० (अ, ब), चोद्दसओ स ० (स) ।
१२. एयाणि (क, स) ।
१३. ततो (स) ।
१४. सुविपुलो (स) ।
१५. ०यम्मि (अ, स) ।
१६. आयरिमा० (अ, क), ० मादीयाणं (स) ।
१७. अतरंतु (ब, क) ।
१८. ० वेज्जवच्चे वा (स), ० वच्चे यं (अ, क) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४६७८. जा जस्स होति लद्धी, तं तु न हावेति संत विरियम्मि ।
एयाणुत्तत्थाणि[1] तु, पायं किंचित्थ[2] वुच्छामि ॥

४६७९. पादपरिकम्म पादे, ओसह-भेसज्ज देति अच्छीणं[3] ।
अद्धाणे उवगेण्हति, राया[4] दुट्ठे य नित्थारे ॥

४६८०. सरीरोवहितेणेहि, सा रक्खति सति बलम्मि संतम्मि ।
दंडग्गहणं[5] कुणती[6], गेलण्णे यावि जं जोग्गं ॥

४६८१. उच्चारे पासवणे, खेले[7] मत्तयतिगं तिविधमेयं ।
सव्वेसिं कायव्वं, साहम्मिय[8] तत्थिमो[9] विसेसो ॥

४६८२. होज्ज गिलाणो 'निण्हव, न य'[10] तत्थ विसेस जाणति जणो तु ।
तुब्भेत्थं पव्वतितो, न 'तरती किण्णु कुणह'[11] तस्स ॥

४६८३. ताहे मा उड्डाहो, होउ त्ती तस्स फासुएणं ति[12] ।
'पडुयारेण करोती'[13], चोदेती एत्थ अह सीसो ॥

४६८४. तित्थगरवेयवच्चं, किं भणियमेत्थ तु किं न कायव्वं ।
किं वा न होति निज्जर, तहियं अह बेति आयरिओ[14] ॥

४६८५. आयरियग्गहणेणं, तित्थयरो तत्थ होति[15] गहितो तु ।
किं व न होयायरिओ, आयारं उवदिसंतो[16] उ[17] ॥

४६८६. 'निदरिसण जध मेत्थ'[18] खंदएण पुट्ठो उ गोतमो भयवं ।
केण तु तुब्भं सिट्ठं[19], धम्मायरिएण, पच्चाह[20] ॥

४६८७. तम्हा सिद्धं[21] एयं, आयरिगहणेण गहिय तित्थगरो ।
आयरियादी दस वी, तेरस गुण होंति कायव्वा ॥

---

१. ० त्थाण (स)।
२. किंचि तु (अ)।
३. वच्छीणं (ब)।
४. राय (स)।
५. दंडगहं च (स)।
६. कुणइ (ब)
७. खेल (ब, स)।
८. साहम्मी (अ, क, स)।
९. एतत्थि (स)।
१०. निण्हतो उ ण य (स)।
११. तरति किं कुणहा (स)।
१२. तु (स, अ)।
१३. पडोयारेण करेती (स)।
१४. यह गाथा क प्रति तथा मुद्रित टीका में भाष्य गाथा के क्रम में नहीं है। किंतु टीकाकार ने इसकी संक्षिप्त व्याख्या की है।
१५. होंति (ब)
१६. उवसंतो (अ)
१७. यह गाथा क प्रति में नहीं है।
१८. ०सणत्थं जह एत्थ (क)।
१९. सिट्ठं य (ब), सिट्ठोति (अ)।
२०. पव्वाह (अ)।
२१. सिट्ठं (ब, स)।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

४६८८. तीसुत्तरसयमेगं, ठाणाणं[1] वण्णितं तु सुत्तम्मि ।
वेयावच्चसुविहितं, नेम्मं निव्वाणमग्गस्स[2] ॥

४६८९. ववहारे दसमए उ, दसविह[3] साहुस्स जुत्तजोगस्स[4] ।
एगंतनिज्जरा से, न हु नवरि कयम्मि सज्झाए ॥

४६९०. एसोऽणुगमो भणितो[5], अहुणा नयो[6] सो य होति दुविधो उ[7] ।
नाणनओ चरणणओ[8], तेसि समासं तु वुच्छामि ॥

४६९१. नायम्मि गिण्हियव्वे, अगिण्हितव्वम्मि चेव अत्थम्मि ।
जइयव्वमेव इति जो, उवदेसो सो नयो नामं ॥**नि. ५७१** ॥

४६९२. सव्वेसिं पि नयाणं, बहुविहवत्तव्वयं निसामेत्ता ।
तं सव्वनयविसुद्धं, जं चरणगुणट्ठितो साधू ॥**नि. ५७२** ॥

४६९३. कप्पव्ववहाराणं, भासं मोत्तूण वित्थरं सव्वं[9] ।
पुव्वायरिएहि कयं, सीसाण हितोवदेसत्थं ॥

४६९४. भवसयसहस्समहणं, एयं णाहिंति जे उ काहिंति ।
कम्मरयविप्पमुक्का, मोक्खमविग्घेण गच्छंति[10] ॥

इति व्यवहार भाष्य

---

१. ठाणेणं (स)।
२. णेव्वा ० (स)।
३. ० विहम्मि (ब)।
४. ० जोग्गिस्सा (ब, क, स)।
५. भिहितो (अ, क, स)।
६. न हु (स)।
७. य (ब)।
८. करणणतो (ब, स)।
९. सोउं (स)।
१०. पावंति (ब)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट

१. व्यवहारभाष्य-गाथानुक्रम
२. निर्युक्ति-गाथानुक्रम
३. सूत्र से संबंधित भाष्य-गाथाओं का क्रम
४. टीका एवं भाष्य की गाथाओं का समीकरण
५. एकार्थक
६. निरुक्त
७. देशीशब्द
८. कथाएं
९. परिभाषाएं
१०. उपमा
११. निक्षिप्त शब्द
१२. सूक्त-सुभाषित
१३. अन्य ग्रंथों से तुलना
१४. आयुर्वेद और आरोग्य
१५. कायोत्सर्ग एवं ध्यान के विकीर्ण तथ्य
१६. दृष्टिवाद के विकीर्ण तथ्य
१७. विशिष्ट विद्याएं
१८. टीका मे उद्धृत गाथाएं
१९. विशेषनामानुक्रम
२०. वर्गीकृत विशेषनामानुक्रम
२१. टीका में संकेतित निर्युक्तिस्थल
२२. टीका में उद्धृत चूर्णि के संकेत
२३. वर्गीकृत विषयानुक्रम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्यवहारभाष्य-गाथानुक्रम

अ

अइयातो रक्खंतो १६१२
अउणासीतठवणाण ३६६
अंगाणमंगचूली ४६५६
अंगुट्ठ अवर पण्हि ३४८१
अंगुट्ठ पोरमेत्ता ३३६८
अंजलि पणामऽकरणं २३४१
अंडगमुज्झित कप्पे ३१३८
अंडज बोंडज वालज ३७३६
अंतो उवस्सए छड्डणा ६०६
अंतो निवेसणस्सा २७४७
अंतो परिठावंते ३५३८
अंतो पुण सड्ढीणं ३१३५
अंतो बहिं च भिन्नं ३१३७
अंतो बहिं च वीसुं २६६३
अंतो बहिं वावि निवेसणस्स ३७०७
अंतो मुहुत्तकालं २२५७
अंतोवस्सयबाहिं ३४०७
अंतो वा बाहिं वा २७४६, ४२५५
अंतो विसगलजुण्णं ३५४५
अंधं अकूस्मययं २६५६
अकतकरणा वि दुविहा १६०, ६०५
अकत परिकम्मसहं ७७४
अकयकरणा तु गीता १६८, ६११
अकरण निसीहियादी ३१८६
अकरणे पासायस्स ३६६५
अकिरिय जीए पिट्टण ६६५
अक्कंदट्ठाणठितो २४६६
अक्कंदठाण ससुरे २४६३
अक्खयदेहनियत्तं ८२६
अक्खेत्ते जस्सुवट्ठति १८३६
अक्खेवो पुण कीरति २३६८
अगडसुताण न कप्पति २७४५
अगडसुता वाधिकता २७२६
अगडे पलाय मग्गण १०६६
अगडे भाउय तिल तंदुले २३५६
अगणादि संभमेसु य २७१७
अगलंत न वक्खारो २७६५
अगलंतमत्तसेवी २८०२
अगारिए दिट्ठंतो ४४६
अगिलाणे उ गिहिम्मी २५०६
अगिलाय तवोकम्मं १७७७
अगीतसमणा संजति २२२१
अग्गघातो हणे मूलं ४६६
अग्गिहिभूतो कीरति १२१०
अग्गीतसगासम्मी ४२५१
अग्गीतेणं सद्धिं २७
अचरित्ताए तित्थस्स ३०५१, ४२१६
अचवलथिरस्स भावो १४८६
अचियत्तमादि वोच्छेय ३२८७
अचियत्ता निक्खंता २८४८
अच्चाउलाण निच्चोउलाण ३२२२
अच्चातव दूरपहे ३५६२
अच्चाबाध अघायंते १४५५
अच्चाबाहो बाधं १४५६
अच्चित्तं च जहरिहं १३२७
अच्चित्ता एसणिज्जा य १६३
अच्चुण्हताविए उ २५७५
अच्छउ ता उट्ठवणा २०३३
अच्छउ महाणुभागो १२१८
अच्छंताण वि गुरुगा ३३६६
अच्छंति संथरे सव्वे ३६१७
अच्छति अवलोएति य ८२४
अच्छयंते व दाऊणं ३३४१
अच्छिन्नुवसंपयाए ३६६१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अच्छिन्ने अन्नोन्नं	३४३८
अजतणाय व कुव्वंती	३०६७
अजरायु तिण्णि पोरिसि	३१३६
अजायविउलखंधा	३२४८
अज्जसमुद्दा दुब्बल	२६८६
अज्जाणं गेलण्णे	२४४४
अन्नेण भव्वेण वियाणएण	७१२
अन्नेव पाडिपुच्छं	३६५३
अन्नो संलेहो ते	४२६०
अज्झयणाणं तितयं	११६
अझुसिरमविद्धमफुडिय	३४०५
अझुसिरमादीएहिं	३४०६
अट्टे चउव्विधे खलु	२०६७
अट्ठं वा हेउं वा	११६६
अट्ठट्ठ उ अवणेत्ता	४८६
अट्ठ त्ति भाणिऊणं	३६८५
अट्ठम दसम दुवालस	४२४५
अट्ठमी पक्खिए मोत्तुं	३०६२
अट्ठविहा गणिसंपय	४०८०
अट्ठसतं चक्कीणं	३७४८
अट्ठस्स कारणेणं	१२०५
अट्ठहा नाणमायारो	३०१७
अट्ठहि अट्ठारसहिं	४१५७
अट्ठाण सद्द हत्थे	१६१०
अट्ठायार व मादी	४१५६
अट्ठारसेहिं ठाणेहिं	४०७०-४०७३
अट्ठाविते व पुव्वं तु	२००६
अट्ठावीसं जहण्णेण	२२७३
अट्ठिगमादी वसभा	१२४६
अट्ठे व पज्जयाइं	३६६७
अडंते भिक्खकालम्मि	३८५६
अणणुण्णमणुण्णाते	२८६
अणणुण्णाते लहुगा	२६२
अणधिगतपुण्णपावं	२०४१
अणपुच्छाए गच्छस्स	४२८२
अणमप्पेण कालेणं	४२००
अणवट्ठप्पो पारंची	१०७३
अणवट्ठो पारंचिय	१२०६
अणवस्स वि डहरग तरुण	१५७८
अणारद्धे उ अण्णेसु	३८६२
अणालदंसणित्थीसु	१२७०
अणाहोऽधावणसच्छंद	१५८२
अणियययचारि अणियययवित्ती	४०८६
अणुकंपा जणगरिहा	७४३
अणुकंपिता च चत्ता	५५६
अणुकरणं सिव्वण-लेवणादि	१५१४
अणुघातियमासाणं	४०५
अणणुण्णविते दोसा	३३६२
अणुण्णवणाय जतणा	३४१५
अणुपुव्वविहारीणं	४३६०
अणुमाणेउं रायं	७१४
अणुमाणेउं संघं	१६६६
अणुलोमणं सजाती	३५३२
अणुलोमा पडिलोमा	४४०३
अणुलोमिए समाणे	३३२७
अणुवट्ठवितो एसो	४६४८
अणुवसंते च सव्वेसिं	१८४२
अणुवसमंते निग्गम	८६७
अणुवहितं जं तस्स उ	१५१६
अणुवाति त्ती णज्जति	८६६
अणुसट्ठ उज्झमंती	२८३८
अणुसट्ठिं उच्चरती	११७६
अणुसट्ठी धम्मकहा	३३७८
अणुसट्ठीय सुभद्दा	५६१
अणुसास कहण ठवितं	११८२
अणुसासण भेसणया	११६५
अणुसासियम्मि अठिते	११५८
अणूवदेसम्मि वियारभूमी	१८१७
अणेग बहुनिग्गमणे	२५३६
अण्णं गविसह खेत्तं	२१०५
अण्णकाले वि आयाता	२१६१
अण्णट्ठमप्पणा वा	२६३०
अण्णत्थ तत्थ विपरिणते	२०६२
अण्णपडिच्छण लहुगा	२६५
अण्णपधेण वयंते	३५५५
अण्णवसहीय असती	३१३०

अण्णस्सा देंति गणं	२८४४
अण्णाउंछं एगोवणीय	३८५६
अण्णाउंछं च सुद्धं	३८५७
अण्णाउंछं दुविहं	३८५२
अण्णाए वावि परलिंगं	३२६६
अण्णागते कहंतो	२२२४
अण्णाते परियाए	१८७५
अण्णा दोन्नि समाओ	४२४३
अण्णे गामे वासं	२७२५
अण्णेहि कारणेहि व	२५१४
अण्णेहि पगारेहिं	२३७५
अण्णो इमो पगारो	२१४७
अण्णो जस्स न जायति	२२७०
अण्णो देहाओऽहं	७८२
अण्णोण्णनिस्सिताणं	२२०७
अण्णोण्णेसु गणेसुं	१२३४
अण्णो वा थिरहत्थो	२०३६
अण्णो वि अत्थि जोगो	२५२०
अण्णो वि य आएसो	२६६४
अतक्किय उवधिणा ऊ	३४८६
अतरंत कुलगणे या	४६७६
अतरंत बालवुड्ढा	१७७४
अतरंतस्स अडेंते	३६३६
अतिक्कमे वतिक्कमे	४३२
अतिगमणे चउगुरुगा	१०५८
अतिबहुयं पच्छित्तं	६५८
अतियारुवओगे वा	१०७
अतियारे खलु नियमेण	६१४
अतिरेगड्ड उवड्ढा	३२५३
अतिरेग दुविधकारण	३६१६
अतिवेढिज्जति भंते !	६५६
अतिसंघट्टे हत्थादि	६४७
अतिसंथरणे तेसिं	३६४१
अतिसयमरिड्ढितो वा	१६६१
अतिसयरहिता थेरा	२८५६
अतिसेसित दव्वड्ढा	२५१६
अतोसविते पाहुडे	२१२४
अत्तड्ड परड्ढा वा	३६७०
अत्तड्ढा उवणीया	२५०८
अत्तीकरेज्जा खलु जो विदिण्णे	२१८४
अत्थं पडुच्च सुत्तं	४१६६
अत्थरणवज्जितो तू	३४०२
अत्थवतिणा निवतिणा	७१५
अत्थि त्ति होति लहुगो	२६०५
अत्थि पुण काइ चेट्ठा	७१
अत्थि य से सावसेसं	८५६
अत्थि हु वसहग्गामा	३६५१
अत्थी पच्चत्थीणं	५
अत्थुप्पत्ती असरिस	३२२
अत्थेणं गंथतो वा	२८६७
अत्थेण जस्स कज्जं	११७३
अत्थेण मे पकप्पो	२३१५
अत्थेण व आगाढं	२३६५
अत्थो उ महिड्ढीओ	२६४०
अत्थो वि अत्थि एवं	२०६६
अदढप्पियधम्माणं	४५८६
अदसाइ अणिच्छंते	३२७८
अदिक्खायंति वोमे मं	४६५१
अदिट्ठ आभट्ठासुं	१२७१
अद्दिट्ठं दिट्ठं खलु	४१४३
अद्दिट्ठस्स उ गहणं	३७१२
अद्दिट्ठे पुण तहियं	३६४४
अद्दिट्ठे सामिम्मि उ	३४६०
अद्धमसणस्स सव्वं	३७०१
अद्धाण ओम असिवे	३६३८
अद्धाण कक्खडाऽसति	२६१८
अद्धाण दुक्खसेज्जा	२६४४
अद्धाणनिग्गतादी	२८३३, ३५८८
अद्धाणनिग्गयादी	२८१६, ३५८६
अद्धाण पुव्वभणितं	३३५०
अद्धाणम्मि जोगीणं	२१४०
अद्धाणवायणाए	६१
अद्धाणादिसु एवं	१३८१
अद्धाणादिसु नट्ठा	२२४४
अद्धाणादिसुवेहं	२६२५
अद्धाणे अट्ठाहिय	३५२५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अद्धाणे गेलण्णे ३६०२
अद्धाणे बालवुड्ढे ३६३७
अद्धाणेऽसंथरणे २६२२
अद्धा य जाणियव्वा २५०४
अध न कतो तो पच्छा १८७८
अध निक्खिवती गीते १८५६
अध पट्ठवेति सीसं ४४४१
अध पुण अक्खुय चिट्ठे ३५०५
अध पुण अच्छिण्णसुते २२४२
अध पुण गहितं पुव्वं ३५८३
अध पुण गाहित दंसण ३६८७
अध पुण ठवेज्जिमेहिं ३४६३
अध पुण तेणुवजीवति ३६७१
अध पुण न संथरेज्जा ३४६२
अध पुण विकालपत्ताए ३२६०
अध पुव्वठिते पच्छा १८५६
अधव अणाभोगेणं ४६५०
अधव जइ वीसु वीसुं १८२०
अधव पडिवत्तिकुसला २०२७
अधवा अक्खित्तगणाइएसु १६३३
अधवा अज्झुसिरगहणे ३४०३
अधवा अद्धारसगं ४०१३
अधवा अण्णऽण्णकुला १८७७
अधवा अफरुसवयणो ४०६६
अधवा अब्भुट्ठाणं ४५६४
अधवा आहारुवधी २२६८
अधवा इमे अणरिहा १४५६
अधवा उच्चारगतो १२४१
अधवा एगतरम्मि उ १८६१
अधवा एगस्स विधी ६७८
अधवा एसणासुद्धं १६१
अधवा कायमणिस्स उ ४०४४
अधवा गहणे निसिरण १४८६
अधवाऽणुसट्ठुवालंभु ५६७
अधवा तप्पडिबंधा २४१६
अधवा तस्स सीसं तु २६७२
अधवा तिगसालंबेण ४३०७
अधवा न होज्ज एते २४६२
अधवा बितियादेसो २०२२
अधवा भणेज्ज एते ३८७६
अधवा भरियभाणा उ ३३१५
अधवा भुत्तुव्वरितं २६१७
अधवा महानिहिम्मी ४५८
अधवा राया दुविधो २४०८
अधवा वि अण्णदेसं १८१०
अधवा वि अद्धरत्ते ३२०७
अधवा वि कोल्लुयस्सा ५८७/२
अधवा वि पडिग्गहगे ३६८१
अधवा वि पुव्वसंथुत १२७२
अधवा वि सव्वरीए ४२५७
अधवा वि सिद्धपुत्तिं २३७७
अधवा सइ दो वावी १५६८
अधवा समयं दोन्नि वि ३६१४
अधवा हेट्ठाणंतर ६१५
अध सव्वेसिं तेसिं १६१८
अध सुत्त सुत्तदेसा ३७७८
अध सो गतो उ तहियं ४४५६
अधागुरु जेण पव्वावितो ४१२२
अधिकरणम्मि कतम्मि ११६६
अधिकरण-विगतिजोगे २४६
अधिकरणस्सुप्पत्ती २६८१
अधुणा तु लाभचिंता २५१०
अधुणुव्वासिय सकवाड १६६८
अन्नं उद्दिसिऊणं २६६१८
अन्नं च छाउमत्थो ५८
अन्नं च दिसज्झयणं ३१८४
अन्नं व देज्ज वसधिं ३३२८
अन्नतर उवज्झायादिणा १६६२
अन्नतरं तु अकिच्चं ६१६
अन्नतरतिगिच्छाए १३१०
अन्नतरपमादेणं ४०५८
अन्नत्थ दिक्खिया थेरी २८१८
अन्नाउंछविसुद्धं ३७७७
अन्नागय सगच्छम्मी ३०५८
अन्ना वि हु पडिसेवा २२५
अन्नेण पडिच्छावे ३००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्ने वि अत्थि भणिता २६७४
अन्ने वि तस्स नियगा ३४४६
अन्नो निसिज्जति तहिं ३४०१
अपरक्कमो तवस्सी ४४४०
अपरक्कमो मि जातो ४४३६
अपरक्कमो य सीसं ४४४३
अपरिग्गहगणियाए ११७५
अपरिच्छणम्मि गुरुगा ४२८५
अपरिणतो सो जम्हा ७३६
अपरिण्णाकालादिसु ११
अपरीणामगमादी ४१००
अपरीमाणे पिहब्भावे १६८४
अपरीयाए वि गणो १५६५
अपलिउंचिय पलिउंचियम्मि ५८२
अपवदितं तु निरुद्धे १५६१
अपव्ववित सच्छंदा १८६६
अपहुच्चंते काले ३६७७
अपुण्णकप्पो व दुवे तओ वा १८२२
अपुण्णा कप्पिया जे तू ३६६१
अप्पच्चय निब्भयया २३६३
अप्पडिबज्झंतगमो ३५०८
अप्पडिलेहियदोसा ६४०
अप्पत्ते अकहित्ता २०३८
अप्पत्ते कालगते ३६७३
अप्पत्ते तु सुतेणं २०३६
अप्पवितियप्पततिया १७६६
अप्पमलो होति सुची ५०६
अप्परिहारी गच्छति ७०२
अप्पसत्थेण भावेण ३०५४
अप्पसुतो त्ति व काउं १००८
अप्पा मूलगुणेसुं २३८
अप्पावहु दुभागोम ३६८६
अप्पाहारग्गहणं ३६६१
अप्पाहेति सयं वा ३२६०
अप्पेव जिणसिद्धेसु २७७७
अप्फालिया जह रणे ७५२
अफरुस-अणवल-अचवल १४८२
अबंभचारी एसो ७१०
अबहुस्सुते अगीतत्थे १४१६
अबहुस्सुते ऽगीतत्थे १४१८
अबहुस्सुते न देती २१८८
अबहुस्सुते व ओमे १६४४
अबहुस्सुतो अगीतो २४६०
अबहुस्सुतो पकप्पो १६४५
अब्भत्थितो व रण्णा १२२८
अब्भासकरणधम्मुब्भुयाण १४८४
अब्भासत्थं गंतूण ३५२६
अब्भासवत्ति छंदाणुवत्तिया ७८
अब्भिंतरमललित्तो ३२३२
अब्भुज्जतमचएंतो २२६१
अब्भुज्जतमेगतरं १४५७, १५५३, २०१४, २६३६
अब्भुज्जतेसु ठाणं १६२४
अब्भुज्जयं विहारं २३११
अब्भुज्जय निच्छिओऽप्प १६४६
अब्भुज्जय पडिवज्जे ३००३
अब्भुज्जयपरिकम्मं २६२४
अब्भुट्ठाणं अंजलि ६७
अब्भुट्ठाणं गुरुमादी १४८३
अब्भुट्ठाणे आसण १४८१
अब्भुट्ठियस्स पासम्मि ६७७
अब्भुदए वसणे वा १४३७
अब्भुवगतं च रण्णा १५०५
अब्भुवगतस्स सम्मं २१५६
अब्भुवगते तु गुरुणा २०८५
अब्भुवगयाए लोओ २६४६
अभिघातो वा विज्जू ४३८८
अभिणीवारी निग्गते २६१३
अभिधाणहेतुकुसलो १२१६
अभिधारिज्जंतऽपत्ते ३६७८
अभिधारे उववण्णो ३६८१
अभिधारेंत पढंते वा ३६६२
अभिधारेंतो वच्चति २२४८
अभिनिव्वगडादीसु २८१३
अभिभवमाणो समणं ११६३
अभिवड्ढितकरणं पुण २०१
अभिसित्तो सट्ठाणं १६४१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अभिसेज्ज अभिनिसीहिय ६७६
अमणुण्णधन्नरासी ३०७
अमितं अदेसकाले ७५
अमिलाय मल्लदामा १२७८
अमुगं कीरउ आमं ति ८७
अमुगनिस्साऽगीतो २०७२
अमुगो अमुगत्थ कतो ४५३४
अम्मा-पितिसंबंधो २४४६
अम्मा-पितिसंबद्धा ३६६६
अम्मापितीहि जणियस्स ६४६
अम्हं अणिच्छमाणो २४७६
अम्हं एत्थ पिसाओ १०६५
अरिहं व अनिम्माउं १३२८
अरिहाऽणरिहपरिच्छं १४३१
अरिहो वऽणरिहो होति २०१०
अलं मज्झ गणेणं ति २००५
अलसं भणंति बाहिं २७६
अलोणाऽसक्कयं सुक्खं ३६६३
अल्लीणा णाणादिसु ४५१३
अवंकि अकुडिले यावि २०
अवचिज्जते य उवचिज्जते ४६२१
अवणेतु जल्लपडलं २७६६
अवधीरितो व गणिणा १०८७
अवराहअतिक्कमणे ६८
अवराहं वियाणंति ४०५४
अवराहविहारपगासणाय २१६८
अवराहो गुरु तासिं २८४७
अवरो परस्स निस्सं २०६३
अवलक्खणा अणरिहा १६४७
अवसेसा अणगारा ४३५४
अवसो व रायदंडो ५५५
अविकिट्ठ किलम्मंतं २६४
अविणट्ठे संभोगे २६०८
अविधिट्ठिता तु दो वी ३६३५
अविधूयगादि वासो २६३३
अविभवअविरेगेणं २४६०
अवि य विणा सुत्तेणं २३३४
अवि य हु विसोधितो ते ५६३
अवि य हु सुत्ते भणियं ३२८
अविरिक्कसारिपिंडो ३७५३
अविरिक्को खलु पिंडो ३७४१
अवि सिं धरति सिणेहो १२८०
अविसिट्ठा आवत्ती ५४३
अविसेसियं च कप्पे १५४
अविहाडा हं अव्वो २८६२
अविहिंस बंभचारी १६०
अव्वत्तं अफुडत्थं ४०६७
अव्वत्ते ससहाये २२४६
अव्वत्तो अविहाडो ३६६६
अव्विवरीतो नामं २२८१
अव्वोगडं अविगडं ३३५६
अव्वोच्छिन्ननिवाताओ ३८१२
असंघतिमेव फलगं ३४६६
असंतऽण्णे पवायंते ३०६७
असंथरं अजोग्गा वा ४२८४
असंथरण णिंतऽणिंते २२४३
असंथरणेऽणिंताण ३६४६
असंविग्गसभीवे वि ४२६५
असज्झाइएँ असंते ६७०
असज्झाइयपाहुणए ६४५
असज्झायं च दुविधं ३१०१
असढस्स जेण जोगाण २६८४
असती अच्चियलिंगे २०२६
असती अण्णाते ऊ ३३३१
असतीए अण्णलिंगं २३६३
असती एगाणीओ २७२४
असतीए वायगस्स १६१७
असतीए विण्णवेंति ११६५
असतीए सीयाणे ३२७७
असती कडजोगी पुण २३३५, २३६६
असती तव्विधसीसे १८५८
असती निच्चसहाए २७३८
असती नीणेतु निसिं ३२६६
असती पडिलोमं तू २६२६
असती मोयमहीए २७६८
असतीय अप्पणो वि य ३५६२

असतीय अविरहितम्मि ३४६६
असतीय पमुह कोट्ठग ३८८०
असतीयऽमणुण्णाणं ३४६५
असतीय लिंगकरणं ६७०
असती व अन्नसीसं २०१२
असती सुक्किल्लाणं ३२६५
असमाधीमरणेणं २४३२
असमाहियमरणं ते २००८
असमाहीठाणा खलु ४०१
असरिसपक्खिगठविते १३३४
असहंते पच्चत्तरणम्मी ७२६
असहुस्सुव्वत्तणादीणि २७६७
असिणाण भूमिसयणा ३८३८
असिलोगस्स वा वाया २७५०
असिवगहितो व सोउं ३५८२
असिवादिएसु फिडिया ₹३०६
असिवादिकारणगता ३३६६
असिवादिकारणगतो २६३६
असिवादिकारणेणं १७३८
असिवादिकारणेहिं ८६४, १७६४
असिवादी कारणिया ३६४७
असिवादीहि वहंता ४२७६
असिवे ओमोयरिए १०२५
असिवोमाघतणेसुं ३१४८
असिहो ससिहगिहत्थो १८६२
असुभोदयनिप्फण्णा २७६६
असुहपरिणामजुत्तेण ३४०
अस्सामिबुद्धियाए २६६७
अह अत्थइत्ता होज्जाहि ३०६२
अह एते तु न हुज्जा ३६४३
अहगं च सावराधी २३१
अह गंतुमणा चेव ३२८५
अह चिट्ठति तत्थेगो १७५८
अहछंदस्स परूवण ८६३
अह नत्थि को वि वच्चंतो ३००६
अह पुण असुद्धभावो ३६११
अह पुण एगपदेसे ३३३४
अह पुण कंदप्पादीहि ३३८७
अह पुण जेणं दिट्ठो ३४३२
अह पुण निव्वाघातं ३१६८
अह पुण भुंजेज्जाही १२६७
अह पुण रूसेज्जाही ६०४
अह पुण विरूवरूवे ४२८८
अह पुण हवेज्ज दोन्नी ३३७०
अह पेहिते वि पुव्वं ३२६४
अह बेती वायंतो २२२६
अह भावालोयणं धम्म ३४४२
अहमवि एहामो ता २०८८
अहयं अतीमहल्लो १६३७
अहरत्त सत्तवीसं २०६
अह रुंभेज्ज दारट्ठो ३२६३
अहव न भासाजड्डो ४६३८
अहव पुरसंथुतेतर १२७४
अहवा अत्तीभूतो २०६८
अहवा अवस्सघेत्तव्वयम्मि ३५१४
अहवा आयरिओ वी २२५१
अहवा आहारादी १६
अहवा एगहिगारो १६३५
अहवा कज्जाकज्जे २३, १७३
अहवा गणस्स अपत्तियं १३३५
अहवा गाहग सीसो १७११
अहवा जत पडिसेवि ५७६
अहवा जात समत्तो १७४४
अहवा जेणऽण्णइया ४५१५
अहवा जो आगाढं १६४८
अहवा दीवगमेतं १६३६
अहवा तदुभयहेउं २०७५
अहवा दिट्ठंतऽवरो ३१०६
अहवा दोण्णि व तिण्णि व १८२१
अहवा दोण्ह वि होज्जा २०६६
अहवा दोन्नि वि पहुणो ३४५५
अहवा दो वि भंडंते ३६३८
अहवा न लभति उवरिं १४७०
अहवा पढमे सुद्धे ३२०६
अहवा पणगादीयं ६१७
अहवा बेंति अगीता १२६३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अहवा बेंति अम्हे ते ३५३४
अहवा भत्ते पाणे २७८५
अहवा भयसोगजुतो ११४१
अहवा वणिमरुएण य ४५६
अहवा वि अण्ण कोई २८४६
अहवा वि तिन्नि वारा ३४३३
अहवा वि तीसतिगुणे २०३
अहवा वि धम्मसद्धा २४७५
अहवा वि सरिसपक्खस्स २६५४
अहवा समयं पत्ता ३६१३
अहवा सावेक्खितरे १६१, ६०६
अहवुप्पण्णे सचित्तादी २१५२
अहवेक्केक्कियं दत्ती ३७८४
अह साहीरमाणं तु ३८२६
अह से रोगो होज्जा २३४५
अहिगरणे उप्पन्ने २६८२
अहिज्जमाणे उ सचित्तं २१५०
अहियं पुच्छति ओगिण्हते १४२५
अहियऽड्ढमवरिसस्स वि ४६५३
अहियासियाय अंतो ३१५७

आ

आइण्णमणाइण्णं ८५७
आइन्नं दिणमुक्के ३१२३
आइल्ला चउरो सुत्ता ३७१८
आउट्टितो ठितो जो उ ३६३७
आउट्टियावराहं ३२३३
आउट्टो त्ति व लोगे २५४५
आउत्थ परा वावी ३८७१
आउयवाधातं वा ६१६
आएस-दास-भइए ३७०५
आकंपयित्ता अणुमाणयित्ता ५२३
आकिण्णो सो गच्छो २०८७
आगंतुं अन्नगणे १६२५
आगंतुगो वि एवं १८६०
आगंतु तदुत्थेण व २३५७
आगंतु भद्दगम्मी २२३२
आगतमणागताणं २१०१
आगम गम कालगते ३६३०
आगमणं सक्कारं २८३६
आगमणे सक्कारं ८११
आगमतो ववहारं ४०५०
आगमतो ववहारो ४०२६
आगमववहारी आगमेण ३८८४
आगमववहारी छव्विहो वि ४०५१
आगमसुतववहारी ३१८
आगमसुताउ सुत्तेण ६
आगम्म एवं बहुमाणितो हु १४०४
आगाढं पसहायं तु २७७१
आगाढजोगवाहीए ३०५७
आगाढमुसावादी १७२७
आगाढम्मि उ जोगे २१४१
आगाढो वि जहन्नो २१२१
आगारेहि सरेहि य ३२३
आगासकुच्छिपूरो २३०१
आणा दिट्ठंतेण य ४६०७
आणादिणो य दोसा १३०४, २७४८, २७८८, ३२६१
आणादी पंचपदे ३३०३
आणीतेसु तु गुरुणा ३६२८
आणेऊँण न तिण्णो ३४४६
आततरमादियाणं ४६७
आतपरोभयदोसेहि २११२
आतसमुत्थमसज्झाइयं ३२२३
आतुरत्तेण कायाणं २४२६
आदाणाऽवसाणेसु १३५१
आदिगरा धम्माणं ४०३४
आदिग्गहणा उब्भामिगा २५४६
आदिग्गहणा दसकालिओ ३०३७
आदिच्चदिसालोयण २५५६
आदिट्ठ सड्ढकहणं ११३८
आदिमसुत्ते दोण्णि वि १७२६
आदियणे कंदप्पे १६७६
आदिसुतस्स विरोधो २४१६
आदेज्जमधुरवयणो ४०६५
आदेस-दास-भइए ३३४६
आदेसमविस्सामण ६३५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदेसागमपढमा	२८८२
आधाकम्मनिमंतण	४३
आधाकम्मुद्देसिय	१५२०
आभवंताधिगारे उ	२१६५
आभवंते य पच्छित्ते	३८८६
आभिगहितस्स असती	२५२६
आभिग्गहियस्सऽसती	३४२०
आभीरी पण्णवेत्ताण	२८२१
आमं ति वोत्तु गीतत्था	२००६
आमंतेऊण गणं	८०३
आयंबिल उसिणोदेण	४२४६
आयंबिलं न कुव्वति	२१२६
आयंबिल खमगाऽसति	२३८५
आयंबिलस्सऽलंभे	२१३७
आयतर-परतरे या	४८०
आयपराभिसित्तेणं	२४११
आयप्परपडिकम्मं	४३६२
आयरिए अभिसेगे	७२०
आयरिए आलोयण	६६५
आयरिए कह सोधी	५८६
आयरिए कालगते	१५८१
आयरिए जतमाणे	१६५४
आयरिए भणाहि तुमं	३६२१
आयरिओ उ बहुस्सुत	४०८५
आयरिओ केरिसओ	५६८
आयरिय अणादेसा	१७१५
आयरिय अपेसंते	२०६५
आयरिय उवज्झाए	२१७
आयरिय उवज्झाओ	२६५२
आयरिय उवज्झायम्मि	१८६०
आयरिय उवज्झाया	१५६२, १७३५, १६३२
आयरियकुडुंबी वा	२६१३
आयरिय गणिणि वसभे	७२६
आयरियग्गहणेणं	४६८५
आयरियत्ते पगते	१६६०
आयरियपादमूलं	४२६५
आयरियपिवासाए	१५८५
आयरियमादियाणं	१६३२
आयरियवसभसंघाडए	८१५
आयरियाणं सीसो	१५७६
आयरियादी तिविधो	१६६, ६१२
आयरियादेसऽवधारितेण	१७१४
आयवताणनिमित्तं	३४७८
आयसक्खियमेवेहं	२७५६
आयसमुत्थं लाभं	२२३८
आयारकुसल एसो	१४८८
आयारकुसल संजम	१४८०
आयारपकप्पे ऊ	१५२८
आयारमादियाणं	४६७४
आयारव आधारव	५२०
आयारविणयगुणकप्प	४३०१
आयारसंपयाए	४०८३
आयारसुतसरीरे	४०८१
आयारस्स उ उवरिं	१५३३
आयारे वट्टंतो	१६७४
आयारे विणओ खलु	४१३२
आयारे सुत विणए	४१३१
आयासकरो आएसितो	३७०४
आरब्भसुत्ता सरमाणगा तू	२२५२
आराधितो नरवती	२६४१
आराहणा उ तिविधा	३८८७
आराहेउं सव्वं	४४८८
आरिय-देसारियलिंग	८६६
आरियसंकमणे परिहरेंति	८६८
आरेणागमरहिया	२३६६
आरोवण उद्दिट्ठा	३६२
आरोवण निप्फण्णं	१४२
आरोवणमक्खेवं	२६५८
आरोवणा जहन्ना	३५६
आरोवणा परूवणा	२६५१
आरोह परीणाहो	४०६१, ४०६३
आरोहो दिग्घत्तं	४०६२
आलवणादी उ पया	५५८
आलावण पडिपुच्छण	५५०
आलिहण सिंच तावण	२६४८
आलीढ-पच्चलीढे	२१८

आलीवेज्ज व वसधिं २६८७
आलोइय-पडिकंतस्स ४०५२
आलोइयम्मि गुरुणा १६००
आलोइयम्मि निउणे १२४४
आलोइयम्मि सेसं ८५८/३
आलोइयम्मि सेहेण २१८१
आलोएंतो सोउं ३८६३
आलोगम्मि चिलिमिणी ३२१६
आलोगो तिन्निवारे २५७७
आलोयंतो एत्तो ५२१
आलोयणं गवेसण १२११
आलोयण तह चेव य ३०२
आलोयण त्ति का पुण ५४
आलोयण त्ति य पुणो ५८५
आलोयण पडिकमणे ५३, ४१८०, ४१८५
आलोयणागुणेहिं ४१५८
आलोयणापरिणतो २३३
आलोयणाय दोसा २३७६
आलोयणारिहालोयओ ५१८
आलोयणारिहो खलु ५१६
आलोयणा विवेगे य ४१६२
आलोयणा विवेगो य ४१८७
आलोयणाविहाणं ५२४
आलोयणा सपक्खे २३६१
आलोय दावणं वा २५८३
आलोयमणालोयण ६६६
आवकही इत्तरिए २६३
आवण्णमणावण्णे २७१५
आवण्णो इंदिएहि ४६६
आवरिया वि रणमुहे ६२७
आवलिय मंडलिकमो ३६८०
आवलिया मंडलिया १८२४
आवस्सगं अकाउं ६८६
आवस्सगं अणियतं ८८४
आवस्सगं तु काउं ६८२
आवस्सग-पडिलेहण २६६
आवस्सग-सज्झाए ८८३
आवस्सग-सुत्तत्थे २०१७
आवस्सय काऊणं ३१६२
आवस्सयाइ काउं ६२६
आवस्सिया-पमज्जण २५४
आसंकमवहितम्मि य ५६
आसन्न खेत्त काले २२६८
आसण्णखेत्त भावित १६८८
आसण्णट्ठितेसु उज्जएसु १६५५
आसण्णेसुं गेण्हति १७६१
आसन्नतरा जे तत्थ २२२०
आसन्नमणावाए ३०१३
आसन्नातो लहुगो ८२७
आसस्स पड्डिदाणं १८६६
आसासो वीसासो १६८१
आसि तदा समणुण्णा २६०६
आसीता दिवससया ३६६
आसुक्कारोवरते १८६६
आहच्च कारणम्मि य २१
आहरति भत्तपाणं १२१३
आहाकम्मिय पाणग ४२६७
आहायरिओ एवं ४५२५
आहार-उवधि-सेज्जा ६७२, १००६, ११०४, १५७३, ३३६६
आहारवत्थादिसु लद्धिजुत्तं १३६६
आहारा उवजोगो २६४५
आहारादीणट्ठा ६६६
आहारादुप्पायण २६३७
आहारे उवगरणे ३५६६
आहारे जतणा वुत्ता २२७६
आहारे ताव छिंदाही ४३३४
आहारो खलु पगतो ३७०३
आहारोवधिसेज्जा १६७३
आहारोवहि-झाओ ७०५
आहारोवहि-सयणाइएहि ४५७०
आहारोवहिसेज्जादिएहि ४५७२
आहारोवहि-सेज्जा य ४५६६

इ

इंगालदाह खोडी १४४५

इंगितागारदक्खेहिं २००३
इंदकील मणोग्गाह १८०५
इंदियअव्वागडिया १०२
इंदियउवघातेणं ४६२०
इंदिय-कसायनिग्गह १४६०
इंदियपडिसंचारो ४३१६
इंदियमाउत्ताणं ३१६५
इंदियरागद्दोसा १०१
इंदियाणि कसाए य ४२६४
इंदियावरणे चेव ४६११
इच्चेयं पंचविधं ४००८
इच्चेसो पंचविहो ४००९
इच्छित-पडिच्छितेणं २२०८
इतरे भणंति बीयं १८८७
इतरे वि होज्ज गहणं ३५७७
इतरेसिं घेत्तूणं ३३०८
इति असहण उत्तुयया ३०१०
इति आउर पडिसेवंत १०४४
इति एस असम्माणो ११२४
इति कारणेसु गहिते ६०५
इति खलु आणा बलिया २०७४
इति दव्व खेत्त-काले १२६५
इति पत्तेया सुत्ता १७६३
इति संजमम्मि एसा २४५२
इति सुद्ध सुत्तमंडलि १४२९
इति होउ त्ति य भणिउं १६०३
इत्तरियसामाइय छेद ४६८
इत्थीओ बलवं जत्थ ६३६, ६३७
इत्थी नपुंसगा वि य ६३७
इत्थी पण्हाति जहिं २८१४
इय अणिवारितदोसा ४२११
इय चंदणरयणनिभा १४४६
इय पंचकपरिहीणे ९६४
इय पवयणभत्तिगतो १६४८
इय पुव्वगताधीते २७०३
इय मासाण बहूण वि ४०४५
इय होउ अब्भुवगते १६०६
इरियावहिया हत्थंतरे ३१६०
इस्सरसरिसो उ गुरू ५८४
इह-परलोगासंसविमुक्कं ८१
इहरह वि ताव चोदग ८४५
इहलोए फलमेयं ३२३७
इहलोए य अकित्ती १७०३
इहलोगम्मि य कित्ती १७०७
इहलोगियाण परलोगियाण २४३१

ई

ईसिं ओणा उद्धड्डिया २३७३
ईसिं अवणय अंतो २०५२

उ

उउबद्धपीढफलगं ८८६
उंबरविक्खंभे विज्ञति ३८७७
उक्कड्ढंतं जधा तोयं २७६८
उक्कत्तितोवत्तियाइं ७८१
उक्कोसबहुविधीयं ११३७
उक्कोसा उ पयाओ ४८८
उक्कोसा य जहन्ना ४२३८
उक्कोसारुवणाणं ३८१
उक्कोसिगा उ एसा ४२४९
उक्खल खलए दव्वी ३८५३
उक्खेवेणं दो तिन्नि १४६३
उग्गममादी सुद्धो ३४७२
उग्गह एव अधिकितो ३३०९
उग्गह पभुम्मि दिट्ठे ३३४९
उग्गहम्मि परे एवं ३६५७
उग्गहसमणुण्णासुं ३५१८
उग्गहियस्स उ ईहा ४१०९
उग्घातमणुग्घातं ६०१
उग्घातमणुग्घाते ३४६
उग्घातियमासाणं ४८६
उच्चफलो अह खुड्डो १४२३
उच्चारं पासवणं ३५६०
उच्चारभिक्खे अदुवा विहारे २८६०
उच्चारमत्तगादी ३६२६

उच्चारादि अथंडिल	२०४३
उच्चारियाए नंदीए	२६५२
उच्चारे पासवणे	४६८१
उच्छेव बिलङ्घगणे	१७५४
उज्जाण गाम दारे	३६१५
उज्जाण घडा सत्थे	३८७८
उज्जाणरुक्खभूले	४३१५
उज्जुमती विउलमती	४०३३
उज्जेणी सगराया	४५५७
उट्ठाणं वंदणं चेव	४६०१
उट्ठाणासणदाणादी	४६००
उड्डेंत निवेसंते	२६५१
उड्डेज्ज निसीएज्जा	५५४
उडुबद्ध दुविह गहणा	३३८६
उडुबद्धसमत्ताणं	१७६५
उडुबद्धे अविरहितं	१७४६
उडुवद्धे कारणम्मि	३४१०
उडुबद्धे विहरंता	३८६२
उडुभयमाणसुहेहिं	२३८०
उडुमासे तीसदिणा	२०७
उडुवासे लहु लहुगा	१७३२
उड्ढं अधे य तिरियं	३७४७
उण्होदगे य थोवे	३८०३
उत्तदिणसेसकाले	३१४
उत्तरगुणातियारा	४६४
उत्तरतो हिम्मवंतो	११२६
उत्ता वितिण्णगमणा	८३३
उदउल्लादि परिच्छा	२०४२
उदगभएण पलायति	८२२
उद्दिट्ठमणुद्दिट्ठे	३६६२
उद्दिट्ठवग्गदिवसा	३७८६
उद्देसम्मि चउत्थे	२३०४
उद्देस-समुद्देसे	११४
उद्धारणा विधारण	४५०३
उद्धावणा पधावण	६६२
उद्धितदंडो साहू	३४२
उद्धियदंडगिहत्थो	३४३
उप्पण्णकारणे पुण	२६१५
उप्पण्णणाणा जह णो अडंती	२५७१
उप्पण्णे उप्पण्णे	२१४८
उप्पण्णे गेलण्णे	२४२८
उप्पत्ती रोगाणं	४३६
उप्पन्नगारवे एवं	२००४
उप्पन्ना उप्पन्ना	४३००
उप्पन्ने उवसग्गे	४३६८
उप्पा उवसम उत्तरण	२५६२
उप्पियण भीत संदिसण	१६६६
उप्फिडितुं सो कणगो	४३६५
उब्भामिय पुव्वुत्ता	१८८६
उब्भावणा पवयणे	८०६
उभओ किसो किसदढो	७८७
उभओ जोणीसुद्धो	६२७
उभतो गेलण्णे वा	७०६
उभयं पि दाऊण सपाडिपुच्छं	१२१४
उभयधरम्मि उ सीसे	२३३६
उभयनिगे वतिणीय व	३०६०
उभयनिसेध चउत्थे	४५६२
उभयबलं परियागं	१०३७
उभयम्मि वि आगाढे	२१३१
उभयस्स अलंभम्मि वि	२७३५
उम्मग्गदेसणाए	१६६१,१७१७
उम्मत्तो व पलवते	१६१८
उम्माओ खलु दुविधो	११४७
उम्मायं च लभेज्जा	३२३६
उल्ले लहुग गिलाणादिगा	१७६२
उवगरणनिमित्तं तू	४२३४
उवगरण बालवुड्ढा	१६४३
उवगरणेहि विहूणो	४३६८
उवट्ठितम्मि संगामे	२४०३
उवणट्ठ अन्नपंथेण	३६६८
उवदेसं काहामि य	२५१८
उवदेसो उ अगीते	३३
उवदेसो न सिं अत्थि	२६६५
उवधी दूरद्धाणे	३५६३
उवधी पडिलंधेणं	३५०३
उवमा जवेण चंदेण	३८३३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उवयारहीणमफलं	२३३६
उवयोगवतो सहसा	१०५
उवरिं तु पंचभइए	४२५
उवरिमगुणकारेहिं	५३२
उववातो निद्देसो	२०८१
उवसंपज्जण अरिहे	१६१६
उवसंपज्जते जत्थ	२१५६
उवसंपज्जमाणेण	२०७७
उवसंपाविय पव्वाविता	१६१३
उवसग्गे सोढव्वे	१४३६
उवसामिता जतंतेण	२६५६
उवसामिते परेण व	६१०
उवहतउग्गहलंभे	३६७६
उवहि सुत भत्तपाणे	२३५२
उवहिस्स य छब्भेदा	२३५४
उव्वण्णो सो धणियं	२८६३
उव्वत्तणा य पाणग	७५५
उव्वत्त दार संथार	४३२१
उव्वरगस्स उ असती	१०६७
उव्वरिया गिहं वावि	३३११
उस्सग्गस्सऽववादो	१५४२
उस्सण्ण तिन्नि कप्पा	३२७५
उस्सण्ण बहू दोसे	४५४५
उस्सव कदाइ गहणे	८४१
उस्सुत्तं ववहरंतो	१६६३
उस्सुत्तमणुवदिट्ठं	८६१
उस्सुत्तमायरंतो	८६०

ऊ

ऊणट्ठए चरित्तं	४६४६
ऊणातिरित्तधरणे	३५६५
ऊसववज्ज कदाई	८३७
ऊसववज्ज न गेण्हति	८४२

ए

एंताण य जंताण य	२७३२
एक्कं व दो व तिन्नि व	४२६२, ४२७०
एक्कतीसं च दिणा	२०८
एक्कमेक्कं तु हावेत्ता	३६८७
एक्कम्मि उ निज्जवगे	४२७३
एक्कम्मि दोसु तीसु व	२४७४
एक्कहि विदिण्णरज्जे	३३७१
एक्कादियातु दिवसा	३७६
एक्कारसंगसुत्तत्थ	१४७८
एक्कारसवासस्सा	४६५८
एक्कासण-पुरिमड्ढा	४२०६
एक्केक्क एगजाती	१३८५
एक्केक्कं तं दुविधं	४२२६
एक्केक्कं पि य तिविहं	६८३
एक्केक्के आणादी	२१२८
एक्केक्को तिन्नि वारे	३२०६
एक्केणेक्को छिज्जति	४४०
एक्को व दो व उवधिं	३२८२
एक्को व दो व निग्गत	२६६६
एक्कोसहेण छिज्जंति	४४१
एगंगि अणेगंगी	३३६१
एगंतनिज्जरा से	४४०५, ४४१६
एगंतरनिव्विगती	२५२
एगं दव्वेगधरे	४५७६
एगं व दो व दिवसे	१६२०
एगग्गया य झाणे	६५५
एगग्गो उवगिण्हति	२६५६
एगट्ठिया अभिहिया	८
एगतरलिंगविजढे	६०६
एगत्तं उउबद्धे	१६८५
एगत्तं दोसाणं	४५२/१
एगत्त-बहुत्ताणं	१६३७
एगत्तियसुत्तेसुं	१६३८
एगत्थ वसितो संतो	२७३६
एगदिणे एक्केक्के	२७४३
एग-दुगपिंडिता वि हु	१७६६
एग दुगे तिसिलोगा	३०१६
एगदुमो होति वणं	३७६१
एगदेसम्मि वा दिन्ने	३३१२

एगपए अभिणिपए	३७१७
एगमणेगा दिवसेसु	२४५
एगम्मि णेगदाणे	३५३
एगम्मि वी असंते	२७०६
एगल्लविहारादी	४१३६
एगल्लविहारे या	४१३३
एगस्स उ परीवारो	२१८२
एगस्स खमणभाणस्स	१०२७
एगस्स दोण्ह वा संकितम्मि	३१६३
एगस्स भुंजमाणस्स	३८५८
एगस्स सलिंगादी	१०१४
एगागिस्स उ दोसा	१८०१
एगागिस्स न लब्भा	२७८
एगाणिओ उ जाधे	३२८८
एगाणियं तु गामे	३२६८
एगाणियं तु मोत्तुं	२५८
एगाणियस्स दोसा	२८०३
एगाणियस्स सुवणे	३६५६
एगाणिया अपुरिसा	१५६१
एगा दो तिन्नि वली	३५८६
एगाधिगारिगाण वि	१३७
एगा भिक्खा एगा	३८१३
एगावराहदंडे	४४६
एगाह तिहे पंचाहए	१२८८
एगाहिगमद्धाणे	२७२१
एगिंदिऽणंत बज्जे	४५३८
एगुत्तरिया घडछक्कएण	५०५, ५११
एगूणतीसवीसा	७६०
एगूणपण्णे चउसट्ठिगा	३७८१
एगूणवीसति विभासितस्स	६०३/१
एगे अपरिणए वा	२५७
एगे उ पुव्वभणिते	३६४६
एगे गिलाण पाहुड	२६२
एगेण लोसिततरो	३१०८
एगे वि महंतम्मि उ	३६४५
एगो उद्दिसति सुतं	४५६४
एगो एगं एक्कसि	३८१५
एगो एगं पासति	३३००
एगो एगो चेव तु	३२५५
एगो चिट्ठति पासे	१४०७
एगो निद्दिस एगं	३६३४
एगो य तस्स भाया	१०८२
एगो रक्खति वसधिं	१७६५
एगो संथारगतो	४२८०
एण्हिं पुण जीवाणं	१८६४
एतगुणसंजुयस्स उ	५४१
एतगुणसंपउत्तो	१३७२
एतग्गुणोववेया	१४७६
एतद्दोसविमुक्कं	२६४
एतद्दोसविमुक्को	१७२८
एतविहि विप्पमुक्को	३०६६
एतस्स पभावेणं	२६११
एतस्स भागहरणं	२०२
एतस्सेगदुगादी	१३२२
एताणि य अन्नाणि य	११३०
एताणि वितरति तहिं	३३७४
एतारिसं विउसज्ज	२६१
एति व पडिच्छते वा	२७४४
एते अँकज्जकारी	१७०२
एते अण्णे य तहिं	२४८०, ४२६०, ४२६८
एते अण्णे य बहू	३५४१
एते अन्ने य जम्हा उ	२४२२
एते अहं च तुब्भं	१६०६
एते उ कज्जकारी	१७०६
एते उ सपक्खम्मी	३०२७
एते गुणा भवंती	१५५६
एते चेव य गुरुगा	१६६०
एते चेव य ठाणे	१००६
एते चेव य दोसा	२६६०
एतेण अणरिहेहिं	१४४७
एतेण उवाएणं	३७०६
एतेणं विधिणा ऊ	३३६४
एतेण कारणेणं	२७१९, ३९८८
एतेण जितो मि अहं	१०६०
एतेण सुत्त न गतं	८१०, ३२६७
एते दो आदेसा	२०६१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एते दोस अपेहित ३२६३
एते दोसविमुक्का १४५४
एते दोसा जम्हा ३३१६
एते पावति दोसा २४३०
एते पुण अतिसेसे २६८५
एते य उदाहरणा १३८७
एते सव्वे दोसा १००१
एतेसामण्णतरे ३२२०, ३२२८
एतेसिं अण्णतरं १२७
एतेसिं असतीए ११६७, २४३८
एतेसिं कतरेणं २३६०
एतेसिं ठाणाणं ४०६१
एतेसिं तु पदाणं १२७६
एतेसिं रिद्धीओ १२५४
एतेसुं चउसुं पी ३५१७
एतेसुं ठाणेसुं १६४४, १६३१
एतेसुं सव्वेसुं १४६२
एतेसु तिठाणेसु १३४
एतेसु धीरपुरिसा ४५०६
एतेसु य सव्वेसु वि २३४२
एतेसुप्पण्णेसुं ७६४
एतेसु वट्टमाणे ६५७
एतेहि कमति वाही २७६२
एतेहि कारणेहिं १७४७, ३३२१, ३४६१, ३५२६, ३६०२, ४३८६
एत्तो उ पओगमती ४१११
एत्तो एगतरेणं ४२५०
एत्तो तिविधकुसीलं ८७७
एत्तो निकायणा मासियाण ५१७
एत्तो समारुभेज्ञा ५७४
एत्थं तिंसइ सुमिणा ४६६६
एत्थं सुयं अहीहामि ३६५६
एत्थ पडिसेवणाओ ३४७, ५२८
एत्थ सकोसमकोसं ३६५०
एमादि उत्तरोत्तर १८८६
एमादिदोसरहिते ३१६६
एमादीओ एसो ४५४१
एमादी सीदंते १६५१
एमेव अछिन्नेसु वि ३६२६
एमेव अणत्तस्स वि ११६८
एमेव अणायरिया ३२४५
एमेव अधाछंदे १६७८
एमेव अपुण्णम्मि वि ३५१५
एमेव अप्पबितिओ २२०४
एमेव आणुपुव्वी ४३८१
एमेव इत्थिवग्गे ३६३५
एमेव उवज्झाए २८२७
एमेव एगणेगे ३८१४
एमेव गणायरिए ८०७, १६११
एमेव गणावच्छे १८५०, २२११
एमेव जंबुगो वी १३८६
एमेव ततियसुत्ते १०३२
एमेव दंसणम्मि वि ४३०६
एमेव दंसणे वी २६०
एमेव देसियम्मि वि १८६६
एमेव निच्छिऊणं १८७४
एमेव बहूणं पी १८५४, २२१५
एमेव बितियसुत्ते १०४८, १६१६, २३३७
एमेव भत्तसंतुट्ठा ३६२०
एमेव मंडलीय वि १८३०
एमेव महल्ली वी ३८०८
एमेव मीसगम्मि वि १८२६
एमेव य अनिदाणं ८२
एमेव य अवराहे ३०३
एमेव य असहायस्स २१६६
एमेव य आयरिए २८२८
एमेव य कालगते २६७८
एमेव य गणवच्छे १७६१/१
एमेव य तुल्लम्मि वि १७६
एमेव य देहबलं ७८३
एमेव य पंथम्मि वि ३२६६
एमेव य पडिसिद्धे ६७७
एमेव य पारोक्खी ४१७६
एमेव य पासवणे ३१५८
एमेव य बहिया वी ३५४८
एमेव य बितिओ वी ४५६१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एमेव य बितियपदे	३५४७
एमेव य मज्झमिया	४६०६
एमेव य लिंगेणं	६६३
एमेव य वासासुं	१६८३
एमेव य संविग्गे	७०४
एमेव य संसत्ते	६७२
एमेव य समणीणं	३२२७
एमेव य समतीते	२३०३
एमेव य सव्वं पि हु	७६६
एमेव य साधूणं	२३२६
एमेव वणे सीही	७७२
एमेव विणीयाणं	२६१४
एमेव संजती वा	३०४०
एमेव सेसए वी	१०४
एमेव सेसएसु वि	१८५, २१६१
एमेव सेसगेसु वि	११३
एमेव होति ठवणा	१३६३
एमेव होति भंगा	४५६७
एमेवायरियस्स वि	२५६४, ४५६३
एमेवासणपेज्जाइं	२४०७
एयं पादोवगमं	४३५६
एयं सुत्तं अफलं	३३२०, ३४८३
एयगुणसंपउत्ता	१७४१
एयगुणसंपउत्तो	१७२६
एयऽन्नतरागाढे	४४६६
एयागमववहारी	४१६२
एयारिसम्मि दव्वे	३७६५
एयारिसाय असती	३०८१
एवइयाणं भत्तं	१३४६
एवं अगडसुताणं	२७४२
एवं अज्ञसमुद्दा	२६६०
एवं अत्तट्ठाए	३७५४
एवं अद्दण्णाइं	२४५५
एवं असुभगिलाणे	६२१
एवं आयरियादी	१५३६
एवं आलोएंतो	४३१०
एवं आवासा सेज्जमादि	३१६७
एवं इमो वि साधू	१२०२
एवं उत्तरियम्मि वि	१००२
एवं उप्पाएउं	३६७५
एवं उभयतरस्सा	४८२
एवं उवड्डियस्सा	८४३
एवं एता गमिता	३८५, ३६०, ३६५
एवं कारुण्णेणं	२४५६
एवं कालगते ठविते	१६१५
एवं खलु आवण्णे	१०३०
एवं खलु उक्कोसा	४३२३
एवं खलु गमिताणं	४००
एवं खलु ठवणातो	४२८
एवं खलु संविग्गे	१८७३
एवं गंतूण तहिं	४५०१
एवं गणसोधिकरे	४५७५
एवं गणसोभम्मि वि	४५७३
एवं चक्खिंदियघाण	४६१६
एवं चरणतलागं	१२८६
एवं चेव य सुत्तं	१६६१
एवं छिन्ने तु ववहारे	३७५०
एवं जधा निसीहे	२३५५
एवं जहोवदिट्ठस्स	४५५०
एवं जुत्तपरिच्छा	१४४१
एवं ठिताण पालो	१७८६
एवं ठितोवविट्ठे	३५५६
एवं ठितो ठवेती	१६४५
एवं ता उग्घाए	४४६३
एवं ता उडुबद्धे	२२३६
एवं ता उद्देसो	३०४१
एवं ता जीवंते	३६७२
एवं ता दिट्ठम्मी	३४३४
एवं ता पम्हुट्ठो	३५७०
एवं ताव पणट्ठे	२३३२
एवं ताव बहूसुं	१६६२
एवं ताव विहारे	३६६३
एवं ताव समत्ते	१८३३
एवं ता सग्गामे	३४५६
एवं ता सावेक्खे	२२१६
एवं तु अणुत्ते वी	४०२१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं तु अहिज्जंते २१५७
एवं तु चोइयम्मी ४१७२
एवं तु णायम्मी ४३७६
एवं तु ताहि सिट्ठे ३०७४
एवं तु दोन्नि वारा ३४७१
एवं तु निम्मवेंती ३७००
एवं तु पासत्थादिएसु २६०३
एवं तु भणंतेणं ४२१३
एवं तुमं पि चोदग ३३६
एवं तु मुसावाओ ४४८२
एवं तु विदेसत्थे २६१२
एवं तु समासेणं ४३०
एवं तु होंति चउरो ३२०४
एवं तू परिहारी ६२६
एवं दप्पपणासित २३२७
एवं दप्पेण भवे ४४६३
एवं दब्भादीसुं २४४१
एवं दोण्णि वि अम्हे १३३३
एवं धरती सोही ४२१२
एवं न ऊ दुरुस्से १६६७
एवं नवभेदेणं ४०२३
एवं नाणे तह दंसणे ३६७५
एवं पट्टगसरिसं २६४३
एवं परिक्खितम्मी १४४३
एवं परिच्छिऊणं ४४५५
एवं पादोवगमं ४४२६
एवं पासत्थमादी ३६३१
एवं पि अठायंते १६०२
एवं पि कीरमाणे ५७१
एवं पि दुल्लभाए २७३३
एवं पि भवे दोसा २७२८
एवं पि विमग्गंतो ६६८
एवं पुव्वगमेणं २८७५
एवं बारसमासा ४६३
एवं बारसवरिसे ३२११
एवं भणिते भणती ४१६३
एवं भणितो संतो १२८१
एवं मग्गति सिस्सं १४५८
एवं वइ कायम्मी ४०२२
एवं विपरिणामितेण ३४३१
एवं सदयं दिज्जति ४२०८
एवं सारणवतितो ८५८/२
एवं सिद्धग्गहणं ३६१०
एवं सिद्धे अत्थे २०७०
एवं सिरिघरिए वी १६१४
एवं सीमच्छेदं ३६५४
एवं सुत्तविरोहो १७३३
एवं सुद्धे निग्गम १६१६
एवं सुभपरिणामं ८३२
एवं सो पासत्थो ८४६
एवं होति विरोधो ६२२
एव तुलेऊणप्पं २६४१
एव न करेंति सीसा २६६८
एवमणुण्णवणाए ३४६५
एवमदिण्णवियारे ३५२०
एवमेक्केक्कियं भिक्खं ३७८३
एवमेगेण दिवसेण २७४०
एवमेसा तु खुड्डीया ३८०७
एवाऽऽणह बीयाइं ४४५०
एवाणाए परिभवो २५६१
एवाहारेण विणा ४३७१
एविध वी दव्वं ३१७५
एस अगीते जयणा २८१
एस जतणा बहुस्सुते २७६३
एस तवं पडिवज्जति ५४६
एस परिणामगो ऊ ४६२६
एस विधी तू भणितो ३४५६
एस सत्तण्ह मज्जाया ३२८०
एसा अट्ठविधा खलु ४०८२
एसा अविधी भणिता ३८६५
एसा खलु बत्तीसा ४१२४
एसाऽऽगमववहारो ४४३०
एसा गहिते जतणा ३४१६
एसा गीते मेरा १४६५
एसा जयणा उ तहिं २७६६
एसाऽऽणाववहारो ४५०२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एसादेसो पढमो २०६०
एसा वूढे मेरा १३४३
एसेव कमो नियमा ३३४२
एसेव गमो नियमा ६२२, ६२३, ११२३, २४४२, २८३२, २६२२
एसेव चेइयाणं ३६५०
एसेव य दिट्ठंतो १७७, ४४३, ८३०
एसो आहारविधी ३७०२
एसो उ असज्झाओ ३१५३
एसो उ होति ओघे ८३६
एसोऽणुगमो भणितो ४६६०
एसो पढमो भंगो १६२१
एसो सुतववहारो ४४३७

ओ

ओगाली फलगं पुण २२८७
ओग्गहियम्मि विसेसो ३८२७
ओघो पुण बारसहा २३५१
ओदणं उसिणोदेणं ३८०४
ओधाणं वावि वेहासं २६८५
ओधादी आभोगण ३३६३
ओधीगुण पच्चइए ४०३२
ओभामितो न कुव्वति १२०८
ओभासितम्मि लद्धे ३४४०
ओभासिते अलद्धे ३४३६
ओभासियपडिसिद्धं २६२८
ओमंथ पाणमादी ३६२७
ओमाणं नो काहिति २८७३
ओमादी तवसा वा २२६०
ओमेऽसिवमतरंते १६११
ओलोयणं गवेसण १०७४
ओवाइयं समिद्धं ८२१
ओसण्णाण बहूण वि २२१८
ओसध वेज्जे देमो ११०३
ओसन्न-खुतायारो १५२२
ओसन्नचरणकरणे १६७१
ओह अभिग्गह दाणग्गहणे २३५०
ओहावंता दुविधा ३६४८
ओहाविय भग्गवते २०३१
ओहासण पडिसिद्धा १२३०
ओहीमादी णाउं ३३७३
ओहेणेगदिवसिया २३६

क

कइएण सभावेण य २४८६
कइतवधम्मकधाए २३८३
कइतविया उ पविट्ठा २८६१
कइवेण सभावेण व २४६६
कंकडुओ विव मासो १६६६
कंखा उ भत्तपाणे ४१५४
कंचणपुर गुरुसण्णा ४२७८
कंटकपायग्गहणे ८२५
कंटकमादिपविट्ठे ६६२
कंटकमादी दव्वे २११
कंदप्पा परलिंगे ८६२
कंदप्पा लिंगदुगं ८६२/१
कक्खंतं गुज्झादी २३६१
कज्जम्मि वि नो विगतिं ३६६६
कज्जम्मि समत्तम्मी ३४७३
कज्जाकज्ज जताऽजत १७१, ६१४
कज्जेण वावि गहियं २८६२
कज्जे भत्तपरिण्णा २६६
कडजोगिणा उ गहियं १०८
कडणंतरितो वाए ३०६३
कडुहंड पोट्टलीए २४५४
कणगा हणंति कालं ३१६६
कण्णम्मि एस सीहो १०८८
कण्हगोमी जधा चित्ता २७६३
कतकरणा इतरे वा १५६
कतमकतं न विजाणति १४१०
कतसज्झाया एते २१०६
कत्थ गतो अणपुच्छा १६२८
कत्थ त्ति निग्गतो सो १४१५
कधणाऽऽउट्टण आगमण १२२५
कधिते सद्दहिते चेव ४६३४
कधेंतो गोयमो अत्थं २६४८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कधेहि सव्वं जो वुत्तो	४०६६
कप्पट्ठग संथारे	१७६०
कप्पट्ठितो अहं ते	५४८
कप्पति उ कारणेहिं	६४४
कप्पति गणिणो वासो	२७०८
कप्पति जदि निस्साए	३०४५
कप्पति य विदिण्णम्मी	१३४८
कप्पपकप्पी तु सुते	३२०
कप्पम्मि अकप्पम्मि	१७४
कप्पम्मि कप्पिया खलु	१५३
कप्पम्मि दोन्नि पगता	२६६२
कप्पम्मि वि पच्छित्तं	१५१
कप्पव्ववहाराणं	४६६३
कप्पसमत्ते विहरति	१६५७
कप्पस्स य निज्जुत्तिं	४४३४, ४४३५
कम्ममसंखेज्जभवं	४३३८-४३४१, ४६७३
कम्महतो पव्वइतो	२४७०
कम्माण निज्जरट्ठा	१४०१
कयकरणा इतरे या	६०४
कयकरणिज्जा थेरा	१७४०
कयकुरुकुय आसत्थो	२६०६
कर-चरण-नयण-दसणाइ	२६८२
करणं एत्थ उ इणमो	५२६
करणिज्जेसु उ जोगेसु	५६
कलमोदणपयकढियादि	४२८७
कलमोदणो य पयसा	४२८६
कललंडरसादीया	४६२७
कलासु सव्वासु सवित्थरासु	८६६
कल्लाणगभावन्ने	४२०५
कसिणा आरुवणाए	४२६
कसिणाऽकसिणा एता	४३१
कसिणारुवणा पढमे	३४४
कस्स पुण उग्गहो त्ती	२२१७
कह दिज्जति तस्स गणो	१५५४
कहमरिहो वि अणरिहो	१६६८
कहि एत्थ चेव ठाणे	३४१८
कहिए य अकहिए वा	२४६६
काउं देसदरिसणं	१४७२
काउं न उत्तुणई	२३६०
काउं निसीहियं अट्ठ	११८६
काउस्सग्गं काउं	६८७
काउस्सग्गमकाउं	६८५
काउस्सग्गे वक्खेवया	२६५०
कामं अप्पच्छंदो	७६०
कामं आसवदारेसु	११०८
कामं तु रसच्चागो	१७७६
कामं पम्हुट्ठं ण्हे	३५७५
कामं भरितो तेसिं	३२३१
कामं ममेदकज्जं	३३४
कामं विसमा वत्थू	३२६
कामं सो समणट्ठा	३७५७
कायचेट्ठं निरुंभित्ता	१२२
काय-वइ-मणोजोगो	४६४७
कायव्वमपरितंतो	१४३८
कायोवचितो बलवं	४३४६
कारणतो वसमाणो	२७७६
कारण भिक्खस्स गते	२६०५
कारणमकारणं वा	१७०, ६१३
कारणमकारणे वा	४००१
कारणमेगमडंबे	२६३५
कारणसंविग्गाणं	८४८
कारणिगा मेलीणा	१३३७
कारणियं खलु सुत्तं	३०४७
कारणिय दोन्नि थेरो	१३५३
कारणे असिवादिम्मि	२११०
कालं कुव्वेज्ज सयं	४०५३
कालं च ठवेति तहिं	३४१६
कालगतं मोत्तूणं	३०४४
कालगते व सहाए	३४६०
कालगतो से सहाओ	१०५५
कालगयम्मि सहाए	३६३२
कालचउक्कं उक्कोसएण	३२०१
कालम्मि उ संथरणे	४०१६
कालसभावाणुमतं	२६७६
कालसभावाणुमता	८०
कालसभावाणुमतो	४३२६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कालस्स निद्धयाए	१४६
कालादिउवचारेणं	३०१८
काले जा पंचाहं	३४७५
कालेण व उवसंतो	३०००
काले तिपोरिसऽट्ठ व	३१३४
काले दिया व रातो	३८०१
काले विणए बहुमाणे	६३
कालो संझा य तधा	३१७१
कास पुणऽप्पेयव्वो	३४१७
काहं अछित्तिं अदुवा अधीतं	१८३
किं अम्ह लक्खणेहिं	१५६३
किं उग्गहो त्ति भणिए	२२१६
किं कारणं न कप्पति	२३६६
किं कारणं न दिज्जति	१४१
किं कारणं परोक्खं	२६२३
किं कारणऽवक्कमणं	४२३२
किं घेत्तव्वं रणे जोग्गं	२४०५
किं च तन्नोवभुत्तं मे	४३२८
किं च भयं गोरव्वं	१५५८
किंचि तधा तह दीसति	१२४८
किं तं ति खीरमादी	२४७८
किं ते जीवअजीवा	४६१५
किं नियमेति निज्जर	१३६६
किं पुण अणगारसहायगेण	४३५०
किं पुण आलोएती	४४५६
किं पुण कारणजातं	३३२५
किं पुण गुणोवदेसो	४५५२
किं पुण तं चउरंगं	४२५३
किं पुण पंचिदीणं	४४४६
किं मन्ने घेत्तुकामो	३८७०
किं वा अकप्पिएणं	८६६
किं वा तस्स न दिज्जति	१२०६
किं वा मारेतव्वो	४४४५
किं होज्ज परिठ्ठवितं	३५३६
कितिकम्मं कुणमाणो	३१६६
कितिकम्मं च पडिच्छति	५५३
कितिकम्मे आपुच्छण	३१६५
कित्तेहि पूसमित्तं	१७०५
किध पुण एवं सोधी	१५३८
किध पुण साधेयव्वा	१८०७
किध पुण होज्ज बहूणं	२७१०
किध भिक्खू जयमाणो	२२२
किन्नु अदिन्नवियारे	३५२३
किमिकुट्ठे सिया पाणा	३७६५
किह आगमववहारी	४०३८
किह तस्स दाउ किज्जति	१३४४
किह तेण न होति कतं	२६७३
किह नासेति अगीतो	४२५४
किह पुण एज्जाहि पुणो	८५८/१
किह पुण कज्जमकज्जं	१६५०
किह पुण तस्स निरुद्धो	१५४८
किह सुपरिच्छियकारी	१६७६
कीकम्मस्स य करणे	२३५३
कीस गणो मे गुरुणो	२०६३
कुंचिय जोहे मालागारे	३२४
कुच्छियकुडी तु कुक्कुडि	३६८३
कुज्जा कुलादिपत्थारं	४२५८
कुड्डेण चिलिमिणीए	२२२६
कुणमाणी वि य चेट्ठा	११११
कुद्धस्स कोधविणयण	४१५१
कुपहादी निग्गमणं	२५५६
कुयबंधणम्मि लहुगा	३४६८
कुल-गण-संघप्पत्तं	१६४०
कुलथेरादी आगम	१६५६
कुलपुत्ते मासादी	१२६२
कुसमादि अज्झुसिराइं	३३६७
कुसलविभागसरिसओ	३३१
कूयति अदिज्जमाणे	४२७५
केई पुव्वं पच्छा	३६०३
केई पुव्वनिसिद्धा	२६७
केई भणंति ओमो	४००४
केण पुण कारणेणं	३४६
केरिसओ ववहारी	१७०८
केवइयं वा एतं	३३७६
केवतिकालं उग्गह	२२५५
केवल-मण-पज्जवनाणिणो	४०३, ४५२६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केवलमेव अगुत्तो ६१
केवलिमादी चोद्दस २६६५
केसिंचि होंतऽमोहा ३१२०
कोई परीसहेहिं ४३६०
कोउगभूतीकम्मे ८७६
को गीताण उवाओ ४३७७
कोट्टंब तामलित्तग २८६५
कोट्टिमघरे वसंतो २२८४
कोडिग्गसो हिरण्णं ६५०
कोडिसयं सत्तऽहियं ५३४/१
को णु उ हवेज्ज अन्नो १६५४
को भंते ! परियाओ ५३६
कोयव पावारग नवय ४३४४
कोरंटगं जधा भावितङ्कमं ६७५
को वित्थरेण वोत्तूण ४५५१
को वी तत्थ भणेज्जा ३१५१
कोसकोट्ठारदाराणि २४१४
कोसलए किं कारण २६५८
कोसलए जे दोसा २६६०
कोसलवज्जा ते च्चिय २६६६
कोसल्लमेक्कवीसइविहं ४४१३
कोही व निरुवगारी १४२६

ख

खंतादिगुणोवेओ २६८०
खंते दंते अमायी ५२२
खंधे दुवार संजति ८६३
खग्गूडे अणुसासंतं २००२
खग्गूडेणोवहतं ३६५१
खरंटणभीतो रुट्ठो ५८१
खरमउएहिऽणुवत्तति १४२८
खलखिलमदिट्ठविसयं २८१२
खलियस्स व पडिमाए ३८८२
खल्लाडगम्मि खड्डुगा ३३८
खिंसेज्ज व जह एते ३८७४
खित्तादी आउरे भीते २१७५
खिप्पं बहु बहुविहं व ४१०५
खुड्डग विगिट्ठगामे २६१५
खुड्डिय थेरी भिक्खुणि ७४१, ७४६
खुड्डे थेरे भिक्खू ७३६, ७४४
खेत्तं गतो उ अडवि ८७१
खेत्तं मालवमादी ४११४
खेत्ततो दुवि मग्गेज्जा ६६७
खेत्तनिमित्तं सुहदुक्खतो १७६७
खेत्तपडिलेहणविधी ३८६६, ३६००
खेत्तमतिगया मो त्ति ३६०६
खेत्तविभत्ते गामे ३२७६
खेत्तऽसति असंगहिया ४११६
खेत्तस्स उ संकमणे ३३८५
खेत्ताणं च अलंभे २२६३
खेत्ताण अणुण्णवणा ३६०१
खेत्तिओ जइ इच्छेज्ञा १८५७
खेत्ते उवसंपन्ना ३६५५
खेत्तेण अद्धगाउय २२६६
खेत्तेण अद्धजोयण २२६५
खेत्ते निवपधनगरे १२५७
खेत्ते मित्तादीया ४००७
खेत्ते समाणदेसी ६८८
खेत्ते सुत-सुहदुक्खे ३८६०
खेत्ते सुहदुक्खी तू ३६८३
खेमं सिवं सुभिक्खं १५६६
खेयण्णो य अभीरू ३१७७
खेलंतेण तु अइया २३२३
खेल निवात पवाते ३४६४
खोडादिभंगऽणुग्गह २१२

ग

गइविब्भमादिएहिं ३०६८
गंतव्व-गणावच्छे ६५०
गंतव्व पलोएउं ३५६६
गंतुं खामेयव्वो ३००१
गंतूण अन्नदेसं १६२१
गंतूणं जदि बेती १८७०
गंतूणं सो तत्थ य ७०६
गंतूण तहिं जायति ३४२८
गंतूण तेहि कधितं १२६२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गंतूण पुच्छिऊणं	१०५६
गंतूण सो वि तहियं	३००५
गंधव्वदिसाविज्जुक्क	३११७
गंधव्वनगरनियमा	३११८
गंधव्व नट्ट जड्डऽस्स	४३१२
गंभीरा मद्दविता	२३८७
गंभीरो मद्दवितो	६३०, २६७६
गच्छगय निग्गते वा	३८६४
गच्छम्मि केइ पुरिसा	८३५, १२५२
गच्छाणुकंपणिज्जो	३४८४
गच्छुत्तरसंवग्गे	३६४, ३७८८
गच्छो गणी य सीदंति	१६५३
गड्डा-गिरि तरुमादीणि	३५६०
गणधर-गणधरगमणं	३०११
गणधरपाउग्गाऽसति	१३०२
गणधारिस्साहारो	१४०२
गणनिसरणा परगणे	४२२८
गणनिसिरणम्मि उ विधी	४२३१
गण भोइए वि जुंगित	३२६२
गणसंठिती धम्मे य	४५८१
गणसोभी खलु वादी	४५७४
गणस्स गणिणो चेव	२६६२
गणहरगुणेहि जुत्तो	७७५
गणावच्छेए पुव्वं	२६२७
गणि आयरिया उ सहू	७३०
गणि आयरियाणं तो	१८३४
गणिणी कालगयाए	३०५६
गणिणो अत्थि निब्भेयं	२६६०
गणिसद्दमादि महितो	३२३५
गणी अगणी व गीतो	१४५३
गणेण गणिणा चेव	२६६३
गतमागतम्मि लोए	२५८६
गतागत गतनियत्ते	३६६७
गमणागमण-वियारे	११०
गमणुस्सुतेण चित्तेण	२६६३
गवेसऊ मा व कतव्वया य	२२४६
गवेसिए पुव्वदिसा	२२४७
गह चरिय विज्झमंता	२३२१

गहणं च जाणएणं	३४१४
गहणनिमित्तुस्सग्गं	३१८०
गहणपडिसेध भुंजण	२५८८
गहपति गिहवतिणी वा	३३४८
गहिउत्थाणरोगेण	३३१८
गहितऽन्न रक्खणट्ठा	३५३६
गहितम्मी कालम्मी	३१८७
गहितागहिते भंगा	१०५७
गामे उवस्सए वा	२७२७
गामेणाऽरण्ण व	११६२
गामो खलु पुव्वुत्तो	३५४६
गारवरहितेण तहिं	१७१८
गावीओ रक्खंतो	११६०
गावी पीता वासी	४४८
गाहग आयरिओ ऊ	१७१०
गाहा घरे गिहे या	३३८३
गिण्हंतस्स उ कालं	३१८२
गिम्हाणं आवण्णो	१३३८
गिम्हाण चरिममासो	२३०२
गिम्हादिकाल पाणग	२६३८
गिंम्हेसु मोक्खितेसुं	१०३६
गिलाणस्सोसधादी तु	२५३६
गिहत्थपरतित्थीहिं	२००१
गिहि-गोण-मल्ल राउल	१०१७, ३२८३
गिहिभूते त्ति य वुत्ते	१२३५
गिहिमत्तेणुड्डाहो	८६८/२
गिहिलिंगं पडिवज्जति	१८६३
गिहिसंघातं जहितुं	१६८७
गिहिसंजय अधिगरणे	२५०
गिहि सामन्ने य तहा	५३६
गीतत्थउज्जुयाणं	१३६७
गीतत्थदुल्लभं खलु	४२६३
गीतत्थमगीतत्थं	४३६१
गीतत्थमगीतत्थे	१४६६
गीतत्था कयकरणा	२३७८
गीतत्थागत गुरुगा	२२२२
गीतत्थाणं असती	११७०
गीतत्थाणं तिण्हं	१०११

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गीतत्था ससहाया ३६७७
गीतत्थो उ विहारो ६६७
गीतत्थो जातकप्पो १७४३
गीतत्थो य वयत्थो य २००७
गीतपुराणोवट्ठं २६७६
गीतमगीता बहवो १३२३
गीतमगीतो गीतो ५३८
गीतसहाया उ गता २७३१
गीताऽगीता मिस्सा १६६७
गीताऽगीता वुड्ढा ३२४३
गीतो य ऽणाइयंतो ३०
गीतो विकोविदो खलु ४६१
गुंठाहि एवमादीहि १७०१
गुज्झंगम्मि उ वियडं ११५१
गुणनिप्फत्ती बहुगी ३६०६
गुणभूइट्ठे दव्वम्मि २६३४
गुणवं तु जतो वणिया २५४४
गुत्तीसु य समितीसु य ६०
गुरवो जं पभासंति ८६
गुरुअणुकंपाए पुण २६७२
गुरु आपुच्छ पलायण १६१६
गुरुकरणे पडियारी ६४६
गुरुगं च अट्ठमं खलु १०६६, ११२१
गुरुगो गुरुयतरागो १०६५, १११७
गुरुगो य होति मासो १०६७, १११६
गुरुणो जावज्जीवं २०३०
गुरुणो य लाभकंखी ७६
गुरुणो सुंदरखेत्तं ३६३३
गुरुमादीया पुरिसा ४०२५
गुरुवसभगीतऽगीते १६५२
गुरुसमक्खं गमितो २६६१
गुरुहिंडणम्मि गुरुगा २५७२
गेण्हण कड्ढण ववहार ३८६८
गेण्हति पडिलेहेउं १४६१
गेण्हति लहुओ लहुया ८४०
गेण्हइ वीसं पाए ३६२०
गेण्हामो अतिरेगं ३६२४
गेलण्णउत्तिमट्ठे ३३६६
गेलण्णकारणेणं २४८१
गेलण्णतुल्ल गुरुगा २६७
गेलण्णमणागाढे २१३४
गेलण्णमधिकतं वा २४४८
गेलण्णमरणसल्ला १७६३
गेलण्णम्मि अधिकते २०१८
गेलण्णवाउलाणं ३६०७
गेलण्णवासमहिया ६८६
गेलण्णसुण्णकरणे १०१६
गेलण्णादिकज्जेहि ३६०६
गेलण्णे असिवे वा २३२८
गेलण्णे एगस्स उ १३३२
गेलण्णे चउभंगो २०६४
गेलण्णेण व पुट्ठो १२१५
गेलण्णे न काहिती १६६४
गेलण्णे वोच्चत्थं २७१६
गोउम्मुगमादीया २८१७
गोण निवे साणेसु य १०१८
गोणादि जत्तियाओ व ३३०४
गोणादीय पविट्ठे १७५२
गोणीणं संगिल्लं १८७६, १८८५
गोणे साणे छगले १७५१
गोभत्तालंदी विव ८८८
गोयरअचित्तभोयण २०३४
गोरव-भय-ममकारा २६६८
गोरस-गुल-तेल्ल-घतादि ३७३८
गोवालगदिट्ठंतं १३३१
गोसे केरिसियं ति य २७८६
गोसे य पट्ठवेंते ३२१५

घ

घट्टण पवडण थंभण ३८४५
घयकुडगो उ जिणस्सा ४३८
घरसउणि सीह पव्वइय ७७०
घाण-रस-फासतो वा ३०३१
घुट्ठम्मि संघकज्जे १६५५
घेत्तूणऽगारलिंगं ३६६५
घेत्तूवहिं सुन्नघरम्मि भुंजे ३५०६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घेप्पंति च सद्देणं	४०४
घेप्पंतु ओसधाइं	२४०४
घोरम्मि तवे दिन्ने	१०७६
घोसणय सोच्च सण्णिस्स	३६४३
घोसा उदत्तमादी	४०६०

च

चइयाण य सामत्थं	२७११
चउकण्णंसि रहस्से	४४१४
चउगुरुगं मासो या	५६५
चउगुरु चउलहु सुद्धो	५६२
चउछट्ठऽट्ठमकरणे	१३३
चउ-छम्मासे वरिसे	८३८
चउ-तिग-दुग-कल्लाणं	४२०७
चउत्थछट्ठादि तवो कतो उ	२२६०
चउद्दससहस्साइं	४६७१
चउधा वा पडिरूवो	८६
चउभंगो अजणाउल	१७७६
चउभत्तेहिं तिहिं उ	७७८
चउभागतिभागद्धे	२२७२
चउभागऽवसेसाए	३१५६
चउरो य पंचदिवसा	२०६२
चउरो य होंति भंगा	११०६
चउरो वहंति एगो	३२५६
चउलहुगाणं पणगं	५००
चउवासऽट्ठारसगा	४४८६
चउवासे गाढमती	४६५६
चउवासे सूतगडं	४६५५
चउसंझासु न कीरति	३१२४
चंकमणादुट्ठाणे	२५३
चंदगवेज्झसरिसगं	२५४६
चंदिमसूरुवरागे	३१२१
चतुग्गुणोववेयं तु	३८६७
चत्ताए बीस पणतीस	४१२
चत्तारि विचित्ताइं	४२४०
चत्तारि सत्तगा तिण्णि	२२७४
चम्मरुधिरं च मंसं	३१३२
चरगादि पण्णवेउं	११३६
चरणं तु भिक्खुभावो	२७८१
चरणकरणस्स सारो	२४८४, २४८५
चरमाए जा दिज्जति	२८५६
चरमाए वि नियत्तति	३५६८
चरितेण कप्पितेण व	४६२३
चरिया पुच्छण पेसण	१२४३
चाउद्दसीगहो होति	२६६६
चाउम्मासुक्कोसे	१३२
चाउस्सालादि गिहं	३३८४
चारग कोट्टग कलाल	४३१३
चारियसुत्ते भिक्खू	२१७७
चारे वेरज्जे या	८६८
चिक्खल्ल-पाणथंडिल	१७६८, ३८६६
चिक्खल्ले अन्नया पुरतो	४५५६
चिट्ठति परियाओ से	२४४६
चिट्ठतु जहण्ण मज्झा	४२३६
चित्तमचित्तं एक्केक्कगस्स	६८१
चित्तमचित्तपरित्तं	२४२५
चित्तलए सविकारा	३०६४
चिरपव्वइयसमाणं	२३८६
चिलिमिलि छेदे ठायति	३०६५
चुक्को जदि सरवेधी	२३२५
चुयधम्म-भट्ठधम्मो	४१४७
चेइयघरं णिइत्ता	३०१२
चेइयथुतीण भणणे	३००८
चेइयदव्वं विभज्ज	३७६४
चेइय साधू वसधी	१८११
चेइय सावग पव्वइउ	३३६८
चेतणमचेतणं वा	११९३
चेयणमचित्तदव्वे	३१६
चेलग्गहणे कप्पा	३४८०
चोएइ किं उत्तरगुणा	५१
चोएति कहं तुब्भे	६६८
चोएति भाणिऊणं	१४३०
चोदग अप्पभु असती	१३६४
चोएती परकरणं	२४०१
चोदगगुरुगो दंडो	२८४६
चोदग छक्कायाणं	४६७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चोदग पुच्छा पच्चक्ख ४०४२
चोदग पुरिसा दुविधा ४५३
चोदग बहुउप्पत्ती ६२६
चोदग मा गद्दभ त्ति ३२७
चोदति से परिवारं १५७४
चोदयंते परं थेरा ८८
चोदिज्जंतो जो पुण २६७७
चोदेइ अगीयत्थे ६६६
चोदेति तिवासादी १५४३
चोदेति न पिंडेति य १३६३
चोदेति राग-दोसे ४६४
चोदेति वत्थपादा १८४८
चोदेति समुद्दिसिउं ३१४१
चोदेति सुद्धऽसुद्धे ३६७८
चोदेती अतिरेगे ३५६७
चोदेती कप्पम्मी २१७२
चोदेती कुलपुत्ते १२५५
चोदेती जदि एवं ३२३०
चोदेती वोच्छिन्ने ४५२३
चोद्दसपुव्वधराणं ४१६५
चोयग किं वा कारण ६२३
चोयति से परिवारं ६७३
चोरिस्सामि त्ति मतिं ६१३

छ

छंदाणुवत्ति तुब्भं ६३३
छक्काय चउसु लहुगा १३५
छक्कायाण विराधण १०६२
छद्मसता चोयाला ४०७
छट्ठ अपच्छिमसुत्ते १८६
छट्ठं च चउत्थं वा १०७०, ११२२
छट्ठट्ठमादिएहिं १६२, ६०७
छड्डावणभन्नपहो ३५६१
छड्डेउं जइ जंती ३२८६
छड्डेऊण गतम्मी १६१३
छण्णउयं भिक्खसतं ३७८५
छत्तीसगुणसमन्नागतेण ४२६८
छत्तीसाए ठाणेहिं ४१२५-४१२८
छत्तीसेताणि ठाणाणि ४१५६
छन्ने उल्लोवकतो ३४५१
छब्भागंगुलपणगे ४४६८
छम्मासखवणंतम्मि ३६८६
छम्मासतवो छेदादियाण ४७८
छम्मासा छम्मासा २०२६
छम्मासादि वहंते ६०२
छम्मासे आयरिओ २०२१
छम्मासे पडियरिउं ११००
छहि काएहि वतेहि व ४१६०
छहि दिवसेहि गतेहिं ४६२
छाघातो अणुलोमे २४६४
छार हडि हड्डमाला ४५४४
छिंदंतु व तं भाणं ४४६७
छिण्णम्मि उ परियाए १८७१
छिण्णाछिण्णविसेसो १८३१
छिण्णाणि वावि हरिताणि २८८६
छिन्नमडंबं व तगं २५१७
छेदणदाहनिमित्तं २४४७
छेदसुतविज्जमंता ६४६
छेदादी आवण्णा ४७३
छेदे बा लाभे वा ३७३२
छेदोवट्ठावणिए ४१६०
छोभग दिण्णो दाउं १२४६

ज

जइ अत्थि वायणं दिंतो ३०६१
जइ इच्छसि नाऊणं ४२६/१
जइ उस्सग्गे न कुणति १३१
जइ एस समाचारी १३५४
जइ गच्छेज्जाहि गणो ३४८८
जइ जीविहिंति जइ वा ३६६६
जइ ताउ एगमेगं २६२६
जइ दोण्ह चेव गहणं ३६१५
जइ नत्थि असज्झायं ३१५४
जइ नीयाण गिलाणो २५०६
जइ पुण आयरिएहिं ३६२२

जइ पुण किं वावण्णो २०८०
जइ भंडण पडिणीए २५६
जइ मि भवे आरोवण ४१६
जइया णेणं चत्तं १६७२
जइ वा दुरूवहीणे ३८०
जइ वि तवं आवण्णो २६१६
जइ वि य नाधाकम्मं ३७७२
जइ वि य निग्गयभावो २६६५
जइ वि य पुरिसादेसो २३१२
जइ वि य लोहसमाणो २६७१
जइ वि सि तेहुववेओ ७६१
जइ वि हु दुविधा सिक्खा ७७६
जइ समणाण न कप्पति ३७६६
जइ से अत्थि सहाया ३६६०
जइ सेव पढमजामे २८०६
जं इह परलोगे या ४१४६
जं काहिंति अकज्जं १६५६
जं खलु पुलागदव्वं ३०८८
जंघाबले य खीणे २२६२
जं जत्तिएण सुज्झति ४१६६
जं जम्मि होति काले ४१२१
जं जस्स अच्चितं तस्स ८६५
जं जस्स व पच्छित्तं १२
जं जह मोल्लं रयणं ४०४३
जं जह सुत्ते भणियं ३७११
जं जाणह आयरियं १८४३
जं जीतं सावज्जं ४५४३
जं जीतं सोहिकरं ४५४६
जं जीतमसोहिकरं ४५४७
जं जीयमसोहिकरं ४५४८
जंतेण करकतेण व ४४१६
जं देसी तं देमो ३७२२
जं पि न चिण्णं तं तेण १०४५
जं पि य न एति गहणं ३७३५
जं पि य हु एक्कवीसं ४२१४
जं पुण असंथडं वा ३३५८
जंबुग कूवे चंदे १३८२
जं मायति तं छुब्मति ५४२
जं वा दोसमयाणंतो १७५
जं वुत्तमसणपाणं २४१७
जं संगहम्मि कीरति ३१२
जं सासु तिधा तिययं २८१०
जं से अणुपरिहारी १०४७/१, १०५०
जं सो उवसामेती २५१२
जं होऊ तं होऊ ३३७७
जं होति नालबद्धं २१५८
जक्खाऽतिवातियसेसा १८६७
जध मन्ने एगमासियं ५०३/१
जधमन्ने दसमं सेविऊण ५०६
जच्चिय सुत्तविभासा ५३५
जड्डादी तेरिच्छे १०८६
जतणाए समणाणं ३६२३
जतणाजुओ पयत्तव ४५१४
जतणा तत्थुड्डुबद्धे १८५३
जतमाण परिहवंते २७२
जति मि भवे आरुवणा ४२०
जतिहि गुणे आरोवण ४२२
जत्तियमित्ता वारा ३६११
जत्तियमेत्तेणं जो ३७०
जत्तियमेत्ते दिवसे २१३२
जत्तो व भणाति गुरू ६२
जत्थ उ दुरूवहीणा ४२४
जत्थ उ परिवारेणं १७२१
जत्थ गणी न वि णज्जति ६७४
जत्थ पविट्ठो जदि तेसु १६४६
जत्थ पुण देति सुद्धं ३७२
जत्थ य दुरूवहीणं ३७८
जत्थ वि य ते वयंती ६३८
जदि अत्थि न दीसंती ४१६४
जदि आगमो य आलोयणा ४०६२, ४०६८, ४०६६
जदि इच्छसि सासेरी ११११२
जदि उ ठवेति असुण्णे ३४८२
जदि उत्तरं अपेहिय ३१८५
जदि एरिसाणि पावंति १०२०
जदि एवं निग्गमणे २५३१
जदि छुब्मती विणस्सति ४१०१

जदि जीविहिति भज्ज्ञाइ १२५१
जदि ढक्किंतोच्छेवा १७५५
जदि तह वी न उवसमे १६१७
जदि ताव सावयाकुल ४३४६
जदि तु उवस्सयपुरतो ३१५०
जदि देति सुंदरं तू ३५३१
जदि दोसा भवंतेते २४२३
जदि निक्खिप्पति दिवसे २१३३, २१३८
जदि निक्खिविऊण गणं २२२८
जदि पुण निव्वाघातं ३१५६
जदि पुण नेच्छेज्ज तवं १२००
जदि पुण समत्तकप्पो १८००
जदि पुण होज्ज गिलाणो ११६०
जदि फुसति तहिं तुंडं ३१४३
जदि बेंती लब्भते वि १६६६
जदि भासति गणमज्झे २६८८
जदि लब्भामो आणेमो ३२६५
जदि वा न निव्वहेज्जा ११७१
जदि वायगो समत्ते २२३७
जदि वेरत्ति न सुज्झे ३२०५
जदि संघाडो तिण्ह वि १७६०
जदि से सत्थं नट्ठं २३२४
जदि होंति दोस एवं ३६०४
जध उवगरणं सुज्झति २६७८
जध कन्ना एयातो १६०५
जध कारणे तणाइं ३४०४
जध कारणे निगमणं १६७६
जध चेव उत्तमट्ठे २२६६
जध चेव दीहपट्ठे २४२६
जध चेव य पडिलोमा १२६६
जध ते गोट्ठट्ठाणे ४४२६
जध पंचकपरिहीणं ६६३
जध भणित चउत्थे पंचमम्मि २३०७
जध मन्ने एगमासियं ५०३
जध मन्ने बहुसो मासियाणि ३४८, ५१०
जध रक्खह मज्झ सुता १६०४
जध रण्णो सूयस्सा २४५३
जध वा महातलागं १२८५
जध सो कालायसवेसिओ ४४२३
जधा चरित्त धारेउं ४६५४
जधा य कम्मिणो कम्मं २७६१
जधाऽवचिज्जते मोहो २७६०
जधा विन्नानरिंदस्स ३०२०
जधियं पुण छम्मासा ८७५
जधि लहुगो तधि लहुगा ८७४
जधुत्तं गुरुनिद्देसं ६०
जम्हा आयरियादी ६६३
जम्हा एते दोसा १०२३, १३२१, २५३८, २६८६, ३०३२
जम्हा तु होति सोधी १८२६
जम्हा संपहारेउं ४५०५
जयवणऽद्धाणरोधए ४०१४
जलमूग-एलमूगो ४६३०, ४६३६
जवमज्झ-वइरमज्झा ३८३२
जसं समुवजीवंति २७५१
जस्स तु सरीरजवणा १७७८
जस्स महिलाय जायति १८८२
जह आरोग्गे पगतं ७०१
जह आलित्ते गेहे १३७४
जह उड्डितेण वि तुमे १५०४
जह उ बइल्लो बलवं ८८५
जह कारणे असुद्धं २१४६
जह केवली वि जाणति ४०३६
जह कोई मग्गण्णू ३६६५
जह कोई वणिगो तू १६०१
जह गंडगमुग्घुट्ठे ३१७४
जह गयकुलसंभूतो १६४७
जह चेव उ आयरिया ४५६६
जह चेव य बितियपदे २३८१
जह जह वावारयते १४१२
जहण्णेण तिण्णि दिवसा २११८
जह ते रायकुमारा १५६७
जह नाम असी कोसे ४३६६
जह पुण ते चेव तिला ८४७
जह बालो जंपंतो ४२६६
जह भायरं व पियरं ४१४६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जह मन्ने बहुसो मासियाणि	३४८
जह मासओ उ लद्धो	४८१
जह राया तोसलिओ	२५६०
जह राया व कुमारं	१६३६
जह रूवादिविसेसा	४१७८
जहऽवंतीसुकुमालो	४४२५
जह वाऽऽउंटिय पादे	४३६७
जह सरणमुवगयाणं	५७०
जह सा बत्तीसघडा	४४२८
जह सालिं लुणावेंतो	२६५३
जह सीहो तह साधू	७७६
जह सुकुसलो वि वेज्जो	४२६६
जह सो चिलायपुत्तो	४४२२
जह सो वंसिपदेसी	४४२४
जह होति पत्थणिज्जा	१८५१
जहा य अंबुनाधम्मि	२७६२
जहा य चक्किणो चक्कं	३०२१
जहियं व तिन्नि गच्छा	३६५२
जा आससिउं भुंजति	२५८०
जा ऊ संथडियाओ	३७४२
जा एगदेसे अदढा उ भंडी	१८०, ६१८
जाओ पव्वइताओ	३०४८
जा जत्थ गता सा ऊ	३०६५
जा जस्स होति लद्धी	४६७८
जा जीय होति पत्ता	२८५४
जा जेण वयेण जधा	२६४७
जा ठवणा उद्दिट्ठा	३६१
जाणंता माहप्पं	६६७, १२१७
जाणंति अप्पणो सारं	३५५४
जाणंति एसणं वा	३६७४
जाणंति व णं वसभा	६७८
जाणंतेण वि एवं	४२६७
जाणंतेहि व दप्पा	२८६३
जाणंतो अणुजाणति	३३६५
जाणति पओगभिसजो	४११२
जातं पिय रक्खंती	१५६०
जाता पितिवसा नारी	१५८६/१
जा तित्थगराण कता	३७६८
जा तिन्नि अठायंते	१६१५
जाती कुले गणे या	८८०
जातीय जुंगितो पुण	३६४०
जा तुब्भे पेहेहा	२२४०
जातो य अजातो वा	१७४२
जा दुब्बला होज्ज चिरं व झाओ	३०६८
जाधे तिन्नि विभिन्ना	३२२६
जाधे ते सद्दहिता	४६२६
जाधे पराजिता सा	४४१५
जाधे सद्दहति तेउ	४६२८
जा भंडी दुब्बला उ	२६८६
जा भणिया बत्तीसा	४१२६
जा य ऊणाहिए दाणे	४१६८
जा याणुण्णवणा पुव्वं	२०७८
जायामो अणाहो त्ति	१५८३
जारिसगआयरक्खा	१२२२
जारिसगं जं वत्थुं	२६३३
जारिससिचएहि ठिया	२३७६
जाव एक्केक्कगो पुन्नो	३६६२
जावंतिय दोसा वा	३५२२
जावज्जीवं तु गणं	२३२२
जाव नागच्छते भंडं	३३३६
जाव होमादिकज्जेसु	३०२६
जा सा तु अभिनिसीधिय	६८०
जाहे य पहरमेत्तं	१५०३
जाहे सुमरति ताहे	२०५८
जा होति परिभवंतीह	२८१५
जिणकप्पिते न कप्पति	२४४५
जिणकप्पितो गीयत्थो	६६८
जिण चोद्दसजातीए	४३७
जिण निल्लेवण कुडए	५०४, ५१२
जिणपण्णत्ते भावे	५१६
जिणवयणमप्पमेयं	४३५१
जिणवयणसव्वसारं	८७२
जितसत्तुनरवतिस्स उ	१०८१
जिता अड्डि सरक्खा वि	३३१६
जीवाजीवं बंधं	१५००
जीहाए विलिहंतो	५६६

जुगछिड्डे नालिगादिसु	२८०६
जुद्धपराजिय अट्टण	३८४०
जुवरायम्मि उ ठविते	१८६३
जूतादि होति वसणं	४०६०
जे उ अहाकप्पेणं	१४७६
जे ऊ सहायगत्तं	२६१२
जे गेण्हिउं धारइउं च जोग्गा	२२६७
जे जत्थ अधिगया खलु	२७०२
जेट्ठगभाउगमहिला	११४४
जेट्ठज्ज पडिच्छाही	८२३
जेट्ठज्जेण अकज्जं	१२४०
जेण तु पदेण गुणिता	४२१
जेण य ववहरति मुणी	३८८८
जेण वि पडिच्छिओ सो	१६३४
जेणाहारो उ गणी	२५६७
जेणेव कारणेणं	२५८५
जे त्ति व से त्ति व के त्ति व	१८७
जे पुण अधभावेणं	२५१३
जे बेंति न घेत्तव्वो	३६१२
जे भावा जहियं पुण	४५२६
जे भिक्खु बहुसो मासियाणि	३४५
जे मे जाणंति जिणा	४३०६
जे यावि वत्थपातादी	२१६३
जेसिं एसुवदेसो	३६०१
जेसिं जीवाजीवा	४०४८
जे सुत्ते अतिसेसा	२७०६
जे हिंडंता काए	३६४१
जो अणुमतो बहूणं	२०१३
जो अवितहववहारी	१५२
जो आगमे य सुत्ते	४५३३
जो उ असंते विभवे	४१६७
जो उ उवेहं कुज्जा	१०७५, १२१२
जो उ धारेज्ज वद्धंतं	४१६६
जो उ मज्झिल्लए जाति	३६६३
जो उ लद्धुं वए अन्नं	३६७०
जो उ लाभगभागेणं	३७३१
जो एगदेसे अदढो उ पोतो	१८१, ६१६
जो एतेसु न वट्टति	४१५५
जो गच्छंतम्मि विही	३१८८
जोगतिए करणतिए	४०१७, ४०१८
जो गाउयं समत्थो	२२६६
जोगे गेलण्णम्मि य	२१३०
जोच्चिय भंसिज्जंते	७५६
जो जं इच्छति अत्थं	१३६२
जो जं काउ समत्थो	५५७
जो जं दट्ठ विदड्ढं	३७४०
जो जति मासे काहिति	८०१
जो जत्तिएण रोगो	३२६
जो जत्तिएण सुज्झति	६६१
जो जत्थ उ करणिज्जो	६७
जो जत्थ होति कुसलो	४३३६
जो जया पत्थिवो होति	१४३, १४८/१
जो जह व तह व लद्धं	१०८५
जो जाए लद्धीए	१४११
जो जाणति य जच्चंधो	४६१८
जो जारिसिओ कालो	४३२२
जो जेण अभिप्पाएण	२८५३
जो णेण कतो धम्मो	११६६
जो तत्थऽमूढलक्खा	१५५२
जो तुम्हं पडितप्पति	८४४
जो धारितो सुतत्थो	४५१२
जो पभुतरओ तेसिं	३४५४
जो पुण अतिसयनाणी	७११
जो पुण करणे जड्डो	४६४४
जो पुण गिहत्थमुंडो	१८६८
जो पुण चोइज्जंते	२६६
जो पुण नोभयकारी	४५६२
जो पुण परिणामो खलु	४४४८
जो पुण सहती कालं	४१६८
जो पुव्वअणुण्णवितो	३४६२
जो पेल्लितो परेणं	१११५
जो वि ओसहमादीणं	२४१५
जो वि य अलद्धिजुत्तो	२६४०
जो सुतमहिज्जति बहुं	४४३२, ४४३३
जो सो उ पुव्वभणितो	१४१७
जो सो चउत्थभंगो	१४२१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो सो विसुद्धभावो १२८४
जो हं सइरकहासुं २७५३
जो होज्ज उ असमत्थो ३१६१

झ

झरए य कालियसुते २२६४
झाणेऽपसत्थ एवं १४६४

ठ

ठवणरुवणाण तिण्हं ३६७
ठवणादिवसे माणा ३७१
ठवणामेत्तं आरोवण ३५५
ठवणारोवण दिवसे ३६६
ठवणारोवणमासे ४२३
ठवणारोवण वि जुया ३८६/१
ठवणारोवणसहिता ३७४
ठवणा वीसिग पक्खिग ३५६
ठवणा संचय रासी ३५१
ठवणा होति जहन्ना ३५८
ठवेति गणयंतो वा ३४६७
ठाणं निसीहिय त्ति य ६३०
ठाणं पुण केरिसगं ४३११
ठाण निसीय तुयट्टण २१५, ४३६३
ठाण वसधी पसत्थे ४२२६
ठाणाऽसति बिंदूसु वि ३१६६
ठावेउ दप्पकप्पे ४४६७
ठिय निसिय तुयट्टे वा १६७७

ड

डहरग्गाममयम्मी ३१४६

ण

णाण-चरण संघातं १६८६
णाणादीसुं तीसु वि ६८३/४
णाणे णोणाणे या ६८३/२
णातमणाते आलोयणा २६०७
णाते तु पुव्वदिट्ठं ३२५६
णाते य जस्स भावो १८७६
णिंती वि सो काउतली कमेसु २७६०
णितियादीए अधच्छंद १६५६
णीणिति अकारगम्मी २५८४
णीयल्लस्स वि भत्तं २४७७
णीसज्ज वियडणाए ४४७
णेगा एगं एक्कसि ३८१६
णेगाण तु णाणत्तं ३४२१
णेगासुं चोरियासु ४५०
णोणाणे वि य दिट्ठी ६८३/३
ण्हाणऽणुयाण अद्धाण १८०४
ण्हाणादणाय घोसण ३५७४
ण्हाणादिएसु तं दिस्सा ३६७१
ण्हाणादिएसु मिलिया २८२३
ण्हाणादिसु इहरा वा २१५४
ण्हाणादीणि कताइं १२८२
ण्हाणादोसरणे वा ३५७८

त

तं एगं न वि देती १४६२
तं कज्जतो अकज्जे २८६०
तं कुणहऽणुग्गहं मे २३८४
तं घेत्तु बंधिऊणं ३३८०
तं च कुलस्स पमाणं २४५८
तं चेवऽणुमज्जंते ४४३६, ४५३५
तं चेव पुव्वभणितं २०८६, ३२५४
तं चेव पुव्वभणियं ५०१
तं जत्तिएहि दिट्ठं २६६७
तं जीवातिक्कंतं ३३०२
तं णो वच्चति तित्थं ४२१६
तं तारिसगं रयणं ४३५८
तं तु अहिज्जंताणं २६३०
तं तु वीसरियं तेसिं ३६३६
तं दिज्जउ पच्छित्तं ६६०
तं न खमं खु पमादो २२६
तं पि य अफरुस मउयं ७३
तं पि य हु दव्वसंगह १३६८
तं पुण अणुगंतव्वं ४२२७
तं पुण अणुन्नसद्दं ७२
तं पुण ओहविभागे २३५
तं पुण केण कतं तू ४०४६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तं पुण ऽविरहे भासति ७४
तं पुण संविग्गमणो २८७१
तं पुण होज्जाऽऽसेविय ४४६१
तं पूयइत्ताण सुहासणत्थं १२२१
तं वावि गुरुणो मोत्तुं २६४७
तं सेविऊणऽकिच्चं ६१८
तं सोउ मणसंतावो २८८८
तगराए नगरीए १६६४
तणुगं पि नेच्छए दुक्खं २१६८
तणुयम्मि वि अवराधं १०४६
तण्हाइयस्स पाणं २७३७
तण्हाछेदम्मि कते ४३२७
तण्हुण्हादि अभावित २५३२
ततिए पतिट्ठियादी २४१
ततिओ तु गुरुसगासे ३४२७
ततिओ पुट्ठो साहति ४५६६
ततिओभय नोभयतो ४५६६
ततिओ रक्खति कोसं १६४०
ततिओ लक्खणजुत्तं ३६२५
ततियम्मि उ उद्देसे ३२४१
ततियाए देति काले ३६६७
ततियाण सयं सोच्चा ३६३६
ततो णं आह सा देवी २६४६
ततो णं अन्नतो वावि २८८६
तत्तो य पडिनियत्ते १२७७
तत्तो य वुड्ढसीले ४०८४
तत्तो वि पलाविज्जति २७२२
तत्थ अणाढिज्जंतो ११८१
तत्थ उ अणुण्णविज्जति ३३५६
तत्थ उ पसत्थगहणं ६६
तत्थ गतो वि य संतो ७५६
तत्थ गिलाणो एगो २६०
तत्थऽण्णत्थ व वासं २६८६
तत्थ तिगिच्छाय विही १६०६
तत्थ न कप्पति वासो ६२४, ६५३
तत्थ भवे न तु सुत्ते ४३३
तत्थ वि काउस्सग्गं २१२२
तत्थ वि परिणामो तू ४४५२
तत्थ वि मायामोसो २८०
तत्थ वि य अच्छमाणे २१२५
तत्थ वि य अन्नसाधुं २०६५
तत्थादिमाइ चउरो ३७०६
तत्थेक्कं छम्मासं ४२४४
तद्दव्वमन्नदव्वेण ३७३४
तद्दव्वस्स दुगुंछण ११३६
तद्दिवसं पडिलेहा ३४७०
तद्दिवसं मलियाइं ३४००
तध चेव उग्गहम्मी ३३८२
तध नाणादीणट्ठा २७२०
तप्पडिवक्खे खेत्ते ३१३
तप्पत्तीयं तेसिं १६४३
तब्भावुवजोगेणं २६६४
तमेव सच्चं नीसंकं ४६०८
तम्मागते वताइं १२४२
तम्मि गणे अभिसित्ते १६१५
तम्मि वि अदेंत ताधे ३३२४
तम्हा अपरायत्ते १२०४
तम्हा इच्छावेती ३०५२
तम्हा उ कप्पट्ठितं ५५६
तम्हा उ धरेतव्वो ३६१४
तम्हा उ न घेत्तव्वो ३३६४
तम्हा उ विहि तं चेव ३२८४
तम्हा उ संघसद्दे १६५७
तम्हा उ सपक्खेणं २४३५
तम्हा कप्पट्ठितं से १०५६
तम्हा कप्पति ठाउं ३७७०
तम्हा खलु घेत्तव्वो ३४१३
तम्हा गीतत्थेणं ४२६४
तम्हा न पगासेज्जा १५८७
तम्हा परिच्छणं तू ४२८६
तम्हा परिच्छितव्वो २४८३
तम्हा पालेति गुरू १७८६
तम्हा वज्जंतेणं २३४३
तम्हा संविग्गेणं ४२७२
तम्हा सपक्खकरणे २४००
तम्हा सिद्धं एयं ४६८७

तरुणा सिद्धपुत्तादि ३०७६
तरुणिं पुराण भोइय ३०८३
तरुणी निप्फन्नपरिवारा ७२५, ७३२, ७३८, ७४२, ७४७
तरुणे निप्फन्नपरिवारे ७२१, ७२८, ७३५, ७४०, ७४५
तरुणे निप्फन्ने या ७२३
तरुणे बहुपरिवारे ७२२
तरुणे वसधोपाले १७८७
तरुणेसु सयं वाए ३०८६
तवतिग छेदतिगं वा ४७६
तवऽतीतमसद्दहिए ५०२
तव-नियम-नाणरुक्खं ४४४७
तव-नियम-विणयगुणनिहि ६५८
तव-नियमसंजमाणं १६२५, १६२७
तवबलितो सो जम्हा ४८४
तवसोसितो व खमगो २५२६
तवसोसिय अप्पायण २५१५
तवसोसियस्स मज्झो १३४५
तवसोसियस्स वातो १०५१
तवु लज्जाए धातू ४०६३
तवेण सत्तेण सुत्तेण ७७७
तव्वरिसे कासिंची ८०२
तस-पाण-बीयरहिते ४३६६
तस्स उ उद्धरिऊणं ४५१६
तस्स कड निट्ठियादी ३७५६
तस्सट्ठ गतोभासण ४२७४
तस्स त्ती तस्सेव उ ४१४८
तस्स पंडियमाणस्स ४५८०
तस्स य चरिमाहारो ४३२४
तस्स य भूततिगिच्छा ११४६
तस्स वि जं अवसेसं २०४
तस्स वि दट्ठूण तयं २४६१
तस्सऽसति सिद्धपुत्ते ६६६
तस्सिंदियाणि पुव्वं ४६१०
तह चेव अब्भुवगता २८७०
तह चेव हत्थिसाला ३०७१
तह वि अठंते ठवितं ११८४
तह वि न लभे असुद्धं २०२४
तह वि य अठायमाणे १०६१
तह वि य संथरमाणे ४३४३
तह समण-सुविहियाणं २२४
तहियं गिलाणगस्सा २५०५
तहियं दो वि तरा तू ३३३५
तहेहट्ठगुणोवेता ३०२२
ताइं पीतिकराइं १५४५
ताइं बहूहिं पडिलेहयंतो १३६२
ताओ य अगारीओ ३८७५
ताणि वि तु न कप्पंती ३५२१
ताधे उवउत्तेहिं ३१७३
ताधे तु पण्णविज्जति ३२१३
ताधे पुणो वि अण्णत्थ ३२१७
ताधे हराहि भागं २००
ता लाभो उद्दिसणायरियस्स २१२०
तालुग्घाडिणि-ओसावणादि १५२६
ताहे कालग्गाही ३१७६
ताहे मा उड्डाहो ४६८३
तिक्खम्मि उदगवेगे २२३
तिक्खुत्तो मासलहू २६०१
तिक्खेसु तिक्खकज्जं ६६६
तिट्ठाणे संवेगे ३६५२
तिण्णि तिगेगंतरिते २१३५
तिण्णि तु वारा किरिया ४३८५
तिण्णि दिणे पाहुण्णं २६१६
तिण्णि य निसीहियाओ ३१७८
तिण्णि वा कड्ढते जाव ३७७५
तिण्णी जस्स य पुण्णा १५६२
तिण्हं आयरियाणं ४६४२
तिण्हं समाण पुरतो १६२६
तिण्ह समत्तो कप्पो १०१२
तिण्हुण्हभावियस्सा २५३३
तित्थगरगिहत्थेहिं ३८७३
तित्थगरत्थाणं खलु १८२८
तित्थगरपवयणे निज्जरा २५६८
तित्थगरवेयवच्चं ४६८४
तित्थगरा रायाणो ३३५
तित्थगरे ति समत्तं २६२६
तित्थयरे भगवंते १६७५, १६७६

तित्थोगाली एत्थं	४५३२
तिन्नि उ वारा जह दंडियस्स	३२१
तिन्नि य गुरुकामा से	४४
तिमि-मगरेहि न खुब्भति	१३७०
तिरियमुब्भाम नियोग	८०८
तिवरिसएगट्ठाणं	१५४०
तिविधं अतीतकाले	४४५८
तिविधं तु वोसिरेहिति	४३२६
तिविधम्मि व थेरम्मी	४५९८
तिविधा जतणाहारे	२२८२
तिविधे तेगिच्छम्मी	६१६
तिविधो संगेल्लम्मी	१०००
तिविहं च होति बहुगं	३५०
तिविहे तेगिच्छम्मी	१७८
तिविहे य उवसग्गे	११५४
तिविहो य पकप्पधरो	१५२३
तिसु तिन्नि तारगाओ	३१९८
तिसु लहुग दोसु लहुगो	३४६४
तीरगते ववहारे	२५५१
तीरित अकते उ गते	२१२३
तीसं ठवणा ठाणा	३६३
तीसा तेत्तीसा वि य	३६८
तीसा य पण्णवीसा	१०६८, ११२०
तीसुत्तर पणवीसा	४१७
तीसुत्तर सयमेगं	४६८८
तुब्भं अहेसि दारं	१६६५
तुब्भंतो मम बाहिं	३६५३
तुमए चेव कतमिणं	५६४
तुल्ला उ भूमिसंखा	४६०२
तुल्ले वि इंदियत्थे	१०२८
तुल्लेसु जो सलद्धी	२६१
तुवट्ट नयणे दहणे	१७६१
तेणं कुडुंबितेणं	१८८३
तेणग्गिसंभमादिसु	३२६२
तेणट्ठ मेहुणे वा	२६३१
तेण न बहुस्सुतो वी	१७०४
तेण पडिच्छालोए	३७६६
तेण परं सरितादी	५०७
तेण परिच्छा कीरति	१४३३
तेण य सुतं जहेसो	१६५८
तेण वि धारेतव्वं	२३४४
तेणादेस गिलाणे	६३३
तेणा सावय वाला	६८३
तेणेव गुणेणं तू	४०६६
तेणेव सेवितेणं	१०४७
तेणेहि वावि हिज्जति	२६६७
ते तस्स सोधितस्स य	१०६३
तेत्तीसं ठवणपदा	३८६
ते तेण परिच्चत्ता	४२०३
ते नाऊण पदुट्ठे	१२३१
ते पुण एगमणेगा	२७४
ते पुण दोण्णी वग्गा	३६१६
ते पुण परदेसगते	३५८०
तेयनिसग्गा सोलस	४६६८
तेयस्स निसरणं खलु	४६६६
तेरससत अट्ठा	४०८
तेरसवासे कप्पति	४६६३
तेलोक्कदेवमहिता	१०८३
तेल्लिय-गोलिय लोणिय	३७२५
तेवरिस तीसियाए	३२४२
तेवरिसा होति नवा	२३१३
तेवरिसो होति नवो	१५७७
ते वि भणिया गुरूणं	४४५१
ते वि य मग्गंति ततो	३५०४
तेसिं अब्भुट्ठाणं	४१२३
तेसिं कारणियाणं	१३५८
तेसिं गीतत्थाणं	२२००
तेसिं चिय दोण्हं पी	१३५७
तेसिं जयणा इणमो	१७४५
तेसिं तु दामगाइं	१३६१
तेसिं पायच्छित्तं	८३६
तेसिं पि य असतीए	६७४/१
तेसिं सरिनामा खलु	४६६१
तेहि निवेदिए गुरुणो	१६२७
तो अन्नं उप्पायंते	१२६१
तो उट्ठितो गणिवरो	१५०२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तो कलुणं कंदंता २४५७
तो छिंदिउं पवत्तो १६५३
तो जाव अज्जरक्खित २३६५, २३६७
तो ठवितं णो एत्थं ३५०१
तो णाउ वित्तिछेदं ४३८७
तो तेसि होति खेत्तं १८१६
तो देति तस्स राया ३१०७
तो भणति कलहमित्ता २०२८
तो भत्तीए वणिओ २५६३
तो विण्णवेंति धीरा ७८६

थ

थंडिल्लसमायारिं २७१
थलकुक्कुडिप्पमाणं ३६८४
थलि घोडादिट्ठाणे ३०७०
थलि घोडादिनिरुद्धा ३०७२
थवथुतिधम्मक्खाणं ३०३४
थाणे कुप्पति खमगो २५३०
थिग्गल धुत्तापोत्ते ३५४०
थिरकरणा पुण थेरो ६६१
थिर-परिचियपुव्वसुतो १५४७
थिरपरिवाडीएहिं १७२५
थिरमउयस्स उ असती २२८५
थिरवक्खित्ते सागारिए २५२५
थीविग्गह-किलिबं वा १२७५
थुतिमंगलं च काउं ६८८
थुतिमंगल-कितिकम्मे ६८४
थूभमह सड्ढि समणी ११६१
थूभ विउव्वण भिक्खू २३३१
थेरतरुणेसु भंगा २३७१
थेर-पवत्ती गीता ६५२
थेरमतीवमहल्लं २५६
थेरस्स तस्स किं तू २३४६
थेरा उ अतिमहल्ला १४६१
थेराणं स विदिण्णो ३६०८
थेराणमंतिए वासो ४५६७
थेरा तरुणा य तधा ३३७२
थेरा सामायारिं ३०६३
थेरे अणरिहे सीसे १४६०
थेरे अपलिच्छन्ने १३५६
थेरेण अणुण्णाते २०४७
थेरे निस्साणेणं २२६६
थेरो अरिहो आलोयणाय २३४८
थेरोत्ति काउं कुरु मा अवण्णं ३५०२
थेरो पुण असहायो २३७२
थोवं पि धरेमाणो ११६१
थोवं भिन्नमासादिगाउ ८५१
थोवावसेसपोरिसि ३१०५
थोवावसेसियाए ३१७६

द

दंडग्गहनिक्खेवे १२५, २३१८
दंडतिगं तु पुरतिगे ३३३
दंड विदंडे लट्ठी ३४७७
दंडसुलभम्मि लोए ५६२
दंडित सो उ नियत्ते १२६६
दंडिय कालगयम्मी ३१२७
दंडेण उ अणुसट्ठा १६००
दंतच्छिन्नमलित्तं ८६५
दंते दिट्ठ विगिंचण ३१४६
दंसण-नाण-चरित्ते ८५३, ८५४, १४१३, ४४६४
दंसण-नाणे चरणे ६८६
दंसणनाणे सुत्तत्थ २८६
दंसणमणुमुयंतेण ४४८५
दगमुद्देसियं चेव १६२
दट्ठुं वा सोउं वा २८२२, ३३०५
दट्ठुं साहण लहुओ २८८७
दट्ठु महंत महीरुह ४४४४
दट्ठुवगहणे लहुगो ३५७१
दट्ठु विसज्जण जोगे २१२६
दट्ठूण नडिं कोई ११४६
दट्ठूण वन्नधा गंठिं ३४६८
दत्तेणं नावाए ४३७०
दद्दुरमादिसु कल्लाणगं १०
दधि-घय-गुल-तेल्लकरा २४७६
दप्प अकप्प निरालंब ४४६२

दप्पेण पमादेण व २०५३
दमगे वइया खीर घड्डि १३८८
दविणस्स जीवियस्स व ६२५
दविय परिणामतो वा ४३३३
दव्वदुए दुपएणं ६८५
दव्वप्पमाणं तु विदित्तु पुव्वं १३५०
दव्वप्पमाणगणणा २५००
दव्वम्मि लोइया खलु १३
दव्वविसं खलु दुविधं ३०२८
दव्वसिती भावसिती ४२३६
दव्वस्स य खेत्तस्स य १२५६
दव्वादभिग्गहो खलु ३८५५
दव्वादि चतुरभिग्गह ३०५
दव्वादि पसत्थवया २०४५
दव्वादी जं जत्थ उ १४४०
दव्वावदिमादीसुं ८३
दव्वे खेत्ते काले १४६, १२५३, ३०८७, ३८००
दव्वेण य भावेण य ५६५
दव्वे तं चिय दव्वं ३११२
दव्वे भविओ निव्वत्तिओ १६७
दव्वे भाव पलिच्छद १४०८
दव्वे भावे असुई १६४१, १६४२
दव्वे भावे आणा ३८८६
दव्वे भावे भत्ती २६७०
दव्वे भावे संगह १५०६
दव्वे य भाव भेदग १६४
दव्वेहि पज्जवेहिं ४०५५
दस चेव य पणयाला ५३३
दस ता अणुसज्जंती ४१८१
दसदिवसे चउगुरुगा २०५६
दसविधवेयावच्चे १६६५, २६०६, ४५८७, ४६७५
दसहि गुणेउं रूवं ५३०
दसुदेसे पच्चंते १००५
दसुत्तरसतियाए ४१६
दहिकुड अमच्च आणत्ति १६६४
दाण दवावण कारावणेसु १५१६
दाणादि सड्ढकलियं ३६४६
दाणादी संसग्गी २६००
दारुग-लोणे गोरस ३७२०
दास-भयगाण दिज्जति ३७१३
दाहिंति गुरुदंडं तो २७५२
दिंते तेसिं अप्पा ३६०३
दिक्खेउं पि न कप्पति १४५१
दिज्जति सुहं च वीसुं १३४२
दिट्ठं एतेण इमं ३८७२
दिट्ठं कारणगमणं ६४८
दिट्ठंतसरिस काउं २४१३
दिट्ठंतस्सोवणओ ४३६६
दिट्ठंतो गुव्विणीए ३२४६
दिट्ठंतो जध राया १३०१
दिट्ठंतो तेणएणं ४२०६
दिट्ठंतो परिणामे ४६२४
दिट्ठंतोऽमच्चेणं ३६६२
दिट्ठं लोए आलोगभंगि ८२८
दिट्ठा खलु पडिसेवा २२७
दिट्ठादिएसु एत्थं ३४२२
दिट्ठिवाए पुण होंति ४६७०
दिट्ठीय होंति गुरुगा २३७४
दिट्ठो मायि अमाई ३६७१/२
दिट्ठो व समोसरणे १४४४
दिणे दिणे जस्स उवल्लियंती ३३५१
दिण्णमदिण्णो दंडो ३४१
दिन्नज्झरक्खितेहिं ३६०५
दिन्ना वा चुणएणं ३३२३
दिय-रातो निच्छुभणा ३३४७
दिय-रातो उवसंपय २४६
दिवसस्स पच्छिमाए ३०३६
दिवसा पंचहि भइता ३७३, ३७७
दिवसेण पोरिसीय व ११३५
दिवसे-दिवसे वेउव्विया २०८४
दिवसेहि जइहि मासो ३७५
दिव्वमणुया उ दुग तिग ४४०२
दिव्वादि तिन्नि चउहा ३८४२
दिसा अवर दक्खिणा य ३२६८
दिसिदाह छिन्नमूलो ३११६
दीणा जुंगित चउरो १४४८

दीवेउं तं कज्जं	३३८६
दीवेह गुरूण इमं	६७६
दीसंतो वि हु नीया	२४६५
दीसति धम्मस्स फलं	१२५६
दुक्खं हितेसु वसधी	१७५३
दुक्खत्ते अणुकंपा	१५११
दुक्खेण उ गाहिज्जति	४५८८
दुक्खेण लभति बोधिं	१६६०
दुगुंछिता वा अदुगुंछिता वा	६४२
दुच्छडणियं च उदयं	३७६१
दुट्ठो कसायविसएहिं	४१५३
दुण्णि वि दाऊण दुवे	२२६४
दुण्हेगतरे खमणे	२६६
दुधावेते समासेणं	३८४६
दुन्निविद्धा व होज्जाही	३८६६
दुपय-चउप्पय पक्खी	३८६०
दुब्भासिय हसितादी	२४२
दुब्भिगंध परिस्सावी	३७७४
दुम्मेहमणतिसेसी	४६३७
दुल्लभदव्वं पडुच्च	१३५५
दुल्लभदव्वे देसे	११३४
दुल्लभभिक्खे जतिउं	२७३४
दुल्लभलाभा समणा	२४५१
दुल्लभे सेज्जसंथारे	३४०६
दुविधं पि य वितिगिड्ढं	२६५५
दुविधं वा पडिमेतर	२८०७
दुविधतिगिच्छं काऊण	१३०६
दुविधा छिन्नमछिन्ना	३६१६
दुविधाऽवहार सोधी	६३४
दुविधाऽसतीय तेसिं	६७४, १५७५
दुविधेण संगहेणं	१६४२
दुविधेहि जड्डदोसेहिं	४६३३
दुविधो अभिधारंतो	३६६८
दुविधो खलु ओसण्णे	८८२
दुविधोधाविय वसभा	३६५५
दुविधो य अधालहुसो	३५३७
दुविधो य होति कालो	३१६३
दुविधो साविक्खितरो	१५६६
दुविहं तु दप्प-कप्पे	४४५७
दुविहम्मि वि ववहारे	२८
दुविहा जातमजाता	३५८४
दुविहा पट्ठवणा खलु	५६८
दुविहा सुतोवसंपय	३६५८
दुविहो अभिधारंतो	३६७१/१
दुविहो खलु पासत्थो	८५२
दुविहो य एगपक्खी	१२६६
दुसमुक्कट्ठं निक्खिव	२०१६
दुहओ भिन्नपलंबे	१८४
दुहओ वि पलिच्छन्ने	१४७१
दूती अट्टाए ता	२४३६
दूयस्सोमाइज्जति	२४४०
दूरं सो विय तुच्छो	३५६६
दूरगतेण तु सरिए	२११५
दूरत्थम्मि वि कीरति	१५८८
दूरत्थो वा पुच्छति	२३४०
दूरे चिक्खल्लो वुट्ठि	३६०६
दूरे ता पडिमाओ	८१३
देंता वि न दीसंती	४१६४, ४१७०
देंति अजुंगमथेराण	४६४३
देंति सयं दावेंति य	१५१८
देविंदचक्कवट्टी	२५६६
देविंदा नागा वि य	४६६५
देवो महिड्ढिओ वावि	३८०२
देसं दाऊण गते	३३३७
देसं वावि वहेज्जा	७६४
देसेण अवक्कंता	८६१
देसे देसे ठवणा	१६६८
देसे सव्वुवहिम्मी	३६१८
देसो सुत्तमधीतं	१५६६
देहवियोगो खिप्पं	४३३७
दोच्चं व अणुण्णवणा	३५१०
दोण्णि व असंजतीया	२६२४
दोण्णि वि जदि गीतत्था	२६१०
दोण्हं अणंतरा होति	३६६०
दोण्हं चउकण्णरहं	१८५२
दोण्हं तु संजताणं	१८३२

दोण्हं पि अणुमतेणं १२४५
दोण्हं विहरंताणं १०१३
दोण्ह जतो एगस्सा ३६२५
दोण्ह वि बाहिरभावो १३०६
दोण्ह वि विणिग्गतेसुं २२३५
दोण्हेगतरे पाए ३८१८
दो थेर खुड्ड थेरे २०४८
दो पायाणुण्णाया ३५६६
दो पुत्त पिता-पुत्ता २०४६
दो भाउगा विरिक्का १४०६
दो भिक्खू ऽगीतत्था २१६४
दोमादि ठिता साधारणम्मि १८०२
दोमादि संतराणि उ ३४६७
दोमादी गीतत्थे १६६६
दो रासी ठावेज्ञा ३६५
दो संघाडा भिक्खं २२७५
दोसविभवाणुरूवो १७२, ६१५
दोसा उ ततियभंगे १६८२
दोसा कसायमादी ४१५०
दोसाण रक्खणट्ठा ३५२४
दो साहम्मिय छब्बारसेव ६७६
दोसु अगीतत्थेसुं २१६५
दोसु तु वोच्छिन्नेसुं ४१८२
दोसु वि वोच्छिन्नेसुं ४१८३
दो सोय नेत्तमादी ४४१२
दोहिं तु हिते भागे २०५
दोहि तिहि वा दिणेहिं ३०१
दोहि वि अपलिच्छन्ने १३७६
दोहि वि गिलायमाणे १०३८
दोहि वि गुरुगा एते ५८६, ५६१, ५६३
दोहि हरिऊण भागं ५३१

ध

धम्मं जई काउ समुट्ठियासि २८५२
धम्मकधा इड्डिमतो २०५६
धम्मकह निमित्तादी २३२०
धम्मकहनिमित्तेहि य २८३६
धम्मकहा सुत्ते या ३६७६
धम्मकहि महिड्ढीए १७३६
धम्मकही-वादीहिं २४६१
धम्ममिच्छामि सोउं जे १८४०
धम्मसभावो सम्मद्दंसणयं ४१४५
धम्मायरि पव्वावण ४५६३
धम्मिओ देउलं तस्स २८८३
धम्मो कहेज्ज तेसिं ३५००
धम्मो य न जहियव्वो ४५८५
धरमाणच्चिय सूरे ६८१
धारणववहारेसो ४५०७, ४५२०
धारिय-गुणिय-समीहिय १४६६
धावति पुरतो तह मग्गतो ४५५८
धित्तेसिं गामनगराणं ६३५
धीरपुरिसपण्णत्ते ४३४८
धीरपुरिसपण्णत्तो ४५३६
धीरा कालच्छेदं २२८०
धुव आवाह विवाहे ३७३६
धुवकम्मियं च नाउं २५४१
धुवणे वि होंति दोसा १७७१
धुवमण्णे तस्स मज्झे ३३६१
धोतम्मि य निप्पलगे ३२२४
धोतावि न निद्दोसा २८००

न

नउतीए पक्ख तीसा ४१५
नंदि-पडिग्गह-विपडिग्गहे ३६३३
नंदीभासणचुण्णे ३०३८
नंदे भोइय खण्णा ७१६
न करेंताऽऽवासं वा ६५५
न करेति भुंजिऊणं २१२७
न किलम्मति दीघेण वि ७८५
नक्खत्ते चंदे या १६८
नग्घंति नाडगाइं ३००६
नच्चणहीणा व नडा २५६५
नणु भणिय रसच्चाओ १७७५
नणु सो चेव विसेसो १११४
न तरंती तेण विणा २६६२
न तरति सो संधेउं १३०७

नत्थि इहं पडियरगा ३०४
नत्थि वत्थुं सुगंभीरं ३४६६
नत्थी संकियसंघाड २७६
नत्थेयं मे जमिच्छसि २७७
नदिसोय सरिसओ वा २८६८
न पगासेज्ज लहुत्तं ४३७६
न य छड्डिता न भुत्ता १६१२
न य जाणति वेणइयं १३६६
न य बंधहेतुविगलत्तणेण ११०६
नयभंगाउलयाए १४६७
न य भुंजंतेगट्ठा २७६१
न लूओ अध साली उ २६५४
नवंगसुत्तप्पडिबोहयाए ४४११
नवकालवेलसेसे ३२०८
नवघरकवोतपविसण २८८१
नवडहरगतरुणगस्स १५८०
नवणीयतुल्लहियया २६६८
नवतरुणो मेहुण्णं १५६४
नवमं तु अमच्चीए १६०६
नवमस्स ततिगवत्थू ५४०
नवमासगुव्विणीं खलु ३८६३
नवयसता य सहस्सं ४०६
नवरि य अन्ने आगत ३४४१
नववज्झियावदेहो २५१
नवविगतिसत्तओदण ४३२५
न वि उत्तराणि पासति २५६६
न विणा तित्थं नियंठेहिं ४२१७
न वि देमि त्ति य भणिते १२८६
न वि य समत्थो वन्नो ६६६
न विरुज्झंति उस्सग्गे १२३
न वि विस्सरति धुवं तू ४१०८
न विसुज्झामो अम्हे १२३६
न संति साधू तहियं विवित्ता १८१४
न संभरति जो दोसे ४०६७
नस्सए उवणेतो सो २६५६
न हु कप्पति दूती वा २८५८
न हु गारवेण सक्का १७२३
न हु ते दव्वसंलेहं ४२६१
न हु सुज्झती ससल्लो २३०
न हु होति सोइयव्वो १०८४
नाऊण कालवेलं ३१७२
नाऊण परिभवेणं १६८०
नाऊण य निग्गमणं २०६०
नाऊण सुद्धभावं ३४६३
नाएण छिन्न ववहार १६५२
नाए व अनाए वा ४००३
नाणं नाणी णेयं ३
नाण-चरण-संघातं १६८८, १६८६
नाणचरणस्स पव्वज्ज २८३०
नाण-चरणे निउत्ता १६३३
नाण-तवाण विवड्ढी १७८३
नाणत्तं दिस्सए अत्थे १५५
नाणनिमित्तं अद्धाण ४३०४
नाणनिमित्तं आसेवियं ४३०३
नाणमादीणि अत्ताणि ४०६३
नाणम्मि असंतम्मी ३०५०
नाणस्स दंसणस्स य ३०५३
नाणायार विराहितो ३२३८
नाणी न विणा नाणं ४०
नाणे नाणायारं ८७८
नातं आगमियं ति य ४०३६
नातिथुल्लं न उज्झंति ४६४०
नामं ठवणा दविए १६६, २१०, २१३, ६६५, ६८०, ६८६
नामं ठवणा भिक्खू १८८
नामम्मि सरिसनामो ६८७
नामादिगणो चउहा १३६५
नामा वरुणा वासं ४६६२
नामेण य गोत्तेण व १०४३
नामेण वि गोत्तेण य ७५१
नायम्मि गिण्हियव्वे ४६६१
नायविधिगमण लहुगा २४५०
नाल पुर पच्छ संथुय ३६५६
नालबद्धा उ लब्भंते २१६०
नालबद्धे अनाले वा २१७६
नालबद्धे उ लब्भंते २१६४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नालीधमएण जिणा	४०४७
नालीय परूवणया	४४४
नासेति अगीयत्थो	१७२४, ४२५२
नासेति असंविग्गो	४२६६
नाहं विदेस आहरणमादि	११६२
नाहिंति मर्म ते तू	२८५७
निउणमतिनिज्जामगो	७५४
निक्कारणदप्पेणं	४४८३
निक्कारणपडिसेवी	२४
निक्कारणम्मि गुरुगा	६३२
निक्कारणिएऽणुवदेसिए	३६४६
निक्कारणे असुद्धो उ	२६११
निक्कारणे न कप्पंति	२१४२
निक्खित्तगणाणं वा	२२२५
निक्खित्तनियत्ताणं	२२५०
निक्खित्तम्मि उ लिंगे	१२६८
निक्खिवणे तत्थ गुरुगा	३०७७
निक्खिव न निक्खिवामी	७६५
निग्गंतूण न तीरति	२२४१
निग्गंथाण विगिट्ठे	२६७३
निग्गंथीणं पाहुड	३००७
निग्गंथीणऽहिगारे	२८३४
निग्गमणं तु अधिकितं	७६८
निग्गमणभवक्कमणं	६०७
निग्गमणे चउभंगो	२२३०
निग्गमणे परिसुद्धे	२७५
निग्गमऽसुद्धमुवाएण	२८२
निग्गयवट्टंता वि य	४७२
निग्गिज्झ पमज्जाही	२५२८
निच्चं दिया व रातो	३८३७
निच्छयतो पुण अप्पे	२६३७
निज्जवगो अत्थस्सा	४१०३
निज्जूढं चोद्दसपुव्विएण	४४३१
निज्जूढो मि नरीसर	१२२४
निज्जूहगतं दट्ठुं	६६८
निज्जूहादि पलोयण	६६७
निड्डित महल्ल भिक्खे	२१०८
नितियादि उवहि भत्ते	१६७०
नित्थिण्णो तुज्झ घरे	११८३
निदारेसण जध मेत्थ	४६८६
निद्दोसं सारवंतं च	३०२३
निद्ध-महुरं च भत्तं	१०६८
निद्धमहुरं निवातं	१६६०
निद्धाहारो वि अहं	२५५३
निद्धूमगं च डमरं	१५६५
निप्पडिकम्मो वि अहं	२६६१
निप्पत्तकंटइल्ले	३०८
निप्फण्णतरुण सेहे	३६१८
निब्भच्छणाय बितियाय	४२१०
निब्भयओरस्सबली	१४३५
निम्माऊणं एगं	२०१५
नियमा विज्झागहणं	२४२४
नियमा होति असुण्णा	१७४८
निययं च तहावस्सं	२०८३
नियतानियतविसेसो	३७१४
नियताहारस्स सया	३६८२
निरवेक्खे कालगते	१८६५
निरवेक्खो तिण्णि चयति	४१६६
निरुवस्सग्गनिमित्तं	५४७, ७६८
निवमरणमूलदेवो	४५२
निववेट्ठिं च कुणंतो	१०५३
निवेदणियं च वसभे	२८४२
निव्वाघाएणेवं	४३७४
निव्वितिए पुरिमड्ढे	१६३, ६२०
निव्विति ओम तव वेए	१६०१
निसज्जं चोलपट्टं	३७६२
निसीध नवमा पुव्वा	४३५
निसेज्जऽसति पडिहारिय	३१५
निस्संकितं तु नाउं	३५४२
निस्संकियं व काउं	२८६१
निस्संकिय निक्कंखिय	६४
निस्सग्गुस्सग्गकारी य	२७५७
निस्सेसमपरिसेसं	४१४२
नीतम्मि य उवगरणे	३५६१
नीता वि फासुभोजी	१५५१
नीयल्लएहि उवसग्गो	२१११

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नीयल्लगाण तस्स व ११८५
नीयल्लगाण व भया १८०६
नीलीराग खसद्दुम १३८३
नीसंकितो वि गंतूण ३६६६
नीसंको वणुसिट्ठो ३६६८
नीसट्ठ अपडिहारी ३७१५
नीसिरण कुच्छणागार १७७०
नीह त्ति तेहि भणिते ३६४८
नीहरिउं संथारं ३५१६
नेगाण विधिं वोच्छं ३२५८
नेच्छंति देवरा मं २४७२
नेवइया पुण धन्नं १७८१
नोइंदिइंदियाणि य १५४१
नोइंदियपच्चक्खो ४०३१
नोकारो खलु देसं १३६०

प

पउरण्णपाणगमणं १६८६
पउरण्ण-पाणगामे १०६
पउरण्णपाणपढमा ३२७०
पउरण्णपाणियाइं १६४६
पंचण्हं परिवुड्ढी ३६०
पंचण्ह दोन्नि हारा ३२८१
पंचण्हुवरि विगट्ठो ४६५७
पंचण्हेगं पायं ३५६८
पंचम निक्खित्तगणो १६३१
पंचमहव्वयधारी ८७०
पंचमियाय असंखड ३२७१
पंच य महव्वयाइं १६२६
पंच व छस्सत्तसते ४२६१
पंच व छस्सत्तसया ४२६६
पंचवि आयरियादी २६१६
पंचविधं उवसंपय १६६२
पंचविधमसज्झायस्स ३१५५
पंचविधे कामगुणे ६२८
पंचविहो ववहारो ४०२८
पंचसता चुलसीता ४०६
पंचसता जंतेणं ४४१८
पंचादी आरोवण १४०
पंचासवप्पवत्तो ८६०
पंचाहग्गहणं पुण २०७६
पंचिंदि धट्ट तावण ४५४०
पंचिंदियाण दव्वे ३१३३
पंचेते अतिसेसा २७०५
पंचेव नियंठा खलु ४१८४
पंचेव संजता खलु ४१८८
पंतवण बंधरोहं २४७३
पंतावणमीसाणं ७३३
पंथम्मि य कालगता १४६४
पंथे उवस्सए वा ३५५०
पंथे ठितो न पेच्छति ३५६३
पंथे न ठाइयव्वं ३५५३
पंथे वीसमण निवेसणादि ३५५१
पंसू अचित्तरजो ३११५
पंसू य मंसरुधिरे ३११४
पक्कल्लोव्व भया वा १६६८
पक्खस्स अट्ठमी खलु २६६८
पक्खिगापक्खिगा चेव ३५७६
पक्खिय चउ संवच्छर २३४
पक्खियपोसहिएसुं ४१३६
पगत बहुपक्खिए वा ३१२८
पगतसमत्ते काले २६६१
पगता अभिग्गहा खलु ३८३१
पगतीए मिउसहावं १३११
पगया अभिग्गहा खलु ३८२३
पगामं होति बत्तीसा ३६८८
पग्गह लोइय इयरे २१६
पग्गहितं साहरियं ३८२४
पग्गहियमलेवकडं ८०४
पच्चंत सव्वयादी २०६१
पच्चंते खुब्भंते ६४८
पच्चक्खागमसरिसो ४०३५
पच्चक्खी पच्चक्खं ४०४६
पच्चक्खो वि य दुविहो ४०३०
पच्चागता य सोउं ११७७
पच्छन्न राय तेणे १८६४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पच्छा इतरे एगं	२२०३
पच्छाकडो भणेज्जा	३३३०
पच्छाविणिग्गतो वि हु	३६१०
पच्छा वि होंति विकला	१४५२
पच्छासंथुतइत्थी	१२७३
पच्छित्तं इत्तरिओ	११६८
पच्छित्तं खलु पगतं	१०७१
पच्छित्तऽणुपुव्वीए	५७७
पच्छित्तस्स उ अरिहा	४७६
पच्छित्ते आदेसा	३८६७
पच्छिल्लहायणे तू	४२४७
पज्जोयमवंतिवति	७८४
पट्टग घेत्तूण गतो	२६४२
पट्ठविद्रम्मि सिलोगे	३२१८
पट्ठवित वंदिते वा	३१६२
पट्ठविता ठविता य	५६६
पट्ठविता य वहंते	६००
पडिकारा य बहुविधा	२६४३
पडिकुट्ठेल्लगदिवसे	३०६
पडिणीय अकिंचकरा	१५६०
पडिणीयऽणुकंपा वा	३७६६
पडिणीय-मंदधम्मो	१७१३
पडिणीयम्मि उ भयणा	२८३
पडिणीययाए केई	४४२१
पडिणीययाए कोई	४४२०
पडिपुच्छिऊण वेज्जे	२३६२
पडिबोहग देसिय सिरिघरे	१३७३
पडिभग्गेसु मतेसु व	१७६८
पडिमा उ पुव्वभणिता	३७८०
पडिमापडिवण्ण एस	३८५४
पडिमाहिगारपगते	३७८६
पडिमुप्पत्ती वणिए	२५६१
पडियरति गिलाणं वा	२२८६
पडियरते व गिलाणं	२२१०
पडिलेहण पप्फोडण	४१३८
पडिलेहण मुहपोत्तिय	८६४
पडिलेहण संथारं	४३४५
पडिलेहणऽसज्झाए	२७०, ६५३, ६५४
पडिलेह दिय तुयट्टण	१६५०
पडिलोमाणुलोमा वा	४३१६
पडिवण्णे उत्तमट्ठे	२२६१
पडिवत्तीकुसलेहिं	२४६३
पडिवत्ती पुण तासिं	३८०६
पडिरूवग्गहणेणं	६२
पडिरूवो खलु विणओ	६६
पडिसिद्धमणुण्णातं	२३६४
पडिसिद्धा सन्निही जेहिं	२४२०
पडिसेधे पडिसेधो	२८६७
पडिसेधो पुव्वुत्तो	२८०५
पडिसेधो मासकप्पे	८६८/३
पडिसेवओ य पडिसेवणा	३७
पडिसेवओ सेवंतो	३८
पडिसेवणं विणा खलु	१३६
पडिसेवणा उ कम्मोदएण	२२६
पडिसेवणातिचारा	४३०८
पडिसेवणातियारे	४०६५, ४०६५/१
पडिसेवणा तु भावो	३६
पडिसेवणा य संचय	५७२
पडिसेवणा य संजोयणा	३६
पडिसेवति विगतीओ	४३०५
पडिसेवि अपडिसेवी	१२६४
पडिसेविएँ दप्पेणं	२२६
पडिसेवितं तु नाउं	२६२५
पडिसेवितम्मि सोधिं	२२
पडिसेविते उवेक्खति	६६५
पडिसेवियम्मि दिज्जति	५२
पडिसेविय रायाणो	६३४
पडिसेहं तमजोग्गं	२५८७
पडिसेहियगमणम्मी	१२८७
पडिहाररूवी भण रायरूविं	१२२०
पडिहारियगहणेणं	६६१
पडुच्चायरियं होति	४५६५
पढमं कज्जं नामं	४४८१
पढमगभंगे इणमो	३६०५
पढमगसंघयणथिरो	४०६४
पढमचरमाण एसो	२११६

पढमचरिमेसऽणुण्णा २११३
पढम-ततिएसु पूया ५८३
पढमत्ततिया एत्थं ४५५६
पढमदिणनियत्तंते १२५८
पढमदिणमविप्फाले २४८
पढमदिणम्मि न पुच्छे २६८
पढमबितिएसु कप्पे ४३१४
पढमबितिएहि न तरति १०५२
पढमबितिओदएणं २८६४
पढम-बितियादलाभे ७६३
पढमम्मि य संघयणे ४४०१
पढमम्मि सव्वचेट्ठा ३१०६
पढमस्स नत्थि सद्दो ४६३१
पढमस्स य कज्जस्सा ४४६८-४४७४, ४४६०-४४६२, ४४६४-४४६६
पढमस्स होति मूलं १६५,६०६
पढमा उवस्सयम्मी ७८०
पढमा ठवणा एक्को ३६७-३६६
पढमा ठवणा पंच य ३६२-३६४
पढमा ठवणा पक्खो ३८७-३८६
पढमा ठवणा वीसा ३८२-३८४
पढमाऽसति बितियम्मि वि १६७४
पढमा सत्तिगासत्त ३७८२
पढमो त्ति इंद-इंदो १५६
पढमोऽनिक्खित्तगणो १६३०
पणगं पणगं मासे १३३६
पणगं मासविवड्ढी ४०४०
पणगादिसंगहो होति २७३
पणगादी जा गुरुगा २०२५
पणगादी जा मासो १२६०
पणगेणऽहिओ मासो ५२५
पणगो व सत्तगो वा १७३१
पणतीसं ठवणपदा ३६१
पणपण्णिगादि किड्डिसु १६२२
पणिधाणजोगजुत्तो ६५
पण्णत्तीकुसलो खलु १५०१
पण्णरसे चारणभावणं ती ४६६७
पण्णरसे व उ काउं ३८३४
पण्णवगस्स उ सपदं ४१७५
पण्णविता य विरूवा ११५०
पण्णाए पण्णट्ठी ४१३
पण्णे य थंते किमिणे य ८५०
पतिलीलं करेमाणी २६४५
पत्तं ति पुप्फं ति फलं ददंती ४६२५
पत्तस्स पत्तकाले ४६७२
पत्ताण अणुण्णवणा ३६२१
पत्ताण-वेल पविसण २४६२
पत्ताण समुद्देसो ३०३५
पत्ता पोरिसिमादी २८५४
पत्तिय पडिवक्खो वा १२३८
पत्ते देंतो पढमो ४५८३
पत्तेयं पत्तेयं ४३६,५१३
पत्तेयं भूयत्थं २६२८
पत्तेयबुद्धनिण्हव ६६४
पत्थगा जे पुरा आसी १४८
पत्थर छुहए रत्ती ८१६
पत्थरमणसंकप्पे ८१७
पदगयसु वेयसुत्तर ३७८७
पदमक्खरमुद्देसं ४४५४
पभुदारे वी एवं ३४५३
पमेहकणियाओ य ३७६६
पम्हुट्ठमवि अन्नत्थ ३५५८
पम्हुट्ठे गंतव्वं ३५६७
पम्हुट्ठे पडिसारण ३१६
पयत्तेणोसधं से २०२३
परं ति परिणते भावे २०७६
परखेत्तम्मि वि लभती ३६८४
परखेत्ते वसमाणे ३६८५
परचक्केण रट्ठम्मि २८१६
परतो सयं व णच्चा ४२७६
परपच्चएण सोही १६
परबलपहारचइया १०४२
परबलपेल्लिउ नासति १६३६
परमन्न भुंज सुणगा १६३८
परलिंग निण्हवे वा १८६५
परलिंगेण परम्मि उ १६०८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परवादी उवसग्गे	१४३६	परिहारो वा भणितो	१३३६
परवादीण अगम्मो	२६७७	परोक्खं हेउगं अत्थं	४६०६
परवादीहि न खुब्भति	१३७१	परोग्गहं तु सालेणं	३७४५
परिकम्मं कुणमाणे	१३०५	पलिउंचण चउभंगो	५८०
परिकम्मणाय खवगो	७६५	पवडेज्ज व दुब्बद्धे	३४६६
परिकम्मितो वि वुच्चति	७६२	पवत्तिणि अभिसेगपत्त	७२४
परिकम्मेहि य अत्था	१८२७	पवयणकज्जे खमगो	१७२२
परिग्गहे निजुज्जंता	२४१८	पवयणजसंसि पुरिसे	४५०८
परिचियसुओ उ मग्गसिर	८००	पवित्तिणिमभत्तेणं	२८४५
परिजितकालामंतण	७६६	पव्वज्ज अप्पपंचम	१५४६
परिजुण्णो उ दरिद्दो	२०६६	पव्वज्जादी आलोयणा	४३०२
परिणामाणवत्थाणं	२७५६	पव्वज्जादी काउं	४२२३, ४३६१
परिणामियबुद्धीए	१६७८	पव्वज्जापरियाओ	४६४५
परिणामो जं भणियं	४६२२	पव्वज्जाय कुलस्स य	१३०३
परिणाय गिलाणस्स य	७४८	पव्वज्जा सिक्खावय	७७४/१, ७७४/२
परिणिट्ठित परिण्णाय	४०७५	पव्वावइत्ताण बहू य सिस्सा	१३८६
परिणिव्वविया वाए	४१०२	पव्वावणा सपक्खे	२६३४
परिताव अंतराया	२५३५	पव्वावणुवट्ठावण	४५६०
परिभाइयसंसट्ठे	१३४७	पव्वावितोऽगीतेहि	२०६४
परिभूयमति एतस्स	७१३	पव्वावियस्स नियमा	२६५३
परिमित असती अण्णो	१३४६	पव्वावेउं तहियं	२१५३
परिमितभत्तगदाणे	२५०३	पहगामऽचित्त चित्तं	२२१२
परियट्टिज्जति जहियं	४६६४	पहनिग्गयादियाणं	३५८५
परिवार इड्ढि-धम्मकहि	१७१६	पाउणति तं पवाए	३७६३
परिवारहेउमन्नट्ठयाय	३०५५	पाओवगमे इंगिणि	४२२२
परिसाडि अपरिसाडी	३३६०	पागडियं माहप्पं	२५६८
परिसाडिमपरिसाडी	३५११	पाणगजोग्गाहारे	४३१७
परिसाडी पडिसेधो	३५१२	पाणगादीणि जोग्गाणि	४२८३
परिसा ववहारी या	१६७०	पाणदयखमणकरणे	३६०७
परिहरति असण-पाणं	१५२१	पाणवह-मुसावादे	११६
परिहरति उग्गमादी	६००	पाणसुणगा व भुंजति	२५५
परिहारऽणुपरिहारी	५६६	पाणा थंडिल वसधी	१७६६
परिहारविसुद्धीए	४१६१	पाणा सीतल कुंथू	३४१२
परिहारिओ उ गच्छे	६६४	पाणिपडिग्गहियस्स वि	३८१७
परिहारि कारणम्मि	१०५४	पाणिवह-मुसावाए	४५
परिहारियाण उ विणा	६२४	पादपरिकम्म पादे	४६७६
परिहारियाधिकारे	१०३६	पादोवगमं भणियं	४३६५
परिहारो खलु पगतो	६६०	पादोवगमे इंगिणी	४२२१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पादोसिएण सव्वे	३२०२
पादोसितो अभिहितो	३१६४
पादोसियङ्करत्ते	३२००
पाबल्लेण उवेच्च व	४५०४
पाभातियम्मि काले	३२१०
पायं न रीयति जणो	१६८६
पायच्छित्तनिरुत्तं	३४
पायच्छित्ताऽऽभवंते य	४०२७
पायच्छित्ते असंतम्मि	४२१५
पायच्छित्ते दिन्ने	११६७
पायच्छि-नास-कर-कण्ण	३६४२
पायसमा ऊसासा	१२१
पायस्स वा विराधण	४६३५
पारंचि सतमसीतं	५७३
पारगमपारगं वा	४१६६
पारायणे समत्ते	१७१२, १७३०
पारावयादियाइं	२८६४
पारिच्छनिमित्तं वा	२१०४
पारिच्छहाणि असती	१६२२
पारेहि तं पि भंते	७६६
पारोक्खं ववहारं	४०३६
पावं छिंदति जम्हा	३५
पावयणी खलु जम्हा	२६३२
पावस्स उवचियस्स वि	८४६
पावासि जाइया ऊ	३२१२
पास उवरिव्व गहितं	१३५६
पासंड भावितेसुं	१७८२
पासंडे व सहाए	११६६
पासंता वि न जाणंति	४६१६
पासंतो वि य काये	१११६
पासट्ठितो एलुगमेत्तमेव	३८७६
पासत्थ अधाछंदा	८३४, ८८६
पासत्थगिहत्थादी	१५८४
पासत्थमगीतत्था	३६७६
पासत्थादि कुसीले	२८६८
पासत्थादिविरहितो	१६२३
पासत्थिममत्तेणं	२८७२
पासत्थे आरोवण	८७६
पासत्थे ओसण्णे	१६२८
पासत्थोसन्न-कुसील	४३२०
पासवण अन्न असती	२७८६
पासायस्स उ निम्मं	४१७६
पासित्तु ताणि कोई	४३३०
पासो त्ति बंधणं ति य	८५५
पाहुड विज्जातिसया	१७३६
पाहुणगा गंतुमणा	२५३७
पिंडस्स जा विसोधी	४७०
पिच्चा मरिउं पि सुहं	१०४०
पियधम्मा दढधम्मा	१४
पियधम्मे दढधम्मे	१५, ३१
पियधम्मो जाव सुयं	२६
पिय-पुत्त खुड्ड थेरे	२०४६
पियरो व तावसादी	१५५०
पीलित विरेडितम्मी	३७३०
पीलेंति एक्कतो वा	३७२६
पुंडरियमादियं खलु	११३३
पुक्खरिणी आयारे	१५२५
पुक्खरिणीओ पुव्विं	१५२७
पुच्छाए न्नाणत्तं	३४५०
पुच्छाहि तीहि दिवसं	१८०३, २२२७
पुट्ठा अनिव्वहंती	२३१६
पुट्ठापुट्ठो पढमो	४५६८
पुट्ठा व अपुट्ठा वा	११८७
पुट्ठो वासु मरिस्सति	१४२४
पुढवि-दग-अगणि-मारुय	१४८८/१, ४०११, ४४०४
पुणरवि चउरण्णे तू	४२४२
पुणरवि चोएति ततो	१४५
पुणरवि जे अवसेसा	४६१
पुणरवि भण्णति जोगो	२५२१
पुणरवि य संजतित्ता	१८८४
पुणरवि साहति गणिणो	२३१७
पुणो वि कध मिच्छंते	१८४१
पुण्णम्मि अंत मासे	३५१३
पुण्णे व अपुण्णे वा	२१०३
पुत्तादीणं किरियं	११०२
पुन्नो य तेसिं तहिं मासकप्पे	३६२७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुप्फावकिण्ण मंडलिया १८०६
पुमं बाला थिरा चेव ४०२६
पुरपच्छसंथुतेहिं ७८६
पुरपच्छसंथुतो वा ३७१६
पुरिसं उवासगादी ४११३
पुरिसज्जाया चउरो ४५५५
पुरिसस्स उ अइयारं ४५११
पुरिसस्स निसग्गविसं ३०३०
पुरिसे उ नालबद्धे १२६६
पुव्वं अपासिऊणं ४०५७
पुव्वं आयतिबंधं १८९८
पुव्वं गुरूणि पडिसेविऊण ५७८
पुव्वं च मंगलद्धा २५०७
पुव्वं ठावेंति गणे १९९३
पुव्वं तु अगहितेहिं २४०२
पुव्वं तु किढी असतीय ३०८५
पुव्वं पच्छुद्दिट्ठं १३१४, १३१५, १३१७, १३१९, १३२०
पुव्वं पट्ठवणा खलु ११५
पुव्वं बुद्धीए पासित्ता ७६
पुव्वं व चरति तेसिं ३८६१
पुव्वं वण्णेऊणं १५२४, ३०४६
पुव्वं वतेसु ठविते १२३७
पुव्वं विणिग्गता पच्छा ३६०८
पुव्वं विणिग्गतो पुव्व... ३६०४
पुव्वंसि अप्पमत्तो ६२५
पुव्वं सो सरिऊणं ७६३
पुव्वण्हे यावरण्हे य ३०२४
पुव्वभणिता तु जतणा २२७६
पुव्वभवियपेम्मेणं ४४०७, ४४०८
पुव्वभवियवेरेणं ११४२, ४३६७
पुव्वम्मि अप्पिणंती २२८८
पुव्वाउत्तारुहिते २४६७
पुव्वाणुण्णा जा पुव्वएहि ३३५७
पुव्वाणुपुव्वि दुविधा ५७५
पुव्वाणुपुव्वि पढमो ५७६
पुव्वारुहिते य समीहिते २४६८
पुव्वावर दाहिण उत्तरेहि ४४००
पुव्वावरबंधेणं १४९८
पुव्विं अदत्तदाणा २५८८
पुव्विं कोडीबद्धा १५३५
पुव्विं चउदसपुव्वी १५३०
पुव्विं छम्मासेहिं १५३७
पुव्विं सत्थपरिण्णा १५३१
पुव्वुद्दिट्ठं तस्सा १३१३, १३१६, १३१८
पुव्वुद्दिट्ठो य विधी ११०५
पुव्वोवट्ठपुराणे ४६०५
पूए अहागुरुं पि ४११७
पूएऊण विसज्जण १६०८
पूयं जहागुरूवं १४८५
पूयंति य रक्खंति य २५६६
पूयणमहागुरूणं १५१२
पूयत्थं णाम गणो १४००
पूया उ दट्ठुं जगबंधवाणं १८१३
पेज्जादि पायरासा २६४२
पेढियाओ य सव्वाओ २६६३
पेसवेति उ अन्नत्थ २१७०
पेसी अइयादीया ३२४७
पेसेति उवज्झायं १२१६
पेसेति गंतुं व सयं व पुच्छे १३३०
पेसेति गिलाणस्स व २१७१
पेहाभिक्ख किंतीओ २१८३
पेहाभिक्खग्गहणे १०४६
पेहा-वियार-झायादी ३३१३
पेहितमपेहितं वा २७८७, ३६३४
पेहिते न हु अन्नेहिं ३६२६
पेहेऊणं खेत्तं ३६४२
पेहेतुच्चारभूमादी ३५२७
पोग्गलअसुभसमुदओ ११४०
पोसगसंवर-नड-लंख १४४६

फ

फणसं च चिंच तल नालि ३७४४
फलमिव पक्कं पडए १६६७
फलितं पहेणगादी ३८२१
फालहियस्स वि एवं २३२६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

फासिय जोगतिएणं ३७७९
फासुय आहारो से २०३७
फासुयपडोयारेण १६२४
फासेऊण अगम्मं १८
फिडितम्मि अद्धरत्ते ३२०३

ब

बउसपडिसेवगा खलु ४१९३
बंध-वहे उद्दवणे ३८६६
बंधाणुलोमयाए ७१९
बंधित्ता कासवओ ३७७३
बंधेज्ज व रुंभेज्ज व ३८४१
बंधे य धाते य पमारणेसु १५९९
बकुसपडिसेबगाणं ४१८६
बत्तीसं वण्णिय च्चिय ४१३०
बत्तीसलक्खणधरो ४४०९
बत्तीसाए ठाणेसु ४०७६-४०७९
बलवंतो सव्वं वा १६६५
बलवाहणकोसा या २४०९
बलवाहणत्थहीणो २४१०
बलि धम्मकधा किड्डा १७८८
बहि अंत विवच्चासो २५२२, २५२४
बहिगमणे चउगुरुगा २५४२
बहिगाम घरे सण्णी १९६२
बहिय अणापुच्छाए २४८२
बहिया य अणापुच्छा २१४९
बहिया य पित्तमुच्छा २५७६
बहिया व अणापुच्छा २१५१
बहिरस्स उ विण्णाणं ४६१३
बहुआगमितो पडिमं ३८८१
बहुएसु एगदाणे ३२५, ३५४
बहुएहि जलकुडेहिं ५०८
बहुएहि वि मासेहिं ३३६
बहुगी होति मत्ताओ ३७९८
बहुजणजोग्गं खेत्तं ४११६
बहुपच्चवाय अज्झा ३२४६
बहुपडिसेवी सो वि य ३५२
बहुपरिवारमहिड्ढी १७२०
बहुपाउग्गउवस्सय १०६२
बहुपुत्तओ नरवती १५६४
बहु-पुत्तत्थी आगम ८२०
बहुपुत्ति पुरिस मेहे ८१६
बहु बहुविधं पुराणं ४११०
बहुमाणविणय आउत्तयाय ३०३३
बहुया तत्थऽतरंता २६२३
बहुविधणेगपयारं ४१०७
बहुसुतजुगप्पहाणे ४०८८
बहुसुत-परिचियसुत्ते ४०८७
बहुसुत बहुपरिवारो १६५१
बहुसुतमाइण्णं न उ ३८२५
बहुसुत्ते गीतत्थे १४४२
बहुसो उच्छोलेंती ३०६९
बहुसो बहुस्सुतेहि ४५४२
बायाला अट्ठेव य ४७१
बारस अट्ठग छक्कग ४०२
बारस दस नव चेव य ४९०
बारसवासा भरधाधिवस्स २७०१
बारसवासे अरुणोववाय ४६६०
बारसवासे गहिते २२९३
बारसविधे तवे तू १९२६
बारसविहम्मि वि तवे २९४/१
बालगपुच्छादीहिं २४९९
बालादीणं तेसिं १५१७
बालाऽसहुमतरंतं २७०७
बालासहुवुड्ढेसुं १५१५
बावीसमाणुपुव्वी ४४२७
बाहिं अपमज्झंते २५२३
बाहिं वक्खारठिते २८०४
बाहुल्ला संजताणं तु ३९४४
बिंति य मिच्छादिट्ठी १०१९
बिंदू य छीयऽपरिणय ३१८१
बितिए नत्थि वियडणा ५५
बितिए निव्विस एगो १०३१
बितिएहि तु सारवितं २६६९
बितिओ उ अन्नदिट्ठं ३४२६
बितिओ न करेतऽट्ठं ४५६०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बितिओ पंथे भणती	३६२३
बितिओ माणकरो तू	४५६५
बितिओ सयमुद्धरति	६६३
बितियं कज्ञं कारण	४४८४
बितियं तिव्वऽणुरागा	२६७०
बितियं पुण खलियादिसु	११८
बितियं संचइयं खलु	४७७
बितियपदं आयरिए	३०३६
बितियपदे तेगिच्छं	२८११
बितियपदेऽदिट्ठगहण	३७२३
बितियपदे न गेण्हेज्ज	३५४४, ३५८१
बितियपदे वितिगिट्ठे	२६६६
बितियपदे सा थेरी	१५६३
बितियपयं असतीए	२५५८
बितियपयं आयरिए	६७३
बितियपयं तु गिलाणो	६०३
बितियमुवएस अवंकादियाण	३२
बितियम्मि बंभचेरे	१५३२
बितियविगिट्ठे सागारियाए	३०४२
बितियागाढे सागारियादि	३२२१, ३२३६
बितियस्स य कज्जस्सा	४४७५-४४८०, ४५००
बियभंगे पडिसेहो	१३६७
बिले य वसिउं नागा	३५३०
बीयं तु पोग्गला सुक्का	३७६६
बीयाणि च वावेज्ञा	३७६०
बुद्धीबलपरिहीणो	१३७८
बेंति ततो णं सड्ढा	२६८८
बेंतितरे अम्हं तू	१८८१
बेति गुरू अह तं तू	४४४६
बेति य लज्जाए अहं	१६२६
बोधियतेणेहि हिते	१२०३
बोहेति अपडिबुद्धे	१३७५

भ

भंडं पडिग्गहं खलु	३४७६
भंडणदोसा होंती	२६२७
भंडी बइल्लए काए	४२६३
भंभीय मासुरुक्खे	६५२
भग्गघरे कुड्डेसु य	३०६
भग्गसिव्वित संसित्ता	२४०६
भणति वसभाभिसेए	२८७४
भणिया न विसज्जेंती	२८२६
भण्णति अप्पाहारा	३६६०
भण्णति अविणीतस्स हु	१३६५
भण्णति जदि ते एवं	३१४२
भण्णति जेण जिणेहिं	३०४३
भण्णति णिंताण तहिं	३३३२
भण्णति तेहि कयाइं	१५४४
भण्णति पवत्तिणी वा	२८२४
भण्णति पुव्वुत्ताओ	२१७३
भण्णति ममयं तु तहिं	३१५२
भतिया कुडुंबिएणं	११४५
भत्तट्ठितो व खमओ	३८३५
भत्तट्ठिय आवासग	२६१४
भत्तादिफासुएणं	३३८१
भत्ते पाणे धोव्वण	२६७५
भत्ते पाणे सयणासणे	१११, ४६७७
भद्दो सव्वं वियरति	३३६७
भमो वा पित्तमुच्छा वा	२२७१
भयतो पदोस आहारहेतु	३८४४
भयतो सोमिलबडुओ	१०७६
भया आमोसगादीणं	२७७२
भरुयच्छे नहवाहण	१४१४
भवणुज्ञाणादीणं	३७४६
भवविगिट्ठे वि एमेव	२६७१
भवसंहणणं चेव	२७६६
भवसयसहस्सलद्धं	१६७३
भवेज्ज जदि वाघातो	४२८१
भागे भागे मासं	२२७८
भायणदेसा एंतो	३६३१
भारेण वेयणाए	२५७४
भावगणेणऽहिगारो	१३६८
भावपलिच्छायस्स उ	१४७७
भावितमभाविताणं	७६७
भावे अपसत्थ-पसत्थगं	६८३/१
भावेति पिंडवातित्तणेण	६०२

भावे न देति विस्सामं	३६६४
भावे पसत्थमपसत्थिया	१३६४
भावे पसत्थमियरं	६८२
भासओ सावगो वावि	२६५७
भिंदंतो यावि खुधं	१६५
भिक्खं गतेसु वा तेसु	३३१४
भिक्खणसीलो भिक्खू	१८६
भिक्ख-वियार विहारे	५७
भिक्ख-वियारसमत्थो	४२२५
भिक्खा ओसरणम्मि व	२८४१
भिक्खादिनिग्गएसुं	२३६
भिक्खुणि खुड्डी थेरी	७३१, ७३७
भिक्खुस्स मासियं खलु	२१६३
भिक्खुस्सेगस्स गतं	२१६६
भिक्खू इच्छा गणधारए	१३६१
भिक्खू कुमार विरए	१३७७
भिक्खू खुड्डग थेरे	७२७
भिक्खू खुड्डे थेरे	७३४
भिक्खूभावो सारण	२०८६
भिक्खू मयणच्छेवग	२३८२
भिन्ने व झामिए वा	३६१७
भीताइ करभयस्सा	३७२१
भीतो पलायमाणो	४०५६
भीतो बिभीसियाए	३१८३
भुंजण पियणुच्चारे	३५६५
भुंजति चक्की भोए	४१७७
भुंजमाणस्स उक्खित्तं	३८२८
भुंजह भुत्ता अम्हे	२६१८
भुंजिस्से समया सद्धिं	४६४८
भुत्तभोगी पुरा जो तु	४३१८
भुत्तसेसं तु जं भूयो	३८३०
भूतीकम्मे लहुओ	८८१
भूमीकम्मादीसु उ	१७५६
भोइकुल सेवि भाउग	२३५८

म

मइसंपय चउभेदा	४१०४
मंगलभत्ती अहिता	२५६५
मंडलगतम्मि सूरे	२६२०
मंडुगगतिसरिसो खलु	२६२१
मंतो हवेज्ज कोई	२४४३
मंदग्गी भुंजते खद्धं	२७७३
मग्गं सद्दव रीयति	१००४
मग्गण कहण परंपर	३६८६
मग्गे सेहविहारे	१००३
मग्गोवसंपयाए	३६६४
मज्जण-गंधं पुप्फोवयार	४४०६, ४४१०
मज्जण-गंध परियारणादी	१२६५
मज्झत्थोऽकंदप्पी	६५१
मज्झे दवं पिबंतो	३५०७
मणपरमोधिजिणाणं	५१४
मणपरमोहिपुलाए	४५२७
मणपरिणामो वीई	२७५८
मण-वयण-कायजोगेहिं	३८४६
मणसा उवेति विसए	१०२६
मणसा वि अणुग्घाया	८०६
मणसो एगग्गत्तं	१२४
मतिभेदा पुव्वोग्गह	२७१३
मतिभेद्वेण जमाली	२७१४
मत्तंगादी तरुवर	१५३४
मधुरा खमगातावण	२३३०
मधुरेण य सत्तन्ने	३८०६
मधुरोल्लेण थोवेण	३८०५
मम्मणो पुण भासंतो	४६३२
मरहट्ठलाडपुच्छा	१७००
मरिउं ससल्लमरणं	१०२२
मरिऊण अट्टझाणो	४२५६
मरुगसमाणो उ गुरू	४५७
मलिया य पीढमद्दा	२४६५
महकाएऽहोरत्तं	३१३६
महज्झयण भत्त खीरे	११३२
महती वियारभूमी	१७६७
महती विहारभूमी	३८६८
महसिल कंटे तहियं	४३६४
महल्लपुरगामे वा	३२६७
महल्लयाए गच्छस्स	२६०६

महव्वयाइं झाएज्ञा	१२०
महाजणो इमो अम्हं	२६६४
महिड्ढिए उट्ठनिवेसणा	१०६४
महिया तू गब्भमासे	३१११
महिया य भिन्नवासे	३११०
महिलाए समं छोढुं	२४६७
महुरा दंडाऽऽणत्ती	११२६
मा आवस्सयहाणी	२५७८
माउम्माय पिया भाया	३६६६
माऊय एक्कियाए	२६५०
मा कित्ते कंकडुकं	१६६५
मागहा इंगितेणं तु	४०२०
मा छिज्जउ कुलतंतू	२४७१
मा णं पेच्छंतु बहू	३३०६
माणणिज्ञो उ सव्वस्स	२७५५
माणसिओ पुण विणओ	७७
माणिता वा गुरूणं	१५८६
माणुस्सगं चउद्धा	३१४४
मा णे छिवसु भाणाई	३५३३
मा देज्ञसि तस्सेयं	३४२६
माता पिता य भाया	३६६४
माता भगिणी धूता	३०८२
मा देह ठाणमेतस्स	२६८४
मा मे कप्पेहि सालादि	३७५१
मायी कुणति अकज्ञं	१६४६
मारितममारितेहि य	७७३
मा वद एवं एक्कसि	३३७
मा वद सुत्त निरत्थं	१०२४
मा वा दच्छामि पुणो	३३७५
मासगुरू चउलहुया	१२६४
मास-चउमास छक्के	४४६६
मास-चउमासिएहिं	४४५
मास-चउमासियं वा	३३२२
मासतुसानातेणं	४६३६
मासस्स गोण्णणामं	१३४१
मासादि असंचइए	४७५
मासादी आवण्णे	४७४
मासादी पट्ठविते	५६७
मासो दोन्नि उ सुद्धो	५८८
मासो लहुओ गुरुगो	१६४, ८१८
मासो लहुगो गुरुगो	६२१
मिउबंधेहि तहा णं	१०६६
मिगसामाणो साधू	१०४१
मिच्छत्त अन्नपंथे	३५५२
मिच्छत्त बडुग चारण	१०१५
मिच्छत्त सोहि सागारियाइ	२७१२, २७७०, २६६४
मिच्छत्तादी दोसा	२६७५
मिणु गोणसंगुलेहिं	६५
मितगमणं चेट्ठणतो	२०८२
मीसाओ ओदइयं	२२०
मीसाण एग गीतो	२२०५
मीसो उभयगणावच्छेए	२२५४
मिहोकहा झड्डरविड्ढरेहिं	१५८६
मुंच दाहामहं मुल्लं	३२६४
मुंडं व धरेमाणे	१५७२
मुच्छातिरित्तपंचम	२४३
मुणिसुव्वयंतवासी	४४१७
मुह-नयण-दंत-पायादि	२६८३
मुहरागमादिएहि य	२४८६
मूइंगविच्छुगादिसु	१७७२
मूलं खलु दव्वपलिच्छदस्स	१४१६
मूलगुण उत्तरगुणा	४६५
मूलगुण उत्तरगुणे	४१, ६२८, ६११, १००७
मूलगुणदतिय-सगडे	४६६
मूलगुण पढमकाया	२४०
मूलगुणेसु चउत्थे	२३६२
मूलऽतिचारे चेतं	४६२
मूलव्वयातियारा	४६३
मूलादिवेदगो खलु	२०६
मूलायरिए वज्जित्तु	१४६६
मूलायरि राइणिओ	१३२४
मूलुत्तरपडिसेवण	२२१
मेच्छभयघोसणनिवे	३१०३
मेढीभूते बाहिं	२५८२
मेहुणवज्जं आरेण	२३६८
मोएउं असमत्था	२५६३

मोणेण जं च गहियं ६०१
मोत्तूण असंविग्गे १८०८, ३५७२
मोत्तूण इत्थ चरिमं २८३१
मोत्तूणं साधूणं ३३३८
मोत्तूण करणजड्डं ४६४१
मोत्तूण भिक्खवेलं ७०८
मोहुम्मायकराइं २४६८
मोहेण पित्ततो वा ११५३
मोहेण पुव्वभणितं २०२०
मोहेण व रोगेण व २०१६

र

रज्जुयमादिअछिन्नं २१६
रण्णा कोंकणगाऽमच्चा ४२६२
रण्णा जुवरण्णा वा ६२६
रण्णा पदंसितो एस २५५५
रण्णा वि दुवक्खरओ २६०१
रण्णो आधाकम्मे १३६
रण्णो कालगतम्मी ३३६०
रण्णो धूयातो खलु १८८८
रण्णो निवेदितम्मि ११०१
रत्ति दिसा थंडिल्ले ३२७२
रत्तीदिणाण मज्झेसु ३०२५
रत्तुक्कडया इत्थी ३१४५
रहिते नाम असंते ४५१०
राइणिया गीतत्था १३२५
राइणिया थेरोऽसति १८४४
रागद्दोसविवड्ढिं ४०४१
रागद्दोसाणुगता १११०
रागम्मि रायखुड्डो १०८०
रागा दोसा मोहा ३२३४
रागेण व दोसेण व १६६३, १६६४
रागेण वा भएण व १०७८
रायं इत्थिं तह अस्समादि ६५६
रायकुले ववहारो ३३२६
रायणिए गीतत्थे २१६६
रायणिय परिच्छन्ने २१८६
रायणियवायएणं १२३६
रायणियस्स उ एगं १८४५
रायणियस्स उ गणो २०७३
रायपहे न गणिज्जति ३१४०
राया इव तित्थगरो ३१०४
राया इव तित्थयरा ६६६
रायाणं तद्दिवसं १२६३
रायादुट्ठादीसु य २७२३
राया पुरोहितो वा ६३२
रायाऽमच्च पुरोहिय २६०२
राया रायाणो वा २०५०
रिक्खादी मासाणं १६६
रुण्णं तगराहारं ३६३०
रुवणाए जइ मासा ३७६
रूवंगिं दट्ठूणं ११४८
रूवं होति सलिंगं ४५७८
रूवजढमण्णलिंगे ४५७६
रेगो नत्थि दिवसतो २५८१
रोमंथयते कज्जं १६६६

ल

लंखियाँ वा जधा खिप्पं २७६४
लक्खणजुत्ता पडिमा २६३५
लक्खणजुत्तो जइ वि हु १५६८
लक्खणमतिप्पसत्तं ३६८०
लग्गादी च तुरंते २०३५
लज्जणिज्जो उ होहामि २७४६
लद्धद्दारे चेवं ३४३६
लद्धुं अविप्परिणते २०६८
लद्धे उवरता थेरा ३६७४
लभमाणे वा पढमाए ३२७३
लहुगा य झामियम्मि य ३३६२
लहुगा य दोसु दोसु य ८२६, १२६८
लहुगा य सपक्खम्मी ३०१५
लहुगा लहुगो सुद्धो ५६०
लहु-गुरु लहुगा गुरुगा १०३५
लहुगो लहुगा गुरुगा २८४३
लहुयल्हादी जणणं ३१७
लहुसो लहुसतरागो १०६६, १११८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लाभमदेण व मत्तो	११२५
लाभालाभऽद्धाणे	२५६६
लावए पवए जोधे	४३६६
लिंगकरणं निसेज्जा	६७१
लिंगम्मि उ चउभंगो	१६०४
लिंगेण उ साहम्मी	६६१
लुक्खत्ता मुहजंतं	४२४८
लेवाडहत्थ छिक्के	३६७९
लेस्सट्ठाणेसु एक्केक्के	२७६५
लेहट्ठट्ठमवरिसे	४६५२
लोइयधम्मनिमित्तं	१४०५
लोइय-लोउत्तरिओ	१०७७
लोउत्तरिए अज्ञा	३२५२
लोए चोरादीया	१७
लोए लोउत्तरे चेव	२७५४, ३६६८
लोए होति दुगुंछा	३६१३
लोगम्मि सतमवज्झं	१६३६
लोगे य उत्तरम्मी	१८६२
लोगे वि पच्चओ खलु	३०६४
लोगे वेदे समए	१४६६
लोगोवयारविणओ	८५

व

वइया अजोगि जोगी	२१३६
वइयादीए दोसे	१६५८
वंजणेण य नाणत्तं	१५७
वंतं निसेवितं होति	२४२१
वंदण पुच्छा कहणं	१८१२
वंदण सक्कारादी	३८५०
वंदणालोयणा चेव	४००५
वंदत वा उट्ठे वा	२३६४
वंदेणं तह चेव य	३४५७
वक्कइय छएयव्वे	३३४०
वक्कइय सालठाणे	३३१०
वक्खारे कारणम्मि	२७८२
वच्चंति तावि एंती	३०६१
वज्जकुड्डसमं चित्तं	३०८४
वट्टंतस्स अकप्पे	१५८
वट्टंति अपरितंता	४३३५
वड्ढति हायति उभयं	११०७
वड्ढी धन्नसुभरियं	२६१०
वणकिरियाए जा होति	७००
वणदव-सत्तसमागम	१३८०
वणिमरुगनिही य पुणो	४५४
वणिय मए रायसिट्ठे	३२५१
वत्तणा संधणा चेव	२८५
वत्तणुवत्तपवत्तो	४५२१
वत्तो णामं एक्कसि	४५२२
वत्थव्व णेंति न उ जे	२२३१
वत्थव्व भद्दगम्मी	२२३३
वत्थव्वा वारंवारएण	६७१
वत्थाणाऽऽभरणाणि य	१२०१
वत्थाहारादीभि य	१४२७
वत्थुं परवादी ऊ	४११५
वध-बंध-छेद-मारण	२५५७
वभिचारम्मि परिणते	२७७४
वमण-विरेयणमादी	५४४
वय अतिचारे पगते	१६३४
वयं वण्णं च नाऊणं	३५२८
वयछक्क-कायछक्कं	४०७४, ४४६०
वयणे तु अभिग्गहियस्स	१५०६
वयपरिणता य गीता	३२४४
वरनेवत्थं एगे	१२०७
वल्लिं वा रुक्खं वा	३७५५
वल्ली वा रुक्खो वा	३७४३
ववणं ति रोवणं ति य	४
ववसायी कायव्वे	२३८८
ववहारकोविदप्पा	४५५३
ववहारचउक्कस्सा	४५३१
ववहारनयस्साया	४६
ववहारम्मि चउक्कं	६
ववहारी खलु कत्ता	२
ववहारे उद्देसम्मि	३७२६
ववहारेण य अहयं	११८६
ववहारे दसमए उ	४६८६
ववहारो आलोयण	१०६४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ववहारो ववहारी	१
वसंति व जहिं रत्ति	३३५३
वसधि निवेसण साही	२२८६
वसधीय संकुडाए	१७७३
वसधी समणुण्णाऽसति	१६६३
वसभे जोहे य तहा	७५०
वसभे य उवज्झाए	२८२५
वसभो वा ठाविज्जति	४३७८
वसहीए निग्गमणं	८०५
वसहीय असज्झाए	६७५
वसिमे वि अविहिकरणं	४०१५
वहमाण अवहमाणो	७०७
वा अंतो गणि व गणी	२७०४
वाउलणे सा भणिता	१७३७
वा खलु मज्झिमथेरे	१५७६
वाघाते ततिओ सिं	३१६४
वाणियओ गुलं तत्थ	२८८४
वातादीया दोसा	२६०८
वातिय-पित्तिय-सिंभिय	३८३६
वाते अब्भंग-सिणेह	११५२
वाते पित्ते गणालोए	२५७३
वादी दंडियमादी	२५४७
वादे जेण समाधी	७५७
वायंतगनिप्फायग	२०११
वायंतस्स उ पणगं	१७८४
वायणभेदा चउरो	४०६८
वायपरायणकुवितो	१२२६
वायादी सट्ठाणं	६३
वाया पुग्गल लहुया	७५८
वायामवग्गणादिसु	२०५४
वायाम-वग्गणादी	४०२४
वारंवारेण से देति	२१८५
वारग जग्गणदोसा	१६८७
वारिज्जंती वि गया	२६५७
वालच्छ भल्ल विसविसूइ...	४३८२
वालेण गोणसादी	४३८३
वालेण वावि डक्कस्स	२७७५
वालेण विप्परद्धे	१०२१
वाले य साणमादी	२५६२
वावारियगिलाणादि	२५६०
वावे मिहमंबवणं	४०१६
वासं खंधार नदी	१६८१
वासं च निवडति जई	३१८६
वासग्गतं तु पोसति	७७१
वासत्ताणावरिता	३११३
वा सद्देण थिरं पी	२७००
वासाण दोण्ह लहुगा	१७४६
वासासु अपरिसाडी	३४११
वासासुं अमणुण्णा	१८१८
वासासु निग्गताणं	३८६१
वासासु पाभातिए	३१६७
वासासु समत्ताणं	१८३५
वासासू बहुपाणा	१३४०
वासी चंदणकप्पो	३८५१
वासे निच्चिक्खिल्लं	२५१६
वासे बहुजणजोग्गं	४११६
वाहत्थाणी साहू	६६४
वाहिविरुद्धं भुंजति	६६
विउसग्गो जाणणट्ठा	५४६
विंटलाणि पउंजंति	३०६६
विकहा चउव्विधा वुत्ता	२६५५
विक्खेवो सुत्तादिसु	३३६३
विगतीकए ण जोगं	२१४३, २१४४
विगतीकयाणुबंधे	४३३२
विगयधवा खलु विधवा	३३४४
विगलिंदऽणंत घट्टण	४५३८
विगहा विसोत्तियादीहिं	३०८०
विग्गहगते य सिद्धे	४३५७
विज्जाए मंतेण व	११५५
विज्जा कया चारिय लाघवेण	२२५८
विज्जाणं परिवाडी	२६६७
विज्जादभिजोगो पुण	११५७
विज्जादी सरभेदण	११६४
विज्जा निमित्त उत्तर	७६२
विज्जा मंते चुण्णे	११५६
विणओ उत्तरिओ त्ति य	२५५४
विणओवसंपयाए	४०००
विणिउत्तभंडभंडण	३३०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विण्णाणाभावम्मी ४१४४
विण्णाणावरियं तेसिं ४६१४
वितरे न तु वासासुं ४१२०
वितिगिट्ठं खलु पगतं ३०१४
वितिगिट्ठा समणाणं २६७६
विद्दवितं केणं ति य ११३१
विद्धंसामो अम्हे १२३३
विधवा वणुण्णविन्नति ३३४५
विपरिणामे तहच्चिय ३४४५
विपुलाए अपरिभोगे २५२७
विप्परिणतम्मि भावे २१००
विप्परिणयम्मि भावे २१६२
विप्परिणामणकधणा ३४२३
विब्भंगीव जिणा खलु ४४२
विभञ्जंती च ते पत्ता ३६४५
विभागओ अप्पसत्थे २३७
वियणऽभिधारण वाते २०४४
विवञ्जितो उड्डविवज्जएहिं २७६४
विसमा आरुवणाओ ४२७
विसयोदएण अधिगरणतो ६०८
विसस्स विसमेवेह ११५६
विसुज्झंतेण भावेण २७६७
विसेण लद्धो होज्जा ४३८४
विहरण वायण खमणे १६२०
वीतिक्कंते भिन्ने ३३०१
वीयार तेण आरक्खि ६३६
वीसं वीसं भंडी ४५५
वीसज्जिय नासिहिती २८५१
वीसऽट्ठारस लहु-गुरु ४८५
वीसमंता वि छायाए ३३५२
वीसमण असति काले ११२
वीसरसरं रुवंते ३२१४
वीसाए अद्धमासं ३५७
वीसाए तू वीसा ४११
वीसामण उवगरणे २२६७
वीसालसयं पणयालीसा ५३४
वीसुं दिण्णे पुच्छा ३३२
वीसुं पि वसंताणं २७३०
वीसुंभिताय सव्वासि २३०८
वीसु वसंते दप्पा २६६६
वुग्गह दंडियमादी ३१२५
वुड्ढस्स उ जो वासो २२५६
वुड्ढावासातीते २३००
वुड्ढावासे चेवं ३४७४
वुड्ढावासे जतणा २२७७
वुड्ढाऽसहु सेधादी २५३४
वुड्ढो खलु समधिकितो ३४७६
वुत्तं हि उत्तमट्ठे ११७२
वुत्तमधवा बहुत्तं २३०५
वुत्ता व पुरिसज्जाता ४५५४
वेउव्वियलद्धी वादी ३३७६
वेंटियगहनिक्खेवे १२६
वेगाविद्धा तुरंगादी ३५५७
वेज्ज सपक्खाणऽसती २४३७
वेज्जस्स ओसहस्स १७८०
वेज्जा तहिं नत्थि तहोसहाइं १८१६
वेणइए मिच्छत्तं ४८
वेयावच्चकराणं ७६७
वेयावच्चकरो वा ४५१७
वेयावच्चुज्जमणे ६६२
वेयावच्चेण मुणी ४५८६
वेयावच्चे तिविधे ५६०
वेरज्जे चरंतस्स ८६६/४
वेलं सुत्तत्थाणं २५५२
वेसकरणं पमाणं १२८३
वेहारुगाण मन्ने ३६००
वोच्छिन्न घरस्सऽसती १०६०
वोच्छिन्नम्मि य भावे ३४३५
वोच्छिन्ने उ उवरते २२५३

स

सइं जंपंति रायाणो ३३२६
सइ दोण्णि तिन्नि वावी २६०२
सइरी भवंति अणवेक्खणाय २७३६
सं एगीभावम्मी ४५०५
संकंतो य वहंतो २११६

संकग्गहणे इच्छा ३८६५
संकट्ट हरितछाया ३५६४
संकप्पादी तितयं ५०
संकप्पो संरंभो ४६
संकिए सहसक्कारे ६६
संकिट्ठा वसधीए २७२६
संखऽहिगारा तुल्ला २१६०
संखादीया कोडी २५७०
संखादीया ठाणा ४१६१
संगहमादीणट्ठाय ३२४०
संगहुवग्गह निज्जर १७८५
संगामदुगं महसिल ४३६३
संगामे निवपडिमं ८१२
संगारदिण्ण उ एस २८०८
संगारदिन्ना व उवेंति तत्थ ६४३
संगारमेधुणादी य ३०६६
संघट्टण परितावण ४०१२
संघयणं जध सगडं ४५१
संघयणं संठाणं ४५२४, ४५२८
संघयणधितीजुत्तो ४३६४
संघयणधितीहीणा ४२०२
संघयणे परियाए ३८३६
संघयणे वाउलणा १७३४, २३०६
संघस्साऽऽयरियस्स य ४४६५
संघाडग एगेण व ३४८७
संघाडगसंजोगे २६२०
संघाडगा उ जाव उ ५५१, ५५२
संघो गुणसंघातो १६७७
संघो न लभति कज्जं १२२७
संघो महाणुभागो १६६७
संजइइत्त भणंती १८८०
संजतभावितखेत्ते ३६७३
संजतसंजति वग्गे ३०७५
संजतिमादी गहणे १५५६
संजमघाउप्पाते ३१०२
संजमजीवितभेदे ११६४
संजमठाणाणं कंडगाण ४२३७
संजम-तव-नियमेसुं ६५६
संजममायरति सयं ४१३४
संजयहेउं छिन्नं ३७५६
संजयहेउं दूढा ३७६३
संजोगदिट्ठपाढी २४२७
संजोगा उ च सद्देण २२०२
संज्झंतियंतवासिणो २१८०
संझागतं रविगतं ३१०
संझागतम्मि कलहो ३११
संतगुणुक्कित्तणया २६८१
संतम्मि उ केवइओ १४०६
संतम्मि वि बलविरिए २४४
संतविभवेहि तुल्ला ४२०१
संतविभवो तु जाधे ४१६५
संतासंतसतीए २५११
संति हि आयरियबितिज्जगाणि १४३२
संथड मो अविलुत्तं ३३५५
संथरमाणाण विधी ७६६
संथरे दो वि न णिंति २२३६
संथव कहाहि आउट्टिऊण ३६४७
संथारएसु पगतेसु ३५०६
संथारग्गदाण फलादि ३४३०
संथारो उत्तिमट्ठे ४३४२
संथारो दिट्ठो न य ३४२५
संथारो देहंतं ३४२४
संथारो मउओ तस्स ४३४७
संदंतमसंदंतं २७८३
संदंतस्स वि किंचण २८०१
संदंते वक्खारो २७८४
संदेहियमारोग्गं १८२
संबंधिणि गीतत्था २३८६
संबंधो दरिसिज्जति २३६७
संबोहणट्ठयाए २८३७
संभमनदिरुद्धस्स वि २७१८
संभममहंतसत्थे २२४५
संभरण उवट्ठावण २०३२
संभुंजण संभोगे १५०८
संभुंजण संभोगेण १५१३
संभोइउं पडिक्कमाविया २८७८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संभोइग त्ति भणिते २३४६
संभोइयाण दोण्हं २१६२
संभोगऽभिसंबंधेण २८६६
संभोगम्मि पवत्ते २६२६
संभोगो पुव्वुत्तो २८७६
संवच्छरं च झरए २२६२
संवच्छरं तु पढमे १४४
संवच्छराणि चउरो ४२४१
संवच्छरेणावि न तेसि आसी १४७
संविग्गजणो जड्डो ८५८
संविग्गदुल्लभं खलु ४२७१
संविग्गपुराणोवहि ३५७६
संविग्गबहुलकाले ३६२८
संविग्गमणुण्णजुतो ७०३
संविग्गमसंविग्गा ३०६०
संविग्गमसंविग्गे १५७०, ३२८६, ३६५६, ३६६४
संविग्गमुद्दिसंते १८७२
संविग्गाण विधी एसो २१७४
संविग्गाण सगासे ३६५७
संविग्गाणुवसंता २८६६
संविग्गादणुसिट्ठो ३६५८
संविग्गादी ते च्चिय ३२६१
संविग्गा भीयपुरिसा ३०७६
संविग्गेगंतरिया १६६१
संविग्गे गीयत्थे ६६६
संविग्गे पियधम्मे ४५४६
संविग्गेहणुसिट्ठो ३६६०
संविग्गो मद्दवितो ६६०
संवेगसमावन्नो १२६०
सकुडुंबो निक्खंतो ११८०
सकुलिव्वय पव्वज्जा १३००
सक्कमहादीएसु व २१३६
सक्कमहादीया पुण ८७३
सक्कारिया य आया २८४०
सगणं परगणं वावि २६८३
सगणम्मि नत्थि पुच्छा ५३७
सगणिच्चपरगणिच्चेण २६६५
सगणे आणाहाणी ४२३३
सगणे गिलायमाणं १०७२
सगणे थेरा ण संति १४७५
सगणे व परगणे वा १५७१
सगणो य पदुट्ठो सो १२२६
सगनामं व परिचितं ४०८६
सगोत्तरायमादीसु ३२५०
सग्गाम सण्णि असती ३६२२
सचिवे पण्णरसादी १२६१
सच्चं भण गोदावरि ! ११२८
सच्चित्त-अच्चित्तमीसेण ३७३३
सचित्तभावविकलीकयम्मि ३७५८
सच्चित्तम्मि उ लद्धे ४००२
सच्चित्तादिसमूहो १३६६
सच्चित्तादी दव्वे २१४
सच्चित्तादुप्पन्ने २६
सच्चित्ते अंतरा लद्धे ३६६६
सच्चित्ते अच्चित्ते १५०
सच्छंद गेण्हमाणिं २८६६
सच्छंदपडिण्णवणा ३६२६
सच्छंदमणिद्दिट्ठे ३६३६
सच्छंदमतिविगप्पिय ८६२
सच्छंदो सो गच्छा ८१४
सजणवयं च पुरवरं ६३१
सज्झाओ खलु पगतो ३१००
सज्झायं काऊणं ६३१
सज्झायभूमि वोलंते २११७
सज्झायमचिंतेंता ३१७०
सज्झायमुक्कजोगा ३०७३
सज्झायस्स अकरणे १२६
सट्ठाण-परट्ठाणे ६८४
सट्ठाणाणुग केई ५८७
सड्ढकुलेसु य तेसिं २६८७
सड्ढो व पुराणो वा २६७४
सणसत्तरमादीणं ६५१
सण्णाइगिहे अन्नो ३४४७
सण्णाउ आगताणं २६२१
सण्णातिए वि तेच्चिय ३४४३
सण्णिस्सिंदियघाते ४६१७

सण्णी व सावगो वा	११६०
सत्त उ मासा उग्घातियाण	४६८
सत्तचउक्का उग्घातियाण	४८७, ४६५
सत्तण्हं हेट्ठेणं	३२५७
सत्तमए ववहारे	२८६५
सत्तरत्तं तवो होति	१४२०
सत्तलवा जदि आउं	२४३३
सत्तविधमोदणो खलु	२५०१
सत्तारस पण्णारस	४६६
सत्थऽग्गिं थंभेउं	१०८६
सत्थपरिण्णा छक्काय	१५२६
सत्थेणं सालंबं	२१०२
सदेससिस्सिणि सज्झंतिया	१६०३
सदेससिस्सिणीए	१६०७
सद्दा सुता बहुविहा	१०३
सन्नागतो त्ति सिट्ठे	२५४८
सन्निसेज्जागतं दिस्स	२०००
सन्निहिताण वडारो	३१६१
सपडिग्गहे परपडिग्गहे	१३५२
सपदपरूवण अणुसज्जणा	४१७४
सपया अंतो मूलं	१६२३
सपरक्कमे जो उ गमो	४३८०
सपरक्कमे य अपरक्कमे	४२२४
सबरपुलिंदादिभयं	३००४
समगं तु अणेगेसुं	२०५१
समगं भिक्खग्गहणं	१०२६
समगीतागीता वा	२२१३
समतीतम्मि तु कज्जे	७१७
समणस्स उत्तिमट्ठे	४४३८
समणाणं पडिरूवी	१२२३
समणाण संजतीण य	३६१६
समणाण संजतीण व	३७६२
समणुण्णदुगनिमित्तं	२४७
समणुण्णमणुण्णाणं	२८७६
समणुण्णेतराणं वा	३५४३
समणुण्णेसु विदेसं	२६०४
समणुण्णेसु वि वासो	१६८०
समणो तु वणे व भगंदले	३२२५
समपत्तकारणेणं	२२१४
समयं पि पत्थियाणं	३६१२
समयपत्ताण साधारणं	२२०६
समाधी अभत्तपाणे	३२६६
समा सीस पडिच्छण्णे	३०७८
समुदाणं चरिगाण य	३६६७
सम्मं आहितभावो	१४८७
सम्मत्तम्मि सुते तम्मि	२१०६
सयं चेव चिरं वासो	४२७७
सयकरणमकरणे वा	६३६
सयमेव अन्नपेसे	३५७३
सयमेव उ धम्मकधा	२४६४
सयमेव दिसाबंधं	१४७४, ४५८३
सयरीए पणपण्णा	४१४
सरक्खधूलिचेयण्णे	३५५६
सरभेद वण्णभेदं	११७८
सरमाणे उभए वी	२११४
सरमाणे पंच दिणा	२०५७
सरमाणो जो उ गमो	७६१
सरिसेसु असरिसेसु व	१०३३
सरीर-उवगरणम्मि य	४३७५
सरीरमुज्झियं जेण	४३७२
सरीरोवहितेणेहि	४६८०
सलक्खणमिदं सुत्तं	३०१६
सलिंगेण सलिंगे	१६०५
सल्लुद्धरणविसोही	२७७६
सविकारातो दट्ठुं	१६०७
सव्वं करिस्सामु ससत्तिजुत्तं	२१०७
सव्वं पि य पच्छित्तं	४१७३
सव्वं भोच्चा कोई	४३३१
सव्वजगुज्जोतकरं	३०४८
सव्वट्ठसिद्धिनामे	२४३४
सव्वण्णूहि परूविय	४२१८
सव्वत्थ वि सट्ठाणं	५६४
सव्वत्थऽविसमत्तेण	१५४६
सव्वत्थ वि समासणे	५६६
सव्वम्मि बारसविहे	४१३७
सव्वसुहप्पभवाओ	४३५६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सव्वस्स पुच्छणिज्ञा २६४६
सव्वाओ अज्ञाओ ४३५५
सव्वाओ पडिमाओ ३७६०
सव्वाहि वि लद्धीहिं ४३५३
सव्वे उद्दिसियव्वा १८३८
सव्वे वप्पाहारा १७६२
सव्वे वा गीयत्था १०३४
सव्वे वि दिट्ठरूवे ३४५८
सव्वे वि य पच्छित्ता ४३४
सव्वे वि होंति सुद्धा ४७
सव्वे सव्वद्धाए ४३५२
सव्वेसिं अविसिट्ठा १६६, ६०८
सव्वेसिं ठवणाणं ४१०, ४१८
सव्वेसिं पि नयाणं ४६६२
सव्वेसु खलियादिसु ११७
सव्वे सुतत्था य बहुस्सुता य *१८३६
सव्वेहि आगतेहिं ३४६१
ससणिद्धबीयघट्टे ५२६
ससणिद्धमादि अहियं ५२७
स साहियपतिण्णो उ ३८१०
सस्सगिहादीण डहे १०६३
सहजं सिंगियमादी ३०२६
सहसक्कार अतिक्कम १०६
सहसा अण्णाणेण व ४०५६
सहायगो तस्स उ नत्थि कोई ३६८२
सहिते वा अंतो बहि १६६६
सा एय गुणोवेत्ता २३१४
साकुलगा कुलथेरे १८४६
सागविहाणा य तधा २५०२
सागारकडे एक्को ३३०७
सागारमसागारे २६६६
सागारिए गिहा निग्गते २८८०
सागारि-तेणा-हिम-वासदोसा १६७२
सागारियअग्गहणे ३७७६
सागारियअचियत्ते १०६१
सागारिय अहिगारे ३३४३
सागारियपिंडे को दोसो ८६८/१
सागारियम्मि पगते ३७३७
सागारिय-साधम्मिय ३३५४
सागारियस्स तहियं ३७४६
सागारियस्स दोसा ३७०८, ३७१६
सागारियादि पलियंक ८६७
साडगबद्धा गोणी २१८६
सा तत्थ निम्मवे एक्कं ३०५६
सातिसयं इतरं वा ४५८२
सा दाउं आढत्ता २३१६
साधम्मि पडिच्छन्ने २१७६
साधम्मिय उद्देसो ३५६४
साधम्मिय वइधम्मिय २३५६
साधारणं तु पढमे १३१२
साधारणं व काउं १८४७
साधारणट्ठिताणं १८२३, १८३७, १८५५
साधारणमेगपयत्ति ३७२४
साधारणो अभिहितो १८४६, १८६१
साधूणं अणुभासति १५१०
साधूणं वा न कप्पंति ३७५२
साधू तु लिंग पवयण ६६२
साधू विसीयमाणे १५५५
सा पुण अइक्कम वइक्कमे ४२
सा पुण जहन्न उक्कोस ६०३
साभावियं च मोयं ३७६४
साभाविय तिण्णि दिणा ३११६
सामाइयसंजताणं ४१८६
सामत्थण निज्ञविते ३८६४
सामायारिपरूवण ८४
सामायारी वितहं ८८७
सामायारी सीदंत ७०
सारिक्खकड्ढणीए ३४८६
सारिक्खतेण जंपसि ११६३
सारीरं पि य दुविधं ३१३१
सा रूविणि त्ति काउं ११७६
सारूवियादि जतणा ३६२४
सारूवी जज्ञीवं १८६७
सारेऊण य कवयं ४२३०
सारेयव्वो नियमा २८८
सारेहिति सीदंतं ३६५४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सालंबो विगति जो उ	२१४५
सावेक्खे निरवेक्खे	२६६६
सावेक्खो उ उदिण्णो	१५६७
सावेक्खो उ गिलाणो	७४६
सावेक्खो त्ति च काउं	१६७, ६१०
सावेक्खो पवयणम्मि	४२०४
सावेक्खो पुण पुव्वं	१६१०
सावेक्खो पुण राया	२६१७
सावेक्खो सीसगणं	१६३५
सासु-ससुरोवमा खलु	३८४८
सासू-ससुरुक्कोसा	३८४७
साहत्थ मुंडियं गच्छवासिणी	२८२६
साहम्मिएहि कहितेहि	६६०
साहम्मियत्तणं वा	२१७८
साहम्मियाण अट्ठो	३७७१
साहस्सी मल्ला खलु	१५३६
साहारण-सामन्नं	३७२७
साहारणा उ साला	३७२८
साहिल्ल वयण वायण	१५०७
साहीण भोगचाई	१२६७
साहीणम्मि वि थेरे	२३१०
साहीरमाणगहियं	३८२६
साहुसगासे वसिउं	१६६६
साहूणं अन्नाण य	१५५७
साहूणं रुद्धाइं	४३८६
सिग्घुज्जुगती आसो	२३२
सिणेहो पेलवी होति	४२३५
सिद्धी पासायवडेंसगस्स	३६६६
सिद्धी वि कावि एवं	२८५०
सिरकोट्टण-कलुणाणि य	२४८७
सिलायलं पसत्थं तु	३२७४
सिव्वण तुण्णण सज्झाय	२०५५
सीउण्हसहा भिक्खू	२५४०
सीतघरं पिव दाहं	४१५२
सीतवाताभितावेहि	३३१७
सीताणस्स वि असती	३२७६
सीताणे जं दड्ढं	३१४७
सीस-पडिच्छे पाहुड	२६३
सीस-पडिच्छे होउं	१४६७
सीसा य परिच्चत्ता	२६०७
सीसेण कुतित्थीण व	४१०६
सीसे कुलव्विए व	१६८६
सीसेणाभिहिते एवं	२४१२
सीसे य पहुव्वंतं	१३२६
सीसो पडिच्छओ वा	१६८२-१६८५
सीसो सीसो सीसो	१४६८
सीहाणुगस्स गुरुणो	५८७/१
सीहो तिविट्ठ निहतो	२६३८
सीहो रक्खति तिणिसे	२७७८
सुचिरं पि सारिया गच्छिहिती	२६६२
सुण जध निज्जवगत्थी	४२२०
सुण्णं मोत्तुं वसहिं	१७५०
सुण्णघरदेउलुज्जाण	२३७०
सुण्णाइ गेहाइ उवेंति तेणा	६४१
सुण्णाए वसधीए	८६७/५
सुण्णे सगारि दट्ठुं	१७५६
सुतजम्म महुरपाडण	११२७
सुततो अणेगपक्खिं	१३०८
सुतनाणम्मि अभत्ती	३२२६
सुतवं अतिसयजुत्तो	२६३६
सुतवं तम्मि परिवारवं	२५४३
सुत-सुह-दुक्खे खेत्ते	४००६
सुत्तं अत्थं च तहा	४१४०
सुत्तं अत्थे उभयं	४०६४
सुत्तं गाहेति उज्जुत्तो	४१४१
सुत्तं च अत्थं च दुवे वि काउं	३४०८
सुत्तं धम्मकहनिमित्तमादि	२८३५
सुत्तत्थ अणुववेतो	१३७६
सुत्तत्थं अकहित्ता	२०४०
सुत्तत्थं जदि गिण्हति	२१८७
सुत्तत्थझरियसारा	७८८
सुत्तत्थतदुभएहिं	६५४, २२६५
सुत्तत्थतदुभयविऊ	६५६
सुत्तत्थपाडिपुच्छं	७१८
सुत्तत्थपोरिसीणं	१३०
सुत्तत्थहेउकारण	१४६५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुत्तत्थाणं गुणणं	२६००
सुत्तत्थे परिहाणी	२५५०
सुत्तत्थेसु थिरत्तं	६५७
सुत्तनिवातो तणेसु	३३६५
सुत्तनिवातो थेरे	२७४१
सुत्तमणागयविसयं	३८८५
सुत्तमिणं कारणियं	६२०
सुत्तम्मि अणुण्णातं	२४३६
सुत्तम्मि कड्ढियम्मी	२३६६
सुत्तम्मि कप्पति त्ति य	३७१०
सुत्तम्मि य चउलहुगा	२३३८
सुत्तस्स मंडलीए	२६४४
सुत्तागम बारसमा	२२५६
सुत्तावासगमादी	२६३१
सुत्ते अगिंत लहुगा	२३३३
सुत्ते अत्थे उभए	२६३६
सुत्ते अत्थे जीते	७
सुत्ते जहुत्तरं खलु	१८२५
सुत्तेण अत्थेण य उत्तमो उ	१४०३
सुत्तेण ववहरंते	४५३०
सुत्तेणेव उ सुत्तं	२७८०
सुत्तेणेवुद्धारो	१७६६
सुद्धं एसित्तु ठावेंति	४३७३
सुद्धं गवेसमाणो	३६४०
सुद्धं तु अलेवकडं	३८२०
सुद्धं पडिच्छिऊणं	२६५
सुद्धग्गहणेणं पुण	३८२२
सुद्धतवो अज्झाणं	५४५
सुद्धदसमी ठिताणं	३४४४
सुद्धऽपडिच्छण लहुगा	२८७
सुद्धमसुद्धं एवं	३५८७
सुद्धस्स य पारिच्छा	१४२२
सुद्धालंभि अगीते	१७६, ६१७
सुद्धे संसट्ठे या	३८१६
सुनिउणनिज्झामगविरहियस्स	७५३
सुन्नघरे पच्छन्ने	३०८६
सुबहूहिं वि मासेहिं	४५६, ४६०
सुह-दुक्खितेण जदि उ	३६८६
सुह-दुक्खितो समत्ते	२२३४
सुह-दुक्खिया गविट्ठा	२०६६
सुह-दुक्खे उवसंपद	३६६३
सुहसीलऽणुकंपातड्डिते	२१६६
सुहसीलताय पेसेति	२१६७
सुहुमा य कारणा खलु	१२७६
सूयगडंगे एवं	२८६६
सूयग तहाणुसूयग	६३८, ६४०, ६४२, ६४४, ६४६
सूयपारायणं पढमं	१७०६
सूयिग तहाणुसूयिग	६३६, ६४१, ६४३, ६४५, ६४७
सूरे वीरे सत्तिय	१४३४
सूरो जहण्ण बारस	३१२२
सेज्जं सोहे उवधिं	१६७५
सेज्ञातर सेज्ञादिसु	३२१६
सेज्ञा न संती अहवेसणिज्ञा	१८१५
सेज्ञायर कुल निस्सित	८५६
सेज्ञायर पिंडे या	१३८
सेज्ञासंथारदुगं	३५१६
सेज्ञासणातिरित्ते	२६८०
सेज्जुवधि-भत्तसुद्धे	१६७१
सेट्ठिस्स तस्स धूता	१६०२
सेट्ठिस्स दोन्नि महिला	११४३
सेणावती मतो ऊ	२४५६
सेणाहिवई भोइय	३१२६
सेतवपू मे कागो	६४
सेलिय काणिट्टघरे	२२८३
सेवउ मा व वयाणं	६१२
सेवगपुरिसे ओमे	११७४
सेवति ठितो विदिण्णे	४५६१
सेसं सकोसजोयण	२२२३
सेसम्मि वरिसत्तसा	८३१
सेसाइं तह चेव य	३४५२
सेसा उ जधासत्ती	३१६०
सेसाण उ वल्लीणं	३६६५
सेसाणि जधादिट्ठे	३४३७
सेसाणि य दाराणी	३४४८
सेसा तू भण्णंती	२२०१
सेहतरगे वि पुव्वं	२१६७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सेहस्स तिन्नि भूमी ४६०४
सेहस्स तिभूमीओ ४६०३
सेहादी कज्जेसु व १३८४
सेहि त्ति नियं ठाणं २८७७
सेहो त्ति मं भाससि निच्चमेव १२४७
सो अभिमुहेति लुद्धो १७१६
सो आगतो उ संतो १६५६
सोइंदियआवरणे ४६११
सोउं पडिच्छिऊणं २६०४
सोउं परबलमायं २६१६
सोउ गिहिलिंगकरणं १२३२
सो उ विविंचिय दिट्ठो ४२५६
सोऊण अट्ठजातं ११८८
सोऊण काइ धम्मं २८२०
सोऊण गतं खिंसति २५६७
सोऊण तस्स पडिसेवणं ४४८७
सोऊण पाडिहेरं २५६४
सोऊण य उवसंतो २६०३
सो कालगते तम्मि उ १४७३
सो गामो उट्ठितो होज्जा ३००२
सो चेव य होइ तरो ३३३३
सोच्चाऽऽउट्टी अणापुच्छा ३६३२
सोच्चागत त्ति लहुगा १७५७
सो जध कालादीणं ४५३७
सो तत्थ गतोऽधिज्जति २०७१
सो तम्मि चेव दव्वे ४५१६, ४५१७
सोतव्वे उ विही इणमो २६४६
सोतिंदियाइयाणं १४६३
सो तु गणी अगणी वा २३४७
सो तु पसंगऽणवत्था २१५५
सोधीकरणा दिट्ठा ६७६
सो निम्माविय ठवितो १३२६
सो पुण उडुम्मि घेप्पति ३३८८
सो पुण उवसंपज्जे २८४
सो पुण गच्छेण समं ३४८५
सो पुण गणस्स अट्ठो ४५७१
सो पुण चउव्विहो दव्व ४०१०
सो पुण जई वहमाणो ४८३
सो पुण पंचविगप्पो ३८८३
सो पुण पच्चुट्ठितो ३६७२
सो पुण पडिच्छओ वा ३६६१
सो पुण लिंगेण समं १२५०
सो पुण होती दुविधो १०१०
सोभणसिक्खसुसिक्खा १६३०
सो भावतो पडिबद्धो २४८८
सो य रुट्ठो व उट्ठेत्ता ३५३५
सो ववहारविहिण्णू ४४८६
सो वि अपरक्कमगती ४४४१
सो वि गुरूहिं भणितो ४४५२
सो वि य जदि न वि इतरे २२०६
सो वि हु ववहरियव्वो २५
सो सत्तरसो पुढवादियाण ४१३५
सोहीए य अभावे ४१७१

ह

हंदी परीसहचमू ४३६२
हट्ठेणं न गविट्ठा २०६७
हत्थसयमणाहम्मी ३१२६
हत्थेण व मत्तेण व ३८११
हत्थे पादे कण्णे १४५०
हरति त्ती संकाए २६३२
हरिताले हिंगुलुए १२८
हरितोलित्ता कता सेज्जा २८८५
हरियाहडिया सा खलु ३७६७
हा दुट्ठु कतं हा दुट्ठु ५१५
हास पदोस वीमंसा ३८४३
हिंडंतो उव्वातो २५७६
हित-मित-अफरुसभासी ६८
हित्थो व ण हित्थो मे १००
हीणाधियविवरीए २६८
हीणाहियप्पमाणं ३५४६
हेट्ठाकतं वक्कइएण भंडं ३३३६
हेट्ठाणंतरसुत्ते ४५७७
हेट्ठा दोण्ह विहारो १७६४
होज्ज गिलाणो निण्हव ४६८२
होंति समे समगहणं ४२६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निर्युक्ति-गाथानुक्रम

गाथा	पृष्ठांक	गाथांक
अ		
अंतो परिठावंते	३३४	४५६
अंतो वा बाहिं वा	२५६	३६५
अकतकरणा वि दुविहा	१५	३४
अकिरिय जीए पिट्टण	६८	१३४
अक्कंदठाण ससुरे	२३४	३६७
अक्खेत्त जस्सुवट्ठति	१७७	२६८
अगलंत न वक्खारो	२६३	४०२
अग्गिहिभूतो कीरति	११६	२००
अच्चाबाध अचायंते	१४३	२३३
अच्छिन्नुवसंपयाए	३७४	५०५
अज्झुसिरमविद्धमफुडिय	३२२	४४५
अट्ठ त्ति भाणिऊणं	३४७	४७४
अट्ठहि अट्ठारसहिं	३६४	५३१
अणधिगतपुण्णपावं	१६६	३२८
अणवट्ठो पारंची	१०६	१८४
अणाधोऽधावण सच्छंद	१५४	२६३
अणुघातियमासाणं	३६	८५
अणुसट्ठीय सुभद्दा	५५	११२
अणुसासकहण ठवितं	११७	१६८
अण्णत्थ तत्थ विपरिणते	२००	३३१
अण्णपडिच्छण लहुगा	२६	६४
अण्णाउंछं एगोवणीय	३६४	४८६
अण्णाउंछं दुविहं	३६४	४८८
अण्णोण्णनिस्सिताणं	२११	३४३
अतिबहुयं पच्छित्तं	६५	१३१
अत्थो उ महिड्ढीओ	२५०	३८५
अद्धाण कक्खडाऽसति	२४८	३८०
अद्धाणनिग्गयादी	२६५	४०३
अद्धाणनिग्गतादी	३३८	४६४
अद्धाण बालवुड्ढे	३४३	४७१
अद्धाणादिसुवेहं	२४६	३८१
अद्धाणे अट्ठाहिय	३३३	४५५
अद्धाणे गेलण्णे	३४०	४६७
अधवा अट्ठारसगं	३७६	५१८
अधवा इमे अणरिहा	१४३	२३४
अधवा गहणे निसिरण	१४६	२४१
अधिकरण विगतिजोगे	२४	५६
अन्नतरं तु अकिच्चं	६०	१५७
अपरक्कमो मि जातो	४२३	५५४
अप्पत्ते अकहित्ता	१६६	३२७
अप्पत्ते कालगते	३७६	५०७
अप्पबितियप्पततिया	१७४	२८३
अप्परिहारी गच्छति	६६	१३५
अप्पामूलगुणेसुं	२३	५४
अफरुस-अणवल अचवल	१४५	२३६
अबहुस्सुते य ओमे	१६०	२६७
अब्भासवत्ति छंदाणुवत्तिया	७	१६
अब्भुट्ठाणे आसण	१४५	२३८
अभिधारे उववण्णो	३७६	५०८
अभिसेज्ज अभिनिसीहिय	६७	१३२
अवंकि अकुडिले याबि	२	६
अव्वत्तो अविहाडो	३७८	५१२
असज्झाइय पाहुणए	६४	१२८
असती पडिलोमं तू	२४६	३८२
असतीय लिंगकरणं	६५	१६२
असमाहीठाणा खलु	३६	८२
असिहो ससिहगिहत्थो	१८०	३०१
अहगं च सावराधी	२२	४६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गाथा	पृष्ठांक	गाथांक
अह पुण कंदप्पादीहि	३२०	४४०
अहवा सावेक्खितरे	१५	३५
आ		
आएस-दास-भइए	३४६	४७५
आकंपयित्ता अणुमाणयित्ता	५१	१०६
आकिण्णो सो गच्छो	२००	३३०
आगमगमकालगते	३४२	४७०
आगमतो ववहारं	३८३	५२७
आगमतो ववहारो	३८१	५२२
आगमसुतववहारी	३१	६६
आगाढो वि जहन्नो	२०३	३३५
आगारेहि सरेहि य	३१	७३
आणादिणो य दोसा	१२८, २५६, २६३, ३०६	२११, ३६६, ४०१, ४२६
आणादी पंचपदे	३१३	४३४
आततर-परतरे या	४७	६३
आततरमादियाणं	४८	६४
आदिसुतस्स विरोधो	२२६	३६१
आदेस-दास-भइए	३१६	४३५
आधाकम्मुद्देसिय	१४८	२५२
आभवंते य पच्छित्ते	३६७	४६४
आयप्परपडिकम्मं	४१८	५४८
आयरिए कह सोधी	५७	११६
आयरिए कालगते	१५४	२६२
आयारकुसल एसो	१४५	२४०
आयारकुसल संजम	१४५	२३७
आयारपकप्पे ऊ	१४६	२५७
आयारवं आधारवं	५१	१०३
आरियसंकमणे परिहरेंति	८८	१५४
आरोवणनिप्फण्णं	१३	२६
आरोवणा परूवण	२५१	३८८
आलावण पडिपुच्छण	५४	११०
आलोइयम्मि गुरुणा	१५६	२६४
आलोएंतो एत्तो	५१	१०४
आलोयण त्ति य पुणो	५७	११८
आलोयण पडिकमणे	५, ३६६	१६, ५३७
आलोयणागुणेहिं	३६४	५३२
आलोयणारिहालोयओ	५१	१०१
आलोयणारिहो खलु	५१	१०२
आलोयणाविधाणं	५१	१०७
आलोयणा सपक्खे	२२५	३५६
आवलिया मंडलिया	१७६	२६०
आवस्सग-पडिलेहण	२६	५६
आवस्सग सज्झाए	८७	१५०
आसासो वीसासो	१६३	२६८
आसुक्कारोवरते	१८३	३०८
आहारादीणट्ठा	६६	१७१
आहारे जतणा वुत्ता	२१७	३४६
इ		
इंदियकसायनिग्गह	१४६	२४२
इच्चेयं पंचविधं	३७६	५१५
इच्चेसो पंचविहो	३७६	५१६
इति दव्व-खेत्त-काले	१२४	२०७
इति संजमम्मि एसा	२३३	३६६
इय पंचकपरिहीणे	६५	१५६
उ		
उक्कोसारुवणाणं	३७	८१
उग्घातमणुग्घाते	३४	७८
उडुबद्ध दुविह गहणा	३२०	४४२
उडुबद्धसमत्ताणं	१७४	२८२
उण्होदगे य थोवे	३५८	४८३
उद्धारणा विधारण	४२९	५५७
उप्पण्णे उप्पण्णे	२०५	३३८
उप्पण्णे गेलण्णे	२३०	३६३
उप्पियण भीतसंदिसण	१९२	३२३
उस्सुत्तं ववहरंतो	१६४	२७०
उस्सुत्तमायरंतो	८४	१४७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गाथा	पृष्ठांक	गाथांक
ऊ		
ऊणइए चरित्तं	४४३	५६६
ऊणातिरित्तधरणे	३३६	४६५
ए		
एक्केक्कं पि य तिविहं	६७	१६७
एक्केक्के आणादी	२०३	३३६
एक्को व दो व उवधिं	३११	४३२
एगतरलिंगविजढे	८६	१५५
एगुत्तरिया घडछक्कएण	४६	६७
एगे अपरिणए वा	२५	५७
एगे उ पुव्वभणिते	३४४	४७२
एगो एगो चेव तु	३०८	४२५
एतद्दोसविमुक्कं	२५	५८
एतस्सेग दुगादी	१३०	२१२
एते अण्णे य बहू	३३४	४५६
एते उ सपक्खम्मी	२८५	४१६
एते गुणा भवंती	१५२	२६०
एते दोसविमुक्का	१४२	२३२
एते य उदाहरणा	१३६	२२४
एतेसामण्णतरे	३०५, ३०६	४२०, ४२३
एतेसिं ठाणाणं	३८४	५३०
एतेसु तिठाणेसुं	१३	२५
एतेसु धीरपुरिसा	४३०	५५६
एतेहि कारणेहिं	१६६, ३६८, ४१७	२७६, ५००, ५४६
एत्तो तिविधकुसीलं	८६	१४८
एमादी सीदंते	१८८	३१४
एमेव आणुपुव्वी	४१७	५४४
एमेव बहूणं पी	२११	३४४
एमेव बितियसुत्ते	१०४	१८०
एमेव मंडलीय वि	१७७	२६५
एमेव महल्ली वी	३५६	४८४
एमेव य पारोक्खी	३६६	५३६
एमेव य वासासुं	१६१	३२२
एमेव य साधूणं	२२२	३५४
एवं गंतूण तहिं	४२६	५५६
एवं जुत्तपरिच्छा	१४१	२३०
एवं ता जीवंते	३७५	५०६
एवं तु विदेसत्थे	२७५	४१०
एवं तू परिहारी	६२	१२३
एवं पि भवे दोसा	२५८	३६४
एवं भणिते भणती	३६४	५३३
एव तुलेऊणप्पं	२७७	४१३
एस तवं पडिवज्जति	५४	१०६
एस सत्तण्ह मज्झाया	३१०	४३०
ओ		
ओलोयणं गवेसण	११६	२०१
ओह अभिग्गह दाणग्गहणे	२२४	३५५
ओहेणेगदिवसिया	२२	५२
क		
कंदप्पा परलिंगे	८८	१५३
कडजोगिणा तु गहियं	१०	२२
कतकरणा इतरे वा	१५	३३
कप्पपकप्पी तु सुते	३१	७१
कप्पसमत्ते विहरति	१८८	३१५
करणिज्जेसु उ जोगेसु	६	१७
काउस्सग्गे वक्खेवया	२५१	३८७
कामं विसमा वत्थू	३२	७५
काय-वइ-मणोजोगो	४४३	५७०
कारणमेगमडंबे	२७७	४१२
काले जा पंचाहं	३२८	४५१
काले दिया व रातो	३५८	४८१
किं नियमेति निज्जर	१३५	२२०
किं होज्ज परिट्ठवितं	३३४	४५७
केई पुव्वं पच्छा	३६८	५०१
केरिसओ ववहारी	१६५	२७३
केवतिकालं उग्गह	२१५	३४६
केवल-मणपज्जवनाणिणो	३६, ४३२	८४, ५६३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गाथा	पृष्ठांक	गाथांक
को भंते ! परियाओ	५२	१०८
ख		
खंते दंते अमायी य	५१	१०५
खुड्डग विगिट्ठ गामे	२७५	४११
खेत्तनिमित्तं सुहदुक्खतो	१७४	२८४
खेत्तस्स उ संकमणे	३२०	४३८
खेत्ताणं च अलंभे	२१६	३४८
खेत्ते सुत-सुह-दुक्खे	३६७	४६५
खेत्ते सुह-दुक्खी तू	३७६	५०६
ग		
गंतव्व गणावच्छो	६४	१२६
गंतव्व पलोएउं	३३६	४६३
गंतूण पुच्छिऊणं	१०५	१८३
गंभीरा मद्दविता	२२७	३५८
गच्छगयनिग्गते वा	३६५	४६०
गच्छम्मि केइ पुरिसा	१२३	२०६
गणनिसरणे परगणे	४०१	५४१
गमणागमण-वियारे	१०	२३
गीतत्थउज्जुयाणं	१३५	२१८
गीतत्थो तु विहारो	६६	१७२
गुत्तीसु य समितीसु य	६	१८
गुरुहिंडणम्मि गुरुगा	२४४	३७७
गोणे साणे छगले	१७०	२७८
गोभत्तालंदो विव	८७	१५२
गोरस-गुल-तेल्ल-घतादि	३५२	४७८
घ		
घतकुडगो उ जिणस्सा	४३	८६
घरसउणि सीह पव्वइय	७५	१३८
घोसणय सोच्च सण्णिस्स	३७२	५०३
च		
चइयाण य सामत्थं	२५६	३६२
चउधा वा पडिरूवो	८	२०
चतुग्गुणोववेयं तु	३६८	४६७
चरिया पुच्छण-पेसण	१२२	२०३
चिक्खल्ल पाण थंडिल	१७१, ३६८	२८०, ४६६
चित्तमचित्तं एक्केक्कगस्स	९७	१६५
चित्तलए सविकारा	२८६	४१६
चेइय साधू वसही	१७५	२८७
चेयणमचित्तदव्वे	३१	६८
चोदग ! अप्पभु असती	१३७	२२५
चोदग पुरिसा दुविधा	४४	६०
चोदग बहुउप्पत्ती	६२	१२२
चोदग मा गद्दभ त्ति	३२	७४
चोदेती वोच्छिन्ने	४३१	५६२
छ		
छक्काय चउसु लहुगा	१३	२६
छक्कायाण विराधण	१०८	१८८
छाघातो अणुलोमे	२३४	३६८
ज		
जइ विऽसि तेहुववेओ	७७	१४०
जंघाबले च खीणे	२१६	३४७
जं जीतं सावज्जं	४३३	५६७
जणवयऽद्धाणरोधए	३७६	५१६
जवमज्झ-वइरमज्झा	३६२	४८५
जह केवली वि जाणति	३८२	५२६
जह कोई मग्गण्णू	३७८	५११
जहण्णेण तिण्णि दिवसा	२०३	३३४
जत्थ पविट्ठो जदि तेसु	१८७	३१२
जदि जीविहिति भज्जाइं	१२३	२०५
जम्हा उ होति सोधी	१७७	२६४
जम्हा एते दोसा	१०१, २४१, २८६	१७७, ३७३, ४१७
जिणकप्पितो गीतत्थो	६६	१७३
जिणचोद्दसजातीए	४३	८८
जिणनिल्लेवणकुडए	४६	६६
जीवाजीवा बंधं	१४७	२४६

गाथा	पृष्ठांक	गाथांक
जुवरायम्मि उ ठविते	१८३	३०४
जेण य ववहरति मुणी	३६७	४६३
जेण वि पडिच्छिओ सो	१८६	३११
जे त्ति व से त्ति व केत्ति व	१८	३८
जे बेंति न घेत्तव्वो	३४१	४६८
जे भिक्खु बहुसो मासियाणि	३४	७७
जे सुत्ते अतिसेसा	२५६	३६१
जो अवितहववहारी	१५	३१
जो आगमे य सुत्ते	४३२	५६६
जो धारितो सुतत्थो	४३०	५६०
जो सो चउत्थभंगो	१३६	२२८
ठ		
ठवणा-संचय रासी	३४	७६
ठाणं निसीहिय त्ति य	६२	१२४
ठाण निसीय तुयट्टण	४१८	५४६
ठाण-वसधी पसत्थे	४०१	५४२
ण		
णातमणाते आलोयणा	२७४	४०६
णेगाण तु णाणत्तं	३२३	४४६
त		
तं चेवऽणुमज्जंते	४२२	५५२
तं चेव पुव्वभणितं	३०८	४२४
तं तु अहिज्जंताणं	२४६	३८३
तं पुण अणुगंतव्वं	४०१	५४०
तं पुण ओह विभागे	२२	५१
तगराए नगरीए	१६४	२७१
तण्हुण्हादि अभावित	२४०	३७२
तत्थादिमाइ चउरो	३४६	४७६
तद्दव्वस्स दुगुंछण	११२	१६४
तम्हा खलु घेत्तव्वो	३२३	४४८
तवऽतीतमसद्दहिए	४६	६५
तव-नियम-संजमाणं	१८५	३१०
तवेण सत्तेण सुत्तेण	७६	१३६

गाथा	पृष्ठांक	गाथांक
तस्सऽसति सिद्धपुत्ते	६५	१६१
तह वि न लभे असुद्धं	१६४	३२६
तह वि य अठायमाणे	१०८	१८७
तित्थगरत्थाणं खलु	१७७	२६३
तित्थगरपवयणे निज्जरा	२४४	३७६
तिन्नि उ वारा जह दंडियस्स	३१	७२
तिरियमुब्भाम णियोग	७६	१४२
तिविधे तेगिच्छम्मी	१७	३७
तिविधो य पकप्पधरो	१४८	२५४
तेणादेस गिलाणे	६२	१२६
तेवरिसा होति नवा	२२०	३५३
तो तेसिं होति खेत्तं	१७६	२८६
थ		
थिग्गल धुत्तापोत्ते	३३४	४५८
थिरपरिचियपुव्वसुतो	१५१	२५८
थेरा सामायारिं	२८८	४१८
थेरे अणरिहे सीसे	१४३	२३५
द		
दंसण-नाण-चरित्ते	१३६	२२७
दट्ठुं साहण लहुओ	२७३	४०६
दट्ठु विसज्जण जोगे	२०४	३३७
दप्पेण पमादेण व	१६७	३२६
दव्वप्पमाणगणणा	२३७	३६६
दव्वम्मि लोइया खलु	२	४
दव्वादि चतुरभिग्गह	३०	६५
दव्वे खेत्ते काले	१४, ३५८	३०, ४८०
दव्वे भविओ निव्वत्तिओ	१६	४४
दव्वे भाव पलिच्छद	१३८	२२६
दव्वे भावे असुई	१६०	२६६
दव्वे भावे संगह	१४७	२४७
दव्वे य भाव भेयग	१६	४१
दव्वेहि पज्जवेहिं	३८३	५२८
दाण-दवावण-कारावणेसु	१४८	२५१
दिव रातो उवसंपय	२३	५५

गाथा	पृष्ठांक	गाथांक
दिव्वादि तिन्नि चउहा	३६३	४८६
दिसा अवर दक्खिणा य	३०६	४२७
दीणा जुंगित चउरो	१४२	२३१
दीवेउं तं कज्जं	३२०	४३६
दुल्लभदव्वं पडुच्च	१३३	२१४
दुल्लभलाभा समणा	२३३	३६५
दुविधा छिन्नमछिन्ना	३४१	४६६
दुविधो खलु ओसण्णे	८६	१४६
दुविहा पट्ठवणा खलु	५६	१२०
दुविहा सुतोवसंपय	३७४	५०४
दुविहो खलु पासत्थो	८३	१४६
दुविहो य एगपक्खी	१२८	२१०
देंता वि न दीसंती	३६४	५३४
देवो महिड्ढिओ वावि	३५८	४८२
दो पायाणुण्णाया	३३६	४६६
दोसा उ ततियभंगे	१६०	३२१
दोण्हं तु संजताणं	१७७	२६६
दोण्हं विहरंताणं	१००	१७५
दोसाण रक्खणट्ठा	३३३	४५४
दो साहम्मिय छब्बारसेव	६७	१६३
दोहि वि अपलिछन्ने	१३५	२२२
दोहि वि गिलायमाणे	१०३	१७६
ध		
धारिय-गुणिय समीहिय	१४६	२४४
धुवमण्णे तस्स मज्झे	३१८	४३७
न		
नत्थी संकियसंघाड	२७	६१
नवडहरगतरुणगस्स	१५४	२६१
नाणायार विराहितों	३०७	४२३
नाम ठवणा दविए	१६, २०, ६७, ६८, ६६	४३, ४६, ४७, १६४, १६८, १७०, ७६६
नामं ठवणा भिक्खू	१८	३६
नामादि गणो चउहा	१३४	२१६
नायम्मि गिण्हियव्वे	४४८	५७१
नायविधिगमण लहुगा	२३३	३६४
नाहं विदेस आहरणमादि	११८	१६६
निक्कारणम्मि गुरुगा	६२	१२५
निग्गमणं तु अधिकितं	७५	१३७
निग्गमणमवक्कमणं	८६	१५६
निग्गमणे चउभंगो	२१३	३४५
निग्गमणे परिसुद्धे	२६	६०
निग्गयवट्टंता वि य	४६	६२
निग्गिज्झ पमज्जाही	२४०	३७१
निट्ठित महल्ल भिक्खे	२०२	३३२
नितियादि उवहि भत्ते	१८६	३१८
निरवेक्खे कालगते	१८३	३०६
निव्विति ओम तव वेय	१५६	२६५
निसीध नवमा पुव्वा	४२	८६
निस्संकियं व काउं	२७३	४०७
नोइंदियपच्चक्खो	३८१	५२४
प		
पंचण्ह दोन्नि हारा	३११	४३१
पंचविधं उपसंपय	१६४	२६६
पंचविहो ववहारो	३८१	५२१
पंचादी आरोवण	१३	२८
पंचेते अतिसेसा	२५६	३६०
पंथे उवस्सए वा	३३५	४६०
पंथे वीसमण निवेसणादि	३३५	४६१
पक्खिय चउ संवच्छर	२२	५०
पच्चक्खो वि य दुविहो	३८१	५२३
पच्छन्नराय तेणे	१८३	३०५
पट्ठविता ठविता या	५६	१२१
पडिकुट्ठेल्लगदिवसे	३०	६७
पडिभग्गेसु मतेसु व	१७४	२८५
पडिलेहण ऽसज्झाए	६४	१३०
पडिलेह दिय तुयट्टण	१८८	३१३
पडिसेधे पडिसेधो	२७४	४०८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गाथा	पृष्ठांक	गाथांक
पडिसेवओ य पडिसेवणा	४	१३
पडिसेवओ सेवंतो	४	१४
पडिसेवणं विणा खलु	१३	२७
पडिसेवणा तु भावो	४	१५
पडिसेवणाय संचय	५६	११३
पडिसेवणा य संजोयणा	४	१२
पडिसेहियगमणम्मी	१२६	२०६
पढमस्स होति मूलं	१६	३६
पत्ता पोरिसिमादी	२७०	४०४
पत्तेयं-पत्तेयं	४२, ५०	८७, ६६
पत्थर छुहए रत्ती	७६	१४३
पम्हुट्ठे पडिसारण	३१	७०
पयतेणोसधं से	१६४	३२५
परपच्चएण सोही	२	८
परिकम्मेहि य अत्था	१७७	२६२
परिजितकालामंतण	७८	१४१
परिसाडिमपरिसाडी	३३१	४५२
परिहरति असण-पाणं	१४८	२५३
परिहारिओ उ गच्छे	६८	१३३
परिहारियकारणम्मि	१०४	१८२
पलिउंचण चउभंगो	५७	११७
पवयणजसंसि पुरिसे	४२६	५५८
पव्वज्जादी काउं	४१८	५४७
पाणा सीतल कुंथू	३२२	४४७
पादोवगमं भणियं	४१८	५५१
पादोवगमे इंगिणी	४००	५३६
पायच्छित्तनिरुत्तं	४	१०
पायच्छित्ताऽऽभवंते य	३८१	५२०
पारंचि सतमसीतं	५६	११४
पारिच्छहाणि असती	१८५	३०६
पारोक्खं ववहारं	३८१	५२५
पावं छिंदति जम्हा	४	११
पासत्थ-अहाछंदो	८१	१४५
पियधम्मा दढधम्मा	२	५
पुक्खरिणी आयारे	१४६	२५५
पुच्छाहि तीहि दिवसं	१७४	२८६

गाथा	पृष्ठांक	गाथांक
पुव्वं आयतिबंधं	१८३	३०७
पुव्वभवियवेरेणं	११३	१६५
पुव्वाणुपुव्वि दुविधा	५६	११५
पुव्वाणुपुव्वि पढमो	५६	११६
पेहाभिक्खग्गहणे	१०४	१८१
फ		
फासेऊण अगम्मं	२	७
ब		
बंध-वहे उद्दवणे	३६५	४६२
बहि अंत विवच्चासो	२३६	३७०
बहिगमणे चउगुरुगा	२४१	३७४
बहिगाम घरे सण्णी	१८६	३१७
बहिया य अणापुच्छा	२०५	३३६
बहुएहि जलकुडेहिं	५०	६८
बहुपडिसेवी सो वि य	३४	८०
बहुपुत्ति पुरिस मेहे	८०	१४४
बारस अट्ठग छक्कग	३६	८३
बालासहु वुड्ढेसुं	१४८	२५०
बोहेति अपडिबुद्धे	१३५	२२१
भ		
भग्गघरे कुड्डेसु य	३०	६६
भत्ते पाणे धोव्वण	२५३	३८६
भावग्गणेणऽहिगारो	१३५	२१६
भावे पसत्थमियरं	६७	१६६
भिदंतो यावि खुधं	१६	४२
भिक्खणसीलो भिक्खू	१८	४०
भिक्खुस्स मासियं खलु	२०६	३४२
भिक्खू इच्छा गणधारए	१३४	२१५
भिक्खू कुमार विरए	१३५	२२३
म		
मग्गे सेहविहारे	६६	१७४
मग्गोवसंपयाए	३७८	५१०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गाथा	पृष्ठांक	गाथांक
मणपरमोधिजिणाणं	५०	१००
मण-वयण-कायजोगेहिं	३६३	४८७
मधुरा दंडाऽऽणत्ती	१११	१६२
महज्झयण भत्त खीरे	११२	१६३
महती वियारभूमि	१७१	२७६
महती विहारभूमि	३६८	४६८
महिड्डिए उट्ठनिवेसणा	१०८	१८६
मा कित्ते कंकडुकं	१६४	२७२
मिच्छत्तअन्नपंथे	३३५	४६२
मिच्छत्त बडुग चारण	१०१	१७६
मिच्छत्तसोधि सागारियादि	२५६, २६१ २७६	३६३, ३६७, ४१४
मिच्छत्तादी दोसा	२८०	४१५
मूलादिवेदगो खलु	२०	४५
मूलुत्तरपडिसेवा	२१	४८
मोहेण व रोगेण व	१६४	३२४
र		
रण्णो कालगतम्मी	३१८	४३६
रण्णो निवेदितम्मि	१०६	१६०
रत्ति दिसा थंडिल्ले	३१०	४२६
रागा दोसा मोहा	३०६	४२२
रागेण वा भएण व	१०७	१८६
रायणियवायएणं	१२२	२०२
रायणिया थेरोऽसति	१७८	२६६
ल		
लहुगा य झामियम्मि	३२०	४४३
लहुगा य दोसु दोसु य	१२५	२०८
लाभमदेण व मत्तो	१११	१६१
लोइय-लोउत्तरिओ	१०७	१८५
लोए चोरादीया	२	६
लोगे य उत्तरम्मी	१८३	३०३
लोगे वेदे समए	१४६	२४५
व		
वक्खारे कारणम्मि	२६२	३६८
वट्टंतस्स अकप्पे	१५	३२
वणिमरुगनिही य पुणो	४५	९१
वत्तणा संधणा चेव	२७	६२
वत्तणुवत्तपवत्तो	४३१	५६१
वल्ली वा रुक्खो वा	३५३	४७६
ववहारचउक्कस्सा	४३२	५६५
ववहारम्मि चउक्कं	१	२
ववहारी खलु कत्ता	१	१
वाते पित्ते गणालोए	२४४	३७८
वादी दंडियमादी	२४२	३७५
वालच्छ भल्ल विस विसूइकए	४१७	५४५
वासं खंधार नदी	१६०	३२०
वासाण दोण्ह लहुगा	१७०	२७७
वासासु अपरिसाडी	३२२	४४६
वासासुं अमणुण्णा	१७६	२८८
वासासु निग्गताणं	३६७	४६६
वासासु समत्ताणं	१७७	२६७
विज्जाए मंतेण व	११४	१६६
विणओवसंपयाए	३७८	५१३
विभागओ अपसत्थे	२२	५३
वीतिक्कंते भिन्ने	३१२	४३३
वीयार-तेण आरक्खि	६३	१२७
वीसुं दिण्णे पुच्छा	३२	७६
वुड्ढावासातीते	२१६	३५१
वुड्ढावासे चेवं	३२८	४५०
वुड्ढावासे जतणा	२१७	३५०
वेयावच्चे तिविधे	५५	१११
स		
संकग्गहणे इच्छा	३६५	४६१
संकिए सहसक्कारे	६	२१
संगहुवग्गहनिज्झर	१७३	२८१
संघयणधितीजुत्तो	४१८	५५०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गाथा	पृष्ठांक	गाथांक
संघयणे वाउलणा	१६८, २२०	२७५, ३५२
संजोगदिट्ठपाढी	२३०	३६२
संदंतमसंदंतं	२६२	३६६
संदंते वक्खारो	२६२	४००
संबंधिणि गीतत्था	२२७	३५७
संभुंजण संभोगे	१४७	२४६
संविग्गमसंविग्गे	३४४	४७३
संविग्गेगंतरिया	१८६	३१६
संविग्गे गीयत्थे	६५	१६०
सचित्तादिसमूहो	१३५	२१७
सज्झायभूमि बोलंते	२०२	३३३
सज्झायस्स अकरणे	१२	२४
सत्थपरिण्णा छक्काय	१४६	२५६
सपडिग्गहे परपडिग्गहे	१३२	२१३
सपदपरूवण अणुसज्जणा	३६५	५३५
समणस्स उत्तिमट्ठे	४२२	५५३
समणुण्णेसु वि वासो	१६०	३१६
समाधी अभत्तपाणे	३०६	४२८
सरमाणो जो उ गमो	७४	१३६
सरिसेसु असरिसेसु व	१०२	१७८
सव्वेसिं पि नयाणं	४४८	५७२
सहसा अण्णाणेण व	३८३	५२६
सागारिए गिहा निग्गते	२७२	४०५
साधम्मि पडिच्छन्ने	२०८	३४१
साधारणो अभिहितो	१८०	३००
साधू विसीयमाणे	१५२	२५६
सामायारी वितहं	८७	१५१
सारूवी जज्जीवं	१८०	३०२
सारेऊण य कवयं	४०१	५४३
साहम्मिएहि कहितेहि	९८	१६६
साहारणा उ साला	३५१	४७७
साहिल्लवयण-वायण	१४७	२४८
सीसा य परिच्चत्ता	२४७	३७६
सीसेणाभिहिते एवं	२२६	३६०
सीसो सीसो सीसो	१४४	२३६
सुण जध निज्जवगऽत्थी	४००	५३८
सुत-सुह-दुक्खे खेत्ते	३७६	५१४
सुत्तत्थहेतुकारण	१४६	२४३
सुत्तनिवातो तणेसु	३२१	४४४
सुत्तमिणं कारणियं	९०	१५८
सुत्तम्मि कड्ढियम्मी	२२८	३५६
सुत्तावासगमादी	२४६	३८४
सुत्ते अत्थे जीते	१	३
सुत्ते जहुत्तरं खलु	१७६	२६१
सुत्तेण ववहरंते	४३२	५६४
सुद्धऽपडिच्छण लहुगा	२८	६३
सुद्धस्स य पारिच्छा	१४०	२२६
सुहसीलऽणुकंपातद्दिते	२०७	३४०
सूयपारायणं पढमं	१६६	२७४
सेज्जासंथारदुगं	३३२	४५३
सेवगपुरिसे ओमे	११६	१६७
सेहस्स तिभूमीओ	४३६	५६८
सोच्चाऽऽउट्टी अणापुच्छा	३७१	५०२
सोतव्वे उ विही इणमो	२५१	३८६
सो पुण उडुम्मि घेप्पति	३२०	४४१
सो पुण चउव्विहो दव्व	३७६	५१७
सो पुण लिंगेण समं	१२३	२०४
सो ववहारविहिण्णू	४२७	५५५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र से संबंधित भाष्य-गाथाओं का क्रम

इस परिशिष्ट में सूत्र-संख्या के साथ उससे संबंधित भाष्य गाथा के क्रमांक प्रस्तुत हैं। व्यवहारभाष्य की 'पीठिका' भूमिका रूप है, उसमें सूत्रों की व्याख्या नहीं है। सूत्रों की व्याख्या १८४वीं गाथा से शुरू होती है।

सू. संख्या	भा.गाथा	सू. संख्या	भा.गाथा	सू. संख्या	भा.गाथा	सू. संख्या	भा.गाथा
प्रथम उद्देशक		१४	११६३	१९-२२	१६१६	१९	२३४८
१	१८४	१५	११६६	२३-२९	१६३४	२०	२३७९
२-१०	३२४	१६	११६८			२१	२३९४
११-१२	३४५	१७	११७२	**चतुर्थ उद्देशक**			
१३,१४	५१७	१८, १९	१२०५			**षष्ठ उद्देशक**	
१५-१८	५३५	२०, २१	१२०६	१-८	१७२८		
१९	६२४	२२, २३	१२१०	९,१०	१७९३	१	२४४७
२०-२२	६९०	२४	१२३७	११	१८९०	२	२५१९
२३	७६८	२५	१२४९	१२	१९८३	३	२७०५
२४,२५	८०८	२६	१२९८	१३	१९९०	४	२७०८
२६-३०	८३३	२७	१३३४	१४	२०१८	५	२७२५
३१	८९१	२८	१३४३	१५	२०३१	६	२७४५
३२	९०६	२९	१३५१	१६	२०५३	७	२७७९
३३	९१४	३०	१३५२	१७	२०५७	८	२८०३
				१८	२०६३	९	२८०७
द्वितीय उद्देशक		**तृतीय उद्देशक**		१९	२०७४	१०	२८१३
				२०-२३	२०७६	११	२८३२
१-४	९७७	१	१३५७	२४	२१७७		
५	१०३६	२	१४७१	२५	२१८६	**सप्तम उद्देशक**	
६	१०५१	३-८	१४७७	२६-३२	२१९०		
७	१०७१	९	१५४२			१-२	२८३४
८	१०७२	१०	१५६१	**पंचम उद्देशक**		३	२८६७
९	१०७६	११	१५७६			४	२८७८
१०	११२३	१२	१५८८	१-१४	२३०४	५	२९२१
११	११४०	१३	१५९४	१५,१६	२३१२	६,७	२९२९
१२	११४७	१४-१७	१६११	१७	२३३२	८,९	२९५१
१३	११५३	१८	१६१५	१८	२३३७	१०,११	२९५३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सू. संख्या	भा.गाथा	सू. संख्या	भा.गाथा	सू. संख्या	भा.गाथा	सू. संख्या	भा.गाथा
१२	२९७९	५	३४७६	४२,४३	३८१०	१४	४५८५
१३	३००७	६	३५०९	४४	३८१८	१५	४५८९
१४, १५	३०१४	७-१२	३५१८	४५	३८२३	१६	४५९४
१६	३०४५	१३-१५	३५३६	४६	३८२४	१७,१८	४५९५
१७, १८	३१००	१६	३५९३			१९	४५९७
१९	३२२२	१७	३६८०	**दशम उद्देशक**		२०	४६०२
२०, २१	३२४०					२१,२२	४६४५
२२	३२५३	**नवम उद्देशक**		१-५	३८३१	२३,२४	४६५२
२३, २४	३३०९			६	३८८१	२५-२९	४६५५
२५	३३४३	१-८	३७०३	७	४५५३	३०	४६५८
२७,२८	३३५४	९-१६	३७१५	८	४५६७	३१	४६६०
		१७-३०	३७२४	९	४५७१	३२	४६६३
अष्टम उद्देशक		३१-३४	३७३७	१०	४५७३	३३	४६६६
		३५	३७७६	११	४५७५	३४	४६६७
१	३३८२	३६-३८	३७७८	१२	४५७७	३५-३९	४६६८
२-४	३३८८	३९-४१	३७८९	१३	४५८१	४०,४१	४६७५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका एवं भाष्य की गाथाओं का समीकरण

इस परिशिष्ट में संपादित भाष्य गाथा के क्रमांक तथा प्रकाशित टीका की भाष्य गाथा के क्रमांक की सूची प्रस्तुत की जा रही है। प्रकाशित टीका के अनेक भाग हैं। संपादक ने उन भागों को न उद्देशक के अनुसार बांटा है और न ही भागों की संख्या को संलग्न रखा है। टीका में सभी गाथाओं के उद्देशकगत अलग-अलग क्रमांक हैं। इससे पाठक को किसी भी गाथा की टीका खोजने में दुविधा होती है। हमने पूरे ग्रन्थ की गाथा-संख्या संलग्न रूप से रखी है। यहां हम टीका के भाग, उनकी पृष्ठ संख्या तथा प्रत्येक भाग की गाथा-संख्या की तालिका के साथ संपादित गाथा-संख्या-तालिका भी प्रस्तुत कर रहे हैं जिससे पाठक को इस परिशिष्ट के माध्यम से किसी भी गाथा की टीका खोजने में सुविधा रहेगी।

मुद्रित टीका में अनेक गाथाओं के आगे क्रमांक नहीं हैं किन्तु आगे संख्या ठीक चल रही है। वहाँ हमने (—) इस चिह्न का प्रयोग किया है। जहां प्रकाशन की त्रुटि से संख्या दो बार या आगे-पीछे छप गई है, उसका भी हमने पाद टिप्पण में उल्लेख कर दिया है। जो गाथाएं हमने मूल में स्वीकृत की हैं और यदि वे मुद्रित टीका में नहीं हैं तो उनको हमने 'x' चिह्न से दर्शाया है। जहाँ कहीं टीका में गाथा भाष्य-गाथा के क्रमांक में न छपकर त्रुटि से व्याख्या के मध्य में छप गई है अथवा उद्धृत गाथा है, इन सबका भी पाद-टिप्पण में उल्लेख कर दिया गया है।

विभाजन	टीकागत गाथाएं	टीकापत्र	संपादित गाथा
पीठिका (प्रथम विभाग)	१८४	६२	१८३
दूसरा भाग	२८८	६६	१८४-४६६
तीसरा भाग (१)	२८६-४१८[1]	५१	४७०-६२३
तीसरा भाग[2] (२)	२३५	५२-१३८	६२४-६७६
चौथा भाग (१)	३८२	८७	६७७-१३५६
चौथा भाग (२)	३७२	७३	१३५७-१७२७
चौथा भाग (३)	५७५	१०४	१७२८-२३०३
पांचवां भाग	१४३	२७	२३०४-२४४६
छठा भाग	३८७	७२	२४४७-२८३३
सातवां भाग	५४८	६५	२८३४-३३८१
आठवां भाग	३१६	६०	३३८२-३७०२
नवां भाग	१२८	२३	३७०३-३८३०
दसवां भाग	७२४+१४[3]	११४	३८३१-४६६४

१. प्रकाशित संख्या ४१८ तक है उसके बाद ११ गाथाएँ और हैं।

२. इस भाग में २३५ के आगे क्रमांक छपे हुए नहीं हैं। पहले भी अनेक गाथाओं के आगे क्रमांक नहीं हैं।

३. दसवें भाग में पत्र ६३ तक ७२४ गाथाएं हैं तथा उसके बाद फिर १ से १४३ तक गाथाएं और हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
१	१	३६	३६	७१	७१	१०७	१०६
२	२	३७	३७	७२	७२	१०८	१०७
३	३	३८	३८	७३	७३	१०९	१०८
४	४	३९	३९	७४	७४	—	१०९
५	५	४०	४०	७५	७५	१११	११०
६	६	४१	४१	७६	७६	११२	१११
७	७	४२	४२	७७	७७	११३	११२
८	८	४३	४३	७८	७८	११४	११३
९	९	४४	४४	७९	७९	११५	११४
१०	१०	४५	४५	८०	८०	११६	११५
११	११	४६	४६	८१	८१	११७	११६
१२	१२	४७	४७	८२	८२	११८	११७
१३	१३	४८	४८	८३	८३	११९	११८
१४	१४	४९	४९	८४	८४	१२०	११९
१५	१५	५०	५०	८५	८५	१२१	१२०
१६	१६	५१	५१	८६	८६	१२२	१२१
१७	१७	५२	५२	८७	८७	१२३	१२२
१८	१८	५३	५३	८८	८८	१२४	१२३
१९	१९	५४	५४	८९	८९	१२५	१२४
२०	२०	५५	५५	९०	९०	१२६	१२५
२१	२१	५६	५६	९१	९१	११७[1]	१२६
२२	२२	५७	५७	९२	९२	१२८	१२७
२३	२३	५८	५८	९३	९३	१२९	१२८
२४	२४	५९	५९	९४	९४	१३०	१२९
२५	२५	६०	६०	९५	९५	१३१	१३०
२६	२६	६१	६१	९६	९६	१३२	१३१
२७	२७	६२	६२	९८	९७	१३३	१३२
२८	२८	६३	६३	९९	९८	१३४	१३३
२९	२९	—	६४	१००	९९	१३५	१३४
३०	३०	—	६५	१०१	१००	१३६	१३५
३१	३१	६६	६६	१०२	१०१	—	१३६
३२	३२	६७	६७	१०३	१०२	१३८	१३७
३३	३३	—	६८	१०४	१०३	१३९	१३८
३४	३४	६९	६९	१०५	१०४	१४०	१३९
३५	३५	७०	७०	१०६	१०५	१४१	१४०

१. १२७ के स्थान पर ११७ छपा है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
१४२	१४१	१७७	१७६	२५	२०८	६०	२४३
★	१४२	१७८	१७७	२६	२०९	६१	२४४
१४३	१४३	१७९	१७८	२७	२१०	६२	२४५
१४५	१४४	१८०	१७९	२८	२११	६३	२४६
—	१४५	१८१	१८०	२९	२१२	६४	२४७
१४७	१४६	१८२	१८१	३०	२१३	६५	२४८
१४८	१४७	१८३	१८२	३१	२१४	६६	२४९
१४९	१४८	१८४	१८३	३२	२१५	६७	२५०
१५०	१४९			३३	२१६	६८	२५१
१५१	१५०	**प्रथम उद्देशक**		३४	२१७	६९	२५२
१५२	१५१			३५	२१८	७०	२५३
१५३	१५२	१	१८४	३६	२१९	७१	२५४
१५४	१५३	२	१८५	३७	२२०	७२	२५५
१५५	१५४	३	१८६	३८	२२१	७३	२५६
१५६	१५५	४	१८७	३९	२२२	७४	२५७
१५७	१५६	५	१८८	४०	२२३	७५	२५८
१५८	१५७	६	१८९	४१	२२४	७६	२५९
१५९	१५८	७	१९०	४२	२२५	७७	२६०
—	१५९	८	१९१	४३	२२६	७८	२६१
—	१६०	९	१९२	४४	२२७	७९	२६२
—	१६१	१०	१९३	४५	२२८	८०	२६३
१६३	१६२	११	१९४	४६	२२९	८१	२६४
१६४	१६३	१२	१९५	४७	२३०	८२	२६५
१६५	१६४	१३	१९६	४८	२३१	८३	२६६
—	१६५	१४	१९७	४९	२३२	८४	२६७
१६७	१६६	१५	१९८	५०	२३३	८५	२६८
—	१६७	१६	१९९	५१	२३४	८६	२६९
१६९	१६८	१७	२००	५२	२३५	८७	२७०
१७०	१६९	१८	२०१	५३	२३६	८८	२७१
—	१७०	१९	२०२	५४	२३७	८९	२७२
१७२	१७१	२०	२०३	५५	२३८	९०	२७३
१७३	१७२	२१	२०४	५६	२३९	९१	२७४
१७४	१७३	२२	२०५	५७	२४०	९२	२७५
—	१७४	२३	२०६	५८	२४१	९३	२७६
१७६	१७५	२४	२०७	५९	२४२	९४	२७७

★ मुद्रण के प्रमाद से यह गाथा मूल भाष्य के क्रमांक में न होकर व्याख्या के मध्य में प्रकाशित है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
९५	२७८	१३०	३१३	१६६	३४९	२०२	३८५
९६	२७९	१३१	३१४	१६७	३५०	२०३	३८६
९७	२८०	१३२	३१५	१६८	३५१	२०४	३८६/१
९८	२८१	१३३	३१६	१६९	३५२	२०५	३८७
९९	२८२	१३४	३१७	१७०	३५३	२०६	३८८
१००	२८३	१३५	३१८	१७१	३५४	२०७	३८९
१०१	२८४	१३६	३१९	१७२	३५५	२०८	३९०
१०२	२८५	१३७	३२०	१७३	३५६	२०९	३९१
१०३	२८६	१३८	३२१	१७४	३५७	२१०	३९२
१०४	२८७	१३९	३२२	१७५	३५८	२११	३९३
१०५	२८८	१४०	३२३	१७६	३५९	२१२	३९४
१०६	२८९	१४१	३२४	१७७	३६०	२१३	३९५
१०७	२९०	१४२	३२५	१७८	३६१	२१४	३९६
१०८	२९१	१४३	३२६	१७९	३६२	२१५	३९७
१०९	२९२	१४४	३२७	१८०	३६३	२१६	३९८
११०	२९३	१४५	३२८	१८१	३६४	२१७	३९९
१११	२९४	१४६	३२९	१८२	३६५	२१८	४००
१११	२९४/१	१४७	३३०	१८३	३६६	२१९	४०१
११२	२९५	१४८	३३१	१८४	३६७	२२०	४०२
११३	२९६	१४९	३३२	१८५	३६८	२२१	४०३
११४	२९७	१५०	३३३	१८६	३६९	२२२	४०४
११५	२९८	१५१	३३४	१८७	३७०	२२३	४०५
११६	२९९	१५२	३३५	१८८	३७१	२२४	४०६
—	३००	१५३	३३६	१८९	३७२	२२५	४०७
११८	३०१	१५४	३३७	१९०	३७३	२२६	४०८
११९	३०२	१५५	३३८	१९१	३७४	२२७	४०९
१२०	३०३	१५६	३३९	१९२	३७५	२२८	४१०
१२१	३०४	१५७	३४०	१९३	३७६	२२९	४११
१२२	३०५	१५८	३४१	१९४	३७७	२३०	४१२
१२३	३०६	१५९	३४२	१९५	३७८	२३१	४१३
१२४	३०७	१६०	३४३	१९६	३७९	२३२	४१४
१२५	३०८	१६१	३४४	१९७	३८०	२३३	४१५
१२६	३०९	१६२	३४५	१९८	३८१	२३४	४१६
१२७	३१०	१६३	३४६	१९९	३८२	२३५	४१७
१२८	३११	१६४	३४७	२००	३८३	२३६	४१८
१२९	३१२	१६५	३४८	२०१	३८४	२३७	४१९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
२३८	४२०	२७३	४५४	३०८	४८९	३४२	५२४
२३९	४२१	२७४	४५५	३०९	४९०	३४३	५२५
२४०	४२२	२७५	४५६	३१०	४९१	३४४	५२६
२४१	४२३	२७६	४५७	३११	४९२	३४५	५२७
२४२	४२४	२७७	४५८	३१२	४९३	३४६	५२८
२४३	४२५	२७८	४५९	३१३	४९४	३४७	५२९
२४४	४२६	२७९	४६०	३१४	४९५	३४८	५३०
२४५	४२७	२८०	४६१	३१५	४९६	३४९	५३१
२४६	४२८	२८१	४६२	३१६	४९७	३५०	५३२
२४७	४२९	२८२	४६३	x	४९८	३५१	५३३
२४८	४२९/१	२८३	४६४	३१७	४९९	३५२	५३४
२४९	४३०	२८४	४६५	३१८	५००	३५३	५३४/१
२५०	४३१	२८५	४६६	३१९	५०१	३४९[1]	५३५
२५१	४३२	२८६	४६७	३२०	५०२	३५०	५३६
२५२	४३३	२८७	४६८	३२१	५०३	३५१	५३७
२५३	४३४	२८८	४६९	३२२	५०४	—	५३८
२५४	४३५	२८९	४७०	३२३	५०५	३५३	५३९
२५५	४३६	२९०	४७१	३२४	५०६	३५४	५४०
२५६	४३७	२९१	४७२	३२५	५०७	३५५	५४१
२५७	४३८	२९२	४७३	—	५०८	३५६	५४२
२५८	४३९	२९३	४७४	३२७	५०९	३५७	५४३
२५९	४४०	२९४	४७५	—	५१०	३५८	५४४
२६०	४४१	२९५	४७६	३२९	५११	३५९	५४५
२६१	४४२	२९६	४७७	३३०	५१२	३६०	५४६
२६२	४४३	२९७	४७८	३३१	५१३	३६१	५४७
२६३	४४४	२९८	४७९	३३२	५१४	३६२	५४८
२६४	४४५	२९९	४८०	३३३	५१५	३६३	५४९
२६५	४४६	३००	४८१	३३४	५१६	३६४	५५०
२६६	४४७	३०१	४८२	३३५	५१७	३६५	५५१
२६७	४४८	३०२	४८३	३३६	५१८	३६६	५५२
२६८	४४९	३०३	४८४	३३७	५१९	३६७	५५३
२६९	४५०	३०४	४८५	३३८	५२०	३६८	५५४
२७०	४५१	३०५	४८६	३३९	५२१	३६९	५५५
२७१	४५२	३०६	४८७	३४०	५२२	३७०	५५६
२७२	४५३	३०७	४८८	३४१	५२३	३७१	५५७

१. मुद्रित टीका में ३४९-३५३ तक की संख्या पुनरुक्त हुई है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
३७२	५५८	४०४	५९०	६९	६६३	९९	७२५
३७३	५५९	४०५	५९१	७०	६६४	१००	७२६
३७४	५६०	४०६	५९२	७१	६६५	१०१	७२७
३७४[1]	५६१	४०७	५९३	७२	६६६	१०२	७२८
३७५	५६२	४०८	५९४	७३	६६७	१०३	७२९
३७६	५६३	४०९	५९५	७४	६६८	१०४	७३०
३७७	५६४	४१०	५९६	७५	६६९	उगा[4]	७३१
३७८	५६५	४११	५९७	७६	७००	१०५	७३२
३७९	५६६	४१२	५९८	७७	७०१	१०६	७३३
३८०	५६७	४१३	५९९	७८	७०२	१०७	७३४
३८१	५६८	४१४	६००	७९	७०३	१०८	७३५
३८२	५६९	४१५	६०१	८०	७०४	१०९	७३६
३८३	५७०	४१६	६०२	८१	७०५	११०	७३७
३८४	५७१	४१७	६०३	८२	७०६	१११	७३८
३८५	५७२	४१८	६०४	८३	७०७	११२	७३९
३८६	५७३	—	६०५-६०८	८४	७०८	११३	७४०
३८७	५७४	X	६०९	८५	७०९	११४	७४१
३८८	५७५	—	६१०	८६	७१०	११५	७४२
३८९	५७६	—	६११	८७	७११	११६	७४३
३९०	५७७	X	६१२	X	७१२	११७	७४४
३९१	५७८	—	६१३	८८	७१३	११८	७४५
३९३	५७९	X	६१४	८९	७१४	११९	७४६
३९४	५८०	X	६१५	९०	७१५	१२०	७४७
३९५	५८१	—	६१६	९१	७१६	१२१	७४८
—	५८२	X	६१७	९१[3]	७१७	१२२	७४९
३९७	५८३	—	६१८	९२	७१८	१२३	७५०
३९८	५८४	—	६१९	९३	७१९	१२४	७५१
३९९	५८५	X	६२०-६२२	९४	७२०	१२५	७५२
४००	५८६	—	६२३	९५	७२१	१२६	७५३
४०१	५८७	—	६२४-६६०[2]	९६	७२२	१२७	७५४
४०२	५८८	६७	६६१	९७	७२३	१२८	७५५
४०३	५८९	६८	६६२	९८	७२४	१२९	७५६

१. मुद्रित टीका में ३७४ की संख्या पुनरुक्त हुई है।

२. मुद्रित टीका में ६२४ से ६६० तक की गाथाओं के क्रमांक नहीं दिए हैं। बीच में ६२९ की गाथा मुद्रित टीका में नहीं है।

३. मुद्रित टीका में ९१ की संख्या दो बार छपी है।

४. उद्धृत गाथा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
१३०	७५७	२३०	८५६	२३	१०००	५८	१०३२
१३१	७५८	२३१	८५७	X	१००१	५९	१०३३
१३२	७५९	—	८५८	X	१००२	६०	१०३४
१३३	७६०	२३३	८५९	२४	१००३	६१	१०३५
१३४	७६१	२३४	८६०	२५	१००४	६२	१०३६
—	७६२	—	८६१-९७६[2]	२६	१००५	६३	१०३७
१३६	७६३			२७	१००६	६४	१०३८
१३७	७६४	**द्वितीय उद्देशक**		२८	१००७	६५	१०३९
१३८	७६५			२९	१००८	६६	१०४०
१३९	७६६	१	९७७	३०	१००९	६७	१०४१
१४०	७६७	२	९७८	३१	१०१०	६८	१०४२
—	७६८-८३५[1]	—	९७९	३२	१०११	६९	१०४३
२१०	८३६	४	९८०	३३	१०१२	७०	१०४४
२११	८३७	५	९८१	३४	१०१३	७१	१०४५
२१२	८३८	६	९८२	X	१०१४	७२	१०४६
२१३	८३९	७	९८३	३५	१०१५	७३	१०४७
२१४	८४०	८	९८४	३६	१०१६	७४	१०४८
२१५	८४१	९	९८५	३७	१०१७	७५	१०४९
२१६	८४२	१०	९८६	३८	१०१८	७६	१०५०
२१७	८४३	११	९८७	४५[4]	१०१९	७७	१०५१
२१८	८४४	१२	९८८	४६	१०२०	७८	१०५२
२१९	८४५	१३	९८९	४७	१०२१	७९	१०५३
२२०	८४६	१२[3]	९९०	४८	१०२२	८०	१०५४
२२१	८४७	—	९९१	४९	१०२३	८१	१०५५
२२२	८४८	X	९९२	५०	१०२४	८२	१०५६
—	८४९	१६	९९३	५१	१०२५	८३	१०५७
२२४	८५०	१७	९९४	५२	१०२६	८४	१०५८
२२५	८५१	१८	९९५	५३	१०२७	८५	१०५९
२२६	८५२	१९	९९६	५४	१०२८	८६	१०६०
२२७	८५३	२०	९९७	—	१०२९	८७	१०६१
२२८	८५४	२१	९९८	५६	१०३०	८८	१०६२
२२९	८५५	२२	९९९	५७	१०३१	८९	१०६३

१. मुद्रित टीका में ७६७ से ८३५ तक की गाथाओं के क्रमांक नहीं दिए हैं। बीच में ७७४/१ तथा ७७४/२ ये दो गाथाएं टीका में उद्धृत गाथा हैं।

२. मुद्रित टीका में ८६१ से ९७६ तक की गाथाओं के आगे क्रमांक नहीं हैं। बीच में ९१८, ९६७, ९६८ एवं ९६९ ये चार गाथाएं टीका में नहीं हैं।

३. मुद्रित टीका में १२ का क्रमांक पुनः दिया हुआ है।

४. मुद्रित टीका में ३९ से ४४ तक के क्रमांक नहीं हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाया	प्र.गाया	सं.गाया	प्र.गाया	सं.गाथा
९०	१०६४	१२६	११००	१६२	११३६	१९८	११७२
९१	१०६५	१२७	११०१	१६३	११३७	१९९	११७३
९२	१०६६	१२८	११०२	१६४	११३८	२००	११७४
९३	१०६७	१२९	११०३	१६५	११३९	२०१	११७५
९४	१०६८	१३०	११०४	१६६	११४०	२०२	११७६
९५	१०६९	१३१	११०५	१६७	११४१	२०३	११७७
९६	१०७०	१३२	११०६	१६८	११४२	२०४	११७८
९७	१०७१	१३३	११०७	१६९	११४३	२०५	११७९
९८	१०७२	१३४	११०८	१७०	११४४	—	११८०
९९	१०७३	१३५	११०९	१७१	११४५	२०७	११८१
१००	१०७४	१३६	१११०	१७२	११४६	२०८	११८२
१०१	१०७५	१३७	११११	१७३	११४७	२०९	११८३
१०२	१०७६	१३८	१११२	१७४	११४८	२१०	११८४
१०३	१०७७	१३९	१११३	१७५	११४९	२११	११८५
१०४	१०७८	१४०	१११४	१७६	११५०	२१२	११८६
१०५	१०७९	१४१	१११५	१७७	११५१	—	११८७
१०६	१०८०	१४२	१११६	—	११५२	२१४	११८८
१०७	१०८१	१४३	१११७	१७९	११५३	२१५	११८९
१०८	१०८२	१४४	१११८	१८०	११५४	२१६	११९०
१०९	१०८३	१४५	१११९	१८१	११५५	२१७	११९१
११०	१०८४	१४६	११२०	१८२	११५६	२१८	११९२
१११	१०८५	१४७	११२१	१८३	११५७	२१९	११९३
११२	१०८६	१४८	११२२	१८४	११५८	२२०	११९४
११३	१०८७	१४९	११२३	१८५	११५९	२२१	११९५
११४	१०८८	१५०	११२४	१८६	११६०	२२२	११९६
११५	१०८९	१५१	११२५	१८७	११६१	२२३	११९७
११६	१०९०	१५२	११२६	१८८	११६२	२२४	११९८
११७	१०९१	१५३	११२७	१८९	११६३	२२५	११९९
११८	१०९२	१५४	११२८	१९०	११६४	—	१२००
११९	१०९३	१५५	११२९	—	११६५	२२७	१२०१
१२०	१०९४	१५६	११३०	१९२	११६६	२२८	१२०२
१२१	१०९५	१५७	११३१	१९३	११६७	२२९	१२०३
१२२	१०९६	१५८	११३२	१९४	११६८	२३०	१२०४
१२३	१०९७	१५९	११३३	१९५	११६९	२३१	१२०५
१२४	१०९८	१६०	११३४	१९६	११७०	२३२	१२०६
१२५	१०९९	१६१	११३५	१९७	११७१	२३३	१२०७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
२३४	१२०८	२६९	१२४३	३०४	१२७८	३२७[1]	१३१३
२३५	१२०९	—	१२४४	३०५	१२७९	३२८	१३१४
२३६	१२१०	२७१	१२४५	३०६	१२८०	३४१	१३१५
२३७	१२११	२७२	१२४६	३०७	१२८१	३४२	१३१६
२३८	१२१२	२७३	१२४७	३०८	१२८२	३४३	१३१७
२३९	१२१३	२७४	१२४८	३०९	१२८३	३४४	१३१८
२४०	१२१४	२७५	१२४९	३१०	१२८४	३४५	१३१९
२४१	१२१५	२७६	१२५०	३११	१२८५	३४६	१३२०
२४२	१२१६	२७७	१२५१	३१२	१२८६	३४७	१३२१
२४३	१२१७	२७८	१२५२	३१३	१२८७	३४८	१३२२
२४४	१२१८	२७९	१२५३	३१४	१२८८	३४९	१३२३
२४५	१२१९	२८०	१२५४	३१५	१२८९	३५०	१३२४
२४६	१२२०	२८१	१२५५	३१६	१२९०	३५१	१३२५
२४७	१२२१	२८२	१२५६	३१७	१२९१	३५२	१३२६
२४८	१२२२	२८३	१२५७	३१८	१२९२	३५३	१३२७
२४९	१२२३	२८४	१२५८	३१९	१२९३	३५४	१३२८
२५०	१२२४	२८५	१२५९	३२०	१२९४	३५५	१३२९
२५१	१२२५	२८६	१२६०	३२१	१२९५	३५६	१३३०
२५२	१२२६	२८७	१२६१	३२२	१२९६	३५७	१३३१
२५३	१२२७	२८८	१२६२	३२३	१२९७	३५८	१३३२
२५४	१२२८	२८९	१२६३	३२४	१२९८	३५९	१३३३
२५५	१२२९	२९०	१२६४	३२५	१२९९	३६०	१३३४
२५६	१२३०	२९१	१२६५	३२६	१३००	३६१	१३३५
२५७	१२३१	२९२	१२६६	३२७	१३०१	३६२	१३३६
—	१२३२	२९३	१२६७	३२८	१३०२	३६३	१३३७
२५९	१२३३	२९४	१२६८	३२९	१३०३	—	१३३८
—	१२३४	२९५	१२६९	३३०	१३०४	३६५	१३३९
—	१२३५	२९६	१२७०	३३१	१३०५	३६६	१३४०
२६२	१२३६	२९७	१२७१	३३२	१३०६	३६७	१३४१
२६३	१२३७	२९८	१२७२	३३३	१३०७	३६८	१३४२
—	१२३८	२९९	१२७३	३३४	१३०८	३६९	१३४३
२६५	१२३९	३००	१२७४	३३५	१३०९	३७०	१३४४
२६६	१२४०	३०१	१२७५	—	१३१०	३७१	१३४५
२६७	१२४१	३०२	१२७६	३३७	१३११	—	१३४६
२६८	१२४२	३०३	१२७७	३३८	१३१२	१७३	१३४७

१. मुद्रित टीका में ३३९, ३४० की जगह ३२७ एवं २३८ का क्रमांक हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
—	१३४८	२५	१३८१	६१	१४१७	९७	१४५३
३७५	१३४९	२६	१३८२	६२	१४१८	९८	१४५४
३७६	१३५०	२७	१३८३	६३	१४१९	९९	१४५५
३७७	१३५१	२८	१३८४	६४	१४२०	१००	१४५६
३७८	१३५२	२९	१३८५	६५	१४२१	१०१	१४५७
३७९	१३५३	३०	१३८६	६६	१४२२	१०२	१४५८
३८०	१३५४	३१	१३८७	६७	१४२३	१०३	१४५९
३८१	१३५५	३२	१३८८	६८	१४२४	१०४	१४६०
—	१३५६	३३	१३८९	६९	१४२५	१०५	१४६१
		३४	१३९०	७०	१४२६	१०६	१४६२
तृतीय उद्देशक		३५	१३९१	७१	१४२७	१०७	१४६३
		३६	१३९२	७२	१४२८	१०८	१४६४
१	१३५७	३७	१३९३	७३	१४२९	१०९	१४६५
२	१३५८	३८	१३९४	७४	१४३०	११०	१४६६
३	१३५९	३९	१३९५	७५	१४३१	१११	१४६७
४	१३६०	४०	१३९६	७६	१४३२	११२	१४६८
५	१३६१	४१	१३९७	७७	१४३३	११३	१४६९
६	१३६२	४२	१३९८	७८	१४३४	११४	१४७०
७	१३६३	४३	१३९९	—	१४३५	११५	१४७१
८	१३६४	४४	१४००	८०	१४३६	११६	१४७२
९	१३६५	४५	१४०१	८१	१४३७	११७	१४७३
१०	१३६६	४६	१४०२	८२	१४३८	११८	१४७४
११	१३६७	४७	१४०३	८३	१४३९	११९	१४७५
१२	१३६८	४८	१४०४	८४	१४४०	१२०	१४७६
१३	१३६९	४९	१४०५	८५	१४४१	१२१	१४७७
१४	१३७०	५०	१४०६	८६	१४४२	१२२	१४७८
१५	१३७१	५१	१४०७	८७	१४४३	१२३	१४७९
१६	१३७२	५२	१४०८	८८	१४४४	१२४	१४८०
१७	१३७३	५३	१४०९	८९	१४४५	१२५	१४८१
१८	१३७४	५४	१४१०	९०	१४४६	—	१४८२
१९	१३७५	५५	१४११	९१	१४४७	१२७	१४८३
२०	१३७६	५६	१४१२	९२	१४४८	१२८	१४८४
२१	१३७७	५७	१४१३	९३	१४४९	१२९	१४८५
२२	१३७८	५८	१४१४	९४	१४५०	१३०	१४८६
२३	१३७९	५९	१४१५	९५	१४५१	१३१	१४८७
२४	१३८०	६०	१४१६	९६	१४५२	१३२	१४८८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
—	१४८८/१	१६७	१५२४	२०३	१५६०	२३९	१५९५
—	१४८९	१६८	१५२५	२०४	१५६१	२४०	१५९६
१३४	१४९०	१६९	१५२६	२०५	१५६२	२४१	१५९७
१३५	१४९१	१७०	१५२७	२०६	१५६३	२४२	१५९८
१३६	१४९२	—	१५२८	२०७	१५६४	२४३	१५९९
१३७	१४९३	१७२	१५२९	२०८	१५६५	२४४	१६००
१३८	१४९४	१७३	१५३०	२०९	१५६६	२४५	१६०१
१३९	१४९५	१७४	१५३१	२१०	१५६७	२४६	१६०२
१४०	१४९६	१७५	१५३२	२११	१५६८	२४७	१६०३
१४१	१४९७	१७६	१५३३	२१२	१५६९	२४८	१६०४
१४२	१४९८	१७७	१५३४	२१३	१५७०	२४९	१६०५
१४३	१४९९	१७८	१५३५	२१४	१५७१	२५०	१६०६
१४४	१५००	१७९	१५३६	२१५	१५७२	२५१	१६०७
—	१५०१	१८०	१५३७	२१६	१५७३	२५२	१६०८
—	१५०२	१८१	१५३८	२१७	१५७४	२५३	१६०९
—	१५०३	१८२	१५३९	२१८	१५७५	२५४	१६१०
—	१५०४	१८३	१५४०	२१९	१५७६	२५५	१६११
१४९	१५०५	१८४	१५४१	२२०	१५७७	२५६	१६१२
१५०	१५०६	१८५	१५४२	२२१	१५७८	२५७	१६१३
१५१	१५०७	१८६	१५४३	२२२	१५७९	२५८	X
१५२	१५०८	१८७	१५४४	२२३	१५८०	२५९	१६१४
१५३	१५०९	१८८	१५४५	२२४	१५८१	२६०	१६१५
१५४	१५१०	—	१५४६	२२५	१५८२	—	१६१६
१५५	१५११	१९०	१५४७	२२६	१५८३	२६२	१६१७
१५६	१५१२	१९१	१५४८	२२७	१५८४	२६३	१६१८
१५७	१५१३	—	१५४९	२२८	१५८५	२६४	१६१९
१५८	१५१४	१९३	१५५०	२२९	१५८६	२६५	१६२०
१५९	१५१५	—	१५५१	२३०	१५८७	२६६	१६२१
—	१५१६	१९५	१५५२	—	१५८८	२६७	१६२२
१६१	१५१७	१९६	१५५३	२३२	१५८९	२६८	१६२३
—	१५१८	१९७	१५५४	२३३	१५८९/१	२६९	१६२४
—	१५१९	१९८	१५५५	२३४	१५९०	२७०	१६२५
१६४	१५२०	१९९	१५५६	२३५	१५९१	२७१	१६२६
—	१५२१	—	१५५७	२३६	१५९२	२७२	१६२७
—	१५२२	२०१	१५५८	—	१५९३	२७३	१६२८
१६६	१५२३	२०२	१५५९	२३८	१५९४	२७४	१६२९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
—	१६३०	३११	१६६६	३४७	१७०२	८	१७३५
२७६	१६३१	३१२	१६६७	३४८	१७०३	९	१७३६
२७७	१६३२	३१३	१६६८	३४९	१७०४	१०	१७३७
२७८	१६३३	३१४	१६६९	३५०	१७०५	११	१७३८
२७९	१६३४	३१५	१६७०	३५१	१७०६	१२	१७३९
२८०	१६३५	३१६	१६७१	३५२	१७०७	१३	१७४०
२८१	१६३६	३१७	१६७२	३५३	१७०८	१४	१७४१
२८२	१६३७	३१८	१६७३	३५४	१७०९	१५	१७४२
२८३	१६३८	३१९	१६७४	३५५	१७१०	१६	१७४३
२८४	१६३९	३२०	१६७५	३५६	१७११	१७	१७४४
२८५	१६४०	३२१	१६७६	३५७	१७१२	—	१७४५
२८६	१६४१	३२२	१६७७	—	१७१३	१९	१७४६
२८७	१६४२	३२३	१६७८	३५९	१७१४	२०	१७४७
२८८	१६४३	—	१६७९	३६०	१७१५	२१	१७४८
२८९	१६४४	३२५	१६८०	३६१	१७१६	२२	१७४९
२९०	१६४५	३२६	१६८१	३६२	१७१७	२३	१७५०
२९१	१६४६	३२७	१६८२	३६३	१७१८	२४	१७५१
२९२	१६४७	३२८	१६८३	३६४	१७१९	२५	१७५२
२९३	१६४८	३२९	१६८४	३६५	१७२०	२६	१७५३
२९४	१६४९	३३०	१६८५	३६६	१७२१	२७	१७५४
२९५	१६५०	३३१	१६८६	३६७	१७२२	२८	१७५५
२९६	१६५१	३३२	१६८७	३६८	१७२३	२९	१७५६
२९७	१६५२	३३३	१६८८	३६९	१७२४	३०	१७५७
२९८	१६५३	३३४	१६८९	३७०	१७२५	३१	१७५८
२९९	१६५४	३३५	१६९०	३७१	१७२६	—	१७५९
३००	१६५५	३३६	१६९१	३७२	१७२७	३३	१७६०
३०१	१६५६	३३७	१६९२			३४	१७६१
३०२	१६५७	३३८	१६९३	**चतुर्थ उद्देशक**		३५	१७६२
३०३	१६५८	३३९	१६९४			३६	१७६३
३०४	१६५९	३४०	१६९५	१	१७२८	३७	१७६४
३०५	१६६०	३४१	१६९६	२	१७२९	३८	१७६५
३०६	१६६१	३४२	१६९७	३	१७३०	३९	१७६६
३०७	१६६२	३४३	१६९८	४	१७३१	४०	१७६७
३०८	१६६३	३४४	१६९९	५	१७३२	४१	१७६८
३०९	१६६४	३४५	१७००	६	१७३३	४२	१७६९
३१०	१६६५	३४६	१७०१	७	१७३४	४३	१७७०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
४४	१७७१	८०	१८०७	११६	१८४३	१५२	१८७९
४५	१७७२	८१	१८०८	११७	१८४४	१५३	१८८०
४६	१७७३	८२	१८०९	११८	१८४५	१५४	१८८१
४७	१७७४	८३	१८१०	११९	१८४६	१५५	१८८२
४८	१७७५	८४	१८११	१२०	१८४७	१५६	१८८३
४९	१७७६	८५	१८१२	१२१	१८४८	१५७	१८८४
५०	१७७७	—	१८१३	१२२	१८४९	१५८	१८८५
५१	१७७८	८७	१८१४	१२३	१८५०	१५९	१८८६
५२	१७७९	८८	१८१५	१२४	१८५१	१६०	१८८७
५३	१७८०	८९	१८१६	१२५	१८५२	१६१	१८८८
५४	१७८१	९०	१८१७	१२६	१८५३	१६२	१८८९
५५	१७८२	९१	१८१८	१२७	१८५४	१६३	१८९०
५६	१७८३	९२	१८१९	१२८	१८५५	१६४	१८९१
५७	१७८४	९३	१८२०	१२९	१८५६	१६५	१८९२
५८	१७८५	९४	१८२१	१३०	१८५७	१६६	१८९३
५९	१७८६	९५	१८२२	१३१	१८५८	१६७	१८९४
६०	१७८७	९६	१८२३	१३२	१८५९	१६८	१८९५
६१	१७८८	९७	१८२४	१३३	१८६०	१६९	१८९६
६२	१७८९	९८	१८२५	१३४	१८६१	१७०	१८९७
६३	१७९०	९९	१८२६	१३५	१८६२	१७१	१८९८
६४	१७९१	१००	१८२७	१३६	१८६३	१७२	१८९९
६५	१७९२	१०१	१८२८	१३७	१८६४	१७३	१९००
६६	१७९३	१०२	१८२९	१३८	१८६५	१७४	१९०१
६७	१७९४	१०३	१८३०	१३९	१८६६	१७५	१९०२
६८	१७९५	१०४	१८३१	१४०	१८६७	१७६	१९०३
६९	१७९६	१०५	१८३२	१४१	१८६८	१७७	१९०४
७०	१७९७	१०६	१८३३	१४२	१८६९	१७८	१९०५
७१	१७९८	१०७	१८३४	१४३	१८७०	१७९	१९०६
७२	१७९९	१०८	१८३५	१४४	१८७१	१८०	१९०७
७३	१८००	१०९	१८३६	१४५	१८७२	१८१	१९०८
७४	१८०१	११०	१८३७	१४६	१८७३	१८२	१९०९
७५	१८०२	१११	१८३८	१४७	१८७४	१८३	१९१०
७६	१८०३	—	१८३९	१४८	१८७५	१८४	१९११
७७	१८०४	११३	१८४०	१४९	१८७६	१८५	१९१२
७८	१८०५	११४	१८४१	१५०	१८७७	१८६	१९१३
७९	१८०६	११५	१८४२	१५१	१८७८	१८७	१९१४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
१८८	१९१५	२२४	१९५१	२६०	१९८७	२९६	२०२३
१८९	१९१६	२२५	१९५२	२६१	१९८८	२९७	२०२४
१९०	१९१७	२२६	१९५३	२६२	१९८९	२९८	२०२५
१९१	१९१८	२२७	१९५४	२६३	१९९०	२९९	२०२६
१९२	१९१९	२२८	१९५५	२६४	१९९१	३००	२०२७
१९३	१९२०	२२९	१९५६	२६५	१९९२	३०१	२०२८
१९४	१९२१	२३०	१९५७	२६६	१९९३	३०२	२०२९
१९५	१९२२	२३१	१९५८	२६७	१९९४	३०३	२०३०
१९६	१९२३	२३२	१९५९	२६८	१९९५	३०४	२०३१
१९७	१९२४	२३३	१९६०	२६९	१९९६	३०५	२०३२
१९८	१९२५	२३४	१९६१	२७०	१९९७	३०६	२०३३
१९९	१९२६	२३५	१९६२	२७१	१९९८	३०७	२०३४
२००	१९२७	२३६	१९६३	२७२	१९९९	३०८	२०३५
२०१	१९२८	२३७	१९६४	२७३	२०००	३०९	२०३६
२०२	१९२९	२३८	१९६५	२७४	२००१	३१०	२०३७
२०३	१९३०	२३९	१९६६	२७५	२००२	३११	२०३८
२०४	१९३१	२४०	१९६७	२७६	२००३	३१२	२०३९
२०५	१९३२	२४१	१९६८	२७७	२००४	३१३	२०४०
२०६	१९३३	२४२	१९६९	२७८	२००५	३१४	२०४१
२०७	१९३४	२४३	१९७०	२७९	२००६	३१५	२०४२
२०८	१९३५	२४४	१९७१	२८०	२००७	३१६	२०४३
२०९	१९३६	२४५	१९७२	२८१	२००८	३१७	२०४४
२१०	१९३७	२४६	१९७३	२८२	२००९	३१८	२०४५
२११	१९३८	२४७	१९७४	२८३	२०१०	३१९	२०४६
२१२	१९३९	२४८	१९७५	२८४	२०११	३२०	२०४७
२१३	१९४०	२४९	१९७६	२८५	२०१२	३२१	२०४८
२१४	१९४१	२५०	१९७७	२८६	२०१३	३२२	२०४९
२१५	१९४२	२५१	१९७८	२८७	२०१४	३२३	२०५०
२१६	१९४३	२५२	१९७९	२८८	२०१५	३२४	२०५१
२१७	१९४४	२५३	१९८०	२८९	२०१६	३२५	२०५२
२१८	१९४५	२५४	१९८१	२९०	२०१७	३२६	२०५३
२१९	१९४६	२५५	१९८२	२९१	२०१८	३२७	२०५४
२२०	१९४७	२५६	१९८३	२९२	२०१९	३२८	२०५५
२२१	१९४८	२५७	१९८४	२९३	२०२०	३२९	२०५६
२२२	१९४९	२५८	१९८५	२९४	२०२१	३३०	२०५७
२२३	१९५०	२५९	१९८६	२९५	२०२२	३३१	२०५८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
३३२	२०५९	३६८	२०९५	४०४	२१३१	४३८	२१६६
३३३	२०६०	३६९	२०९६	४०५	२१३२	४३९	२१६७
३३४	२०६१	३७०	२०९७	४०६	२१३३	४४०	२१६८
३३५	२०६२	३७१	२०९८	४०७	२१३४	४४१	२१६९
३३६	२०६३	३७२	२०९९	४०८	२१३५	४४२	२१७०
३३७	२०६४	३७३	२१००	४०९	२१३६	४४३	२१७१
३३८	२०६५	३७४	२१०१	४१०	२१३७	४४४	२१७२
३३९	२०६६	३७५	२१०२	४११	२१३८	४४५	२१७३
३४०	२०६७	३७६	२१०३	४१२	२१३९	४४६	२१७४
३४१	२०६८	३७७	२१०४	४१३	२१४०	४४७	२१७५
३४२	२०६९	३७८	२१०५	४१४	२१४१	४४८	२१७६
३४३	२०७०	३७९	२१०६	४१५	२१४२	४४९	२१७७
३४४	२०७१	३८०	२१०७	४१६	२१४३	४५०	२१७८
३४५	२०७२	३८१	२१०८	४१७	२१४४	४५१	२१७९
३४६	२०७३	३८२	२१०९	४१८	२१४५	४५२	२१८०
३४७	२०७४	३८३	२११०	४१९	२१४६	४५३	२१८१
३४८	२०७५	३८४	२१११	४२०	२१४७	४५४	२१८२
३४९	२०७६	३८५	२११२	४२१	२१४८	४५५	२१८३
३५०	२०७७	३८६	२११३	४२२	२१४९	४५६	२१८४
३५१	२०७८	३८७	२११४	४२३	२१५०	४५७	२१८५
३५२	२०७९	३८८	२११५	४२४	२१५१	४५८	२१८६
३५३	२०८०	३८९	२११६	४२५	२१५२	४५९	२१८७
३५४	२०८१	३९०	२११७	४२६	२१५३	४६०	२१८८
३५५	२०८२	३९१	२११८	४२७	२१५४	४६१	२१८९
३५६	२०८३	३९२	२११९	४२८	२१५५	४६२	२१९०
३५७	२०८४	३९३	२१२०	४२९	२१५६	४६३	२१९१
३५८	२०८५	३९४	२१२१	४३०	२१५७	४६४	२१९२
३५९	२०८६	३९५	२१२२	४३१	२१५८	४६५	२१९३
३६०	२०८७	३९६	२१२३	४३२	२१५८/१	४६६	२१९४
३६१	२०८८	३९७	२१२४	४३३	२१५९	४६७	२१९५
३६२	२०८९	३९८	२१२५	४३४	२१६०	४६८	२१९६
३६३	२०९०	३९९	२१२६	४३५	२१६१	४६९	२१९७
३६४	२०९१	४००	२१२७	४३६	२१६२	४७०	२१९८
३६५	२०९२	४०१	२१२८	उगा.	२१६३	४७१	२१९९
३६६	२०९३	४०२	२१२९	—	२१६४	४७२	२२००
३६७	२०९४	४०३	२१३०	४३७	२१६५	४७३	२२०१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथः	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
४७४	२२०२	५१०	२२३८	५४६	२२७४	४	२३०७
४७५	२२०३	५११	२२३९	५४७	२२७५	५	२३०८
४७६	२२०४	५१२	२२४०	५४८	२२७६	६	२३०९
४७७	२२०५	५१३	२२४१	५४९	२२७७	७	२३१०
४७८	२२०६	५१४	२२४२	५५०	२२७८	८	२३११
४७९	२२०७	५१५	२२४३	५५१	२२७९	९	२३१२
४८०	२२०८	५१६	२२४४	५५२	२२८०	१०	२३१३
४८१	२२०९	५१७	२२४५	५५३	२२८१	११	२३१४
४८२	२२१०	५१८	२२४६	५५४	२२८२	१२	२३१५
४८३	२२११	५१९	२२४७	५५५	२२८३	१३	२३१६
४८४	२२१२	५२०	२२४८	५५६	२२८४	१४	२३१७
४८५	२२१३	५२१	२२४९	५५७	२२८५	१५	२३१८
४८६	२२१४	५२२	२२५०	५५८	२२८६	१६	२३१९
४८७	२२१५	५२३	२२५१	५५९	२२८७	१७	२३२०
४८८	२२१६	५२४	२२५२	५६०	२२८८	१८	२३२१
४८९	२२१७	५२५	२२५३	५६१	२२८९	१९	२३२२
४९०	२२१८	५२६	२२५४	५६२	२२९०	२०	२३२३
४९१	२२१९	५२७	२२५५	५६३	२२९१	२१	२३२४
४९२	२२२०	५२८	२२५६	५६४	२२९२	२२	२३२५
४९३	२२२१	५२९	२२५७	५६५	२२९३	२३	२३२६
४९४	२२२२	५३०	२२५८	५६६	२२९४	२४	२३२७
४९५	२२२३	५३१	२२५९	५६७	२२९५	२५	२३२८
४९६	२२२४	५३२	२२६०	५६८	२२९६	२६	२३२९
४९७	२२२५	५३३	२२६१	५६९	२२९७	२७	२३३०
४९८	२२२६	५३४	२२६२	५७०	२२९८	२८	२३३१
४९९	२२२७	५३५	२२६३	५७१	२२९९	२९	२३३२
५००	२२२८	५३६	२२६४	५७२	२३००	३०	२३३३
५०१	२२२९	५३७	२२६५	५७३	२३०१	३१	२३३४
५०२	२२३०	५३८	२२६६	५७४	२३०२	३२	२३३५
५०३	२२३१	५३९	२२६७	५७५	२३०३	३३	२३३६
५०४	२२३२	५४०	२२६८			३४	२३३७
५०५	२२३३	५४१	२२६९	**पंचम उद्देशक**		३५	२३३८
५०६	२२३४	५४२	२२७०			३६	२३३९
५०७	२२३५	५४३	२२७१	१	२३०४	३७	२३४०
५०८	२२३६	५४४	२२७२	२	२३०५	३८	२३४१
५०९	२२३७	५४५	२२७३	३	२३०६	३९	२३४२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
४०	२३४३	७६	२३७९	११२	२४१५	२	२४४८
४१	२३४४	७७	२३८०	११३	२४१६	३	२४४९
४२	२३४५	७८	२३८१	११४	२४१७	४	२४५०
४३	२३४६	७९	२३८२	११५	२४१८	५	२४५१
४४	२३४७	८०	२३८३	११६	२४१९	६	२४५२
४५	२३४८	८१	२३८४	११७	२४२०	७	२४५३
४६	२३४९	८२	२३८५	११८	२४२१	८	२४५४
४७	२३५०	८३	२३८६	११९	२४२२	९	२४५५
४८	२३५१	८४	२३८७	१२०	२४२३	१०	२४५६
४९	२३५२	८५	२३८८	१२१	२४२४	११	२४५७
५०	२३५३	८६	२३८९	१२२	२४२५	१२	२४५८
५१	२३५४	८७	२३९०	१२३	२४२६	१३	२४५९
५२	२३५५	८८	२३९१	१२४	२४२७	१४	२४६०
५३	२३५६	८९	२३९२	१२५	२४२८	१५	२४६१
५४	२३५७	९०	२३९३	१२६	२४२९	१६	२४६२
५५	२३५८	९१	२३९४	१२७	२४३०	१७	२४६३
५६	२३५९	९२	२३९५	१२८	२४३१	१८	२४६४
५७	२३६०	९३	२३९६	१२९	२४३२	१९	२४६५
५८	२३६१	९४	२३९७	१३०	२४३३	२०	२४६६
५९	२३६२	९५	२३९८	१३१	२४३४	२१	२४६७
६०	२३६३	९६	२३९९	१३२	२४३५	२२	२४६८
६१	२३६४	९७	२४००	१३३	२४३६	२३	२४६९
६२	२३६५	९८	२४०१	१३४	२४३७	२४	२४७०
६३	२३६६	९९	२४०२	१३५	२४३८	२५	२४७१
६४	२३६७	१००	२४०३	१३६	२४३९	२६	२४७२
६५	२३६८	१०१	२४०४	१३७	२४४०	२७	२४७३
६६	२३६९	१०२	२४०५	१३८	२४४१	२८	२४७४
६७	२३७०	१०३	२४०६	१३९	२४४२	२९	२४७५
६८	२३७१	१०४	२४०७	१४०	२४४३	३०	२४७६
६९	२३७२	१०५	२४०८	१४१	२४४४	३१	२४७७
७०	२३७३	१०६	२४०९	१४२	२४४५	३२	२४७८
७१	२३७४	१०७	२४१०	१४३	२४४६	३३	२४७९
७२	२३७५	१०८	२४११			३४	२४८०
७३	२३७६	१०९	२४१२	**षष्ठ उद्देशक**		३५	२४८१
७४	२३७७	११०	२४१३			३६	२४८२
७५	२३७८	१११	२४१४	१	२४४७	३७	२४८३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
३८	२४८४	७४	२५२०	११०	२५५६	१४६	२५९२
३९	२४८५	७५	२५२१	१११	२५५७	१४७	२५९३
४०	२४८६	७६	२५२२	११२	२५५८	१४८	२५९४
४१	२४८७	७७	२५२३	११३	२५५९	१४९	२५९५
४२	२४८८	७८	२५२४	—	२५६०	१५०	२५९६
४३	२४८९	७९	२५२५	—	२५६१	१५१	२५९७
४४	२४९०	८०	२५२६	११६	२५६२	१५२	२५९८
४५	२४९१	८१	२५२७	११७	२५६३	१५३	२५९९
४६	२४९२	८२	२५२८	११८	२५६४	१५४	२६००
४७	२४९३	८३	२५२९	११९	२५६५	१५५	२६०१
४८	२४९४	८४	२५३०	१२०	२५६६	१५६	२६०२
४९	२४९५	८५	२५३१	१२१	२५६७	१५७	२६०३
५०	२४९६	८६	२५३२	१२२	२५६८	१५८	२६०४
५१	२४९७	८७	२५३३	१२३	२५६९	१५९	२६०५
५२	२४९८	८८	२५३४	१२४	२५७०	१६०	२६०६
५३	२४९९	८९	२५३५	१२५	२५७१	१६१	२६०७
५४	२५००	९०	२५३६	१२६	२५७२	१६२	२६०८
५५	२५०१	९१	२५३७	१२७	२५७३	१६३	२६०९
५६	२५०२	९२	२५३८	१२८	२५७४	१६४	२६१०
५७	२५०३	९३	२५३९	१२९	२५७५	१६५	२६११
५८	२५०४	९४	२५४०	—	२५७६	१६६	२६१२
५९	२५०५	९५	२५४१	१३१	२५७७	१६७	२६१३
६०	२५०६	९६	२५४२	१३२	२५७८	१६८	२६१४
६१	२५०७	९७	२५४३	१३३	२५७९	१६९	२६१५
६२	२५०८	९८	२५४४	१३४	२५८०	१७०	२६१६
६३	२५०९	९९	२५४५	—	२५८१	१७१	२६१७
६४	२५१०	१००	२५४६	१३६	२५८२	१७२	२६१८
६५	२५११	१०१	२५४७	१३७	२५८३	१७३	२६१९
६६	२५१२	१०२	२५४८	१३८	२५८४	१७४	२६२०
६७	२५१३	१०३	२५४९	१३९	२५८५	१७५	२६२१
६८	२५१४	१०४	२५५०	१४०	२५८६	१७६	२६२२
६९	२५१५	१०५	२५५१	१४१	२५८७	१७७	२६२३
७०	२५१६	१०६	२५५२	१४२	२५८८	१७८	२६२४
७१	२५१७	१०७	२५५३	१४३	२५८९	१७९	२६२५
७२	२५१८	—	२५५४	१४४	२५९०	१८०	२६२६
७३	२५१९	१०९	२५५५	१४५	२५९१	१८१	२६२७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
१८२	२६२८	२१८	२६६४	२५४	२७००	२९०	२७३६
१८३	२६२९	२१९	२६६५	२५५	२७०१	२९१	२७३७
१८४	२६३०	२२०	२६६६	२५६	२७०२	२९२	२७३८
१८५	२६३१	२२१	२६६७	२५७	२७०३	२९३	२७३९
१८६	२६३२	२२२	२६६८	२५८	२७०४	२९४	२७४०
१८७	२६३३	२२३	२६६९	२५९	२७०५	२९५	२७४१
१८८	२६३४	२२४	२६७०	२६०	२७०६	२९६	२७४२
१८९	२६३५	२२५	२६७१	२६१	२७०७	२९७	२७४३
१९०	२६३६	२२६	२६७२	२६२	२७०८	२९८	२७४४
१९१	२६३७	२२७	२६७३	२६३	२७०९	२९९	२७४५
१९२	२६३८	—	२६७४	२६४	२७१०	३००	२७४६
१९३	२६३९	२२९	२६७५	२६५	२७११	३०१	२७४७
१९४	२६४०	२३०	२६७६	२६६	२७१२	३०२	२७४८
१९५	२६४१	२३१	२६७७	२६७	२७१३	३०३	२७४९
१९६	२६४२	२३२	२६७८	२६८	२७१४	३०४	२७५०
१९७	२६४३	२३३	२६७९	२६९	२७१५	३०५	२७५१
१९८	२६४४	२३४	२६८०	२७०	२७१६	३०६	२७५२
१९९	२६४५	२३५	२६८१	२७१	२७१७	३०७	२७५३
२००	२६४६	२३६	२६८२	—	२७१८	३०८	२७५४
२०१	२६४७	२३७	२६८३	२७३	२७१९	३०९	२७५५
२०२	२६४८	२३८	२६८४	२७४	२७२०	३१०	२७५६
२०३	२६४९	२३९	२६८५	२७५	२७२१	३११	२७५७
२०४	२६५०	२४०	२६८६	२७६	२७२२	३१२	२७५८
२०५	२६५१	२४१	२६८७	२७७	२७२३	३१३	२७५९
२०६	२६५२	२४२	२६८८	२७८	२७२४	३१४	२७६०
२०७	२६५३	२४३	२६८९	२७९	२७२५	३१५	२७६१
२०८	२६५४	२४४	२६९०	—	२७२६	३१६	२७६२
२०९	२६५५	२४५	२६९१	२८१	२७२७	३१७	२७६३
२१०	२६५६	२४६	२६९२	२८२	२७२८	३१८	२७६४
२११	२६५७	२४७	२६९३	२८३	२७२९	३१९	२७६५
२१२	२६५८	२४८	२६९४	२८४	२७३०	३२०	२७६६
२१३	२६५९	२४९	२६९५	२८५	२७३१	३२१	२७६७
२१४	२६६०	२५०	२६९६	२८६	२७३२	३२२	२७६८
२१५	२६६१	२५१	२६९७	२८७	२७३३	३२३	२७६९
२१६	२६६२	२५२	२६९८	२८८	२७३४	३२४	२७७०
२१७	२६६३	२५३	२६९९	२८९	२७३५	३२५	२७७१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
३२६	२७७२	३६२	२८०८	८	२८४१	४४	२८७७
३२७	२७७३	३६३	२८०९	९	२८४२	४५	२८७८
३२८	२७७४	३६४	२८१०	१०	२८४३	४६	२८७९
३२९	२७७५	३६५	२८११	११	२८४४	४७	२८८०
३३०	२७७६	३६६	२८१२	१२	२८४५	४८	२८८१
३३१	२७७७	३६७	२८१३	१३	२८४६	४९	२८८२
३३२	२७७८	३६८	२८१४	१४	२८४७	५०	२८८३
३३३	२७७९	३६९	२८१५	१५	२८४८	५१	२८८४
३३४	२७८०	३७०	२८१६	१६	२८४९	५२	२८८५
३३५	२७८१	३७१	२८१७	१७	२८५०	५३	२८८६
३३६	२७८२	३७२	२८१८	१८	२८५१	५४	२८८७
३३७	२७८३	३७३	२८१९	१९	२८५२	५५	२८८८
३३८	२७८४	३७४	२८२०	२०	२८५३	५६	२८८९
३३९	२७८५	३७५	२८२१	२१	२८५४	५७	२८९०
३४०	२७८६	३७६	२८२२	२२	२८५५	५८	२८९१
३४१	२७८७	३७७	२८२३	२३	२८५६	५९	२८९२
३४२	२७८८	३७८	२८२४	२४	२८५७	६०	२८९३
३४३	२७८९	३७९	२८२५	२५	२८५८	६१	२८९४
३४४	२७९०	३८०	२८२६	२६	२८५९	६२	२८९५
३४५	२७९१	३८१	२८२७	२७	२८६०	६३	२८९६
३४६	२७९२	३८२	२८२८	२८	२८६१	६४	२८९७
३४७	२७९३	३८३	२८२९	२९	२८६२	६५	२८९८
३४८	२७९४	३८४	२८३०	३०	२८६३	६६	२८९९
३४९	२७९५	३८५	२८३१	३१	२८६४	६७	२९००
३५०	२७९६	३८६	२८३२	३२	२८६५	६८	२९०१
३५१	२७९७	३८७	२८३३	३३	२८६६	६९	२९०२
३५२	२७९८			३४	२८६७	७०	२९०३
३५३	२७९९	**सप्तम उद्देशक**		३५	२८६८	७१	२९०४
३५४	२८००			३६	२८६९	७२	२९०५
३५५	२८०१	१	२८३४	३७	२८७०	७३	२९०६
३५६	२८०२	२	२८३५	३८	२८७१	७४	२९०७
—	२८०३	३	२८३६	३९	२८७२	७५	२९०८
३५८	२८०४	४	२८३७	४०	२८७३	७६	२९०९
३५९	२८०५	५	२८३८	४१	२८७४	७७	२९१०
३६०	२८०६	६	२८३९	४२	२८७५	७८	२९११
३६१	२८०७	७	२८४०	४३	२८७६	७९	२९१२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
८०	२६१३	११६	२६४९	१५२	२६८५	१८८	३०२१
८१	२६१४	११७	२६५०	१५३	२६८६	१८९	३०२२
८२	२६१५	११८	२६५१	१५४	२६८७	१९०	३०२३
८३	२६१६	११९	२६५२	१५५	२६८८	१९१	३०२४
८४	२६१७	१२०	२६५३	१५६	२६८९	१९२	३०२५
८५	२६१८	१२१	२६५४	१५७	२६९०	१९३	३०२६
८६	२६१९	१२२	२६५५	१५८	२६९१	१९४	३०२७
८७	२६२०	१२३	२६५६	१५९	२६९२	१९५	३०२८
८८	२६२१	१२४	२६५७	१६०	२६९३	१९६	३०२९
८९	२६२२	१२५	२६५८	१६१	२६९४	१९७	३०३०
९०	२६२३	१२६	२६५९	१६२	२६९५	१९८	३०३१
९१	२६२४	१२७	२६६०	—	२६९६	१९९	३०३२
९२	२६२५	१२८	२६६१	१६४	२६९७	२००	३०३३
९३	२६२६	१२९	२६६२	१६५	२६९८	२०१	३०३४
९४	२६२७	१३०	२६६३	१६६	२६९९	२०२	३०३५
९५	२६२८	१३१	२६६४	१६७	३०००	२०३	३०३६
९६	२६२९	१३२	२६६५	१६८	३००१	२०४	३०३७
९७	२६३०	१३३	२६६६	१६९	३००२	२०५	३०३८
९८	२६३१	१३४	२६६७	१७०	३००३	२०६	३०३९
९९	२६३२	१३५	२६६८	१७१	३००४	२०७	३०४०
१००	२६३३	१३६	२६६९	१७२	३००५	२०८	३०४१
१०१	२६३४	१३७	२६७०	१७३	३००६	२०९	३०४२
१०२	२६३५	१३८	२६७१	१७४	३००७	२१०	३०४३
१०३	२६३६	१३९	२६७२	१७५	३००८	२११	३०४४
१०४	२६३७	१४०	२६७३	१७६	३००९	२१२	३०४५
१०५	२६३८	१४१	२६७४	१७७	३०१०	२१३	३०४६
१०६	२६३९	१४२	२६७५	१७८	३०११	२१४	३०४७
१०७	२६४०	१४३	२६७६	१७९	३०१२	२१५	३०४८
१०८	२६४१	१४४	२६७७	१८०	३०१३	२१६	३०४९
१०९	२६४२	१४५	२६७८	१८१	३०१४	२१७	३०५०
११०	२६४३	१४६	२६७९	१८२	३०१५	२१८	३०५१
१११	२६४४	१४७	२६८०	१८३	३०१६	२१९	३०५२
११२	२६४५	१४८	२६८१	१८४	३०१७	२२०	३०५३
११३	२६४६	१४९	२६८२	१८५	३०१८	२२१	३०५४
—	२६४७	१५०	२६८३	१८६	३०१९	२२२	३०५५
११५	२६४८	१५१	२६८४	१८७	३०२०	२२३	३०५६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
२२४	३०५७	२५९	३०९२	२९४	३१२७	३२९	३१६२
२२५	३०५८	२६०	३०९३	२९५	३१२८	३३०	३१६३
२२६	३०५९	२६१	३०९४	२९६	३१२९	३३१	३१६४
२२७	३०६०	२६२	३०९५	२९७	३१३०	३३२	३१६५
२२८	३०६१	२६३	३०९६	२९८	३१३१	३३३	३१६६
२२९	३०६२	२६४	३०९७	२९९	३१३२	३३४	३१६७
२३०	३०६३	२६४	३०९८	३००	३१३३	३३५	३१६८
२३१	३०६४	२६६	३०९९	३०१	३१३४	३३६	३१६९
२३२	३०६५	२६६[1]	३१००	३०२	३१३५	३३७	३१७०
२३३	३०६६	२६८	३१०१	३०३	३१३६	३३८	३१७१
२३४	३०६७	२६९	३१०२	३०४	३१३७	३३९	३१७२
२३५	३०६८	२७०	३१०३	३०५	३१३८	३४०	३१७३
२३६	३०६९	२७१	३१०४	३०६	३१३९	३४१	३१७४
२३७	३०७०	२७२	३१०५	३०७	३१४०	३४२	३१७५
२३८	३०७१	२७३	३१०६	३०८	३१४१	३४३	३१७६
२३९	३०७२	२७४	३१०७	३०९	३१४२	३४४	३१७७
२४०	३०७३	२७५	३१०८	३१०	३१४३	३४५	३१७८
२४१	३०७४	२७६	३१०९	३११	३१४४	३४६	३१७९
२४२	३०७५	२७७	३११०	३१२	३१४५	३४७	३१८०
२४३	३०७६	२७८	३१११	३१३	३१४६	३४८	३१८१
२४४	३०७७	२७९	३११२	३१४	३१४७	३४९	३१८२
२४५	३०७८	२८०	३११३	३१५	३१४८	३५०	३१८३
२४६	३०७९	२८१	३११४	३१६	३१४९	३५१	३१८४
२४७	३०८०	२८२	३११५	३१७	३१५०	३५२	३१८५
२४८	३०८१	२८३	३११६	३१८	३१५१	३५३	३१८६
२४९	३०८२	२८४	३११७	३१९	३१५२	३५४	३१८७
२५०	३०८३	२८५	३११८	३२०	३१५३	३५५	३१८८
२५१	३०८४	२८६	३११९	३२१	३१५४	३५६	३१८९
२५२	३०८५	२८७	३१२०	३२२	३१५५	३५७	३१९०
२५३	३०८६	२८८	३१२१	३२३	३१५६	३५८	३१९१
२५४	३०८७	२८९	३१२२	३२४	३१५७	३५९	३१९२
२५५	३०८८	२९०	३१२३	३२५	३१५८	३६०	३१९३
२५६	३०८९	२९१	३१२४	३२६	३१५९	३६१	३१९४
२५७	३०९०	२९२	३१२५	३२७	३१६०	३६२	३१९५
२५८	३०९१	२९३	३१२६	३२८	३१६१	३६३	३१९६

१. मुद्रित टीका में २६४ एवं २६६ का क्रमांक पुनरुक्त हुआ है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
—	३१९७	४००	३२३३	४३६	३२६९	४७२	३३०५
३६५	३१९८	४०१	३२३४	४३७	३२७०	४७३	३३०६
३६६	३१९९	४०२	३२३५	४३८	३२७१	४७४	३३०७
३६७	३२००	४०३	३२३६	४३९	३२७२	४७५	३३०८
३६८	३२०१	४०४	३२३७	४४०	३२७३	४७६	३३०९
३६९	३२०२	४०५	३२३८	४४१	३२७४	४७७	३३१०
३७०	३२०३	४०६	३२३९	४४२	३२७५	४७८	३३११
३७१	३२०४	४०७	३२४०	४४३	३२७६	४७९	३३१२
३७२	३२०५	४०८	३२४१	४४४	३२७७	४८०	३३१३
३७३	३२०६	४०९	३२४२	४४५	३२७८	४८१	३३१४
३७४	३२०७	४१०	३२४३	४४६	३२७९	४८२	३३१५
३७५	३२०८	४११	३२४४	४४७	३२८०	४८३	३३१६
३७६	३२०९	४१२	३२४५	४४८	३२८१	४८४	३३१७
३७७	३२१०	४१३	३२४६	४४९	३२८२	४८५	३३१८
३७८	३२११	४१४	३२४७	४५०	३२८३	४८६	३३१९
३७९	३२१२	४१५	३२४८	४५१	३२८४	४८७	३३२०
३८०	३२१३	४१६	३२४९	४५२	३२८५	४८८	३३२१
३८१	३२१४	४१७	३२५०	४५३	३२८६	४८९	३३२२
३८२	३२१५	४१८	३२५१	४५४	३२८७	४९०	३३२३
३८३	३२१६	४१९	३२५२	४५५	३२८८	४९१	३३२४
३८४	३२१७	४२०	३२५३	४५६	३२८९	४९२	३३२५
३८५	३२१८	४२१	३२५४	४५७	३२९०	४९३	३३२६
३८६	३२१९	४२२	३२५५	४५८	३२९१	४९४	३३२७
३८७	३२२०	४२३	३२५६	४५९	३२९२	४९५	३३२८
३८८	३२२१	४२४	३२५७	४६०	३२९३	४९६	३३२९
३८९	३२२२	४२५	३२५८	४६१	३२९४	४९७	३३३०
३९०	३२२३	४२६	३२५९	४६२	३२९५	४९८	३३३१
३९१	३२२४	४२७	३२६०	४६३	३२९६	४९९	३३३२
३९२	३२२५	४२८	३२६१	४६४	३२९७	५००	३३३३
३९३	३२२६	४२९	३२६२	४६५	३२९८	५०१	३३३४
३९४	३२२७	४३०	३२६३	४६६	३२९९	५०२	३३३५
३९५	३२२८	४३१	३२६४	४६७	३३००	५०३	३३३६
३९६	३२२९	४३२	३२६५	४६८	३३०१	५०४	३३३७
३९७	३२३०	४३३	३२६६	४६९	३३०२	५०५	३३३८
३९८	३२३१	४३४	३२६७	४७०	३३०३	५०६	३३३९
३९९	३२३२	४३५	३२६८	४७१	३३०४	५०७	३३४०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
५०८	३३४१	५४३	३३७६	२९	३४१०	६३	३४४५
५०९	३३४२	५४४	३३७७	३०	३४११	६४	३४४६
५१०	३३४३	५४५	३३७८	३१	३४१२	६५	३४४७
५११	३३४४	५४६	३३७९	३२	३४१३	६६	३४४८
५१२	३३४५	५४७	३३८०	३३	३४१४	६७	३४४९
५१३	३३४६	५४८	३३८१	३४	३४१५	६८	३४५०
५१४	३३४७	**अष्टम उद्देशक**		३५	३४१६	६९	३४५१
५१५	३३४८	१	३३८२	३६	३४१७	७०	३४५२
५१६	३३४९	२	३३८३	३७	३४१८	७१	३४५३
५१७	३३५०	३	३३८४	३८	३४१९	७२	३४५४
५१८	३३५१	४	३३८५	३९	३४२०	७३	३४५५
५१९	३३५२	५	३३८६	४०	३४२१	७४	३४५६
५२०	३३५३	६	३३८७	४१	३४२२	७५	३४५७
५२१	३३५४	७	३३८८	४२	३४२३	७६	३४५८
५२२	३३५५	८	३३८९	X	३४२४	७७	३४५९
५२३	३३५६	९	३३९०	—	३४२५	७८	३४६०
५२४	३३५७	१०	३३९१	४४	३४२६	७९	३४६१
५२५	३३५८	११	३३९२	४५	३४२७	८०	३४६२
५२६	३३५९	१२	३३९३	४६	३४२८	८१	३४६३
५२७	३३६०	१३	३३९४	४७	३४२९	८२	३४६४
५२८	३३६१	१४	३३९५	४८	३४३०	८३	३४६५
५२९	३३६२	१५	३३९६	४९	३४३१	८४	३४६६
५३०	३३६३	१६	३३९७	५०	३४३२	८५	३४६७
५३१	३३६४	१७	३३९८	५१	३४३३	८६	३४६८
५३२	३३६५	१८	३३९९	५२	३४३४	८७	३४६९
५३३	३३६६	१९	३४००	५३	३४३५	८८	३४७०
५३४	३३६७	२०	३४०१	५४	३४३६	८९	३४७१
५३५	३३६८	२१	३४०२	५५	३४३७	९०	३४७२
५३६	३३६९	२२	३४०३	५६	३४३८	९१	३४७३
५३७	३३७०	२३	३४०४	५७	३४३९	९२	३४७४
५३८	३३७१	२४	३४०५	५८	३४४०	९३	३४७५
५३९	३३७२	२५	३४०६	५९	३४४१	९४	३४७६
५४०	३३७३	२६	३४०७	६०	३४४२	९५	३४७७
५४१	३३७४	२७	३४०८	६१	३४४३	९६	३४७८
५४२	३३७५	२८	३४०९	६२	३४४४	९६[1]	३४७९

१. मुद्रित टीका में ९६ की संख्या दो बार छपी है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
९७	३४८०	१३३	३५१६	१६९	३५५२	२०५	३५८८
९८	३४८१	१३४	३५१७	१७०	३५५३	२०६	३५८९
९९	३४८२	१३५	३५१८	१७१	३५५४	२०७	३५९०
१००	३४८३	१३६	३५१९	१७२	३५५५	२०८	३५९१
१०१	३४८४	१३७	३५२०	१७३	३५५६	२०९	३५९२
१०२	३४८५	—	३५२१	१७४	३५५७	२१०	३५९३
१०३	३४८६	१३९	३५२२	१७५	३५५८	२११	३५९४
१०४	३४८७	१४०	३५२३	१७६	३५५९	२१२	३५९५
१०५	३४८८	१४१	३५२४	१७७	३५६०	२१३	३५९६
१०६	३४८९	१४२	३५२५	१७८	३५६१	२१४	३५९७
१०७	३४९०	१४३	३५२६	१७९	३५६२	२१५	३५९८
१०८	३४९१	१४४	३५२७	१८०	३५६३	२१६	३५९९
१०९	३४९२	१४५	३५२८	१८१	३५६४	२१७	३६००
११०	३४९३	१४६	३५२९	१८२	३५६५	२१८	३६०१
१११	३४९४	१४७	३५३०	१८३	३५६६	२१९	३६०२
११२	३४९५	१४८	३५३१	१८४	३५६७	२२०	३६०३
११३	३४९६	१४९	३५३२	१८५	३५६८	२२१	३६०४
११४	३४९७	१५०	३५३३	१८६	३५६९	२२२	३६०५
११५	३४९८	१५१	३५३४	१८७	३५७०	२२३	३६०६
११६	३४९९	१५२	३५३५	१८८	३५७१	२२४	३६०७
११७	३५००	१५३	३५३६	१८९	३५७२	२२५	३६०८
११८	३५०१	१५४	३५३७	१९०	३५७३	२२६	३६०९
११९	३५०२	१५५	३५३८	१९१	३५७४	२२७	३६१०
१२०	३५०३	१५६	३५३९	१९२	३५७५	२२८	३६११
१२१	३५०४	१५७	३५४०	१९३	३५७६	२२९	३६१२
१२२	३५०५	१५८	३५४१	१९४	३५७७	२३०	३६१३
१२३	३५०६	१५९	३५४२	१९५	३५७८	२३१	३६१४
१२४	३५०७	१६०	३५४३	—	३५७९	२३२	३६१५
१२५	३५०८	१६१	३५४४	१९७	३५८०	२३३	३६१६
१२६	३५०९	१६२	३५४५	१९८	३५८१	२३४	३६१७
१२७	३५१०	१६३	३५४६	१९९	३५८२	२३५	३६१८
१२८	३५११	१६४	३५४७	२००	३५८३	२३६	३६१९
१२९	३५१२	१६५	३५४८	२०१	३५८४	२३७	३६२०
१३०	३५१३	१६६	३५४९	२०२	३५८५	२३८	३६२१
१३१	३५१४	१६७	३५५०	२०३	३५८६	२३९	३६२२
१३२	३५१५	१६८	३५५१	२०४	३५८७	२४०	३६२३

Jain Education International | For Private & Personal Use Only | www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
२४१	३६२४	२७७	३६६०	३१३	३६९६	२७	३७२९
२४२	३६२५	२७८	३६६१	३१४	३६९७	२८	३७३०
२४३	३६२६	२७९	३६६२	३१५	३६९८	२९	३७३१
२४४	३६२७	२८०	३६६३	३१६	३६९९	३०	३७३२
२४५	३६२८	२८१	३६६४	३१७	३७००	३१	३७३३
२४६	३६२९	२८२	३६६५	३१८	३७०१	३२	३७३४
२४७	३६३०	—	३६६६	३१९	३७०२	३३	३७३५
२४८	३६३१	२८४	३६६७			३४	३७३६
२४९	३६३२	२८५	३६६८	**नवम उद्देशक**		३५	३७३७
२५०	३६३३	२८६	३६६९			३६	३७३८
२५१	३६३४	२८७	३६७०	१	३७०३	३७	३७३९
२५२	३६३५	२८८	३६७१	२	३७०४	३८	३७४०
२५३	३६३६	२८९	३६७२	३	३७०५	३९	३७४१
२५४	३६३७	२९०	३६७३	४	३७०६	४०	३७४२
२५५	३६३८	२९१	३६७४	५	३७०७	४१	३७४३
२५६	३६३९	२९२	३६७५	६	३७०८	४२	३७४४
२५७	३६४०	२९३	३६७६	७	३७०९	४३	३७४५
२५८	३६४१	२९४	३६७७	८	३७१०	४४	३७४६
—	३६४२	२९५	३६७८	९	३७११	४५	३७४७
२६०	३६४३	२९६	३६७९	१०	३७१२	४६	३७४८
२६१	३६४४	२९७	३६८०	११	३७१३	४७	३७४९
२६२	३६४५	२९८	३६८१	१२	३७१४	४८	३७५०
२६३	३६४६	२९९	३६८२	१३	३७१५	४९	३७५१
२६४	३६४७	३००	३६८३	१४	३७१६	५०	३७५२
२६५	३६४८	३०१	३६८४	१५	३७१७	५१	३७५३
२६६	३६४९	३०२	३६८५	१६	३७१८	५२	३७५४
२६७	३६५०	३०३	३६८६	१७	३७१९	५३	३७५५
२६८	३६५१	३०४	३६८७	१८	३७२०	५४	३७५६
२६९	३६५२	३०५	३६८८	१९	३७२१	५५	३७५७
२७०	३६५३	३०६	३६८९	२०	३७२२	५६	३७५८
२७१	३६५४	३०७	३६९०	२१	३७२३	५७	३७५९
—	३६५५	३०८	३६९१	२२	३७२४	५८	३७६०
२७३	३६५६	३०९	३६९२	२३	३७२५	५९	३७६१
—	३६५७	३१०	३६९३	२४	३७२६	६०	३७६२
२७५	३६५८	३११	३६९४	२५	३७२७	६१	३७६३
२७६	३६५९	३१२	३६९५	२६	३७२८	६२	३७६४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
६३	३७६५	९९	३८०१	४	३८३४	४०	३८७०
६४	३७६६	१००	३८०२	५	३८३५	४१	३८७१
६५	३७६७	१०१	३८०३	६	३८३६	४२	३८७२
६६	३७६८	१०२	३८०४	७	३८३७	४३	३८७३
६७	३७६९	१०३	३८०५	८	३८३८	४४	३८७४
६८	३७७०	१०४	३८०६	९	३८३९	४५	३८७५
६९	३७७१	१०५	३८०७	१०	३८४०	४६	३८७६
७०	३७७२	१०६	३८०८	११	३८४१	४७	३८७७
७१	३७७३	१०७	३८०९	१२	३८४२	४८	३८७८
७२	३७७४	१०८	३८१०	१३	३८४३	४९	३८७९
७३	३७७५	१०९	३८११	१४	३८४४	५०	३८८०
७४	३७७६	११०	३८१२	१५	३८४५	५१	३८८१
७५	३७७७	१११	३८१३	१६	३८४६	५२	३८८२
७६	३७७८	११२	३८१४	१७	३८४७	५३	३८८३
७७	३७७९	११३	३८१५	१८	३८४८	५४	३८८४
७८	३७८०	११४	३८१६	१९	३८४९	५५	३८८५
७९	३७८१	११५	३८१७	२०	३८५०	५६	३८८६
८०	३७८२	११६	३८१८	२१	३८५१	५७	३८८७
८१	३७८३	११७	३८१९	२२	३८५२	५८	३८८८
८२	३७८४	११८	३८२०	२३	३८५३	५९	३८८९
८३	३७८५	११९	३८२१	२४	३८५४	६०	३८९०
८४	३७८६	१२०	३८२२	२५	३८५५	६१	३८९१
८५	३७८७	१२१	३८२३	२६	३८५६	६२	३८९२
८६	३७८८	१२२	३८२४	२७	३८५७	६३	३८९३
८७	३७८९	१२३	३८२५	२८	३८५८	६४	३८९४
८८	३७९०	१२४	३८२६	२९	३८५९	६५	३८९५
८९	३७९१	१२५	३८२७	३०	३८६०	६६	३८९६
९०	३७९२	१२६	३८२८	३१	३८६१	६७	३८९७
९१	३७९३	१२७	३८२९	३२	३८६२	६८	३८९८
९२	३७९४	१२८	३८३०	३३	३८६३	६९	३८९९
९३	३७९५			३४	३८६४	७०	३९००
९४	३७९६	**दशम उद्देशक**		३५	३८६५	७१	३९०१
९५	३७९७			३६	३८६६	७२	३९०२
९६	३७९८	१	३८३१	३७	३८६७	७३	३९०३
९७	३७९९	२	३८३२	३८	३८६८	७४	३९०४
९८	३८००	३	३८३३	३९	३८६९	७५	३९०५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
७६	३६०६	११२	३६४२	१४८	३६७६	१८४	४०१२
७७	३६०७	११३	३६४३	१४६	३६७७	१८५	४०१३
७८	३६०८	११४	३६४४	१५०	३६७८	१८६	४०१४
७६	३६०६	११५	३६४५	१५१	३६७६	१८७	४०१५
८०	३६१०	११६	३६४६	१५२	३६८०	१८८	४०१६
८१	३६११	११७	३६४७	१५३	३६८१	१८६	४०१७
८२	३६१२	११८	३६४८	१५४	३६८२	१६०	४०१८
८३	३६१३	११६	३६४६	१५५	३६८३	१६१	४०१६
८४	३६१४	१२०	३६५०	१५६	३६८४	१६२	४०२०
८५	३६१५	१२१	३६५१	१५७	३६८५	१६३	४०२१
८६	३६१६	१२२	३६५२	१५८	३६८६	१६४	४०२२
८७	३६१७	१२३	३६५३	१५६	३६८७	१६५	४०२३
८८	३६१८	१२४	३६५४	१६०	३६८८	१६६	४०२४
८६	३६१६	१२५	३६५५	१६१	३६८६	१६७	४०२५
६०	३६२०	१२६	३६५६	१६२	३६६०	१६८	४०२६
६१	३६२१	१२७	३६५७	१६३	३६६१	१६६	४०२७
६२	३६२२	१२८	३६५८	१६४	३६६२	२००	४०२८
६३	३६२३	१२६	३६५६	१६५	३६६३	२०१	४०२६
६४	३६२४	१३०	३६६०	१६६	३६६४	२०२	४०३०
६५	३६२५	१३१	३६६१	१६७	३६६५	२०३	४०३१
६६	३६२६	१३२	३६६२	१६८	३६६६	२०४	४०३२
६७	३६२७	१३३	३६६३	१६६	३६६७	२०५	४०३३
६८	३६२८	१३४	३६६४	१७०	३६६८	२०६	४०३४
६६	३६२६	१३५	३६६५	१७१	३६६६	२०७	४०३५
१००	३६३०	१३६	३६६६	१७२	४०००	२०८	४०३६
१०१	३६३१	१३७	३६६७	१७३	४००१	२०६	४०३७
१०२	३६३२	१३८	३६६८	१७४	४००२	२१०	४०३८
१०३	३६३३	१३६	३६६६	१७५	४००३	२११	४०३६
१०४	३६३४	१४०	३६७०	१७६	४००४	२१२	४०४०
१०५	३६३५	१४१	३६७१	१७७	४००५	२१३	४०४१
१०६	३६३६	१४२	३६७१/१	१७८	४००६	२१४	४०४२
१०७	३६३७	१४३	३६७१/२	१७६	४००७	२१५	४०४३
१०८	३६३८	१४४	३६७२	१८०	४००८	२१६	४०४४
१०६	३६३६	१४५	३६७३	१८१	४००६	२१७	४०४५
११०	३६४०	१४६	३६७४	१८२	४०१०	२१८	४०४६
१११	३६४१	१४७	३६७५	१८३	४०११	२१६	४०४७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
२२०	४०४८	२५६	४०८४	२९२	४१२०	३२८	४१५६
२२१	४०४९	२५७	४०८५	२९३	४१२१	३२९	४१५७
२२२	४०५०	२५८	४०८६	२९४	४१२२	३३०	४१५८
२२३	४०५१	२५९	४०८७	२९५	४१२३	३३१	४१५९
२२४	४०५२	२६०	४०८८	२९६	४१२४	३३२	४१६०
२२५	४०५३	२६१	४०८९	२९७	४१२५	३३३	४१६१
२२६	४०५४	२६२	४०९०	२९८	४१२६	३३४	४१६२
२२७	४०५५	२६३	४०९१	२९९	४१२७	३३५	४१६३
२२८	४०५६	२६४	४०९२	३००	४१२८	३३६	४१३४
२२९	४०५७	२६५	४०९३	३०१	४१२९	३३७	४१६५
२३०	४०५८	२६६	४०९४	३०२	४१३०	३३८	४१६६
२३१	४०५९	२६७	४०९५	३०३	४१३१	३३९	४१६७
२३२	४०६०	२६८	४०९६	३०४	४१३२	३४०	४१६८
२३३	४०६१	२६९	४०९७	३०५	४१३३	३४१	४१६९
२३४	४०६२	२७०	४०९८	३०६	४१३४	३४२	४१७०
२३५	४०६३	२७१	४०९९	३०७	४१३५	३४३	४१७१
२३६	४०६४	२७२	४१००	३०८	४१३६	३४४	४१७२
२३७	४०६५	२७३	४१०१	३०९	४१३७	३४५	४१७३
२३८	४०६६	२७४	४१०२	३१०	४१३८	३४६	४१७४
२३९	४०६७	२७५	४१०३	३११	४१३९	३४७	४१७५
२४०	४०६८	२७६	४१०४	३१२	४१४०	३४८	४१७६
२४१	४०६९	२७७	४१०५	३१३	४१४१	३४९	४१७७
२४२	४०७०	२७८	४१०६	३१४	४१४२	३५०	४१७८
२४३	४०७१	२७९	४१०७	३१५	४१४३	३५१	४१७९
२४४	४०७२	२८०	४१०८	३१६	४१४४	३५२	४१८०
२४५	४०७३	२८१	४१०९	३१७	४१४५	३५३	४१८१
२४६	४०७४	२८२	४११०	३१८	४१४६	३५४	४१८२
२४७	४०७५	२८३	४१११	३१९	४१४७	३५५	४१८३
२४८	४०७६	२८४	४११२	३२०	४१४८	३५६	४१८४
२४९	४०७७	२८५	४११३	३२१	४१४९	३५७	४१८५
२५०	४०७८	२८६	४११४	३२२	४१५०	३५८	४१८६
२५१	४०७९	२८७	४११५	३२३	४१५१	३५९	४१८७
२५२	४०८०	२८८	४११६	३२४	४१५२	३६०	४१८८
२५३	४०८१	२८९	४११७	३२५	४१५३	३६१	४१८९
२५४	४०८२	२९०	४११८	३२६	४१५४	३६२	४१९०
२५५	४०८३	२९१	४११९	३२७	४१५५	३६३	४१९१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
३६४	४१९२	३९९	४२२७	४३४	४२६२	४६९	४२९७
३६५	४१९३	४००	४२२८	४३५	४२६३	४७०	४२९८
३६६	४१९४	४०१	४२२९	४२६[१]	४२६४	४७१	४२९९
३६७	४१९५	४०२	४२३०	४३७	४२६५	४७२	४३००
३६८	४१९६	४०३	४२३१	४३८	४२६६	४७३	४३०१
३६९	४१९७	४०४	४२३२	४३९	४२६७	४७४	४३०२
३७०	४१९८	४०५	४२३३	४४०	४२६८	४७५	४३०३
३७१	४१९९	४०६	४२३४	४४१	४२६९	४७६	४३०४
३७२	४२००	४०७	४२३५	४४२	४२७०	४७७	४३०५
३७३	४२०१	४०८	४२३६	४४३	४२७१	४७८	४३०६
३७४	४२०२	४०९	४२३७	४४४	४२७२	४७९	४३०७
३७५	४२०३	४१०	४२३८	४४५	४२७३	४८०	४३०८
३७६	४२०४	४११	४२३९	४४६	४२७४	४८१	४३०९
३७७	४२०५	४१२	४२४०	४४७	४२७५	४८२	४३१०
३७८	४२०६	४१३	४२४१	४४८	४२७६	४८३	४३११
३७९	४२०७	४१४	४२४२	४४९	४२७७	४८४	४३१२
३८०	४२०८	४१५	४२४३	४५०	४२७८	४८५	४३१३
३८१	४२०९	४१६	४२४४	४५१	४२७९	४८६	४३१४
३८२	४२१०	४१७	४२४५	४५२	४२८०	४८७	४३१५
३८३	४२११	४१८	४२४६	४५३	४२८१	४८८	४३१६
३८४	४२१२	४१९	४२४७	४५४	४२८२	४८९	४३१७
३८५	४२१३	४२०	४२४८	४५५	४२८३	४९०	४३१८
३८६	४२१४	४२१	४२४९	४५६	४२८४	४९१	४३१९
३८७	४२१५	४२२	४२५०	४५७	४२८५	४९२	४३२०
३८८	४२१६	४२३	४२५१	४५८	४२८६	४९३	४३२१
३८९	४२१७	४२४	४२५२	४५९	४२८७	४९४	४३२२
३९०	४२१८	४२५	४२५३	४६०	४२८८	४९५	४३२३
३९१	४२१९	४२६	४२५४	४६१	४२८९	४९६	४३२४
३९२	४२२०	४२७	४२५५	४६२	४२९०	४९७	४३२५
३९३	४२२१	४२८	४२५६	४६३	४२९१	४९८	४३२६
३९४	४२२२	४२९	४२५७	४६४	४२९२	४९९	४३२७
३९५	४२२३	४३०	४२५८	४६५	४२९३	५००	४३२८
३९६	४२२४	४३१	४२५९	४६६	४२९४	५०१	४३२९
३९७	४२२५	४३२	४२६०	४६७	४२९५	५०२	४३३०
३९८	४२२६	४३३	४२६१	४६८	४२९६	५०३	४३३१

१. मुद्रित टीका में ४३६ के स्थान पर ४२६ का अंक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
५०४	४३३२	५४०	४३६८	५७६	४४०४	६१२	४४४०
५०५	४३३३	५४१	४३६९	५७७	४४०५	६१३	४४४१
५०६	४३३४	५४२	४३७०	५७८	४४०६	६१४	४४४२
५०७	४३३५	५४३	४३७१	५७९	४४०७	६१५	४४४३
५०८	४३३६	५४४	४३७२	५८०	४४०८	६१६	४४४४
५०९	४३३७	५४५	४३७३	५८१	४४०९	६१७	४४४५
५१०	४३३८	५४६	४३७४	५८२	४४१०	६१८	४४४६
५११	४३३९	५४७	४३७५	५८३	४४११	६१९	४४४७
५१२	४३४०	५४८	४३७६	५८४	४४१२	६२०	४४४८
५१३	४३४१	५४९	४३७७	५८५	४४१३	६२१	४४४९
५१४	४३४२	५५०	४३७८	५८६	४४१४	६२२	४४५०
५१५	४३४३	५५१	४३७९	५८७	४४१५	६२३	४४५१
५१६	४३४४	५५२	४३८०	५८८	४४१६	६२४	४४५२
५१७	४३४५	५५३	४३८१	५८९	४४१७	६२५	४४५३
५१८	४३४६	५५४	४३८२	५९०	४४१८	६२६	४४५४
५१९	४३४७	५५५	४३८३	५९१	४४१९	६२७	४४५५
५२०	४३४८	५५६	४३८४	५९२	४४२०	६२८	४४५६
५२१	४३४९	५५७	४३८५	५९३	४४२१	६२९	४४५७
५२२	४३५०	५५८	४३८६	५९४	४४२२	६३०	४४५८
५२३	४३५१	५५९	४३८७	५९५	४४२३	६३१	४४५९
५२४	४३५२	५६०	४३८८	५९६	४४२४	६३२	४४६०
५२५	४३५३	५६१	४३८९	५९७	४४२५	६३३	४४६१
५२६	४३५४	५६२	४३९०	५९८	४४२६	६३४	४४६२
५२७	४३५५	५६३	४३९१	५९९	४४२७	६३५	४४६३
५२८	४३५६	५६४	४३९२	६००	४४२८	६३६	४४६४
५२९	४३५७	५६५	४३९३	६०१	४४२९	६३७	४४६५
५३०	४३५८	५६६	४३९४	६०२	४४३०	६३८	४४६६
५३१	४३५९	५६७	४३९५	६०३	४४३१	६३९	४४६७
५३२	४३६०	५६८	४३९६	६०४	४४३२	६४०	४४६८
५३३	४३६१	५६९	४३९७	६०५	४४३३	६४१	४४६९
५३४	४३६२	५७०	४३९८	६०६	४४३४	६४२	४४७०
५३५	४३६३	५७१	४३९९	६०७	४४३५	६४३	४४७१
५३६	४३६४	५७२	४४००	६०८	४४३६	६४४	४४७२
५३७	४३६५	५७३	४४०१	६०९	४४३७	६४५	४४७३
५३८	४३६६	५७४	४४०२	६१०	४४३८	६४६	४४७४
५३९	४३६७	५७५	४४०३	६११	४४३९	६४७	४४७५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
६४८	४४७६	६८३	४५११	७१८	४५४६	२८	४५८०
६४९	४४७७	६८४	४५१२	७१९	४५४७	२९	४५८१
६५०	४४७८	६८५	४५१३	७२०	४५४८	३०	४५८२
६५१	४४७९	६८६	४५१४	७२१	४५४९	३१	४५८३
६५२	४४८०	६८७	४५१५	७२२	४५५०	३२	४५८४
६५३	४४८१	६८८	४५१६	७२३	४५५१	३३	४५८५
६५४	४४८२	६८९	४५१७	७२४	४५५२	३४	४५८६
६५५	४४८३	६९०	४५१८			३५	४५८७
६५६	४४८४	६९१	४५१९	१★	४५५३	३६	४५८८
६५७	४४८५	६९२	४५२०	२	४५५४	३७	४५८९
६५८	४४८६	६९३	४५२१	३	४५५५	३८	४५९०
६५९	४४८७	६९४	४५२२	४	४५५६	३९	४५९१
६६०	४४८८	६९५	४५२३	५	४५५७	४०	४५९२
६६१	४४८९	६९६	४५२४	६	४५५८	४१	४५९३
६६२	४४९०	६९७	४५२५	७	४५५९	४२	४५९४
६६३	४४९१	६९८	४५२६	८	४५६०	४३	४५९५
६६४	४४९२	६९९	४५२७	९	४५६१	४४	४५९६
६६५	४४९३	७००	४५२८	१०	४५६२	४५	४५९७
६६६	४४९४	७०१	४५२९	११	४५६३	४६	४५९८
६६७	४४९५	७०२	४५३०	१२	४५६४	४७	४५९९
६६८	४४९६	७०३	४५३१	१३	४५६५	४८	४६००
६६९	४४९७	७०४	४५३२	१४	४५६६	४९	४६०१
६७०	४४९८	७०५	४५३३	१५	४५६७	५०	४६०२
६७१	४४९९	७०६	४५३४	१६	४५६८	५१	४६०३
६७२	४५००	७०७	४५३५	१७	४५६९	५२	४६०४
६७३	४५०१	७०८	४५३६	१८	४५७०	५३	४६०५
६७४	४५०२	७०९	४५३७	१९	४५७१	५४	४६०६
६७५	४५०३	७१०	४५३८	२०	४५७२	५५	४६०७
६७६	४५०४	७११	४५३९	२१	४५७३	५६	४६०८
६७७	४५०५	७१२	४५४०	२२	४५७४	५७	४६०९
६७८	४५०६	७१३	४५४१	२३	४५७५	५८	४६१०
६७९	४५०७	७१४	४५४२	२४	४५७६	५९	४६११
६८०	४५०८	७१५	४५४३	२५	४५७७	६०	४६१२
६८१	४५०९	७१६	४५४४	२६	४५७८	६१	४६१३
६८२	४५१०	७१७	४५४५	२७	४५७९	६२	४६१४

★ यहाँ से मुद्रित पुस्तक में पुनः १ से संख्या प्रारम्भ हो रही है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा	प्र.गाथा	सं.गाथा
६३	४६१५	८४	४६३६	१०५	४६५७	१२६	४६७८
६४	४६१६	८५	४६३७	१०६	४६५८	१२७	४६७९
६५	४६१७	८६	४६३८	१०७	४६५९	१२८	४६८०
६६	४६१८	८७	४६३९	१०८	४६६०	१२९	४६८१
६७	४६१९	८८	४६४०	१०९	४६६१	१३०	४६८२
६८	४६२०	८९	४६४१	११०	४६६२	१३१	४६८३
६९	४६२१	९०	४६४२	१११	४६६३	उ.गा.	४६८४
७०	४६२२	९१	४६४३	११२	४६६४	१३२	४६८५
७१	४६२३	९२	४६४४	११३	४६६५	१३३	४६८६
७२	४६२४	९३	४६४५	११४	४६६६	१३४	४६८७
७३	४६२५	९४	४६४६	११५	४६६७	१३५	४६८८
७४	४६२६	९५	४६४७	११६	४६६८	१३६	४६८९
७५	४६२७	९६	४६४८	११७	४६६९	१३७	४६९०
७६	४६२८	९७	४६४९	११८	४६७०	१३८	४६९१
७७	४६२९	९८	४६५०	११९	४६७१	१३९	x
७८	४६३०	९९	४६५१	१२०	४६७२	१४०	४६९२
७९	४६३१	१००	४६५२	१२१	४६७३	१४१	४६९३
८०	४६३२	१०१	४६५३	१२२	४६७४	१४२	४६९४
८१	४६३३	१०२	४६५४	१२३	४६७५		
८२	४६३४	१०३	४६५५	१२४	४६७६		
८३	४६३५	१०४	४६५६	१२५	४६७७		

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकार्थक

जिन शब्दों का एक ही अभिधेय हो , वे एकार्थक कहलाते हैं।[1] इनके लिए 'अभिवचन' [2] 'निरुक्ति' और 'निर्वचन'[3] शब्दों का उल्लेख भी मिलता है। किसी भी विषय की व्याख्या में एकार्थक शब्दों के प्रयोग का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है।[4] बृहत्कल्पभाष्य में एकार्थकों की प्रयोजनीयता इस प्रकार बतलाई गई है—

बंधाणुलोमया खलु, सुत्तम्मि य लाघवं असम्मोहो।
सत्थगुणदीवणा वि य, एगट्ठगुणा हवंतेए।।[5]

छंद की व्यवस्थापना, सूत्र का लाघव, असम्मोह तथा शास्त्रीय गुणों का दीपन—ये एकार्थक के गुण हैं। इसके अतिरिक्त एकार्थवाची शब्दों के प्रयोग से विद्यार्थी का भाषा एवं कोशविषयक ज्ञान सुदृढ़ होता है। विभिन्न भाषाभाषी शिष्यों के अनुग्रह के लिए भी ग्रंथकार एकार्थकों का प्रयोग करते हैं, जिससे प्रत्येक देश का विद्यार्थी उस शब्द का अर्थ ग्रहण कर सके।[6] किसी भी बात का प्रकर्ष एवं महत्त्व स्थापित करने के लिए भी एकार्थक शब्दों का प्रयोग होता था। भाव-प्रकर्ष हेतु प्रसंगवश एकार्थकों का प्रयोग पुनरुक्तिदोष नहीं माना जाता था।[7]

अंतिग—समीप। अंतिगमज्झासमासन्नं समीवं चेव आहितं। (गा. ४५६५ टी.प.१००)
अचियत्त—अप्रिय। अचियत्तं ति वा अपियत्तं ति वा एगट्ठं। (गा. १२३८ टी.प.५६)
अणुसट्ठि—स्तुति। अणुसट्ठि थुतित्ति एगट्ठा। (गा.५६३)
आचारप्रकल्प—निशीथ। आचारप्रकल्पो नाम निशीथापरपर्यायम्। (गा. ४६५२ टी.प.१०७)
आभोगण—आसेवन। आभोगणं ति वा मग्गणं ति वा झोसणं ति वा एगट्ठं। (गा. १०६० टी.प.२४)
आरोह—विशालता। आरोहो दीर्घत्वं परिणाहो विष्कंभो विशालता (एकार्थम्)। (गा. ४०६२ टी.प.३८)
इच्छा—इच्छा। इच्छाछन्दः इत्येकार्थः। (गा. ८६० टी.प.११२)
उउमास—ऋतुमास। उउमासो कम्ममासो सावणमासो। (गा. १६८ टी.प.७)
उक्कसण—उत्कर्ष। उक्कसण माणणं ति य एगट्ठं ठावणा चेव। (गा. १६६२)
उद्दिष्ट—ईप्सित। उद्दिष्टा ईप्सिता इत्यनर्थान्तरम्। (गा. ३६१ टी.प.६४)
उद्धारणा—धारणाव्यवहार। उद्धारणा विधारण संधारण संपधारणा[8]। (गा. ४५०३)
उपश्रा—द्वेष। उपश्रा द्वेष इत्यनर्थान्तरम्। (गा. १५ टी.प.१०)
उववात—आज्ञा। उववातो निद्देसो आणा विणओ य होंति एगट्ठा। (गा. २०८१)

---

१. स्थाटी प ४७२।
२ भ. २०/२५।
३. आवहाटी पृ. २४२।
४. अनुद्वामटी प. ६ : निक्खेवेगट्ठ-निरुत्त विही पवत्ती व केण वा कस्स। तद्दार-भेय-लक्खण, तदरिहपरिसा य सुत्तत्था।।
५. बृभा १७३।
६. जंबूटी प ३३ : नानादेशविनेयानुग्रहार्थं एकार्थिकाः।
७. • भटी प १४ : समानार्थाः प्रकर्षवृत्तिप्रतिपादनाय स्तुतिमुखेन ग्रंथकृतोक्ताः।
• भटी प ११६ : एकार्थशब्दोच्चारणं च क्रियमाणं न दुष्टम्।
८. धारणायाश्चत्वार्येकार्थिकानि गा. ४५०३ टी प ८८ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कज्ज—कार्य। कज्जं ति वा कारणं ति वा एगट्ठं। (गा. २७०६ टी.प. ४७)

कम्म—कर्म। कम्मं ति वा खुहं ति वा कलुसं ति वा वज्जं ति वा वेरं ति वा पंको त्ति वा मलो त्ति वा एगट्ठिया। (गा. १६४ टी.प. ६)

कल्प—आचार। कल्पो व्यवहार आचार इत्यनर्थान्तरम्। (गा. १५२ टी.प. ५१)

काल—समय। कालो त्ति व समयो त्ति य अद्धाकप्पो त्ति एगट्ठं। (गा. २०५७)

ख—आकाश। खं व्योम आकाशमिति (एकार्थम्)। (गा. १५५ टी.प. ५२)

खोडभंग—राजकुल में देय द्रव्य। खोडभंगो त्ति वा उक्कोडभंगो त्ति वा अक्खोडभंगो त्ति वा एगट्ठं। (गा. २१२ टी.प. १०)

गाहा—गृह। गाहा इति घरंमिति गिहमिति वा एते त्रयोऽप्येकार्थाः। (गा. ३३८३ टी.प. १)

घात—विनाश। घात विणासो य एगट्ठा। (गा. ४१५०)

चार—गति। चारश्चरणं गमनमित्येकार्थः। (गा. ८६८ टी.प. ११४)

जस—यश। जसो त्ति वा संजमो त्ति वा वण्णो त्ति वा एगट्ठं। (गा. २७५० टी.प. ५५)

जितकरण—विनीत। जितकरण विणीय एगट्ठा। (गा. १४४०)

जीत—जीत व्यवहार। बहुजणमाइण्णं पुण जीतं उचियं ति एगट्ठं। (गा. ६)

जोग—योग। जोगो विरियं थामो, उच्छाह परक्कमो तहा चेट्ठा।
सत्ती सामत्थं चिय, जोगस्स हवंति पज्जाया।। (गा. ५६ टी.प. २२)

ज्ञान—ज्ञान। ज्ञानमागममित्येकार्थम्। (गा. ४०३६ टी.प. ३१)

झोस—समीकरण। झोसं ति वा समकरणं ति वा एगट्ठं। (गा. ३६६ टी.प. ६७)

ठाण—ठाणं निसीहिय त्ति य एगट्ठं। (गा. ६३०)

थेरभूमि—स्थविरभूमि। थेरभूमि त्ति वा थेरठाणं ति वा थेरकालो त्ति वा एगट्ठं। (गा. ४५६७ टी.प. १००)

धम्म—स्वभाव। धम्म सभावो त्ति एगट्ठं। (गा. ५५७)

धर्म—धर्म। धम्म सभावो सम्मद्दंसणयं।
धर्मः स्वभावः सम्यग्दर्शनमित्येकार्थम्। (गा. ४१४५ टी.प. ४४)

ध्रुव—ध्रुव। ध्रुवं नियतं नैत्यिकमिति त्रयोऽप्येकार्थाः। (गा. २०८२ टी.प. ६८)

नात—ज्ञात। नातं आगमियं ति य एगट्ठं। (गा. ४०३६)

निकाच—निमंत्रण। निकाचो निकाचनं च्छंदनं निमंत्रणमित्येकार्थाः। (गा. २३५१ टी.प. १२)

निग्गमण—निर्गमन। निग्गमणमवक्कमणं निस्सरण पलायणं च एगट्ठं। (गा. ६०७)

नियय—निश्चित। नियतं व निच्छियं च एगट्ठा। (गा. ४१५०)

निर्द्धर्म्म—आलसी, स्वच्छंद। निर्द्धर्म्म इति वा अलस इति वा अनुबद्धवैर इति वा स्वच्छंदमतिरिति वा (एकार्थम्)। (गा. २४६ टी.प. २२)

निस्सा—आलंबन। निस्सोवसंपय त्ति य एगट्ठं। (गा. १८६०)

पज्जाहार—परिधि। पज्जाहारो त्ति वा परिरओ त्ति वा एगट्ठं। (गा. २११ टी.प. १०)

पम्हुट्ठ—विस्मरण। पम्हुट्ठं ति वा परिठवियं ति वा एगट्ठं। (गा. ३५३६ टी.प. २६)

परिहार—एक प्रकार का तप। परिहार तवो त्ति एगट्ठं। (गा. २४४६)

• स्थान। परिहार एव स्थानं द्वयोरप्येकार्थत्वात्। (गा. १८५ टी.प. २)

पलिउंचण—माया। पलिउंचणं ति य माय त्ति य नियडि त्ति य एगट्ठा। (गा. ३६ टी.प. ४७)

पास—बंधन। पासो त्ति बंधणं ति य एगट्ठं। (गा. ८५५)

पियति—जानता है। पियति त्ति वा मिणति त्ति व दो वि अविरुद्धा। (गा. २७०३)

प्रतिगमन—व्रतभंग। प्रतिगमनं प्रतिभञ्जनं व्रतमोक्षम् (एकार्थम्)। (गा. ४२५५ टी.प. ५८)

भविय—भविष्य में होने वाला। भविय त्ति भव्यो भावीत्यनर्थान्तरम्। (गा. १८७ टी.प. ४)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भिक्षु—साधु। भिक्षुः यतिः तपस्वी भवान्तो इति एकार्थिकानि। (गा. १६४ टी.प.६)
मेढि—आधार। मेढिरिति वा आधार इति वा चक्षुरिति वा एकार्थः। (गा. २५८२ टी.प.२५)
मेरा—मर्यादा। मेरा मर्यादा सामाचारी (इति एकार्थम्)। (गा. ६२४ टी.प.५२)
राशि—राशिगणित। राशिर्गच्छ इत्यनर्थान्तरम्। (गा. ३६५ टी.प.६५)
लंचा—रिश्वत। लंचा उत्कोच इत्यनर्थान्तरम्। (गा. १३ टी.प.८)
लोट्टण—अवधावन, लुटना। लोट्टण-लुठण-पलोट्टण-ओहाणं चेव एगट्ठं। (गा. ६०७)
वइर—वज्र। वइरं वज्रं ति एगट्ठं। (गा. ३८३३ टी.प.२)
वर—श्रेष्ठ। वरं प्रधानमित्यनर्थान्तरम्। (गा. ४२५२)
ववण—वपन। ववणं ति रोवणं ति य पकिरण परिसाडणा य एगट्ठं। (गा. ४)
ववहार—प्रायश्चित्त। ववहारो आलोयण, सोही पच्छित्तमेव एगट्ठा। (गा. १०६४)
वाघात—व्याघात। वाघात विणासो य एगट्ठा। (गा. ४१५०)
विप्फालण—पूछना। विप्फालण त्ति पुच्छणत्ति वा एगट्ठं। (गा. २४८ टी.प.२१)
व्युत्सर्ग—कायोत्सर्ग। व्युत्सर्ग कायोत्सर्ग इत्यनर्थान्तरम्। (गा. ११० टी.प.३६)
शंकित—शंकित। शंकितमिति वा भिन्नमिति वा कलुषितमिति वा एकार्थम्। (गा. ४०५० टी.प.३३)
सहति—सहन करना। सहति खमइ तितिक्खेइ अहियासेइ त्ति चत्वार्यप्येकार्थिकानि। (गा. १० टी.प.४)
साला—दुकान। साल त्ति आवण त्ति य पणियगिहं चेव एगट्ठं। (गा. ३७२७)
साहारण—साधारण, सामान्य। साहारण सामण्णं अविभत्तमच्छिन्न-संथडेगट्ठं। (गा. ३७२७)
सुत्त—भाव व्यवहार। सुत्ते अत्थे जीते, कप्पे मग्गे तधेव नाए य।
तत्तो य इच्छियव्वे, आयरियव्वे य ववहारो।। (गा. ७)
सोहि—शोधि। सोहि त्ति व धम्मो त्ति व एगट्ठं। (गा. ४५७७)
स्थविर—वृद्ध। स्थविरवृद्धशब्दयोरेकार्थत्वात्। (गा. ३४७६ टी.प.१८)
हार—हरण करना। हारो त्ति य हरणं ति य एगट्ठं हीरते व त्ति। (गा. ४)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निरुक्त

अंतेवासी—अंते य वसति जम्हा, अंतेवासी ततो होति। (गा. ४५६६)

अकुच—न कुचतीत्यकुचः। (गा. ८ टी.प.१६)

अत्याबाध—अतिशयेन आबाधा यस्य सोऽत्याबाधः। (गा. १४५६ टी.प.२२)

अनन्यवृत्ति—न विद्यते अन्या भिक्षामात्रात् व्यतिरिक्ता वृत्तिर्येषां ते अनन्यवृत्तयः। (गा. १८६ टी.प.४)

अनिमिष—न विद्यते निमिषो येषां ते अनिमिषाः। (गा. १२७८ टी.प.६८)

अनुग्रह—अनुगृह्यते इति अनुग्रहः। (गा. २१२ टी.प.१०)

अनुतापी—अनु – पश्चात् हा दुष्ठुकृतं हा दुष्ठुकारितमित्यादिरूपेण तपति सन्तापमनुभवतीत्येवंशीलोऽनुतापी। (गा. ८४८ टी.प.११०)

अन्यतरक—एकस्मिन् काले आत्मपरयोरन्यमन्यतरं तारयन्तीति अन्यतरकाः। (गा. ४७६ टी.प.३)

अपरिग्गहा—न विद्यते परिग्रहः कस्यापि यस्याः सा अपरिग्रहा। (गा. ११७५ टी.प.४६)

अपलापी—अपलपति गूहतीत्येवंशीलोऽपलापी। (गा. ५१६ टी.प.१८)

अपव्रीडक—लज्जां मोचयतीत्यपव्रीडकः। (गा. ५२० टी.प.१६)

अपायदर्शी—इहलोकापायान् परलोकापायांश्च दर्शयतीत्येवंशीलोऽपायदर्शी। (गा. ५२० टी.प.१८)

अभिधार—अभिधारयत्यभिधारः। (गा. ३६८१ टी.प.२४)

अभिनिप्रजा—अभि प्रत्येकं नियता विविक्ता प्रजा चुल्ली अभिनिप्रजा। (गा. ३७१५ टी.प.४)

अभिनिर्वगडा—अभि प्रत्येकं नियता वगडा परिक्षेपो यस्यां सा अभिनिव्वगडा। (गा. २७२६ टी.प.५०)

अभिनिषद्या—अभिरात्रिमभिव्याप्य स्वाध्यायनिमित्तमागता निषीदन्त्यस्यामित्यभिनिषद्या। (गा. ६२४ टी.प.५२)

अभ्यासवर्ती—गुरोरभ्यासे समीपे वर्तते इत्येवंशीलोऽभ्यासवर्ती। (गा. ७८ टी.प.३१)

अर्थजात—• अत्थेण जस्स कज्जं, संजातं एस अट्ठजातो तु। (गा. ११७३)

• अर्थेन अर्थितया जातं कार्यं यस्य सोऽर्थजातः। अर्थः प्रयोजनं जातोऽस्येत्यर्थजातः। (गा. ११७३ टी.प.४६)

अवद्यभीरु—अवद्यं – पापं तस्माद् भीरु अवद्यभीरुः। (गा. ३१७६ टी.प.६०)

अवसन्न—सामाचार्यासेवने अवसीदति स्मेत्यवसन्नः। (गा. ८३४ टी.प.१०७)

आचरित—आचर्यते स्म बृहत्पुरुषैरित्याचरितम्। (गा. ७ टी.प.६)

आत्मछंद—आत्मनैव छंदोऽभिप्रायो विद्यते येषां ते आत्मछंदसः। (गा. ३६१८ टी.प.४४)

आत्मतर—आत्मानं केवलं तारयन्तीत्यात्मतराः। (गा. ४७६ टी.प.३)

आदेश—आदिशतीत्यादेशः, आदिशितो वा आदेशः, आदेश्यते सत्कारपुरस्कारमाकार्यत इत्यादेशः। (गा. ३७०४ टी.प.१)

आधार—आ सामस्त्येन धारणमाधारः। (गा. ५२० टी.प.१८)

आधारवान्—• आ सामस्त्येन आलोचितापराधानां धारणमाधारः सोऽस्यास्तीत्याधारवान्।

• सर्वमवधारयति'स आधारवान्। (गा. ५२० टी.प.१८)

आप्त—• नाणमादीणि अत्ताणि, जेण अत्तो उ सो भवे।

• ज्ञानादिभिराप्यते स्म आप्तः। (गा. ४०६३ टी.प.३५)

आभिग्रहिक—अभिगृह्णातीत्याभिग्रहिकः। (गा. ३८१८ टी.प.१६)

आरोपणा—आरोप्यते इति आरोपणा। (गा. ३६ टी.प.१५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आर्त्त—आ सर्वतः परिभ्रमेण रुतानि गतानि यत्र यो वा स आर्त्तः। (गा. २०६७ टी.प.६४)
आलीण—ज्ञानादिषु आ समन्ताद् लीना आलीनाः। (गा. ४५१४ टी.प.६०)
आवेश—• आविशतीत्यावेशः।
• आवेशनं नाम यस्मिन् स्थाने प्रविष्टेन सागारिकस्यायासो स आदेश आवेशो वा। (गा. ३७०४ टी.प.१)
आश्वास—आश्वासयतीति आश्वासः। (गा. १६८१ टी.प.६७)
आस्फालिता—आ समन्तात् स्फारं प्रापिता आस्फालिता। (गा. ७५२ टी.प.८३)
इप्सितव्य—मुमुक्षुभिरिप्स्यते प्राप्तुमिष्यते इप्सितव्यः। (गा. ७ टी.प.६)
उत्त्रप्य—उत्प्राबल्येन त्रप्यते लज्यते येन तद् उत्त्रप्यं। (गा. ४०६३ टी.प.३८)
उत्पत्ति—उत्पद्यते यस्मादिति उत्पत्तिः। (गा. ३२२ टी.प.४४)
उत्सूत्र—सूत्रादूर्ध्वं उत्तीर्णं परिभ्रष्टम् उत्सूत्रम्। (गा. ८६० टी.प.११२)
उद्दिष्टा—ज्ञातुमिष्टा सा उद्दिष्टेत्यभिधीयते। (गा. ३६१ टी.प.६४)
उद्धार—पाबल्लेण उवेच्च व उद्धियपदधारणा उ उद्धारा। (गा. ४५०४)
उद्धावन—उत्प्राबल्येन धावनमुद्धावनम्। (गा. ६६२ टी.प.१३४)
उद्भ्रम—उत्प्राबल्येन भ्रमन्त्युद्भ्रमाः। (गा. ८०८ टी.प.६६)
उद्धृतदंड—उद्धृत उत्पाटितो गृहीतो दंडो येन स उद्धृतदंडः। (गा. ३४३ टी.प.५३)
उपधान—उपदधाति पुष्टिं नयत्यनेनेत्युपधानम्। (गा. ६३ टी.प.२५)
उपस्थापना—उप – सामीप्येन सर्वदावस्थानलक्षणेन तिष्ठन्त्यस्यामिति उपस्थापना। (गा. २२७३ टी.प.६६)
उभयतर—आत्मानं परं चाचार्यादिकं तारयन्तीत्युभयतराः। (गा. ४७६ टी.प.३)
एकलाभी— य एकं प्रधानशिष्यमात्मना लभते—गृह्णाति शेषास्त्वाचार्यस्य समर्पयति स एकलाभेन चरतीति एकलाभिकः।
• एकमेव लभन्ते इत्येवंशीला एकलाभिनः। (१४६१ टी.प.२३)
कर्मक्षयकरणी—कर्मक्षयं क्रियतेऽनयेति कर्मक्षयकरणी। (गा. २२५ टी.प.१५)
कर्मजननी—कर्म जन्यते अनया कर्मजननी। (गा. २२५ टी.प.१५)
कलहमित्र—कलहानन्तरं यानि जातानि मित्राणि तानि कलहमित्राणि। (गा. २०२८ टी.प.५६)
कल्प—कल्पंते समर्था भवंति संयमाध्वनि प्रवर्त्तमाना अनेनेति कल्पः। (गा. ७ टी.प.६)
कालातिचार—कालमतिचरति अतिक्रामतीति कालातिचारः। (गा. ४२२६ टी.प.५४)
किंकर—किं करोमीति किङ्करः। (गा. १४८१ टी.प.२६)
कुक्कुटी— कुच्छियकुडी तु कुक्कुडि। (गा. ३६८३ टी.प.५७)
कुशील—कुत्सितं शीलमस्येति कुशीलः। (गा. ८३४ टी.प.१०७)
गणशोभी—गणं शोभयतीत्येवंशीलो गणशोभी। (गा. ४५७४ टी.प.६७)
गणी—गणोऽस्यास्तीति गणी। (गा. १४५३ टी.प.२२)
गृहस्थ—गृहे गृहलिङ्गे तिष्ठतीति गृहस्थः। (गा. १८६१ टी.प.२६)
गौ—गच्छतीति गौः। (गा. १८६ टी.प.४)
गौल्मिक—गुल्मेन समुदायेन संचरन्तीति गौल्मिकाः। (गा. ६८३ टी.प.६७)
ग्राम—ग्रसति बुद्ध्यादीन् गुणान् यदि वा गम्यः शास्त्रप्रसिद्धानामष्टादशानां कराणामिति ग्रामः। (गा. ६१५ टी.प.१२७)
ग्राहक—ग्राह्यतीति ग्राहकः। गृह्णातीति ग्राहकः। (गा. १७११ टी.प.७१)
छंदोऽनुवर्ती—छंदो – गुरूणामभिप्रायस्तमनुवर्तते—आराधयतीत्येवंशीलः छंदोऽनुवर्ती। (गा. ७८ टी.प.३१)
ज्ञान—ज्ञायते वस्तु परिच्छिद्यते अनेनेति ज्ञानम्। (गा. ३ टी.प.४)
तमस्विनी—तमोऽन्धकारमस्या अस्तीति तमस्विनी। (गा. २३७६ टी.प.१७)
दुःखनिग्रह—दुःखेन निगृह्यन्ते निवार्यन्ते इति दुःखनिग्रहाः। (गा. ३५५७ टी.प.३२)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धव—धारयति धीयते वा दधाति वा तेण तु धवो त्ति।
• धारयति तां स्त्रियं धीयते वा तेन पुंसा वा स्त्री दधाति सर्वात्मना
पुष्णाति वा तेन कारणेन धवः। (गा. ३३४४ टी.प.८६)
धीर—धिया औत्पत्तिक्यादिरूपतया चतुर्विधया बुद्ध्या राजन्ते इति धीराः। (गा. १४७६ टी.प.२८)
धूलीजंघ—धूल्या धूसरे जंघे यस्य स धूलीजंघः। (गा. १६५५ टी.प.६३)
नगर— न विद्यते करो यस्मिन् तद् नकरं। (गा. ६१५ टी. प. १२७)
नट—नटाः ये नाटकानि नर्तयन्ति। (गा. १४४६ टी. प. २१)
निर्दोष—निर्गता दोषा यस्मात् तत् निर्दोषम्। (गा. ६७३ टी.प.६५)
निर्यापक—निश्चितं यापयति प्रायश्चित्तविधिषु याप्यमालोचकं करोति
निर्वाहयतीति यावदिति निर्यापः। (गा. ५२० टी.प.१८)
नीरज—निर्मलं शरीरं येषां ते नीरजाः। (गा. १२७८ टी. प. ६८)
नैचयिक—निचयेन संचयेनार्थाद् धान्यानां ये व्यवहरंति ते नैचयिकाः। (गा. १७८१ टी.प.११)
नैयतिक—नियतिर्व्यवस्था तत्र नियुक्तास्तथा वा चरन्तीति नैयतिकाः। (गा. ६५१ टी.प.१३२)
नैषेधिकी—निषेधेन—स्वाध्यायव्यतिरिक्तशेषव्यापारप्रतिषेधेन निर्वृत्ता नैषेधिकी। (गा. ६३१ टी.प.५४)
न्याय—नितरामीयते गम्यते मोक्षोऽनेनेति न्यायः। (गा. ७ टी.प. ६)
परतरक —ये तपः कर्तुमसमर्थाः वैयावृत्त्यं चाचार्यादीनां कुर्वन्ति ते परं तारयन्तीति परतरकाः। (गा. ४७६ टी-प-३)
परिचितश्रुत—परिचितमत्यन्तमभ्यस्तीकृतं श्रुतं येन स परिचितश्रुतः। (गा ८०० टी.प.६७)
पलिमंथ—पलिमंथो मंथिज्जति संजमो जेण।
• सूत्रमर्थश्च मथ्यते तेन परिमंथः पलिमंथः। (गा. ३३६३ टी.प.४)
पार्श्वस्थ—ज्ञानादीनां पार्श्वे तटे विहरतीत्येवंशीलो पार्श्वस्थः। (गा. ८५३ टी.प.१११)
• दंसणनाणचरित्ते, सत्तो अच्छति तहिं न उज्जमति, एतेण उ पासत्थो। (गा. ८५४)
पाशस्थ—पाशास्तेषु तिष्ठतीति पाशस्थः। (गा. ८३४ टी.प.१०७)
पोषक—पोषका ये स्त्रीकुक्कुटमयूरान् पोषयन्ति। (गा. १४४६ टी.प. २१)
पौराण—पुराणायामवस्थायां भवः पौराणः। (गा. १२८० टी.प.६६)
पौषध—पोषं दधाति इति पौषधम्। (गा. १२६ टी.प.४५)
प्रकिरण—प्रदातुं कीर्यते विक्षिप्यते इति प्रकिरणम्। (गा. ४ टी.प.५)
प्रकुर्वी—प्रकुर्वतीत्येवंशीलः प्रकुर्वी। (गा. ५२० टी. प. १८)
प्रग्रह—प्रकर्षेण प्रधानतया वा गृह्यते उपादीयते इति प्रग्रहः। (गा. २१६ टी.प.१२)
प्रजा—प्रकर्षेण जायते पाकनिष्पत्तिरस्यामिति प्रजा। (गा. ३७१६ टी.प.४)
प्रतिकुंचना—प्रतिकुंच्यते अन्यथा प्रतिसेवितमन्यथा कथ्यते यया सा प्रतिकुंचना। (गा. १४६ टी.प.५०)
प्रतिसेवक—प्रतिषिद्धं सेवते इति प्रतिसेवकः। (गा. ३७ टी.प.१६)
प्रभावना—प्रभाव्यते विशेषतः प्रकाश्यते इति प्रभावना। (गा. ६४ टी.प.२७)
प्रलंब—प्रकर्षेण वृद्धिं याति वृक्षोऽस्मादिति प्रलम्बम्। (गा. १८४ टी.प.२)
प्रलीन—पइ पइ लीणा उ होंति पल्लीणा।
• कोधादी वा पलयं, जेसि गता ते पलीणा उ।
• प्रकर्षेण लीना लयं विनाशं गताः क्रोधादयो येषामिति प्रलीनाः। (गा. ४५१४ टी. प. ८०)
प्रवर्त्ती—यथोचितं प्रशस्तयोगेषु साधून् प्रवर्त्तयन्तीत्येवंशीलाः प्रवर्त्तिनः। (गा. ६५८ टी.प.१३४)
प्रवर्त्तक—प्रवर्त्तयतीत्येवंशीलः प्रवर्त्ता प्रवर्त्तकः। (गा. २१७ टी.प.१३)
प्रवासी—प्रवसतीत्येवंशीलः प्रवासी। (गा. ३२१२ टी.प.६६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रायश्चित्त—पावं छिंदति जम्हा, पायच्छित्तं तु भण्णते तेण।
• पाएण वा वि चित्तं, विसोहए तेण पच्छित्तं। (गा. ३५)
प्रास्वस्थ—प्रकर्षेणासमन्ताद् ज्ञानादिषु निरुद्यमतयास्वस्थः प्रास्वस्थः। (गा. ८५४ टी.प.१११)
बह्वागम—बहुरागमोऽर्थपरिज्ञानं यस्य स बह्वागमः। (गा. १६३६ टी.प.६०)
बुद्धिल—बुद्धिं लात्युपजीवति इति बुद्धिलः। (गा. ४५८० टी.प.६८)
भवान्त—भवं खवंतो भवंतो उ।
• भवं नारकादिभवं क्षपयन् भवान्तः।
• भवमंतयति भवस्यान्तं करोतीति भवान्तः। (गा. १६५ टी.प.६)
भागहार—भागं हरतीति भागहारः। (गा. २०४ टी.प.८)
भिक्षु—• भिंदंतो यावि खुधं भिक्खू। (गा. १६५)
• क्षुद् अष्टप्रकारं कर्म तं ज्ञान-दर्शन-चारित्र-तपोभिर्भिनत्तीति भिक्षुः। (गा. १८४ टी.प.२)
महापान—पिबति अर्थपदानि यत्रस्थितस्तत्पानं, महच्च तत् पानं च महापानम्। (गा. २७०३ टी.प.४६)
मान—मीयते परिच्छिद्यते वस्त्वनेनेति मानम्। (गा. ४०२ टी.प.७६)
मार्ग—मृजंति शुद्धिर्भवत्यनेनातिचारकल्मषप्रक्षालनादिति मार्गः। (गा. ७ टी.प.६)
मेध्य—मेध्यानि द्रव्याणि नाम यैर्मेधा उपक्रियते। (गा. १० टी.प.६५)
मोकप्रतिमा—• साधुं मोयंति पावकम्मेहिं एएण मोयपडिमा।
• मोचयति पापकर्मभ्यः साधुमिति मोकः। (गा. ३७६० टी.प.१५)
• मोकः कायिकी तदप्युत्सर्गप्रधाना प्रतिमा मोकप्रतिमा। (गा. ३७८६ टी.प.१५)
मोहनीय—मोहनीयं स नाम येनात्मा मुह्यति। (गा. ११४७ टी.प.४१)
यति—• जयमाणगो जती होति।
• संयमयोगेषु यतमानः प्रयत्नवान् यतिः। (गा. १६५ टी.प.६)
रक्षक—• रक्षा अस्यास्तीति रक्षकः।
• रक्षायां नियुक्तो राक्षिकः। (गा. १०६५ टी.प.३१)
रचितकभोजी—रचितकं नाम कांस्यपात्रादिषु वा यदशनादिदेयबुद्ध्या वैविक्त्येन स्थापितं यद् भुंक्ते इत्येवंशीलो रचितकभोजी।
(गा. ८८६ टी.प.११६)
रूपाङ्गी—रूपेणातिशायिना युक्तमंगं शरीरं यस्याः सा रूपाङ्गी। (गा. ११४८ टी.प.४१)
वागंतिक—वाचा अंतपरिच्छेदी वागन्तः तेन निर्वृतो वागन्तिकः। (गा. २२११ टी.प.८६)
विधवा—• विगयधवा खलु विधवा।
• न विद्यते धवो भर्ता यस्याः सा विधवा। (गा. ३३४४ टी.प.८६)
विधार—विविहेहि पगारेहि, धारेयऽत्थं विधारो उ। (गा. ४५०४)
विनीतकरण—विशेषतः संयमयोगेषु नीतानि करणानि मनोवाक्कायलक्षणानि येन स विनीतकरणः। (गा. १५४७ टी.प.४०)
विप्रवास—विशेषेण प्रवासोऽन्यत्र गमनं विप्रवासः। (गा. २६१ टी.प.२५)
विशेषण—विशेष्यते परस्परं पर्यायजातं भिन्नतया व्यवस्थाप्यते अनेनेति विशेषणम्। (गा. ४६ टी.प.१६)
विश्वास—विश्वासयतीति विश्वासः। (गा. १६८१ टी.प.६७)
विहार—• विविहपगारेहि रयं, हरती जम्हा विहारो उ।
• विविधं ह्रियते रजः कर्मानेनेति विहारः। (गा. ६६५ टी.प.७)
वैनयिक—विनयमर्हन्तीति वैनयिकाः। (गा. १५४४ टी.प.३६)
व्यवहार—• विधिना उप्यते ह्रियते च येन स व्यवहारः। (गा. ५ टी.प.५)
• विविहं वा विहिणा वा ववणं हरणं च ववहारो। (गा. २)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

- व्यवह्रियतेऽपराधजातं प्रायश्चित्तं प्रदानतो येन स व्यवहारः। (गा. ५२० टी.प.१८)
- जेण य ववहरइ मुणी, जं पि य ववहरइ सो वि ववहारो। (गा. ३८८८)

व्यवहारवान्—यः सम्यगागमादिव्यवहारं जानाति, ज्ञात्वा च सम्यक् प्रायश्चित्तदानतो व्यवहरति स व्यवहारवान्। (गा. ५२० टी.प.१८)

व्यवहारी—व्यवहरतीत्येवंशीलो व्यवहारी। (गा. १ टी.प.३)

शमन—शम्यंते उपशमं नीयंते रोगा यैस्तानि शमनानि। (गा. ४३६ टी.प.८६)

श्रमण—श्राम्यति तपस्यतीति श्रमणः। (गा. १४७६ टी.प.२७)

श्वपच—श्वपचाश्चण्डाला ये शुनः पचन्ति। (गा. १४४८ टी.प.२१)

संघ—
- णाण-चरण-संघातं, संघायंतो हवति संघो।
- संघातयतीति संघः। (गा. १६८७ टी.प.६७)

संधारणा—सं एगीभावम्मी, धी धरणे ताणि एक्कभावेणं। धारेयऽत्थपयाणि तु, तम्हा संधारणा होति। (गा. ४५०५)

संप्रधारणा—जम्हा संपहारेउं, ववहारं पउंजती। तम्हा कारणा तेण, नातव्वा संपधारणा।। (गा. ४५०६)

संस्तार—संस्तरन्ति साधवोऽस्मिन्निति संस्तारः। (गा. १७५६ टी.प.७)

सत्कारहार्य—सत्कारेण ह्रियते आक्षिप्यते इति सत्कारहार्यः। (गा. १३६६ टी.प.११)

सर्वाशी—सर्वमश्नातीत्येवंशीलः सर्वाशी। (गा. ८४३ टी.प.१०६)

सारूपिक—समानं रूपं सरूपं तेन चरतीति सारूपिकः। (गा. १८६१ टी.प.२६)

सासु—असवः प्राणाः सह असवा यस्य येन वा तत् सासुः। (गा. २८१० टी.प.६६)

सुपेशल—सुष्ठु अतिशयेन पेशलं मनोज्ञं श्रोतृमनसां प्रीतिकारि सुपेशलं। (गा. ७३ टी.प.३०)

सुविहित—शोभनं विहितमनुष्ठानं येषां ते सुविहिताः। (गा. २२४ टी.प.१५)

सुशिक्षा—सोभणसिक्खा सुसिक्खा। (गा. १६३०)

स्थविर—थिरकरणा पुण थेरो।
- मोक्षमार्गे स्थिरीकरोतीति स्थविरः। (गा. ६६१ टी.प.१३४)

स्थान—तिष्ठन्ति स्वाध्यायव्यापृता अस्मिन्निति स्थानम्। (गा. ६३१ टी.प.५४)

स्वयंग्राह—स्वयमात्मना गृह्णातीति स्वयंग्राहः। (गा. १६२ टी.प.५)

हितभाषी—हितं परिणामसुंदरं तद्भासते इत्येवंशीलो हितभाषी। (गा. ६८ टी.प.२६)

हृदयग्राह—हृदयं गृह्णाति हृदये सम्यग् निवेशिते इत्येवंशीलः हृदयग्राहः। (गा. ७३ टी.प.३०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देशीशब्द

जिन शब्दों का कोई प्रकृति प्रत्यय नहीं होता, जो व्युत्पत्तिजन्य नहीं होते तथा जो किसी परम्परा या प्रान्तीय भाषा से आए हों, वे देशी शब्द हैं।

वैयाकरण त्रिविक्रम का कहना है कि आर्ष और देश्य शब्द विभिन्न भाषाओं के रूढ़ प्रयोग हैं, अतः इनके लिए व्याकरण की आवश्यकता नहीं है।[1] अनुयोगद्वार में वर्णित नैपातिक शब्दों को देशी शब्दों के अन्तर्गत माना जा सकता है।[2] आगम एवं उनके व्याख्या ग्रन्थों में १८ प्रकार की देशी भाषाओं का उल्लेख मिलता है।[3] वे १८ भाषाएं कौन-सी थीं, आगमों में इनका स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता।

भिन्न-भिन्न प्रान्त के व्यक्ति दीक्षित होने के कारण आचार्य शिष्यों का कोश-ज्ञान एवं शब्द-ज्ञान समृद्ध करने के लिए विभिन्न प्रान्तीय शब्दों का प्रयोग करते थे। भाष्य साहित्य में अनेक प्रान्तीय देशी शब्दों का प्रयोग हुआ है।

व्यवहार भाष्य में देशी शब्दों का प्रचुर प्रयोग मिलता है। टीकाकार मलयगिरि ने अनेक शब्दों के लिए 'देशीवचनमेतद्', 'देशीत्वात्', 'देशीपदे' आदि का प्रयोग किया है, लेकिन इनके अतिरिक्त भी अनेक देशी शब्दों और देशी धातुओं का प्रयोग इस ग्रन्थ में हुआ है। अनेक स्थलों में तो टीकाकार ने देशीपद का स्पष्ट निर्देश किया है जैसे—

- फुंराविंति त्ति देशीपदमेतद् अपहारयंति।
- विप्फालेइ देशीवचनमेतत् पृच्छतीत्यर्थः।

आदेश प्राप्त धातुओं को कुछ विद्वान् देशी मानते हैं तथा कुछ तद्भव के रूप में स्वीकृत करते हैं किन्तु ये देशी होनी चाहिए। इसका एक हेतु है कि मलयगिरि ने आवश्यक निर्युक्ति की टीका में स्पष्ट निर्देश किया है—'साहइ त्ति देशीवचनतः कथयति।'[4] साह धातु कथ धातु के आदेश रूप में प्राप्त है।[5] अतः हमने भी आदेश प्राप्त धातुओं को इस परिशिष्ट में समाविष्ट किया है।

इल्ल एवं इर प्रत्यय वाले शब्द देशी नाममाला में देशी रूप में संगृहीत हैं तथा मलयगिरि ने भी पढमेल्लुग को देशी माना है। इसी आधार पर अंतिल्ल, भंगिल्ल आदि शब्दों का इस परिशिष्ट में समाहार किया गया है।[6]

संख्यावाची शब्द जैसे—पणपण्ण, पण्णास, बयालीस आदि को भी देशी माना है। अनुकरणवाची शब्दों के बारे में विद्वानों में मतभेद है पर हमने इनको देशी रूप में स्वीकृत किया है। जैन विश्वभारती, लाडनूं से प्रकाशित 'देशीशब्दकोष' में हमने दस हजार से अधिक देशीशब्दों का चयन किया है। प्रस्तुत परिशिष्ट में देशी धातुओं के प्रारंभ में हमने बिन्दु का चिह्न दिया है।

---

१. प्राश ७ : देश्यमार्षं च रूढत्वात्, स्वतन्त्रत्वाच्च भूयसा।
लक्ष्म नापेक्षते तस्य, सम्प्रदायो हि बोधकः।।

२. अनुद्वा २७०।

३. राजटी पृ. ३४१।, ज्ञा. १।१।८८।

४ आवमटी १, पृ. १६०

५. प्राकृत व्याकरण ४/२

६. आवमटी प ११६ : प्रथमैल्लुका देशीवचनमेतत्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अइयण—भक्षण। (गा. १०१६)

अइया—आर्यिका। (गा. ३२४७)

अंगोहलि—अपूर्ण स्नान। (गा. ४२०८ टी.प.५२)

अंडक—मुख।

केन कारणेनाण्डकमुखमुच्यते तत आह—यतो यस्मात् चित्रकर्मणि गर्भे उत्पाते वा पूर्वं देहस्य वदनं मुखं निष्पद्यते पश्चात् शेषं ततः प्रथमभावितया मुखमण्डकमित्युच्यते। (गा. ३६८३ टी.प. ५७)

अंतिल्ल—अंतिम। (गा. १३८२ टी.प.७)

अंबिली—इमली। (गा. ४४५१)

अक्खोडभंग—राजकुल में दातव्य द्रव्य, बेगार तथा सैनिक आदि की भोजन-व्यवस्था। (गा. २१२ टी.प.१०)

अगड—कुआ। (गा. ३७६०)

अचियत्त—अप्रीतिकर। (गा. २६२)

• **अच्छ**—प्रतीक्षा करना। (गा. ८२४)

अच्छण—अवलोकन, प्रतिश्रवण, दूर या नजदीक से निवर्तित होना। (गा. ८१६)

अच्छिक्क—अस्पृष्ट। (गा. १०६३)

अञ्झिइीय—दिया, प्रस्तुत किया। (गा. ४५२ टी.प.६४)

अडयाल—अड़तालीस। (गा. २०३३)

अड्डित—चढ़ाया, आरोपित किया। (गा. ४५२ टी.प.६४)

अणवदग्ग—अनंत।

अणवदग्गं कालतोऽपरिमाणं।(गा. १६८६ टी.प.६८)

अणिद्दोच्च—भयसहित, अस्वस्थ, सदोष।

अणिदोच्चमित्यनिर्भयमस्वस्थम्। (गा. ३१२६ टी.प.५१)

अणंतक—वस्त्र। (गा. २८५० टी.प.४)

अणोरपार—अनंत, अपार। (गा. १०२२)

अतरंत—असमर्थ। (गा. १७७४)

अतित्थित—अतिक्रान्त। (गा. ३८६१ टी.प.६)

अत्थारिय—कर्मकर, वेतन लेकर खेत में धान आदि काटने वाला नौकर। ये भूल्यप्रदानेन शालिलवनाय कर्मकराः क्षेत्रे क्षिप्यन्ते ते अस्तारिकाः। (गा. २६५३ टी.प.३८)

अद्दण—भयभीत, आकुल। (गा. २४५३)

अद्दण्ण—असत्य। (गा. २४५५)

अद्दाय—वह विद्या, जिससे दर्पण में प्रतिबिम्बित रोगी के बिम्ब को पोंछने से रोगी नीरोग हो जाता है। (गा. २४३६ टी.प.२६)

अद्धा—काल। (गा. २५०४)

अपरितंत—अपरिश्रान्त। (गा. १४२७)

अप्पायण—निर्वाह। (गा. १३४८)

अप्पाहण—संदेश देना। (गा. ७६२)

अभिनिव्वगडा—वह परिक्षेप, जिसमें प्रवेश और निष्क्रमण का एक द्वार हो, पर भीतर अनेक घर हों। (गा. २७२६ टी.प.५०)

अमाघतण—अमारि। (गा. ३१४८)

अमेरतो—अमर्यादाशील। (गा. १८६ टी.प.३)

अम्मा—मां। (गा. १६८१)

• **अम्मा**—निकट पहुंचना, पीछा करना। (गा. १०२१)

अलंद—नट। (गा. ८८७)

अल्लीण—आया। (गा. ३२३ टी.प.४६)

अविरल्ल—अविस्तारित, एकत्रित। (गा. १७७३)

अविहाड—१. अप्रकट, (गा. २८६२)

२. अप्रगल्भ। (गा. ३६६६)

अवोगिल्ल—अवाचाल।

अवोगिल्लमवाचालं। (गा. २६५६)

अव्वंग—अक्षत। (गा. २८१२)

अव्वो—संबोधन सूचक अव्यय। (गा. २८६२)

अव्वोगड—१.अविकृत। अव्वोगडं अविगडं। (गा. ३३५६)

२. अविभक्त।

अव्याकृतं नाभ दायिनां सामान्यं न पुनस्तैर्विभक्तं। (गा. ३३५५ टी.प.६१)

असंथर—अतृप्त। (गा. १७६५)

असंथरंत—समर्थ न होता हुआ। (गा. २५१५)

आउट्ट—प्रणत। (गा. २५४५)

आउट्टि—असंयम। (गा. ६१)

आउट्टेऊण—अपने अनुकूल बनाकर। (गा. ३४२६)

आगलण—वैकल्य, विकलता। (गा. ६६२)

आडंबर—पाणजातीय लोगों का यक्ष-विशेष। (गा. ३१४६ टी.प.५५)

आदंचण—शुद्धि का प्रयत्न विशेष। (गा. ५०७)

आदेस—अतिथि, पाहुना।

आदेशाः नाम प्राघूर्णकाः। (गा. १०१५ टी.प.११)

आलिंगिणी—रूई का बड़ा बिछौना।(गा. ४३४४ टी.प.७१)

आवाह—वर पक्ष की ओर से दिया जाने वाला भोज।

आवाहो दारकपक्षिणाम्। (गा. ३७३६ टी.प.८)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आहिरिक—उत्रास, भय।

आहिरिकमिति उत्रासं। (गा. ७८२)

उंड—गहरा। (गा. १३८६)

उंडि—मुद्रा। (गा. २६४२ टी.प.३६)

उंडिव—मुद्रावाला। (गा. २६४२ टी.प.३६)

उक्कोडभंग—राजकुल में देय द्रव्य। (गा. २१२ टी.प.१०)

उक्खड्डमड्ड—बार-बार। देशीपदमेतत् पुनः पुनः शब्दार्थः।
(गा. ३२४ टी.प.४७)

उचिट्ठय—पुलिंद आदि नीच जाति। (गा. ६३ टी.प.२५)

उच्चूर—नानाविध, बहुत अधिक। (गा. १३४६)

उच्छेव—दीवार के छेद को ढकना।

उच्छेवो नाम यत्र पतितुमारब्धं। तत्रान्यस्येष्टकादेः संस्थापनम्।
(गा. १७५४ टी.प.६)

उज्जला—छोटी संघाटी। (गा. ३०६८)

उड्डण—अंगीकार। (गा. १४२८)

उड्डाह—निंदा, तिरस्कार। (गा. १०१८)

उण्णादसिया—ऊन की गूंथी हुई फली। (गा. ८६४)

● **उत्तुण**—गर्व करना। (गा. २३६०)

उत्तुयय—उत्तेजित। (गा. ३०१०)

उत्तूइय—गर्वित।

उत्तूइओ त्ति देशीपदमेतद् गर्वे वर्तते।
(गा. १२८१ टी.प.६६)

उत्थाण—अतिसार रोग। (गा. ३३१८)

उद्धाण—उद्वसित, उजड़ा हुआ। (गा. २०६१)

उप्पियण—बार बार श्वास लेना।

उप्पियणं मुहुः श्वसनम्। (गा. १६६६ टी.प.५०)

उप्पेउं—तेल आदि की मालिश करके।

उप्पेउं देशीपदमेतद् अभ्यङ्गय।
(गा. २५०७ टी.प.१०)

उल्ल—आर्द्र। (गा. ६४७)

उल्लट्ट—खाली किया हुआ, प्रतिसेवित। (गा. ६१५)

उल्लण—एक प्रकार का जूष। (गा. ३८०५)

उल्लूडित—विध्वस्त। (गा. २३२६ टी.प.७)

उव्वक्क—धौत, दूध में भिगोकर निकाला हुआ।
(गा. ८४७ टी.प.११०)

उव्वण्ण—उत्कंठित। (गा. २८६३)

उव्वर—अवशेष। (गा. २१३४)

उव्वरग—कोठरी। (गा. १०६६)

उव्वरित—बचा हुआ। (गा. २५०)

उव्वाय—परिश्रान्त, खिन्न। (गा. २८५४)

उस्सण्ण—प्रायः। (गा. ४४७)

ऊसढ—उत्कृष्ट, श्रेष्ठ। (गा. २७७३)

एक्कयाण—अकेला। (गा. १३८६ टी.प.८)

एक्कसरयं—एक बार। (गा. ४७६)

एक्कसिं—एक बार। (गा. ४५२२)

एगाणियत्त—एकाकी। (गा. ८१५)

ओगाल/ओगाली—फलक। (गा. २२८६ टी.प.१०२)

ओयविय—जीतना। (गा. २७००)

ओलइय—लटका दिया। (गा. ४४२८)

● **ओलग्ग**—सेवा करना। (गा. ४८१ टी.प.३)

ओल्लण—एक प्रकार का जूष। (गा. ३८०४ टी.प. १६)

ओवारिय—भीतरी अपवरक, धान्य भरने का कोठा।
(गा. २८८४)

ओह—ध्यान से देखते हुए प्रतीक्षा करना।

ओघा इति तन्मुखनिरीक्षमाणा।
(गा. ६४३ टी.प.५७)

कंकडुअ—कोरडू धान, वह धान जो पकाए जाने पर भी नहीं पकता। (गा. १६६५)

कंडच्छारिय/कंडत्थारिय

१. गांव, २. ग्रामप्रमुख, ३. देश, ४. देशप्रमुख, ५. लुटेरा, हत्यारा, ६. लुटेरों का सहायक।

कंडच्छारिउ नाम ग्रामो ग्रामाधिपतिर्देशो देशाधिपतिर्वा लूषका वा सहायाः। (गा. २९८७ टी.प.२८)

कक्कस्स—दोषोद्भावन, आरोपयुक्त प्रलाप। (गा. ६५८)

कच्चग—पात्र विशेष। (गा. ३५०६)

कट्ट—जंग। (गा. २३२४ टी.प.६)

कडग—बांस की चटाई से बना घर।

कडग त्ति वंशदलनिर्मापितकटात्मकं गृहं।
(गा. २२८३ टी.प.१०१)

कडिल्ल—गहन। (गा. १००६)

कडुहुंड—भोजन में प्रयुक्त सामग्री विशेष। (गा. २४५४)

कनक—रेखा रहित बिजली। सरेखा उल्का, रेखारहितः कनकः। (गा. ३१६५ टी.प.६३)

कप्पट्ठ—१. बालक। (गा. ५५६)

२. धनी व्यक्ति का पुत्र। (गा. ११३४)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कप्पट्टी—१. कुलवधू। (गा. १६०१ टी.प.५२)
२. बालिका। (गा. १७८६)

कब्बड—धूल भरा खेत। (गा. २७०८ टी.प.४७)

कमढ—कछुआ। (गा. ६६२ टी.प.६२)

कमढग—पात्र विशेष। (गा. ३६३३)

कयग—माया, कपट। (गा. १२७८ टी.प.६८)

करकरायण—बड़बड़ाना। (गा. १४४१ टी.प.१६)

करडुय—मृतकभोज।
करडुकं मृतकभक्तम्। (गा. ३७३६)

कल्ल—आने वाला कल। (गा. ३४४०)

काउ—कावड़। (गा. १३६५)

काणग—चुराई हुई वस्तु या चोर। (गा. १४५२)

काणिट्ट—लोहमयी ईंट। (गा. २२८३)

किंटी—वृद्धा। (गा. ३०८५)

किड्ढी—समझा-बुझाकर संभोग के लिए एकान्त में ले जाई जाने वाली स्त्री।
किड्ढि त्ति कृष्यते संभोगो यः प्रतिरिक्ते स्थाने नीयते।
(गा. १६२१ टी.प.५७)

किढग—वृद्ध। (गा. ३०६६)

किढि—वृद्धा। (गा. ३०८४)

किणिय—१. जो वादित्रों को चर्म आदि से मढ़ने का काम करते हैं।
२. जो नगर में घुमाते हुए ले जाने वाले वध्य पुरुषों के आगे वादित्र बजाते हैं।
किणिका ये वादित्राणि परिगह्यन्ति। वध्यानां च नगरमध्ये नीयमानानां पुरतो वादयन्ति।
(गा. १४४८ टी.प.२१)

कित/कियत—चुंगी लेने वाला। (गा. ४५३ टी.प.६५)

कियाडिया—कान का ऊपरी भाग। (गा. २५ टी.प.१३)

कुंटलविंटल— मन्त्र-तन्त्र का प्रयोग।(गा. १५८६ टी.प.४६)

कुक्कुडि—शरीर। कुच्छि कुडीय कुक्कुडि।
(गा. ३६८३ टी.प.५७)

कुक्कुस—भूसा। (गा. ८८८ टी.प.११६)

कुच्छणा—दो अंगुलियों के बीच सड़ान। (गा. १७७०)

कुडुक—१. निष्ठुर, २. देश विशेष।(गा. २०१० टी.प.५२)

कुडुक्क—१. निष्ठुर। (गा. २०१० टी.प.५२)
२. देश विशेष। (गा. ८६८ टी.प.१२२)
३. लतागृह। (गा. १० टी.प.१५)

कुणिम—शव। (गा. १६६५)

कुरुंडिय—गुप्तचर।
कुरुंडितो नाम उवचरओ। (गा. ३८७५ टी.प.८)

कुरुकुय—पाद-प्रक्षालन। (गा. २६०६)

कुरुण—राजकीय अथवा अन्य खेत, जिसमें बीज बो दिए गए हों। (गा. १०००)

कोंटल—जादू-टोना। (गा. १६३६)

कोक्कास—इस नाम का एक व्यक्ति, जिसने यंत्रमय कापोत बनाकर उनसे चावल आदि धान चुगवाए।
कोक्कासो यंत्रमयान् कापोतान् कृत्वा शालिमुत्पादितवान्। (गा. २३६३ टी.प.२०)

कोच्चित—शैक्ष, नया शिष्य।
कोच्चितो नाम शैक्षकः। (गा. २५२६)

कोट्टंब—गौड़ देश में बना वस्त्र विशेष.
कोट्टंबानि गौडदेशोद्भवानि। (गा. २८६५)

कोट्टग—पाठशाला। (गा.४३१३)

कोयव—रूई से भरा कपड़ा, रजाई। (गा. ४३४४)

कोलियसाला—तंतुवायशाला। (गा. ३७२३ टी.प.५)

कोल्लुग—सियार। (गा. ५८७/१)

कोल्हुग—सियार। (गा. ५८६)

खग्गूड—१. स्वच्छंद, अनुशासनहीन। (गा. १४६१)
२. स्वभाव से वक्र, कुटिल। (गा. १४२२)

खडपूयग—घास का पूला। (गा. ५१७ टी.प.१७)

खडिय—लिप्त। (गा. ११५१)

खडुक्क—मुंड सिर पर अंगुली का आघात, ठुनकाना, ठोला मारना। (गा. २५ टी.प.१३)

खडुग—ठोला, टकोरा मारना। (गा. ३३७)

खण्णा—संपूर्ण रूप से लूषित। खण्णा इति देशीपदमेतत् सर्वात्मना लूषिताः। (गा. ७१६ टी.प.७७)

खत्त—सेंध। (गा. ४५० टी.प.६४)

खद्ध—१. प्रचुर। (गा. १६२२)
२. शीघ्र। (गा. १०१६)

खमग—साधु। (गा. ७७० टी.प.८८)

खर—घास-विशेष। (गा. ८ टी.प.५)

खरंटण—तिरस्कार करना। (गा. १४४४)

खरंटिय—१. लिप्त, युक्त। (गा. १३४३ टी.प.८२)
२. तिरस्कृत। (गा. ५८१ टी.प. ४१)

खरिमुहि—दासी। (गा. २५४२)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खरियमुह—दास। (गा. २५४५)
खरियमुही—दासी (गा. २५४५)
खलखिल—निर्जीव। (गा. २८१२ टी.प.६६)
खलय—खलिहान। (गा. ३८५३ टी.प.५)
खाय—खाई। (गा. ३७४७)
• **खिंस**—अवहेलना करना। (गा. २५६१)
खिटिका—जादू-टोना की सामग्री। (गा. ३०६६)
• **खुंद**—प्राप्त करना। (गा. २७६५)
खुड्ड—छोटा बालक। (गा.७२० टी.प.७८)
खुड्डग—बालक। (गा. ७२७)
खुड्डय—छोटा। (गा. ३२४६)
खुड्डलय—छोटा। (गा. ११४४)
खुड्डिया—बालिका। (गा. ७४१)
खुड्डी—बालिका। (गा. ७२४)
खुद्दग—छोटा। (गा. २०४८)
• **खुप्प**—डूबना। (गा. ३१३८)
खुब्बय—पलाश के पत्तों का बना दोना।
(गा. १३५१ टी.प.८४)
खुलखेत्त—वह क्षेत्र, जहां कम भिक्षा मिलती हो या केवल रूखा आहार ही मिलता हो। (गा. ३०४ टी.प.३६)
खुलखेत्तं नाम मंदभिक्षम्।
खुह—कर्म। (गा. १६४ टी. प. ६)
खेड—मिट्टी के प्राकार वाला छोटा गाँव। (गा. २७०८)
खेडिय—चलाना। (गा. ६४ टी.प.२६)
खेल्लण—खेल। (गा. २३२३ टी.प.६)
खोटन—झटकना। (गा. ३६२७)
खोडभंग—राजकुल में दातव्य द्रव्य। (गा. २१२ टी.प.१०)
खोडिज्झंत—अवांछनीय मानना। (गा. १७०२ टी. प. ७०)
खोडि—काठ का गट्ठर। (गा. १४४४)
खोर—प्याला, कटोरा। (गा. ५८३)
खोरक/खोरिय—कटोरा। (गा. ५८३ टी. प. ४१)
गंडग—गांव के आदेश की उद्घोषणा करने वाला।
(गा. ३१७४)
गड—खाई। (गा. ६५)
गल्ल—गला। (गा. ६३ टी.प.२५)
गार—कंकड। (गा. १७७०)
गावी—गाय। (गा. ३७६२)
गाहा—घर। (गा. ३३८२)
गाहावती—गृहपति। (गा. ८७१)
गिला—उत्साह। (गा. २००२)
गुंठ—मायावी। (गा. १७०१)
गुंठा—माया। (गा. १७०१)
गुलगुलाइय—हाथी का चिंघाड़ना। (गा. ४५२ टी. प. ६४)
गोखलक—गवाक्ष। (गा. ६६७ टी.प.६३)
गोण—बैल। (गा. १०१८)
गोणिय—गायों का व्यापारी। (गा. ३७२५)
गोणी—गाय। (गा. ५८० टी.प. ३६)
गोम्हि/गोम्ही—कनखजूरा। (गा. ३४१२)
गोलिय—तंतुवाय। (गा. ३७२५)
गोस—प्रातःकाल। (गा. १४८३)
गोहट्ठाण—प्रदेश-विशेष। (गा. ४४२६)
घंघसाला—कार्पटिक भिक्षुओं का निवास-स्थान (गा. ३१६३)
घडा—गोष्ठी। (गा. २०५१)
घडा—गांव प्रधान और अनुप्रधान द्वारा गांव के बाहर दिया जाने वाला भोज। (गा. ३८७८)
घोट्ट—घूंट। (गा. १०३८ टी.प.१८)
घोड—नीच जाति के लोग, डंगर आदि। (गा. ३०७२)
घोलंत—परिभ्रमण करता हुआ। (गा. ११८१)
चक्किय—समर्थ। (गा. ३३८७ टी.प.२)
• **चड**—चढ़ना। (गा. १३८८ टी. प. ६)
चडुग—पात्र विशेष। (गा. ३५०६ टी. प. २२)
चत्ता—चालीस। (गा. ४१०)
चत्तालीस—चालीस। (गा. ४१७)
चप्पुट्टिका—जादू-टोना। (गा. ३०६६ टी. प. ४१)
चमढणा—तिरस्कार करना, कठोर शब्दों में भर्त्सना करना।
(गा. २७३)
चमढिय—विनष्ट। (गा. १०४५)
चिंच—इमली का वृक्ष। (गा. ३७४४)
चिंचणिका—इमली। (गा. ३७४४)
चिक्कण—चिकना। (गा. ३७६६)
चिक्खल्ल—कीचड़। (गा. ६८३)
चिलिमिलि—पर्दा। (गा. १८६६)
चुक्क—१. स्खलित। (गा. २५२)
२. चूकना। (गा. २३२५)
चुणय—पुत्र। (गा. ३३२३)
चुल्लक—भोजन। (गा. ४२५२ टी.प.५७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चुल्ली—छोटा चूल्हा। (गा. ३७१५)
चेड—१. लघु, छोटा। (गा. ४६४)
२. बालक। (गा. ११८१ टी.प.४७)
चेल्लग—चेला, शिष्य। (गा. २५ टी.प.१३)
चोद्द—छाल। (गा. ३८०७)
चोयट्ठी—चौंसठ। (गा. ३७४८)
चोयाल—चवालीस। (गा. ४०७)
चोल—कपड़ा। (गा. २६७६)
चोलपट्टक—जैन मुनि का कटि वस्त्र। (गा. १५७२)
छंटित—ऊखल में कुटे हुए। (गा. ३८५३ टी.प.५)
छब्बक—बांस की बनी हुई टोकरी।(गा. ३८१० टी.प.१८)
छाइल्लय—दीप।
जोइक्खं तह छाइल्लयं च दीवं मुणेज्जाहि।
(गा. ३१८६ टी.प.६२)
छाय—भूखा, बुभुक्षित। (गा. २८५४)
छाहिय—छाया। (गा. ३७६५)
छिंपक—छपाई करने वाला, रंगरेज। (गा. २११ टी.प.१०)
छिक्क—स्पृष्ट। (गा. २७६७)
छिप—रंगरेज। (गा. ४३१२ टी.प.६६)
छुट्ट—मुक्त। (गा. १६१६ टी.प.५७)
• **छुह**—डालना, रखना। (गा. ८१६ टी.प.१२०)
• **छुहय**—फेंकना, इकट्ठा करना। (गा. ८१५ टी.प.१०१)
छेवग—मारि, दुर्भिक्ष।
छेवग त्ति मारिः। (गा. २३८२ टी.प.१८)
छोटि—काटने का साधन। (गा. ४०२२ टी.प.३०)
छोटित—छोड़ना। (गा. ३४६८ टी.प.२१)
छोडिय—काटने का साधन। (गा. ४०२२)
छोति—लघु। (गा. ३६३३ टी.प.४७)
छोभग—मिथ्या दोषारोपण, अभ्याख्यान। (गा. १२३७)
जड्ड—हाथी। (गा. ८१६)
असमर्थ, मोटा, आलसी। (गा. ४६३१)
जप्पसरीर—बहुत रोगों से आक्रान्त शरीर।
जप्पसरीरो हु होत्ति बहुरोगी। (गा. २६०)
जमगसमग—एक साथ। (गा. ३२१ टी.प.४४)
जमलतो—साथ में। (गा. ७६६ टी.प.६६)
जल्ल—शरीर का मैल।
जल्लेन शरीरोत्थेन मलेन मलिनं।
(गा. ३६०० टी.प.४१)

जिमित्ता—खाकर। (गा. ८७१ टी.प.११५)
जुंगिय—जाति, कर्म या शरीर से हीन। (गा. १४४८)
• **जोअ**—निरूपण करना।
जोएइ त्ति देशीवचनमेतद् निरूपयति।
(गा. ७४ टी.प.३०)
जोइक्ख—दीप। (गा. ३१८६)
झंपिय—अनुपशान्त। (गा. २६६३)
झड्डरविड्डर—जादू-टोना।
झड्डरविड्डरं नाम तेषु गृहस्थप्रयोजनेषु कुंटलविंटलादिषु वा प्रवर्तनम्। (गा. १५८६ टी.प.४६)
झरण—स्मरण, सीखे हुए ज्ञान का परावर्तन। (गा. ७८८)
झाम—जला हुआ। (गा. ३२७४)
झामण—१. अग्नि। (गा. ६३३)
२. दावाग्नि। (गा. १३७७)
झामित—जलाया हुआ। (गा. ३१४६ टी.प.५५)
झोस—छोड़ना। (गा. ७६७ टी.प.८७)
झोसण—अन्वेषण, मार्गण, गवेषणा। (गा. १०६०)
टक्कर—ठोला। (गा. ३३७ टी.प.५२)
टोल्ल—मुंड सिर पर अंगुली का आघात, ठुनकाना, ठोला मारना। (गा. २५ टी.प.१३)
ठक्कुर—ठाकुर। (गा. ३३७ टी.प.५२)
डगल/डगलग—पाषाण आदि के टुकड़े।
(गा. २४२ टी.प.१६)
डमर—देश-विप्लव। (गा. १३७८)
डहर—छोटा। (गा. १५७८)
डहरक—सोलह साल तक का बच्चा। (गा. १५७७)
डहरिका—१८ वर्ष तक की कन्या।(गा. २३१२ टी. प. ५)
डाल—वृक्ष की शाखा। (गा. ६३टी. प. २४)
डिंगर—छोटी जाति। (गा. ३०६४)
डियल—शाखा। (गा. ४४२८)
डेव—लांघना। (गा. ६५ टी. प. ३५)
डेवणय—लंघन। (गा. १३८०)
डोंब—नट, चांडाल विशेष जो गायन करते हैं।
(गा. ४३१२ टी. प. ६६)
ढंक—कौआ। (गा. ७७४ टी. प. ८६)
ढकिय—ढका हुआ। (गा. ३२६४)
ढड्ढर—तेज आवाज। (गा. २७०)
णंतग—वस्त्र। (गा. २८५०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णंतिक—वस्त्र छापने वाला, छींपा। (गा. ४३१२)
णंतिग—फटा-पुराना कपड़ा। (गा. ३२७७ टी.प. ७७)
णिज्जूह—गवाक्ष। (गा. ६६७)
णिदोच्च—भयरहित, स्वस्थ। (गा. ३१२५ टी. प. ५१)
णीहुज्ज—रहित। (गा. १६७०)
णूमणता—माया। णूमणयेति देशीपदमेतत् स्थगनम्।
(गा. ५८४ टी.प. ४१)
ण्ह—वाक्यालंकार में प्रयुक्त अव्यय (गा. २१६१ टी.प.८६)
तच्चण्णिय—बौद्धभिक्षु। (गा. २७१३)
• **तर**—समर्थ होना। (गा. २४७७)
तलवर—नगररक्षक, कोतवाल। (गा. २६०२)
तलिगा—उपानत्, जूता। (गा. ३४८०)
तिंतिण—तिनतिनाहट करने वाला। (गा. ८६१ टी.प.११३)
तिंतिणि—बड़बड़ाने वाला। तिंतिणि नाम यत्र तत्र वा स्तोकेऽपि कारणे करकरायणम्। (गा. १४४१ टी.प.१९)
तोणी—शरीर। (गा. ४३३४)
थक्क—प्रस्ताव। (गा. २४५४)
थल—खुले मुख का खाली स्थान। कवलप्रक्षेपणाय मुखे विडम्बिते यदाकाशं भवति तत् स्थलं भण्यते।
(गा. ३६८४ टी. प. ५७)
थलि—वैसा स्थान, जहां अनेक प्रकार के भिक्षुक भोजन लेने आते हों। (गा. ३०६४)
थिग्गल—पाबंद। (गा. ३५४०)
दर—किंचित्। (गा. २३५)
दायणा—दिखाना। (गा. ११५१)
दावण—दिखाना। (गा. २५८३)
दिक्करुय—छोटी। (गा. ३२१ टी.प.४४)
दिय—दिवस। (गा. ३३४७)
दीणार—दीनार, सिक्का। (गा. २६४२ टी.प.३५)
दुक्खर—दास। (गा. ११७२)
दुवग्ग—दोनों। (गा. ३१६६)
दूमण—सफेदी करना, पुताई। (गा. १७५४)
दे—अपशब्दसूचक अव्यय। (गा. २४५८)
देअट्टी—एक प्रकार का बिस्तर। (गा. ४३४४ टी.प.७१)
देवडंगर—१. एक प्रकार का छोटा मंदिर।
२. वह सार्वजनिक स्थान, जहां देवताओं की स्थापना की जाती है। (गा. ३०७० टी. प. ४१)
देवड—चर्मकार। (गा. ४३१२)
देसी—अंगूठा। देशीत्यङ्गुष्ठोऽभिधीयते।
(गा. ३३६७ टी. प.४)
दोट्टिय—तुम्बा। (गा. ४२६२ टी. प. ६३)
दोण्णक—पलाश के पत्तों का दोना।
पलाशादिपत्रमये दोण्णके। (गा. १३५१ टी.प.८५)
दोर—धागा। (गा. ३४८०)
दोसीण—पर्युषित, बासी अन्न। (गा. २६४२)
धणिय—अधिक, अतिशय। (गा. ३००८)
धाडंत—निष्कासित करना। (गा. १७५२)
धाडण—भागना। (गा. ६६३)
धाडिय—निःसृत। (गा. २१५८)
नक्खवीणिय—१. नख से वीणा बजाने वाला।
२. नखों को परस्पर घर्षण करना। (गा. ६५६)
नवय—जीर्ण वस्त्र, बिना पिंजी हुई रुई का आस्तरण विशेष।
(गा. ४३४४ टी.प.७१)
नालिकेर—नारियल। (गा. ३७४४)
निच्चिक्खिल्ल—कर्दम रहित। (गा. २५१६)
निच्छक्क—धृष्ट, निर्लज्ज। (गा. २३६२)
निच्छुभण—निष्कासन। (गा. ३५१६)
निद्धंधस—१. अकृत्य का सेवन करने वाला।
(गा. २४ टी.प.१२)
देशीवचनमेतद् अकृत्यं प्रतिसेवमानः।
२. निर्दय। (गा. ४५४५)
• **निप्फड**—निकलना, निष्क्रमण करना।
(गा. १०४६ टी.प.२०)
नियंसण—पहनने का वस्त्र। (गा. ११७ टी.प.४४)
निलुक्क—प्रच्छन्न, छिपा हुआ। (गा. १३८६)
निहेट्टित—तिरस्कार। (गा. १३८४ टी.प.८)
निहोडण—१. तिरस्कार। (गा. १३८४)
२. निवारण। (गा. १६६०)
नो—अंश।
नोकारो खलु देसं पडिसेहति।
नो शब्दो देशवचनत्वात् देशं प्रतिसेधयति।
(गा. १३६० टी.प.२)
पउत्थ—गृह। (गा. ३३३८ टी.प.८८)
पंजर—१. आचार्य, उपाध्याय, प्रवर्त्तक, स्थविर और गणावच्छेदक—इन पांचों का समुदाय,
२. आचार्य आदि की परस्पर सारणा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. प्रायश्चित्त आदि के द्वारा अकुशल प्रवृत्ति से निवृत्त करना। (गा. २७३ टी.प.२८)

पंतवण—प्रहार। (गा. २४६४)

• **पंताव**—घूमना। (गा. २४६६)

पंतावण—पीटना।
पंतावणं नाम पिट्टनम्। (गा. ७३३ टी.प.८०)

पच्चुरस—प्रत्यासन्न। (गा. २३७१)

पच्चुल्ल—प्रत्युत्। (गा. ३३७ टी.प.५२)

पच्छणग—शल्यक्रिया का शस्त्र। (गा. २३२४ टी.प.६)

पटिका—पात्र विशेष। (गा. ३८२८)

पडालिया—सार्थों का विश्रामस्थल।
पडालिका नाम यत्र मध्याह्ने सार्थिकास्तिष्ठंति।
(गा. ३३५१ टी.प.६०)

पडाली—कच्ची छत। (गा. ३३३८)

पडिच्छअ—अवान्तर गण का अधिपति। (गा. २७४४)

पड्डिया—नवप्रसूता महिषी। (गा. १३६१)

पढमालि /पढमालिय—नाश्ता। (गा. २२६८/११२)

पणग—१. काई। (गा. ३४१२)
२. पांच। (गा. २५२२)

पणताल—पैंतालीस। (गा. ४१५)

पणतालीस—पैंतालीस। (गा. ५३४)

पणतीस—पैंतीस। (गा. ४१४)

पणपण्ण—पचपन। (गा. ४१४)

पणयाल—पैंतालीस। (गा. ४१२)

• **पणाम**—अर्पित करना। (गा. २५५३)

पण्ण—१. पचास। (गा. ४१३)
२. दुर्गन्धित। (गा. ८५०)

पण्णट्ठी—पैंसठ। (गा. ४१३)

पण्णास—पचास। (गा. ४१४)

पतिरिक्क—एकान्त। (गा. १७३६)

पद्दिया—अभिनव प्रसूता महिषी। (गा. १३६१)

पन्नग—दुर्गन्धित। (गा. ८४५)

पम्हुट्ठ—विस्मृत। (गा. ३१६)

पम्हुट्ठ—१. परिष्ठापित, प्रक्षिप्त।
पम्हुट्टं ति परिठवियं ति एगट्ठं। (गा. ३५३६)

पया—चूल्हा।
पया उ चुल्ली समक्खाता। (गा. ३७१६)

परिहरणा—परिभोग।
परिहरणा नाम परिभोगः। (गा. २३५४ टी.प.१२)

परीसह—नापित। (गा. १४४६)

पलाणित्ता—घोड़े पर पलाण रखकर।
(गा. ६३२ टी.प.१३०)

पल्लिय—पल्ली, बस्ती। (गा. २७३४)

पव्वोणि—सम्मुख। (गा. २७३७)

पहेणग—सन्यासी को दिया जाने वाला भोजन। (गा. ३८२१)

पाण—चांडाल जाति। (गा. १४४८)

पाणंधि—आने-जाने का मार्ग।
पाणंधीति देशीपदमेतद् वर्तिनीवाचकम्।
(गा. १००० टी.प. ८)

पाहुड—कलह।
प्राभृतं नाम कलहः। (गा २६८० टी.प.२८)

पिल्लक—कुत्ते का बच्चा। (गा. १०१५ टी.प.१२)

पीढमद्द—मुख पर मीठा बोलने वाला।
पीठमर्दा नाम मुखप्रियजल्पाः। (गा. २४६५ टी.प.८)

• **पुंसय/पुंस**—पोंछना। (गा. २५२६ टी.प.१४)

पुत्तलिका—पुतली। (गा. २५४६)

पुरुस—कुम्भकार।
पुरुषः कुम्भकारः। (गा. ४३१२ टी.प.६६)

• **पुलोअ**—देखना। (गा. २३२५)

पेयाल—परिमाण। (गा. १४६६)

पेयालित—प्रश्न का उत्तर देना। (गा. १३८३ टी.प.७)

पेल्लणा—प्रेरणा। (गा. ६४८)

पेल्लित—प्रेरित। (गा. १११५)

पेल्लिय—क्षिप्त, पातित। (गा. १०४५ टी.प.२०)

पेसी—नौकरानी। (गा. ३२४७)

पोंट—घूंट। (गा. १०३५ टी.प.१८)

पोट्ट—१. पुत्र। (गा. ३३७ टी.प.५२)
२. उदर। (गा. ४५४४)

पोट्टल—पोटली। (गा. ४४५०)

पोट्टलि—पोटली, गठरी। (गा. २४५४)

पोतिका—वस्त्र। (गा. ४५३७ टी.प.६२)

पोत्त—वस्त्र। (गा. ३११३)

पोत्ती—वस्त्र। (गा. ३७७३)

पोत्तीय—वस्त्र। (गा. ३८५३)

पोयाल—सांड, वृषभ। (गा. १०४५)

पोर—पर्व। (गा. ३३६७)

फड्डगपति—गण के अवान्तर विभाग का नायक। (गा. २३४)

फलय/फलह—शाक आदि उगाने की बाड़ी। (गा. २३२६ टी.प.७)

फलिय—नाना प्रकार के व्यंजन और भक्ष्य पदार्थों द्वारा बनाया हुआ खाद्य विशेष।

फलियं पहेणगाई वंजणभक्खेहिं वा विरइयं तु। (गा. ३८२१ टी.प.१६)

फालहिय—शाक आदि उगाने की बाड़ी। (गा. २३२६)

• **फुराव**—अपहरण करवाना।

फुराविंति त्ति देशीपदमेतदपहारयंति। (गा. १५५० टी.प.४१)

फेडण—विपरिणत, उजाड़ देना। (गा. २०६२)

फेडण त्ति तत्र या वसतिः प्रागासीत् सा केनचिदपनीता स्यात्। (गा. २०६१ टी.प.७०)

फेडिय—त्याजित, छोड़ा हुआ। (गा. २४३१)

फेल्हसण—फिसलन। (गा. १७७० टी.प.६)

बइल्ल—बैल। (गा. ८८५)

बत्तीस—बत्तीस। (गा. ४४२८)

बब्बूल—बबूल। (गा. ३६३० टी.प.१६)

बलामोडि—बलपूर्वक, आग्रहपूर्वक। (गा. ७६५)

बायाल—बयालीस। (गा. ४७१)

बालपज्जेय—साधु का उपकरण विशेष। (गा. २०३५ टी.प.५७)

बावण्ण—बावन। (गा. ५३३)

बुक्क—विस्मृत। (गा. २५२)

बुब्बुय—वर्षा, बुदबुदाना। (गा. ३१११)

बुभुलइय—बहुभोजी। (गा. ८५०)

बोंडज—कपास से उत्पन्न वस्त्र। (गा. ३७३६)

बोंदि—शरीर। (गा. ११९२)

बोडियसाला—मठ। (गा. ३७२३ टी.प.५)

बोब्बड—मूक, भाषाजड़। (गा. ४६४०)

बोहिग—अनार्य, म्लेच्छ। (गा. ११७४)

भंगिल्ल—भंगवर्ती। (गा. १३६०)

भंडी—गाड़ी। (गा. ४५५)

भंभी—रसायण शास्त्र। (गा. ६५२)

भिणभिणायमाण—मक्खी की भिनभिनाहट। (गा. ११५१)

भुक्ख—बुभुक्षा। (गा. २५३४)

भुल्ल—भूलना। (गा. २३२५ टी.प.७)

भूणग—बालक। भूणके देशीपदमेतद् बालके। (गा. १२६५ टी.प.६६)

मइल—मलिन। (गा. ३२६२)

मंगुल—अशुभ। (गा. १०१६)

मक्कोड—मकोड़ा। (गा. ७१८ टी.प.७७)

मक्कोडय—मकोड़ा। (गा. ७१६ टी.प.७७)

मग्गय—पीछे। (गा. २६५३)

मग्गिल्ल—पूर्ववर्ती, पहले का। (गा. २२४६)

मडप्फर—गमनोत्साह। (गा. १८१७)

मडभ—कुब्ज। (गा. १४५०)

मत्तग—प्रस्रवण पात्र। (गा. ३६०८)

मद्दुक—मित्र। (गा. ६३२)

मल्लक—पात्र। (गा. १०८ टी.प.३८)

महल्ल—बड़ा। (गा. २५६)

माणं—वाक्यालंकार में प्रयुक्त अव्यय।

माणमिति वाक्यालंकारे। (गा. १६८८ टी.प.४८)

माल—ऊपर का कमरा। (गा. १५२०)

मुक—पर्याप्त, उचित, योग्य। (गा. २६१७)

मुणमुणंती—१. अस्पष्ट बोलती हुई, २. अव्यक्त अक्षर। (गा. २३१६)

मूइंग—१. मकोड़ा, चींटी। (गा. १७७२)

मूड—धान्य मापने का एक साधन। (गा. १६१० टी.प.३५)

मूतिंग—मकोड़ा।

मूइंग इति देशीपदं मत्कोटवाचकम्। (गा. ७१६ टी.प.७७)

मेरा—मर्यादा। (गा. ५८५)

मोय—प्रस्रवण। (गा. २७८६)

मोयपडिमा—प्रतिमा विशेष। (गा. ३७८६)

मोरंगचूलिया—पशुओं का आभूषण विशेष। (गा. १३६१)

मोरड—क्षाररस वाला वृक्ष विशेष। (गा. ३०८ टी.प.४०)

रंडा—एक प्रकार की गाली। (गा. २६२७ टी.प.१८)

रद्द—खिसककर गिरा हुआ। (गा. ३७३२ टी.प.६)

रसिगा—पीव। (गा. २७८३ टी.प.६१)

रिंगिणिका—वल्ली विशेष, कण्टकारिका। (गा. ३२१ टी.प.४४)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रीढा—अवज्ञा, अनादर। (गा. ३३५१)
रेग—१. निरर्थक। (गा. १४२५)
२. एकान्त अवसर। (गा. २५८१)
रोक्किर—दांत पीसना। (गा. १३८६ टी.प.८)
लंख—बांस पर चढ़कर नाच दिखानेवाला।
लंखा ये वंशादेरुपरि नृत्तं दर्शयन्ति।
(गा. १४४६ टी.प.१७)
लंखग—१. नाचने वाला, नर्तक। (गा. ७८३)
२. गायक। (गा. ४३१२ टी.प. ६६)
लंखिय—नट जाति। (गा. २७६४)
लंद—काल। (गा. ३३५७)
लंबण—कवल। (गा. ३६८५ टी.प.५७)
लाइय—गृहीत, स्वीकृत। (गा. ७६६ टी.प. ६६)
● **लाढ**—जीवन-यापन करना। (गा. २६६२)
लिंडिक—मेंगनी (बकरी आदि की)। (गा. ५०७ टी.प.१३)
लुग्ग—शुष्क। (गा. २३२६)
लेस—स्त्री की योनि। (गा. २८१२)
लोट्ठ—लेष्टु, पत्थर। (गा. ३१२६)
लोमसिया—ककड़ी। (गा. ३७४४)
ल्हसन—फिसलना। (गा. १७७२ टी.प.६)
वक्कल—चक्राकार, वर्तुल। (गा. ६५)
वक्खार—छोटा कमरा। (गा. २७८२)
वगडा—परिक्षेप। वगडा नाम परिक्षेपः।
(गा. ३७०३ टी.प.१)
वग्घक—एक प्रकार का घास। (गा ३३६६)
वग्घिक्क—धब्बा। (गा. ३२१८)
वज्झियाव—इक्षु।
वज्झियावो नाम देशीवचनत्वादिक्षुः।
(गा. २५१ टी.प.२२)
वज्झियावग—इक्षु।
वज्झियावगो उच्छु इति। (गा. २५१ टी. प. २२)
वट्ट—विद्यार्थी। (गा. ४३१३)
वट्टावअ—सेवा करनेवाला। (गा. २५६)
वडार—विभाग। (गा. ३१६१)
वड्डकुमारी—बड़ी लड़की। (गा. ६३ टी.प. २५)
वरंडक—बरामदा। (गा. १८५ टी.प.३)
वरुड—१. एक प्रकार का शिल्पी। (गा. २११ टी.प.१०)
२. हीन जातिवाला। (गा. ३२६२ टी.प.८०)

वाडु—भाग जाना। देशीवचनमेतद् नशनं करोति नश्यतीत्यर्थः। (गा. ८२१)
वाणमंतर—व्यंतर देव। (गा. ६५३)
वाणमंतरी—व्यंतरी। (गा. ११४५)
वारिक—नापित। नापिता नखशोधका वारिका इत्यर्थः।
(गा. ३६२२)
विज्जल—कीचड़युक्त स्थान। (गा. २२३)
विटलक—जादू-टोना। (गा. ३६७१ टी.प.५५)
विट्टालित—उच्छिष्ट, भ्रष्ट। (गा. ३३१६)
विड्डर—गृहस्थ के लिए जादू-टोना में प्रवृत्त होना।
(गा. १५८६)
● **विद्दाह**—नष्ट होना। (गा. २३६६)
● **विप्फाल**—प्रश्न करना, पूछना।
विप्फालेइ देशीवचनमेतत् पृच्छतीत्यर्थः।
(गा. २४८ टी. प. २१)
विप्फालय—पूछना। (गा. २४८ टी.प.२१)
विमत्तग—प्रस्रवण पात्र। (गा. ३६३३)
वियरय—लघु स्रोत वाला जलाशय, जो सोलह हाथ विस्तृत होता है। नदी या महागर्त में इसका संकुचन तीन हाथ विस्तृत होता है।
वियरओ नाम लघुस्रोतो रूपो जलाशयः स च षोडशहस्तविस्तारो नद्यां महागर्तायां वा तस्याकुंचः त्रिहस्तविस्तारः। (गा. १३८० टी.प.६)
विरल्ल—विस्तृत, बिखेरा हुआ। (गा. १७७३)
विवाह—वधू पक्ष की ओर से दिया जानेवाला भोज।
(गा. ३७३६)
विसुयाविय—शुष्क किया हुआ, विशुद्ध किया हुआ।
(गा. २६२१)
विस्सामण—वैयावृत्य, पैर दबाना। (गा. ४१२३)
वीसाल—बीस। (गा. ५३३)
वीवाह—वधूपक्ष की ओर से दिया जाने वाला भोज।
(गा. ३७३६)
वेउट्टिय—बार-बार। (गा. २०८४)
वेंट—बीच का खाली स्थान। (गा. १३८० टी.प. ६)
वेंटक—बिस्तर। (गा. २५२७ टी.प.१४)
वेंटल—जादू-टोना। (गा. ३०६३)
वेंटिय—गठरी। (गा. १२६)
वेंटिहत—परिचित। (गा. ३६७३)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेल्लूक—एक प्रकार का कीट। (गा. ३१६८)
वोगड—विभक्त। (गा. ३३५८)
वोट्टित—उच्छिष्ट, अपवित्र। (गा. ३३१६)
वोड्ड—मूर्ख। (गा. २४७०)
• **वोल**—गमन करना। (गा. १२७७ टी.प. ६८)
संकट्ट—मार्ग। (गा. ३५६४)
संकर—पथ, रास्ता। (गा. ४४२८)
संखड—कलह। (गा. ५०१५ टी.प. ११)
संखडि—१. सरस भोजन। (गा. २३१)
२. मिठाई, जीमनवार। (गा. १६५०)
संखडी—जीमनवार। (गा. ११२)
संखेडिपाल—पशुपालक। (गा. १००० टी.प. ८)
संगार—संकेत। (गा. ६४३)
संगिल्ल—साथ में, समूह। (गा. ६३२)
संगेल्ल—गायों का समूह।
संगिल्लो नाम गोसमुदायः। (गा. १००० टी.प. ७)
• **संचिक्ख**—घात करना। (गा. ३२१०)
संडास—संडासी। (गा. ३३६८)
संथड—राज्य। संथडं नाम राज्यम्। (३३५५)
संथरमाण—तृप्त न होता हुआ। (गा. १७६५)
संपसार—मंत्रणा करना। (गा. १३८६ टी.प. ८)
संबर—कचरा उठाने वाला। संबराः कचवरोत्सारकाः।
(गा. ३२६२ टी.प. ८०)
संमलि—दूती। (गा. २३७६)
सज्झंति—भगिनी। (गा. १६०७)
सज्झंतिया—भगिनी। (गा. १६०३)
सज्झिलग—१. भाई। (गा. ११४२)
२. पड़ोसी। (गा. १६८ टी.प. ३६)
सब्भिलग—साथी। (गा. १३२४)
समुइ—स्वभाव। (गा. २६३७)
सयज्झिय—सखा। (गा. ४४५ टी.प. ६२)
सातिज्जिय—अनुमोदित। (गा. १२८३)
सामत्थण—पर्यालोचन। (गा. ३८६४)
साला—शाखा। (गा. ३७५१)
सासेरी—यंत्रमयी नर्तकी।
सासेरीति देशीवचनमेतद् यंत्रमयी नर्तकी।
(गा. ११९२ टी.प. ३४)
साहण—कथन। (गा. ३८६१)

साही—गली। (गा. ३१५०)
सिग्ग—परिश्रम। सिग्ग त्ति देशीपदमेतत् परिश्रम इत्यर्थः।
(गा. १७७० टी.प. ६)
सिंभिय—श्लैष्मिक। (गा. ३८३६ टी.प. ३)
सिव्वणि—सूई। (गा. ३५४६)
सीभर/सीभरग—बोलते हुए थूक उछालने वाला।
सीभरो नाम यः उल्लपन् परं लालया सिंचति।
(गा. १४८२ टी.प. २६)
सीयाण—श्मशान। (गा. ३१४६)
सेट्ठिणी—सेठाणी। (गा. १६०१ टी.प. ५१)
सेट्ठी—श्रेष्ठी। तुष्टनरपतिप्रदत्तश्रीदेवताध्यासितसौवर्णपट्टविभूषितोत्तमांगो नगरचिंताकारी नागरिकजनः श्रेष्ठी। (गा. २१६ टी.प. १२)
सेहि—गत, गया हुआ। (सू. ७/३)
सोंड—सूंड। (गा. १३८३)
हक्कार—गर्जना। (गा. १३८६)
हडि—कारावास। (गा. ४५४४)
हड्ड—हड्डी। (गा. ४५४४)
हत्थिहत्थ—दुस्तर। (गा. ६६५)
हरियवण्णी—वैसा प्रदेश, जहां प्रायः दुर्भिक्ष होता हो और वहां के लोग हरित, शाक आदि खाकर जीते हों। (गा. २०६१)
हाडहड—तत्काल।
हाडहडं देशीपदमेतत् तत्कालमित्यर्थः।
(गा. २७६ टी.प. ३०)
हाडहडा—आरोपणा, प्रायश्चित्त का एक प्रकार। (गा. ५६६)
हिंडिक—नगररक्षक। (गा. ६८३ टी.प. ६७)
हित्थ—हिंसित, मारा हुआ। हत्थोत्ति देशीपदमेतद् हिंसितः।
(गा. १०० टी.प. ३६)
हिरडिक्क—चांडालों का यक्ष, जिसके मन्दिर (मूर्ति) के नीचे मनुष्य की हड्डियां रखी जाती हैं। (गा. ३१४६ टी.प. ५५)
हेट्ठा—नीचे। (गा. ७५६)
हेट्ठिल्ल—नीचे वाला। (गा. ५३२)
हेहंभूत—गुण-दोष के ज्ञान से विकल और निर्दम्भ।
हेहंभूतो नाम गुणदोष-परिज्ञान-विकलोऽशठभावः।
(गा. १७५ टी.प. ५६)
होढ़ा—दे ही दिया, कर ही दिया।
'होढ़ा' इति देशीपदमेतद् दत्तमेव कृतमेवेत्यर्थः।
(गा. ६७७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कथाएँ

१. माया से शुद्धि नहीं

एक गांव में एक ब्राह्मण रहता था। वह कामुक था। एक बार उसने अपनी सुन्दर पुत्र-वधू या चंडालिन में आसक्त हो उसके साथ संभोग कर लिया। उसके मन में प्रायश्चित्त का भाव जागा। वह प्रायश्चित्त के निमित्त एक चतुर्वेद के ज्ञाता ब्राह्मण के पास गया और यथार्थ को छुपाते हुए बोला —विप्रवर ! आज स्वप्न में मैं अपनी पुत्रवधू या चंडालिन के साथ कुकृत्य कर बैठा। आप मुझे प्रायश्चित्त दें। यह मायापूर्वक किया जाने वाला प्रायश्चित्त है। (गा. १८ टी. प. १०)

२. कुम्हार का मिच्छा मि दुक्कडं

एक आचार्य अपनी शिष्य मंडली के साथ जनपद विहार करते हुए एक गांव में आए। वे वहां एक कुंभकारशाला में ठहरे। आचार्य ने अपने शिष्यों से कहा—'यह कुंभकारशाला है। मिट्टी के अनेक प्रकार के भांड यहां रखे हुए हैं। सबको सतर्क रहना है। इधर-उधर आते-जाते भांड फूट न जाएं, पूरा ध्यान रखना है।' एक शिष्य प्रमादी था, कुतूहली था। वह कंकर से एक भांड फोड़ता और तत्काल 'मिच्छा मि दुक्कडं' का उच्चारण करता। वह बार-बार ऐसा करने लगा। दो-चार दिन बीते। कुंभकार ने शिष्य को समझाया। वह नहीं समझा, तब कुंभकार ने एक दिन उस शिष्य का कान खींचकर उसके सिर पर 'ठोला' मारा और बोला 'मिच्छा मि दुक्कडं'। दो-चार बार ऐसा करने पर शिष्य बोला—'अरे मुझ निरपराध को क्यों पीट रहे हो ?' कुंभकार बोला—'तुमने मेरे भांड क्यों फोड़े ?' शिष्य ने कहा—'भांड फोड़कर मैंने 'मिच्छा मि दुक्कडं' कहकर प्रायश्चित्त कर लिया था।' कुंभकार ने कहा—'मैंने भी 'ठोला' मारकर यह प्रायश्चित्त कर लिया है।' अतः इसमें मेरा कोई दोष नहीं है। यह कुंभकार और शिष्य का प्रायश्चित्तस्वरूप किया हुआ अव्यावहारिक मिच्छा मि दुक्कडं है। (गा. २५ टी.प.१३)

३. ऋजुता का परिणाम

दो गीतार्थ मुनि साथ-साथ विहरण कर रहे थे। एक बार सचित्त वस्तु के विषय में दोनों में चिन्तन चला। एक ने कहा—मुझे ऐसा प्रतीत होता है। दूसरे ने कहा—नहीं, मुझे ऐसा प्रतीत होता है। दोनों किसी भी निर्णय पर नहीं पहुंच पाए। निकट में कोई तीसरा गीतार्थ मुनि नहीं था जिसके पास जाकर समाधान पाया जा सकता हो। तब एक गीतार्थ मुनि ने दूसरे से कहा—'आर्य ! तुम ही मेरे लिए प्रमाण हो। तुम ही निर्णय दो। इस प्रकार निर्णायकरूप में नियुक्त होने पर उसने सोचा —मैं तीर्थंकर का प्रतिनिधि तथा संघ का आचार्य हूं। मैं संघ की मर्यादा का अतिक्रमण कैसे करूँ ? उसने कहा—आर्य! तुमने जो कहा, वही सही है। मैंने जो सोचा था, वह सही नहीं है। यह है ऋजुता का परिणाम। (गा. २९, ३० टी.प.१३, १४)

४. स्वाध्याय में काल और अकाल का विवेक

एक मुनि कालिक श्रुत का स्वाध्याय कर रहा था। रात्रि का पहला प्रहर बीत गया। उसे इसका भान नहीं रहा। वह स्वाध्याय करता ही गया। एक सम्यक्‌दृष्टि देवता ने यह जाना। उसने सोचा—यह मुनि अकाल में स्वाध्याय कर रहा है। कोई नीच जाति का देवता इसको ठग न ले, इसलिए उसने छाछ बेचने का स्वांग रचा। 'छाछ लो, छाछ लो।' यह कहता हुआ वह उस मार्ग से निकला। वह बार-बार उस मुनि के उपाश्रय के पास आता-जाता रहा। मुनि ने मन ही मन—यह छाछ बेचनेवाला मेरे स्वाध्याय में बाधा डाल रहा है—यह सोचकर उससे कहा—अरे ! अज्ञानी ! क्या यह छाछ बेचने का समय है ? समय की ओर ध्यान दो। तब उसने कहा—मुनिवर्य ! क्या यह कालिक श्रुत का स्वाध्याय-काल है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुनि ने यह बात सुनी और सोचा—यह कालिक-श्रुत का स्वाध्याय-काल नहीं है। आधी रात बीत चुकी है। मुनि ने प्रायश्चित्त स्वरूप 'मिच्छा मि दुक्कडं' का उच्चारण किया। देवता बोला—फिर ऐसा मत करना, अन्यथा तुम तुच्छ देवता से ठगे जाओगे। अच्छा है, स्वाध्याय-काल में ही स्वाध्याय करो न कि अस्वाध्याय-काल में। (गा. ६३ टी.प.२४)

५. एक खंभे का प्रासाद

राजगृह नगर। महाराजा श्रेणिक। महारानी ने एक बार कहा—'राजन् ! मेरे लिए एक खंभे वाला प्रासाद बनवाएं। राजा ने बढ़इयों को काष्ठ लाने का आदेश दिया। वे अभयकुमार के साथ काष्ठ के लिए वन में गए। वहां उन्होंने एक विशाल वृक्ष देखा। वह वृक्ष सभी लक्षणों से युक्त और सीधा था। उन्होंने वृक्ष की धूप-दीप से पूजा कर, प्रार्थना के स्वरों में कहा—जो इस वृक्ष का अधिष्ठाता देव है, वह हमें दर्शन दे, अन्यथा हम इस वृक्ष को काट देंगे। तब अधिष्ठाता व्यन्तर देव अभयकुमार महामात्य के सामने प्रकट हुआ और बोला—'मैं महाराज श्रेणिक के लिए एक खंभे वाला प्रासाद निर्मित कर दूंगा। वह सभी ऋतुओं में सुखकारी और सभी प्रकार के साधनों से युक्त होगा। तुम लोग मेरे इस आवास-स्थान—वृक्ष को मत काटो। यह वृक्ष मेरे आवास के ऊपर चूलिका के समान है।' बढ़इयों ने वृक्ष नहीं काटा। उस व्यन्तर देव ने एक खंभे वाले प्रासाद का निर्माण कर दिया। (गा. ६३ टी.प.२४, २५)

६. चोर की खोज

राजगृह नगर में एक चंडालिनी रहती थी। वह गर्भवती हुई। उसे आम खाने का दोहद उत्पन्न हुआ। वह आम की ऋतु नहीं थी। उसने अपने पति से कहा—मुझे आम लाकर दो। पति बोला— यह समय आम का नहीं है। पत्नी ने हठ किया तब वह चंडाल महाराज श्रेणिक के बगीचे के पास गया और 'अवनामिनी' विद्या का प्रयोग कर आम की शाखाओं को झुकाया, पांच-दस आम तोड़े और फिर उन्नामिनी विद्या का प्रयोग कर उन शाखाओं को पूर्ववत् ऊपर कर डाला। मातंगी का दोहद पूरा हुआ।

प्रातःकाल राजा ने देखा कि आम्रवृक्ष से आम तोड़े हुए हैं। वहां वृक्ष के आस-पास किसी मनुष्य के पदचिह्न नहीं दीखे। राजा ने सोचा—कौन कैसे यहां आया? जिस व्यक्ति में ऐसी शक्ति है, वह कभी-न-कभी मेरे अन्तःपुर को भी क्लिष्ट कर सकता है। राजा ने अभय को बुलाकर कहा—यदि सात दिनों की अवधि में चोर को पकड़कर मेरे सामने उपस्थित नहीं कर पाओगे तो तुम्हें मौत की सजा दी जाएगी।

अभय चोर की खोज में निकला। एक स्थान पर एक नट अपने करतब दिखाने के लिए तत्पर हो रहा था। वहां लोगों की भीड़ एकत्रित थी। अभय वहां पहुंचा और लोगों से बोला—'भाइयो ! जब तक यह नट सज-धज कर आता है तब तक मैं आपको एक कहानी सुनाता हूं, आप उसे सुनें।

एक नगर में एक सेठ रहता था। वह अत्यंत दरिद्र था। उसकी एक रूपवती विवाह योग्य कन्या थी। वह कन्या अच्छे वर की प्राप्ति के लिए कामदेव की अर्चा-पूजा करती थी। एक दिन वह पूजा के निमित्त फूलों की प्राप्ति के लिए बगीचे में गई और चोरी-चोरी फूल चुनने लगी। बागवान् ने उसे देख लिया। वह कन्या के साथ दुर्व्यवहार करने लगा। कन्या बोली—मैं कुंआरी हूं। मेरे साथ ऐसा मत करो। तुम्हारे घर पर भी बहिनें, बेटियां होंगी।' वह बागवान् बोला—एक शर्त पर मैं तुझे छोड़ सकता हूं। वह शर्त यह है कि जब तेरा विवाह हो, उसी दिन पति के पास जाने से पूर्व तू मेरे पास आएगी। लड़की ने यह शर्त स्वीकार कर ली। बागवान् ने उसे तत्काल मुक्त कर दिया। कालान्तर में लड़की का विवाह हो गया।

सुहागरात। विवाह की पहली रात्रि। वह पति के कक्ष में गई और हाथ जोड़कर विवाह से पूर्व स्वीकृत शर्त की जानकारी दी। पति ने उसे शर्त पूरी करने की आज्ञा दे दी। वह अपने घर से बागवान् से मिलने निकली। रास्ते में चोरों ने उसे घेर लिया। उसने अपनी बात कही। चोरों ने भी उसे छोड़ दिया। वह आगे चली। एक राक्षस मिला। वह छह महीनों से भूखा था। वह छह महीनों में एक ही बार खाता था। उसने उस नवोढ़ा को पकड़ लिया। नवोढ़ा ने अपनी पूरी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बात बताई। राक्षस ने उसे छोड़ दिया। वह वहां से चलकर बागवान् के पास आई। बागवान् ने उसे आश्चर्य से देखा और पूछा—अरे यहां क्यों आई हो ? उसने कहा—अपनी शर्त को पूरा करने के लिए मैं आई हूं। बागवान् बोला—क्या पति ने तुझे यहां आने की आज्ञा दे दी ? कैसे दी ? उसने अपनी सारी रामकथा सुनाई। बागवान् ने सोचा—'ओह ! यह सत्य-प्रतिज्ञ है। इतने सारे व्यक्तियों ने इसे छोड़ दिया तो मैं फिर इसे कैसे दूषित करूं।' यह विचार कर उसने उसे छोड़ दिया।

वहां से लौटकर वह राक्षस और चोरों के बीच से आई। पर सभी ने उसे मुक्त कर दिया। वह अपने पति के पास सुरक्षित आ पहुंची।'

अभय ने उन श्रोताओं से पूछा—आपने पूरी कहानी सुन ली। अब आप बताएं की कहानी के पात्रों में किस पात्र ने दुष्कर कार्य किया ? यह सुनकर उस एकत्रित भीड़ में उपस्थित ईर्ष्यालु व्यक्तियों ने कहा—उस लड़की के पति ने दुष्कर कार्य किया। भूखे व्यक्तियों ने राक्षस को, कामुक मनुष्यों ने बागवान् को और चांडाल ने चोर को दुष्कर कार्य करने वाला बताया।

अभय ने उस चांडाल को चोर समझकर पकड़ लिया और उसे राजा के समक्ष उपस्थित किया। चोर ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया और यह भी बता दिया कि उसने चोरी कैसे की। राजा ने कहा—'मातंग ! यदि तू मुझे ये दोनों विद्याएं सिखा देगा तो तुझे जीवनदान मिलेगा अन्यथा मृत्यु का वरण करना होगा।' मातंग ने विद्या देना स्वीकार कर लिया।

राजा सिंहासन पर बैठा। मातंग नीचे जमीन पर बैठ गया। विद्या का ग्रहण न होने पर राजा ने इसका कारण पूछा। मातंग बोला—राजन् ! अविनय से विद्या गृहीत नहीं होती। तुम ऊपर बैठे हो और मैं विद्या-दाता नीचे, यह अविनय है। तब राजा तत्काल सिंहासन को छोड़कर नीचे बैठा और मातंग को ऊंचे आसन पर बिठाया। विद्याएं सिद्ध हो गईं।

(गा. ६३ टी.प.२४, २५)

७. भक्ति और बहुमान

एक गिरि-कंदरा में शिव की मूर्ति थी। एक ब्राह्मण और एक भील—दोनों उसकी पूजा-अर्चा करते थे। ब्राह्मण प्रतिदिन स्नान आदि कर, पवित्र होकर अर्चना करता था। अर्चना के पश्चात् वह शिव के सम्मुख बैठकर शिवजी का स्तुति-पाठ कर चला जाता। उसमें शिव के प्रति विनय था, बहुमान नहीं। वह भील शिव के प्रति बहुमान रखता था। वह प्रतिदिन मुंह में पानी भर लाता और उससे शिव को स्नान करा, प्रणाम कर वहीं बैठ जाता। शिव प्रतिदिन उसके साथ बातचीत करते। एक बार ब्राह्मण ने दोनों का आलाप-संलाप सुन लिया। उसने शिव की पूजा कर उपालंभ भरे शब्दों में कहा— तुम भी व्यन्तर शिव हो, जो ऐसे गंदे व्यक्ति के साथ आलाप-संलाप करते हो। तब शिव ने ब्राह्मण से कहा—'भील में मेरे प्रति बहुमान—आंतरिक प्रीति है, वह तुम्हारे में नहीं है।'

एक बार शिव ने अपनी आंखें निकाल लीं। ब्राह्मण अर्चा करने गया। वह शिव के आंखें न देखकर रोने लगा और उदास होकर वहीं बैठ गया। इतने में ही भील आ पहुंचा। शिव की आंखें न देखकर उसने तीर से अपनी दोनों आंखें निकाल कर शिव के लगा दी। ब्राह्मण ने यह देखा। उसे शिव की बात पर पूरा विश्वास हो गया कि भील में बहुमान का अतिरेक है।

(गा. ६३ टी.प.२५)

८. ज्ञानान्तराय

एक बहुश्रुत आचार्य थे। वे अपने शिष्यों को वाचना देते-देते परिश्रान्त हो गए। वे स्वाध्याय-काल को अस्वाध्याय-काल कहने लगे। इस प्रक्रिया से उनके ज्ञानान्तराय कर्म का बंध हुआ। वे मरकर देवलोक में उत्पन्न हुए। वहां से च्युत होकर वे एक अहीर के कुल में उत्पन्न हुए। उनका यौवन अवस्था में विवाह हुआ। वे भोग भोगने लगे। उनके एक कन्या उत्पन्न हुई। वह अत्यन्त रूपवती थी। एक बार वे दोनों पिता-पुत्री अपने पशु धन को लेकर अन्यत्र जा रहे थे। वे शकट में सवार थे। गांव के अन्यान्य लोग भी अपने-अपने शकट में थे। पुत्री अपने शकट के अगले सिरे पर बैठी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थी और वह शकट अन्यान्य सभी शकटों से आगे था। अन्य शकटों में बैठे तरुण अहीर युवकों ने सोचा, शकट को आगे लेकर लड़की को देखें। वे अपने-अपने शकटों को विषम मार्ग से आगे ले जाने लगे। विषम मार्ग के कारण उनके शकट टूट गए। तब उन युवकों ने उस लड़की का नाम 'अशकट' रख दिया। वे उसके पिता को 'अशकट पिता' कहने लगे। अहीर पिता ने यह सुना। उसका मन वैराग्य से अनुरंजित हो गया। वह अपनी पुत्री का एक अहीर तरुण से विवाह कर स्वयं प्रव्रजित हो गया। वह आगम का अध्ययन करने लगा। उत्तराध्ययन सूत्र के तीसरे अध्ययन 'चाउरंगिज्जं' तक पढ़ा। जब उसने चौथा अध्ययन 'असंखयं' प्रारंभ किया तब पूर्वबद्ध ज्ञानान्तराय कर्म का विपाकोदय हुआ। अब उसे पाठ याद नहीं हो पा रहा था। अनेक दिन बीते। स्थिति में कोई अन्तर नहीं आया। उसने आचार्य से पूछा। आचार्य बोले—'तुम बेले-बेले की तपस्या करो और निरंतर आचाम्ल करते रहो।' वह तप करने लगा। बारह वर्षों के इस क्रम में वह मात्र बारह श्लोक ही सीख पाया। उसका ज्ञानान्तराय कर्म जब क्षीण हुआ तब वह बहुश्रुत हो गया। (गा. ६३ टी. प. २५, २६)

९. विद्यादाता का नाम मत छुपाओ

एक गांव में एक नापित रहता था। वह अनेक विद्याओं का ज्ञाता था। विद्या के प्रभाव से उसका 'क्षुरप्रभांड' अधर आकाश में स्थिर हो जाता था। एक परिव्राजक उस विद्या को हस्तगत करना चाहता था। वह नापित की सेवा में रहा और विविध प्रकार से उसे प्रसन्न कर वह विद्या प्राप्त की। अब वह अपने विद्याबल से अपने त्रिदंड को आकाश में स्थिर रखने लगा। इस आश्चर्य से बड़े-बड़े लोग उस परिव्राजक की पूजा करने लगे। एक बार राजा ने पूछा—भगवन् ! क्या यह आपका विद्यातिशय है या तप का अतिशय है ? उसने कहा—यह विद्या का अतिशय है। राजा ने पुनः पूछा—आपने यह विद्या किससे प्राप्त की ? परिव्राजक बोला—मैं हिमालय में साधना के लिए रहा। वहां मैंने एक फलाहारी तपस्वी ऋषि की सेवा की और उनसे यह विद्या प्राप्त की। परिव्राजक के इतना कहते ही आकाशस्थित वह त्रिदंड भूमि पर आ गिरा।
(गा. ६३ टी.प. २६)

१०. सुलसा की धार्मिक दृढ़ता

राजगृह नगरी में सुलसा श्राविका रहती थी। वह सम्यक्त्व में सुदृढ़ थी। एक बार अंबड़ राजगृह की ओर जा रहा था। अनेक भव्यजन को सम्यक्त्व में सुदृढ़ करने की दृष्टि से भगवान् ने अंबड से कहा—तुम राजगृह जा रहे हो। सुलसा को धर्म-जागरणा के विषय में पूछना। अंबड़ ने सोचा—पुण्यवती है सुलसा, जिसको भगवान भी पूछते हैं। अंबड राजगृह आया। सुलसा की परीक्षा के लिए वह उसके घर भिक्षा के लिए गया। भिक्षा नहीं मिली। अंबड ने अनेक रूप बनाए। फिर भी सुलसा ने उसको आदर-सम्मान नहीं दिया। वह उसके ऐश्वर्य या चमत्कारों से संमूढ नहीं बनी। (गा. ६४ टी.प. २७)

११. श्रेणिक की सम्यक्त्व-दृढ़ता

राजगृह नगर में राजा श्रेणिक राज्य करता था। एक बार इन्द्र ने अपने देव-परिषद् में श्रेणिक के सम्यक्त्व—धार्मिक दृढ़ता की प्रशंसा की। एक देवता ने इन्द्र की बात पर विश्वास नहीं किया। वह श्रेणिक की परीक्षा करने के लिए मुनि का वेश बना, एक तालाब पर मछलियां पकड़ने बैठा। श्रेणिक उस ओर से निकला, उसने भिक्षु को मछलियां पकड़ते देखकर कहा—अरे! ऐसा मत करो।

दूसरी बार वही देव एक गर्भवती साध्वी का रूप बनाकर मार्ग में बैठ गया। श्रेणिक ने देखा और साध्वी को अपने अन्तःपुर के एक कमरे में ले गया और वहां प्रसूतिकर्म संपन्न कराया। यह सारी वार्ता अत्यन्त गुप्त रखी। राजा स्वयं उस कार्य में संलग्न रहा। उसकी प्रवचन के प्रति श्रद्धा में न्यूनता नहीं आई। तब देव ने साध्वी का रूप छोड़कर अपने मूल रूप में राजा के समक्ष आकर कहा—राजन् ! सफल है तुम्हारा जन्म और जीवन। जिन-प्रवचन पर तुम्हारी यह दृढ़ भक्ति सराहनीय है। (गा. ६४ टी. प. २७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२. अन्तर्शल्य और अश्व

एक राजा था। उसके पास सर्वलक्षणयुक्त एक अश्व था। वह दौड़ने और कूदने में समर्थ था। उस अश्व के कारण राजा अजेय था। राजा अपने सामंत-राजाओं पर अनुशासन करता था। एक बार सामंत राजाओं ने अपनी-अपनी सभा में सभासदों से कहा—क्या कोई ऐसा व्यक्ति है जो उस अश्व को चुराकर ले आए ? सभी ने कहा—वह अश्व एक पिंजरे में रहता है। प्रतिपल उसकी निगरानी के लिए पुरुष तैनात रहता है। हवा भी उस तक नहीं पहुंच पाती। इतने में ही एक सभासद् ने कहा—'यदि आप कहें तो मैं उस अश्व को मार सकता हूं, परन्तु उसका अपहरण नहीं कर सकता। राजा बोला—वह अश्व हमारा भी न हो और उसका भी न रहे। जाओ, तुम उसका वध कर दो। वह व्यक्ति वहां गया। एक गुप्त स्थान में छुप गया। एक चिकने ईषिका के अग्रभाग में कांटे की अणी को पिरोकर बच्चों के छोटे धनुष्य पर बाण चढ़ा, अश्व की ओर फेंका। अश्व के शरीर पर बाण लगा और बाण नीचे गिर पड़ा। वह सूक्ष्म कंटक (शल्य) अश्व के शरीर में प्रविष्ट हो गया। उस अव्यक्त शल्य के प्रभाव से अश्व सूखने लगा। उपचार किए गए। खाने-पीने की भी व्यवस्था में सुधार किया, पर अश्व दिन-प्रतिदिन कमजोर होता गया। अश्व-वैद्य को बुलाया गया। उसने अश्व की बाह्य स्थिति का निरीक्षण कर सोचा, इसे कोई रोग नहीं है। अवश्य ही इसके शरीर के भीतर कोई अव्यक्त शल्य है। तत्काल उसने कर्मकरों से कहकर उस अश्व के पूरे शरीर पर गीली मिट्टी का लेप करवाया। वैद्य वहीं खड़ा रहा। अश्व के शरीर के जिस भाग में वह मिट्टी का लेप पहले सूखा, वैद्य ने उस अवयव को चीर कर उस सूक्ष्म शल्य को निकाल दिया। अश्व स्वस्थ हो गया। (गा. ३२१ टी. प. ४४)

१३. रोग को छुपाओ मत

एक तापस का नाम था कुंचिक। एक दिन वह फलों के लिए जंगल में गया। रास्ते में एक नदी थी। उसने चलते-चलते नदी के तट पर एक मृत मत्स्य को देखा। वह जन-शून्य स्थान था। उसने उस मत्स्य को पकाया और खा लिया। मत्स्य का मांस पचा नहीं। वह अजीर्ण रोग से आक्रान्त हो गया। वह वैद्य के पास गया। वैद्य ने पूछा—तुमने क्या खाया था, जिससे अजीर्ण हुआ है। तापस ने कहा—फलों के अतिरिक्त मैंने कुछ भी नहीं खाया। वैद्य बोला—कंद, फल आदि खाने से तुम्हारा शरीर कृश हो गया है, इसलिए तुम घृतपान करो। उसने खूब घी पिया। वह और अधिक बीमार हो गया। उसने पुनः वैद्य को पूछा। वैद्य ने कहा—सही-सही बताओ, तुमने उस दिन क्या खाया था ? तब तापस बोला—मैंने एक मत्स्य खाया था। तब वैद्य ने उसे संशोधन, वमन, विरेचन आदि चिकित्सा-विधियों से स्वस्थ कर दिया। (गा. ३२३ टी.प. ४५)

१४. छुपाने से हानि

दो राजाओं के मध्य युद्ध चल रहा था। एक राजा का योद्धा अत्यन्त शूरवीर होने के कारण राजा को प्रिय था। उसके अनेक तीर लगे और उसका शरीर अनेक शल्यों से भर गया। वैद्य उन शल्यों को निकालने लगा। उस समय उस योद्धा को अत्यंत पीड़ा का संवेदन हुआ। उसने एक अंग में शल्य रहने पर भी वैद्य को नहीं बताया। उन शल्यों के कारण वह दुर्बल होता गया। फिर वैद्य के पूछने पर उसने मूल बात बताई। वैद्य ने उस अंग से भी शल्य निकाल दिया। वह बलवान हो गया। (गा. ३२३ टी. प. ४६)

१५. दो मालाकार

एक गांव में दो मालाकार रहते थे। कौमुदी-महोत्सव को निकट जानकर दोनों ने उद्यान से पुष्पों का संचय किया। एक मालाकार ने सारे फूलों को सजाकर बाजार में रखा। दूसरा फूलों को यों ही टोकरी में रखकर बाजार में बैठ गया। जिसने फूल सजाकर खुले रूप में रखे थे, उसे प्रचुर लाभ हुआ। सारे फूल बिक गये। दूसरे मालाकार के सारे फूल यों ही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पड़े रहे। कोई ग्राहक नहीं आया। वह हानि में रहा। (गा. ३२३ टी. प. ४६)

१६. पांच वणिक् और पंद्रह गधे

एक निगम में पांच वणिक् भागीदारी में व्यापार करते थे। उन पांचों का समान विभाग था। उनके पास पन्द्रह गधे हो गए। वे सभी गधे भिन्न-भिन्न भार-वहन करने में समर्थ थे। उनके भारवहन की क्षमता के आधार पर उनके मूल्य में भी अन्तर आ गया। पांचों व्यापारी उनका समविभाग नहीं कर पा रहे थे। वे आपस में झगड़ने लगे। कलह बढ़ता गया। समाधान नहीं हो सका। वे एक बुद्धिमान व्यक्ति के पास समाधान पाने गए। उसने गधों का मूल्य पूछा। उन व्यापारियों ने पन्द्रह गधों का सही-सही मूल्य बताया। उस बुद्धिमान व्यक्ति ने कहा—अब मैं इस कलह का निपटारा कर दूंगा। कलह मत करो। पांचों व्यापारी आश्वस्त हुए। उसने साठ रुपयों के मूल्य वाला एक गधा एक व्यापारी को दिया, दूसरे को तीस-तीस रुपयों के मूल्य वाले दो गधे दिए, तीसरे को बीस-बीस रुपयों के मूल्य वाले तीन गधे दिए, चौथे व्यापारी को पन्द्रह-पन्द्रह रुपयों के मूल्य वाले चार गधे दिए और पांचवें व्यापारी को बारह-बारह रुपयों के मूल्य वाले पांच गधे दे दिए। सभी व्यापारियों को समान लाभ हो गया। वे संतुष्ट होकर चले गए। (गा. ३२९, ३३० टी.प. ४९)

१७. समय पर दंड का औचित्य

एक राजा था। उसने अपने प्रत्यंत-सीमावर्ती राजा का अवरोध करने के लिए सीमा के तीन नगरों में तीन रक्षकों को नियुक्त किया। उसने कहा—जाओ, नगरों की सुरक्षा करो। तीनों अपने-अपने नगरों में जा स्थित हो गए। प्रत्यंत नृप ने उन पर आक्रमण किया। उन रक्षकों की रशद पूरी हो गई। तब उन्होंने अपने राज्य के कोठागार से तीस-तीस कुंभ धान्य लिया। फिर आक्रमणकारी प्रत्यंत नृप को जीत कर वे तीनों अपने स्वामी के पास आए और विस्तार से पूरा वृत्तान्त सुनाया। जीत का वृत्तान्त सुनकर राजा परम प्रसन्न हुआ। रक्षकों ने आगे कहा— 'राजन् ! आपके कार्य को संपादित करने के लिए हमने कोठागार में से तीस-तीस कुंभ धान्य के निकाले थे।' राजा ने सुना, सोचा कि यदि मैं इन्हें इस कार्य के लिए अभी दंडित नहीं करूंगा तो मेरे अन्यान्य प्रयोजन पर भी वे ऐसा ही करेंगे और व्यर्थ ही मेरा कोठागार खाली होता जाएगा तथा दूसरों को भी ऐसा करने में भय नहीं रहेगा। यह सोचकर राजा ने कहा—तुमने मेरा कार्य सफलतापूर्वक संपादित किया है। तीनों को मैं साधुवाद देता हूँ। किन्तु तुम मेरे यहां आजीविका कर रहे हो, उसके लिए तुम्हें मासिक वृत्ति भी मिल रही है, तो फिर तुमने कोठागार से धान्य क्यों लिया ? यह तुम्हारा प्रमाद है। तुम पर यह दंड है कि सारा धान्य पुनः कोठागार में पहुंचाओ। तीनों रक्षक अवाक् रह गए। राजा ने कहा—तुम्हारी सफलता पर मैं प्रसन्न हूं, कोठागार से जो तुमने तीस-तीस कुंभ धान्य निकाला था उसके लिए स्वअर्जित दस-दस कुंभ धान्य उन कोठागारों में पहुंचाओ। यह प्रमाद का दंड है। शेष बीस-बीस कुंभ का मैं तुम्हारे पर अनुग्रह करता हूं। उसके ऋण से मुक्त करता हूँ। (गा. ३३३, ३३४ टी.प. ५१)

१८. गंजे पनवाड़ी की बुद्धिमत्ता

एक पनवाड़ी पान की दुकान पर बैठता था। वह गंजा था। एक बार एक सैनिक का पुत्र पान लेने आया और बोला—अरे ! गंजे पनवाड़ी ! एक पान दे। दुकानदार को गुस्सा आ गया। उसने पान नहीं दिया, तब सैनिक-पुत्र ने कुपित होकर गंजे के सिर पर 'टकोरा' मारा। दुकानदार ने सोचा—यदि मैं इसके साथ झगड़ूँगा तो यह मुझ पर शत्रुता का भाव रखकर मुझे मार डालेगा। इसलिए किसी दूसरे उपाय से ही मुझे प्रतिशोध लेना चाहिए। यह सोचकर पनवाड़ी दुकान से नीचे उतरा और उस सैनिक-पुत्र से हाथ मिलाया, वस्त्र-युगल भेंट स्वरूप दिए, पैरों में गिरा और प्रचुर पान देकर नमस्कार किया। सैनिक-पुत्र ने उससे पूछा—'अरे ! यह क्या ? मैंने सिर पर 'टकोरा' मारा, तुम कुपित नहीं हुए, प्रत्युत मेरी पूजा कर रहे हो ? मेरे चरणों में गिर रहे हो ?' पनवाड़ी बोला—'हमारे क्षेत्र में सभी गंजे व्यक्तियों का यही आचार-व्यवहार है।' यह सुनकर सैनिक पुत्र ने सोचा—अच्छा, मुझे जीविका का उपाय प्राप्त हो गया। अब मैं ऐसे व्यक्ति के सिर पर 'टकोरा' मारूंगा कि वह मुझे धनवान् बना दे, मुझे इस दरिद्रता की स्थिति से उबार दे।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक दिन उस सैनिक-पुत्र ने एक गंजे ठाकुर के सिर पर 'टकोरा' मारा। ठाकुर कुपित हो गया। उसने तत्काल उस सैनिक-पुत्र को पकड़कर मार डाला। (गा. ३३७, ३३८ टी.प. ५२)

१९. दोषों का एक साथ प्रकाशन

एक नगर में एक रथकार रहता था। उसकी भार्या प्रमादी थी। वह बार-बार भूलें करती। पति को यह ज्ञात नहीं था। एक बार वह घर को खुला छोड़कर अपने सखी के घर चली गई। घर को खुला देखकर कुत्ता भीतर घुस गया। इतने में ही रथकार घर आ पहुंचा। उसने कुत्ते को घर में घूमते देखा। इतने में ही उसकी पत्नी भी सखी के घर से आ गई। रथकार उसे पीटने लगा। पत्नी ने सोचा—आज मेरी भूल पर यह मुझे पीट रहा है। और भी अनेक भूलें मुझसे हुई हैं। उन्हें ज्ञात कर यह मुझे बार-बार पीटेगा। अच्छा है, आज ही मैं इसे अपनी सारी भूलें बता दूं। वह कहने लगी—बछड़े ने गाय को चूंघ लिया, बर्छी गंवा दी, कांस्य का बर्तन हाथ से नीचे गिरा और टूट गया, तुम्हारा वस्त्र भी गुम हो गया आदि आदि सारी भूलें उसने बता दी। रथकार ने उसे एक ही बार में पीटकर आगे से प्रमाद न करने की हिदायत दी।
(गा. ४४८, ४४९ टी.प. ६२)

२०. सारे दंडों का एक में समाहार

एक चोर था। उसने अनेक चोरियां कीं। किसी का भाजन चुराया, किसी के वस्त्र, किसी का सोना, किसी की चांदी। एक बार उसने राजमहल में सेंध लगाई और वहां से रत्न चुराए। आरक्षकों ने उसे पकड़ लिया और राजा के समक्ष उपस्थित किया। वह बात जनता तक पहुंची। उस समय अनेक व्यक्ति राजा के पास आए और शिकायत करने लगे कि चोर ने हमारी अमुक-अमुक वस्तु चुराई है। तब राजा ने यह सोचकर कि इस चोर ने रत्न जैसी बहुमूल्य वस्तु चुराई है। इस एक चोरी में अन्यान्य सारी चोरियां समा जाती हैं। यह गुरुतर चोरी है। राजा ने उसे मृत्युदंड दिया। अन्यान्य चोरियों के सारे दंड इसी एक दंड में समाहित हो गए। (गा. ४५० टी.प.६४)

२१. चोर राजा बन गया

नगर का राजा मर गया। वह अपुत्र था। राज्यचिंतकों ने राजा के निर्वाचन के लिए एक अश्व और हाथी को अधिवासित कर नगर में छोड़ा। उसी दिन नगर के आरक्षकों ने मूलदेव नामक चोर को पकड़कर राज्य-चिंतकों के समक्ष उपस्थित किया। उन्होंने उसके वध का आदेश दिया। वध से पूर्व चोर को नगर में घुमाया जा रहा था। अधिवासित अश्व ने मूलदेव को देखा। उसके पास आकर वह हिनहिनाने लगा और अपनी पीठ प्रस्तुत की। हाथी भी पास आकर चिंघाड़ने लगा और गंधोदक से उसका अभिषेक किया और उसे अपनी पीठ पर बिठा लिया। वह राजा बन गया। वह चोरी के अपराधों से मुक्त हो गया। (गा. ४५२ टी.प.६४)

२२. वणिक् और ब्राह्मण

एक वणिक् ने भूमि का उत्खनन किया। उसे निधि प्राप्त हुई। अन्य व्यक्ति ने उसे देख लिया। उसने राजा को इसकी सूचना दी। राजा ने वणिक् को दंडित कर, निधि को अपने पास मंगा लिया।

एक दूसरे ब्राह्मण ने भी भूमि का उत्खनन करते समय निधि देखी। उसने तत्काल राजा से निधि-प्राप्ति की सूचना दी। पूरा वृत्तान्त जानकर राजा ने ब्राह्मण का सत्कार-सम्मान किया और दक्षिणा के रूप में सारी निधि उसे सौंप दी।

जो कर्तव्य के प्रति जागरूक रहता है, वह पूजित होता है। (गा. ४५४ टी.प.६५)

२३. वणिक् की बुद्धिमत्ता

एक वणिक् अपने बीस शकटों को एक ही प्रकार की वस्तुओं से भरकर व्यापारार्थ अन्य नगर में जा रहा था। बीच

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

में चुंगीघर आ गया। चुंगी लेने वाले ने उस वणिक् से चुंगी चुकाने के लिए कहा। वणिक् ने पूछा—कितना देना होगा ? शुल्कग्राही बोला—माल का बीसवां भाग। वणिक् ने सोचा—शकटों से माल को उतारना, तोलना और पुनः शकटों में भरने का झंझट होगा। अतः वह एक शकट चुंगी में देकर आगे चल पड़ा। वह पूरे भांड का बीसवां हिस्सा था क्योंकि उसके पास बीस शकट थे। (गा. ४५४, ४५५ टी. प. ६५)

२४. वणिक् की मूर्खता

एक मूर्ख वणिक् था। वह बीस शकटों को एक ही प्रकार की वस्तुओं से भरकर व्यापारार्थ चला। रास्ते में चुंगीघर वाले ने कहा—चुंगी के रूप में तुम्हें माल का बीसवां भाग देना पड़ेगा। एक शकट देकर चले जाओ। न सभी शकटों का माल उतारना-चढ़ाना पड़ेगा और न कोई झंझट होगा। उस मूर्ख वणिक् ने कहा—नहीं, प्रत्येक शकट में से बीसवां हिस्सा ले लो। चुंगिक ने सारे शकट खाली करवाये। एक-एक शकट से बीसवां हिस्सा लिया। अब उस मूर्ख वणिक् को शकटों को पुनः माल से भरने का झंझट उठाना पड़ा। वह अपने कृत्य पर पछताने लगा। (गा. ४५४, ४५५ टी. प. ६५)

२५. दोहरा लाभ

एक सेवक था। वह राजा के पास रहता था। राजा उसे आजीविका के लिए कुछ भी नहीं देता था। एक बार सेवक ने राजा को संतुष्ट किया। राजा प्रसन्न होकर उस दिन से उस सेवक को प्रतिदिन एक स्वर्ण माषक देने लगा। उसे वस्त्र-युगल भी दिया। इस प्रकार सेवक को दो लाभ हुए—स्वर्ण माषक की प्राप्ति तथा वस्त्र-युगल। (गा. ४८१ टी.प. ३)

२६. दंतमय प्रासाद का निर्माण

दंतपुर नगर में दंतवक्त्र नामक राजा राज्य करता था। उसकी रानी का नाम था सत्यवती। एक बार उसे दोहद उत्पन्न हुआ कि मैं संपूर्ण दंतमय प्रासाद में क्रीडा करूं। उसने अपना दोहद राजा को बताया। राजा ने अमात्य को दंतमय प्रासाद बनाने की आज्ञा दी और उसे शीघ्र ही संपन्न करने के लिए कहा। अमात्य ने नगर में घोषणा कराई—जो कोई दूसरों से दांत खरीदेगा अथवा अपने घर में एकत्रित दांत नहीं देगा, उसे शूली की सजा भुगतनी होगी।

उस नगर में धनमित्र नाम का सार्थवाह रहता था। उसके दो पत्नियां थीं। एक का नाम था—धनश्री और दूसरी का नाम था—पद्मश्री। एक बार दोनों में कलह उत्पन्न हुआ, पद्मश्री ने धनश्री से कहा—तू क्या घमंड करती है। क्या तूने महारानी सत्यवती की भांति अपने लिए दन्तमय प्रासाद बनवा लिया है ? यह बात धनश्री को चुभ गई। उसने हठ पकड़ लिया कि यदि मेरे लिए दंतमय प्रासाद नहीं होता है तो मेरा जीवन व्यर्थ है। अब उसने अपने पति धनमित्र से आलाप-संलाप करना बंद कर दिया। धनमित्र ने अपने मित्र दृढ़मित्र से सारी बात कही। दृढ़मित्र बोला—मैं शीघ्र ही उसकी इच्छा पूरी कर दूंगा। तब दृढ़मित्र वनचरों से मिलने वन में गया। साथ में कुछ उपहार भी लिये। वनचरों ने पूछा—आपके लिए हम क्या लाएं ? क्या भेंट करें ? दृढ़मित्र बोला—मुझे दांत ला दो। वनचरों ने दांतों को अनेक घास के पूलों में छिपाकर उनसे एक शकट भर दिया। दृढ़मित्र तथा वनचर उस शकट को लेकर चले। नगर द्वार में प्रवेश करते ही एक बैल ने शकट से घास का पूला खींच लिया। उसमें छुपाए दांत नीचे आ गिरे। 'यह चोर है'—ऐसा सोचकर राजपुरुषों ने वनचर को पकड़ लिया और पूछा—ये दांत किसके अधिकार में हैं ? वनचर ने कुछ भी नहीं बताया। वह मौन रहा। इतने में ही दृढ़मित्र वहां आकर बोला—ये दांत मेरे अधिकार में हैं। यह मेरा कर्मकर है। राजपुरुषों ने वनचर को छोड़ दिया और दृढ़मित्र को पकड़कर राजा के पास ले गए। राजा ने पूछा- 'ये दांत किसके हैं? दृढ़मित्र बोला-मेरे। इतने में ही, मेरे मित्र दृढ़मित्र को राजपुरुषों ने पकड़ लिया है यह सुनकर, धनमित्र वहां आ पहुंचा। उसने राजा से कहा—ये दांत मेरे अधिकार में है। आप मुझे दंड दें, मेरे शरीर का निग्रह करें। दृढ़मित्र बोला—मैं इस व्यक्ति को नहीं जानता। ये दांत मेरे हैं, मेरा निग्रह करें। इसे मुक्त कर दें। इस प्रकार वे दोनों अपने आपको दोषी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ठहराने लगे। तब राजा ने कहा—तुम दोनों निरपराधी हो। मुझे यथार्थ बात बताओ। उन्होंने दांतों की पूरी बात बताई। राजा बहुत संतुष्ट हुआ और दोनों को मुक्त कर दिया। (गा. ५१७ टी.प. १७)

२७. छोटी त्रुटि की उपेक्षा

एक खेत में किसान सारणि से पानी दे रहा था। सारणि के बीच लकड़ी का एक छोटा टुकड़ा फंस गया। किसान ने उसकी परवाह नहीं की। इसी प्रकार अनेक लकड़ियां फंस गईं। उनको न निकालने के कारण प्रभूत कीचड़ हो गया। पानी का आगे बहना बंद हो गया और खेत पानी के अभाव में सूख गया। (गा. ५५५ टी.प. ३२)

२८. मीठे वचन

एक व्याध मांस लेकर यह सोचकर चला कि सारा मांस स्वामी को नहीं देना है। वह स्वामी के पास पहुंचा। स्वामी ने उसका आदर-सत्कार किया, अच्छे शब्दों से उसे संबोधित किया। व्याध ने प्रसन्न होकर सारा मांस दे दिया।

(गा. ५८० टी. प. ४०)

२९. डांट-फटकार

एक व्याध मांस लेकर, यह सोचकर चला कि मुझे सारा मांस स्वामी को देना है। वह उस मांस को छुपाकर ले गया। स्वामी के पास गया। स्वामी ने उसे डांटा-फटकारा। उसने रुष्ट होकर सारा मांस स्वामी को नहीं दिया।

(गा. ५८०, ५८१ टी. प. ४०)

३०. पशु भी प्रेम के भूखे

एक गाय जंगल में चरकर घर आई। आते ही गृहस्वामी ने उसे पुचकारा और घर में प्रवेश करते समय उसका नामोल्लेखपूर्वक मधुर वाणी में आह्वान किया। प्रसन्नतापूर्वक उसकी पीठ पर हाथ फेरा, धूप जलाकर आलिंगन किया, उसे एक खूंटे से बांधकर आगे भूसा आदि खाद्य रख दिया। गाय ने सारे दूध का क्षरण कर दिया। स्वामी को पूरा दूध मिल गया। (गा. ५८०, ५८१ टी. प. ४०)

३१. दूध को छुपा लिया

गाय जंगल में चरकर घर आई। स्वामी ने उसको कोई आदर-सम्मान नहीं दिया। उसको (देर से आने के कारण) बांस की लकड़ी से पीटा। गाय ने सारे दूध का क्षरण नहीं किया। दूध को छुपा दिया।

(गा. ५८०, ५८१ टी. प. ४०)

३२. भिक्षुणी का हृदय-परिवर्तन

एक भिक्षुणी अपने पूर्व परिचित किसी गृहस्थ के घर गई। उसने एकान्त में पड़े भाजन-विशेष को देखा और उसे लेकर अपने स्थान पर चली गई। फिर उसका भाव बदला और उसने सोचा, मैं भाजन गृहस्वामी को लौटा दूं। वह भाजन लेकर चली। गृहस्वामी ने उसका आदर-सम्मान किया। भिक्षुणी ने प्रसन्न होकर वह भाजन लौटा दिया।

(गा. ५८१ टी. प. ४०, ४१)

३३. कटु व्यवहार का प्रभाव

एक भिक्षुणी अपने पूर्व परिचित किसी गृहस्थ के घर गई और एकान्त में पड़े भाजन को लेकर अपने स्थान पर लौट आई। वह भाजन को लौटाना चाहती थी। गृहस्वामी के घर गई। स्वामी ने उसका आदर-सत्कार नहीं किया, उसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

डांटा-फटकारा। भिक्षुणी ने भाजन नहीं लौटाया। (गा. ५८१ टी. प. ४०, ४१)

३४. राजा और नापित

एक राजा था। वह खल्वाट था। उसके दाढ़ी-मूंछ भी नहीं थी। उसके पास एक नाई था। राजा के बाल नहीं हैं, यह सोचकर वह कभी हजामत के लिए उपक्रम नहीं करता। राजा ने उसे निकाल दिया।

एक दूसरा नाई सात दिनों में एक बार आता और राजा के हजामत करने का नाटक करता। राजा उससे संतुष्ट था। (गा. ५८६ टी. प. ४२)

३५. योनिप्राभृत की वाचना

एक आचार्य 'योनिप्राभृत' की वाचना दे रहे थे। एक उत्प्रव्रजित साधु ने छुपकर उनकी वाचना सुन ली। आचार्य अपने शिष्यों को बता रहे थे कि अमुक-अमुक द्रव्यों के संयोजन से भैंसे उत्पन्न किए जा सकते हैं। यह सुनकर वह उत्प्रव्रजित मुनि अपने स्थान पर गया और आचार्य द्वारा निर्दिष्ट द्रव्यों का संयोजन कर अनेक भैंसे बनाए। उसने उन भैंसों को एक गृहस्थ के द्वारा बिकवा दिया। आचार्य को यह बात जैसे-तैसे ज्ञात हो गई। वे उससे मिले। उसने सारा सत्य उगल दिया। आचार्य ने तब उसको कहा—यदि अमुक-अमुक द्रव्यों का विषम मात्रा में संयोजन किया जाए तो प्रचुर स्वर्ण और रत्न उत्पन्न हो सकते हैं। उसने वैसा ही किया। उन द्रव्यों का संयोजन होते ही एक दृष्टिविष सर्प पैदा हुआ और उसने तत्काल उस व्यक्ति को डस लिया। वह व्यक्ति मर गया। (गा. ६४६ टी. प. ५८)

३६. कांटे से मरण

एक व्याध खुले पैर वन में गया। उसके पैर कांटों से बिंध गए। उसने न स्वयं उन कांटों को निकाला और न अपनी भार्या से उन्हें निकलवाया। एक बार वह वैसे ही वन में गया। हाथी ने उसे देखा और वह उसके पीछे दौड़ा। भयभीत होकर व्याध दौड़ने लगा। परन्तु जो कांटे पैरों में पहले चुभे हुए थे, वे दौड़ने के कारण और अधिक गहरे मांस तक पहुंच गए। वह अत्यंत पीड़ित होकर छिन्नमूल वृक्ष की भांति जमीन पर गिर पड़ा, बेहोश हो गया। पीछे से हाथी आया और उसे रौंदकर मार डाला। (गा. ६६२, ६६३ टी. प. ६२, ६३)

३७. शल्योद्धरण से बचाव

एक व्याध, जूते पहने बिना ही, वन में गया। वहाँ उसके पैरों में अनेक कांटे चुभे। वह उनको निकालने लगा। अनेक कांटे निकल गए पर कुछेक कांटों को वह निकाल नहीं सका। वह घर गया। अपनी पत्नी से सारे कांटे निकलवाकर पूरे पैर पर अंगुष्ठ आदि से मर्दन करवाया। फिर जहां-जहां कांटे चुभे थे वहां-वहां दंतमल अथवा कानों कि मिट्टी से उन छेदों को भर दिया। वह स्वस्थ हो गया। एक बार वह पुनः वन प्रदेश में गया। एक जंगली हाथी ने उसे देखा। वह व्याध हाथी के भय से भागा और सुरक्षित घर आ गया। (गा. ६६२, ६६३ टी. प. ६३)

३८. अंतःपुर का प्रमादी रक्षक

एक राजा ने कन्याओं के अंतःपुर की रक्षा के लिए एक व्यक्ति को रखा। वे राजकन्याएं गवाक्ष से इधर-उधर देखती थीं। वह रक्षक उनका वर्जन नहीं करता था। धीरे-धीरे वे कन्याएं अग्रद्वार से बाहर जाने-आने लगीं। तब भी वह उनको निषेध नहीं करता था। इस प्रकार वर्जित न करने के कारण कुछेक कन्याएं किसी धूर्त के साथ भाग गईं। यह बात किसी ने राजा के कानों तक पहुंचाई। राजा ने उस रक्षक का सर्वस्व हरण कर उसे मार डाला और अंतःपुर के लिए दूसरा रक्षक नियुक्त कर दिया। (गा. ६६७, ६६८ टी. प. ६३, ६४)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३९. जागरूक संरक्षक

अंतःपुर के एक दूसरे संरक्षक ने एक बार देखा कि एक राजकुमारी गवाक्ष में बैठी देख रही है। उसने उसको अपने पास बुलाकर विनयपूर्वक शिक्षा देते हुए गवाक्ष में न बैठने के लिए कहा। शेष कन्याओं को भी निषेध कर दिया। सब में भय व्याप्त हो गया। उस दिन के पश्चात् किसी भी कन्या ने गवाक्ष में आने का साहस नहीं किया। धूर्तों के द्वारा कन्याओं के अपहरण का भय नहीं रहा। राजा ने यह कहकर अंतःपुर पालक का सम्मान किया कि उसने अन्तःपुर का सम्यक् संरक्षण किया है। (गा. ६६७, ६६८ टी. प. ६४)

४०. नंदवंश का समग्र उच्छेद

चाणक्य ने नंद राजा को राज्यच्युत कर चंद्रगुप्त का राज्याभिषेक किया और नंद के सामन्तों को तिरस्कृत कर पदच्युत कर दिया। वे सभी सामंत अपनी आजीविका में बाधा उपस्थित जानकर चंद्रगुप्त के आरक्षकों से सांठ-गांठ कर नगर में सेंध आदि लगाकर चोरी करने लगे। चाणक्य को नगर में होनेवाली चोरी की वारदातें ज्ञात हुईं। उसने दूसरे आरक्षकों की नियुक्ति कर दी। वे सामंत इनसे भी सांठ-गांठ कर पूर्ववत् चोरी करने लगे। चाणक्य ने सोचा, ऐसा कौन आरक्षक मिलेगा जो इन चोरों के साथ न मिलकर सभी चोरों को पकड़वा सके। अब चाणक्य प्रतिदिन परिव्राजक का वेश बनाकर नगर के बाहर घूमने लगा। एक दिन उसने देखा, तंतुवायशाला में नलदाम नामक तंतुवाय बैठा है। उस समय उसका पुत्र खेल रहा था। एक मकोड़े ने उसे काट खाया। वह रोता हुआ अपने पिता के पास आकर बोला— पिताजी ! मकोड़े ने मुझे काट खाया। नलदाम बोला—मुझे वह स्थान बता, जहाँ मकोड़े ने काटा है ? बालक ने वह स्थान बताया। नलदाम मकोड़े के बिल के पास गया और जो मकोड़े बिल से बाहर निकले हुए थे, उन सबको उसने मार डाला। फिर उसने बिल को खोदा और उसमें जो मकोड़े तथा उनके अंडे थे, उन पर घास डालकर जला डाला। चाणक्य ने यह सब देखकर पूछा—तुमने बिल को खोदकर अंदर आग क्यों लगाई ? नलदाम बोला—'अंडों से मकोड़े पैदा होकर कभी और भी काट सकते हैं।' चाणक्य ने सोचा, यदि इसे कोतवाल के रूप में नियुक्त किया जाए तो यह मकोड़ों के समूल नाश की भांति चोरों का समूल नाश कर पाएगा। चाणक्य ने उसे कोतवाल के रूप में नियुक्त कर दिया। नंद के पक्ष वाले चोरों को यह ज्ञात हुआ। वे नलदाम के पास आए और बोले—हम तुम्हें चोरी के धन का बहुत बड़ा भाग देंगे। तुम हमारी रक्षा करना। नलदाम ने कहा—ठीक है। अब तुम सभी चोरों को विश्वास दिलाकर मेरे पास ले आओ। एक दिन सभी चोर नलदाम के पास एकत्रित हुए। नलदाम ने उनका सत्कार-सम्मान किया और दूसरे दिन सभी चोरों के लिए विशाल भोज की तैयारी की। सभी चोर अपने-अपने पुत्रों को साथ ले वहां पहुंचे। नलदाम ने तब अवसर देखकर सभी चोरों तथा उनके पुत्रों का शिरच्छेद करवा डाला। (गा. ७१६ टी. प. ७७)

४१. सहस्रयोधी योद्धा की परीक्षा

अवंती जनपद में महाराज प्रद्योत राज्य करते थे। उनके मंत्री का नाम था—खंडकर्ण। एक बार एक योद्धा राजा के समक्ष आकर बोला—राजन् ! मैं सहस्रयोधी हूँ, हजारों योद्धाओं को युद्ध में जीत सकता हूँ। आप मुझे अपनी सेवा में रखें। राजा ने स्वीकृति दे दी। वह बोला —राजन् ! आप जो हजार योद्धाओं को मासिक देते हैं, उतनी राशि मुझे देनी होगी। तब मंत्री खंडकर्ण ने सोचा, मुझे इसकी शक्ति की परीक्षा करनी चाहिए। 'यदि यह वास्तव में ही सहस्रयोधी होगा तो इसे सहस्रयोधी की सारी सुविधाएं देनी चाहिए।

एक दिन मंत्री ने उसे एक बकरा और मद्य का घड़ा देकर कहा—आज कृष्णा चतुर्दशी है। आज रात को महाकाल नामक श्मशान में जाकर इसे खाना है। वह सहस्रयोधी महाकाल श्मशान में गया, बकरे को मारा और उसके मांस को पकाकर खाने लगा और मदिरा पीने लगा। उस समय ताल-पिशाच वहां आया और मांस के लिए अपना हाथ फैलाकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बोला—मुझे भी दो। तब वह सहस्रयोधी भयभीत न होता हुआ पिशाच को भी देने लगा और स्वयं भी खाने लगा। राजा ने वृत्तांत को जानने के लिए गांव के बाहर रहने वाले पुरुषों तथा प्रतिचारकों को भेजा। उन्होंने श्मशान में जो देखा, वह यथावत् राजा को और मंत्री को बता दिया। मंत्री ने सोचा, यह वास्तव में ही सहस्रयोधी है। उसे राज्य में रख लिया।

एक दूसरा योद्धा भी अपने आपको सहस्रयोधी बताता हुआ राजा के पास आया और स्वयं को वृत्ति देने की प्रार्थना की। राजा ने उसी प्रकार उसकी परीक्षा की। वह श्मशान में गया। ज्योंहि तालपिशाच उसके सामने आया वह भयभीत होकर वहां से भाग गया। लोगों ने राजा को और मंत्री को सारी बात कही। राजा ने उसे सहस्रयोधी मानने से इंकार कर दिया। (गा. ७८४ टी. प. ९३)

४२. आंखों का प्रत्यारोपण

एक तपस्वी मुनि एकल विहार-प्रतिमा की साधना कर रहा था। वह प्रतिमा में स्थित होकर सूत्र और अर्थ का परावर्तन करता था। एक दूसरा मुनि अल्पश्रुत था। उसने आचार्य से कहा, मैं भी एकल विहार-प्रतिमा की साधना करना चाहता हूँ। आचार्य बोले, तुम अभी श्रुत से अपर्याप्त हो, अतः इस प्रतिमा की साधना करने के योग्य नहीं हो। आचार्य ने बार-बार उसे समझाया और निषेध किया। वह शिष्य निषेध को न मानकर, उस क्षपक के पास ही प्रतिमा में स्थित हो गया। देवता ने सोचा, यह आज्ञा के विपरीत चल रहा है। देवता ने आधी रात के समय भी उसे प्रभात का आभास करा दिया। प्रतिमा को संपन्न कर उस तपस्वी मुनि से बोला—प्रभात हो गया है। प्रतिमा को संपन्न करो। तब देवता ने उसके एक चपेटा मारा। उसकी दोनों आंखें बाहर आ गिरीं। तब उस तपस्वी अनगार ने अनुकंपा के वशीभूत होकर सघन कायोत्सर्ग किया। देवता आया। पूछा—तपस्वी ! बोलो, मैं तुम्हारे लिए क्या करूं ? तपस्वी ने कहा—'तुमने इस मुनि को क्यों कष्ट दिया ? अब इसकी आंखें पूर्ववत् करो।' देवता बोला, इसकी आंखें अब आत्म-प्रदेशों से शून्य हो गई हैं। तपस्वी बोला, कुछ भी करो। देवता ने तब तत्काल मारे गए एडक की आंखें, जो आत्म-प्रदेशों से युक्त थीं, लाकर उस मुनि के लगा दीं।

(गा. ७९५, ७९६ टी. प. ९६)

४३. अपना-अपना काम

एक राजा ने दूसरे राजा के नगर पर आक्रमण कर दिया। उस समय राजा नगर के भीतर अंतःपुर में था। पटरानी ने राजा से कहा—मैं युद्ध लडूँगी। राजा ने वर्जना की। रानी नहीं मानी। वह राजा का वेश पहन सेना के साथ युद्ध करने निकली और शत्रुसेना से लड़ने लगी। वह सैनिक वेश में थी, इसलिए उसे पहचान पाना कठिन था, परंतु शत्रु राजा ने जान लिया कि यह महिला है। चांडालों को भेजकर उसे पकड़वा दिया। उसकी दुर्दशा कर उसे मार डाला।

(गा. ८१२ टी. प. १०१)

४४. देवता और साधु

एक मुनि प्रतिमा में स्थित था। उसे प्रतिबोध देने के लिए एक सम्यक्दृष्टि देवता ने स्त्री का रूप बनाया। वह अपने साथ अनेक छोटे-छोटे बच्चों को लेकर वहां मुनि के पास बैठ गयी। कुछ समय बाद बच्चे रोने लगे। उन्होंने मां से कहा—'मां हमें भोजन दो, भूख लगी है।' मां ने कहा—'अभी भोजन बनाकर देती हूं, रोओ मत।' उसने दो पत्थरों को रख, उनके बीच आग जलाई और उन पत्थरों पर पानी से भरा पिठर रखा। तीसरे पत्थर के बिना संतुलन नहीं रहा और वह पानी का पिठर लुढ़क गया। अग्नि उस पानी से बुझ गई। उसने तीन बार अग्नि जलाई और तीनों बार वह बुझ गई। तब प्रतिमा-स्थित मुनि बोला—क्या तुम इस विधि से अपने इन बच्चों को भोजन बनाकर खिला सकोगी ? तब देवरूप उस स्त्री ने कहा—स्वयं को देखो। तुमने इतने अल्पश्रुत का अध्ययन कर यह प्रतिमा क्यों स्वीकार की है ? क्या तुम इसमें सफल हो सकोगे ? जाओ, अपने गच्छ में शीघ्र चले जाओ। अन्यथा तुम किसी प्रान्त देवता से छले जाओगे।

(गा. ८२० टी. प. १०३)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५. पिता की संपत्ति के हकदार

एक किसान था। उसके तीन पुत्र थे। तीनों कृषिकर्म करते थे। एक पुत्र कृषिकर्म यथावत् करता था। दूसरा पुत्र वन में जाता और एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमता रहता और तीसरा पुत्र देवमंदिरों में जाता रहता था। कालांतर में उनके पिता की मृत्यु हो गई। अब तीनों ने पिता की संपत्ति को बराबर बांटकर ले ली। इस प्रकार एक पुत्र द्वारा अर्जित संपत्ति तीनों ने बराबर बांट ली। (गा. ८२६, ८३० टी. प. १०५)

४६. कौन कितना अपराधी ?

एक राजा था। उसके नगर को घेरने के लिए दूसरा राजा, अपनी सैन्य शक्ति के साथ आ रहा था। यह बात सुनकर नगर-स्वामी ने अपने सुभटों को युद्ध करने भेजा। उन सुभटों में से एक सुभट शत्रुसेना के विस्तार को देखते ही भागकर अपने स्थान पर आ गया। दूसरे सुभट ने लंबे समय तक युद्ध किया। उसका शरीर घायल हो गया। फिर वह भी भागकर आ गया। तीसरा सुभट युद्ध में लड़ा, घायल नहीं हुआ, फिर भी दौड़कर आ गया। तीनों सुभटों में पहला सुभट घोर अपराधी है, दूसरा और तीसरा सुभट उससे कम अपराधी है। (गा. ८२६, ८३० टी. प. १०५)

४७. नारी के परवश

एक राजा था। उसकी रानी और पुरोहित की पत्नी—दोनों सगी बहनें थीं। एक बार राजपत्नी ने कहा—राजा मेरे वश में है। पुरोहित की पत्नी बोली—पुरोहित मेरे वश में है। दोनों ने परीक्षा करने का निश्चय किया। एक बार पुरोहित पत्नी ने राजपत्नी, जो बहिन थी, को भोजन के लिए निमंत्रित किया। रात में पुरोहित-पत्नी ने पुरोहित से कहा—मैंने एक प्रण किया था कि यदि अमुक कार्य संपन्न हो जाएगा तो मैं अपनी भगिनी के साथ तुम्हारे सिर पर थाली रखकर भोजन करूंगी। मेरा वह प्रण पूरा हो गया। अब मैं तुम्हारा अनुग्रह चाहती हूं। पुरोहित बोला—जैसी तुम्हारी इच्छा। मेरा अनुग्रह है। राजपत्नी ने राजा से कहा—आज रात को मैं तुम्हारी पीठ पर सवार होकर पुरोहित के घर जाना चाहती हूं। राजा बोला—मेरे पर अनुग्रह होगा। वह रात में राजा की पीठ पर पलाण रखकर उस पर सवार हुई। वह पुरोहित के घर पहुंचकर, यह मेरा वाहन है, यह सोचकर उसे एक खंभे से बांध दिया। फिर दोनों बहिनों ने पुरोहित के सिर पर थाली रखकर भोजन किया। खंभे से बंधा हुआ राजा अश्व की भांति हिनहिनाने लगा। भोजन कर चुकने पर रानी पुनः राजा की पीठ पर सवार होकर चली गई। राजा ने यह सोचा कि पुरोहित के द्वारा मैं अपमानित और तिरस्कृत हुआ हूं, उसने उसको मुंडित करा दिया। अमात्य को इस वृत्तांत का पता चला। उसने राजा और पुरोहित दोनों को बुरा-भला कहा।
(गा. ८३२ टी. प. १३०)

४८. अपायों का वर्जन : सुरक्षा का कवच

एक गो-रक्षक नगर की गायों को चराने के लिए ले जाता था। वह जानकार था। खेतों का बचाव करता हुआ वह गायों को ले जाता और लाता था। वह उनको ऐसे स्थान पर चराता जहां चोरों का भय न हो। एक बार दो अन्य व्यक्ति आए और बोले—हम गायों की रक्षा करेंगे। तब नागरिकों ने सोचा, इतनी गायों की रक्षा एक व्यक्ति कर नहीं सकता। इसलिए गायों को बांटकर तीन रक्षकों को दे दी जाए। उन्होंने उन दोनों व्यक्तियों को गो-रक्षक के रूप में रख लिया। उन दोनों में से एक रक्षक पहले गोरक्षक की निश्रा में गायों को ले जाने-लाने लगा। मैं अजान हूं—यह सोचकर वह उसी के मार्ग से आने-जाने लगा। दूसरे गो-रक्षक ने सोचा—मैं दूसरे व्यक्ति की निश्रा में अपनी गाएं क्यों चराऊं जबकि मैं स्वयं स्वतंत्र रूप से चराने में समर्थ हूं। किंतु वह मूर्ख रास्तों से अजान था। वह गोचारी के स्थानों को भी नहीं जानता था। खेतों से संकीर्ण प्रदेशों तथा नगर के प्रवेश और निर्गमन योग्य मार्गों से वह सर्वथा अनभिज्ञ था। वह उन्हीं मार्गों से गायों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

को ले जाता और ले आता। रास्ते में धान बोए हुए अनेक खेत आते थे। मार्ग से आती-जाती गाएं उन बोए हुए धान के पौधों को खा लेतीं। गोरक्षक उनका निवारण करता, फिर भी वे इधर-उधर मुंह मारकर खा लेतीं। उस स्थिति में खेतों के स्वामी गायों का निग्रह कर, खेतों में हुई हानि के लिए हर्जाना मांगते। राज्य के अधीनस्थ खेतों की भी हानि होती। राज्य-रक्षक हर्जाना मांगते। वह अज्ञानी गोरक्षक गायों को चराने के लिए जंगल में जाता। वहां भील आदि लोग गायों को मार डालते। वह गायों को पानी पिलाने के लिए नदी आदि पर ले जाता। वहां नदी में विद्यमान जलचर प्राणी गायों को घसीटकर ले जाते। वह सघन जंगल में गाएं ले जाता। वहां हिंस्र पशु गायों को भयभीत करते, मार डालते। वह गायों को निकुंजों में ले जाता। वहां चोर गायों का अपहरण कर ले जाते। इस प्रकार वह अज्ञानी गोरक्षक गायों का विनाश कर देता। जो जानकार था वह स्वयं विपदाओं के सारे स्थानों का वर्जन करता और जो उसकी निश्रा में कार्यरत था उसे भी आपदाओं के स्थानों का वर्जन कराता। (गा. १००० टी. प. ७, ८)

४९. सांप ने डस लिया

एक व्यक्ति ने नगर में जाने के लिए घर से प्रस्थान किया। दूसरे लोगों ने उसे मनाही करते हुए कहा —तुम इस मार्ग से मत जाओ, रास्ते में सांप है। वह दौड़कर डस लेता है। उसने कहा—मैं भाग जाऊंगा। सर्प मुझे नहीं पकड़ पाएगा। वह उसी मार्ग से चला। सर्प ने उसे देखा और पीछे दौड़ा। वह मनुष्य भी तीव्रता से भागा। भागते-भागते उसके पैर में कांटा चुभा और वह वहीं रुक गया। दौड़ता हुआ सर्प आया, उसे डसा। डसते ही वह मर गया।

(गा. १०२१ टी. प. १३)

५०. हरिण की बुद्धिमत्ता

ग्रीष्म ऋतु। प्यास से आकुल-व्याकुल एक मृग पानी की टोह करने लगा। एक सरोवर के पास उसने देखा कि एक व्याध धनुष-बाण लिये बैठा है। मृग ने सोचा, यदि मैं पानी नहीं पीऊँगा तो शीघ्र ही मर जाऊंगा। पानी पीने के बाद सुखपूर्वक तो मरूंगा और संभव है पानी पीने के बाद शारीरिक शक्ति के संवर्धन से मैं पलायन भी कर जाऊं। यह सोचकर वह मृग दूसरी ओर गया और शीघ्रता से पानी पीने लगा। जब तक कि व्याध उस स्थान तक पहुंचे तब तक मृग लंबी छलांगें भरता हुआ भाग गया। (गा. १०३८-१०४० टी. प. १८)

५१. योद्धाओं का प्रतिशोध

एक राजा था। वह शत्रु-सेना से अभिभूत हो गया। उसने योद्धाओं को लड़ने के लिए आदेश दिया। वे योद्धा युद्ध करते-करते शत्रु-सैनिकों के प्रहारों से प्रताड़ित होकर पलायन कर गए। वे पलायन कर अपने राजा के पास आए। राजा ने वचन-प्रहारों से उनकी ताड़ना करते हुए कहा—तुम सब मेरे यहां आजीविका कमा रहे हो, फिर प्रहारों से भयभीत होकर क्यों लौट आए ? तब उन योद्धाओं ने सोचा—हम शत्रु-सैनिकों का पराभव करने में समर्थ नहीं हैं। युद्ध करते हुए आयुधों के प्रहारों से भयभीत होकर संग्राम से हम यहां आ गए। यहां भी वचन-बाणों के प्रहार तथा बंधन, मृत्यु आदि का सामना करना पड़ रहा है। हमने अपने आपको युद्ध में क्यों नहीं समाप्त कर दिया ? यह सोचकर खिन्न होते हुए उन्होंने राजा को बांधकर शत्रु-राजा को सौंप दिया, क्योंकि उनके मन में प्रतिशोध जाग गया था। (गा. १०४२, १०४३ टी. प. १९)

५२. प्रोत्साहन का चमत्कार

एक राजा शत्रुसेना से अभिभूत हो गया। उसने अपने योद्धाओं को पुनः युद्ध में भेजा। वे योद्धा शत्रुसेना के प्रहारों से छिन्न-भिन्न होकर अपने राजा के पास आ गये। तब राजा ने उन्हें नामग्राहपूर्वक संबोधित किया। उनके गोत्र, अन्वय तथा पूर्व कार्यों की स्मृति कर उनकी प्रशंसा की। वे योद्धा उस प्रशंसा-सत्कार से प्रहारों से लगे अपने घावों को भूल गए और फिर स्वस्थ होकर प्रबल शत्रुसेना पर विजय प्राप्त कर ली। (गा. १०४२, १०४३ टी.प. १९)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५३. युक्ति से लाभ

खेतों में शाली बोई गई। खेत के स्वामी ने चारों ओर बाड़ लगा दी, आने-जाने के लिए एक द्वार रखा, एक बार एक सांड उस द्वार से खेत में घुस गया। इतने में ही खेत का स्वामी वहां आ पहुंचा। वृषभ को खेत में देखकर उसने द्वार वंद कर दिया और फिर लकड़ी, बाण आदि से वृषभ को परितप्त करने लगा, प्रहारों से घबराकर वृषभ खेत में इधर-उधर दौड़ने लगा, उसके इस प्रकार दौड़ने से जो शालि के अंकुर रौंदे नहीं गए थे, वे भी सारे रौंद डाले गए और इस प्रकार सारा खेत ही नष्ट हो गया। (गा. १०४५ टी. प. २०)

५४. सूझबूझ

एक-दूसरे व्यक्ति के भी शालि का खेत था। वृषभ खेत में घुस गया। स्वामी ने देख लिया। वह खेत की बाड़ के द्वार पर बैठकर शब्द करने लगा। वह वृषभ शब्द से भयभीत होकर द्वार की ओर भागा। तब मालिक ने पत्थर फेंककर प्रहार किया। वृषभ उस द्वार से बाहर निकल गया। उसका खेत वृषभ के पैरों से रौंदा नहीं गया।

(गा. १०४५ टी. प. २०)

५५. विक्षिप्तता का कारण

जितशत्रु राजा ने स्थविरों के पास दीक्षा ग्रहण कर ली। प्रव्रज्या के अनंतर वह ग्रहणशिक्षा और आसेवन शिक्षा में निपुण हो गया। कालांतर में वह विदेशी नगर पोतनपुर में पहुंचा। वहां पर तीर्थिकों के साथ वाद किया। उनको पराजित कर देने पर जिन-शासन की प्रतिष्ठा हुई। मुनि उसी नगरी में निर्वाण को प्राप्त हो गए।

जितशत्रु राजा का एक छोटा भाई था। वह भी अपना राज्य त्यागकर, बड़े भाई की प्रव्रज्या के कुछ वर्षों बाद, प्रव्रजित हो गया। जब उसने सुना कि ज्येष्ठ-भ्राता मुनि पोतनपुर में निर्वाण को प्राप्त हो गए हैं, वह विक्षिप्त हो गया।

(गा. १०८१, १०८२ टी. प. २८)

५६. अति हर्ष : पागलपन का कारण

गोदावरी नदी-तट पर प्रतिष्ठान नाम का नगर था। वहां शातवाहन नाम का राजा राज्य करता था। उसके मंत्री का नाम था खरडक। एक बार राजा ने अपने दंडनायक को बुलाया और कहा— जाओ, मथुरा नगरी को हस्तगत कर शीघ्र लौट आओ। वह शीघ्रता के कारण और कुछ जानकारी किए बिना ही अपने सैनिकों के साथ चल पड़ा। रास्ते में उसने सोचा, मथुरा नाम के दो नगर हैं। एक है दक्षिण मथुरा और दूसरा है उत्तर मथुरा। किस नगर को हस्तगत करना है ? उस राजा की आज्ञा बहुत कठोर होती थी। उससे पुनः पूछना संभव नहीं था। तब उस दंडनायक ने अपनी सेना को दो भागों में बांट दिया। सैनिकों की एक टुकड़ी दक्षिण मथुरा की ओर गई और दूसरी टुकड़ी उत्तर मथुरा की ओर। दोनों नगरों पर सैनिकों का अधिकार हो गया । तब सैनिकों ने दंडनायक के पास शुभ समाचार प्रेषित किया। दंडनायक स्वयं राजा के पास आकर बोला—देव ! हमने दोनों नगरों पर अधिकार कर लिया है। इतने में ही अंतःपुर से एक दूती ने आकर राजा को वर्धापित करते हुए कहा —राजन् ! पट्टदेवी ने पुत्ररत्न को जन्म दिया है। एक अन्य सदस्य ने आकर कहा—देव ! अमुक प्रदेश में विपुल निधियां प्राप्त हुई हैं। इस प्रकार एक के बाद एक शुभ संवादों से राजा का हृदय हर्षातिरेक से आप्लावित हो गया। वह परवश हो गया। उस अति हर्ष को धारण करने में असमर्थ राजा अपनी शय्या को पीटने लगा, खंभों को आहत करने लगा, भींत को तोड़ने लगा तथा अनेक असमंजसपूर्ण प्रलाप करने लगा। तब अमात्य खरडक राजा को प्रतिबोधित करने के लिए स्वयं खंभों को, भींत को फोड़ने लगा। राजा ने पूछा—ये सारी चीजें किसने नष्ट की है ? अमात्य बोला—आपने। राजा ने कहा —तुम मेरे समक्ष झूठ बोल रहे हो। ऐसा कहकर कुपित होकर राजा ने अमात्य को पैरों से ताडित किया। अमात्य मूर्च्छित होकर भूमि पर गिर पड़ा। इतने में ही उसके द्वारा पूर्व निर्दिष्ट पुरुष

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दौड़े-दौड़े वहां आए और अमात्य को उठाकर ले गए। और उसे अज्ञात स्थान पर रख दिया।

एक बार विशेष प्रसंग पर राजा ने अपने व्यक्तियों से पूछा—अमात्य कहां है ? पुरुषों ने कहा —देव ! आपने उसे अविनीत मानकर मरवा डाला है। यह सुनते ही राजा शोक-विह्वल होकर विलाप करने लगा कि अरे ! मैंने अकार्य कर डाला। लोगों ने कुछ नहीं बताया। जब राजा स्वस्थ हुआ तब उन लोगों ने कहा—देव ! हम खोज करते हैं कि जिन चांडालों को आपने अमात्य को मार डालने का आदेश दिया था, कहीं उन्होंने उसे छिपाकर तो नहीं रखा है ? उन लोगों ने कुछ दिन गवेषणा का बहाना करते हुए, एक दिन अमात्य को राजा के समक्ष उपस्थित कर दिया। अमात्य को देखकर राजा संतुष्ट हुआ। अमात्य ने तब सारा वृत्तांत सुनाया। प्रसन्न होकर राजा ने उसे विपुल धन दिया।

(गा. ११२५-११३१ टी. प. ३६)

५७. व्यंतरी का प्रतिशोध

एक श्रेष्ठी था। उसके दो पत्नियां थीं। एक प्रिय थी, दूसरी अप्रिय। वह दूसरी पत्नी अकाम-मरण से मरकर व्यंतरी बनी। श्रेष्ठी भी स्थविरों के पास धर्म-श्रवण कर प्रव्रजित हो गया। वह व्यंतरी पूर्वभव के वैर के कारण मुनि के छिद्र देखने लगी। एक बार मुनि प्रमत्त थे। व्यंतरी ने उन्हें ठग लिया। (गा. ११४३ टी. प. ३६)

५८. कामभोगों में आसक्ति

एक गांव में दो भाई साथ-साथ रहते थे। बड़े भाई की पत्नी छोटे भाई में अनुरक्त थी। वह उससे भोग की प्रार्थना करती। छोटा भाई उससे भोग भोगना नहीं चाहता था। उसने कहा—यदि बड़ा भाई जान लेगा तो जीवित नहीं छोड़ेगा। तब उसने सोचा—जब तक मेरा पति जीवित रहेगा तब तक यह मेरा देवर मेरा नहीं होगा। अब वह प्रतिदिन पति के छिद्र देखने लगी, अवसर की प्रतीक्षा करने लगी। एक दिन उसने भोजन में विष मिलाकर पति को मार डाला। अब वह अपने देवर से बोली—जिसका भय था वह मर गया। अब तुम मेरी मनोकामना पूरी करो। छोटे भाई ने सोचा—निश्चित ही इसी ने मेरे बड़े भाई को मारा है। धिक्कार है ऐसे कामभोगों को ! वह विरक्त होकर प्रव्रजित हो गया। वह दुःख से संतप्त होकर बाल-मरण कर व्यंतरी बनी। उसने अवधिज्ञान का प्रयोग कर जान लिया कि उसका देवर श्रामण्य में स्थित है। उसने सोचा, इसने मुझे नहीं चाहा था। वह पूर्वभव के वैर का स्मरण करती हुई उस मुनि के पास आई और उसे प्रमत्त देखकर ठग लिया। (गा. ११४४ टी. प. ४०)

५९. व्यंतरी ने ठगा

एक कौटुंबिक था। वह बलिष्ठ और सुंदर था। एक कर्मकरी उसके प्रति आसक्त हो गई और उसने भोग की प्रार्थना की। कौटुंबिक ने उसे स्वीकार नहीं किया। वह अत्यंत दुःखी होकर, मरकर व्यंतरी बनी। वह कौटुंबिक प्रव्रजित हो गया। एक बार वह श्रामण्य में प्रमत्त हुआ। व्यंतरी ने पूर्वभव के वैर के कारण उसे ठग लिया। (गा. ११४५ टी. प. ४०)

६०. स्त्रियों की विमुक्ति

मथुरा नगरी में एक स्तूप महोत्सव था। उसकी पूजा के निमित्त श्राविकाएं श्रमणियों के साथ बाहर गईं। साथ में राजपुत्र भी साधु के वेश में निकट में ही आतापना के लिए बैठा था। इतने में ही लोगों के अपहर्त्ता चोर श्राविकाओं और श्रमणियों का अपहरण कर उन्हें ले जाने लगे। वे राजपुत्र की ओर शीघ्रता से आगे बढ़ रहे थे। स्त्रियों ने साधु (राजपुत्र) को देखकर आक्रंदन किया। राजपुत्र ने चोरों के साथ युद्ध कर उन स्त्रियों को छुड़ा दिया। (गा. ११६१ टी. प. ४३)

६१. अपरिग्रही गणिका

एक गणिका थी। उसके पास कुछ भी परिग्रह नहीं था। वह अपरिग्रही गणिका के नाम से प्रसिद्ध थी। एक बार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसने एक राज-सेवक से बातचीत की और उसे वह अपने घर ले आई। वह एक विशेष प्रयोजन से उस राज-सेवक के प्रति अत्यधिक अनुरक्त हुई और उसको प्रसन्न रखने का प्रयत्न करने लगी। राजपुरुष ने गणिका के सौंदर्य की बात राजा से कही। एक बार राजा अपने सैन्यदल के साथ कहीं जा रहा था। उसने गणिका को अत्यंत रूपवती जानकर अपने कटक के साथ ले लिया। इधर वह राज-सेवक अपनी प्रिया गणिका के वियोग से पीड़ित और अत्यधिक दुःखी होकर स्थविरों के पास प्रव्रजित हो गया।

कालांतर में वह गणिका राजा के साथ लौट आई। उसने उस राज-सेवक को नहीं देखा। वह उसकी खोज करने लगी। तब उसने सुना कि वह राज-सेवक स्थविरों के पास दीक्षित हो गया है। वह उन स्थविरों का अता-पता जानकर वहां पहुंच गई। स्थविरों से वह बोली—जो राज-सेवक आपके पास दीक्षित हुआ है, उसने मेरे धन का प्रचुर उपभोग किया है। यदि आप मुझे वह धन दे देते हैं, दिलवा देते हैं, तो मैं इसे आपके पास छोड़ सकती हूं, अन्यथा इसे मैं जबरन अपने साथ ले जाऊंगी।

ऐसी स्थिति में स्थविरों को, तथा उस मुनि को जो करना है, वह इस प्रकार है—

- स्थविर मुनि गुटिका के प्रयोग से उस व्यक्ति का वर्ण बदल दे या स्वरों में परिवर्तन कर दे जिससे कि वह पहचाना न जा सके।
- अथवा उसे अन्यत्र कहीं भेज दे।
- अथवा ऐसी औषधियों का प्रयोग करें जिससे कि उस व्यक्ति को अत्यधिक विरेचन हो और वह ग्लान की भांति परिलक्षित हो। वह कष्ट से जीवन-यापन करता है यह सोचकर, गणिका उसे छोड़ देगी।
- अथवा वह मुनि स्वयं मृतक की भांति उच्छ्वास-निःश्वास को रोककर, सूक्ष्म श्वास लेते हुए रहे। उसे मृत जानकर गणिका छोड़ देगी।
- अथवा वह मुनि यदि ध्यान-साधना में प्रवीण हो, तो ध्यानावस्था में बैठकर शरीर और श्वास को निश्चल कर दें। वह इस प्रकार अडोल रहे, जिससे देखने वाले को मृत-सा प्रतीत हो।
- अथवा गणिका के मित्रों, स्वजनों को सारी बात बताए और गणिका पर प्रभाव डालने का प्रयत्न करे।

भाष्यकार ने अन्यान्य प्रयत्न भी उल्लिखित किए हैं। (गा. ११७५-११७६ टी. प. ४६, ४७)

६२. दासत्व से मुक्ति

मथुरा नगरी में एक वणिक् अपने छोटे पुत्र को अपने मित्र के घर सौंपकर प्रव्रजित हो गया। वह मित्र कालगत हो गया। उस समय दुर्भिक्ष हुआ और मित्र के सभी पुत्र उस बालक की अवज्ञा करने लगे। वह बालक इधर-उधर घूमने लगा। इस प्रकार आवारा घूमते हुए वह एक सेठ के घर दास के रूप में रह गया। विहरण करते-करते उसके मुनि-पिता उसी नगर में आए। उन्होंने अपने पुत्र के विषय में सब कुछ जान लिया।

भाष्यकार ने उस पुत्र को दासत्व से मुक्त कराने के अनेक उपाय निर्दिष्ट किए हैं।

(गा. ११८०-११९० टी. प. ४७, ४९)

६३. मिथ्या आरोप

एक तरुणी अनेक स्वजनों के साथ प्रव्रजित हुई। एक बार उसने आचार्य से कामभोग की याचना की। आचार्य ने उसे स्वीकार नहीं किया। तरुणी साध्वी अपने मन में आचार्य के प्रति प्रद्वेषभाव रखने लगी। उसने अपने प्रव्रजित स्वजनों से कहा—आचार्य मुझे बार-बार कष्ट देते हैं। उन स्वजनों के मन में भी आचार्य के प्रति प्रद्वेष जाग गया। वें बोले—ये आचार्य पारांचित प्रायश्चित्त के योग्य हैं। इनको गृहस्थ वेश दे देना चाहिए। आचार्य को यह ज्ञात हुआ। उन्होंने दूसरे गण के गीतार्थ मुनियों को अपना सारा वृत्तांत बताया। उन स्थविरों ने यह जान लिया कि आचार्य पर मिथ्या आरोप आया है। वे उन प्रद्विष्ट मुनियों की भावना को जान गए। समागत आचार्य को क्षेत्र के बाहर रखकर, स्वयं उनकी सार-संभाल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के लिए वहीं उनके पास ठहर गए। उन्होंने सोचा, प्रद्विष्ट मुनियों का अभ्याख्यान सफल न हो, इसलिए प्रच्छन्नरूप से समागत आचार्य को उपस्थापना देकर अपने ही गण में रख लिया। (गा. १२३०, १२३१ टी. प. ५७)

६४. आचार्य को प्रायश्चित्त

एक आचार्य का शिष्य परिवार बहुत बृहद् था। एक बार आचार्य ने प्रतिसेवना की, दोष का आचरण किया। उनको गृहस्थ वेष करने का प्रायश्चित्त आया। वे अन्य गण में प्रायश्चित्त के लिए गए। उस गण के आचार्य ने उन्हें गृहीभूत मानकर उनका पराभव किया। तब उस प्रायश्चित्तार्ह आचार्य के शिष्यों ने अन्य गण के आचार्य से कहा—आप हमारे गुरु को गृहीभूत न करें। यदि हमारे गुरु की इस प्रकार भर्त्सना की जाएगी तो हम सब गण छोड़कर अन्यत्र चले जाएंगे। तब उस गण के आचार्य ने सोचा, इन शिष्यों के मन में प्रव्रज्या के प्रति अविश्वास न हो, यह सोचकर आचार्य को गृहीभूत का प्रायश्चित्त न देकर अन्य प्रकार से उनकी उपस्थापना की। (गा. १२३२, १२३३ टी. प. ५७)

६५. दो गण : दो आचार्य

दो गण थे। दोनों गणों के साधु अगीतार्थ थे। एक बार दोनों गणों के गुरुओं को उपस्थापनार्ह प्रायश्चित्त प्राप्त हुआ। उनमें एक को अगृहीभूत उपस्थापनार्ह प्रायश्चित्त तथा दूसरे को गृहीभूत उपस्थापनार्ह प्रायश्चित्त आया। तब दोनों गणों के मुनियों ने यह विमर्श किया कि एक गुरु दूसरे गण में चले जाएं और दूसरे गुरु उसी गण में रह जाएं। दोनों गणों के अगीतार्थ मुनि अपने-अपने आचार्य को प्रायश्चित्त वहन करते देख, परस्पर कहते—तुम हमारे गुरु को क्या प्रायश्चित्त दोगे ? उनको गृहीभूत करोगे या अगृहीभूत ? तब एक गण वाले स्थविरों ने कहा—जिनको गृहीभूत उपस्थापना प्राप्त है उसको गृहीभूत करेंगे। तब दूसरे गण के स्थविर बोले—तब हम भी तुम्हारे आचार्य को गृहीभूत करेंगे। तब परस्पर विवाद हुआ और यह निर्णय हुआ कि दोनों को अगृहीभूत ही रखना है। तब दोनों आचार्य बोले—हमारा दोष अगृहीभूत रहने से शुद्ध नहीं होगा। इसलिए हमको गृहीभूत ही करना होगा। यद्यपि यह बात एक गण को मान्य नहीं थी, फिर दोनों गणों के सामंजस्य के लिए दोनों आचार्यों को अगृहीभूत उपस्थापना ही दी गई। (गा. १२३४-१२३६ टी. प. ५८)

६६. झूठे आरोप का अनावरण

दो मुनि थे। बड़े मुनि को बड़े होने का गर्व था। वह छोटे मुनि को आचार-विचार में अस्खलित होने पर भी कषायोदय के कारण तर्जना देता रहता था। वह कहता—अरे दुष्ट शिष्य ! यह स्खलना क्यों करता है ? उसको उच्चारण के लिए भी टोकता रहता था। दूसरे साधुओं ने बड़े साधु को ऐसा न करने के लिए प्रेरित किया। परंतु वह कषाय के वशीभूत होकर हाथ भी उठा लेता था। तब उस छोटे मुनि ने सोचा, यह बड़े होने के गर्व से गर्वित होकर मुझे लोगों के समक्ष ताड़ना-तर्जना देता है। अब मैं ऐसा कोई कार्य करूं कि यह मेरे से छोटा हो जाए।

एक बार दोनों भिक्षा के लिए गए। भूख-प्यास से पीड़ित होकर उन्होंने सोचा—अब हम देवकुल या वृक्षों के झुरमुट में बैठकर कलेवा कर पानी पीयेंगे। दोनों उस ओर चले। इतने में ही छोटे मुनि ने देखा कि एक परिव्राजिका उसी देवकुल की ओर आ रही है। उस अवसर का लाभ उठाने के लिए उसने बड़े मुनि से कहा—आर्य ! अब आप प्रथमालिका करें और पानी पीएं। मैं संज्ञा से निवृत्त होकर आता हूं। यह कहकर वह शीघ्रता से उपाश्रय में आया और बड़े मुनि पर मैथुन का झूठा आरोप लगाया। रत्नाधिक मुनि से पूछा गया। उन्होंने कहा—मेरे पर झूठा आरोप लगाया जा रहा है। आचार्य ने उसके आरोप को सुना। उन्होंने नाना प्रकार से उस घटना की अन्वेषणा की। अंत में आचार्य ने दोनों मुनियों से कहा—आज तुम दोनों इस बस्ती को छोड़कर अन्यत्र चले जाओ। हम इस घटना का निर्णय करने के लिए कायोत्सर्ग कर देवता को पूछेंगे कि सत्यवादी कौन है और अलीकवादी कौन है ?

दोनों मुनि अन्यत्र बस्ती में चले गए फिर रात्रि वेला में आचार्य तथा एक वृषभ मुनि कापालिक का वेष कर, वहां गए जहां दोनों मुनि रह रहे थे। दोनों मुनि सो गए। आचार्य तथा वृषभ मुनि भी झूठी नींद में सो गए। दोनों मुनि परस्पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बात करने लगे। रत्नाधिक मुनि बोले—अरे ! तुमने मुझ पर झूठा आरोप क्यों लगाया ? मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था ? वह छोटा मुनि बोला— आप प्रतिदिन मुझे डांटते रहते थे। मैं सम्यक् क्रिया करता, फिर भी आप कहते—हे दुष्ट शिष्य! यह क्या करते हो ? मैंने भी फिर क्षुब्ध होकर आप पर झूठा आरोप लगाया। कपट वेश में आए हुए आचार्य ने यह जान लिया कि आरोप झूठा है या सच। (गा. १२३६-१२४७ टी. प. ५६ से ६१)

६७. परस्परता का लाभ

दो ग्वाले सगे भाई थे। दोनों गाएं चराते थे। कालांतर में दोनों में कलह हो गया और वे दोनों अलग-अलग अपने-अपने वेतन पर गाएं चराने लगे। एक बार उनमें से एक भाई व्याधिग्रस्त हो गया। उसने गायों का संरक्षण नहीं किया। वे गायें इधर-उधर भाग गईं। एक बार दूसरा भाई भी बीमार पड़ा और गायों का संरक्षण नहीं हो सका। उसकी गाएं भी तितर-बितर हो गईं। दोनों को बड़ी हानि हुई। दोनों ने सोचा कि एकाकी रहना उचित नहीं है। यह सोचकर दोनों ने परस्पर प्रीति उत्पन्न की और साथ रहने लगे। जब एक भाई किसी प्रयोजन वश गायों को नहीं संभाल पाता तो दूसरा भाई उसकी गायों का संरक्षण करता। इस प्रकार उन्हें लाभ होता गया। (गा. १३३१, १३३२, टी.प.७८, ७६)

६८. शक्तिहीन राजकुमार

एक राजकुमार था। न उसमें बुद्धि-बल था और न सैन्यबल। वह प्रत्यन्त देश में रहकर देश-विप्लव करता था। तब दायाद (पैतृक सम्पत्ति में भागीदार) राजा ने उसे बुद्धि और सैन्यबल से रहित समझकर उसका निग्रह करने के लिए अल्पसंख्यक सैनिकों को भेजा और उसे पकड़कर मौत के घाट उतार दिया। (गा. १३७८ टी.प.६)

६६. देखादेखी की हानि

एक बार अटवी में दावानल सुलगा। वह चारों ओर से सब कुछ भस्मसात् करता हुआ आगे बढ़ रहा था। तब मृग आदि वन्य-पशु ने दावानल से भयाक्रान्त होकर, पलायन कर, लघु जलाशय से परिवेष्टित सूखे स्थान (बेंट) में प्रविष्ट हो गए। दावानल दहन करता हुआ वहां आ पहुंचा। वहां एक सिंह भी आया हुआ था। भयभीत मृगों ने सोचा कि दावानल वेंट में भी प्रवेश कर जाएगा। तब वे सिंह के पैरों में गिरकर प्रार्थना करने लगे—आप हमारे राजा हैं, मृगराज हैं। आप हमें यहां से उबारें। सिंह बोला—तुम सब मेरी पूंछ को दृढ़ता से पकड़ लो। सभी ने सिंह की पूंछ पकड़ ली। सिंह ने छलांग भरी और सोलह हाथ विस्तीर्ण उस गढ़े के बाहर आ गया। सभी सुरक्षित हो गए।

कुछ समय पश्चात् उसी वन में पुनः दावानल सुलगा। मृग आदि उसी प्रकार वेंट में प्रविष्ट हुए। वहां एक सियार भी आया जो पूर्व दावानल में सिंह के द्वारा बचाया गया था। उसे सिंह की युक्ति याद आई। उसने सोचा, मैं भी तो सिंह ही हूं। मैं मृग आदि सभी पशुओं को इस दावानल से बचा लूं। उसने मृग आदि पशुओं से कहा—तुम सब मेरी पूंछ को मजबूती से पकड़ लो। सबने सियार की पूंछ पकड़ ली। सियार कूदा। वह उन सभी पशुओं के साथ उस गढ़े में गिरा। सभी मर गये। (गा. १३८० टी.प.६)

७०. चन्द्रमा का उद्धार

जेठ का महीना। भयंकर गर्मी। प्यास से व्याकुल कुछ सियार आधी रात के समय एक कुएं पर आए। कुएं की मेढ पर बैठकर वे कुएं के भीतर देखने लगे। उन्होंने ज्योत्सना के प्रकाश में कुएं के पानी में चन्द्रबिम्ब को देखा। उन्होंने सोचा, बेचारा चन्द्रमा कुएं में गिर गया है। वहां एक सिंह आया। तब सियारों ने सिंह से प्रार्थना की—तुम मृगाधिपति हो और वह ग्रहाधिपति चन्द्रमा है। यह कुएं में गिर गया है। इसी के पुण्य प्रताप से हमारी रातें दिन के समान हो जाती हैं और हम सब सुखपूर्वक इधर-उधर विहरण कर सकते हैं। इसलिए तुमको चाहिए कि तुम ग्रहाधिपति को कुएं से निकालो। सिंह बोला—तुम सब पंक्तिबद्ध होकर एक-दूसरे की पूंछ पकड़ कर मेरी पूंछ पकड़ लो और कुएं में उतरो। अंतिम सियार चन्द्रमा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

को पकड़ लेगा। तब मैं उछलकर सभी का निस्तरण कर दूंगा। तब सभी सियार पंक्तिबद्ध होकर सिंह की पूंछ पकड़कर कुएं के बीच उतरे। सिंह ने उछलकर सभी सियारों को कुएं से बाहर निकाल दिया। सभी सियारों ने ऊपर देखा। गगन में चन्द्रमा को देखकर वे प्रसन्न हुए। कुएं में देखा तो पानी के विलोडन के कारण चन्द्रबिम्ब न दिखने पर उन्होंने सोचा कि हमने चन्द्रमा का उद्धार कर दिया है।

कुछ समय पश्चात् ऐसी ही घटना दुबारा घटी। उन सियारों में से एक सियार वहां कूप पर था। उसने सोचा, मैं भी सिंह की भांति चांद का उद्धार करूं। उसने अन्य सियारों से कहा—सभी मेरी पूंछ को पंक्तिबद्ध होकर पकड़ लें और कुएं में उतर जाएं। सभी सियार पूंछ पकड़कर कुएं में उतर गए। सियार ने सबके निस्तरण के लिए छलांग लगाई। वह असमर्थ था। सभी कुएं में गिरकर मर गये। (गा. १३८२ टी.प.७)

७१. नीलवर्णी सियार

एक सियार रात में एक घर में घुसा। घरवालों ने उसे देख लिया। वे उसे बाहर निकालने लगे। उसे देख कुत्ते भौंकने लगे। वह भयभीत होकर इधर-उधर भागते हुए एक नीले रंग के कुंड में गिर पड़ा। ज्यों-त्यों उससे वह बाहर निकला। नीले रंग के कारण वह नीलवर्ण वाला हो गया था। उसको देखकर हाथी, शरभ, तरक्ष तथा अन्य सियार आदि पशुओं ने पूछा—तुम इस वर्ण वाले कौन हो ? उसने कहा—सभी वन्य पशुओं ने मुझे 'खसद्रुम' नाम से मृगराज बना दिया है। इसलिए मैं यहां आकर देखता हूं कि मुझे कौन प्रणाम नहीं करता है ? उन पशुओं ने सोचा, इसका वर्ण अपूर्व है, निश्चित ही यह देवता द्वारा अनुगृहीत है। वे बोले—देव ! हम सब आपके किंकर हैं। आप आज्ञा दें। हम आपके लिए क्या करें ? खसद्रुम बोला—मुझे हाथी की सवारी उपलब्ध कराओ।' उन्होंने आज्ञा का पालन किया। अब वह खसद्रुम हाथी पर चढ़कर घूमने लगा। एक बार उसे एक सियार मिला। वह आकाश की ओर मुंह कर 'हूं हूं' करने लगा। खसद्रुम भी अपने सियार स्वभाव के कारण उसी प्रकार आकाश की ओर मुंह करके 'हूं हूं' की आवाज करने लगा। तब हाथी, जिस पर वह चढ़ा हुआ था, ने जान लिया कि यह भी सियार ही है, उसने सूंड से उस खसद्रुम को धरती पर पटक कर मार डाला। (गा. १३८३ टी.प.७)

७२. शशक ने सिंह को मार डाला

एक सिंह था। वह हरिणजाति में आसक्त था। वह प्रतिदिन हरिणों को मारकर खा लेता था। एक बार हरिणों ने सिंह से प्रार्थना की—वनराज ! आप केवल हरिणजाति पर आश्रित हैं। आप प्रसाद करें। सभी मृगजातीय अर्थात् अरण्य पशुओं को प्रतिदिन एक-एक के क्रम से खाइए। सिंह ने सोचा, इनका कहना युक्तियुक्त है। तब सिंह ने सभी मृगजातीय पशुओं को एकत्रित कर कहा —तुम सब यह निर्णय करो कि अपने-अपने कुल के औचित्य से, अपने-अपने क्रम के अनुसार प्रतिदिन एक पशु मेरे स्थान पर आ जाए। मुझे कहीं जाना न पड़े। उन पशुओं ने सिंह की शर्त स्वीकार कर ली। अब वन्य पशु बारी-बारी से सिंह के पास जाने लगे। एक बार शशक जाति की बारी आई। सभी शशक एकत्रित हुए, आपस में मंत्रणा की। पूछा गया—आज सिंह के पास कौन जाएगा ? एक वृद्ध शशक बोला—मैं जाऊंगा। सभी वन्य पशुओं के लिए शांति कर दूंगा। वह बूढ़ा शशक वहां से चला। मार्ग में एक कुआँ था। वह मरुप्रदेश के कुओं की भांति बहुत गहरा था। वह शशक वहां बैठ गया और संध्या के समय सिंह के पास पहुंचा। सिंह बोला—अरे ! तुम सायं यहां आए हो ? इतना विलंब क्यों ? शशक बोला—प्रभो ! मैं प्रातः ही यहां पहुंच जाता, परन्तु मार्ग में एक सिंह ने मेरा मार्ग रोककर पूछा—कहां जा रहे हो ? मैंने कहा—मृगराज के पास जा रहा हूं। तब वह बोला—मृगराज तो मैं हूं। दूसरा कौन होता है मृगराज ? तब मैंने कहा—यदि मैं अपने मृगराज के पास नहीं जाऊंगा तो वह कुपित होकर शशक जाति का ही उच्छेद कर देगा। इसलिए मैं उसके पास जाता हूँ और सारी बात बताता हूँ। दोनों में जो बलवान् होगा, हम उसकी आज्ञा मानेंगे। तब उस मृगराज ने मुझे कहा—जाओ। अपने मृगराज को कहो कि यदि उसमें शक्ति है तो मेरे सामने आए। तब मृगराज बोला—तुम उस सिंह को मुझे दिखाओ। तब शशक सिंह को साथ ले उस कूप की ओर चला। दूर स्थित होकर शशक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बोला —मृगराज ! वह सिंह इस कुएं में रहता है। यदि तुमको विश्वास न हो तो कुएं की मेंढ पर तुम गर्जन करो, वह भी गर्जन करेगा। सिंह ने गर्जना की। गर्जना की प्रतिध्वनि सुनाई दी। सिंह वहां क्षण भर रुका। पुनः गर्जना नहीं सुनाई दी, तब सिंह ने सोचा—यह सिंह मेरे भय से संत्रस्त हो गया है। न यह गर्जना करता है और न सामने आता है। तो अच्छा है कुएं में उतरकर उसे मार डालूं। वह कुएं में उतरा। सिंह को वहां न देखकर सोचा—वह बेचारा मेरे भय से छुप गया है। तब सिंह ने गर्जना की, जोर से दहाड़ा। कोई प्रत्युत्तर नहीं आया, तब सोचा—वह मेरे साथ लड़ना नहीं चाहता। यह सोचकर सिंह अपनी भरपूर शक्ति से छलांग मार कर कुएं से बाहर आने के प्रयास में कुएं में गिरकर मर गया।

एक सियार घूमता हुआ उसी कुएं पर आया, उसने पानी में झांका। सियार का प्रतिबिम्ब देखकर उसने 'हुंकार' किया। प्रतिध्वनि हुई। उसको सुनकर सियार ने सोचा—मेरे सामने हुंकार करता है! वह तत्काल कुएं में कूद पड़ा। पुनः बाहर छलांग भरने में असमर्थ होने के कारण वह वहीं मर गया। (गा. १३८५, १३८६ टी.प.८)

७३. मन के लड्डू

एक भिखारी था। एक बार वह गोकुल में गया। वहां ग्वालिन ने उसे दूध पिलाया। कुछ समय पश्चात् उसे वहां दूध से भरा घड़ा मिला। वह उसे लेकर घर गया, अपने पलंग के सिरहाने के पास उसे रखकर बैठ गया। अब वह सोचने लगा—इस दूध का दही जमाऊंगा। उसे बेचकर मुर्गियां खरीदूंगा। वे अंडे देंगी। उन्हें बेचूंगा। मूल धन को ब्याज में दूंगा। जब मेरे पास पर्याप्त धन हो जाएगा तब समानकुल या अन्यकुल की कुलीनकन्या के साथ विवाह करूंगा। वह अपने कुल के मद से मेरे सिरहाने से शय्या पर चढ़ेगी। तब 'तू मेरे सिरहाने से शय्या पर चढ़ती है'—यह कहता हुआ मैं उस पर एड़ी से प्रहार करूंगा। उसने पैर का प्रहार किया। वह प्रहार घड़े पर लगा और वह दूध का घड़ा फूट गया। उसका सपना बिखर गया। (गा. १३८८ टी.प.९)

७४. अनर्थ चिंतन

एक ग्वाला गायों को चराता था। एक बार उसने सोचा, गायों को चराने के बदले जो धनराशि मिलेगी, मैं उससे नई ब्याई हुई गाय खरीदूंगा। धीरे-धीरे उसका परिवार बढ़ेगा। मेरे पास बड़ा गोवर्ग हो जाएगा। उस गोवर्ग में अनेक बछड़े होंगे। मैं उनके लिए मयूरांगचूलिका—आभरण विशेष बनवाऊंगा। यह सोचकर उसने अपने पास के धन से अनेक आभूषण बना डाले। सारा धन खर्च हो गया। अब उसके पास कुछ नहीं रहा। यह असत् कल्पना से घटित अनर्थ है। (गा १३९०, १३९१ टी.प.१०)

७५. सक्रियता, निष्क्रियता

दो भाई थे। दोनों अलग-अलग हो गए। एक भाई कृषिकर्म करने लगा। वह स्वयं कृषि में तत्पर रहता और अन्यान्य कर्मकरों से भी काम लेता। वह कर्मकरों को उनके श्रम के अनुसार उचित धन देता, भोजन देता। इस प्रकार उसकी कृषि बढ़ी और सभी उसको साधुवाद देने लगे।

दूसरा भाई आलसी था। वह कृषि कार्य में नहीं जुटता था। जो कर्मकर काम करते, वह उनके कार्य का लेखा-जोखा भी नहीं लेता था। न वह उन कर्मकरों के मध्य रहकर काम करता और न उनसे काम करवाता। कर्मकरों को वह समय पर न धनराशि देता, न समय पर भोजन देता। सारे कर्मकर उससे रुष्ट होकर उसकी नौकरी छोड़ चले गए। उसकी कृषि चौपट हो गई और लोग उसकी निन्दा करने लगे। (गा. १४०९ टी.प.१४)

७६. वज्रभूति आचार्य

भरुकच्छ नगर में नभवाहन राजा राज्य करता था। उसकी रानी का नाम था पद्मावती। उसी नगर में वज्रभूति आचार्य रहते थे। वे महान् कवि थे। उनके कोई शिष्य नहीं था। वे साधारण रूपवाले तथा अत्यंत कृशकाय थे। उनका काव्यगान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्तःपुर में गूंजने लगा। रानी पद्मावती उस काव्यगान से अत्यंत प्रभावित हुई। काव्य ने उसके हृदय को छू लिया। उसने सोचा, जिसका यह काव्य है, मैं उसे कैसे देख सकती हूं ? उसने राजा से प्रार्थना की और वह दासियों से परिवृत होकर, मूल्यवान उपहार लेकर वज्रभूति आचार्य के उपाश्रय की ओर गई। वज्रभूति उस समय दरवाजे पर बैठे थे। रानी को देखकर आचार्य स्वयं का आसन लेकर बाहर आए। रानी ने पूछा—आचार्य वज्रभूति कहां हैं ? बाहर जाते हुए आचार्य ने कहा—वे बाहर गए हैं। दासी ने रानी से कहा —यही आचार्य वज्रभूति हैं। आचार्य को देखकर रानी को विरक्ति हो गई। उसने सोचा—ओह ! 'कसेरू' (एक नदी) तेरा नाम प्रसिद्ध है, परंतु तूं दर्शनीय नहीं है। [कसेरु नदी अति प्रसिद्ध है। परंतु उसका पानी पीने योग्य नहीं है।] रानी ने उपहार वहां रखे और कहा—ये उपहार आचार्य को दे देना। इतना कहकर रानी चली गई। (गा. १४१४, १४१५ टी.प.१४, १५)

७७. लोभ का परिणाम

एक अंगारदाहक (कोयला बनानेवाला) था। वह अंगारों के योग्य लकड़ियां लाने के लिए नदीकूल पर गया। उस नदी के तट पर एक गड्डर पानी के प्रवाह में बहता हुआ आया। उसने उसे निकाला। वह गोशीर्ष चंदन का गड्डर था। वह उसे लेकर वहां बैठ गया। इतने में ही एक वणिक् वहां आया। उसने गड्डर को देखा और जान लिया कि यह चन्दन है। सामान्य लक्कड़ नहीं है। उस वणिक् ने उस अंगारदाहक से कहा—अरे तुम इस काष्ठ का क्या करोगे ? उसने कहा—मैं इसे जलाकर कोयला बनाऊंगा। वणिक् ने सोचा—यदि मैं अभी इससे इस गड्डर को मांगूंगा तो यह बहुत मूल्य बतायेगा। अच्छा है जब यह इसको जलाने लगेगा तब मैं इसे कम मूल्य में खरीद लूंगा। यह सोचकर वणिक् घर चला गया। और जब वह लौटकर आया तब तक अंगारदाहक ने उस गड्डर को जला डाला था। वणिक ने आकर पूछा—अरे ! वह गड्डर कहां है ? उसने कहा—मैंने उसे जला डाला। वणिक् ने उसे बुरा-भला कहा। उसने भी वणिक् की मूर्खता पर खेद प्रकट किया।

अंगारदाहक और वणिक् दोनों ऐश्वर्य से चूक गये। (गा. १४४४-१४४६ टी.प.२०)

७८. पांचों एक साथ प्रव्रजित

एक राजा था। वह अमात्य, पुरोहित, सेनापति और श्रेष्ठी के साथ राज्य का पालन कर रहा था। उन पांचों के एक-एक पुत्र था। राजा का पुत्र राजा बनेगा, अमात्य का पुत्र अमात्य, पुरोहित का पुत्र पुरोहित, सेनापति का पुत्र सेनापति और सेठ का पुत्र सेठ बनेगा, ऐसी सम्भावना की जाती थी। ये पांचों साथ-साथ रहते और क्रीड़ा करते। एक बार राजपुत्र विरक्त हुआ और उसने अपने चारों मित्रों के साथ प्रव्रज्या ग्रहण कर ली। सभी स्वाध्याय में रत हुए और पांचों ग्रहण और आसेवन-शिक्षा में निपुण होकर बहुश्रुत बन गए। वे पांचों ऊंचे कुलों के थे। गण के आचार्य ने उनकी ओर ध्यान दिया और राजपुत्र को आचार्यपद, अमात्यपुत्र को उपाध्याय पद, पुरोहितपुत्र को स्थविर पद तथा श्रेष्ठिपुत्र को गणावच्छेदक पद पर नियुक्त कर दिया। राजा, अमात्य आदि के कोई दूसरे पुत्र नहीं थे। अतः वे आचार्य के पास आकर बोले—हम सभी अपने-अपने पुत्रों को घर ले जाना चाहते हैं, फिर हम सब इनके साथ प्रव्रजित हो जायेंगे। आचार्य ने अनुज्ञा दे दी। उन पांचों को तब आचार्य ने शिक्षा देते हुए कहा—तुम सब अपने सम्यक्त्व को दृढ़ रखना और निरंतर अप्रमत्त रहना।

राजकुमार आदि घर में चले गए। वहां भी वे प्रासुक आहार करते, प्रतिदिन सूत्रपौरुषी और अर्थपौरुषी करते, लोच करवाते और ब्रह्मचर्य का पालन करते थे।

पांचों के माता-पिता ने सोचा कि ये यदि पुनः प्रव्रजित हो जाएंगे तो हमारी कुल-परंपरा का व्यवच्छेद हो जाएगा। उन्होंने पुत्रों को पुत्रोत्पत्ति की प्रेरणा दी। अब वे लक्षणपाठकों को पूछते कि किस महिला के ऋतुकाल में गर्भ रह सकता है। तब लक्षणपाठकों ने बताया कि इस प्रकार की लक्षणयुक्त महिला के ऋतुकाल में निश्चित ही गर्भ रह सकता है। तब

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऋतुकाल के औचित्य के अनुसार वे अपनी-अपनी महिलाओं के पास एक बार गए और संभोग से बीज-वपन किया। कालावधि के परिपाक होने पर पांचों महिलाओं ने एक-एक पुत्र का प्रसव किया। जब वे बालक युवा हुए तब अपने-अपने स्थान पर उनकी नियुक्ति कर वे पांचों व्यक्ति प्रव्रजित होने के लिए उद्यत हुए। आचार्य ने उन्हें उचित प्रायश्चित्त देकर प्रव्रजित कर दिया। (गा. १५४६-१५५२ पत्र ४०, ४१)

७६. व्यस्तता : अपाय-वर्जन का उपाय

एक सेठ था। उसका पुत्र धनार्जन करने परदेश गया। उसकी पत्नी घर पर ही रही। वह निरंतर प्रसाधन में रत रहती। अच्छा भोजन करना, तंबोल चबाना, विलेपन आदि करना इनमें ही प्रवृत्त रहती थी। घर का काम-काज नहीं करती, निठल्ली बैठी रहती। वह उन्मत्त हो गई। उसने अपनी दासी से कहा—किसी पुरुष को ले आओ। दासी ने सेठ से कहा। सेठ ने सोचा, यह कुमार्ग पर न जाए इसलिए उपाय करना चाहिए। सेठ घर गया। उसने सेठानी से कहा—तुम मेरे से कलह कर पीहर चली जाओ। फिर बहू स्वयं घर का काम करेगी, अन्यथा यह कुमार्ग में चली जाएगी। दूसरे दिन सेठ घर आया। सेठानी से भोजन की थाली परोसने के लिए कहा। सेठानी ने भोजन नहीं परोसा। सेठ ने बहुत कलह किया और सेठानी को घर से निकाल दिया। पुत्रवधू कलह का शब्द सुनकर दौड़ी-दौड़ी वहां आई। सेठ ने कहा—वधूरानी ! अब तू ही घर की मालकिन है, सेठानी कौन होती है ? अब आज से तुझे ही सारे घर का कामकाज करना है। पुत्रवधू वैसा ही करने लगी। घर-व्यापार में व्यापृत होने के कारण वह भोजन भी समय पर नहीं कर पाती थी। मंडन और प्रसाधन की तो बात ही क्या? दासी ने आकर वधूरानी से कहा— आपने पुरुष लाने के लिए कहा था। वह आया हुआ है। आप कब मिलेंगी ? उसने कहा—मरने की भी फुरसत नहीं है तब फिर पुरुष के संगम के लिए कहां अवकाश है? (गा. १६०१ टी.प.५२)

८०. प्रमादी अजापालक

कुछेक तीर्थयात्री गंगा की यात्रा पर जा रहे थे। एक अजापालक ने पूछा—कहां जा रहे हैं ? उन्होंने कहा—हम गंगा-यात्रा पर निकले हुए हैं। उसने कहा—मैं भी यात्रा पर चलूंगा। वह बकरियां वहीं छोड़कर उन यात्रियों के साथ चल पड़ा। उन बकरियों को स्वतंत्र रूप से चरते देखकर कुछेक बकरियों को हिंस्र पशुओं ने मार डाला, कुछेक को चोर उठा ले गए और कुछ इधर-उधर चली गईं। वह अजापालक गंगा में स्नान कर लौटा और बकरियों के स्वामियों के पास जाकर बोला—मैं आ गया हूं। आपकी बकरियों को मैं चराता रहा हूं। पुनः वही काम करने का इच्छुक हूं। बकरियों के स्वामियों ने उसको बांधकर कहा —लाओ, हमारी बकरियों का मूल्य। सारी बकरियां नष्ट हो गईं। उसको मूल्य चुकाना पड़ा। उसको अजारक्षक के रूप में पुनः रखने के लिए उन्होंने इन्कार कर दिया। (गा. १६१२, १६१३ टी.प.५५)

८१. बुद्धिमान् अजापालक

एक अजापालक था। उसने कार्पटिक आदि व्यक्तियों को तीर्थयात्रा में जाते देखा। उसने पूछा —आप सब कहां जा रहे हैं ? हम गंगा की यात्रा करने निकले हैं। उस अजापालक का मन भी गंगायात्रा के लिए उत्सुक हुआ। उसने सारी अजाओं को उन-उन मालिकों को सौंप दिया अथवा अपने स्थान पर दूसरे अजापालक की व्यवस्था कर गंगा-यात्रा पर निकला। वह गंगा-स्नान कर लौटा और अजास्वामियों ने पुनः उसे अजारक्षक के रूप में नियुक्त कर दिया।
(गा. १६१२, १६१३ टी.प.५५)

८२. प्रमादी भंडारी

एक सेठ ने अपने भंडार की रक्षा के लिए एक व्यक्ति को नियुक्त किया। एक बार उसने तीर्थयात्रियों को देखकर पूछा—आप सब कहां जा रहे हैं ? उन्होंने कहा—हम गंगा की यात्रा पर जा रहे हैं। वह भंडारी भी सेठ को बिना पूछे ही उनके साथ गंगा-यात्रा पर प्रस्थित हो गया। लोगों ने श्रीघर (भंडारगृह) को सूना देखकर लूट लिया। वह भंडारी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गंगा-स्नान कर घर लौटा और सेठ के पास गया। सेठ ने उसे बांधकर श्रीघर में जो हानि हुई थी, उसका मूल्य उससे वसूला और उसे भंडारी के काम से मुक्त कर दिया। (गा. १६१४ टी.प. ५५)

८३. श्रीघर का रक्षक

एक सेठ ने श्रीघर की रक्षा के लिए एक व्यक्ति की नियुक्ति की। एक बार उसने गंगायात्रा पर निकले एक सार्थवाह को देखा। वह भी गंगा-यात्रा करना चाहता था। उसने श्रीघर के स्वामी को पूछा अथवा अपने स्थान पर एक विश्वस्त व्यक्ति की व्यवस्था कर वह गंगा-यात्रा पर निकल पड़ा। गंगा-स्नान कर वह लौटा। सेठ को कुछ भी हानि नहीं हुई। सेठ ने उसे पुनः भंडारी के रूप में रख लिया। (गा. १६१४ टी.प. ५५)

८४. संघ-समवाय और आचार्य

एक आचार्य अपने शिष्य परिवार के साथ एक नगर में रह रहे थे। संघ के मुनियों में सचित्त आदि के प्रसंग में विवाद उत्पन्न हो गया। वे किसी निर्णय पर नहीं पहुंच पाए। एक बार उसी नगर में एक बहुश्रुत आचार्य अपने बृहद् शिष्य परिवार के साथ वहां आए। तब नगर वास्तव्य मुनियों ने प्रार्थना की कि आप बहुश्रुत हैं। आप हमारे विवाद का समाधान दें। तब आचार्य ने न्याय विधि से श्रुतोपदेश के आधार पर उनका विवाद समाप्त कर दिया। कुल, गण और संघ ने उसे प्रमाण माना। लोगों ने सोचा, ये आचार्य श्रुत-पारगामी हैं।ये श्रुत से विलग कुछ नहीं कहते, इसलिए इनका कथन प्रमाण है। विवाद की समाप्ति पर लोग आचार्य की आहार आदि के दान से सेवा करने लगे। आचार्य उनके द्वारा दीयमान आहार आदि ग्रहण करने लगे।

कालान्तर में जब कभी विवाद का प्रसंग आता तब आचार्य एक पक्ष की ओर झुककर विवाद निपटाते। तब जो व्यक्ति उन्हें आहारादि नहीं देते, वे आचार्य के प्रत्यनीक माने जाते। वे आचार्य पर पक्षपात का आरोप लगाते। तब उन लोगों ने सोचा, ऐसा कौन दूसरा गीतार्थ गुरु हो जो पक्षपात से शून्य हो और न्याय से विवाद शान्त करे। इसके लिए उन्होंने संघ समवाय की ओर से घोषणा करवायी कि ऐसे गीतार्थ मुनि की यहां प्रयोजनीयता है। यह घोषणा सुनकर एक अतिथि आचार्य जो सूत्र और अर्थ—दोनों में निपुण थे, वहां आये।

जैन परम्परा में यह स्थिर तथ्य है कि संघसमवाय का प्रयोजन उपस्थित होने पर धूलिधूसरित पैरों वाला भी जैन मुनि सभी कार्य को गौण कर संघ कार्य के लिए उपस्थित हो जाए। यदि वह प्रमाद करता है तो वह प्रायश्चित्त का भागी होता है। उसे कुलसमवाय, गणसमवाय और संघसमवाय के कार्य को प्रधानता देनी होती है। वह अतिथि आचार्य वहां आकर स्थिति का पूरा अध्ययन करे और सूत्र में निर्दिष्ट विधि से कलह का निवारण करे।

आंगतुक अथिति आचार्य ने विवाद का उचित निपटारा कर दिया। (गा. १६५०-६० टी.प. ६२-६४)

८५. जूते पहने पैर ने मारा है

एक व्यक्ति जूते पहनकर जा रहा था। उसने दूसरे व्यक्ति को पैर से आहत किया। आहत व्यक्ति ने राजदरबार में जाकर शिकायत की। राजपुरुषों ने उसे बुलाया और पूछा—क्या तुमने इस पर प्रहार किया है ? उसने कहा—मैंने इस पर प्रहार नहीं किया। मेरे जूते पहने हुए पैर ने प्रहार किया था। (गा. १६६८ टी. प. ६६)

८६. लाट देशवासी की माया

लाट देश का एक व्यापारी गाड़ी लेकर एक गांव में प्रवेश कर रहा था। बीच में ही महाराष्ट्र का एक व्यापारी मिल गया। उसने लाट देशवासी से पूछा—लाटवासी कैसे मायावी होते हैं ? उसने कहा—बाद में बता दूंगा। दोनों मार्ग में चल रहे थे। जब ठंड कम हुई तब महाराष्ट्रवासी ने अपनी कंबल गाड़ी पर रख दी। लाटवासी ने उस कंबल की फलियां गिन लीं। नगर आ जाने पर महाराष्ट्रिक ने गाड़ी से अपना कंबल लेना चाहा। लाटवासी ने कहा—अरे ! तुम मेरा कंबल क्यों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ले रहे हो ? कंबल के कारण दोनों में विवाद छिड़ गया। महाराष्ट्रिक ने राजकुल में शिकायत की। लाटवासी को राजकुल में बुलाया। उसने कहा—यदि कंबल महाराष्ट्रिक का है तो उसे पूछा जाए कि इस कंवल की फलियां कितनी हैं ? महाराष्ट्रिक कंबल की फलियां नहीं बता सका। लाटवासी ने संख्या बता दी। महाराष्ट्रिक पराजित हो गया। राजकुल से बाहर आकर लाटवासी ने महाराष्ट्रिक को बुलाकर उसका कंबल सौंप दिया। उसने कहा—मित्र ! तुमने पहले पूछा था कि लाटदेश के मायावी कैसे होते हैं ? अब तुम समझ गये कि वे कैसे होते हैं। (गा. १७००, १७०१ टी.प.६६, ७०)

८७. मूलदेव की अनुशासना

एक राजा था। वह स्वयं के पश्चात् राज्य का क्या होगा, इस चिंता से निरपेक्ष था। उसके राज्य में मूलदेव नाम का चोर था। एक वार आरक्षकों ने उसे चोरी के अपराध में पकड़कर राजा के समक्ष उपस्थित किया। राजा ने चोर समझकर उसके वध की आज्ञा दे दी। राजा तत्काल अपने निवास स्थान पर आया और सहसा मृत्यु को प्राप्त हो गया। पीछे उसने किसी को युवराज नहीं बनाया था। इसलिए 'राजा मर गया', इस रहस्य को छुपाया गया। इसे केवल दो ही व्यक्ति जानते थे—वैद्य और अमात्य। राजा निःसन्तान था। अतः राजा की खोज में एक अश्व की पूजा कर उसको नगर के तिराहे, चौराहे तथा अन्य चौकों में घुमाया गया। राज्य कर्मचारी इसी चिन्ता में थे कि राजा के लक्षण वाला पुरुष हमें कैसे मिले। वध-स्थान की ओर ले जाया जाता हुआ मूलदेव उसी रास्ते से गुजर रहा था। अश्व ने मूलदेव के पास जाकर अपनी पीठ नीची की। उसे लेकर राज्यकर्मचारी वहां आये, जहां मृत राजा का शव एक पर्दे के पीछे रखा हुआ था। उस पर्दे के पीछे वैद्य और अमात्य बैठे हुए थे। उन दोनों ने मृत राजा के हाथ को ऊपर उठाकर हिलाया और बोले—राजा बोल नहीं सकते अतः अपना हाथ हिलाकर यह अनुमति दे रहे हैं कि मूलदेव का राजा के रूप में अभिषेक किया जाए। मूलदेव राजा बन गया।

कुछ सामंत इस घटना को असाधारण मानकर राजा का पराभव करने लगे। वे राजा के योग्य विनय-व्यवहार नहीं करते, तब मूलदेव ने सोचा कि ये मुझे मूर्ख मानकर मेरा पराभव कर रहे हैं। आज तो ये केवल मूर्ख मान रहे हैं, भविष्य में स्वयं मेरे पर आरोप लगाकर राज्यच्युत भी कर सकते हैं। मुझे इन पर अनुशासन करना चाहिए।

दूसरे दिन राजा मूलदेव अपने सिर पर तिनकों के तीक्ष्ण अग्रभागों को रखकर सभा-मंडप में आ बैठा। वे सामन्त आए और राजा की मूर्खता की परस्पर कानाफूसी करने लगे। उन्होंने कहा—देखो, यह अभी भी चोरी की आदत नहीं छोड़ रहा है, अन्यथा मुकुट में तृण शूक लगाने वाले ऐसे व्यक्ति का ऐसे सभा-मंडप में क्या काम ! निश्चित ही यह तृणघरों में चोरी करने गया है और वहां तिनके सिर पर लगे हैं। यह बात मूलदेव ने सुन ली। वह अत्यन्त रुष्ट होकर बोला—है कोई मेरी चिन्ता करनेवाला, जो इन सामन्तों को दण्डित करे। इतना कहते ही उसके पुण्य-प्रभाव से राज्य देवता से अधिष्ठित, चित्रगत प्रतिहार, जिनके हाथ में तीखी तलवारें थीं, प्रकट हुए और कुछेक सामन्तों के सिर काट डाले। शेष सामन्तों ने राजा के समक्ष आकर प्रणत होकर आज्ञानुसार चलने का वादा किया। (गा. १८६५, १८६६ टी.प.३२)

८८. संरक्षक अच्छा हो

एक वणिक् था। उसके घर में मृत्यु-दायक रोग का प्रसार हुआ। सारे सदस्य उसकी चपेट में आ गए। केवल एक लड़की बची। वह सेठ निर्धन था। वह अपनी पुत्री का विवाह करने में समर्थ नहीं था। वह यात्रा पर प्रस्थित हुआ। उसने सोचा, कन्या स्वभावतः अपना संरक्षण करने में समर्थ है। किंतु इतने बड़े घर में एकाकी कन्या को देखकर लोग इसके शील-आचरण पर अंगुली उठायेंगे। यह सोचकर वणिक् अपने मित्र वणिक् के यहां कन्या को छोड़कर देशान्तर चला गया। उस मित्र वणिक् के घर में भी 'मारि' का प्रकोप हुआ और उसका सारा कुटुम्ब मृत्यु का कवल बन गया। वह वणिक् भी मर गया। उसकी एक कन्या मात्र बची। वह उस वणिक् की पुत्री की सखी थी। वह स्वयं का तथा उस वणिक्-कन्या का संरक्षण करने में समर्थ थी। फिर भी वह अपनी विश्वस्तता के लिए सखी को लेकर राजा के पास गई, चरणों में प्रणाम कर बोली—देव ! आप अपनी कन्याओं की रक्षा, पालन-पोषण करते हैं। उसी प्रकार मेरी और मेरी सखी की भी आपको रक्षा करनी है। हम भी आपकी ही कन्याएं हैं। राजा ने संतुष्ट होकर कहा—ठीक है, ऐसा ही होगा। दोनों कन्याओं को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपने अंत:पुर में भेज दिया और अंत:पुर की संरक्षिका महत्तरिका को बुलाकर कहा—जैसे तुम मेरी कन्याओं की रक्षा करती हो उसी प्रकार इन दोनों कन्याओं की भी मृत्युपर्यन्त रक्षा करना। उस महत्तरिका ने विनयावनत होकर कहा—देव ! इनका अत्यधिक ध्यान रखूंगी। इतना कहकर वह दोनों कन्याओं को लेकर अंत:पुर में चली गई।

मूलवणिक् पुत्री ने महत्तरिका से कहा—जैसे तुम राजकन्याओं की रक्षा करती हो, वैसे ही मेरी भी रक्षा करना। जैसे मेरी रक्षा करो, वैसे ही मेरी सखी की भी रक्षा करना। महत्तरिका उनका उचित संरक्षण करने लगी। कुछ काल व्यतीत हुआ और वह संरक्षिका महत्तरिका कालगत हो गईं। उसकी मृत्यु के पश्चात् वे कन्याएं दु:शील हो गईं। उनको दु:शील देखकर श्रेष्ठीपुत्री ने राजा से कहा—आप अन्य महत्तरिका को नियुक्त करें। राजा ने दूसरी महत्तरिका की नियुक्ति कर दी। उसने कन्याओं को दु:शील देखकर उपालंभ दिया, उनकी भर्त्सना की।

कुछ समय पश्चात् वणिक् देशाटन कर लौट आया। उसने राजा के पास जाकर प्रार्थना की—देव ! मैं अपनी पुत्री को घर ले जाना चाहता हूं। वणिक् की प्रार्थना को स्वीकार कर राजा ने दोनों कन्याओं को ससम्मान घर भेज दिया और कुलीन घरों में उनका विवाह कर दिया। दहेज में विपुल सामग्री दी। (गा. १६०१-१६०८ टी. प. ३३,३४)

८६. चावल के पांच दाने

राजगृह नगर में धन नामक श्रेष्ठी रहता था। उसके चार पुत्रवधुएं थीं। एक दिन उसने सोचा, मेरी कौन-सी पुत्रवधू घर की वृद्धि करेगी। उसने उनकी परीक्षा करने अपने स्वजन वर्ग को निमंत्रित किया। भोज के अनन्तर सेठ ने चारों पुत्रवधू को बुला भेजा और प्रत्येक को पांच-पांच शालिकण देकर कहा, इनको सुरक्षित रखना। जब मैं मांगूं तब लौटा देना। पहली पुत्रवधू ने सोचा, इस बूढ़े सेठ को अपने स्वजन वर्ग के समक्ष हमें चावल के पांच-पांच दाने देते लज्जा नहीं आई। यह कुछ नहीं जानता। जब मांगेगा तब चावल के दूसरे पांच दाने ला दूंगी। यह सोचकर उसने पांचों शालिकण फेंक दिये। दूसरी पुत्रवधू ने उन्हें खा लिया। तीसरी ने उन शालिकणों को आभूषणों की पेटी में सुरक्षित रख दिया। चौथी ने अपने भाई के खेत में उन शालिकणों का वपन कराया और एक वर्ष में उनकी वृद्धि हो गई।

एक वर्ष बीता। सेठ ने पुनः स्वजनों को भोज के लिए निमंत्रित किया। भोजन कर चुकने पर पुत्रवधुओं को बुलाकर कहा—मेरे पांचों शालिकण मुझे वापस दो। पहली पुत्रवधू ने दूसरे स्थान से पांच शालिकण मंगाकर दे दिए। सेठ ने सबको सुनाते हुए कहा—ये वे ही शालिकण हैं या दूसरे ? उसने कहा—मैंने तो उन्हें उसी समय फेंक दिये थे। ये दूसरे हैं। दूसरी पुत्रवधू से पूछा। उसने कहा—मैंने उनको खा लिया था। तीसरी पुत्रवधू ने शालिकणों को समर्पित करते हुए कहा—यह वही शालिकण हैं। मैंने इन्हें आभूषण की पेटिका में सुरक्षित रख छोड़ा था। चौथी पुत्रवधू बोली—सेठ जी, आप शकटों को भेजें। मैं शालिकण मंगवा देती हूं। सेठ ने आश्चर्यचकित होकर इसका कारण पूछा। उसने सारा वृत्तान्त बता दिया। उनके दीर्घपरिमाण की बात कही। सेठ ने तब कहा—इस पुत्रवधू ने पांच शालिकणों का इतना विस्तार कर डाला। यह मेरे घर की मालकिन बनने योग्य है। तीसरी पुत्रवधू को भंडार का काम सौंपा। दूसरी पुत्रवधू जिसने चावल खा डाले थे, उसे रसोई घर का भार सौंपा और चौथी को घर की सफाई का भार दिया। (गा. १६१० टी.प. ३४, ३५)

६०. शक्तिशाली का परीक्षण

एक राजा था। उसके अनेक पुत्र थे। राजा ने सोचा, इनमें से जो शक्तिशाली होगा, उसको राज्य दूंगा। उसने कुमारों की परीक्षा प्रारंभ की। अपने कर्मकरों से कहा—एक स्थान पर दही से भरे घड़ों को रखो। उन्होंने घड़े रखकर राजा को निवेदन कर दिया। अमात्य को बुलाकर कहा— तुम दही के घड़ों के पास बैठ जाओ। फिर राजा ने कुमारों को बुलाकर कहा—जाओ, एक-एक दही से भरा घड़ा ले आओ। कुमार गए। इधर-उधर देखा। घड़ों को वहन कर ले जाने वाला कोई न दीखा, तब वे स्वयं एक-एक घड़ा उठाकर चले। एक कुमार घड़ों के पास गया। सभी ओर देखा, पर घड़ा उठाने वाला एक भी नजर नहीं आया, तब उसने अमात्य से कहा— दही के घड़े को उठाओ। अमात्य उठाना नहीं चाहता था।। कुमार ने म्यान से तलवार निकालते हुए कहा—यदि घड़े को उठाने की इच्छा नहीं है तो मैं अभी तुम्हारा सिरच्छेद कर देता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हूं। अमात्य डरा और दही का घड़ा उठाकर चला। कुमार उसको लेकर राजा के पास गया। राजा ने सोचा, यह कुमार शक्तिशाली है। उसका राज्याभिषेक कर दिया। (गा. १६६४ टी. प. ४६)

६१. पुत्र का राज्याभिषेक

एक राजा था। उसका नाम था दंडिक। उसका राज्य चला गया। तब वह अपने पुत्र के साथ एक अन्य राजा के आश्रय में रहने लगा। वह राजा उस पुत्र के प्रति अतीव आकृष्ट हो गया। उसने उसका राज्याभिषेक करना चाहा। क्या उसका पिता उसे अनुमति नहीं देगा ? अवश्य ही वह पिता अपने पुत्र के राजा बनने पर बहुत प्रसन्न होगा।

(गा. २०४६ टी.प.६०)

६२. प्रमाद से हानि

एक अजापालक था। वह अजाओं की रक्षा करता था। उसने वट्टग—गोली आदि खेलने के प्रमाद से सारी अजाओं का नाश कर डाला। उसे भान हुआ। वह दूसरी बार बोला—अब मैं ऐसा प्रमाद नहीं करूंगा। अब उसे यावज्जीवन वह कार्य नहीं मिल सकेगा।

एक अजारक्षक शूल,ज्वर आदि से ग्रस्त हो गया। अजाएं सारी नष्ट हो गईं। परंतु दुबारा उसे अजारक्षक का भार मिल सकता है। प्रमादी को नहीं। (गा. २३२३ टी. प. ६)

६३. वैद्य का प्रमाद

एक वैद्य था। वह राजा के यहां नियुक्त था। वह द्यूत और विषय-प्रमाद में अनुरक्त था। उसने वैद्य-विद्या का नाश कर डाला। जो वैद्यक शास्त्र तथा कोश आदि प्रच्छन्न थे, गुप्त रखे हुए थे, वे कीड़ों द्वारा काट डाले गए। एक बार राजा को वैद्य की आवश्यकता हुई। उसने वैद्य को बुलाया। वह क्रिया करने में समर्थ नहीं था। राजा ने पूछा—ऐसा क्यों ? उसने कहा—राजन् ! मेरे सारे वैद्यक शास्त्र चोरों ने चुरा लिये। मेरे पास 'पाडिपुच्छग' —सहायक भी नहीं है। इसलिए मेरे सारे वैद्यक ग्रन्थ नष्ट हो गए। मेरा ऐसा कोई प्रमाद नहीं है कि जिससे वैद्यक शास्त्रों का नाश हो। तब राजा ने राजपुरुषों को भेजा और कहा—यदि इसके शास्त्र नष्ट हो गए हों तो तुम शास्त्रकोश को देखो। वे गए, शास्त्रकोश को लाकर राजा को समर्पित कर दिया। राजा ने देखा कि उसमें सारी पुस्तकें कीड़ों द्वारा काटी हुई हैं। राजा ने तब जान लिया कि वैद्य के द्यूत आदि के प्रमाद से सारे वैद्यक ग्रन्थ नष्ट हुए हैं। राजा ने उसे निकाल दिया। वह वैद्य अन्यत्र गया और वैद्यक शास्त्रों का पुनः उज्जीवन कर राजा के समीप आया और पुनः नियुक्ति की याचना की। राजा ने मनाही कर दी।

(गा. २३२४ टी. प. ६)

६४. अभ्यास के बिना विद्या को जंग

एक योद्धा अपने गुरु के पास धनुर्वेद सीख रहा था। उसका अभ्यास इतना गहरा हो गया था कि लक्ष्य को देखे बिना ही शब्द के आधार पर उसको बाण से बींध डालता था। राजा ने उसे प्रचुर वेतन पर रख लिया। कालान्तर में वह विषय-प्रमाद में फंस गया। इससे उसकी धनुर्वेद विद्या और अभ्यास का अन्त आ गया, सभी नष्ट हो गए। युद्ध का प्रसंग उपस्थित हुआ। रण में वह योद्धा न कुछ बींध सका और न शत्रु सेना को पराजित कर सका। राजा ने पूछा—ऐसा क्यों हुआ ? उसने कहा—मेरा कोई प्रमाद नहीं है। तब राजा ने कहा—यदि प्रमाद न करने पर भी यह शब्दभेदी विद्या से चूक गया है तो इसके तरकश में तीरों को देखो कि वे सारे तीर मूलरूप में हैं अथवा जंग से नष्ट हो गए हैं ? यह भी देखो कि इसका धनुष्य टूटा हुआ है या अखंड है। राजपुरुषों ने देखा। उसके सारे तीर जंगयुक्त थे, धनुष्य भी टूट गया था। राजा ने जान लिया कि यह सारा प्रमाद के कारण हुआ है। उसकी वृत्ति का छेद कर डाला। वह अन्यत्र गया और पुनः धनुर्विद्या का अभ्यास कर लौटा। किंतु राजा ने उसे नियुक्ति नहीं दी। (गा. २३२५ टी.प. ७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९५. प्रमादी माली

एक बाड़ी थी, उसमें अनेक प्रकार के फलदायी वृक्ष और शाक-सब्जी आदि उगाई जाती थी। एक माली को वहां रखा। वह विषय प्रमाद और द्यूतप्रमाद में फंस गया। वह वृक्षों की सार-संभाल नहीं करता, न उन्हें पानी पिलाता। उस बाड़ी को लोगों ने तथा गाय आदि पशुओं ने नष्ट कर डाला। वह सूख गयी। उससे कोई फल-साग-सब्जी आदि प्राप्त नहीं होते। बाड़ी के स्वामी ने पूछा—बाड़ी का नाश कैसे हुआ ? उस माली ने कहा—मैं तो इसकी पूरी पालना करता था। मेरा कोई प्रमाद नहीं है। स्वामी ने गवेषणा की और यह ज्ञात किया कि बाड़ी भग्न हो गई है, गाय आदि पशुओं के कारण तथा पानी न सींचने के कारण सूख गई है। बाड़ी के स्वामी ने उस माली को नौकरी से हटा दिया। उसने हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि वह भविष्य में कभी प्रमाद नहीं करेगा। परंतु स्वामी ने उसे काम पर रखने से इनकार कर दिया।

(गा. २३२६ टी.प. ७)

९६. स्तूप के लिए विवाद

मथुरा नगरी में एक तपस्वी था। वह आतापना लेता था। उसकी इस कठोर चर्या को देखकर एक देवता उसका सम्मान करते हुए वन्दना कर बोला—भगवन् ! मुझे जो करना है उसके लिए आप आज्ञा दें। तपस्वी ने कहा—क्या मेरा कार्य असंयती से होगा ? यह सुनकर देवता के मन में तपस्वी के प्रति अप्रीति हो गई। फिर भी उसने कहा—मुझसे आपका कार्य सम्पन्न होगा। तब देवता ने एक सर्वरत्नमय स्तूप का निर्माण किया। वहां भगवे वस्त्रधारी भिक्षु आये और बोले—यह स्तूप हमारा है। इस स्तूप के कारण संघ का उनके साथ छह माह तक विवाद चला। संघ ने पूछा—इस संघर्ष के लिए कौन समर्थ है ? एक व्यक्ति बोला—अमुक तपस्वी इसके लिए समर्थ है। तब संघ ने तपस्वी को बुलाकर कहा— तपस्विन्! आप आराधना कर देवता का आह्वान करें। तपस्वी ने आराधना की। देवता उपस्थित होकर बोला—आदेश दें, मैं आपके लिए क्या करूं ? तपस्वी बोला—वैसा कार्य करो जिससे संघ की विजय हो। तब देवता ने क्षपक की भर्त्सना करते हुए कहा—'आज मेरे जैसे असंयती से कार्य कराने का प्रयोजन उपस्थित हो गया है। अब एक उपाय बताता हूँ। आप राजा के पास जाकर कहें—यदि यह स्तूप इन भिक्षुओं का है तो कल इस स्तूप पर लाल पताका फहराएगी और यदि यह स्तूप हमारा होगा तो सफेद पताका दिखेगी।' वे राजा के पास गए। सारी बात कही। राजा ने यह उक्ति स्वीकार कर ली। राजा ने दोनों पक्षों को बात बता दी और स्तूप की रक्षा के लिए अपने विश्वस्त व्यक्तियों को नियुक्त कर दिया। देवता ने रात ही रात स्तूप पर सफेद पताका फहरा दी। प्रभात में सभी ने स्तूप पर सफेद पताका लहराते देखी। संघ जीत गया।

(गा. २३३०, २३३१ टी. प. ८)

९७. कूप की पेयता, अपेयता

एक गांव की एक दिशा में मीठे पानी के अनेक कूप थे। उनमें से कई कूप आगंतुक दोषों तथा विस्वाद के कारण अपेय बन गए थे। कुछ कूप उस जमीन से उत्थित खार-लवण आदि विषम पानी के स्रोतों के कारण नष्ट हो गए। कुछ कुओं के पानी पीने से कोढ़ आदि रोग तथा शरीर में दोष उत्पन्न हो जाता था। कुछेक कुओं का पानी मृत्यु का कारण बनता था। कुछ कूपों का पानी स्नान और आचमन में काम आता था और कुछेक का नहीं। लोगों को इन कुओं के दोष ज्ञात थे, इसलिए पानी लाने वालों को पूछते—यह पानी कहां से लाए हो ? यदि निर्दोष होता तो वे लोग उसे पीने के काम में लेते और सदोष होता तो उसका वर्जन करते थे। यदि कोई व्यक्ति जानबूझकर सदोष पानी लाता तो वे उसकी भर्त्सना करते, उसे ताड़ना देते। यदि व्यक्ति अजान में लाता तो उसे सावधान करते हुए कहते—फिर कभी सदोष पानी मत लाना।

(गा. २३५७ टी.प. १३)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९८. पृच्छा का प्रवर्तन सकारण

भोजकुल के सेवक दो भाई थे। राजा ने उन्हें ससम्मान अपने यहां रख लिया। राजकुल में उनका सर्वत्र आना-जाना था। कहीं रोक-टोक नहीं थी। छोटे भाई ने अन्तःपुर में अनाचार का सेवन कर डाला। राजा ने उसका प्रवेश निषिद्ध कर दिया। अब बड़ा भाई भी राजा की आज्ञा के बिना प्रवेश नहीं कर पाता था। प्रतिहार के कहने पर राजा पूछता—आज कौन आया है छोटा भाई या बड़ा भाई ? प्रतिहार कहता—बड़ा भाई आया है, तब राजा उसके प्रवेश की आज्ञा देता। यह पूछताछ पहले नहीं होती थी, परंतु छोटे भाई के दुराचार के पश्चात् यह पृच्छा होने लगी। (गा. २३५८ टी.प. १४)

९९. पृच्छा क्यों ?

(क) एक नगर था। वहां सभी दुकानों पर अच्छे तिल और अच्छी किस्म के चावल मिलते थे। कालान्तर में एक वणिक् के मन में कपट उत्पन्न हुआ। उसने खराब तिल बेचने के लिए रखे। इसी प्रकार दूसरे वणिक् ने खराब किस्म के चावल दुकान पर बेचने हेतु रखे। अब लोग पूछने लगे— तुम्हारी दुकान पर तिल कैसे हैं ? चावल कैसे हैं ? पहले कभी ऐसी पूछताछ नहीं होती थी।

(ख) एक नगर की एक दिशा में अनेक मंदिर थे। वहां अनेक शैव भिक्षु रहते थे। वे सुशील थे। लोग उन सबकी पूजा करते थे। कालान्तर में कुछेक मंदिरों के भिक्षु दुःशील हो गए। अब निमंत्रण देने की वेला में लोग पूछने लगे, कौन कैसा है ? पहले यह पृच्छा नहीं थी।

(ग) एक गांव में गाएं बहुत थीं। एक बार वहां पशुओं की बीमारी फैली और वहां के पशु उसकी चपेट में आ गए। अब कोई व्यक्ति गाएं लाता तो लोग पूछते—ये गाएं किस गांव से लाए हो ? ये किस गोवर्ग की हैं ? पहले ऐसी पृच्छा नहीं होती थी। (गा. २३५८ टी. प. १४)

१००. कपटी उपासक

भिक्षुओं का एक उपासक विषमिश्रित भोजन भिक्षुओं को देता था। वह कभी-कभी मदकारक कोद्रव का भोजन भी दान में देता था। इस विषम भोजन के कारण समूचे भिक्षुगण में मारि का प्रकोप हुआ। इस कारण से सारा संघ छिन्न-भिन्न हो गया। लोगों ने विषयुक्त भोजन देने वाले भिक्षु उपासक को जान लिया। एक बार वह भिक्षु उपासक लोगों के बीच वाद में पराजित हो गया। वह कपटपूर्वक आचार्य के पास जाकर बोला—आप मुझे अर्हत् धर्म का उपदेश दें। आचार्य ने उपदेश दिया। वह कपटपूर्वक बोला—आज से मैंने आपके पास अर्हत् धर्म स्वीकार कर लिया है। मैंने भिक्षुओं के निमित्त एक बड़ा जीमनवार किया है। वहां बड़ी मात्रा में परमान्न पकाया गया है। उसको असंयत व्यक्ति न ले जाएं, न खाएं, इसलिए आप मुझ पर अनुग्रह कर मुनियों को गोचरी के लिए भेजें। साधुओं ने सोचा, यह सच कह रहा है। हमें वहां भिक्षा के लिए जाना चाहिए। उस कपट उपासक ने भोजन में विष मिला दिया और साधुओं को पर्याप्त भोजन दिया। उस भोजन से कुछेक साधु मर गए और कुछेक बेहोश हो गए। (गा. २३८२ टी.प. १८)

१०१. युद्ध और वैद्य

दो राजाओं में युद्ध छिड़ गया। एक राजा के पास कुछ वैद्य उपस्थित हुए और साथ में रहने की प्रार्थना की। राजा ने कहा—युद्ध के प्रसंग में वैद्यों का कोई काम नहीं है। तुम युद्ध विद्या में कुशल नहीं हो। तुम्हारा युद्ध-स्थल में क्या प्रयोजन है ? वे वैद्य बोले—राजन् ! यद्यपि हम युद्ध विद्या में निपुण नहीं हैं फिर भी युद्ध में घायल हुए सैनिकों के लिए हमारी वैद्यक्रिया अत्यन्त उपयोगी है। इसलिए हम साथ में जाना चाहते हैं। आप अनेक प्रकार की औषधियां, अनेक प्रकार के व्रणपट्ट तथा विविध तैल साथ में ले लें। यह कहने पर राजा ने कहा—आप अनागत अमंगल की भावना न करें। आप अपने घर चले जाएं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूसरे राजा के पास भी वैद्य गए। राजा ने उन्हें पूछा—संग्राम के लिए क्या-क्या उपयोगी द्रव्य आवश्यक होंगे ? यह पूछने पर वैद्यों ने कहा—'व्रणसंरोहण तैल, अत्यन्त पुराना घी तथा औषधियां मंगाएं। उनमें तैल और घी को पचाया जा सकेगा। व्रणसंरोहण चूर्ण तथा व्रणलेप वाली औषधियां साथ में लें।' राजा ने अपने सेवकों से सारी सामग्री एकत्रित करने के लिए कहा।

दोनों राजाओं में युद्ध छिड़ा। जिस राजा के साथ वैद्य थे। उन वैद्यों ने मुद्गर आदि से आहत भटों को औषधियों से स्वस्थ कर दिया तथा जो भट घायल हुए थे, उनके व्रणों को सीकर औषधियों का लेप कर दिया। इस प्रकार व्रणित और प्रहारित सभी योद्धा दूसरे दिन के युद्ध के लिए तैयार हो गए। वैद्यों ने दूसरे और तीसरे दिन भी उपचार किया। वह राजा वैद्यों के परामर्श से अपने भटों को स्वस्थ करता हुआ युद्ध जीत गया।

दूसरे राजा के योद्धा मारे गए और जो घायल और आहत हुए थे, वे भी युद्ध के लिए अयोग्य ही रहे। वह राजा पराजित हो गया। (गा. २४०३-२४०६ टी. प. २१, २२)

१०२. सूपकार और बकरी

राजा के सूपकार ने राजा के लिए मांस पकाने के लिए रखा। इतने में ही एक बिल्ली आई और मांस के खण्ड को उठाकर ले गई। सूपकार भयभीत हो गया। वह मांस की खोज करने लगा, इतने में ही अचानक एक बकरी वहां आ गई। उसके गले में एक पोटली बंधी हुई थी। उसमें भोजन के काम में आने वाले उपस्कार थे। सूपकार ने उस बकरी को मार डाला, यह सोचकर कि यह स्वतः आई हुई बकरी है। उसे मारने में कोई अपराध नहीं होगा। राजा का उपालंभ भी नहीं आएगा और मेरा भी काम बन जाएगा। (गा. २४५३, २४५४ टी प २)

१०३. अकाल में संज्ञाभूमि जाने से हानि

इन्द्रपुर नगर में इन्द्रदत्त राजा था। उसके पुत्र ने पुतली के अक्षिचन्द्रक का वेध कर यश प्राप्त किया। राजा की प्रसिद्धि हुई। ऐसे व्यक्तियों का आगमन आचार्यों के पास होता रहता है। यदि वे अकाल में संज्ञाभूमि में जाते हैं और उस समय यदि राजा आदि महान् व्यक्ति दर्शनार्थ आते हैं तो उन्हें दर्शन किए बिना ही लौटना पड़ता है। यदि अकाल में संज्ञाभूमि में न जाएं तो आने वाले विशिष्ट व्यक्ति धर्मकथा सुनकर, विरक्त हो सकते हैं, प्रव्रज्या ग्रहण कर सकते हैं। उनकी प्रव्रज्या से प्रवचन की प्रभावना होती है। कुछेक श्रावक भी बन सकते हैं, कुछ धर्मरुचि भी हो सकते हैं और इन सबसे संघस्थ साधुओं पर महान् उपकार होता है। अकाल में संज्ञाभूमि में जाने पर इन गुणों की हानि होती है। (गा. २५४६ टी.प. १६)

१०४. बलवान् कौन ? लोकोत्तर विनय या लौकिक विनय ?

एक राजा और दंडिक धर्म श्रवण के लिए आचार्य के पास गए। आचार्य ने प्रवचन प्रारंभ किया। प्रवचन के मध्य राजा अनेक बार मूत्र-विसर्जन के लिए उठा। आचार्य प्रच्छन्न रूप से मूत्र-विसर्जन करते और साधु उसे ले जाते। राजा के मन में प्रश्न हुआ—मैं प्रणीत आहार करता हूं, फिर भी मुझे मूत्र-विसर्जन के लिए बार-बार उठना पड़ता है और आचार्य रूखा आहार करते हैं फिर भी मूत्र-विसर्जन के लिए नहीं उठते। ऐसा प्रतीत होता है कि पास में जो मुनि बैठा है, वह वस्त्र में छिपाकर मात्रक आचार्य को देता है। आचार्य उसमें मूत्र-विसर्जित करते हैं। किंतु यह पूछना अविनय होता है, इसलिए उपाय से पूछना चाहिए। वह आचार्य के पास गया और बोला —भगवन् ! लौकिक विनय बलवान होता है या लोकोत्तर विनय ? आचार्य बोले—तुम इसकी परीक्षा करो। मैं मानता हूं कि लोकोत्तर विनय बलवान होता है।

राजा ने परीक्षा प्रारंभ की। आचार्य ने कहा—जिस शिष्य पर तुम्हारा विश्वास हो और आकृति से जिसे तुम मानते हो कि यह विनयभ्रंशी नहीं है, उसे तुम यह जानने के लिए भेजो कि गंगा किस ओर बहती है, इसकी जानकारी कर हमें बताओ। राजा ने विश्वस्त और आकृतिमान मुनि से कहा—जाओ, यह ज्ञात कर आओ कि गंगा किस ओर बहती है। वह गया नहीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वहीं बैठे-बैठे उसने राजा से कहा—गंगा पूर्व की ओर बहती है। यह तो दूसरे लोग भी जानते हैं।

तब आचाय ने राजा से कहा—मेरे शिष्यों में से जिसे तुम विषम चरित्रवाला मानते हो, विनयभ्रंशी मानते हो, उसे भेजो। राजा ने आचार्य के कथनानुसार अविनीत दीखने वाले श्रमण से कहा—जाओ, यह ज्ञात कर बताओ की गंगा किस दिशा में बहती है ? निर्देशानुसार वह श्रमण आचार्य की आज्ञा ले वहां गया और लौटकर आ गया। पहले उसने ईर्यापथिकी कायोत्सर्ग किया, गुरु के समक्ष आलोचना की। गुरु ने पूछा—अभी आलोचना कैसे ? वह बोला—भगवन्! आपकी आज्ञा से मैं गंगा तट पर गया और वहां सूर्य की ओर देखा, क्योंकि सूर्य के आधार पर दिशा का निर्धारण किया जाता है। मैंने देखा कि गंगा के प्रवाह में बहने वाले तृण आदि पूर्व दिशा की ओर बहे जा रहे हैं। इसमें कभी दिग्मोह भी हो सकता है। दिग्मोह न हो, इसलिए मैंने दो-चार व्यक्तियों को पूछा। उन्होंने भी वही उत्तर दिया कि गंगा पूर्वाभिमुख बह रही है। राजा ने अपने विश्वास के लिए प्रच्छन्न रूप से विश्वस्त व्यक्तियों को मुनि के पीछे भेजा था। उन्होंने भी वही कहा जो मुनि ने कहा था।

राजा ने आचार्य से कहा—भगवन् ! जो हमारी आज्ञा को भंग करता है, उसका हम निग्रह करते हैं। उसे मारते हैं, पीटते हैं, हाथ-पैर-कान आदि का छेदन करते हैं, मृत्युदंड देते हैं, सारा धन लूट लेते हैं, फिर भी कुछेक व्यक्ति आज्ञा का भंग कर देते हैं। लोकोत्तर क्षेत्र में आज्ञा भंग करने वालों को ऐसे दंड का भय नहीं रहता, फिर भी वे आज्ञा का पालन करते हैं, ऐसा क्यों ?

आचार्य बोले—लोकोत्तर क्षेत्र में भवदंड का भय रहता है। जो भगवान् की, गणधर आदि की आज्ञा का उल्लंघन करता है उसे जन्मान्तर में अनेक प्रकार के दंड भोगने पड़ते हैं। वह भय उन्हें आज्ञा-भंग से बचाता है। इस प्रकार लोकोत्तर विनय बलवान् होता है। (गा. २५५२-२५५७ टी. प. २०, २१)

१०५. दो प्रतिमाएं

एक रत्न वणिक् सामुद्रिक यात्रा पर जा रहा था। प्रवास के मध्य एक दिन उपद्रव उपस्थित हुआ। वणिक् भयभीत हो गया। उसने तब देवता की मनौती की कि यदि यह उपसर्ग शान्त हो जाएगा और मैं सकुशल पार पहुंच जाऊंगा तो एक रत्नमय और एक मणिमय—दो प्रतिमाएं कराऊंगा। मनौती से देवता प्रसन्न हुआ और उसके प्रभाव से उपसर्ग शान्त हो गया। वह निर्विघ्न रूप से समुद्र के पार पहुंच गया। पार पहुंचने के पश्चात् वणिक् का मन लोभ से भर गया और उसने केवल एक प्रतिमा बनवाई। तब देवता ने स्वयं दूसरी प्रतिमा बनवाई। फिर वणिक् दोनों प्रतिमाओं की भक्ति से पूजा करने लगा। उन दोनों प्रतिमाओं का यह प्रभाव था कि जब उनके पास दीपक रखा जाता, तब दीपक के कारण वे दृश्य होती थीं। जब दीपक नहीं होता तब प्रकाश में भी मणि और रत्न का प्रकाश ही दीख पाता था, प्रतिमाएं नहीं। प्रतिमाओं का यह चमत्कार सुनकर राजा तोसलिक ने उन दोनों को अपने श्रीगृहक भांडागार में रखवा दिया। तब मंगलबुद्धि से तथा परम भक्ति और यत्न से उनकी पूजा होने लगी। जिस दिन से राजा के भांडागार में वे प्रतिमाएं स्थापित की गईं, उसी दिन से राजा का कोष बढ़ता गया। (गा. २५६०-२५६४ टी. प. २१, २२)

१०६. सहयोग से लाभ

एक कौटुम्बिक था। वह किसानों को ब्याज पर अनाज देता था। उस ब्याज के द्वारा प्राप्त धान्य से कौटुम्बिक के सारे अन्न-भंडार भर गए। एक बार आग लगी और कौटुम्बिक के एक अन्न-भंडार का सारा धान जलकर राख हो गया। आग लगने की बात समूचे गांव में फैल गई। कुछेक किसान आग बुझाने के लिए आए और कुछेक किसानों ने सोचा—हम आग बुझाने क्यों जाएं ? यह कौटुम्बिक क्या हमें धान्य मुफ्त में देता है जो आज हम आग बुझाने जाएं ?

दूसरे कृषकों ने सोचा—इस कौटुम्बिक के प्रभाव से हम जी रहे हैं, यह सोचकर वे सब मिलजुल कर वहां आए और आग को बुझाने में सहयोग करने लगे। कौटुम्बिक उन सब पर प्रसन्न होकर अब उनको ऋण में धान्य बिना ब्याज के देने लगा। जिन्होंने आग बुझाने में मदद नहीं की, उनको कौटुम्बिक ने कहा— 'अब मेरे पास ऋण रूप देने के लिए धान्य नहीं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है। सब जलकर भस्म हो गया है।' उस दिन से वे कृषक दुःख से जीवन बिताने लगे। (गा. २६१०-२६१३ टी. प. ३०)

१०७. पशुसिंह : नरसिंह

भगवान् वर्द्धमान के जीव ने त्रिपृष्ठ वासुदेव के जन्म में एक सिंह का वध कर डाला। सिंह को अधृति हुई। उसने सोचा, यह मेरा पराभव है, क्योंकि मैं एक छोटे व्यक्ति से मारा गया हूं। गौतम का जीव त्रिपृष्ठ का सारथी था। उसने कहा—अधृति मत करो। तुम पशुसिंह हो। तुमको नरसिंह ने मारा है, फिर पराभव कैसे ? सिंह मर गया। वह संसार में नाना योनियों में परिभ्रमण करता हुआ चरम तीर्थंकर भगवान् महावीर के समय में राजगृह नगर के कपिल ब्राह्मण के घर में पुत्ररूप में उत्पन्न हुआ। एक बार भगवान् महावीर राजगृह नगर में समवसृत हुए। वह बटुक भी समवसरण में आया। भगवान् को देखकर वह 'धम-धम' करने लगा। तब भगवान् ने उसको उपशांत करने के लिए गौतम स्वामी को भेजा। गौतम स्वामी गए और उसको उपदेश देते हुए बोले—ये महान् आत्मा तीर्थंकर हैं। जो इनके प्रतिकूल होता है, वह दुर्गति में जाता है। यह सुनकर वह शांत हो गया। गौतम स्वामी ने कालान्तर में उसे प्रव्रजित किया। (गा. २६३८ टी. प. ३५)

१०८. राजाज्ञा का मूल्य कब ?

एक राजा था। तीन व्यक्तियों ने उसकी आराधना की। राजा ने संतुष्ट होकर अमुक नगर के आयुक्त को आदेश देते हुए लिखा—प्रत्येक को एक-एक सुंदर मकान और एक-एक लाख दीनार दे दें। राजा का यह संदेश सुनकर तीनों प्रसन्न हुए। एक व्यक्ति इस संदेश को एक पट्ट पर लिखाकर ले गया। दूसरा केवल मुद्रांकित पट्ट लेकर गया। तीसरे ने पट्ट पर आज्ञा लिखाई और उस पर राजमुद्रा का अंकन कराया। पहला व्यक्ति जो केवल पट्ट पर आज्ञा लिखाकर ले गया था तथा दूसरा व्यक्ति जो केवल राजमुद्रांकित पट्ट ले गया था, दोनों आयुक्त के पास गए। एक ने आज्ञा लिखे पट्ट और दूसरे ने राज-मुद्रांकित पट्ट दिखाया। आयुक्त ने पहले व्यक्ति से कहा—आज्ञा लिखित है, पर राजमुद्रा नहीं है तो फिर मैं तुम्हें कैसे दूं ? दूसरे से कहा—राजमुद्रांकित पट्ट तो है पर मैं नहीं जानता कि राजा की आज्ञा क्या है ? दोनों निष्फल हुए। तीसरे का पट्ट आज्ञांकित और मुद्रांकित भी था। वह सफल हुआ। उसे सुन्दर घर और एक लाख दीनार मिल गए।

(गा. २६४१, २६४२ टी. प. ३६)

१०९. पट्टरानी पृथिवी की उक्ति

महाराजा शातवाहन की अग्रमहिषी का नाम था—पृथिवी। एक बार राजा को कार्यवश अन्यत्र जाना पड़ा। पट्टरानी पृथिवी तब अन्तःपुर की अन्य रानियों से परिवृत होकर, महाराजा शातवाहन का वेश पहनकर आस्थानिका मंडप में जा बैठी। वह महाराज की तरह प्रवृत्ति करने लगी। राजा अचानक उसी स्थान पर आ गया। महारानी ने राजा को आते हुए देख लिया, परंतु वह अपने आसन से नहीं उठी। उसके बैठे रहने पर अन्यान्य रानियां भी बैठी ही रहीं, उठीं नहीं। राजा रुष्ट होकर बोला—पृथिवी ! तुम महारानी हो, इसलिए नहीं उठी परन्तु तुमने दूसरी रानियों को भी बैठे रहने के लिए कहा, यह उचित नहीं है। राजा के इस प्रकार कहने पर पृथिवी महारानी बोली—'महाराज! आपकी आस्थानिका में बैठे हुए दास-दासी भी नाथ होते हैं। वे स्वामी को देखकर भी नहीं उठते। यह आपके आस्थानिका का ही प्रभाव है। आप भी जब यहां बैठते हैं तब गुरु को छोड़कर किसी व्यक्ति के आने पर नहीं उठते। मैं भी इस समय आपकी आस्थानिका में राजा बनकर बैठी थी। इसलिए सपरिवार नहीं उठी। यदि मैं राजा नहीं बनती तो अवश्य उठती।' पटरानी की बात सुनकर राजा संतुष्ट हो गया।

(गा. २६४५-२६५७ टी. प. ३६, ३७)

११०. दृष्टि-विक्षेप से हानि

(क) एक किसान था। उसने शालि के दो खेत काटने के लिए दैनिक वेतन पर कर्मकरों को रखा। वे सब खेत में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शालि काटने लगे। इतने में ही एक सुन्दर सफेद हाथी उधर दृष्टिगत हुआ। किसान ने सभी कर्मकरों को हाथी दिखाया। वे सभी शालि काटना छोड़कर हाथी के आगे-पीछे भागे। खेत तक उसके साथ आए और बहुत समय तक देखते रहे। फिर हाथी का वर्णन करने लगे। धान काटना बन्द हो गया। समय व्यतीत हो गया। किसान को हानि उठानी पड़ी।

१११. (ख) एक दूसरा किसान था। उसकी दासी शालि काटने खेत में गई। दासी ने सुन्दर सफेद हाथी देखा। उसने सोचा यदि मैं कर्मकरों को हाथी की बात कहूंगी तो वे सब कटाई छोड़कर बातों में लग जायेंगे। किसान को हानि होगी। लोग इसके वर्णन में लग जायेंगे। जब पूरे खेत की कटाई हो गई, तब दासी ने अपने स्वामी किसान तथा कर्मकरों से हाथी की बात कही। उन्होंने कहा— पहले क्यों नहीं बताया ? दासी बोली—कटाई में बाधा उपस्थित होती, इसलिए नहीं बताया। इस बात पर किसान प्रसन्न हुआ और दासी को दासत्व से मुक्त कर दिया। (गा. २६५३, २६५४ टी. प. ३८)

११२. प्रमाद का फल

एक गांव था। गांववासियों ने राजकुल के लिए एक शकट बनवाया। जब कभी राजा की ओर से आदेश आता कि घृत-घट आदि लाने हैं अथवा अन्यत्र ले जाने हैं, तो वे ग्रामीण लोग उसी शकट में लाते-ले जाते थे। इस शकट का कोई स्वामी नहीं है, यह सोचकर वे उसी शकट से अपना प्रयोजन भी सिद्ध कर लेते थे। अस्वामित्व की बुद्धि से वे शकट का संरक्षण नहीं करते थे। कालान्तर में वह शकट टूट गया। अस्त-व्यस्त हो गया। कुछ दिनों बाद राजा ने ग्रामीणों को आज्ञापित किया कि इतना धान्य शकट से राजभवन में पहुंचा दो। ग्रामीणों ने आज्ञा सुनी, परंतु शकट के अभाव में वे धान्य नहीं पहुंचा सके। राजा ने उसे अपनी आज्ञा का भंग जानकर उन ग्रामीणों को दंडित किया। अब अपने प्रयोजन के लिए भी वे शकट का उपयोग नहीं कर पा रहे थे। वे दुःखी हो गए। (गा. २६६६, २६६७ टी. प. ४०)

११३. आचार्य द्वय : आर्यसमुद्र और मंगु

जैन परंपरा में आर्यसमुद्र तथा आचार्य मंगु प्रभावक आचार्य हुए हैं। आर्यसमुद्र दुर्बल थे। उन्होंने अतिरिक्तता का उपभोग नहीं किया। वे योगसंधान करने के लिए भी अशक्त हो गए। उनके शिष्य उनके लिए प्रतिदिन विश्रामणारूप तीन कृतिकर्म करते थे। दो सूत्रार्थपौरुषी के समय और तीसरा चरम पौरुषी के समय। आर्यसमुद्र के लिए श्रावक उनके योग्य आहार आदि देते थे। शिष्य उस आचार्य प्रायोग्य आहार को अलग पात्र में लाते थे।

आचार्य मंगु के लिए न कृतिकर्म होता था और न उनके प्रायोग्य आहार अलग पात्र में लाया जाता था। यद्यपि श्रद्धालुओं से उत्कृष्ट भक्तपान प्राप्त होता था, फिर भी शिष्य उसे एक ही पात्र में ले लेते थे। आचार्य मंगु अलग पात्र में लाया हुआ आहार ग्रहण नहीं करते थे।

वे दोनों आचार्य एकदा साथ-साथ विहार करते हुए सोपारक नगर में आए। वहां दो श्रावक थे। एक शाकटिक और दूसरा वैकटिक—सुरा संधानकारी। उन दोनों ने देखा कि आचार्य आर्यसमुद्र के लिए प्रणीत भोजन भिन्न पात्र में लाया जा रहा है और आचार्य मंगु के लिए सामान्य पात्र में लाया जा रहा है। यह देखकर उन्हें विस्मय हुआ। वे आचार्य मंगु के पास आए और बोले—भंते ! आर्यसमुद्र की भांति आपके लिए विशिष्ट आहार अलग पात्र में क्यों नहीं आता ? आचार्य बोले —अहो शाकटिक ! देखो, जब तुम्हारा शकट दुर्बल हो जाता है तब तुम उसे रस्सी आदि से बांधकर ठीक कर देते हो। तब उस शकट में तुम माल आदि ले जा सकते हो। यदि तुम शकट का उचितरूप में परिकर्म नहीं करते हो तो वह शकट टूट जाता है, नष्ट हो जाता है। और जो शकट वहन करने के लिए योग्य है, उसका तुम परिकर्म नहीं करते।

फिर वैकटिक से कहा—वैकटिक ! सुरा रखने की तुम्हारी कुंडिका यदि दुर्बल है, क्षीण हो गई है तो तुम उसे बांस की खपचियों से बांधकर उसमें सुरा रखते हो। जो कुंडी यथावत् है उसके लिए कुछ भी बंधन नहीं देते। वह तुम्हारी काम की होती है।

आर्यसमुद्र वृद्ध हैं, दुर्बल हैं, इसलिए उनके शरीर-धारण के लिए योग्य आहार अत्यंत अपेक्षित है। इसलिए वैसा आहार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पृथक् लाया जाता है। मैं दृढ़ शकट या कुंडी के समान हूं। शरीर का अप्रतिकर्म करता हुआ भी मैं योगसंधान करने में समर्थ हूं। इसलिए मुझे विशेष आहार की आवश्यकता नहीं होती। (गा. २६८५-२६६२ टी. प. ४३, ४४)

११४. उस समय की परिव्राजिकाएं

एक गांव में पति-पत्नी आराम से रह रहे थे। एक बार पत्नी के मन में यह संदेह हुआ कि मैं अपने पति के लिए अप्रीतिकर हो गई हूं। पति मुझे नहीं चाहता। यह सोचकर वह आर्यिका के पास प्रव्रजित हो गई । उसके शरीर का लावण्य अद्भुत था। वह भिक्षा के लिए घूमती। एक बार पूर्व पति ने उसे देख लिया। वह उसमें लुब्ध हो गया। वह साध्वी अकेली नहीं थी। उसके साथ अन्य साध्वियां भी रहती थीं, इसलिए पति को एकान्त में अपनी पत्नी-साध्वी से बातचीत करने का अवसर नहीं मिलता था। तब उसने एक परिव्राजिका से परिचय किया। उसकी दान, सन्मान आदि से आराधना की। परिव्राजिका ने पूछा—बताओ, मैं तुम्हारा कौन-सा काम कर सकती हूं ? उसने कहा—अमुक साध्वी को तुम इस प्रकार प्रभावित करो कि वह पुनः गृहस्थी में आ जाए।

एक दिन वह परिव्राजिका उस साध्वी के पास आकर बोली—मैं भी दीक्षित होना चाहती हूँ। आप मुझे प्रव्रजित करें। वह प्रव्रजित हो गई। एक दिन पाक्षिक के उपलक्ष में सभी आर्यिकाएं चैत्यवंदन के लिए गईं। उस शैक्ष साध्वी ने कहा—आर्य! मैंने स्वजनों से गुप्त रूप से दीक्षा ली है। वे यदि मुझे देखेंगे तो मुझे घर ले जाएंगे। इसलिए आप सब जाएं। मैं उपाश्रय की रक्षा में यहीं रहूंगी। तब एक साध्वी को वहीं छोड़कर सभी आर्यिकाएं चैत्यवंदन के लिए चली गईं। सबके जाने के पश्चात् उस परिव्राजिका साध्वी ने उस तरुण साध्वी से कहा—पहले तुम्हारा पति तुमसे वितृष्ण हो गया था। अब उसके मन में तुम्हारे प्रति अत्यधिक स्नेह उभरा है और वह तुम्हें पाने के लिए उत्कंठित है। ऐसा कहकर वह उसे प्रव्रज्या से च्युत कर देती है। (गा. २८४८, २८६२, २८६३ टी. प. ३,५,६)

११५. जम्बूवृक्षवासी और वटवृक्षवासी

एक नगर में दो गृहस्थों के घर दो भिन्न-भिन्न वृक्ष थे। एक के घर में वटवृक्ष और दूसके के घर में जम्बूवृक्ष था। एकदा एक आचार्य अपने शिष्य परिवार के साथ वहां आए और वटवृक्षवासी गृहस्थ को शय्यातर का लाभ दिया। दोनों गृहस्थों ने अपना-अपना दूसरा मकान बनाया। उन दोनों मकानों में कापोत रहने लगे। दोनों ने उसे अमंगल माना। उन्होंने नैमित्तिक से पूछा कि इस अमंगल का निवारण कैसे हो सकता है ? नैमित्तिक ने कहा—वटवृक्षवासी जम्बूवृक्षवासी के घर में रहने लग जाए और जम्बूवृक्षवासी वटवृक्षबासी के घर में रहने लग जाए तो दोनों के अमंगल का निवारण हो जाएगा। फिर कुछ दिन वहां रहकर अपने-अपने मूल घर में चले जाएं। उन दोनों ने वैसे ही किया। अब वे सुखपूर्वक रहने लगे।
(गा. २८८०, २८८१ टी. प. ६)

११६. कोशलदेश के आचार्य

कोशलदेश के एक आचार्य अपने सद् अनुष्ठान से एक श्राविका को उपशांत कर अपने देश लौट गये। श्राविका एक अन्य गच्छ के आचार्य के पास निष्क्रमण करने के लिए उपस्थित हुई और बोली—आप मुझे प्रव्रजित करें, किन्तु मेरे तो वे ही कोशलदेशवासी आचार्य होंगे। आचार्य ने उसे दीक्षित कर दिया। वह कोशलदेश के आचार्य के पास जाना चाहती थी। आचार्य ने उसका निषेध किया। वह आज्ञा का उल्लंघन कर कोशलदेशवासी आचार्य के पास चली गई। उस कोशलक ने उसे स्वीकार कर लिया। वह नष्ट हो गई। (गा. २६५६, २६५७ टी. प. २४)

११७. राजाज्ञा की अवमानना

एक राजा था। उस राज्य में म्लेच्छ सैनिकों का भय था। वे राज्य को नष्ट-भ्रष्ट कर देंगे, इस भय से राजा ने अपने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जनपद में यह घोषणा कराई कि म्लेच्छ सैनिक आकर जनपद को लूटना चाहते हैं इसलिए जनता सारी दुर्ग में आ जाए। जिन लोगों ने राजाज्ञा का पालन किया, वे म्लेच्छों के भय से मुक्त हो गए। जिन्होंने राजाज्ञा को नहीं माना, जनपद में ही रहे, म्लेच्छों ने उन्हें लूटा, मारा और जो बच गए थे उनको राजा ने राजाज्ञा न मानने के अपराध में दंडित किया।

(गा. ३१०३ टी. प. ४६)

११८. राजा का पारितोषिक

एक राजा था। उसके पांच मुख्य सेवक थे। एक बार उन पांचों ने राजा को दुर्ग से बचाया था। पांचों में से एक ने परम साहस का परिचय देकर राजा को संतुष्ट किया था। राजा पांचों के साहस से प्रसन्न होकर इस एक सेवक के अतिरिक्त चारों सेवकों से कहा—मैं तुम पर प्रसन्न हूं। इस नगर की गलियों में, दुकानों में तथा अन्यान्य मार्गों में जहां कहीं से भी तुमको जो आहार, वस्त्र आदि लेने हों, वे लो, उनका मूल्य राज्य से चुकाया जाएगा। वे चारों सेवक बहुत प्रसन्न हुए। और अब अपनी आवश्यकतानुसार वस्त्र, भोजन, सामग्री आदि प्राप्त करने लगे। राजा उन-उन व्यापारियों की वस्तुओं का मूल्य चुका देता। एक अति साहसी सेवक पर परम प्रसन्न होकर राजा ने कहा—तुम कहीं से भी आहार-वस्त्र आदि ले सकते हो। केवल वीथि या दुकानों से ही नहीं, घरों से भी वस्तुएं ले सकते हो। मूल्य राजकोष से चुका दिया जाएगा। वह सेवक अतिरिक्त पारितोषिक पा प्रसन्न हुआ।

(गा. ३१०६-३१०८ पत्र ४७)

११६. राजा का विवेक

एक वणिक् था। उसकी पत्नी गर्भवती थी। वह वणिक् अचानक मर गया। किसी ने जाकर राजा से कहा—देव ! पतिविहीन उस गर्भवती स्त्री के पास धन है। राजा ने कहा—उसका धन उसी के पास रहने दो। यदि उसके लड़का होगा तो वह धन उसका हो जाएगा और यदि कन्या होगी तो उसके भरण-पोषण योग्य तथा विवाह योग्य धन उसके काम आ जाएगा।

(गा. ३२५१ टी. प. ७१)

१२०. क्षुल्लक की युक्ति और साहस

एक गांव था। वहां मालव देश के शबरजातीय सैनिकों ने पड़ाव डाला। वहां मनुष्यों का अपहरण करने वाले कुछ चोरों ने एक आर्यिका का और एक क्षुल्लक मुनि का अपहरण कर लिया। वे दूसरे चोर को उन्हें सौंप, स्वयं अन्य के अपहरण के लिए निकल पड़े। वह चोर प्यास से आकुल-व्याकुल हो गया। वह पानी की खोज करने निकला। एक कुएं में पानी निकालने उतरा। क्षुल्लक ने सोचा—हम इतने सारे मुनि हैं और यह चोर अकेला है। क्या हम इसको नहीं जीत सकते ? यह सोचकर उसने आर्यिकाओं से कहा कि हम इस चोर पर पाषाण बरसाएं और उसे पत्थरों से ढक दें। आर्यिकाओं ने क्षुल्लक का समर्थन नहीं किया। तब क्षुल्लक ने सोचा, चोर हम सबको मार न डाले इसलिए उसने एक बड़ा पत्थर चोर पर लुढ़काया। यह देखकर सभी आर्यिकाओं ने एक साथ पाषाण लुढ़काए। पाषाणों से आक्रान्त होकर वह चोर मरण को प्राप्त हो गया। क्षुल्लक ने सभी आर्यिकाओं को सुरक्षित कर डाला।

(गा. ३२५२ टी. प. ७२)

१२१. लोभी अमात्य

एक राजा ने अमात्य को आज्ञा दी कि वह एक प्रासाद का शीघ्र ही निर्माण कराए। उसने प्रासाद बनाने के लिए कर्मकरों को नियुक्त किया। वह अमात्य अत्यंत लोभी था। वह कर्मकरों को द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव से संक्लेश देता था। द्रव्य से—वह उन्हें असंस्कारित और लवणरहित सूखे चनों का थोड़ा-सा भोजन देता था। क्षेत्र से—वह उनसे अग्नि से संबंधित कार्य करवाता, पर अनुचित भक्त-पान देता था। काल से—भोजन भी वह सायंकाल देता। भाव से—उन कर्मकरों को विश्राम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करने नहीं देता। उन्हें कठोर वचनों से ताड़ना देता और कर्मकरों को पूरा वेतन भी नहीं देता था। इन सब दुःखों से पीड़ित होकर सभी कर्मकर काम छोड़कर भाग गए। प्रासाद अर्धनिर्मित ही रह गया। राजा ने सारा वृत्तान्त जाना और अमात्य को दंडित किया। उसे अमात्यपद से हटाकर उसका सर्वस्व अपहृत कर लिया। (गा. ३६६२-६४ टी. प. ५६)

१२२. अट्टण मल्ल

उज्जयिनी नगरी में अट्टण नामक मल्ल रहता था। वह मल्ल विद्या में अत्यंत निपुण था। वह सदा विजयी होता था। समय बीता। वह वृद्ध हो गया। एक बार वह सोपारक नगर में मल्ल युद्ध करने गया और वहां पराजित हो गया। उसने प्रतिशोध की भावना से फलही नामक व्यक्ति को मल्लविद्या में निपुण किया। वह सोपारक नगरी में गया और मात्सिक मल्ल के साथ मल्लयुद्ध लड़ा। उस दिन जय-पराजय का निर्णय नहीं हो सका। दोनों मल्ल अपने-अपने स्थान पर गए। फलही मल्ल के परिचारकों ने पूछा —कहां-कहां चोट आई है। हम परिकर्म कर उसे ठीक कर देंगे। फलही मल्ल ने सब कुछ बता दिया। परिचारकों ने उचित विधि से शरीर का परिकर्म कर उसे स्वस्थ कर दिया। मात्सिक मल्ल गर्व से उन्मत्त हो उठा। परिचारकों के पूछने पर भी उसने कुछ नहीं बताया। उसने शरीर की पीड़ा को छुपा लिया। शरीर का परिकर्म नहीं हुआ। तीसरे दिन मल्लयुद्ध में वह पराजित हो गया। (गा. ३८४० टी. प. ३)

१२३. संस्कारदात्री मां ही है

एक बालक अधूरा नहाकर बाहर खेलने चला गया। वह खेलते-खेलते एक तिलों के ढेर पर पहुंचा और उस ढेर में घुस गया। लोगों ने उसे बालक समझ कर नहीं रोका। शरीर गीला था, इसलिए उस पर तिल लग गए। वह तिलों सहित घर आया। मां ने तिल देखे। उसके शरीर से सारे तिल झाड़ दिए और उन्हें एक पात्र में संगृहीत कर लिया। मां के मन में तिलों का लोभ जागा और उसने पुनः बालक को अधूरा स्नान करा कर भेजा। वह पुनः तिलों के ढेर पर गया और गीले शरीर से उस ढेर में प्रवेश कर तिलों सहित घर आ गया। मां ने उसे नहीं डांटा, न मनाही की। वह धीरे-धीरे तिल चुराने वाला बड़ा चोर बन गया। एक बार चोरी करते हुए उसे राजपुरुषों ने पकड़ लिया। राजा ने उसके वध की आज्ञा दे दी। वह मारा गया। राजा ने सोचा, यह बालक मां के दोष से चोर हुआ है। राजपुरुषों ने माता को दंडित करने के लिए उसके स्तन काट डाले। मां को दंड मिल गया। एक बार एक दूसरा बालक भी अपूर्ण स्नान कर तिलों के ढेर में जा छिपा। उसके गीले शरीर पर तिल चिपक गए। वह घर गया। मां ने उसे डांटते हुए कहा, पुनः ऐसा मत करना। उसने तिल शरीर से झाड़ कर मूल स्वामी को दे दिए। उस बालक में चोरी की आदत नहीं पड़ी। वह सुखपूर्वक अपना जीवन व्यतीत करने लगा। मां को भी स्तनछेद जैसी पीड़ा सहन नहीं करनी पड़ी। (गा. ४२०८ टी. प. ५२)

१२४. दूध रक्त बन गया

कलिंग जनपद में कांचनपुर नाम का नगर था। वहां अनेक बहुश्रुत आचार्य रहते थे। उनका शिष्य परिवार बृहद् था। एक बार वे अपने शिष्यों को सूत्र और अर्थ की वाचना देकर संज्ञाभूमि में गए। अन्तराल में उन्होंने एक विशाल वृक्ष के नीचे एक स्त्री को रोते हुए देखा। दूसरे, तीसरे दिन भी यही देखा। आचार्य को आशंका हुई। उन्होंने उस स्त्री से पूछा—तुम क्यों रो रही हो ? उसने कहा— मैं इस नगर की अधिष्ठात्री देवी हूं। यह नगर शीघ्र ही जल-प्रवाह से आप्लावित होकर नष्ट हो जाएगा। यहां अनेक मुनि स्वाध्यायशील हैं। उनके विनाश को सोचकर मैं रो रही हूं। आचार्य ने पूछा —इस बात का प्रमाण क्या है ? उसने कहा—अमुक तपस्वी मुनि के पारणक में लाया हुआ दूध रक्त बन जाएगा। जहां जाने से वह पुनः स्वाभाविक रूप में आएगा वहां सुभिक्ष होगा और वहां सुखपूर्वक रहा जा सकेगा।

दूसरे दिन तपस्वी मुनि के पारणक में लाया हुआ दूध रक्त में बदल गया। तब संघ के प्रमुख व्यक्ति एकत्रित हुए, पर्यालोचन किया और समूचे संघ के साधुओं ने अनशन कर डाला। (गा. ४२७८ टी. प. ६१)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२५. संलेखना की या नहीं ?

एक बार एक शिष्य आचार्य के पास भक्त प्रत्याख्यान अनशन की आज्ञा लेने उपस्थित हुआ। आचार्य ने पूछा—अनशन से पूर्व तुमने संलेखना की या नहीं ? शिष्य ने सोचा—आचार्य मेरे शरीर को देख रहे हैं जो केवल हड्डियों का ढांचा मात्र रह गया है फिर भी ये मुझे संलेखना की बात पूछ रहे हैं। यह सोचकर क्रोध के आवेश में उसने अपनी अंगुली तोड़कर दिखाते हुए कहा—क्या तुम्हें कहीं रक्त और मांस दिखता है ? सोचो, मैंने संलेखना की है या नहीं ? शिष्य को सुनकर आचार्य बोले—मैंने द्रव्य संलेखना के विषय में नहीं पूछा था। यह तो तुम्हारे शरीर को देखकर प्रत्यक्षतः जान लिया है। मैंने भाव-संलेखना के विषय में जानना चाहा था और यह स्पष्ट दीखता है कि तुमने भाव-संलेखना—कषायों का उपशमन नहीं किया है। जाओ, भाव संलेखना का अभ्यास करो और फिर अनशन की बात सोचना। (गा. ४२६०, ४२६१ टी. प. ६३)

१२६. आज्ञाभंग : मृत्यु का वरण

एक राजा ने अमात्य और कोंकण देशवासी नागरिक इन दोनों को अपराधी मानकर यह आज्ञा दी कि यदि दोनों पांच दिन के भीतर देश को छोड़कर नहीं जाएंगे तो उनका वध कर दिया जाएगा। दोनों ने आदेश सुना। कोंकण देशवासी नागरिक के पास तुम्बे और कांजी के पानी से भरे बर्तन थे। वह तत्काल तुम्बे और कांजी जल को छोड़कर उस देश से निकल गया। मंत्री घर पर आया। गाड़ी, बैल आदि की व्यवस्था कर घर को समेटने लगा। उस व्यवस्था में उसके पांच दिन निकल गए। छठे दिन राजा ने उसे शूली पर चढ़ा दिया। अमात्य मृत्यु को प्राप्त हो गया। (गा. ४२६२, ४२६३ टी. प. ६३)

१२७. आचार्य स्कंदक का प्रतिशोध

कुम्भकार नगर में दंडकी नाम का राजा राज्य करता था। उसकी पटरानी का नाम था पुरंदरयशा। पुरोहित का नाम था पालक। एक बार मुनि सुव्रत स्वामी के अंतेवासी शिष्य मुनि स्कंदक ग्रामानुग्राम विहार करते हुए वहां आए। राजा ने द्वेषवश उनके पांच सौ शिष्यों को कोल्हू में पील कर मार डाला। जब अंत में छोटे मुनि को पीलने लगे, तब आचार्य स्कंदक अत्यंत कुपित हो गए। उन्हें भी कोल्हू में पील डाला। वे मरकर अग्निकुमार देव के रूप में उत्पन्न हुए और अपने पूर्वभव का स्मरण कर दंडकी राजा के समस्त देश को भस्म कर डाला। आचार्य को छोड़ शेष सारे शिष्य समाधि-मरण से मरकर उच्च गति में गए। (गा ४४१७ टी. प. ७६)

१२८. राजसेवा का अवसर किसको ?

आचार्य कालक शकों को यहां लाए, उज्ञयिनी नगरी में शक राजा हो गया। शकों ने सोचा, राजा हमारी जाति का ही है। यह सोचकर वे गर्व से उन्मत्त हो राजा की उचित सेवा नहीं करते। तब राजा ने उन्हें अपने पास से हटा दिया। अब वे शक चोरी करने लगे, नगरवासियों ने राजा से शिकायत की। राजा ने उन सबको देश-निष्कासन का दंड दिया। वे उस देश से निकल गए। देशान्तर में जाकर वे एक राजा की उपासना करने लगे।

उनमें से एक व्यक्ति राजा के गमन-आगमन पर स्वयं आगे चलता, पार्श्ववर्ती होकर कभी दौड़ता। जब राजा खड़ा होता या बैठता तब वह भी सामने खड़ा रहता। राजा बैठने के लिए कहता तो वह नीचे भूमि पर बैठ जाता। कभी राजा के सामने भूमि पर बैठ जाता। राजा के इंगित को जानकर राजा की आज्ञा के बिना भी वह राजा के प्रयोजन को साध लेता। एक बार राजा पानी और कीचड़ के मध्य से गया। शेष सारे लोग सूखे तथा बिना कीचड़ वाले रास्ते से चले, किंतु वह सेवक घोड़े के आगे पानी और कर्दम के बीच ही चला। राजा उस पर तुष्ट हुआ और उसे बहुत धन देकर संतुष्ट किया।

दूसरे व्यक्ति के मन में यह गर्व था कि वह भी शक है, राजवंशीय है। इस गर्व से उन्मत्त होकर वह राजा का कार्य नहीं करता। जाति और कुल के अभिमान से वह स्वयं का बहुत सम्मान करता, भूमि पर नीचे नहीं बैठता था और न राजा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के आगे-आगे चलता था।

तीसरा व्यक्ति पहले व्यक्ति की भांति राजा की उपासना करता, पर वह राजा के अश्व के आगे नहीं चलता, किंतु उसके पीछे-पीछे चलता था। जब घोड़ा खड़ा रह जाता तब वह राजा की सेवा करता। वह सदा आसन पर ही बैठता, भूमि पर नहीं। राजा के भेजने पर वह प्रयोजन सिद्ध करता, न भेजने पर वह ऐसे ही बैठे रहता। रण में राजपुत्र की हैसियत से युद्ध करता।

चौथे व्यक्ति में न अर्थ का आकर्षण था और न मान-सम्मान था। इन चार में से दूसरे और चौथे व्यक्ति को राज-सेवा का अवसर नहीं दिया गया। (गा. ४५५७-५६ टी. प. ६४, ६५)

१२६. यथाकृत भोजन

एक गांव में अनेक साधुओं का आगमन हुआ। एक मुनि एक घर से रोटियां लाया। दूसरे मुनि ने भी वहीं से रोटी ग्रहण की। इसी प्रकार तीसरे, चौथे और पांचवें मुनि ने भी वहीं से आहार लिया। सभी आचार्य के पास आए। गोचरी दिखाई। गुरु ने देखा सभी के पात्रों में समान रोटियां हैं। उन्होंने सोचा, यह भिक्षा उद्गम आदि दोषों से युक्त तो नहीं है ? एक मुनि को उस घर में निरीक्षण करने भेजा। वह मुनि वहां गया और गृहस्वामी से पूछा—क्या आज आपके घर में कोई उत्सव विशेष है या कोई मेहमान आए हैं जो आपने इतना आरंभ-समारंभ किया है ? आपने मुनियों के लिए यह भोजन सामग्री बनाई है अथवा क्रीत की है ? मैं इस भिक्षा-वेला में किसी अतिथि को नहीं देख रहा हूं। मुनि ओजस्वी था। गृहस्वामी उससे प्रभावित हुआ और उसने कहा—यह भोजन यथाकृत है, औद्देशिक नहीं। मुनि को विश्वास हो गया। आचार्य के पास आकर उसने वस्तुस्थिति निवेदित कर दी। आचार्य ने उस घर को सब के लिए खोल दिया। (गा. ४५७६ टी. प. ६७)

१३०. समता का उत्कृष्ट उदाहरण

चिलातीपुत्र व्युत्सृष्ट-त्यक्तदेह होकर कायोत्सर्ग में थे। उसके शरीर पर लगे रक्त के गंध से पिपीलिका आदि जन्तु शरीर पर चढ़े और उसको चालनी बना डाला। परन्तु वह क्षण भर के लिए भी विचलित नहीं हुआ।

१३१. साधना की परम कसौटी

कालादवैश्य मौद्गलशैल शिखर पर साधना रत था। एक प्रत्यनीक देव शृगाल का विकराल रूप बनाकर उसको खाने लगा। उसने उस उपद्रव को समभाव से सहा।

१३२. बांसों का झुरमुट

एक मुनि प्रायोपगमन अनशन में स्थित था। उसे अनशन में देखकर कुछ प्रत्यनीक व्यक्तियों ने उसे उठाकर बांस के झुरमुट पर बिठा लिया। बांस फूटने लगे। उन बढ़ते हुए बांसों ने मुनि को बींध डाला और ऊपर उछाल दिया। पर मुनि ने उस वेदना को समभाव से सहा।

१३३. पिता-पुत्र और शृगाली

अवंतीसुकुमाल अपने बाल पुत्र के साथ साधना में थे। शृगाली ने उन्हें तीन रात तक खाया।

(गा. ४४२५ टी. प. ८०)

१३४. अनशन में उत्कट वेदना

कुछ मुनि पादपोपगमन अनशन में स्थित थे। वे प्रदेश विशेष में नदी के किनारे एक स्थान पर अपने शरीर का त्याग कर साधना में संलग्न हो गए। पानी बरसा। उफनती नदी के पानी में बहते हुए वे नदी के एक संकरे स्रोत में फंस गए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेदना को समभाव से सहकर दिवंगत हो गए। (गा. ४४२६ टी. प. ८०)

१३५. म्लेच्छ की मनोकामना

बत्तीस मित्र एक साथ पादपोपगमन अनशन कर स्थित हो गए। उस द्वीप में म्लेच्छ रहते थे। एक तृप्त म्लेच्छ ने देखा और सोचा, ये कल मेरे भोजन के लिए काम आयेंगे। यह सोचकर उसने उनको एक वृक्ष पर लटका दिया। वे उस वेदना को समभावपूर्वक सहन कर दिवंगत हो गए। (गा. ४४२८ टी. प. ८०)

व्यवहार भाष्य की कुछ कथाएं अन्य ग्रन्थों में भी मिलती हैं। यहां हम तुलनात्मक चार्ट प्रस्तुत कर रहे हैं।

संख्या	व्यभा	अन्य ग्रंथ
४.	६३ टी. प. २४	निभा. १२ चू. पृ. ८।
५-६.	६३ टी. प. २४-२५	निभा. १३ चू. पृ. ६, १० दशनि[1] ४६ अचू. पृ. २३।
७.	६३ टी. प. २५	निभा. १४ चू. पृ. १०, ११ दशनि १५८ अचू. पृ. ५२
८.	६३ टी. प. २५, २६	निभा. १५ चू. पृ. ११ दशनि १५८ अचू. पृ. ५२।
९.	६३ टी. प. २६	निभा. १६ चू. पृ. १२, दशनि १५८ अचू. पृ. ५३।
१०.	६४ टी. प. २७	निभा. ३२ चू. पृ. २०, दशनि १५७ अचू. पृ. ५०।
११.	६४ टी. प. २७	निभा. ३२ चू. पृ. २०, दशनि १५७ अचू. पृ. ५०५१।
१२.	३२१ टी. प. ४४	निभा. ६३६६ चू. पृ. ३०४।
१३.	३२३ टी. प. ४५	निभा. ६३६६ चू. पृ. ३०६।
१४.	३२३ टी. प. ४६	निभा. ६३९६ चू. पृ. ३०६।
१५.	३२६, ३३० टी. प. ४६	निभा. ६४०५, ६४०६ चू. पृ. ३१०।
१६.	३२३ टी. प. ४६	निभा. ६३६६ चू. पृ. ३०६।
१७.	३३३, ३३४ टी. प. ५१	निभा. ६४०८-६४०६ चू. पृ. ३११।
१८.	३३७, ३३८ टी. प. ५२	निभा. ६४१२, ६४१३ चू. पृ. ३१२।
१९.	४४८, ४४६ टी. प. ६२	निभा. ६५१३, ६५१४ चू. पृ. ३४२।
२०.	४५० टी. प. ६४	निभा. ६५१५ चू. पृ. ३४२।
२१.	४५२ टी. प. ६४	निभा. ६५१७ चू. पृ. ३४३।
२२.	४५४ टी. प. ६५	निभा. ६५२२ चू. पृ. ३४५।
२३, २४.	४५४, ४५५ टी. प. ६५	निभा. ६५२१ चू. पृ. ३४४।
२५.	४८१ टी. प. ३	निभा. ६५४१ चू. पृ. ३५०।
२६.	५१७ टी. प. १७	निभा. ६५७५ चू. पृ. ३६१, ३६२।
२७.	५५५ टी. प. ३२	निभा. ६६०१ चू. पृ. ३७४।
२८.	५८० टी. प. ४०	निभा. ६६२४ चू. पृ. ३८०।
२९.	५८१ टी. प. ४०	निभा. ६६२५ चू. पृ. ३८०।

१. दशवैकालिक निर्युक्ति की संख्या संपादित एवं अप्रकाशित निर्युक्ति की है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०, ३१.	५८०, ५८१ टी. प. ४०	निभा. ६६२५ चू. पृ. ३८१।
३२, ३३.	५८१ टी. प. ४०,४१	निभा. ६६२५ चू. पृ. ३८१।
३४.	५८६ टी. प. ४२	निभा. ६६२८ चू. पृ. ३८२।
५६.	११२५-११३१ टी. प. ३६	बृभा. ६२४३-४६।
७६.	१६०१ टी. प. ५२	निभा. ५७५ चू. पृ. २२।
११७.	३१०३ टी. प. ४६	निभा. ६०७६ चू. पृ. २२६।
१२४.	४२७८ टी. प. ६१	निभा. ३८४६।
१२५.	४२६०, ४२६१ टी. प. ६३	निभा. ३८५८।
१२६.	४२६२, ४२६३ टी. प. ६३	निभा. ३८५६ चू. पृ. २६६।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिभाषाएं

अंजलिप्रग्रह—अंजलिप्रग्रहो गुरुमुखे दृष्टिर्बुद्ध्युपयुक्तता। (गा. २६५५ टी. प. ३८)

अकुत्कुच—अकुत्कुचो हस्तपादमुखादिविरूपचेष्टारहितः। (गा. १४८२ टी. प. २६)

अणिकेत—अणिययचारि अणिययवित्ती अगिहितो वि होति अणिकेतो। (गा. ४०८६)

अदम्भग—अदम्भको वञ्चनानुगतवचनविरहितः। (गा. १४८२ टी. प. २६)

अध्यवसायी—या कर्त्तव्ये व्यवसायाधिकारिणी नालस्येनोपहता तिष्ठति साध्यवसायिनी। (गा. २३८७ टी. प. १८)

अनवक—यः प्रव्रज्यापर्यायेण त्रिवर्षोत्तीर्णः सोऽनवक उच्यते। (गा. १५७८ टी. प. ४७)

अनाभोग—अनाभोगो नाम एकान्तविस्मरणम्। (गा. ३६७६ टी. प. ५६)

अनिश्रित—अनिश्रितं नाम यत्र पुस्तके लिखितमपेक्षते अभाषितं वा परैर्व्याजेन उदीरितं वा यदवगृह्णाति तदनिश्रितम्।
(गा. ४१०८ टी. प. ४०)

अनुकम्पा—अनुकम्पनं दुःखार्त्तस्यानुकम्पाकरणं बालवृद्धासहान् यथादेशकालमनुकम्पते। (गा. १५०७ टी. प. ३३)

अनुज्ञा—सूत्रार्थयोरन्यप्रदानं, प्रदानं प्रत्यनुमननम्। (गा. ११४ टी. प. ४०)

अनुशासन—सामाचारीतः प्रतिभज्यमानान् कथंचिद् रुष्टान् वा यदनुशास्ति तदनुशासनम्।
- यदि वा यो यथोक्तकार्येऽपि सन् कथंचिन्न कुरुते तत्कस्यचिच्छिक्षणमेतत्तदकृत्यमिति खग्गूडान्वानुशास्ति एतदनुशासनम्।

(गा. १५०७ टी. प. ३३)

अनुशिष्टि—उपदेशप्रदानमनुशिष्टिः स्तुतिकरणं वा अनुशिष्टिः। (गा. ५६० टी. प. ३४)

अबहुश्रुत—अबहुश्रुतो नाम येनाचारप्रकल्पो निशीथाध्ययननामकः सूत्रतो अर्थतश्च नाधीतः। (गा. १६४७ टी. प. ६२)

अभिनिचरिका—अभिनिचरिका आभिमुख्येन नियता चरिका सूत्रोपदेशेन बहिर्व्रजिकादिषु दुर्बलानामाप्यायननिमित्तं पूर्वाह्ले काले समुत्कृष्टं समुदानं लब्धुं गमनं अभिनिचरिका। (गा. २०७५ टी. प. ६६)

अभिनिर्वगडा—अभि प्रत्येकं नियतो वगडा परिक्षेपो यस्यां सा अभिनिव्वगडा। (गा. २७२६ टी. प. ५०)

अभिन्नाचार—अभिन्नेन केनचिदप्यतिचारविशेषेण अखण्डित आचारो ज्ञानाचारादिको यस्यासावभिन्नाचारः।
(गा. १४७८ टी. प. २८)

अभिवर्धित (मास)—अभिवड्ढिए य तत्तो इति ततश्चतुर्थादादित्यान् मासादनंतरपंचमो मासोऽभिवर्द्धितः।
(गा. १६८ टी. प. ७)

अभ्यन्तरकरण—अभ्यन्तरकरणं नाम द्वयोः साध्वोर्गच्छमेढीभूतयोरभ्यन्तरे कुलादिकार्यनिमित्तं परस्परमुल्लपतोस्तृतीयस्योपशुश्रूषोः बहिःकरणं। अथवा यदिष्टः सन्नभ्यन्तरे गत्वा तद् गच्छादिप्रयोजनं ब्रूते एतदभ्यन्तरकरणम्। (गा. १५०७ टी. प. ३३)

अभ्यासकरण—अभ्यासकरणमिति य अभ्यासादभ्युपेतास्तेषामात्मसमीपवर्तित्वकरणमभ्यासकरणम्। (गा. १४८१ टी. प. २६)

अमात्य—सजणवयं च पुरवरं, चिंततो अच्छई नरवतिं च।
वबहारनीतिकुसलो, अमच्चो एयारिसो अधवा॥ (गा. ६३१)

अल्पागम—अल्पागमो यो बाह्यो बाह्यशास्त्रैर्विरहितः। (गा. २४६० टी. प. ७)

अवम—अवमो नाम आरात्रिवर्षारतो यस्य प्रव्रज्यापर्यायेण त्रीणि वर्षाणि नाद्यापि परिपूर्णानि भवन्ति।
(गा. १६४७ टी. प. ६२)

अवयानी—अनुस्रोतोगामिनी अवयानी। (गा. ११० टी प.३६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवसन्न—आवस्सगं अणियतं, करेति हीणातिरित्त विवरीयं।
गुरुवयणे य नियोगो, वलाति इणमो उ ओसन्नो॥ (गा. ८८४)
• उउबद्धपीढफलगं, ओसन्नं संजयं वियाणाहि।
ठवियग-रइयगभोइं, एमेया पडिवत्तिओ॥ (गा. ८८६)
अव्यक्त—अव्यक्तो नाम श्रुतेन वयसा चाप्राप्तोऽपरिकर्मितः। (गा. ८१० टी. प. १००)
असंक्लिष्टाचार—असंक्लिष्ट इह परलोकाशंसारूपसंक्लेशविप्रमुक्त आचारो यस्य सोऽसंक्लिष्टाचारः। (गा. १४७८ टी. प. २८)
असंप्रग्रहित—आयरिओ उ बहुस्सुत, तवस्सि-जच्चादिगेहि व मदेहिं।
जो होति अणुस्सित्तोऽसंपग्गहितो भवे सो उ॥ (गा. ४०८५)
आचारकुशल—अफरुस-अणवल-अचवलमकुक्कुयमदंभगोमसीभरगा।
सहित-समाहित-उवहित-गु णनिधि आयारकु सलो॥उ (गा. १४८२)
• आचारकुशलो नाम यो गुर्वादीनामागच्छतामभ्युत्थानं करोति। (गा. १४८१ टी. प. २६)
आचार्य—सुत्तत्थतदुभएहिं, उवउत्ता नाण-दंसण-चरित्ते।
गणतत्तिविप्पमुक्का, एरिसया होंति आयरिया॥ (गा. ६५४)
आच्छेद्य—आच्छेद्यं यद् भृतकादिलभ्यमाच्छिद्य दीयते उद्भिन्नं यत्कुतपादिमुखं स्थगितमप्युद्भिद्य ददाति। (गा. १५२१ टी. प. ३५)
आजीवन—आजीवनं यदाहारशय्यादिकं जात्याद्याजीवनेनोत्पादितम्। (गा. १५२१ टी. प. ३५)
आज्ञापरिणामक—आज्ञापरिणामको नाम यद् आज्ञाप्यते तत्कारणं न पृच्छति किमर्थमेतदिति किन्त्वाज्ञयैव कर्त्तव्यतया श्रद्दधाति। (गा. ४४४३ टी. प. ८२)
आत्मचिन्तक—य आत्मानमेव केवलं चिन्तयन् मन्यते इति आत्मचिंतकः योऽपि गणेऽपि गच्छेऽपि वसन् तिष्ठन् न वहति न करोति तप्तिमन्येषां साधूनां सोऽप्यात्मचिन्तकः। (गा. १४५७ टी. प. २२)
आदेश—आदिशितो वा आदेशः आदेश्यते सत्कारपुरस्कारभाकार्यत इत्यादेशः। (गा. ३७०४ टी. प. १)
आधाकर्मिक—आधाकर्मिकं यन्मूलत एव साधूनां कृते कृतम्। (गा. १५२१ टी. प. ३५)
आरम्भ—आरंभो उद्दवओ
• अपद्रावयतो जीवितात्परं व्यपरोपयतो व्यापारः आरंभः। (गा. ४६ टी. प. १८)
आराधक—आलोयणापरिणतो, सम्मं संपट्ठितो गुरुसगासं।
जदि अंतरा उ कालं, करेति आराहओ सो उ॥ (गा. २३३)
आरोपणा—चाउम्मासुक्कोसे, मासियमज्झे य पंच उ जहन्ने।
उवहिस्स अपेहाए, एसा खलु होइ आरुवणा॥ (गा. १३२)
• आरोप्यते इति आरोपणा प्रायश्चित्तानामुपर्युपर्यारोपणम्॥ (गा. ३६ टी. प. १५)
आर्त्त—अहवा अत्तीभूतो, सच्चित्तादीहि होति दव्वेहिं।
भावे कोहादीहिं, अभिभूतो होति अट्टो उ॥ (गा. २०६८)
आलीढ—दक्षिणमुरुमग्रतो मुखं कृत्वा वाममुरुं पश्चादुमुखमपसारयति अंतरा च द्वयोरपि पादयोः पंचपादाः ततो वामहस्तेन धनुर्गृहीत्वा दक्षिणहस्तेन प्रत्यंचामाकर्षति तद् आलीढस्थानम्। (गा. २१८ टी. प. १३)
आलोचना—आलोचना नाम अवश्यकरणीयस्य कार्यस्य पूर्वं वा कार्यसमाप्तेरूर्ध्वं वा यदि वा पूर्वमपि पश्चादपि च गुरोः पुरतो वचसा प्रकटीकरणं सा चालोचना। (गा. ५४ टी. प. २१)
आवलिका—या सा श्रुतोपसम्पत् परम्परात्मा आवलिका ज्ञातव्या। (गा. ३६८० टी. प. २३)
आवेश—आविशतीत्यावेशः।
• आवेशनं नाम यस्मिन् स्थाने प्रविष्टेन सागारिकस्यायासो स आदेश आवेशो वा। (गा. ३७०४ टी. प. १)
उच्छेव—उच्छेवो नाम यत्र पतितुमारब्धं तत्रान्यस्येष्टकादेः संस्थापनम्। (गा. १७५४ टी. प. ६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्पादक—उत्पादका नाम ये भूमिं भित्त्वा समुत्तिष्ठंति। (गा. ३४१२ टी. प. ७)
उद्देश—उद्देशो वाचनासूत्रप्रदानम्। (गा. ११४ टी.प.४०)
उद्धारणा—उत्प्राबल्येन उपेत्य वा उद्धृतानामर्थपदानां धारणा उद्धारणा (गा. ४५०६ टी. प. ८६)
उद्यानी—नद्याः प्रतिस्रोतगामिनी सा उद्यानी। (गा. ११० टी. प. ३६)
उपग्रह—दाण-दवावण-कारावणेसु करणे य कतमणुण्णाए।
उवहितमणुवहितविधी, जाणाहि उवग्गहं एयं॥ (गा. १५१६)
उपबृंहण—ज्ञानाचारादिषु पञ्चस्वाचारादिषु यथायोगमुद्यच्छतामुपबृंहणम्। (गा. १५०७ टी. प. ३३)
उपाध्याय—सुत्तत्थतदुभयविऊ, उज्जुत्ता नाण-दंसण-चरित्ते।
निप्फादगसिस्साणं, एरिसया होंतुवज्झाया॥ (गा. ६५६)
उल्का—उक्क सरेहा पगासजुत्ता वा। (गा. ३११६)
ऊर्जा—ऊर्जाबलं प्रभूततरभाषणेऽपि प्रवर्धमानस्वबलः आन्तरं उत्साहविशेषः। (गा. ७५८ टी. प. ८४)

एकलाभी—एकलाभी नाम यः प्रधानः शिष्यः तमेकं यो न ददाति। अवशेषांस्तु सर्वानपि प्रव्राजितान् गुरूणां प्रयच्छति अथवा येषामेक एव लाभो यथा यदि भक्तं लभन्ते ततो वस्त्रादीनि न,अथ वस्त्रादीनि लभन्ते तर्हि न भक्तमपि, एकमेव लभन्ते इत्येवंशीला एकलाभिनः। (गा. १४६२ टी. प. २३)
कनक—रेहारहितो भवे कणगो। (गा. ३१६६)
कपिहसित—कपिहसितं नाम नभसि विकृतिरूपस्य वानरसदृशमुखस्य अट्टहासः। (गा. ३१७० टी. प. ५६)
कर्बट—क्षुल्लकप्राकारवेष्टितं कर्बटम्। (गा. ६१५ टी. प. १२७)
कल्क—कल्को नाम प्रसूत्यादिषु रोगेषु क्षारपातनमथवात्मनः शरीरस्य देशतः सर्वतो वा लोध्रादिभिरुद्वर्तनम्। (गा. ८७६ टी. प. ११७)
कल्प—कल्पंते समर्था भवंति संयमाध्वनि प्रवर्त्तमाना अनेनेति कल्पः। (गा. ७ टी. प. ६)
किंकर—आजन्मावधिः कर्मकरः किंकरः। (गा. ३७०५ टी. प. २)
किणिक—किणिका ये वादित्राणि परिताड्यन्ति। वध्यानां नगरमध्ये च नीयमानानां पुरतो वादयन्ति। (गा. १४४८ टी. प. २१)
कीर्ति—कीर्तिश्च अवदाता सकलधरामंडलव्यापिनी। (गा. १७८४ टी. प. १२)
कुशल—यः कुशदर्भं दात्रेण तथा लुनाति न क्वचिदपि दात्रेण विच्छिद्यते स कुशलः। (गा. १४७७ टी. प. २७)
कुशील—कोउगभूतीकम्मे, पसिणाऽपसिणे निमित्तमाजीवी।
कक्क-कुरुया य लक्खण, उवजीवति मंत-विज्जादी॥
• जाती कुले गणे या, कम्मे सिप्पे तवे सुते चेव।
सत्तविधं आजीवं, उवजीवति जो कुसीलो सो॥ (गा. ८७६, ८८०)
कृतकरणा—यया साध्व्या बहुशो वैयावृत्त्यानि कृतानि सा कृतकरणा कुशला। (गा. २३८७ टी. प. १८)
कृतयोग—कृतयोगो नाम कर्कशतपोभिरनेकधा भावितात्मा। (गा. ५३८ टी. प. २७)
कृतयोगी—सूत्रोपदेशेन मोक्षाविराधीकृतो न्यस्तो योगो मनोवाक्काय व्यापारात्मकः स कृतयोगः स येषामस्ति ते कृतयोगिनः। (गा. १४७६ टी. प. २८)
• कृतयोगी नाम यः पूर्वमुभयधरः सूत्रार्थधरः आसीद् नेदानीम्। (गा. २३३५ टी. प. ६)
• कृतयोगी सूत्रतोऽतर्थश्च छेदग्रंथधरः स्थविरः। (गा. २३६६ टी. प. १६)
कौतुक—सोहग्गादिनिमित्तं, परेसि ण्हवणादि कोउगं भणियं। (गा. ८७६ टी. प. ११७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षान्त—क्षान्तो नाम क्षमायुक्तः। स कस्मिंश्चित् प्रयोजने गुर्वादिभिः खरपरुषमपि भणितः सम्यक् प्रतिपद्यते। (गा. ५२२ टी. प. १६)

क्षेम—क्षेमं नाम सुलक्षणं यद्वशात्सर्वत्र राज्ये नीरोगता। (गा. १५६६ टी. प. ४४)

खेड—पांशुप्राकारनिबद्धं खेटम्। (गा. ६१५ टी. प. १२७)

गंधर्वनगर—गंधर्वनगरं नाम यच्चक्रवर्त्यादिनगरस्योत्पातं सूचनाय सन्ध्यासमये तस्य नगरस्योपरि द्वितीयं नगरं प्राकाराट्टालिकादिसंस्थितं दृश्यते। (गा. ३११७ टी. प. ४६)

गणधर—ज्ञानादीनामविराधनां कुर्वन् यो गच्छं परिवर्धयति स गणधरः। (गा. १३७५ टी. प. ५)

गर्हा—जुगुप्सेत् गर्हेद् गुरुसाक्षिकम्। (गा. ६१५ टी. प. १२६)

गीतार्थ—उद्धावणा पधावण, खेत्तोवधिमग्गणासु अविसादी।

सुत्तत्थतदुभयविऊ, गीयत्था एरिसा होंति॥ (गा. ६६२)

- वस्त्रपात्रपिंडशय्यैषणाध्ययनादि छेदसूत्राणि च सूत्रतोऽर्थतः तदुभयतो वा येन सम्यगधीतानि स गीतार्थः। (गा. १०८ टी. प. ३८)

गुणनिधि—गुणनिधिः संयमानुगता ये गुणास्तेषां निधिरिव तैः परिपूर्ण इति भावः गुणनिधिः। (गा. १४६० टी. प. ३०)

गुणित—गुणितं च बहुशः परावर्तितं तथा सम्यग् ईहितं पूर्वापरसम्बन्धेन पूर्वापराव्याहतत्वेन। (गा. १४६६ टी. प. ३१)

चक्षुर्मेल—चक्षुर्मेलो नाम यदेकं चक्षुरुन्मीलयति अपरं निमीलयति। (गा. ४६४ टी. प. ७)

चरणकुसील—णाणे णाणायारं, जो तु विराधेति कालमादीयं।

दंसणे दंसणायारं, चरणकुसीलो इमो होति॥ (गा. ८७८)

चरित्रविनय—पणिधाणजोगजुत्तो, पंचहि समितीहिं तिहिं य गुत्तीहिं।

एस उ चरित्तविणओ। (गा. ६५)

चियाय—चियाय त्ति दानरुचिर्यथौचित्यमाश्रितेभ्योऽन्येभ्यश्च ददाति। (गा. १४३४ टी. प. १६)

चोदना—स्खलितस्य पुनः शिक्षणं चोदना। (गा. २०८६ टी. प. ६६)

जातकल्प—गीतत्थो जातकप्पो।

जातकल्पो नाम यो गीतार्थः सूत्रार्थतदुभयकुशलो। (गा. १७४३ टी. प. ४)

जितकरण—जितकरणो नाम करणदक्ष उच्यते। (गा. १४४० टी. प. १६)

जीतकल्प—जं जस्स व पच्छित्तं, आयरियपरंपराए अविरुद्धं।

जोगा य बहुविकप्पा, एसो खलु जीयकप्पो उ॥ (गा. १२)

- जीतं नाम प्रभूतानेकगीतार्थकृतमर्यादा। (गा. ७ टी. प. ६)
- वत्तणुवत्तपवत्तो, बहुसो अणुवत्तिओ महाणेणं।

  एसो उ जीयकप्पो, पंचमओ होति ववहारो॥ (गा. ४५२१)

डमर—डमरं प्रभूतस्वदेशोत्थविप्लवाः। (गा. १५६५ टी. प. ४४)

डहरिका—जन्मपर्यायेण यावदष्टादशिका अष्टादशवर्षप्रमाणा तावद् भवति डहरिका। (गा. २३१२ टी. प. ५)

डोंब—डोम्बा येषां गृहाणि सन्ति गीतं च गायन्ति। (गा. १४४८ टी. प. २१)

तरुण—जन्मपर्यायेण षोडशवर्षाण्यारभ्य यावच्चत्वारिंशद् वर्षाणि तावत्तरुणः। (गा. १५७७ टी. प. ४७)

तिंतिण—तिंतिणो नाम यः स्वल्पेऽपि केनचित् साधूनापराद्धेऽनवरतं पुनः पुनस्तं रुषन्नास्ते। (गा. ८६१ टी. प. ११३)

तिर्यग्गामिनी—या पुनर्नदीं तिर्यग् छिनत्ति सा तिर्यग्गामिनी। (गा. ११० टी. प. ३६)

तीक्ष्ण—तीक्ष्णं नाम यद् गुरुकमतिपाति च। (गा. ६६६ टी. प. ७२)

तीव्रसंविग्न—चरणकरणस्स सारो, भिक्खायरिया तहेव सज्झाओ।

एत्थ उ उज्झममाणं, तं जाणसु तिव्वसंविग्गं॥ (गा. २४८५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तेजस्विता—तेजस्विता प्रतिवादिक्षोभापादिकी शरीरस्य स्फूर्तिमती दीप्यमानता। (गा. ७५८ टी. प. ८४)

त्यक्तदेह—बंधेज्ज व रुंभेज्ज व, कोई व हणेज्ज अधव मारेज्ज।

वारेति न सो भगवं, चियत्तदेहो अपडिबद्धो॥ (गा. ३८४१)

दत्ती—अव्वोच्छिन्ननिवाया उ दत्ती होई। (गा. ३८१२)

- दत्तयः पुनस्तामेव भिक्षां यावतो वारानवच्छिद्य क्षिपन्ति तावत्यो भवंति। (गा. ३८११ टी. प. १८)
- अत्यवच्छिन्ननिपातात् तु दत्तिर्भवति। (गा. ३८१२ टी. प. १८)

दर्प—कज्जाकज्ज जताजत, अविजाणंतो अगीतो जं सेवे। सो होई तस्स दप्पो। (गा. १७१)

- व्यायामवल्गनादिषु व्यापृततया यो निःकारणेऽनादर उपस्थापनायाः स दर्प उच्यते। (गा. २०५४ टी. प. ६२)
- दर्पो निष्कारणमकल्पस्य प्रतिसेवनम्। (गा. ४०१७ टी. प. २६)

दान्त—दंतो जो उवरतो तु पावेहिं।

- अहवा दंतो इंदियदमेण नोइंदिएणं च। (गा. ४५१४)

दिग्दाह—पूर्वादिकायां छिन्नमूलो दाहः प्रज्वलनं दिग्दाहः।

अन्यतमस्यां दिशि महानगरप्रदीप्तमिवोपरिप्रकाशोऽधस्तादन्धकार इति दिग्दाहः।

(गा. ३११६ टी. प. ४६)

दीप्तचित्त—दीप्तचित्तो नामयस्य चित्तं दीप्यते अग्निरिवेन्धनैः। (गा. ११२४ टी. प. ३६)

दुर्द्धर—दुर्द्धरं नाम नयभंगैर्वा गुपिलत्वान्महता कष्टेन धार्यम्। (गा. ४११०)

देवचिन्तक—देवचिन्तका नाम ये शुभाशुभं राज्ञः कथयन्ति। (गा. ४५६७ टी. प. ६६)

देशक—यो ग्रामादीनां पंथानमृजुकं क्षेमेण प्रापयति स देशक इष्यते। (गा. १३७५ टी. प. ५)

देशकालसंस्मरण—देशकालसंस्मरणं नाम अस्मिन् देशे अस्मिन् काले च कर्त्तव्यमिदं ग्लानादीनामिति विज्ञाय यद्देशे काले स्मारयत्याचार्याणां ग्लानादीनाम्। (गा. १५०७ टी. प. ३३)

द्रव्यव्युत्सृष्ट—असिणाण भूमिसयणा, अविभूसा कुलवधू पउत्थधवा।

रक्खति पतिस्स सेज्जं, अणिकामा दव्ववोसट्ठो॥ (गा. ३८३८)

धनवान्—कोडिग्गसो हिरण्णं, मणि-मुत्त-सिलप्पवाल-रयणाइं।

अज्जय-पिउ-पज्जामय, एरिसया होंति धणमंता॥ (गा. ६५०)

धव—धारयति तां स्त्रियं धीयते वा तेन पुसां वा स्त्री दधाति।

सर्वात्मना पुष्णाति वा तेन कारणेन निरुक्तिवशात् धव इत्युच्यते॥ (गा. ३३४४ टी. प. ८६)

धारणाबल—धारणाबलं प्रतिवादिनः शब्दतदर्थावधारणं बलम्। (गा. ७५८ टी. प. ८४)

धारणाव्यवहार—धारणाव्यवहारो नाम गीतार्थेन संविग्नेनाचार्येण द्रव्य क्षेत्र-काल-भावपुरुषान् प्रतिसेवनाश्चावलोक्य यस्मिन्नपराधे यत् प्रायश्चित्तमदायि तत् सर्वमन्यो दृष्ट्वा तेष्वेव द्रव्यादिषु तादृश एवापराधे तदेव प्रायश्चित्तं ददाति, एष धारणाव्यवहारः। (गा. ६ टी. प. ७)

- उद्धारणा विधारण, संधारण संपधारणा चेव।

  नाऊण धीर पुरिसा, धारणववहार तं बेंति॥
- धारणयाच्छेदधुतार्थावधारणलक्षणया यः सम्यक् ज्ञात्वा व्यवहारः प्रयुज्यते तं धारणाव्यवहारं धीरपुरुषाः ब्रुवते।

  (गा. ४५०३ टी. प. ८८)

धारित—धारितं सम्यग् धारणाविषयीकृतं न विनष्टम्। (गा. १४६६ टी. प. ३१)

धीर—धिया औत्पत्तिक्यादिरूपया चतुर्विधया बुद्ध्या राजन्ते इति धीराः। (गा. १४७६ टी. प. २८)

नंदीपतद्ग्रह—नंदीपतद्ग्रहोऽतिशयेन महान् पतद्ग्रहस्तेनाध्वनि अवमौदर्ये परचक्रावरोधे च प्रयोजनं तथा च कश्चिद् ब्रूयाद् दिने दिने युष्माकमहमेकं पात्रं भरिष्यामि। ततस्तत् नंदीपात्रं भार्यते एतेन कारणेन गच्छोपग्रहनिमित्तं धार्यते। (गा. ३६३३ टी. प. ४७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नय—नायम्मि गिण्हियव्वे, अगिण्हित-यम्मि चेव अत्थम्मि।
जइयव्वमेव इति जो, उवदेसो सो नयो नामं॥ (गा. ४६६१)

नायक—नायका ज्ञानादीनां प्रापकास्तदुपदेशनात्। (गा. १४७६ टी. प. २८)

निंदा—निंदाद्यात्मसाक्षिकम्। (गा. ६१५ टी. प. १२६)

निर्धूमक (राज्य)—निर्धूमकं नाम अपलक्षणं यत्प्रभावतो राज्यमनुशासति रन्धनीयमेव न भवति। (गा. १५६५ टी. प. ४४)

निर्यापित—सम्यग् गुरुपादान्तिके निर्णीतार्थीकृतं निर्यापितम्। (गा. १४६८ टी. प. ३२)

निर्यामक—कथञ्चनापि प्रवहणं वाहयति यथा क्षिप्रमविघ्नेन समुद्रस्य पारमुपगच्छति एष एव च तत्त्वतो निर्यामक उच्यते। (गा. १३७५ टी. प. ५)

निर्यूहना—निर्यूहना नाम वैयावृत्त्यस्याकरणं यदि वा वसतौ दोषाभावे यत्स्थानं न ददातिएषा निर्यूहना वैयावृत्याकरणादिना यत्तस्याऽपाकरणं सा निर्यूहनेति भावः। (गा. १०५२ टी. प. २२)

निर्हारिम—निर्हारिमं नाम यद् ग्रामादीनामन्तः प्रतिपद्यते। (गा. ४३६४ टी. प. ७६)

निश्रा—आहारादी दाहिइ, मज्झं तु एस निस्सा उ। (गा. १६)

निष्ठित—निष्ठितं नाम येन कारणेनोपसंपन्नस्तत्सूत्रार्थलक्षणं कारणं निष्ठितं समाप्तम्। (गा. २१०८ टी. प. ७३)

नैचयिक—सणसत्तरमादीणं, धन्नाणं कुंभकोडिकोडीओ।
जेसिं तु भोयणट्ठा, एरिसया होंति नेचतिया॥ • (गा. ६५१)
• निचयेन संचयेनार्थाद् धान्यानां ये व्यवहरन्ति ते नैचयिकाः। (गा. ६५१ टी. प. ११)

पत्तन—पत्तनं शकटैर्गम्यं, घोटकैर्नौभिरेव च।
नौभिरेव यद् गम्यं, पट्टनं तत्प्रचक्षते॥ (गा. ६१५ टी. प. १२७)

परिकर्मणा—परिकर्मणा नाम यदुपधिमुचितप्रमाणकरणतः संयतप्रायोग्यं करोति। (गा. २३५० टी. प. १२)

परिकुंचणा—परिकुंचनं परिकुंचना गुरुदोषस्य मायया लघुदोषस्य कथनम्। (गा. ३६ टी. प. १५)

परिचितश्रुत—परिचितमत्यन्तमभ्यस्तीकृतं श्रुतं येन स परिचितश्रुतः। (गा. ८०० टी. प. ६७)
• परिचितं पूर्वस्मिन् पर्याये श्रुतं यस्य स परिचितपूर्वश्रुतः यदि वा प्रत्यागतस्यापि स्वाभिधानमिव परिचितं पूर्वपठितं यस्य स। (गा. १५४७ टी. प. ४०)

परिजीर्ण—परिजुण्णो उ दरिद्दो, दव्वे धण-रयणसारपरिहीणो।
भावे नाणादीहिं, परिजुण्णो एस लोगो उ॥ (गा. २०६६)

पर्व—पक्खस्स अट्ठमी खलु, मासस्स य पक्खियं मुणेयव्वं।
अण्णं पि होइ पव्वं, उवरागो चंदसूराणं॥ (गा. २६६८)
मासद्धमासियाणं, पव्वं पुण होइ मज्झं तु। (गा. २६६७)

पश्चात्संस्तुत—पश्चात्संस्तुतो भार्यापक्षगतः। (गा. ३७१६ टी. प. ४)

पांशव—पांशवो नाम धूमाकारमापांडुरमचित्तरजं। (गा. ३११५ टी. प. ४८)

पाण—पाणा नाम ये ग्रामस्य नगरस्य च बहिराकाशे वसन्ति तेषां गृहाणामभावात्। (गा. १४४८ टी. प. २१)

पाद—पायसमा ऊसासा, कालपमाणेण होंति नायव्वा। (गा. १२१)

पारंचित—यस्मिन् प्रतिसेविते लिंग-क्षेत्र-काल-तपसां पारमंचति तत् पारांचितम्। (गा. ५३ टी. प. २०, २१)

पारायण—पारायणं नाम सूत्रार्थतदुभयानां पारगमनम्। (गा. १७३० टी. प. १)

पारिणामिकीबुद्धि—यया पुनः पुद्गलानां विचित्रं परिणामं जानाति सा पारिणामिकी। (गा. २३८६ टी. प. १६)

पारिहारिक—पारिहारिका नाम आपन्नपरिहारतपसोऽभिधीयन्ते। (गा. ६२४ टी. प. ५२)

पार्श्वस्थ—दंसण-नाण-चरित्ते, तवे य अत्ताहितो पवयणे य।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तेसिं पासविहारी, पासत्थं तं वियाणाहि ॥ (गा. ८५३)

दंसण-नाण-चरित्ते, सत्थो अच्छति तहिं न उज्जमति ।

एतेण उ पासत्थो । (गा. ८५४)

ज्ञानदर्शनचारित्रे यथोक्तरूपे यः स्वस्थोऽवतिष्ठते न पुनस्तत्र ज्ञानादौ यथा उद्यच्छति उद्यमं करोति। एतेन कारणेनैष पार्श्वस्थ उच्यते। (गा. ८५४ टी. प. १११)

सेज्जायर कुलनिस्सित, ठवणकुलपलोयणा अभिहडे य।

पुव्विं पच्छासंथुत, णितियग्गपिंडभोइ य पासत्थो ॥ (गा. ८५६)

पूजन—पूजनं नाम यथाक्रमं गुर्वादीनामाहारादिसम्पादनविनयकरणम्। (१५०७ टी. प. ३३)

पूतिनिर्वलनमास—पूतिनिर्वलनमासपूतिर्दुरभिगन्धिस्तस्य निर्वलनं स्फेटनं तत्प्रधानो मासः पूतिनिर्वलनमासः। । (गा. १३४१ टी. प. ८१)

पूर्वसंस्तुत—पूर्वसंस्तुतो नाम मातृपितृपक्षवर्ती। (गा. ३७१६ टी. प. ४)

पौराणदुर्द्धर—दुर्द्धरं नयभङ्गाकुलतया प्राकृतजनैर्धारयितुमशक्यं धरतेऽर्थान् प्रवचनमिति पौराणदुर्द्धरः। (गा. १४६६ टी. प. ३१)

प्रज्ञप्ति—प्रज्ञप्तिर्नाम स्वसमयपरसमयप्ररूपणा। (गा. १४७७ टी.प.२७)

प्रज्ञप्तिकुशल—जीवाजीवा बंधं, मोक्खं गतिरागतिं सुहं दुक्खं।

पण्णत्तीकुसलविदू, परवादिकुदंसणे महणो ॥

पण्णत्ती कुसलो खलु, जह खुड्डगणी मुरुंडरायस्स।

पुट्ठो कह न वि देवा, गयं पि कालं न याणंति ॥ (गा. १५००-१५०१)

प्रतिक्रमण—प्रतिक्रमणं दोषात् प्रतिनिवर्तनमपुनःकरणतया मिथ्यादुष्कृतप्रदानम् (गा. ५३ टी. प. २०)

प्रतिचरक—प्रतिचरका नाम अपराधापन्नस्थप्रायश्चित्ते दत्ते तपः कुर्वतो ग्लानायमानस्य वैयावृत्त्यकरास्ते प्रतिचरकाः। (गा. ३०४ टी. प. ३६)

प्रतिचोदना—पुनः पुनः स्खलितस्य निष्ठुरं शिक्षापणं प्रतिचोदना। (गा. २०८६ टी. प. ६६)

प्रतिज्ञापना—प्रतिज्ञापना नाम विधिना पात्रादीनां मार्गणा। (गा. ३६२६ टी प. ४६)

प्रतिबोधक—प्रतिबोधको नाम गृहचिन्तक उच्यते यो गृहं चिन्तयन् यो यत्र योग्यस्तं तत्र व्यापारयति तत्र व्याप्रियमाणं च प्रमादतः स्खलन्तं निवारयति स गृहचिन्तक उच्यते। (गा. १३७५ टी.प. ५)

प्रतिसेवक—प्रतिसेवको नाम यो भिक्षुः निष्कारणे कारणाभावेऽपि पञ्चकादीनि प्रायश्चित्तस्थानानि प्रतिसेवते। (गा. १६४७ टी. प. ६२)

प्रतिसेवना—प्रतिषिद्धस्य सेवना प्रतिसेवना, अकल्प्यसमाचरणमिति भावः। (गा. ३६ टी प. १५)

प्रतीच्छक—प्रतीच्छकः परगणवर्ती सूत्रार्थदुभयग्राहकः। (गा. १६८२ टी. प. ६७)

• पाडिच्छे त्ति येऽन्यतो गच्छान्तरादागत्य साधवस्तत्रोपसम्पदं गृह्यते ते प्रतीच्छकाः। (गा. ६५७ टी. प. १३४)

प्रत्यनीक—आत्मनः परेषां च प्रतिकूलः प्रत्यनीकः। (गा. १७१३ टी. प. ७१)

प्रत्यालीढ—यत्पुनर्वाममुरुमग्रतो मुखमाधाय दक्षिणमुरुं पश्चाद्मुखमपसारयति अंतरा चात्रापि द्वयोरपि पादयोःपंचपादास्ततः पूर्वप्रकारेण युध्यते तत् प्रत्यालीढम्। (गा. २१८ टी. प. १३)

प्रमार्जनासंयम—य उपकरणभारमाददानो निक्षिपन्वा प्रतिलेख्य प्रमार्ज्य च गृह्णाति निक्षिपति वा एतेन प्रेक्षासंयमः प्रमार्जनासंयमः। (गा. १४६० टी. प. ३०)

प्रयत—प्रयतो नाम कृताञ्जलिप्रग्रहो दृष्ट्वा सूरिमुखारविंदमवेक्षमाणो बुद्ध्युपयुक्तः। (गा. २६५० टी. प. ३७)

प्रलीन—कोधादी वा पलयं, जेसि गता ते पलीणा उ। (गा. ४५१३)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रवर्त्तक—तव-नियम-विणयगुणनिहि, पवत्तगा नाण-दंसण-चरित्ते।
संगहुवग्गहकुसला, पवत्ति एतारिसा होंति॥ (गा. ६५८)
• संजम-तव-नियमेसु, जो जोग्गो तत्थ तं पवत्तेति।
असहू य नियत्तेंती, गणतत्तिल्ला पवत्तीओ॥ (गा. ६५६)
प्रश्नाप्रश्न—प्रश्नाप्रश्नं नाम यत् स्वप्नविद्यादिभिः शिष्टस्यान्येभ्यः कथनम्। (गा. ८७६ टी. प. ११७)
प्राभृत—परिमाणपरिच्छिन्ना प्राभृतशब्दवाच्याः। (गा. ४३५ टी. प. ८८)
प्राभृतं नाम यदिष्टः श्रुतस्कंधः। (गा. २११७ टी. प. ७४)
फलित—फलितं नाम यद् व्यञ्जनैर्भक्ष्यैर्वा नानाप्रकारैर्विरचितम्। (गा. ३८२१ टी. प. १६)
बकुशत्व—बकुशत्वं शरीरोपकरणविभूषाकरणम्। (गा. १५८६ टी. प. ४६)
बहुमान—बहुमानो नाम आंतरो भावप्रतिबंधः। (गा. ६३ टी. प. २५)
• बहुमानमान्तरप्रीतिविशेषः। (गा. ३०३३ टी. प. ३६)
बहुसूत्र—बहुकालोचितं सूत्रं आचारादिकं यस्य स बहुसूत्रो गीतार्थो विदितसूत्रार्थः। (गा. १४४२ टी. प. १६)
बह्वागम—बहुरागमोऽर्थरूपो यस्य स बह्वागमः जघन्येनाचारप्रकल्पधरो निशीथाध्ययनसूत्रार्थधरः।
(गा. १४७६ टी. प. २८)
बुद्बुद—यत्र वर्षे निपतति पानीयमध्ये बुद्बुदास्तोयशलाका रूपा उत्तिष्ठन्ति ततो वर्षमप्युपचारात् बुद्बुदमित्युच्यते।
(गा. ३११९ टी. प. ४८)
भावगण—गीतत्थउज्जुयाणं, गीतपुरोगामिणं चऽगीताणं।
एसो खलु भावगणो, नाणादितिगं च जत्थत्थि॥ (गा. १३६७)
भावसंविग्न—भावसंविग्ना ये संसारादुत्त्रस्तमानसतया सदैव पूर्वरात्रादिष्वेतच्चिंतयति किं मे कडं, किं च ममत्थि सेसं, किं सक्कणिज्जं न समायरामि इत्यादि। (गा. १ टी. प. ६)
भिक्षा—हस्तेन वा मात्रेण वा या समुद्यता उत्पादिता सा भिक्षेत्युच्यते। (गा. ३८११ टी प १८)
भिक्षावृत्ति—अचित्ता एसणिज्जा य, मिता काले परिक्खिता।
जहालद्धा विसुद्धा य, एसा वित्ती य भिक्खुणो॥ (गा. १६३)
भिक्षु—अविहिंस बंभचारी, पोसहिय अमज्जमंसियाऽचोरा।
सति लंभ परिच्चाई, होंति तदक्खा न सेसा उ॥ (गा. १६०)
भिक्षुभाव—भिक्षुभावो नाम स्मारणा वारणा प्रतिचोदना। (गा. २०८६ टी. प. ६६)
भूतिकर्म—जरियादिभूतिदाणं, भूतीकम्मं विणिद्दिट्ठं।
• भूतिकर्म नाम यज्ज्वरितादीनामभिमंत्रितेन क्षारेण रक्षाकरणम्। (गा. ८७६ टी. प. ११७)
भूमिकर्म—भूमिकर्म नाम विषमाणि भूमिस्थानानि भुंक्त्वा संमार्जन्या संमार्जनम्, आमर्जनं मृदुगोमयादिना लिम्पनम्।
(गा. १७५४ टी. प. ६)
भृतक—भृतकः कियत्कालं मूल्येन धृतः। (गा. ३७०५ टी. प. २)
मंडल—द्वावपि पादौ समौ दक्षिणवामतोऽपसार्य ऊरू प्रसारयति यथा मध्ये मंडलं भवति अंतरा चत्वारः पादास्तद् मंडलम्।
(गा. २१८ टी. प. १३)
मंत्र—साधनरहितो मंत्रः। (गा. २३२१)
मंदसंविग्न—चरणकरणस्स सारो, भिक्खायरिया तहेव सज्झाओ।
एत्थ परितम्ममाणं, तं जाणसु मंदसंविग्गं॥ (गा. २४८४)
मडभ—मडभाः कुब्जाः कुष्टव्याध्युपहताः। (गा. १४५० टी. प. २१)
मडम्ब—अर्धतृतीयगव्यूतान्तर्ग्रामान्तररहितं मडंबम्। (गा. ६१५ टी. प. १२७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मध्यस्थ—मध्ये रागद्वेषयोरपान्तराले तिष्ठंतीति मध्यस्थाः। (गा. १३ टी. प. ८)

मन्मन—मम्मणो पुण भासंतो, खलए अंतरंतरा।
चिरेण णीति से वाया, अविसुद्धा व भासते॥ (गा. ४६३२ टी. प. १०५)

महत्तरक—गंभीरो मद्दवितो, कुसलो जो जातिविणयसंपन्नो।
जुवरण्णाए सहितो, पेच्छइ कज्जाइ महतरओ॥ (गा. ६३०)

महागोप—यो गोपो गाः स्वापदेषु विषमेषु वा प्रदेशेष्वटव्यां वा पतंतीर्वारयित्वा च क्षेमेण स्वस्थानमानयति स महागोप उच्यते। (गा. १३७५ टी. प. ५)

महानिर्जर—महानिर्जरस्तदावरणीयस्य कर्मणः क्षयकरणात्। (गा. २६३० टी. प. ३३)

महापर्यवसान—महापर्यवसानः पुनरन्यनवकर्मबंधाभावात्। (गा. २६३० टी. प. ३३)

महापान—पिबति अर्थपदानि यत्रस्थितस्तत्पानं, महच्च तत्पानं च महापानम्। (गा. २७०३ टी. प. ४६)

मारि—मारिर्यद्वशान्मारिदोषोपहतं प्रचुरं दुर्भिक्षमुपयाति। (गा. १५६५ टी. प. ४४)

मुहूर्त्त—अहवा वि तीसतिगुणे, सेसे तेणेव भागहारेणं।
भइयम्मि जं तु लब्भति, ते उ मुहुत्ता मुणेयव्वा।। (गा. २०३)

मूलकर्म—मूलकर्म नाम पुरुषद्वेषिण्याः सत्या अपुरुषद्वेषिणीकरणमपुरुषद्वेषिण्याः सत्याः पुरुषद्वेषिणीकरण्। (गा. ८७६ टी. प. ११७)

मेधा—अपूर्वापूर्वऊहणोहात्मको ज्ञानविशेषः। (गा. ७५८ टी. प. ८४)

यथाछंद—उस्सुत्तमायरंतो उस्सुत्तं चेव पण्णवेमाणो।
एसो उ अधाछंदो।
● उस्सुत्तमणुवदिट्ठं, सच्छंदविगप्पियं अणणुवादी।
परतत्तिपवित्ते तिंतिणे य इणमो अहाछंदो॥
● सच्छंदमतिविगप्पिय, किंची सुह-सायविगतिपडिबद्धो।
तिहि गारवेहि मज्जति, तं जाणाहि य अधाछंदं॥ (गा. ८६०-६२)

यक्षालिप्त—यक्षालिप्तं नाम एकस्यां दिशि अन्तरान्तरा यद्दृश्यते। (गा. ३११७ टी. प. ४६)

युवराज—आवस्सयाइ काउं, जो पुव्वाइं तु निरवसेसाइं।
अत्थाणीमज्झगतो, पेच्छति कज्जाइं जुवराया॥ (गा. ६२६)

यूपक—यूपको नाम शुक्ले शुक्लपक्षे त्रीणि दिनानि यावद् द्वितीयस्यां तृतीयस्यां चतुर्थ्यां चेत्यर्थः सन्ध्याच्छेदः। (गा. ३११६ टी. प. ४६)

केषाञ्चिदाचार्याणां मतेन भवन्ति शुक्लपक्षे प्रतिपदा दिक्षु दिवसेष्वमोघामोघा शुभाशुभसूचननिमित्तादि तथोत्पादा आदित्यकरणविकारजनिता आदित्यस्योदयसमयेऽस्तमयसमये वाताभ्राः कृष्णश्यामा वा यूपक इति। (गा. ३१२० टी. प. ४६)

रचितक (भिक्षादोष)—रचितं नाम संयतनिमित्तं कांस्यपात्रादौ मध्ये भक्तं निवेश्य पार्श्वेषु व्यञ्जनानि बहुविधानि स्थाप्यन्ते। (गा. १५२१ टी. प. ३५)

रचितकभोजी—रचितकं नाम कांस्यपात्रादिषु पटादिषु वा यदशनादिदेयबुद्ध्या वैविक्त्येन स्थापितं तद् भुंक्ते इत्येवंशीलो रचितकभोजी। (गा. ८८६ टी प ११६)

राजकुमार—पच्चंते खुब्भंते, दुद्दंते सव्वतो दमेमाणो।
संगामनीतिकुसलो, कुमार एतारिसो होति॥ (गा. ६४८)

राजा—पंचविधे कामगुणे, साहीणे भुंजते निरुव्विग्गे।
वावारविप्पमुक्को, राया एतारिसो होति॥ (गा. ६२८)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रूपयक्ष—भंभीय मासुरुक्खे, माढरकोडिण्णदंडनीतीसु।
अधऽलंचऽपक्खगाही, एरिसया रूवजक्खा तु॥ (गा. ६५२)

लङ्ख—लङ्खा ये वंशादेरुपरि नृत्तं दर्शयन्ति। (गा. १४४६ टी. प २१)

लवसत्तम—सत्तलवा जदि आउं, पहुप्पमाणं ततो तु सिज्झंतो।
तत्तियमेत्तं न भूतं, ततो ते लवसत्तमा जाता॥
सव्वट्ठसिद्धिनामे, उक्कोसट्ठिई य विजयमादीसु।
एगावसेसगब्भा, भवंति लवसत्तमा देवा॥ (गा. २४३३, २४३४)

लोकोत्तरप्रग्रह—आयरिय-उवज्झाए, पवत्ति-थेरे तहेव गणवच्छे।
एसो लोगुत्तरिओ, पंचविहो पग्गहो होति॥ (गा. २१७)

वक्षस्कार—वक्खारो नाम एकस्यां वलभ्यामभिनिर्वगडो विष्वग् अपवरकः। (गा. २७८२ टी. प. ६१)

वचनसंग्रहकुशल—वचने वचनविषये अभिग्रहिकस्य गृहीताभिग्रहप्रतिपत्तमौनव्रतस्येत्यर्थः। केनापि प्रश्ने कृते सति तस्योत्तरं यद्भणत्येष वचनसंग्रहकुशलः। (गा. १५०६ टी. प. ३४)

वन—एकद्रुम एकजातीया ये वृक्षास्ते यत्र विद्यन्ते तद् भवति वनम्। (गा. ३७६१ टी. प. १५)
• एकजातीयद्रुमसंघातो वनम्। (गा. ३७८६ टी. प. १५)

वनीपक (भिक्षादोष)—वनीपकीभूय पिण्ड उत्पाद्यते स पिण्डोऽपि वनीपकः। (गा. १५२१ टी. प. ३५)

वर्त्तना—पूर्वगृहीतस्य सूत्रार्थस्य तदुभयस्य वा पुनः पुनरभ्यसनं वर्त्तना। (गा. २८५ टी. प. ३२)
• पूर्वगृहीतस्य पुनरुज्ज्वालनं वर्त्तना। (गा. ३६७५ टी. प. २३)

वस्तु—वस्तूनि नाम अर्थाधिकारविशेषाः। (गा. ४३५ टी. प. ८८)

वाचिकविनय—हित-मित-अफरुसभासी, अणुवीइभासि स वाइओ विणओ। (गा. ६८)

वारणा—अनाचारस्य प्रतिषेधनं वारणा। (गा. २०८६ टी. प. ६६)

विचारभूमि—विचारभूमिः पुरीषोत्सर्गभूमिः। (गा. १७६७ टी. प. ८)

विदुर्ग—• विदुर्गे वा नानाजातीयद्रुमसंघाते। (गा. ३७८६ टी. प. १५)
• नानाजातीयद्रुमरूपं विदुर्गम्। (गा. ३७६१ टी. प. १५)

विधारणा—विविधैः प्रकारैः विशिष्टं चार्थमुद्धृतमर्थपदं यया धारणया स्मृत्या धारयति सा विधारा विधारणा। (गा. ४५०६, टी. प. ८६)

विपतद्ग्रह—विपतद्ग्रहः नंदीपतद्ग्रहात् किंचिदूनः स एतदर्थं धार्यते कदाचित् पतद्ग्रहो भिद्येत। (गा. ३६३३ टी. प. ४७)

विमात्रक—विमात्रको मात्रकाद् मनाक् समधिक ऊनतरो वा। (गा. ३६३३ टी. प. ४७)

वियार—विचारो नाम उच्चारादिपरिष्ठापनम्। (गा. ११० टी. प. ३६)

विस्रोतसिका—विस्रोतसिका संयमस्थानप्लावनम्। (गा. २६५० टी. प. ३७)

विहारविकटना—संतम्मि वि बलविरिए, तवोवहाणम्मि जं न उज्जमियं।
एस विहारवियडणा। (गा. २४४)

वीर—वीर ऊरसबलवान् तेनाक्लेशेन परबलं जयति। (गा. १४१४ टी. प. १८)

वृद्ध—वृद्धाः श्रुतेन पर्यायेण वयसा च महान्तः। (गा. २३७८ टी. प. १७)

वृद्धशील—निहुयसभाव अचंचल, नातव्वो वुड्ढसील त्ति॥ (गा. ४०८६)

वैद्य—अम्मापितीहि जणियस्स, तस्स आतंकपउरदोसेहिं।
वेज्जा देंति समाधिं, जहिं कता आगमा होंति॥ (गा. ६४६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वैशाख—स्थानमालीढस्य प्रतिपथि विपरीतत्वात् प्रत्यालीढं प्रत्युन्नः पार्ष्णी अभ्यंतराभिमुखे कृत्वा समश्रेण्या करोति अग्रिमतले च बहिर्मुखे तलो युध्यते तद् वैशाखं स्थानम्। (गा. २१८ टी. प. १३)

व्यवहार—अत्थी पच्चत्थीणं, हाउं एगस्स ववति बितियस्स।
एएण उ ववहारो। (गा.५)

व्यवहारी—पियधम्मा दढधम्मा, संविग्गा चेव वज्जभीरू य।
सुत्तत्थतदुभयविऊ, अणिस्सिय ववहारकारी य॥ (गा. १४)

व्याक्षिप्त—व्याक्षिप्तः कर्मणि कर्त्तव्ये व्याकुलः। (गा. २५२५ टी. प. १३)

व्युत्सृष्टदेह—वातिय-पित्तिय-सिंभिय, रोगातंकेहिं तत्थ पुट्ठो वि।
न कुणति परिकम्मं सो, किंचि वि वोसट्ठदेहो उ॥ (गा. ३८३६ टी. प. ३)

शूर—शूरो नाम निर्भयः। स च कुतश्चिदपि न भयमुपगच्छति। (गा. १४३४ टी. प. १८)

श्रुतनिघर्ष—श्रुतं निघर्षयन्तीति श्रुतनिघर्षाः। किमुक्तं भवति ? यथा सुवर्णकारस्तापनिघर्षच्छेदैः सुवर्णं परीक्षते किं सुन्दरमथवामङ्गलमिति एवं स्वसमयपरसमयान् परीक्षयन्ते ते श्रुतनिघर्षाः। (गा. १४७६ टी. प. २८)

श्रुतबहुश्रुत—यस्य बह्वपि श्रुतं न विस्मृतिपथमुपयाति स श्रुतबहुश्रुतः। (गा. ४५०८ टी. प. ८६)

संघ—संघो गुणसंघातो, संघायविमोयगो य कम्माणं।
रागद्दोसविमुक्को, होति समो सव्वजीवाणं॥
• परिणामिय बुद्धीए, उववेतो होति समणसंघो उ।
कज्जे निच्छियकारी, सुपरिच्छियकारगो संघो। (गा. १६७७,१६७८)
• आसासो वीसासो, सीतघरसमो य होति मा भाहि।
अम्मापितीसमाणो, संघो सरणं तु सव्वेसिं। (गा. १६८१)

संदंश—संडासए इति अंगुष्ठप्रदेशिनीभ्यां यद् गृह्यते शाल्यादिकं तावन्मात्रं प्रतिगृहं गृह्णन्ति।
(गा. ३८५३ टी. प. ५)

संधना—विस्मृत्यापान्तराले त्रुटितस्य पुनः संधानकरणं संधना। (गा. ३६७५ टी. प. २३)
• पूर्वगृहीतविस्मृतस्य पुनः संस्थापनं संधना। (गा. २८५ टी. प. ३२)

संधारणा—समशब्दं एकाकीभावे धृतानुधारणा तान्यर्थपदानि आत्मना सह एकभावेन
यस्माद्धारयति तस्माद् धारणा संधारणा। (गा. ४५०६ टी. प. ८६)

संपाण्डुगभाण्डधारी—संपाण्डुगभाण्डधारिणो नाम यावन्मात्रमुपकरणमुपयुज्यते तावन्मात्रं धरन्ति शेषं परिष्ठापयन्ति।
(गा. ३५८६ टी. प. ३८)

संप्रधारणा—यस्मात् सन्धार्य सम्यक् प्रकर्षेणावधार्य व्यवहारः प्रयुंक्ते तस्मात्कारणात्तेन शिष्येण सम्प्रधारणा भवति ज्ञातव्या।
(गा. ४५०६ टी. प. ८६)

संबाध—संबाधो यात्रासमागतप्रभूतजननिवेशः। (गा. ६९५ टी. प. १२७)

संभोजन—संभोजनं नाम यत्सांभोगिकैः सह भोजनसंभोगो भक्ते वहति। (गा. १५०७ टी. प. ३३)

संयमकुशल—पुढवादिसंजमम्मी, सत्तरसे जो भवे कुसलो। (गा. १४८८)
• अधवा गहणे-निसिरण, एसण सेज्जा-निसेज्ज-उवधी य।
आहारे वि य सतिमं, पसत्थजोगे य जुंजणया॥ (गा. १४८९)
• इंदिय-कसायनिग्गह, पिहितासवजोगझाणमल्लीणो।
संजमकुसलगुणनिधि, तिविधकरणभावसुविसुद्धो॥ (गा. १४९०)
• भवत्यप्रशस्तानां मनोवाक्काययोगानामपवर्जनं प्रशस्तानां मनोवाक्काययोगानामभियोजनं संयमकुशलः।
(गा. १४९० टी. प. ३०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

• ग्रहणे आदाने निसिरणे एषणायां गवेषणादिभेदभिन्नायां शय्यानिषद्योपध्याहारविषयानां च निषद्यायां सम्यगुपयुक्तः संयमकुशलः। (गा. १४९० टी. प. ३०)

• संयमं सप्तदशविधं यो जानात्याचरति च स संयमकुशलः। (गा. १४७७ टी. प. २७)

संयोगदृष्टपाठी—अनेकान् संयोगान् व्यापार्यमाणान् यो दृष्टवान् यश्च तत् पाठं पठितवान् स संयोगदृष्टपाठी।
(गा. २४२४ टी. प. २४)

संयोजना—संयोजनं संयोजना शय्यातरराजपिंडादिभेदभिन्नाऽपराधजनितप्रायश्चित्तानां संकलनाकरणम्। (गा. ३६ टी. प. १५)

संरम्भ—संकप्पो संरंभो

• प्राणातिपातं करोमीति यः संकल्पोऽध्यवसायः स संरंभः। (गा. ४६ टी. प. १८)

संवर्त्त—संवर्तो नाम यत्र विषमादौ भयेन लोकः संवर्तीभूतस्तिष्ठति। (गा. ३८७८ टी. प. ६)

संसक्त—सामायारी वितहं, कुणमाणो जं च पावए जत्थ संसत्तो च अलंदो। (गा. ८८७)

• यः पार्श्वस्थादिषु मिलितः पार्श्वस्थसदृशो भवति,संविग्नेषु मिलितः संविग्नसदृशः स संसक्तः।

• अलिंदे गोभक्तं कुक्कुसओदनभिस्सटाअवश्रावणमित्यादि पूर्वमेकत्वमिलितं भवतीति संसक्त उच्यते।
(गा. ८८८ टी. प. ११६)

• पंचासवप्पवत्तो, जो खलु तिहि गारवेहि पडिबद्धो।
इत्थि-गिहिसंकिलिट्ठो, संसत्तो सो य नायव्वो॥ (गा. ८९०)

संसारप्रवर्धक—जो जह व तह लद्धं, भुंजति आहार-उवधिमादीयं।
समणगुणमुक्कजोगी, संसारपवड्ढगो भणितो॥ (गा. १०८५)

संस्तारक—संस्तारकोऽर्धतृतीयहस्तदीर्घहस्तचत्वार्यङ्गुलानि विस्तीर्णः। (गा. ३३८७ टी. प. २)

सचित्तरज—सचित्तरजो नाम व्यवहारसचित्ता वातोद्धता श्लक्ष्णधूलिस्तच्च सचित्तरजो वर्णेनाताम्रम्।
(गा. ३१११ टी. प. ४८)

सत्त्व—प्राणव्यपरोपण समर्थविद्याप्रयोगेप्यचलितस्तन्मानोपमर्दहेतुरवष्टम्भः। (गा. ७५८ टी. प. ८४)

समपाद—द्वावपि पादौ समौ निरंतरं यत् स्थापयति जानुनी उरू चातिसरले करोति तत् समपादम्।
(गा. २१८ टी. प. १३)

समारंभ—परितावकरो भवे समारंभो।

• यस्तु परस्य परितापकरो व्यापार स समारंभः। (गा ४६ टी. प. १८)

समाहित—सम्मं आहितभावो समाहितो। (गा. १४८७)

समाहितः उपशमी ज्ञानादीनां हितः स्थित उत्पत्तिके ज्ञानाद्यधिकं निर्मलतरं आत्मनो वाञ्छन् सदैव गुरुषु बहुमानपर इति भावः।
(गा. १४८२ टी. प. २६)

समुद्देश—समुद्देशो व्याख्या अर्थप्रदानम्। (गा. ११४ टी. प. ११५)

सहित—सहितो नाम यो यस्य ज्ञानादेरुचितः कालस्तेनोपेतः। (गा. १४८२ टी. प. २६)

सात्त्विक—सात्त्विको नाम यो महत्यप्युदये गर्व नोपयाति। (गा. १४३४ टी. प. १८)

सारूपिक—सारूपिको शिरो मुंडो रजोहरणरहितो अलाबुपात्रेण भिक्षामटति सभार्योऽभार्यो वा। (गा. ३६७१ टी. प. ५५)

सारूपिकसिद्धपुत्र—सारूपिकसिद्धपुत्रो नाम मुण्डितशिखो रजोहरणरहितोऽलाबुपात्रेण भिक्षामटन् सभार्यो वा।
(गा. ३६५६ टी. प. ५२)

सिति—सितिर्नाम ऊर्ध्वमधो वा गच्छतः सुखोत्तरोवतारहेतुः काष्ठादिमयः पन्थाः। (गा. ४२३७ टी. प. ५५)

सिद्धपुत्र—सिद्धपुत्र नाम सकेशो भिक्षामटति वा न वा बराटकैः विटलकं करोति यष्टिं धारयति।
(गा. ३६७१ टी. प. ५५)

सीभर—सीभरो नाम य उल्लपन् परं लालया सिञ्चति। (गा. १४८२ टी. प. २६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुप्रणिहित—जो एतेसुं न वट्टति, कोधे दोसे तधेव कंखाए।
सो होति सुप्पणिहितो, सोभणपणिधाणजुत्तो वा। (गा. ४१५५)

स्तव—अष्टश्लोकादिकाः स्तवाः।

- चतुःश्लोकादिकः स्तवः। (गा. ३०१६ टी. प. ३३)

स्तुति—एकश्लोका द्विश्लोका त्रिश्लोका वा स्तुतिर्भवति। (गा. ३०१६ टी.प.३३)

- अन्येषामाचार्याणां मतेन एकश्लोकादिसप्तश्लोकपर्यन्ताः स्तुतिः। (गा. ३०१६ टी. प. ३३)
- थुतिओ तिसिलोइया। (गा. ३७७५)

स्थविर—संविग्गो मद्दवितो, पियधम्मो नाण-दंसण चरित्ते।
जे अट्ठे परिहायति, ते सारेंतो हवति थेरो॥ (गा. ६६०)

- स्थविरा नाम अतिमहान्तो वयसातिगरिष्ठा। (गा. १४६२ टी.प. २३)

स्थापित—स्थापितं यत्संयतार्थं स्वस्थाने परस्थाने वा स्थापितम्। (गा. १५२१ टी. प. ३५)

स्थिर—स्थिरो नाम धृतिसंहननाभ्यां बलवान्। (गा. ५३८ टी. प. २७)

- स्थिरो नाम उद्योगं कुर्वन्नपि न परिताम्यति। (गा. १४३४ टी. प. १६)
- स्थिरो नाम यस्तत्रावस्थायी ध्रुवकर्मिकः। (गा. २५२५ टी. प. १३)

स्पर्शित—स्पर्शितो योगत्रिकेण सेविता पालिता। (गा. ३७७६ टी. प. १३)

हरियाहडिया—स्तेनैर्हृतस्य स्तेनहरणं हृताहृतिका स्तेनानीतप्रतीच्छा हृताहृतिका भण्यते। (गा. ३७६७ टी. प. ११)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपमा

- कुंभादि तियस्स जह सिद्धी। २
- नेहमिव उग्गिरंतो। ७३
- कुणमाणो वि पयत्तं, अवसो जह पावए पडणं। २२३
- आसो विव पत्थितो गुरुसगासं। २३१
- सिग्घुज्जुगती आसो, अणुयत्तति सारहिं न अत्ताणं। २३२
- नववज्झियावदेहो। २५१
- पलिउंचियम्मि अस्सुवमा। ३२१
- जो जत्तिएण रोगो, पसमति तं देति भेसजं वेज्जो।
  एवागमसुतनाणी, सुज्झति जेणं तयं देति।। ३२६
- घतकुडगो उ जिणस्सा, चोद्दसपुव्विस्स नालिया होति। ४३८
- संघयणं जध सगडं, धिति उ धोज्जेहि होंति उवणीया।
  बिय तिय चरिमे भंगे, तं दिज्जति जं तरति वोढुं।। ४५१
- भिण्णे खंधग्गिम्मि य, मासचउम्मासिए चेडे। ४६४
- बहुएहि जलकुडेहिं, बहूणि वत्थाणि काणि वि विसुज्झे।
  अप्पमलाणि बहूणि वि, काणिइ सुज्झंति एगेणं।। ५०८
- हरिसमिव वेदयंतो,तधा तधा वड्ढते उवरिं। ५१६
- कुविय-पियबंधवस्स व। ५५४
- अवसो व रायदंडो। ५५५
- जह सरणमुवगयाणं, जीवियववरोवणं नरो कुणति।
  एवं सारणियाणं, आयरिओऽसारओ गच्छे।। ५७०
- जा एगदेसे अदढा उ भंडी, सीलप्पए सा उ करेति कज्जं।
  जा दुब्बला संठविता वि संती, न तं तु सीलेंति
  विसण्णदारुं।। ६१८
- जो एगदेसे अदढो उ पोतो, सीलप्पए सो उ करेति कज्जं।
  जो दुब्बलो संठवितो वि संतो, न तं तु सीलेंति
  विसण्णदारुं।। ६१९
- जोधा व जधा तधा समणजोधा। ६२६
- आवरिता वि रणमुहे, जधा छलिज्जंति अप्पमत्ता वि। ६२७
- गज्जति वसभोव्व परिसाए। ७१३
- वसभे जोधे य तहा, निज्जामगविरहिते जहा पोते। ७५०
- अप्फालिया जह रणे, जोधा भंजंति परबलाणीयं। ७५२
- सुनिउणनिज्जामगविरहियस्स पोतस्स जध भवे नासो। ७५३
- निउणमतिनिज्जामगो पोतो जह इच्छितं वए भूमिं। ७५४
- वासगगतं तु पोसति, चंचूपूरेहि सउणिया छावं।
  वारेति तमुड्डंतं, जाव समत्थं न जातं तु।। ७७१
- एमेव वणे सीही सा रक्खति छावपोयगं गहणे।
  खीरमिउपिसियचव्विय जा खायइ अट्ठियाइं पि।। ७७२
- पडियक्खेण उवमिमो, सउणिग सीहादिछावेहिं। ७७४
- जह सीहो तह साधू, गिरि-नदि सीहो तवोधणो साधू।
  वेयावच्चऽकिलंतो, अभिन्नरोमो य आवासे।। ७७६
- लंखग-मल्ले-उवमा, आसकिसोरे व्व जोग्गविते। ७८३
- सउणी जह पंजरंतरनिरुद्धा। ८३५
- सव्वासिरोगि उवमा, सरदे य पडे अविधुयम्मि। ८४६
- जध वणहत्थी उ बंधणं चतितो। ८५८।१
- संविग्गजणो जड्डो,जह सुहिओ सारणाए चइओ उ। ८५८
- जध उ बइल्लो बलवं, भंजति समिलं तु सो वि एमेव।
  गुरुवयणं अकरेंतो, वलाति कुणती च उस्सोढुं।। ८८५
- गोभत्तालंदो विव बहुरूवनडोव्व एलगो चेव। ८८८
- अग्गी व इंधणेहिं। ११२४
- जले व नावा कुविंदेण। १२८४
- इच्छातिगस्स अड्डा, महातलागेण ओवम्मं। १३६१
- धारेति गणं जदि पहु महातलागेण सामाणो। १३६६
- तिमि-मगरेहि न खुब्भति, जहंबुणाधो वियंभमाणेहिं।
- सोच्चिय महातलागो, पफुल्लपउमं च जं अन्नं।। १३७०
- होती य सदाभिगमो, सत्ताण सरोव्व पउमड्ढो। १३७१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

- पडिबोहगदेसिय सिरिघरे य निज्जागगे य बोधव्वे।
तत्तो य महागोवो एमेता पडिवत्तिओ।। १३७३

- जह आलित्ते गेहे, कोइ पसुत्तं नरं तु बोधेज्जा।
जरमरणादिपलित्ते, संसारघरम्मि तध उ जिए।। १३७४
- जध जध वावारयते, जधा य वावारिता न हीयंति।
तध तध गणपरिवुड्ढी, निज्जरवुड्ढी वि एमेव।। १४१२
- सउणिच्छावो व पोसिउं दुक्खं। १४२३
- सुवण्णगस्सेव ताव निहसादी। १४३३
- इय चंदणरयणनिभा पमायतिक्खेण परसुणा भेत्तुं।
दुविधपडिसेवि सिहिणा, तिरयणखोडी तुमे दड्ढा।। १४४६
- काणगमहिसो व निण्णम्मि। १४५२
- एगपुरिसे कहं निंदू, कागबंझा कधं भवे। १४५५
- नयभंगाउलयाए, दुद्धर इव सद्दो होति ओवम्मे। १४६७
- जध उड्डितेण वि तुमे, न वि णातो एत्तिओ इमो कालो।
इय गीत वादियविमोहिया उ देवा न जाणंति। १५०४
- मज्जाररडियपरूवणया। १५२४
- रण्णो व्व अणभिसित्ते, रज्जे खोभो तधा गच्छे। १५८१
- लता व कंपमाणा उ। १५८४
- उम्मत्तो व पलवते। १६१८
- सो सीतघरोवमो संघो। १६८६
- कंकडुओ विव मासो, सिद्धिं न उवेति जस्स ववहारो। १६६६
- कुणिमनहो व न सुज्झति, दुच्छेज्जो जस्स ववहारो। १६६६
- फलमिव पक्कं पडए, पक्कस्सऽहवा न गच्छते पागं। १६६७
- उम्मुगणायं ति होज्ज जा दोण्णि। १७३८
- सागरसरिसं नवमं, अतिसयनयभंगगुविलत्ता। १७३८
- जह होंति पत्थणिज्जा, कप्पट्ठी नीलकेसि सव्वस्स। १८५१
- जध वडवाए उ वण्णआसेणं। १८८१
- अवत्तराइंदिए हुवमा। १६०८
- जह राया व कुमारं, रज्जे ठावेउमिच्छते जं तु। १६३६
- जह गयकुलसंभूतो, गिरिकंदर-विसमकडगदुग्गेसु।
परिवहति अपरितंतो, नियय सरीरुग्गते दंते।। १६४७
- कोमुदीजोगजुत्तं वा, तारापरिवुडं ससिं। २०००
- सेविज्जंतं विहंगेहिं, सरं वा कमलोज्जलं। २००१
- तुल्लदेसी व फरुसो, मधुरोव्व असंगहो। २०१०
- साडगबद्धा गोणी, जध तं घेत्तु पलाति दुस्सीलो। २१८६
- पव्वयहिययं पि संपकप्पंति। २४६५
- तरुविव वातेणं भज्जते सज्जं। २४६८
- सिरिघरसरिसो उ आयरिओ। २५६०
- रयणब्भूतो तधायरिओ। २५६५
- आलोगो तिन्निवारे, गोणीण जधा तधेव गच्छे वि। २५७७
- वयणघरवासिणी वि हु, न मुंडिया ते कहं जीहा। २५८५
- नच्चणहीणा व नडा, नायगहीणा व रूविणी वावि।
चक्कं च तुंबहीणं, न भवति एवं गणो गणिणा।। २५६५
- सावेक्खो पुण राया, कुमारमादीहि परबलं खविया।
अजिते सयंपि जुज्झति उवमा एसेव गच्छे वि।। २६१७
- लक्खणजुत्ता पडिमा, पासादीया समत्तऽलंकारा।
पल्हायति जध वयणं, तह निज्जर मो वियाणाहि। २६३५
- वंसकडिल्लच्छिण्णो वि वेलुओ पावए न महिं। २६६५
- जह राया चक्कवट्टी वा। २७००
- मा जुण्णरहोव्व सीदेज्जा। २७३७
- मणपरिणामो वीई, सुभासुभे कंटएण दिट्ठंतो।
खिप्पकरणं जध लंखियव्वं तहियं इमं होति।। २७५८
- परिणामाणवत्थाणं, सति मोहे उ देहिणं।
तस्सेव उ अभावेणं, जायते एगभावया।। २७५६
- जधाऽवचिज्जते मोहो, सुद्धलेसस्स झाइणो।
तहेव परिणामो वि, विसुद्धो परिवड्ढते।। २७६०
- जधा य कम्मिणो कम्मं, मोहणिज्जं उदिज्जति।
तधेव संकिलिट्ठो से, परिणामो विवड्ढती।। २७६१
- जहा य अंबुनाधम्मि, अणुबद्धपरंपरा।
वीई उप्पज्जई एवं, परिणामो सुभासुभो।। २७६२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

- कण्हगोमी जधा चित्ता, कंटयं वा विचित्तयं।
  तधेव परिणामस्स, विचित्ता कालकंटया।। २७६३
- लंखिया वा जधा खिप्पं, उप्पतित्ता समोवए।
  परिणामो तहा दुविधो, खिप्पं एति अवेति य।। २७६४
- उक्कड्ढंतं जधा तोयं, सीतलेण झविज्जती।
  गदो वा अगदेणं तु, वेरग्गेण तहोदओ।। २७६८
- सीहो रक्खति तिण्सिे, तिण्सिेहि वि रक्खितो तधा सीहो।
  एवण्णमण्णसहिता, बितियं अद्धाणमादीसुं।। २७७८
- मंडुगतिसरिसो खलु। २६२१
- नवणीयतुल्लहियया साहू। २६६८
- जहा य चक्किणो चक्कं, पत्थिवेहिं पि पुज्जति।
  न यावि कित्तणं तस्स, जत्थ तत्थ व जुञ्जती।। ३०२१
- वज्जकुड्डसमं चित्तं। ३०८४
- जध गंडगमुग्घुट्ठे, बहुहिं असुतम्मि गंडए दंडो। ३१७४
- आउट्टियावराहं, सन्निहिया न खमए जहा पडिमा।
  ३२३३
- अजायविउलखंधा, लता वातेण कंपते।
  जले वाऽबंधणा णावा, उवमा एसऽसंगहे।। ३२४८
- बिले व वसिउं नागा। ३५३०
- सीहविक्कमसन्निभो। ३७८४
- उवमा जवेण चंदेण। ३८३३
- सासू-ससुरुक्कोसा, देवरभत्तारमादि मज्झिमगा।
  दासादी य जहण्णा, जह सुण्हा सहइ उवसग्गा।। ३८४७
- सासु-ससुरोवमा खलु, दिव्वा दियरोवमा य माणुस्सा।
  दासत्थाणी तिरिया, तह सम्मं सोऽधियासेति।। ३८४८
- वासीचंदणकप्पो जह रुक्खो। ३८५१
- वीरल्लेणं व तासिता सउणी। ३८७५
- चंदमुही विव सो वि हु,आगमववहारवं होति। ४०३५
- जह आममट्टियघडे, अंबेव न छुब्भती खीरं। ४१००
- सीतघरं पिव दाहं, वंजुलरुक्खो व जह उ उरगविसं।
  ४१५२
- घुणक्खरसमो उ पारोक्खी। ४१६७
- जह दीवे तेल्लवत्ति, खओ समं तह सरीरायुं। ४२४६
- जह सुकुसलो वि वेज्जो, अन्नस्स कधेति अप्पणो वाहिं।
  वेज्जस्स य सो सोउं, तो पडिकम्मं समारभते।। ४२६६
- जह वाऽऽउंटिय पादे, पायं काऊण हत्थिणो पुरिसो।
  आरुभति तह परिण्णी, आहारेणं तु झाणवरं।। ४३६७
- दत्तेणं नावाए, आउह पहुवाहणोसहेहिं च।
  उवगरणेहिं च विणा, जहसंखमसाधगा सव्वे।। ४३७०
- कंपेज्ज जधा चलतरुव्व। ४३६५
- जह नाम असी कोसे, अण्णो कोसे असी वि खलु अण्णे।
  इय मे अन्नो देहो, अन्नो जीवो त्ति मण्णंति।। ४३६६
- जध न विकंपति मेरू, तध ते झाणाउ न चलंति। ४४००
- वड्ढंता सेलकुड्डसामाणा। ४४०१
- तिमि-मगरेहि व उदधी, न खोभितो जो मणो मुणिणो।
  ४४१४
- जह चालणिव्व कतो। ४४२२
- वादी वायुरिवागतो। ४५८०
- अवचिज्जते य उवचिज्जते य जह इंदिएहिं सो पुरिसो।
  एस उवमा पसत्था, संसारीणिंदियविभागे।। ४६२१
- कललंडरसादीया, जह जीवा तधेव आउजीवा वि।
  ४६२७
- जोतिंगण जरिए वा, जहुण्ह तह तेउजीवा वि। ४६२७
- ऊणट्ठए चरित्तं, न चिट्ठए चालणीए उदगं वा। ४६४६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निक्षिप्त शब्द

'निक्षेप' व्याख्या की एक विशिष्ट पद्धति है। भाषाविज्ञान के क्षेत्र में जैनाचार्यों की यह एक विशिष्ट देन है। प्राकृत में एक ही शब्द के अनेक संस्कृत रूपान्तरण संभव हैं। निक्षेप पद्धति द्वारा उस शब्द के सभी संभावित अर्थों का ज्ञान कराकर उस शब्द के प्रसंगोपात्त अर्थ का ज्ञान कराया जाता है। निक्षेप भाषाविज्ञान के अन्तर्गत अर्थविकास-विज्ञान का महत्त्वपूर्ण अंग है।

प्रस्तुत ग्रंथ में भाष्यकार ने 'परिहार', 'साधर्मिक', 'स्थान' आदि शब्दों की निक्षेप के आधार पर विस्तृत जानकारी प्रस्तुत की है।

अट्ठ	२०६७
अभिग्गह	६८६, ३८५५
इच्छा	१३६२
आणा	३८८६
उंछ	३८५२
उवग्गह	५६५
गण	५३६५
छलणा	६२६
दुग	६८०
परिजुण्ण	२०६६
परिहार	२१०
पलिच्छद	१४०८
भत्ति	२६७०
भिक्षु	१८८, १६४
मास	१६६
ववहार	६
ववहारी	१३
विहार	६६५
साधम्मिय	६८६
स्थान	२१३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूक्त-सुभाषित

पुव्वं बुद्धीए पासित्ता, ततो वक्कमुदाहरे।
पहले सोचो, फिर बोलो। (गा. ७६)

अचक्खुओ व्व नेतारं, बुद्धिं अन्नेसए गिरा।
वाणी बुद्धि का अनुसरण वैसे ही करती है, जैसे जनता अंधे नेता का अनुगमन करती है। (गा. ७६)

अमुगं कीरउ आमं ति, भणति अणुलोमवयणसहितो उ।
वयणपसादादीहि य, अभिणंदति तं वइं गुरुणो।।
गुरु के आदेश को सुनकर जो शिष्य 'तहत्' कहकर उसको स्वीकार करता है, प्रसन्नवदन से उसका अभिनन्दन करता है, वही विनीत होता है। (गा. ८७)

न ऊ सच्छंदया सेया।
स्वच्छन्दवृत्ति श्रेयस्कर नहीं होती। (गा. ८९)

जधुत्तं गुरुनिद्देसं, जो वि आदिसती मुणी।
तस्सा वि विहिणा जुत्ता, गुरुवक्काणुलोमता।
गुरु के आदेश के प्रति विधियुक्त विनय करना, विनीत शिष्य का कर्तव्य है। (गा. ९०)

न वि णज्जति वाघातो, कं वेलं होज्ज जीवस्स।
मृत्यु कब आ जाए, कोई नहीं जानता। (गा. २२८)

आयरियपादमूले, गंतूण समुद्धरे सल्लं।
गुरु की शरण में जाकर शल्य को निकाल फेंको। (गा २२९)

न हु सुज्झती ससल्लो।
सशल्य व्यक्ति की शोधि नहीं होती। (गा. २३०)

उद्धरियसव्वसल्लो, सुज्झति जीवो धुतकिलेसो।
शल्यरहित व्यक्ति क्लेशशून्य होकर शुद्ध हो जाता है। (गा. २३०)

न वि अत्थि न वि होही, सज्झायसमं तवोकम्मं।
स्वाध्याय के समान न दूसरा तपःकर्म है और न होगा। (गा. २६४।१)

अग्गघातो हणे मूलं, मूलघातो य अग्गयं।
अग्र पर आघात मूल का विनाश कर देता है। मूल पर आघात अग्र का विनाश कर देता है। (गा. ४६६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो जं काउ समत्थो, सो तेण विसुज्झते असढभावो।
जो जिस कार्य को करने में समर्थ है, वह पवित्रभाव से उसको करता हुआ शुद्ध हो जाता है। (गा. ५५७)

गूहितबलो न सुज्झति।
जो शक्ति का गोपन करता है, उसकी शोधि नहीं होती। (गा. ५५७)

दंडसुलभम्मि लोए, मा अमतिं कुणसु दंडितो मि त्ति।
'इस कार्य से दंड ही तो मिलेगा', ऐसा सोचकर पाप मत करो। (गा. ५६२)

जीहाए विलिहंतो, न भद्दओ जत्थ सारणा नत्थि।
दंडेण वि ताडेंतो, स भद्दओ सारणा जत्थ।।
जहां सारणा नहीं है, वहां मीठे वचनों से क्या ? जहां सारणा है, वहां दंड-प्रहार भी श्रेयस्कर है। (गा. ५६६)

अज्जेण भव्वेण वियाणएण, धम्मप्पतिण्णेण अलीयभीरुणा।
सीलंकुलाचारसमन्नितेण, तेणं समं वाद समायरेज्जा।।
जहां वाद करने का प्रसंग हो वहां इनके साथ वाद करो—आर्य, भव्य, वादविज्ञ, धर्मप्रतिज्ञ, अलीकभीरु, शीलवान् और कुलीन। (गा. ७१२)

अत्थवतिणा निवतिणा, पक्खवता बलवया पयंडेण।
गुरुणा नीएण तवस्सिणा य सह वज्जए वादं।।
इनके साथ वाद मत करो—अर्थपति, नृपति, पक्षपाती, बलवान्, प्रचण्ड, गुरु, नीच तथा तपस्वी। (गा. ७१५)

दुक्करं खु वेरग्गं।
वैराग्य दुष्कर है। (गा. ७६१)

होंति दुक्खं खु वेरग्गं।
वैराग्य की प्राप्ति कष्टसाध्य है। (गा. ७६२)

सम्मत्तं मइलेत्ता, ते दुग्गतिवड्ढगा होंति।।
जो सम्यक्त्व को मलिन करता है, वह दुर्गति को बढ़ाता है। (गा. ८७२)

धित्तेसिं गामनगराणं, जेसिं इत्थी पणायिगा।
उस नगर और गांव को धिक्कार है, जहां स्त्री नायक होती है। (गा. ६३५)

ते यावि धिक्कया पुरिसा, जे इत्थीणं वसंगता।
वे पुरुष भी धिक्कार के पात्र हैं, जो स्त्रियों के वशवर्ती हैं। (गा. ६३५)

इत्थीओ बलवं जत्थ, गामेसु नगरेसु वा।
सो गामं नगरं वापि, खिप्पमेव विणस्सति।।
जिस गांव और नगर में स्त्रियों का प्रभुत्व होता है, वह गांव और नगर शीघ्र नष्ट हो जाता है। (गा. ६३६)

मरिउं ससल्लमरणं, संसाराडविमहाकडिल्लम्मि।
सुचिरं भमंति जीवा, अणोरपारम्मि ओतिण्णा।।
जो जीव सशल्य मरते हैं, वे इस अनन्त संसार में अनन्तकाल तक जन्म-मरण करते हैं। (गा. १०२२)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तुल्ले वि इंदियत्थे, सज्जति एगो विरज्जती बितिओ।
अज्झत्थं खु पमाणं, न इंदियत्था जिणा बेंति।।

इन्द्रिय-विषयों की प्राप्ति समान होने पर भी एक व्यक्ति उनसे विरक्त होता है और दूसरा आसक्त। अतः इन्द्रियों के विषय प्रधान नहीं हैं, प्रधान है अध्यात्म। (गा. १०२८)

मणसा उवेति विसए, मणसेव य सन्नियत्तए तेसु।
इति वि हु अज्झत्थसमो, बंधो विसया न उ पमाणं।।

पुरुष मन से ही विषयों के प्रति आकृष्ट होता है और मन से ही उनसे विरत होता है। मन ही बंध और मोक्ष का प्रमाण है, विषय नहीं। (गा. १०२९)

न हु होति सोइयव्वो, जो कालगतो दढो चरित्तम्मि।

वह शोचनीय नहीं है, जो दृढ़ चारित्र का पालन कर कालगत होता है। (गा. १०८४)

सो होति सोइयव्वो, जो संजमदुब्बलो विहरे।

शोचनीय वह है, जो संयम में दुर्बल है। (गा. १०८४)

रागद्दोसाणुगता जीवा, कम्मस्स बंधगा होंति।

राग-द्वेष से अनुगत जीव कर्म का बंधन करता है। (गा. ११९०)

जो होइ दित्तचित्तो, सो पलवति अणिच्छियव्वाइं।

जो दृप्तचित्त होता है, वह अनर्गल प्रलाप करता है। (गा. ११२३)

विसस्स विसमेवेह, ओसधं अग्गिमग्गिणो।
मंतस्स पडिमंतो उ, दुज्जणस्स विवज्जणा।।

विष का प्रतिकार विष, अग्नि का प्रतिकार अग्नि और मंत्र का प्रतिकार प्रतिमंत्र है। वैसे ही दुर्जन का प्रतिकार है उसकी वर्जना करना। (गा. ११५९)

दीसति धम्मस्स फलं,पच्चक्खं तत्थ उज्जमं कुणिमो।
इड्ढीसु पतणुवीसुं, व सज्जते होति णाणत्तं।।

राजा आदि की ऋद्धि देखकर व्यक्ति सोचते हैं—यह धर्म का प्रत्यक्ष फल है। हमें भी इस ओर उद्यम करना चाहिए। तब वे व्यक्ति अल्पतर ऋद्धियों में भी आसक्त हो जाते हैं। (गा. १२५६)

वेसकरणं पमाणं, न होति न य मज्जणं णऽलंकारो।

सत्यान्वेषण में न वेश प्रमाण होता है, न मज्जन और न अलंकार। (गा. १२८३)

साहीणभोगचाई, अवि महती निज्जरा उ एयस्स।

जो अपने स्वाधीन भोगों को त्यागता है, उसके महान् निर्जरा होती है। (गा १२९७)

सुहुमो वि कम्मबंधो, न होति तु नियत्तभावस्स।

जो निवृत्ति में रहता है, उसके तनिक भी कर्मबंध नहीं होता। (गा. १२९७)

सज्झाय-संजम-तवे, धणियं अप्पा नियोतव्वो।

आत्मा को निरन्तर स्वाध्याय, संयम और तप में लगाना चाहिए। (गा. १३४०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आहारोवहिपूयाकारण न गणो धरेयव्वो।
कम्माण निज्जरट्ठा, एवं खु गणो भवे धरेयव्वो।।

गण में रहने का लक्ष्य आहार, उपधि और पूजा प्राप्त करना नहीं है। गण में रहने का लक्ष्य है कर्मों की निर्जरा।
(गा. १४००, १४०१)

आकितिमतो हि नियमा, सेसा वि हवंति लद्धीओ।
आकृतिमान् व्यक्ति को अन्यान्य लब्धियां भी सहज प्राप्त हो जाती हैं। (गा. १४१६)

छिद्दाणि निरिक्खंतो, मायी तेणेव असुईओ।
जो छिद्रान्वेषी होता है, वह मायावी है। मायावी अशुचि होता है। (गा. १६४०)

असच्चरुइ होति माई तु।
मायावी असत्यप्रिय होता है। (गा १६४६)

मायी कुणति अकज्जं।
मायावी व्यक्ति अकार्य करता है। (गा. १६४६)

चरणकरणं जहंतो, सच्चव्ववहारयं पि जहे।
जो संयम को छोड़ता है, वह सत्य को भी छोड़ देता है। (गा. १६७१)

जइया गेणं चत्तं, अप्पणतो नाण-दंसण-चरित्तं।
ताधे तस्स परेसुं, अणुकंपा नत्थि जीवेसु।।
ज्ञान, दर्शन, चारित्र से रहित व्यक्ति दूसरों की अनुकम्पा कैसे कर सकेगा ? (गा. १६७२)

यस्य ह्यात्मनो दुर्गतौ प्रपततो नानुकम्पा तस्य कथं परेष्वनुकम्पा भवेद् ?
जो स्वयं पर अनुकम्पा नहीं कर सकता, वह दूसरों पर अनुकम्पा कैसे करेगा ? (गा. १६७२ टी. प. ६५)

संघो गुणसंघातो, संघायविमोयगो य कम्माणं।
रागद्दोसविमुक्को, होति समो सव्वजीवाणं।।
गुणों का संघात संघ है। वह प्राणी को कर्मसंघात से मुक्त करता है। राग-द्वेष से रहित संघ सभी जीवों के प्रति सम होता है। (गा. १६७७)

आसासो वीसासो, सीतधरसमो य होति मा भाहि।
अम्मापितीसमाणो, संघो सरणं तु सव्वेसिं।।
संघ आश्वास है, विश्वास है, शीतगृह के समान है, माता-पिता की तरह संरक्षक है, सभी के लिए शरण है, उससे डरो मत। (गा. १६८१)

सीसो पडिच्छओ वा,आयरिओ वा न सोग्गती नेति।
जे सच्चकरणजोगा, ते संसारा विमोएंति।।
शिष्य या आचार्य किसी को सुगति प्राप्त नहीं करा सकते। सुगति प्राप्त होती है अपनी ही कथनी और करनी की समानता से। (गा. १६८२)

जे सच्चकरणजोगा, ते संसारा विमोएंति।
जिनकी कथनी और करनी समान होती है, वे ही संसार से मुक्त होते हैं। (गा. १६८४)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सीसे कुलव्विए गणव्विय संघव्विए य समदरिसी।
ववहारसंथवेसु य, सो सीतघरोवमो संघो।।

वह संघ शीतगृहतुल्य है—जो कुल, गण, संघ से संबंधित सभी शिष्यों तथा पूर्वसंस्तुत, पश्चानुसंस्तुत और अन्य शिष्यों के प्रति समदर्शी होता है। (गा. १६८६)

नाण-चरणसंघातं, रागद्दोसेहि जो विसंघाते।
सो भमिही संसारे, चउरंगंतं अणवदग्गं।।

जो मुनि रागद्वेष के वशीभूत होकर ज्ञान और चारित्र के संघात का विघटन करता है, वह चतुर्गत्यात्मक संसार में अनन्तकाल तक भ्रमण करता है। (गा. १६८६)

दुक्खेण लभति बोधिं, बुद्धो वि य न लभते चरित्तं तु।
उम्मग्गदेसणाए, तित्थगरासायणाए य।।

जो व्यक्ति उन्मार्ग की प्ररूपणा करता है, वह तीर्थंकरों की आशातना करता है। उसके लिए बोधि की प्राप्ति दुर्लभ होती है। उसे बोधि की प्राप्ति हो जाने पर भी चारित्र की प्राप्ति नहीं हो सकती। (गा. १६६०)

इहलोए य अकित्ती, परलोए दुग्गती धुवा तेसिं।
अणाणाए जिणिंदाणं, जे ववहारं ववहरंति।।

जो वीतराग की आज्ञा के विपरीत व्यवहार करते हैं, उनकी इहलोक में अकीर्ति और परलोक में दुर्गति होती है। (गा. १७०३)

इहलोगम्मि य कित्ती, परलोगे सोग्गती धुवा तेसिं।
आणाए जिणिंदाणं, जे ववहारं ववहरंति।।

जो जिनेश्वरदेव की आज्ञा के अनुसार व्यवहार करते हैं, उनकी इहलोक में कीर्ति और परलोक में सुगति होती है। (गा. १७०७)

न हु गारवेण सक्का, ववहरिउं संघमज्झयारम्मि।
नासेति अगीतत्थो,अप्पाणं चेव कज्जं तु।।

संघ में रहता हुआ अगीतार्थ मुनि अहं से अपना व्यवहार नहीं चला सकता। वह अपने ही कार्य का नाश कर डालता है। (गा. १७२३)

नासेति अगीयत्थो, चउरंगं सव्वलोए सारंगं।
नट्ठम्मि उ चउरंगे, न तु सुलभं होति चउरंगं।।

अगीतार्थ मुनि सर्वलोक में सारभूत चतुरंग (मानुषत्व, श्रुति, श्रद्धा और संयम) का नाश कर देता है। चतुरंग का नाश होने पर उसकी पुनः प्राप्ति सुलभ नहीं होती। (गा. १७२४)

आगाढमुसावादी, बितिय तईए य लोवितवते तु।
माई य पावजीवी, असुईलित्ते कणगदंडे।।

जो मुनि कुल, संघ तथा गण के कार्य में झूठ बोलता है, वह दूसरे-तीसरे—दोनों महाव्रतों को नष्ट कर देता है। वह मायावी और पापजीवी मुनि अशुचि से लिप्त स्वर्णदंड की भांति अस्पृश्य होता है। (गा १७२७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दोण्हं चउकण्णरहं,भवेज्ज छक्कण्ण मो न संभवति।

चार कानों (दो व्यक्तियों) तक रहस्य रहस्य रहता है। छह कानों (तीन व्यक्तियों) तक पहुंचने पर रहस्य रहस्य नहीं रहता। (गा. १८५२)

पुरिसोत्तरिओ धम्मो, होंति पमाणं पवयणम्मि।

जिन प्रवचन में पुरुषोत्तर धर्म ही प्रमाण है। (गा १८८६)

दुक्खं खु सामण्णं।

श्रामण्य का पालन दुष्कर है। (गा. २०३३)

इति खलु आणा बलिया. आणासारो य गच्छवासो उ।
मोत्तुं आणापाणुं, सा कज्जा सव्वहिं जोगे।।

भगवद् आज्ञा ही बलवान् है। आज्ञा का सार है गच्छ में रहना। आनापान को छोड़कर संघ में रहते हुए सब योगों से आज्ञा का पालन करना चाहिए। (गा. २०७४)

सुहसीलो दुट्ठसीलो त्ति।

जो सुखशील होता है, वह अधम होता है। (गा. २१६७)

तणुगं पि नेच्छए दुक्खं, सुहमाकंखए सदा।
सुहसीलतए वावी, सायागारवनिस्सितो।।

सुखशील व्यक्ति तनिक भी कष्ट नहीं सह सकता। वह सदा सुखाकांक्षी बना रहता है। (गा. २१६८)

अतिरेगउवधिअधिकरणमेव सज्झाय-झाण पलिमंथो।

अतिरिक्त उपधि का संग्रह कलह का कारण और स्वाध्याय-ध्यान का अवरोधक होता है। (गा. २१७६)

न संचये सुहं अत्थि, इहलोए परत्थ य।

संचय—परिग्रह से न इहलोक में सुख है और न परलोक में। (गा. २४१५)

वंतं निसेवितं होति, गेण्हंता संचयं पुणो।

जो प्रव्रजित होकर संचय करते हैं, वे वान्त या त्यक्त का पुनरासेवन करते हैं। (गा. २४२१)

मिच्छत्तं न जधावादी, तधाकारी भवंति उ।

मिथ्यादृष्टि व्यक्ति की कथनी-करनी समान नहीं होती। (गा. २४२१)

दुल्लभलाभा समणा।

श्रमणों का सान्निध्य दुर्लभ है। (गा. २४५१)

चरणकरणस्स सारो, भिक्खायरिया तधेव सज्झाओ।
एत्थ परितम्ममाणं, तं जाणसु मंदसंविग्गं।।
चरणकरणस्स सारो, भिक्खायरिया तधेव सज्झाओ।
एत्थ उ उज्जममाणं, तं जाणसु तिव्वसंविग्गं।।

चरण-करण-महाव्रतों के पालन का सार है—संयम और स्वाध्याय करना। जो इसमें परितप्त होता है, उसका वैराग्य मंद है। जो संयम और स्वाध्याय में प्रयत्नशील रहता है, उसका वैराग्य तीव्र होता है। (गा. २४८४, २४८५).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आणाबलाभियोगा निग्गंथाणं न कप्पए काउं।

निर्ग्रन्थ बलाभियोग न करे। (गा. २५२१ टी. प. १२)

सीउण्हसहा भिक्खू।

भिक्षु वह है, जो अनुकूल और प्रतिकूल को सहन करता है। (गा. २५४०)

पूयंति य रक्खंति य, सीसा सव्वे गणिं सदा पयता।
इध परलोए य गुणा, हवंति तप्पूयणे जम्हा।।

शिष्य गुरु की सदा पूजा करने में प्रयत्नशील रहते हैं। पूजा का परिणाम है---इहलोक और परलोक में गुणों की वृद्धि। (गा. २५६६)

वेयावच्चं करेमाणे महानिज्जरे महापज्जवसाणे भवति।

जो सेवा करता है, वह महानिर्जरा (बद्धकर्मों का निर्जरण) और महापर्यवसान (नए कर्मों का अबंध) करता है। (गा. २५६६ टी. प. २२)

महतीय निज्जराए,वट्टति साधू दसविहम्मि।

सेवा से महान् निर्जरा होती है। (गा. २६३२)

जो सो मणप्पसादो, जायति सो निज्जरं कुणति।

संयम की साधना में जितना मनःप्रसाद होता है, उतनी ही कर्मों की निर्जरा होती है। (गा. २६३६)

गुरुअणुकंपाए पुण, गच्छो अणुकंपितो महाभागो।
गच्छाणुकंपयाए अव्वोच्छित्ती कया तित्थे।।

गुरु की अनुकम्पा से गच्छ की अनुकम्पा होती है और गच्छ की अनुकम्पा से तीर्थ की अव्युच्छित्ति---निरन्तरता बनी रहती है। (गा. २६७२)

संतगुणुक्कित्तणया, अवण्णवादीण चेव पडिघातो।
अवि होज्ज संसईणं, पुच्छाभिगमे दुविध लंभो।।

सद्गुणों के कीर्तन से अनेक लाभ होते हैं---महान् निर्जरा, अवर्णवाद का प्रतिघात, शंकाशील व्यक्तियों द्वारा शंका-निवारण, शंका-निवृत्त होने पर प्रव्रज्या-ग्रहण इत्यादि। (गा. २६८१)

जसं समुवजीवंति, जे नरा वित्तमत्तणो।

यश की प्राप्ति शील से होती है। (गा. २७५१)

लोए लोउत्तरे चेव, गुरवो मज्झ सम्मता।
मा हु मज्झावराहेण, होज्ज तेसिं लहुत्तया।।

इस लोक और लोकोत्तर में मेरे लिए गुरु ही सम्मत हैं। मेरी भूल से उनकी लघुता न हो, यही मेरे लिए श्रेयस्कर है। (गा. २७५४)

तणाण लहुतरो होहं, इति वज्जेति पावगं।

यदि मैं पापाचरण करूंगा तो तृण से भी लघुतर हो जाऊंगा, इसलिए मुझे पापाचरण नहीं करना चाहिए। (गा. २७५५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आयसक्खियमेवेह, पावगं जो वि वज्जते।

आत्मसाक्षी से पाप का वर्जन करो। (गा. २७५६)

अप्पेव दुट्ठसंकप्पं, रक्खा सा खलु धम्मतो।।

आत्मा के दुष्ट संकल्प का धर्माचरण से निवारण करना चाहिए। (गा. २७५६)

निस्सग्गुस्सग्गकारी य, सव्वतो छिन्नबंधणो।
एगो वा परिसाए वा, अप्पाणं सोऽभिरक्खति।।

जो स्वभावतः उत्सर्गकारी और सर्वथा ममत्वरहित है, वह चाहे अकेला हो या भीड़ में, वह अपनी आत्मा का संरक्षण कर लेता है। (गा. २७५७)

परिणामाणवत्थाणं, सति मोहे उ देहिणं।
तस्सेव उ अभावेण, जायते एगभावया।।

मोह की विद्यमानता में परिणामों की अस्थिरता होती है। मोह के अभाव में परिणामों की एकरूपता होती है। (गा. २७५६)

जधावचिज्जते मोहो, सुद्धलेसस्स झाइणो।
तहेव परिणामो वि, विसुद्धो परिवड्ढते।।

शुद्ध लेश्या वाले ध्यानी का मोह जैसे-जैसे तनु होता जाता है, वैसे-वैसे उसके परिणामों की विशुद्धि बढ़ती जाती है। (गा. २७६०)

जधा य कम्मिणो कम्मं, मोहणिज्जं उदिज्जति।
तधेव संकिलिट्ठो से, परिणामो विवड्ढती।।

जब मोह कर्म प्रबल होता है, तब आत्मा के संक्लिष्ट परिणामों की वृद्धि होती है। (गा. २७६१)

जधा य अंबुनाधम्मि, अणुबद्धपरंपरा।
वीई उप्पज्जई एवं, परिणामो सुभासुभो।।

जैसे समुद्र में स्वभावतः लहरें उत्पन्न होती हैं, वैसे ही जीव में शुभ-अशुभ परिणाम उत्पन्न होते रहते हैं। (गा. २७६२)

विसुज्झंतेण भावेण, मोहो समवचिज्जति।

भावों की विशुद्धि से मोह कर्म का अपचय होता है। (गा. २७६७)

मोहस्सावचए वावि, भावसुद्धी वियाहिया।।

मोह कर्म का अपचय होने पर भावों की विशुद्धि होती है। (गा. २७६७)

उक्कड्ढंतं जधा तोयं, सीतलेण झविज्जती।
गदो वा अगदेणं तु, वेरग्गेण तहोदओ।।

उबलते हुए पानी में शीतल जल के छींटे देने से वह शान्त हो जाता है, रोग औषधि से शांत हो जाता है, वैसे ही मोह का उदय वैराग्य से उपशान्त हो जाता है। (गा. २७६८)

नाणचरणतो सिद्धी

ज्ञान और चारित्र से सिद्धि होती है। (गा. २८३०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवराहो गुरु तासिं,.... जं निट्ठुरमुत्तरं बेंति।

उनका अपराध गुरु होता है, जो गलती बताने पर निष्ठुर उत्तर देते हैं (गा. २८४७)

सुद्धस्स होति चरणं, मायासहिते चरणभेदो।

चारित्र शुद्ध व्यक्ति में ठहरता है। माया से चारित्र खंडित हो जाता है। (गा. २६०२)

कलुसप्पा करे पावं।

पाप वह करता है, जिसका मन कलुषित होता है। (गा. २६८६)

नवणीयतुल्लहियया साहू।

साधुओं का हृदय नवनीत के समान कोमल होता है। (गा. २६६८)

पुरिसस्स निसग्गविसं इत्थी एवं पुमं पि इत्थीए।

पुरुष के लिए स्त्री और स्त्री के लिए पुरुष सहज विष है। (गा. ३०३०)

घाण-रस-फासतो वा, दव्वविसं वा सइंऽतिवाएति।
सव्वविसयाणुसारी, भावविसं दुज्जयं असइं।।

द्रव्य विष प्राणी को एक बार ही मारता है। भाव विष प्राणी को अनेक बार मारता है। द्रव्य विष घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय या स्पर्शेन्द्रिय से गृहीत होता है। भाव विष समस्त इन्द्रियग्राही है। (गा. ३०३१)

जदि नत्थि नाण चरणं, दिक्खा हु निरत्थिगा तासिं।

यदि ज्ञान और चारित्र नहीं है तो वह दीक्षा निरर्थक है। (गा. ३०४८)

सव्वजगुज्जोतकरं नाणं।

ज्ञान सम्पूर्ण जगत् को प्रकाशित करने वाला है। (गा. ३०४६)

नाणेण नज्जते चरणं।

ज्ञान से चारित्र जाना जाता है। (गा. ३०४६)

नाणम्मि असंतम्मी, किह नाहिति विसोहिं।

ज्ञान के अभाव में विशोधि नहीं जानी जा सकती। (गा. ३०४६)

नाणम्मि असंतम्मि, चरित्तं पि न विज्जते।
चरित्तम्मि असंतम्मि, तित्थे नो सचरित्तया।।

जहां ज्ञान नहीं, वहां चारित्र नहीं। जहां चारित्र नहीं, वहां सद्चरित्र वाला तीर्थ नहीं होता। (गा. ३०५०)

णाणादिसारहीणस्स, तस्स छलणा तु संसारे।

जो ज्ञान-दर्शन आदि के सार से शून्य है, उसका सारा व्यवहार छलना है। (गा ३१०५)

न हि सूरस्स पगासं, दीवपगासो विसेसेति।

दीपक का प्रकाश सूर्य के प्रकाश को विशेषित नहीं करता। (गा. ३८८४)

जो एतेसु न वट्टति, कोधे दोसे तधेव कंखाए।
सो होति सुप्पणिहितो, सोभणपणिधाणजुत्तो वा।।

जो क्रोध, द्वेष तथा कांक्षा में प्रवर्तित नहीं होता, वह इन्द्रियजयी और आत्मप्रणिधानवान् होता है। (गा. ४१५५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पायच्छित्ते असंतम्मि, चरित्तं पि न वट्टति।
प्रायश्चित्त के अभाव में चारित्र नहीं होता। (गा. ४२१५)

अचरित्ताय तित्थस्स, निव्वाणम्मि न गच्छति।
चारित्र के अभाव में निर्वाण नहीं मिलता। (गा. ४२१६)

निव्वाणम्मि असंतम्मि, सव्वा दिक्खा निरत्थया।
निर्वाण के अभाव में दीक्षा निरर्थक है। (गा. ४२१६)

इंदियाणि कसाए य, गारवे य किसे कुरु।
न चेयं ते पसंसामी, किसं साधुसरीरगं।।
आचार्य ने कहा—वत्स ! तुम अपनी इन्द्रियों को जीतो, कषायों को तनु करो और तीन प्रकार के गौरव से मुक्त बनो। शरीर को कृश करने मात्र से कुछ नहीं होगा। (गा. ४२६४)

जह बालो जंपंतो, कज्जमकज्जं च उज्जुयं भणति।
तं तह आलोएज्जा, माया-मदविप्पमुक्को उ।।
बालक ऋजुता से अपना कार्य-अकार्य बता देता है। बालक की भांति माया और अहं से शून्य होकर दोषों की आलोचना करना ही श्रेयस्कर है। (गा. ४२६६)

भुत्तभोगी पुरा जो तु, गीतत्थो वि य भावितो।
संतेमाहारधम्मेसु, सो वि खिप्पं तु खुब्भते।।
भुत्तभोगी, चाहे फिर वह गीतार्थ और भावितात्मा ही क्यों न हो, आहार आदि भुक्त विषयों को देखकर क्षुब्ध हो जाता है। (गा. ४३१८)

वेरग्गमणुप्पत्तो, संवेगपरायणो होति।
जो विरक्त होता है, वह संवेगपरायण होता है। (गा. ४३३०)

कम्ममसंखेज्जभवं, खवेति अणुसमयमेव आउत्तो।
अन्नतरगम्मि जोगे, सज्झायम्मी विसेसेण।।
जो संयम योग के किसी भी प्रकार में प्रयत्नशील होता है, वह असंख्य भवों के कर्मों को प्रतिसमय क्षीण करता है किन्तु जो स्वाध्याय करता है, वह विशेष निर्जरा करता है। (गा. ४३३८)

कम्ममसंखेज्जभवं, खवेति अणुसमयमेव आउत्तो।
अन्नतरगम्मि जोगे, काउस्सग्गे विसेसेण।।
जो संयम योग के किसी भी प्रकार में प्रयत्नशीन होता है, वह असंख्य भवों के कर्मों को प्रतिसमय क्षीण करता है किन्तु जो कायोत्सर्ग करता है, वह विशेष निर्जरा करता है। (गा. ४३३९)

कम्ममसंखेज्जभवं, खवेति अणुसमयमेव आउत्तो।
अन्नतरगम्मि जोगे, वेयावच्चे विसेसेण।।
जो संयम योग के किसी भी प्रकार में प्रयत्नशील होता है, वह असंख्य भवों के कर्मों को प्रतिसमय क्षीण करता है किन्तु जो सेवा करता है, वह विशेष निर्जरा करता है। (गा. ४३४०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कम्मसंखेज्जभवं, खवेति अणुसमयमेव आउत्तो।
अन्नतरगम्मि जोगे, विसेसत्तो उत्तिमट्ठम्मि।।

जो संयम योग के किसी भी प्रकार में प्रयत्नशील होता है, वह असंख्य भवों के कर्मों को प्रतिसमय क्षीण करता है किन्तु जो संथारा करता है, वह विशेष निर्जरा करता है। (गा. ४३४१)

जिणवयणमप्पमेयं मधुरं।

वीतराग की वाणी अपरिमित और मधुर होती है। (गा. ४३५१)

आहाराओ रतणं, न विज्जति हु उत्तमं लोए।

लोक में आहार से उत्तम कोई रत्न नहीं है। (गा. ४३५६)

सव्वे सव्वावत्थं, आहारे होंति उवउत्ता।

सभी प्राणी सभी अवस्थाओं में आहार लेते हैं। (गा. ४३५७)

न यावि चरणं विणा नाणं।

ज्ञान के बिना चारित्र नहीं होता। (गा. ४६३८)

ऊणट्ठए चरित्तं, न चिट्ठए चालणीयं उदगं वा।

लघु वय वाले व्यक्ति में चारित्र नहीं ठहरता, जैसे चालनी में पानी। (गा. ४६४६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्य ग्रंथों से तुलना

अ

३६६	अउणासीतं ठवणाण	निभा. ६४५८
३३६८	अंगुट्ठपोरमेत्ता	निभा. १२२७
३१३८	अंडगमुज्झितकप्पे	निभा. ६१०६, आवभा. २१६
३१३५	अंतो पुण सड्ढीणं	आवनि. १३५२, १३५३, निभा. तु. ६१०२, ६१०३
३१३७	अंतो बहिं च भिन्नं	आवनि. १३५४, निभा. ६१०५
२२५७	अंतो मुहुत्तकालं	पंकभा. १०३६
३४०७	अंतोवस्सयबाहिं	निभा. १२३५
४२५५	अंतो वा बाहिं वा	जीभा. ३६०
६०५	अकतकरणा वि दुविधा	निभा. ६६५०
६११	अकयकरणा उ गीता	निभा. ६६५८
३१८६	अकरण निसीहियादी	निभा. तु. ६१३६ ओनि. तु. ६५३
१०६६	अगडे पलाय मग्गण	बृभा. ६२१७
२३५६	अगडे भाउय तिल तंदुले	निभा. २१५०
४४६	अगारिए दिट्ठंतो	निभा. ६५११
४६६	अग्गघातो हणे मूलं	निभा. ६५३१
४२५१	अग्गीतसगासम्मी	जीभा. ३५६
४२१६	अचरित्ताय तित्थस्स	जीभा. ३१६, निभा. ६६७६ पंकभा तु. २३१३
३२२२	अच्चाउलाण निच्चोउलाण	निभा. ६१६५
१६३	अचित्ता एसणिज्जा य	निभा. ६२७६
१२१८	अच्छउ महाणुभागो	बृभा. ५०४५, जीभा. २५६४
३१३६	अजरायु तिण्णि पोरिसि	निभा. ६१०७, आवभा. २२०
३६५३	अज्जेव पाडिपुच्छं	निभा. ४५८३
४२६०	अज्जो संलेहो ते	जीभा. ३६६, ४००
३४०५	अज्झुसिरमविद्धमफुडिय	निभा. १२३३
३४०६	अज्झुसिरमादीएहिं	निभा. १२३४
११६६	अट्ठं वा हेउं वा	बृभा. ६२८२
४८६	अट्ठट्ठ उ अवणेत्ता	निभा. ६५४८
४२४५	अट्ठम दसम दुवालस	जीभा. ३४८
४०८०	अट्ठविहा गणिसंपय	जीभा. १६०
४१५७	अट्ठहिं अट्ठारसहिं	जीभा. २४२
४१५६	अट्ठायार व मादी	जीभा. २४४
४०७०-७३	अट्ठारसेहिं ठाणेहिं	जीभा. १५०-५३
२२७३	अट्ठावीसं जहण्णेण	पंकभा तु. १०६३
२८६	अणणुण्णमणुण्णाते	निभा. ६३६४
२६२	अणण्णुणाते लहुगा	निभा. ६३६७
४२८२	अणपुच्छाय गच्छस्स	जीभा. ३८६
४२००	अणमप्पेण कालेण	जीभा. २६८
४०८६	अणिययचारि अणिययवित्ती	जीभा. १६६
५५६	अणुकंपिता च चत्ता	निभा. ६६०२
४०५	अणुघातियमासाणं	निभा. ६४६६
१६६६	अणुमाणेउं संघं	पंकभा. २३३३
४४०३	अणुलोमा पडिलोमा	निभा. ३६५०, जीभा. ५२५
११७६	अणुसट्ठिं उच्चरती	बृभा. ६२६१
५६१	अणुसट्ठीय सुभद्दा	निभा तु. ६६०६
११८२	अणुसास कहण ठवितं	बृभा. ६२६३
११६५	अणुसासण भेसणया	बृभा. तु. ६२७८
४३६०	अणुपुव्विविहारीणं	जीभा. ५१०
११५८	अणुसासितम्मि अठिते	बृभा. ६२७२
२६५	अण्णपडिच्छण लहुगा	निभा. ६३६६
३१३०	अण्णवसहीय असती	आवनि. १३४८, निभा. तु. ६०६८
४२४३	अण्णा दोन्नि समाओ	जीभा. ३४६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२७०	अण्णो जस्स न जायति	पंकभा.१०५६
३६३६	अतरंतस्स अदेंते	निभा. ४५६६
४३२	अतिक्कमे वतिक्कमे	निभा. ६४६७
३६१६	अतिरेग दुविधकारण	निभा. ४५४६
३६७०	अत्तट्ठ परट्ठा वा	निभा. तु. ४६००
४१६६	अत्थं पडुच्च सुत्तं	जीभा. २६४
३४०२	अत्थरणवज्जितो तू	निभा. तु. १२३०
३६५१	अत्थि हु वसहग्गामा	बृभा. ४८५१
३२२	अत्थुप्पत्ती असरिसे	निभा. ६३६७
११७३	अत्थेण जस्स कज्जं	बृभा. ६२८६
४१४३	अद्दिट्ठं दिट्ठं खलु	जीभा. २२६
३७०१	अद्धमसणस्स सव्वं	पंकभा.७४१
३६३८	अद्धाण ओम असिवे	निभा. ४५६८
३६०२	अद्धाणे गेलण्णे	निभा. ४५३३
३६३७	अद्धाणे बालवुड्ढे	निभा.४५६७
३४०३	अधवा अझुसिरगहणे	निभा. १२३१
५७६	अधवाऽजत पडिसेवि त्ति	निभा. ६६२३
४२५७	अधवा वि सव्वरीए	जीभा. ३६२
४४५६	अध सो गतो उ तहियं	जीभा. ५८३
४१२२	अधागुरू जेणं पव्वावितो	जीभा. २०४
२४६	अधिकरण विगतिजोगे	निभा. ६३२७
११६६	अधिकरणम्मि कतम्मि	बृभा. ६२७६
३१८४	अन्नं व दिसज्झयणं	निभा. तु. ६१३७, आवनि. १३८१
४०५८	अन्नतरपमादेणं	जीभा. १३६
२२५	अन्ना वि हु पडिसेवा	निभा.६३०७
३००	अन्नेण पडिच्छावे	निभा. ६३७४
४४४०	अपरक्कमो तवस्सी	जीभा. ५६८
४४३६	अपरक्कमो मि जातो	जीभा. ५६७
४४४३	अपरक्कमो य सीसं	जीभा. ५७०
११७५	अपरिग्गहगणियाए	बृभा.६२८६
४२८५	अपरिच्छणम्मि गुरुगा	जीभा. ३६२
४१००	अपरीणामगमादी	जीभा. १८१
३६७७	अपहुच्चंते काले	निभा. ४६०८
५०६	अप्पमलो होति सुची	निभा. ६५६४
२३८	अप्पा मूलगुणेसुं	निभा. ६३१६
१४१६	अबहुस्सुते अगीतत्थे	बृभा. ७०३
१२२८	अब्भत्थितो व रण्णा	बृभा. ५०५४, जीभा. २५७५
३२३२	अब्भिंतरमललित्तो	आवनि.१४१०, निभा. ६१७३
२२६१	अब्भुज्जतमचएंतो	पंकभा.१०४५
६७	अब्भुट्ठाणं अंजलि	दशनि. २६८
४३८८	अभिघातो वा विज्जू	जीभा. ५०७
१२१६	अभिधाणहेतुकुसलो	बृभा. ५०४६, जीभा.२५६५
११६३	अभिभवमाणो समणं	बृभा. तु. ६२७७
३०७	अमणुण्णधन्नरासी	निभा. ६३८१
४५३४	अमुगो अमुगत्थ कतो	जीभा. ६७६
१०६५	अम्हं एत्थ पिसाओ	बृभा. ६२१३
२७६	अलसं भणंति बाहिं	निभा. ६३५६
४५१३	अल्लीणा णाणादिसु	जीभा. ६६५
१०८७	अवधीरितो व गणिणा	बृभा. ६२०५
४०५४	अवराहं वियाणंति	जीभा.१३०
४३५४	अवसेसा अणगारा	निभा. ३६१७, जीभा.४७०
५५५	अवसो व रायदंडो	निभा.६६०१
२६४	अविगिट्ठ किलम्मंतं	निभा. ६३६८
५६३	अवि य हु विसोधितो ते	निभा.६६०८
३२८	अवि य हु सुत्ते भणियं	निभा. ६४०३
५४३	अविसिट्ठा आवत्ती	निभा.६५८६
१६०	अविहिंस बंभचारी	निभा. ६२७६
४०६७	अव्वत्तं अफुडत्थं	जीभा.१७८
४२८४	असंथरं अजोग्गा वा	निभा. ३८५१, जीभा.३६१
४२६५	असंविग्गसमीवे वि	जीभा. ३७०
३१०१	असज्झायं च दुविधं	आवनि.१३२२, निभा.६०७४
४०१	असमाही ठाणा खलु	निभा.६४६३
३३६६	असिवादिकारणगता	निभा. १२२५
३६४७	असिवादी कारणिया	निभा. ४५७७
४२७६	असिवादीहि वहंता	निभा तु. ३८४७, जीभा. ३८६
३१४८	असिवोमाघतणेसुं	निभा.६११४, आवनि.१३५६
२३१	अहगं च सावराधी	निभा. ६३१०
३१६८	अह पुण निव्वाघातं	आवनि.१३७२, ओनि ६४२, निभा. तु. ६१२८
४२८८	अह पुण विरूवरूवे	जीभा.३६६
२०६	अहरत्त सत्तवीसं	निभा. ६२८४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४०६६ अहवा अफरुसवयणो जीभा.तु. १७६, १७७
१६१ अहवा एसणासुद्धं निभा. ६२७७
४०४४ अहवा कायमणिस्स उ जीभा. ११६
४५१५ अहवा जेणऽण्णइया जीभा. ६६८
५६७ अहवाऽणुसट्ठुवालंभु निभा. ६६१२
४३०७ अहवा तिगसालंबेण निभा. ३८७१, जीभा. ४२०
३२०६ अहवा षढमे सुद्धे आवनि.तु. १३६७
११४१ अहवा भयसोगजुतो बृभा. ६२५७
४५८ अहवा महानिहिम्मी निभा. ६५२६
४५६ अहवा वणिमरुएण य निभा. ६५२२
६०६ अहवा साविक्खितरे निभा. ६६५१
३१५७ अहियासिया य अंतो आवनि. १३६३, ओनि. ६३३, निभा. ६११६

आ

३२३३ आउट्टियावराहं आवनि. १४११, निभा. ६१७४
२३५७ आगंतु तदुत्थेण व निभा. २१५१
४०२६ आगमतो ववहारो जीभा. ६
३६३० आगमगमकालगते निभा. ४५६०
४०५१ आगमववहारी छव्विहो जीभा.तु. १२५, १२६
३१८ आगमसुतववहारी निभा. ६३६३
१७२७ आगाढमुसावादी पंकभा.तु. २३६१
३२३ आगारेहि सरेहि य निभा. ६३६८
२३०१ आगासकुच्छिपूरो पंकभा. ११०१
४६७ आततरमादियाणं निभा. ६५५६
३२२३ आतसमुत्थमसज्झाइयं आवनि. १४०३, निभा. ६१६६
४०३४ आदिगरा धम्माणं जीभा. १०८, १११
११३८ आदिट्ठ सड्ढकहणं बृभा. ६२५५
४०६५ आदेज्जमधुरवयणो जीभा. १०५
३४२० आभिग्गहियस्सऽसती निभा. १२४६
४२४६ आयंबिलउसिणोदेण जीभा. ३५०
४८० आयतर-परतरे या निभा. ६५४०
४३६२ आयप्परपडिकम्मं निभा. ३६३७, जीभा. ५१३
७२० आयरिए अभिसेगे निभा. ६०२०
५८६ आयरिए कह सोधी निभा. ६६२८
३६२१ आयरिए भणाहि तुमं निभा. ४५५२
५६८ आयरिओ केरिसओ निभा. ६६१३
४०८५ आयरिओ बहुस्सुतो जीभा. १६५
१७१५ आयरियअणादेसा पंकभा. २३७७
२१७ आयरिय उवज्झाए निभा.तु. ६२६६
२१६,
४२६५ आयरियपादमूलं निभा. ३८५६, जीभा. ४०८
१६६ आयरियादी तिविधो जीभा.तु. २२०५
१७१४ आयरियादेसऽवधारितेण पंकभा. २३७६
४३०१ आयारविणयगुणकप्प निभा. ३८६५, मूला. ३८७, जीभा. ४१३, पंकभा. १३१०
४०८३ आयारसंपयाए जीभा. १६३
४०८१ आयारसुत-सरीरे जीभा. १६१
१६७४ आयारे वट्टंतो पंकभा. २३४०
४१३२ आयारे विणओ खलु जीभा. २१४
४१३१ आयारे सुत विणए जीभा. २१३
४४८८ आराहेउं सव्वं जीभा.तु. ६३७
३६२ आरोवण उद्दिट्ठा निभा. ६४३८
३५६ आरोवणा जहन्ना निभा. ६४३५
४०६१ आरोह परीणाहो जीभा.तु. १७१
४०६२ आरोहो दिग्घत्तं जीभा. १७२
५५० आलावण पडिपुच्छण निभा. ६५६६, १८८७, २८८१, बृभा. ५५६८, जीभा. २४४०
२१८ आलीढ-पच्चलीढे ६३००
३२१६ आलोगम्मि चिलिमिणी आवनि. १४०१, निभा. ६१६२
३०२ आलोयण तह चेव य निभा. ६३७६
५८५ आलोयण त्ति य पुणो निभा. ६६२७
४१८० आलोयण पडिकमणे जीभा. २७४
४१५८ आलोयणागुणेहिं जीभा. २४३
२३३ आलोयणापरिणतो निभा. ६३१२
५१८ आलोयणारिहालोयओ निभा. ६५७६
४१६२ आलोयणा विवेगे य जीभा. २८६
४१८७ आलोयणा विवेगो य जीभा. २८४
५२४ आलोयणाविहाणं निभा. ६५७८
४०५२ आलोय-पडिक्कंतस्स जीभा.तु. १२७
४६६ आवण्णो इंदिएहिं निभा. तु. ६५५८
८८४ आवस्सगं अणियतं निभा. ४३४७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६६ आवस्सग पडिलेहण निभा. ६३४३
८८३ आवस्सग-सज्झाए निभा. तु.४३४६
३१६२ आवस्सय काऊणं आवनि.१३६८, ओनि. ६३८, निभा. ६१२४
२५४ आवस्सिया पमज्जण निभा.६३३२
२२६८ आसन्न खेत्तकाले पंकभा. १०६५
१६८१ आसासो वीसासो पंकभा. २३४६
१२१३ आहरति भत्तपाणं बृभा. ५०३८, जीभा. २५५८
४२६७ आहाकम्मिय पाणग निभा. ३८३५, जीभा. ३७२
११०४ आहार-उवहि-सेज्जा बृभा. ६२२२
२२७६ आहारे जतणा वुत्ता पंकभा. १०७५
४३३४ आहारे ताव छिंदाहि निभा. ३८६८, जीभा. ४५०

इ

४३१६ इंदियपडिसंचारो निभा. ३८७८, जीभा. ४२६
३१६५ इंदियमाउत्ताणं आवनि.१३८८, ओनि.६५६, निभा. ६१४६
४२६४ इंदियाणि कसाए य निभा.३८५८, जीभा. ४०६
४००६ इच्चेसो पंचविहो पंकभा. तु. २४६३
११२४ इति एस असम्माणो बृभा. ६२४२
४२११ इय अणिवारितदोसा जीभा.३१०
१६४८ इय पवयणभत्तिगतो दश्रुनि.३०, पंकभा. १६१६
४०४५ इय मासाण बहूण वि जीभा. १२०
३१६० इरियावहिया हत्थंतरे आवनि.१३८३, ओनि.६५४, निभा. ६१४१
५८४ इस्सरसरिसो उ गुरू निभा.६६२६
३२३७ इहलोए फलमेयं निभा.६१७८, आवनि.१४१५
१७०३ इहलोए य अकित्ती पंकभा. २३६६
१७०७ इहलोगम्मि य कित्ती पंकभा. २३७०

उ

८८६ उउबद्धपीढफलगं निभा. ४३४८
११३७ उक्कोसबहुविहीयं बृभा. तु. ६२५४
४८८ उक्कोसा उ पयाओ निभा. ६५४६
४२३८ उक्कोसा य जहन्ना जीभा. तु ३४१
४२४६ उक्कोसिगा उ एसा जीभा. ३५४
३४७२ उग्गममादी सुद्धो निभा. तु १२७५
४१०६ उग्गहियस्स उ ईहा जीभा. १६०
६०१ उग्घातमणुग्घातं निभा.६६४५
३४६ उग्घातमणुग्घाते निभा. ६४२१
४८६ उग्घातियमासाणं निभा. ६५४४
४३१५ उज्जाणरुक्खमूले निभा.३८७६, जीभा. ४२८
४०३३ उज्जुमती विउलमती जीभा.८६, ११०
५५४ उड्डेज्ज निसीएज्जा निभा. ६६००, २८८५, जीभा.२४५४
२०७ उडुमासे तीसदिणा निभा. ६२८५
३८०३ उण्होदगे य थोवे निभा. ४८३
३१४ उत्तदिणसेसकाले निभा.६३८८
४६४ उत्तरगुणातियारा निभा.६५२६
११२६ उत्तरतो हिमवंतो निभा.१५७१, बृभा. ६२४७
१६६२ उद्दिट्ठमणुद्दिट्ठे निभा. ४५६३
४५०३ उद्धारणा विधारण जीभा. ६५५
३४३ उद्धियदंडगिहत्थो निभा. ६४१७
३४२ उद्धियदंडो साहू निभा. ६४१६
४३६ उप्पत्ती रोगाणं निभा.६५०४
४३०० उप्पन्ना उप्पन्ना निभा.३८६४
४३६८ उप्पन्ने उवसग्गे निभा ३६४५, जीभा. ५२३
४३६५ उप्पिंडितुं सो कणगो जीभा. ४८१
१२१४ उभयं पि दाऊण सपाडिपुच्छं बृभा. ५०३६, जीभा. २५५५
१६६१. उम्मग्गदेसणाए पंकभा.२३५६
१७१७. उम्मग्गदेसणाए पंकभा.२३७६
११४७ उम्माओ खलु दुविहो बृभा. ६२६३
३२३६ उम्मायं च लभेज्जा आवनि.१४१४, निभा. ६१७७
४२३४ उवगरणगणनिमित्तं जीभा.३३६
४३६८ उवगरणेहि विहूणो जीभा.४८४
४२५ उवरिं तु पंचभइए निभा.६४६०
३६७६ उवहतउग्गहलंभे निभा. ४६०७
२३५२ उवहि सुत भत्तपाणे निभा. २०७१, पंकभा.१४८६, २५११
४३२१ उव्वत्त दार संथार निभा.३८८४, जीभा.४३५
१०६७ उव्वरगस्स उ असती बृभा. ६२१५
४५४५ उस्सण्ण बहू दोसे जीभा. ६६०

८६१ उस्सुत्तमणुवदिट्ठं निभा. ३४६२

ए

४२७० एक्कं व दो व तिन्नि व जीभा. ३७५, पंकभा. १७४५, निभा. ३८३८
४२६२ एक्कं व दो व तिन्नि व निभा. ३८३१, जीभा. ३६७, पंकभा. १७४३
२०८ एक्कतीसं च दिणा निभा. ६२८६
४२७३ एक्कम्मि उ निज्जवगे निभा. तु. ३८४१, जीभा. ३७८
४२०६ एक्कासण पुरिमड्ढा जीभा. ३०५
४२२६ एक्केक्कं तं दुविधं जीभा. ३२६
३२०६ एक्केक्क तिन्नि वारे निभा. ६१५७
४४० एक्केणेक्को छिज्जति निभा. ६५०५
४४१ एक्कोसहेण छिज्जंति निभा. ६५०६
३३६१ एगंगि अणेगंगी निभा. तु. १२२०
४४०५ एगंतनिज्जरा से निभा. ३६५२, जीभा. ५४१
४४१६ एगंतनिज्जरा से निभा. ३६६३, जीभा. ५५३
२५२ एगंतरनिव्विगती निभा. ६३३०
२४५ एगमणेगा दिवसेसु निभा. ६३२३
३५३ एगम्मि णेगदाणे निभा. ६४२६
४१३६ एगल्लविहारादी जीभा. २२१
४१३३ एगल्लविहारे या जीभा. २१५
३१६३ एगस्स दोण्ह वा संकितम्मि आवनि. १३८६, ओनि. ६५७, निभा. ६१४४
२७८ एगागिस्स न लब्भा निभा. ६३५५
२५८ एगागियं तु मोत्तुं निभा. ६३३६
३६५६ एगागियस्स सुवणे निभा. ४५६०
४४६ एगावराहदंडे निभा. ६५१३
४५३८ एगिंदिऽणंत वज्जे जीभा. ६८३
५०५ एगुत्तरिया घडछक्कएण निभा. ६५६३
५११ एगुत्तरिया घडछक्कएण निभा. ६५६६
६०३/१ एगूणवीसति विभासितस्स निभा. ६६४८
२५७ एगे अपरिणए वा निभा. तु. ६३३५, पंकभा. १२०२
३६४६ एगे उ पुव्वभणिते निभा. ४५७६
३१०८ एगेण तोसिततरो निभा. ६०८१, आवनि. १३२६
२६२ एगो गिलाण पाहुड ६३३६
३६३४ एगो निद्दिस एगं निभा. ४५६४
१०८२ एगो य तस्स भाया बृभा. ६१६६
४२८० एगो संथारगतो निभा. ३८४८, जीभा. ३८७
३४७ एत्थ पडिसेवणाओ निभा. ६४२२
५२८ एत्थ पडिसेवणाओ निभा. ६५८१
२६४ एतद्दोसविमुक्कं निभा. ६३४१
२६१ एतारिसं विउसज्ज निभा. ६३३८
१७०२ एते अकज्जकारी पंकभा. २३६५
४२६० एते अन्ने य तहिं निभा. ३८२६, जीभा. ३६५
४२६८ एते अन्ने य तहिं निभा. ३८३६, जीभा. ३७३
१७०६ एते उ कज्जकारी पंकभा. २३६६
१०६० एतेण जितो मि अहं बृभा. ६२०८
३२२० एतेसामण्णतरे आवनि. १४०२, निभा. ६१६३
३२२८ एतेसामण्णतरे आवनि. १४०७, निभा. ६१७०
११६७ एतेसिं असतीए बृभा. ६३०६
४०६१ एतेसिं ठाणाणं जीभा. १३६
४५०६ एतेसु धीरपुरिसा जीभा. ६६१
४३८६ एतेहि कारणेहिं जीभा. तु ५०८, ५०६
४१११ एत्तो उ पओगमती जीभा. १६२
४२५० एत्तो एगतरेणं जीभा. ३५५
५१७ एत्तो निकायणा मासियाण निभा. ६५७५
५७४ एत्तो समारुभेज्जा निभा. ६६१८
४५४१ एमादीओ एसो जीभा. ६८६
३६२६ एमेव अच्छिन्नेसु वि निभा. ४५५६
११६८ एमेव अणत्तस्स वि बृभा. तु. ६३०७
४३८१ एमेव आणुपुव्वी जीभा. ४६६
३६३५ एमेव इत्थिवग्गे निभा. तु. ४५६५
३६५० एमेव चेइयाणं निभा. ४५८०
४३०६ एमेव दंसणम्मि वि निभा. ३८७०, जीभा. ४१६
२६० एमेव दंसणे वी निभा. ६३६५
३०३ एमेव य अवराहे निभा. ६३७७
२१६६ एमेव य असहायस्स पंकभा. तु. १११०
४१७६ एमेव य पारोक्खी जीभा. २७३
३१५८ एमेव य पासवणे आवनि. १३६४, ओनि. ६३४, निभा. ६१२०
३२२७ एमेव य समणीणं आवनि. १४०६, निभा ६१६६
४३५६ एयं पादोवगमं निभा. ३६२२, जीभा. ४७५
४४६६ एयऽन्नतरागाढे जीभा. ६१५
४१६२ एयागमववहारी जीभा. २५४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११३० एयाणि य अन्नाणि य बृभा. ६२४८
४३१० एवं आलोयंतो जीभा. ४२३, निभा. ३८७४
३१६७ एवं आवासा सेज्जमादी आवनि. १३७२, ओनि. ६४२, निभा. ६१२८
३६० एवं एता गमिता निभा. ६४५२
३८५ एवं एता गमिया निभा. ६४४६
३६५ एवं एता गमिया निभा. ६४५७
४३२३ एवं खलु उक्कोसा निभा. ३८८६, जीभा. ४३७
४०० एवं खलु गमिताणं निभा. ६४६२
४२८ एवं खलु ठवणातो निभा. ६४६३
४५०१ एवं गंतूण तहिं जीभा. ६५३
४५५० एवं जहोवदिट्ठस्स जीभा. ६६५
४४६३ एवं ता उग्घाए जीभा. ६४४
३६६३ एवं ताव विहारे निभा. ४५८६
४१७२ एवं तु चोइयम्मी जीभा. २६३
४२१३ एवं तु भणंतेणं जीभा. ३१२
३३६ एवं तुमं पि चोदग निभा. ६४१४
४४८२ एवं तु मुसावाओ जीभा. ६३०
४३० एवं तु समासेणं निभा. ६४६५
४३७६ एवं तू णायम्मी निभा. तु ३६३५, जीभा. ४६६
४२१२ एवं धरती सोही जीभा. ३११
४४५५ एवं परिच्छिऊणं जीभा. ५८२
४४२६ एवं पादोवगमं जीभा. ५५७, निभा. ३६७५
४६३ एवं बारसमासा निभा. ६५५२
४१६३ एवं भणिते भणती जीभा. २५५
४२०८ एवं सदयं दिज्जति जीभा. ३०७
३६१० एवं सिद्धग्गहणं निभा. ४५४०
४४५० एवाऽऽणह बीयाइं जीभा. ५७७
४३७१ एवाहारेण विणा जीभा. ४८७
२८१ एस अगीते जतणा निभा. तु. ६३५८
५४६ एस तवं पडिवज्जति निभा. ६५६५, २८८०, बृभा. ५५६७, जीभा. २४३७
४०८२ एसा अट्ठविहा खलु जीभा. १६२
४१२४ एसा खलु बत्तीसा जीभा. २०६
४४३० एसाऽऽणाववहारो जीभा. ५५६
४५०२ एसाऽऽगमववहारो जीभा. ६५४
६२२, ६२३ एसेव गमो नियमा निभा. ६६६४, ६६६५
११२३ एसेव गमो नियमा बृभा. ६२४१
४४३ एसेव य दिट्ठंतो निभा. ६५०८
३१५३ एसो उ असज्झाओ आवनि. १३६१, निभा. ६११७
४४३७ एसो सुतववहारो जीभा. ५६५

ओ

४०३२ ओधीगुणपच्चइए जीभा. ११०
२२६० ओमादी तवसा वा पंकभा. तु. १०८६
१२११ ओलोयणं गवेसण बृभा. ५०३६, जीभा. २५५४
११०३ ओसध वेज्जे देमो बृभा. ६२२१
१६७१ ओसन्नचरणकरणे पंकभा. २३३७
३६४८ ओहावंता दुविधा निभा. ४५७८
२३६ ओहेणेगदिवसिया निभा. ६३१५

क

१६६६ कंकडुओ विव मासो पंकभा. २३६०
४१५४ कंखा उ भत्तपाणे जीभा. २३८
४२७८ कंचणपुर गुरुसण्णा जीभा. ३८२, निभा. ३८४६
२११ कंटगमादी दव्वे निभा. ६२६३
६१४ कज्जाऽकज्ज जताऽजत निभा. ६६५४
२६६ कज्जे भत्तपरिण्णा निभा. ६३७३
३१६६ कणगा हणंति कालं आवनि. १३८६, ओभा. ३१०, निभा. ६१४७
१०८८ कण्णम्मि एस सीहो बृभा. ६२०६
१५६ कतकरणा इतरे वा जीभा. तु. २२००
१२२५ कधणाऽऽउट्टण आगमण बृभा. ५०५२, जीभा. तु. २५७१
५४८ कप्पट्ठितो अहं ते निभा. ६५६४, २८७६, जीभा. २४३७
३२० कप्पपकप्पी तु सुते निभा. ६३६५
४४३४ कप्पस्स य निज्जुत्तिं जीभा. ५६३
४४३५ कप्पस्स य निज्जुत्तिं जीभा. ५६४
४३३८-४१ कम्ममसंखेज्ज भवं निभा. ३६०२-०५, जीभा. ४५४-५७
६०४ कयकरणा इतरे या निभा. ६६४६
४२८७ कलमोदणपयकढियादि जीभा. तु. ३६४, ३६५
४२८६ कलमोदणो य पयसा जीभा. ३६८, निभा. ३८५४
४२०५ कल्लाणगमावन्ने जीभा. ३०४
४२६ कसिणा आरुवणाए निभा. ६४६४
४३१ कसिणाऽकसिणा एया निभा. ६४६६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३४४	कसिणारुवणा पढमे	निभा. ६४१८
४०६६	कहेहि सव्वं जो वुत्तो	जीभा. १४५
११८६	काउं निसीहियं अट्ठ	बृभा. ६२६६
११०८	कामं आसवदारेसु	बृभा. ६२२६
३२३१	कामं भरितो तेसिं	आवनि. १४०६, निभा. तु. ६१७२
३३४	कामं ममेदकज्जं	निभा. ६४०६
३२६	कामं विसमा वत्थू	निभा. ६४०४
४३४६	कायोवचितो बलवं	निभा. ३६१०, जीभा. ४६२
१७०	कारणमकारणं वा	जीभा. २२०८
६१३	कारणमकारणं वा	निभा. ६६५३
४०५३	कालं कुव्वेज्ज सयं	जीभा. तु. १२८, १२६
३६३२	कालगयम्मि सहाए	निभा. ४५६२
३२०१	कालचउक्कं उक्कोसेण	आवनि. १३६४, निभा. ६१५२
४३२६	कालसभावाणुमतो	जीभा. ४४०, निभा. ३८८८
३१३४	काले तिपोरिसऽट्ठ व	आवनि. १३५१, निभा. ६१०१
६३	काले विणए बहुमाणे	निभा. ८, दशनि. १५८, जीभा. १००० मूला. ५/२६६
३१७१	कालो संझा य तधा	आवनि. १३७६, ओनि. ६४६, निभा. ६१३२
४२३२	किं कारणऽवक्कमणं	जीभा. ३३४, निभा. ३८२०
४३२८	किं च तन्नोवभुत्तं मे	निभा. तु. ३८६०, जीभा. ४४२
४३५०	किं पुण अणगारसहायगेण	निभा. ३६१३, जीभा. ४६६
४४५६	किं पुण आलोएती	जीभा. ५८६
४५५२	किं पुण गुणोवदेसो	जीभा. ६६७
४२५३	किं पुण तं चउरंगं	जीभा. ३५८
४४४६	किं पुण पंचिंदीणं	जीभा. ५७६
४४४५	किं वा मारेतव्वो	जीभा. ५७२
३१६६	कितिकम्मं कुणमाणो	आवनि. १३७२, ओनि. ६४२, निभा तु. ६१२८
५५३	कितिकम्मं च पडिच्छति	निभा. ६५६६, २८८४, जीभा. तु. २४४३
३१६५	कितिकम्मे आपुच्छण	आवनि. १३७१, ओनि. ६४१, निभा. ६१२७
१७०५	कित्तेहि पूसमित्तं	पंकभा. २३६८
४०३८	किह आगमववहारी	जीभा. ११३
४२५४	किह नासेति अगीतो	जीभा. ३५६
२२२	किह भिक्खू जयमाणो	निभा. ६३०४
१६७६	किह सुपरिच्छियकारी	पंकभा. तु. २३४५
२३५३	कीकम्मस्स य करणे	पंकभा. तु. १४६०, २५१२, निभा. २०७२
३२४	कुंचिय जोहे मालागारे	निभा. ६३६६
४२५८	कुज्जा कुलादिपत्थारं	जीभा. ३६३
११११	कुणमाणी वि य चेट्ठा	बृभा. ६२२६
४१५१	कुद्धस्स कोधविणयण	जीभा. २३५
३३६७	कुसमादि अज्झुसिराइं	निभा. १२२६
३३१	कुसलविभागसरिसओ	निभा. ६४०६
४२७५	कूयति अदिज्जमाणे	जीभा. ३८०, निभा. ३८४३,
२६७	केई पुव्वनिसिद्धा	निभा. ६३४४
३४६	केण पुण कारणेणं	निभा. ६४२५
४०३	केवल-मणपज्जवनाणिणो	निभा. ६४६७
३१२०	केसिंचि होंतऽमोहा	आवनि. १३३६, निभा. ६०६०
४३६०	कोई परीसहेहिं	निभा. ३६२३, जीभा. ४७६
८७६	कोउगभूतीकम्मे	निभा. तु. ४३४५
४३७७	को गीताण उवाओ	जीभा. ४६४
२२८४	कोट्ठिमघरे वसंतो	पंकभा. तु. १०७७
५३६	को भंते ! परियाओ	निभा. ६५८४
४३४४	कोयव पावारग नवय	जीभा. ४६०, निभा. ३६०७
४५५१	को वित्थरेण वोत्तूण	जीभा. ६६६
४४१३	कोसल्लमेक्कवीसइविधं	जीभा. ५५०

ख

३६५१	खग्गूडेणोवहतं	निभा. ४५८१
५८१	खरंटणभीतो रुट्ठो	निभा. ६६२५
३३८	खल्लाडगम्मि खडुगा	निभा. ६४१३
४१०५	खिप्पं बहु बहुविहं व	जीभा. १८६
८७१	खेत्तं गतो उ अडविं	निभा. ३४६६
४११४	खेत्तं मालवमादी	जीभा. १६५
४११६	खेत्तऽसति असंगहिया	जीभा. २०१
२२६३	खेत्ताणं च अलंभे	पंकभा. १०४७
२२६६	खेत्तेण अद्धगाउय	पंकभा. १०५८
३४६४	खेल निवात पवाते	निभा. १२७३
२१२	खोडादिभंगऽणुग्गह	निभा. ६२६५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग

३११७ गंधव्वदिसाविज्जुक्क निभा.६०८८, आवनि-१३३४
४३१२ गंधव्व नट्ट जड्डऽस्स निभा.३८७५, जीभा-४२५
३६४ गच्छुत्तरसंवग्गे निभा ६४४०
४२२८ गणनिसरणे परगणे निभा.३८१४, जीभा-३२६
४२३१ गणनिसिरणम्मि उ विधी जीभा.३३२, निभा.३८१६
३२३५ गणिसद्दमादिमहितो निभा.६१७६, आवनि-१४१३,
३१८० गहणनिमित्तुस्सग्गं आवनि.१३७६, ओनि.६५०, निभा.तु. ६१३५
११६२ गामेणाऽरण्णेण व बृभा.६२७६
४४८ गावी पीता वासी य निभा-६५१४
१६८७ गिहिसंघातं जहितुं पंकभा.२३५२
२५० गिहि-संजय-अधिगरणे निभा.६३२८
४२६३ गीतत्थदुल्लभं खलु जीभा.३६८, निभा.३८३२
४३६१ गीतत्थमगीतत्थं निभा-३६२४, जीभा.४७७
११७० गीतत्थाणं असती बृभा-६२८३
५३८ गीतमगीतो गीतो निभा.६५८५
४६१ गीतो विकोविदो खलु निभा-६५२५
१७०१ गुंठाहि एवमादीहि पंकभा.२३६४
११५१ गुज्झंगम्मि उ वियडं बृभा.६२६७
३६०६ गुणनिप्फत्ती बहुगी निभा-४५३८
११२१, १०६६ गुरुगं च अट्ठमं खलु बृभा.६२३६
१११७, १०६५ गुरुगो गुरुयतरागो बृभा-६२३५
१११६, १०६७, गुरुगो य होति मासो बृभा-६२३७
३६२० गेण्हह वीसं पाए निभा.तु. ४५५०
३६२४ गेण्हामो अतिरेगं निभा. ४५५५
२६७ गेलण्ण तुल्ल गुरुगा निभा.६३७१
१२१५ गेलण्णेण व पुट्ठो बृभा.५०४१, जीभा.तु. २५६०
३२१५ गोसे य पट्ठवेंते निभा.तु. ६१६०

घ

४३८ घयकुडगो उ जिणस्सा निभा.६५०३
१६५५ घुट्ठम्मि संघकज्जे पंकभा.२३२१
३६६५ घेत्तूणऽगारलिंगं निभा-४५६५
४०४ घेप्पंति च सद्देणं निभा.६४६८
४०६० घोसा उदत्तमादी जीभा.१७०

च

४४१४ चउकण्णंसि रहस्से निभा.३६६१, जीभा-५५१
५६२ चउगुरु चउलहु सुद्धो निभा. ६६३६
५६५ चउगुरुगं मासो या निभा-६६४०
४२०७ चउ-तिग-दुग कल्लाणं जीभा.३०६
२२७२ चउभाग-तिभागद्धे पंकभा. १०६२
३१५६ चउभागऽवसेसाए आवनि.१३६२, ओनि-६३२, निभा.तु. ६११८
११०६ चउरो य होंति भंगा बृभा-६२२४
५०० चउलहुगाणं पणगं निभा.तु. ६५५८
४४८६ चउवीसऽट्ठारसगा जीभा.६३४
२५३ चंकमणादुट्ठाणे निभा.६३३१
३१२१ चंदिमसूरुवरागे निभा-६०६१, आवनि-१३३७
४१२ चत्ताए वीस पणतीस निभा. ६४७६
४२४० चत्तारि विचित्ताइं निभा. ३८२४, जीभा.तु. ३४३
४३१३ चारग कोट्टग कलाल निभा.तु. ३८७६, जीभा.तु. ४२६
८६८ चारे वेरज्जे या निभा.३४६८
४२३६ चिट्ठतु जहण्ण मज्झा जीभा-३४२
४१४७ चुयधम्म भट्ठधम्मो जीभा.२३०
१११३ चेतणमचेतणं वा बृभा-६२३१
३१६ चेयणमचित्तदव्वे निभा.६३६०
४१६५ चोद्दसपुव्वधराणं जीभा-२५६
४०४२ चोदग पुच्छा पच्चक्ख जीभा-तु.११७
४५३ चोदग पुरिसा दुविहा निभा.६५१८
२१७२ चोदेती कप्पम्मी पंकभा.तु.१११
४६४ चोदेति रागदोसे निभा.६५५३
३२७ चोयग मा गद्दभ त्ति निभा.६४००

छ

१०६२ छक्कायाण विराधण बृभा.६२१०
४०७ छद्मसता चोयाला निभा.६४७१
१०७०, ११२२ छट्ठं च चउत्थं वा बृभा.६२४०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६२ छड्डड्डमादिएहिं जीभा. तु. २२०४
६०७ छड्डड्डमादिएहिं निभा. ६६५२
४२६८ छत्तीसगुणसमण्णागतेण जीभा. तु. ४११, निभा. ३८६२, ओनि. ७६४
४१२५-२८ छत्तीसाए ठाणेहिं जीभा. २०७-२१०
४१५६ छत्तीसेताणि ठाणाणि जीभा. २४१
४७८ छम्मास तवो छेदादियाण निभा. तु. ६५३६
६०२ छम्मासादि वहंते निभा. ६६४६
११०० छम्मासे पडियरिउं बृभा. ६२१८
४१६० छहि काएहि वतेहि जीभा. तु. २४५, २५२
४६२ छहि दिवसेहि गतेहिं निभा. ६५४६
४५४४ छार हडि हड्डमाला जीभा. ६८६
४४६७ छिंदंतु व तं भाणं जीभा. ६४६
४१६० छेदोवट्ठावणिए जीभा. २८७

ज

१११२ जइ इच्छसि सासेरी बृभा. ६२३०
३६६६ जइ जीविहिंति जइ वा निभा. ४५६६
३६१५ जइ दोण्ह चेव गहणं निभा. ४५४५
२५६ जइ भंडणपडिणीए निभा. तु. ६३३४
४१६ जइ मि भवे आरोवण निभा. तु. ६४८४
१६७२ जइया णेणं चत्तं पंकभा. २३३८
४१४६ जं इह परलोगे या जीभा. २३२
१६५६ जं काहिंति अकज्जं पंकभा. २३२२
२२६२ जंघाबले च खीणे पंकभा. १०४६
४१६६ जं जतिएण सुज्झति जीभा. २५७
४१२१ जं जम्मि होति काले जीभा. २०३
४०४३ जं जह मोल्लं रयणं जीभा. ११८
४५४३ जं जीतं सावज्जं जीभा. ६८७
४५४६ जं जीतं सोहिकरं जीभा. ६६४
४५४७ जं जीतमसोहिकरं जीभा. ६६२
४५४८ जं जीयमसोहिकरं जीभा. ६६३
४४१६ जंतेण करकतेण व निभा. ३६६६, जीभा. ५३०
४२१४ जं पि य हु एक्कवीसं जीभा. ३१३
५४२ जं मायति तं छुब्भति निभा. ६५८८
३१२ जं संगहम्मि कीरति निभा. ६३८६
१०८६ जड्डादी तेरिच्छे बृभा. ६२०४
४२४ जत्थ उ दुरूवहीणा निभा. ६४८६
४५१४ जतणाजुओ पयत्तव जीभा. ६६६
२७२ जतमाण परिहवंते निभा. ६३४६
४२० जति मि भवे आरुवणा निभा. ६४८५
४२२ जतिहि गुणा आरोवण निभा. ६४८७
३६११ जत्तियमित्ता वारा निभा. ४५४१
४१६४ जदि अत्थि न दीसंती जीभा. २६१
४०६२ जदि आगमो य आलोयणा जीभा. १४०
४०६८ जदि आगमो य आलोयणा जीभा. १४७
४०६६ जदि आगमो य आलोयणा जीभा. १४८
३१८५ जदि उत्तरं अपेहिय आवनि. १३८१, निभा. तु. ६१३७
४१०१ जदि छुब्भती विणस्सति जीभा. १८२
४३४६ जदि ताव सावयाकुल निभा. ३६१२, जीभा. ४६५
३१५६ जदि पुण निव्वाघातं आवनि. १३६५, ओनि. ६३५, निभा. ६१२१
११६० जदि पुण होज्ज गिलाणो बृभा. ६२७४
३१४३ जदि फुसति तहिं तुंडं आवभा. २२१, निभा. ६१०८
११७१ जदि वा न निव्वहेज्जा बृभा. ६२८४
३६०४ जदि होंति दोस एवं निभा. तु. ४५३५
२४०४ जध कारणे तणाइं निभा. तु. १२३२
२२६६ जुध चेव उत्तमट्ठे पंकभा. १०६६
४४२६ जध ते गोट्ठट्ठाणे निभा. ३६७३, जीभा. ५३७
५०६ जध मन्ने दसमं सेविऊण निभा. ६५६७
५१० जध मन्ने बहुसो मासियाणि निभा. ६५६८
४४२५ जधऽवंतीसुकुमालो जीभा. ५३६, निभा. ३६७२
४४२३ जध सो कालायसवेसिओ निभा. ३६७०, जीभा. ५३४
४५०६ जम्हा संपहारेउं जीभा. ६५८
४०३६ जह केवली वि जाणति जीभा. ११४
१६४७ जह गयकुलसंभूतो दश्रुनि. २६, पंकभा १६१४
४३६८ जह नाम असी कोसी निभा. ३६४६, जीभा. ५४०
४२६६ जह बालो जंपंतो ओनि. ८०१, निभा. ३८६३
४१४६ जह भायरं व पियरं जीभा. २२६
५०३ जह मन्ने एगमासियं निभा. ६५६१
३४८ जह मन्ने बहुसो मासियाणि निभा. ६४२३
४१७८ जह रूवादिविसेसा जीभा. २७२
४३६७ जह वाऽऽउंटिय पादे जीभा. ४८३
५७० जह सरणमुवगयाणं निभा. ६६१५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४४२८	जह सा बत्तीसघडा	जीभा. ५३८, निभा. ३६७४
४२६६	जह सुकुसलो वि वेज्जो	ओनि. ७६५, जीभा. ४०६, निभा. ३८६०
४४२२	जह सो चिलायपुत्तो	निभा. ३६६६, जीभा. ५३३
४४२४	जह सो वंसिपदेसी	निभा. ३६७१, जीभा. ५३५
३६१	जा ठवणा उद्दिट्ठा	निभा. ६४३७
१२१७	जाणंता माहप्पं	जीभा. २५६३, बृभा. ५०४४
३६७४	जाणंति एसणं वा	निभा. ४६०४
४२६७	जाणंतेण वि एवं	निभा. ३८६१, जीभा. ४१०
४११२	जाणति पओगभिसजो	जीभा. १६३
३६४०	जातीय जुंगितो पुण	निभा. ४५७०
४४१५	जाधे पराजिता सा	निभा. ३६६२, जीभा. ५५२
४१२६	जा भणिया बत्तीसा	जीभा. २११
४१६८	जा य ऊणाहिए दाणे	जीभा. २५६
१२२२	जारिसग आयरक्खा	जीभा. तु. २५६८, बृभा. ५०४६
४६६।१	जा संजमता जीवेसु	निभा. ६५३२
४३७	जिण-चोद्दस-जातीए	निभा. ६५०२
५०४	जिणनिल्लेवण कुडए	निभा. ६५६२
५१२	जिणनिल्लेवण कुडए	निभा. ६५७०
४३५१	जिणवयणमप्पमेयं	निभा. ३६१४, जीभा. ४६७
१०८१	जितसत्तुनरवतिस्स उ	बृभा. तु. ६१६८
५१६	जिणपण्णत्ते भावे	निभा. ६५७४
५६६	जीहाए विलिहंतो	निभा. ६६१४
४०६०	जूयादि होंति वसणं	जीभा. १३८
२२६७	जे गेण्हिउं धारइउं च जोग्गा	पंकभा. १०६४
११४४	जेट्ठगभाउगमहिला	बृभा. तु. ६२६१
४२१	जेण तु पदेण गुणिता	निभा. ६४८६
१८७	जे त्ति व से त्ति व के त्ति व	निभा. ६२७३
३४५	जे भिक्खू बहुसो मासियाणि	निभा. ६४२०
४३०६	जे मे जाणंति जिणा	निभा. ३८७३, जीभा. ४२२
३६०१	जेसिं एसुवदेसो	निभा. ४५४२, ४५३२
४०४८	जेसिं जीवाजीवा	जीभा. तु. १२३
३६४१	जे हिंडंता काए	निभा. ४५७१
४५३३	जो आगमे य सुत्ते	जीभा. ६७८
१२१२	जो उ उवेहं कुज्जा	निभा. ३०८४, बृभा. १६८३, ५०३७, जीभा. २५५६
४१६६	जो उ धारेज्ज वड्ढंतं	जीभा. २६७
४१५५	जो एतेसु न वट्टति	जीभा. २४०
३१८८	जो गच्छंतम्मि विही	ओनि. ६५२, निभा. ६१३८
५५७	जो जं काउ समत्थो	निभा. ६३०३
३२६	जो जत्तिएण रोगो	निभा. ६४०२
४३३६	जो जत्थ होइ कुसलो	निभा. ३६००, जीभा. ४५२
१०८५	जो जह व तह व लद्धं	बृभा ६२०३
४३२२	जो जारिसिओ कालो	निभा. ३८८५, जीभा. ४३४
११६६	जो णेण कतो धम्मो	बृभा. ६३०८
४१६७	जो तु असंते विभवे	जीभा. २६५
४५१२	जो धारितो सुतत्थो	जीभा. ६६४
२६६	जो पुण चोइज्जंते	निभा. ६३४६
४४४८	जो पुण परिणामो खलु	जीभा. ५७५
४१६८	जो पुण सहती कालं	जीभा. २६६
१११५	जो पेल्लितो परेणं	बृभा. ६२३३
४४३२	जो सुतमहिज्जति बहुं	जीभा. ५६१
४४३३	जो सुतमहिज्जति बहुं	जीभा. ५६२
१४१७	जो सो उ पुव्वभणितो	जीभा. तु. २४६८
३१६१	जो होज्ज उ असमत्थो	आवनि. १३६७, ओनि. ६३७, निभा. ६१२३
	झ	
२२६४	झरए य कालियसुते	पंकभा. १०६०
	ठ	
३५५	ठवणामेत्तं आरोवणत्ति	निभा. ६४३१
४२३	ठवणारोवणमासे	निभा. ६४८८
३५६	ठवणा वीसिग पक्खिग	निभा. ६४३२
३५१	ठवणा-संचय-रासी	निभा. ६४२७
३५८	ठवणा होंति जहन्ना	निभा. ६४३४
४३११	ठाणं पुण केरिसगं	जीभा. ४२४
४३६३	ठाण निसीय तुयट्टण	निभा. ३६३८, जीभा. ५१४
२१५	ठाण निसीय तुयट्टण	निभा. ६२६८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२२६ ठाण वसधीपसत्थे निभा.३८१५, जीभा.३३०
३१६६ ठाणाऽसति बिंदूसु वि आवनि. १३६२, निभा.६१५०, ओनि. ६६१
४४६७ ठावेउ दप्पकप्पे जीभा. ६१७

ड

३१४६ डहरग्गाममयम्मी आवभा. २२३, निभा. ६११५

ण

४४७ णीसज्ज वियडणाए निभा. ६५१२
३४२१ णेगाण तु णाणत्तं निभा. १२५०
४५० णेगासु चोरियासुं निभा. ६५१५

त

४५३५ तं चेवऽणुमज्जंतो जीभा. ६८०
५०१ तं चेव पुव्वभणियं निभा. ६५५६
४३५८ तं तारिसगं रयणं निभा.३६२१, जीभा.४७४
२२६ तं न खमं खु पमादो निभा. ६३०६
४२१६ तं नो वच्चति तित्थं जीभा. ३१६
४२२७ तं पुण अणुगंतव्वं जीभा.३२८
२३५ तं पुण ओह विभागे निभा. ६३१४
४०४६ तं पुण केण कतं तू जीभा.१२४
४४६१ तं पुण होज्जाऽऽसेविय जीभा. ५८८
१२२१ तं पूयइत्ताणं सुहासणत्थं बृभा. ५०४८, जीभा.२५६७
१६६४ तगराए नगरीए पंकभा.तु. २३५८
२१६८ तणुगं पि नेच्छए दुक्खं पंकभा. ११०८
४३२७ तण्हाछेदम्मि कते निभा. ३८८६, जीभा.तु. ४४१
२४१ ततिए पतिट्ठियादी निभा. ६३१६
३४२७ ततिओ तु गुरुसगासे निभा. १२५४
३६२५ ततिओ लक्खणजुत्तं निभा. ४५५१
४०८४ तत्तो य वुड्ढसीले जीभा. १६४
११८१ तत्थ अणाढिज्जंतो बृभा. तु. ६२६२
२६० तत्थ गिलाणो एगो निभा. ६३३७
४३३ तत्थ भवे न उ सुत्ते निभा. ६४६८
४४५२ तत्थ वि परिणामो तू जीभा.५७६
२८० तत्थ वि मायामोसो निभा. ६३५७
४२४४ तत्थेक्कं छम्मासं जीभा. ३४७
११३६ तद्दव्वस्स दुगुंछण बृभा. तु. ६२५२
३१३ तप्पडिवक्खे खेत्ते निभा. ६३८७
१२०४ तम्हा अपरायत्ते बृभा. ६३१०
५५६ तम्हा उ कप्पट्ठितं निभा. तु. ६६०४
३४१३ तम्हा खलु घेत्तव्वो निभा. १२४६
४२६४ तम्हा गीयत्थेणं निभा. ३८३३, जीभा. ३६६
१६५७ तम्हा तु संघसद्दे पंकभा.तु.२३२३
४२८६ तम्हा परिच्छणं तू जीभा. ३६३, निभा. तु. ३८५२
४२७२ तम्हा संविग्गेणं जीभा. ३७७, निभा. ३८४०
७४० तरुणे निप्फन्नपरिवारे निभा. ६०२१
४७६ तवतिग छेदतिगं वा निभा.६५३८
५०२ तवऽतीतमसद्दहिए निभा. ६५६०
४४४७ तवनियमनाणरुक्खं जीभा. ५७४
४८४ तवबलितो सो जम्हा निभा. ६५४२
४०६३ तवु लज्जाए धातू जीभा. १७३
७७७ तवेण सत्तेण सुत्तेण बृभा. १३२८
४३६६ तसपाण बीयरहिते निभा. ३६४३, जीभा. ५२१
४५१६ तस्स उ उद्धरिऊणं जीभा.६७३
४२७४ तस्सट्ठगतोभासण निभा. ३८४२, जीभा.३७६
४१४८ तस्स त्ती तस्सेव उ जीभा. २३१
४३२४ तस्स य चरिमाहारो जीभा. ४३८
११४६ तस्स य भूततिगिच्छा बृभा. ६२६२
१०६१ तह वि य अठायमाणे बृभा. ६२०६
४३४३ तह वि य संथरमाणे जीभा.तु. ४५६
२२४ तह समण-सुविहियाणं निभा. ६३०६
३२१७ ताधे पुणो वि अण्णत्थ निभा.तु. ६१६०
२२३ तिक्खम्मि उदगवेगे निभा. ६३०५
३६५२ तिट्ठाणे संवेगे निभा. ४५८२
४३८५ तिण्णि तु वारा किरिया जीभा. ५०३
३१७८ तिण्णि य निसीहियाओ आवनि. १३७८, ओनि. ६४६, निभा. ६१३४
३३५ तित्थगरा रायाणो निभा. ६४१०
१६७५ तित्थगरे भगवंते पंकभा. २३४१
१६७६ तित्थगरे भगवंते पंकभा. २३४२
३२१ तिन्नि उ वारा जह दंडियस्स निभा. तु. ६३६६
४४५८ तिविधं अतीतकाले जीभा. ५८५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६१६ तिविधे तेगिच्छम्मी निभा. ६६६१
३५० तिविहं च होंति बहुगं निभा. ६४२६
४३२६ तिविहं तु वोसिरेहिइ निभा. ३८६१, जीभा. ४४४
११५४ तिविहे य उवसग्गे बृभा. ६२६६
१५२३ तिविधो य पकप्पधरो पंकभा-तु-२३००, निभा-६६७६
३६३ तीसं ठवणा ठाणा निभा. ६४३६
११२०, १०६८ तीसा य पण्णवीसा बृभा. ६२३८
३१६८ तिसु तिन्नि तारगाओ आवनि. १३६१, ओभा. ३१२, निभा. ६१४६
४१७ तीसुत्तर पणवीसा निभा. ६४८१
५६४ तुमए चेव कतमिणं निभा. ६६०६
२६१ तुल्लेसु जो सलद्धी निभा. ६३६६
५०७ तेण परं सरितादी निभा. ६५६५
४०६६ तेणेव गुणेणं तू जीभा. १८०
४२०३ ते तेण परिच्चत्ता जीभा-तु. ३०१
३८६ तेत्तीसं ठवणपया निभा-६४४८
२७४ ते पुण एगमणेगा निभा. ६३५१
४०८ तेरससय अट्ठट्ठा निभा. ६४७२
१०८३ तेलोक्कदेवमहिता बृभा. ६२००
४४५१ ते वि भणिया गुरूणं जीभा. ५७८
४१२३ तेसिं अब्भुट्ठाणं जीभा. २०५
४३८७ तो णाउ वित्तिछेदं जीभा. ५०५
३१०७ तो देति तस्स राया आवनि. तु. १३२८, निभा. तु. ६०८०

थ

२७१ थंडिल्लसमायारिं निभा. ६३४८
१७२५ थिरपरिवाडीएहिं पंकभा. २३६०
११६१ थूममह सड्ढि समणी बृभा. ६२७५
३६०८ थेराणं सविदिण्णो निभा. ४५३६
२२६६ थेरे निस्सारेणं पंकभा. १०६२
११६१ थोवं पि धरेमाणो बृभा. ६३०१
३१०५ थोवावसेसपोरिसि आवनि. १३२६, निभा. ६०७८

द

३३३ दंडतिगं तु पुरतिगे निभा. ६४०८
५६२ दंडसुलभम्मि लोए निभा. ६६०७
३१२७ दंडिय कालगयम्मी आवनि-१३४६, निभा. तु. ६०६६
८६५ दंतच्छिन्नमलित्तं निभा. ३४६४
३१४६ दंते दिट्ठ विगिंचण आवनि. १३५७, निभा. ६१११
८५३ दंसण-नाण-चरित्ते निभा. ४३४१
८५४ दंसण-नाण-चरित्ते निभा. ४३४२
४४६४ दंसण-नाण-चरित्ते जीभा. ६०१
२८६ दंसण-नाणे सुत्तत्थ निभा. ६३६२
४४८५ दंसणमणुमुयंतेण जीभा. ६३३
१६२ दगमुद्देसियं चेव निभा. ६२७८
४४४४ दट्ठु महंत महीरुह जीभा. ५७१
११४६ दट्ठूण नडिं कोई बृभा. ६२६५
४३७० दत्तेणं नावाए जीभा. ४८६
४४६२ दप्प अकप्प निरालंब जीभा. ५८६
४३३३ दवियपरिणामतो वा निभा-३८६७, जीभा. ४४६
२५०० दव्वप्पमाणगणणा निभा. ३६६, बृभा. १६११
४२३६ दव्वसिती भावसिती निभा-३८२२, जीभा. तु. ३३८, ३४०
३०५ दव्वादि चतुरभिग्गह निभा. ६३७६
५६५ दव्वेण य भावेण य निभा-६६१०
३११२ दव्वे तं चिय दव्वं निभा. ६०८३
१६७ दव्वे भविओ निव्वत्तिओ निभा. ६२८३
१६४ दव्वे य भाव भेयग निभा. ६२८०
४०५५ दव्वेहि पज्जवेहिं जीभा. १३१
५३३ दस चेव य पणताला निभा. ६५८२
४१८१ दस ता अणुसज्जंती जीभा-तु. २७६ निभा. ६६८०
४१६ दस्सुत्तरसतियाए निभा. ६४८०
३६०३ दिंते तेसिं अप्पा निभा. ४५३४
४३६६ दिट्ठंतस्सोवणओ जीभा. ४८२
४२०६ दिट्ठंतो तेणएणं जीभा-तु. ३०८
३४१ दिण्णमदिण्णो दंडो निभा. ६४१५
२४६ दिव रातो उवसंपय निभा. ६३२५
११३५ दिवसेण पोरिसीय व बृभा. ६२५१

४४०१ दिव्वमणुया उ दुग तिग निभा. ३६४६, जीभा. ५२४
३२६८ दिसा अवर दक्खिणा य बृभा. ५५०५
३११६ दिसिदाह छिन्नमूलो आवनि. १३३५, निभा. ६०८६
१६६० दुक्खेण लभति बोधिं पंकभा. २३५५
४१५३ दुट्ठो कसायविसएहि जीभा. २३७
२२६४ दुण्णि वि दाऊण दुवे पंकभा तु. १०४६
२६६ दुण्हेगतरे खमणे निभा. ६३७०
२४२ दुब्भासिय हसितादी निभा. ६३२०
११३४ दुल्लभदव्वे देसे बृभा. ६२५३
३६१६ दुविधा छिन्नमछिन्ना निभा. ४५४६
३६५५ दुविधोधाविय वसभा निभा. तु. ४५८५
३१६३ दुविधो य होति कालो आवनि. १३६६, ओनि. ६३६, निभा ६१२५
४४५७ दुविहं तु दप्पकप्पे जीभा. ५८४
५६८ दुविहा पट्ठवणा खलु निभा. ६६४२
८५२ दुविहो खलु पासत्थो निभा. ४३४०
३६०६ दूरे चिक्खल्लो वुट्ठि निभा. तु. ४५३६
४१७० देंता वि न दीसंती जीभा. २६०
१६६८ देसे देसे ठवणा पंकभा. २३३२
३६१८ देसे सव्वुवहिम्मी निभा. ४५४८
४३१७ देहवियोगो खिप्पं निभा. ३६०१, जीभा ४५३
३०१ दो तिहिं वा दिणेहिं निभा. ६३७५
३६५ दो रासी ठावेज्जा निभा. ६४४१, ६४४७
२२७५ दो संघाडा भिक्खं पंकभा. तु. १०६६
६१५ दोसविभवाणुरूवो निभा. ६६५६
४१५० दोसा कसायमादी जीभा. २३४
४१८२ दोसु उ वोच्छिन्नेसुं जीभा. २७६
४१८३ दोसु वि वोच्छिन्नेसुं जीभा. २८०
४४१२ दो सोय नेत्तमादी निभा. ३६६०, जीभा. ५४६
५८६ दोहि वि गुरुगा एते निभा. ६६३१
५६१ दोहि वि गुरुगा एते निभा. ६६३४
५६३ दोहि वि गुरुगा एते निभा. ६६३७

ध

४१४५ धम्मसभावो सम्मद्दंसणयं जीभा. २२८
४५०७ धारणववहारेसो जीभा. ६५६
४५२० धारणववहारो सो जीभा. ६७४
४३४८ धीरपुरिसपण्णत्ते निभा. ३६११, जीभा. ४६४
४५३६ धीरपुरिसपण्णत्तो जीभा. ६८१
२२८० धीरा कालच्छेदं पंकभा. १०७१
३२२४ धोतम्मि य निप्पलगे आवनि. १४०४, निभा. ६१६७

न

४१५ नउतीए पक्ख तीसा निभा. ६४७६
३६३३ नंदि-पडिग्गह विपडिग्गहे निभा. ४५६३
१११४ नणु सो चेव विसेसो बृभा. ६२३२
३०४ नत्थि इहं पडियरगा निभा. ६३७८
२७६ नत्थी संकिय संघाड निभा. ६३५३
२७७ नत्थे यं मे जमिच्छसि निभा. ६३५४
४३७६ न पगासेज्ज लहुत्तं निभा. ३६३४, जीभा. ४६३
११०६ न य बंधहेतुविगलत्तणेण बृभा. ६२२७
४४११ नवंगसुत्तप्पपडिबोहयाए जीभा. ५४८
३२०८ नवकालवेलसेसे निभा. ६१५६
५४० नवमस्स ततियवत्थू निभा. ६५८७
४०६ नवयसता य सहस्सं निभा. ६४७३
२५१ नववज्झियावदेहो निभा. ६३२६
४३२५ नवविगतिसत्तओदण जीभा. ४३६, निभा. तु. ३८८७
४२१७ न विणा तित्थं नियंठेहिं जीभा. ३१७
४१०८ न वि विस्सरति धुवं तू जीभा. १८६
४०६७ न संभरति जो दोसे जीभा. १४६
१७२३ न हु गारवेण सक्का पंकभा. २३८८
४२६१ न हु ते दव्वसंलेहं निभा. ३८५५, जीभा. ४०१
१०८४ न हु होति सोइयव्वो बृभा. ६२०२
१६५२ नाएण छिण्ण ववहार पंकभा. तु. २३१६
१६८८ नाण-चरणसंघातं पंकभा. २३५३
१६८६ नाण-चरणसंघातं पंकभा. २३५४
४३०४ नाणनिमित्तं अद्धाणमेति जीभा. ४१७, निभा. ३८६८
४३०३ नाणनिमित्तं आसेवियं निभा. ३८६७, जीभा. तु. ४१६
४०६३ नाणमादीणि अत्ताणि जीभा. १४१
४० नाणी न विणा नाणं निभा. ७५
४०३६ नातं आगमियं ति य जीभा. १११

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६६ नामं ठवणा दविए निभा. ६२८२
२१० नामं ठवणा दविए निभा. ६२६२
२१३ नामं ठवणा दविए निभा. ६२६६
१८८ नामं ठवणा भिक्खू दशनि. ३०६, निभा. ६२७४
४०४७ नालीधमएण जिणा जीभा. १२२
४४४ नालीय परूवणया निभा. ६५०६
१७२४ नासेति अगीयत्थो पंकभा. २३८६
४२५२ नासेति अगीयत्थो निभा. ३८२६, जीभा. ३५७
४२६६ नासेति असंविग्गो निभा. ३८३४, जीभा. ३७१
११६२ नाहं विदेस आहरणमादि बृभा. ६३०२
४४८३ निक्कारणदप्पेणं जीभा. ६३१
३६४६ निक्कारणिएऽणुवदेसिय निभा. ४५७६
२७५ निग्गमणे परिसुद्धे निभा. ६३५२
२८२ निग्गमसुद्धमुवाएण निभा. ६३५६
४७२ निग्गयवट्टंता वि य निभा. ६५३६
४१०३ निज्जवगो अत्थस्सा जीभा. १८४
४४३५ निज्जूढं चोद्दसपुव्विएण जीभा. ५६०
१२२४ निज्जूढो मि नरीसर बृभा. ५०५१, जीभा. २५७०
६६८ निज्जूहगतं दट्ठुं निभा. तु. ४८५२
६६७ निज्जूहादिपलोयण निभा. तु. ४८५१
११८३ नित्थिण्णो तुज्झ घरे बृभा. तु. ६२६४
३०२३ निद्दोसं सारवंतं च आवनि. ८८५, बृभा. २८२, निभा. ३६२०
१०६८ निद्ध-महुरं च भत्तं बृभा. ६२१६
१६६० निद्ध-महुरं निवातं पंकभा. २३२५
३०८ निप्पत्तकंटइल्ले निभा. ६३८२, भआ. ५५५
४२१० निब्भच्छणाय बितियाय जीभा. ३०६
४१६६ निरवेक्खो तिण्णि चयति जीभा. २६४
५४७ निरुवसग्गनिमित्तं निभा. ६५६३, २८७८
४५२ निवमरणमूलदेवो निभा. ६५१७
४३७४ निव्वाघाएणेवं निभा. ३६३२, जीभा. ४६१
६२० निव्वितिए पुरिमड्ढे निभा. तु. ६६६२
४३५ निसीध नवमा पुव्वा निभा. ६५००
३१५ निसेज्जऽसति पडिहारिय निभा. ६३८६
६४ निस्संकिय निक्कंखिय दशनि. १५७, निभा. २३, मूला ५/२०१, जीभा. १०३७, उत्त. २८।३१
४१४२ निस्सेसमपरिसेसं जीभा. २२५
११८५ नीयल्लगाण तस्स व बृभा. ६२६५
३६६६ नीसंकितो वि गंतूण निभा. ४५६६
३६६८ नीसंको वणुसिट्ठो निभा. ४५६८
४०३१ नोइंदियपच्चक्खो जीभा. २३
१३६० नोकारो खलु देसं पंकभा. तु. ८०७

प

३६० पंचण्हं परिसुद्धी निभा. ६४३६
४२६१ पंच व छस्सत्त सते निभा. ३८३०, जीभा. तु. ३६६, पंकभा. १७४४
४२६६ पंच व छस्सत्त सया जीभा. ३७४, निभा. ३८३७
१६६२ पंचविधं उवसंपय पंकभा. २३५७
३१५५ पंचविधमसज्झायस्स निभा. तु. ६११८ आवनि. तु. १३६२, ओनि. तु. ६३२
४०२८ पंचविहो ववहारो जीभा. ८
४०६ पंचसता चुलसीता निभा. ६४७०
४४१८ पंचसता जंतेणं जीभा. ५२६, निभा. ३६६५, उनि. ११४
८६० पंचासवप्पवत्तो निभा. ४३५१
४५४० पंचिंदि घट्ट तावण जीभा. ६८५
३१३३ पंचिंदियाण दव्वे निभा. ६१००, आवनि. १३५०
४१८४ पंचेव नियंठा खलु जीभा. २८१
४१८८ पंचेव संजता खलु तु. जीभा. २८५
३११५ पंसू अच्चित्तरजो निभा. ६०८६, आवनि १३३२
३११४ पंसू य मंसरुधिरे निभा. ६०८५, आवनि. १३३१
१६६८ पक्कुलोव्व भया वा पंकभा. २३६१
२३४ पक्खिय चउसंवच्छर निभा. ६३१३
४१३६ पक्खिय पोसहिएसुं जीभा. २१८
३१२८ पगतबहुपक्खिए वा निभा. ६०६७, आवनि. १३४७
४०३५ पच्चक्खागमसरिसो जीभा. ११२
४०४६ पच्चक्खी पच्चक्खं जीभा. १२१
४०३० पच्चक्खो वि य दुविहो जीभा. १०
११६८ पच्छित्तं इत्तरिओ बृभा. ६२८१
५७७ पच्छित्तऽणुपुव्वीए निभा. ६६२१
४२४७ पच्छिल्लहायणे तू जीभा. तु. ३५२
३२१८ पट्ठवितम्मि सिलोगे निभा. तु. ६१६१, आवनि. तु. १४००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१६२	पट्ठवित वंदिते वा	निभा.६१४३, आवनि.१३८५, ओनि.६५६
५९९	पट्ठविता ठविता या	निभा.६६४३
६००	पट्ठविता य वहंते	निभा.६६४४
३०६	पडिकुट्ठेल्लगदिवसे	निभा.६३८३
१७१३	पडिणीय-मंदधम्मो	पंकभा.२३७५
२८३	पडिणीयम्मि उ भयणा	निभा. ६३६०
४४२१	पडिणीययाए केई	जीभा. ५३२, निभा. ३६६८
४४२०	पडिणीययाए कोई	निभा. ३६६७, जीभा. ५३१
२२८६	पडियरंति गिलाणं वा	पंकभा.१०८५
६६	पडिरूवो खलु विणओ	दशनि.२६७
४१३८	पडिलेहण पप्फोडण	जीभा. २२०
८६४	पडिलेहण मुहपोत्तिय	निभा. ३४६३
४३४५	पडिलेहण संथारं	जीभा.४६१, निभा. ३६०८
२७०	पडिलेहण सज्झाए	निभा. ६३४७
४३१८	पडिलोमाणुलोमा वा	निभा. ३८८२, जीभा. ४३२
३७	पडिसेवओ य पडिसेवणा	निभा. ७३
४०६५	पडिसेवणाइयारे	जीभा. १४३
२२६	पडिसेवणा उ कम्मोदएण	निभा. ६३०८
४३०८	पडिसेवणाऽतिचारा	जीभा.४२१, निभा. ३८७२
४०६५/१	पडिसेवणाऽतिचारे	जीभा. १४४, भआ.तु. ६२१
३६	पडिसेवणा तु भावो	निभा.७४
५७२	पडिसेवणा य संचय	निभा. ६६१६
४३०५	पडिसेवंति विगतीओ	जीभा.४१८, निभा.३८६६
१२२०	पडिहारख्वी भण रायरूविं	बृभा. ५०४७, जीभा.२५६६
४४८१	पढमं कज्जं नामं	जीभा.६२६
४०६४	पढमगसंघयण थिरो	जीभा.१७४
२४८	पढमदिणमविप्फाले	निभा. ६३२६
२६८	पढमदिणम्मि न पुच्छे	निभा. ६३७२
४३१४	पढमबितिएसु कप्पे	निभा.३८७७, जीभा.४२७
४४०१	पढमम्मि य संघयणे	निभा.३६४८
४४६८	पढमस्स य कज्जस्सा	जीभा.६१८
४४६५-६६	पढमस्स य कज्जस्सा	जीभा.६४६, ६४८
४४६०-६२	पढमस्स य कज्जस्सा	जीभा.६३६, ६४५, ६४७
६०६	पढमस्स होति मूलं	निभा.६६५६
७८०	पढमम्मि उवस्सयम्मी	बृभा.१३३५
३६७-६६	पढमा ठवणा एक्को	निभा.६४५६-६१
३६२-६४	पढमा ठवणा पंच य	निभा.६४५४-६४५६
३८७-८६	पढमा ठवणा पक्खो	निभा.६४४६-५१
३८२-८४	पढमा ठवणा वीसा	निभा.६४४३-४५
४०४०	पणगं मासविवड्ढी	जीभा.११५
२७३	पणगादिसंगहो होति	निभा.६३५०
५२५	पणगेणऽहिओ मासो	निभा.तु. ६५७७
३६१	पणतीसं ठवणपदा	निभा ६४५३
६५	पणिधाणजोगजुत्तो	निभा.३५, दशनि.१५६, मूला. ५।२६७
४१७५	पण्णवगस्स उ सपदं	जीभा.२६८
११५०	पण्णविया य विरूवा	बृभा.६२६६
४१३	पण्णाए पण्णट्ठी	निभा.६४७७
४३६, ५१३	पत्तेयं पत्तेयं	निभा.६५०१, ६५७१
४४५४	पदमक्खरमुद्देसं	जीभा.५८१
३१६	पम्हुट्ठे पडिसारण	निभा.६३६४
४२७६	परतो सयं व णच्चा	निभा.३८४४, जीभा.तु. ३८३
१६७८	परिणामियबुद्धीए	पंकभा.२३४४
४१०२	परिणिव्वविया वाए	जीभा.१८३
४०७५	परिनिट्ठित परिण्णाय	जीभा.१५५
१७१६	परिवार-इड्ढि-धम्मकहि	पंकभा.२३८०
३३६०	परिसाडि अपरिसाडी	निभा.१२१८
१६७०	परिसा ववहारी या	पंकभा.२३३४
५६६	परिहारऽणुपरिहारी	निभा.६६११
४१६१	परिहारविसुद्धीए	जीभा.२८८
५८०	पलिउंचण चउभंगो	निभा.६६२४
७२४	पवत्तिणि अभिसेगपत्त	निभा.तु. ६०२२
१७२२	पवयणकज्जे खमगो	पंकभा.तु.२३८५-२३८७
४५०८	पवयणजसंसि पुरिसे	जीभा.६६०
४३०२	पव्वज्जादी आलोयणा	जीभा.४१४, निभा.३८६६
४२२३	पव्वज्जादी काउं	निभा.३८१२, जीभा.३२३
४३६१	पव्वज्जादी काउं	निभा.३६४०, जीभा.५१२
७७४/१	पव्वज्जा सिक्खावय	निभा.३८१३, बृभा.११३२, १४४६
४३१७	पाणग जोग्गाहारे	निभा.३८८०, जीभा.४३०
४२८३	पाणगादीणि जोग्गाणि	जीभा.३६०, निभा.३८५०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६०७	पाणदय खमणकरणे	निभा.४५३७
११६	पाणवध-मुसावादे	मूला.तु. ६६१
२५५	पाणसुणगा व भुंजति	निभा. तु. ६३३३
३४१२	पाणा सीतल कुंथू	निभा.१२४५
४३६५	पादोवगमं भणियं	निभा.३६४२
४२२१	पादोवगमे इंगिणि	जीभा.३२१
४२२२	पादोवगमे इंगिणि	जीभा.३२२
३१६४	पादोसितो अभिहितो	निभा.६१४५, आवनि.१३८७, ओनि.६५८
३२००	पादोसियऽड्ढरत्ते	निभा.६१५१, आवनि.१३६३, ओनि.६६२
४५०४	पाबल्लेण उवेच्च व	जीभा.६५६
३२१०	पाभातियम्मि काले	निभा.६१५५, आवनि.१३६८
४२१५	पायच्छित्ते असंतम्मि	पंकभा.२३१२, जीभा.३१५, निभा.६६७८
११६७	पायच्छित्ते दिन्ने	बृभा.६२८०
३६४२	पायच्छिनास-कर-कण्ण	निभा.४५७२
५७३	पारंचि सतमसीतं	निभा.६६१७
४१६७	पारगमपारगं वा	जीभा.२५८
१७१२	पारायणे समत्ते	पंकभा.२३७२
४०३७	पारोक्खं ववहारं	जीभा.११२
३५	पावं छिंदति जम्हा	जीभा.५
११६६	पासंडे व सहाए	बृभा.६३०५
१११६	पासंतो वि य काये	बृभा.६२३४
८८६	पासत्थ-अहाछंदे	निभा.४३५०
८३४	पासत्थ-अहाछंदो	निभा.४३५०
४३२०	पासत्थोसन्न-कुसील	जीभा.४३३, निभा.३८८३
४१७६	पासायस्स उ निम्मं	जीभा.तु. ५७१
४३३०	पासित्तु ताणि कोई	जीभा.४४५, निभा.३८६२
८५५	पासो त्ति बंधणं ति य	निभा.४३४३
४७०	पिंडस्स जा विसोधी	निभा.६५३४
११८७	पुट्ठा व अपुट्ठा वा	बृभा.६२६७
४४०४	पुढवि-दग-अगणि-मारुय	निभा. ३६५१, जीभा.५२६
४२४२	पुणरवि चउरण्णे तू	जीभा.३४५
११०२	पुत्तादीणं किरियं	बृभा.६२२०
४११३	पुरिसं उवासगादी	जीभा.१६४
४५११	पुरिसस्स उ अइयारं	जीभा.६६३
४०५७	पुव्वं अपासिऊणं	जीभा.१३५
५७८	पुव्वं गुरुणि पडिसेविऊण	निभा.६६२२
१३१४	पुव्वं पच्छुद्दिट्ठं	बृभा.५४१०, निभा.५५०७, पंकभा.२५६६
१३१५	पुव्वं पच्छुद्दिट्ठं	बृभा. ५४११, निभा.५५०८, पंकभा.२५६७
१३१७	पुव्वं पच्छुद्दिट्ठं	बृभा. ५४१३, निभा.५५१०, पंकभा.२५६६
१३१६	पुव्वं पच्छुद्दिट्ठं	बृभा.५४१५, निभा.५५१२, पंकभा.२६०१
१३२०	पुव्वं पच्छुद्दिट्ठं	बृभा.५४१६, निभा.५५१३, पंकभा.२६०२
७६	पुव्वं बुद्धीए पासित्ता	दशनि.२६८
४४०७	पुव्वभवियपेम्मेणं	निभा.३६५४, जीभा.५४४
४४०८	पुव्वभवियपेम्मेणं	निभा.३६५५, जीभा.५४५
११४२	पुव्वभवियवेरेणं	बृभा.तु. ६२५८, निभा.३६५६
४३६७	पुव्वभवियवेरेणं	निभा.३६४४ जीभा.५२२
२२८८	पुव्वम्मि अप्पिणंती	पंकभा.१०८४
५७५	पुव्वाणुपुव्वि दुविहा	निभा.६६१६
५७६	पुव्वाणुपुव्वि पढमो	निभा.६६२०
४४००	पुव्वावरदाहिण-उत्तरेहि	निभा.३६४७
१३१३	पुव्वुद्दिट्ठं तस्सा	बृभा.५४०६, निभा.५५०६, पंकभा.तु. २५६५
१३१६	पुव्वुद्दिट्ठं तस्सा	बृभा.५४१२, निभा.५५०६, पंकभा.२५६८
१३१८	पुव्वुद्दिट्ठं तस्सा	बृभा.५४१४, निभा.५५११, पंकभा.तु. २६००
११०५	पुव्वुद्दिट्ठो य विही	बृभा.६२२३
४११७	पूए अहागुरुं पि	जीभा.१६६
२१७०	पेसवेति उ अन्नत्थ	पंकभा.१११३
१२१६	पेसेति उवज्झायं	बृभा.५०४३, जीभा.तु. २५६१
११४०	पोग्गलअसुभसमुदओ	बृभा.६२५६

फ

१६६७	फलमिव पक्कं पडए	पंकभा.तु. २३६१
३२०३	फिडितम्मि अद्धरत्ते	निभा. ६१५३, आवनि. १३६५

ब

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१६३ बउसपडिसेवगा खलु जीभा. २६०
४१८६ बकुसपडिसेवगाणं जीभा. २८३
४१३० बत्तीसं वण्णिय च्चिय जीभा. २१२
४४०६ बत्तीसलक्खणधरो निभा. ३६५७, जीभा. ५४६
४०७६-७८ बत्तीसाए ठाणेसु जीभा. १५६-१५८
१७८८ बलि धम्मकधा किड्डा निभा. १३२६, बृभा. ५५४
३२५ बहुएसु एगदाणे निभा. ६४०१
३५४ बहुएसु एगदाणे निभा. ६४३०
५०८ बहुएहि जलकुडेहिं निभा. ६५६६
३३६ बहुएहि वि मासेहिं निभा. ६४११
४११६ बहुजणजोग्गं खेत्तं जीभा. १६८
३५२ बहुपडिसेवी सो विय निभा. ६४२८
१७२० बहुपरिवार महिड्डी पंकभा. तु. २३८२-२३८४
४११० बहुबहुविधं पुराणं जीभा. १६१
४१०७ बहुविहऽणेगपयारं जीभा. १८८
४०८८ बहुसुतजुगप्पहाणे जीभा. १६८
४०८७ बहुसुतपरिचियसुत्ते जीभा. १६७
१६५१ बहुसुतबहुपरिवारो पंकभा. तु. २३१६
४७१ बायाला अट्ठेव य निभा. तु. ६५३५
४०२ बारस अट्ठग छक्कग निभा. ६४६६
४६० बारस दस नव चेव य निभा. ६५४७
२२६३ बारसवासे गहिते पंकभा. १०८६
४४२७ बावीसमाणुपुव्वी जीभा. ५३६, निभा. ३६७४
३१८१ बिंदू य छीयपरिणय निभा. ६१३६, आवनि. १३८०, ओनि. तु. ६५१
४४८४ बितियं कज्जं कारण जीभा. ६३२
४४७५ बितियस्स य कज्जस्सा जीभा. ६२७
४५०० बितियस्स य कज्जस्सा जीभा. ६५२
३२२१ बितियागाढे सागारियादि निभा. ६१६४
३२३६ बितियागाढे सागारियादि निभा. ६१७८
४४४६ बेति गुरू अह तं तू जीभा. ५७३

भ

४२६३ भंडी बइल्लए काए जीभा. ४०४, निभा. तु. ३८५७
३०६ भग्गघरे कुड्डेसु य निभा. ६३८०
३१५२ भण्णति मययं तु तहिं निभा. तु. ६११६, आवनि. १३६०
११४५ भतिया कुडुंबिएणं बृभा. ६२६०
१११ भत्ते पाणे सयणासणे मूला. ६६२
२२७१ भमो वा पित्तमुच्छा वा पंकभा. १०६०
१०७६ भयतो सोमिलबडुओ बृभा. ६१६६
१६७३ भवसतसहस्सलद्धं पंकभा. २३३६
३६३१ भायणदेसा एंतो निभा. ४५६१
१६५ भिंदंतो यावि खुधं दशनि. ३१८, निभा. तु. ६२८१
१८६ भिक्खणसीलो भिक्खू निभा. ६२७५
४२२५ भिक्ख-वियार-समत्थो जीभा. ३२५
२३६ भिक्खादिनिग्गएसुं निभा. ६३१७
३६१७ भिन्ने य झामिए वा निभा. ४५४७
४०५६ भीतो पलायमाणो जीभा. १३७
४१७७ भुंजति चक्की भोए जीभा. २६६
४३१८ भुत्तभोगी पुरा जो तु जीभा. ४३१, निभा. ३८८१
२३५८ भोइकुल सेवि भाउग निभा. २१५२

म

४१०४ मइसंपय चउभेया जीभा. १८५
४४१० मज्जणगंधं पुप्फोवयार निभा. ३६५३ ३६५८,
४४०६ जीभा. ५४७
५१४ मणपरमोधिजिणाणं निभा. ६५७२
१७०० मरहट्ठलाडपुच्छा पंकभा. २३६३
४२५६ मरिऊण अट्टझाणो जीभा. ३६१
४५७ मरुगसमाणो उ गुरू निभा. ६५१६, ६५२३
४७५ मासादि असंचइए निभा. ६५३७
३१३६ महाकाएऽहोरत्तं निभा. तु. ६१०४, आवभा. २१८
११३२ महज्झयण भत्त खीरे बृभा. ६२५०
४३६४ महसिल कंटे तहियं जीभा. ४८०
१०६४ महिड्डिए उट्ठ निवेसणा बृभा. ६२१२
३१११ महिया तु गब्भमासे निभा. ६०८२, आवभा. २१६
३११० महिया य भिन्नवासे निभा. ६०७६, आवनि. १३२७
११२६ महुरा दंडाऽणत्ती बृभा. ६२४४
१६६५ मा किस्ते कंकडुकं पंकभा. २३५६
३१४४ माणुस्सगं चउद्धा निभा. ६१०६, आवनि. १३५५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३७	मा वद एवं एक्कसि	निभा. ६४१२
४४५	मास-चउमासिएहिं	निभा. ६५१०
५६७	मासादी पट्ठविते	निभा. ६६४१
५८८	मासो दोन्नि उ सुद्धो	निभा. ६६३०
६२१	मासो लहुगो गुरुगो	निभा. ६६६३
१०६६	मिउबंधेहि तधा णं	बृभा. ६२१४
१०१५	मिच्छत्त बडुग चारण	निभा. तु. १३१६
२२०	मीसाओ ओदइयं	निभा. ६३०२
२४३	मुच्छातिरित्त पंचम	निभा. ६३२१
४४१७	मुणिसुव्वयंतवासी	उनि. ११३, जीभा. ५२८, निभा. ३६६४
४६५	मूलगुणउत्तरगुणा	निभा. ६५३०
४६६	मूलगुणदतिय सगडे	निभा. ६५३३
२४०	मूलगुण पढमकाया	निभा. ६३१८
४६२	मूलऽतिचारे चेयं	निभा. ६५२७
४६३	मूलव्वयातियारा	निभा. ६५२८
२०६	मूलादिवेदगो खलु	निभा. ६२६१
२२१	मूलुत्तरपडिसेवा	निभा. ६३०३
३१०३	मेच्छभयघोसणनिवे	निभा. तु. ६०७६, आवनि. तु. १३२४
११५३	मोहेण पित्ततो वा	बृभा. ६२६८

र

२१६	रज्जुयमादि अछिन्नं	निभा. ६३०१
४२६२	रण्णा कोंकणगाऽमच्चा	निभा. ३८५६, जीभा. ४०३
११०१	रण्णो निवेदितम्मि	बृभा. ६२१६
३९४५	रत्तुक्कडया इत्थी	निभा. ६११०, आवनि. १३५६
४५१०	रहिते नाम असंते	जीभा. ६६२
३२३४	रागा दोसा मोहा	निभा. ६१७५, आवनि. तु. १४१२
४०४१	रागद्दोसविवड्ढिं	जीभा. ११६
१११०	रागद्दोसाणुगया	बृभा. ६२२८
१०८०	रागम्मि रायखुड्डो	बृभा. ६१६७
१६६३	रागेण व दोसेण व	पंकभा. २३२७
१६६४	रागेण व दोसेण व	पंकभा. २३२८
१०७८	रागेण वा भएण व	बृभा. ६१६५
३१०४	राया इव तित्थगरो	निभा. ६०७७, आवनि. १३२५
११४८	रूवगिं दट्ठूणं	बृभा. तु. ६२६४
१६६६	रोमंथयते कज्जे	पंकभा. २३६२

ल

५६०	लहुगा लहुगो सुद्धो	निभा. ६६३३
३१७	लहुयल्हादीजणणं	निभा. ६३६१
१११८, १०६६	लहुसो लहुसतरागो	बृभा. ६२३६
११२५	लाभमदेण व मत्तो	बृभा. ६२४३
४३६६	लावए पवए जोधे	निभा. ३६२७, जीभा. ४८५
४२४८	लुक्खत्ता मुहजंतं	जीभा. ३५३
३६७६	लेवाडहत्थ छिक्के	निभा. ४६०६

व

४३३५	वट्टंति अपरितंता	जीभा. ४५१ निभा. ३८६६
११०७	वड्ढति हायति उभयं	बृभा. ६२२५
२८५	वत्तणा संधणा चेव	निभा. ६३६१
४५२१	वत्तणुवत्तपवत्तो	जीभा. ६७५
४५२२	वत्तो णामं एक्कसि	जीभा. ६७६
१२०१	वत्थाणाऽऽभरणाणि य	बृभा. ६३०६
४११५	वत्थुं परवादी ऊ	जीभा. १६६
५४४	वमण-विरेयणमादी	निभा. ६५६०
४४६०	वयछक्कं कायछक्कं	जीभा. ५८७
४०७४	वयछक्कं कायछक्कं	जीभा. १५४
१२०७	वरनेवत्थं एगे	जीभा. २४६०
११८६	ववहारेण य अहयं	बृभा. तु. ६२६६
२२८६	वसधि निवेसण साही	पंकभा. १०७८
४३७८	वसभो वा ठाविज्जति	जीभा. ४६५
३१६४	वाघाते ततिओ सिं	निभा. ६१२६, आवनि. १३७०, ओनि. ६४०
२५७३	वाते पित्ते गणालोए	पंकभा. १६८१
१२२६	वादपरायणकुवितो	बृभा. ५०४२, जीभा. २५७२
४०६८	वायणभेदा चउरो	जीभा. १७६
४३८२	वालच्छभल्ल-विस	जीभा. ५००
४३८३	वालेण गोणसादी	जीभा. ५०१
३११३	वासत्ताणावरिता	आवनि. १३३०, निभा. ६०८४
३४११	वासासु अपरिसाडी	निभा. १२४४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१६७	वासासु पाभातिए	निभा. ६१४८, आवनि. १३६०
४११८	वासे बहुजणजोग्गं	जीभा. २००
५४६	विउसग्गजाणणट्ठा	निभा. ६५६२
४३३२	विगती कयाणुबंधे	निभा. ३८६६, जीभा. ४४८,
४५३६	विगलिंदऽणंत घट्टण	जीभा. ६८४
४३५७	विग्गहगते य सिद्धे	निभा. ३६२०, जीभा. ४७३
११५५	विज्झाए मंतेण व	बृभा. ६२७०
२२५८	विज्झाकया चारिय लाघवेण	पंकभा. १०३८
११६४	विज्झादी सरभेदण	बृभा. ६३०४
११५७	विज्झादऽभिजोगो पुण	बृभा. ६२७१
४१४४	विण्णाणाभावम्मी	जीभा. २२७
३३०	विणिउत्तभंडभंडण	निभा. ६४०५
४१२०	वितरे न तु वासासुं	जीभा. तु. २०२
११३१	विद्दवितं केणं ति य	बृभा. ६२४६
३४२३	विप्परिणामणकधणा	निभा. तु. १२५१
४४२	विब्भंगीव जिणा खलु	निभा. तु. ६५०७
४५५	वीसं वीसं भंडी	निभा. ६५२१
४८५	वीसऽट्ठारस लघु-गुरु	निभा. ६५४३
४२७	विसमा आरुवणाओ	निभा. ६४६२
३२१४	वीसरसरं रुवंते	निभा. ६१५६
११५६	विसस्स विसमेवेह	बृभा. ६२७३
३५७	वीसाए अद्धमासं	निभा. ६४३३
४११	वीसाए तू वीसा	निभा. ६४७५
२२६७	वीसामण उवगरणे	पंकभा. तु. १०५६
५३४	वीसालसयं पणतालीसा	निभा. ६५८३
३३२	वीसुं दिण्णे पुच्छा	निभा. ६४०७
४३८४	विसेण लद्धो होज्झा	जीभा. ५०२
३१२५	वुग्गहदंडियमादी	आवनि. १३४४, निभा. ६०६४
२२५६	वुड्ढस्स उ जो वासो	पंकभा. १०३५
२३००	वुड्ढावासातीते	पंकभा. १०६७
११७२	वुत्तं हि उत्तमट्ठे	बृभा. ६२८५
२२७७	वुड्ढावासे जतणा	पंकभा. १०७०
४५१८	वेयावच्चकरो वा	जीभा. ६७२
५६०	वेयावच्चे तिविधे	निभा. ६६०५
३६००	वेहारुगाण मन्ने	निभा. ४५३१

स

४५०५	सं एगीभावम्मी	जीभा. ६५७
४१६१	संखादीया ठाणा	जीभा. २५३
४३६३	संगामदुगं महसिल	निभा. ३६२६, जीभा. ४७६
४५१	संघयणं जध सगडं	निभा. ६५१६
४३६४	संघयणधितीजुत्तो	निभा. ३६३६, जीभा. ५१५
४२०२	संघयणधितीहीणा	जीभा. ३००
४४६५	संघस्साऽऽयरियस्स य	जीभा. ६०२
५५१	संघाडगा उ जाव उ	निभा. ६५६७, २८८२, जीभा. तु. २४४१ बृभा. ५५६६
५५२	संघाडगा उ जाव उ	निभा. ६५६८, २८८३, जीभा. २४४२
१६७७	संघो गुणसंघातो	पंकभा. २३४३
१२२७	संघो न लभति कज्जं	बृभा ५०५३, जीभा. २५७३
१६६७	संघो महाणुभागो	पंकभा. २३३१
३१०२	संजमघाउप्पाते	निभा. ६०७५, आवनि. १३२३
४२३७	संजमठाणाणं कंडगाण	निभा. ३८२३, जीभा. ३३६
४१३४	संजममायरति सयं	जीभा. २१६
३१०	संझागतं रविगतं	निभा. ६३८४
३११	संझागयम्मि कलहो	निभा. ६३८५
२४४	संतम्मि वि बलविरिए	निभा. ६३२२
४२०१	संतविभवेहि तुल्ला	जीभा. २६६
४१६५	संतविभवो उ जाधे	जीभा. २६३
४३४२	संथारो उत्तिमट्ठे	निभा. तु. ३६०६, जीभा. ४५८
३४२४	संथारो देहंतं	निभा. तु. १२५३
४३४७	संथारो मउओ तस्स	निभा. तु. ३६०६, जीभा. ४६३
२२६२	संवच्छरं च झरए	पंकभा. १०८८
४२४१	संवच्छराणि चउरो	जीभा. ३४४
४२७१	संविग्गदुल्लभं खलु	जीभा. ३७६, निभा. ३८३६
४५४६	संविग्गे पियधम्मे	जीभा. ६६१
३६५६	संविग्गमसंविग्गे	निभा. ४५८७
३६६४	संविग्गमसंविग्गे	निभा. ४५६४
३६५७	संविग्गाण सगासे	निभा. ४५८८
३६५८	संविग्गादणुसिट्ठो	निभा. ४५८६
३६६०	संविग्गेहणुसिट्ठो	निभा. ४५६१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११८०	सकुडुंबो निक्खंतो	बृभा.तु. ६२६२
५३७	सगणम्मि नत्थि पुच्छा	निभा.तु. ६५८६
४२३३	सगणे आणाहाणी	जीभा.३३५
४०८६	सगनामं व परिचितं	जीभा.तु. १६६
११२८	सच्चं भण गोदावरि !	बृभा. ६२४६
२१४	सच्चित्तादी दव्वे	निभा. ६२६७
३६३६	सच्छंदमणिहिट्ठे	निभा.तु.४५३६
३१७०	सज्झायमचिंतेंता	आवनि.१३७३, निभा.६१२६
५८७	सट्ठाणाणुग केई	निभा.६६२६
११६०	सण्णी व सावगो वा	बृभा. ६३००
१०८६	सत्थऽग्गिं थंभेउं	बृभा.६२०७
४६८	सत्त उ मासा उग्घातियाण	निभा. ६५५७
४८७	सत्त-चउक्का उग्घातियाण	निभा. ६५४५
४६५	सत्त-चउक्का उग्घातियाण	निभा. ६५५४
१४२०	सत्तरत्तं तवो होति	बृभा.७०५, निभा.५५८६, पंकभा.२११७
४६६	सत्तारस पण्णारस	निभा. ६५५५
३१६१	सन्निहिताण वडारो	ओनि. ६५५, निभा.६१४२, आवनि.१३८४
४१७४	सपदपरूवण अणुसज्जणा	जीभा.२६७
४३८०	सपरक्कमे जो उ गमो	निभा.३६३६, जीभा.४६७, ४६८
४२२४	सपरक्कमे य अपरक्कमे	जीभा.३२४
४४३८	समणस्स उत्तिमट्ठे	जीभा.५६६
१२२३	समणाणं पडिरूवी	बृभा. ५०५०
३२२५	समणो तु वणे व भगंदले	निभा.६१६८, आवनि.१४०५
३२६६	समाधी अभत्तपाणे	बृभा.५५०६
३६६७	समुदाणं चरिगाण व	निभा.४५६७
४२७७	सयं चेव चिरं वासो	जीभा.३८४,निभा ३८४५
४१४	सयरीए पणपण्णा	निभा.६४७८
११७८	सरभेद-वण्णभेदं	बृभा. ६२६०
४३७५	सरीर-उवगरणम्मि य	निभा. ३६३३, जीभा.४६२
४३७२	सरीरमुज्झियं जेण	निभा. ३६३०, जीभा.४८६
४१७३	सव्वं पि य पच्छित्तं	जीभा.२६५
४३३१	सव्वं भोच्चा कोई	निभा.३८६५, जीभा.४४७
४२१८	सव्वण्णूहि परूविय	जीभा. ३१८
५६४	सव्वत्थ वि सट्ठाणं	निभा.६६३६
५६६	सव्वत्थ वि समासणे	निभा.६६३८
४१३७	सव्वम्मि बारसविहे	जीभा.२१६
४३५६	सव्वसुहप्पभवाओ	निभा.३६१६, जीभा.४७२
४३५५	सव्वाओ अज्जाओ	निभा. ३६१८, जीभा.४७१
४१८	सव्वासिं ठवणाणं	निभा. ६४८३
४३५३	सव्वाहि वि लद्धीहिं	निभा.३६१६, जीभा.४६६
३४५८	सव्वे वि दिट्ठरूवे	निभा.१२७०
४३४	सव्वे वि य पच्छित्ता	निभा.६४६६
४३५२	सव्वे सव्वद्धाए	जीभा.४६८, निभा.३६१५
६०८	सव्वेसिं अविसिट्ठा	निभा.६६५५
४१०	सव्वेसिं ठवणाणं	निभा. ६४७४
१०६३	सस्सगिहादीणि डहे	बृभा.६२११
५२७	ससणिद्धमादि अहियं	निभा.६५८०
५२६	ससणिद्धबीयघट्टे	निभा.६५७६
४०५६	सहसा अण्णाणेण व	जीभा.१३४
८६७	सागारियादि पलियंक	निभा.३४६५
२३५६	साधम्मिय वइधम्मिय	निभा.तु. २१५३
१३१२	साधारणं तु पढमे	बृभा.५४०७, निभा.५३०३, पंकभा.२५६४
६०३	सा पुण जहन्न उक्कोस	निभा. ६६४७
३११६	साभाविय तिण्णि दिणा	निभा. ६०८७, आवनि.१३३३
४१८६	सामाइयसंजताणं	जीभा.२८६
८८७	सामायारी वितहं	निभा.४३४६
११६३	सारिक्खतेण जंपसि	बृभा.६३०३
३१३१	सारीरं पि य दुविधं	निभा.६०६६, आवनि.१३४६
४२३०	सारेऊण य कवयं	जीभा.३३१, निभा. ३८१६
३६५४	सारेहिति सीदंतं	निभा.४५८४
१६७	सावेक्खो त्ति च काउं	जीभा.तु. २२१६
६१०	सावेक्खो त्ति च काउं	निभा.६६५७
४२०४	सावेक्खो पवयणम्मि	जीभा.३०३
४३८६	साहूणं रुद्धाइं	जीभा.५०४
२३२	सिग्घुज्जुगती आसो	निभा.६३११
४२३५	सिणेहो पेलवो होति	निभा.३८२१, जीभा. ३३७
४१५२	सीतघरं पिव दाहं	जीभा.२३६
३१४७	सीताणे जं दड्ढं	निभा.६११२, आवभा.२२२
२६३	सीस-पडिच्छे पाहुड	निभा.६३४०
१६८६	सीसे कुलव्विए व	पंकभा.२३५१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१०६ सीसेण कुतित्थीण व — जीभा.तु. १८७
१६८२-८५ सीसो पडिच्छओ वा — पंकभा. २३४७-५०
४२२० सुण जध निज्जवगऽत्थी — जीभा. ३२०
४०६४ सुत्तं अत्थे उभयं — जीभा. १४२
४१४० सुत्तं अत्थं च तहा — जीभा. २२३
३४०८ सुत्तं च अत्थं च दुवे वि काउं — निभा. १२३६
४१४१ सुत्तं गाहेति उज्जुत्तो — जीभा. २२४
११२७ सुतजम्म महुरपाडण — बृभा. ६२४५
३२२६ सुतनाणम्मि अभत्ती — निभा. ६१७१, आवनि. १४०८
३३६५ सुत्तनिवातो तणेसु — निभा. १२२४
४००६ सुत-सुह-दुक्खे खेत्ते — बृभा. ५४२३
२२५६ सुत्तागम बारसमा — पंकभा.तु. १०४०
४३७३ सुद्धं एसित्तु ठावेंति — निभा. ३६३१, जीभा. ४६०
२६५ सुद्धं पडिच्छिऊणं — निभा. ६३४२
५४५ सुद्धतवो अज्जाणं — निभा. ६५६१
२८७ सुद्धऽपडिच्छण लहुगा — निभा. ६३६३
६१७ सुद्धालंभि अगीते — निभा. ६६६०
४५६-६० सुबहूहि वि मासेहिं — निभा. ६५२०
२१६६ सुहसीलऽणुकंपातद्विते — पंकभा. ११०७
२१६७ सुहसीलताय पेसेति — पंकभा.तु. ११०६
१७०६ सूयपारायणं पढमं — पंकभा. २३७३
३१२२ सूरो जहण्ण वारस — निभा. ६०६२, ६०६३, आवनि. १३४२, १३४३
८५६ सेज्जायर कुल निस्सित — निभा. ४३४४
११४३ सेट्ठिस्स दोन्नि महिला — बृभा. तु. ६२५६
३१२६ सेणाहिवई भोइय — निभा. ६०६५, आवि १३४५
११७४ सेवगपुरिसे ओमे — बृभा. ६२८७
२२८३ सेलिय काणिट्टघरे — पंकभा.तु. १०७६
३१६० सेसा उ जधासत्ती — निभा. ६१२२, आवनि. १३६६, ओनि. ३३६
१७१६ सो अभिमुहेति लुद्धो — पंकभा. २३७८
४२५६ सो उ विविंचिय दिट्ठो — जीभा. ३६४
११८८ सोऊण अट्ठजायं — बृभा. ६२६८
४४८७ सोऊण तस्स पडिसेवणं — जीभा. ६३६
४५३७ सो जध कालादीणं — जीभा. ६८२
४५१६ सो तम्मि चेव दव्वे — जीभा. ६६६
४५१७ सो तम्मि चेव दव्वे — जीभा. ६७०
३६६१ सो पुण पडिच्छओ वा — निभा. ४५६२
४४८६ सो ववहारविहिण्णू — जीभा. ६३८
४४४२ सो वि अपरक्कमगती — जीभा. ५६६
४४५३ सो वि गुरूहिं भणितो — जीभा. ५८०
४१३५ सो सत्तरसो पुढवादियाण — जीभा. २१७
४१७१ सोहीए य अभावे — जीभा. २६१

ह

४३६२ हंदी परीसहचमू — निभा. ३६२५, जीभा. ४७८
४२८१ हवेज्ज जइ वाघातो — निभा. ३८४६, जीभा ३८८
५१५ हा दुट्ठु कतं हा दुट्ठु — निभा ६५७३
६८ हित-मित-अफरुसभासी — दशनि. २६६
२६८ हीणाधियविवरीते — निभा. ६३४५
४२६ होति समे समगहणं — निभा. ६४६१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आयुर्वेद और आरोग्य

प्रतिकूल भोजन का प्रभाव

वाहिविरुद्धं भुंजति, देहविरुद्धं च आउरो कुणति।

यः कश्चित् पुरुषो व्याधिग्रस्तो व्याधिविरुद्धं व्याधिप्रतिकोपकारि भुंक्ते, तथा य आतुरो ग्लानो ग्लानत्वभग्नः सन् देहविनाशकारि करोत्यनशनप्रत्याख्यानादि। (गा. ६६ टी. प. २६)

अंगमर्दन एवं विश्रामणा के लाभ

वातादी सट्ठाणं, वयंति बद्धासणस्स जे खुभिया।
खेदजओ तणुथिरया, बलं च अरिसादओ नेवं।।

वातादयो वातपित्तश्लेष्माणो ये बद्धासनस्य सतः क्षुभिताः स्वस्थानात् प्रतिचलितास्ते स्थानं व्रजंति स्वस्थानं प्रतिपद्यंते, ते न विक्रियां भजंतीति भावः, तथा वाचनाप्रदानतो मार्गगमनतो वा यः खेद उपजातः तस्य जयोऽपगमो भवति, तथा तनोः शरीरस्य स्थिरता दार्ढ्यं भवति, न विशरारुभावः, अत एव च बलं शरीरं तदुपष्टंभतो वाचिकं मानसिकं च तथा एवं विश्रामणातो वातादीनां स्वस्थानगमने अर्श आदयः अर्शांसि वातिकपित्तश्लेष्मजानि आदिशब्दात्तदन्यरोगा न उपजायंते, एते विश्रामणायां गुणाः। (गा. ६३ टी. प. ३४)

वमन-विरेचन आदि चिकित्सा किसके लिए ?

वमण-विरेयणमादी, कक्खडकिरिया जधाउरे बलिते।
कीरति न दुब्बलम्मी....।।

यद्यपि द्वावपि पुरुषौ सदृशरोगाभिभूतौ तथापि तयोर्मध्ये य आतुरः शरीरेण बलवान् तस्मिन् बलिके यथा वमनविरेचनादिका कर्कशक्रिया क्रियते न तु दुर्बले, तस्मिन् यथा सहते तथा अकर्कशा क्रिया क्रियते।

(गा. ५४४ टी. प. २६)

निद्रा का अभाव : अजीर्ण रोग का कारण

जग्गणे अजिण्णादी
रात्रौ जाग्रतामजीर्णादिदोषसंभवः।
निद्राया अभावे च अजीर्णदोषः। (गा. ६४७ टी. प. ५६)

कंटकविद्ध की चिकित्सा के तीन प्रयोग

परिमद्दण दंतमलादि.....।

कण्टकादिवेधस्थानानामङ्गुष्ठादिना परिमर्दनं। तदनन्तरं दन्तमलादिना आदिशब्दात्कर्णमलादिपरिग्रहः पूरणं कण्टकादिवेधानाम्। (गा. ६६३ टी. प. ६३)

लघु व्याधि से पूर्व गुरु व्याधि की चिकित्सा

वणकिरियाए जा होति, वावडा जर-धणुग्गहादीया।
काउमुवद्दवकिरियं, समेंति तो तं वणं वेज्जा।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्रणक्रियायां प्रारब्धायामपान्तराले या भवति व्यापदुपद्रवः काप्यापदित्याह ज्वरधनुग्रहादिका ज्वरो वा समुत्पन्नो धनुग्रहो वा वातविशेषः आदिशब्दात्तदन्येषां गुरुकव्याधिविशेषाणां जीवितान्तकारिणां परिग्रहः। तस्य व्यापल्लक्षणस्य उपद्रवस्य क्रियां कृत्वा ततः पश्चात्तं व्रणं वैद्याः शमयन्ति। (गा. ७०० टी. प. ७२)

वाक्पाटव के लिए ब्राह्मी का प्रयोग

ब्राह्म्याद्यौषधोपयोगतो वाक्पाटवम्। वाक्पाटवकारि ब्राह्म्याद्यौषधं दीयताम्।

शरीर की लघुता के लिए प्रयोग

शरीरजाड्यापहार्यौषधाभ्यवहारतः शरीरलघुता।

मेधा और धारणा-बल कैसे ?

दुग्धप्रणीताहाराभ्यवहारतो मेधाविशिष्टं च धारणाबलम्।

ऊर्जा और पाटव कैसे ?

सर्पिः सन्मिश्रभोजनभुक्तित ऊर्जा, घृतेन पाटवम्। (गा. ७५७ टी.प.८४)

आंख का प्रत्यारोपण

तीए देवयाए भणियं-अच्छीणि अप्पदेसीभूयाणि, खवगो भणति-कह वि करेही, ताहे सज्जो मारियस्स एलगस्स सप्पएसाणि सेहखमगस्स लाइयाणि। (गा. ७६५ टी. प. ६६)

नाक का अर्श होने का एक कारण

ततो रुधिरगंधेन तयोः श्रमणयोर्नाशार्शास्युपजायन्ते। (गा. १०१५ टी.प.११)

वात से धातुक्षोभ होने पर आहार और शय्या का विवेक

निद्धमहुरं च भत्तं, करीससेज्जा य नो जधा वातो।

यदि वातादिना धातुक्षोभोऽस्य सञ्जात इति ज्ञायते तदा भक्तमपथ्यपरिहारेण स्निग्धं मधुरं च तस्मै दातव्यम्। शय्या च करीषमयी कर्तव्या, सा हि सोष्णा भवति। उष्णे च वातश्लेष्मापहारः। (गा. १०६८ टी.प.३२)

उन्माद रोग के तीन कारण

पित्तमूर्च्छया पित्तोद्रेकेण उपलक्षणमेतद् वातोद्रेकवशतो वा स्याद् उन्मादः। (गा. ११४८ टी.प.४१)

पित्त की चिकित्सा-विधि

वाते अब्भंगसिणेहपज्जपादी तहा निवाए य।
सक्करखीरादीहि य, पित्ततिगिच्छा तु कायव्वा।। (गा. ११५२ टी. प. ४२)

वर्षाकाल में तप का लाभ

वर्षाकाले स्निग्धतया बलिको बलियान् तपः कुर्वतां बलोपष्टम्भं करोति। (गा. १३४० टी.प.८१)

पागल कुत्ता काटने पर चिकित्सा

कोऽप्यलर्केण शुना खादितः स यदि तस्यैव शुनकस्य मांसं खादति, ततः प्रगुणीभवति। (गा. १३५६ टी.प.८७)

वायुक्षोभ का कारण

अतिरिक्तकर्म अतिरेकेण वातादिक्षोभो भवति। (गा. १३६२ टी.प.१०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मलमूत्र के निरोध से हानि।

पुरीषादिधारणे जीवितनाशादि।

मुत्तनिरोहे चक्खुं, वच्चनिरोहे य जीवियं चयति। (गा. १७७२ टी.प.१०)

गरिष्ठभोजन से कामोत्तेजना

प्रणीतरसभोजने च दोषाः कामोद्रेकादयः शरीरोपचयादिभावात्। (गा. १७७५ टी. प. १०)

मिताहार के लाभ

सव्वे वप्पाहारा, भवंति गेलण्णमादिदोसभया।

ग्लान्यादिदोषभयात् सर्वेऽपि तेऽल्पाहारा भवन्ति। (गा. १७६२ टी. प. १३)

धातुक्षोभ से मरण

धातुक्खोभेण वा धुवं मरणं। (गा. १६६१)

व्रणचिकित्सा के लिए विविध साधन

भणंति वणतिल्लाइं, घयदव्वोसहाणि य।

व्रणसंरोहकानि तैलानि व्रणतैलानि, तथातिजीर्णं घृतं द्रव्यौषधानि च यैरौषधैः संयोजितैस्तैलं घृतं वातिपच्यते।

व्रणसंरोहकं चूर्णो वा व्रणसंरोहणाय भवंति तानि द्रव्यौषधानि। (गा. २४०५ टी. प. २२)

व्रणों को सीने का निर्देश

भग्गसिव्वित संसित्ता वणा वेज्जेहिं जस्स उ।

ये च व्रणितास्तेषां व्रणाः सीवितास्ते औषधैः संसिक्ताः। (गा. २४०६ टी. प. २२)

अभ्यंग, शिरोवेध आदि द्वारा चिकित्सा

अब्भंगसिरावेधो, अपाणछेयावणेज्जाइं।

ग्लानस्याभ्यङ्गं शिरावेधोऽपानमपानकर्मच्छेदेनापनीयानि छेदापनीयानि। (गा. २५०५ टी. प. १०)

प्रचुर पानी पीने से अजीर्ण

खद्धादियणगिलाणे।

तृष्णाभिभूतः खद्धस्य प्रचुरस्य पानीयस्यादानं ग्रहणं कुर्यात् प्रचुरं पानीयं पिबेदित्यर्थः। ततो भक्ताजीर्णतया ग्लानो भवेत्। (गा. २५३३ टी.प. १५)

स्निग्ध और रुक्ष आहार का मूत्र पर प्रभाव

स्निग्धआहारस्तथापि कायिकी व्युत्सर्गाय पुनः पुनरुत्तिष्ठामि आचार्यस्तु रुक्षाहारोऽपि कायिकी व्युत्सर्गाय नोत्तिष्ठति। (गा. २५५३ टी.प.२०)

वात एवं पित्त प्रकोप कैसे ?

भिक्षामटतो वातो वातप्रकोपो भवति तथा अत्युष्णपरितापनात् पित्तमुद्रिक्तो भवति।

प्रतिकूल भोजन से रोग

अकारकं चेद् द्रव्यं लभते तस्य भोजने ग्लानत्वम्। (गा. २५७३ टी. प. २३)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्वासरोग तथा कटिरोग का एक कारण

भारेण वेयणाए हिंडंते उच्चनीयसासो वा।
बाहुकडियायगहणं.......।
भारेण वेदनायां सत्यां हिण्डमानस्य श्वासो भवति। तथा बाहोः कटेश्च वातेन ग्रहणं भवति। (गा. २५७४ टी.प. २४)

प्रचुर पानी पीने से अजीर्ण, वमन आदि

अच्चुण्हताविए उ, खद्ध दवादियाण छड्डणादीया।
अत्युष्णेन परितापितः सन् खद्धं प्रचुरद्रवं पानीयमतितृषित आददीत्। तथा समुद्दिष्टोऽपि तथा परितापभावतः पुनः पुनः पानीयमापिबेत्। तथा चाहारः पानीयेन प्लावितः सन् न जीर्येत्। अजरणाच्च च्छर्दनं वमनं भवेत्। आदिशब्दादाहाररुचिर्नोपजायते। (गा. २५७५ टी.प.२४)

पित्त की उग्रता से भ्रमि

वहिया य पित्तमुच्छा, पडणं उण्हेण वावि वसधीए।
उष्णेन परितापितस्य पित्तप्रकृतेर्बहिः पित्तमूर्च्छावशतः पतनं भवेत्। (गा. २५७६ टी.प.२४)

परिश्रम से बुद्धि की क्षीणता

परिश्रमेण बुद्धेः संव्यापादनात्। (गा. २५६६ टी.प.२८)

हाथ मुंह धोने के लाभ

मुह-नयण-दंत-पायादि, धोव्वणे को गुणोत्ति ते बुद्धी।
अग्गिमतिवाणिपडुया, होति अणोत्तप्पया चेव।।
मुखदन्तादिप्रक्षालनेऽग्निपटुता जाठराग्निप्राबल्यं मतिपटुता वाक्पटुता च। (गा. २६८३ टी.प.४३)

मंदाग्नि में प्रचुर भोजन से रोगोत्पत्ति

मंदग्गी भुंजते खद्धं।
मन्दाग्निः प्रचुरं भुङ्क्ते ततो ग्लानत्वादिदोषसंभवः। (गा. २७७३ टी.प.५६)

कुष्ठ रोग के प्रकार

संदंतमसंदंतं, अस्संदण चित्त मंडल पसुत्ती।
किमिपूयं लसिगा वा, पस्संदति तत्थिमा जतणा।।
द्विविधस्त्वग्दोषस्तद्यथा-स्पन्दमानोऽस्पंदमानश्च। तत्रास्पन्दमानोऽस्रावणश्चित्रप्रसुप्तिर्मण्डलप्रसुप्तिश्च। यस्तु स्पन्दमानः स कृमीन् प्रस्पन्दते पूतं वा रसिकां वा। (गा. २७८३ टी.प.६१)

संक्रामक रोगी को कहां रखें ?

संदंतो वक्खारो, अंतो बाहिं च सारणा तिण्णि।
स्पन्दमाने त्वग्दोषेऽनंतरेकस्यां वलभ्यां विष्वगपवरके तस्याभावे एकस्मिन्निवेशनेऽन्यस्यां वसतौ स्थाप्यते।
(गा. २७८४ टी. प. ६१)

संक्रामक रोग से सावधानियां

पासवणफासलाला पस्सेए......

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्पन्दमानत्वग्दोषवतः प्रश्रवणस्पर्शनेनापि व्याधिरन्यत्र संक्रामति। तथा गात्रस्पर्शनेन यदि वा तेन व्याधितेन ये परिभुक्ताः पीठफलकादयस्तान् यद्यव्याधितः परिभुंक्ते तदा व्याधिः संक्रामति। तथा लालया सह भोजने व्याधिः संक्रामति। तस्य प्रस्वेदने यदि कोऽपि स्पृश्यते तदा तस्यापि शेषसाधूनां व्याधिः संक्रमेदिति हेतोस्तथा न केवलं दूरे संस्तारकः क्रियते। किन्तु तेन त्वग्दोषवता यत्स्पृष्टं वस्त्रादि तत्परिहरन्ति। (गा. २७८८ टी. प. ६१, ६२)

न य भुंजंतेगट्ठा, लालादोसेण संकमति वाही।

सेओ से वज्जिज्जति, जल्ल-पडलंतरकप्पो य।।

न च एकार्थे एकस्मिन्पात्रे तेन त्वगदोषवता सह साधवो भुंजते। कुत इत्याह यतो लालादोषेण संक्रामति व्याधिः। तथा से तस्य त्वग्दोषवतः स्वेदप्रस्वेदो वर्ज्यते। तथा जल्लः शरीरमल्लस्तथा तत्सत्कानि पात्रपटलानि तथा आन्तरकल्पश्च परिह्रियते व्याधिसंक्रमभयात्। (गा. २७९१ टी.प.६२)

संक्रामक व्याधियां

कुट्ठ-खय-कच्छुयऽसिवं, नयणामय-कामलादीया।

किं नाम त्वग्दोष एव उतान्यस्मिन्नपि रोगे तत आह—कुष्ठे क्षयव्याधौ कृच्छां पामायामशिवे शीतलिकायां नयनाऽमये नयन दोषे कामलादौ। (गा. २७९२ टी.प.६२)

विष : सहज और संयोगज

सहजं सिंगियमादी, संजोइमघतमहुं च समभागं।

दव्वविसं णेणविहं।

सहजं द्रव्यविषं शृङ्गिकादि। संयोगिमं घृतं मधु च समभागं। (गा. ३०२६ टी.प.३५)

व्रण-चिकित्सा

व्रणादौ निप्रगले धौते उपरि क्षारप्रक्षेपः पुरस्सरं त्रयो बन्धा उत्कर्षतो भवन्ति। (गा. ३२२४ टी.प.६८)

भगंदर रोग की चिकित्सा

श्रमणो व्रणे वा भगन्दरे वा परिगलति हस्तशताद्बहिर्गत्वा निःप्रगलं प्रक्षाल्य चीवरे क्षारं क्षिप्त्वा उपर्यन्यत् चीवरं कृत्वा व्रणं भगन्दरं बध्नाति। (गा. ३२२५ टी.प.६८)

अजीर्ण का एक कारण

प्रवाते स्वपतोऽजीर्णमुपजायते। (गा. ३३८५ टी.प.२)

संतुलित आहार

अद्धमसणस्स सव्वंजणस्स कुज्जा दवस्स दो भाए।

वायपविचारणट्ठा, छब्भागं ऊणयं कुज्जा।।

अर्धमुदरस्य सव्यंजनस्य दधितक्रतीमनादिसहितस्याशनस्य योग्यं कुर्यात्। द्वौ भागौ द्रवस्य पानीयस्य योग्यौ षष्ठं तु भागं वातप्रविचरणार्थमूनकं कुर्यात्। इयमत्र भावना उदरस्य षड्भागाः कल्पन्ते। तत्र त्रयो भागा अशनस्य सव्यञ्जनस्य द्वौ भागौ पानीयस्य षष्ठो वातप्रविचारणाय। एतच्च साधारणे प्रावृट्काले चत्वारो भागा सव्यञ्जनस्याशनस्य पञ्चमः पानीयस्य षष्ठो वातप्रविचाराय उष्णकाले द्वौ भागावनशनस्य सव्यञ्जनस्य। त्रयः पानीयस्य षष्ठो वातप्रविचारणायेति।

(गा. ३७०१ टी.प.६०)

मधुमेह रोगी का मूत्र अपेय

पमेहकणियाओ य, सरक्खं पाहु सूरयो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सो उ दोसकरो वुत्तो, तं च कज्जं न साधए।।

प्रमेधकणिकाः सरजस्कं पदैकदेशे पदसमुदायोपचारात् सरजस्काधिराजं प्राहुः सूरयः स च सरजस्काधिराज आपीयमानो दोषकर उक्तः। (गा. ३७९७ टी.प-१६)

मुंह में तैल रखने के लाभ

लुक्खत्ता मुहजंतं, मा हु खुभेज्ज त्ति तेण धारेति।
मा हु नमोक्कारस्सा, अपच्चलो सो हविज्जाही।।

पारणके एकान्तरितं तैलं गंडूषं चिरकालं धारयति। धारयित्वा खेलमल्लके सक्षारे निसृजति त्यजति। ततो वदनं प्रक्षालयति। किं कारणं गल्ले गंडूषधारणं क्रियते उच्यते—मा मुखयन्त्रं रुक्षत्वाद्वा तेन क्षुभ्येदेकत्र संपिण्डीभूयते तथा च सति मा स नमस्कारस्य भणनेऽप्रत्यलोऽसमर्थो भवेदिति हेतोर्गल्ले तैलधारणं करोति। (गा. ४२४८ टी.प.५७)

वायु से स्तब्धता

संबद्धहत्थपादादओ, व वातेण होज्जाहि।
हस्तपादादयो वातेन सम्बद्धाः भवेयुः। (गा. ४३८८ टी.प.७६)

सर्प के विष की चिकित्सा

वंजुलरुक्खो व जह उ उरगविसं।
वंजुलवृक्ष उरगविषं प्रविनयति। (गा. ४१५२ टी. प.४५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कायोत्सर्ग एवं ध्यान के विकीर्ण तथ्य

आवश्यक में कायोत्सर्ग न करने पर प्रायश्चित्त

आवश्यके यद्येकं कायोत्सर्गं न करोति ततः प्रायश्चित्तं निर्विकृतिकं, कायोत्सर्गद्वयाकरणे पूर्वार्द्धं, त्रयाणामपि कायोत्सर्गाणामकरणे आचाम्लं, सर्वस्यापि वावश्यकस्याकरणे अभक्तार्थमिति। (गा. ११ टी.प. ८)

गमन आदि में कायोत्सर्ग

गमणागमण-वियारे, सुत्ते वा सुमिण-दंसणे राओ।
नावा-नदिसंतारे, पायच्छित्तं विउस्सग्गो॥

प्रयोजनेषु गमनमात्रेऽपि ऐर्यापथिकीप्रतिक्रमणपुरस्सरं कायोत्सर्गः प्रायश्चित्तं, तदनंतरं कार्यसमाप्तौ भूयः स्वोपाश्रयप्रवेशे आगमनमात्रे कायोत्सर्गः, शेषेषु प्रयोजनेष्वपांतराले विश्रामणासंभवे गमनागमनयोरिति वियारे इति वियारो नाम उच्चारादिपरिष्ठापनं, तत्रापि प्रायश्चित्तं कायोत्सर्गः,... सूत्रविषयेषु उद्देशसमुद्देशानुज्ञाप्रस्थापनप्रतिक्रमण श्रुतस्कंधांगपरिवर्त्तनादिश्च विधिसमाचरणपरिहाराय प्रायश्चित्तं कायोत्सर्गः... सुमिणदंसणेराउ इति उत्सर्गतो दिवा स्वप्नुमेव न कल्पते ततो रात्रिग्रहणं रात्रौ स्वप्नदर्शने प्राणातिपातादिसावद्यबहुले कदाचिदनवद्यस्वप्नदर्शने वा अनिष्टसूचके... दुःशकुनदुर्निमित्तेषु वा तत्प्रतिघातकरणाय कायोत्सर्गकरणं प्रायश्चित्तं, नाभिप्रमाणे उदकसंस्पर्शे लेप तत उपरि उदकसंस्पर्शे तदुपरि चतुर्थो नदीसंस्तारो बाहूडुपादिभिः एतेष्वपि सर्वत्र यतनयोपयुक्तस्य प्रायश्चित्तं कायोत्सर्गः। (गा. ११० टी. प. ३९)

भत्त, पान, गमन आदि में २५ उच्छ्वास-निःश्वास का कायोत्सर्ग

भत्ते पाणे सयणासणे य, अरहंत-समणसेज्जासु।
उच्चारे पासवणे, पणवीसं होंति ऊसासा॥ (गा. १११)

गमनं प्रतिक्रामतो गमनविषयं प्रतिक्रमणं कुर्वतः कायोत्सर्गः प्रायश्चित्तं स च कायोत्सर्गः पंचविंशत्युच्छ्वासप्रमाणः उच्छ्वासाश्च पादसमा इति पंचविंशतेश्चतुर्भिः भागे हृते षट्श्लोका एकपादाधिका लभ्यंते ततश्चतुर्विंशतिस्तवः 'चंदेसु निम्मलयरा' इति पादपर्यंतं कायोत्सर्गे चिंतनीय इति भावः। (गा. ११२ टी.प.३९, ४०)

परिष्ठापन क्रिया में कायोत्सर्ग

यदापि हस्तशतस्याभ्यंतरे उच्चारं प्रश्रवणं तन्मात्रकं वा परिष्ठापयति तदापि विचारे इति वचनात् ऐर्यापथिकीप्रतिक्रमणपुरस्सरः पंचविंशत्युच्छ्वासप्रमाणः कायोत्सर्गः प्रायश्चित्तं। (गा. ११३ टी. प. ४०)

उद्देश, समुद्देश आदि में करणीय कायोत्सर्ग

उद्देशो वाचनासूत्रप्रदानमित्यर्थः, समुद्देशो व्याख्याअर्थप्रदानमिति भावः, अनुज्ञासूत्रार्थयोरन्यप्रदानं, प्रदानं प्रत्यनुमननं एतेषु तथेतिशब्दोऽनुक्तसमुच्चयार्थस्तेन श्रुतस्कंधपरिवर्तने अंगपरिवर्तने च कृते तदुत्तरकालमविधिसमाचरणपरिहाराय प्रायश्चित्तं कायोत्सर्गः सप्तविंशत्युच्छ्वासप्रमाणं पर्यन्तैकपादहीनः समस्तश्चतुर्विंशतिस्तवस्तत्र चिंतनीय इति भावः, अट्ठेव य इत्यादि। प्रस्थापनं स्वाध्यायस्य प्रतिक्रमणः कालस्य तयो करणे कायोत्सर्गः प्रायश्चित्तमष्टावेवोच्छ्वासः अष्टोच्छ्वासप्रमाणः आदिशब्दात् पानकमपि परिस्थाप्य ऐर्यापथिकी प्रतिक्रमणोत्तरकालं कायोत्सर्गोऽष्टोच्छ्वासप्रमाणः करणीयः। (गा. ११४ टी. प. ४०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपशकुन होने पर कायोत्सर्ग

इह यदि वहिर्गमनं प्रयोजनानंतरप्रारंभे वा वस्त्रादेः स्खलनं भवति, आदिशब्दात् शेषापशकुनदुर्निमित्तपरिग्रहः तेषु सर्वेषु स्खलितादिषु समुपजातेषु विवक्षितप्रयोजनव्याघातसूचकेषु समुद्गतेषु तत्प्रतिघातनिमित्तं पंचमंगलमष्टोच्छ्वासप्रमाणं नमस्कारसूत्रं ध्यायेत् यदि वा यौ वा तौ वा स्वाध्यायभूतौ द्वौ श्लोकौ चिंतयेत् अथवा यावता कालेन द्वौ श्लोकौ चिंत्येते तत्क्षणं तावंतं कालं एकाग्रः कायोत्सर्गस्थः सन् शुभमना भूयात्। (गा. ११७ टी. प. ४१)

दो तीन वार अपशकुन होने पर कायोत्सर्ग

द्वितीयं वारं पुनस्तथा तेनैव प्रकारेण स्खलितादिषु विवक्षितप्रयोजनव्याघातसूचकेषु समुद्भूतेषु तत्प्रतिघातनिमित्तं कायोत्सर्गउच्छ्वासाः षोडश भवंति षोडशोच्छ्वासप्रमाणः कायोत्सर्गः क्रियते इति भावः तइयम्मि उ इत्यादि तृतीयवारे तृतीयस्यां वेलायां स्खलितादिजातेषु तत्प्रतिघातनिमित्तं कायोत्सर्गे द्वात्रिंशदुच्छ्वासाः प्रतिक्षपणीयाः चतुर्थे वारे स्खलितानां प्रवृत्तौ स्वस्थानात् विवक्षितादन्यत् स्थानं न गच्छति उपलक्षणमेतत् नाप्यन्यत् प्रारभते, अवश्यंभाविविघ्नसंभवात्। (गा. ११८ टी. प. ४१)

प्राणवध आदि होने पर कायोत्सर्ग

प्राणवधे मृषावादे अदत्तादाने मैथुने परिग्रहे च स्वप्ने कृते कारिते अनुमोदिते च केवलं मैथुने कारितेऽनुमोदिते एवं स्वयं कृते इत्थीविप्परियासे इत्यादिना प्रायश्चित्तस्य वक्ष्यमाणत्वात् कायोत्सर्गः प्रायश्चित्तं, तत्र कायोत्सर्गे शतमेकमन्यूनमुच्छ्वासानां क्षपयेत् पंचविंशत्युच्छ्वासप्रमाणं चतुर्विंशस्तवं चतुरो वारान् ध्यायेत् इति भावः। (गा. ११९ टी. प. ४१)

२५ या २७ श्लोकिक कायोत्सर्ग कब ? कैसे ?

महाव्रतानि दशवैकालिकश्रुतबद्धानि कायोत्सर्गे ध्यायेत्, तेषामपि प्रायः पंचविंशतिश्लोकप्रमाणत्वात्,यदि वा यान् वा तान् वा स्वाध्यायभूतान् पंचविंशतिश्लोकान् ध्यायेत्, स्त्रीविपर्यासे पुनःस्वप्नसंभूते प्रायश्चित्तं कायोत्सर्गः सप्तविंशतिश्लोकिकः सप्तविंशतिश्लोकवान् अष्टोत्तरशतमुच्छ्वासानां तन्निमित्ते कायोत्सर्गे क्षपयेदिति भावः। (गा. १२० टी. प. ४१)

कायोत्सर्ग का कालमान

उच्छ्वासाः कालप्रमाणेन भवन्ति ज्ञातव्याः। पादसमाः, किमुक्तं भवति यावत् कालेनैकश्लोकस्य पादश्चिंत्यते तावत्कालप्रमाणः कायोत्सर्गे उच्छ्वास इति तत्कालमुच्छ्वासानां कायोत्सर्गे ज्ञातव्यं।

कायिक-वाचिक-मानसिक ध्यान का प्रतिनिधि : कायोत्सर्ग

अथ ध्यानं योगनिरोधात्मकं, तत्र कायोत्सर्गे किं ध्यानं उच्यते। ध्येयो योगनिरोध इति पूर्वमहर्षिवचनात् तच्च योगनिरोधात्मकं ध्यानं त्रिधा, तद्यथा काययोगनिरोधात्मकं, वाग्योगनिरोधात्मकं, मनोयोगनिरोधात्मकं च, तत्र कायोत्सर्गे किं ध्यानं ? उच्यते त्रिविधमपि, मुख्यतस्तु कायिकं। (गा. १२१ टी. प. ४२)

कायोत्सर्ग में अन्य योगों का भी निरोध

कायचेट्ठं निरुंभित्ता, मणं वायं च सव्वसो।
वट्टति काइए झाणे, सुहुमुस्सासवं मुणी।।

कायचेष्टां कायव्यापारं तथा मनोवाचं सर्वशः सर्वात्मना निरुध्य कायोत्सर्गः क्रियते, ततः कायोत्सर्गस्थो मुनि सूक्ष्मोच्छ्वासवान् उपलक्षणमेतत् सूक्ष्मदृष्टिसंचारादिवांश्च, न खलु कायोत्सर्गे सूक्ष्मोच्छ्वासादयो निरुध्यंते। (गा. १२२ टी. प. ४२)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कायोत्सर्ग में तीनों ध्यान

न विरुध्येते उत्सर्गे कायोत्सर्गे ध्याने वाचिकमानसे वाङ्मनोयोगयोरपि विषयांतरतो निरुध्यमानत्वात्...तीरितः परिपूर्णे सति सम्यग्विधिना पारितस्तस्मिन् तीरिते कायोत्सर्गे पुनस्त्रयाणां ध्यानानामन्यतरत्, अन्यतमत् स्यात्। पुनस्त्रितयमपि भंगिकश्रुतगुणनव्यतिरेकेण प्रायोऽन्यत्र व्यापारांतरे ध्यानत्रितयासंभवात्। (गा. १२३ टी. प. ४२)

कायोत्सर्ग के लाभ

मणसो एगग्गत्तं, जणयति देहस्स हणति जड्डत्तं।
काउस्सग्गगुणा खलु, सुह-दुहमज्झत्थया चेव॥

कायोत्सर्गस्य गुणाः कायोत्सर्गगुणाः खल्वमी तद्यथा कायोत्सर्गे सम्यग्विधिना विधीयमानो नाम मनसश्चित्तस्य एकाग्रत्वमेकाग्रलंबनतां जनयति, तच्चैकाग्रत्वं परमं ध्यानं-जं थिरमज्झवसाणं तं ज्झाणमिति वचनात्-देहस्य शरीरस्य जडत्वं जाड्यं हंति विनाशयति, प्रयत्नविशेषतः परमलाघवसंभवात् तथा कायोत्सर्गस्थितानां वासीचंदनकल्पत्वात् सुखदुःखमध्यस्थता सुख-दुःखे परैरुदीर्यमाणे रागद्वेषाकरणमन्यथा सम्यक्कायोत्सर्गस्यैवासंभवात्। (गा. १२४ टी. प. ४२)

आवश्यक में कायोत्सर्ग न करने पर प्रायश्चित्त

आवश्यके एकं कायोत्सर्गं न करोति मासलघु, द्वौ न करोति द्विमासलघु, त्रीन् कायोत्सर्गान्न करोति त्रिमासलघु, सकलमेवावश्यकं न करोति चतुर्मासलघु। (गा. १२६ टी. प. ४४)

आवश्यके प्राभातिके वैकालिके वा यावतः कायोत्सर्गान् न करोति तति मासास्तस्य प्रायश्चित्तं, एकं चेन्न करोति एको लघुमासः। द्वौ न करोति द्वौ लघुमासौ त्रीन्न करोति त्रयो लघुमासा। (गा. १३१ टी. प. ४५)

कायोत्सर्ग के घटक तत्त्व

करेमि काउस्सग्गं निरुवस्सग्गवत्तियाए सद्धाए मेहाए धिइए धारणाए। (गा. ५४६ टी. प. २६)

तीन कायोत्सर्ग कब ?

कायोत्सर्गमाद्यं कृत्वा वसतावागत्य च गुरुभिः सह कुर्वन्ति। अथवा द्वौ कायोत्सर्गौ कृत्वा यदि वा त्रीन् कायोत्सर्गान् कृत्वा अथवा कायोत्सर्गत्रयानन्तरं यत्कृतिकर्म्मस्तत्कृत्वा।... चरमकायोत्सर्गं वसतावागत्य गुरुसमीपे वन्दनकं कृत्वा सर्वोत्तमश्च ज्येष्ठः आलोच्य सर्वे प्रत्याख्यानं गृह्णन्ति। (गा. ६८६ टी. प. ६८)

कायोत्सर्ग से आहूत देवता द्वारा आंख का प्रत्यारोपण

शैक्षकानुकम्पया देवताराधनार्थं कायोत्सर्गः कृतस्तेन देवताया आकम्पनमावर्जनमभूत्ततः सद्यः मारितस्य एडकस्य सप्रदेशयोरक्ष्णोस्तत्र निवृत्तिः निष्पत्तिः कृतः। (गा ७६७ टी. प. ६६)

प्रतिमा निर्वहन के लिए कायोत्सर्ग

निरुपसर्गनिमित्तमुपसर्गाभावेन सकलमपि प्रतिमानुष्ठानं निर्वहत्वित्येतन्निमित्तं कायोत्सर्गं करोति। (गा. ७६९ टी. प. ६६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवता-आह्वान के लिए कायोत्सर्ग

किमयं दैविको देवेन भूतादिना कृत उपद्रव उत धातुक्षोभज इति ज्ञातुं देवताराधनाय उत्सर्गः क्रियते। तस्मिंश्च क्रियमाणे यदाकंपितया देवतया कथितं तदनुसारेण ततः क्रिया कर्त्तव्या। (गा. १०६८ टी. प. ३२)

कायोत्सर्ग से आहूत देव द्वारा भूतचिकित्सा का निर्देश

कायोत्सर्गेण देवतामाकम्प्य तद्वचनतः का क्रिया कर्त्तव्येत्यत आह—भूतचिकित्सा भूतोच्चाटिनी चिकित्सा भूतचिकित्सा। (गा. ११४६ टी. प. ४०)

वरधनु और आचार्य पुष्यभूति का निश्चल और सूक्ष्म ध्यान

वरधणुग-पुस्सभूती, कुसलो सुहुमे य झाणम्मि।

यथा पुष्यभूतिराचार्यः सूक्ष्मे ध्याने कुशलः सन् ध्यानवशाद् निश्चलो निरुच्छ्वासोऽतिष्ठत्।… वरधनुना मृतकवेषकः कृतस्तथा निश्चलो निरुच्छ्वासः सूक्ष्ममुच्छ्वसत् तिष्ठति। (गा. ११७८ टी. प. ४७)

यथार्थ निर्णय के लिए कायोत्सर्ग

भूतार्थनिर्णये तवो त्ति तपस्वी कायोत्सर्गेण देवतामाकम्प्य पृच्छति। (गा. १२४३ टी.प. ६०)

कायोत्सर्ग द्वारा सम्यग्वादी मिथ्यावादी का निर्णय

तपस्वी क्षपको देवताराधनार्थं कायोत्सर्गं कुर्यात्। कायोत्सर्गे च देवतामाकम्प्य पृच्छति को तयोर्द्वयोर्मध्ये सम्यग्वादी को वा मिथ्यावादीति तत्र यद्देवता ब्रूते। (गा. १२४७ टी. प. ६१)

विविध स्थितियों में कायोत्सर्ग

प्रथमे चरमे च कारणे समुपजाते उभयस्मिन्नप्याचार्ये प्रतीच्छके च विधिःस्मरति छिन्नोपसंपदिति ज्ञापनार्थं कायोत्सर्गं कृत्वा स प्रतीच्छको व्रजेत्, अथ प्रातीच्छिकस्य विस्मृतं तत आचार्येण स्मारयितव्यं यथा कुरु छिन्नोपसंपन्निमित्तं कायोत्सर्गमिति, अथानाभोगतो द्वयोरपि पम्हुट्ठमिति एकान्तेन विस्मृतं ततो द्वयोरप्येकान्तेन विस्मृतावकृते कायोत्सर्गे सम्प्रस्थितो यदासन्ने प्रदेशे स्मरति, तदासन्नात् निवर्तेत, निवृत्य च कायोत्सर्गो विधेयः। (गा. २११४ टी. प. ७४)

अथ दूरं गत्वा स्मृतवान् ततो दूरगतेन स्मृतेन साधर्मिकं दृष्ट्वा तस्य सकाशे समीपे कायोत्सर्गः करणीयः, सन्देशश्च प्रेषणीयः, आचार्यस्य यथा तदानीं युष्मत् समीपे कायोत्सर्गकरणं विस्मृतमिदानीममुकस्य साधर्मिकस्य समीपे कृतः कायोत्सर्ग इति कायोत्सर्गं च कृत्वा यदकृते कायोत्सर्गे सचित्तादिकमुत्पन्नं तत्प्रेषयति। (गा. २११५ टी. प. ७४)

छिन्न उपसंपदा की प्रतीति के लिए कायोत्सर्ग

योगं वहन् गणान्तरमन्यत्र संक्रामन् छिन्ना उपसम्पदिदानीमिति प्रतिपत्त्यर्थं कायोत्सर्गं कृत्वा व्रजेत्। (गा. २११६ टी. प. ७४)

अत्राप्यागाढयोगे पूर्णेऽपूर्णे वा आचार्येण यस्य सकाशे योगं प्रतिपन्नस्तेन सूरिणा विसर्जिता, विसर्जने कृते छिन्ना उपसम्पदिति ज्ञापनार्थं संस्मरन् कायोत्सर्गं कुर्यात्। (गा. २१२२ टी. प. ७५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अस्वास्थ्य में आयंबिल एवं कायोत्सर्ग द्वारा चिकित्सा

एकस्मिन् दिवसे कायोत्सर्गो, द्वितीये दिवसे निर्विकृतिकं, तृतीये दिवसे कायोत्सर्गश्चतुर्थे निर्विकृतिकं। एवमेकान्तरिते कायोत्सर्गनिर्विकृतिके नवदिवसान् यावत् कारयेत् तथाप्यतिष्ठति ग्लानत्वे दशमे दिवसे योगो निक्षिप्यते।
(गा. २१३५ टी. प. ७७)

कायोत्सर्ग द्वारा देवता का आह्वान

कायोत्सर्गेण देवतामाकम्प्य ततः क्षपकस्य कायोत्सर्गकरणं देवताया आकम्पनम्। सा आगता ब्रूते संदिशत किं करोमि ?
(गा. २३३१ टी. प. ८)

अनुयोग के प्रारम्भ में कायोत्सर्ग

अनुयोगारंभनिमित्तं कायोत्सर्गम्। (गा. २६५१ टी. प. ३७)

महापान (महाप्राण) ध्यान कितना ? किसके ?

बारसवासा भरधाधिवस्स, छच्चेव वासुदेवाणं।
तिण्णि य मंडलियस्सा, छम्मासा पागयजणस्स।।

महाप्राणध्यानमुत्कर्षतो भरताधिपस्य चक्रवर्तिनो द्वादशवर्षाणि यावद् भवति, षट् वर्षाणि यावद् वासुदेवानां बलदेवानामित्यर्थः। त्रीणि वर्षाणि माण्डलिकस्य, षण्मासान् यावत् प्राकृतजनस्य। (गा. २७०१ टी. प. ४५)

भद्रबाहु की महापानध्यान साधना

पूर्वगते अधीते बाहु स नामे भद्रबाहुरिव पूर्वगतं पश्चान्महापानध्यानबलेन मिनोति निःशेषमात्मेच्छया तावन्न निवर्तते ततश्चिरकालमपि वसति, तस्य न कोऽप्यपराधः प्रायश्चित्तदण्डो। (गा. २७०३ टी. प. ४६)

महापान ध्यान का निर्वचन

पिबति अर्थपदानि यत्रस्थितस्तत्पानं, महच्च तत्पानं च महापानमिति। (गा. २७०३, टी. प. ४६)

चारों दिशाओं में कैसे-कितना कायोत्सर्ग ?

त्रीन् वारान् भूमिं रजोहरणेन प्रमार्ज्य ततश्चोत्तराभिमुखो द्वावपि पादौ स्थापयित्वा पञ्चभिरिन्द्रियैः षष्ठेन च मनसा सम्यगुपयुक्तः प्रादोषिककालग्रहणनिमित्तं उत्सर्गं कायोत्सर्गं करोति। स चैवं पादोसियकालस्स सोहणवत्तियाए ठामि काउस्सग्गं अन्नत्थऊससिएणं जाव अरिहंताणं भगवंताणं नमोक्कारेणं न पारेमि ताव कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि। एवं कायोत्सर्गं कृत्वा तत्राष्टावुच्छ्वासान् चिन्तयति पञ्च नमस्कारं मनसानुप्रेक्षते इत्यर्थः। ततो मनसैव नमस्कारेण पारयित्वा चतुर्विंशतिस्तवं द्रुमपुष्पिकां श्रामण्यपूर्विकाध्ययनं परिपूर्णं क्षुल्लिकाचारकथाध्ययनस्य त्वाद्यामेकगाथां मनसानुप्रेक्षते। एवं तावदुत्तरस्यां दिशि विधिरुक्त। इत्थं च शेषायामप्येकैकस्यां दिशि द्रष्टव्यम्। तद्यथा—क्षुल्लिकाचारकथाद्यगाथानुप्रेक्षानन्तरं ततोऽपि परावृत्त्य पश्चिमाभिमुखं एतच्चिन्तयति। तदनन्तरं ततोऽपि परावृत्त्य पश्चिमाभिमुखं एतच्चिन्तयति। चतसृष्वपि च दिक्षु प्रत्येकं चिन्तयन् द्वे द्वे दिशौ निरीक्षते द्वे द्वे दिशौ दण्डधरः। (३१८० टी. प. ६१)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अस्वाध्याय विशोधन के लिए कायोत्सर्ग

अदृष्टविषये च देवतायाः कायोत्सर्गं कृत्वा पठन्ति।

(गा. ३१४८ टी.प. ५६)

चारित्र कायोत्सर्ग

सूत्रार्थस्मरणनिमित्तमाचार्यमापृच्छ्य आत्मीये स्थाने पश्चादागच्छतामवकाशपथमवरुद्धाबलं वीर्यं चागूहयन्तो यथाशक्तिः चारित्रकायोत्सर्गेण तिष्ठन्ति। स्थित्वा च सूत्रार्थान् तावदनुप्रेक्षन्ते यावदाचार्यः कायोत्सर्गेण स्थितो भवति।

(गा. ३१५६ टी. प. ५८)

सूत्रार्थस्मरण के लिए कायोत्सर्ग

गुरुणा श्राद्धादीनां पुरतो धर्मकथने प्रारब्धे शेषाः साधवो गुरुमापृच्छ्य सूत्रार्थस्मरणहेतोः स्वस्मिन् स्थाने यथाशक्तिः कायोत्सर्गेण स्थिता भवन्ति। (गा. ३१६० टी. प. ५८)

सौ हाथ गमन का ऐर्यापथिकी कायोत्सर्ग

हस्तशताभ्यन्तरे गमनेऽप्यैर्यापथिक्याः प्रतिक्रमणं , तत्र कायोत्सर्गे स्मर्तव्यं। (गा. ३१७८ टी. प. ६१)

कायोत्सर्ग की फलश्रुति

जह नाम असी कोसे, अण्णो कोसे असी वि खलु अण्णे।
इय मे अन्नो देहो, अन्नो जीवो त्ति मण्णंति॥ (गा. ४३६६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दृष्टिवाद के विकीर्ण तथ्य

'पूर्व' ज्ञान के अक्षय भण्डार थे, लेकिन संहनन, धृति और स्मृति के ह्रास से धीरे-धीरे लुप्त होने लगे। इनका लोप देखकर इनकी सारभूत बातों को सुरक्षित रखने के लिए आचार्यों ने दृष्टिवाद से अनेक ग्रन्थों का निर्यूहण किया, जिनका उल्लेख हमें अनेक स्थानों पर मिलता है।

पूर्वों से सूत्र-रचना का निर्यूहण शय्यंभव ने दशवैकालिक की रचना से प्रारम्भ किया। यह वीर-निर्वाण के ८० वर्ष बाद की रचना है। इसके बाद व्यवहार, बृहत्कल्प आदि अनेक ग्रन्थ निर्यूढ हुए।

यह एक खोज और संकलन करने का विषय है कि दृष्टिवाद का उल्लेख कहां किस रूप में मिलता है। जैसे—'दशा-श्रुतस्कन्ध निर्युक्ति में कहा है कि छठे और आठवें पूर्व में 'आ' उपसर्ग का युक्तिपूर्वक विवेचन है। 'अंगविज्जा' जैसा विशालकाय ग्रन्थ पूर्वों से उद्धृत है।

आचार्य महाप्रज्ञ के संकेतानुसार हमने व्यवहार भाष्य तथा उसकी वृत्ति में प्राप्त दृष्टिवाद के विकीर्ण तथ्यों का संकलन किया है। ये तथ्य विभिन्न परंपराओं के स्पष्ट निदर्शन हैं।

नौ पूर्वी कौन ?

ततश्चतुर्दशपूर्विणो, दशपूर्विणो, नवपूर्विणश्च इहासतां नवपूर्विणः न परिपूर्णनवपूर्वधराः किंतु नवमस्य पूर्वस्य यत् तृतीयमाचारनामकं वस्तु तावन्मात्रधारिणोपि नवपूर्विणः। (गा. ४०३ टी. प. ८०)

निशीथ का निर्यूहण नौवें पूर्व से

निसीध नवमा पुव्वा, पच्चक्खाणस्स ततियवत्थूओ।
आयारनामधेज्जा, वीसतिमे पाहुडच्छेदा॥

प्रत्याख्यानस्याभिधायकं नवमं पूर्वं प्रत्याख्याननामकं तस्मात्, तत्रापि तृतीयादाचारनामधेयाद्वस्तुनस्तत्रापि विंशतितमात् प्राभृतछेदान्निशीथमध्ययनं सिद्धम्। (गा. ४३५ टी. प. ८८)

प्रायश्चित्तदाता कौन-कौन ?

चतुर्दशपूर्वधरास्त्रयोदशपूर्वधरा यावदभिन्नदशपूर्वधरा जिनोपदिष्टैः शास्त्रैर्जिना इव चतुर्भंगविकल्पतः प्रायश्चित्तप्रदानेन प्राणिनोऽपराधमलिनान् शोधयंति। (गा. ४४३ टी. प. ६१)

चतुर्दशपूर्वधर अन्तर्गत भावों के ज्ञाता कैसे ?

नालीय परूवणता, जह तीय गतो उ नज्जते कालो।
तध पुव्वधरा भावं, जाणंति विसुज्झए जेणं॥

नालिकया यथोदकसंगलनेन दिवसस्य रात्रेर्वा गतोऽतीतो वाऽवशिष्टो वा कालो ज्ञायते, यथा एतावद् दिवसस्य रात्रेर्वा गतमेतावत्तिष्ठति तथा पूर्वधरा अपि चतुर्दशपूर्वधरादयः आलोचयतां भावमभिप्रायं दुरूपलक्षमप्यागमबलतः सम्यग् जानंति, ज्ञाते च भावे यो येन प्रायश्चित्तेन शुध्यति, तस्मै तत् चतुर्भंगिकविकल्पतो जिना इव प्रयच्छंतीति। (गा. ४४४ टी. प. ६१)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिहार तप के योग्य

नवमस्स ततियवत्थू, जहन्न उक्कोस ऊणगा दसओ।
सुत्तत्थऽभिग्गहा पुण, दव्वादि तवोरयणमादी।।

जघन्यतः सूत्रमर्थश्च यावत् नवमस्य पूर्वस्य तृतीयमाचारनामकं वस्तु उत्कर्षतो यावदूनानि किञ्चिन्न्यूनानि दशपूर्वाणि परिपूर्णदशपूर्वधरादीनां परिहारतपोदानायोगात्। तेषां हि वाचनादिपंचविधस्वाध्यायविधानमेव सर्वोत्तमं कर्मनिर्जरास्थानं। (गा. ५४० टी. प. २८)

आर्यिकाओं के लिए पूर्वो का अध्ययन क्यों नहीं ?

आर्यिकानां धृतिसंहननदुर्बलतया पूर्वोऽनाधिगमाच्च। (गा. ५४५ टी. प. २६)

कालज्ञान के लिए पूर्वो का परावर्तन

कालपरिमाणावबोधनिमित्तं। तथाहि-स तथा सूत्रमाचारनामकनवमपूर्वगततृतीयवस्तूक्तप्रकारेण परावर्तयति। यथा उच्छ्वासपरिमाणं यथोक्तरूपमवधारयति। तत उच्छ्वासपरिमाणावधारणात् उच्छ्वासनिःश्वासपरिमाणावधारणं। तस्मात् स्तोकस्य स्तोकान् मुहूर्तस्य मुहूर्तैरर्धपौरुष्याभ्यां पौरुष्याः पौरुषीभिर्दिनानामुपलक्षणमेतत्। रात्रीणां च दिनरात्रीणां च। वाऽहोरात्राणामेवं दिनरात्रिभ्यां मुहूर्ताद्धात् पौरुषी दिनानि अहोरात्रांश्च काले कालविषये जानाति। उक्तं च—

जइ वि य सनाममिव,परिचियं सुअं अणहिय-अहीणवन्नाई।
कालपरिमाणहेउं, तहा वि खलु तन्नयं कुणइ।।
उस्सासाओ पाणू, तओ य थोवो तओ वि य मुहुत्तो।
मुहुत्तेहिं पोरिसीओ, जाणंति निसा य दिवसा य।। (गा. ७८१ टी. प. ६१, ६२)

दृष्टिवाद की उद्देशना का कालप्रमाण

इदं गर्भाष्टमवर्षं प्रव्रजितो विंशतिवर्षपर्यायस्य च दृष्टिवाद उद्दिष्टः एकेन वर्षेण योगः समाप्तः। सर्वमीलनेन जातान्येकोनत्रिंशद्वर्षाणि, व्रतपर्यायप्रव्रज्याप्रतिपत्तेः आरभ्य स च जघन्यतो विंशतिवर्षाणि तावत्प्रमाणपर्यायस्यैव। दृष्टिवादोद्देशभावात्। उत्कर्षतो जन्मतो पर्यायो व्रतपर्यायो वा देशोनपूर्वकोटी एतच्च पूर्वकोट्यायुष्के वेदितव्यं नान्यस्य।।
(गा. ७६० टी. प. ६४)

श्रुतं जघन्यतो नवमस्य पूर्वस्य तृतीयमाचारनामकं वस्तु यावत्तत्र कालज्ञानस्याभिधानात् उत्कर्षतो यावद्दशमं पूर्वं च शब्दस्यानुक्तार्थसंसूचनाद्देशोनमिति द्रष्टव्यम्।

आयारवत्थुतइयं, जहन्नगं होइ नवमपुव्वस्स।
तहियं कालन्नाणं, दस उक्कोसाणि भिन्नाणि।। (गा. ७६० टी. प. ६४, ६५)

विशोधि पहले और अब

आयारपकप्पे ऊ, नवमे पुव्वम्मि आसि सोधी य।
तत्तो च्चिय निज्जूढो, इधाणितो एण्हि किं न भवे।।
आचारप्रकल्पः पूर्वं नवमे पूर्वे आसीत् शोधिश्च ततोऽभवत्। इदानीं पुनरिहाचाराङ्गे तत एवं नवमात्पूर्वान्निर्यूह्यानीतः।
(गा. १५२८ टी. प. ३६)

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

गीतार्थ कौन ?

पुव्विं चोद्दसपुव्वी, एण्हि जहण्णो पकप्पधारी उ।

पूर्वं गीतार्थश्चतुर्दशपूर्वी अभवद् इदानीं स किं गीतार्थो जघन्यः प्रकल्पधारी न भवति भवत्येवेति भावः। (गा. १५३० टी. प. ३७)

नौवें पूर्व की परावर्तना आवश्यक

नवमे पुव्वम्मि…सागर।

नवमे वा पूर्वे उपलक्षणमेतत् दशमे वा सूत्रमभिनवगृहीतं सम्यक् स्मर्तव्यमस्ति,…सागरत्ति स्वयंभूरमणसदृशमतिप्रभूतमनेकातिशयसम्पन्नं नवमं पूर्वं परावर्तनीयमस्ति। (गा. १७३४ टी. प. २)

नौवें-दसवें पूर्व का परावर्तन आवश्यक

नवम-दसमा उ पुव्वा, अभिणवगहिया उ नासेज्जा।

नवमे दशमे पूर्वेऽभिनवे गृहीते यदि सततं न स्मर्यते ततो नश्येताम्। (गा. १७३७ टी. प. ३)

नौवे पूर्व की विशालता

सागरसरिसं नवमं, अतिसयनयभंगगहणत्ता।

सागरसदृशं स्वयंभूरमणजलधितुल्यं नवममुपलक्षणमेतत् दशमं च पूर्वं, अतिशयनयभङ्गादनेकैरतिशयैरनेकैर्नयैरनेकैर्भङ्गैश्च गुपिलत्वात् ततोऽगीतार्थानामतिशयाकर्णनं मा भूत्। नयबहुलतया भङ्गबहुलतया वा बहूनां मध्ये परावर्तनं दुष्करम्। (गा. १७३८ टी. प. ३)

दृष्टिवाद के ८० सूत्र

तत्र सूत्रं भाषते सामायिकादि तावद् यावद् दृष्टिवादगतानि अष्टाशीति सूत्राणि। (गा. १८२४ टी. प. २०)

सूत्र और अर्थ विषयक गुरु-गुरुतर कौन ?

सुत्ते जहुत्तरं खलु, बलिया जा होति दिट्ठिवाओ त्ति।
अत्थे वि होति एवं, छेदसुतत्थं नवरि मोत्तुं।। (गा. १८२५ टी. प. २०)

सूत्र से अर्थ बलीयान्

एमेव मीसगम्मि वि, सुत्ताओ बलवगो पगासो उ।
पुव्वगतं खलु बलियं।

सर्वत्राधस्तात्सूत्रादर्थाद्वा पूर्वगतं बलीयस्तथा चाह—पुव्वगयमित्यादि, यदि पूर्वगतं सूत्रं खलु अधस्तनादर्थाद्भवति बलवत् किमङ्गसूत्रात्, सुतरामधस्तनात्सूत्राद् बलीय इत्यर्थः। (गा. १८२६ टी. प. २०)

पूर्वगत बलीयान् क्यों?

परिकम्मेहि य अत्था, सुत्तेहि य जे य सूइया तेसिं।
होति विभासा उवरिं, पुव्वगतं तेण बलियं तु।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दृष्टिवादः पञ्चप्रस्थानः तद्यथा—परिकर्माणि सूत्राणि पूर्वगतमनुयोगश्चूलिकाश्च। तत्र ये परिकर्मभिः सिद्धश्रेणिकाप्रभृतिभिः सूत्रैश्चाष्टाशीतिसंख्यैरर्थाः सूचितास्तेषां सर्वेषामप्यन्येषां च उपरि पूर्वेषु विभाषा भवति, अनेकप्रकारं ते तत्र भाष्यन्ते। तेन कारणेन पूर्वगतसूत्रं बलिकम्। (गा. १८२७ टी. प. २१)

पूर्वगत अर्थ की बलीयता

जम्हा उ होति सोधी, छेदसुतत्थेण खलितचरणस्स।
तम्हा छेदसुयत्थो, बलवं मोत्तूण पुव्वगतं।।

यस्मात् स्खलितचरणस्य स्खलितचारित्रस्य च्छेदश्रुतार्थेन शोधिर्भवति, तस्मात्पूर्वगलमर्थं मुक्त्वा शेषात्सर्वस्मादप्यर्थात्च्छेदश्रुतार्थो बलवान्। (गा. १८२६ टी. प. २१)

उत्कृष्ट स्वाध्याय-भूमि का कालमान

जहण्णेण तिण्णि दिवसाऽणागाढुक्कोस होति बारस तु।
एसा दिट्ठीवाए, महकप्पसुतम्मि बारसगं।।
एसा द्वादशवर्षप्रमाणा उत्कृष्टा स्वाध्यायभूमिः दृष्टिवादे सापि दुर्मेधसः प्रतिपत्तव्या, प्राज्ञस्य तु वर्षम्।
अणागाढो जहण्णेणं तिण्णि दिवसा उक्कोसेण वरिसं।
जहा दिट्ठिवायस्स बारस वरिसाणि दुम्मेहस्स त्ति।।
महाकल्पश्रुते द्वादशवर्षाण्युत्कृष्टा स्वाध्यायभूमिः। (गा. २११८ टी.प.७४)

दृष्टिवाद का ग्रहण और स्मरण-काल

संवच्छरं च झरए, बारसवासाइ कालियसुतम्मि।
सोलस य दिट्ठिवाए, एसो उक्कोसतो कालो।। (गा. २२६२ टी. प. १०३)
सोलस उ दिट्ठिवाए, गहणं झरणं दस दुवे य।
ग्रहणमधिकृत्य दृष्टिवादे षोडश वर्षाणि लगन्ति। झरणमधिकृत्य पुनर्दश द्वे च द्वादशवर्षाणीत्यर्थः।
(गा. २२६३ टी. प. १०३)

निर्जरा का तारतम्य

यावत् त्रयोदशपूर्वधरवैयावृत्यकराच्चतुदर्शपूर्वधरवैयावृत्यकरो महानिर्जरः। (गा. २६३१ टी. प. ३४)

यवमध्य-वज्रमध्यप्रतिमा ग्रहण की योग्यता

सूत्रमर्थश्च जघन्यतो नवमस्य पूर्वस्य तृतीयमाचारवस्तु उत्कर्षतः किञ्चिन्न्यूनानि दशपूर्वाणि यः सूत्रेऽर्थे च भवति बलिको बलीयान् स प्रतिमां यवमध्यां वज्रमध्यां च प्रतिपद्यते। (गा. ३८३६ टी. प. ३)

पूर्वधर और आगमव्यवहार

पारोक्खं ववहार, आगमतो सुतधरा ववहरंति।
चोद्दस-दस पुव्वधरा, नवपुव्विय गंधहत्थी य।।

ये श्रुतधराश्चतुर्दशपूर्वधरा दशपूर्वधरा नवपूर्विणो वा गन्धहस्तिनो गन्धहस्तिसमानाः ते आगमतः परोक्षं व्यवहारं व्यवहरन्ति। (गा. ४०३७ टी. प. ३२)

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

निशीथ, कल्प तथा व्यवहार सूत्रों का निर्यूहण

सव्वं पि य पच्छित्तं, पच्चक्खाणस्स ततियवत्थुम्मि।
तत्तोच्चिय निज्जूढं, पकप्पकप्पो य ववहारो।।

सर्वमपि प्रायश्चित्तं नवमस्य प्रत्याख्यानाभिधस्य पूर्वस्य तृतीये वस्तूनि तत एव च निर्यूढं दृष्टं प्रकल्पो निशीथाध्ययनं, कल्पो व्यवहारश्च। (गा. ४१७३ टी.प. ४७)

चौदहपूर्वी तक दसों प्रायश्चित्त

यावच्चतुर्दशपूर्विणः तावद्दशानामपि प्रायश्चित्तानामनुषंजना। (गा. ४१७४ टी. प. ४७)

दीक्षापर्याय के १६वें वर्ष में दृष्टिवाद की वाचना

उगुणवीस दिट्ठिवाओ तु।

एकोनविंशतितमे वर्षे दृष्टिवादो नाम द्वादशमङ्गमुद्दिश्यते। (गा. ४६६८ टी. प. ११०)

दृष्टिवाद का विषय और सर्वश्रुतानुपाती का काल

दिट्ठीवाए पुण होति, सव्वभावाण रूवणं नियमा।
सव्वसुत्ताणुवादी, वीसतिवासे उ बोधव्वो।।

दृष्टिवादे पुनर्भवति सर्वभावानां रूपणं-प्ररूपणं, नियमात् विंशतिवर्षः पुनः सर्वश्रुतानुपाती भवति। सर्वमपि श्रुतं यथा भणितेन योगेन तस्य पठनीयं भवति। (गा. ४६७० टी. प. ११०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विशिष्ट विद्याएं

आदर्श (दर्पण) विद्या

अद्दाए त्ति या आदर्शविद्या तया आतुर आदर्शे प्रतिबिम्बितोऽपमार्ज्यते आतुरः प्रगुणो जायते।
(गा. २४३६ टी. प. २६)

आन्तःपुरिकी विद्या

आन्तःपुरे आन्तःपुरिकी विद्या भवति यया आतुरस्य नाम गृहीत्वा आत्मनो अङ्गमपमार्जयति, आतुरश्च प्रगुणो जायते सा आन्तःपुरिकी। (गा. २४३६ टी. प. २६)

ओसावणि

वह विद्या, जिसके प्रयोग से सभी गहरी निद्रा में सो जाते हैं। (गा. १५२६)

उण्णामिणी

यह विद्या, जिसके प्रयोग से वृक्ष की शाखाएं पुनः ऊपर हो जाती हैं। (गा. ६३ टी. प. २४)

ओणामिणी

यह विद्या, जिसके प्रयोग से वृक्ष की शाखाएं नीचे हो जाती हैं। (गा. ६३ टी. प. २४)

चापेटी विद्या

यया अन्यस्य चपेटायां दीयमानायामातुरः स्वस्थीभवति, सा चापेटी।

तालवृन्त विद्या

तालवृन्तविषया विद्या। यया तालवृन्तमभिमंत्र्य तेनातुरोऽपमृज्यमानः स्वस्थो भवति सा तालवृन्तविद्या।
(गा. २४३६ टी. प. २७)

तालुग्धाडिणि

वह विद्या, जिससे ताले टूट जाते हैं। (गा. १५२६)

दर्भ विद्या

या दर्भे दर्भविषया भवति विद्या, यया दर्भैरपमृज्यमान आतुरः प्रगुणो भवति। (गा. २४३६ टी. प. २७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूत विद्या

तया च दूतविद्यया यो दूत आगच्छति, तस्य दंशस्थानमपमार्ज्यते। तेनेतरस्य दंशस्थानमुपशाम्यति।

(गा. २४३६ टी.प.२६)

व्यजन विद्या

व्यजनविषया विद्या यया व्यजनमभिमंत्र्य तेनातुरोऽपमृज्यमानः स्वस्थो भवति, सा व्यजनविद्या।

(गा. २४३६ टी. प. २७)

वस्त्र विद्या

या विद्या वस्त्रविषया भवति तया परिजपितेन वस्त्रेण वा प्रमृज्येमानः आतुरः प्रगुणो भवति।।

(गा. २४३६ टी. प. २६)

विभिन्न विद्याओं का प्रयोग

दूअस्सोमाइज्जति, असती अद्दाग परिजवित्ताणं।
परिजवितं वत्थं वा, पाउज्जइ तेण वोमाए।।
एवं दब्भादीसुं, ओमाएऽसंफुसंत हत्थेणं।
चावेडी विज्जाए व, ओमाए चेडयं दिंतो।।

दूत्या विद्यया दूतस्यागतस्यांग प्रमार्ज्यते, तस्या विद्याया असति आदर्शे सङ्क्रान्तमातुरप्रतिबिम्बं परिजप्यातुरः प्रगुणीकर्त्तव्यः। तदभावे वस्त्रविद्यया परिजपितं वस्त्रं प्रावार्यते, तेन वा परिजपितेन वस्त्रेणातुरोऽपमार्जते एवं दर्भादिभिः परिदर्भविद्यादिभिः हस्तेनासंस्पृशन्नपमार्जयेत्। चापेट्या वा विद्यया अन्यस्य चपेटां ददन्योऽपमार्जयेत्। विद्याः प्रायः पुरुषेषु भवन्ति। (गा. २४४०, २४४१ टी. प. २७)

विद्यासिद्धि में काल का महत्त्व

कालादिउवयारेणं, विज्जा न सिज्झए विणा देंति।
रंधे व अवद्धंसं, सा वा अण्णा व सा तहिं।।

कालाद्युपचारेण विना विद्या न सिध्यति न केवलं न सिध्यति किन्तु कालादिवैगुण्यलक्षणे रन्ध्रे छिद्रे सति साधिकृतविद्याधिठात्र्यन्या वा क्षुद्रदेवता तत्रावसरे अवध्वंसं दधाति। एष दृष्टान्तेऽयमुपनयो व्यतिकृष्टे काले सूत्रे उद्दिश्यमानेन पठ्यमानेन वा सूत्रं निर्जरा फलदायितया न सिध्यति, न केवलं न सिध्यति, किन्तु यथा देवतया सूत्रमधिष्ठितं सा कालातिक्रमेण पठनतः क्षाम्यन्ती प्रान्ता वा काचिद्देवता अकालपठनलक्षणं छिद्रं अवाप्यावध्वंसं दध्यात्। (गा. ३०१८ टी. प. ३४)

विद्याचक्रवर्ती का वचनमात्र विद्या

जधा विज्जानरिंदस्स, जं किंचिदपि भासियं।
विज्जा भवति सा चेह, देसे काले य सिज्झति।।

विद्याचक्रवर्तिनो यत् किञ्चिदपि भाषितं विद्या भवति, सा चेह जगति देशे काले वा सिद्धयति न कालाद्युपचारमन्तरेण।

(गा. ३०२० टी. प. ३४)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विद्यादान का उपयुक्त काल

विज्जाणं परिवाडी, पव्वे पव्वे य देंति आयरिया।

आचार्याः पर्वणि पर्वणि विद्यानां परिपाटीर्ददति। विद्याः परावर्तन्ते इति भावः। (गा. २६६७ टी.प.४५)

प्रायो विद्यासाधनोपचारभावात् बहुलादिका मासा। यत्रोपरागो ग्रहणं चन्द्रसूर्ययोः एतेषु च पर्वसु विद्यासाधनप्रवृत्तेर्यद्येवं तत एकरात्रग्रहणम्। (गा. २६६८ टी.प.४५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका में उद्धृत गाथाएं

गुरुचित्तायत्ताइं, वक्खाणंगाइ जेण सव्वाइं।
जेण पुण सुप्पसन्नं, होइ तयं तं तहा कज्जं॥ (गा. १ टी. प. २) (विभा. ९३१)

आगारिंगियकुसलं, जइ सेयं वायसं वए पुज्जा।
तह वि य सिं न विकूडे, विरहम्मि य कारणं पुच्छे॥ (गा. १ टी. प. २) (विभा. ९३३)

गुर्वायत्ता यस्मात्, शास्त्रारंभा भवंति सर्वेऽपि।
तस्माद् गुर्वाराधनपरेण हितकांक्षिणा भाव्यम्॥ (गा. १ टी. प. २)

कि मे कडं किं च ममत्थि सेसं, किं सक्कणिज्जं न समायरामि (गा. १४ टी. प. ६) (दशचू.२।१२)

रागाद्वा द्वेषाद् वा मोहाद् वा वाक्यमुच्यते ह्यनृतम्।
यस्य तु नैते दोषास्तस्यानृतकारणं किं स्यात्॥ (गा. २० टी. प. ११)

जोगो विरियं थामो, उच्छाह परक्कमो तहा चेट्ठा।
सत्ती सामत्थं चिय, जोगस्स हवंति पज्जाया॥ (गा. ५६ टी. प. २२)

पुव्वं अपासिऊणं, छूढे पाए कुलिंगए पासे।
न य तरइ नियत्तेउं, जोगं सहसाकरणमेयं॥ (गा. ६१ टी. प. २४)

बालस्त्रीमूर्खमूढानां, नृणां चारित्रकांक्षिणाम्।
अनुग्रहाय तत्त्वज्ञैः, सिद्धान्तः प्राकृतः स्मृतः॥ (गा. ६४ टी. प. २६)

णेगविहा इड्ढीओ, पूयं परवादिणं च दट्ठूणं।
जस्स न मुज्झइ दिट्ठी, अमूढदिट्ठिं तयं बिंति॥ (गा. ६४ टी. प. २७) (निभा. २६)

खमणे वेयावच्चे, विणय-सज्झायमादिसु संजुत्तं।
जो तं पसंसए एस, होइ उववूहणाविणओ॥ (गा.६४ टी. प. २७) (निभा. २७)

एएसुं चिय खमणादिएसु सीदंतचोयणा जा उ।
बहुदोसे माणुस्से, मा सीद थिरीकरणमेयं॥ (गा. ६४ टी. प. २७) (निभा. २८)

साहम्मियवच्छल्लं, आहारादीसु होइ सव्वत्थ।
आएस गुरुगिलाणे, तवस्सि बालादी सविसेसं॥ (गा. ६४ टी. प. २७) (निभा. २९)

कामं सभावसिद्धं, तु पवयणं दिप्पते सयं चेव।
तह वि य जो जेणऽहिओ, सो तेण पभावए तं तु॥ (गा. ६४ टी. प. २८) (निभा. ३१)

अइसेस-इड्ढि-धम्मकहि-वादि-आयरिय-खमग-णेमित्ती।
विज्जा-राया गणसम्मता य तित्थं पभावेंति॥ (गा. ६४ टी. प. २८) (निभा. ३३)

समितीण य गुत्तीण य, एसो भेदो तु होइ णायव्वो।
समिती पयाररूवा, गुत्ती पुण उभयरूवा तु॥ (गा. ६५ टी. प. २८) (निभा. ३६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पडलाइं रयत्ताणं, पत्ताबंधो य चोलपट्टो य।
मत्तग रयहरणं ति य, मज्झिमगो छव्विहो नेओ॥ (गा. १२६ टी. प. ४४)

पत्ता बंधाइया चउरो, ते चेव पुव्वनिद्दिट्ठा।
मत्ती य कमढकं वा, तह ओग्गहणंतगं चेव॥ (गा. १२६ टी. प. ४४)

पट्टो अद्धोरू चिय, चलणि य तह कंचुगे य ओगच्छी।
वेगच्छी तेरसमा, अज्जाणं होइ णायव्वा॥ (गा. १२६ टी. प. ४४)

अक्खा संथारो वा, दुविहो एगंगिको य इयरो वा।
बिइय पय पोत्थपणगं, फलगं तह होइ उक्कोसो॥ (गा. १२६ टी. प. ४५)

छक्कायादिम चउ तह य परित्तम्मि होंति वणकाए।
लहु गुरुमासो चउलहु, संघट्टण-परिताव-उद्दवणे॥ (गा. १३५ टी. प. ४६)

संघयण विरिय आगमसुत्तविहीए य जो समुज्जुत्तो।
निग्गहजुत्तो तवस्सी, पवयणसारे गहियअत्थो॥ (गा. १६४ टी. प. ५४)

तिल-तुस तिभागमित्तो,वि जस्स असुभो न विज्जए भावो।
निज्जूहणारिहो सो, सेसे णिज्जूहया णत्थि॥ (गा. १६४ टी. प. ५४)

एयगुणुवसंपन्नो, पावइ अणवट्ठाणमुत्तमगुणोहो।
एयगुणविप्पहीणो तारिस गंभीरे भवे मूलं॥ (गा. १६४ टी. प. ५४)

उद्देसे निद्देसे, य निग्गमे खेत्त-काल -पुरिसे य।
कारण-पच्चय-लक्खण, नए समोयारणाणुमए॥ (गा. १८४ टी. प. १) (विभा. १४८४)

किं कइविहं कस्स कहिं, केसु कहिं केच्चिरं हवइ कालं।
कइ संतरमविरहियं, भवागरिसफासणनिरुत्ती॥ (गा. १८४ टी. प. १) (विभा. १४८५)

सुत्तं सुत्ताणुगमो, सुत्तालावग ततो य निक्खेवो।
सुत्तप्फासियनिज्जुत्ति, नया य समगं तु वच्चंति॥ (गा. १८४ टी. प. १)

होइ कयत्थो वोत्तुं, सपदच्छेदं भवे सुयाणुगमो।
सुत्तालावगनासो, नामादिन्नासविणिओगं॥ (गा. १८४ टी. प. १) (विभा. १००६)

सुत्तप्फासियनिज्जुत्तिनियोगो सेसए पयत्थादी।
पायं सोच्चिय नेगमनयादि नयगोयरो होइ॥ (गा. १८४ टी. प. १) (विभा. १०१०)

संहिता च पदं चैव, पदार्थः पदविग्रहः।
चालना प्रत्यवस्थानं, व्याख्या सूत्रस्य षड्विधा॥ (गा. १८४ टी. प. १)

लोगे जह माता ऊ, पुत्तं परिहरति एवमादीओ।
लोउत्तरपरिहारो, दुविहो परिभोग धरणे य॥ (गा २११ टी. प. १०)

जहि नत्थि ठवण आरोवणा य नज्जंति सेविया मासा।
सेवियमासेहि भए, अस्सीयं लद्धमागहियं॥ (गा. ४२६ टी. प. ८७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दाडिम-पुप्फागारा, लोहमयी नालिगा उ कायव्वा।
तीसे तलम्मि छिड्डं, छिड्डपमाणं च मे सुणह॥ (गा. ४४४ टी. प. ६१)

छन्नउयमूलबालेहिं तिवस्स जाया एगयकुमारीए।
उज्जुकयपिंडिएहिं, कायव्वं नालियाछिड्डं॥ (गा. ४४४ टी. प. ६१)

अहवा दुयस्स जाया, एगयकुमारीए पुच्छबालेहिं।
बिहि बिहि गुणेहि तेहि उ कायव्वं नालियाछिड्डं॥ (गा. ४४४ टी. प. ६१)

अहवा सुवण्णमासेहिं, चउहि चउरंगुला कया सूई।
नालियतलम्मि तीए, कायव्वं नालियाछिड्डं॥ (गा. ४४४ टी. प. ६१)

युगपत्समुपेतानां, कार्याणां यदतिपाति तत्कार्ये।
अतिपातिष्वपि फलं, फलदेष्वपि धर्मसंयुक्तं॥ (गा. ६६६ टी. प. ७२)

बहुवित्थरमुस्सग्गं, बहुतरमुववायवित्थरं नाउं।
जह जह संजमवुड्ढी, तह जयसू निज्जरा जयह॥ (७२६ टी. प. ७६)

जो जेण अणब्भत्थो, पोरिसिमाई तवो उ तं तिगुणं।
कुणइ छुहाविजयट्ठा, गिरिनिइसीहेण दिट्ठंतो॥ (७७८ टी. प. ८०) (बृभा. १३२६)

एक्केक्कं ताव तवं, करेइ जह तेण कीरमाणेणं।
हाणी न होइ जइआ, वि होज्ज छम्मासुवस्सग्गो॥ (७७८ टी. प. ८०) (बृभा. १३३०)

छिक्कस्स य खइयस्स व, मूसिगमाईहिं वा निसिचरेहिं।
जह सहसा न वि जायइ, रोमंचुब्भेय चाडो वा॥ (७८० टी. प. ८१) (बृभा. १३३७)

सविसेसतरा बाहिं, तक्कर-आरक्खि-सावयाईया।
सुण्णघर-सुसाणेसु य, सविसेसतरा भवे तिविहा॥ (७८० टी. प. ८१) (बृभा. १३३८)

देवेहिं भेसिओ वि य, दिया व रातो व भीमरूवेहिं।
तो सत्तभावणाए, वहइ भरं निब्भओ सयलं॥ (७८० टी. प. ८१) (बृभा. १३३६)

जइ वि य सनाममिव, परिचियं सुअं अणहिय-अहीणवन्नाई।
कालपरिमाणहेउं, तहा वि खलु तज्जयं कुणइ॥ (७८१ टी. प. ८२) (बृभा १३४०)

उस्सासाओ पाणू, तओ य थोवो तओ वि य मुहुत्तो।
मुहुत्तेहिं पोरिसीओ, जाणेइ निसा य दिवसा य॥ (७८१, टी. प. ८२) (बृभा. १३४१)

कामं तु सरीरबलं, हायइ तव-नाणभावणजुअस्स।
देहावचए विसती, जह होइ धिई तहा जयइ॥ (७८३ टी. प. ८२) (बृभा. १३५४)

कसिणा परीसहचमू, जइ उट्ठिज्जाहि सोवसग्गावि।
दुद्धरपहकरवेगा, भयजणणी अप्पसत्ताणं॥ (७८३ टी. प. ८२) (बृभा. १३५५)

धिइधणियबद्धकच्छो, जोहेइ अणाउलो तमव्वहिओ।
बलभावणाए धीरो, संपुण्णमणोरहो होइ॥ (७८३ टी. प. ८२) (बृभा.१३५६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धिइ-बलपुरस्सराओ, हवंति सव्वा वि भावणा एता।
तं तु न विज्झइ सज्झं, जं धिइमंतो न साहेइ॥ (७८३ टी. प. ६२) (बृभा. १३५७)

पडिमापडिवण्णस्स उ, गिहिपरियातो जहण्ण उगुणतीसा।
जति परियातो वीसा, दोण्ह वि उक्कोसदेसूणा॥ (७६० टी. प. ६४)

आयारवत्थुतइयं, जहन्नयं होइ नवमपुव्वस्स।
तहियं कालण्णाणं, दस उक्कोसेण भिन्नाइं॥ (७६० टी. प. ६४) (बृभा. १३८५)

जइ किंचि पमाएणं, न सुट्ठु भे वट्टियं मए पुव्विं।
तं भे खामेमि अहं, निस्सल्लो निक्कसाओ अ॥ (८०३ टी. प. ६८) (बृभा १३६८)

आणंदअंसुपायं, कुणमाणा ते वि भूमिगयसीसा।
खामिंति जहरिहं खलु, जहारिहं खामिता तेणं॥ (८०३ टी. प. ६८) (बृभा. १३६६)

खामिंतस्स गुणा खलु, निस्सल्लय विणय दीवणामग्गे।
लाघवियं एगत्तं, अप्पडिबंधो अ जिणकप्पे॥ (८०३ टी. प. ६८) (बृभा. १३७०)

पढमे वा बीए वा, पडिवज्जइ संजमम्मि जिणकप्पं।
पुव्वपडिवन्नओ पुण, अन्नयरे संजमे होज्जा॥ (८०३ टी. प. ६८) (बृभा. १४१८)

सुविणगविज्जा कहियं, आइंइं खणि घंटियादिकहियं वा।
जं सीसइ अण्णेसिं, पसिणापसिणं हवइ एयं॥ (८७६ टी. प. ११७)

पत्तनं शकटैर्गम्यं, घौटकैर्नौभिरेव च।
नौभिरेव यद्गम्यं, पट्टनं तत्प्रचक्षते॥ (६१५ टी. प. १२७)

सालि-जव-कोद्दव-वीहि-रालग-तिल-मुग्ग-मास-चवल-चणा।
तुवरि-मसूर-कुलत्था-गोहुम-निप्फाव अयसि सणा॥ (६५१ टी. प. १३२)

सुत्तत्थविऊ लक्खणजुत्तो गच्छस्स मेढिभूतो य।
गणतत्तिविप्पमुक्को, अत्थं भासेइ आयरिओ॥ (६५४ टी. प. १३३)

संमत्तनाणसंजमजुत्तो सुत्तत्थतदुभयविहिण्णू।
आयरियठाणजोग्गो, सुत्तं वाए उवज्झातो॥ (६५६ टी. प. १३३)

विसरिसदंसणजुत्ता, पवयणसाहम्मिया न दंसणतो।
तित्थयरा पत्तेया, नो पवयणदंसणसाहम्मी॥ (६६३ टी. प. ५)

अप्पेण बहुमेसेज्जा, एयं पंडियलक्खणं।
सव्वासु पडिसेवासु, एयं अट्ठावए विदू॥ (१०३८ टी. प. १८)

जहाहियग्गी जलणं नमंसे, नाणाहुतीमंतपयाभिसित्तं।
एवायरियं उवचिट्ठएज्जा, अणंतनाणोवगतो वि संतो॥ (१४०४ टी. प. १३) (दश. ६।१।११)

दीणाभासं दीणगविं, दीणं जंपिउं पुरिसं।
कं पेच्छसि नंदंतं, दीणं दीणाए दिट्ठीए॥ (१४४८ टी. प. २१)

दासेण मे खरो कीतो, दासो वि मे खरो वि मे। (१४७० टी. प. २५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुत्तनिरोहे चक्खुं, वच्चनिरोहे य जीवियं चयति। (१७७२ टी.प. १०)

अनशनमूनोदरता, वृत्तेः संक्षेपणं रसत्यागं। (१७७५ टी. प. १०)

एगपणगद्धमासं, सट्ठी सुण मणुयगोण-हत्थीणं। (२०७६ टी. प. ६७)

अणागाढो जहण्णेणं, तिण्णि दिवसा उक्कोसेण वरिसं।
जह दिट्ठिवायस्स बारस वरिसाणि दुम्मेहस्सत्ति॥ (२११८ टी. प. ७४)

माउम्माया य पिया, भाया भगिणीए य एव पिउणो पि।
भाउ भगिणीए वच्चा, धूया पुत्ताण वि तहेव॥ (२१५८ टी. प. ८१)

जइ ते अभिधारयन्ती, पडिच्छंते अपडिच्छगस्सेव।
अह नो अभिधारन्ती, सुयगुरुणो तो उ आभव्वा॥ (२१५८ टी. प. ८१)

संगारो पुव्वकतो, पच्छा पाडिच्छओ उ सो जातो।
तेणं निवेदियव्वं, उवट्ठिया पुव्व सेहा से॥ (२१५८ टी. प. ८१) (पंकभा-२४०६)

एवइएहिं दिणेहिं, तुज्झसगासं अवस्स एहामो।
संगारो एव कतो, चिंधाणि य तेसि चिंधेइ॥ (२१५६ टी. प. ८१)

कालेण य चिंधेहिं य, अविसंवादी हि तस्स गुरुणिहरा।
कालंमि विसंवदिए, पुच्छिज्जइ किंणु आओ सि॥ (२१६२ टी. प. ८२) (पंकभा-२४११)

संगारयदिवसेहिं, जइ गेलण्णादि दीवए तो उ।
तस्सेव उ अह भावो, विपरिणतो पच्छ पुणो जातो॥ (२१६२ टी. प. ८२) (पंकभा-२४१२)

असणं पाणगं चेव, खाइमं साइमं तहा।
जे भिक्खू सन्निहिं कुज्जा, गिही पव्वइए न से॥ (२४१७ टी. प. २३)

वयसमणधम्मसंजमवेयावच्चं च बंभगुत्तीतो।
नाणादितियं तवो, कोहनिग्गहा इइ चरणमेयं॥ (२४८४ टी. प. ७)

पिंडविसोही समिती, भावणपडिमा य इंदियनिरोहो।
पडिलेहणगुत्तीतो, अभिग्गहा चेव करणं तु॥ (२४८४ टी. प. ७)

आसंदी पलियंकेसु, मंचमासालएसु वा।
अणायरियमज्जाणं, आसइत्तु सइत्तु वा॥ (२४६३ टी. प. ८) (दश-६।५३)

विषमसमैर्विषमसमाः विषमैर्विषमाः समैः समाचाराः।
करचरणवदननाशाकर्णोष्ठनिरीक्षणैः पुरुषाः॥ (२५५४ टी. प. २०)

जम्मि कुलं आयत्तं, तं पुरिसं आयरेण रक्खाहि। (२५५६ टी. प. २१)

धन्नो सो लोहज्जो, खंतिखमाए वरलोहसरिवण्णो।
जस्स जिणो पत्तातो, इच्छइ पाणीहि भुत्तुं जे॥ (२६७१ टी. प. ४१)

इत्तिरियं पि न कप्पइ, अविदिन्नं खलु परोग्गहादीसु।
चिट्ठित्तु निसीयंतु व, तइयव्वय रक्खणट्ठाए॥ (३५२१ टी. प. २६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकैकां वर्धयेद् भिक्षां, शुक्ले कृष्णे च हापयेत्।
भुञ्जीत नामावास्यायामेष चान्द्रायणविधिः॥ (३८३३ टी. प. २)

विज्ञप्तिःफलदा पुंसां, न क्रिया फलदा मता।
मिथ्याज्ञानात् प्रवृत्तस्य, फलसंवाददर्शनात्॥ (४६६१ टी. प. ११३)

पढमं नाणं तओ दया, एवं चिट्ठइ सव्वसंजए।
अन्नाणी किं काही, किं वा नाही छेय-पावगं॥ (४६६१ टी. प. ११३) (दश-४।१०)

गीयत्थो अ विहारो, बिइतो गीयत्थमीसितो भणितो।
एत्तो तइय विहारो, नाणुन्नातो जिणवरेहिं॥ (४६६१ टी. प. ११३) (ओनि-१२२)

क्रियैव फलदा पुंसां, न ज्ञानं फलदं मतम्।
यतःस्त्रीभक्ष्यभोगज्ञो, न-ज्ञानात्सुखितो भवे॥ (४६६१ टी. प. ११३)

चेइय कुलगणसंधे आयरियाण च पवयणसुए य।
सव्वेसु वि तेण कयं, तवसंजममुज्जमंतेण॥ (४६६१ टी. प. ११३)

सुबहुं पि सुयमहीयं, किं काही चरणविप्पहीणस्स।
अंधस्स जह पलित्ता, दीवसयसहस्सकोडी वि॥ (४६६१ टी. प. ११३) (विभा. ११५२)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विशेषनामानुक्रम

अंगचूली (ग्रंथ) (गा. ४६५६)
अंडज (वस्त्र) (गा. ३७३६)
अंध (देश) (गा. २६५६)
अच्छ (तिर्यञ्च) (गा. ४३८२)
अजिण्ण (रोग) (गा. ६४७)
अजीर (रोग) (गा. ३४१२)
अज्जरक्खिय (आचार्य) (गा. २३६५, ३६०५)
अज्जसमुद्द (आचार्य) (गा. २६८५, २६८६)
अज्जास (मुनि) (गा. १७०५)
अज्जुण (चोर) (गा. २६५६)
अट्टण (मल्ल) (गा. ३८४०)
अट्ठिसरक्ख (कापालिक) (गा. ३३१६)
अतिसार (रोग) (गा. २५४८)
अय (धातु) (गा. ३०८)
अय (तिर्यञ्च) (गा. १६११)
अयपालग (कर्मकर) (गा. १६११)
अया (तिर्यञ्च) (गा. १६१३)
अरहन्नग (मुनि) (गा. १७०५)
अरिसा (रोग) (गा. ३२२२)
अरुण (देव) (गा. ४६६२)
अरुणोववाय (ग्रंथ) (गा. ४६६०)
अवंति (नगरी) (गा. ७८४)
अवंतिवति (राजा) (गा. ७८४)
अवंतिसुकुमाल (मुनि) (गा. ४४२५)
असि (अस्त्र) (गा. ४३६८)
अस्स (तिर्यञ्च) (गा ६५६)
अहि (तिर्यञ्च) (गा. १०१४)
आइच्च (नक्षत्र) (गा. २०७)
आणंदपुर (नगर) (गा.६ टी. प. ६)
आयार (ग्रंथ) (गा. १५२५, ४६७४)
आयारदसा (ग्रंथ) (गा. ७६६)
आयारपकप्प (ग्रंथ) (गा. २२६४, १५२८)
आयारवत्थु (एक अध्ययन) (गा. ७६०)
आवस्सय (ग्रंथ) (गा. २५७८)
आवास (ग्रंथ) (गा. ६५५)
आवाह (भोज) (गा. ३७३६)
आस (तिर्यञ्च) (गा. ४५२)
आसीविसत्तलद्धि (लब्धि) (गा. ४६६६)
आसीविसभावणा (ग्रन्थ) (गा. ४६६८)
इंदक्कीलमह (उत्सव) (गा. १८०४)
इंददत्त (व्यक्ति) (गा. २६५६)
इंदपुर (नगर) (गा. २६५६)
इभ (तिर्यञ्च) (गा. ६४)
उंडि (मुद्रा) (गा. २६४२)
उंबर (वृक्ष) (गा. ३८७७)
उक्कुडुअ (आसन) (गा. २३७३)
उच्छुधर (उद्यान) (गा. ३६०५)
उच्छुवण (वन) (गा. ३१३, ३६०५)
उज्जाणमह (उत्सव) (गा. १८०४)
उज्जेणी (नगरी) (गा. ४५५७)
उट्ठाणसुय (ग्रंथ) (गा. ४६६३)
उत्तरकुरु (अकर्मभूमि) (गा. ४४०७)
उत्तरज्झयण (ग्रंथ) (गा. १५३३, ३०३७)
उत्तरज्झाय (ग्रंथ) (गा. १५२६)
उद्धसास (रोग) (गा. २२७१)
उप्पत्तिया (बुद्धि) (गा. २४०६)
एरवय (कर्मभूमि) (गा. ४३२२)
एलग (तिर्यञ्च) (गा. ४६३०)
ओसावणि (विद्या) (गा. १५२६)
कंचणपुर (नगर) (गा. ४२७८)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कंबलग (वस्त्र)	(गा. ११३२)
ककय (अस्त्र)	(गा. ४४१६)
कच्छुय (रोग)	(गा. २७६२)
कणग (अस्त्र)	(गा. ४३६३)
कप्प (ग्रंथ)	(गा. १८४, १८५, ३२०, ४४३२-४४३५, ४६५५, ३०५७)
कप्पास (कर्मकर)	(गा. ३७२५)
कमढ (तिर्यञ्च)	(गा. ६६२)
कविल (ब्राह्मण)	(गा. २६३८)
कवोय (तिर्यञ्च)	(गा. २६२४)
करडुयभत्त (भोज)	(गा. ३७३८)
करील (वृक्ष)	(गा. १३६५)
कल्लाणग (प्रायश्चित्त)	(गा. १०)
कसेरु (नदी)	(गा. १४१५ टी. प. १५)
काग (तिर्यञ्च)	(गा. १४५५)
कामल (रोग)	(गा. २७६२)
कालायसवेसित (मुद्रि)	(गा. ४४२३)
किमि (तिर्यञ्च)	(गा. ३७६५)
कीडज (वस्त्र)	(गा. ३७३६)
कुंचिय (तापस)	(गा. ३२४)
कुंभकारकड (नगर)	(गा. ४४१७)
कुक्कुड (तिर्यञ्च)	(गा. ६०१)
कुक्कुडि (तिर्यञ्च)	(गा. ३६८४)
कुट्ठ (रोग)	(गा. २७६२)
कुविंद (कर्मकर)	(गा. १२८४)
कुलाल (कर्मकर)	(गा. ३६०३)
कोंकण (नगर)	(गा. ४२६२)
कोइल (तिर्यञ्च)	(गा. ३००८)
कोट्टंब (वस्त्र)	(गा. २८६५)
कोट्ठग (शाला)	(गा. ४३१३)
कोडिण्ण (ग्रंथकार)	(गा. ६५२)
कोणिय (राजा)	(गा. ४३६५)
कोरंटग (उद्यान)	(गा. ६७५ टी. प. १३७)
कोसल (देश)	(गा. २६५६)
खंडकण्ण (मंत्री)	(गा. ७६४)
खंदग (आचार्य)	(गा. ४४१७)
खंदय (मुनि)	(गा. ४६८६)
खंदिल (मुनि)	(गा. १७०५)
खय (रोग)	(गा. ४३८४)
खर (तिर्यञ्च)	(गा. ३२६)
खरग (मंत्री)	(गा. ११३०)
खीरलद्धि (लब्धि)	(गा. ८६५)
खीरासवलद्धि (लब्धि)	(गा. १५०२, ३०००)
खुड्डगणि (आचार्य)	(गा. १५०२)
खुड्डिविमाणपविभत्ति (ग्रंथ)	(गा. ४६५६)
खुरप्प (अस्त्र)	(गा. ४३६५)
गंगा (नदी)	(गा. २५५४)
गद्दभ (तिर्यञ्च)	(गा. ३२७)
गद्धपट्ठ (मरणभेद)	(गा. ४३८६)
गरुल (तिर्यञ्च)	(गा ४६६२)
गरुलोववाय (ग्रंथ)	(गा. ४६६०)
गहभिन्न (नक्षत्र)	(गा. ३१०)
गाममह (उत्सव)	(गा. १८०४)
गाव (तिर्यञ्च)	(गा. १५२६)
गावी (तिर्यञ्च)	(गा. ३७६२)
गुणसिल (उद्यान)	(गा. ६७६)
गो (तिर्यञ्च)	(गा १५६)
गोट्ठामाहिल (निह्नव)	(गा. २७१४)
गोण (तिर्यञ्च)	(गा. १७५१)
गोणस (तिर्यञ्च)	(गा. ४३८३)
गोणी (तिर्यञ्च)	(गा. ५८०)
गोतम (गणधर)	(गा. २६३७, ४६८६)
गोदावरी (नदी)	(गा. ११२८)
गोवाल (कर्मकर)	(गा. ३६३४)
गोविंद (आचार्य)	(गा. २७१३)
गोविंददत्त (मुनि)	(गा. १७०५)
घरसउणि (तिर्यञ्च)	(गा. ७७०)
घोडग (तिर्यञ्च)	(गा. १८२४, १८३२)
घोडगशाला (शाला)	(गा. ३०७१)
चंदायण (तप)	(गा. ३६६०)
चक्किय (कर्मकर)	(गा. ३७२५ टी. प. ५)
चक्कियसाला (शाला)	(गा. ३७२५ टी प. ५)
चरग (परिव्राजक)	(गा. ११३६, १३६६)
चाणक्क (मंत्री)	(गा. ४४२०)
चारणभावणा (ग्रंथ)	(गा. ४६६७)
चारणलद्धि (लब्धि)	(गा. ४६६७)

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

चिंच (वृक्ष) (गा ३७४४)
चिलायपुत्त (मुनि) (गा. ४४२२)
चुल्लसुत (ग्रंथ) (गा. ३०३७)
चेडग (राजा) (गा. ४३६३)
छगल (तिर्यञ्च) (गा. ७८४)
छगलग (तिर्यञ्च) (गा. २४५२)
जंबु (वृक्ष) (गा २८८०)
जंबुग (तिर्यञ्च) (गा. १३८६)
जड्ड (तिर्यञ्च) (गा. ८१६)
जमाली (निह्नव) (गा. २७१३)
जर (रोग) (गा. ७००)
जवमज्झचंदपडिमा (तपविशेष) (गा. ३८३३)
जाहग (तिर्यञ्च) (गा. ४१०२)
जिणवरमह (उत्सव) (गा. २८३७)
जितसत्तु (राजा) (गा. १०८१)
जोणिपाहुड (ग्रंथ) (गा २३६२)
डोंब (कर्मकर) (गा. ४३१२)
णंतिक्क (कर्मकर) (गा. ४३१२)
तउसि (वल्ली) (गा. ३७४४)
तंबोल (वल्ली) (गा. ३७४४)
तगरा (नगरी) (गा. ३६३०, १३६४)
तच्चण्णिय (बौद्धसाधु) (गा. २७१३)
तडागमह (उत्सव) (गा. १८०४)
तरंगवई (ग्रंथ) (गा. २३२०)
तल (वृक्ष) (गा. ३७४४)
तामलित्तग (देशवासी) (गा. २८६५)
तालपिसाय (पिशाच) (गा. ७८४)
तालुग्घाडिणि (विद्या) (गा. १५२६)
तिणिस (वृक्ष) (गा. २७७८)
तित्थोगाली (ग्रंथ) (गा. ४५३२)
तिमि (तिर्यञ्च) (गा. १३७०)
तिविट्ठ (वासुदेव) (गा. २६३८)
तुरंग (तिर्यञ्च) (गा. ३५५७)
तेयनिसग्ग (ग्रंथ) (गा. ४६६८)
तोसलिय (राजा) (गा. २५६०)
थावच्चसुत (मुनि) (गा. ११६३)
थावच्चापुत्त (मुनि) (गा. २४६५, ११८३)
थूभमह (उत्सव) (गा ११६१)
दंडइ (राजा) (गा. ४४१७)
दंडिग (राजा) (गा. १२६५)
दंडिय (श्रेष्ठी) (गा. २०४६)
दंतपुर (नगर) (गा. ५१७)
दढमित्त (व्यक्ति) (गा ५१६)
दद्दुर (तिर्यञ्च) (गा. १०)
दसकालिय (ग्रंथ) (गा. ३०३७)
दसपुर (नगर) (गा. ३६०५)
दसवेयालिय (ग्रंथ) (गा. १५३३)
दिट्ठिवाय (ग्रंथ) (गा. २११८, ४६७४)
दिट्ठीविसभावणा (ग्रंथ) (गा. ४६६८)
दिट्ठिविसलद्धि (लब्धि) (गा. ४६६६)
दिणकर (नक्षत्र) (गा. २००)
दीहपट्ठ (तिर्यञ्च) (गा. २४२६)
दुप्पसह (आचार्य) (गा. ४१७४)
देवकुरु (अकर्मभूमि) (गा. ४४०७)
देवड (कर्मकर) (गा. ४३१२)
देविंदथय (ग्रंथ) (गा. ३०१६)
देविंदपरियावण (ग्रंथ) (गा. ४६६३)
दोसियसाला (शाला) (गा. ३७२३)
धणु (अस्त्र) (गा. २३२५)
धणुग (अस्त्र) (गा. २३२२)
धणुग्गह (रोग) (गा. ७००)
धम्मण्णग (मुनि) (गा. १७०५)
नंद (वंश) (गा. ७१५)
नंद (व्यक्ति) (गा १५३५)
नंद (राजा) (गा. ३३५८)
नंदी (ग्रंथ) (गा. ३१३४, ३०३८)
नयणामय (रोग) (गा. २७६२)
नलदाम (व्यक्ति) (गा. ७१६)
नहवाहण (राजा) (गा. १४१४)
नागपरियाणी (ग्रंथ) (गा. ४६६५)
नागपरियावण (ग्रंथ) (गा. ४६६३)
नागिल (कुल) (गा. १२ टी. प. ८)
नालिएर (वृक्ष) (गा. ३७४४)
निसीह (ग्रंथ) (गा ३५१, ८५७, ४३५, २३५५, ३०३५, ३०३६)
पउमावती (रानी) (गा. १४१४)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पकप्प (ग्रंथ) (गा. ४३१)
पच्चक्खाण (ग्रंथ) (गा. ४३५)
पज्जोय (राजा) (गा. ७८४)
पण्णत्ति (ग्रंथ) (गा. ४६५६)
पमेह (रोग) (गा. ३७६७)
परिकम्म (ग्रंथ) (गा. १८२७)
परिहार (तप) (गा. १५३७)
पवाल (रत्न) (गा. ६५०)
पामा (रोग) (गा. २७६२ टी. प. ६२)
पारसीक (देशवासी) (गा. ८६८ टी. प. १२२)
पारावय (तिर्यञ्च) (गा. २८६४)
पारिणामिय (बुद्धि) (गा. २३८६)
पालक्क (पुरोहित) (गा. ४४१७)
पाहुड (ग्रंथ) (गा. ६४६)
पिंडेसणा (एक अध्ययन) (गा. १५३२, १५२६)
पिढर (पात्र) (गा. ३८३०)
पित्तमुच्छा (रोग) (गा. २२७१)
पिवीलिया (तिर्यञ्च) (गा. ४४२१)
पुंडरिय (एक अध्ययन) (गा. ११३३)
पुरंदरजसा (रानी) (गा. ४४१७)
पुव्वगत (ग्रंथ) (गा. १८२७)
पुस्सभूति (आचार्य) (गा. ११७८)
पुहवी (रानी) (गा. २६४५)
पूसमित्त (मुनि) (गा. १७०५)
पोतणपुर (नगर) (गा. १०८१)
पोर (गण) (गा. १३६६)
फणस (वृक्ष) (गा. ३७४४)
फलही (मल्ल) (गा. ३८४०)
बइल्ल (तिर्यञ्च) (गा. ८८५)
बंभचेर (एक अध्ययन) (गा. १५३२)
बालज (वस्त्र) (गा. ३७३६)
बाहु (आचार्य) (गा. २७०३)
बोधियसाला (शाला) (गा. ३७२३ टी. प. ५)
भंडी (वाहन) (गा. ४४६)
भंभी (ग्रंथ) (गा. ६५२)
भगंदर (रोग) (गा. ३२२२)
भत्तपरिण्णा (ग्रंथ) (गा. ४२३१)
भद्दबाहु (आचार्य) (गा. ४४३१)
भम (रोग) (गा. २२७१)
भरह (चक्रवर्ती) (गा. २७०१)
भरह (कर्मभूमि) (गा. ४३२२)
भरुयच्छ (नगर) (गा. १४१४)
भल्ल (तिर्यञ्च) (गा. ४३८२)
मंगु (आचार्य) (गा. २६८५)
मंडलिडक्क (तिर्यञ्च) (गा. २४४७)
मंडुग (तिर्यञ्च) (गा. २६२१)
मगधसेना (ग्रंथ) (गा २३२०)
मगर (तिर्यञ्च) (गा. १३७०)
मच्छिय (मल्ल) (गा. ३८४०)
मच्छिय (तिर्यञ्च) (गा. ३१३८)
मज्जार (तिर्यञ्च) (गा. ३१३८)
मत्तंग (वृक्ष) (गा. १५३४)
मधुरा (नगर) (गा. ११२६)
मरहट्ठ (देश) (गा. १७००)
मरहट्ठय (देशवासी) (गा. २६५६)
मरुग (ब्राह्मण) (गा. ४५४)
मलयवती (ग्रंथ) (गा. २३२०)
मल्ल (गण) (गा. १३६६)
मसग (तिर्यञ्च) (गा. ३१०६)
महकप्पसुय (ग्रंथ) (गा. २११८, ४६५६)
महकाल (श्मशान) (गा. ७८४)
महपाण (ध्यान) (गा. २७००)
महल्लीविमाणपविभत्ति (ग्रंथ) (गा. ४६५८)
महसिलकंटक (युद्ध) (गा. ४३६३)
महसुमिणभावणा (ग्रंथ) (गा. ४६६५)
महामह (उत्सव) (गा. २१२६)
महिस (तिर्यञ्च) (गा. ६४६)
महुरा (नगरी) (गा. २३३०)
माढर (ग्रंथ) (गा. ६५२)
मालव (देश) (गा. १७८८)
मासय (माषक) (गा. ४[illegible]१)
मासुरुक्ख (ग्रंथ) (गा. ६५२)
मिग (तिर्यञ्च) (गा. १०४१)
मिगावती (साध्वी) (गा. ५६१)
मुर्डिबग (मुनि) (गा. २६५७)
मुणिसुव्वय (तीर्थंकर) (गा. ४४१७)

मुत्तावलि (आभूषण) (गा. २६७)
मुद्दा (आभूषण) (गा. ६१३)
मुद्दिया (वल्ली) (गा ३७४४)
मुरिय (वंश) (गा. ३३५८)
मुरुंड (राजा) (गा. १५०१)
मूइंग (तिर्यञ्च) (गा. १७७२)
मूलदेव (ब्राह्मण) (गा. ४५२)
मूसग (तिर्यञ्च) (गा. ३१३६)
मोग्गल्ल (पर्वत) (गा. ४४२३)
मोयपडिमा (प्रतिमा) (गा. ३७६०)
मोरंगचूलिया (आभूषण) (गा. १३६१)
रयग (कर्मकर) (गा. ४३१२)
रविगत (नक्षत्र) (गा. ३१०)
रहमुसल (युद्ध) (गा. ४३६३)
रासभ (तिर्यञ्च) (गा. १३८३)
राहु (नक्षत्र) (गा. ३११)
राहुहत (नक्षत्र) (गा. ३१०)
लंखग (मल्ल) (गा. ७८३)
लवसत्तम (देवविशेष) (गा. २४३३)
लाड (देशवासी) (गा. १७००)
लोणियसाला (शाला) (गा. ३७२५)
लोमसिया (वल्ली) (गा. ३७४४)
लोह (मुनि) (गा. २६७१)
वइरभूति (आचार्य) (गा. १४१४)
वइरमज्झचंदपडिमा (तपविशेष) (गा. ३८३३)
वंसी (वृक्ष) (गा. ४४२४)
वक्कयसाला (शाला) (गा. ३३१६)
वग्गचूली (ग्रंथ) (गा. ४६५६)
वग्घ (तिर्यंच) (गा. ७७३)
वत्थूल (वनस्पति) (गा. ३६३०)
वद्धमाण (तीर्थंकर) (गा. ४६७१)
वण (रोग) (गा. ७००)
वरधणुग (आचार्य) (गा. ११७८)
वरुण (देव) (गा. ४६६२)
वरुणोववाय (ग्रंथ) (गा. ४६६०)
ववहार (ग्रंथ) (गा. ४४३४, ४४३५, ४४३२, ३३, ४६५५)
वसभ (तिर्यञ्च) (गा. ७१३)
वसुदेवहिंडी (ग्रन्थ) (गा २३२०)
वागज (वस्त्र) (गा ३७३६)
वाणमंतरमह (उत्सव) (गा. १८०४)
वात (रोग) (गा. ४४१)
वाल (तिर्यञ्च) (गा. ६४२)
विच्छुग (तिर्यञ्च) (गा. १७७२)
विड्डेर (नक्षत्र) (गा. ३१०)
विण्हु (मंत्री) (गा. ३३७८)
वियाहपण्णत्ति (ग्रंथ) (गा. २१२१)
विलंबि (नक्षत्र) (गा. ३१०)
विसूइगा (रोग) (गा. ४३६४)
वीयाह (ग्रंथ) (गा. ४६५६)
वीर (मुनि) (गा. १७०५)
वीरल्ल (तिर्यञ्च) (गा. ३८७५)
वीवाह (भोज) (गा. ३७३६)
वेउव्वियलद्धि (लब्धि) (गा. ३३७६)
वेलंधरोववाय (ग्रंथ) (गा. ४६६०)
वेसमणुववाय (ग्रंथ) (गा. ४६६०)
सउणिया (तिर्यञ्च) (गा. ७७१)
संगह (नक्षत्र) (गा ३१०)
संझागत (नक्षत्र) (गा. ३१०)
सक्कमह (उत्सव) (गा. ८७३, २१३६)
सग (राजा) (गा. ४५५७)
सत्थपरिण्णा (एक अध्ययन) (गा. १५२६, १५३१)
सप्प (तिर्यञ्च) (गा. ८१६)
सप्पिनिहि (निधि) (गा. ३७४६)
समुट्ठाणसुय (ग्रंथ) (गा. ४६६३)
सव्वासि (रोगी) (गा. ८४६)
ससिगुत्त (मुनि) (गा. १६६७)
साण (तिर्यञ्च) (गा. ३६१७)
साताहण (राजा) (गा. ११२६)
सामाइय (ग्रंथ) (गा. १८२४)
सालवाहण (राजा) (गा. २६४५)
सालाहण (राजा) (गा. ११२८)
साहस्सी (मल्ल) (गा. १५३६)
सिंगिय (विष) (गा. ३०२६)
सिंधवय (वस्त्र) (गा २८६५)
सिद्धायण (स्थान) (गा. ३७७०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सियाल (तिर्यञ्च) (गा १३७७, ४४२३)
सिरीसव (तिर्यञ्च) (गा. ६४२)
सिवकोट्ठग (मुनि) (गा. १७०५)
सिवा (रानी) (गा. ४४२५)
सीह (तिर्यञ्च) (गा. ७७०)
सीही (तिर्यञ्च) (गा. ७७२)
सुगिम्हमह (उत्सव) (गा. २१३६)
सुणग (तिर्यञ्च) (गा. १६३८)
सुत्त (ग्रंथ) (गा १८२७)
सुभद्दा (साध्वी) (गा. ५६१)
सूगर (तिर्यञ्च) (गा. १७५१)
सूयगड (ग्रंथ) (गा. २८६६, ४६५५)
सूर (नक्षत्र) (गा. ६८१)
सूल (रोग) (गा. २३२३)
सूवकार (कर्मकर) (गा. ३७४०)
सोंडियसाला (शाला) (गा. ३७२५)
सोत्तियसाला (शाला) (गा. ३७२३)
सोमिल (ब्राह्मण) (गा. १०७६)
हत्थि (तिर्यंच) (गा. ७७३)
हत्थिसाला (शाला) (गा. ३०७१)
हिमवंत (पर्वत) (गा. ११२६)
हिरडिक्क (यक्ष) (गा. ३१४६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्गीकृत विशेषनामानुक्रम

अवयव

अंगुलि (अंगुलि)	(गा. ४२६०)
अंडक (मुख)	(गा. ३६८३)
अच्छि (आंख)	(गा. ३६४२)
ओट्ठ (होठ)	(गा. ४३८३)
कडि (कमर)	(गा. २५७४)
कन्न (कान)	(गा. ३६४२)
कर (हाथ)	(गा. ३६४२)
कुच्छि (कुक्षि)	(गा. २३०१)
गलय (गला)	(गा. ३८७४)
दंत (दांत)	(गा. ८६५)
नयण (आंख)	(गा. २६८३)
नेत्त (नेत्र)	(गा. ४४१२)
नास (नाक)	(गा. ३६४२)
नासिगा (नाक)	(गा. ४३८३)
पाद (पैर)	(गा. २६८३)
बाहु (बाहु)	(गा. २५७४)
मुह (मुख)	(गा. २६८३)

आचार्य

अज्जरक्खिय (आर्यरक्षित)	(गा. २३६५, ३६०५)
अज्जसमुद्द (आर्यसमुद्र)	(गा. २६८५)
खंदग (स्कन्दक)	(गा. ४४१७)
खुड्डगणि (क्षुल्लगणि)	(गा. १५०२)
गोविंद (गोविंद)	(गा. २७१३)
दुप्पसह (दुःप्रसभ)	(गा. ४१७४)
पुस्सभूति (पुष्यभूति)	(गा. ११७८)
बाहु (भद्रबाहु)	(गा २७०३)
भद्दबाहु (भद्रबाहु)	(गा. ४४३१)
मंगु (मंगु)	(गा. २६८५)
वइरभूति (वज्रभूति)	(गा. १४१४)
वरधणुग (वरधनुक)	(गा. ११७८)

आभूषण

मुत्तावलि (हार)	(गा. २६७)
मुद्दा (अंगूठी)	(गा. ६१३)
मोरंगचूलिया (पशुओं का आभूषण)	(गा. १३६१)

उत्सव

इंदकीलमह (इंद्रकीलमह)	(गा. १८०५)
उज्जाणमह (उद्यानमह)	(गा. १८०४)
गाममह (ग्राममह)	(गा. १८०४)
जिणवरमह (जिनवरमह)	गा. २८३७)
तडागमह (तडागमह)	(गा. १८०४)
थूभमह (स्तूपमह)	(गा. ११६१)
महामह (महामह)	(गा. २१२६)
वाणमंतरमह (व्यन्तरमह)	(गा. १८०४)
सक्कमह (शक्रमह)	(गा. ८७३; २१३६)
सुगिम्हमह (सुग्रीष्ममह)	(गा. २१३६)

उद्यान

उच्छुघर (इक्षुगृह)	(गा. ३६०५)
कोरंटग (कोरंटक)	(गा. ६७५ टी. प. १३७)
गुणसिल (गुणशिल)	(गा. ६७६)

कर्मकर

अयपालग (अजापालक)	(गा. १६११)
कुलाल (कुम्भकार)	(गा. ३६०३)
कुविंद (जुलाहा)	(गा. १२८४)
गोवाल (ग्वाला)	(गा. ३६३४)
घडगार (कुंभकार)	(गा. २५)
डोंब (चांडाल)	(गा. ४३१२)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णंतिक्क (रंगाई करनेवाला) (गा. ४३१२)
णट्ट (नर्तक) (गा. ४३१२)
दारपालय (द्वारपाल) (गा. ३२६५)
देवड (शिल्पी) (गा. ४३१२)
निज्ञामग (नाविक) (गा. १३७३)
निल्लेवण (धोबी) (गा. ५०४)
पाडिहिग (पटहवादक) (गा. ४३१२)
पुरुस (कुंभकार) (गा. ४३१२)
महागोव (ग्वाला) (गा. १३७३)
रधिय (रथिक) (गा. ४३६४)
रयग (धोबी) (गा. ४३१२)
वच्छपाल (ग्वाला) (गा. ३६३४)
सिरिघरय (भंडारी) (गा. १३७३)
सुत्तिय (सूत कातने वाला) (गा. ३७२५)
सूवकार (रसोइया) (गा. ३७४०)

खाद्य पदार्थ

कंजिय (कांजी) (गा. ४२४३)
खीर (खीर, दूध) (गा. ७७२)
गुल (गुड़) (गा. २८८४)
गोरस (दूध) (गा.१७६८)
घत (घी) (गा. ४३८)
घयमंड (घृतसार) (गा. ८४७)
तक्क (छाछ) (गा. २१३७)
तेल्ल (तैल) (गा. ८४५)
दधि (दही) (गा. २४७६)
दोद्धिय (तुम्बा) (गा. ४२६२)
नवणीय (मक्खन) (गा. २६६८)
पय (दूध) (गा. ४२८७)
परमन्न (खीर) (गा. १६३८)
महु (शहद) (गा. ४४२१)
महुरग (खाद्य पदार्थ) (गा. ३८०३)
रसाल (खाद्य पदार्थ) (गा. ३३१२)
लोण (नमक) (गा. ३७२०)
संखडि (मिठाई) (गा. २३८२)

गण

पोर (पौरगण) (गा. १३६६)
मल्ल (मल्लगण) (गा. १३६६)

ग्रंथ

अंगचूली (अंगचूलिका) (गा. ४६५६)
अरुणोववाय (अरुणोपपात) (गा. ४६६०)
आयार (आचारांग) (गा. १५३३, ४६७४)
आयार (निशीथ) (गा. १५२५)
आयारदशा (दशाश्रुतस्कंध) (गा. ७६६)
आयारपकप्प (निशीथ) (गा. १५२८, २२६४)
आवस्सय (आवश्यक) (गा. २५७८)
आवासय (आवश्यक) (गा. ६५५)
उट्ठाणसुय (उत्थानश्रुत) (गा. ४६६३)
उत्तरज्झयण (उत्तराध्ययन) (गा. १५३३, ३०३७)
उत्तरज्झाय (उत्तराध्ययन) (गा. १५२६)
कप्प (बृहत्कल्प) (गा. १८४, १८५, ३२०, ४४३२-३५, ४६५५)
कप्प (निशीथ) (गा. १६५७, ३०५७)
खुड्डियाविमाणपविभत्ति (क्षुल्लिकाविमानप्रविभक्ति) (गा. ४६५६)
गरुलोववाय (गरुडोपपात) (गा. ४६६०)
चुल्लसुत (चुल्लश्रुत) (गा. ३०३७)
जोणिपाहुड (योनिप्राभृत) (गा २३६२)
तरंगवई (तरंगवती) (गा. २३२०)
तित्थोगाली (तीर्थोगालि) (गा. ४५३२)
दसकालिय (दशकालिक) (गा. ३०३७)
दसवेयालिय (दशवैकालिक) (गा. १५३३)
दिट्ठिवाय (दृष्टिवाद) (गा. २११८, ४६७४)
देविंदथय (देवेन्द्रस्तव) (गा. ३०१६)
देविंदपरियावण (देवेन्द्रपरियापनिकी) (गा. ४६६३)
नंदी (नंदी) (गा. ३०३८, ३१३४)
नागपरियाणी (नागपरियापनिकी) (गा. ४६६५)
नागपरियावण (नागपरियापनिकी) (गा ४६६३)
निसीह (निशीथ) (गा ३७१ ४२६ ८७७ २२७७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०३५, ३०३६)
पकप्प (निशीथ) (गा. ३२०, १५६८, २३१४, २३१५, २३२७)
पच्चक्खाण (नवां पूर्व) (गा. ४३५)
पण्णत्ति (भगवती) (गा. ४६५६)
परिकम्म (दृष्टिवाद का भेद) (गा. १८२७)
पाहुड (योनिप्राभृत) (गा. ६४६, १७३६)
पुव्वगत (दृष्टिवाद का भेद) (गा. १८२७, १८२६)
भंभी (रसायनशास्त्र) (गा. ६५२)
मगधसेणा (मगधसेना) (गा. २३२०)
मलयवती (मलयवती) (गा. २३२०)
महकप्पसुय (महाकल्पश्रुत) (गा. २११८, ४६५६)
महल्लीविमाणपविभत्ति (महद्विमानप्रविभक्ति) (गा. ४६५८)
माढर (नीतिशास्त्र) (गा. ६५२)
मासुरुक्ख (मासुरुक्ष) (गा. ६५२)
वग्गचूली (वर्गचूलिका) (गा. ४६५६)
वरुणोववाय (वरुणोपपात) (गा. ४६६०)
ववहार (व्यवहार) (गा. ४४३२, ४६५५)
ववहारनिज्जुत्ति (व्यवहारनिर्युक्ति) (गा. ४४३४)
वसुदेवहिंडी (वसुदेवहिंडी) (गा. २३२० टी. प. ६)
वियाहपण्णत्ति (व्याख्याप्रज्ञप्ति) (गा. २१२१)
विवाहचूलिया (व्याख्याचूलिका) (गा. ४६५६)
वीयाह (व्याख्याप्रज्ञप्ति) (गा. ४६५६)
वेलंधरोववाय (वेलंधरोपपात) (गा. ४६६०)
वेसमणुववाय (वैश्रमणोपपात) (गा. ४६६०)
समुट्ठाणसुय (समुत्थानश्रुत) (गा. ४६६३)
सामाइय (सामायिक) (गा. १८२४)
सुत्त (दृष्टिवाद का एक भेद) (गा. १८२७)
सूयगड (सूत्रकृतांग) (गा. २८६६, ४६५५)

चक्रवर्ती

भरह (भरत) (गा. २७०१)

तिर्यञ्च

अच्छ (रीछ) (गा. ४३८२)
अय (बकरा) (गा. १६११)
अया (बकरी) (गा. १६१३)
अस्स (घोड़ा) (गा. ६५६)
अहि (सांप) (गा. १०१४)
आस (अश्व) (गा. ४५२)
इभ (हाथी) (गा. ६४)
एलग (भेड़) (गा. ७६४)
कमढ (कच्छप) (गा. ६६२)
कवोय (कबूतर) (गा. २६२४)
काग (काक) (गा. ६४)
किमि (कृमि) (गा. ३७६५)
कुक्कुड (मुर्गा) (गा. ६०१)
कुक्कुडि (मुर्गी) (गा. ३६८४)
कोइल (कोकिल) (गा. ३००८)
खर (गधा) (गा. ३२६)
गद्दभ (गधा) (गा. ३२७)
गरुल (गरुड) (गा. ४६६२)
गाव (गाय) (गा. १५२६)
गावी (गाय) (गा. ४४८)
गो (गाय) (गा. १५६)
गोण (बैल) (गा. १७५१)
गोणस (सर्प की एक जाति) (गा. ६५)
गोणी (गाय) (गा ५८०)
घरसउणि (कोयल) (गा. ७७०)
घोडग (घोड़ा) (गा. १८२४)
छगल (बकरा) (गा. ७८४)
छगलग (बकरा) (गा. २४५२)
जंबुग (सियार) (गा. १३८६)
जड्ड (हाथी) (गा. ८१६)
जाहग (साही) (गा. ४१०२)
तिमि (मत्स्य विशेष) (गा. १३७०)
तुरंग (घोड़ा) (गा. ३५५७)
दद्दुर (मेंढक) (गा. १०)
दीहपट्ठ (सांप) (गा. २४२६)
पारावय (कबूतर) (गा. २८६४)
पिवीलिया (चींटी) (गा. ४४२१)
बइल्ल (बैल) (गा. ८८५)
भल्ल (भालू) (गा. ४३८२)
मंडलिडक्क (सर्प विशेष) (गा. २४४७)

मंडुग (मेंढक) (गा. २६२१)
मगरं (मगर) (गा. १३७०)
मच्छिय (मक्खी) (गा. ३१३८)
मज्जार (मार्जार) (गा. ३१३६)
मसग (मच्छर) (गा. ३१०६)
महिस (भैंस) (गा. ६४६)
मिग (मृग) (गा. १०४१)
मूइंग (चींटी) (गा. १७७२)
मूसग (चूहा) (गा. ३१३६)
रासभ (गधा) (गा. ३३१)
वग्घ (व्याघ्र) (गा. ७७३)
वसभ (बैल) (गा. ७१३)
वाल (व्याल, सर्प) (गा. ६४२)
विच्छुग (बिच्छु) (गा. १७७२)
वीरल्ल (बाज) (गा. ३८७५)
सउणिया (पक्षी) (गा. ७७१)
सउणी (पक्षी) (गा. ३८७५)
सप्प (सर्प) (गा. ८१६)
साण (कुत्ता) (गा. १०१४)
सियाल (सियार) (गा. १३७७)
सिरीसव (सर्प की जाति) (गा. ६४२)
सीह (सिंह) (गा. ७७०)
सीही (सिंहनी) (गा. ७७२)
सुणग (कुत्ता) (गा. २५५)
सूगर (सूअर) (गा. १७५१)
हत्थि (हाथी) (गा. ७७३)

तीर्थंकर

मुणिसुव्वय (मुनिसुव्रत) (गा. ४४१७)
वद्धमाण (महावीर) (गा. ४६७१)

देव

अरुण (अरुण) (गा. ४६६२)
तालपिसाय (तालपिशाच) (गा. ७८४)
लवसत्तम (लवसत्तम) (गा. २४३३)
वरुण (वरुण) (गा. ४६६२)
हिरडिक्क (चांडालों का देव) (गा. ३१४६ टी. प. ५५)

देश एवं देशवासी

अंध (आंध्र) (गा. २६५६)
कोसल (कौशल) (गा. २६५६)
तामलित्तग (ताम्रलिप्तक) (गा. २८६५)
पारसीक (देशवासी) (गा. ८६८ टी. प. १२२)
मरहट्ठ (महाराष्ट्र) (गा. १७००)
मरहट्ठय (महाराष्ट्रिक) (गा. २६५६)
मालव (मध्यप्रदेश) (गा. १७८८)
लाड (लाट) (गा. १७००)

धान्य

अयसी (अलसी) (गा. ६५१ टी. प. १३२)
ओदण (चावल) (गा. २५०१, ४२८७)
कलम (चावल) (गा. ४२८७)
कुलत्थ (कुलथी) (गा. ६५१ टी. प. १३२)
कोद्दव (कोद्रव) (गा. २५०१)
गोहुम (गेहूं) (गा. २५०१)
जव (जव) (गा. २५०१)
चणा (चना) (गा. ६५१ टी. प. १३२)
चवल (चवला) (गा. ६५१ टी प १३२)
तंदुल (तंदुल) (गा २३५६)
तिल (तिल) (गा ८४७)
तुवरि (तुवरि) (गा. ६५१ टी. प. १३२)
निप्फाव (निष्पाव) (गा. ६५१ टी. प. १३२)
मसूर (मसूर) (गा. ६५१ टी. प. १३२)
मास (उड़द) (गा. ४६३६)
मुग्ग (मूंग) (गा. ६५१ टी. प. १३२)
रालग (रालक) (गा. २५०१)
वीहि (व्रीहि) (गा. २५०१)
सण (सन) (गा. ६५१ टी. प. १३२)
सरिसव (सर्षप) (गा. ४६६, ५५५)
सालि (धान्य) (गा. २५०१)

नगरी

अवंति (अवंती) (गा. ७८४)
इंदपुर (इंद्रपुर) (गा. २६५६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उज्जेणी (उज्जयिनी)	(गा. ४५५७)
कंचणपुर (कंचनपुर)	(गा. ४२७८)
कुंभकारकड (कुंभकारकृत)	(गा. ४४१७)
कोंकण (कोंकण)	(गा. ४२६२)
तगरा (तगरा)	(गा. १६६४, ३६३०)
दंतपुर (दंतपुर)	(गा. ५१७)
दसपुर (दसपुर)	(गा. ३६०५)
पोयणपुर (पोतनपुर)	(गा. १०८१)
भरुयच्छ (भरुकच्छ)	(गा. १४१४)
मधुरा (मथुरा)	(गा. ११२६, २३३०)

नदी एवं पर्वत

कसेरु (कसेरु)	(गा. १४१५ टी. प. १५)
गंगा (गंगा)	(गा. २५५४)
गोदावरी (गोदावरी)	(गा. ११२८)
मेरु (सुमेरु)	(गा. ४३५२)
मोग्गल्ल (मोग्गल्ल)	(गा. ४४२३)
हिमवंत (हिमालय)	(गा. ११२६)

परिव्राजक एवं संन्यासी

अट्ठिसरक्ख (कापालिक)	(गा. ३३१६)
कुंचिय (तापस)	(गा. ३२४)
गोट्ठामाहिल (गोष्ठामाहिल)	(गा. २७१३)
चरग (चरक)	(गा. ११३६)
तच्चण्णिय (बौद्ध साधु)	(गा. २७१३)

प्रतिमा

जवमज्झचंदपडिमा (यवमध्यचंद्रप्रतिमा)	(गा. ३८३३)
वइरमज्झचंदपडिमा (वज्रमध्यचंद्रप्रतिमा)	(गा. ३८३३)
मोयपडिमा (मोकप्रतिमा)	(गा. ३७६०)

ब्राह्मण

कविल (कपिल)	(गा. २६३८)
मरुग (मरुक)	(गा. ४५४-४५७, २५४२)
मूलदेव (मूलदेव)	(गा. ४५२)
सोमिल (सोमिल)	(गा. १०७६)

भोज

आवाह (विवाह भोज)	(गा. ३७३६)
करडुयमत्त (मृतक भोज)	(गा. ३७३६)
वीवाह (विवाह-भोज)	(गा. ३७३६)

मंत्री

खंडकण्ण (खंडकर्ण)	(गा. ७८४)
खरग (खरक)	(गा. ११३०)
चाणक्क (चाणक्य)	(गा. ४४२०)
पालक्क (पालक)	(गा. ४४१७)
विण्हु (विष्णु)	(गा. ३३७८)

मल्ल

अट्टण (अट्टन)	(गा. ३८४०)
आसकिसोर (अश्वकिशोर)	(गा. ७८३)
फलही (फलही)	(गा. ३८४०)
मच्छिय (मात्सिक)	(गा. ३८४०)
लंखग (लंखक)	(गा. ७८३)
साहस्सी (साहस्री)	(गा. १५३६)

महासती

मिगावती (मृगावती)	(गा. ५६१)
सुभद्दा (सुभद्रा)	(गा. ५६१)

मुद्रा

उंडिय (मुद्रा)	(गा. २६४२)
मासय (माषक)	(गा. ४८१)

मुनि

अज्जास (अर्यास)	(गा. १७०५)
अरहन्नक (अर्हन्नक)	(गा. १७०५)
अवंतीसुकुमाल (अवंतीसुकुमाल)	(गा. ४४२५)
कालायसवेसित (कालास्यवैशिक)	(गा. ४४२३)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खंदय (स्कंदक) (गा. ४६८६)
खंदिल (स्कन्दिल) (गा. १७०५)
गोविंददत्त (गोविन्ददत्त) (गा. १७०५)
चिलायपुत्त (चिलातपुत्र) (गा. ४४२२)
थावच्चसुत (स्थापत्यासुत) (गा. ११६३)
थावच्चापुत्त (स्थापत्यापुत्र) (गा. २४६५)
धम्मण्णग (धर्मन्नक) (गा. १७०५)
पूसमित्त (पुष्यमित्र) (गा. १७०५)
मुडिंबग (मुडिंबक) (गा. २६५७)
लोह (लौह) (गा. २६७१)
वीर (वीर) (गा. १७०५)
ससिगुत्त (शशिगुप्त) (गा. १६६७)
सिवकोट्ठग (शिवकोष्ठक) (गा. १७०५)

युद्ध

महसिलकंटक (महशिलकंटक) (गा. ४३६३)
रहमुसल (रथमुशल) (गा. ४३६३)

राजा

अवंतिवति (प्रद्योत) (गा. ७८४)
कोणिय (कूणिक) (गा. ४३६५)
चेडग (चेटक) (गा. ४३६३)
जितसत्तु (जितशत्रु) (गा. १०८१)
तोसलिय (तोसलिक) (गा. २५६०)
दंडइ (दंडकी) (गा. ४४१७)
दंडिग (दंडिक) (गा. १२६५)
नंद (नंद) (गा. ३३५८)
नहवाहण (नभवाहन) (गा. १४१४)
पज्जोय (प्रद्योत) (गा. ७८४)
मुरुंड (मुरुंड) (गा. १५०१)
सग (शक) (गा. ४५५७)
सातवाहण (शातवाहन) (गा. ११२६, २६४५)
साताहण (शातवाहन) (गा. ११२८)

रानी

पउमावती (पद्मावती) (गा. १४१४)
पुरंदरजसा (पुरंदरयशा) (गा. ४४१७)
पुहवी (पृथ्वी) (गा. २६४५)
सिवा (शिवा) (गा. ४४२५)

रोग

अजिण्ण (अजीर्ण) (गा. ६४७)
अजीर (अजीर्ण) (गा. ३४१२)
अतिसार (हैजा) (गा. २५४८)
अरिसा (मस्सा, अर्श) (गा. ६३)
उद्धसास (श्वासरोग) (गा. २२७१)
कच्छुय (खुजली) (गा. २७६२)
कामल (पीलिया) (गा. २७६२)
कुट्ठ (कुष्ठ) (गा. २७६२)
खय (क्षय) (गा. ४३८४)
जर (ज्वर) (गा. ७००)
धणुग्गह (धनुष्टंकार, वातरोग विशेष) (गा. ७००)
नयणामय (आंख का रोग) (गा. २७६२)
पमेह (मधुमेह) (गा ३७६७)
पामा (खुजली) (गा. २७६२ टी. प. ६२)
पित्तमुच्छा (पित्तमूर्च्छा) (गा. २२७१)
भगंदर (मस्सा) (गा. ३२२२)
भम (चक्कर आना) (गा. २२७१)
वण (व्रण) (गा. ७००)
वात (वायुरोग) (गा. ४४१)
विसूइगा (हैजा) (गा. ४३६४)
सव्वासि (भस्मक रोग) (गा. ८४६)

लब्धि

आसीविसत्त (आशीविषलब्धि) (गा. ४६६६)
खीरलद्धि (क्षीरलब्धि) (गा. ८६५)
खीरासवलद्धि (क्षीरास्रवलब्धि) (गा. १५०२, ३०००)
चारणलद्धि (चारणलब्धि) (गा. ४६६७)
दिट्ठिविसलद्धि (दृष्टिविषलब्धि) (गा. ४६६६)
वेउव्वियलद्धि (वैक्रियलब्धि) (गा. ३३७६)

वंश

नंद (नंद) (गा. ७१५)
मुरिय (मौर्य) (गा. ३३५८)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वल्ली

तंबोल (ताम्बूल) (गा. ३७४४)
तउसि (ककड़ी) (गा. ३७४४)
मुद्दिया (मुद्रिका) (गा. ३७४४)
लोमसिया (ककड़ी) (गा. ३७४४)
वत्थूल (बथुआ) (गा. ३७४४)

वस्त्र

अंडज (अंडों से उत्पन्न) (गा. ३७३६)
कंबलग (कंबल) (गा. ११३२)
कीडज (कीड़ों से उत्पन्न) (गा. ३७३६)
कोट्टंब (गौडदेशोद्भव) (गा. २८६५)
बालज (बालों से निष्पन्न) (गा. ३७३६)
वागज (वल्कल से निष्पन्न) (गा. ३७३६)
सिंधवय (सिंधु देश में उत्पन्न) (गा. २८६५)

वासुदेव

तिविट्ठ (त्रिपृष्ठ) (गा. २६३८)

वाहन

नावा (नाव) (गा. ११०)
पोत (जहाज) (गा. ७५०)
भंडी (बैलगाड़ी) (गा ४४६)
रध (रथ) (गा. ६५६)
सगड (बैलगाड़ी) (गा ४५१)

विशिष्ट मुनि

कप्पधर (कल्पधर) (गा. ४०३)
चोद्दसपुव्वि (चतुर्दशपूर्वी) (गा. १५३०, १५३६, २६६५)
दसपुव्वि (दशपूर्वी)
(गा. ४०३, ३१८, ५१४, १५२४, २६६५)
नवपुव्वि (नवपूर्वी) (गा. ४०३, ३१८, ५१४, २६६५)
निज्जुत्तिधर (निर्युक्तिधर) (गा. ४०४)
पकप्पधर (प्रकल्पधर) (गा. १५२३)
पकप्पधारि (प्रकल्पधारी) (गा. ४०३, १५३०, २३८६)
परमोधिजिण (परमावधिजिन) (गा. ५१४)
पुव्वधर (पूर्वधर) (गा. ४४३)
पेढियधर (पीठिकाधर) (गा. ४०४)
संजोगदिट्ठपाढि (संयोगदृष्टपाठी) (गा. २४२४)

वृक्ष

उंबर (उम्बर) (गा. ३८७७)
एरंड (एरंड) (गा. ५४२)
करील (करील) (गा. १३६५)
चिंच (इमली) (गा. ३७४४)
जंबु (जंबू) (गा. २८८०)
तल (ताडवृक्ष) (गा. ३७४४)
तिणिस (तिनिश) (गा. २७७८)
नालिएर (नारियल) (गा. ३७४४)
पलंब (ताड़) (गा. १८४)
फणस (पनस) (गा. ३७४४)
मत्तंग (कल्पवृक्ष) (गा. १५३४)
वंसी (बांस का वृक्ष) (गा. ४४२४)
वड (वट) (गा. २८८०)

साधु एवं गृहस्थ के उपकरण

उक्खल (ऊखल) (गा. ३८५३)
उवाणह (जूता) (गा. ४३७०)
कंबी (यष्टिविशेष) (गा. ३४६६)
कच्चग (पात्र) (गा. ३५०६)
कत्तिल्ल (कैंची) (गा. ३५०६)
कमढग (पात्रविशेष) (गा. ३६३३)
कुंभ (घट) (गा. २)
कुड (घट) (गा. ५०६, ५०८)
कोवीण (कोपीन) (गा ११५८)
घड (घट) (गा. ६६१)
चालणी (चालनी) (गा. ४६४६)
चिलिमिलि (पर्दा) (गा. ३०६५)
चोलपट्ट (चोलपट्ट) (गा. ८६४)
छत्त (छत्र) (गा. ३५०६)
थाल (पात्र) (गा. ६३३)
थालि (पात्र) (गा. ८२०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दंड (दण्ड) (गा. ३८५३)
दतिय (मशक) (गा. ४६६)
दव्वी (चम्मच) (गा. ३८५३)
दीवग (दीपक) (गा. १६३६)
नंदीपडिग्गह (पात्रविशेष) (गा. ३६३३)
नालिया (नालिका) (गा. ४४४)
पडल (भिक्षापात्र पर ढका जानेवाला वस्त्र) (गा. ८६४)
पडिग्गह (पात्रविशेष) (गा. ११३२)
पलियंक (पर्यंक) (गा. ८६७)
पिढर (पात्र विशेष) (गा. ३८३०)
मत्तय (पात्रविशेष) (गा. ८६४)
मुहणंत (मुखवस्त्र) (गा. ४५३७)
मुहपोत्तिय (मुखपोतिका) (गा. ८६४)
रयणथाल (रत्नस्थाल) (गा २४५२)
रयहरण (रजोहरण) (गा. ८६४)
विपडिग्गह (पात्रविशेष) (गा. ३६३३)
विमत्त (पात्रविशेष) (गा ३६३३)
वेंटिय (बिस्तर) (गा. १२६)
संडास (संडासी) (गा. १३५२)
सिव्वणि (सुई) (गा. ३५४६)
सेज्ञा (शय्या) (गा. १८१५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका में संकेतित निर्युक्तिस्थल

(टीकाकार ने अनेक स्थानों पर विविध शब्दावलि में निर्युक्तिगाथा का संकेत किया है। यहां हम उन सब संदर्भों को प्रस्तुत कर रहे हैं। इनमें ब्रेकेट वाली संख्या निर्युक्तिगाथा की है।)

निर्युक्तिकृत् —
१८७ (३८), ३४५ (७७), १६४४ (२६७) १७६५. (२८२), ३३४६ (४३५)

सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्तिः —
१८८ (३६), २०८७ (३३०)

निर्युक्तिगाथां भाष्यकारो विवृणोति —
२६१२ (४१०)

निर्युक्त्यवसरः —
२८८० (४०५)

निर्युक्तिगाथासंक्षेपार्थः —
५३ (१६), ११७४ (१६७), १३६१ (२१५), २८६७ (४०८), २६०७ (४०६), २६१५ (४११), २६४१ (४१३)

भाष्यनिर्युक्तिविस्तरः —
२०३८[1] (३२७), २७८१ (३३५)

निर्युक्तेः व्यापारयति —
३६१६ (४६६)

निर्युक्तिमाह —
२०६२ (३३१)

निर्युक्तिविस्तरः —
६७६ (१६३), १०५४ (१८२), १३६१ (२१५), १४८० (२३७), २०१६ (३२४), २४५० (३६४), २७८२ (३६८), २८८० (४०५), ३२२४ (४२४), ३३६० (४३६), ३३८५ (४३८), ३३८८ (४४१), ३५११ (४५२), ३५३८ (४५६), ३५५० (४६०), ३५६५ (४६५), ३६८५ (४७४), ३८८८ (४६३),

निर्युक्तिभाष्यविस्तरः —
८६२ (१५३), ६१६ (१५७)
१२३६ (२०२), १२५० (२०४) १३५२ (२१३)

---

१ भाष्यनिर्युक्तिविस्तरः उल्लेख होने के कारण प्रारंभिक २०३२ से २०३७ तक की छह गाथाएं भाष्य की हैं। निर्युक्ति की गाथा २०३८ से शुरू होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका में उद्धृत चूर्णि के संकेत

(व्याख्या साहित्य के क्रम में भाष्य के बाद चूर्णियां लिखी गईं। निशीथ की चूर्णि प्रकाशित रूप में उपलब्ध है। लेकिन व्यवहार एवं बृहत्कल्प की चूर्णि अप्रकाशित है। व्यवहारचूर्णि की हस्तलिखित प्रतियां यत्र-तत्र भंडारों में मिलती हैं। व्यवहार भाष्य के टीकाकार ने अनेक स्थलों पर चूर्णि का उल्लेख किया है। यहां हम टीका में उद्धृत चूर्णि के अंशों को यथावत् प्रस्तुत कर रहे हैं।)

चाह चूर्णिकृत्—
चित्त इति जीवस्याख्येति ।
(गा. ३५ टी. प. १५)

आह च चूर्णिकृत्—
पाणाइवायं करोमीति जो संकल्पं करेइ चिंतयतीत्यर्थः
संरंभे वट्टइ परितावणं करेइ समारंभे वट्टइ त्ति।
(गा. ४६ टी. प. १८)

चास्यैव व्यवहारस्य चूर्ण्यां दृष्ट्वा लिखितमिति ।
(गा. ११४ टी. प. ४०)

उक्तं चास्यैव व्यवहारस्य चूर्णौ—
एएसु चेव अट्ठमीमादीसु चेइयाइं साहुणो वा जे अण्णाए
वसहीए ठिया ते न वंदंति मासलघु जइ चेइयघरे ठिया
वेयालियं कालं पडिक्कंता अकए आवस्सए गोसे य कए
आवस्सए चेइए न वंदंति तो मासलहु इति ।
(गा. १२६ टी. प. ४५)

उक्तं च चूर्णौ—
छम्मासाण परं जं आवज्जइ तं सव्वं छंडिज्जइ।
(गा. १४० टी. प. ४८)

एतच्च चूर्णिकारोपदेशात् विवृतं। तथा चाह चूर्णिकृत्
उपरिल्ला हिं चउहिं, पिण्डेसणाहिं अन्नयरीए अभिग्गहो
सेसासु तिसु अग्गहो इति।
(गा. ८०४ टी. प. ९८)

आह च चूर्णिकृत्—
जइ ताव तइओ भंगो अणुण्णाओ प्रागेव पढमो भंगो
अणुण्णातो इति।
(गा. १७७६ टी. प. ११)

ताहे पीढसमुद्दा मुहपियजंपगा ते पव्वज्जाओ। भावणा
वयणाणि भणिज्ञा तणपडिवत्तिकुसलेणं कहण्णं मलिया
मद्दिया भवन्तीति चूर्णिः ।
(गा. २४६५ टी. प. ८)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्गीकृत विषयानुक्रम

अंतेवासी ४५६५, ४५६६
अक्षताचार १५२०-२२
अतिक्रम ४२, ४३
अतिचार ४२,४३
अतिशय २५०५-२७०७
अनशन ४२२१-४४२६
अनाचार ४२, ४३
अभ्युत्थान २६४७-६५
अवग्रह २२१६-२६, २२५५, ३३४६-६२, ३३८२, ३३८३, ३५२०-३०
अवधावन २०१६, २०२०, ३६५२-७६
अवसन्न ८८२-८८
अशुचि १६४०-४२
अस्वाध्याय ३१००-३२३६
आगमव्यवहार ३१८, ३१६, ३२५-४४, ४०२६-८०
आचारकुशल १४८०-८७
आचारप्रकल्प २३१६-२१, २३३२, २३३३
आचार्य ७५,६४, ६५, १६६-८३, ५६७-७०, ५८६-६६, ६५४, ६५५, १०७४, १०७५, १२११-१३, १३११-३६, १३६६-१५८७ १५६२, १५६३, १५८१-८७, १८६०-२०११, २३३४, २४१०-३२, २५१६-२६२८, ४५८६-६४
आज्ञा १६७५, १६७६
आज्ञाव्यवहार ३८८६, ३८८७, ४४३७-४५०१
आभवद् व्यवहार ३८८८-४००६
आरोपणा १४०-४८, ५६६-६०३
आर्यरक्षित ३६०४-१०
आलोचक ५२१, ५२२
आलोचना ५४-५६, २२६-३१७, ४३८-५१, ५२३, ५२४, ६६५-७६, २३४८, २३६१-७८, ४२६५-४३१०, ४३००, ४३०१
आलोचनार्ह ५१६, ५२०
आहार ३६८०-३७०२
इंगिनीमरण ४३६१
इच्छा १३६२-६४
उञ्छ ३८५२-६४
उत्तरगुण ४७०, ४७१
उन्मत्तचित्त ११४०-५२
उपग्रहकुशल १५१५-१६
उपसंपदा १६६२-१६२६
उपसर्ग ११५३-६२, ३८४२-५१
उपाध्याय ६५६, ६५७
उपाश्रय १८०४-१८०६
ऋण ११७३-१२०२
एकलवास २७०८-४७, २७६६-८१
कलह २६७६-३०१३
कायोत्सर्ग ५४७
कुमार ६४८
कुशील ८७६-८१
कूणिक ४३६३-६५
कृतिकर्म २३३७-४७
कृत्स्न ५७२-७४
क्षिप्तचित्त १०७७-११२२
गण १३६५-१३६८
गणधारी (आचार्य) १३५७-६१
गणमुक्तसाधना २०८७-८६
गणिसंपदा ४०८०-४१२४
गीतार्थ ६६२
गुप्तचर ६३८-४७
गौरव १७१६, १७२०

ग्रंथाध्ययन का काल ४६५२-७४
चेटक ४३६३-६५
छलना ६२६-२८
छेदसूत्र २३६५
जीतव्यवहार १२, ४५२१-४६
ज्ञातविधि २४४८-२५१८
त्यक्तदेह ३८४०, ३८४१
त्वग्दोष २७८२-२८०२
दत्ति ३८११-१६
दृप्तचित्त ११२३-३६
दोषारोपण १२३०-४८
धारणाव्यवहार ४५०३-२०
नय ४६६०-६२
निर्जरा २६३३-३६
नैषेधिकी और अभिशय्या ६२६-८६
परिहार २१०-१२
परिहारतप ५३५-५६
परिहारी ६२५, ६६०-७०६, १०५४-६३
पश्चात्कृत १८६१-६६
पात्र ३५६५-३६५१
पार्श्वस्थ ८३५-५६
पुरुष ४५५५-८८
पूर्वधर ४३८-४४
प्रकल्पधर १५२३
प्रज्ञप्तिकुशल १४६६-१५०५
प्रतिकुंचना १४६, १५०
प्रतिक्रमण ६०, ६१
प्रतिमा ३७७८-३८८०, ३८३२-८०
प्रतिमाप्रतिपन्न ७७७-८३२
प्रतिसेवना ३८-४१, २२१-२८, ४४६१-४५०२
प्रवचनकुशल १४६५-६८
प्रवर्तिनी ६५८, ६५६
प्रव्रज्या २६२६-५२, ४६३७-५१
प्रायश्चित्त ३४-१५०, ४१८०-४२२०
प्रायश्चित्तवाहक ४७२-७८, ६०४-११
प्रायश्चित्त व्यवहार ४००६-२७
प्रायश्चित्तार्ह १५८-६४, ४७६-५०२
भक्ति २६७०, २६७१
भिक्षु १८८-६५
मनःपरिणाम २७५८-६८
महत्तरक ६३०
महापानध्यान २७०३
महाशिलाकंटकसंग्राम ४३६३-६५
मास १६६-२०६
मिथ्यात्व २७१३, २७१४
मृतपरिष्ठापन ३२५४-३३०८
मोहचिकित्सा १५६६-१६३४, २८०३-१२
यथाछंद ८६०-७५
रथमुशलसंग्राम ४३६३-६५
राजा ६२७, ६२८, १३०१, २४०८, २४०६
राज्य ६२४-५२, ६६३,१५६४-६७
लवसप्तमदेव २४३३, २४३४
वाचना ३०३२-६६, ३२४०-४२
वाद-विवाद ७११-१५, ७५७,७५८, ४११३-१५
वास्तु ३७४७-४६
विद्या २४३६-४३
विनय ६२-६७
विनयप्रतिपत्ति ४१२६-५५
विवेक १०८, १०६
विष ३०२८-३१
विहार ६६५-१०२६
वृद्धावास २२५६-२२६६
वैयावृत्त्य ५६०-६७, २२७६-२४०७, २४३५-३८,
२६२६-३६, ४६७५-८६
व्यतिक्रम ४२, ४३
व्यवहर्त्तव्य १७-३३, १६६२, १६६३
व्यवहार २-१२, १०६४-६८, १६५०-७४, २११७,
२२०७-१५, ३८८१-४५५२
व्यवहारी १३-१६, ३२५-४४, ४०३, ४०४, १६६४-१७२७
व्युत्सर्ग ११०-२४
व्युत्सृष्टकाय ३८३८, ३८३६
शय्यातर ३३०६-४८
शाला ३७२४-३६
शिष्य (अयोग्य) २४६-८४
शैक्षभूमि ४६०२-४४
श्रुतव्यवहार ४४३०-३६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रुतव्यवहारी ३२०-४४
संग्रहकुशल १५०६-१४
संघ १२१८, १६७७-६१, १७३६, १७३७
संभोज २३४६-६०
संभोज-विसंभोज २८७८-२६२८
संयत ८३४-६१
संयमकुशल १४८८-६४
संलेखना ४२३८-५०
संविग्न २४८४, २४८५
संसक्त ८८८-६०
संस्तारक ३३१८, ३३१६, ३३८८-३४७५
साधर्मिक ६८६-६४
सारूपिक १८६७-७६
सूत्रार्थ १८२४-३२, १८५४,१८५५, २६४०-४६
स्तव-स्तुति ३०१६
स्थविरभूमि ४५६७-४६०१
स्थान २१३-२०
स्थावरकाय ४६२५-२८
स्वाध्याय १७८५, २११८-५८, ३०१७-२७

प्रयुक्त ग्रन्थ सूची

ग्रन्थ नाम	लेखक, संपा॰	संस्करण	प्रकाशक
अंगुत्तरनिकाय	सं. भिक्खु जगदीश कस्सपो		पालि प्रकाशन मण्डल, बिहार
अनुयोगद्वार (नवसुत्ताणि)	वा. प्र. आचार्य तुलसी सं. युवाचार्य महाप्रज्ञ	सन् १९८७	जैन विश्व भारती, लाडनूँ
अनुयोगद्वार मलधारीय टीका	आ. मलधारी हेमचन्द्र सूरी	सन् १९३९	श्री केशरबाई ज्ञानमन्दिर, पाटण
अभिधान चिन्तामणि	आ. हेमचन्द्र	वि. सं. २०३२	श्री जैन साहित्य वर्धकसभा, अहमदाबाद
अभिधान-राजेन्द्र कोश	आ. विजयराजेन्द्र सूरि	सन् १९८५	लोगोस प्रेस, नई दिल्ली
अमरकोश	पण्डित अमरसिंह	सन् १९६८	चौखम्बा संस्कृत सिरीज, वाराणसी
आचारांग निर्युक्ति	आ. भद्रबाहु सं. समणी कुसुमप्रज्ञा	—	संपादित, अप्रकाशित
आधुनिक असामान्य मनोविज्ञान	डी. एन. श्रीवास्तव	१९८५	आपका बाजार, हास्पिटल रोड, आगरा-३
आयारो	वा. प्र. आचार्य तुलसी सं. मुनि नथमल	वि. सं. २०३१	जैन विश्व भारती, लाडनूँ
आवश्यक चूर्णि भाग I, II	आ. जिनदासगणि	सन् १९२८	श्री ऋषभदेव केशरीमल श्वे. संस्था, रतलाम
आवश्यक निर्युक्ति	आ. भद्रबाहु	वि. सं. २०३८	भैंरूलाल कन्हैयालाल कोठारी धार्मिक ट्रस्ट, बम्बई
आवश्यक मलयगिरि टीका	आ. मलयगिरि	सन् १९२८	आगमोदय समिति, बम्बई
आवश्यक सूत्र (नवसुत्ताणि)	वा. प्र. आचार्य तुलसी सं. युवाचार्य महाप्रज्ञ	सन् १९८७	जैन विश्व भारती, लाडनूँ
आवश्यक हारिभद्रीया टीका	आ. हरिभद्र	वि. सं. २०३८	भैंरूलाल कन्हैयालाल कोठारी, धार्मिक ट्रस्ट, बम्बई

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्रन्थ नाम	लेखक, संपा०	संस्करण	प्रकाशक
उत्तराध्ययन (नवसुत्ताणि)	वा. प्र. आचार्य तुलसी सं युवाचार्य महाप्रज्ञ	सन् १६८७	जैन विश्व भारती, लाडनूँ
उत्तराध्ययन निर्युक्ति	आ. भद्रबाहु सं. समणी कुसुमप्रज्ञा	—	सम्पादित, अप्रकाशित
उत्तराध्ययन शांत्याचार्य टीका	आ. शांत्याचार्य	सन् १६१७	देवचन्द्रलालभाई जैन, पुस्तकोद्धार फण्ड, बम्बई
एकार्थक कोश	सं. समणी कुसुमप्रज्ञा	सन् १६८४	जैन विश्व भारती लाडनूँ, राज.
ओघनिर्युक्ति	आ. भद्रबाहु	सन् १६१६	आगमोदय समिति, महेसाणा
कल्पसूत्र	सं. शूब्रिंग	—	—
कसायपाहुड	सं. पं. फूलचन्द, पं. महेन्द्रकुमार, पं. कैलाशचन्द्र	सन् १६४४	भारतीय दिगम्बर चौरासी, मथुरा
कौटिलीय अर्थशास्त्र	कौटिल्याचार्य सं. वाचस्पति गैरोला	चतुर्थ सं १६६१	चौखम्बा विद्याभवन, बनारस
गणधरवाद	आ. जिनभद्रगणि सं. महोपाध्याय विनयसागर	सन् १६८२	राजस्थान प्राकृत भारती संस्थान जयपुर
गरुडपुराण	डॉ. अवधबिहारीलाल अवस्थी	सन् १६६८	श्रीमती आशा अवस्थी कैलाश प्रकाशन, लखनऊ
गोम्मटसार जीवकाण्ड	नेमिचन्द्र सिद्धान्त शास्त्री	सन् १६२७	सैन्ट्रल जैन पब्लिशिंग हाऊस, लखनऊ
जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति टीका	आ. शांतिचन्द्र	सन् १६२०	देवचन्द्र लालभाई, जैन पुस्तकोद्धार फण्ड, बम्बई
जीतकल्प	आ. जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण		बबलचन्द्र केशवलाल मोदी, अहमदाबाद
जीतकल्पचूर्णि	आ. सिद्धसेनगणि सं. जिनविजयजी	सन् १६२६	जैन साहित्य संशोधक समिति अहमदाबाद
जीतकल्पभाष्य	जिनभद्रगणि सं मुनि पुण्यविजयजी		बबलचन्द्र केशवलाल मोदी, अहमदाबाद
जैन आगम साहित्य में भारतीय समाज	डॉ. जगदीशचन्द्र जैन	—	चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी
जैन धर्म	पं. कैलाशचन्द्र	सन् १६६६, चतुर्थ सं.	भारतीय दिगम्बर जैन संघ, मथुरा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्रन्थ नाम	लेखक, संपा.	संस्करण	प्रकाशक
जैन संस्कृत महाकाव्यों में भारतीय समाज	डॉ. मोहनचन्द	सन् १९८९	ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली
जैन साहित्य का इतिहास	पं. कैलाशचन्द	वीर. सं. २४८९	श्री गणेशप्रसाद वर्णी जैन ग्रंथमाला, काशी
जैन साहित्य का बृहद् इतिहास भा. ३	पं. दलसुख मालवणिया डॉ. मोहनलाल मेहता	द्वितीय सं १९८९	पार्श्वनाथ विद्याश्रम शोधसंस्थान, बनारस-५
जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश	सं. जिनेन्द्रवर्णी	सन् १९४४	भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली
ज्ञाताधर्मकथा (अंगसुत्ताणि भा.३)	वा. प्र. आचार्य तुलसी सं. मुनि नथमल	सन् १९७४	जैन विश्व भारती, लाडनूँ, राज.
ज्ञाताधर्मकथा टीका	आ. अभयदेव सूरि	सन् १९५२	श्री सिद्धचक्रसाहित्य प्रचारक समिति, बम्बई
ठाणं	वा. प्र. आचार्य तुलसी सं. मुनि नथमल	वि. सं. २०३१	जैन विश्व भारती, लाडनूँ, राज.
तत्त्वार्थवार्तिक	भट्ट अकलंक सं. महेन्द्रकुमार जैन	वि. स. २००९	भारतीय ज्ञानपीठ, काशी
तत्त्वार्थसूत्र	आ. उमास्वाति	—	सेठ मणिलाल रेवाशंकर जगजीवन जौहरी, बम्बई-२
दसवेआलियं तह उत्तरज्झयणाणि	वा. प्र. आचार्य तुलसी सं. मुनि नथमल	वि. सं. २०२३	श्री जैन. श्वेताम्बर तेरापंथ महासभा, कलकत्ता
दशवैकालिक : अगस्त्यसिंह चूर्णि	सं. मुनि पुण्यविजयजी	सन् १९७३	प्राकृत ग्रन्थ परिषद्, वाराणसी
दशवैकालिक निर्युक्ति	आ. भद्रबाहु सं. समणी कुसुमप्रज्ञा	—	संपादित, अप्रकाशित
दशाश्रुतस्कन्धचूर्णि	आ. जिनदासगणि	वि. सं. २०११	श्री मणिविजयजीगणि ग्रंथमाला, भावनगर
दशाश्रुतस्कन्ध निर्युक्ति	आ. भद्रबाहु सं. समणी कुसुमप्रज्ञा	—	सम्पादित, अप्रकाशित
देशीशब्दकोश	सं. मुनि दुलहराज	सन् १९८८	जैन विश्व भारती, लाडनूँ
धवला टीका	वीरसेनाचार्य	सन् १९४२	सेठ शीतलराय लक्ष्मीचन्द्र अमरावती

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्रन्थ नाम	लेखक, संपा०	संस्करण	प्रकाशक
नन्दी (नवसुत्ताणि)	वा. प्र. आचार्य तुलसी सं. युवाचार्य महाप्रज्ञ	सन् १९८७	जैन विश्व भारती, लाडनूँ, राज.
निशीथ (नवसुत्ताणि)	वा. प्र. आचार्य तुलसी	सन् १९८७	जैन विश्व भारती, लाडनूँ, राज.
निशीथ चूर्णि (भाग-१-४)	जिनदासमहत्तर	सन् १९८२	सन्मति ज्ञानपीठ, आगरा
निशीथ भाष्य	उपा. अमर मुनि	सन् १९८२	सन्मति ज्ञानपीठ, आगरा
निसीहज्झयणं	वा. प्र. आचार्य तुलसी सं. मुनि नथमल	—	श्री जैन श्वे तेरापंथ महासभा, कलकत्ता
पंचकल्प चूर्णि	—	—	अप्रकाशित
पंचकल्प भाष्य	—	वि. सं. २०२८	आगमोद्धारक ग्रन्थमाला, पारडी
पद्मपुराण, (भा. १-५)	कृष्ण द्वैपायन, व्यास	वि. सं. २०१६	भारतीय ज्ञानपीठ, बनारस
प्राकृत व्याकरण	आ. हेमचन्द्र	वि. सं. २०१६	जैन दिवाकर दिव्य ज्योति कार्यालय, ब्यावर
प्राकृत शब्दानुशासन	त्रिविक्रम देव सं. पी. एल. वैद्य	सन् १९५४	जैन संस्कृति संरक्षक संघ, शोलापुर
बृहत्कल्पचूर्णि	—	—	अप्रकाशित
बृहत्कल्पभाष्य	सं. मुनि पुण्यविजय	सन् १९३६	जैन आत्मानन्द सभा, भावनगर
बृहद् हिन्दी कोश	कालिका प्रसाद	पंचम सं. १९८४	ज्ञानमण्डल, वाराणसी
भगवती (अंगसुत्ताणि भा. २)	वा. प्र. आचार्य तुलसी सं युवाचार्य महाप्रज्ञ	द्वितीय सं. १९७४	जैन विश्व भारती, लाडनूँ
भगवती आराधना	आ. शिवार्य	प्रथम सं. १९७८	जैन संस्कृति संरक्षक संघ, शोलापुर
भगवती टीका	आ. अभयदेव सूरि	सन् १९१८	आगमोदय समिति, बम्बई
मनुस्मृति	सं. नारायणराम आचार्य	सन् १९४६	काव्य-तीर्थ निर्णयसागर प्रेस, बम्बई
महाभारत	वेदव्यास	सन् १९६१	भण्डारकर ओरिएण्टल रिसर्च इंस्टीट्यूट, पूना
मुनि श्री हजारीमल स्मृति ग्रन्थ	सं. शोभाचन्द्र भारिल्ल	सन् १९६५	मुनि हजारीमल स्मृति ग्रन्थ प्रकाशन समिति, ब्यावर
मूलाचार	[illegible]ट्टकेर	द्वितीय सं १९९२	भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्रन्थ नाम	लेखक, संपा०	संस्करण	प्रकाशक
राजप्रश्नीय टीका	आ. मलयगिरि	वि. सं. १९९४	गूर्जर ग्रन्थ रत्न कार्यालय, अहमदाबाद
वसुदेवहिंडी	संघदासगणि सं. मुनि चतुरविजयजी मुनि पुण्यविजयजी	प्र. सं. १९८९	गुजरात साहित्य एकेडमी, गाँधीनगर
विशेषणवती	—	—	—
विशेषावश्यकभाष्य	आ. जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण	वीर सं. २४८९	दिव्य दर्शन कार्यालय, अहमदाबाद
विशेषावश्यकभाष्य मलधारीयटीका	आ. मलधारी हेमचन्द्र	वीर सं. २४८९	दिव्य दर्शन कार्यालय, अहमदाबाद
विशेषावश्यकभाष्य स्वोपज्ञटीका	आ. जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण सं. दलसुख भाई मालवणिया	— —	लालभाई दलपतभाई, भारतीय संस्कृति विद्यामन्दिर, अहमदाबाद
व्यवहारभाष्य (मलयगिरि टीका सहित)	सं. मुनि माणेक	सन् १९२८	वकील त्रिकमलाल अगरचन्द
व्यवहारसूत्र (नवसुत्ताणि)	वा. प्र. आचार्य तुलसी सं. युवाचार्य महाप्रज्ञ	सन् १९८७	जैन विश्व भारती, लाडनूँ
व्यवहार टीका	आ. मलयगिरि सं. मुनि माणेक	सन् १९२८	वकील त्रिकमलाल अगरचन्द, अहमदाबाद
शब्दकल्पद्रुम भाग ५	सं. राधाकांत देव	वि. सं. २०२४ (तृतीय संस्करण)	चौखम्बा संस्कृत सिरीज, वाराणसी
षट्खंडागम	आ. पुष्पदंत, भूतबलि, सं. हीरालाल जैन	सन् १९४२	सेठ शीतलराय लक्ष्मीचन्द्र, अमरावती
षट्प्राभृत	पं. पन्नालाल सोनी	वि. सं. १९७७	श्री माणिकचन्द्र दिगंबर जैन ग्रन्थमाला समिति, बम्बई
समयसार	आचार्य कुन्दकुन्द	—	अहिंसा मन्दिर प्रकाशन, देहली
समवाओ	वा. प्र. आचार्य तुलसी सं. युवाचार्य महाप्रज्ञ	सन् १९८४	जैन विश्व भारती, लाडनूँ, राज.
सामाचारी शतक	समयसुन्दरगणि	वि. सं. १९९६	जिनदत्तसूरि ज्ञान भण्डार, सूरत
साहित्य और संस्कृति	देवेन्द्र मुनि	१९७०	भारतीय विद्या प्रकाशन, वाराणसी
सूत्रकृतांग निर्युक्ति	आ. भद्रबाहु सं. समणी कुसुमप्रज्ञा	—	सम्पादित, अप्रकाशित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्रन्थ नाम	लेखक, संपा॰	संस्करण	प्रकाशक
सूयगडो भाग-१	वा. प्र. आचार्य तुलसी सं. युवाचार्य महाप्रज्ञ	सन् १९८४	जैन विश्व भारती, लाडनूँ, राज.
स्थानांग टीका	अभयदेव सूरि	सन् १९३७	सेठ माणेकलाल चुन्नीलाल अहमदाबाद
A History of the canonical literature of the Jainas.	Hiralal Rasikdas Kapadia	–	Hiralal Rasikdas Kapadia
Aspects of Jaina Monasticism	Dr. Nathamal tatia, Muni Mehendra Kumar	1983	Jain Vishva Bharti Ladnun, Today and tommorrow
Sanskrit-English Dictionary	V. S. Apte	1957	Prasad Prakashan, Pune
History of Indian literature Vol. II	Maurice Winternitz	sec. Ad. 1993	Motilal Banarsidas

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org